पं० श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा

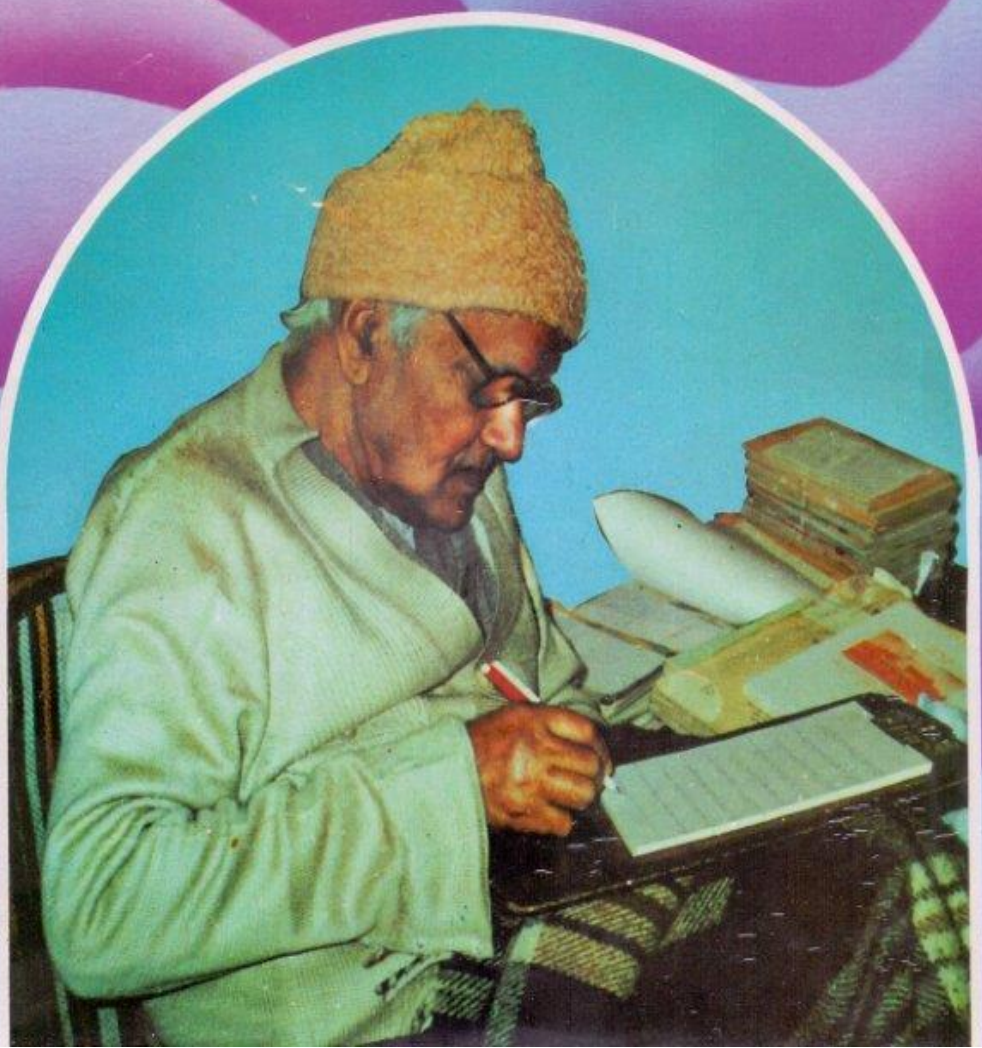

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस

प्रकाशक :

अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा-२८१ ००३

© सर्वाधिकार सुरक्षित

द्वितीय संस्करण १९९८

मूल्य १२५)

मुद्रक
जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ वन्दे भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ।।

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ।।

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ।।

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ।।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ।।

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

किसी भी समाज अथवा देश की प्रगति में, स्वस्थ रीति-रिवाजों एवं सत्परम्पराओं का ३. विवेक की कसौटी पर उचित ठहरायी जा सकें, विशेष योगदान होता है। कई परम्परागत प्रचलन ऐसे हैं जो व्यक्ति व समाज दोनों की प्रगति में आज भी सहायक हैं। ऐसे विवेकपूर्ण उपयोगी रीति-रिवाजों या प्रथा-परम्पराओं का अनुकरण तो उचित है किंतु जिनकी न कोई उपयोगिता है, न कोई औचित्य एवं फिर भी वे समाज में जड़ जमाए बैठे हैं-ऐसे प्रचलनों को उखाड़ फेंका जाना चाहिए, यह परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी आग उगलने वाली लेखनी से इतने तर्कों व प्रमाणों के साथ लिखा है कि कहीं भी कोई गुंजाइश उनका समर्थन करने की रह नहीं जाती।

युग निर्माण योजना की धुरी निश्चित ही व्यक्ति निर्माण पर टिकी है परंतु वही इकाई तो समूह रूप में मिलकर समाज का निर्माण करती है। समाज का नवनिर्माण तब तक संभव नहीं, जब तक कि मान्यताओं, रीति-रिवाजों, परम्पराओं, प्रथाओं-प्रचलनों के क्षेत्र में आमूलचूल क्रान्ति नहीं की जाती। राष्ट्र का समग्र विकास तभी संभव है जब वह इन पिछड़ेपन की ओर ले जाने वाली अवैज्ञानिक एवं नितान्त अप्रासंगिक समझी जाने वाली रूढ़िवादी मान्यताओं, अंधविश्वासों से मुक्ति पा सके । शिक्षा विस्तार के साथ बहुसंख्य भारत में छिटपुट स्थानों पर इनका विरोध तो हुआ है पर एक राष्ट्रीय आंदोलन के रूप में यह प्रक्रिया उभर कर नहीं आयी। यह एक ज्वलन्त मुद्दा बने एवं प्रतिगामिता के कुचक्र से हम सभी मुक्त हों, यही युग-ऋषि ने वाङ्मय के इस खण्ड में कूट-कूट कर भरा है।

कौन-कौन सी कुरीतियाँ, अवांछनीयताएँ हैं, जिन्हें हटाकर ही समाज आगे बढ़ सकता है, इसका विवेचन विस्तार से करते हुए प्रमुख प्रकाश जिन पर डाला गया है वे हैं- नेग-दहेज, खर्चीली प्रदर्शन प्रधान शादियाँ, किसी की मृत्यु होने पर दिया जाने वाला लम्बा-चौड़ा मृतक भोज, भूत-पलीत, ग्रह-नक्षत्रों, देवी-देवताओं के नाम पर बिठा दिया गया भय, झाड़-फूँक, भेंट-बलिदान जैसी घृणित परम्पराएँ, भिक्षा-व्यवसाय के रूप में एक सामाजिक कोढ़, धर्म के नाम पर कई प्रकार के आडम्बर, जाति-पाँति के आधार पर ऊँच-नीच की मान्यता, छुआछूत, पर्दाप्रथा, शकुन-अपशकुन जैसे अंधविश्वास एवं इन सबसे जुड़ी कई प्रकार की ऐसी कुरीतियाँ जो हम आज समाज में चारों ओर भिन्न-भिन्न रूपों में उभरती देखते हैं। जब हम इक्कीसवीं सदी के मुहाने पर खड़े हैं ऐसे प्रतिगामिताएँ निश्चित ही हमारे विकास के मार्ग में सबसे बड़ा अवरोध हैं।

धर्म सदा से प्रगतिशील ही रहा है एवं एक ही तथ्य का प्रतिपादन करता रहा है- विवेक-शीलता को वरीयता देकर परम्पराओं को उसकी कसौटी पर कसकर ही उनका परिपालन किया जाय। एक विडम्बना ही है कि बहुसंख्य प्रथा-परम्पराएँ हमारे देश में धर्म के साथ जोड़ दी जाती हैं जो कि स्वयं में एक शाश्वत-निर्मल सत्य का स्वरूप है। धर्म के नाम पर जोड़कर इन्हें व्यवसाय का, शोषण का, अपने स्वार्थ के पोषण का माध्यम बनाने में संभवतः हमारे देश के मध्यकाल के सामंतकालीन युग के व्यक्तियों को अधिक आसानी होती थी, अतः यह कुचक्र रचा जाता रहा और समाज खोखला होता चला गया। आज यदि इन आडम्बरों, अंधविश्वासों, मूढ़ताओं से जूझना है तो एक व्यापक विचार क्रांति की जरूरत होगी, यह पूज्यवर का प्रतिपादन है।

विवाह से जुड़ी जितनी कुरीतियाँ हैं उन्हीं ने हमारी परिवार संस्था को प्रतिगामी बनाया एवं नारी के विकास का पथ अवरुद्ध किया है। इससे समाज दरिद्र एवं बेईमान बनता है, इस सत्य का उद्घाटन करते हुए लिखा गया है कि यह हमारा ही देश है जहाँ विवाह इतने अपव्यय एवं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अनौचित्य भरे प्रदर्शन के साथ सम्पन्न होते हैं। यों तो 'विवाहोन्माद' पर एक स्वतंत्र वाङ्मय का खण्ड भी है किंतु इस खण्ड में उसके कुछ महत्वपूर्ण पक्षों पर प्रकाश डाला गया है, जिनसे आज हर व्यक्ति व समाज का घटक जुड़ा है। पशुबलि मानव जाति के नाम पर एक कलंक है, एक अमानवीयता है एवं इस कोढ़ से जो आज भी धर्म के नाम पर, मनौती के नाम पर अनेकानेक समाज के वर्ग प्रभावित हैं; साक्षरता के विस्तार, स्वयंसेवी संस्थाओं के आंदोलनों ने यों तो एक माहौल इनके विरुद्ध बनाया है किंतु अभी भी संघर्ष की आवश्यकता है। इसी प्रकार भिक्षा व्यवसाय समाज के नाम पर एक कलंक है एवं हमारी गरिमा औरों की दृष्टि में गिराता है। यह व्यवसाय बाबाजी वर्ग के नाम पर अधिक बढ़ा है, जिसने धर्म के पलायनवादी होने का तथ्य अधिक प्रतिपादित किया है। भाग्यवाद, हाथ देखना, मुहूर्तवाद, ग्रह-नक्षत्रों के नाम पर शोषण आदि ऐसी कुरीतियाँ हैं जो हमारी प्रगति में बाधक हैं, एक वर्ग के लिए भले ही जेब भरने का व्यवसाय हों। ज्योतिर्विज्ञान के शाश्वत स्वरूप को मानते हुए पूज्यवर लिखते हैं कि ग्रहगणित विज्ञानसम्मत है पर ग्रहों के नाम पर भय दिखाकर शोषण व्यक्ति का मानसिक उत्पीड़न है।

ऐसी अनेकानेक समाज में प्रतिगामी बनाने वाली प्रथा-परम्पराओं, अंधविश्वास भरी मान्यताओं की चर्चा करते हुए पूज्यवर ने समाधान भी दिए हैं तथा बताया है कि कैसे समाज का विवेकशील, अग्रगामी, प्रगतिशील, मूर्धन्य कहा जाने वाला वर्ग इस विचार क्रांति का एक पुरोधा बन सकता है। यह वाङ्मय पूज्यवर की वैविध्यपूर्ण लेखनी का परिचय देता है एवं समाज निर्माण की दिशा में मार्गदर्शन भी देता है।

–ब्रह्मवर्चस

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है। परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है। परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी माँ शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही हैं। उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया। आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं हैं किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानीगणों के वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देखा सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये। इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबोकर लिखा गया हो। हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता, मन को व विचारों को बदलता चला जाता है। लाखों-करोड़ों के मनों के अन्तःस्तल को छूकर उसने उनका कायाकल्प कर दिया। रूसो के प्रजातंत्र की, कार्लमार्क्स के साम्यवाद की क्रान्ति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है। उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्बोधन से एक विराट् गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े करते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाये, कैसे छन्दबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवनचरित को।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर, १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पन्द्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता। वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता श्री पं. रूपकिशोर जी शर्मा आप-पास के, दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अंतःकरण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था। साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा। जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे, छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे। किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुतः अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी। जाति-पाँति का कोई भेद नहीं। जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला

की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवा कर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा। उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ। नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था।

किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा स्वल्प ही पायी थी किंतु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभासम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है। हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय यह सिखाया।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजास्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में। उनने प्रज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में सम्पन्न क्रिया-कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषिसत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीस लक्ष्य के चौबीस महापुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था। २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रान्ति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्बाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक-दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्त्वपूर्ण मोड़ था, जिसमें भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि- ''प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। दो बातें गुरुसत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गईं- संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी। वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया। सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।''

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने ताड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख-सुनकर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद

पैदल लम्बा रास्ता पार कर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल भी गये। छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई। जेल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अँग्रेजी सीखकर लौटे। आसनसोल जेल में वे श्री जवाहरलाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मदनमोहन मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से, मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना। यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान, बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जनआक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रान्तिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था। नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं। बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये। जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा झीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्यचकित रह गये। उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्तजी नाम से ही जानते हैं। लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्यमंत्री श्रीगोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधीजी के समक्ष पेश किये गये। बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए। कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुंज में सम्मानित किया। उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधानमंत्री राहत फण्ड के नाम समर्पित कर दीं। वैरागी जीवन का सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरू हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम, अहमदाबाद गये। सांस्कृतिक, आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया, जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्रीकृष्णदत्तपालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्यायरत रहकर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया। प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अत: पुन: सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमश: उनके अध्यवसाय घर- घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदयस्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ। स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे। पुस्तकों

का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अन्तःस्तल को छूने की प्रक्रिया चालू रही। साथ देने आ गयीं परमवंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी। उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भावभरे आतिथ्य, हर किसी को जो दुःखी था- पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं। यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रान्ति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि-विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ। गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परमवंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी। धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी। २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है। १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है। १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५७ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया। कार्त्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देशभर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं। संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था। तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्रायः पैंतीस संस्करण छप चुके हैं। हिमालय से लौटते ही उनने महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूलथाती को पुनर्जीवन दिया। परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञानसम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ। तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तप-पूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था। तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों के द्वारा विचार क्रान्ति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए। स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों को विशेष कार्य-भार सौंप परमवंदनीया माताजी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़कर स्वयं हिमालय चले गये। एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया-पद्धति बतायी। ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्तन, संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किये।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे। इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के

अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक, साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य, प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक। इसके लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी-बूटी, यज्ञ विज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना, मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञानसम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण का, एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युगशिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता व आस्तिकता संवर्धन एवं जन-जाग्रति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञासंस्थान, शक्तिपीठ, प्रज्ञामण्डल, स्वाध्याय-मण्डल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया-कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तपसाधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया-कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून, १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी को दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट-आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देवसंस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नवनिर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरुसत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युग संधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेध महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नवनिर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रान्ति ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर, १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद, दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेध यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु सम्पन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९५ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी गई। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो एक सौ आठ खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हुआ। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जाएँगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़-चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेगा' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी उज्ज्वल भविष्य, सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है। ❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
अध्याय –१	
कुरीतियों का कुचक्र तोड़ना ही होगा	**१.१**
भ्रान्तियाँ हटायें, कुरीतियाँ मिटायें	१.१
कुरीतियाँ हमारी विचारशीलता पर प्रश्न-चिन्ह	१.२
अभिशाप जैसे प्रमुख कुप्रचलन	१.३
दिशा-धारा मोड़नी ही पड़ेगी	१.६
परम्पराओं में घुसी हुई अवांछनीयता	१.७
चित्र-विचित्र ये सामाजिक प्रचलन	१.९
प्रथा-परम्पराएँ सोच-समझकर ही अपनाएँ	१.१०
छाती से चिपकी निरर्थक प्रथा-परम्पराएँ	१.१२
परम्परा नहीं, औचित्य देखें	१.१४
ऐसी दिल्लगी किस काम की	१.१६
विवेकहीन कुप्रचलन	१.१६
हमारी हानिकारक रूढ़ियाँ	१.१८
कुण्डली जो लड़के को भी न बचा पायी	१.१९
मुहूर्त से बड़ा विवेक	१.२०
मनोरंजन की यह जानलेवा परम्परा	१.२०
प्रचलन को नहीं, औचित्य को मान्यता मिले	१.२१
समाज को गरीब व रुग्ण बनाने वाली विकृति	१.२३
हठवादिता के विरुद्ध असहयोग को आह्वान	१.२५
फैशन के नाम पर चुस्त कपड़े न पहनें	१.२७
फैशनेबल छात्रा का बुरा हाल	१.२७
सुन्दरता से अभिशप्त सर्पदंशिता-क्लियोपेट्रा	१.२८
आधुनिक अन्धविश्वास-सौन्दर्य प्रसाधन	१.३१
सौन्दर्य-सज्जा में अवांछनीयता की भरमार	१.३४
सौन्दर्य के विकृत मापदण्डों को बदला जाय	१.३६
उत्सवों के नाम पर उद्दण्डता अवांछनीय है	१.३७
सामाजिक कुरीतियाँ कैसे मिटें ?	१.३९
प्रचलनों को तर्क की कसौटी पर कसें	१.४१
इन अवांछनीय मूढ़-मान्यताओं को उखाड़ फेंकें	१.४२
विवाहों में अपव्यय की कुप्रथा	१.४५
बड़े परिवर्तन के लिए बड़े प्रयास करने पड़ेंगे	१.४७
दहेज कुप्रथा के भयंकर दुष्परिणाम	१.४९
गरीब लोग अमीरी का स्वाँग न बनाएँ	१.५२
बाल-विवाह एक अति घातक कुप्रथा	१.५७
हमारे समाज का अभिशाप-बाल विवाह	१.५९
बाल-विवाह का भयंकर राक्षस	१.६०
बाल-विवाह अर्थात् बाल-वध	१.६२
बाल-विवाह एक भयंकर व्याधि	१.६४
बाल-विवाह जैसी कुरीतियों से पल्ला छुड़ाएँ	१.६५
वैवाहिक कुरीतियों से समाज को बचाइए	१.६६
विवाह-प्रथा को समयानुकूल बनाया जाए	१.६९
वैधव्य और उसकी समस्या	१.७१
इन बाल-विधवाओं का जिम्मेदार कौन	१.७३
वैधव्य जीवन	१.७३
विधवाओं के प्रति भेद-भाव निराधार	१.७५
काश, विधवाओं के साथ न्याय किया जाता	१.७५
पर्दा-प्रथा, अमानवीय-अवांछनीय	१.७६
पर्दा-प्रथा-बनाम आत्मविश्वास पर प्रहार	१.७८
क्या बहिन-बेटियों से पर्दा कराना आवश्यक है?	१.८०
पर्दे से केवल हानि ही हानि है	१.८१
घूँघट के कारण दुलहनें बदलीं	१.८२
पर्दा-प्रथा नारी के साथ एक नृशंस अन्याय	१.८३
यह कुरीतियाँ मिट रही हैं, मिटेंगी	१.८४
आदर्शवादिता की ओर बढ़ते हुए कदम	१.८६
संगठित सत्प्रयत्न	१.८८
विद्रोह की प्रतिक्रिया	१.९०
आदर्श विवाहों का प्रचलन और प्रगति	१.९३
कुप्रथाओं का अन्त होगा ही	१.९३
सहालग के चक्कर में व्यर्थ की असुविधा	१.९५
गाली देने की गन्दी आदत	१.९५
पूर्वाग्रह पर अड़े ही रहना बुद्धिमत्ता नहीं	१.९८
इन मूढ़-मान्यताओं को उखाड़ फेंकना ही श्रेयस्कर है	१.९९
अवांछनीयताओं को रोकना ही होगा	१.१००
भेदभाव की इन जड़ों को उखाड़ फेंकें	१.१०१
कुरीतियाँ कैसे मिटें, कैसे हटें	१.१०३
दुर्बल बनाने वाली प्रतिगामिता से मोर्चा लेना ही होगा	१.१०५
यह दुष्प्रवृत्ति निरोध आन्दोलन चलना ही चाहिए	१.१०७
अध्याय–२	**२.१**
बलि प्रथा मानव जाति पर कलंक	
देवी-देवताओं के नाम पर पशुबलि एक घोर जघन्य कर्म	२.१
धर्म की आड़ में पल रहीं अन्धपरम्पराएँ	२.११
अन्याय करना ही नहीं, अन्याय सहना भी पाप है	२.१३
पशुबलि प्रथा इस प्रकार रोकी गयी	२.१४
प्राणियों के साथ निर्दयता न करें	२.१५
न्याय और सद्व्यवहार पालतू पशुओं के साथ भी बरता जाए	२.२०
सुन्दरता के लिए यह निर्दय व्यवहार	२.२३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
क्रूरता पर टिका सौन्दर्य प्रसाधनों का संसार	२.२५
सुसंस्कारिता प्रयासपूर्वक जगानी पड़ती है	२.२६
पशुबलि–अपवित्र पूजा	२.२८
स्वार्थान्ध को ईश्वरीय दण्ड	२.२९
पशुबलि का अन्धविश्वास नरबलि तक जा पहुँचा	२.२९
पशुबलि की भयंकरता ने बच्चे की जान ली	२.३०
सन्तान के लिए शिशु-हत्या	२.३१
पुत्र की कामना और पत्नी की हत्या	२.३१
समझने पर बलि देने का विचार छोड़ा	२.३२
नरबलि का कलंक मिटाया ही जाना चाहिए	२.३३
अध्याय–३	
भिक्षा व्यवसाय देश और समाज का कलंक	**३.१**
भिक्षावृत्ति मानवीय स्वाभिमान पर एक कलंक	३.१
दान का दुरुपयोग और भिक्षाजीवियों की समस्या	३.२
भिक्षा-वृत्ति की अवमानना हो	३.५
समाज शरीर का रिसतावृण-भिक्षावृत्ति	३.७
तिरस्कृत और अपमानजनक भिक्षावृत्ति	३.८
ये अमीर भिक्षुक	३.१०
भिक्षा व्यवसाय की आड़ में पनपते अनैतिक दुष्कर्म	३.११
भिक्षा माँगना ही नहीं देना भी पाप	३.१२
पतन का यह प्रवाह रोका जाए	३.१३
७६० करोड़ के दानी हम भारतवासी	३.१५
भिक्षा को व्यवसाय न बनने दिया जाय	३.२१
दान में विवेक की आवश्यकता	३.२२
इन अन्धपरम्पराओं के अनुकरण की क्या आवश्यकता ?	३.२४
मृतक भोज की क्या आवश्यकता ?	३.२६
मृतक भोज बन्द किया जाए	३.३३
यह कुरीतियाँ मिटनी ही चाहिए	३.३६
विवाह की तैयारी मृतक भोज खा गया	३.३७
समय का तकाजा है कि ऐसी प्रथाएँ बन्द हों	३.३८
पिता की इच्छा पुत्र ने पूरी की	३.३८
मृतक की आत्म-शान्ति वैसे नहीं ऐसे	३.३९
मृत्युभोज की एक उपयोगी विकल्पना	३.४०
मृतक भोज के व्यय से साहित्य वितरण	३.४०
दो हजार व्यक्तियों का मृत्युभोज न हो सका	३.४१
जूठन छोड़ने एवं दावत लुटाने की कुरीति बन्द हो	३.४२
अपव्यय का ओछापन	३.४४
फिजूलखर्ची	३.५२
फिजूलखर्ची क्या है	३.५२
पैसा पानी की तरह न बहायें	३.५४
अपव्ययी की दुर्गति	३.५६
खर्च आमदनी से कम करें	३.५७
ओछे लोगों की उद्धत सनक फिजूलखर्ची	३.५७
अपव्यय और सदुपयोग	३.५९
जेती लम्बी सौर-तेते पाँव पसारिए	३.६०
हमारा समाज असभ्य और अविवेकी न हो	३.६०
परम्पराएँ बदली जा सकती हैं	३.६२
अध्याय–४	
हम भाग्यवादी नहीं, कर्मवादी बनें	**४.१**
जीवन भाग्य प्रधान नहीं, कर्म प्रधान है	४.१
भाग्यवाद के जाल-जंजाल में न जकड़ें	४.६
कर्म के सहारे या भाग्य के सहारे	४.८
भाग्यवादी बनें या पुरुषार्थी	४.१०
भाग्यवाद और ग्रहगोचर	४.१२
दोष-भाग्य या ईश्वर को क्यों दें ?	४.१६
भाग्य का रोना न रोइए, पुरुषार्थ कीजिए	४.१७
भाग्यवाद को तिलांजलि देना ही श्रेयस्कर	४.१८
अर्थलाभ के क्षेत्र में भाग्यवाद का जहर	४.२२
जुआ समाज का बड़ा शत्रु है	४.२४
जुआ एक सत्यानाशी विषवृक्ष	४.२५
जुआ-सट्टे का अनैतिक व्यापार बन्द हो	४.२८
भाग्य और पुरुषार्थ	४.३०
मनुष्य अपने भाग्य का आप ही मालिक है	४.३१
भाग्यवादी नहीं, पुरुषार्थवादी बनिए	४.३२
अध्याय–५	
प्रतिगामी नहीं, विवेकशील बनिये	**५.१**
अन्धविश्वास से लाभ कुछ नहीं, हानि अपार है	५.१
अन्धविश्वास से दूर रहिए	५.५
अन्धविश्वास हटाएँ	५.६
टोना-टोटका का भ्रमजाल	५.१३
अन्धविश्वास का फतवा देने में उतावली न की जाए	५.१४
टोना-टोटका, जंतर-मंतर के रोमांचकारी दुष्परिणाम	५.१५
अध्याय–६	
अन्धविश्वासों की भूल-भुलैया से निकलें	**६.१**
अन्ध-विश्वास भारतीय समाज का कलंक	६.१
अन्धविश्वासों की कालिमापूर्ण छाया	६.२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
अन्धविश्वास की अँधेरी गलियाँ	६.४
अध्यात्म पर लगा अन्धविश्वास का कलंक	६.५
भविष्य सम्बन्धी अज्ञान ही श्रेयस्कर	६.७
अन्धविश्वास एक सामाजिक कोढ़	६.९
अन्धविश्वास के साये में पलता जीवन	६.१०
कुप्रचलनों से पीछा छुड़ाना एक अनिवार्य काम	६.१२
पिछड़ेपन का परिपोषक-अन्धविश्वास	६.१४
अन्धविश्वास समाज का घोर पतन कर रहा है	६.१६
अन्धविश्वास के अन्धड़ से निकलें	६.२०
अन्धविश्वास हर दृष्टि से घातक	६.२१
ये घातक अन्धविश्वास और आधुनिकता का दावा	६.२३
गाँठ का जेवर भी ले गये	६.२४
शिक्षा, ज्ञान एवं अन्धविश्वास	६.२५
कहीं आप भी इस तरह ठगे न जाएँ	६.२६
ज्योतिष पुरुषार्थ का प्रबल शत्रु	६.२८
बड़ों के बड़े अन्धविश्वास	६.२८
इस बुद्धिवादी युग में भी अन्धविश्वास सफल कैसे	६.२९
अन्धविश्वास खून का प्यासा महादैत्य	६.३०
बुढ़िया पुराण से सावधान	६.३३
धार्मिक क्षेत्र में धूर्तता और ठगी की करतूतें	६.३४
सच्चे और दिखावटी धर्मात्मा	६.३५
धर्म के नाम पर ठगी का व्यवसाय बन्द किया जाए	६.३७
जादू-चमत्कारों के प्रदर्शन की आवश्यकता क्यों?	६.३९
अवतारों की पलटन	६.४०
इन अवतारों से सावधान	६.४१
कल्कि भगवान को दो वर्ष की कैद	६.४२
अन्धविश्वास के पोषक इन बहुरूपियों से बचा जाए	६.४२
छद्म की दाल न गलने दें	६.४३
अन्धविश्वास की इस विडम्बना से मुक्त हों	६.४४
अध्याय—७	
इन अन्धविश्वासों को उखाड़ फेंकिये	**७.१**
अन्धविश्वास का अज्ञान	७.१
अन्धविश्वास का इन्द्रजाल	७.२
यह भ्रम-जंजाल कब तक चलेगा ?	७.३
अन्धविश्वास जो भी अनर्थ कर गुजरे, कम है	७.५

विषय	पृष्ठ
धोबी ने बालक की बलि दी	७.६
साधु-बाबाओं के कुचक्र में फँसी अबोध महिला	७.७
ज्योतिष पर विश्वास ले डूबा	७.७
धूर्त कापालिक पकड़ा गया	७.८
अन्धविश्वास के कारण फाँसी की नौबत	७.९
नरबलि की यह घृणित घटनाएँ	७.९
हम तो लुट गये लोभ में	७.१०
सन्तान के लालची ठगों के शिकार	७.११
अन्धविश्वास शत्रुता का कारण बना	७.११
जन्तर-मन्तर के चक्कर में बालक की हत्या की गई	७.१२
मुर्दा जीवित न हुआ, पैसा भी गया	७.१३
सन्तान के लिए बारह बार ग्राम-दाह	७.१३
काली माँ के दर्शन कराने वाले जेल में	७.१४
गन्दा गड्ढा देवी का कुण्ड बन गया	७.१५
झाड़-फूँक में लड़की गायब	७.१५
सिद्धि की इस मूढ़ता से कोरे भले	७.१६
अन्धविश्वास ने अनेकों की जान ली	७.१७
गढ़े खजाने का लोभ ले डूबा	७.१८
साधु बाबा के वेष में ठग	७.१८
पुत्र पाने के चक्कर में जान चली गयी	७.१९
अन्धविश्वासिनी ने बालिका को मार डाला	७.२०
सिर पर देवता आने का ढोंग	७.२०
अन्धविश्वास से हानि ही हानि	७.२१
अन्धविश्वास से बचने में ही भलाई	७.२३
सजीव गुड़िया का विवाह	७.२३
यह बुद्धि रचनात्मक कार्यों में लगती तो	७.२४
चोर-'जिन्न' बन बैठा	७.२५
इन मूढ़ताओं का अन्त होना ही चाहिए	७.२६
अन्धविश्वास के प्रेरित मूर्खतापूर्ण कृत्य	७.२७
ज्योतिष के नाम पर ठगबाजी और षड्यन्त्र	७.३०
रूढ़ियाँ हैं-लक्ष्मण रेखा नहीं	७.३१
अन्धविश्वास के साये में पलता जीवन	७.३३
यह अन्धविश्वास भारत को कब तक कलंकित करते रहेंगे	७.३४
अन्धविश्वास की बलिवेदी पर	७.३४
अज्ञान और अन्धविश्वास	७.३५
ढोंगियों का बढ़ता हुआ मायाजाल	७.३७
यह अन्धविश्वास न जाने कब तक जीएगा ?	७.३८
अन्धविश्वास भारत की एक भयानक बीमारी	७.४०
साहस द्वारा अन्धविश्वास का भण्डाफोड़	७.४२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
आप ऐसे अन्धविश्वासों से बचकर रहें	७.४२
इन अन्धविश्वासों का अन्त किया जाए	७.४३
मिथ्या मान्यताओं, भ्रान्त धारणाओं से क्या लाभ ?	७.४५
अध्याय –८	
इन भ्रम-जंजालों से निकलें	**८.१**
अवांछनीयता के आगे सिर न झुकाएँ	८.१
परम्परावादी नहीं, विवेक के अनुयायी बनें	८.४
इन भ्रम-जंजालों से निकलें	८.५
इस तथ्य को भी ध्यान में रखें	८.१०
विवेक का अनुसरण करें	८.१३
अपनी बुद्धि का सदुपयोग करें	८.१४
बुद्धिमत्ता और सम्पन्नता का सदुपयोग	८.१८
विवेक ही हमारा मार्गदर्शक हो	८.१९
सच्ची लोकप्रियता इस तरह मिलती है	८.२१
मानवी सभ्यता की ओर चलें	८.२३
यह आवश्यक है–उपेक्षणीय नहीं	८.२४
पंचायतें कुरीतियों और अनीतियों से जूझें	८.२६
परम्पराओं को विवेक की कसौटी पर कसा जाय	८.२८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुरीतियों का कुचक्र तोड़ना ही होगा

भ्रान्तियाँ हटायें, कुरीतियाँ मिटायें

किसी भी समाज अथवा राष्ट्र की प्रगति एवं समुन्नति में उसकी चिन्तन-पद्धति का सबसे बड़ा योगदान होता है । प्राचीनकाल की स्थिति भिन्न थी । तब बुद्धि का इतना अधिक विकास नहीं हुआ था और न ही चिन्तन को प्रभावित करने वाले आज जैसे सुविकसित तन्त्र थे । उपलब्ध प्रकृति-प्रदत्त परिस्थितियाँ तथा मानवीय पुरुषार्थ प्रगति अथवा अवगति के कारण बनते थे । अस्तु, मानवीय प्रयासों का एक-मात्र केन्द्र-बिन्दु था—बाह्य परिस्थितियों का अनुकूलन । यह मनुष्य के विकास की आरम्भिक अवस्था थी, जब चिन्तन का क्षेत्र अपरिचित था ।

आज की स्थिति दूसरी है । साधनों का महत्त्व तो आज भी है, पर विचारशील समुदाय में उससे भी अधिक महत्त्व वैचारिक सम्पदा को दिया जा रहा है । समाज की सामूहिक चिन्तन-पद्धति को विकास अथवा पतन के अनिवार्य तथ्य के रूप में स्वीकारा जा रहा है । अभीष्ट प्रयोजन के लिये जनमानस में एक निश्चित तरह की विचारधारा देने के मनोवैज्ञानिक प्रयोग भी विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार से चलते रहते हैं । साम्यवाद की चिन्तन-पद्धति में देशवासियों को रँगने के लिये सरकारी, गैर-सरकारी और शैक्षणिक स्तर पर प्रयास करते रहते हैं । रेडियो, टेलीविजन, पत्र-पत्रिकायें उक्त लक्ष्य को सार्थक करने में जनमानस की ब्रेन वाशिंग करते तथा अपने प्रयोजन में सफल भी हो जाते हैं ।

पूँजीवादी देशों में पूँजीवाद की उपयोगिता, सार्थकता सिद्ध करने के लिये कितने ही प्रत्यक्ष और परोक्ष राजनैतिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रयोग चलते रहते हैं । अधिनायकवाद साम्राज्यवाद के दिन तो लद गये पर अपने समय में वे भी उपर्युक्त तरह की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया अपनाकर ही सफल रहे । आज भी इस प्रकार के प्रयोग विविध प्रयोजनों के लिए, विभिन्न रूपों में अधिकांश देशों में चलते रहते और सफल होते देखे जाते हैं । अतएव समाज और देश के विकास की दिशाधारा क्या होगी ? यह उस देश के नागरिकों की चिन्तन-पद्धति के ऊपर निर्भर करता है ।

पाश्चात्य देशों का लक्ष्य भौतिक समृद्धि है । उनका चिन्तन इसी के इर्द-गिर्द घूमता रहता है । वे वर्तमान में जीते और अपनी समस्त चेष्टाएँ भौतिक प्रगति में नियोजित करते हैं । समय, धन, मनोयोग और चिन्तन एक ही दिशा में निरत रहने से उन्होंने भौतिक क्षेत्र में असाधारण सफलता पायी है । साधन, स्वास्थ्य, शिक्षा, कला, विज्ञान के क्षेत्र में वे अग्रणी हैं । विकास एकांगी होते हुए भी वे अपने प्रयास में सफल रहे हैं । अपनी वैचारिक एवं चिन्तन-शक्ति का उन्होंने भौतिक उपलब्धियाँ करतलगत करने के लिए भरपूर उपयोग किया है, इस तथ्य से कोई भी विज्ञ व्यक्ति इन्कार नहीं कर सकता । आध्यात्मिक विकास की दूसरी मंजिल उन्हें पूरी करनी है जिसके बिना उनका जीवन अधूरा, अतृप्त और अशांत है ।

भारत सदा से संस्कृति और अध्यात्म का संदेशवाहक रहा है । समय-समय पर इसने अपने भौतिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान की निर्झरिणी समस्त विश्व में बहायी है, जिसमें अवगाहन करने वाले देश दोनों ही दिशाओं में सुसम्पन्न बनते रहे हैं । इतिहास में ढेरों प्रमाण इसके बिखरे पड़े हैं । आज जबकि दूसरे देश समृद्धि एवं प्रगति के शिखर पर हैं, अपना देश साधनों की दृष्टि से अविकसित, पिछड़ी स्थिति में पड़ा अनेकानेक समस्याओं से ग्रस्त है । जो कभी अपनी भौतिक समृद्धि और आध्यात्मिक उन्नति के लिए विश्वविख्यात था, आज रोटी की समस्या सुलझा पाने में भी असमर्थ सिद्ध हो रहा है । इसका कारण क्या है? भौतिक अथवा वैचारिक । परिस्थितियों की विपन्नता अथवा चिन्तन की दुर्बलता ।

स्थूल दृष्टि से विचार करने पर तो प्रथम कारण ही वास्तविक जान पड़ता है, पर थोड़ी गहराई से विचार करें तो प्रतीत होगा कि परिस्थितियाँ विकास में उतनी बाधक अथवा सहायक नहीं होतीं जितनी कि समूह के विचारों की दिशाधारा । यही समाज और राष्ट्र के उत्थान अथवा अधःपतन का कारण बनती है । अपने देश की अवगति में वैचारिक भ्रान्तियों की सबसे अधिक भूमिका रही है । लम्बे समय तक देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ा रहा । हजारों वर्ष की परतंत्रता ने देश की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति को बुरी तरह तोड़ा-मरोड़ा है । गुलामी की दीर्घकालीन अवधि ने देश के विचार स्वातंत्र्य पर भी तीव्र आघात किया । जो कभी अपने स्वतंत्र, प्रखर एवं दूरदर्शी चिन्तन के कारण अध्यात्म तत्व-दर्शन का अन्वेषक माना जाता था, वही अन्धविश्वासों, कुरीतियों, मूढ़-मान्यताओं तथा कुपरम्पराओं का केन्द्र माना जाने लगा । हजार वर्ष की अवधि में कितने ही चित्र-विचित्र प्रचलन चल पड़े, जिन्हें विवेक की कसौटी पर कसने पर हँसी आती है । जाति-पाँति, छुआछूत, ऊँच-नीच की मान्यता के कारण समय-समय पर हिन्दू समुदाय का एक बड़ा वर्ग कटकर अलग होता रहा है । नारी को कनिष्ठ मानते रहने से उसकी क्षमताओं के योगदान से लम्बे समय तक समाज को वंचित रहना पड़ा है । पर्दा प्रथा के कारण आत्महीनता की जो ग्रन्थियाँ एक बार पैदा होती हैं, वह स्थायी रूप से जड़ जमा लेती हैं । फलतः नारी अपना वह आत्म-विश्वास गँवा बैठती है जिसके सहारे कोई महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकना सम्भव है । इन कुपरम्पराओं, कुरीतियों की उत्पत्ति कैसे हुई ? तब उचित थी अथवा अनुचित ? इस विवाद में अब उलझने से कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

फायदा नहीं है । मूल बात यह रह जाती है कि आज की परिस्थितियों में उनकी उपयोगिता कहाँ तक है । कोई भी समझदार व्यक्ति उनका समर्थन नहीं करेगा, पर विडम्बना यह है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के छियालीस वर्षों बाद भी अपना समाज उन कुरीतियों के जाल-जंजाल में जकड़ा हुआ है । इसे चिन्तन की पराधीनता नहीं तो और क्या कहा जाय?

श्रम और पुरुषार्थ को भौतिक प्रगति एवं समृद्धि का माध्यम समझा जाता है । दूसरे देशों ने इन गुणों के सहारे अपने देश की समृद्धि बढ़ाई है, पर उस विडम्बना को क्या कहा जाय कि समाज के अधिकांश व्यक्ति आलस्य और प्रमाद को, निकम्मेपन को ही बड़प्पन का परिचायक समझने लगे हैं । मुगलों और अंग्रेजों ने निठल्लेपन का जो विष-वृक्ष बोया था आज देश के अधिकांश व्यक्तियों में फूलते-फलते देखा जा सकता है । श्रमशीलता अन्य देशों में अभिनन्दित है, पर अपने देश में उसे प्रतिष्ठा नहीं मिल सकी है । श्रमजीवी वर्ग को सामाजिक तिरस्कार का भाजन बनना पड़े इससे बढ़कर चिन्तन की दुर्बलता और क्या होगी? यह वैचारिक कमजोरी ही तो है कि बिना सोचे-समझे विचार किये हर व्यक्ति ब्याह-शादियों में एक-दूसरे का अंधानुकरण करता और अपनी स्थिति से बढ़-चढ़कर धन की होली फूँकता है और मूकदर्शक की भाँति घर फूँक तमाशा देखता है ।

समाज एवं देश की प्रगति के लिए साधन जुटाये जाएं यह उचित है और आवश्यक भी, पर जब तक वैचारिक पराधीनता बनी रहेगी, साधनों का लाभ भली-भाँति उठा पाना सम्भव नहीं होगा । उपभोगकर्त्ता का स्तर और चिन्तन भ्रान्तियों में जकड़ा रहा तो प्रगति की आकांक्षा पूरी न हो सकेगी । राजनीतिक स्वतंत्रता को मिले तीन दशक से ऊपर हुए । समाज एवं देश की प्रगति का सपना सही अर्थों में उस दिन पूरा होगा, जब भारतीय जनमानस संव्याप्त वैचारिक भ्रान्तियों के जाल-जंजाल को तोड़कर बाहर निकलेगा । यह महान् कार्य विचार क्रान्ति के आयोजन से ही सम्भव होगा ।

कुरीतियाँ हमारी विचारशीलता पर प्रश्न-चिह्न

मनुष्य को यों बुद्धिमान कहा और माना जाता है, पर देखा गया है, वह बुद्धिमानी एक सीमित क्षेत्र तक ही अनुबंधित होती है । आमतौर से वह कमाने-खाने और अभ्यस्त दिनचर्या का गतिचक्र घुमाने तक ही सीमाबद्ध रहती है ।

मान्यताओं और प्रथा-परम्पराओं के सम्बन्ध में अधिकांश लोग अन्ध-परम्पराओं के शिकार होते हैं और लकीर के फकीर बने रहते हैं । आँखें मूँद कर ऐसे खोटे सिक्के भी चावपूर्वक जमा करते रहते हैं, जो यथार्थता की कसौटी पर कसे जाने पर कानी कौड़ी मोल के भी नहीं होते । ऐसे पूर्वाग्रह उन्होंने अपने समीपवर्ती लोगों से सीखे होते हैं और उन्हीं का अनुसरण करते हुए अन्धी भेड़ों की तरह ऐसी दिशा में चल पड़े होते हैं जिसमें भूल-भुलैयाँ ही भरी पड़ी हैं, जिसमें कँटीले झाड़-झंखाड़ों के अतिरिक्त और कुछ मिलने वाला नहीं है ।

आलस्य का बड़ा भाई है प्रमाद, वह मस्तिष्क पर छाया रहता है और विचारशीलता को पनपने नहीं देता । भीड़ की मान्यताएँ ही उसकी मान्यताएँ बन जाती हैं और लोगों को जो करते देखा जाता है उसे वास्तविक समझकर गले उतार लिया जाता है । वे ही अपनी मान्यताएँ, विचारणाएँ बन जाती हैं । यह नहीं सोचा जाता कि इसमें कितना औचित्य एवं तथ्य है । परिणाम इसका क्या होगा? सत्य और तथ्य ढूँढ़ने के लिए तर्क और विवेक की आवश्यकता होती है । साथ ही इतने साहस की भी जिसके आधार पर कुप्रचलनों को कूड़े-कबाड़े की तरह बुहार फेंका जाय । अनुचित को अमान्य ठहराया और उसे अपनाने से इन्कार किया जा सके ।

किसी वंश विशेष में जन्म लेने के कारण कोई ऊँचा या नीचा होता है, इस प्रचलन को अधिकांश लोग मान्यता क्षेत्र में भरे रहते हैं । भले ही विचारशीलों के बीच बैठकर उसका समर्थन न कर सकें । संविधान की धाराएँ तथा सभ्य समाज की प्रथाएँ समता का समर्थन करती हैं । जातिगत ऊँच-नीच में विश्वास नहीं करतीं । फिर भी व्यवहार में पीढ़ियों से घुसे हुए संस्कार दृष्टि-कोण को पुरातन परिपाटी की ओर ही घसीट ले जाते हैं ।

पूर्वजों की दुहाई देकर उसके वंशधर उसी सम्मान के अधिकारी नहीं हो सकते । मिनिस्टर का बेटा मिनिस्टर, कलक्टर का बेटा कलक्टर का पद पाने का दावेदार नहीं हो सकता । वाल्मीकि शूद्र होते हुए भी ब्राह्मण से किसी प्रकार कम नहीं रहे और रावण ऋषि वंश में पैदा होते हुए भी घृणा का पात्र बना । वंश के आधार पर किसी को अहंकार करते और किसी के तिरस्कृत होने की बात नहीं बनती ।

ठीक इसी प्रकार वंश की बात भी है । व्यक्तिगत जीवन में तपस्वी और परमार्थ प्रयोजनों में परमार्थी हुए बिना किसी को संत कैसे माना जाय ? लिवास तो चित्र-विचित्र प्रकार के बहुरूपिया एक रंगमंच के नट भी पहनते रहते हैं । इतने भर से उनमें से किसी को राजा, किसी को ऋषि, किसी को देवता कहाँ माना जाता है । यद्यपि वे परिधान आच्छादन वैसे ही धारण किए होते हैं । वंश की मान्यता न मिली होती तो अपने देश में ६० लाख वेशधारी नहीं, इतने लोकसेवी रहे होते तो अपना देश सतयुगी परम्पराओं से भरा-पूरा होता ।

वंश और वेश के नाम पर कुछ को ऊँचा, कुछ को नीचा, कुछ को गुरु, कुछ को चेला कहलाने का अवसर मिल रहा है । अच्छा होता यह विडम्बना न पनपी होती और उज्ज्वल चरित्र तथा लोक-निर्माण की सेवा-साधना को महत्त्व मिला होता ।

नर और नारी के बीच अपने समुदाय में असाधारण रूप से भेदभाव बढ़ता जाता है । दोनों स्रष्टा की समान कृति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और दोनों परस्पर पूरक हैं । दोनों मनुष्य समाज के अविच्छिन्न अंग हैं । फिर एक को घर के पिंजड़े में घूँघट उढ़ाकर रखा जाय और दूसरा स्वच्छन्दतापूर्वक चाहे जहाँ भ्रमण करे इसका क्या कारण हो सकता है? यदि किसी के चरित्र-भ्रष्ट होने का भय है तो वह बात दोनों पर ही लागू होती है । एक को किस जुर्म में सजा मिली कि उसके नागरिक अधिकार भी छिन गए और पराधीन बंदी की तरह जीवन भर उसी स्थिति में रहना पड़ा ?

विधवा और विधुर पर एक जैसे कानून लागू होने चाहिए । यदि स्त्रियाँ पति के साथ सती हो सकती हैं तो पुरुषों को भी स्त्री के मरने पर वैसा ही क्यों नहीं करना चाहिए ?

विवाह के अवसर पर कन्यापक्ष को अपने घर, बिस्तर, बर्तन भी बेचकर वर को मुँहमाँगी राशि देनी पड़े, इसका क्या कारण हो सकता है ? सुयोग्य कन्या को जिस पिता ने आजीवन दूसरे परिवार की सेवा करने के लिये समर्पित किया है, उसने क्या कसूर किया कि उसे अपने परिवार की आवश्यक सुविधाएँ भी समाप्त करनी पड़ें । अपने बच्चों को शिक्षा, चिकित्सा से वंचित करके दीन-हीनों जैसी स्थिति में रहने के लिये विवश होना पड़े ?

कन्या का जन्म दुर्भाग्य और पुत्र जन्म सौभाग्य माना जाय ? इसका क्या कारण है ? कन्या पग-पग पर तिरस्कृत एवं उपेक्षित रहे और लड़के पर भरपूर लाड़-दुलार बरसे । इसके पीछे किस तर्क को साथी बनाया जाए ।

जब हर कोई नारी के उदर से उत्पन्न हुआ है ? उसका पयपान करके समर्थता प्राप्त कर सका है, फिर उसी वर्ग को तिरस्कृत एवं उपेक्षित होने का क्या कारण होना चाहिए ।

शास्त्रकारों ने नारी को देवी की उपमा दी है । नर को देवता नहीं कहा ? इससे स्पष्ट है कि अनादि काल से नारी को ही वरिष्ठता प्रदान की गई है । उसे उदारता और महानता की प्रतिमूर्ति कहा गया है । फिर आज ही क्या ऐसी उलट-पुलट हो गयी कि कन्या जन्म पर सारा घर उदास होता है और पुत्र जन्म पर बतासे बँटते हैं ।

हमारी समाज व्यवस्था में यह चार मौलिक दोष हैं (१) वंश के आधार पर ऊँच-नीच की मान्यता, (२) वेश धारण करने भर से किसी को संत मान लेना, (३) कन्या और पुत्र में भेद-भाव, (४) विवाह के समय कन्या पक्ष का शोषण । इन कुरीतियों के रहते हम सभ्य समाज के सदस्य नहीं कहला सकते और न विचारवान, बुद्धिमान होने का दावा कर सकते हैं ।

अभिशाप जैसे प्रमुख कुप्रचलन

हर व्यक्ति यों तो अपनी शरीर सीमा में दूसरों से पृथक् इकाई है, पर यह नहीं भूलना चाहिए कि सर्वथा एकाकी रहकर मनुष्य प्राणियों में से कोई अपने अस्तित्व की रक्षा भी नहीं कर सकता । धागे मिलकर उपयोगी वस्त्र का रूप धारण करते हैं, पर यदि धागे इसके लिये सहमत न हों तो उनका कोई उपयोग नहीं रह जाता । निजी रूप में भी वे शक्तिहीन, निरर्थक, निरुपयोगी बन जाते हैं ।

मनुष्य की संयुक्त सहकारिता ही समाज संरचना का मूलभूत उद्देश्य है । उसी संगठन के सहारे व्यक्तिगत स्वार्थ भी सधता है । अतएव यह आवश्यक समझा गया है कि निजी स्वार्थ-साधना की, सुरक्षा की बात सोचते हुए यह भुला न दिया जाय कि समाजगत सामूहिक प्रवाह की दिशा-धारा सही है या नहीं । सुव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने और अवांछनीयताओं को रोकने-बदलने के लिए भी उतना ही ध्यान दिया जाना चाहिए जितना कि निजी स्वार्थ-साधना के लिए दिया जाता है ।

इन दिनों दृष्टि उठाकर देखते हैं कि व्यक्ति ही नहीं समाज भी अदूरदर्शी गतिविधियों में संलिप्त है । व्यक्तिगत चरित्रों में से समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और बहादुरी की मात्रा दिन-दिन घटती जा रही है । साथ ही इस अभाव से समूचे समाज में अनौचित्य का दौर बढ़ रहा है । फलतः वर्तमान की विपन्नता भयावह होती चली जा रही है । इस बढ़ोत्तरी का दुष्परिणाम निकट भविष्य में सर्वनाशी विभीषिकाओं का रूप धारण कर सकता है । समाज की अभिन्न इकाई होने के नाते हर किसी को इस ओर पूरा ध्यान देना चाहिए और निजी उत्थान-पतन की तरह समाज के उतार-चढ़ावों पर भी समग्र दृष्टि रखनी चाहिए । इस ओर उपेक्षा बरतना भी अनौचित्य बढ़ाता है । उससे व्यक्ति और समाज दोनों का ही अहित होता है ।

व्यक्ति की समाज के प्रति उपेक्षा रहने से उद्धत अहंकारियों को शक्ति-समृद्धि का दुरुपयोग करने का सहज अवसर मिल जाता है । जैसा कि इन दिनों हो रहा है । व्यक्तिगत स्वभाव में समाविष्ट दुर्गुणों के उन्मूलन की बात सोचते हुए साथ ही यह भी देखना चाहिए कि समाज को क्षति पहुँचाने वाली दुष्प्रवृत्तियों को कहीं अपने द्वारा अनुपयुक्त मात्रा में अपनाया तो नहीं जा रहा है, इससे समूचे समाज का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समर्थन किया तो नहीं जा रहा है ।

बहुप्रजनन और नशेबाजी यह दो दोष तत्काल तो उतने भयावह प्रतीत नहीं होते जितनी कि उनकी प्रतिक्रिया भयावह परिणाम लेकर उतरती है । सन्तान के उत्पादन में स्थिति के साथ तालमेल बिठाकर न चलने का परिणाम यह होता है कि बढ़े हुए बच्चों की संख्या जननी का स्वास्थ्य चौपट करती है । पिता के ऊपर अर्थ-संकट का पहाड़ टूटता है । समुचित ध्यान न दिये जाने, उपयुक्त सुविधा न मिलने से वे कुसंस्कारी एवं पिछड़े, अनगढ़ बनते हैं । इस प्रकार गए-गुजरे नागरिकों का बाहुल्य समाज-गत सुव्यवस्था के लिए अभिशाप बनता है । उनके लिए सुविधा-साधन जुटाना, नियंत्रण में रखना शासक के लिए अशक्य हो जाता है । चोरी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

व्यभिचारी आदि की बुराइयाँ तो सबको दीखती हैं और उनकी रोकथाम भी होती है, पर बढ़ती हुई जनसंख्या के कितने अधिक दुष्परिणाम हो सकते हैं इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार बिरले ही विज्ञजन करते हैं । यह उपेक्षा किसी दिन ऐसे विस्फोट का रूप धारण कर सकती है जिसमें आहार, विकास, ईंधन, शिक्षा, चिकित्सा आदि का एक भी प्रबन्ध न बन पड़े और अनगढ़ लोगों की भीड़ अभावग्रस्त स्थिति में पड़कर या परस्पर टकराकर बेमौत मरने लगे ।

यह बात नशेबाजी के सम्बन्ध में भी है । नशों के उगाने से लेकर पीने तक में पूँजी तो बर्बाद होती है । इसके अतिरिक्त पीने वाला नशे की स्थिति में अर्द्ध-विक्षिप्त बनकर रहता है, जिससे वह कुछ उपयोगी उपार्जन करना तो दूर उलटे अपनी चौकीदारी-तीमारदारी के लिए मित्र-परिजनों की सेवा-सहायता माँगता है । इससे उन लोगों के उस समय का भी अपव्यय होता है, जिसमें वे कुछ उपयोगी कार्य कर सकते थे ।

विचारशीलों ने ठीक ही कहा है कि "नशेबाजी धीमी आत्महत्या है ।" यह उक्ति सर्वथा सार्थक है । अन्तर इतना ही है कि आवेशग्रस्त उत्तेजित व्यक्ति इस प्रकार आत्मघात कर बैठता है कि तुरन्त ही जीवन का अन्त हो जाए, पर धीमी आत्महत्या में मृत्यु को वरण करते हुए देर लगती है । जीवनी-शक्ति का भण्डार धीरे-धीरे समाप्त होता है । फूटे घड़े का पानी रिसने लगता है तो उसका खाली होना तो निश्चित है, पर अन्तर इतना ही है कि यह सब उतनी जल्दी नहीं होता जितना कि लाठी मारकर घड़ा फोड़ देने पर तत्काल पानी बिखर जाता है ।

शराब का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है, साथ ही पीने वालों की कार्यक्षमता,सूझ-बूझ भी पैंदे में बैठती जाती है । ऐसे लोग क्रिया-कुशलता की दृष्टि से आधे-अधूरे ही रह जाते हैं । वे अपना, अपने परिवार का ठीक तरह से भार वहन नहीं कर पाते । दूसरों की सेवा-सहायता ही अपने लिए चाहते रहते हैं । ऐसे लोगों को आवश्यकताओं के दबाव में अपराधों का आश्रय लेना पड़ता है । बदनामी, अवज्ञा एवं विभिन्न प्रकार की प्रताड़नाएँ भी सहते हैं । आधी जिन्दगी मुश्किल से जी पाते हैं । परिवार के लिए ऐसी भ्रष्ट परम्परा छोड़ जाते हैं जिसके कारण नशेबाजों की सन्तानें आमतौर से अनगढ़, अस्त-व्यस्त, पिछड़ी और असभ्य देखी गयी हैं ।

लोग इन बुराइयों की परिणतियों का हल्का-सा अनुमान तो लगाते हैं, पर उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं करते । आवारा लोगों की संगति में पड़कर इस दुर्व्यसन को पकड़ तो लेते हैं पर फिर ऐसी स्थिति बन जाती है कि उसके चंगुल से निकलना कठिन पड़ता है ।

व्यक्तिगत जीवन में प्रवेश करके समूचे समाज को प्रभावित करने वाली दुष्प्रवृत्तियों में तीसरी है— स्त्रियों की अवमानना, उन्हें घूँघट-पर्दे में रखना, शिक्षा के क्षेत्र में आगे न बढ़ने देना । स्वावलम्बन के लिये अवसर उपलब्ध न करने देना । वर्तमान परिस्थितियों में नारी को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रख दिया गया है । पशु और मनुष्य के बीच की स्थिति में उन्हें रहना पड़ रहा है । स्थिति यहाँ तक जा पहुँची है कि किसी के उचित-अनुचित आश्रय में रहे बिना उन्हें अपना आधार तक स्थिर नहीं दीख पड़ता ।

जन्म से लेकर मरणपर्यन्त नारी को अशक्त अनुभव किया जाता रहता है । इसलिए उनके शोषण हेतु विविध-विधि कुचक्र चलते रहते हैं । व्यभिचार, बलात्कार में प्रायः पुरुष ही आक्रामक होता है । बच्चों की अनावश्यक संख्या का भार उन्हें अनिच्छा से ही वहन करना पड़ता है । पिंजड़े में बंद पक्षी की तरह एक छोटी चाहरदीवारी में उन्हें कैद रहना पड़ता है । इस स्थिति को जेलखाने के कैदी से मिलती-जुलती ही समझा जा सकता है ।

विवाहों का दृश्य ऐसा होता है जैसे मध्यकाल के सामंत गाजे-बाजे के साथ युवा लड़कियों के अपहरण के लिए आते थे । साथ ही उस परिवार की धन-सम्पदा भी नजराने की तरह लूटकर ले जाते थे । सामन्तवादी युग चला गया पर, धूमधाम की शादियाँ और दहेज की थैलियाँ अभी भी चलती हैं । पति के न रहने पर या परित्यक्ता बना देने पर अपना और बच्चों का निर्वाह उन असहायों को किस प्रकार करना पड़ता है, उसे देखकर करुणा को भी करुणा आती है ।

बहुप्रजनन, नशेबाजी और स्त्री अवमानना अपने समाज के ऐसे कुप्रचलन हैं जिन्हें एक प्रकार से अभिशाप ही कहा जा सकता है । इनके अतिरिक्त आज हमारे सामाजिक जीवन में ऐसी अनेकों भयंकर कुरीतियों-कुप्रचलनों का समावेश हो गया है जो लकड़ी के घुन की तरह हमें दिन-दिन काट-काट कर बर्बाद किए दे रही हैं । दहेज का प्रश्न ऐसा ही है । कुछ दिन पहले गरीबी से पीड़ित लोग लड़कियाँ बेचकर अपनी आवश्यकता पूरी करते थे । अब अमीरी में अन्धे हुए लोग लड़के बेचकर अपनी हैसियत बढ़ाने की हवस पूरी करते हैं । लड़की बेचने वाले क्षम्य थे, क्योंकि वे गरीबी से मजबूर थे, पर यह लड़के बेचने वाले घृणा, विरोध और दण्ड के अधिकारी हैं, क्योंकि अमीरी के उन्माद में इन्होंने मानवता के साधारण सिद्धान्तों को उठाकर ताक पर रख दिया है । दहेज के अभाव में आज सुयोग्य कन्याएँ दुःखी जीवन बिताने और आत्म-हत्या करने को मजबूर हो रही हैं । इस पैशाचिक प्रथा पर कड़ा प्रहार करने की जरूरत है अन्यथा कन्याओं का जन्म एक शोक-जनक दुर्घटना ही माना जाता रहेगा । कन्या और पुत्र के बीच जो असमानता दिखाई देती है उसका मूल कारण यह दहेज ही है ।

मृत्यु-भोज हिन्दू समाज की दूसरी घृणित प्रथा है । एक ओर घर में मृत्यु होकर चुकी है, एक आदमी उठ गया, घर के लोग शोक विह्वल हैं, दूसरी ओर लड्डू-कचौड़ी उड़ाने की तैयारी हो रही है । एक तो मृत्यु से वैसे ही घर की आर्थिक स्थिति को धक्का पहुँचता है, उस पर भी मृत्यु-भोज

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की कुर्की होने से रहा-सहा घर खाली हो जाता है । तरस तो उन लोगों की हिम्मत पर आता है जो मृत्यु-शोक से आँसू बहाते हुए लोगों के घरों में जाकर दावत उड़ाते हुए मूँछों पर ताब देते हैं और इस प्रकार के अभक्ष्य भोजन पर जिन्हें आत्म-ग्लानि नहीं होती । इस कुरीति की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक है अन्यथा यही थोड़ी-सी कुरीतियाँ हिन्दू परिवारों के आर्थिक ढाँचे को तहस-नहस करती रहेंगी ।

बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह से जन-समाज के स्वास्थ्य पर भारी आघात पहुँचता है, यौन रोग बढ़ते हैं, सन्तान दुर्बल, रोगी और अल्पजीवी होती है, मृत्यु संख्या बढ़ती है, व्यभिचार फैलता है, मानसिक दुर्बलता बढ़ती है और रोगों का मुकाबला करने वाली जीवनी-शक्ति घटती जाती है । इस बुराई को रोकना भी आवश्यक है ।

भूतपलीत, चुड़ैल, चामड़, देवी-देवता, टोना-टोटका, जादू-मंतर के नाम पर जनता व्यर्थ ही ठगी जाती है और परेशान होती है । अज्ञान और अन्धविश्वास ही इनका मूल हेतु है । इन जंजालों की ओर से लोगों को सचेत करना होगा । इन अन्धविश्वासों पर लोग धन और समय ही नहीं गँवाते, वरन् कई बार तो प्राणों तक से हाथ धोना पड़ता है ।

देवी-देवताओं के नाम पर पशुबलि होना यह हिन्दू धर्म पर एक भारी कलंक है । धर्मशास्त्रों में इन घृणित कुकर्मों के लिए कोई स्थान नहीं है । मध्यकाल के स्वेच्छाकारी माँसाहारी अपने दुष्ट उद्देश्यों के लिए देवी-देवताओं को माध्यम बनाकर मद्य-माँस सेवन की छूट प्राप्त करते रहे हैं । राज्याश्रयी पंडितों ने अपने अन्नदाताओं को प्रसन्न करने के लिए वैसे ही श्लोक, देवता और विधान गढ़ दिए । बकरीद पर दूसरे धर्म वाले जितने पशु काटते हैं, हिन्दू नवदुर्गाओं में उससे प्रायः छह गुने पशु काट डालते हैं । अनुमान है कि बंगाल, राजस्थान और पहाड़ी प्रान्तों में करीब ४ लाख पशु देवी-देवताओं के नाम पर काटे जाते हैं । लोग माँसाहार करें यह दूसरी बात है पर धर्म जैसे पवित्र तत्व को, देवी-देवता जैसे पवित्र नाम को कलंकित किया जाए, यह बिलकुल दूसरी बात है, हिन्दू धर्म की महानता इससे कलंकित और नष्ट होती है । इस घृणित प्रथा का अन्त करके हमें अपने धर्म पर लगी हुई एक बड़ी कालोंच को धोना है ।

शास्त्रीय वर्णाश्रम धर्म बड़ा ही उत्तम आदर्श था । गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर बनी हुई जातियाँ समाज के स्वस्थ संगठन में बड़ा योग देती रही हैं, पर उनकी उपयोगिता तभी है जब तक कि वे कार्य विभाजन तक ही सीमित रहे । जब वे एक वंश को दूसरे से, एक पेशे को दूसरे पेशे से नीचा बताती हैं, आपस में घृणा-फूट और असमानता पैदा करती हैं तो वे निरुपयोगी ही नहीं हानिकारक भी बन जाती हैं । आज हिन्दू समाज आन्तरिक भेदभाव, फूट और भिन्नता की बीमारी से क्षय रोगी की तरह पीड़ित हो रहा है । विधर्मी इसका भरपूर लाभ उठा रहे हैं । ईसाई और मुसलमानों की संख्या दिन-दिन तेजी से बढ़ती चली जा रही है । ब्राह्मण और अब्राह्मण के मतभेद बढ़कर उत्तर दक्षिण भारत के बँटने का प्रश्न पैदा हो रहा है । यदि समय रहते हम न चेते तो भारत में एक नहीं अनेकों पाकिस्तान बनेंगे । द्रविणस्तान, सिखस्थान ही नहीं हर जाति एक-एक 'स्थान' बनाने की माँग करेगी । चुनावों में आजकल जाति-पाँति का सिद्धान्त बहुत काम करता है । अन्य कार्यों में भी जातीय पक्षपात काम करता है । यह विष राष्ट्र के सामाजिक विकास में भारी बाधक है । इस समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार करके उसका हल खोजना होगा । गायत्री परिवार इस दिशा में निष्क्रिय न रहेगा ।

भारतीय नारी समाज की स्थिति भी दयनीय है । उसे घर की चहारदीवारी में, पर्दे में इस प्रकार कैद किया गया है कि वह मानवोचित जीवन बिताना, परिवार की उन्नति में, सुख, समृद्धि में सहायक होना तो दूर उलटे परावलम्बी होने के कारण वह अपने और दूसरों के लिये भार रूप होती है । पिता के लिए वह भार रूप, पति उसे बिना दहेज लिए मरी बछिया की तरह स्वीकार करने को तैयार नहीं, विधवा हो जाने के बाद किसी को फूटी आँख से नहीं सुहाती । नारी सबके लिए भार रूप है । कई छोटे बच्चे छोड़कर जब निर्धन पति मरता है तो उस विधवा की क्या दुर्दशा होती है, उसे देखकर पत्थर के कलेजे भी पिघल पड़ते हैं । इस दयनीय दशा से नारी की स्थिति में कुछ सुधार करना होगा । उसे इतना अवसर जरूर दिलाना होगा, उसमें इतनी योग्यता और शक्ति अवश्य उत्पन्न करनी होगी कि वह किसी के लिये भार रूप न रहे, मुसीबत के वक्त अपने पैरों पर खड़ी हो सके और अपनी क्षमता के आधार पर घर के लिए एक अच्छी सहायक सिद्ध हो सके ।

हमारे तीज-त्योहार, पर्व, व्रत-उपवास, तीर्थ, षोडस संस्कार, पंडित-पुरोहित, साधू-बाबाजी एक ढकोसला मात्र रह गए हैं । इनके पीछे जो आदर्श, सिद्धान्त, कार्यक्रम एवं संदेश छिपे हुए थे वे तो गायब हो गये केवल निर्जीव लाश की तरह इनका ढकोसला जीवित है । भारतीय संस्कृति के महान् आदर्शों को जाग्रत रखने के लिए यह सभी कर्मकाण्ड, पर्व एवं धर्मसेवी नितान्त आवश्यक हैं । उनको उपयोगी एवं सामाजिक प्रगति में सहायक बनाकर ही प्राचीनकाल की भाँति हम सामाजिक सुख-शांति की ओर बढ़ सकते हैं । इस क्षेत्र में समुचित सुधार करना आवश्यक है । हिन्दू धर्म में दान के नाम पर धन का भारी अपव्यय होता है । यदि वह सच्चे धर्म कार्यों में लगे तो यह देश सच्चे अर्थों में धर्मात्मा बन जाए, धर्म की स्थिरता एवं आय-वृद्धि में भारी सहायता मिले । कुपात्रों के हाथों में दान जाने से अनेकों अनैतिकताएँ एवं बुराइयाँ पैदा होती हैं, इन्हें रोकने के लिये दान देते समय उसके सदुपयोग-दुरुपयोग का, पात्र-कुपात्र का, परिणाम का विवेक जाग्रत करना होगा, तभी हिन्दू धर्म की उदार दान परम्परा का समुचित सत्परिणाम उत्पन्न हो सकेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके अतिरिक्त खाद्य पदार्थों में मिलावट, नकली सस्ती अपूर्ण औषधियों का निर्माण, अभक्ष्य भोजन, नशेबाजी, व्यभिचार, सिनेमा, गंदी गालियाँ, अशिष्ट व्यवहार, आलस्य, फैशनपरस्ती, विलासिता, शेखीखोरी आदि अनेकों सामाजिक बुराइयाँ ऐसी हैं जिनको दूर करने के लिये पूरा प्रयत्न करना होगा । गौ-रक्षा, जीव-दया जैसी कितनी ही समस्याओं का मानवीय दृष्टिकोण से हल करना है ।

गरीब और अमीरों के बीच जो बहुत भारी असमानता है वह कम करनी होगी । बेकारी और गरीबी से, अशिक्षा और अविद्या से टक्कर लेनी होगी । राजनीति में जो ढील-पोल चल रही है उससे अनैतिकता दिन-दिन बढ़ रही है । अनुशासन, नियंत्रण और दण्ड का सूत्र निर्बल एवं दुलमुल होने के कारण समाजद्रोही तत्वों को खुलकर खेलने का अवसर मिल रहा है, इन छेदों को बन्द करना होगा ।

नव-निर्माण की दिशा में अनेक काम करने को पड़े हैं । उनकी जिम्मेदारियों से इन्कार करने से काम न चलेगा वरन् आवश्यक कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए हमें तत्पर होना पड़ेगा । भावनात्मक, बौद्धिक एवं सामाजिक क्रांति का, समाज में स्वस्थ परिस्थितियाँ पैदा करने का जो उत्तरदायित्व आज हमारे ऊपर आया है उसे पूरा करने के लिए हम सबको मिलकर तत्पर होना होगा ।

दिशा-धारा मोड़नी ही पड़ेगी

भेड़-चाल का प्रचलन एक ऐसा कौतूहल है, जिसे अपनाकर एक अन्धी भेड़ एक के पीछे एक चलती जाती है और खाई-खड्ड में भी गिरकर अपनी दुर्गति आप करती रहती है । बहुसंख्यक भीड़ के साथ कहीं भी चल दौड़ने की प्रवृत्ति ने ऐसे मेलों-ठेलों का सृजन किया है जिसमें पैसा और समय तो बहुत बर्बाद होता है, पर गंदगी फैलाने और धक्के खाने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगता ।

नशेबाजी को ही लें, उसमें किसी को भी कुछ भी, किसी प्रकार भी कोई लाभ नहीं है, पर तथाकथित बड़ों की देखा-देखी करते हुए छोटे भी उसी आदत को अपनाने लगते हैं और हर दृष्टि से घाटे ही घाटे में रहते हैं । पर उस अनुकरण की प्रवृत्ति को क्या कहा जाय जो विवेक को उभरने ही नहीं देती । मूढ़मान्यताएँ, कुरीतियाँ, अन्धपरम्पराएँ, अवांछनीयताएँ इसी प्रकार चली और बढ़ी हैं, उनके कारण अहित भी कम नहीं हुआ है । विचार कर सकने वाले, उचित-अनुचित का विवेचन-विश्लेषण करते हुए भी देखे जाते हैं । अवांछनीयता के विरुद्ध वे जब-तब कुछ कहते हुए भी सुने जाते हैं । कभी-कभी तो उनके शब्दों में कड़कपन भी होता है, पर देखा यह जाता है कि प्रगतिशीलता के प्रवक्ता भी प्रकारान्तर से लुक-छिपकर वही करते हैं जो अपने समीपवर्ती बहुजनों को करते हुए देखते हैं, तब न जाने उनकी उच्च शिक्षा, बुद्धिमत्ता, विचारशीलता किस खेत में घास चरने चली जाती है, जब औचित्य को अपनाने का प्रश्न आता है ।

उदाहरण के लिए छोटे-बड़े नशों का दिन दूना रात चौगुना प्रयोग बढ़ता ही जाता है । बहस की चुनौती देने पर इन प्रयोक्ताओं में शायद ही कोई अपनी अपनाई हुई आदत का औचित्य सिद्ध कर सके । इसी प्रकार विवाह-शादियों में होने वाली धूम-धाम का, दहेज और जेवर का, खर्चीले प्रदर्शनों का कदाचित ही कोई औचित्य सिद्ध कर सके, फिर भी होता वही रहता है जो लकीर के फकीर बने रहने के अतिरिक्त और कुछ करने और सोचने ही नहीं देता । सजधज का, खर्चीले फैशन, ठाठ-बाट बनाने का नशा भी ऐसा ही है जिसकी विडम्बना को किसी भी दृष्टि से औचित्य की कसौटी पर खरा सिद्ध नहीं किया जा सकता । कौन वस्तुतः कितना सम्पन्न है और किसकी हैसियत सजधज में कितना फूँकने की है, इसे परिचित लोगों में से प्रायः सभी जानते हैं, फिर भी आश्चर्य इस बात का है कि अपनी अमीरी का ढकोसला खड़ा करने के लिए न जाने क्यों लोग अपव्यय में इतना खर्च करते रहते हैं जिसे बचाकर दूसरे उपयोगी कामों में खर्च करना समझदारी की सीमा में आ सकता था ।

मनुष्य को बुद्धिमान कहने में कोई अत्युक्ति नहीं, क्योंकि उसने कमाई के, प्रपंच के इतने तरीके खोज निकाले हैं कि उसके लिए साधारण बुद्धि से काम नहीं चल सकता । एक-दूसरे को भ्रमित करने और ठगने की कला भी अब इतनी विकसित हो गई है कि उसके प्रयोक्ताओं को नासमझ कहने की यकायक हिम्मत ही नहीं पड़ती । बड़प्पन भले ही वास्तविक अर्थों में पास न फटकता हो, पर उसे दूसरे पर रौब गाँठने के लिए लोग इस बुरी तरह प्रयोग करते हैं कि गतिविधियों में से अधिकांश को हेय स्तर का ही ठहराया जा सकता है, पर किया क्या जाय ? प्रचलन तो प्रचलन ठहरा ? अच्छाइयों का अनुकरण करने की भले ही हिम्मत न पड़े, पर बुराइयों को सीखने और अपनाने के लिये वह अपनी तत्परता एवं चतुरता का परिचय पग-पग पर, पल-पल पर देता रहता है ।

इस समूचे प्रपंच को बुद्धिमत्ता कहा जाए या मूर्खता इसका निर्णय भी ठीक प्रकार बन नहीं पड़ता । यह बहुमत की जीत होने का जमाना है । अधिकांश लोग जीवन में जो कुछ करते हैं, उसे झुठलाया कैसे जाए ? दूसरी ओर यह भी सोच उभरता है कि इस संसार में मक्खी-मच्छरों, कीट-पतंगों की इतनी बड़ी संख्या है कि उनकी तुलना में मनुष्यों की गणना तो सहायकों में भी नहीं हो सकती । ऐसी दशा में उन्हीं की प्रभुता का यशगान किस प्रकार एवं किससे किया जाए ?

गम्भीरतापूर्वक देखने और सोचने से ऐसा कुछ प्रतीत होता है कि समझदारों के ऊपर नासमझी सवार हो गई है और बहुसंख्यकों को सीधा रास्ता छोड़कर उल्टे पैर चल पड़ने की 'ऊत' सूझ रही है । लाभ के स्थान पर हानि ही अर्जित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर रहे हैं । तात्कालिक लाभ के लिये, भविष्य को अन्धकारमय बनाने के लिये जाल में जा फँसने वाली मछलियों और चिड़ियों की तरह अपनी दुर्गति करते देखे जाते हैं ।

लगता है कि इसी दिशा में प्रवाह चलता रहा तो अनर्थ हुए बिना रहेगा नहीं । विकृत मनःस्थिति, विपन्न परिस्थितियाँ बने बिना रह ही नहीं सकतीं । उनकी प्रतिक्रिया कुछ के लिए ही नहीं वरन् हर किसी के लिए विपत्ति बनती है । भड़की हुई चिंगारी भले ही किसी भी जगह से उछली हो, छप्परों में ज्वाल-माल बनाते-बनाते समूचे गाँव-नगर को अपनी चपेट में ले लेती है । सूखे के साथ गीला भी जलता है । गेहूँ के साथ घुन भी पिसता है । दुर्जनों द्वारा किए उपद्रव सज्जनों को भी अछूता नहीं रहने देते । इसलिए प्रवाह को उलटने के लिए ऐसे ही बाँध बनाने पड़ेंगे जो बहती नदी को, नदी के बहाव को रोककर उसकी दिशा बदल देने में समर्थ होते हैं ।

बात एक-दो को सम्भालने से नहीं बनती । जब सारा अँवा ही खराब हो गया हो तो उसे दुबारा पकाने की आवश्यकता पड़ती है । कुएँ में भाँग घुली हो तो उसमें भरे हुए सारे पानी की सफाई करनी पड़ती है । माहमारी का इलाज समूचे इलाके का वातावरण बदलने से ही बन पड़ता है । कुछेक मरीजों का इलाज कर देने पर छूत का रोग तक कहाँ जाता है ।

सुधार परिष्कार की दिशा में इतने बड़े प्रयत्न करने होंगे जैसे कि बादल बसरते और आग जैसी तपती जमीन को जल भण्डार से भरते और नए सिरे से नई हरियाली उगाते हैं । इसी प्रयत्न का दूसरा नाम है 'लोक-मानस का परिष्कार'—सत्प्रवृत्तियों का संवर्द्धन और घुटन भरे प्रदूषण का नये सिरे से परिशोधन ।

इसकी आरम्भिक तैयारी इस प्रकार हो सकती है कि जन-जन को विचार विकृतियों के कारण उत्पन्न हो रही विनाश विभीषिकाओं से अवगत कराया जाय और उन्हें तर्क, तथ्य, प्रमाण, उदाहरण प्रस्तुत करते हुये इस बात के लिए सहमत किया जाए कि वर्तमान प्रचलनों का, आदतों का, मान्यताओं का नए सिरे से आकलन किया जाए और उसमें से जो औचित्य की कसौटी पर खोटा निकलता है, उसे जाली सिक्के की तरह सदासर्वदा के लिये विनष्ट कर दिया जाए ।

इसी समूची प्रक्रिया को यदि सार संक्षेप में कहना हो तो विचार क्रान्ति के रूप में इसका उल्लेख किया जा सकता है । जन-मानस के परिशोधन के रूप में भी ।

संसार भर में निवास करने वाले प्रायः ६०० करोड़ मनुष्यों में से अधिकांश को इन्हीं विकृतियों के पक्षधर उन्माद ने घेर रखा है । उनकी आकृति में तो कोई बड़ा अन्तर नहीं दीखता, पर इतना जरूर प्रतीत होता है कि मानसिकता की प्रवृत्ति-विचारधारा ही बुरी तरह गड़बड़ा गयी है । इसका आत्यन्तिक समाधान तो विश्व-नियन्ता की सत्ता ही प्रस्तुत करेगी, पर संसार के मूर्धन्यजनों को भी इतना तो करना चाहिए कि दिग्भ्रान्तों का सही मार्ग-दर्शन करने के लिए अनुरोध भी करें और उन पर दबाव भी डालें ।

परम्पराओं में घुसी हुई अवांछनीयता

विज्ञान ने अपनी प्रामाणिकता अर्जित की है । इसका कारण यह रहा है कि उसने स्वतंत्र चिन्तन का सहारा लिया है । पिछले लोग क्या कहते और क्या करते रहे हैं, इस ओर उसने तनिक भी ध्यान नहीं दिया । सदा एक ही दृष्टि रखी कि अधिक सुविधा प्राप्त करने के लिए अधिक सोच-विचार करने और अधिक पुरुषार्थ करने से पीछे न हटा जाय । सत्य को आधार माना जाय । आज जो बात जिस रूप में समझी गयी है, उसे भविष्य में भी उसी रूप में मानते रहा जाय, इसका आग्रह न किया जाय । यही कारण है कि अन्वेषणकर्त्ताओं ने जिस आविष्कार को, सिद्धान्त को, आरम्भ में जिस रूप में उपलब्ध किया उसे सदा उसी रूप में मानते रहने के लिये हठ नहीं किया । आरम्भ में सभी आविष्कृत यन्त्र अनगढ़ स्तर के थे । उनसे इतनी आशा भर बँधती थी कि यदि प्रयत्न जारी रखा जाए, सुधार करते रहा जाए तो वह दिन भी आएगा जब अधिक अच्छी स्थिति उपलब्ध की जा सकेगी, अधिक बड़ी सफलता प्राप्त की जा सकेगी ।

तनिक-सी सफलता प्राप्त कर लेने पर यदि उसे पूर्ण मान लिया गया होता, उतने भर को ही सब कुछ समझा या कहा गया होता तो प्रगति का द्वार बन्द हो जाता । जितना कुछ हाथ लगा था उसी पर सन्तोष करके जहाँ का तहाँ अड़े रहा गया होता । अपने को अल्पज्ञ मानना और अधिक स्पष्ट सत्य तक पहुँचने के लिए प्रयत्नरत रहना । यही दो विशेषताएँ ऐसी हैं जिन्होंने विज्ञान को प्रगति-पथ पर आगे बढ़ने का अवसर भी दिया और साथ ही उसे यथार्थवादी, तथ्यान्वेषी समझकर सार्वभौम सम्मान भी दिया ।

विज्ञान की प्रामाणिकता पर अँगुली नहीं उठ सकती । जिस सिद्धान्त पर जापान में बिजली बनती है, उसी सिद्धान्त पर जर्मनी में भी । जो व्याख्याएँ-विवेचनाएँ की जाती हैं, उसमें किसी का न तो पक्षपात होता है न आग्रह । यदि भविष्य में किसी सुधार संशोधन की गुंजायश दीखती है तो बालक का कथन भी वयोवृद्धों की तुलना में अधिक महत्त्व प्राप्त करता है । उसे माना भी जाता है और अपनाया भी । पुरातन मान्यताएँ कुछ भी रही हों जब उनमें त्रुटि प्रतीत हुई तो उस वर्ग ने नये तथ्यों को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया । कभी पृथ्वी को स्थिर माना जाता था, पर पीछे जब उसके गतिशील होने का पता चला तो प्रमाणों को सभी ने सर्वत्र स्वीकार किया । किसी ने भी पूर्व मान्यताओं का पक्षधर होने की दुहाई नहीं दी । न पूर्ववर्ती प्रतिपादनों को झूठा ही ठहराया गया । केवल इतना ही समझा गया कि पुरातन पर्यवेक्षकों की दृष्टि में जो तथ्य थे, उनके आधार पर वे पृथ्वी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का स्थिर होना नहीं मानते थे । इसलिए उनकी नीयत पर किसी प्रकार का हमला नहीं किया गया । मात्र इतना कहकर ही बात समाप्त कर दी गई कि हम सभी सत्य के अन्वेषक हैं । यात्रा में क्रमशः आगे बढ़ा जाता है । इसमें जो कदम भूतकाल में उठ चुके हैं, उनका तिरस्कार नहीं किया जाता, वर्तमान में जहाँ गति हो रही है उसे अधिक तत्परता के साथ परखा जाता है । यदि कहीं कोई सन्देह हो तो सुधार लिया जाता है । साथ ही यह आशा रखी जाती है कि भविष्य में और अधिक प्रामाणिक तथ्य हस्तगत हो सकते हैं । ऐसी दशा में आज की मान्यता को छोड़ने का कोई दुराग्रह नहीं करेगा, वरन् जो नया संशोधन सही सिद्ध हुआ है उसे बिना हिचक के अपना लिया जाएगा । वैज्ञानिक प्रगति का सिलसिला इसी आधार पर चलता रहा है और जब तक प्रस्तुत आधार को स्वीकारा जाता रहेगा, तब तक उसकी प्रगति निरन्तर होती रहेगी । हमें सत्य का दावेदार नहीं होना चाहिए, वरन् उसकी खोज में निरत पथिक भर अपने को मानना चाहिए ।

विज्ञान उपर्युक्त आधार अपनाकर तथ्यान्वेषी के रूप में अपनी प्रामाणिकता प्राप्त कर चुका है । जो अधूरापन रह गया है वह यह कि नीतिमत्ता के प्रति उसका यही आग्रह नहीं रहा फलतः उसकी आवाज आधी-अधूरी रह गई । वह ज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश न कर सका । औचित्य के समर्थन में अपनी निष्ठा नियोजित न कर सका । इसलिए उसे भौतिक दृष्टि से सफल और आध्यात्मिक दृष्टि से असफल माना जाता रहा है । यही उसकी अपूर्णता है ।

वैज्ञानिक उपलब्धियों ने सुविधाओं का संवर्द्धन तो किया पर उनका बँटवारा न्यायोचित ढंग से हो सके, इसके लिए प्रयत्न नहीं किया । सम्पन्न, समर्थ और चतुर लोगों ने वैज्ञानिक उपलब्धियों का अनुचित सुविधाओं के लिए भी उपयोग किया । अतएव वे समर्थ से अधिक समर्थ, सुखी से अधिक सुखी बनते गये । दूसरी ओर जिनकी समर्थता, चतुरता में कमी थी वे घाटे में रहे । उन्हें गरीब से अधिक गरीब, पिछड़े से अधिक पिछड़ा बनना पड़ा । विज्ञान ने अपने आपको न्याय एवं औचित्य का पक्षधर नहीं बनाया । इस दृष्टि से उसकी प्रामाणिकता अधूरी रह गई कि दूसरे के साथ पवित्रता न जुड़ सकी । यही वह त्रुटि है जिसके कारण भौतिकवादियों की वैज्ञानिक उपलब्धियों को कोसा जाता है ।

प्रस्तुत परिस्थिति में इस अभाव की पूर्ति 'ज्ञान' को ही करनी होगी । विज्ञान यदि अपने को पदार्थजन्य सुविधा तक सीमित रखता है तो उसका अधूरा काम 'ज्ञान' को अपने कन्धे पर लेना चाहिए, पर यह ठीक तरह बन तभी पड़ेगा जब विज्ञान की मूल प्रवृत्ति 'तथ्यान्वेषी' होने की प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाए ।

ज्ञान पक्ष ने मनुष्य को बहुत कुछ दिया है । चिन्तन, चरित्र, रुझान, व्यवहार की दृष्टि से मनुष्य समाज की शानदार सेवा करने का उसका दावा है । समाज को सुगठित करने की दृष्टि से भी उसके प्रयासों-प्रयोगों ने कारगर योगदान दिया है ।

ज्ञान का अभिप्राय है कि चेतना की दिशा-धारा का सही निर्धारण हो । जानने को हम बहुत-सी बातें जानते और मानने को अनेकानेक मान्यताएँ अपनाते हैं, पर उनमें से कितना उपयोगी, तथ्य-संगत एवं परिणाम में सुखद है, इसका विवेचन कदाचित ही कभी करते हैं । चिरकाल से प्रचलित अवधारणाएँ परम्परा कहलाती हैं । इन दिनों जो कुछ बहुत लोगों द्वारा किया, माना जाता, अपनाया जाता है, उसे प्रचलन कहते हैं । परम्पराओं और प्रचलनों के दो पहियों पर अपने जीवन-क्रम की गाड़ी लुढ़क रही है । उसमें विचारशीलता, दूरदर्शिता की धुरी है ही नहीं । ऐसी दशा में यही कहा जा सकता है कि बुद्धिमत्ता की मानवीय विशेषता का परित्याग करके हम प्रवाह में बहने वाले कूड़े-कचरे की तरह उधर बहे जा रहे हैं, जहाँ नियति हमें घसीटती-धकेलती लिए जा रही है ।

उदाहरण के लिए जाति-पाँति के आधार पर हुए विलगाव और ऊँच-नीच के भाव को लिया जा सकता है । कभी व्यवसायों के आधार पर वर्ग पनपे थे । जो जिस कार्य पद्धति को अपनाता था उसे पीढ़ियों तक उस उद्योग में निष्णात रहने के लिए एक परम्परा बना दी जाती थी कि उस परिवार के लोग उसी प्रयास में निरन्तर निरत रहकर अमुक प्रकार का उत्पादन बढ़ाएँ । इससे उत्पादकों और उपभोक्ताओं का संख्या संतुलन बना रहता था । बेकारी जैसी समस्या सामने नहीं आती थी । पैतृक धन्धा चलाते रहने का प्रचलन रहने पर नया धन्धा खोजने और नये सिरे से उसे सीखने, साधन जुटाने की आवश्यकता न पड़ती थी । यही जाति-पाँति का प्रमुख आधार था । उनके साथ ऊँच-नीच का कोई भेदभाव नहीं था । अभी भी एक व्यवसाय वाले दूसरे व्यवसाय वालों के साथ घनिष्टता रखते और आदान-प्रदान करते हैं । किसान, अध्यापक, व्यापारी, शिल्पी, चिकित्सक आदि वर्गों में से कोई किसी को ऊँचा-नीचा नहीं मानता और न अपनेपन का दायरा संकुचित करके उस छोटे समुदाय को अपनों में गिनता है । उत्सव आयोजनों में सभी प्रियजन चाहे जिस वर्ग विशेष के क्यों न हों बुलाए जाते हैं । यही उचित भी है और यही उपयोगी भी ।

इस संदर्भ में इस विकृति का प्रवेश हो गया कि जन्म से जाति मानी जाती रहे । उसमें भी शाखा-प्रशाखा के रूप में अनेकानेक उपजातियों का उद्भव हो गया । इतना ही नहीं इन वर्गों ने अपने-अपने को श्रेष्ठ और दूसरों को निकृष्ट बताना शुरू कर दिया । बात कहने तक ही सीमित न रही, वरन् उसके साथ और भी कितने ही अवांछनीय तत्व जुड़ते चले गये । विवाह-शादियों के लिए अपने ही वर्ग की सीमा-रेखा खींच ली गई । फलतः छोटे-छोटे वर्गों में अच्छे स्तर के वर-वधू खोजना कठिन हो गया । सुसंस्कृत परिवारों में तो सुयोग्य लड़के-लड़की मिल जाते हैं, पर जिनकी स्थिति पिछड़ी हुई है उस समुदाय में अच्छे लड़के मिल सकना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कठिन हो गया है । दहेज की माँग इसी आधार पर बढ़ी । ढूँढ़-खोज के लिए बड़ा वर्ग या समुदाय रहा होता तो न उपयुक्त जोड़े मिलने में इतनी भाग-दौड़ करनी पड़ती और न दहेज माँगने या देने का रिवाज चलता ।

उत्सव आयोजनों में ब्याह-बारात, मृतक संस्कार आदि में जब प्रधानतया अपने वर्ग के लोग आते हैं तो उनके प्रति संकीर्ण आत्मभाव भी बढ़ना स्वाभाविक है । ऐसी दशा में उनके साथ पक्षपात भी चलता है । कुछ को पक्षपात का विषय बनाया जाए तो शेष के साथ उपेक्षा बरतने की बात भी चल पड़ती है । ऊँच-नीच का भाव रहने पर कुछ के साथ घनिष्ठता और कुछ के साथ परायेपन का भाव भी पकता है । बीमारी, विवाह-शादी या व्यावहारिक पक्षपात तक ही सीमित नहीं रहती बात आगे बढ़कर राजनीति में भी प्रवेश करती है और वोट माँगने, देने में अपनी बिरादरी को प्रमुखता देने का सिलसिला चल पड़ता है । इससे विष-बेल और भी गहरी जमती, तैयार होती और फैलती देखी जाती है । भारतीय समाज संगठनों में भारी दोष यह है कि वह जाति-पाँति के आधार पर विभाजित हो गया है । समग्र संगठन की एकात्मता छिन्न-भिन्न हो गई है । विदेशी आक्रमणों की सफलताओं का प्रमुख कारण यही रहा है कि प्रतिरोध की सम्मिलित शक्ति विकसित न हो सकी । अभी भी सामान्य व्यवहार में भी किसी छोटे गाँव तक को एक गाँव में नहीं गिना जाता, वरन् उसमें रहने वाली बिरादरियों को अलग-अलग छाँटकर लेखा-जोखा लेना पड़ता है । सभी के रस्म-रिवाज अलग हैं । किन्हीं जातियों में बाल-विवाह, विधवा-विवाह, घूँघट-पर्दा आदि का रिवाज है, किन्ही में नहीं । किन्हीं जातियों में लड़के के बदले दहेज माँगा जाता है, किन्हीं में लड़कियों के बदले । इसी प्रकार जातियों के हिसाब से अनेकानेक विभेदों का अन्तर दीख पड़ता है । जब तक देश इस प्रकार विशृंखलित रहेगा, तब तक अनुसूचित जातियों, जन-जातियों का विकास उतनी अच्छी तरह, उतनी जल्दी न हो सकेगा, जितना कि होना चाहिए । जिस प्रकार आधा जन-समुदाय स्त्रियों को प्रतिबन्धित कर देने से लुंज-पुंज हो गया, ठीक उसी प्रकार छोटी समझी जाने वाली जातियों में अत्यधिक हीनता इस गहराई तक घुस गई है कि वे सरकारी अनुदानों से लाभ उठाने तक को उद्यत नहीं होते । शिक्षा की उपयोगिता, आवश्यकता तक स्वीकार नहीं करते । अनेक सुविधाओं का लालच देकर उन्हें पढ़ने, निश्चित उद्योगों में लगाने तथा समूचे समाज में घुल-मिलकर रहने के लिए परामर्श दिया जाता है, तो उसे वे अनमने मन से ही सुनते हैं । उसे अपनाने में तो उत्साह कदाचित ही दिखाते हैं ।

मनुष्य एक जाति है । किसी वर्ग या क्षेत्र में रहने से उसे पृथक् नहीं किया जा सकता, किन्तु मध्यकालीन परम्पराओं ने इस अनहोनी को होनी करके दिखा दिया है । पढ़े और बिना पढ़े सभी इसकी चपेट में हैं । ज्ञान के समक्ष चुनौती है कि इस व्यापक अन्धकार से निपटे । मनुष्य को बाधित करे कि वह अवांछनीयताओं से मुक्त होकर प्रगति पथ पर बढ़ चले ।

चित्र-विचित्र ये सामाजिक प्रचलन

क्या उचित है और क्या अनुचित ? इसका निर्धारण पूर्व मान्यताओं के आधार पर नहीं किया जा सकता । पूर्व निर्धारित मापदण्ड औचित्य और अनौचित्य के परखने की कसौटी नहीं हो सकते । यह संसार जितना विशाल है उतना ही विचित्र भी । इसकी विचित्रताओं के कारण ही किसी विद्वान ने इसे बहुरंगी दुनिया के नाम से सम्बोधित किया है । आकृति एवं प्रकृति की दृष्टि से ही नहीं प्रचलनों, रीति-रिवाजों, परम्पराओं तथा मान्यताओं की दृष्टि से भी एक समाज की दूसरे समाज से भारी भिन्नता दिखाई देती है । उनमें परस्पर ऐसा कोई तालमेल नहीं दृष्टिगोचर होता है, जिसके आधार पर यह उद्घोष किया जा सके कि अमुक आचार-संहिता ही प्रत्येक समाज में उचित-अनुचित को परखने का एकमात्र आधार है । सम्भव है एक स्थान पर जिन प्रचलनों एवं परम्पराओं को उचित ठहराया जाता हो उन्हें दूसरे समुदाय में अनैतिक माना जाता हो अथवा एक समाज में जो प्रचलन अवांछनीय समझा जाता हो दूसरे में उसे मान्यता प्राप्त हो । अस्तु उचित अनुचित के बीच अन्तर करते समय दृष्टि खुली रखनी चाहिए तथा देश, काल एवं परिस्थितियों के आधार पर उपर्युक्त निर्धारण करना चाहिए ।

विभिन्न समाजों में विवाह परम्पराओं में परस्पर एक दूसरे को मान्यताओं एवं धारणाओं में भारी अन्तर मिलता है । उदाहरणार्थ-आज के प्रगतिशील समाज में बहुपत्नी प्रथा को हर दृष्टि से अनुपयोगी ठहराया गया है । मुस्लिम धर्म भी जो कभी बहुपत्नी प्रथा का समर्थन करता था, अब उसका विरोध करने लगा है । ऐसे उदार विचारक हो रहे हैं जो बहुपत्नी प्रथा से जनसंख्या वृद्धि की विभीषिका को समझते हुए उसे समाज के लिए हानिकारक बता रहे हैं । हिन्दू आदि धर्मों में भी एक पत्नी रखने का ही प्रावधान है । इसी प्रकार एक स्त्री का एक पति होना लगभग अधिकांश प्रगतिशील समाजों में सामाजिक एवं नैतिक दृष्टि से उचित माना जाता है । इसके विपरीत एक स्त्री का एक से अधिक पति होना अनैतिक समझा जाता है । ऐसी स्त्रियों को व्यभिचारिणी, दुराचारिणी आदि की संज्ञा दी जाती है । यह हर दृष्टि से श्रेष्ठ है कि लोकोपयोगी परम्पराओं का समर्थन तथा अनुपयोगी की भर्त्सना की जाए, पर कितने ही ऐसे समाज भी हैं जहाँ कि बहुपति प्रथा को सामाजिक समर्थन प्राप्त है । वहाँ बहुपति प्रथा को श्रेष्ठ सामाजिक प्रचलन के रूप में आज भी स्वीकार किया जाता है ।

देहरादून जिले के जौनसार क्षेत्र एवं टेहरी राज्यों के कई क्षेत्रों में बहुपति प्रथा के उदाहरण मिलते हैं । वहाँ जब बड़ा भाई विवाह करता है तो उसकी पत्नी अन्य छोटे भाइयों की भी पत्नी मानी जाती है । जौनसार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रीति-रिवाजों का वर्णन 'दस्तूरुलअम्ल' में हुआ है । छोटे भाइयों में से किसी को भी अपने लिए पृथक् अथवा दूसरी पत्नी से विवाह करने की आज्ञा नहीं दी जाती है । यदि छोटा भाई विवाह कर भी लेता है तो भी वह स्त्री सभी भाइयों की स्त्री मानी जाती है । सबसे आश्चर्य की बात यह है कि सभी भाइयों के बीच आपसी स्नेह-सद्भाव में किसी प्रकार की कमी नहीं आने पाती । संयुक्त पत्नी सभी भाइयों को संतुष्ट रखती है । सभी भाई भी उसकी प्रसन्नता एवं सुविधा का पूरा ध्यान रखते हैं । होने वाली सन्तान तो व्यवहार में सबकी मानी जाती है, पर पिता के स्थान पर बड़े भाई का नाम ही लिया जाता है ।

मेक्लेनन नामक विद्वान ने नैयर समुदाय का लम्बे समय तक अध्ययन किया है । इस समाज में भी बहुपति प्रथा के सार्वभौमिक रूप से प्रचलित होने का उसने उल्लेख किया है । मातृ-प्रधान बहुपतित्व की समीक्षा करते हुए मेक्लेनन ने आश्चर्य व्यक्त किया है कि यह देखकर भारी अचरज होता है कि एक पत्नी के साथ रहते हुये अनेकों भाइयों में कभी भी मतभेद की स्थिति नहीं आने पाती । उनके बीच आपसी सहयोग, सद्भाव देखते बनता है ।

इरबान, कुर्ग, टोडा तथा कोटा लोगों में भी यह प्रथा प्रचलित है । मालाबार के इरबान अर्थात् ताड़ी निकालने वाले लोगों के बीच यह मान्यता प्राप्त है । स्थानीय परम्परा के अनुसार सबसे बड़े भाई के साथ अन्य छोटे भाई भी वधू के घर विवाह के लिए जाते हैं, बाद में सभी भाई एक पंक्ति में वधू के दाहिनी ओर समारोह में बैठ जाते हैं । वधू अपने हाथों सबको मीठा पेय पिलाती है । इस रस्म के बाद सब भाई स्त्री सहपति हो जाते हैं । कुर्ग समुदाय में बड़े भाई का विवाह होते ही उसकी पत्नी सभी छोटे भाइयों की पत्नी हो जाती है । नीलगिरी पर्वत के टोडा लोगों में मात्र बड़े भाई की ही शादी होती है । इस क्षेत्र का पर्यवेक्षण करने वाले प्रो. रिचर्स का कहना है कि इस समुदाय में भी बहुपतित्व की प्रथा है । पतियों की श्रेणी में मात्र सगे भाई ही नहीं सगोत्र भाई भी इस समुदाय में आते हैं ।

इस प्रथा के प्रचलित होने के अनेकों कारण बताये जाते हैं । कुछ विद्वानों का मत है कि इन स्थानों पर पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या कम रही है । एक सर्वेक्षण के अनुसार 'खासा' लोगों में पुरुष एवं स्त्रियों की जनसंख्या का अनुपात दो और एक का है । 'खासा' अपने को पाण्डवों की सन्तान मानते हैं तथा यह दलील देते हैं कि द्रौपदी के पाँच पति थे, किन्तु हरबर नामक एक अध्ययनकर्त्ता का मत है कि "बहुपतित्व प्रथा का कारण पुरुष एवं स्त्रियों के अनुपात में अन्तर होना नहीं है, क्योंकि बहुपति प्रथा वाले अन्य क्षेत्रों में नर-नारियों के अनुपात में अन्तर नहीं है ।" वे गरीबी एवं संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली को वास्तविक कारण मानते हैं । प्राय: इन प्रदेशों में रहने वाले लोग पिछड़े एवं निर्धन हैं । वे सोचते हैं कि संयुक्त कुटुम्ब के बने रहने तथा कई भाइयों के बीच एक पत्नी के होने से आर्थिक दबाव नहीं पड़ता है । सभी भाई मिल-जुलकर एक पत्नी तथा उससे होने वाले बच्चों की देख-रेख आसानी से कर लेते हैं । हरबर का कहना है कि "बहुपतित्व प्रथा वाले समुदायों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि परिवार के सदस्यों का सम्बन्ध सूत्र समझौते के आधार पर नहीं परस्पर स्नेह-सद्भाव के आधार पर जुड़ा होता है । पत्नी अपने पतियों के प्रति सेवा-भावी तथा वफादार होती है । पति भी पत्नी-निष्ठा का पूरी तरह पालन करते हैं ।" कारण कुछ भी हो, आज की परिस्थितियों में कौन इस विचित्र प्रचलन को विवेकसम्मत बतायेगा ?

विवाह प्रसंग ही नहीं अन्य रीति-रिवाजों, परम्पराओं एवं प्रचलनों का अध्ययन विश्व के विभिन्न समुदायों में करें तो सर्वत्र विविधता के दर्शन होंगे । प्रथा, परम्पराओं के विषय में कितनी ही मान्यताएँ ऐसी हो सकती हैं जो परस्पर विरोधी हैं । सामाजिकता एवं नैतिकता का स्थूल मापदण्ड जो एक समाज में निर्धारित है, दूसरे में भी वही हो, यह आवश्यक नहीं । ऐसी स्थिति में अपनी ही पूर्वमान्यताओं के आधार पर सत्यानुसंधान कर सकना सम्भव नहीं है । देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुरूप एक समाज की विवेकपूर्ण आचार संहिता को तो स्वीकार किया जाए पर वही कसौटी दूसरे समाज का अध्ययन करते समय न प्रयोग की जाए । क्या उचित है और क्या अनुचित, इसका अन्तर पाने के लिए दृष्टि खुली रखनी होगी तथा पूर्वाग्रहों एवं पूर्व मान्यताओं से मुक्त होकर अध्ययन-विश्लेषण करना होगा, तभी सत्य के निकट पहुँच सकना सम्भव होगा ।

प्रथा-परम्पराएँ सोच-समझ कर ही अपनाएँ

विश्व के सभी समाजों में अनेकानेक प्रथा-परम्पराएँ प्रचलित हैं । जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति अपने समाज, परिवार और कुल की निर्धारित परम्पराओं का पालन करता है । कई परम्पराएँ ऐसी होती हैं जिनके पीछे यदि कोई कारण खोजा जाए तो उनका औचित्य भान होता है और कई एक ऐसी होती हैं जिनके पीछे कोई कारण या आधार मालूम नहीं पड़ते । यदि इस मान्यता से परे रहकर सोचा जाए कि निर्धारित परम्पराओं का पालन करना ही चाहिए तो हम स्वयं कई ऐसी प्रथाओं के अनुयायी बने दिखाई देंगे जो हास्यास्पद हैं ।

प्रचलित परम्पराओं में कई तो ऐसी हैं जिनकी किसी काल में कोई उपयोगिता रही हो, पर अब अनावश्यक हो गयी हैं । अनावश्यक ही नहीं कलंक भी बन गई हैं । जैसे मध्यकाल के अन्धकार युग में जब सुन्दर स्त्रियों का अपहरण कर उन्हें वासना का शिकार बनाया जाने लगा तो उस समय बचपन में ही विवाह कर देने और विवाहित स्त्रियों द्वारा पर्दा करने की परम्परा का औचित्य समझ में आता है, पर अब जब कि वह युग बीत गया है तो भी स्त्रियों द्वारा मुँह ढकने

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की परम्परा ऐसी ही लगती है जैसे उसे किसी अपराध की सजा के रूप में अपना मुँह ढकना पड़ रहा हो । पर्दा एक छोटी-सी बात है, पर इस छोटी-सी बात ने ही स्त्रियों के व्यक्तित्व को कितना कुंठित बनाया है । इसे बदलने की आवश्यकता भी बड़ी तीव्रता के साथ अनुभव की जा रही है ।

न केवल हमारे देश में वरन् दुनिया भर में कितनी ही ऐसी परम्पराएँ प्रचलित हैं जो मनोरंजक होने के साथ-साथ मानवीय बुद्धि पर तरस दिलाती हैं । उदाहरण के लिए मलाया में विवाह बड़े अजीब ढंग से होते हैं । वहाँ विवाह के अवसर पर मिट्टी का एक बड़ा-सा घड़ा बनाकर वर-वधू के बीच रख दिया जाता है । वधू उसके चारों ओर दौड़ती है तथा वर को उसे पकड़ने के लिए पीछे दौड़ना पड़ता है । वधू तो निर्बाध दौड़ती रहती है, पर वर के मार्ग में कन्यापक्ष के लोग बाधा पहुँचाते हैं उसे रोककर अजीबो-गरीब प्रश्न पूछते हैं जिनका उसे उत्तर देना पड़ता है और फिर वधू को पकड़ने के लिये दौड़ना पड़ता है । जब वह वधू को पकड़ लेता है, तब कहीं जाकर वह दौड़ रुकती है ।

अकेले विवाह को लेकर विश्व भर में इतनी भिन्न-भिन्न विचित्र परम्पराएँ प्रचलित हैं कि उन सबकी गणना तो दूर संख्या का अनुमान लगाना भी कठिन है । नाइजीरिया के पूर्वी प्रदेश में विवाह से पूर्व वर को एक विचित्र परीक्षा देनी पड़ती है । लड़के को इस समय सिर पर पशु का सींग रखकर खड़ा कर दिया जाता है और फिर वधूपक्ष की स्त्रियाँ उस पर कोड़ों से आक्रमण करती हैं । लड़के को परीक्षा में खरा उतरने के लिए कोड़ों की मार सहते हुए निरन्तर मुस्काते रहना पड़ता है तथा यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि सिर से सींग गिरने न पावे । इस प्रकार का आक्रमण तीन बार होता है और हर बार स्त्रियाँ अगला आक्रमण करने से पहले लड़के की सहनशीलता को सराहती हैं तथा उसे प्रोत्साहित करती हैं । तीनों बार इस कठोर परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाने के बाद उसके माथे पर पसीने की खोज की जाती है और यदि एक भी बूँद पसीने की देख ली गई तो लड़के को विवाह के सर्वथा अयोग्य ठहरा दिया जाता है ।

पूर्वी अफ्रीका के श्वेत नील क्षेत्र में 'मादी' जाति के लोगों की विवाह रीति विचित्र होने के साथ-साथ मनोरंजक भी होती है । हमारे यहाँ जिस प्रकार लड़के का पिता शादी से पहले लड़की वालों से दहेज ठहराता है, उसी प्रकार 'मादी' जाति की स्त्रियाँ अपनी लड़की के लिए लड़के से मुँहमाँगी रकम वसूल करती हैं । उसका ढंग यह है कि यदि लड़की विवाह के लिये अमुक युवक के साथ तैयार हो जाती है तो युवक उस लड़की के हाथ में वृक्ष की कोमल शाखा बाँध देता है । यह एक प्रकार से कन्यापक्ष के लिये विवाह का प्रस्ताव होता है । वधू की माँ अपनी बेटी के हाथ में टहनी बँधी देखकर अपने पति से लड़के के सामने एक धनराशि की माँग रखते हैं, जिसे लड़का यदि देने को तैयार और समर्थ हो तो विवाह होता है अन्यथा नहीं ।

नेग्रिटो जाति के लोग जो फिलीपाइन द्वीप में रहते हैं ये भी विवाह के लिए विचित्र तरीका अपनाते हैं । विवाह के समय वहाँ वर-वधू एक मचान पर बैठ जाते हैं और अपना सिर परस्पर टकराते हैं । सिर टकराने का यह क्रम तब तक चलता है, जब तक कि दोनों थक न जायें । थकने के बाद वधू वर के साथ अपने घर जाती है और यह देखती है कि वर ने उसके लिए कितने उपहार इकट्ठे किए हैं । यदि एक भी उपहार का अभाव उसे खला अथवा नहीं जँचा तो वह वर को ना-पास कर अपने पिता के घर वापस लौट जाती है ।

ब्राजील देश के आदिवासियों को विवाह से पहले अपने होंठ छिदवाने पड़ते हैं तथा उनमें काठ के कई चक्के लटकाने पड़ते हैं । यदि एक ही लड़की के लिए अधिक प्रत्याशी हों तो वरीयता उसे ही दी जाती है जिसने अपने होठ तथा कान में अधिक चक्के लटका रखे हों ।

न्यू केलीफोर्निया में स्वयंवर प्रथा आज भी प्रचलित है । वहाँ विवाह के इच्छुक सभी युवक अपने हाथों में नारियल की गिरी लिए पंक्तिबद्ध खड़े हो जाते हैं । फिर उनके सामने से लड़की निकलती है । वह जिसके हाथ में की गिरी खा लेती है उसी से उसका विवाह भी हो जाता है । शादी के समय लड़के वाले कन्यापक्ष को मोटी रकम बहू की कीमत के रूप में भी चुकाते हैं । अपने देश में भी कई स्थानों पर परिवार में लड़की का होना सौभाग्यसूचक माना जाता है, क्योंकि उसे ब्याहने पर एक बड़ी रकम मिलती है । मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र में अहीर, गूजर और दूसरे निम्न वर्ण के कहे जाने वाले घरों में लड़की का ब्याह पैसे लेकर किया जाता है ।

फीजी द्वीप के मूल निवासियों में किसी भी युवक का विवाह तब तक नहीं हो सकता, जब तक कि उसके पास पैतृक सम्पत्ति के रूप में मकान न हो । विवाह के सप्ताह भर पहले ही वर को अपने शरीर पर नारियल के तेल की तथा बहू को हल्दी की मालिश करनी पड़ती है, जिसे देखकर लड़की रोना शुरू कर देती है । रो-रोकर जब वह थक जाती है और चुप हो जाती है तो पड़ोस तथा परिवार की स्त्रियाँ उसे जलाशय पर ले जाकर स्नान कराती हैं । नहाने के बाद वर-वधू दोनों ही उस तालाब में मछलियाँ पकड़ते हैं । पकड़ी हुई मछलियाँ भोज में खिलाई जाती हैं और वर-वधू एक ही बर्तन में खाना खाते हैं । इस प्रकार विवाह की रस्म पूरी हुई मानी जाती है ।

अन्य स्थानों पर जिस प्रकार लड़की की ओर से विवाह की पहल होती है उसी प्रकार सहारा के रेगिस्तान में तमनरासेट नामक स्थान में विवाह की पहल लड़की की ओर से की जाती है । यहाँ विवाह की पहल लड़के नहीं करते । इस क्षेत्र में बसने वाली तैरिग जाति के पुरुषों को अपना जीवन-साथी चुनने का अधिकार नहीं है । अपने देश में आमतौर पर जिस प्रकार माता-पिता द्वारा चुने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गये लड़के के साथ कन्या को जीवन बिताना पड़ता है उसी प्रकार तैरिग पुरुष को लड़की ब्याह कर ले जाती है । वहाँ लड़की को अपना जीवन-साथी चुनने का स्वतंत्र अधिकार है ।

वह भी बड़े विचित्र ढंग से । ६०-७० स्त्रियों का समूह एकत्रित होकर नगाड़े बजाना आरम्भ करता है, जो विवाह योग्य युवकों के लिये शादी का आमन्त्रण होता है । नगाड़े की यह विशेष आवाज सुनकर पुरुष बुर्का ओढ़े ऊँटों पर सवार होकर दौड़े चले आते हैं और उस स्थान पर पंक्तिबद्ध बैठ जाते हैं । फिर उन्हें लड़कियाँ विभिन्न तरीकों से जाँचती-परखती हैं तथा उसके बाद अपनी पसन्द के युवक से विवाह करती हैं ।

तैरिग जाति के लोगों में यह एक विशेषता है कि वहाँ स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को बुर्का ओढ़ना पड़ता है । अफ्रीका के टिम्बकटू क्षेत्र में टुआरंग जाति के पुरुष भी इसी प्रकार अपने मुँह को ढककर रखते हैं ।

जहाँ तक लड़के के विवाह के लिए विभिन्न परीक्षाओं से गुजरने का प्रश्न है, वहाँ कहा जा सकता है कि उन तरीकों से पौरुष शक्ति और सुदृढ़ शरीर की परीक्षा की जाती हो । जिन दिनों पुरुष की शक्तिमत्ता परखने के और उपाय न रहे हों उन दिनों यह ढंग भले ही उचित हो । जैसे कि पश्चिमोत्तर तिब्बत के निवासियों में शादी के लिए परीक्षा देते समय अच्छी-खासी पिटाई सहनी पड़ती है । उस क्षेत्र में वर जब विवाह के लिए लड़की के घर जाता है तो इधर-उधर छिपकर बैठे कन्या पक्ष के लोग इस पर अकस्मात टूट पड़ते हैं और थप्पड़ तथा घूँसों से उसकी पूजा करने लगते हैं । उनसे जैसे-तैसे अपनी जान बचाकर वर घर के अन्दर घुसता है तो छोटी बच्चियाँ और लड़के उसकी पिटाई करने लगते हैं । यह 'मंगल कार्य' समझा जाता है और पिटाई करने वालों को दान-दक्षिणा मिलती है । परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाने की खुशी में लड़के वालों की ओर से शाम के समय भोज भी दिया जाता है ।

इन प्रथा-परम्पराओं के सम्बन्ध में जानकर हम लोगों को आश्चर्य भले ही हो, पर अपने यहाँ प्रचलित परम्पराओं को विवेक की कसौटी पर कसें तो वे भी इस स्तर से अधिक ऊँची नहीं जायेंगी । जैसे लड़की के घर विचित्र वेशभूषा पहन कर जाना, बाजे बजाना, घोड़े पर चढ़ना, खाने के समय जूते चुराना आदि-आदि बातें विचित्र ही नहीं किसी जोकर के करतब-सी ही लगती हैं । हमें उनकी विचित्रता इसलिए नहीं खलती कि हम उनके अभ्यस्त हो गये हैं अन्यथा दूसरे लोग जो यहाँ के रीति-रिवाजों की पद्धति से अवगत होते होंगे—उन्हें हँसी आने के साथ-साथ हमारी विडम्बना पर तरस भी आता है ।

विडम्बना इसलिए कि ऊपर जिन रीति-रिवाजों का उल्लेख किया गया वे सब आधुनिक सभ्यता से शताब्दियों पिछड़े समुदायों में प्रचलित हैं । सभ्य और आधुनिक कहे जाने वाले समाजों में जन्म, विवाह और मृत्यु-जीवन की तीन महत्त्वपूर्ण घटनाओं पर सीधे-सादे ढंग से भावाभिव्यक्ति कर दी जाती है, पर हमारे यहाँ विवाह में तो विचित्र रीति-रिवाज पूरे किये ही जाते हैं, जन्म और मृत्यु के साथ भी व्यर्थ के कितने ही टंट-घंट और बखेड़े खड़े करने पड़ते हैं । जैसे जन्म के बाद कुण्डली बनाना, गृह शान्ति करवाना, बच्चे के शरीर पर गेहूँ का गूँथा आटा लेपना और दाई, नाइन, मेहतरानी आदि से कितने ही कतरब करवाना । मृत्यु के समय तो मरने के बाद तेरह दिनों तक न जाने कितने क्रियाकृत्य करने होते हैं ।

यदि उनकी जड़ों को कुरेदा जाए तो वे वैसे ही लगेंगे जैसे एक परिवार में शादी के समय बिल्ली मारने की परम्परा चल पड़ी थी । हुआ यह था कि उस घर में एक बिल्ली बड़ा उत्पात मचाती थी, खाने-पीने की वस्तुओं से लेकर पूजा सामग्री तक में अपना मुँह डाल देती और उन्हें जूठा कर देती तो तंग आकर गृहिणी ने उसे पकड़ कर माँद में बन्द कर दिया । विवाह हो जाने के बाद गृहिणी को उसकी याद आई तो उसे माँद से निकाला तब तक वह मर चुकी थी । उसे निकालते हुए नववधू ने देखा तो समझा कि बिल्ली मारकर माँद में रखना इस घर की कुल परम्परा है । बस उसने भी अपने बेटे की शादी में बिल्ली मारकर माँद में दबा दी और वधू को भी सिखा दिया कि घर में जब कभी शादी हो तो इस परम्परा का पालन अवश्य करना चाहिए ।

वस्तुत: कई परम्पराएँ तो इसी प्रकार चल पड़ीं । ऐसी प्रथाओं का औचित्य किसी भी कोण से समझ में नहीं आता और उनका स्वरूप जंगली जातियों में प्रचलित भिन्न-भिन्न रीति-रिवाजों के समान है । विडम्बना इसीलिए कहा गया है कि कहने को तो हम स्वयं को विश्व को, सभ्यता सिखाने वाली जाति मानते हैं पर परम्पराभक्त इतने हैं कि सैकड़ों साल पहले मर चुकी प्रथाओं की लाश को भी अब तक छाती से चिपकाए हुए हैं, उनका मोह छोड़ने के लिए किसी कीमत पर तैयार नहीं ।

क्या इसी परम्परा-भक्ति से हम पुन: जगद्गुरु का वर्चस्व प्राप्त करने की आशा करते हैं ? क्या इन्हीं ऊल-जलूल हरकतों द्वारा हम दुनिया को सभ्यता सिखाने का दावा करते हैं ? और क्या इन्हीं निराधार मूढ़तापूर्ण बातों द्वारा आज की दौड़ती हुई सभ्यता के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की आशा रखते हैं ? या तो हमें परम्पराओं की अन्ध-भक्ति छोड़कर उन्हें विवेकपूर्वक अपनाने की रीति-नीति अपनानी चाहिए अथवा उज्ज्वल भविष्य के ख्याली पुलाव पकाना छोड़ देना चाहिए ।

छाती से चिपकी निरर्थक प्रथा-परम्पराएँ

विश्व में अनेकों प्रथा-परम्पराएँ प्रचलित हैं । उनमें से कुछ ही उपयोगी होती हैं, शेष तो गये-गुजरे जमाने की ऐसी स्मृति मात्र ही होती हैं, जिनकी अब कोई उपयोगिता नहीं रही । सम्भव है किन्हीं दिनों कोई कारण ऐसा रहा हो, जिसमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ये बातें प्रयुक्त हुई हों, उपयुक्त समझी गई हों, पर परिवर्तित परिस्थितियों में वे आज अनावश्यक और उपहासास्पद मात्र रह गई हैं ।

कितनी ही रूढ़ियाँ अभी ऐसी हैं, जिनकी उपयोगिता किसी प्रकार समझ में नहीं आती । वे विचित्र और विलक्षण लगती हैं । उन्हें अपनाए रहने का कोई तुक नहीं दीखता, फिर भी लोग उन्हें इसलिए छाती से चिपकाए बैठे हैं कि वे बहुत दिनों से पूर्वजों के समय से चली आ रही हैं ।

सर्वाधिक परम्पराएँ विवाह से सम्बन्धित हैं । अपने देश में करोड़ों की संख्या में, आदिवासी, जनजातियाँ निवास करती हैं । इनमें से अधिकांश घने जंगलों में, दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में रहती हैं । ऊँची जातियों में जहाँ एक ओर देन-दहेज जैसी क्रय-विक्रय की घृणित परम्परा का प्रचलन है, वहीं पिछड़ी कही जाने वाली इन जातियों की विवाह की अपनी चित्र-विचित्र प्रथाएँ हैं । इन लोगों में सामान्यत: वर, वधू से बड़ा होता है, परन्तु असम की कुछ जातियों में वधू पाने के लिए प्राय: लड़के वालों को कन्या के माता-पिता को कुछ धन देना पड़ता है । यह राशि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति के अनुरूप कम या अधिक होती है । सन्थाल, हो, ओरांव, खडिया, गोण्ड, नागा, कूकी, भील तथा कुछ अन्य जातियों में वधू के बदले धन देने का रिवाज है ।

प्रगतिशीलता के युग में भी आजकल हिन्दू समाज में विवाह के समय तथाकथित सभ्य-सुशिक्षित लड़कों की ऊँची-ऊँची रकमें बोली जाती हैं, परन्तु इसके विपरीत कोल्हन की 'हो' जाति में लड़की के पिता परिवार के सम्मान को आधार बनाकर अपनी कन्याओं के विवाह में बहुत अधिक धन माँगते हैं । परिणाम यह होता है कि कोल्हन ग्रामों में चालीस-पचास वर्ष तक स्त्रियों का अविवाहित रहना सामान्य बात है । पुरुष धन दे नहीं पाते अतएव वे भी बड़ी आयु तक विवाह से वंचित रहते हैं ।

मणिपुर की पुरम जाति में वधू को पाने के लिए लड़के को उसकी सेवा-सुश्रूषा करनी होती है । विवाह से पूर्व वह अपने भावी श्वसुर के घर में दो-तीन वर्ष तक नौकरी करता है तथा अपने कार्यों से सभी परिवार के सदस्यों को संतुष्ट करने का अथक् प्रयास करता है । लड़के के निवास, भोजन तथा वस्त्रादि का भार कन्या पक्ष उठाता है ।

छोटा नागपुर की हो, सन्थाल, मुण्डा आदि जनजातियों में उसी प्रकार बलपूर्वक विवाह करने की प्रथा है, जिस प्रकार प्राचीनकाल में क्षत्रिय राजाओं में प्रचलित थी । मजे की बात यह है कि विवाह यदि लड़की के माता-पिता द्वारा भी तय किया जाता है तो भी वे लड़के से यह अनुरोध करते हैं कि उनकी कन्या को वह बलपूर्वक अपहरण करके ले जाये । इसका कारण यह है कि यहाँ बलपूर्वक लड़की से विवाह करने से उसके माता-पिता का सम्मान बढ़ता है तथा समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान मिलता है । प्रारम्भ में लड़की को कुछ विरोध का प्रदर्शन करना होता है, परन्तु अन्त में वह स्वयं सहमत हो जाती है ।

सन्थाल और उनके सजातीय लोगों में वर का चयन लड़की करती है । विवाह के लिए टालमटोल करने वाले के साथ उसे जबरदस्ती तक करना और ठोस उपाय अपनाना होता है । वह प्रात:काल अँधेरे के झुटपुटे में ही उठकर लड़के के घर के एक कोने में जाकर बैठ जाती है । लड़के की माँ उसे निकालने के अनेक प्रयास करती है और असफल रहने पर कन्या की विजय समझी जाती है । तब गाँव के अधिकारी तथा पड़ोसी उस युवक को उस कन्या से विधिवत विवाह करने को विवश कर देते हैं ।

संथाल बिहार की एक जनजाति है । कहने को तो पहाड़ी अंचल में रहने वाले ये आदिवासी लोग हैं, पर विवाह के क्षेत्र में इनमें एक परिपक्वता यह पायी जाती है कि जहाँ अन्य भारतीय जनजातियों में लड़के-लड़की का जल्दी ही विवाह रचा डालने का उतावलापन दिखाई पड़ता है, वहीं संथाली लोग इसके पक्के विरोधी होते हैं । उनकी बिरादरी में लड़के की आयु २५ वर्ष और लड़की की आयु २० वर्ष जब तक नहीं हो जाती तब तक शादी की बात सोची तक नहीं जाती । एक बार विवाह बन्धन में बँध जाने के बाद फिर ये सदा-सदा के लिए दो शरीर एक प्राण होकर रहते हैं । पत्नी को त्यागना अथवा विवाह के पवित्र बँधन को तोड़ना इनमें पाप माना जाता है । अत: एक बार जिससे शादी हो जाती है, मन, वचन और प्राण से जीवनपर्यन्त उसके साथ निर्वाह कर लेते हैं । इनमें विवाह की प्रथा भी विलक्षण-होती है । लड़के-लड़की मेले, बाजार अथवा अन्य किसी सार्वजनिक स्थान में मिलकर स्वयं ही एक दूसरे को पसंद करते और विवाह तय करते हैं । जन्मदर भी इनकी कम है ।

विश्व के अधिकांश भागों में यह प्रथा है कि विवाह के पश्चात् वधू ससुराल में रहती है, परन्तु असम की खासी आदिम जातियों में इसके विपरीत होता है । वहाँ पति अपनी पत्नी के पैत्रिक निवास पर जाकर रहता है तथा केवल धनोपार्जन और सन्तानोत्पादन का साधन भर रह जाता है ।

नागालैण्ड की जनजातियों में लड़के का साहसी और बहादुर होना विवाह के लिए प्रथम अनुबन्ध माना जाता है । ऐसा वर प्राप्त होने के बाद सगाई के रूप में वर-पक्ष वधू-पक्ष को एक दुधारू गाय भेंट करता है और एक वर्ष तक लड़का लड़की वालों के यहाँ रहकर उनके कृषि एवं विभिन्न प्रकार के अन्य कार्यों में सहयोग करता है । इस बीच दोनों पक्ष यदि एक-दूसरे से संतुष्ट हुए तो वर और कन्या की शादी कर दी जाती है । इसे वे एक पवित्र बन्धन के रूप में स्वीकार कर जीवन भर सुख-दु:ख, हर्ष-विषाद में एक दूसरे का साथ निभाते हैं । दूसरे विवाह की प्रथा नागा जाति में भी नहीं पायी जाती । हमें यह विचित्र लग सकता है कि वधू-पक्ष के स्थान पर वर-पक्ष को क्यों देना पड़ता है ? पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मान्यताएँ समय से नहीं बँधी रहतीं । हो सकता है कि आने वाले दिनों में सारे समाज में यही प्रचलन चल पड़े कि गुणवत्ता की कसौटी पर खरा उतरने वाला वर ही सुपात्र माना जाएगा ।

उत्तर प्रदेश के गढ़वाल और कुमाऊँ जिले के 'भोटिया' जनजाति में भी वर-वधू का चयन स्वतंत्र रूप से लड़के और लड़की पर छोड़ दिया जाता है । वे स्वयं एक दूसरे को पसंद कर विवाह तय करते हैं । विवाह प्रथा बड़ी विचित्र होती है । लड़के ने लड़की को पसंद कर लिया, इसकी जानकारी वधू-पक्ष के माँ-बाप को लड़का भेंट के रूप में कुछ रुपये भिजवा कर देता है । इसी समय इस परिणय की सूचना वह अपने अभिभावक को भी देता है । दोनों पक्षों के सहमत हो जाने पर बारात लड़की वालों के यहाँ आती है और बिना किसी धूम-धाम और नेग-दहेज के वधू को ले जाती है ।

'गोंड' जनजाति में विवाह के अवसर पर किसी प्रकार का धार्मिक कृत्य अथवा उत्सव-आयोजन नहीं मनाया जाता । इसमें सीधे-सादे ढंग से एक दूसरे का चयन कर लेना ही विवाह माना जाता है ।

सामान्य प्रचलन के अनुसार हमारे समाज में लड़की पक्ष द्वारा लड़के की तलाश करने की प्रथा ही देखी जाती है, किन्तु कुछ जनजाति आदिवासियों में परम्परा इसके ठीक विपरीत है । उनमें वर-पक्ष वाले ही कन्या की ढूँढ़-खोज करते हैं ।

ऐसा ही एक आदिवासी कबीला उत्तर पूर्व के सीमावर्ती क्षेत्रों में निवास करता है । 'चकमा' जाति के नाम से जाने-जाने वाले इन कबाइलियों में जब पुत्र-वधू का चयन कर लिया जाता है और इसकी सूचना उसके पिता को दे दी जाती है, तो लड़की का पिता गाँव वालों की एक पंचायत बुलाता है, जिसमें गाँव के सभी वयोवृद्ध सम्मिलित होते हैं । इस पंचायत में सभी मिलकर लड़की की सुरक्षा की दृष्टि से उसकी कीमत तय करते हैं । यह कीमत प्राय: इतनी अधिक होती है, जिसे आसानी से दे पाना वर-पक्ष के लिए मुश्किल होता है । शादी के अवसर पर इस मूल्य को चुकाना आवश्यक नहीं होता और न लड़की वालों की ओर से वर-पक्ष को ऐसा करने के लिए बाधित किया जाता है । यह तो एक प्रकार की अनुबन्ध-राशि होती है, जिसे निश्चित करना इसलिए आवश्यक होता है कि यदि ससुराल वालों की प्रताड़ना से तंग आकर कन्या अपने जीवन को जोखिम में डाल ले, आत्मघात कर ले तो यह भारी राशि वर-पक्ष कन्या-पक्ष को पंचायत के समक्ष चुकायेगा ।

विश्व में एक अंचल ऐसा भी है जहाँ नर का जा पाना और जीवित रह पाना मुश्किल है । ब्राजील के जंगलों में बसे इस क्षेत्र में स्त्रियों का ही वर्चस्व है । इस स्त्री राज्य की एक मुखिया होती है । इसी का शासन सम्पूर्ण राज्य में होता है । इसकी झोंपड़ी के आगे दो शेर बँधे रहते हैं—यही इस राज्य की रानी की पहचान होते हैं । इसके अतिरिक्त यहाँ की अन्य सामान्य महिलाओं से रानी एक और बात में भिन्न होती है कि उसके शरीर में बालों का अभाव होता है, जबकि दूसरी सभी स्त्रियों के शरीर में लम्बे-लम्बे बाल होते हैं, जो शरीर ढकने के लिए आवरण का काम करते हैं । यदा-कदा जब ये बाल अधिक लम्बे हो जाते हैं, तो इन्हें काट कर इनसे रस्सी भी बनाई जाती है, जो जानवरों के बँधने के काम आती है ।

जब यहाँ पुरुष है ही नहीं, तो यह स्त्री राज्य बना कैसे ? इसकी भी एक रोचक गाथा है । वस्तुत: ब्राजील का यह क्षेत्र स्वर्ण-सम्पदा से भरा पड़ा है । यहाँ सोने का विशाल भाण्डागार है । इसी की लोभ-लिप्सा में आकर दूसरे क्षेत्र के लोग उस स्त्री राज्य को अपनी कन्या भेंट देकर बदले में सोना प्राप्त करते हैं । यह व्यापार-विनिमय एक पहाड़ी पर नियत स्थान पर होता है । जो व्यक्ति अपनी कन्या के बदले सोना प्राप्त करना चाहता है, वह अपनी बेटी को उस स्थान पर ले जाता है, जहाँ स्त्री राज्य की कुछ प्रतिनिधि पहले से मौजूद रहती हैं । वह उस व्यक्ति से बालिका प्राप्त कर बदले में उसे सोना देकर विदा करती हैं । जिस दिन बालिका उस महिला राज्य में पदार्पण करती है, उसी दिन से उसका विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण आरम्भ हो जाता है । राज्य के रीति-रिवाज, नियम-कानून के साथ युद्ध-विद्या का भी अभ्यास कराया जाता है, फलत: जब वह वयस्क होती है तो एक वीरांगना के रूप में उभर कर सामने आती है । पुरुषों का इस राज्य में प्रवेश-निषेध होता है । जो कोई पुरुष इस नियम का उल्लंघन करता है, वह फिर जीवित लौट कर नहीं आ पाता ।

यह वर्णन मात्र कौतूहलवर्द्धन हेतु नहीं, वरन् एक सच्चाई को सामने रखने के लिए प्रस्तुत किया गया है । नारी एवं विवाह के सम्बन्ध में हमारा दृष्टिकोण अब आमूल-चूल बदलना चाहिए । प्रगति सही अर्थों में तभी मानी जाती है जब विवेक एवं औचित्य की कसौटी पर मान्यताओं को कसा जाए । मनुष्य को अपने चिन्तन का पिछड़ापन स्वीकार करने में कोई लाज नहीं आनी चाहिए एवं हर परिवर्तन को खुले दिमाग से स्वीकारना चाहिए ।

परम्परा नहीं, औचित्य देखें

प्रचलनों, प्रथाओं, परम्पराओं में यदि औचित्य का समावेश न हो तो वे अन्धविश्वासों से जकड़ जाते तथा अगणित प्रकार की समस्याओं को जन्म देकर अनेकों प्रकार से समाज को क्षति पहुँचाते हैं । ये वे अवरोध हैं जो प्रगति के मार्ग पर चट्टान की तरह अड़े रहते तथा विकास-क्रम को अवरुद्ध करते हैं । पुरातन प्रचलन के नाम पर प्राय: उन्हें फूलने-फलने का अवसर मिलता है । दूरदर्शिता के अभाव में वह साहस नहीं जुटता कि उन्हें एक झटके के साथ तोड़ दिया जाय तथा उस चंगुल से मुक्त हुआ जाय । उनकी अनुपयोगिता जानते हुए भी चिन्तन की गुलामी के कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कितने ही व्यक्ति उनसे चिपके रहते हैं, बाहर नहीं निकल पाते ।

प्रगति के इस युग में भी कितने ही समाजों में उनका बाहुल्य देखा जा सकता है । रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान आदि के क्षेत्र में विभिन्न समाजों में अगणित प्रकार के अन्धविश्वास, भ्रान्तियाँ, मूढ़मान्यताएँ घुसी हुई हैं, जिनका औचित्य से राई-रत्ती भर सम्बन्ध नहीं है । उन्हें देखकर हँसी आती और विडम्बना पर आश्चर्य भी होता है कि क्या हम सचमुच ही प्रगति के युग में जी रहे हैं अथवा आदिम काल के पिछड़े युग में ।

न्यूगिनी द्वीप तथा जर्मनी के कुछ भागों में लड़कियाँ सारे शरीर को गोदवा कर चित्र-विचित्र आकृतियाँ बनवाती हैं । इसमें उन्हें असाधारण शारीरिक यंत्रणा सहनी पड़ती है । ऐसा वे मात्र इसलिए करती हैं ताकि अधिक आकर्षक लगें । शरीर को सजाने की परम्परा और भी उपहासास्पद है । कमर के इर्द-गिर्द वे सूअर, कुत्ते के दाँतों की माला लपेटे रहती हैं । नाक और कान में नुकीले तेज हथियारों से छेद करके वजनी लकड़ी अथवा लोहे का छल्ला लटका दिया जाता है । यह तब तक रहता है, जब तक कि छेद अत्यन्त बड़े न हो जाएँ । तत्पश्चात जो संस्कार होता है वह और भी विचित्र है तथा उतना ही खतरनाक भी, नाक की ओर से जीवित सर्प डाला जाता तथा मुँह से निकाला जाता है । जो धैर्य एवं साहस से यह यंत्रणा झेल लेती हैं उन्हें सौभाग्यशाली माना जाता है । जो इसमें असफल होती हैं उन्हें दुर्भाग्यशाली समझा जाता है । ऐसी लड़कियों की शादी भी मुश्किल से हो पाती है । कान एवं नाक में वजनी, लम्बे छल्लों को उन्हें सदा पहनना पड़ता है ।

पोलीनेशिया समुदाय के स्त्री, पुरुष सुन्दर दीखने के लिए मुँह, नाक, मस्तक तथा शरीर के अन्य अंगों को गुदवाते हैं । उनमें सौन्दर्य का मापदण्ड इस अप्राकृतिक कृत्य से बनी आकृतियों को माना जाता है । कभी-कभी तो कितने ही नर-नारियों को इस प्रक्रिया में जान-से भी हाथ गँवाना पड़ता है ।

न्यूगिनी द्वीप में ही एक जाति रहती है—मफूलूर । बच्चा पैदा होते ही स्त्रियाँ उसे नदी में ले जाती हैं तथा पानी पिलाती हैं । यदि नवजात शिशु नदी का पानी पी लेता है तो उसे वे शुभ मानती हैं तथा विश्वास करती हैं कि लड़का भविष्य में भी जीवित रहेगा । पानी न पीने को वे अशुभ मानकर उसे जीवित ही पानी में फेंक देती हैं । उनकी मान्यता है कि ऐसा लड़का भविष्य में बचेगा नहीं, यदि बचता भी है तो परिवार के लिये अकल्याणकारी सिद्ध होगा ।

न्यूआयरलैण्ड में प्रथम बच्चे का जन्म-दिवस विचित्र ढंग से मनाया जाता है । उस अवसर पर गाँव के लोग समूह में एकत्रित होते हैं । पुरुष-स्त्रियों के बीच युद्ध होता है । हथियार के रूप में स्त्रियाँ पत्थरों का तथा पुरुष लकड़ियों का प्रयोग करते हैं । जो जितना अधिक घायल होता है उसे उतना ही सौभाग्यशाली समझा जाता है । लड़ाई के उपरान्त घायलों का उपचार किया जाता है । शाम के समय सभी मिल-जुलकर सुअर का माँस पकाते तथा साथ-साथ खाते हैं ।

ब्रिटिश न्यूगिनी के टोमो जिले के मेकेओ जाति में शादी का अनोखा रिवाज है । लड़के पक्ष के सगे-सम्बन्धी लड़की वाले का घर घेर लेते हैं । बाहर से जोर-जोर से चिल्लाते हैं । लड़की बचकर भागने की चेष्टा करती है । उसकी माँ इस कार्य में सहयोग करती है । लड़के वालों तथा लड़की वालों में युद्ध होता है । यदि युद्ध में लड़का पक्ष हार जाता है तो शादी नहीं होती, जीतने पर शादी की रस्म शुरू होती है ।

तिब्बत की कुछ घाटियों में रहने वाले यमराज को धोखा देने के लिये कई बार नकली शव-यात्राएँ निकालते हैं । यह प्रक्रिया तब अपनायी जाती है जब औषधि अथवा शल्य क्रिया द्वारा गम्भीर रूप से बीमार किसी व्यक्ति का प्राण बचाना कठिन पड़ता है । रोगी का मानवाकार पुतला बनाकर लकड़ी के एक ढाँचे पर रख दिया जाता है । उसे ऐसे कपड़े तथा आभूषण पहनाए जाते हैं कि वह यथासम्भव रोगी की शक्ल-सूरत-सा लगे । तब नकली शवयात्रा निकाली जाती है तथा बौद्ध नियमों के अनुसार शव की अंत्येष्टि करदी जाती है । कहीं किसी प्रकार का संदेह न होने पाए, इसलिए एक व्यक्ति बीमार के मरने के उपलक्ष्य में रोता-पीटता है तथा भारी विलाप करता है । कपड़े तथा आभूषण संस्कार कराने वाले लामा को दे दिये जाते हैं । उनका विश्वास है कि दस टंट-घंट से यमराज धोखा खा जाते हैं तथा बीमार असाध्य रोग से मरने से बच जाता है ।

प्रचलन में कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें सभ्यता का प्रतीक समझा जाता है तथा विविध समाजों में विविध रूपों में प्रचलित हैं । मुस्कराहट का अर्थ प्रायः प्रसन्नता की अभिव्यक्ति से लगाया जाता है पर अफ्रीका के निग्रो समाज में मुस्कराने को आश्चर्य, विस्मय, घबराहट, असफलता, चिन्ता के अर्थों में लिया जाता है । एस्किमो जाति में अभिवादन का ढंग अत्यन्त विचित्र तथा फूहड़ है । वे एक दूसरे के सिर पर थप्पड़ मारकर अथवा कंधे से तेज धक्का देकर अभिवादन प्रकट करते हैं । अमेजोन के निवासी एक दूसरे के पीठ पर घूँसा मारकर आगन्तुकों का स्वागत करते हैं ।

टोटस समुद्री द्वीप में अभिवादन की परम्परागत प्रणाली और भी विचित्र है । अभिवादन के पात्र व्यक्ति के कंधे को दाहिने हाथ के नाखून से तब तक खरोंचा जाता है, जब तक कि उस पर घाव न हो जाए । खून निकलना सच्ची सहानुभूति मानी जाती है । एन्यू जाति के लोग अपने से छोटों के प्रति विचित्र ढंग से स्नेह का प्रदर्शन करते हैं । वे उनके कान तब तक मलते हैं, जब तक कि बच्चे रो न पड़ें ।

विश्व के प्रायः हर सभ्य समाज में दूसरे के ऊपर थूकने को गम्भीर अपराध समझा जाता है, पर अफ्रीका की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मसाई जाति में उल्टी परम्परा है । वे स्नेह, आशीर्वाद की अभिव्यक्ति दूसरों के ऊपर थूकने के रूप में करते हैं ।

नंगा होना सभ्य समाज में अशिष्टता माना जाता है, किन्तु फ्रेण्डली द्वीप समूह में रहने वाले दूसरों का सम्मान अपने कपड़े उतार कर दर्शाते हैं । इसे वे अपनी सभ्यता का अंग मानते हैं । दूसरों के सत्कार-सम्मान में जो ऐसा नहीं करता उसे असभ्य माना जाता है ।

ऐसे कितने ही प्रचलन विभिन्न समाजों में आज भी प्रचलित हैं, जिन्हें विवेक की कसौटी पर कसने पर वज्र मूर्खता की ही संज्ञा दी जा सकती है, पर पुरातन परम्परा के नाम पर वे अपनी जड़ें जमाए हुए हैं । अपने समाज में तो उनका बाहुल्य और भी देखा जा सकता है । बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा, दहेज प्रथा, मृतक भोज, नर-नारी भेद-भाव, ऊँच-नीच की मान्यता जैसे कितने ही कुप्रचलन ऐसे हैं जो भारतीय समाज की जड़ों को खोखला कर रहे हैं । उनकी अनुपयोगिता, निरर्थकता को जानते हुए भी अधिकांश व्यक्ति उन्हें छोड़ने-तोड़ने का साहस नहीं दिखा पाते, बुरी तरह उनके बँधनों में जकड़े रहते हैं । फलतः अगणित तरह से अनेकों प्रकार की हानियाँ उठानी पड़ती हैं । प्रगति के इस युग में सही अर्थों में हम प्रगतिशील तभी कहला सकते हैं, जबकि उनके जाल-जंजाल को तोड़कर बाहर निकलें तथा औचित्यपूर्ण प्रचलनों को ही मात्र अपनाएँ ।

ऐसी दिल्लगी किस काम की

पिछले दिनों विदिशा की मध्य प्रदेश की एक बारात में वर द्वारा वधू की अँगुली काट लेने से बड़ा उत्तेजक वातावरण फैला । मारपीट और बारात वापस लौटा देने की नौबत आ गयी ।

कारण कोई बड़ा रहा हो तो बड़े ढंग से विचार किया जाय । छोटी-छोटी बातों के लिए भी समझाना पड़े तो यही मानना चाहिए कि अब लोगों में सही विचार, सही निर्णय और सही काम करने की बौद्धिक क्षमता बिल्कुल नष्ट हो गई है । दहेज समाज की बड़ी समस्या है । उसे लेकर झगड़ा होता तो एक बात थी । लड़की या लड़का अनपढ़ होता और फिर कोई विरोध वाली बात आती तो लोग उसे उचित ठहराते, पर यहाँ तो बात सामान्य ही थी । मनोविनोद तो बड़ी अच्छी बात है, उससे उल्लास, उत्साह और प्रसन्नता का वातावरण बनता है । पर ऐसा भी मनोविनोद क्या जो किसी को कष्ट दे, मुसीबत में डाले ।

विवाह की रस्म के अनुसार वधू वर को अपने हाथ से भोजन कराती है । उस समय और भी स्त्रियाँ एकत्रित होकर मनोविनोद करती हैं । विनोद के सभ्य तरीके भी होते हैं, पर इन वर महोदय को क्या कहा जाए जैसे ही बेचारी लड़की ने उनके मुँह में कौर दिया उन्होंने उस बेचारी की अँगुली में दाँत चुभो दिये । वधू को इससे कष्ट हुआ । उसने भी गुस्से में आकर अपने सद्यः विवाहित पतिदेव के गाल पर जोर का तमाचा मारा । वर महोदय, जिन्होंने विनोद की शुरूआत की थी, अब प्रतिष्ठा पर उतर आये ? पत्नी का कष्ट उनके लिए विनोद था और जब खुद को तमाचा पड़ा तो प्रतिष्ठा उतर आई । पत्नी की नाक काटने को दौड़े । सब तरफ भाग-दौड़ मच गई । दोनों ओर के आदमियों में झगड़ा हो जाता पर कुछ भले आदमी भी थे उन्होंने समझा-बुझाकर मामला समाप्त कराया ।

गुस्सा शान्त होने पर वर महोदय ने अनुभव किया कि भूल उन्होंने ही की थी । विनोद ही करना था तो कह सकते थे—"भाई, यह कर्त्तव्य तो हमारा है कि मैं तुम्हें खिलाऊँ क्या आपके यहाँ लड़कियाँ कमाती और लड़के खाते हैं ।" यह नहीं तो—"भाई देख लो मैं लूला तो नहीं हूँ, इन्हें क्यों कष्ट देती हैं स्वयं जो खा लेता हूँ ।" मौखिक विनोद प्रसन्नतादायक होते हैं, पर यह क्या विनोद था कि बेचारी लड़की की अँगुली ही काट ली ।

वर महोदय ने अन्ततः वधू पक्ष वालों से अपने कृत्य के लिये क्षमा माँगी और उसके लिए बड़े लज्जित हुए । इसके बाद विवाह का अगला चरण पूरा हुआ । कहीं उत्तेजना बढ़ जाती तो जीवन भर के लिए सम्बन्ध खराब होते, अपयश मिलता और हृदय को पश्चाताप जलाता सो अलग ।

इस घटना से वहाँ के लोगों ने अनुभव किया कि हमारे समाज में मनोविनोद के जो घृणित तरीके फैले हैं और जिनसे नैतिक एवं चारित्रिक फिसलाव होता है, उनको प्रोत्साहन नहीं दिया जाना चाहिए । विनोद मन की स्फूर्ति के लिए किए जाते हैं । ऐसे ही वाक्य एवं प्रसंग सार्थक होते हैं जिससे कुछ प्रसन्नता मिले, ऐसे नहीं जैसा इन वर महोदय ने किया ।

विवेकहीन कुप्रचलन

परम्पराएँ वे होती हैं, जो पिछले बहुत समय से चली आती हैं और जिनका प्रयोग करते अनेक लोगों को पहले से भी देखा जाता रहा है । वह लोगों के मन में भी बस जाती हैं । तब विचार शक्ति में इतनी गुंजायश भी नहीं रहती कि उनके गुण-दोषों के, भले-बुरे परिणामों के सम्बन्ध में विचार करें । कई बार तो अनुपयुक्त समझते हुए भी प्रथाओं को लोग कार्यान्वित करते हुए अपना बड़प्पन भी समझते हैं और उस परम्परा पालन को लगभग धर्म-पालन जैसा महत्त्व देते हैं ।

वर्तमान में जो कुछ घटित होता रहता है, उसे 'प्रचलन' कहा जाता है । प्रचलन को सहज मान्यता मिल जाती है । लोग सोचते हैं कि यह रीति अनेक लोगों द्वारा अपनाई जा रही है, अतः उसके पीछे कोई समझदारी होनी चाहिए । कुछ लाभदायक परिणाम होना चाहिए, अन्यथा इतने अधिक लोग उसे प्रसन्नतापूर्वक क्यों अपनाते और क्यों उसके लिए समय और पैसा खर्च करते ? क्यों उसमें इतना मनोयोग लगाते, क्यों इतना रस लेते । बहुतों को करते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखकर मनुष्य का नकल करने का स्वभाव उत्तेजित होता है और अनायास ही वैसा करने के लिये उतारू हो जाता है ।

परिवार, पड़ोसी, सम्बन्धी, मित्र एवं अधिक घनिष्टों का प्रभाव अधिक पड़ता है । मनुष्य का स्वभाव अधोगामी प्रवृत्ति की ओर झुक जाने का होता है । जिस प्रकार पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति हर वस्तु को अपनी ओर खींचती है, पानी को नीचे की दिशा में बहाती है, वैसे ही यह बल सम्भवत: मनुष्य के स्वभाव पर भी काम करता है । जब वह अधिकांश लोगों को उद्धत या निरर्थक काम करते देखता है, तो उसका मन भी अनायास ही उसकी और खिंचता चला जाता है । प्रवृत्तियाँ अधोगामी हों तो ऐसा उत्साह द्रुतगति से उभरता है ।

विश्वव्यापी नशेबाजी का प्रचलन इसी प्रकार हुआ है । नशों में कोई प्रिय स्वाद नहीं होता और न तथाकथित मस्ती ही स्थायी होती है । गुणों के नाम पर नशे में कोई विशेषता नहीं है । फिर भी यार-दोस्तों, मित्र-कुटुम्बियों को उसे सेवन करते देखकर अपना मन भी वैसा ही अनुकरण करने के लिये बनने लगता है और सेवन की आदत पड़ जाती है ।

घुमंतू वन जातियाँ या गाड़ी वाले लुहार यायावरों की तरह घूमते और जहाँ-तहाँ से रोजी कमाते रहते हैं । उन्हें एक स्थान पर रहने और कोई काम करने की सुविधा भी दी जाए, तो वह उन्हें स्वीकार नहीं होती । दी गई जमीन और झोपड़ी को छोड़कर वे उसी कष्टसाध्य जीवन परम्परा में दिन गुजारने के लिए उतर आते हैं । वनवासी लोगों के लिए भी यही समस्या है कि वे बड़े गाँवों में नहीं बसना चाहते । कंजर जाति के लोग दिन भर घर में बैठकर हुक्का पीते रहते हैं और रात को चोरी आदि करके गुजारा करते हैं । इसमें न उन्हें निश्चिन्तता रहती है, न इज्जत न खुशहाली ही बढ़ती है फिर भी उनका समुदाय इसी रीति-नीति को बन्दरिया के मरे हुए बच्चे की तरह चिपकाए-अपनाए हुए होता है । इसी में उन्हें आनन्द आता है और इसीलिए उस प्रचलन को छोड़ने के लिए समझाने-बुझाने पर भी वे लोग सहमत नहीं होते ।

क्रूर कर्म करने का जिन्हें अभ्यास पड़ जाता है, उनका वैसा ही कुछ करते रहने के लिए मन चलता रहता है, भले ही दूसरे सुविधाजनक कार्य करने की स्थिति या छूट उनके सामने हो । क्रूर कर्मों से तो कुछ भयभीत हो जाते हैं और उस तरह के काम करने का साहस नहीं करते, पर कुछ विवेकहीनों की मन:स्थिति दूसरे प्रकार की होती है । वे उन्हें कौतुक-कौतूहल मानते और स्वयं भी उसका मजा लेने लगते हैं ।

क्रूरता भरे दृश्यों से कुछ व्यक्तियों की मनोवृत्तियाँ प्रभावित हुए बिना नहीं रहतीं । सन् १४३० में जन्मे ड्राकुला के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि क्रूर सम्राट् बनने से पूर्व बचपन में उसने अपने पिता की हत्या और भाई को जीवित जला देने के दृश्य देखे थे । ठीक वैसी ही क्रूरता उसके मस्तिष्क में छा गई और सम्राट् बनने के पश्चात् वह वैसा ही आचरण करने पर उतारू हो गया । उसे 'सन ऑफ ड्रेगन' के नाम से जाना जाता है ।

इसी तरह ईसा पूर्व नौवीं सदी में विवेकहीन कुप्रथाएँ-परम्पराएँ प्रचलित थीं, जिनमें क्रूरता प्रमुख थी । असीरियन साम्राज्य के 'प्रिन्स ऑफ पीस' नामक सम्प्रदाय के लोगों ने शान्ति के नाम पर हिब्रू लोगों पर बर्बरतापूर्ण कहर बरपाये थे । असुर पूजक नासिरपाल नामक सम्राट् ने अपने २४ वर्ष के शासनकाल में हजारों डरमन सरदारों की चमड़ी उधेड़ दी थी और उससे विजय स्तंभ को मढ़वा दिया था । कितने ही व्यक्ति दीवारों में चिन दिये गये थे । एक विजय स्तंभ तो नरमुण्डों का ही खड़ा कर दिया गया था । आतंक फैलाने की दृष्टि से नगर के बाहर पेड़ों की डालियों पर मृत व्यक्तियों के शरीर लटका दिए जाते थे । उसकी मृत्यु के पश्चात् यह एक परम्परा-सी बन गयी कि उस सिंहासन पर आसीन होने वाले सम्राट् भी उन्हीं क्रूरकर्मों की पुनरावृत्ति करने लगें । नासिरपाल के बाद राजा शालमानेसर ने भी वही क्रम जारी रखा । वह २१ वर्ष तक योरोप में युद्धरत रहा और १५० शहरों को जलाकर मरा । असेरियन राजधानी कल्ला में इसके ध्वंसावशेष अभी भी विद्यमान हैं ।

'क्वेस्ट फार द पास्ट' नामक पुस्तक में योरोप में पन्द्रहवीं शताब्दी में बहुप्रचलित नर-बलि प्रथा का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया है । सन् १५८० में सर्वप्रथम अमेरिका पहुँचने वाले स्पेनी सरदार हरनान क्वाइटेज के अनुसार उस वर्ष मैक्सिको महानगर के एज्टेक साम्राज्य की राजधानी ह्यूजी लोसी में कम से कम ८० हजार व्यक्तियों के रक्त को असुर देवता को प्रसन्न करने हेतु अर्पित किया गया था । इसकी पुष्टि कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के डेमोग्राफर एस. वर्नकुक एवं कुक्स कॉलेज के प्राध्यापक वुडरोवोरा ने अपनी-अपनी खोजों के आधार पर की है । वुडरोवोरा के अनुसार उक्त शहर की कुल आबादी के एक प्रतिशत जनता को अर्थात् कम से कम पच्चीस हजार व्यक्तियों को मन्दिरों में नर-बलि के रूप में प्रयुक्त किया जाता था ।

एज्टिक चित्रों के अनुसार इन कुकृत्यों में मात्र मृत व्यक्ति के हृदय को प्रतिमा को अर्पित किया जाता था और नरमुण्डों को एक ढेर में फेंक दिया जाता था । शेष शरीर पशु-पक्षियों के लिए छोड़ दिया जाता था । स्पेनी यात्री डा. याज एवं एन्ड्रीज डी. टप्पिया ने ऐसे ३६ हजार नरमुण्डों का एक पहाड़ देखा था ।

तैमूरलंग एवं चंगेजखाँ की क्रूरता को पढ़-सुनकर अभी भी लोग काँप उठते हैं । बगदाद, समरकन्द तथा दिल्ली जैसे महानगरों में लाखों लोगों का उन्होंने कत्लेआम कराया था । अंकारा से आगे बढ़कर योरोप में 'स्मरना' नामक स्थान में एकत्रित २० हजार से अधिक व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दिया गया था । इसी प्रकार तैमूर ने ईरान के ७० हजार नगरवासियों का मुण्डनोच्छेदन कर अम्बार लगा दिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

था । इतिहासकारों के अनुसार सीरिया में बच्चे, महिलाओं तथा धर्मगुरुओं समेत ३० हजार जीवितों को एक लकड़ी के कठघरे में बन्दी बनाकर पूरा बन्दीघर अग्नि के हवाले कर दिया गया था ।

यह क्रूर कर्म बताते हैं कि उनका भी एक आवेश चढ़ता है और बिना औचित्य का ध्यान किये उद्धत वर्ग क्रूर कर्म करता ही चला जाता है, भले ही वह स्वयं महाकाल का कोपभाजन बनकर विनष्ट क्यों न हो जाए ।

हमारी हानिकारक रूढ़ियाँ

वर्तमान समय में हमारे समाज की जो दशा है, उसे दु:खपूर्ण ही कह सकते हैं । स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़े, विवाहित और अविवाहित किसी से बात कीजिए, सौ में से नब्बे या पिच्यानवे अपने दु:खों का रोना ही सुनाने लगेंगे । जो दस पाँच सुख की बात भी करेंगे तो उनकी बातों की विवेचना करने से प्रतीत हो जायगा कि उनकी सुख की भावना अज्ञान और उत्तरदायित्वहीनता के कारण है । यह बात नहीं कि सब लोग गरीबी या धनाभाव की वजह से ही दु:खी हैं—नहीं, अधिकांश धनवान और अमीर व्यक्ति भी उतने ही दु:खी दिखलाई पड़ते हैं जितने कि गरीब । कोई लड़के-लड़कियों का विवाह ठीक न हो सकने के कारण दु:खी है, कोई सगे-सम्बन्धियों के द्वेषभाव के कारण व्याकुल है, किसी को अच्छा दहेज न मिलने की शिकायत है तो दूसरा लड़की के विवाह में सामर्थ्य से अधिक खर्च करने के कारण कर्जदारों के तकादे से मरा जा रहा है । सारांश यह है कि समाज में इस प्रकार की तरह-तरह की अनेकों कुप्रथाएँ और रूढ़ियाँ व्याप्त हैं कि जिनके कारण मनुष्य को किसी न किसी तरह की चिन्ता, परेशानी लगी ही रहती है ।

विवाह, जन्म और मृत्यु जैसी बड़ी-बड़ी बातों को छोड़ भी दें तो भी हिन्दू-समाज की सभी जातियों में ऐसी छोटी-बड़ी सैकड़ों प्रथाएँ, रूढ़ियाँ, रस्म-रिवाज पाए जाते है जिनके कारण गृहस्थ व्यक्तियों पर सदा किसी न किसी प्रकार का भार बढ़ता ही रहता है और व्यस्तता बनी ही रहती है । जात-बिरादरियों में प्रत्येक अवसर पर परस्पर लेन-देन की ऐसी रीतियाँ प्रचलित हैं कि मनुष्य की कमाई का एक बड़ा अंश उन्हीं में खर्च हो जाता है । छोटी-छोटी बातों में भी लोग इन रीति-रिवाजों का उल्लंघन नहीं कर पाते । लड़की और बहुओं का आना-जाना, बहिन-बेटी का विदा होना, किसी बच्चे का जन्म होना, जन्म के बाद नामकरण, अन्नप्राशन, मुण्डन, कान छेदना, विद्याराम्भ आदि जो भी संस्कार हो, हर अवसर पर सगे-सम्बन्धियों, इष्ट-मित्रों, पड़ोसियों को कुछ देना आवश्यक है और इस देने में सदा बदले का ध्यान रखना पड़ता है । जिसके यहाँ से जितना आता है उसे उसी हिसाब से देना पड़ता है । अगर आप उनको देना भूल जायें या कम भेजें तो वे बुरा मान जायेंगे और सदा उलाहना देते रहेंगे । अगर किसी बहिन-बेटी को किसी ऐसे अवसर पर नियम से कम दिया जाए या देने में भूल हो जाए तो वह सदा इसी बात का ताना मारती रहेगी ।

इस प्रकार की प्रथाओं का परिणाम शुभ नहीं होता । इस प्रकार जो कुछ दिया जाता है उसमें बदला चुकाने या अपनी 'नाक' ऊँची रखने की बात होती है । हम बहिन-बेटियों और सगे-सम्बन्धियों को हर त्योहार पर और विवाह-शादी, संस्कार आदि के अवसरों पर जो कुछ रुपया पैसा, जेवर, कपड़े आदि दिया करते हैं उसमें किसी प्रकार की प्रेम या स्नेह की भावना नहीं होती, वरन् वह अपनी 'आवरू' या 'नाक' की रक्षा के ख्याल से दिया जाता है । हमारे मन में यह भाव रहता है कि यदि अपनी हैसियत और नाम के अनुसार उचित 'नेग' भेंट नहीं दी जायेगी तो हमारी बदनामी होगी । जब इस प्रकार की भेंट सामर्थ्य न होते हुए भी विवश होकर देनी पड़ती है तो हम मन ही मन उन सम्बन्धियों को कोसते रहते हैं । इस प्रकार के कार्यों में जो हार्दिकता और प्रसन्नता होनी चाहिए उसका चिह्न भी नहीं रहता और हम उनको एक भार समझ कर लाचारी से करते हैं । इस कारण सम्बन्धियों में प्राय: सच्चा प्रेम भी नहीं हो पाता, अनेक बार भीतर ही भीतर वैमनस्य की भावना पैदा हो जाती है, पर ऊपर से दिखाने के लिए शिष्टाचार वरता जाता है ।

हमारे इन रस्म-रिवाजों में किसी की मृत्यु के उपरान्त शोक-प्रदर्शन की प्रथा भी बड़ी अस्वाभाविक है । यों तो संसार के सभी देशों और समाजों में किसी व्यक्ति की मृत्यु पर किसी न किसी रूप में शोक का भाव प्रकट किया जाता है और खासकर अगर ऐसी मृत्यु असामयिक हो तो लोगों को दु:ख भी होता है, पर हिन्दुओं में किसी मरने वाले के लिए एक दिन ही नहीं, कई दिन तक जिस प्रकार रोना-धोना किया जाता है अथवा 'स्यापा' आदि करते हैं, वह एक निराली ही चीज है । किसी के मरने पर सारे मुहल्ले की और नाते-रिश्ते की स्त्रियाँ इकट्ठी होकर इस प्रकार दहाड़ें मार-मार कर रोती हैं जिससे मालूम पड़ता है कि वे मृतक के वियोग से अधीर हो रही हैं, पर वास्तव में घर के दो-चार लोगों के सिवा, किसी के मन में दु:ख का लेश भी नहीं होता और वे यह सब रोना-धोना रस्म के रूप में ही करती हैं ।

पंजाबी स्त्रियों का 'स्यापा' इस सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय है । वे एक गोल आकार में खड़ी होकर जोर-जोर से विलाप करती हुई दोनों हाथों से इस प्रकार छाती कूटती हैं कि देखने वाले को रोमांच हो आता है । साथ ही उनमें एकाध वृद्धा स्त्री कुछ शोकपूर्ण उद्‌गार भी प्रकट करती जाती है, जिसको 'वैन' कहते हैं । यह कार्यक्रम दो-दो घण्टे तक भी चलता है और उन छाती कूटने वाली स्त्रियों की क्या दशा होती होगी ये वे ही जानती होंगी । ऐसा भी नहीं कि कोई स्त्री कम रोवे वा मामूली तौर से छाती कूटे । इन स्त्रियों का यह कार्य बड़े कायदे के साथ कवायद की तरह होता है । सबके हाथ एक साथ उठते हैं और साथ ही छाती पर पड़ते

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । अगर कोई स्त्री हाथ हल्के से मारती है तो अन्य स्त्रियाँ उसकी बहुत निन्दा करती हैं और बुरा-भला कहती हैं, पर यह सब रोना-धोना और छाती कूटना नाटक की तरह ही होता है । ज्यों ही इस कार्य को खत्म करके वे अपने घरों को लौटती हैं कि फिर सदा की तरह हँसने-बोलने लगती हैं । कितनी तो वहाँ से निकल कर रास्ते में किसी ऐसे घर भी चली जाती हैं जहाँ कोई खुशी का उत्सव होता हो । वहाँ वे खूब बधाई देती हैं और खुशी से खाती-पीती भी हैं ।

इस प्रकार के मृत्यु-शोक प्रदर्शन का क्या मूल्य हो सकता है, इसको करने वाले ही जानें । मरने वाले के लिए इस प्रकार बहुत अधिक रोने-धोने का नाटक रचना अस्वाभाविक-सा प्रतीत होता है । ऐसे अवसर पर मनुष्य को जिस गम्भीरता का परिचय देना चाहिए वह इस प्रकार के दिखावा करने से प्राय: जाता रहता है । जन्म-मरण संसार के स्वाभाविक कर्म हैं । एक आस्तिक की दृष्टि से इनको ईश्वर की इच्छा समझकर संतोष रखना ही मनुष्य का उचित कर्त्तव्य होता है, पर हमारे यहाँ दिखावे के लिए ही सही, जो इतना शोक मनाया जाता है और उसके उपलक्ष्य में भगवान् तक को तरह-तरह से उलाहना दिया जाता है, यह कोई समझदारी या बुद्धिमानी की बात नहीं समझी जा सकती ।

एक बात और है कि इस प्रकार के शोक प्रदर्शन से स्त्रियों के स्वास्थ्य को भी हानि पहुँचती है । यद्यपि परम्परा से यह कार्य करते रहने से उनको अभ्यास हो जाता है, तो भी सदैव इस कार्य को करते रहने से खराब असर होता ही है । जो स्त्रियाँ छाती को काफी देर तक कूटकर अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं, क्या उससे उनकी हानि नहीं होती ? ऐसा दूध निस्सन्देह बालक के लिए बहुत हानिकारक होता है, जिन स्त्रियों को 'स्यापा' में अधिक भाग लेना पड़ता है, वे शीघ्र बूढ़ी हो जाती हैं । इस प्रकार की रस्म को समाज की दृष्टि से किसी प्रकार हितकारी नहीं कहा जा सकता, विशेषकर जब कि उसका कोई सच्चा आधार भी न हो । ऐसी रूढ़ियों में सुधार का प्रयत्न करना प्रत्येक समझदार व्यक्ति का कर्त्तव्य होना चाहिए ।

कुण्डली जो लड़के को भी न बचा पायी

लड़की वाले पढ़े-लिखे ही नहीं थे बुद्धिमान और विवेकशील भी थे । बोले—पंडित जी लड़का बी.ए. तक पढ़ा है, अशिक्षित लड़की भी नहीं । वह भी इन्टर तक पढ़ी है । लड़का तो आपका ही है, उसके शरीर स्वास्थ्य के बारे में जैसे आपको सन्देह नहीं वैसे ही हमारी लड़की को लड़के के भाई और माँ दोनों ने देख लिया है । दोनों ने उसे पसन्द कर लिया है, कुल गोत्र भी मिलते हैं और क्या चाहिए ? इससे अच्छी कुण्डली क्या बन सकती है ।

लड़के वालों की तरफ बैठे दो-तीन शिक्षित युवकों ने भी कहा—पंडित जी इन पुराने जमाने की बातों में अब कोई सार नहीं रहा । अब तो कुछ ही दिन में चन्द्रमा के बाद मंगल ग्रह भी फतह हुआ जाता है, फिर इन ग्रहों के चक्कर में विवाह में तो चक्कर न डालिए ।

एक तरफ की टूटी डंडी के चश्मे से आँखें बाहर निकालते हुए ७० वर्षीय पंडित जी गुस्साये हुये बोले—तुम क्या जानो ग्रहों के खेल । एक बार साढ़े साती शनिश्चर के चक्कर में पड़ जाते तो हुलिया टैट हो जाती । तुम्हें जो दीखे, सो करो पर भाई लड़की कुण्डली में तो मंगली है । विवाह सम्बन्ध बनता नहीं । आगे कुछ हो जाये तो तुम जानना ।

घटना नवाबगंज की है । पूरी सुन लेंगे तो आपको पता चल जायेगा कि कुण्डली और ग्रहों के फेर में लड़की वालों को ही नहीं लड़के वालों को भी कितनी दिक्कत उठानी पड़ती है और उसके परिणाम भी कैसे औंधे-सीधे हो सकते हैं ।

लड़के हरिश्चन्द्र के पिता श्री बालकृष्ण जी चाहे कितने ही पैसे वाले क्यों न हों । हैं, अभी तक पूरे दकियानूसी । पुरानी प्रथा-परम्पराओं की चाहे कितनी बखिया उधड़ गई हो, पर उन्हें छोड़ने को हर्गिज तैयार नहीं । ब्राह्मण के मुँह से निकला वचन उनके लिए ब्रह्माजी के वाक्य से कम नहीं । लड़की वालों ने लाख खुशामद की, पर चूँकि लड़की मंगली है इसलिए लड़के के जीवन को खतरा है इस आशंका से उन्होंने ऐसा सुन्दर जाना-माना सम्बन्ध ठुकरा दिया ।

साल भर में कोई चार-पाँच सम्बन्ध हमारे देखते-देखते पंडित जी ने कुंडली के आधार पर बिगाड़ दिए । किसी में गुण नहीं मिले, किसी में नाड़ी, किसी से वर्ग नहीं मिला । भगवान् जाने उनमें संजय की दिव्य दृष्टि थी या और कुछ ग्रहों का चक्कर । किसी में गोत्र नहीं मिला किसी में और कुछ । ४-५ सम्बन्ध नकारा कर डाले गये । लड़की वालों की दौड़-धूप निरर्थक हो गई, पर पंडित जी जितनी बार आये अपनी सवा रुपये दक्षिणा और सीधा पिसान लिए बिना, खाली हाथ नहीं लौटे । इसी तरह तो इन अन्धविश्वासों और मूढ़-मान्यताओं को पोषण मिलता है । गणित जैसी ज्योतिषशास्त्र की शाखाएँ आज कूड़े के ढेर में पड़ी हैं, पर फलित के पोषक पण्डितों की दूकान अब भी धड़ल्ले से इसीलिए चल रही है कि भारतीय समाज उन पर अपनी अनन्य श्रद्धा जो चढ़ाये बैठा है ।

छठवीं बार जब कोरवाई के एक सज्जन सम्बन्ध लेकर आये तब न जाने कहाँ से पण्डित जी के ग्रह-नक्षत्र सीधे पड़े । अनपढ़ लड़की, आयु पहले वालों में सबसे कम । पंडित जी ने सराह-सराह कर बनता बनाया और लगन भी दूर की नहीं महीने भर पीछे की ही तय करदी । खूब धूमधाम से शादी हुई । बालकृष्ण जी ने लड़की का नाम तक नहीं पूछा, पूछते क्यों पंडित जी की मुहर जो लग गई थी खूब मनमानी पैसा विवाह में फूँका ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

साल भर भी विवाह को नहीं हुए लड़के का एक्सीडेंट हो गया । मोटर से टकराकर उसकी मृत्यु हो गई । जवान लड़की घर में विधवा बैठी पर उसके लिए अब न पंडित जी के ग्रह बोलते हैं न नक्षत्र । हमने एक दिन कहा भी पण्डित जी कुण्डली मिलाने में कोई भूल हो गई क्या ? तो दाँत निकाले बोले—बेटा सब ईश्वर का खेल है, हमारे किए क्या होता है और उनके इस कथन में मुझे भारतीय नागरिकों का भविष्य डूबता दिखाई दिखा जो आज भी इन पर पूरा-पूरा विश्वास करते हैं ।

मुहूर्त से बड़ा विवेक

बात बहुत पुरानी है । ईरान में शाह अब्बास नामक एक शासक हुए थे । उन्होंने जनहित के कार्यों को बहुत महत्त्व दिया । महत्त्वपूर्ण कार्य तथा सुधारों द्वारा उन्होंने अपने नाम की धाक जमा दी थी । कहते हैं उन्हीं के नाम पर उत्साहवर्धक शब्द 'शाब्बास' प्रचलित हो गया । जिन विशेषताओं के आधार पर वह श्रेष्ठ कार्यों के सम्पादन तथा व्यापक कीर्ति के अर्जन में समर्थ हुए उन पर आंशिक प्रकाश उनके जीवन की प्रस्तुत घटना से भी पड़ता है ।

शाह अब्बास ने स्थान-स्थान पर सार्वजनिक बगीचों की व्यवस्था कर रखी थी । बड़ी उमंग के साथ प्रयासपूर्वक वह उनमें उपयोगी वृक्ष लगवाया करते थे । वृक्षों की उपयोगिता तथा रमणीयता के कारण उन्होंने उक्त कार्य को पर्याप्त महत्त्व दे रखा था । राजा लोग शौकिया बगीचे लगवाया करते हैं तथा उनमें किसी के आने-जाने पर कड़ा प्रतिबन्ध रहता है, किन्तु शाह अब्बास जनहित की दृष्टि से उक्त कार्य करते थे, अत: उनके बगीचों की रूपरेखा अन्य प्रकार की होती थी । उन्होंने जनता में भी सहज कर्त्तव्य बुद्धि जाग्रत की थी । उनके कारण हर व्यक्ति अपनी निजी सम्पत्ति की तरह ही सार्वजनिक बागों की भी सुरक्षा का ध्यान रखता था ।

एक बार शाह ने दूर से उपयोगी तथा सुरम्य वृक्षों की पौधें मँगवाईं तथा उन्हें बगीचे में लगाने के लिए रख लिया गया । उस समय ईरान में भी 'मुहूर्त' से कार्य करने की प्रथा थी । कार्य को अधिक से अधिक अच्छी तरह करने के लिए कृत संकल्प शाह अब्बास भी उन पौधों को अच्छे मुहूर्त में लगवाना चाहते थे । अच्छे मुहूर्त में लगाये जाने से पौधों के स्थायी रहने तथा पुष्ट और दीर्घजीवी होने की कल्पना थी । अस्तु उसी प्रतीक्षा नें पौधे माली के पास रख दिये गये थे ।

एक दिन दरबार में ज्योतिषी से राजा ने मुहूर्त देखने को कहा । उन्होंने गणना करके बतलाया कि अभी एक घण्टे के अन्दर ही अच्छा मुहूर्त है, उसके बाद बहुत दिनों तक शुभ मुहूर्त नहीं मिलेगा । यह सुनकर शाह ने माली को बुलवाया । माली किसी काम से कहीं चला गया था और उसके बारे में किसी को पता नहीं था । सामान्य खोज से वह मिला नहीं तथा अधिक खोज में उक्त मुहूर्त बीत जाने का भय था । शाह स्वयं उठ खड़े हुए तथा अपने सामने उन्होंने मुहूर्त बीतने के पूर्व ही सारे पौधे जहाँ-तहाँ जमा दिए । स्वयं श्रम करके कार्य ठीक समय पर किये जाने के सन्तोष के साथ राजा अपने महल में चले गये ।

उधर सारी कार्यवाही से अनभिज्ञ माली अपने कार्य से लौटकर बगीचे में पहुँचा । उसने सारे पौधे बेतरतीब ढंग से लगे हुए देखे । उसने बड़े प्रयासपूर्वक पौधों के अनुकूल स्थान चुनकर उनके लिए उपयुक्त खाद युक्त गड्ढे बनाये थे । सिलसिले से रोचक ढंग से लगाने की रूपरेखा बनाई थी । उसके विपरीत भद्दे ढंग से अन्टसन्ट ढंग से लगा हुआ देखकर उसे बहुत निराशा हुई । ऐसा करने वाले पर क्रोध भी आया । वहाँ किसी को न पाकर झुँझलाहट में उसने पुन: सारे पौधे उखाड़ लिए ।

किसी व्यक्ति ने उसे ऐसा करते देखा तो तुरन्त राजा को सूचना दी कि माली सारे किए कराये को बर्बाद किये दे रहा है । शाह समय पर माली की अनुपस्थिति से पहले ही रुष्ट थे पर सामान्य चूक मानकर उसकी उपेक्षा कर गये थे अब यह बात सुनकर उन्हें क्रोध आ गया । तुरन्त माली को बुलाया गया । आते ही उस पर बरस पड़े—"मूर्ख तूने इतने अच्छे मुहूर्त में लगाये गये पौधों को उखाड़ डाला । अब बहुत दिनों तक अच्छा मुहूर्त सम्भव नहीं है ।"

माली स्तब्ध रह गया । यदि उसे पता होता कि राजा स्वयं यह पौधे लगवा गये हैं तो वह शायद और कोई मार्ग अपनाता, किन्तु अब तो भूल हो ही चुकी थी । उधर उसे कथित मुहूर्त को लेकर बागवानी कला की उपेक्षा के प्रति रोष भी आ रहा था । वह बोला—"हुजूर आपने स्वयं वृक्ष लगवाये हैं यह जानता तो मैं उखाड़ता नहीं और आपके मुहूर्त के लिए तो क्या कहूँ । धन्य है वह शुभ मुहूर्त जिसमें लगाये गये पौधे कुछ घण्टों भी न टिक सके ।" माली की बात सुनकर विवेकी राजा हँस पड़े । उनकी समझ में बात आ गई कि मुहूर्त के लिए विज्ञान की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए । उन्होंने कहा— अच्छा भाई तुम अपने हिसाब से ही सब पौधे अभी लगा दो । सत्य का अनावरण करने वाला यह क्षण सबसे शुभ मुहूर्त है । शाह ने माली को पारितोषिक भी दिया तथा मुहूर्त की परम्परा के स्थान पर विवेक की परम्परा को बल देने लगे ।

मनोरंजन की यह जानलेवा परम्परा

जरा कल्पना कीजिए, विवाह की तैयारी, लड़की वालों के यहाँ बारात के स्वागत की सरगर्मी से हो रही व्यवस्था, साज-बाज तथा शोरगुल का उत्साह और हर्ष भरा वातावरण । क्षण-क्षण बारात आने की कौतूहलपूर्ण प्रतीक्षा और तभी समाचार पहुँचे वर एवं ६ बरातियों की मृत्यु हो गई, तीस से अधिक घायल बारातियों की यदि शीघ्र ही चिकित्सा व्यवस्था न की गई तो उनमें से भी कई दम तोड़ देंगे । क्या बीती होगी कन्या-पक्ष वालों पर ? सजाई जाती हुई

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुल्हन का शृंगार उतर जाना, उसकी माँ के उत्साह से हिलोरें लेते हृदय का बैठ जाना, पिता के अविरल श्रम का निरर्थक हो जाना, स्नेहियों-सम्बन्धियों के अरमानों पर पानी फिर जाना कितना कष्टकर होता है, इसे कोई भुक्तभोगी अथवा भावना का धनी व्यक्ति ही समझ सकता है ।

यह दृश्य कितना ही कारुणिक क्यों न हो, किन्तु कटनी में पिछले विवाह मुहूर्तों में उक्त घटना घट चुकी है । इस दुर्घटना का कारण जानने की इच्छा होना भी स्वाभाविक है, किन्तु कारण जानकर मन को और भी कष्ट होता है । मनुष्य के विवेक के दिवालियेपन पर तरस आता है ।

बारात बस से आ रही थी । बाराती भी अपने हर्ष और उत्साह प्रदर्शन के अपने ढंग काम में लाते हैं । लड़की वालों के सामने अपनी 'नाक' ऊँची करने, अड़ोस-पड़ोस को आकर्षित करने के लिए वर पक्ष वाले अपने साथ बस में पर्याप्त मात्रा में आतिशबाजी ला रहे थे । मार्ग में किसी प्रकार परस्पर रगड़ से कोई पुटाश वाला पटाखा फट गया । उसके फटने की चिंगारियों के प्रभाव से बारूद वाले उपकरण ने आग पकड़ ली । तेजी से भागती हुई बस जब तक रोकी जावे, लोग उतरने की सोचें तब तक तो सारी आतिशबाजी अपने करतब दिखा चुकी थी । भरी हुई बस में बचने के लिए एक तरफ होना भी सम्भव नहीं था । लोग अपने-अपने स्थान पर भयभीत, चेष्टारत और आतिशबाजी दहाड़ रही थी, अट्टहास कर रही थी । मानो कह रही थी "लो देखो हमारा तमाशा—अच्छी तरह देखो—निकट से देखो ? अपने धन को व्यर्थ के कामों में खर्च करके आर्थिक दिवालियेपन की ओर बढ़ते हुये समझदारो—अपनी बुद्धि के दिवालियेपन का इनाम ले लो ।"

यह घटना घटी, लोगों के सामने आई और विलीन हो गई । लड़की वाले स्तब्ध हुए, मृतकों के सम्बन्धी रो-पीटकर चुप हो गये और समय बढ़ गया अपनी गति से । ऐसी अनेक घटनाएँ आये दिन सामने आती रहती हैं । कहीं पंडाल जल गया तो कहीं बारातियों के कपड़े, कहीं किसी पुरुष को गम्भीर चोट लगी तो कहीं किसी बच्चे ने दम तोड़ दिया, लेकिन वाहरे समझदार समाज ! मनोरंजन के लिए, हर्ष उत्साह के प्रदर्शन के लिए लड़की वालों के सामने अपनी नाक ऊँची करने के लिए कोई और तरीका समझ में आता ही नहीं । यदि ऐसे समाज को विवेक का दिवालिया मान लिया जावे तो कोई अत्युक्ति न होगी ।

उक्त घटना की एक और विशेषता थी । बस में एक नहीं तीन बारातों के ८० व्यक्ति थे । घटना का प्रभाव एक नहीं तीन-तीन, नहीं छः विवाह स्थलों पर पड़ा । सामान्य रूप से एक-एक घायल अथवा मृतक से सम्बन्धित कितने घरों के सन्तुलन तथा व्यवस्था में इससे आघात पहुँचा होगा—यह सोचकर तो दिल ही बैठने लगता है ।

किन्तु क्या करें ! हम हैं निरीह, अकर्मण्य, दीनहीन, अपनी परम्पराओं के गुलाम । गुलामों ने भले ही सामूहिक मालिकों के प्रति विद्रोह ही किया हो, किन्तु हम अपनी ही बनाई विकृत परम्पराओं के पीछे दुम ही हिलाते रहते हैं—चाहे परिणाम कितने ही भयंकर क्यों न हों ?

प्रचलन को नहीं—औचित्य को मान्यता मिले

जीभ के स्वाद को प्रधानता देते हुए हम चटपटे मसालेदार मिठाई, पकवान, तले-भुने, भारी, गरिष्ठ और हानिकारक पदार्थ भूख में अधिक मात्रा में खाते रहते हैं और अपना पेट खराब कर लेते हैं । यहीं से तरह-तरह की बीमारी पैदा होती हैं । जिनमें पोषक तत्वों की समुचित मात्रा भी है और सस्ते भी हैं, उनसे इसलिए नाक-भौं सकोड़ते हैं कि उनमें तथाकथित जायकेदार चीजों जैसा स्वाद नहीं होता । स्वाद दृष्टि प्रधान रहने और पेट की स्थिति के साथ भोजन की मात्रा का सन्तुलन न बनाने से वह आहार जिस पर अपेक्षाकृत श्रम और धन भी अधिक खर्च किया गया था हानिकारक सिद्ध होता है । इसका कारण विवेक बुद्धि की दुर्बलता है । यदि उसमें प्रखरता रही होती तो स्वाद लिप्सा को इसलिए दुत्कार दिया गया होता कि उसे अपनाने का मतलब अपने बहुमूल्य स्वास्थ्य की बर्बादी हो सकती है ।

आहार एक प्रकार से क्षुधा रोग की औषधि है । पोषण की आवश्यकता है, उसे गुणों के आधार पर ही महत्त्व मिलना चाहिए । औषधियाँ स्वाद के लिए नहीं गुण के लिए खाई जाती हैं । यही दृष्टि आहार के सम्बन्ध में रहे तो अपना सस्ता आहार भी हमें स्वस्थ और दीर्घजीवी बनाने में भरपूर सहायता कर सकता है । इस तथ्य को जानने-मानने वाले भी स्वाद लिप्सा की गुलामी नहीं छोड़ते । इसका कारण विवेक का प्रसुप्त पड़ा रहना ही है । यदि वह जाग्रत रहा होता तो स्वाद और स्वास्थ्य दोनों में से एक किसे महत्त्व मिलना चाहिए इसका निर्णय करता और साहसपूर्वक यही निर्देश देता कि आत्मघाती चटोरेपन का बहिष्कार होना चाहिए और केवल वही आहार स्वीकार किया जाना चाहिए जो उपयोगी है । उतनी ही मात्रा ली जानी चाहिए जो नितान्त आवश्यक है । जाग्रत विवेक ही वह शक्ति है जो इन्द्रियों को, मन को रोक सकता है । लाभ-हानि का विवेचन करके उचित को ही ग्रहण करने का उसका निर्देश यदि दृढ़तापूर्वक मिला होता तो फिर उसे अस्वीकार करना शरीर या मन के किसी भी भाग के लिए सम्भव नहीं हो सकता ।

अपने हाथों धीमे-धीमे आत्महत्या करते-करते ही अपनी शारीरिक व मानसिक क्षमताओं का कोष खाली करते हैं और बेमौत मरते हैं । कितनी विचित्र विडम्बना है कि बर्बादी हमें रसीली मालूम पड़ती है और उन्नति का रास्ता कठोर एवं नीरस दिखाई पड़ता है, जबकि वास्तविकता इससे ठीक उल्टी है । एक [illegible] बड़ा अफसर बनने की आशा सँजोये हुए एक सामान्य बालक १६ वर्ष तक उत्साहपूर्वक नियमित निरन्तर अध्ययन करता रहता है । इस बीच कई बार फेल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

होने पर भी अपना प्रयास नहीं छोड़ता । एक हम हैं जो पुस्तकें बेचकर सिनेमा देखने वाले आवारा लड़के का उदाहरण बनते हैं । तात्कालिक इन्द्रिय सुख या दूसरे प्रकार के विनोदों को ही सब कुछ मानते हैं और भविष्य को अन्धकारमय बनाते चले जाते हैं ।

दाद खुजाने जैसी कामुक क्रीड़ाएँ अपनी ही चमड़ी फाड़कर अपना ही रक्त निकालने जैसी है । कुत्ता सूखी हड्डी चबाता है और उससे जब जबड़े छिलने के कारण रक्त निकलता है तो उसे चाव-पूर्वक पीता है । समझता है यह स्वादिष्ट पेय हड्डी में से निकलता है । उस मूर्ख को यह पता होता कि जबड़ा छिलने से उसकी जितनी क्षति हो रही है उसकी तुलना में वह स्वाद की अनुभूति अति नगण्य है तो शायद वह सूखी हड्डी चबाना छोड़ देता, पर हम हैं जो कामुकता को तृप्ति के नाम पर अपने जीवन रस को अमर्यादित रूप से नष्ट करते हैं और उस विनाशकाल को तृप्तिदायक मानते हैं । समझते हैं और दूसरे साथी सहयोगी की कृपा मिली है । वास्तविकता यह है कि यह सब कुछ कुत्ते को हड्डी चबाने से बढ़कर कुछ भी नहीं है । यदि विवेक जाग्रत रहा होता तो वस्तुस्थिति समझ में आती और दिशा में बढ़े चले उत्साह को, चिन्तन को, दुत्कारा गया होता और उन्हें सत्प्रयोजनों में नियोजित करके कहने योग्य लाभ कमाया होता ।

किसान पूरे साल भर तक खेत में कठोर श्रम करता है । सर्दी-गर्मी की चिन्ता न करके, फसल बोने, सींचने, निराने, रखाने में दत्तचित्त रहता है । आरम्भ में उसे कुछ भी नहीं मिलता, वरन् घाटा ही रहता है । बीज बोने में घर का अनाज मिट्टी में बखेरने की हिम्मत की जाती है और श्रम के अतिरिक्त समय-समय पर कुछ न कुछ खर्च भी किया जाता है । इतने पर भी किसान के चेहरे पर कोई असमंजस नहीं होता। वह भविष्य में अच्छी फसल आने की आशा लगाये रहता है और साल भर के श्रम अनुष्ठान की तपश्चर्या प्रसन्नतापूर्वक पूरी करता है । एक हम हैं उज्ज्वल भविष्य का वरदान पाने के लिए जिस सुव्यवस्थित, सुनियोजित और सुसंस्कृत जीवन-पद्धति की आवश्यकता है उसे पूरा करने में लगभग इन्कार ही करते रहते हैं । अस्त-व्यस्त और दुष्प्रवृत्तियों से ग्रसित जीवन जीते हैं । इसकी प्रतिक्रिया भविष्य को अन्धकार-मय बनाने जा रही है । इसका आभास भी रहता है, दूसरे जताते भी हैं फिर भी दिशा बदलने के लिए कोई प्रयास नहीं होता इसका कारण विवेक-बुद्धि की दुर्बलता ही है । यदि वह सजग सक्षम रही होती तो किसान जितनी समझदारी का तो परिचय दिया गया होता । उज्ज्वल भविष्य का मूल्य चुकाने के लिए वर्तमान को प्रसन्नतापूर्वक कठोरता के बन्धन में कसा होता और उसका कुछ कहने लायक सत्परिणाम निकला होता, पर ऐसा होता कहाँ है । अदूरदर्शिता केवल क्षुद्र से तात्कालिक लाभों में उलझाये रखती है । समुन्नत भविष्य की झाँकी तक नहीं होने देती । कल्पनाएँ भर उठती हैं कि अगले दिन कितने सुखद होने चाहिए पर उनका मूल्य चुकाने की न तो इच्छा होती है और न हिम्मत । इसका कारण ढूँढ़ने पर एक ही तथ्य सामने आयेगा कि विवेकशीलता धूमिल हो गई । उसकी प्रखरता नष्ट हो गई । यदि विवेक जाग्रत रहा होता तो कुशल व्यवस्थापक की तरह उसने जिम्मेदारी अपने कंधों पर उठाई होती और जहाँ भी अव्यवस्था फैल रही है वहाँ कड़ाई बरत करके सही नीति की प्रतिष्ठापना की होती, किन्तु अपने जीवन में ऐसा कुछ भी नहीं होता । सड़ा-गला ढर्रा जो परम्पराओं और परिस्थितियों ने गले में बाँध दिया है वही यथावत् चलता रहता है । कभी आत्मसमीक्षा करते हैं तो सुधार की भारी आवश्यकता प्रतीत होती है, किन्तु वैसा साहस भरा प्रयास कभी बन ही नहीं पड़ता । इसका तात्पर्य एक ही है कि विवेक के हाथ में कभी कुशल प्रशासक की तरह जीवन रथ की बागडोर सौंपी ही नहीं गई । यदि ऐसा हुआ हो तो आज अपनी जीवन सम्पदा जिस कूड़े-करकट के ढेर में पड़ी सड़ रही है वैसी उसकी दुर्गति न होती ।

वर्तमान दिनचर्या जिस ढर्रे पर लुढ़क रही है उसमें पर्याप्त सुधार की आज भी आवश्यकता है और वह छोटे-मोटे परिवर्तन आज भी बड़ी सरलतापूर्वक किए जा सकते हैं । बात छोटी-सी है पर उतने भर से दूनी प्रगति का आधार बनते हैं । एक-एक बूँद रिसने वाले घड़े का छेद यदि रोक दिया जाय और उसमें एक-एक बूँद नई आमदनी की व्यवस्था कर दी जाय तो कहने को तो दूना ही फर्क दिखाई दिया पर वस्तुतः यह हजारों गुना अधिक होगा । बूँद-बूँद रिसने से घड़े में भरा हुआ अमृत भी कुछ समय में समाप्त हो सकता था और उस मिट्टी के घड़े की कीमत दो कौड़ी रह सकती थी । इसके विपरीत बूँद-बूँद भरने से न केवल उसकी रिक्तता पूर्ण हो जायगी, वरन् सामान्य जल अन्य घड़ों को भी भरने में समर्थ हो जायगा । पूर्णतया खाली हो जाने और अपने को भरकर दूसरों को भरने योग्य बनने के अन्तर को दूना नहीं हजारों गुना ही कहा जा सकता है । ठीक यही बात अपनी अस्त-व्यस्त दिनचर्या को सुव्यवस्थित बना देने की है । व्यवहारतः इसमें थोड़ा-सा ही हेर-फेर करना होता है । धीमी गति से लापरवाही से काम करने में ढेरों समय नष्ट होता है और उसका कुछ पता भी नहीं चलता । यदि स्फूर्ति एवं तत्परता को अपनाकर उसी समय को कस दिया जाय तो लचीली रबड़ की तरह उसका विस्तार कई गुना हो जायगा उतने ही समय में दूना काम होता दिखाई पड़ेगा । इस प्रकार अन्य प्रकार की ढील-पोल को सुधार कर प्रगति के नये आधार बन सकते हैं । इस प्रकार के क्रियापरक, विचारपरक और भावपरक अनेकानेक हेर-फेर हो सकते हैं और उसकी प्रतिक्रिया चमत्कारी परिणामों के रूप में सामने आ सकती है, पर यह सम्भव तभी है, जब विवेक तीक्ष्णता उपलब्ध हो ।

विवेक में प्रेरणा रहती है । सामान्य विचार प्रक्रिया का परिणाम उतना भर हो सकता है कि मान्यता बदल जाय, पर स्वभाव और क्रियाकलाप बदलना मात्र विवेक की तेज धार से ही सम्भव होता है, क्योंकि उसमें अनौचित्य के प्रति रोष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और औचित्य को अपनाने का साहस जुड़ा रहता है । हानि और लाभ के चित्र स्पष्ट रहते हैं । अवांछनीयता अपनाते रहने पर निकट भविष्य में जो विभीषिका उत्पन्न होने वाली है उसका डरावना, किन्तु वास्तविकता भरा चित्र प्रस्तुत कर सकना और कलात्मक तत्परता की वांछनीय गतिविधियों के फलस्वरूप उज्ज्वल भविष्य की सुन्दर प्रतिमा खड़ी करना विवेकशीलता के लिए ही सम्भव हो सकता है । उसी की पहुँच सत्य के समीप तक है । उसी में मन तथा इन्द्रिय समूह पर हंटर बरसाने की और उन्हें उच्छृंखलता से रोककर बलपूर्वक सही रास्ता पकड़ने के लिए बाध्य करने की शक्ति है । विवेक नियंत्रित मस्तिष्क मात्र कल्पनालोक में नहीं उड़ता रहता, वरन् व्यवस्थित कार्य-पद्धति प्रस्तुत करता है और जीवनक्रम को उसी बात पर चल पड़ने के लिए ऐसी प्रचण्ड प्रेरणा देता है जिसे अमान्य ठहराना अपने अभ्यस्त पिछड़ेपन के लिए भी सम्भव नहीं होता है ।

जीवन के—संसार के हर पक्ष में भले और बुरे तत्व बेतरह गुँथे हुए हैं, उनमें से एक का चयन करना पड़ता है और यह पूर्णतया विवेक पर ही निर्भर है । यदि वह सजग होगा तो लाभ पक्ष के औचित्य को देखेगा और उसी का अवलम्बन करेगा । मामूली अक्ल चाहे कितनी ही तीव्र क्यों न हो, सदा भ्रम जंजालों में उलझी रहेगी । न अनुचित को छोड़ने का साहस कर सकेगी, न उचित अपनाना उसके लिये सम्भव होगा । विवेकवान् में ही वह साहस होता है कि वह अपनी अवांछनीयताओं को परख-पहचान सके और उनका निराकरण करने के लिए संघर्ष एवं दुस्साहस भरे कदम उठा सके ।

जीवन-यापन की भली और बुरी दोनों ही प्रक्रियायें प्रचलित हैं । दोनों के पक्ष में चतुर वकीलों की तरह बहुत कुछ तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं । इनमें से किसमें कितना औचित्य और कितना गुह्य है इसका फैसला न्यायाधीश जैसी निष्पक्ष बुद्धि ही कर सकती है । यह निष्पक्ष एवं सत्यान्वेषी चिन्तन जब उचित को ही ग्रहण करने का साहस जुटा लेता है, तब उसे विवेक की प्रखरता कहते हैं । यही वह तत्व है जिसे ऋतम्भरा, प्रज्ञा और तत्वदर्शन आदि नामों से पुकारा जाता है । इसी का सार सूत्र गायत्री मंत्र के २४ अक्षरों में सन्निहित है ।

समाज में कितनी ही परस्पर विरोधी प्रथाएँ चल रही हैं । उनके अनुयायी आँखें मूँद कर उनका समर्थन एवं अनुसरण करते हैं । जीवन-यापन की अनेकानेक पद्धतियाँ, विचारों की अगणित शाखाएँ और जीवन-यापन की कितनी पद्धतियाँ हैं, इनमें से किसी को भी पूर्ण निर्भ्रान्त नहीं कहा जा सकता । सच तो यह है कि मानवीय बुद्धि सत्यान्वेषण की दिशा में क्रमशः बढ़ती चली आई है । उसने जितनी मंजिल पूरी कर ली है उससे अनेक गुनी पूरी करनी शेष है । हम कछुए की चाल से सत्य की ओर रेंगते-रेंगते चल रहे हैं और विश्वास रखते हैं कि सत्य की अधिकाधिक ऊँची परतों में प्रवेश करते हुए हम पूर्ण सत्य का, परब्रह्म का दर्शन कर सकने में भी कभी न कभी समर्थ अवश्य हो जायेंगे भले ही उसमें कितना ही समय क्यों न लगे ।

अपने समाज में विवाह-शादी के समय होने वाला अपव्यय, कन्या-विक्रय, वर-विक्रय, बाल-विवाह, अनमेल विवाह, मृतक-भोज, भिक्षा-व्यवसाय, जाति-पाँति के नाम पर ऊँच-नीच की मान्यता, पर्दा-प्रथा, पशु-बलि जैसी कितनी ही कुरीतियाँ प्रचलित हैं । भाग्यवाद, देव विग्रह, शकुन, मुहूर्त, भूत-पलीत आदि कितनी ही मूढ़-मान्यताएँ भरी पड़ी हैं । विवेकपूर्वक देखा जाय तो पता चलेगा कि ऐसी अनेकों अनगढ़ रूढ़ियाँ मुद्दतों से हमारे पल्ले बँधी चली आ रही हैं जिनका यथार्थ से कोई सम्बन्ध नहीं है । फिर भी करोड़ों लोग उन्हें मानते हैं और इन विडम्बनाओं में उलझे रहकर स्वयं हानि उठाते और पूरे समाज को हानि पहुँचाते हैं ।

वर्तमान मान्यताओं और प्रचलनों में से आज अधिकांश को बदलना आवश्यक है, पर यह हो तभी सकता है, जबकि विवेकशीलता को प्रमुखता दी जाय । प्राचीन या नवीन में से किसी का दुराग्रह पक्षपात न हो तो हम निष्पक्ष न्याय दृष्टि रखकर विवेकवान् बन सकते हैं और आदर्श जीवन का सुख-शान्ति भरा आनन्द ले सकते हैं ।

समाज को गरीब व रुग्ण बनाने वाली विकृति

विवाह संस्कारों का आध्यात्मिक, सामाजिक, वैयक्तिक और पारिवारिक महत्त्व है । उसका प्रभाव शारीरिक, मानसिक, आर्थिक क्षेत्रों पर भी पड़ता है और उस अवसर पर उत्पन्न हुई भावनात्मक आस्थाओं का प्रभाव पीढ़ियों तक चलता है । इस संदर्भ में भी भारतीय धर्म-कृत्यों में विशेष विधा का समावेश है और उसमें जुड़ा स्थायित्व भी दूरगामी परिणामों से भरा-पूरा है । कन्यादान, पाणिग्रहण, सप्तपदी, परिक्रमा, सुमंगली जैसे कृत्यों का सम्मिलित प्रभाव ऐसा पड़ता है कि दोनों आमतौर से सच्चे मन से एक-दूसरे को अपना लेते हैं और वह सम्बन्ध आजीवन निभता भी चला जाता है । एक-दूसरे से अलग होने की बात तो कोई कदाचित ही सोचता है । कभी व्यवधान पड़ता है तो परिचित क्षेत्र में चर्चा का विषय बन जाता है और आश्चर्य किया जाता है कि जब सात भाँवरें पड़ चुकीं तो फिर अलग होने की उस बन्धन को तोड़ने की बात क्यों सोची गई ? आमतौर से कभी ही ऐसा होता है कि पति-पत्नी के बीच कुछ खींचतान चल पड़ने के उपरान्त भी वह तनाव लम्बे समय तक चलता रहे । सुलह-सफाई इस आधार पर हो जाती है कि आखिर तो हम विवाह बन्धन में पंचों की, देवताओं की साक्षी में बँधे हैं, उसे छोटे-मोटे कारणों से ही छिटक कर तोड़ कैसे दें ?

नव-विवाह वाले वातावरण का अमिट प्रभाव प्रायः जीवनभर स्मृतियों के रूप में बना रहता है । कई तो उस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अवसर के फोटो तक खिंचवा लेते हैं और समय-समय पर उन्हें भावुकतापूर्वक देखते रहते हैं ।

इस माहौल में एक बात और भी बड़ी सघनतापूर्वक जुड़ जाती है कि दोनों पक्षों ने एक-दूसरे के साथ किस प्रकार व्यवहार, बरताव किया ? इसमें रीति-रिवाजों और घटनाओं की बात भी महत्त्वहीन बन जाती है । बड़ी बात यह रहती है कि दोनों पक्षों ने एक-दूसरे की आर्थिक बरबादी के लिए कैसे दाँवपेच चले ? और कितनी कुटिलता अपनाई ? अन्य घटनाएँ कम महत्त्व की होने से विस्मृत हो जाती हैं, पर जिस आर्थिक बरबादी के कारण पूरे परिवार के ऊपर तबाही टूटी, वह तथ्य भुलाये नहीं भूलता, भले ही वह सब नाक ऊँची रखने, शेखी बघारने, अमीरी का ढोंग रचने के लिए ही क्यों न किया गया हो, पर उसका परिणाम ठीक वैसा ही होता है जैसा किन्हीं डकैतों ने आक्रमण करके उस परिवार की खुशहाली को पैरों तले रौंदा हो । उस घर का भविष्य, दूरदृष्टि से अन्धकारमय बनाया हो । वस्तुतः होता भी ऐसा ही है । अपने देश में अधिकांश लोगों की आजीविका बनी बनाई, बँधी-बँधाई होती है । झटके से कमाने वाले, ऊपरी आमदनी से घर भरते रहने वाले तो कुछेक लोग ही होते हैं । जिस परिवार का अर्थ-चक्र एक बार डगमगाया, समझना चाहिए कि पूँजी की कमी, खर्चों की बढ़ोत्तरी, ब्याज आदि के कारण उसमें गिरावट ही आती चली जायेगी । उबरने का सुयोग कदाचित ही किन्हीं को मिल पाता है । इस आघात के घाव इतने गहरे होते हैं कि उस परिवार के सभी सदस्य मरते समय तक भुला नहीं पाते । विवाह-संस्कार के साथ जुड़ी उत्तम छापों की तरह यह कुटिल आघात सहज भूला-भुलाया नहीं जा सकता । ऊपर से लोकाचार की पर साथ ही वह शूल भी चुभता रहता है कि खर्चीले विवाह ने उस परिवार को बर्बाद करके रख दिया था ।

पति-पत्नी भी इस स्मृति को भुला नहीं पाते । वधू को यह कसकता ही रहता है कि मेरे विवाह में इतना खर्च कराया गया जो अभिभावकों के सामर्थ्य से बाहर था । उस कमी के कारण बहिन, भाइयों के स्वास्थ्य में, शिक्षा में, भविष्य को उज्ज्वल बनाने में कितनी बड़ी क्षति पहुँची । दाम्पत्य जीवन में यह विष मरते दम तक विद्यमान रहता है और उसका मन उस स्तर से नहीं मिलने देता जितना कि मिलना चाहिए । माना कि यह दबाव ससुराल पक्ष के बड़ों ने डाला हो, पर कर्त्तव्य तो पति का भी बनता था कि उस अनर्थ को न होने देने में तनकर खड़ा हो और जो अनौचित्य हो रहा है उसे बगावत करके रोकें । भले ही वह बगावत नम्र और शिष्ट स्तर की हो, पर उसमें इतना दम होना ही चाहिए कि जहाँ पत्नी को जीवन-संगिनी के रूप में वरण करने का असाधारण लाभ उठाया जा रहा है, वहाँ इतनी सज्जनता और कृतज्ञता का अस्तित्व बनाये रखा जाय कि पत्नी के परिवार वालों को वह दण्ड और त्रास न देने दिया जाय जो बाहर से तो न कुछ लगता है, पर भीतर ही भीतर उस परिवार का सफाया ही करके रख देता है । जिन पतियों में इतना साहस नहीं उन्हें इतना तो करना ही चाहिए कि अपना विवाह अमीर घराने से न करके किसी गरीब के घर रिश्ता जोड़ने की स्थिति आने तक अविवाहित बने रहने की घोषणा तो कर ही दें । ऐसी क्या जल्दी पड़ी होनी चाहिए कि अभिभावकों के अनुचित दबाव रहते दूल्हा बनने की उमंग को न दबाया जा सके । वर बनने वाले को इतना असमर्थ तो नहीं ही होना चाहिए कि पत्नी के घर की बर्बादी होते रहने पर भी संकोच की आड़ में मूक-दर्शक बने रहने की स्थिति स्वीकार किए रहा जाय ।

नया रिवाज इन दिनों यह भी चल पड़ा है कि वर स्वयं दहेज माँगने लगे हैं । पिछले दिनों यह मोल-भाव अभिभावक ही करते थे । लड़का अपना संकोच दिखाने के लिए चुप बैठा रहता था, पर अब तो वे स्वयं स्कूटर, मोटर गाड़ी, विलायत की पढ़ाई आदि न जाने किस-किस वस्तु की अपनी अलग माँगें करने लगे हैं । इस प्रकार की माँग के पीछे या तो विवाह करके कन्या पक्ष पर कोई बड़ा अहसान जताने और बदले में मुआवजा माँगने की भावना हो सकती है या फिर भिखारियों जैसी दीनता, दरिद्रता का, हीनभाव का काम हो सकता है कि जो वस्तु अपने पुरुषार्थ से नहीं जुटा सकते उसे सम्बन्धियों से पाने की याचना करे । यह दोनों ही स्थितियाँ ऐसी हैं जो वर पक्ष के लिए हर दृष्टि से अशोभनीय हैं ।

यदि लेन-देन की बात का औचित्य आँका जाय तो उसमें लड़की वालों द्वारा दहेज वसूल किए जाने का कुछ औचित्य भी हो सकता है । उन लोगों ने लड़की को पाल-पोस कर बड़ा किया । अब वे दूसरे परिवार में रोटी-कपड़े की कीमत पर आजीवन मजूरी करने वाली दासी की तरह रहने के लिए दे रहे हैं, तो अपने माल का मूल्य वसूल करने के हकदार भी हो सकते हैं । कई जातियों और क्षेत्रों में ऐसा रिवाज भी है कि लड़की देने के बदले भारी रकम लड़के वालों से वसूल की जाती है, पर आश्चर्य तब होता है कि जब सुयोग्य लड़की पाने के अतिरिक्त भी उसके साथ दहेज की मोटी रकम मिलने की आशा की जाती है । इस माँग के पीछे किसी प्रकार का औचित्य नहीं खोजा जा सकता ।

जहाँ दहेज के लिए दबाव डाला गया, वहाँ प्रतिशोध का यह भाव भी उभर सकता है कि लड़की को कीमती जेवर और कीमती कपड़े दिये जायें । धूम-धाम वाली बारात का खर्चा वहन किया जाय । जो वसूला गया है उसे बरबाद करने के लिए दबाव डाला जाय । कहावत है कि बिल्ली खा नहीं सकती तो क्या, दूध को लुढ़का देने का प्रयत्न तो जरूर करती है । जो वसूलने में उस्ताद हैं उन्हें खर्चने में भी मुट्ठी क्यों सिकोड़नी चाहिए । बर्बादी एक की ही क्यों हो, प्रतिशोध कहता है कि उस डकैती का माल सीधे हजम नहीं होना चाहिए । उसका एक अंश वसूलने वालों से भी बर्बाद कराया जाना चाहिए ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि खर्चीली शादियाँ बन्द हो सकें तो उस बचत से हर किसी की खुशहाली बढ़ेगी और दरिद्रता से पीछा छूटेगा । भले ही अतिरिक्त उपार्जन के कोई नये साधन भले ही न जुट सकें । इसके विपरीत यदि आजीविका बढ़ाने के एक ओर तो नये आधार खड़े किए जाते हैं, पर दूसरी ओर विवाह-शादियों का खर्च उसी प्रकार बना रहे तो जो कुछ अतिरिक्त कमाई हुई है, वह सभी उसी खाई में गिरकर नष्ट होती रहेगी । खुशहाली बढ़ने का सुयोग कहीं आ ही नहीं पायेगा । अन्य समाज इस अभिशाप से बचे होने के कारण मध्यवर्ती आजीविका में ही गुजर-बसर कर काम चलाते और जिन्दगी गुजार लेते हैं, किन्तु जिन पर खर्चीली शादियों का उन्माद चढ़ा है वे ईमानदारी-बेईमानी की काली-सफेद कमाई इसी भीड़ में झोंकते और अन्ततः गरीब के गरीब बने रहते हैं ।

हठवादिता के विरुद्ध असहयोग को आह्वान

व्यक्तिगत जीवन में बरती जाने वाली अनेक मूर्खताएँ कई बार सामूहिक मान्यताएँ बन जाती हैं और उनके द्वारा व्यक्ति और समाज दोनों ही की अपार हानि होती है । अपने देश में विवाह सम्बन्धी मान्यताओं में से अनेकों ऐसी हैं जिनके कारण पति-पत्नी को ही नहीं उनके परिवारों को भी भारी कष्ट सहना पड़ता है । सारे समाज को हानि पहुँचती है सो अलग ।

विवाह के अवसर पर होने वाली धूमधाम में उन्मादियों जैसा आचरण किए जाने की प्रथा में श्रम, समय और धन की कितनी हानि होती है इसका अनुमान लगाया जाय तो प्रतीत होगा कि राष्ट्रीय उत्पादन का एक बहुत बड़ा भाग इसी मूर्खतापूर्ण धमाल में नष्ट हो जाता है । यदि उस धन और श्रम को बचाया जा सका होता, उपयोगी कार्यों में लगाया जा सका होता तो उस पूँजी से वर-कन्या के भविष्य को उज्ज्वल बनाने वाले आधार बनते एवं दोनों परिवारों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनी रहने में सहायता मिलती, पर न जाने लोगों के दिमागों पर कौन-सा भूत चढ़ बैठा है जो इस अपव्यय में प्रशंसा, प्रतिष्ठा और बुद्धिमानी सोचते हैं । घर की अर्थ-व्यवस्था को नष्ट करके यहाँ तक कि ऋण लेकर भी दरिद्र लोग अमीरी का नाटक खेलते हैं और नासमझी तथा आर्थिक बर्बादी की होली जलाते हैं ।

एक ओर से दहेज की माँग और दूसरी ओर से जेवर तथा खर्चीली 'शोभा' की माँग का सिलसिला चलता है और इस घर फूँक तमाशा देखने के स्वाँग में अर्थ संतुलन बेतरह लड़खड़ा जाता है । समझदारी का एक भी आधार ऐसा नहीं है जो विवाहों के अवसर पर बरते जाने वाले इस अपव्यय उन्माद का समर्थन करता हो । फिर भी जो चल पड़ा सो चल ही रहा है । विवेकपूर्ण साहस का ऐसा परिचय नहीं मिलता कि समाज के मूर्धन्य लोग आगे बढ़कर इस आर्थिक आत्महत्या में लगे हुए हाथों को रोकें और अपने घर में आग लगाने वालों को जिस तरह रोका जाता है, उसी तरह इन विवाहोन्माद में निरत लोगों को कमर कसकर और गरदन दबोचकर इन कुकृत्यों से रोकें ।

समय आ गया कि छुट-पुट विरोध व्यक्त करते रहने का निर्जीव ढर्रा अपर्याप्त समझा जाय और हर व्यक्ति समझदारी का परिचय देने के लिए आगे आये । मूर्खों, द्वारा—मूर्खों को प्रभावित करने के लिए विवाहों में होने वाली आर्थिक बर्बादी को आत्महत्या से मिलते-जुलते अपराधों में गिना जाय और उसे स्वयं न करने तथा दूसरों को न करने देने के लिए कारगर उपाय अपनाया जाय । स्वयं न करने के साथ-साथ इन अपव्ययी समारोहों में सम्मिलित न होने और उनमें किसी प्रकार का सहयोग न देने जैसा कदम तो व्यक्तिगत रूप से भी उठाया जा सकता है । सामाजिक भर्त्सना और कानूनी पकड़ का अवसर मिल सके तो उन माध्यमों से भी विवाहोन्माद के सर्वनाशी असुर की रोकथाम की जानी चाहिए । सीधे-सादे तरीके से घरेलू त्योहारों की तरह विवाह-शादी भी बड़ी आसानी से हो सकते हैं । सारे संसार में ऐसा ही होता भी है । उस अवसर पर धन की होली जलाना और अकारण 'धमाल' खड़ा करना इस पृथ्वी पर भारत के अतिरिक्त और कहीं भी तो देखने में नहीं आता । अब समझदारी को जीवन्त होना चाहिए और चल रही मूर्खता को विदा करने का शुभारम्भ हर दूरदर्शी को अपने आपसे करना चाहिए ।

सड़े-गले लोग अपनी हरकतों से बाज न आते हों तो नई पीढ़ी का—विशेषतया वर-कन्या का कर्त्तव्य है कि वे इस राष्ट्रीय बर्बादी के निमित्त न बनें और अभिभावकों से स्पष्ट कह दें कि उन्हें कुँवारा रहना मंजूर है, पर इस विनाश के कलंक का निमित्त बनना स्वीकार नहीं है । इतने से कम रोष, आक्रोश व्यक्त किये बिना लकीर के फकीर लोगों की मूर्खता को रोका जा सकना कठिन पड़ेगा । जिन्हें तर्क और तथ्य प्रभावित नहीं करते, जो मूढ़-मान्यताओं को किसी भी प्रकार छोड़ने के लिये तैयार नहीं उन्हें अपना दुराग्रह बदलने के लिए विवश करने के अतिरिक्त दूसरा उपाय भी तो नहीं सूझता ।

एक भी कारण ऐसा नहीं है जिसके सहारे विवाहों में होने वाले 'धमाल' का औचित्य ठहराया जा सके । कोई भी तर्क या तथ्य तो उसका समर्थन नहीं करता । दहेज माँगकर बेटे वाले तनिक भी नफे में नहीं रहते । वह 'मन का धन' वधू का जेवर, कपड़ा, लम्बी-चौड़ी दावत और सजधज की बारात ले जाने में पूरी तरह नष्ट हो जाता है, यहाँ तक कि उल्टा कुछ जेब से ही लगाना पड़ता है । कन्या के पिता के घर तो दिन-दहाड़े डकैती पड़ने जैसा विनाश दृश्य स्पष्ट ही खड़ा हो जाता है । घर के कपड़े चौराहे पर रखकर होली की तरह जला दिये जायें तो भी कुछ क्षण का मनोरंजन हो सकता है, पर समझदारी यही कहेगी कि ऐसा महँगा मनोरंजन करने की बात किसी को भी नहीं सोचनी चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विवाहों के अवसर पर होने वाले 'धमाल' को इसी स्तर की अदूरदर्शिता में गिना जाना चाहिए ।

जब तर्क और तथ्य काम न करें, जब समझदारी को तिलांजलि दिये रहने की हठवादिता सर्वनाशी कुकृत्य के लिये अड़ी-मचली बैठी हो तो इसके अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही नहीं रह जाता कि उसे अस्वीकार करने का साहस किया जाय और साहस भरा विरोध खड़ा कर दिया जाय । समझदारी और नासमझी के समर्थकों को अब स्पष्टत: अपना मार्ग अलग कर लेना चाहिए । संकोचवश हाँ में हाँ मिलाते रहने और जो हो रहा है उसे होते रहने देने की नीति में न तो सहनशीलता है और न शालीनता । परम्परा निर्वाह के नाम पर विनाश नहीं चलने दिया जा सकता । कभी सती प्रथा की धूम थी, कभी बहु-पत्नी प्रथा अमीरी की शान थी, कभी दास-दासियों को खरीदने-बेचने की सामाजिक मान्यता मिली हुई थी । समझदारी ने उन्हें अस्वीकार कर दिया और वे बातें अब दम तोड़ चुकीं और इतिहास के पृष्ठों पर अंकित रहने तक सीमित बन चली हैं । जहाँ उनके ध्वंसावशेष बचे हैं वे भी कल-परसों तक समाप्त होकर रहेंगे । जाति-पाँति के नाम पर बरती जाने वाली ऊँच-नीच की मान्यता पर भी इतने प्रबल प्रहार हो रहे हैं कि उसका जीवित रह सकना भी देर तक सम्भव न रह सकेगा ।

ऐसी ही अवांछनीयताओं में विवाहोन्माद भी है । उसे 'मलेरिया' चेचक जैसी बीमारी माना जाय और रोकथाम के लिए उपाय बरतने की जैसी चिन्ता की जाती है वैसी ही इस सन्दर्भ में भी की जानी चाहिए । मलेरिया फैलाने वाले मच्छरों के साथ हमारी कोई सहानुभूति नहीं होती और उनकी सफाई करने में हमें कुछ भी अटपटा नहीं लगता, ठीक इसी प्रकार विवाहों के समय पर उन्मत्त हो जाने वाले, मूर्खता की मदिरा पीने वालों को विनाश लीला से बचाव की बात सोची जानी चाहिए । इन दुराग्रहियों की सर्वत्र उपेक्षा और अवज्ञा की जानी चाहिए । सम्भवत: वे इस उन्माद का समर्थन अपनी प्रतिष्ठा बढ़ने की बात सोचकर करते हैं । वातावरण ऐसा बनना चाहिए कि उन्हें इस अड़-अकड़ में धन हानि के साथ-साथ अप्रतिष्ठा की लानत भी सहनी पड़े । हर दिशा से उन पर धिक्कार की धूल फेंकी जाय तो सम्भव है कि उन्हें लकीर के फकीर बने रहने की बात पर पुनर्विचार करना पड़े ।

इस महँगाई के जमाने में प्रत्येक सद्-गृहस्थ के लिए अपने परिवार का भरण-पोषण ही कठिन पड़ रहा है । स्वास्थ्य, शिक्षा एवं आजीविका की स्थिति ठीक रखने के लिए अधिक आर्थिक साधन की हर जगह कमी है । ऐसी दशा में उन बर्बादियों के लिए पैसा कहाँ से लाया जाय जिनकी किसी भी दृष्टि से कुछ भी उपयोगिता नहीं है । मनोरंजन की ही बात हो तो कठपुतली का, गुड्डे-गुड़ियों का विवाह रचाकर सस्ता मनोरंजन किया जा सकता है । इतने बड़े धन की बर्बादी की क्या आवश्यकता ? खुशी के अनेक अवसर सामने आते हैं । परीक्षा में उत्तीर्ण होना भी एक खुशी है । उस अवसर पर कोई विवाह जैसा धमाल खड़ा करे तो उसे मूर्ख कहा जायगा । होली, दिवाली, जन्म दिन जैसे त्योहार भी तो खुशी के दिन होते हैं, उन अवसरों पर सस्ते समारोह कर लिए जाते हैं । विवाह ही कौन ऐसी अनहोनी बात है जिसके लिए आकाश-पाताल के कुलावे एक किए जाएँ । वयस्क लड़की-लड़कों को विवाह की आवश्यकता अनुभव होती है तो उनके जोड़े मिला दिये जायें । सीधी-सादी-सी अति सामान्य और नितान्त स्वाभाविक प्रक्रिया है, यह । इसमें क्या बादल टूटता है और क्या जमीन फटती है जिसके लिए घर का सारा आर्थिक सन्तुलन बिगाड़ दिया जाय और उन स्रोतों को सुखा दिया जाय जिनके आधार पर परिवार की सुख-शान्ति और प्रगति का बहुत कुछ आधार रखा होता है ।

आज तो विवाह में वर-वधू की जोड़ी मिलाने में उनकी समान स्थिति देखने की बात भी गौण हो गई है । धन खर्च कहाँ कितना होगा इसी को प्रधानता देकर सम्बन्ध पक्के किये जाते हैं । इस स्थिति में निर्धन परिवारों की कन्याओं का भविष्य एक प्रकार से अन्धकारमय ही बना रहता है, भले ही वे कितनी ही सुयोग्य क्यों न हों ? निर्धन अभिभावक अपनी विदुषी कन्या को भी समान योग्यता के वर को नहीं सौंप पाते । धन देकर शादी करने में मध्यवर्ती परिवारों का कचूमर ही निकल जाता है । फलत: वे उस उत्सव को, उसके दबाव को आजीवन शाप ही देते रहते हैं । कन्या ऐसे सुसराल वालों के प्रति क्या सद्भाव लेकर जायगी जिन्होंने अपनी झूठी शान के लिए उसके अभिभावकों को दर-दर का भिखारी बना दिया । इस प्रकार न केवल आर्थिक बर्बादी होती है, वरन् कन्या पक्ष और वर पक्ष के बीच एक ऐसी भावनात्मक खाई भी खुद जाती है जिसका पटना सहज ही सम्भव नहीं होता । यह घाव इतने गहरे होते हैं कि उनके भरने में मुद्दतें बीत जाती हैं ।

समझदारी को निर्जीव नहीं होना चाहिए । दूरदर्शिता का कायर होना दु:खद है । यदि विवाहोन्माद को अवांछनीय माना जाय तो उसको हटाने के लिए साहस को सजग किया जाय । इसमें परम्परा प्रचलन की बात नहीं सोची जानी चाहिए । पिछले दिनों भारत पर विदेशी दासता छाई थी, इसलिए अब भी वैसा ही होना चाहिए ऐसा सोचना उपहासास्पद है । अनुकरण अच्छाइयों का किया जाना चाहिए । प्रचलन वे ही स्वीकार किए जाने चाहिए जो औचित्य की कसौटी पर खरे सिद्ध होते हैं । जिसे विवेक ने अमान्य ठहरा दिया है, उसे छाती से चिपकाये रहने में किसी भी प्रकार बुद्धिमानी नहीं है ।

जीवन्त विवेक की माँग है कि विवाहों में होने वाले अपव्यय से असहमत लोग उन लोगों से पृथक् हो जायें जो मूढ़ता के दुराग्रह को औचित्य समझाने पर भी छोड़ने को तैयार नहीं । इन्हें बाध्य और विवश किया जाना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन्हें विवेकशील पक्ष का तनिक भी समर्थन नहीं मिलना चाहिए । विवाह योग्य लड़के-लड़कियाँ अपने अभिभावकों को इस बर्बादी के निमित्त बनने की अपेक्षा कुँवारे बने रहने की बात बिना संकोच बता दें और इस तरह की शादी बर्बादी में किसी विवेकशील का प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग न मिले तो इतने भर से यह हठवादिता मिट जायगी, जिसने आज हर दृष्टि से सर्वतोमुखी विनाश के सरंजाम जुटा रखे हैं ।

फैशन के नाम पर चुस्त कपड़े न पहनें

इन दिनों दर्जी आदमी को सभ्य बनाता है । फैशन और डिजायनों के इतने तौर-तरीके आये दिन निकलते रहते हैं कि कपड़ा पुराना होने से पहले नया सिलवाने की जरूरत पड़ती है । खाने में जितना खर्च आता है, प्राय: उतना ही पहनने पर भी आने लगा है । ईश्वर के बाद सौंदर्य प्रदान करने में दर्जी का ही दूसरा नम्बर माना जाता है । एक की नकल दूसरा करता है और दूसरे की तीसरा । जो जितना नवीनतम डिजायन बनवा सके वह उतना ही सभ्य, सुन्दर और सम्पन्न माना जाता है ।

इतने पर भी कितने लोग हैं जो वस्त्रों का उद्देश्य समझते हैं और उनका समुचित लाभ उठाते हैं । वस्त्रों का पहला उद्देश्य है— लज्जा के अंगों का ढकना, दूसरा है ऋतु प्रभाव से शरीर को बचाना । जो इन दो प्रयोजनों को जितनी अच्छी तरह पूरा कर सकने वाले कपड़े सिलवाता या पहनता है, समझना चाहिए की उसका कपड़े पहनना सार्थक है ।

दुर्भाग्य की बात है कि इन दोनों प्रयोजनों को लोग भूलते जाते हैं । इनके स्थान पर फैशन के भूत के पीछे पड़कर अनावश्यक खर्च करते हैं । स्त्रियों के लिए कटि-प्रदेश, वक्ष और जंघाएँ यह तीन स्थान लज्जाजनक और ढकने योग्य माने जाते हैं । जंघाएँ टखनों के नीचे तक मानी गई हैं । इन अंगों को जो ठीक तरह ढक सके समझना चाहिए कि वे महिलाओं के लिए शालीनतायुक्त वस्त्र हैं । प्राय: यही अंग न्यूनाधिक मात्रा में पुरुषों के लिए भी ढकने के हैं । उनके लिए पैरों के टखनों के बीच वाले भागों में छूट भी है । फैशन ने तो इन सभी अंगों को छद्म रूप में खुला छोड़ने का रिवाज चलाया है । यहाँ तक कि दर्शक की निगाह इनकी ओर अनायास ही जाय और पूरी तरह दीखते हुए भी इन अंगों का आभास मिले, ऐसा फैशन बढ़ता जाता है ।

स्त्रियाँ इस सम्बन्ध में पुरुषों से आगे हैं । वे पैरों में इतने कसे हुए चुस्त कपड़े पहनने लगी हैं कि चलने तक में कठिनाई पड़े । सीधे ढंग से बैठना कठिन पड़े । कपड़ों के साथ ऊँची ऐड़ी के जूते भी फैशन के अंग हैं । इससे चलने में असुविधा होती है । कभी तो गिरने, मोच आने का भी डर रहता है ।

दूसरा उद्देश्य कड़ी ठंडक से शरीर को बचाना है । इस प्रयोजन को पूरा करते हुए भी कपड़े ऐसे होने चाहिए जो धूप और हवा को त्वचा तक पहुँचाते रहें । अत्यधिक शीत के दिनों इसे पहने रहने का अपवाद भी हो सकता है, पर मामूली ठंडक रहने पर धूप, हवा की रोकथाम नहीं करनी चाहिए । इसका स्वास्थ्य से सीधा सम्बन्ध है । आरोग्य की दृष्टि से यह दोनों ही ऐसे हैं जिन्हें त्वचा को छूते रहना चाहिए । शरीर से पसीना और भाप सदा निकलते रहते हैं । इन्हें बाहर जाने में रुकावट न पड़े । इतने कड़े-कपड़े कभी भी नहीं पहनना चाहिए ।

गर्मी के दिनों में या हल्की ठंड होने के मौसम में ढीले कपड़े पहनने चाहिए । इसका उद्देश्य है धूप और हवा का प्रभाव शरीर तक पहुँचने देना । इसमें जितनी रुकावट पड़ेगी उतना ही चमड़ी को नुकसान पहुँचेगा । चमड़ी ही नहीं उसके भीतर माँस, मज्जा, हड्डी आदि की ताजगी और सफाई में व्यवधान पड़ेगा । देखने में वह मामूली बात मालूम पड़ती है, पर कसे कपड़ों से त्वचा पीली और कमजोर पड़ने लगती है । साथ ही उसके भीतर जो बहुमूल्य जीवनोपयोगी पदार्थ भरे पड़े हैं इन सब में दुर्बलता आती है ।

बहुत ठंडे देशों में ठंडी हवा से बचने के लिए कसे कपड़ों की दिन के समय कुछ आवश्यकता भी हो सकती है, पर जब कंबल जैसे हवा को रोकने वाले कपड़े ओढ़ रखे हों तब तो कड़े और कसे कपड़े पहनने ही नहीं चाहिए ।

मोटे ऊनी कपड़े जो जल्दी-जल्दी धोये न जा सकें अपने भीतर पसीने की गर्मी जमा करते जाते हैं । बाहर की धूल गंदगी भी जमा होती रहती है । काला रंग होने से वह मैल दिखाई नहीं पड़ता । यह गंदगी भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है ।

कपड़े कम और हल्के ही पहनने चाहिए चाहे उनसे फैशन में थोड़ी कमी ही क्यों न पड़ती हो ।

फैशनेबल छात्रा का बुरा हाल

घटना लंदन की है । नित नये फैशन निकालने वाले फ्रांस के एक डिजाइनर ने यहाँ आकर कई मनमोहक रंग और डिजाइनों में कागज की पारदर्शी कमीजों का प्रचलन किया । एक दिन इन कमीजों को केवल शो रूम में प्रदर्शन किया गया तो २-२ पौण्ड में सारी कमीजें हाथों हाथ बिक गईं ।

कागज के कपड़े थोड़ा-सा झुकने-मुड़ने और बरसात होने पर फट सकते हैं, बेकार हो सकते हैं । ऐसे ही तंग और चुस्त कपड़ों में भी अनेक बुराइयाँ हैं, किन्तु वर्तमान पीढ़ी के युवा-युवतियों की फैशनप्रियता भी अजीब है कि ऐसे कपड़ों के स्पष्ट दुर्गुणों को देखते हुए भी लोग तंग कपड़े, अधिकांश शरीर नंगा रखने वाली स्कर्ट और दूसरी किस्म के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भौंड़े वस्त्र पसन्द करते हैं । लड़कों की अपेक्षा यह रुचि, यह रोग लड़कियों में अधिक फैल रहा है ।

बढ़ते हुए फैशन की बुराई से संसार के सभी विचारशील लोग चिन्तित हैं । समाज के हित-चिन्तक व्यक्ति समय-समय पर ऐसी विचारधाराएँ प्रस्तुत करते रहते हैं । ईरान के शिक्षा मंत्रालय ने तो कानून बनाकर रोक लगा दी है कि कोई भी ५ वर्ष से अधिक की आयु की लड़की तंग और ऊँची स्कर्ट पहनकर विद्यालयों में प्रवेश नहीं पा सकती । अनेक राज्यों में भी ऐसे प्रतिबन्ध हैं तो भी फैशन का रोग कम नहीं होता ।

हमारे देश में तो अन्य आदर्शों की तरह वेश-भूषा की शालीनता भी मर्यादित की गई है । अनेक लड़कियाँ विदेशी ढंग के कपड़े पहनती हैं । वे यह भूलती हैं कि भारतीय पोशाक संसार भर में सौम्य और सुन्दरतम् मानी गई हैं । विदेशों में साड़ी का प्रचलन बहुत अधिक बढ़ रहा है तो फिर यहाँ की लड़कियाँ क्यों बावलापन व्यक्त करें ? क्यों अस्वाभाविक वस्त्र धारण करें ?

ये बहिनें सम्भवत: यह नहीं जानतीं कि फैशनेबल कपड़े ऐसी हास्यास्पद स्थिति उत्पन्न कर देते हैं जिससे दर्शकों को तो दु:ख होता ही है उन्हें भी कष्टकारक परिस्थिति का सामना करना पड़ जाता है । ऐसा ही एक दृश्य आगरा में उस समय उपस्थित हुआ जब सिटी बस से उतरते समय एक छात्रा की ऊँची एड़ीदार सैण्डिल बस की सीढ़ियों में फिसल गई और वह धड़ाम से नीचे गिर पड़ी ।

छात्रा का नीचे गिरना था कि उसकी चुस्त पोशाक की सीवन टूट गई जिससे बड़ा अशोभनीय दृश्य उपस्थित हुआ । उसके सिर के घोंसलानुमा बाल बिखर पड़े उनमें जो एक स्टील की कटोरी चिपक रही थी दूर जा गिरी । यह घटना यात्रियों के लिए तो मजाक हो गई पर बेचारी छात्रा मारे शर्म के स्कूल जाने की अपेक्षा रिक्शा लेकर घर वापस चली गई ।

बड़े शहरों में प्रतिदिन कोई न कोई ऐसी दुर्घटना हो जाती है, इनसे लड़के-लड़कियों को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए और चुस्त व भौंड़े कपड़ों के लिए सावधान होना चाहिए । जब तक छात्र-छात्राओं का स्वयं विचार परिवर्तन नहीं होगा, तब तक किसी का कहना या कानून बनाना भी निरर्थक ही रहेगा । कानून बनाने की प्रतिक्रिया तो ईरान में ही प्रकट हुई । वहाँ जिस दिन निषेधाज्ञा प्रसारित की गई एक व्यक्ति ने अपनी १६ वर्षीय लड़की की स्कर्ट फाड़ डाली, इस पर उस लड़की ने आत्महत्या ही कर ली ।

इससे साबित होता है कि जिस तरह यह आकर्षण छात्र-छात्राओं और अभिभावकों ने बढ़ाया है उसी तरह कम भी करना चाहिए । धीरे-धीरे अभ्यास से वर्तमान फैशन को हटाकर भारतीय वेश-भूषा को प्रतिष्ठित किया जा सकता है । ऐसा हर भारतीय को करना चाहिए ।

सुन्दरता से अभिशप्त सर्पदंशिता—क्लियोपेट्रा

सुन्दरता का व्यक्तित्व के साथ संयोजन सही अर्थों में तो यह है कि व्यक्ति का चरित्र उच्च मानवीय गुणों से अभिभूत हो, उसका मस्तिष्क सद्विचारों का केन्द्र और कृतित्व सत्प्रवृत्तियों का निर्झर हो, परन्तु आकर्षक चेहरे-मोहरे, सुन्दर चाल-ढाल, गठीला बदन और तराशे हुए नयन-नक्श भी कोई बुरे नहीं हैं । प्रकृति के वरदान स्वरूप मिली शारीरिक सुन्दरता के साथ आभ्यान्तर सौंदर्य भी जुड़ जाय तो सोने में सुगन्ध मिल जाती है और एकांगी रूप से व्यक्ति भले ही वह नर हो या नारी शारीरिक दृष्टि से ही सुन्दर और आकर्षक हो तथा मानवीय गुणों का व्यक्तित्व में अभाव रहे तो वही सौन्दर्य अभिशाप बनकर व्यक्ति पर टूटता है । इस बात का ज्वलन्त उदाहरण मिस्र की क्लियोपेट्रा है । सौन्दर्य को मानवीय गुणों के साथ जब तक भी जोड़े रखा जायगा क्लियोपेट्रा उल्लेख कर्ताओं को किसी न किसी रूप में याद करनी ही पड़ेगी ।

अब से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व की घटना है । तब मिस्र में राजा एविल्टीज का शासन था । राजा न्याय नीति से अपना शासन चला रहा था और प्रजा अमन चैन कर रही थी । उसी राजा की राजमहिषी के गर्भ से ईसा के अट्ठावन वर्ष पूर्व एक कन्या ने जन्म लिया । राजा के अब तक कोई सन्तान नहीं हुई थी, इसलिए उसे अपने बाद की चिन्ता सता रही थी । कन्या का जन्म सुनकर यद्यपि वह पूर्णरूपेण सन्तुष्ट तो नहीं हुआ फिर भी उत्तराधिकारी की दृष्टि से सन्तोषजनक स्थिति तो बनी ही । सोचा कि लड़की के पति को, अपने भावी दामाद को राजसिंहासन सौंपकर भी वह निश्चिन्त हो जायेगा ।

इसके सात वर्ष बाद ही एक पुत्र का जन्म हुआ । अब तो पूर्ण संतोष हो गया था कि योग्य उत्तराधिकारी भी मिल गया । पुत्र का नाम रखा गया टॉलैमी और उसकी बड़ी बहन थी क्लियोपेट्रा । दोनों सहोदर आत्मीयता के साथ हँसते-खेलते बड़े हो रहे थे, तभी तेरह वर्ष बाद अचानक एविल्टीज का देहान्त हो गया । राजपरिवार के लिए यह एक अप्रत्याशित घटना थी, क्योंकि टॉलैमी न वय की दृष्टि से और न सूझ-बूझ की दृष्टि से राजकाज चलाने योग्य था और उस समय क्लियोपेट्रा ने २०वें बसन्त में प्रवेश किया । जब वह बचपन की देहरी पार कर यौवन के आँगन में प्रवेश कर रही थी तभी उसके रूप-सौंदर्य की चर्चा चतुर्दिक फैलने लगी थी । रूप-यौवन और सत्ता का अवसर इस अमूल्य घड़ी से उसने लाभ उठाना किसी कीमत पर न छोड़ने का निश्चय किया तथा उसने स्वयं को शासन सूत्र के संचालन हेतु प्रस्तुत किया । कई सामन्त और सरदारों ने तो उसका पक्ष लिया । इसका कारण उस रूपमाधुरी के सामीप्य सुख की प्राप्ति का आकर्षण ही था, लेकिन दरबार में जिन लोगों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का पलड़ा भारी था वे किसी कीमत पर एक स्त्री को अपनी शासिका स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं थे ।

यहीं से सत्ता के लिए संघर्ष आरम्भ हुआ । क्लियोपेट्रा अपने सगे भाई को भी सत्ता हथियाने के लिये मौत के घाट उतार देने का षड्यन्त्र रचने लगी । इन षड्यन्त्रों की खबर जैसे ही सशक्त और दमदार सामन्तों को लगी उन्होंने टॉलैमी को अपना सम्राट् घोषित कर गद्दी पर बिठा दिया और शान्ति नष्ट करने के अपराध में क्लियोपेट्रा को देश निर्वासन का दण्ड दिया गया ।

क्लियोपेट्रा इस अपमान को सह न सकी और उसे राजसिंहासन से भी अधिक चिन्ता प्रतिशोध की हो गई । तभी उसे अपने रूप-यौवन का ध्यान आया और ईश्वर के इस वरदान का उपयोग अपनी लिप्सा-पूर्ति के भ्रष्ट प्रयोजन में करने की सूझी । वह मिस्र से निर्वासित होकर सीरिया आ गई । लोग उसकी सौन्दर्य माधुरी को देखकर ही चमत्कृत हो उठते थे । उसी क्षमता के आधार पर उसने सीरियाई युवकों को एकत्रित कर सेना में भर्ती करना शुरू कर दिया । सैन्य-संगठन के कार्य में लगने का प्रयोजन अपने अपमान का बदला तथा मिस्र का सिंहासन प्राप्त करना ही था ।

इधर टॉलैमी को भी अपने गुप्तचरों द्वारा क्लियोपेट्रा की तैयारियों के समाचार प्राप्त होते जा रहे थे । वह भी चुप नहीं बैठा था और अपनी सेनाओं को आसन्न युद्ध-संकट के लिए तैयार करने के साथ-साथ पड़ोसी देशों से सहायता प्राप्त करने का जुगाड़ लगा रहा था । क्लियोपेट्रा को जब यह खबर लगी कि टॉलैमी पड़ोसी देशों से सहायता प्राप्त करने की कोशिश में लगा हुआ है तो उसने भी अपना पक्ष मजबूत करने के लिए शक्तिशाली राजाओं का सहयोग लेने के लिए पहल आरम्भ कर दी ।

एक दिन की बात है । रोमन साम्राज्य का अधिपति जूलियस सीजर अपने विश्व विजय के अभियान में मिस्र की राजधानी सिकन्दरिया पर चढ़ आया और टॉलैमी ने बजाय हथियार उठाने के उसकी प्रभुसत्ता यों ही स्वीकार कर ली । उस दिन सिकन्दरिया में ही सीजर का दरबार लगा था ।

द्वार प्रहरियों ने आकर सूचना दी कि कोई मिस्र का व्यापारी सीजर की सेवा में अमूल्य भेंट पेश करना चाहता है । व्यापारी को ससम्मान लाने की स्वीकृति दी गयी । कुछ समय बाद उपहार प्रस्तोता व्यापारी ने शाही ठाट के साथ दरबार में प्रवेश किया । उसके पीछे कुछ सेवक लिपटा हुआ बहुमूल्य कालीन लिए चल रहे थे । व्यापारी ने जमीन पर झुककर सम्राट् का अभिवादन किया और अपने हाथों से वह कालीन खोला ।

कालीन जब खुल चुका तो लोगों की आँखें चौंधिया गईं । नशे में धुत्त सीजर भी आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगा था । कालीन में लिपटी हुई थी एक अनिन्द्य अप्सरा-सी सुन्दर युवती । दरबारियों सहित सीजर के मुख से भी निकल गया—कमाल का सौन्दर्य है । यह सुन्दरी और कोई नहीं क्लियोपेट्रा ही थी जिसने अपने नारी देह का लाभ उठाकर अपनी राज्य लिप्सा पूरी करने का षड्यन्त्र चलाया था ।

सीजर उसे देखकर आकर्षित ही नहीं उसके रूप पाश में आबद्ध भी हो गया और उसे विजित मिस्र की साम्राज्ञी बनाया गया । कुछ दिनों तक क्लियोपेट्रा के साथ रहकर वह वापस चला गया और उस मोहिनी का शासन अबाध रूप से चलने लगा, लेकिन अभी प्रतिशोध लेना बाकी था—टॉलैमी से । अपने सगे भाई से—जिसके कारण वह निर्वासित हुई थी और क्लियोपेट्रा ने अपने भाई टॉलैमी को कत्ल करवा दिया—अपनी ही आँखों के सामने । रूपगर्विता और सत्तामदोन्मत्ता अपने सहोदर भाई का बहता हुआ गर्म-गर्म खून देखकर हृदय में शीतलता का अनुभव कर रही थी । न जाने कैसे ? वह जानती थी कि रोमन-सम्राट् उसका रूपक्रीत दास हो चुका है । इस अहसास के साथ ही क्लियोपेट्रा की महत्त्वाकांक्षाएँ हिलोरें मारने लगीं और वह सीजर की मदद से विश्व साम्राज्ञी बनने का स्वप्न देखने लगी । अपनी प्रेयसी की अधूरी इच्छाओं को पूरा कर सीजर अन्य देशों को विजय करने के लिये आगे बढ़ चुका था । विश्व-विजय के अभियान में काफी सफल होकर वर्ष भर बाद वह रोम वापस आ गया ।

क्लियोपेट्रा को जब यह पता चला कि सीजर वापस रोम पहुँच चुका है तो उसके माध्यम से अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ पूरी करने के लिए वह रोम चली गई । सीजर ने अपनी प्रेयसी का स्वागत किया और क्लियोपेट्रा ने आजीवन उसके साथ ही रहने की इच्छा व्यक्त की । कामान्ध व्यक्ति की तरह सीजर ने उसकी इच्छा को स्वीकार कर लिया और क्लियोपेट्रा उसकी रखैल बनकर रहने लगी । सम्राट् के रात-दिन रखैल के पास ही रहने से शासन व्यवस्था शिथिल हुई और इस कारण कई लोग क्लियोपेट्रा का विरोध भी करने लगे । थोड़े समय तक सीजर के दबदबे के कारण कोई कुछ नहीं बोला, पर सब की भी हद होती है । कुछ लोगों ने मुँह पर ही सीजर से उसकी आदतों के खिलाफ कहना शुरू कर दिया ।

जब सीजर और क्लियोपेट्रा की प्रणय लीलाएँ चल रही थीं तब इन कृत्यों के कारण जनता में भी भारी रोष फैलने लगा । लोगों की जबान पर मुख्यतः यह प्रतिक्रिया थी कि विश्वविजय के सपने देखने वाला सम्राट् किस प्रकार एक नारी का दास बनकर यहीं टिका पड़ा है । सीजर इस प्रतिक्रिया से अनभिज्ञ न था । क्लियोपेट्रा भी अपने अतुल साहचर्य के बीच उसे उकसाने लगी थी कि वह शेष बचे देशों को जीतने के लिये युद्ध करे ।

प्रोत्साहित होकर सीजर ने अपनी सेनाओं को कूच करने का आदेश दिया और एशिया माइनर के पाण्टस नामक प्रदेश पर आक्रमण किया । पाण्टस ने शीघ्र ही घुटने टेक दिए उस समय क्लियोपेट्रा भी सीजर के साथ थी सीजर ने अपनी महेती को यह विजित प्रदेश उपहार में दिया था

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

समाप्त होने के बाद सीजर ने क्लियोपेट्रा से रोम चलने का प्रस्ताव किया । तब तक क्लियोपेट्रा अपने रूप के जादू चल जाने पर आश्वस्त हो चुकी थी । उसने कहा—"रोम चलने का मेरा मन तो है, पर मुझे रोम की सीमा में इस रूप में चलते हुए शर्म महसूस होती है ।"

"किस रूप में और कैसी शर्म महसूस होती है ?" सीजर ने चौंककर पूछा तथा यह भी कि "तुम किस रूप में चलना चाहती हो ।"

महारानी के रूप में चलना चाहती हूँ और इस समय लोग मुझे तुम्हारी रखैल से अधिक नहीं समझते । क्लियोपेट्रा ने मिस्र की महारानी बनने के बाद रोम की महारानी बनने की इच्छा पुनः सीजर के सामने व्यक्त की ।

और सीजर ने भी, 'ऐसा ही होगा' कह कर उसकी यह इच्छा भी पूरी करने का वचन दिया ।

लेकिन क्लियोपेट्रा इतने मात्र से ही सन्तुष्ट नहीं होने वाली थी । उसका उद्देश्य भी सीजर की तरह ही था । सीजर विश्व सम्राट् बनना चाहता था तो क्लियोपेट्रा विश्व साम्राज्ञी । बहुत से प्रान्त इस समय अविजित पड़े थे । अतः स्पष्ट था कि क्लियोपेट्रा सीजर को युद्ध अभियान जारी रखने के लिए कह रही थी । सीजर ने इस बुद्धिमती चालाक और चतुर रूपमती के सम्मोहन में बँधे हुए कहा—"मैं दुनिया के एक छोर से दूसरे छोर तक साम्राज्य स्थापित करूँगा जिसकी दो राजधानियाँ होंगी । एक सिंहासन पर तुम बैठोगी और दूसरे पर तुम्हारा यह दास ।"

अब क्लियोपेट्रा को सीजर के साथ रोम जाने में कोई एतराज नहीं था । रोम में उसके लिए एक शानदार महल बनवाया और यह भी घोषित कर दिया कि क्लियोपेट्रा अब रोमन साम्राज्य की साम्राज्ञी है । इस घोषणा पर कई लोगों ने एतराज किया तो उनका शक्तिपूर्वक दमन कर दिया गया । अब तक रोमन साम्राज्य जनता की इच्छा के अनुसार चल रहा था । प्रकारान्तर से वहाँ लोकतन्त्रात्मक प्रणाली प्रचलित थी, लेकिन सीजर ने इस प्रणाली को समाप्त कर दिया ।

रोमन जनता इस बात से रुष्ट तो हुई ही । उसका रोष सम्राट् का यह आदेश पाकर और भड़क उठा कि एक विदेशी महिला अब उनकी साम्राज्ञी होगी । इसलिये सीजर के प्रति जन-आक्रोश बढ़ने लगा और वह इस बढ़ते हुए रोष की परवाह न करते हुए अपने रंग में ही मस्त रहता । शासन व्यवस्था की ओर से ध्यान हटा लेने के कारण गड़बड़ियाँ फैलने लगीं । सीजर की आड़ में क्लियोपेट्रा अपनी इच्छानुसार प्रशासन चलाने का प्रयत्न करती तो लोग उसे नजर अन्दाज कर जाते या इसकी सुनते ही नहीं । कुछ समय बाद क्लियोपेट्रा ने सख्ती से काम लेना चाहा परन्तु तब तक सब स्थितियाँ उलट चुकी थीं और देश में अराजकता फैलने लगी थी ।

क्रुद्ध लोगों ने सीजर की हत्या कर दी और मार्क एण्टोनी को नया शासक बनाया गया । इस गृहयुद्ध में क्लियोपेट्रा पर भी बन आई थी, परन्तु वह बड़ी चालाकी से मिस्र भाग गई । सीजर मारा गया तो उसे जरा भी रंज नहीं हुआ, क्योंकि वह क्लियोपेट्रा की दृष्टि में प्रेमी नहीं एक माध्यम था । अपना एक माध्यम खत्म हो जाने के बाद उसने दूसरा माध्यम चुनना चाहा उसने एण्टोनी को अपने यहाँ निमंत्रित किया । एण्टोनी वीर, जवान और कुशल योद्धा होने के साथ-साथ महत्त्वाकांक्षी भी था । वह भी विश्वविजय के लिए निकल पड़ा और इसी बीच उसकी भेंट क्लियोपेट्रा से हुई । क्लियोपेट्रा ने उसकी खूब आवभगत की और उसे भी अपने रूप पाश में आबद्ध करने में सफल हो गई ।

पहले उसके मार्ग का रोड़ा था टॉलैमी । अब उसको बाधा उत्पन्न की उसकी ही एक बहिन आर्सिनी ने । आर्सिनी ने अपने साथ टॉलैमी नामक के ही एक दूसरे युवक को तैयार कर लिया था और यह प्रचार करने लगी थी क्लियोपेट्रा ने यद्यपि टॉलैमी को कत्ल करवाने का पक्का इन्तजाम किया था, परन्तु वह अपनी चातुराई से बच निकला था । इन दोनों के संयुक्त अभियान के बावजूद भी क्लियोपेट्रा का कुछ नहीं बिगड़ सका । क्योंकि वह एन्टोनी को सीजर की तरह ही अपने रूप का दास बनाने में सफल हो चुकी थी और उसी की सहायता से क्लियोपेट्रा ने आर्सिनी तथा टॉलैमी दोनों को कत्ल करवा दिया । पहले क्लियोपेट्रा स्वयं सीजर के पास गई थी । अब एण्टोनी स्वयं उसके पास आ गया । उसने रोमन साम्राज्य का सूत्र-संचालन अपने विश्वस्त साथी आक्टेवियस के सुपुर्द कर दिया था । अन्तिम अधिकार तो उसने अपने पास ही रखे ।

जो काम सीजर पूरा नहीं कर सका वह क्लियोपेट्रा ने एण्टोनी से करवा लिया । रोमन शासकों द्वारा विस्तृत किये गये साम्राज्य को एण्टोनी ने दो भागों में बाँट दिया । एक भाग उसने आक्टेवियस के सुपुर्द किया और दूसरा क्लियोपेट्रा के । कहा जा चुका है कि एण्टोनी महत्त्वाकांक्षी और वीर योद्धा था । उसने इस बीच आर्मिनीया पर विजय प्राप्त की और विजयोत्सव रोम में मनाने के स्थान पर मिस्र में मनाया ।

इससे रोम की जनता में क्षोभ उत्पन्न हुआ । साथ ही एण्टोनी क्लियोपेट्रा की रूप मदिरा में कुछ इस प्रकार डूबा कि वह रोम की ओर अपने विश्वस्त साथी आक्टेवियस की भी उपेक्षा करने लगा । आक्टेवियस इससे क्रुद्ध हो उठा और उसने एण्टोनी के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी । चूँकि रोमनी जनता एण्टोनी से पहले ही क्षुब्ध थी, अतः उसने आक्टेवियस का ही साथ दिया ।

युद्ध की घोषणा के बाद आक्टेवियस और एण्टोनी क्रमशः रोमन तथा मिस्र की सेनाओं को लेकर युद्ध क्षेत्र में उतरे । दोनों पक्षों में जमकर लड़ाई हुई । क्लियोपेट्रा अपनी प्रेमी के साथ ही युद्ध भूमि में गई थी, पर जब उसने देखा कि आक्टेवियस भारी होता जा रहा है तो वह अपनी सेनाओं सहित युद्ध के मैदान से वापस लौट आई । एण्टनी के पास तो कुछ शक्ति थी ही नहीं, अतः वह भी वापस लौटने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगा । सिकन्दरिया पहुँच कर क्लियोपेट्रा सोचने लगी कि अब वह आक्टेवियस को अपने रूप पाश में बाँधेगी, पर उसकी आशा पर तब तुषारापात हो गया, जब आगे-आगे एण्टोनी और पीछे-पीछे आक्टेवियस की सेनाएँ लौटीं । आक्टेवियस ने सिकन्दरिया तक अपने शत्रु का पीछा नहीं छोड़ा था । वह संकल्प लेकर आया था कि जिस रूपगर्विता के कारण रोमन साम्राज्य को अस्थिरता और उथल-पुथल के दिन देखने पड़े हैं उसे ही भूमिसात् कर दें ।

एक बार और अन्तिम रूप से ताकत लगाकर एण्टोनी ने हमले का सामना किया, परन्तु इस बार सेनाओं ने उसका साथ नहीं दिया और उसने आत्महत्या कर ली । उस समय क्लियोपेट्रा ने अपना ध्यान मिस्र की शासन व्यवस्था पर दिया । वहाँ भी उसके लिए भी विरोध, प्रतिकूलताएँ और विपरीत परिस्थितियाँ सामने खड़ी थीं । बाहर आक्टेवियस सेनाएँ लिए खड़ा था और भीतर सामन्त उसे हर बात के लिए दोषी ठहरा रहे थे ।

आक्टेवियस मिस्र पर अपना कब्जा करने में सफल रहा और उसने क्लियोपेट्रा को बन्दी बना लिया, उसे कड़े पहरे में रखा गया ताकि वह अपने रूप-यौवन का प्रलोभन देकर छूट जाने में पुनः सफलता प्राप्त न कर ले । साथ ही उसे यह धमकी भी दी गई कि यदि उसने आत्महत्या करने का प्रयास किया तो उसके बच्चों को कत्ल कर दिया जायगा । इसी बीच आक्टेवियस ने क्लियोपेट्रा को कितनी ही बार देखा और वह भी क्लियोपेट्रा के वश में होता अनुभव कर रहा था ।

उसने प्रस्ताव भिजवाया कि "क्या क्लियोपेट्रा आक्टेवियस के साथ रोम चलने और वहाँ रहने के लिए तैयार नहीं है ।"

क्लियोपेट्रा ने कहा—"मुझे बन्दी बनाने वाला मुझे क्या उचित सम्मान देगा ।"

वस्तुतः आक्टेवियस उसे अपनी पर्यंकशायिनी तो बनाना चाहता था, परन्तु रखैल के रूप में । क्लियोपेट्रा इस रूप में जाने को तैयार नहीं हुई और उसे कारावास में ही रखा गया । जेल से ही उसने एक विश्वस्त सेवक के द्वारा अंजीर की टोकरी में साँप रखवाकर मँगाया तथा उसको दंश लिया । साँप जहरीला था और वह तन्वंगी कुछ ही देर में नीली पड़ गई ।

आधुनिक अन्ध-विश्वास—

सौन्दर्य प्रसाधन

प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली हो । जो भी उसके निकट सम्पर्क में आये वह उससे प्रभावित-आकर्षित हुए बिना न रहे । इसके लिये उसकी क्षमताएँ, योग्यताएँ, व्यवहार, सद्गुण और सद्विचार ही वे अलंकरण हो सकते हैं जो उसके व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनायें, शारीरिक सौन्दर्य नहीं, किन्तु आजकल आधुनिकता के नाम पर लोग विशेषकर महिलाएँ यह समझने लगी हैं कि व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने के लिये शारीरिक सौन्दर्य प्रमुख होता है ।

शारीरिक सुन्दरता सब को नहीं मिलती । व्यक्तित्व को प्रभावशाली दिखने में यदि शारीरिक सौन्दर्य आवश्यक होता तो ईश्वर सभी को वह प्रदान करता । उसने सभी को शरीर के आवश्यक अंग आँख, कान, नाक, हाथ, पैर दिए हैं । शारीरिक सौन्दर्य भी उतना ही आवश्यक होता तो वह सबको देता । सौ में से मुश्किल से एक दो व्यक्ति ऐसे मिलेंगे जो लूले-लगड़े या अन्धे हों, किन्तु गौर वर्ण और चेहरे की सुन्दरता वाले सौ में से मुश्किल से दस-पन्द्रह व्यक्ति मिलेंगे । इससे स्पष्ट है कि त्वचा का रंग और चेहरे का सौन्दर्य व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने के लिए बहुत आवश्यक नहीं है ।

जो महिलाएँ आधुनिकता के नाम पर इस भ्रम-जाल में फँसकर सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग कर स्वयं को आकर्षक बनाने का प्रयास करती हैं । विवेक दृष्टि से देखा जाय तो उसे इस युग का एक अन्धविश्वास ही कहा जायेगा ।

सौन्दर्य प्रसाधनों का प्रयोग किस गति से बढ़ चला है । इसका सहज अनुमान विश्व की महिलाओं का सौन्दर्य प्रसाधनों पर होने वाले व्यय द्वारा लगाया जा सकता है । सन् १९७२ में ब्रिटेन की महिलाओं ने सौन्दर्य प्रसाधनों पर ९,४०,००००० पौण्ड खर्च किये । इस मामले में अमेरिकी महिलाएँ भी पीछे नहीं हैं । उन्होंने इस मद में १६,०००००० डालर से भी अधिक धनराशि खर्च की । फ्रांस की महिलाएँ सौन्दर्य प्रसाधनों पर अपनी आय का ५ प्रतिशत से १२ प्रतिशत तक खर्च कर देती हैं ।

हमारे देश में भी उनकी देखा-देखी सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग बढ़ता ही जा रहा है । आज शायद ही कोई देश बाकी बचा हो जहाँ इन साधनों का उपयोग न किया जाता हो ।

व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने के लिए मात्र चेहरे की सुन्दरता व त्वचा का रंग ही पर्याप्त नहीं है । कोई स्त्री काली है तो वह अपने चेहरे पर सौन्दर्य प्रसाधन लेप कर गोरी नहीं बन जाती, किन्तु वह अपने गुणो के अभिवर्द्धन और व्यवहार को सुन्दर बनाने का प्रयास करे तो निश्चित रूप से अपने व्यक्तित्व को कहीं अधिक प्रभावशाली बना कर सुन्दर स्त्रियों से बाजी मार सकती है । सुन्दर विचार और भव्य भाव व्यक्ति को लोकप्रिय और प्रभावशाली बनाते हैं । आन्तरिक सुन्दर भावों की अभिव्यक्ति प्रफुल्लित चेहरे द्वारा स्पष्ट झलकती रहे तो व्यक्तित्व की प्रभा छिटके बिना नहीं रहती ।

महिलाएँ इसी अन्धविश्वास के कारण कि सौन्दर्य प्रसाधनों के लेप से वे सुन्दर दीखने लगेंगी, चेहरे पर तरह-तरह के लेप करके और भी हास्यास्पद बन जाती हैं और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह बनावटी रूप टिकता भी कितनी देर है, जरा-सा हाथ लगे तो पाउडर पुछ जाय, जरा-सा पसीना आ जाय तो चेहरे पर चित्रकारी दीखने लगे ।

शरीर का सौन्दर्य तो अस्थायी है, जो बीमारी व बुढ़ापे के साथ-साथ बदलता रहता है । बुढ़ापे में पड़ी हुई झुर्रियाँ पाउडर की पर्तों में कहाँ तक छिप सकेंगी । इससे अच्छा यही होगा कि विभिन्न लेपों द्वारा चेहरे के स्वाभाविक सौन्दर्य को नष्ट न किया जाय ।

वस्तुतः सौन्दर्य है क्या ? सौन्दर्य की न कोई परिभाषा है, न मापदण्ड । एक ही वस्तु कुछ व्यक्तियों के लिए सौन्दर्य की निशानी हो सकती है और कुछ के लिए वही कुरूप हो सकती है । चीन में छोटे पाँवों को शुभ माना जाता है, जबकि हमारे देश में छोटे पाँव होना अशुभ का सूचक माना जाता है । भारतीय लोग लम्बी, श्याम, अलकावली पसन्द करते हैं तो पाश्चात्य देशों में भूरे, गर्दन तक कटे 'बाब्ड' बाल सुन्दर मानते हैं । अफ्रीका में काला रंग, जापान में चपटी नाक को कुरूप नहीं माना जाता जब कि हमारे देश में ये दोनों ही वस्तुएँ कुरूपता की निशानी मानी जाती हैं ।

जब शारीरिक सौन्दर्य एक भ्रम जाल ही है तो फिर अपने आप को सुन्दर बनाने के लिए रोज-रोज न मालूम कितने सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग किया जाना अन्धविश्वास नहीं तो और क्या है—कि उनके उपयोग से व्यक्तित्व में निखार आयेगा, किन्तु वास्तव में यदि व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने का प्रयास किया जाय तो शारीरिक सौन्दर्य बढ़ाने की जरूरत ही न पड़े ।

आजकल 'पर्सनाल्टी' और व्यक्तित्व से लोग पुरुषों के लिये प्रायः हृष्ट, पुष्ट और रोबदार व्यक्तित्व और स्त्रियों के लिए सुन्दरता व शारीरिक गठन का ही अर्थ लगाया जाने लगा है । शरीर को प्रमुखता देने के कारण मेकअप का अन्धविश्वास भी पाया है । कहीं बाहर जाना हो तो घण्टों दर्पण के सामने बैठकर चेहरे की लीपा-पोती करने, रंग रोगन, पाउडर आदि लेपने में कोई-कोई महिलाएँ तो घँटों लगा देती हैं । वस्त्रों के चुनाव से लेकर 'आईब्रो' की कमान तानने, केश के साथ लिपिस्टिक, बिन्दी और तेल पालिश के रंग चुनने और त्वचा की टाइप की जानकारी देने वाले पत्र-पत्रिकाओं के स्तम्भ और 'कॉस्मेटिक्स' बनाने वाली बड़ी-बड़ी फर्मों के आकर्षक विज्ञापन और भी सहायक होते हैं ।

इस मेकअप महाविज्ञान से आखिर लाभ क्या ? जितना समय इस लिपाई-पुताई में लगता है, आज के महँगाई के जमाने में जहाँ खाने का तेल भी नसीब नहीं होता तो चेहरे पर लेपने के लिए फाउन्डेशन क्रीम, लोशन, पाउडर, स्नो आदि का कितना धन व्यय होता है, घण्टों आइने के सामने बैठकर मेकअप में कितना श्रम फालतू जाता है, साथ ही साथ और धन का नाश भी कम नहीं होता । ये सब अतिरिक्त हानि की मदों में ही जाती हैं लाभ के नाम पर कुछ भी नहीं होता ।

अँग्रेजी कहावत है 'टाइम इज मनी' (समय धन है) पर हमारे यहाँ कहा जाता है समय अमूल्य है । इस अमूल्य समय को यदि मेकअप में न बिगाड़ कर व्यक्तित्व निर्माण में लगाया जाय तो यह असम्भव नहीं कि व्यक्तित्व न बने । इसी समय में कोई महिला ज्ञानार्जन कर अपनी क्षमताओं और योग्यता वृद्धि में लगाये तो उसका महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व बन सकता है जिससे वे स्वयं तो लाभान्वित होंगी ही, परिवार समाज तथा देश को भी कम लाभ नहीं होगा ।

यदि कोई बी.ए. है तो इन घण्टों में तैयारी करके वह एम.ए. कर सकती है । कोई चाहे तो अशिक्षित महिलाओं को पढ़ा सकती है, स्वयं कोई कुटीर उद्योग सीख कर अपने आस-पास के गाँवों में वैसे ही उद्योग चला सकती है, सिलाई, कताई, कशीदाकारी आदि अनेक ऐसे व्यवसाय हैं जिन्हें सिखाकर महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है । आवश्यकता है उनके स्वयं के वास्तविक प्रयास की ।

सौन्दर्य प्रसाधनों के उपयोग से अमूल्य समय ही नष्ट होता हो ऐसी बात नहीं है । समय के साथ धन, श्रम व स्वास्थ्य हानि—ये चार हानियाँ होती हैं । समय के साथ श्रम अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है । इतना सब करने के लिए उन्हें श्रम तो करना ही पड़ता है, मेकअप स्वयंमेव ही नहीं हो जाता । फिर उन्हें खरीद कर भी लाना होता है, वे चलकर नहीं आ जाते ।

समय और श्रम लगा देने के बावजूद भी सौन्दर्य प्रसाधन प्राप्त नहीं होते जब तक कि उनके लिए धन न खर्च किया जाय । यह कहाँ की अक्लमंदी है कि इस महँगाई के युग में जहाँ बच्चों को खाने को पौष्टिक खाना, दूध, घी आदि नहीं मिल पाता और इन मेकअप के साधनों की खरीद में धन व्यय किया जाय ।

अपना अमूल्य समय, श्रम और धन नष्ट करने के बदले मिलती है स्वास्थ्य हानि । चेहरे पर विभिन्न प्रकार के रंग रोगन लगाने से त्वचा के रोम छिद्र बन्द हो जाते हैं और चर्म रोगों की उत्पत्ति होने लगती है ।

समय, श्रम और अर्थ की कीमत पहचानने वाले अब्राहिम लिंकन ने अपनी सम्पूर्ण निष्ठा व लगन से व्यक्तित्व के वास्तविक विकास का प्रयास किया तो वे एक सामान्य व्यक्ति से विश्वविख्यात हो गये । सिंक्लेयर ल्यूइस, जो एक कुरूप लड़का था, वह अमेरिका में प्रथम नोबल पुरस्कार विजेता साहित्यकार हुआ । जीजाबाई तथा राणाप्रताप की माताजी भी कोई रूपवती नहीं थीं, किन्तु वे अपना अमूल्य समय और श्रम छत्रपति शिवाजी तथा मेवाड़ केसरी महाराणा प्रताप के निर्माण में लगाकर इतिहास प्रसिद्ध हो गयीं ।

जहाँ तक शारीरिक सौन्दर्य का प्रश्न है वह भी स्वास्थ्य पर निर्भर है न कि सौन्दर्य प्रसाधनों पर । जो सुडौल है वह सुन्दर दीखेगा ही और एक बीमार व्यक्ति चाहे कितना ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गोरा हो उसके चेहरे पर मुर्दनी ही छायी रहेगी । अत: स्वास्थ्य सुधार की बात तो समझ में आती है, यथोचित आहार, संयम, व्यायाम द्वारा शरीर को सुन्दर सुपुष्ट बनाने की बात भी समझ में आती है, पर ऊपर से रंग रोगन पोतने की कतई नहीं ।

यह वैज्ञानिक तथ्य है कि स्नान करने तथा तौलिए द्वारा रगड़ कर त्वचा की सफाई से रोम छिद्र खुल जाते हैं ताकि शरीर की गन्दगी का पसीने के रूप में बाहर निकलना सहज हो जाय । स्वास्थ्य के लिए शुद्ध वायु और ताजी धूप इन्हीं रोम छिद्रों द्वारा शरीर में प्रवेश होती है । इन प्राकृतिक सम्पदाओं का उपयोग शरीर स्वयंमेव ही सरलतापूर्वक करता रहता है, किन्तु इन्हीं महत्त्वपूर्ण रोम-कूपों को प्रसाधन लेपन से बन्द कर देना कहाँ की बुद्धिमता होगी, जो अवैज्ञानिक और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है ।

पहले हमारे देश में कोई-कोई धनी व राजघराने की महिलाएँ त्वचा के रंग के निखार के लिए उबटनों का प्रयोग करती थीं । वे उबटन आजकल के सौन्दर्य प्रसाधनों की तरह चेहरे और त्वचा पर पुते नहीं रहने दिये जाते थे । उनका उपयोग त्वचा का मैल छुड़ाने के लिए होता था । उबटन के बाद स्नान करना अति-आवश्यक होता था ताकि रोम छिद्र भली प्रकार साफ हो जायें । आजकल विवाह-शादियों के अवसर पर लगाया जाने वाला हल्दी का उबटन उसी प्रकार का है ।

सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग करने वाली महिलाएँ शायद इस ओर से अनभिज्ञ ही हैं कि इनके उपयोग से उन्हें कितनी स्वास्थ्य हानि, धन हानि उठानी पड़ती है ।

आजकल प्रत्येक वस्तु में मिलावट होती है, यह किसी से छिपा नहीं है । किसी वस्तु का खालिस मिल पाना प्राय: असम्भव-सा हो गया है । फिर यह कैसे मान लिया जाय कि सौन्दर्य प्रसाधन में मिलावट नहीं ही होती होगी ।

आज के इस यान्त्रिक युग में हर व्यापारी तथा हर कम्पनी यही चाहती है कि उन्हें कम से कम लागत में अधिक से अधिक मुनाफा मिले । नित-नये आकर्षक पैकेटों में उनके विज्ञापनों से पत्र-पत्रिकाओं के पन्ने भरे रहते हैं, दीखने में वे सुन्दर लगते हैं किन्तु उनमें ऐसे-ऐसे घटिया किस्म के पदार्थ मिला देते हैं जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं ।

सुगन्धित हेयर ऑयल की आजकल हजारों किस्में बन चुकी हैं और जिनका उपयोग अधिकांश व्यक्ति कर रहे हैं । उसका परिणाम भी छिपा नहीं रहा । पहले ७०-८० वर्ष की आयु के लोगों के ही सफेद बाल देखे जा सकते थे, किन्तु आजकल तो ८-१० वर्ष के बच्चे के सिर पर भी सफेद बाल मिल जायेंगे । युवा वर्ग में २५ प्रतिशत सफेद बाल वाले मिल जायेंगे । ३०-३५ की उम्र होते-होते तो करीब-करीब सभी के बाल सफेद होना प्रारम्भ हो जाता है । ये सुगन्धित तेल अधिकांश ह्वाइट ऑयल पर बनते हैं । ह्वाइट ऑयल होता है गन्ध उड़ा मिट्टी का तेल ।

इसके अतिरिक्त बालों के झड़ने, सिर में पित्ती, सिर दर्द, आँखों की जलन इत्यादि शिकायतें बढ़ती रहती हैं । जो भी सुगन्धित तेल तथा शैम्पू के प्रयोग से अँगुलियों में एक्जिमा हो जाता है । सिर धोते समय वह आँखों में गये बिना नहीं रहता और आँखों की जलन बढ़ जाती है । जिससे आँखों को बहुत हानि होती है ।

खिजाब के प्रयोग से खोपड़ी की चमड़ी, कानों के आसपास की जगह तथा गरदन के पीछे फोड़े-फुँसी हो जाते हैं ।

नहाने के बढ़िया-बढ़िया आकर्षक साबुनों में बूढ़े, बीमार तथा मृत जानवरों की चर्बी मिलाई जाती है जिसके कारण खुजली आदि कई चर्म रोग पनपने लगते हैं । त्वचा की स्वाभाविक चमक नष्ट हो जाती है, चमड़ी खुश्क हो जाती है । साबुन में मिलाई जाने वाली हेक्साक्लोरोफिन नामक कीटाणुनाशक औषधि के अधिक मात्रा में उपयोग होने से पिछले दिनों फ्रांस में ३६ शिशुओं की मृत्यु हो गई । अमेरिका से तो सन् १९६७ में औषधियों व शृंगार प्रसाधनों में इसका उपयोग बिल्कुल बन्द कर दिया गया है ।

सौन्दर्य प्रसाधनों की सामग्री क्रीम व तेलों में लिनोलियम व मोम मिला देते हैं जिसके कारण त्वचा के रोग उत्पन्न हो जाते हैं । चेहरे पर लगाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के पाउडरों में मेग्नेशियम कार्बोनेट, कैल्शियम, जींक्स्टीरेट, टिलैनियम, ऑक्साइड आदि हानिकारक पदार्थ मिला दिये जाते हैं ।

चेहरे की रंगत का शेड देने के लिये जिन रंगों का उपयोग किया जाता है वे स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यन्त ही हानिप्रद होते हैं । इन्हीं सौन्दर्य प्रसाधनों के उपयोग का परिणाम है कि मेकअप करने वाली महिलाओं के चेहरों का वास्तविक सौन्दर्य नष्ट हो जाता है । उन्हें नहाने के तुरन्त बाद ही मेकअप करना होता है नहीं तो उनके चेहरे भद्दे लगते हैं ।

ईश्वरदत्त सुन्दर आँखों को कृत्रिम सौन्दर्य देने के लिए उन्हें आवश्यकता से अधिक बड़ी, सुन्दर, तीखी और आकर्षक बनाने के लिए आई शैडों व आई लेन्सों का उपयोग होता है । भौंहों को काली गहरी बनाने के लिए वास्तविक भौंहों व बरौनियों को काटकर सावधानी से रंगीन पैन्सिलों, बनावटी बरौनियों का उपयोग करती हैं, जिन्हें निर्दयतापूर्वक आँखों के निकट रगड़ती हैं । इनमें मिले रंगों से आँखों की विभिन्न बीमारियाँ रीह, कजरी, वाइटिस आदि होने का भय रहता है ।

होठों के स्वाभाविक रंग को अधिक सुर्ख बनाने के लिए जिन लिपिस्टकों का उपयोग किया जाता है उनमें आवश्यकता से अधिक सीसा और गोंद मिला दिया जाता है, जिसके कारण होठों की जलन, सूजन व फटने की शिकायतें पैदा हो जाती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाखूनों की पालिश में सिंथैटिक खर व स्प्रिट मिलाई जाती है । परिणामतः नाखूनों में जलन, दर्द व न उगने का भय रहता है, अँगुलियों में घाव हो जाते हैं ।

सौन्दर्य प्रसाधनों के उपयोग से समय, श्रम, धन और स्वास्थ्य की कितनी हानियाँ उठानी पड़ती हैं फिर भी महिलाएँ इनका अन्धाधुन्ध प्रयोग बढ़ाती ही रहें तो उसे अन्धविश्वास नहीं तो और क्या कहा जा सकता है ।

जबकि पाश्चात्य देश की नारियाँ इन प्रसाधनों से बेजार हो चली हैं और वे अब 'विमेन लिब' आन्दोलन करती हुईं अपने को 'फेयर सेक्स' नहीं कहलाना चाहती हैं । जिनको उपयोग से उन्होंने कोई लाभ होते नहीं देखा तो वे उसे छोड़ रही हैं, फिर भारतीय महिलाओं का ठोकर खाने के पूर्व ही सम्भल जाना ही श्रेष्ठ होगा ।

इन सौन्दर्य प्रसाधनों के बढ़ने एवं लोकप्रिय होने का अर्थ है अपने आपको स्वास्थ्य के नियमों की अनभिज्ञता, शिष्ट तथा शालीन परम्परा का अज्ञान ही दर्शाता है । जिन व्यक्तियों में विशेषकर महिलाओं में यदि थोड़ा-सा विवेक है तो वे इन सौन्दर्य प्रसाधनों का बहिष्कार ही करेंगी ।

सौन्दर्य-सज्जा में अवांछनीयता की भरमार

सौन्दर्य की आकांक्षा और उपासना मानवीय भावना का एक उपयोगी कलापक्ष है । सत्यं, शिवं के उपरांत सुन्दरम् का ही नम्बर आता है । इसे शरीर में स्वास्थ्य-संवर्द्धन, निवास वातावरण में स्वच्छता, पदार्थ उपकरणों में क्रम सज्जा, व्यवहार में सुव्यवस्था के रूप में बढ़ाया-पनपाया जा सकता है । प्रकृति का स्वाभाविक सौन्दर्य भी सर्वत्र बिखरा पड़ा है । कलात्मक दृष्टिकोण हो तो उससे रंगमंच के हर क्षेत्र में सौन्दर्य का दर्शन हो सकता है । वृक्ष-वनस्पति की, पशु-पक्षियों और कृमि-कीटकों की चित्र-विचित्र संरचना में स्रष्टा की कलाकारिता पग-पग में झाँकती देखी जा सकती है । वस्त्र-परिधानों में, रहन-सहन में सादगी का अपना स्थान है । उसके साथ स्वच्छता और सज्जा का थोड़ा-सा पुट लगा दिया जाय तो इतने भर से सुरुचि का परिचय दिया जा सकता है । यही है स्वाभाविक सौन्दर्य का शालीनता वाला कलापक्ष । इसे अपनाने में व्यक्ति की कोमल भावनाओं का विकास भी होता है और प्रमाण भी मिलता है ।

बचकाने, ओछे, उथले, फूहड़, अनगढ़ सौंदर्य के वे पक्ष हैं जिनमें मनुष्य अपनी और दूसरों की आँखें खींचता है, चित्र-विचित्र बनकर लोगों का ध्यान बँटाता है और अपने को देखने के लिए विवश करता है । इस प्रदर्शन में आमतौर पर अपव्यय से अमीरी जताने का भाव होता है । इसके उपरांत उत्तेजक अवयवों की मांसलता एवं सज-धज के प्रदर्शन की बारी आती है । उद्धत प्रदर्शन प्रहसन मंच के विदूषकों को शोभा देता है । नट-नटनी इसके लिए क्षम्य हैं, क्योंकि उन्होंने इसी को व्यवस्था का माध्यम बनाया हुआ है, पर जो तन-अंग के भौंड़े प्रदर्शन में शृंगारिकता का उपयोग करते हैं वे दूसरों पर अपने ओछेपन की ही छाप छोड़ते हैं । उनके व्यक्तित्व से हर विचारशील को घटियापन की ही गंध आती है । आमतौर से अधिक सज-धज वाले व्यक्तियों के प्रति अहंकारग्रस्त, अपव्ययी, मनचला एवं अप्रामाणिक होने की मान्यता बनती है ।

कभी जेवरों की सज-धज, निर्धनों के लिए ललचाने और अपने सौभाग्य का दर्प दिखाने में सफल होती रही होगी, पर अब यह माहौल बदल गया । बहुमूल्य आभूषण धारण करने वाले या तो ईर्ष्या का विषय बनते हैं या अनीति उपार्जन करने वालों में गिने जाते हैं, भले ही उन्होंने वह सब अपनी कमाई से ही खरीदा क्यों न हो । यही बात बहुमूल्य पोशाक धारण करने और दिन में कई-कई बार उन्हें बदल-बदल कर पहनने वालों के सम्बन्ध में भी है । समझा जाता है कि पोशाक के बहाने हर बार नये-नये आकर्षण दिखाकर अपनी ओर नजर गड़ाने का निमंत्रण दिया जा रहा है । यह जन-साधारण का ध्यान अकारण खींचने और उनकी समझ तथा चिंतन में उद्धत विक्षेप उत्पन्न करने जैसा अनुचित कृत्य है ।

आज के उल्टे प्रवाह में इसके विपरीत फैशन चल पड़े हैं । दूसरों की आँखों में चकाचौंध उत्पन्न करने वाले शृंगारों की धूम है । इस संदर्भ में युवक और युवती दोनों ही प्रतिस्पर्द्धारत हैं और एक-दूसरे से सज-धज के क्षेत्र में आगे निकलना चाहते हैं । इस प्रयास में रत अपने को सौंदर्य उपासक, कलाकार आदि कुछ भी कह या समझ सकते हैं, किन्तु पारखियों की आँख से देखा जाय तो ठीक उल्टी बात ही प्रतीत होगी । उन्हें कामुक आकर्षण या आक्रमण के लिए निमंत्रण देने वाले घटिया लोगों की श्रेणी में गिना जाता है । इतना ही नहीं इस सज-धज के कारण विशेषतया युवा लड़कियाँ अपने लिए अवांछनीय दुःखदाई संकटों को अनजाने ही निमंत्रित करती हैं ।

बहुत दिन पुरानी बात है । संयुक्त भारत वाले दिनों लाहौर से कुछ कॉलेज छात्राओं ने गाँधीजी को लिखा—कुछ गुण्डे उन्हें रास्ता चलते हैरान करते हैं । उत्तर में गाँधी जी ने जहाँ सरकार, समाज, विद्यालय से सम्बन्धित अधिकारियों तथा अविभावकों को अनेक प्रतिरोधात्मक उपाय सुझाये, साथ ही लड़कियों को भी सलाह दी कि यदि वे अकेली ही एक साहस कर सकें तो समस्या का सहज समाधान निकल आये । वे अपने सिर के बाल मुड़ा लें और बेखटके कॉलेज जाया करें । इस परामर्श में प्रचलित उद्दण्डता के अनेक पक्षों में एक बड़ा पक्ष शृंगारिकता भी है, जिसमें केश सज्जा को प्रमुख स्थान दिया जा सकता है । इस संदर्भ में यदि सादगी अपनाई जा सके तो उससे कामुक चिंतन, आकर्षण और आक्रमण के दुःखद प्रसंगों में बड़ी रोकथाम हो सकती है । सज-धज का खर्च और समय तो बचेगा ही, ईर्ष्या से भी बचा जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस संदर्भ में एक और भी अधिक दु:खदाई प्रसंग ऐसे शृंगार-प्रसाधनों का है जो अपनाये तो सौंदर्य वृद्धि की दृष्टि से जाते हैं, पर वस्तुत: उनमें मिली हुई विषाक्तता स्वास्थ्य पर बुरा असर डालती है और उस सौंदर्य की जड़ ही काट देती है, जिसे अधिक उभारने के लिए शृंगार सज्जा की महँगी सामग्री खरीदी और काम में लाई गई थी । सौंदर्य प्रसाधनों में एननाइट्रो सोडी इथेलीलमाइन का प्रयोग किया जाता है । अमेरीकी डॉक्टरों ने इसका प्रयोग चूहों पर किया तो ज्ञात हुआ कि इससे कैंसर रोग होता है । डॉक्टरों ने बताया कि शैम्पू और अन्य सौंदर्य प्रसाधनों के अधिक प्रयोग से कैंसर होने की सम्भावना रहती है ।

अमेरिका के नेशनल कैंसर इन्स्टीट्यूट के एक विशेष पर्यवेक्षण से विदित हुआ है कि बालों को रँगने में प्रयुक्त औषधियों में खतरनाक वस्तुओं का सम्मिश्रण होता है । विशेषज्ञों के अनुसार बाल रँगने का रसायन खोपड़ी से होकर शरीर के अन्दर प्रवेश कर जाता है और कैंसर जैसे दु:साध्य रोगों को जन्म देता है ।

होठों की लाली, नाखूनों के रंग, आँखों के काजल, कपोलों के लालिमा पेण्ट, भवें रँगने, बाल उखाड़ने जैसे पदार्थों में जिन पदार्थों की भरमार रहती है उनमें से अधिकांश में हानिकारिक रसायन पाये गये हैं और वे अन्तत: सौंदर्य प्रेमी को कुरूप बनाकर रहते हैं ।

त्वचा की संवेदनशीलता और तरुणाई बनाये रखने के लिये आजकल क्रीमों एवं लोशनों का बहुत अधिक प्रयोग किया जा रहा है, किन्तु इन रासायनिक प्रसाधनों में निहित पैराफीन, मोम, अलकतरा और इनसे प्राप्त पदार्थ त्वचा की संवेदनशीलता को नष्ट कर देते हैं ।

नेत्रों की सुन्दरता एवं ज्योतिवर्द्धन हेतु हम सुरमे या अन्य वस्तुओं का लम्बे अर्से से प्रयोग करते आ रहे हैं, किन्तु इनमें मिलावट के आश्चर्यजनक तथ्य सामने आये हैं । शुद्ध सुरमे में एंटीमनी सल्फाइड का प्रयोग होता है, परन्तु एंटीमनी की कमी के कारण आजकल सुरमे में लैड सल्फाइड का अधिकांश प्रयोग हो रहा है । लैड सल्फाइड एक अत्यंत हानिकारिक रसायन है । अभी हाल में ब्रिटिश मेडिकल जनरल में एशियाई बच्चों के रक्त-परीक्षण के परिणामों से विदित हुआ कि जिन बच्चों की माताएँ उनकी आँखों में सुरमा लगाती थीं उनके रक्त में सीसा अपेक्षाकृत अधिक पाया गया । अनुसंधान विशेषज्ञों के अनुसार सल्फाइड के अतिरिक्त और भी हानिकारक रसायन हैं ।

सौंदर्य प्रसाधनों का वह पक्ष अत्यन्त करुणाजनक है, जिसमें निरीह प्राणियों को अकारण अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ता है । सामान्य वध से भी इन प्रसंगों में अधिक निर्दयता का प्रयोग होता है । कई बार तो वह इतना हृदयविदारक होता है कि यदि किसी सहृदय नर-नारी को उस निर्माण प्रकरण का दृश्य दिखाया जाय तो वह फफक-फफक कर रो पड़े और सोचे कि यदि उसके बालकों का कोई अनाचारी वैसा ही उपयोग करे तो कैसा लगे? निर्माण की वास्तविक प्रक्रिया का ज्ञान न होने के कारण भी अनेकों अनजान लोग उनका उपयोग करते रहते हैं । वस्तुत: इस प्रकार की निर्दयतापूर्ण सज्जा उस मानवीय कला-कोमलता पर सीधा आक्रमण करती है, जिसे व्यक्त करने के लिए इस सज्जा सामग्री का उपयोग किया जाता है ।

'फर' की टोपी जिसे छोटे-छोटे बच्चों के सर पर रखकर उसकी सुरक्षा करते तथा अपनी अमीरी प्रदर्शित करते हैं । यह फर सील, खरगोश, भालू, लोमड़ी, ऊदबिलाव आदि जानवरों की चमड़ी से बनाया जाता है । सबसे मुलायम तथा कीमती फर सील के नवजात बच्चे का माना जाता है । इन अबोध शिशुओं को गोली मारने से उनकी चमड़ी खराब हो जाती है, अत: उनको लाठी से मारा जाता है । बेचारे को पूरी तरह मरने भी नहीं दिया जाता, बेहोशी की स्थिति में ही उसकी चमड़ी खींच ली जाती है । इस तरह के छ:-सात बच्चों की हत्या करके तब कहीं जाकर एक कोट बन पाता है । ऊदबिलाव, भालू, खरगोश जैसे जीवों को इसी प्रकार मारकर फर तैयार किया जाता है ।

मुलायम कीमती जूते तैयार करने के लिए गर्भस्थ पशुओं का वध कर पेट से निकाल लेते हैं । फिर रक्त नलिकायें फटकर रक्त चमड़े में अच्छी तरह शोषित हो जाय इसके लिए जीवित बच्चे पर उबलता पानी डाल-डालकर बेतों से पीटा जाता है । सारा शरीर फूल जाने पर उसकी खाल उतार ली जाती है । इसी चमड़े से अधिक मूल्य के तथा सुकोमल जूते बनाये जाते हैं ।

सिवेट को पिंजड़े में बन्द कर लकड़ियाँ कूँच-कूँच कर खूब तंग किया जाता है—वह जितना ही अधिक चिड़चिड़ा होता है कहते हैं कस्तूरी उतनी ही अधिक निकलती है । मार खाते-खाते जब वह खूब चिड़चिड़ा हो आता है तो ग्रन्थि में चीरा लगाकर कस्तूरी निकाल ली जाती है यह प्रक्रिया प्रति दसवें दिन दोहराई जाती है । इस क्रूरता को सहन करते-करते निरीह सिवेट निर्दयी मानव के क्रूर हाथों द्वारा अपने प्राण गँवा देता है । इस प्रकार की मर्मान्तक पीड़ा देकर बदले में प्राप्त कस्तूरी मादक गंधों के निर्माण में काम आती है ।

चमड़ी को गोरी, चमकीली व सुन्दर बनाने के लिए शैम्पू, आफ्टर शेव लोशन, यूडीकोलोन का भरपूर मात्रा में प्रयोग किया जाता है । कहीं मनुष्य की त्वचा पर कोई प्रतिक्रिया तो नहीं करते इसके परीक्षण के लिए शैम्पू तैयार करते समय बार-बार इसकी बूँदें खरगोश की आँखों पर डालकर यह देखा जाता है कि उनमें चिरमिराहट तथा खुजली तो नहीं होती । इस स्थिति में खरगोश को ऐसे पिंजड़े में इस प्रकार बन्द करते हैं जिससे धड़ अन्दर रहे और सिर बाहर इस तरह फिट रखा जाता है कि वह हिल भी न सके । शैम्पू की बूँदों के द्वारा आँखों में हो रही जलन को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह विवश होकर सहता है अन्त में अन्धा हो जाने पर उसे छोड़ दिया जाता है ।

क्रीम लोशन के परीक्षण के लिये चूहों तथा खरगोश का प्रयोग किया जाता है । इनको मर्मान्तक पीड़ा तब होती है जब चिपकने वाला टेप इनकी पीठ पर चिपका कर झटके से छुड़ा लिया जाता है जिससे सारे बाल नुच जाते हैं । एक ही स्थान पर ऐसा कई बार करने पर उसकी खाल भी नुच जाती है और माँस दिखाई पड़ने लगता है । इसी माँस पर यूडीकोलोन, आफ्टर शेव लोशन आदि लगाये जाते हैं । परीक्षण के दौरान यह निरीह तथा मूक प्राणी पिंजड़े में पड़ा असहाय वेदना से तड़पता रहता है ।

स्ट्रोजन का प्रयोग इन दिनों सौंदर्य प्रसाधनों के निर्माण में बहुलता से किया जाता है । यह स्ट्रोजन गर्भवती घोड़ी से प्राप्त किया जाता है । यह पदार्थ सदैव मिलता रहे इसलिए इसके निर्माता अपनी घोड़ियों को हर समय गर्भवती बनाये रखने का प्रयास करते हैं । पहले बच्चा जब तक दूध पीता है तब तक घोड़ी पुन: गर्भ धारण करने में सक्षम नहीं होती, इसलिए हर जन्म लेने वाले बच्चे को मादा से अलग कर दिया जाता है ।

यों बिना हत्या के भी प्रसाधन बन रहे हैं, या बन सकते हैं, पर अमीरी का नशा और अधिक उत्तेजक, आकर्षक वस्तुएँ खरीदने की अहन्ता वैसा करने में हेठी देखती है । अनावश्यक धन का अपव्यय तो महँगे उपकरण खरीदने में ही हो सकता है । असली अमीरी न मिलने पर लोग जिन वैसाखियों के सहारे बड़प्पन का ढिंढोरा पीटते हैं उसमें ऐसे प्रसाधनों की माँग ही बढ़ती है जिनमें जीव हत्या की भरमार रहती है । इन्हें अपनाकर वे सुन्दर लगते हैं या कुरूप—इसे कोई वास्तविक पारखी ही बता सकता है ।

आश्चर्य होता है कि मनुष्य भटक कर किस प्रकार कहाँ से कहाँ चला जा रहा है । सौंदर्य की भाव-संवेदना, जिससे दृष्टिकोण में उदार चेतना का पग-पग पर रसास्वादन होना चाहिये था, आज किस प्रकार विकृत होती जा रही है । सज्जा के नाम पर कितनी कुरुचि बढ़ रही है और उसे अपनाने वाले अनजाने ही न केवल अपने चरित्र-चिंतन में घटियापन का समावेश कर रहे हैं, वरन् समूची मानवीय गरिमा को भी नीचे गिराते जा रहे हैं ।

सौन्दर्य के विकृत मापदण्डों को बदला जाय

प्रकृति के उपवन में सर्वत्र सुन्दरता का ही साम्राज्य है । दृष्टि खुली हो और मन की प्रवृत्तियाँ विकृत न हुई हों तो हर किसी के लिए सम्भव है उस बिखरे प्राकृतिक सौन्दर्य का दिग्दर्शन कर सकना । खिलते हुए पुष्पों का अपना एक अनोखा सौन्दर्य है । कूकती हुई कोयल की मादकता अपने में बेमिसाल होती है । चहचहाती चिड़ियों, गुंजन करते भौरों, किलकारियाँ मारते नन्हें पशुओं तक को प्रकृति ने सुन्दरता प्रदान की है । कलकल करती नदियों, झर-झर करते झरनों की तालबद्ध स्वर लहरी को सुनकर लगता है कि किन्हीं अदृश्यों हाथों ने लयबद्ध संगीत लहरी छेड़ दी हो । प्रकृति के अंचल में रंग-बिरंगे नन्हें जीव-जन्तुओं, वृक्ष-वनस्पतियों को देखकर लगता है कि किसी कुशल चितेरे ने अपनी तूलिका द्वारा स्वयं उनमें रंग भरा हो ।

विराट् पर्वत अपने उन्तुंग शिखरों के साथ ऐसे तन कर खड़ा हुआ है जैसे कोई सेनापति अपनी विशाल सेना के साथ मोर्चाबन्दी किये हुए हो । प्रकृति का अनुपम शृंगार इन मूक शिखरों पर देखते ही बनता है । हरीतिमा की चादर ओढ़े मूक शिखर ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे कि नई-नवेली दुल्हनें सज-धजकर अपने प्रियतमों की बाट देख रही हों । पूरब से निकलता स्वर्णिम आभा बिखेरता सूर्य, धवल, शीतल प्रकाश से नेत्रों को तृप्त करने वाले चन्द्रमा में जो सौन्दर्य है वह अद्वितीय-अनुपम और अतुलनीय है ।

स्रष्टा ने प्रकृति के प्रत्येक जड़-चेतन घटकों को सुन्दरता प्रदान की है । यहाँ कुछ भी कुरूप नहीं है, कुरूपता मानवीय दृष्टिकोण में है, जिसके रहते मनुष्य प्रकृति में शाश्वत् सौंदर्य का दर्शन नहीं कर पाता । विकृत वातावरण और निकृष्ट चिन्तन का ही प्रभाव है कि उसकी सौन्दर्य दृष्टि मात्र नारी काया में ही सुन्दरता का दिग्दर्शन करती है । प्रकृति की सुरम्य वाटिका में पलने वाले अन्य जीव-जन्तुओं, वृक्ष-वनस्पतियों में भी अनोखा आकर्षण है पर बिरले ही हैं जो उसकी अनुभूति कर पाते हैं । अधिकांश की दृष्टि एकांगी और दूषित है । नारी के कायिक ऊभार में ही वे सुन्दरता का दर्शन करते हैं । नारी का कामिनी और रमणीय रूप ही इन दिनों प्रतिष्ठा पा रहा है । यह इस बात का परिचायक है कि जनमानस की अभिरुचि विकृत होती जा रही है ।

सौन्दर्य को परमात्मा का स्वरूप माना गया है, पर सुन्दरता की प्रतिष्ठापना के नाम पर आज के सभ्य समाज में जो कुछ भी हो रहा है उसे देखकर यह कैसे कहा जा सकता है कि वह सब उचित है ? नारी के अन्य रूप भी तो हैं । मातृत्व प्रकृति सौन्दर्य की चरम अभिव्यक्ति है । भगिनी के रूप में, पुत्री के रूप में, उसका जो पावन स्वरूप दिखाई पड़ता है वह कामिनी से कहीं ऊँचे स्तर का और अधिक सुन्दर है । सुन्दरता की अभिव्यक्ति ही यदि अभीष्ट है तो वह स्वस्थ और पवित्र पक्ष ही सामने आना चाहिए । पर बिरले हैं जो उस रूप का दर्शन कर पाते हैं । अधिकांश ने मातृसत्ता का कामिनी रूप ही देखने का प्रयास किया है ।

आश्चर्य तब और भी होता है, जब समाज की मूर्धन्य विभूतियाँ भी उसी दूषित प्रवाह में बहती दिखायी पड़ती हैं । कवि, साहित्यकार, चित्रकार, कलाकार जो मनुष्य की भाव संवेदनाओं को उभारने की, प्रभावित करने की सामर्थ्य रखते हैं उन्हें भी नारी छवि को धूमिल करने के प्रयासों में ही संलग्न देखा जा सकता है । कला के इन विभिन्न पक्षों की अधिष्ठात्री देवी को भारतीय संस्कृति में दैवी सत्ता सरस्वती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के रूप में प्रतिष्ठापित, अभिनन्दित किया गया है । सरस्वती के उपासकों को भी इन दिनों उन्हीं प्रयत्नों में निरत देखा जा सकता है जो मनुष्य की निकृष्ट पशु प्रवृत्तियों को भड़काते हैं । यह प्रयास मध्यकालीन सामंती युग से आरम्भ हुआ था और क्रमशः परिपोषण पाते हुए आज की विस्फोटक स्थिति तक जा पहुँचा है । यह एक विचित्र विडम्बना है कि आज नारी के कायिक उभारों के वर्णन के बिना कवि की, लेखक की लेखनी नहीं चलती । चित्रकार की तूलिका गति नहीं पकड़ती और अश्लीलता के प्रदर्शन के बिना अभिनय पूरा नहीं होता । कला का यह पतन सचमुच ही अत्यन्त दुःखद असहनीय है ।

आन्तरिक संवेगों को उछालने तथा भली-बुरी दिशा में ढकेल देने में कला अत्यधिक प्रभावी होती है, प्रायः इस तथ्य से कम ही लोग परिचित होते हैं । यह एक सच्चाई है कि मनुष्य की प्रवृत्तियों का नियंत्रणकर्त्ता मन है । मन दृश्य, श्रव्य से प्रभावित होता है । अश्लीलता एवं नग्नता को प्रोत्साहित करने वाले उपर्युक्त घटकों के कारण मन का पतोन्मुखी होना स्वाभाविक है । सरे-बाजार में, सड़कों पर निकलने पर ऐसे पोस्टर चिपके देखे जा सकते हैं, जो नारी की अर्धनग्नावस्था के होते हैं । बीड़ी-सिगरेट से लेकर तेल, साबुन, क्रीम-पाउडर जैसी वस्तुओं तक की पब्लिसिटी के लिए नारी की नग्न काया का ही सहारा लिया जाता है । इसमें अभिशाप की एक कड़ी और भी जुड़ी है—यूरोपीय देशों की भाँति अपने देशों में बढ़ता हुआ माडलिंग का प्रचलन । यह एक स्वतंत्र व्यवसाय के रूप में उभर कर आया है तथा तेजी से बढ़ता जा रहा है । ऐसी कितनी ही संस्थाएँ हैं जिनका व्यवसाय एक-मात्र इसी के आधार पर चल रहा है । वे अपने एजेन्टों के माध्यम से स्वस्थ सुन्दर युवतियों से परिचय करतीं तथा माडलिंग के लिए प्रोत्साहित करती हैं । व्यावसायिक प्रचारों में अधिकांश नग्न चित्र उन्हीं द्वारा लिए गये होते हैं । आधुनिक संगीत के नाम पर बजने वाली धुनें तथा बनने वाले गीत मनुष्य की कुत्साओं को ही भड़काते हैं । इन सबसे बना दूषित वातावरण उस परिवेश में रहने वालों के दिमाग को खराब करता है । चरित्र अवमूल्यन में ऐसे वातावरण की महती भूमिका है ।

अग्नि में घी डालने पर वह भभक उठती है । ऐसा ही एक प्रयास सभ्य कहलाने वालों द्वारा विगत कुछ वर्षों से आरम्भ हुआ है जो चरित्राहुति में घृत का काम कर रहा है । विज्ञ मनीषियों का मत है कि अर्ध नग्न स्थिति में शरीर की माँसलता, सौष्ठव तथा रंग-रूप का प्रदर्शन असभ्यता का परिचायक है । सौन्दर्य प्रतियोगिताओं की परम्परा का आरम्भ एक ऐसी ही असभ्य परम्परा है । 'मिस यूनिवर्स' 'मिस इण्डिया' जैसी सौन्दर्य प्रतियोगिताओं की सराहना भला किस आधार पर की जाय ? बौद्धिक प्रतिस्पर्द्धाओं की, गुण, कर्म स्वभाव की सुन्दरता की स्पर्द्धा चले, यह तो समझ में भी आती है, पर यह बात बिल्कुल ही गले नहीं उतरती कि मातृशक्ति के रूप में पूजित नारी शक्ति की काया को खिताब का लालच देकर सभ्यता का नकाब पहने असभ्यों के बीच नग्न प्रदर्शन के लिये प्रस्तुत किया जाय ।

कहा जा चुका है कि कायिक उभारों का नग्न प्रदर्शन उत्तेजना को जन्म देता है तथा मनोवेगों को अनियंत्रित करता है । फिलिपाइन्स में सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी के चुनाव की प्रतियोगिता हिंसात्मक वातावरण में बदल गई । दर्शक सुन्दरी को देखकर इतना अधिक उत्तेजित हो उठे कि अपने आपे से बाहर हो गये । बारह व्यक्ति तेज हथियारों के लगने से तत्काल मर गये, सैकड़ों घायल हुये । ऐसी घटनाएँ न भी हों तो भी किसी भी कीमत पर यह परम्परा सराहनीय नहीं है । दोष नारी के मत्थे यह कहकर नहीं मढ़ा जा सकता है कि वे स्वेच्छा से इन प्रतियोगिताओं में भाग लेती हैं । यह दोष उस तथाकथित सभ्य समाज का है जो ऐसे कुप्रचलनों को प्रोत्साहित करता है और उनमें रस लेता है ।

सौन्दर्य दृष्टि वस्तुतः भीतर होती है । वह विकृत न हुई हो तो प्रकृति के जर्रे-जर्रे में विद्यमान सुन्दरता का दर्शन कर सकना हर व्यक्ति के लिए सम्भव है । नारी सौन्दर्य के इर्द-गिर्द केन्द्रित दृष्टि विकारों को ही जन्म देती है तथा उस शाश्वत् सौन्दर्य के दिग्दर्शन से मानव को वंचित रखती है जो प्रकृति उपवन में बिखरा पड़ा है ।

उत्सवों के नाम पर उद्दण्डता अवांछनीय है

किसी उत्सव अथवा समारोह का अर्थ होता है, अपनी हार्दिक प्रसन्नता को सुन्दरतापूर्वक व्यक्त करना । किन्तु जब कोई समारोह अथवा उत्सव अपनी वांछित मर्यादा को पार कर जाता है, तब वह न केवल एक बोझ हो जाता है, बल्कि एक उपहासास्पद कौतुक बन जाया करता है ।

विवाह वास्तव में एक समारोह का विषय है । विवाहोत्सव के अवसर पर सम्बन्धित लोगों का हर्षित एवं प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है और प्रसन्नता अपनी अभिव्यक्ति चाहती भी है और उसको अभिव्यक्त करना भी चाहिए ।

किन्तु दुर्भाग्यवश हिन्दुओं का विवाह समारोह आजकल एक विशुद्ध बाल-कौतुक जैसा बन गया है । समारोह के नाम पर इस अवसर पर ऐसा अनावश्यक आडम्बर किया जाने लगा है, जिसको देखकर किसी भी सभ्य समझदार को मन ही मन शर्म आने लगती है ।

दूल्हे की वेश रचना से लेकर वधू की विदाई तक जो भी समारोह किये जाते हैं, उनको देखकर सोचना पड़ता है कि यह विवाह हो रहा है अथवा नासमझ गँवारों का कोई स्वाँग ।

जिस दिन से विवाह कृत्य का श्रमारम्भ होता है, उसी दिन से वर-वधू के घरों में ढोलक बजनी शुरू हो जाती है और दिन में समय-असमय इतनी बार बजा करती है कि पास-पड़ोस के रहने वाले ऊबने और परेशानी अनुभव करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लगते हैं । ऐसे अवसरों पर फिजूल और निठल्ली स्त्रियों को तो मानो एक मनचाहा मनोरंजन ही मिल जाता है । जब देखो वर-वधू के घर उपस्थित और ढोलक के साथ जुटी पड़ी हैं । ब्याह के मांगलिक गानों से लेकर इश्क की अश्लील गजलों तक का जो सिलसिला प्रारम्भ होता है, वह इतनी देर तक चलता रहता है कि उस पर किसी सभ्य व्यक्ति को घृणा होने लगती है ।

ऐसे अवसर पर घर में स्त्रियों का निरंकुश राज हो जाता है और वे अपने गाने की हवस पूरी करने में यह भी भूल जाती हैं कि घर में वह पुरुष वर्ग और वयोवृद्ध लोग भी मौजूद हैं, जिनकी मर्यादा का भी ख्याल रखना है । एक बार उन्हें यदि उनकी याद भी रहे तो भी वे अपने उन्माद में उनकी पूर्ण उपेक्षा कर देती हैं और नि:संकोच भाव से अपने कार्यक्रम में लगी रहती हैं ।

यदि एक पुरुष परेशान होकर किसी गायिका को टोक देता है, तो वह नीरस अथवा चिड़चिड़ा मान लिया जाता है और घर-घर से आयी गायिकाएँ बड़बड़ाती हुई उसकी आलोचना करने लगती हैं । कभी-कभी वे बुरा मान जाती हैं । ऐसे अवसर पर गृह-स्वामिनी को सामाजिकता एवं भद्रता के नाते पुरुषों को कुछ कह-सुनकर उन निठल्ली स्त्रियों को मनाना तक पड़ता है और उन्हें मनमाने गाना-गाने और ढोल फोड़ने के लिए और अधिक छूट देनी पड़ती है ।

घरों में बेचारे बहुत से विद्यार्थी भी होते हैं । उन्हें पढ़ना होता है, अपना पाठ याद करना अथवा गणित हल करनी होती है, पर उन निठल्ली एवं हर्षोन्मादिनियों को उनकी हानि की कोई चिन्ता नहीं रहती । बहुत बार तो विद्यार्थियों की परीक्षाएँ तथा विवाह के अवसर साथ-साथ पड़ जाते हैं । ऐसी स्थिति में बेचारे परीक्षार्थियों को बड़े संकट का सामना करना पड़ता है । यदि वे उन्हें ढोल बजाने अथवा जोर-जोर से गाना-गाने के लिए मना करते हैं तो धृष्ट समझे जाते हैं, साथ ही कहने वाली मूर्खाएँ यहाँ तक कह देती हैं कि उसे अपनी बहिन अथवा भाई के विवाह समारोह से अरुचि है । ऐसे असमंजस में पड़े उस परीक्षार्थी की क्या दशा होती है ? जिसका एक-एक क्षण मूल्यवान होता है । इसकी चिन्ता करना हर्षान्विताएँ अपना कर्त्तव्य नहीं समझतीं ।

अब विचार करने की बात यह है कि विवाह महोत्सव पर स्त्रियों का हर्षित होना स्वाभाविक ही है और उसकी अभिव्यक्ति भी आवश्यक है, किन्तु क्या इस मूर्खतापूर्ण हर्षातिरेक को उत्सव अथवा समारोह कहा जायेगा ?

यदि यही ढोल-वादन और गायन का कार्यक्रम किसी उपयुक्त समय पर एक सीमित अवधि के लिए शिष्ट एवं मधुर गानों के साथ मनाया जाये तो नि:सन्देह बड़ा ही सुन्दर एवं सुखदायक रहे, किन्तु हिन्दू-समाज में विवाह का अवसर एक मर्यादाहीन, उच्छृंखलता का समय माना जाता है । इसलिये उसमें शिष्टता एवं उस भय की सीमा में बँध कर चलना आवश्यक हर्ष की न्यूनता मानी जाती है । साथ ही न जाने कितने पुराने दकियानूसी, अर्थहीन, सारहीन और संगीतहीन रूढ़िवादी गाने भी इस अवसर पर गाने का रिवाज है । किसी दूसरे प्रकार के सार्थक गाने न तो किसी को आते हैं और यदि किसी शिक्षिता लड़की अथवा महिला को आते भी हैं तो न तो वे पसन्द किए जाते हैं और न उसको अवसर दिया जाता है । अपना स्थान किसी परिमार्जित प्रगतिशीलता को दे देना रूढ़िवादिनी गायिकाएँ अपना और अपनी गायन-कला का अपमान समझती हैं । इस प्रकार की खुशी, प्रसन्नता अथवा गर्वाभिव्यक्ति को मूर्खता के सिवाय और कुछ नहीं कहा जा सकता ।

यह तो रही घर के अन्दर की बात । बाहर किसी देवी-देवता की पूजा करने, कुएँ की परिक्रमा करने अथवा किसी पेड़-पौधे पर सिन्दूर आदि चढ़ाने के लिये जाते समय तो अनियमित ढोल-वादन, अश्लील गायन तथा असम्भव स्वर लहरी देखते-सुनते ही बनती है । बेचारे राह चलते सभ्य लोगों को एक बार लज्जा आ जाती है, किन्तु उन्हें तनिक भी इस बात की चिन्ता नहीं होती कि वे किसी भद्र परिवार की महिलाएँ हैं और उनकी यह सार्वजनिक असभ्यता अशोभनीय है । इस प्रकार सड़कों, बाजारों और गली, कूँचों में खुला खेलने को क्या उत्सव अथवा समारोह कहा जायेगा? तब असभ्यता, अश्लीलता अथवा अभद्रता किन क्रियाओं को कहा जायेगा ? किन्तु हिन्दू-समाज में उत्सव की अभिव्यक्ति के नाम पर ऐसी अशिष्टताएँ अनिवार्य रूप से विवाहों के अवसर पर होती ही हैं और परम्परा के दास इसमें कोई भी सुधार, किसी प्रकार का परिमार्जन करने की आवश्यकता ही नहीं अनुभव करते । यदि कोई विचारशील व्यक्ति किसी परिवार के पुरुष वर्ग को स्त्रियों की यह अभद्रता रोकने के लिए कहता भी है तो वह मजबूरी दिखाता हुआ कह देता है कि क्या किया जाये ? यह रिवाज तो बहुत पुराना चला रहा है । रोका भी किस प्रकार जा सकता है ? वास्तव में किसी का यह उत्तर सुनकर खेद करने के सिवाय किसी प्रगतिशील के पास कोई उपाय नहीं रहता ।

यदि एक बार इस बाहरी गाने-बजाने को अनुशासित कर दिया जाये और गन्दे एवं अर्थहीन गानों का स्थान, प्रगतिशील सुन्दर तथा भावपूर्ण गीतों को दे दिया जाये, तब भी गनीमत हो, किन्तु न तो लोगों में ऐसा करने का साहस है और न चिन्ता ।

कहना न होगा कि इस प्रकार के प्रदर्शनों तथा उत्सव एवं समारोह के हर्ष की अभिव्यक्ति से और तो कुछ नहीं, संसार के सामने हिन्दू समाज की सार्वजनिक सभ्यता का एक कुचित्र अवश्य उपस्थित हो जाता है । देखने वाले अवश्य ही इस गलत-फहमी में पड़ जाते होंगे कि हिन्दुओं की आन्तरिक सभ्यता ठीक उस सभ्यता के विपरीत है, जिसकी वह डींग हाँका करते हैं और जिसको कि वे संसार की अन्य सभ्यताओं की तुलना में श्रेष्ठ बतलाते हैं ।

नि:सन्देह किसी भी व्यक्ति अथवा समाज की सभ्यता की गहराई का इसी प्रकार के उत्सवों, संस्कारों एवं समारोहों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के समय ही पता चलता है । जिनके खुशी मनाने के तरीके-सादे, सरल, शिष्ट एवं सुरुचिपूर्ण होते हैं, आज के युग में वे समाज ही सभ्य कहे जा सकते हैं अन्यथा उत्सवों के नाम पर ऐसी हाय-हाय और हैरत से भरी बेहयाई करने वाले और कुछ भी कहे जायें, सभ्य कदापि नहीं कहे जा सकते । अस्तु, अपनी सभ्यता एवं शिष्टता के नाम पर हिन्दुओं को अपने विवाहोत्सवों में उचित सुधार करना अत्यन्त आवश्यक है ।

सामाजिक कुरीतियाँ कैसे मिटें ?

मानव जाति की समस्त समस्याओं का हल उस एक ही तथ्य की सफलता पर निर्भर रहेगा कि बुरे व्यक्ति, बुरे विचार, बुरे काम ही संसार में विविध प्रकार की बुराइयाँ उत्पन्न करते हैं और उन्हीं की प्रतिक्रिया असंख्य कष्टों और संघर्षों को जन्म देती है । आध्यात्मिक जीवन और राजनैतिक क्षेत्र में जो भी सफलताएँ-असफलताएँ मिलती हैं उनका कारण केवल मात्र प्रयत्न-पुरुषार्थ ही नहीं होता वरन् यह भी होता है कि किस मनोभूमि के द्वारा, किन आदर्शों से प्रेरित होकर उन्हें किया गया है । साधनों की त्रुटि से उतना हर्ज नहीं जितना भावनाओं की त्रुटि से होता है । भूल-चूक हर किसी से होती है, उन्हें सुधारा भी जा सकता है, पर दुष्टता और पाप दृष्टि से प्रेरित होकर जो किया गया है वह बाहर से कितना ही अच्छा लगने पर भी वह अन्त में दुःख और दुष्परिणाम ही उत्पन्न करेगा ।

सामाजिक जीवन में अनेकों कुरीतियाँ, बुराइयाँ, दुष्प्रवृत्तियाँ और अन्धपरम्पराएँ फैली दीखती हैं । बाहर से वे सामाजिक खराबी दीखती हैं और लगता है कि सामाजिक स्तर पर किए गए प्रयत्नों से ही इन्हें हटा दिया जा सकेगा । पर थोड़ा बारीकी से देखने पर पता चलता है कि व्यक्तिगत दोष ही यथाअवसर अनेक रूपों में प्रकट होते हैं, कभी ये सामाजिक, कभी राजनैतिक, कभी धार्मिक मालूम पड़ते हैं । अवसर के अनुरूप उनकी शक्ल दिखाई पड़ती है पर उनकी जड़ एक ही है—पतनोन्मुख हीनवृत्ति ।

प्रत्येक समाज में स्वस्थ परम्पराएँ मौजूद हैं, उत्कृष्ट आचरणों के लिए हर समाज में पर्याप्त स्थान और क्षेत्र मौजूद हैं । साथ ही कुछ न कुछ बुराइयाँ और मूर्खताएँ भी हर समाज के लोगों में प्रचलित हैं । दोनों में से किसी को भी चुन लेना व्यक्तियों की अपनी अभिरुचि के ऊपर निर्भर है । जिनका मन दुष्प्रवृत्तियों से, संकीर्णताओं, भीरुता और स्वार्थ भावनाओं से भरा है, वह कुरीतियों को ही अपनायेगा, किन्तु जिनमें साहस और विवेक मौजूद है उनके लिये भिन्न प्रकार का मार्ग अपनाने एवं आचरण करने की पूरी-पूरी सुविधा मौजूद है । विवश किसी को काम के लिये कोई नहीं कर सकता । इस जमाने में ऐसे सामाजिक बन्धन किसी के ऊपर भी नहीं हैं ।

लड़की बेचने वाले हमेशा से रहे हैं । मनुष्य जब निष्ठुरता धारण कर लेता है तो उसके लिए बूढ़ा बैल कसाई को बेचने में या अबोध कन्या बूढ़े के साथ ब्याहने में कोई संकोच नहीं होता । किसी शास्त्र में नहीं लिखा है कि बूढ़े बैल कसाई को बेचकर या अबोध कन्या को अनपयुक्त वरों के हाथ बेचकर धन कमाया जाय । ऐसी कोई परम्परा या सामाजिक प्रथा भी नहीं है । फिर भी यह अनीतिपूर्ण बुराई समाज में बहुत दिनों से चली आ रही है । प्रत्यक्ष में सभी लोग इसके विरोधी हैं फिर भी यह कुरीति किसी न किसी रूप में बनी रहती है । अमीरों और राजाओं को लोग अपनी युवा लड़कियाँ भेंट करके उनका लाभदायक अनुग्रह पाने वाले अनाचारी पहले भी रहे हैं और अब भी ऐसे दुष्टों की कमी नहीं जो किन्हीं छोटे-बड़े लाभों के लिए अपनी पारिवारिक इज्जत, आबरू को गँवाते संकोच नहीं करते । इन बातों की रोक-थाम कोई प्रस्ताव पास करके नहीं हो सकती । जिनका मन निष्ठुरता और निर्लज्जता धारण करले, उनके लिये लोकनिन्दा भी क्या महत्त्व रखेगी ?

लड़का बेचने की, दहेज प्रथा की बुराई कौन स्वीकार नहीं करता ? उसके द्वारा होने वाली हानि से कौन परिचित नहीं है ? शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा निकले जो अब खुलेआम दहेज प्रथा का समर्थन कर सके । इतने पर भी जब अपना लड़का विवाह योग्य होता है तो हर व्यक्ति का मन दहेज पाने के लिए ललचाता है । जो व्यक्ति अपनी कन्या के विवाह के समय दहेज का घोर विरोधी था, माँगने वालों की कटु शब्दों में भर्त्सना करता था, वही जब अपने लड़के के विवाह में बेटी वाले का कलेजा निकाल लेने की पेशकश करता है, तब लगता है कि यह बुराई मनुष्य के लोभवृत्ति की निर्लज्ज सीमा तक पहुँच जाने का ही प्रतिफल है । सरकार ने दहेज विरोधी कानून बना दिया है, पर उसका प्रभाव इस प्रचलन पर जरा भी नहीं पड़ा । जो गतिविधियाँ पहले चलती थीं वे ही अब भी चल रही हैं ।

दहेज का सामाजिक पाप हर हिन्दू के लिए गले की फाँसी बना हुआ है । कन्याओं का जन्म इसलिए अभिशाप माना जाता है । उनकी उपेक्षा होती है, पिता के घर में भी पुत्रों की तुलना में कन्या को स्वास्थ्य, शिक्षा तथा सम्मान के अवसरों से वंचित रहना पड़ता है । विवाह के लिए धन जुटाने की चिन्ता में सीमित आय वालों को अनीति से धन कमाने एवं पाप कर्म करने को विवश होना पड़ता है । कितनी ही सुयोग्य कन्याएँ अयोग्यों के गले बँधती हैं । कोई व्यवस्था न होने पर निराशा के वातावरण में आत्महत्याएँ होती रहती हैं । दुराचार पनपता है और कितनी लड़कियों को आजीवन कुँवारी रहना पड़ता है । आशा से कम दहेज मिलने पर कई लड़कियाँ सुसराल वालों द्वारा तिरस्कृत या बहिष्कृत कर दी जाती हैं । कई बार तो उन्हें इसी उत्पीड़न में प्राण तक गँवाने पड़ते हैं ।

ऐसी हत्यारी, अनैतिक और दुष्टतापूर्ण प्रथा का समर्थन करने के लिए किसी के पास कोई तर्क नहीं हो सकता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फिर भी यह बुराई देखा-देखी के नाम पर, परम्पराओं के नाम पर, बात और इज्जत के नाम पर अनेक विरोधों के बावजूद हमारी छाती पर पत्थर की शिला जैसी जमी बैठी है । बहाना यह किया जाता है कि दूसरों की देखा-देखी हमें भी यह करना पड़ता है । देखा-देखी के लिए हजारों उदाहरण पहले भी ऐसे मौजूद थे और अभी भी ऐसे मौजूद हैं जिनमें विचारशील लोगों ने अत्यन्त सादगी और मितव्ययता के साथ विवाह कार्यों को सम्पन्न किया है । क्या उन आदर्शों की परम्परा समाज में मौजूद नहीं है ? क्या उनका अनुकरण नहीं किया जा सकता ?

बुरी से बुरी और अच्छी से अच्छी बातें समाज में होती रहती हैं । हमारा मन जिन्हें अपनी रुचि के अनुकूल मान लेता है उन्हीं का अनुकरण करता है, उन्हें ही परम्परा मानता है । जो बातें अपनी रुचि के प्रतिकूल हैं उन्हें अपवाद मानता है, उपेक्षणीय एवं उपहासास्पद समझता है । कोई भी प्रथा सर्वमान्य या निरपवाद नहीं है । अपनी मानसिक या नैतिक दुर्बलताओं के कारण भली परम्पराओं की तुलना में बुरी ही हम चुनते हैं और बहाना यह करते हैं, क्या करें, प्रथा पर चलना पड़ता है । लोकापवाद और समाज निन्दा इसके लिए हमें विवश करती है । यह बहाना सर्वथा असंगत है । सही बात यह है कि यदि कोई आदर्श कार्य करने का साहस करे तो उसकी विवेकशीलता को हर जगह सराहा जायगा और कमजोर तबियत के आदमी उससे प्रेरणा पाकर अनुकरण करने का साहस प्राप्त कर सकेंगे ।

देवताओं के आगे अपनी कोई मनौती मानने के लिए पशु-पक्षियों को बलि चढ़ाना हृदयहीन कार्य करना है । हर कोई जानता है कि दूसरों को कष्ट देने का परिणाम किसी के लिए भी आज तक श्रेयस्कर नहीं हुआ है । पाप का कारण सुख नहीं हो सकता । पशुओं की जान लेकर अपनी या अपने बच्चों की खैर मनाना ईश्वरीय नियमों के विरुद्ध है । इतने पर भी स्वार्थान्ध लोग यह सब करते रहते हैं । कोई दूसरा स्वार्थी अपनी मनौती मनाने के लिये उनके बच्चे को बलि चढ़ाने पकड़ ले जाय तो वे उसका घोर विरोध और प्रतिरोध करेंगे, परन्तु दूसरे जानवरों के बच्चों को मार कर देवता को प्रसन्न और अपनी भलाई की आकांक्षा पूरी करने की कल्पना में, वही दुष्कर्म करते हुए स्वयं संकोच नहीं होता । धर्म और नीति का यह दुहरा अर्थ कराने के लिए कोई परम्परा विवश नहीं करती । जो लोग बलि नहीं चढ़ाते उनके देवता भी तो प्रसन्न रहते हैं । उनको भी तो पुत्र आदि प्राप्त होते हैं । उनका अनुकरण करने में क्या बाधा है ? अहिंसा की प्रथा, परम्परा भी तो समाज में मौजूद है, उसी का अनुकरण करने में क्या कठिनाई है ?

भूत-पलीत, जादू-टोना, अलन-चलन, नेग-जोग, रीति-रिवाज के नाम पर अगणित अन्ध-विश्वास समाज में प्रचलित हैं । इनमें बहुत धन और समय बर्बाद होता है । भ्रान्ति फैलती है और अन्ध-विश्वास बढ़ता है । मृत्यु-भोज सरीखी प्रथाएँ समाज की आर्थिक कमर तोड़ देने वाली सिद्ध हो रही हैं । जिस घर में एक व्यक्ति को मरे हुए पन्द्रह दिन भी नहीं हुए हैं उसके यहाँ भारी दावत का सरंजाम जुड़े, इसमें कौन बुद्धिमता की बात है । शास्त्रों में मृतक श्राद्ध की बात का उल्लेख तो है पर उसका अर्थ लम्बे-चौड़े प्रीतिभोजों से कदापि नहीं लिया जा सकता । जो लोग अन्त्येष्टि त्रियोदशा या श्राद्ध कर्म जैसे आवश्यक कर्मकाण्ड पूरा करने तक ही सीमित रहते हैं, जो प्रीतिभोज नहीं करते उन्हें कौन समाज में बहिष्कृत कर देता है । औंधी अक्ल के आदमी एक दो दिन चें-चें करके चुप रह जाते हैं ।

जहाँ ज्ञान और विचारशीलता जाग्रत नहीं है वहीं बाल-विवाह चलता है । पिछड़े हुए क्षेत्रों में आज भी लाखों बाल-विवाह हर वर्ष होते हैं, क्या उनका अनुकरण सभ्य लोगों को भी इसलिए करना चाहिए कि वह प्रथा-परम्परा बड़े परिमाण में चल रही है । अशिक्षित वर्ग में रोगों और अभाव-कष्टों का कारण देवता या भूतों की नाराजी मानी जाती है और उसका निवारण करने के लिए ये जो टंट-घंट करते रहते हैं क्या हमें उसी का अनुकरण करना चाहिए ? यदि नहीं, तो यही क्या जरूरी है कि खाते-पीते लोगों में जो कुरीतियाँ मौजूद हैं उन्हें आँखें बन्द करके अपनाया जाय ?

पर्दा प्रथा के कारण महिलाओं को अस्वस्थ, परावलम्बी, अशिक्षित, अनुभवहीन बनाये रहने में कौन बुद्धिमानी है ? संसार भर की महिलाएँ जब पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर प्रगति के पथ पर तेजी से अग्रसर हो रही हैं, अपनी सुविकसित क्षमता का लाभ अपने से, अपने परिवार को तथा सारे समाज को देकर वे एक उदाहरण बन रही हैं तो हम उसी परम्परा को क्यों न अपनाएँ ? पिंजड़े के पक्षी की तरह घर की चहारदीवारी में कैदी बनकर घूँघट की प्रथा को बनाये रहने में न तो किसी शास्त्र मर्यादा का समर्थन है और न किसी ईश्वरीय आदेश का समावेश है । सामन्तवादी युग के अनाचारों का एक टूटा भी खण्डहर मान, पर्दा अभी भी जहाँ-तहाँ जीवित है । बंदरिया जिस तरह अपने मरे बच्चे को छाती से चिपकाये फिरती है उसी तरह हम भी इस मूर्खतापूर्ण एवं हानिकारक प्रथा को मानते रहें तो इसमें कौन समझदारी की बात कही जायगी ?

भली और बुरी प्रथा-परम्पराओं में से केवल बुरी को ही चुनना यह हमारी व्यक्तिगत मूर्खता, दुर्बलता, भीरुता एवं प्रतिगाम्यता के चिह्न मात्र हैं । सामाजिक बुराइयाँ और कुरीतियों की चर्चा करके लोग अपनी निजी त्रुटियों को छिपाने का प्रयत्न किया करते हैं । अविवेकपूर्ण, अनुपयुक्त प्रथाओं को छोड़ देने में कोई ऐसी भारी कठिनाई किसी के सामने उपस्थित नहीं हो सकती । लोग तो चोरी, बेईमानी, बदमाशी, अनीति एवं दुष्टता से भरे अनेकों दुष्कर्म करके भी समाज निन्दा की परवाह नहीं करते । फिर यदि हम सन्मार्ग पर चलने के लिए, सही कार्य करने के लिए, यदि अनुपयुक्त प्रथाओं को हटाने का साहस करते हैं और इसमें किन्हीं अविवेकियों की आलोचना को सहन करना पड़ता है तो इसमें क्या बड़ी बात हो गई । कुरीतियों को अपनाकर भारी हानि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहन करने की अपेक्षा उन्हें ठुकरा कर दो-चार दिन चर्चा का विषय बने रहना बुरा नहीं है । लोग अपने कामों में व्यस्त रहते हैं । दो चार दिन बाद वे दूसरों के भले बुरे सब कार्यों को भूल जाते हैं । नई प्रथा या नई बात आरम्भ में तो अजनबी-सी लगती है उससे लोग चौंकते हैं, पर कुछ ही दिन में वह नई बात भी एक परम्परा बन जाती है ।

हमें स्वस्थ परम्पराओं को जन्म देना चाहिए । समाज का, व्यक्ति का वास्तविक हित जिसमें होता है उसी मार्ग को अपनाना चाहिए । अपना मन सदा नीति, न्याय और औचित्य के पक्ष में रखना चाहिए । कुकर्म करते हुए एक छोटे बच्चे से भी, अपनी अन्तरात्मा से भी डरना चाहिए । पर सत्कर्म का, अच्छी प्रथा-परम्पराओं का आरम्भ करते हुए हमें सारे समाज की, सारी दुनिया की भी परवाह नहीं करनी चाहिए । अनीति और अनाचार के विरुद्ध यदि अकेले ही लड़ने को खड़ा होना पड़े तो उससे झिझकना नहीं चाहिए ।

सच्चाई और बुद्धिमानी के मार्ग को अपनाकर अकेले भी आगे बढ़ा जाय तो हर्ज नहीं । इतिहास बताता है कि सुधारकों और युग-निर्माताओं को अकेले होने की चिन्ता न करके ही अपना पथ प्रशस्त करना पड़ा है । शंकराचार्य, दयानन्द, बुद्ध, गाँधी, ईसा, लूथर, मार्क्स, गैलेलियो आदि आरम्भ में अकेले ही थे, पर जब उन्होंने बुद्धिमत्तापूर्ण बातें कहीं तो उन्हें असंख्य लोगों ने स्वत: शिरोधार्य कर लिया । अन्ध-परम्पराओं की जड़ मनुष्य की आन्तरिक अविवेकशीलता और भीरुता में छिपी पड़ी रहती है । हेय और कष्टकारक कुप्रथाएँ यदि हटानी अभीष्ट हों तो उसके लिए सामाजिक आन्दोलनों से ही काम न चलेगा, व्यक्ति के अन्त:करण में भरी हुई कायरता और दुर्बलता को हटाना पड़ेगा । सत्य के लिए साहस, औचित्य के लिए आस्था और सन्मार्ग के लिए उत्साह यदि हमारी मनोभूमि में स्थान प्राप्त करलें तो सामाजिक कुरीतियों को मिटा देने का कार्य इतना ही सरल सिद्ध होगा जितना कागज के बने रावण को एक दियासलाई लगाकर देखते-देखते भस्म कर देना । यह साहसपूर्ण कदम उठाने का हम अपने आप में ही आरम्भ करें । अनुयायियों और समर्थकों की भीड़ तो सहज ही पीछे लग लेगी ।

प्रचलनों को तर्क की कसौटी पर कसें

सम्पूर्ण विश्व में पाँच हजार से भी अधिक भाषाएँ और बोलियाँ हैं । इनमें से ८४५ तो केवल भारत में बोली जाती हैं । जब विश्व इतना बड़ा है और बोलियाँ एवं भाषाएँ इतनी हैं, तो स्वाभाविक है कि प्रथा-परम्पराएँ भी असंख्यों होंगी, जरा एक दृष्टि इन विविध परम्पराओं पर भी डालें— पुर्तगाल के टिमोर द्वीपवासी आदिवासी महिलाओं में अपने कानों को खाँचे के रूप में काट लेने की प्रथा है । इस प्रकार कटे हुए कान सुन्दर मानते हैं ।

कहीं मोटापा और फील-पाँव को खराब माना जाता है और उससे बचने के लिए तरह-तरह के उपाय-उपचार किए जाते हैं, पर अफ्रीका की मुरूण्डी जनजाति में मोटी टाँग वाली लड़कियाँ सुन्दर एवं सौभाग्यशाली मानी जाती हैं ।

थल प्रदेश में निवास करना सुविधाजनक और आरामदेह माना जाता है, इसलिये लोग प्राय: भूतल पर ही घर-मकान बनाते हैं, किन्तु मिस्र में आदिवासियों का एक विशेष समुदाय है, जो जल पर रहना ही पसंद करता है । वहाँ जमीन की कमी है, ऐसी बात नहीं है, पर वे जो आनन्द जल पर निवास कर ले पाते हैं, उस आनन्द से जमीन पर वंचित हो जाते हैं, ऐसा उनका मत है । वहाँ एक विशाल झील है । वे उसी झील पर बाँस के सहारे जल सतह के ऊपर झोंपड़ी बनाते और रहते हैं । खेती के लिए वे पुआल और मिट्टी से बनी तैरती सतह का इस्तेमाल करते हैं । उस समुदाय में जब कोई बच्चा पैदा होता है, तो वे शिशु के दोनों ओर दो तुम्बी बाँध कर उसे जल में तैरने के लिए छोड़ देते हैं । बच्चा खो न जाय, इसलिए उसके गले में एक छोटी घण्टी बाँध दी जाती है ।

भारतीय मान्यता के अनुसार मृत शरीर का दाह-संस्कार कर देने पर शरीर के प्रति आत्मा की आसक्ति समाप्त हो जाती है और उसे शान्ति मिलती है, किन्तु अफ्रीका के सियरालियोन जनजाति में अवधारणा ठीक इसके विपरीत है । उनका विश्वास है, कि मृत व्यक्ति की हड्डियों को विभिन्न अंग-अवयवों में बाँध कर नृत्य करने से मृतात्मा प्रसन्न होती है और अपना आशीर्वाद-वरदान प्रदान करती है ।

पेड़-पौधे चूँकि मूक-योनि के होते हैं, अत: वे अपनी आयु का परिचय अपने 'एनुवल रिंग' द्वारा देते हैं । आयु-प्रदर्शन की लगभग ऐसी ही प्रथा दक्षिण भारत की बन्दी जनजातियों में प्रचलित है । वहाँ लड़कियों को आयु बताने के लिए प्रति माह एक नया 'वलग' उनके गले में पहना दिया जाता है यह क्रम तब तक चलता रहता है, जब तक कि उसका विवाह न हो जाय । कभी-कभी यह इतना बड़ा हो जाता है कि गर्दन सुराहीदार वस्तुत: नजर आती है । अलग-अलग प्रदेशों में सुन्दरता का अलग-अलग मापदण्ड है, मगर विश्व के प्राय: हर हिस्से में आकर्षण बढ़ाने के लिए महिलाएँ सौंदर्य-प्रसाधनों का ही इस्तेमाल करती हैं । विचित्र बात यह है कि आस्ट्रेलिया की जनजाति महिलाओं में सुन्दर बनने और दीखने का अलग ही ढंग है । वहाँ की महिलाएँ स्वयं को आकर्षक बनाने के लिए अपने होठों में सलाई घुसा लेती हैं ।

मान्यता है कि स्थूल शरीर द्वारा ही भौतिक वस्तुओं का भोग कर सकना सम्भव है । सूक्ष्म शरीर को इनकी आवश्यकता नहीं पड़ती । प्राचीन मिस्रियों का विश्वास था कि मरने के बाद भी व्यक्ति को भोग-सामग्री की आवश्यकता पड़ती है । इसी कारण वे मृत व्यक्ति के साथ भोज्य पदार्थ,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धन-दौलत, नौकर-चाकर सब कुछ दफना देते थे, ताकि मृतात्मा को किसी प्रकार की तकलीफ न हो ।

जो भी शाश्वत् सत्य है, वह तो अपनी जगह अक्षुण्ण बना रहता है, किन्तु प्रथा-परम्पराएँ-प्रचलन सतत् बदलते रहते हैं । इसलिये कभी भी किन्हीं परम्पराओं को जो कभी किसी कारण अपनाई गईं, समझदार व्यक्तियों द्वारा विवेक की कसौटी पर कस कर नकार दिया जाता है । यह तथ्य अध्यात्म विद्या में घुसी हर अवांछनीयता, मूढ़मान्यता पर लागू होता है ।

इन अवांछनीय मूढ़-मान्यताओं को उखाड़ फेंकें

अपने समाज में अनेकों ऐसी सामाजिक कुरीतियाँ प्रचलित हैं, जिनकी किसी भी दृष्टि से कुछ भी उपयोगिता नहीं है, फिर भी परम्परा और प्रचलन के कारण अनिवार्य आवश्यकता जैसी प्रतीत होती है । एक ओर विवेक कहता है, इन रूढ़ियों को अपनाए रहने से हानि ही हानि है, दूसरी ओर अभ्यस्त मान्यताएँ उसी ढर्रे पर लुढ़कते रहने के लिए विवश कर देती हैं । साहसहीन मनःस्थिति उसी पक्ष को स्वीकार करती है, जिस पर समीपवर्ती लोग चलते हैं । औचित्य की उपेक्षा करके सड़े-गले प्रचलनों को गले से बाँधे रहने में समय, श्रम, बुद्धि और धन का अपव्यय होता रहता है । फलतः उपयोगी कार्यों के लिए इन साधनों की कमी पड़ती रहती है । सुखी जीवन और प्रगति की ओर चलने में इस अभावग्रस्त स्थिति के कारण भारी बाधा पड़ती है ।

विवाह-शादियों के अवसर पर किये जाने वाले उत्सवों को औचित्य की दृष्टि से देखा जाय, तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि इनमें जो समय, चिन्तन एवं धन लगता है, वह एक प्रकार से निरर्थक ही चला जाता है । विवाह एक घरेलू छोटा उत्सव है, जिसे दोनों परिवारों के लोग मिल-जुलकर हँसी-खुशी के वातावरण में आसानी से पूरा कर सकते हैं । यह कोई ऐसी अनहोनी बात नहीं, जिसके लिए इतनी धूम-धाम या फिजूलखर्ची की आवश्यकता पड़े ।

संसार भर में विवाह होते हैं । वयस्क लड़की-लड़के गठबन्धन में बँध जाते हैं । यह सृष्टि का एक सामान्य क्रम है । सभी गरीब-अमीर इसे अपने ढंग से सम्पन्न करते हैं । जिस दिन घोषणा उत्सव होता है, उस दिन थोड़ी खुशी भी मना लेते हैं । यह खुशी की उमँगें थोड़े समय में और थोड़े खर्च में पूरी कर ली जाती हैं । यही उचित है और यही स्वाभाविक । विश्व के समस्त देशों, धर्मों और जातियों के विवाहोत्सवों का पर्यवेक्षण करके देखा जाय तो उन्हें मात्र एक घरेलू छोटे उत्सव के रूप में ही सम्पन्न होता पाया जायगा । अति घनिष्ठ लोग आशीर्वाद-उपहार देने के लिये जमा होते हैं । थोड़ा गीत, वाद्य चलता है, हँसी-खुशी के हल्के से अन्य प्रदर्शन होते हैं, चाय पानी चलता है, बधाई शुभ-कामनाएँ व्यक्त की जाती हैं, पुरोहित मंगल मन्त्र बोलते हैं और बात समाप्त हो जाती है । कुछ लोगों का, कुछ घण्टे का समय, कुछ ही रुपयों का खर्च, इतने भर से उत्सव का रूप बन जाता है । वर-वधू अपने घर चले जाते हैं ।

हिन्दू समाज में विवाह की विचित्र प्रथाएँ हैं । इनमें इतने तरह की टंट-घंट होती हैं कि रीति-रस्मों की चिह्न पूँजा अपने आप में एक शास्त्र बन जाती है । बड़े-बूढ़े ही उन गोरखधन्धों को समझते हैं, पुरोहितों के समर्थन से छोटे-बड़े रीति-रिवाजों का ऐसा ताना-बाना बुनते हैं कि उन्हें पूरा करने में घर भर को पसीना आता है । कोई रस्म याद नहीं रही, तो सिर आसमान पर उठाया जाता है और समझा जाता है कि कोई बड़ा अनर्थ होने वाला है । इन रीति-रिवाजों के लिए जो वस्तुएँ खरीदी जाती हैं, वे फिर पीछे किसी काम नहीं आतीं । जो समय नष्ट हुआ, भगदड़ मची और सिर दर्द हुआ उसकी भी कोई उपयोगिता समझी या समझाई नहीं जा सकती । छुट-पुट दो या पाँच रिवाजें हों, तो उनका कुछ कारण भी ढूँढ़ा या समझा जाय, पर जहाँ पूरा-जाल जंजाल ही खड़ा हो, वहाँ यह पता चलाना भी कठिन है कि यह सब किस प्रयोजन के लिए किया जाता है, इसके करने से क्या भावनात्मक और क्या प्रत्यक्ष परिणाम निकलेगा । रिवाज सो रिवाज, रस्म सो रस्म, इसका इतिहास, कारण, महत्त्व, उपयोग आदि जानने की आवश्यकता ही नहीं समझी जाती । अन्धाधुन्ध अनावश्यक बेसिर-पैर की भगदड़ मचती रहती है । कोई यह नहीं पूछता है कि यह क्या किया जा रहा है और क्यों किया जा रहा है । समय, श्रम, चिन्तन एवं धन की इस बर्बादी का आखिर कुछ उद्देश्य भी तो होना चाहिए ।

विवाह की शास्त्रीय परम्परा में अधिक से अधिक दस कर्मकाण्ड हैं और उन्हें पूरा करने में एक-दो घण्टे पर्याप्त होने चाहिए । शेष तो सारे बुढ़िया पुराण है जो न जाने किस कारण से विवाह के साथ जकड़ गया है ।

मात्र रिवाजें ही नहीं, उन्मादियों की तरह उस अवसर पर जितना धन व्यय किया जाता है । उससे तो घर का आर्थिक ढाँचा ही लड़खड़ा जाता है । लम्बी-चौड़ी दावतें, तरह-तरह के व्यंजन, बारात, गाजे-बाजे, आतिशबाजी, रोशनी, मेहमानदारी, भेंट-उपहार का खर्च सैकड़ों तक सीमित नहीं रहता, हजारों तक पहुँचता है । इसके बाद वर पक्ष की ओर से दहेज की माँग और कन्या पक्ष की ओर से लड़की के लिए कीमती जेवर, कपड़े की अपेक्षा का सिलसिला और भी महँगा है । धूम-धाम में जितना पैसा खर्च होता है, उससे कहीं अधिक एक ओर से दहेज और दूसरी ओर से जेवर की माँग में लगता है । बर्तन, कपड़े, फर्नीचर, शृंगार-प्रसाधन, मेवा-मिष्ठान आदि उपहारों का हिसाब जोड़ा जाय, तो वे भी कम बोझिल नहीं होते । इस सबमें दोनों पक्षों की कमर टूटती है, लड़की वाला तो एक प्रकार से तबाह ही हो जाता है । उसकी लड़की के लिए जो जेवर, कपड़े आये थे वे देखने भर के लिए सन्तोष देते हैं । बाद में तो वर-पक्ष के घर ही चले जाते हैं । वे माँगकर समय की शोभा कर सकते हैं या पीछे उन्हें बेच सकते हैं । नकदी और उपहार भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्हीं के घर पहुँचता है । यों जितनी नकदी मिलती है, उसमें कहीं अधिक लड़के वालों को भी खर्च करना पड़ता है और कमर उनकी भी टूटती है । उपहार सामग्री तो एक कोने में कूड़े-करकट की तरह पड़ी हुई जगह घेरती रहती है । उसे बेचकर पैसा खड़ा करना भी सम्भव नहीं होता ।

गरीब लोग जब अमीरी का स्वाँग बनाते हैं और उस तमाशे के लिए अपनी आर्थिक बर्बादी करके पूरे परिवार का भविष्य अन्धकारमय बनाते हैं, तो दुष्परिणामों को देखते हुए यह उत्सव नितान्त पागलपन जैसा सिद्ध होता है । इतना धन—स्वास्थ्य, शिक्षा, व्यवसाय आदि में लगाया गया होता, तो उसका सत्परिणाम सामने आता, कम से कम गुजारे का जो सामान्य क्रम चल रहा था, वह तो चलता ही रहता । घर की सारी पूँजी चुका देने से भी खर्चीली शादियों का पूरा नहीं पड़ता । कई बार तो उसके लिए खेत, घर, जेवर आदि बेचना पड़ता है और बाहर से कर्ज लेना पड़ता है, जिसकी ब्याज चुकाते-चुकाते ही जिन्दगी बीत जाती है और वह भार अगली पीढ़ियों तक को चुकाना पड़ता है । एक ही लड़की की शादी में इतना खर्च पड़ जाता है कि शेष बच्चों की शिक्षा और शादियाँ समस्या बन जाती हैं । किसी को बड़ी बीमारी लग जाय, कारोबार में घाटा पड़ जाय, कोई आकस्मिक खर्च आ जाये तो हाथ-पैर फूल जाते हैं और कुछ करते-धरते नहीं बनता । आर्थिक सन्तुलन बिगड़ जाने पर परिवार भर की कैसी दुर्दशा होती है, उसकी सुव्यवस्था और प्रगति में किस प्रकार संकट उत्पन्न होता है, इसे भुक्तभोगी ही जानते हैं ।

अपने देश की अर्थ-व्यवस्था बिगड़ने में खर्चीली विवाह शादियाँ एक बहुत बड़ा कारण हैं । हर गृहस्थ को जीवन में प्रायः तीन-चार शादियाँ और इतने ही खर्चीले मृतक भोज करने पड़ते हैं । इनमें जितना पैसा लुट जाता है, उतना यदि परिवार की प्रगति में, उद्योग-व्यवसाय बढ़ाने में लगाया गया होता तो स्थिति कुछ से कुछ बन गई होती । अर्थ-व्यवस्था को चौपट करने वाली दो भयंकर कुरीतियाँ अपने समाज में हैं, एक खर्चीली शादियाँ, दूसरे किसी के मर जाने पर आयोजित किया जाने वाला लम्बा-चौड़ा मृतक भोज । इनकी पूर्ति के लिए सीमित आमदनी से काम नहीं चलता और कर्ज मिलना तथा उसका चुकाना कठिन दीखता है, तो मनुष्य को अपने कामों में बेईमानी का समावेश करके अनुचित रीति से भी धन कमाने की बात सोचता है । कुछ लोग तो आदतन बेईमानी करते हैं, पर कुछ को इन कुरीतियों का पेट भरने के लिए विवश होना पड़ता है । इन कुरीतियों का भार वहन करते हुये हमें चरित्रनिष्ठा, अर्थ संतुलन और सामाजिक व्यवस्था बुरी तरह बर्बाद करनी पड़ती है ।

इन दो के अतिरिक्त और भी अनेकों छोटी-बड़ी ऐसी अन्ध-परम्पराएँ हैं, जिनका धर्म से कोई सम्बन्ध न होते हुए भी धर्माडम्बर के रूप में हमारे सिर पर लद गई हैं और ढेरों पैसा, समय तथा चिन्तन नष्ट करती हैं । भूत-पलीतों का, ग्रह-नक्षत्रों का, देवी-देवताओं का भय ऐसा है, जिनके कारण लोग अकारण परेशान रहते हैं । आशंका-ग्रस्त, भयभीत मनुष्य की मानसिक स्थिति गड़बड़ा जाती है और वह अपडर में डूबे रहते-रहते अपनी साहसिकता एवं प्रतिभा गँवा बैठता है । ओझा तथा ज्योतिषी लोग भूतों और ग्रहों के प्रकोप का डर मन में जमा देते हैं और विपत्ति निवारण के नाम पर पैसा ऐंठते हैं । हाथ देखने वाले, जन्म कुण्डली बताने वाले उन सभी को अपडर का शिकार बना देते हैं जो उनके निकट जा पहुँचे और विश्वास करने लगे । ऐसे अन्धविश्वास एक से दूसरे को छूत की बीमारी की तरह लगते हैं । एक को भूत चढ़ा कि उस सम्पर्क क्षेत्र के अधिकांश लोग भूतवादी बन जाते हैं और उस जंजाल में फँस कर अपनी अच्छी-खासी मानसिक स्थिति को मनोरोग ग्रसित बना लेते हैं । पैसा तो झाड़-फूँक, चढ़ावा, प्रसाद, दर्शन-झाँकी, भेंट-बलिदान के कुचक्र में नष्ट होता ही रहता है । जिन घरों में यह जंजाल घुसा होगा, उसमें पलने वाले बच्चों के मन में भीरुता एवं अन्धविश्वासों की जड़ आरम्भ से ही जमने लगती है और फिर जीवन भर कष्ट देती है ।

अपंग-असमर्थ अपने जीवन निर्वाह के लिए भिक्षा माँगें तो बात समझ में आती है । लोकमंगल में सर्वतोभावेन प्रवृत्त समाज सेवी साधु-ब्राह्मण भी शरीर यात्रा के लिए दान-दक्षिणा ले सकते हैं । इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत लाभ के लिए भिक्षा को व्यवसाय बना लेना किसी भी स्वाभिमानी मनुष्य के लिए लज्जा की बात है । खेद है कि अपने समाज में भिक्षावृत्ति भी एक व्यवसाय बन गई है और चतुर लोग उसे अच्छी-खासी कमाई का आधार बनाये हुए हैं । साधु-बाबाओं का चित्र-विचित्र वेश बनाकर कितने ही धूर्त लोग धर्मभीरु लोगों को जन्त्र-मन्त्र के जाल में फँसाते और देवी-देवताओं के अनुग्रह का लोभ दिखाते हैं । उनके चंगुल में भावुक स्त्रियाँ आसानी से फँस जाती हैं और बहुत कुछ गँवाती, पछताती रहती हैं । धर्मनिष्ठ होना जितना उत्तम है उतना ही बुरा धर्माडम्बरों में अपनी विवेक बुद्धि गँवा बैठना भी है । देवी-देवताओं की मनौती इसी प्रकार का भ्रम जंजाल है, जिसमें लाभ कुछ नहीं हानि पग-पग पर है । देवता सहज स्वभाव से सब पर अनुग्रह करते हैं । सत्प्रयोजनों में उनका अनुग्रह अनुदान बिना माँगे ही मिलता है । अमुक प्रकार की भेंट-पूजा लेकर बदले में उचित-अनुचित काम करने के लिये तैयार हो जाना देवताओं की महान् सत्ता के लिए भी लज्जा की बात ही हो सकती है । वे इतने क्षुद्र नहीं होते जैसा कि एजेन्टों ने उनके नाम पर अपना उल्लू सीधा करने के लिए बना रखा है । इस समूचे जाल-जंजाल से विचारशील महिलाओं को सर्वथा दूर रहना चाहिए और जहाँ तक सम्भव हो, दूसरों को भी बचाना चाहिए ।

कुरीतियों और अन्ध-विश्वासों के विरुद्ध हमें मोर्चा खड़ा करना चाहिए और जन-साधारण को समझाना चाहिए, इन भ्रान्तियों से ग्रसित होकर हमें कितनी नैतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षति उठानी पड़ रही है । लाभ कुछ नहीं, हानि अपार है । अपनी दृष्टि में मूर्खता और दूसरों की दृष्टि में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिछड़ेपन की निशानी सिद्ध होने वाली इन अवांछनीयताओं से जितनी जल्दी पिण्ड छुड़ाया जा सके, उतना ही हितकर है । विवेकशीलता की माँग है कि इन मूढ़-मान्यताओं को साहसपूर्वक पूरी तरह बहिष्कृत ही कर दिया जाय ।

विवाहों में होने वाले अपव्यय को जुटाने के लिए जो तरीके अपनाने पड़ते हैं वे प्राय: अनुचित ही होते हैं । कर्ज लेना और फिर उसे न चुका सकना, मकान, जमीन, जेवर, बर्तन आदि बेच देना, बेईमानी करके पैसे कमाना यही तो अतिरिक्त आमदनी के स्रोत हो सकते हैं । इनके कारण मनुष्य अपना लोक, परलोक, धर्म, ईमान, यश, सम्मान सभी कुछ खो बैठता है और अपराधी जैसी दुर्गति भोगते हुए निष्कृष्ट जीवन अपनाने के लिये विवश होता है । जो लोग इस प्रकार भी इस समस्या को नहीं सुलझा पाते उन्हें अयोग्य वरों के हाथों अपनी सुयोग्य कन्याएँ सौंपनी पड़ती हैं जिससे उन बच्चियों का सारा जीवन दु:खमय बीतता है । कम दहेज दे सकने पर कितने ही लड़के वाले बहुओं को बुरी तरह सताते हैं ताकि उनके पिता से और भी अधिक पैसा मिले । कितनी ही घटनाएँ ऐसी भी होती रहती हैं कि एक बहू को अत्याचारों द्वारा या विष देकर मार डाला जाता है और लड़के का दूसरा विवाह करके फिर दहेज कमाया जाता है । अभिभावकों को चिन्ताग्रस्त देखकर कई भावुक लड़कियाँ आत्म-हत्याएँ तक कर बैठती हैं, घर छोड़कर भाग खड़ी होती हैं या आजीवन कुँवारी रह जाती हैं । असफल अभिभावकों का भी कई बार ऐसा दुखद अन्त देखा जाता है कि उसका स्मरण मात्र करने से आँसू भर आते हैं । लाखों, करोड़ों अभिभावकों और बच्चे-बच्चियों को, इन कुरीतियों के कारण घुल-घुल जो अप्रत्यक्ष आत्म-हत्याएँ करनी पड़ती हैं उनका करुण चित्र कोई चित्रकार यदि खींच सके तो पता चले कि हिन्दू समाज को भीतर ही भीतर कितनी घुटन और पीड़ा घुन की तरह खाये जा रही है ।

कन्या और पुत्र में अन्तर इस विवाह में होने वाले अपव्यय ने ही प्रस्तुत किया है अन्यथा बच्चे और बच्ची में से किसी को सौभाग्य और किसी को दुर्भाग्य माने जाने का कोई कारण नहीं । लड़की की शिक्षा, दीक्षा, पालन-पोषण एवं मान सम्मान में इसलिए अन्तर किया जाता है, क्योंकि वह विवाह की खर्चीली प्रथा के कारण घर के लिए भार या कंटक सिद्ध होती है । किसी जमाने में तो पैदा होते ही लड़कियों को गला घोंट कर या विष देकर मार डाला जाता था । इस व्यापक कुप्रथा के विरुद्ध अंग्रेजी सरकार ने एक 'दुखर कुशी' कानून ही बनाया था । अब वैसा तो कम ही होता है, पर लड़कियाँ जिस उपेक्षा से पलती और शिक्षा, दीक्षा से वंचित रहती हैं उसे देखते हुए उनकी आधी हत्या तो अभी भी हो जाती है । सुयोग्य कन्याओं को सुयोग्य पति प्राप्त करने से इसलिए वंचित रह जाना पड़ता है कि उनके अभिभावक सुयोग्य लड़कों द्वारा की गई दहेज की माँग पूरी नहीं कर सकते । इसके विपरीत अयोग्य कन्याएँ सुयोग्य लड़कों के गले केवल पैसे के बल पर आसानी से मढ़ दी जाती हैं ।

संसार भर के समस्त देशों और समाजों पर दृष्टिपात कीजिए, कहीं भी विवाह के नाम पर होने वाला अपव्यय दिखाई न पड़ेगा । विवाह एक साधारण-सी मानव-जीवन की स्वाभाविक घटना है । इस अवसर पर प्रसन्नता की अभिव्यक्ति के लिए छोटा उत्सव समारोह हो सकता है । सभ्य संसार में ऐसा ही होता भी है । असभ्य जंगली जातियों में भी इसे खर्चीला नहीं बनाया जाता । यह अभागी हिन्दू जाति ही है जिसमें विवाह के समय होने वाले थोड़े अमीरी के स्वांग को इतना महत्त्व दे रखा है, जिसके कारण उसका जातीय-जीवन बुरी तरह नष्ट-भ्रष्ट हुआ जा रहा है । इसी देश में ईसाई, मुसलमान, बौद्ध आदि अन्य समुदाय के लोग रहते और विवाह-शादी करते हैं, पर उनमें इसे कमर तोड़ आर्थिक दबाव का रूप नहीं दिया जाता । हम अपने को सभ्य कहें या असभ्य ? विवेकशील कहें या अविवेकी ? यह समझ में नहीं आता । इतनी भयंकर कुरीतियों को जो समाज छाती से चिपकाए बैठा है, इतना त्रास सहकर भी जिसे सुधार एवं परित्याग का साहस न होता हो उस समाज को मृतक नहीं तो अर्धमृत कहना ही चाहिए । ऐसे निष्प्राण लोग सभ्य संसार की प्रगति के साथ कदम-कदम मिलाकर चल सकेंगे और अपना पिछड़ापन दूर कर सकेंगे, इसकी आशा नहीं बँधती ।

संसार के सभी धर्म और समाज प्रगति कर रहे हैं । ईसाई धर्म को जन्मे पूरे दो हजार वर्ष भी नहीं हुए कि उसने विश्व की आधी जनसंख्या को दीक्षित कर लिया । इस्लाम को १३०० वर्ष हुए हैं कि वे धर्मों की दृष्टि से दूसरे नम्बर की जनसंख्या को अपने में समेटे हुए हैं । भगवान् बुद्ध को दो हजार वर्ष हुए हैं कि उनका धर्म भी संसार के तीसरे नम्बर पर है । यह अभागी हिन्दू जाति ही है जो सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर अब तक का इतना भव्य इतिहास और दर्शन होते हुये भी दिन-दिन स्तर की दृष्टि से भी घट रही है और संख्या की दृष्टि से भी । संसार के अन्य देशों की बात तो कौन कहे हिन्दू अपने देश में भी उस गति से नहीं बढ़ रहे जिस गति से ईसाई, मुसलमान बढ़ रहे हैं । इसके कई कारणों में सबसे प्रमुख कारण यह है कि हमारा सामाजिक गठन आज ऐसा दूषित हो चला है कि इसके भीतर रहने से लोगों की आत्मा विद्रोह करने लगी है । विवाह में होने वाले विवाह की कुप्रथा एक के तोड़े टूटती तो है नहीं, मजबूरी में उसी ढर्रे पर चलना पड़ता है, किन्तु प्रतिफल में जो दु:खद दुष्परिणाम भोगने पड़ते हैं उससे विक्षोभ तो उत्पन्न होता ही है । जिस जाति में आत्म-विक्षोभ भरा होगा, वह कभी फल-फूल नहीं सकेगी वरन् विनाश की ओर ही चलेगी । आज हो भी यही रहा है । अपने धर्म के प्रति सच्ची श्रद्धा रखने वालों की संख्या अब दिन-दिन घट रही है । आज हकीकतराय, बन्दा वैरागी, शिवाजी और गुरु गोविन्दसिंह मुश्किल से ही निकलेंगे । लोग स्वेच्छा से अपनी चोटी कटाते चले जा रहे हैं, जनेऊ पहनना बेवकूफी समझते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं, धर्म परम्पराओं का उपहास उड़ाते हैं । ऐसे समाज के बढ़ने और फलने-फूलने की क्या आशा की जा सकती है ? इस अश्रद्धा के उत्पन्न होने में हमारी सामाजिक बुराइयों का भी एक बड़ा कारण है, जिन्होंने अपने अनुयायियों को केवल त्रास ही दिया है ।

इन कुरीतियों का शोधन करना हमारे जातीय जीवन की जीवन-मरण समस्या है । इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा और यदि अपनी महान् संस्कृति को उपहासास्पद एवं घृणित होने से बचाना है, उसे मरणोन्मुख नहीं होने देना है तो हमें इसके लिए कुछ करना ही चाहिए । वैवाहिक अपव्यय जैसी सत्यानाशी कुरीतियों का काला मुँह करने के लिए तो बिना एक क्षण भी प्रतीक्षा किए तत्काल कटिबद्ध होना चाहिए ।

विवाहों में अपव्यय की कुप्रथा

विवाह-शादियों में होने वाले अपव्यय की हानि और बुराई को लोग समझते न हों सो बात नहीं है । किसी भी विचारशील से पूछा जाय तो वह उस कुप्रथा की भर-पेट निन्दा करेगा और जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी उसे समाप्त करने की बात कहेगा । लेखों द्वारा, भाषणों द्वारा, प्रस्तावों द्वारा इसका बहुत समय से विरोध होता चला आ रहा है, पर कोई कारण ऐसा बना हुआ है जो इतने विरोध एवं इतने त्रास के बाबजूद भी वह बुराई को ज्यों-का-त्यों कायम रखे हुए है । घटने के बजाय उसकी वृद्धि ही होती चलती है । हर नये साल पिछले वर्ष की अपेक्षा यह बुराई और भी भयंकर रूप से दृष्टिगोचर होती है । आइये इस कारण को ढूँढ़ें जो इसे न हटने देने, न घटने देने का प्रमुख कारण बना हुआ है ।

कारण यह है कि एक पक्ष सादगी का विवाह करना चाहता है, पर उसे अपनी जैसी विचारधारा और परिस्थिति का दूसरा पक्ष नहीं मिलता । यदि कोई ऐसा उपाय हो कि समान परिस्थिति और विचारधारा के दोनों पक्ष मिल जायें तो दहेज तथा अन्य आडम्बर छोड़कर मितव्ययतापूर्वक विवाह करने की प्रक्रिया सहज ही चल पड़े । इसलिये एक कारण यह है कि दोनों पक्ष एक समान नहीं मिलते और मजबूरी में इच्छा के विरुद्ध फिजूलखर्ची का तरीका अपनाना पड़ता है ।

दूसरा कारण है समाज में अप्रतिष्ठा का भय । सोचा जाता है कि यदि सादगी का विवाह किया गया तो लोग हमें गरीब या कंजूस समझेंगे । हँसी उड़ावेंगे, अपमानित करेंगे । घर की स्त्रियाँ विरोध करेंगी और रिश्तेदार ताना मारेंगे । इसलिए इस झंझट में क्यों पड़ा जाय ? कई व्यक्ति लड़की के विवाह में देकर उसी स्टैण्डर्ड से लड़के के विवाह में पाने की आशा लगाये रहते हैं और इस प्रकार वही चरखा चलता रहता है । यदि सादगी का विवाह करने से अधिक सम्मान मिलने लगे, जमाने का स्तर ऐसा हो जाय कि फिजूलखर्ची करने वालों की भर्त्सना की जाय और सादगी अपनाने वालों को यश एवं सम्मान मिले तो निश्चय ही लोग यह पसन्द करेंगे कि उन्हें मितव्ययता और प्रशंसा का मार्ग ही अपनाना चाहिए । हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि एक समान विचारधारा एवं परिस्थितियों के घर-वर ढूँढ़ने की सुविधा हो जाय और ऐसे प्रगतिशील जो भी विवाह हों वे ऐसे सुव्यवस्थित ढंग से हों कि उनके संयोजकों को जनता का समर्थन एवं सम्मान भी भरपूर प्राप्त हो ।

लड़के ढूँढ़ने में एक कठिनाई यह भी है कि एक सीमित क्षेत्र में एक सीमित जाति में ही वह ढूँढ़-खोज करनी पड़ती है । हर आदमी की जानकारी सीमित होती है इसलिए वह तलाश भी छोटे दायरे में ही कर सकता है । जब उतनी परिधि में अनुकूल अवसर नहीं मिलता तो उसे वर्तमान ढर्रे पर ही चलने को विवश होना पड़ता है । इसलिए हमें ऐसे साधन भी जुटाने पड़ेंगे कि हर स्थिति के व्यक्ति को अपनी आवश्यकता के अनुरूप लड़का प्रगतिशील सुधारवादी लोगों में से ही मिल जाये । यदि यह साधन बन पड़ा तो फिर आदर्श विवाहों का ताँता लगने में देर न लगेगी ।

आमतौर से हमारे समाज में अपनी उपजातियों में ही विवाह करने की प्रथा थी । उस दायरे से बाहर रोटी-बेटी का व्यवहार करना हेय माना जाता है । उपजातियों के सीमित दायरे में अच्छे लड़के ढूँढ़ना काफी कठिन पड़ता है । जहाँ अच्छे घर-वर होते हैं वहाँ नीलामी बोली इतनी ऊँची हो जाती है कि उस खरीद में सफल होना हर लड़की वाले का काम नहीं होता । 'जो बढ़े सो पावे' की नीति जहाँ अपना ली गई है वहाँ तो अमीर ही बाजी मार सकते हैं । यदि उपजातियों का दायरा बड़ा होकर उस पूरी जाति तक बढ़ सका होता तो लड़के ढूँढ़ने की समस्या का आधा हल अपने आप हो जाता । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र यह चार ही जातियाँ ब्रह्माजी ने बनाई थीं । वेद-शास्त्रों में इन चार का ही वर्णन मिलता है । उपजातियाँ तो उनके निवास-स्थान को लेकर बन गईं। मालवा में रहने वाले मालवीय, कन्नौज के आस-पास रहने वाले कन्नौजिया (कान्य-कुब्ज), सरयू किनारे रहने वाले सरयूपारीण, मिथिला प्रान्त में रहने वाले मैथिल कहलाए । इसी प्रकार अन्य कारणों को लेकर एक ही जाति की अनेक उपजातियाँ बन गईं, इससे इनके वंश या मूलरूप में क्यों अन्तर आना चाहिए ? उपजातियों का भेद छोड़कर यदि एक वर्ण के लोग अपने वर्ण में विवाह करने लगें तो इसमें किसी रूढ़ि का उल्लंघन भले ही होता हो, धर्म और शास्त्र के अनुसार इसमें कुछ भी अनुचित नहीं है । ब्राह्मण यदि अन्य ब्राह्मणों में शादी करने लगे तो इसमें क्या अधर्म होगा ? इसी प्रकार यदि क्षत्रिय, वैश्य, कायस्थ, स्वर्णकार आदि अपनी पूरी जाति में विवाह, शादियों का दायरा बढ़ालें तो उन्हें अच्छे लड़के बहुत जल्दी ढूँढ़ने में भारी सुविधा हो सकती है और उस विशाल क्षेत्र में सुधारवादी एवं प्रगतिशील ऐसे लोग भी आसानी से मिल सकते हैं जो आदर्श विवाहों के लिये खुशी-खुशी तैयार हो जायें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विवाह को दहेज, जेवर और फिजूलखर्ची से मुक्त बनाने के लिए हमें एक संघर्ष करना पड़ेगा । इस संघर्ष की पूर्ण सफलता उपजातियों के विस्तार पर ही निर्भर है, पर दोनों मोर्चों पर संघर्ष छेड़ना असामयिक होगा, इसलिए अभी प्रारम्भ में इतना हो सके तो भी कम नहीं कि उपजातियों में ही प्रगतिशील लोगों को अपने विचार और परिस्थितियों के सम्बन्ध ढूँढ़ने की सुविधा हो जाय । यदि यह सुविधा सम्भव हो सकी तो आधा मोर्चा फतह हो जाने का साधन बन जायगा ।

हमने पिछले दिनों इस सम्बन्ध में काफी प्रयत्न किया है । कितने आदर्श विवाह कराये भी है और समय-समय पर उपस्थित स्वजनों को इसकी प्रेरणा भी दी है । उन आदेशों को लोगों ने स्वीकार भी किया है, पर पता लगाने पर यही विदित हुआ कि उन सहमति प्रकट करने वालों में से भी कोई आदर्श विवाह न कर सका । कारण यही था कि उन्हें अपने अनुरूप विचार एवं स्थिति के लोग अपनी जाति में न मिले और एक-पक्षीय व्यवस्था बन नहीं सकती थी, इसलिए विवश होकर उन्हें अपना मत बदलना पड़ा । 'अखण्ड-ज्योति' परिवार के स्वजनों में से अधिकांश हमारी ही विचारधारा के हैं, वे खुशी-खुशी आदर्श विवाह करने को तैयार हैं, पर दूसरा पक्ष भी उन्हें वैसा ही मिले तब तो बात आगे बढ़े । जिसकी कन्या सयानी हो गई है उसे तो जल्दी रहती है, जहाँ अवसर मिल जाता है वहीं सम्बन्ध करना पड़ता है । अपने परिवार की हर शाखाओं में भी अनेकों सदस्य होते हैं, पर जाति का बन्धन रहने से उनमें भी विवाह होने का योग जम नहीं सकता । ऐसी दशा में अब तक के हमारे सब प्रयत्न निष्फल होते रहे हैं ।

दहेज और वैवाहिक अपव्यय का विकास इतना भयानक है कि इसे रावण और कंस की उपमा दी जाय तो भी कम है । रावण प्राय: ऋषियों को मारता था और कंस ने बालकों का वध कराया था, पर यह असुर तो बाल-वृद्ध का अन्तर किये बिना हिन्दू-जाति के प्रत्येक सदस्य को चिन्ता की चिता में तिल-तिल कर जलाता रहता है । हमारे जातीय जीवन को इसी ने नष्ट किया है । सदाचार और धर्म के पथ में यही सबसे बड़ा बाधक है । कन्या और पुत्र में अन्तर कराने का, नारी को नर से निकृष्ट समझे जाने का प्रधान कारण उसी को मानना चाहिए । इस समय हिन्दू-जाति की आत्मा इसी दुष्ट के उत्पीड़न में नारकीय यन्त्रणा भुगत रही है । यदि इस वृत्रासुर, महिषासुर, भस्मासुर से भी अधिक भयंकर महाराक्षस को परास्त किया जा सके तो ही हिन्दू-जाति के जीवन एवं उत्थान की बात सोची जा सकती है ।

युग-निर्माण की दिशा में कदम बढ़ाते हुए हमें इन विकृतियों और कुरीतियों का शोधन करने के लिए सुव्यवस्थित मोर्चाबन्दी करनी पड़ेगी, इसके बिना हम अपने सामयिक उत्तरदायित्वों से उऋण नहीं हो सकते । यों कहने को दहेज विरोधी कानून बन गया है और दहेज लेने तथा देने वाले दोनों ही अपराधी माने जा सकते और राज दण्ड के अधिकारी बन सकते हैं, पर कानून से ही सब कुछ नहीं हो सकता । कानून तो खाद्य-पदार्थों में मिलावट, रिश्वत, बाल-विवाह, छुआछूत, नाली और सड़कों पर गंदगी फैलाना, कम तोलना, कम नापना आदि भी बुराइयों के विरुद्ध बना हुआ है, पर उनसे कितनी रोक-थाम होती है यह हम सब जानते ही हैं । इसलिए उस पर निर्भर न रहकर हमें प्रभावशाली कदम उठाने होंगे जिनसे समस्या का वास्तविक हल निकल सके ।

आमतौर से दहेज के खिलाफ बहुत कुछ कहा जाता है । उसकी भरपेट निन्दा की जाती है, पर इतने मात्र से काम नहीं चल सकता । दहेज की जड़ जेवर में है । लड़की वाला जेवर की माँग करेगा तो लड़के वाला दहेज भी जरूर माँगेगा । यदि बन्द होने होंगे तो दोनों एक साथ बन्द होंगे और यदि बने रहेंगे तो दोनों साथ-साथ चलेंगे । इस तथ्य को भली प्रकार समझते हुए हमें आदर्श विवाहों की भूमिका में इन दोनों ही कुप्रथाओं का उन्मूलन करने की बात लेकर चलना चाहिए । लड़के वाला न तो दहेज माँगे और न उसे दिया जाय । लड़की वाले को कुछ देना हो तो वह अपनी कन्या को स्त्री-धन के रूप में दे । उसका न तो दिखावा किया जाय और न चर्चा का विषय चलाया जाय । यह तो लड़की और उसके अभिभावकों के बीच निजी बात है उसमें लड़की के सुसराल वालों को कोई दिलचस्पी न होनी चाहिए । जो दिया गया है वह गुप्त रहे और उसे लड़की की निजी सम्पत्ति माना जाय । इसी प्रकार विवाह के अवसर पर लड़के वाला खादी की साड़ी और अँगूठी लेकर आवे । पीछे उन्हें अपनी वधू को कोई जेवर आदि देना हो तो विदा कराने पर अपने घर ले जाकर दें । लड़की वाले के दरवाजे पर उसका प्रदर्शन करने की कोई आवश्यकता न हो । शकुन के रूप में जहाँ आवश्यकता हो वहाँ एक रुपये का प्रयोग किया जाय ।

बारात में कम से कम आदमी जायें । इनकी संख्या इतनी कम न हो जिसके बिना काम ही न चले । अधिक से अधिक वे २५ हो सकते हैं । बेटे वाले के सम्बन्धी व्यवहारी, मित्र बहुत हों तो उनका सम्मान एवं प्रीतिभोज अपने घर पर वधू के घर आने पर उसके सम्मान में करना चाहिए । बेटी वालों के यहाँ उन्हें ले जाने की क्या जरूरत है ? हर कार्य में सादगी बरती जाय, मितव्ययता का पूरा ध्यान रखा जाय और विवाह संस्कार शिक्षाप्रद एवं प्रेरणा देने वाले धर्म संस्कार के रूप में उत्साह एवं आनन्द के वातावरण में सम्पन्न किया जाय । छोटी-मोटी अन्य आवश्यक बातें स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार तय कर ली जायें । उनके दिल में यही भावना रहनी चाहिए कि विवाह को अधिक से अधिक सादा और सस्ता बनाया जाय ।

चूँकि इन आदर्श विवाहों को सारे समाज में व्यापक बनाना है, इसलिए उनका स्वरूप ऐसा बनाना होगा जिससे इस कदम उठाने वालों को आवश्यक सम्मान मिले एवं अधिक लोगों को उसमें भाग लेने एवं प्रेरणा ग्रहण करने का अवसर मिले । विवाह का मंडप आकर्षक बनाया जाय, उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसी खुले स्थान पर रखा जाय, संस्कार बहुत ही प्रभावशाली ढंग से सुविज्ञ व्यक्तियों द्वारा कराया जाय, स्थानीय विचारशील लोगों को आशीर्वाद देने के लिए विशेष रूप से आमंत्रित किया जाय, उपस्थित लोग पुष्पमालाएँ और अपनी भावना के अनुरूप उपहार लेकर आवें । सम्भव हो तो छोटा जलपान भी रखा जाय । आशीर्वादों का क्रम प्रवचन एक हृदयग्राही रूप में रहे । जहाँ सम्भव हो वर-कन्या का जुलूस भी निकाला जाय । दूर-दूर से शुभकामना संदेश मँगाये जायें और बन पड़े तो अखबारों और पर्चों द्वारा इस आयोजन की जानकारी अधिकतर लोगों को करायी जाय । ऐसे कई विवाह मिल कर एक बड़ा सामूहिक आयोजन बन पड़े तो और भी उत्तम । इस प्रकार कुशल मस्तिष्क के लोग स्थानीय परिस्थिति के अनुसार इस विवाह कृत्य को ऐसा आकर्षक बनायें कि सादगी एवं मितव्ययता की पूर्ण रक्षा होते हुए भी उस प्रेरणा को अधिक व्यापक क्षेत्र में सम्मानित एवं प्रसारित किया जा सके ।

आज की परिस्थितियों में हिन्दू जाति की अन्तरात्मा पुकार-पुकार कर यह कह रही है कि विवाह में होने वाले अपव्यय के कारण उत्पन्न होने वाले उत्पीड़न से उसकी रक्षा की जाय । समय की पुकार को हमें सुनना-समझना चाहिए और उसकी पूर्ति के लिए युग प्रहरी की तरह हमें साहसपूर्वक कुछ करने के लिए अग्रसर होना चाहिए ।

बड़े परिवर्तन के लिए बड़े प्रयास करने पड़ेंगे

कोई स्थिति कितनी ही दयनीय अथवा अवांछनीय क्यों न हो पर जब वह अभ्यास में आ जाती है तो सह्य ही नहीं बन जाती, वरन् प्रिय भी प्रतीत होने लगती है । पुराने जमाने में यूनान के जेलखानों में कैदी अन्धेरी कोठरियों में रखे जाते थे, उन्हें प्रकाश के सूर्य सम्पर्क में नहीं आने दिया जाता था । लम्बी सजा भुगतने के बाद उनकी आँखें अँधेरा ही पसंद करती थीं । प्रकाश उन्हें असह्य हो जाता था अस्तु भाग कर अन्धेरे की ही तलाश करते और वापिस जेल में पहुँचने का प्रयत्न करते । अपने यहाँ भिक्षावृत्ति को मान्यता प्राप्त है । जिन्होंने वंश परम्परा से भिक्षा व्यवसाय अपना रखा है, वह उन्हें तनिक भी अनुचित या असम्मानजनक प्रतीत नहीं होता । गन्दगी साफ करने और मैला ढोने वाले मेहतरों की नाक उस दुर्गन्ध की अभ्यस्त बन जाती है । उन्हें दिन भर अपना वही काम करते रहने में कोई विशेष असुविधा नहीं होती । कसाई आदि के जो काम किसी अनभ्यस्त के लिए अत्यन्त विषाक्त प्रतीत होते हैं, वे ही उसे दैनिक कृत्य मानकर चलने वाले लोगों के लिए सरल स्वाभाविक बन जाते हैं ।

रूढ़ियाँ, मूढ़ताएँ, अवांछनीयताएँ, अन्ध परम्पराएँ भी अभ्यास में आते रहने पर सुहाने लगती हैं और विवेक की दृष्टि से उनमें सब कुछ निरर्थक ही नहीं हानिकर प्रतीत होते हुए भी उन रूढ़ियों को छोड़ते नहीं बनता । सुधारक समझे जाने वाले लोगों के घरों में भी अवांछनीय रूढ़िवादिता को प्रश्रय मिलता रहता है । विवाह-शादियों में अनावश्यक अपव्यय के विरोधी लोग भी समय पर अपने बच्चों के विवाह में वही पुरानी लकीर पीटने लगते हैं और अपनी कमजोरी को मजबूरी बताकर उसी पुराने ढर्रे पर लुढ़कने लगते हैं ।

नारी की दयनीय दुर्गति भी इन दिनों ऐसे ही अभ्यास में आ गई है, उसमें कोई हर्ज प्रतीत नहीं होता । पुरातन के प्रति सहज मोह होने के मानवीय स्वभाव ने उस स्थिति को सहन और स्वीकार कर लिया है । अस्तु, किसी क्षेत्र में उसका कोई खास विरोध नहीं होता । समाज सुधारक अपनी प्रगतिशीलता सिद्ध करने के लिए लेखों और भाषणों से नारी की वर्तमान स्थिति पर खेद प्रकट करते और सुधार की आवश्यकता बताते सुने जाते हैं, पर वे भी उस कार्य को इतना आवश्यक या महत्त्वपूर्ण नहीं मानते, जिनके लिए तत्काल कुछ करना या कोई कदम उठाना आवश्यक समझा जाय । किसी ने छोटी पुस्तक लिख दी तो बहुत, किसी ने कोई कन्या पाठशाला खुलवादी, किसी ने कोई महिला संगठन का कागजी ढाँचा खड़ा कर दिया तो बहुत, इससे आगे कुछ करने की आवश्यकता नहीं समझी जाती । जब इतने से ही मन को सन्तोष मिल जाता है और प्रगतिशीलता सिद्ध हो जाती है तो अधिक झंझट पालने के लिए कोई तैयार भी क्यों हो ?

पुरुष वर्ग को नारी की वर्तमान स्थिति यथावत् बनाये रहने में अपनी ओछी दृष्टि के आधार पर लाभ ही प्रतीत होता है । शिशु पालन एक अच्छा व्यवसाय है । दूसरे के शरीर का मनचाहा उपयोग करने की छूट हो और उसमें कोई विरोध-अवरोध उत्पन्न न हो तो उसे मोटी बुद्धि अपने लिए लाभदायक ही मान लेती है । पर्दे के पिंजड़े में कैद, अवांछनीय स्थिति में रहने की अभ्यस्त परम्पराओं में जकड़ी, प्रत्येक अनीति को धर्म के नाम पर सहन-स्वीकार, शिरोधार्य करने वाली नारी अधिक लाभदायक प्रतीत होती है । स्वतन्त्र बुद्धि का विकास होने पर, स्वाभिमान जाग्रत होने पर तो वह उचित-अनुचित की नुक्ताचीनी करने लगेंगी, तब कुछ भी करते और कराते रहना कठिन हो जायगा । यह सोचकर पुरुष का अन्तः मन उस सहज सुविधा को छोड़ने के लिए तैयार नहीं जो उसे चिरकाल से अनायास ही उपलब्ध है ।

नारी आत्महीनता की ग्रन्थि में बेतरह जकड़ गई है । वह अपने ऊपर से भरोसा बेतरह खो बैठी है । उसे मालिकों के आश्रय में ही खैर दिखाई पड़ती है । पेट के लिए रोटी, आश्रय, सुरक्षा आदि के लिए वे दूसरों पर ही अपने को अवलम्बित मानती है । ऐसी दशा में भला-बुरा जो कुछ सहना पड़े, उसे सहते रहने में ही विधि के विधान की पूर्ति अनुभव करती हैं । स्वतन्त्र व्यक्तित्व को अनेकों उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर उठाने पड़ते हैं । कैदी को किसी बात की चिन्ता नहीं रहती, इसलिये अभ्यस्त मन कैदी की स्थिति को निश्चिन्तता का सौभाग्य मान लेता है । पिंजड़े का पक्षी पेड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर रहने वाले साथियों की तुलना में अधिक संतुष्ट दिखाई पड़ सकता है । वह घोंसला बनाने से लेकर दाना ढूँढ़ने तक के अनेक झंझटों से बचा हुआ जो रहता है ।

सामन्ती सुविधाओं का उपयोग करने वाले पुरुष, हर भली-बुरी परम्परा को मान्यता देने वाला रूढ़िवादी समाज, दयनीय दुर्दशा का अभ्यस्त नारी वर्ग, यह तीनों ही मिलकर एक मर्मभेदी त्रिशूल की स्थिति उत्पन्न करते हैं और उसमें मानवीय प्रगति एवं सुख-शान्ति का हनन होता है । कसाई घर के वातावरण में विरोध के कोई लक्षण दृष्टिगोचर नहीं होते । दिन भर गला काटने और चमड़ी उधेड़ने वाले श्रमिक अपने धन्धे को आँखें मूँदकर बेहिचक चलाते रहते हैं । जिनकी पूँजी लगी है और मोटा मुनाफा मिलता है उन्हें भी कोई एतराज नहीं । जिन्हें माँस पकाना खाना है वे भी उचित-अनुचित के विवेचन का झंझट नहीं उठाते । सरकार को, समाज को कई तरह के टैक्स मिलते हैं और व्यावसायिक उत्पादनों का लाभ मिलता है । बेचारे पशु को ऐसी बुद्धि और स्थिति ही नहीं मिली है कि वह कुछ कारगर प्रतिरोध कर सके । अस्तु, मुद्दतों से कसाई घर बिना प्रतिरोध के चलते आ रहे हैं । यद्यपि हर दृष्टि से उनमें अनौचित्य ही अनौचित्य भरा पड़ा है । नारी की दयनीय दुर्दशा की विडम्बना भी मुद्दतों से अपनी जगह पर बनी हुई है और उसने यथास्थिति की मूकमान्यता प्राप्त कर ली है ।

यदि पचास प्रतिशत जन-समाज की, आधी दुनिया की, अवगति से मनुष्य समाज का पतन और मानवीय आदर्शों का हनन प्रतीत होता हो तो विचारशील वर्ग का काम है कि तथ्यों को जन-साधारण के सम्मुख रखें । हानियों से लोकमानस को अवगत करायें और अवांछनीयता के हटाने पर उसे जो उपलब्धियाँ मिल सकती हैं, उनके स्वर्णिम चित्र जन-चिन्तन की पृष्ठभूमि में अंकित करने का प्रयास करें । इतना हुये बिना वस्तुस्थिति को, अवांछनीयताजन्य हानियों को समझा ही न जा सकेगा और परिवर्तन के लिये कोई बड़ा प्रयास खड़ा ही न हो सकेगा । कहना न होगा कि इतनी बड़ी, इतनी व्यापक और इतनी गहराई तक जड़ जमाये हुए बुराई को उखाड़ फेंकना हल्के मन से आरम्भ किये गये छुट-पुट प्रयत्नों से सम्भव न हो सकेगा । उसके लिये अति प्रचण्ड और अति व्यापक प्रयास करने होंगे और वैसा तभी हो सकता है, जब उसे प्राथमिकता मिल सकने जैसी आवश्यकता अनुभव किया जाय । लोकमानस को इस स्थिति तक गरम करना नारी उत्कर्ष की दिशा में उठाया हुआ पहला चरण हो सकता है ।

स्वराज्य गाँधीजी की पोटली में बँधा हुआ नहीं रखा था और न अँग्रेज ही उसे उपहार में देने के लिए लालायित थे । सन् १८५७ से लेकर १९२१ तक के ४० वर्षों के भीतर ही भीतर ही जो हाँडी पकती रही, उसका विस्फोट स्वतन्त्रता आन्दोलन के रूप में सामने आया और सन् २१ से ४७ तक पच्चीस वर्ष तक वह ज्वालामुखी लावा उगलता रहा । इस लम्बी अवधि में जिन्हें ताने-बाने बुनने पड़े हैं और सरंजाम खड़े करने पड़े हैं, उनकी छाती पर हाथ रखकर देखा जा सकता है कि सन् ४७ में स्वराज्य मिलने के लिए कितना कुछ करना पड़ा है । जनता की आकांक्षा स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए जब अदम्य सिद्ध हो गई थी, तब अँग्रेजों ने अपना रवैया बदला और तभी गाँधी का आन्दोलन सफल कहलाया । इससे पूर्व कितने ही गाँधी अपने त्याग, बलिदान के बढ़े-चढ़े प्रमाण देते रहे थे, पर बात तब बनी जब वातावरण उतना गरम हो गया । इसमें परिवर्तन के अतिरिक्त और कोई विकल्प ही शेष न था ।

नारी जागरण विश्व की आधी आबादी की समस्या है । वह जितनी बड़ी है, उतनी ही महत्त्वपूर्ण भी है । उसके उलझे रहने से जितनी हानि है, सुलझने पर उतना ही लाभ भी है । खाई के गड्ढे की तली और मीनार की चोटी के बीच का नाप समतल की अपेक्षा दूना हो जाता है । नारी स्वाभाविक स्थिति में रहती तो जमीन पर पड़ी मानी जाती । गिराई गई तो खाई की तली में जा पहुँची । अब यदि उसकी ईश्वरप्रदत्त सहज स्वाभाविक वरिष्ठता तक उछाल दिया जाय तो वह मीनार की चोटी पर दिखाई पड़ेगी और समुन्नत, सुसंस्कृत विश्व के भविष्य का अभिनव निर्माण करने में योग देगी । हमें पतन की हानि और उत्थान के लाभों पर हजार बार विचार करना चाहिए और यदि परिवर्तन का औचित्य प्रतीत हो तो वातावरण को गरम करने में सारी शक्ति झोंक देनी चाहिए ।

आज स्त्री समस्या मात्र एक मनोरंजक चर्चा का विषय बनी हुई है । आदिवासी, वनवासी लोगों के विचित्र रहन-सहन और रीति-रिवाजों पर कभी-कभी पत्र-पत्रिकाओं में सचित्र लेख छपते रहते हैं । वे मात्र कौतूहल वृद्धि और मनोरंजन के लिए होते हैं । उनके प्रतिपादन में कहीं भी यह दर्द उभरता नहीं दीखता है कि इन विचित्रताओं को सामान्य मानवीय रहन-सहन तक विकसित करने के लिए क्या किया जाना चाहिए ? मनुष्य परिवार के बीच इतने ऊँचे-नीचे टीले और खड्ड किस प्रकार समतल किये जा सकते हैं । ठीक इसी प्रकार नारी की कितनी ही भिन्नताओं और दुर्बलताओं से मनोरंजन करने भर के लिए लेख छपते हैं । उनके चित्र भी प्रायः इसी निम्न-स्तरीय विनोद की पूर्ति के लिए प्रकाशित होते हैं । नृत्य अभिनय आदि जहाँ भी नारी के प्रसंग प्रस्तुत किये जा रहे होंगे, वहाँ नारी की वरिष्ठ गरिमा का प्रस्तुतीकरण, आज की उसकी दयनीय दुर्दशा के कारण, भविष्य में उदीयमानी नारी गौरव में उज्ज्वल भविष्य का निर्माण जैसा कहीं कुछ दृष्टिगोचर न होगा । इस उपेक्षा के पीछे यह तथ्य झाँकता है कि प्रस्तोता वर्ग नारी के पतन-उत्थान के सम्बन्ध में तटस्थ है । नारी की नियति से कौतुक-कौतूहल की सरसता किस प्रकार बढ़ाई जा सकती है, इतना भर उसका अभीष्ट है । हमारा साहित्यकार, कलाकार, कवि, गायक, अभिनेता और नेता अपने कर्त्तव्य की इतिश्री यहीं तक सीमित मान बैठा है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नारी अपकर्ष से यदि सचमुच ही हानि प्रतीत होती हो और उसके उत्थान में व्यक्ति, परिवार और समाज का सचमुच ही लाभ दिखाई पड़ता हो तो स्थिति को बदलने के लिए कुछ बड़े कदम बढ़ाने पड़ेंगे और उसके लिए बड़ी तैयारी करनी पड़ेगी । इन सारी तैयारियों की सार्थकता-सफलता तभी सम्भव है, जब उस दिशा में लोकमानस इतना गरम किया जाय, जिससे हर व्यक्ति परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव करने लगे । इससे कम में लोकशक्ति को प्रस्तुत अवांछनीयता के विरुद्ध खड़ा न किया जा सकेगा और यदि उतना न बन पड़ा तो विश्व की आधी जनसंख्या को पतन के गर्त में से खींच कर समतल धरातल पर लाना, तदुपरान्त उसे उसके गरिमा भरे पद पर आसीन करना, यह दुहरा प्रयोजन पूरा हो ही नहीं सकेगा ।

नारी जागरण की दिशा में प्रथम चरण यही हो सकता है कि उसकी आवश्यकता जनसाधारण को समझाई जाय, प्रस्तुत परिस्थिति से हो रही हानि को जन-चिन्तन में इतनी गहराई तक प्रवेश कराया जाय कि हर व्यक्ति चौंक पड़े कि अब तक की गई उपेक्षा से कितना अधिक अहित हो चुका । मानवीय गरिमा कितनी अधिक कलंकित हो चुकी और अनीति को कितने लम्बे समय से प्रश्रय मिल चुका । कलंक को धोने के लिए गहरे घावों पर मरहम लगाने की आवश्यकता जब तक अनुभव न की जायेगी, तब तक उसका उपाय भी गम्भीरतापूर्वक नहीं सोचा जायेगा और स्पष्ट है कि बड़ी समस्याओं के बारे में यदि उपेक्षापूर्ण, अन्यमनस्क दृष्टिकोण अपनाया जाता रहा तो वे कभी भी हल न हो सकेंगी । मात्र विडम्बनाएँ ही मनोविनोद के लिये खड़ी की जाती रहेंगी ।

यह तथ्य हजार बार समझा जाना चाहिए कि पुनरुत्थान के लिए जिस विशिष्ट अनुदान की, जिस पुनर्वास की, जिस संघर्ष की आवश्यकता पड़ेगी, उसे जुटाया जा सकना केवल जाग्रत, विक्षुब्ध और आतुर, प्रखर लोकमानस विनिर्मित होने पर ही सम्भव हो सकेगा । आज हमें सर्वतोभावेन इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही कटिबद्ध होना चाहिए ।

दहेज कुप्रथा के भयंकर दुष्परिणाम

दहेज की कुप्रथा एक प्रकार से मानव जाति का कलंक है । जिस वस्तु को कोई सीधे ढंग से लेने तक को तैयार न हो, उसे लेने में तभी तैयार हो जबकि उसके साथ में कोई कीमती चीज रिश्वत स्वरूप दी जाय, तो समझना चाहिए कि उसका कुछ भी महत्त्व नहीं है उसे व्यर्थ की वस्तु समझा जा रहा है ।

बूढ़ी गाय या नन्हीं-सी बछिया को गौदान में लेते हुए प्रत्येक पुरोहित आनाकानी करता है, क्योंकि वह जानता है कि इसे जितने पैसे का चारा रोज खिलाना पड़ेगा, यह उसके बदले में उतना लाभ न देगी । दस रुपये का भूसा खाएगी तो एक रुपये का गोबर करेगी । इसे रखने में रोज ही नौ रुपये का नुकसान है । उसे क्यों लें ? मुफ्त में लेना भी उसको भारी पड़ता है । इसलिए पुरोहित लोग ऐसी गाय को दान स्वरूप लेने के लिए भी तभी तैयार होते हैं, जब उसके साथ यजमान कुछ सोना-चाँदी, अन्न, धन, कपड़ा आदि देता है । मुख्य लोभ पुरोहित को उस गाय का नहीं वरन् साथ में आने वाले सामान का होता है । यही बात आज कन्याओं के बारे में भी चरितार्थ हो रही है ।

यह परिस्थिति कन्या की हीनता प्रकट करती है । जो समाज अपनी लड़कियों को हीन समझता है, उनका मूल्य नहीं समझता है, उनका मान नहीं करता, वह निश्चित ही एक पतित समाज है । तिरस्कृत नारी के हृदय में आत्म-गौरव के भाव नहीं उठ सकते । वह अपनी महत्ता, उपयोगिता एवं शक्ति का अनुभव नहीं कर सकती । जिसके आत्म-गौरव को इस प्रकार दबा दिया गया हो, विवाह की चर्चा के दिनों में जिसने अपनी व्यर्थता को अनुभव कर लिया हो, उसका अन्तःकरण कभी तेजस्वी, शौर्य, साहस एवं वीरता से परिपूर्ण नहीं बन सकता । उसका मन सदा दबा-दबा-सा रहेगा ।

इन सब क्षमताओं को, आशा, उमंग, प्रतिभाओं और विकासोन्मुख व्यक्तियों को कुचल डालने का कारण यह दुष्ट दहेज है । जो माता-पिता वर-पक्ष वालों को संतुष्ट न कर सकने के कारण तिरस्कृत हुए, या अपनी खुशहाली खोकर कर्जदार एवं दीनहीन बन गये उनकी कन्याएँ क्या कभी यह अनुभव कर सकती हैं कि उनका भी समाज में कुछ उपयोग है ? खाने को रोटी और रहने को छाया देने के बदले में जिन वर-पक्ष वालों ने अपने आगामी खर्च का पूरा मुआवजा वसूल कर लिया वे कन्या का कोई मूल्य या महत्त्व समझते हैं यह नहीं कहा जा सकता । जिस कन्या के मस्तिष्क पर उसकी निरुपयोगिता का अनुभव कराया गया है वह बेचारी अपने व्यक्तित्व का कभी विकास कर सकेगी ? इसकी आशा मनोविज्ञानशास्त्र के अनुसार कभी नहीं की जा सकती । जिसका मनःक्षेत्र इस प्रकार कुचल दिया गया है उसके शरीर और मन के द्वारा विनिर्मित होने वाले बालक भी मानसिक दृष्टि में ऐसे ही दुर्बल होंगे । महापुरुष होने के योग्य प्रतिभा उनमें होनी सम्भव नहीं । दहेज के मानसिक कष्ट के कारण अन्तर्द्वन्द्व, विवशता एवं क्षोभ से भरे हुए अन्तर्मन वाली लड़कियाँ अधपगली, उद्दंड, रोगी, दुश्चरित्र बालक ही उत्पन्न कर सकती हैं । दहेज का पिशाच आज घर-घर में अपने प्रसाद स्वरूप ऐसे ही अवांछनीय बालकों की भरमार किए दे रहा है । यह प्रक्रिया जारी रही तो कुछ ही पीढ़ियों में हमारा वंश शारीरिक और मानसिक दृष्टि से बहुत ही हीन दिशा को पहुँचे बिना न रहेगा ।

दहेज देने वाले की आर्थिक स्थिति बिगड़ती है, उसे उन सम्बन्धियों के प्रति मन ही मन भारी क्षोभ और द्वेष रहता है । शिष्टाचार वह निवाह सकता है, जमाई को बढ़िया भोजन कपड़े दे सकता है, पर भीतर ही भीतर जलने वाली उस घृणा व द्वेष की अग्नि को हटा नहीं सकता जो उन नर पशुओं के धन के लालच ने उसे परेशान करके सुलगा दी है । मजबूरी और बेवसी में उसे शिष्टाचार निवाहना पड़ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । आदर एवं शिष्टाचार भरी बातें भी कहनी पड़ती हैं, पर वह सब होता दिखावटी ही है । भीतर की घृणा उस शिष्टाचार की कृत्रिमता का पर्दा फाड़कर यदाकदा प्रत्यक्ष ही सामने आती रहती है । दहेज वाला जमाई बहुत महँगा पड़ा है, इसलिये सास-ससुर बाहरी मन से उसे देख कर प्रसन्न हो सकते हैं, पर भीतर ही भीतर तो उनकी आर्थिक व्यवस्था को नष्ट करने वाला यही यमराज है । उन्हें सच्ची श्रद्धा—सच्चा स्नेह ससुराल वालों से न कभी मिलता है न मिल सकता है । ऐसी मनोभूमि की सुसराल पाकर कोई भी विचारशील जमाई यही अनुभव कर सकता है कि काश, बिना दहेज का विवाह करके मैं अपनी पत्नी और सुसराल वालों की दृष्टि में आदर्शवादी एवं सज्जन सिद्ध हुआ होता तो मुझे उनके स्नेह और सद्भाव से इस प्रकार वंचित न होना पड़ता । इन लोगों की दृष्टि में मेरा स्थान अर्थ-पिशाच नर-पशु जैसा न होता । अपनी विचारशीलता के क्षणों में किसी भी भले जमाई को वह दहेज के पैसे पैने छुरे और विष के घूँटों के समान दुःखदायी अनुभव होते हैं ।

लड़के का बाप अपनी शान, प्रतिष्ठा और अर्थ लाभ की दृष्टि से दहेज माँगता है । इतनी ही बात नहीं है । लड़के भी अपनी शादी में अधिक दहेज पर कीमती चीजें मिलना अपनी शान, अपनी पढ़ाई और प्रतिष्ठा की कसौटी समझते हैं । साथ वाले लड़कों के सामने बढ़ा-चढ़ाकर बातें करने में वह अपनी शादी में खूब दहेज मिलने की बात को प्रधानता देते हैं । अमुक लड़के की शादी में इतना दहेज मिला, मैं कम दहेज की शादी क्यों करूँ ? ऐसे ओछे विचारों के लड़के आजकल के विवाह के समय कन्या के पिता से मोटर साइकिल, रेडियो, घड़ी और भी न जाने क्या-क्या माँगते हैं । कोई-कोई तो आगे की पढ़ाई का खर्च देने, विलायत भिजवाने, नौकरी लगवाने आदि की फर्मायशें पेश करते हैं । देखा जाय तो यह माँगें उन लड़कों की हीनता और दीनता के चिह्न हैं ।

क्या कोई स्वाभिमानी नारी ऐसे पति को सच्चा प्यार कर सकती है जिसने विवाह के समय अमुक-अमुक चीजें दहेज में लेने का हठ किया था । इसमें उसका क्या गौरव, क्या बड़प्पन था ? जो लड़का अपने हाथ, पैर से कमाकर अपनी जरूरत पूरी करने में समर्थ न हो वह मोटर साइकिल, घड़ी आदि की जिद सुसराल वालों से करे तो बात समझ में आती है । गरीब खुद अयोग्य है, खुद कमा नहीं सकता, तो सुसराल वालों से गिड़गिड़ा कर कुछ चीजों की भीख माँगे तो उसे दया का पात्र समझ कर क्षमा किया जा सकता है, पर जो लड़के अपने आपको सुशिक्षित कहते हैं, बड़े घर वाले बनते हैं, अपने घर की आर्थिक स्थिति पर गर्व करते हैं, उन्हें इस प्रकार गिड़गिड़ा कर कन्या के पिता से अपने लिए शौक-मौज की चीजें माँगना किस प्रकार शोभनीय कहा जा सकता है ? जिद करके या दबाव देकर, डराकर, नाराज होकर या रौब गाँठकर बेचारे कन्या के पिता से इस प्रकार कुछ ले भी लिया गया तो निश्चय ही इसमें बड़प्पन की कोई बात नहीं है । इस प्रकार के उपहार लड़के की तुच्छता के ही प्रमाण माने जा सकते हैं । "सुसराल वालों ने खुशी-खुशी उसकी योग्यता से प्रभावित होकर यह चीजें दी हैं" यह कहना और उसमें अपने बड़प्पन का अनुभव करना केवल एक आत्म-वंचना है । किसी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष डर की वजह से चाहे वह डर लड़के को या उसके पिता की नाराजी का ही क्यों न हो—जो वस्तु दी जाती है, उसे उपहार नहीं कहा जा सकता । यह या तो रिश्वत है या फिर राहजनी । बिना मारे-पीटे केवल डर दिखाकर या प्रसन्न होने का लोभ दिखाकर शक्तिशाली लोग ऐसे भी बहुत कुछ बसूल कर लेते हैं । दहेज इसी प्रकार की वसूली है । समझदार लड़कों के लिये तो यह नितान्त लज्जास्पद और अशोभनीय है ।

हिन्दू जीवन में दहेज एक ऐसा घुन है जो उसे दिन-दिन खोखला करता चला जा रहा है । कन्या के जन्म लेते ही घर-घर में मातम छा जाता है । यदि पुत्र का जन्म हो तो गीत गाये जाते और बधाये बाँटे जाते हैं, पर कन्या का जन्म सबको बुरा लगता है, यहाँ तक कि जिस माता ने नौ महीने पेट में रखकर उसे जन्म दिया था वह भी अपने कलेजे के टुकड़े उस नन्हें शिशु को देखकर इसलिए प्रसन्न और संतुष्ट नहीं होती, क्योंकि वह कन्या है ।

यह खुला रहस्य है कि कन्या और पुत्र के बीच इतनी बड़ी असमानता का कारण दहेज है । लड़के का विवाह होता है तो उसे बहुत धन, जेवर, कपड़ा, रेडियो, साइकिल, घड़ी, फर्नीचर, बर्तन और न जाने क्या-क्या मिलता है । कन्यापक्ष वाले वर-पक्ष वालों की खातिर और खुशामद इतनी दीनता के साथ करते हैं जैसे किसी चोर को पुलिस थानेदार की करनी पड़ती है । यह मान, गौरव तथा धन लाभ प्राप्त करने के बाद भी कन्या को स्वीकार करना लड़के वाले कन्या पक्ष वालों पर एक बड़ा अहसान मानते हैं और इस अहसान के बदले में वे समय-समय पर धन, वस्तुएँ तथा मान-सम्मान प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध करते रहते हैं । लड़की वाले को यह सब सहन करना पड़ता है, क्योंकि वह बेचारा दोषी है, पापी है, भाग्यहीन है । कन्या का पिता होना हिन्दू जाति में एक बड़ा दुर्भाग्य है । इसका दण्ड कन्या के पिता को जितना भी मिले मन मसोस कर सहन करने के अतिरिक्त उस गरीब के पास और कोई चारा नहीं है ।

जिस कन्या का ब्याह होने वाला है वह प्रायः स्यानी होती है, भावुक भी, समझदार भी । माता-पिता को अपने कारण चिंता में डूबा हुआ यह देखती है, सुनती-समझती है, उसके कोमल हृदय पर इसकी कितनी चोट पहुँचती है यह समझना हर किसी का काम नहीं । उस दर्द को वे ही अनुभव कर सकते हैं जिन्हें ईश्वर ने संवेदनशील आत्मा दी हो, जो दूसरों की पीड़ा अपनी पीड़ा के समान अनुभव करते हों । जिन पिता-माता ने इतने लाड़-प्यार और कष्ट के साथ पाल-पोस कर बड़ा किया था उन्हें इस प्रकार अपने कारण दुःखी देखकर लड़की को सचमुच ही बड़ी चोट लगती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कई तो व्यथा में आत्महत्या तक कर लेती हैं । कलकत्ता का स्नेहलता काण्ड प्रसिद्ध है । इस भावुक लड़की ने अपने घर वालों को दहेज की समस्या से परेशान देखकर अपने कपड़ों पर तेल छिड़क कर आग लगाली थी और दहेज की बलिवेदी पर अपना फूल-सा शरीर जलाकर खाक कर दिया । उसके पास जो मार्मिक पत्र पाया गया उसमें दहेज के दुष्परिणाम का ऐसा दर्द भरा चित्रण था कि उसे पढ़ने पर पाषाण हृदयों को छोड़कर किसी भी सहृदय व्यक्ति की आँखों से आँसू बरस पड़ सकते हैं ।

स्नेहलता की घटना एक नहीं, अकेली नहीं । न जाने हर साल कितनी नन्हीं कलियों को यह दहेज का पिशाच अपनी दाढ़ों से चबा जाता है, उन घटनाओं की कोई खबरें जब छन-छन कर अखबारों में आती हैं तभी कुछ थोड़ा-सा ज्ञान हमें हो पाता है । कम दहेज मिलने पर सुसराल में जाने पर लड़कियों को जो यंत्रणाएँ दी जाती हैं, जो तिरस्कार होता है, माता-पिता की शान में जो अपमानजनक शब्द सुनने पड़ते हैं, उन आघातों को सहन कर सकने में असमर्थ कितनी ही लड़कियाँ हर साल फाँसी लगाकर, तेजाब छिड़क कर, विष खाकर, घुल-घुल कर तथा न जाने और भी किस-किस प्रकार आत्महत्या करती रहती हैं । जो जीवित हैं उनमें से लाखों के दिल टूट चुके होते हैं ।

दहेज के लालची लड़के के पिता के लिए भी दहेज एक उलझन भरी समस्या है । भरपूर दहेज ठहरा लेने पर उसके सामने भी अपनी इज्जत आबरू का प्रश्न सामने आता है । यदि बारात बढ़िया सजी न बनी, बाजे, आतिशबाजी, दूल्हे की सवारी अच्छी न रही तो देखने वाले समझेंगे, लड़के का पिता कंगाल है । भला कंगाल कहलाना वह कैसे बर्दाश्त कर सकता है । ऐसे मौकों पर अपनी बात रखने—नाक ऊँची करने, वाहवाही लूटने की दृष्टि में वह अधिक से अधिक खर्च करना चाहता है । वधू के लिए चढ़ाए जाने वाले कपड़े और जेवर उसकी प्रतिष्ठा की कसौटी बन जाते हैं । उनमें जितना ज्यादा पैसा लगेगा उतनी ही वाहवाही मिलेगी, लड़की वालों पर उतना ही रौब रहेगा । इस प्रकार उसे जो दहेज प्राप्त हुआ, वह भी घर रखा नहीं रहा । सब उन तीन-चार दिनों में ही बर्बाद हो गया वरन् कुछ घर से भी चला गया । जो जेवर बनवाये गये, जो कीमती कपड़े खरीदे गये वह धन एक प्रकार से 'मृत-धन' ही माना जायगा । जो नकदी मिली थी वह जेवर, कपड़े, बारात, जेवनार, आतिशबाजी आदि में उड़ गई । फर्नीचर, रेडियो, घड़ी, मिठाई, पकवान, पलंग, बर्तन, तोशक, तकिये आदि जो अल्लम-गल्लम मिला, मन को समझाने की प्रसन्नता का ही माध्यम है अन्यथा उससे भी कुछ लाभ नहीं । जब यह चीजें नहीं थीं तब भी घर का कोई काम रुका हुआ न था और अब जब कि यह नई प्रदर्शिनी घर में और लग गई है तब भी किसी रुकी हुई आवश्यकता की पूर्ति उससे नहीं हो रही है ।

विचारपूर्वक देखा जाय तो दहेज की प्रथा कन्या वर दोनों ही पक्षों में से किसी के लिए भी उपयोगी नहीं है । लड़की वाला बर्बाद हो जाता है और लड़के वाले को सिवाय अपनी नाक ऊँची रखने के आर्थिक दृष्टि से कुछ लाभ नहीं होता, फिर वह समस्या उस लड़के वाले के लिये भी तो है, क्योंकि कोई गृहस्थ ऐसा नहीं होता जिसमें केवल लड़के ही लड़के होते हों, उसे हर विवाह में दहेज मिलता ही हो । जिसके यहाँ लड़का है उसके घर लड़कियाँ भी होती हैं । जब उन लड़कियों के विवाह का समय आता है तब उसकी भी वही दीन दशा हो जाती है । जब वह अपनी लड़की की शादी करने दूसरों के यहाँ जाता है तो उसको भी उन्हीं हथकंडों का सामना करना पड़ता है जो उसने अपने लड़के की शादी में अपनाये थे । फलस्वरूप उसे भी यही कठिनाई उठानी पड़ती है जो अन्य लड़की वालों को उठानी पड़ा करती हैं ।

विवाहों में होने वाली फिजूलखर्ची की व्यर्थता को सभी लोग जानते हैं, उससे उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों से भी लोग परिचित हैं, हर गृहस्थ को इन आपत्तियों का सामना आये दिन करना पड़ता है फिर भी आश्चर्य की बात यह है कि लोग अपनी मानसिक कायरता हटाने और रूढ़िवाद की अंधी जंजीरों को तोड़ने का साहस नहीं करते । लोक-दिखावे की झूठी वाहवाही लेने की मूर्खता के पीछे पागल होकर लोग यह नहीं देखते कि चार दिन का तमाशा बनाने के लिए क्यों इस तबाही और बर्बादी को मोल लिया जाय ।

वर-पक्ष वालों का कर्त्तव्य है कि दहेज लेने की माँग छोड़ें, अपने से गरीब घर की कन्या को अपनावें ताकि वह अपने पिता के यहाँ से अधिक अच्छी स्थिति में आकर सुखी और सन्तुष्ट रहे । कम से कम बाराती ले जाकर बहुत ही मामूली खर्च में विवाह-कार्य सम्पन्न करें । इसी प्रकार कन्या पक्ष वालों का कर्त्तव्य है कि जेवर और बढ़िया कपड़े की शानदार बारात, गाजे-बाजे, आतिशबाजी आदि व्यर्थ की खर्चीली चीजों का बहिष्कार करें । लड़के वालों का पैसा इन बेकार बातों में खर्च न होने दें । दोनों पक्ष एक दूसरे की आर्थिक बचत का ध्यान करें । जो देना हो दोनों पक्ष लड़के-लड़की के भावी जीवन को उन्नतिशील बनाने के लिए उनके नाम पर जमा कर दें । कोई स्थायी उपयोगी चीज उन्हें दे दें ।

दहेज एक मन्द विष है जिसे पीकर हिन्दू जाति धीरे-धीरे अपनी आत्महत्या करती जाती है । इस विष की बुराई से यदि हम समय रहते सावधान न हुए, उस छुरी को अपने कलेजे से चिपकाये रहना हमने न छोड़ा, तो हम सर्वनाश के जिस गर्त में गिरने जा रहे हैं उसकी गति और भी तीव्र हो जायेगी । अच्छा यही है कि हम समय रहते समझें, सोचें और इस सत्यानाशी कुप्रथा का जितनी जल्दी हो सके काला मुँह कर डालें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गरीब लोग अमीरी का स्वाँग न बनाएँ

भारतीय समाज की परम्परा और गरिमा असंदिग्ध है । अपने देश के पास असीम प्राकृतिक साधन हैं । इस देश के नागरिकों में शौर्य, पराक्रम, सूझबूझ एवं क्रिया-कौशल की भी कमी नहीं रही है । इतिहास के पृष्ठ साक्षी हैं कि विश्व सभ्यता का उदय इसी भूमि से हुआ और मानवीय उत्कर्ष के असीम आधार यहीं से संसार के कोने-कोने में निर्यात किये गये । भावनात्मक उत्कृष्टता एवं चारित्रिक आदर्शवादिता का यह देश अनादि काल से धनी रहा है और यहाँ घर-घर में नर-रत्न उत्पन्न होने का गौरव संसार भर में प्रख्यात रहा है । भौतिक और आत्मिक उत्कृष्टता के कारण इस देश के नागरिक देव मानवों में गिने जाते रहे हैं ।

इतना गरिमा सम्पन्न देश किन कारणों से पिछड़ा और हजार वर्ष की लम्बी पराधीनता के अन्तर्गत विदेशियों द्वारा पद-दलित हुआ, इसका गम्भीर पर्यवेक्षण करने पर एक ही तथ्य सामने आता है कि कुरीतियों और मूढ़-मान्यताओं का घुन इस सुदृढ़ शरीर को खोखला बनाता चला गया और उसके ऊपर खड़ी हुई गौरवमयी अट्टालिकाएँ जमीन पर आ गिरीं ।

साधनों के अभाव में कोई देश दुर्बल नहीं बनता । कमजोरी तो दृष्टिकोण की संकीर्णता और दूरदर्शिता में सन्निहित रहती है । मुट्ठी भर विदेशी आक्रमणकारी इस देश में आये और सरलतापूर्वक पैर जमाते चले गये । इसमें उनकी समर्थता नहीं अपनी आन्तरिक दुर्बलता ही प्रधान कारण थी । यों शक्ति और साधनों की दृष्टि में भारत उन दिनों भी बहुत समर्थ था ।

आन्तरिक दुर्बलताओं में कुरीतियाँ और मूढ़-मान्यताएँ ही प्रधान कारण होती हैं । उथली दृष्टि के कारण बेतुकी और बेढंगी गतिविधियाँ उपज पड़ती हैं और उनके कारण जो धन, समय, श्रम एवं चिंतन का अपव्यय होता है, फलतः सशक्तता बनाये रहने वाले और प्रगति का पथ प्रशस्त करने वाले साधन घट जाते हैं । सामूहिक दुर्बलता जब भी आती है, इसी प्रकार आती है । अपने देश में भी यही हुआ और पिछड़ापन सिर पर लद गया । विश्व-विजेताओं को हर दिशा से वह सहन करना पड़ा जिसे सहने की स्वस्थ परिस्थितियों में कोई कल्पना भी नहीं की जा सकती थी ।

किसी जमाने में चार वर्णाश्रम विभाजन की स्वस्थ परम्परा स्थिर रखने की दृष्टि से बने थे, पर पीछे उनमें विकृति घुसी तो जन्मजाति का रूप बना और फिर उसमें ऊँच-नीच की मान्यता का विष फैल गया । एक ही जाति, वंश, वर्ण और समाज के लोगों में से, कल्पित जाति-पाँति की मान्यता अपनाकर कुछ लोग अपने को ऊँचे मानें और अहंकार से अकड़े फिरें तथा दूसरे मानवीय अधिकारों से वंचित रहकर नीच माने जाने की आत्महीनता से प्रताड़ित रहें, इसे दुर्भाग्य के अतिरिक्त क्या कहा जाय । इसी विवेक ने एक समाज को जाति-पाँति के नाम पर अनेकों समाजों में बाँटा । राष्ट्र को दुर्बल किया । अछूत विधर्मियों की ओर खिसकते चले गये । विद्वेष पनपा और अन्ततः राष्ट्र का विभाजन होकर रहा । इस विपत्ति का कारण जाति विभेद को भी कहा जा सकता है ।

अपने समाज में कुरीतियों का अन्त नहीं । नारी को पर्दे में कैद कर देना और उसे नर की सम्पत्ति समझकर पशुवत प्रतिबन्धित किया जाना, मानवीय न्याय की दृष्टि से कितना गर्हित है, इसे कोई भी विचारशील व्यक्ति भली-भाँति समझ सकता है । वेश और वंश का लबादा ओढ़कर ८० लाख समर्थ व्यक्ति धर्म की दुहाई देकर भिक्षा व्यवसाय अपनायें तो उससे समाज पर कितना आर्थिक भार पड़ता है और राष्ट्रीय स्वाभिमान को कितनी क्षति पहुँचती है इसे आसानी से समझा जा सकता है । मृतक भोज, भूत-पलीत, भाग्यवादिता, ज्योतिष, शकुन, मुहूर्त, पशुबलि जैसी कुरीतियों में अपने समाज का कितना धन, समय, श्रम एवं चरित्र नष्ट होता है इसका लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जा सके तो प्रतीत होगा कि उपयोगी कार्यों में लगाकर प्रगति का पथ प्रशस्त कर सकने वाली शक्ति किस प्रकार इन कुरीतियों के जंजाल में फँसकर बेतरह नष्ट होती है । यों विवेक का उदीयमान सूर्य इस अज्ञानान्धकार को क्रमशः हटाता जा रहा है फिर भी जो कुछ शेष है वह भी कम कष्टकारक और कम चिन्ताजनक नहीं है ।

प्रस्तुत कुरीतियों में सबसे अग्रणी है—विवाह-शादियों के अवसर पर खेला जाने वाला गरीबों द्वारा अमीरी प्रदर्शन का भौंडा नाटक । इस अवसर पर औसत भारतीय की मनःस्थिति लगभग वैसी हो जाती है जैसी कि नशे में धुत्त उन्मादियों की होती है । आज इस आत्मघाती, सर्वनाशी स्वाँग को 'विवाहोन्माद' का नाम दिया जाय तो कुछ अनुचित न होगा । बेटी वाले और बेटे वाले उन दिनों इस मनःस्थिति में होते हैं कि इस अवसर पर अपने को अमीर सिद्ध करने के लिए जितना कुछ आडम्बर रचा जा सकता हो रचना चाहिए । इस चिन्तन के पीछे अमीरी को मनुष्य के बड़प्पन का और प्रतिष्ठा का चिह्न समझे जाने की मान्यता है । वे सोचते हैं कि किसी के अमीर होने का विज्ञापन इस प्रकार हो सकता है कि वह अपने पैसे का अपव्यय हंगामी प्रदर्शनों में करके दिखाये । इसी मान्यता के आधार पर बारात के नाम पर अनावश्यक लोगों की भीड़-भाड़ जमा करना, कीमती दावतों का सरंजाम जुटाना, आतिशबाजी, बैण्ड-बाजे आदि के तमाशे खड़े करना, देन-दहेज, जेवर, उपहारों के पहाड़ जैसे आडम्बर इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए खड़े किए जाते हैं और अन्ततः वे इतने महँगे पड़ते हैं कि वह भार दोनों ही पक्षों का हर दृष्टि से कचूमर निकाल कर रख देता है ।

इस युग में अमीरी बड़प्पन की निशानी नहीं रही । अब आर्थिक समानता की आवश्यकता समझी जा रही है और धनवानों को चोर, कृपण, शोषक आदि नामों से आये दिन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गालियाँ पड़ती हैं । अमीरी के फलस्वरूप कोई आराम उठाये मौज-मजा करे तो भी एक बात है, पर उस संचित धन को कोई भौंड़े प्रदर्शनों में होली की तरह फूँक रहा हो तो समझदारी के क्षेत्र में उसे कोई प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी । वरन् ऐसे व्यक्ति को ओछा, बचकाना, फूहड़ आदि नाम देकर धिक्कारा ही जायगा ।

विवाह-शादियों के अवसर पर गरीबों का अमीरी का स्वाँग रचना और पैसे की होली फूँक कर अपने बड़प्पन का ढिंढोरा पीटना जिन लोगों को अच्छा लगता है उनकी बुद्धि पर तरस ही खाया जा सकता है । सम्भवतः वे लुटेरे सामन्तवादियों द्वारा मध्यकालीन भ्रष्टाचार के उद्धत प्रदर्शनों की नकल बनाते और उन्हीं की दुनिया में रहते प्रतीत होते हैं, जबकि आज की विचार पद्धति और परिस्थिति जमीन-आसमान जितनी बदल गई है । आज न अमीरों का जमाना है और न ठाटबाट दिखाने के अपव्यय की कहीं कोई प्रशंसा है । सच तो यह है कि यह दोनों ही बातें अप्रतिष्ठा का कारण बन गई हैं । समय को न पहचानने वाले किसी सड़े-गले समय की नकल इन दिनों भी बनायें तो उन्हें पिछड़े हुये लोग ही कहा जा सकता है । ऐसे लोग अपने मुँह 'मियां मिट्ठू' बन सकते हैं । कोई उन्हीं जैसा मूर्ख वाहवाही भी दे सकता है पर समझदार वर्ग में उनको उपहासास्पद मानकर भर्त्सना योग्य ही ठहराया जायगा ।

विवाह मानवीय प्रकृति की एक सहज आवश्यकता है । भौतिक जीवन की कई सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए नर-नारी साथ-साथ रहकर गृहस्थ बसाते और एक दूसरे की सहायता करते हुए क्रिया-कलाप में सुविधा उत्पन्न करते हैं । यह प्रचलन प्रकृति प्रेरणा की एक अति सामान्य प्रक्रिया है । हर व्यक्ति को जन्म लेना और मरना पड़ता है । विवाह उतना अनिवार्य तो नहीं है, पर आवश्यकता उसकी भी समझी जाती है और जब लड़की-लड़के गृहस्थ का उत्तरदायित्व वहन कर सकने योग्य बयस्क परिपक्व हो जाते हैं तो उनकी जोड़ी मिला दी जाती है । यह क्रम संसार भर में अपने-अपने ढंग से सर्वत्र चलता रहता है । इन अवसरों पर छोटे-छोटे सामूहिक आयोजन भी होते हैं । जन्म की खुशी-मरण की व्यथा कुछ रीति-रस्मों के साथ पूरी होती रहती है । मित्र सम्बन्धी इकट्ठे होते और गाते-रोते उस हर्ष-विषाद में सहभागी बनते हैं । विवाह यों है तो अति सामान्य कृत्य, पर उसके साथ जन्म-मरण की तरह ही कुछ नवीनता युक्त हेरफेर होता है इसलिए उस अवसर पर भी घर में उत्सव मनाये जाते हैं और त्योहारों जैसा रूप उसका भी बन जाता है । उस समय भी कुछ गाने-बजाने, हँसने-हँसाने और खाने-खिलाने का रिवाज है, सो ठीक भी है । हर्ष-विषाद की अभिव्यंजनाओं को व्यक्त करने से जी हल्का होता है । इस मनोवैज्ञानिक तथ्य के अनुरूप इन अवसरों पर छोटे घरेलू उत्सवों की आवश्यकता समझी जा सकती है । पर उनका स्वरूप आर्थिक स्थिति पर किसी प्रकार का दबाव डालने वाला नहीं होना चाहिए अन्यथा उत्सव का प्रयोजन ही नष्ट हो जायगा ।

इस तथ्य को सारे संसार में भली प्रकार समझा जाता है और विवाह कृत्य के अवसर पर दो चार घण्टे में सम्पन्न हो जाने वाले घरेलू उत्सव की व्यवस्था समयानुसार की जाती है । कन्या और वर परिवार के पाँच पच्चीस व्यक्ति उस अवसर पर इकट्ठे होते और हँसते-हँसाते, बधाई उपहार देते हुए विदा हो जाते हैं । धार्मिक कर्मकांड भी पुरोहित द्वारा उसी अवसर पर सम्पन्न कर दिया जाता है । बात समाप्त हो जाती है । इस आयोजन को विवाह की सामाजिक घोषणा माना जाता है और लड़की-लड़के संयुक्त रूप से रहने के लिए चले जाते हैं । जहाँ किसी आयोजन की आवश्यकता नहीं समझी जाती वहाँ बिना उसके भी काम चल जाता है । अदालत में रजिस्ट्री इसके बिना भी पूरी हो जाती है ।

यह तो हुई सार्वभौम सार्वजनीन विवाह प्रक्रिया की रूपरेखा । इसमें न कोई आश्चर्य की बात है और न कोई अजनबीपन । विवाह में उपयुक्त जोड़े मिलने की समस्या तो चिन्ता का विषय रहती है और उनके बीच पटरी ठीक तरह बैठ सके यह भी सतर्कता का विषय रहता है, पर विवाह का उत्सव कहीं किसी के लिए चिन्ता-परेशानी का कारण नहीं होता । वह तो घरेलू जीवन में प्रायः होते रहने वाले मामूली-सी मित्र मंडली के इकट्ठे होने और हँसने-हँसाने की बात है । उसमें थोड़ा समय, थोड़ा पैसा लगता है, पर वह इतना स्वल्प होता है कि किसी को उसके लिए चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं पड़ती । अपने देश में भी प्राचीन-काल में ऐसा ही होता रहा है । धार्मिक कर्मकांडों को यहाँ सदा से अधिक महत्त्व दिया जाता रहा है । विवाह के अवसर पर होने वाला यज्ञानुष्ठान अन्य देशवासियों की ओर धर्मावलम्बियों की तुलना में यहाँ अधिक है । व्याख्या, शिक्षा एवं दिशा प्रेरणा के द्वारा गृहस्थ जीवन के आदर्श और व्यवहार की इन कर्मकांडों के सहारे अधिक विवेचना की जाती है । अस्तु, उससे अधिक लोग लाभ उठा सकें इसके लिए लोगों को एकत्रित करने पर अधिक ध्यान दिया जाता रहा है । इतना होते हुए भी उसे किसी आर्थिक दबाव का या उद्धत प्रदर्शन का भौंडा रूप कभी नहीं दिया गया । भारतीय धर्म ग्रन्थों एवं परम्पराओं के देखने से उनमें विवाह का ऐसा उद्धत स्वरूप कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता जैसा कि आज दिखाई पड़ता है ।

मध्यकालीन अज्ञानान्धकार युग की अनेक विकृतियों में एक विकृति विवाहोन्माद भी है । आज तो उसे उद्धत प्रदर्शन से भरा-पूरा एक आसमान को सिर पर उठा लेने वाले बवण्डर का रूप दे दिया गया है । बवण्डर भी ऐसा जिसके कारण कन्या और वरपक्ष के छत-छप्पर ही उड़-उखड़ जाएँ और बर्बादी जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाय । यह प्रचलन उन दिनों में आरम्भ हुआ लगता है जब सामन्तवादी अनाचार का बोलबाला था । सत्तामद में उन्मत्त लोग कांचन और कामिनी की लूट-खसोट में ही अपने दर्प का प्रदर्शन करते थे । वे लोग गढ़ी-किले बनाकर रखते थे, छोटी-मोटी टुकड़ियाँ सेना के रूप में रखते थे और जिसके पास भी पैसा तथा सुन्दर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लड़कियाँ देखते थे उसी के ऊपर चढ़ दौड़ते थे । सशस्त्र सेना गाजे-बाजे के साथ चढ़ाई करती थी और जिसे लूटना होता था उसका पैसा और लड़कियाँ तलवार की नोंक पर छीन-झपट कर चल देती थी । इस विजय को सामन्त लोग उद्धत प्रदर्शन के समारोह रूप में व्यक्त करते थे । विरोध करने वाले तो मर-खप जाते थे पर जो अपनी जान बचाना चाहते थे वे भयभीत स्थिति में पैसा और लड़कियाँ उन लुटेरों को सौंप देते थे । उनको दीनता का प्रदर्शन करना पड़ता था और पराजितों की तरह दंड, जुर्माने में घर का धन उन लोगों के सामने प्रस्तुत करना पड़ता था ।

ऐसी घटनाएँ होती तो कम थीं पर बड़े आदमियों की नकल बनाने की लोक-मनोवृत्ति सदा से रही है । अपने देश में पर्दा प्रथा का नाम भी नहीं था पर वह भी विदेशी आक्रमणकारियों से नकल कर ली गई । बहुपत्नी प्रथा की यहाँ ऐसे ही चली । सामान्य लोग भी विवाहोत्सवों को उसी सामन्ती अपहरण का रूप देने लगे होंगे और उसी की नकल इस प्रकार के व्यवहार में आ गई होगी जैसी कि आजकल चलती दिखाई देती है । वही बन्दूक तलवार, वही गाजे-बाजे, वही बारात सेना, बेटी वाले का वही नाक रगड़ना, वही भेंट उपहार के रूप में दंडराशि चुकाना, विजेताओं का वही सम्मान, पराजित का उसी प्रकार गिड़गिड़ाना, यही सब तो आज का वैवाहिक प्रचलन है । मध्यकाल में सामन्तों को लूट का लाभ ही पर्याप्त नहीं लगता था । वह उस विजय का उद्धत प्रदर्शन करके अपने शक्ति-सामर्थ्य का भरपूर विज्ञापन करने के रूप में बढ़ा-चढ़ा जश्न भी मनाते थे ताकि अन्य लोगों पर उनकी छाप बैठे और अन्यत्र जहाँ कहीं वे हमला करना चाहें वहाँ उनके मार्ग में कोई बाधक न बनें ।

विवाहों के अवसर पर होने वाले वर्तमान अपव्यय की परिपाटी किस प्रकार चली इसका और कोई सूत्र नहीं मिलता । उसके पीछे संसार भर में प्रचलित परम्परा का कोई उदाहरण भी नहीं है । कोई तर्क, तथ्य या कारण भी नहीं है जिसके आधार पर इस सामान्य से अवसर पर अपनी सामर्थ्य को चुका देने वाले अपव्यय द्वारा आत्महत्या जैसा मरणोत्सव रचाया जाय । फिर भी प्रथा तो प्रथा ही ठहरी और परम्परा तो परम्परा । उसके गुण-दोषों पर विचार करने से फुरसत किस को है ? अन्धी भेड़ें जिस प्रकार एक के पीछे एक खड्ड में गिरती और अपनी टाँगें तोड़ती चली जाती हैं वही दुर्गति अपनी हो रही है । निर्धन लोग तीन दिन तक अमीरी का ऐसा बेतुका स्वाँग रचते हैं कि इसके कारण हुई बर्बादी पूरी तरह पूरे परिवार का भविष्य अन्धकारमय बनाकर रख देती है । मध्यकाल की अनीति भरी कलंकमयी विवशता को लोगों ने स्वेच्छापूर्वक गले में बाँधने में न जाने अपना क्या गौरव और क्या लाभ समझा है । इसकी ढूँढ़-खोज करने पर भी कोई कारण ऐसा प्रतीत नहीं होता जिससे इस अपव्ययी उन्माद की कोई उपयोगिता समझी जा सके ।

आज के विवाहों की रीति किस प्रकार चलती है इस पर आदि से अन्त तक समीक्षात्मक दृष्टि डाली जाय तो उसे 'गरीबों द्वारा अमीरी का भौंडा स्वाँग' कहने के अतिरिक्त और कोई नाम देते बनता ही नहीं । लम्बी-चौड़ी दावत, सजधज की बारात, गाजे-बाजे, आतिशबाजी, जनवासा, अगवानी, कीमती कपड़े और जेवर, ठाट-बाट के सामान, इत्र, फुलेल, उछल, कूद, मोटर, बग्घी, बिजली, रोशनी, नाच, तमाशे, देन-दहेज, ऐंठ-अकड़, बारातियों की अमीरों जैसी आवभगत, सेवक खवासों द्वारा तरह-तरह की सेवा-सुश्रूषा जैसे ठाट-बाट रचे जाते हुए देखे जा सकते हैं । यह स्वाँग बिना पैसे नहीं होता, पग-पग पर धन लुटाना पड़ता है । थोड़ा-थोड़ा करके वह राशि इतनी बड़ी हो जाती है कि उसे जुटाने में किसी सामान्य परिवार का संतुलन ही बिगड़ जाता है । इतना सब समझते हुए न जाने कौन कोई जादू की ऐसी लकड़ी फिरा गया है कि लोग उस मरण नृत्य से बचने की अपेक्षा उल्टे स्वेच्छापूर्वक उसी गर्त में गिरते और अपना सर्वनाश करते चले जाते हैं । अन्धी भेड़ों की परम्परा अपनाकर खड्ड में गिरते जाने की बात समझ में आती है, पर समझदार कहलाने वाला मनुष्य भी ऐसी ही विचित्र हरकतें करता पाया जाय तो उसके लिए क्या कहा जाय ।

कन्या पक्ष को दहेज में नकदी से बड़ी राशि में फर्नीचर, बर्तन, कपड़ा, जेवर, दावत, घर की सजावट, अगवानी, जनवासा, मेवा-मिठाई तथा चित्र-विचित्र नेग-जोगों के लिए साधन सामान इकट्ठे करने पड़ते हैं । वर-पक्ष वालों के असंतोष को दूर करने के लिए उनकी खुशामद, मनुहार के जो भी तरीके अथवा साधन बन पड़ते हैं उसे वह जुटाने का प्रयत्न करता है । गरीब भी अपनी गरीब स्थिति प्रकट करने में हेटी समझता है उसे भी पाँच पंचों के सामने अपने को अमीर सिद्ध करना है । ऐसी दशा में वर-पक्ष का ही नहीं अपने पक्ष के लोगों के सामने भी अपना बड़प्पन सिद्ध करना प्रतिष्ठा का प्रश्न बन जाता है । अमीरी और फिजूलखर्ची तो एक ही बात है । जो प्रदर्शन के लिये पैसा न जुटा सकें वह अमीर कैसे ? धन कमाना तो उड़ाने के लिये—यही तो आज का प्रचलन है । कन्या-पक्ष पर दुहरा दबाव पड़ता है उसे अपने लोगों के सामने भी नाक ऊँची रखनी है और वर पक्ष की माँग भी पूरी करनी है । इस कुचक्र की पूर्ति धन खर्च किये बिना और कोई तरह सम्भव नहीं । अस्तु थोड़ा-थोड़ा करने पर भी वह भार असह्य बन जाता है और उसकी पूर्ति के लिए गृहस्थ की सभी आवश्यकताएँ समाप्त करने तथा ऋण भार से ढक जाने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं रहता ।

वर-पक्ष को दहेज मिलता है, नकदी और सामान से वह अपना घर भरने लगता है । अस्तु समझा जाता है कि वही नफे में रहा और वह लुटेरा है, पर वास्तविकता देखने पर तथ्य कुछ और ही दीख पड़ता है । घाटे में न सही तो लाभ में, वह भी नहीं रहता । जो मिला था वह तो उस होली में जल ही जाता है साथ ही जेब से भी कुछ न कुछ लगाना पड़ता है । आर्थिक लाभ कुछ भी नहीं मिला उल्टा लुटेरेपन की कलंक कालिमा मुँह पर पुत गई । पैसा भी गया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और आदर्श भी खोया । मिला क्या? वज्रमूर्खों की झूठी, निरर्थक और खोखली दो तीन दिन तक मिलने वाली वाहवाही । वह किसी काम तो आती नहीं । उससे तो मात्र मिथ्या अहंकार को तनिक-सी तृप्ति मिलती है ।

लड़की के लिए बहुमूल्य जेवर, कपड़े बनवाना, बेटे वाले के लिए ठीक वैसा ही प्रतिष्ठा का प्रश्न है जैसा कि बेटी वाले के लिए दहेज देना । इसमें भारी धनराशि खर्च करनी पड़ती है । सर्वविदित है कि कीमती कपड़ों में लगी राशि के लौटने का कोई प्रश्न नहीं । वे आम-तौर से पहनने में नहीं आते । नाटक और सिनेमा अथवा नौटंकी जैसी यह पोशाक पहनकर लड़की जहाँ जाती है वहीं उसे बचकानी समझा जाता है । विवाह के दिन पहनने के अतिरिक्त कदाचित ही उन कपड़ों का कभी उपयोग होता हो । जेवरों के बारे में भी यही बात है । टाँका-बट्टा,मीना-नगीना गढ़ाई-मजूरी, मुनाफा देकर उनमें लगा हुआ पैसा तत्काल आधा रह जाता है । घिसने, टूटने पर तो उनकी कीमत और भी घटती जाती है जो पूँजी रुक गई वह एक प्रकार से मर ही गई । सम्पत्ति उसी को कह सकते हैं जो नये उत्पादन के लाभ प्रदान कर सके । बैंक में भी डाल दिया जाय तो ब्याज बढ़ेगा, पर जेवर न तो बिकते हैं और न किसी प्रकार का लाभ कमाते हैं, इसलिये उनमें लगी पूँजी एक प्रकार से 'मृतक' ही कही जा सकती है । नये जमाने में जेवर पहनना भी गँवारपन, फूहड़पन आदि का चिह्न समझा जाने लगा है, इसलिए सभ्य समाज में उन्हें लटकाकर भी कोई समझदार लड़की नहीं जाती । वे बक्सों में बन्द रहकर सुरक्षा संकट उत्पन्न करते रहते हैं । पहनकर जाने में उपहास ही पल्ले पड़ता है ।

बर्तन, फर्नीचर जितना आवश्यक होता है पहले से ही घर में इन्तजाम रहता है । नया और आ जाने पर न तो उसका कोई उपयोग होता है, न बिकता है, उल्टे छोटे से घर को अंगड़-खंगड़ से भर लेने पर स्थान का संकट और खड़ा होता है । मेवा-मिठाई जो आई थी वह इधर-उधर बँट-बिखर जाती है । उपहार की चीजों में भी कई मित्र-रिश्तेदार हिस्सेदार बन जाते हैं । इस प्रकार वर-पक्ष को दहेज में जो सामान मिला था वह ऐसे ही बिखर-बँट गया या जगह घेरकर पड़ गया । जो पैसा मिला था उससे वधू के जेवर कपड़े की पूर्ति ही मुश्किल से हो पाई । लम्बी-चौड़ी दावत, बारात ले जाना और बेटी वाले के दरवाजे की शोभा में गाजे-बाजे, ठाठ-बाट जुटाना अतिरिक्त खर्च रह जाता है । आमतौर से यह राशि बेटे वाले को अपनी जेब में से खर्च करनी पड़ती है न करना चाहे तो उसके अपने सगे सम्बन्धी प्रतिष्ठा की बात कहकर उत्तेजित करते और खर्च कराते हैं ।

बारात में बड़े आदमी ले चलने से उसकी शोभा बनती है । इसलिये उनसे दूर की जान-पहचान होते हुए भी बारात में चलने के आग्रह में, वह जहाँ-तहाँ गिड़गिड़ाता फिरता है और मुश्किल से ही कुछ काम-काजी आदमियों को इस बेकार के 'उद्वेग' में चलने के लिये रजामंद कर पाता है । जो वस्तुतः बड़े आदमी हैं वे आवश्यक कामों में व्यस्त रहते हैं । बारात में चलना उन्हें हर दृष्टि से अनावश्यक और मूर्खता पूर्ण लगता है । जो चलते हैं उन्हें अपने काम हर्ज होने का मुआवजा भले ही न देना पड़े पर अहसान तो होता ही है । बाराती अपनी सजधज में पैसा खर्च करते हैं । बेटे वाला उन्हें ले चलने का खर्च उठाता है । बेटी वाले पर उनके स्वागत सत्कार का भारी दबाव पड़ता है । इस प्रकार बारात में चलने वाले, ले चलने वाले और स्वागत सत्कार करने वाले तीनों ही समय, श्रम और धन की प्रत्यक्ष बर्बादी करते हैं—बारात के नाम पर चलने वाले 'हुड़दंगों से' । कौन से विवाह के उद्देश्य में क्या सहायता मिलती है इसे समझ पाना अति कठिन है । आतिशबाजी, बैण्ड-बाजे आदि में जो पैसा लुटाता है उसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाया तो जाता है, पर इस अपव्यय से किसकी क्या प्रतिष्ठा—क्यों कर बढ़ी? इस पर बहुत सोचने के बाद भी परिणाम नहीं निकलता । कन्या और वर-पक्ष दोनों को ही इस आडम्बर के खड़ा करने में कितना पैसा, कितना श्रम, कितना समय, कितना चिन्तन झोंकना पड़ता है इसे भुक्तभोगी ही समझ सकता है ।

विचारणीय प्रश्न यह है कि विवाहोत्सवों के रूप में बढ़े-चढ़े कमाल खड़े करने की, लेन-देन की जो परिपाटी चल पड़ी है उसका क्या कोई लाभ या औचित्य भी है ? किसी भी दृष्टि से देखा जाय इससे हानि ही हानि दृष्टि-गोचर होती है । रिश्तेदार, कुटुम्बियों को भी लोक-लाज से इनमें शामिल होना पड़ता है और समय ही नहीं पैसा भी खर्च करना पड़ता है । न करें तो बुरा मानने का भय रहता है । लड़के वाला भी दो दिन मूँछें ऐंठने के बाद जैसा का तैसा रह जाता है । लड़की वाले के तो प्राणों पर ही बन आती है । लड़के वाला तो देन-दहेज के नाम पर कुछ तो पा लेता है पर बेटी वाले के घर की तो लूट एवं कुर्की ही हो जाती है ।

सर्वविदित है कि इस महँगाई के जमाने में बड़ी कठिनाई से ही हर व्यक्ति अपने परिवार का निर्वाह कर पाता है । बचत के नाम पर कौन कितना जमा कर पाता है, यह ढूँढ़ा जाय तो ९० प्रतिशत व्यक्ति 'रोज कुआँ खोदना, रोज पानी पीना' की स्थिति में रहते हैं । १० प्रतिशत ही कुछ जमा कर पाते हैं । उस बचत के सदुपयोग की भारी गुंजायश रहती है । उसमें बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने, स्वास्थ्य संवर्द्धन—रहने का मकान, उद्योग व्यवसाय का विस्तार, दान पुण्य, पर्यटन, ज्ञान संवर्द्धन जैसे अनेकों उपयोगी काम हो सकते हैं । उन्हें रोककर बचत को विवाहों की धूमधाम में उड़ा दिया जाय तो परिवार की प्रगति में निश्चित रूप से कमी पड़ेगी । धन, श्रम और कौशल जिनके पास हैं वे उसे ऐसे कामों में लगायें जिससे वैयक्तिक, पारिवारिक एवं सामाजिक उन्नति में सहायता मिलती है । साधनों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धूम-धमाके जैसे निरर्थक कार्य में खर्च कर दिया जाय इसमें क्या बुद्धिमानी है ।

प्रस्तुत प्रचलन के अनुसार हर व्यक्ति को विवाहों में ढेरों पैसा लगाना पड़ता है । दस-पाँच हजार खर्च हो जाना तो नितान्त सामान्य बात है । बड़े विवाहों में तो वह राशि लाखों तक पहुँचती है । बड़ों की देखा-देखी छोटे भी नकल बनाते और सामर्थ्य से अधिक खर्च करते हैं । औसत व्यक्ति गुजारे भर के लिये ही कमा पाता है । विवाह तो हर परिवार में होते ही हैं । सामान्यतया चार विवाह भी करने पड़ें और हर एक में दस हजार भी लगें तो चालीस हजार लगता है । यह आये कहाँ से ? आमतौर से इसे बेईमानी से कमाने की तरकीबें सोचनी पड़ती हैं । ईमानदारी और परिश्रम की कमाई से इतनी बचत हो सकना कठिन है । ऐसी दशा में रिश्वत, चोरी, बेईमानी, मिलावट, कमतोल, कम नाप जैसे अनैतिक आधार अपनाने पड़ते और तरह-तरह के दंद-फंद रचने पड़ते हैं । जो वैसा नहीं कर पाते वे घर के मकान, जायदाद, जेवर आदि समय-समय काम आने वाले साधन बेचते हैं । इतने पर भी काम नहीं चलता तो ऋण लेते हैं, उसका ब्याज चढ़ता है । जब सीमित आमदनी में गुजर ही कठिनाई से होती है तो यह ब्याज और ऋण किस प्रकार चुकेगा वह बढ़ता ही जाता है और धीरे-धीरे इतना अधिक हो जाता है कि चुकाना सम्भव ही नहीं रहता । ऐसे लोगों को कितना दुःखी रहना पड़ता है, कितना अपमान सहना पड़ता है और कितने संकट में से गुजरना पड़ता है, इसे उस कन्या के पिता से पूछा जा सकता है जिसने दो तीन लड़कियों की शादी तो निपटा दी, किन्तु अभी भी कई की करनी शेष है ।

अच्छे लड़के बिना खर्च के मिलते नहीं फलतः कन्याओं की आयु बढ़ती रहती है । इसमें से कितनी ही दूर दृष्टि से सुयोग्य होते हुए भी अनब्याही रह जाती हैं और अनेकों को असमर्थों के पल्ले बँधना पड़ता है । जिनके विवाह हो जाते हैं उन्हें भी यह व्यथा आजीवन कष्ट देती रहती है कि उनके कारण पिता का हरा-भरा घर बर्बाद हो गया । पीछे रहने वाले भाई, बहिनों को और भी अधिक संकट सहना पड़ता है । जिन सुसराल वालों की दहेज माँग और धूमधाम की शौकीनी के कारण पिता का घर बर्बाद हुआ उनके प्रति नव वधू के मन में सदा घृणा का गहरा घाव बना ही रहेगा । यों रहती तो उन्हीं के बीच हैं और गुजारा भी वहीं करती है, पर उसे भी मनुष्य का हृदय मिला होता है अस्तु सोचती यही रहती है कि इन निष्ठुर लोगों ने यदि उतना दबाव न डाला होता और मितव्ययतापूर्वक सादगी से विवाह कर लिया होता तो उसके पिता का परिवार असीम संकट में फँस जाने से बच सकता था ।

वधू के मन में इस प्रकार के भाव उठेंगे ही । उसके मुँह पर ताला लग सकता है पर विचारों और भावनाओं पर तो कोई बंधन नहीं है । वे ससुराल वालों के प्रति आजीवन अपने अन्तःकरण को घृणा से ही भरे रहेंगी । लोकाचार के कारण दोनों पक्षों में आना-जाना, स्वागत-सत्कार भी चलता रहेगा, पर वह घाव तब तक भरेगा नहीं जब तक कि उस बर्बादी के कारण आर्थिक विपन्नता की व्यथा उस परिवार को सहनी पड़ेगी । जिसके फलस्वरूप इतनी बड़ी खाई खुदती हो उस धमाल में वर-पक्ष ने क्या कमाया क्या पाया ? यह बहुत ही गम्भीरतापूर्वक सोचे जाने योग्य बात है ।

सवर्णों में कन्या-पक्ष पिसता है और पिछड़े वर्गों में वही मुसीबत वर-पक्ष पर आती है । पिछड़े क्षेत्रों में लड़के वाले को बड़ी धनराशि बेटी वाले को देनी पड़ती है । कई दिन तक शराब दावतों का दौर चलता है और वह पैसा ऐसे ही नष्ट हो जाता है । बेटी आजीवन दुःख पाती है और बेटे वाले ऋण लेकर जो पैसा चुकाते हैं उसके ब्याज से आजीवन पिसते हैं । इस प्रकार क्या सवर्ण क्या असवर्ण सभी को खर्चीली शादियाँ दरिद्र और बेईमान बनाती हैं । इस कुचक्र में व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में आर्थिक और नैतिक संकट बढ़ता है । प्रगति का पथ अवरुद्ध होता है और पिछड़ेपन का अभिशाप घटने के स्थान पर बढ़ता ही रहता है ।

समय की पुकार है कि हम कुरीतियों के अभिशाप से होने वाली असीम हानि को समझें और जो अधिक हानिकारक हैं उन्हें तत्काल उखाड़ फेंकें, साथ ही यह भी निश्चय करें कि मूढ़ताओं, कुरीतियों एवं अवांछनीय प्रचलनों में नष्ट होने वाली शक्ति को साहसपूर्वक बचाया जाय और उस बचत को प्रगतिशील प्रयोजन में संलग्न किया जाय । इसके लिए परम्परावादियों के दुराग्रह से जूझना पड़े और सफेद बाल वालों की बात की अवज्ञा करनी पड़े तो औचित्य की रक्षा के लिए आपत्ति धर्म के रूप में वह भी करनी ही चाहिए ।

हमें नितान्त सादगी के साथ विवाहों से पारिवारिक छोटे उत्सव आयोजनों के रूप में सादगी और मितव्ययता के साथ सम्पन्न करना चाहिये । बारात ले जाने की कोई उपयोगिता नहीं । वर के साथ घर परिवार के दस पाँच व्यक्ति जाना चाहें तो जा सकते हैं । मेहमान अतिथि आते, घरों पर ठहरते हैं ऐसे ही बारात के दस पाँच आदमी कन्या के घर पर ठहर सकते हैं और मिल-जुलकर पकाते-खाते हँसते-हँसाते विवाहों का धर्मानुष्ठान सम्पन्न कर सकते हैं । मित्र, पड़ोसी पाणिग्रहण संस्कार के अवसर पर एकत्रित हो सकते हैं और आशीर्वाद दे सकते हैं । उनके स्वागत-सत्कार में चाय-पानी जैसी छोटी व्यवस्था बन सकती है । लडकी को वर-पक्ष और लड़के को कन्या-पक्ष की ओर से सामान्य प्रयोग में आ सकने योग्य वस्त्र दिये जा सकते हैं । उपहार में सस्ते उपकरणों का आदान-प्रदान भी हो सकता है । सब मिलाकर वह पूरी प्रक्रिया हजार पाँच सौ से अधिक भारी नहीं पड़नी चाहिए । अब आदर्श विवाहों का प्रचलन इसी रूप में होना चाहिए । अनावश्यक धूमधाम की मूर्खता के विरोध में सर्वत्र प्रबल वातावरण बनना चाहिए । इस युग धर्म को जितनी जल्दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और जितनी निष्ठा के साथ अपनाया जा सके उतना ही कल्याण है ।

प्रचार प्रचलन की दृष्टि से सामूहिक विवाहों का भी बड़ा महत्त्व है । इकट्ठे एक जगह एक ही समय में कितने ही विवाह योग्य जोड़ों के पाणिग्रहण संस्कार सम्पन्न होने से उसका स्वरूप बड़े उत्सव आयोजन जैसा बन जाता है । इसमें खर्च भी नहीं पड़ता । देन-दहेज के प्रदर्शनात्मक आडम्बरों की कोई गुंजायश नहीं रहती । प्रचार-प्रदर्शन की व्यवस्था रहने से उसे देखने के लिए एकत्रित हुई जनता को वैसा ही अनुकरण करने की प्रेरणा मिलती और अनुकूल वातावरण बनता है । जुलूस, जनता द्वारा स्वागत, सराहना, भाषण, अभिनन्दन आदि से इस दिशा में आगे कदम बढ़ाने वालों को यश, सम्मान भी मिलता है । इस प्रकार सामूहिक विवाहों के आयोजन भी विवाहोन्माद की कुप्रथा का अन्त करने में बहुत सहायक सिद्ध होते हैं । युग निर्माण योजना ने विगत दस वर्षों में ऐसे हजारों सामूहिक विवाह आयोजन कराये हैं और उससे सादगी के आदर्श विवाहों के प्रचलन में भारी योगदान मिला है ।

विचारशील वर्ग को विवाहोन्माद विरोधी अभियान को आगे बढ़ाकर समाज का नेतृत्व करना चाहिए ताकि इस आत्महत्या जैसी सर्वनाशी कुरीतियों से पीछा छुड़ाया जा सके । विवेकवान् अभिभावकों को अपने लड़की-लड़कों की शादियाँ पूर्ण सादगी के साथ करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए और मूढ़तावादियों की असहमति की परवाह न करते हुये उस निश्चय का साहसपूर्वक निर्वाह करना चाहिए । विवाह योग्य लड़के-लड़कियों को प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि वे सादगी के विवाहोत्सव को ही स्वीकार करेंगे । यदि दहेज का लेन-देन चलाने और धूम-धमाल खड़ा किये बिना विवाह न होता हो तो वे निश्चय करें कि इस स्थिति में वे कुँवारे ही बने रहेंगे । यदि यह निश्चय दृढ़ हो तो अभिभावकों को देर-सबेर में अपने दुराग्रह से पीछे हटना ही पड़ेगा । समाज के मूर्धन्य व्यक्तियों को प्रचार के साधन विवाहोन्माद जैसी कुरीतियों के उन्मूलन में झोंक देने चाहिए । वे देखने में ही साधारण लगती हैं, पर हैं अत्यन्त घातक । यदि यह अपव्यय रुक सके तो उस धनराशि को उपयोगी कार्यों में लगाकर अपना देश हर क्षेत्र में उन्नति कर सकता है और उसकी गणना देखते-देखते समुन्नत देशों के समकक्ष बन सकती है । उत्पादन आवश्यक है पर अपव्यय को रोकना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है । आमदनी बढ़े पर फिजूलखर्ची बनी रहे तो दरिद्रता से पीछा छुड़ा सकना सम्भव न हो सकेगा । विवाहोन्माद को आर्थिक, चारित्रिक और सामाजिक स्थिति को अस्त-व्यस्त एवं नष्ट-भ्रष्ट करने वाली कुरीतियों में अग्रणी गिना जाना चाहिए और उनके उन्मूलन में प्रत्येक विचारशील व्यक्ति को कटिबद्ध होना चाहिए ।

पिता पक्ष कन्या को अपने उत्तराधिकार की सम्पदा का अंश खुशी-खुशी प्रदान करे, पर वह स्त्री धन की सुरक्षित राशि के रूप में होना चाहिए । सुसराल वालों को रिश्वत एवं मोल भाव के रूप में एक पैसा भी नहीं मिलना चाहिए । ऐसा दहेज विवाह के कई साल बाद तब दिया जाय, जब लड़की का सुसराल में भली प्रकार ताल-मेल बैठ जाय । ऐसी घटनाएँ आये दिन होती रहती हैं कि लड़की पसन्द नहीं की गई और उसकी दुर्गति हुई । ऐसी दशा में पिता की दी हुई दहेज राशि तो उसके लिए सहारा हो सकती है । दहेज तो नई बहू के घर में प्रवेश करते हुए सुसराल वालों को ही मुक्त हस्त में देना चाहिए और उस राशि को सुरक्षित स्त्री धन के रूप में लड़की के नाम ही बैंक में जमा करना चाहिए । लड़की का शील और समर्पण स्वीकार करने के बदले सुसराल वाले उसे यदि कुछ आर्थिक उपहार देते हैं तो यह न्यायोचित भी है और उन लोगों की सज्जनता का परिचायक भी । लड़की वालों से न तो दहेज माँगा ही जाना चाहिए और न उन्हें देना ही चाहिए भले ही लड़की को आजीवन अविवाहित रहना पड़े । अनीति के आगे सिर झुकाने की अपेक्षा टूट जाना श्रेयस्कर है ।

बाल-विवाह एक अति घातक कुप्रथा

अपने देश में बाल विवाहों का प्रचलन अभी भी बहुत है । पिछड़े वर्गों में—छोटे देहातों में तो इसका बड़ा शौक-चाव रहता है कि छोटे बच्चों का विवाह करते हुए एक हर्षोत्सव को देखने का अवसर जितनी जल्दी मिल जाय उतना ही अच्छा है । कुछ दिन पहले तक तो गर्भस्थ बच्चों की अँगाऊ शादियाँ हो जाती थीं और दूध पीते बच्चों को गोदी में लेकर उनके अभिभावक विवाह कर लेते थे । अब थोड़ा सुधार हुआ है तो भी दस पन्द्रह के बीच देहाती क्षेत्र में इतने अधिक विवाह होते हैं जिन्हें देखकर यही लगता है कि हमारा पिछड़ापन अभी भी ज्यों का त्यों बना हुआ है । शारदा ऐक्ट और दूसरे बाल-विवाह विरोधी कानून यों बने पड़े हैं, पर वे राजकीय आधार पर मुकदमे चलाकर दण्डनीय न होने के कारण प्रभावहीन ही बने हुए हैं । लाखों बाल-विवाह हर साल अपने देश में होते हैं और उनसे इन बालकों को शारीरिक, मानसिक क्षति तो होती है उसका दुष्परिणाम समस्त समाज को भोगना पड़ता है ।

विवाह का अर्थ ही इन दिनों कामुकता की प्रवृत्ति का प्रोत्साहन बन गया है । विवाह होते ही बालकों के मस्तिष्क में वही चिन्तन घूमता है । साथी वैसा ही प्रोत्साहन देते हैं । फलतः कच्ची आयु में ही वह विचारणा एवं प्रक्रिया चल पड़ती है जो उन दिनों सर्वथा अवांछनीय है । २५ वर्ष की आयु तक शरीर के अन्तरंग तत्व विकास और पुष्टि की दिशा में गतिशील रहते हैं । यदि काम-क्रीड़ा द्वारा उन तत्वों को निचोड़ा जाने लगे तो स्वभावतः शारीरिक विकास की प्रक्रिया रुकेगी । देह बलिष्ठ न हो सकेगी । छोटे पेड़ों के तने खोदकर यदि उनमें से गोंद निकालना आरम्भ कर दिया जाय तो पेड़ जहाँ का तहाँ रह जायगा, उसका बढ़ना और पुष्ट होना रुक जायगा । यही बात बच्चों पर लागू होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्हें संयम, ब्रह्मचर्य, व्यायाम, खेलकूद और दूसरे आधारों के सहारे अभिवृद्धि की आयु २५ वर्ष तक विकसित होने का अवसर न मिले तो स्वभावत: वे दुर्बल एवं अविकसित रह जायेंगे । इसका फल सारे जीवन उन्हें शरीर की समग्र दुर्बलता एवं रुग्णता के रूप में भोगना पड़ेगा ।

समस्त शरीर के साथ ही जननेन्द्रियों के कोमल कलपुर्जों की परिपक्वता पुष्ट होती है । असमय ही उन्हें छेड़ना और सताना शुरू कर दिया जाय तो उसका परिणाम यौन रोगों के रूप में सामने आता है । बाल-विवाह जननेन्द्रिय सम्बन्धी अनेक रोगों को आमन्त्रण देना है । अपने देश में यौन रोगों की चर्चा एक लज्जा का विषय माना जाता है, इसलिए अधिकांश व्यक्ति उन कष्टों से ग्रसित होने पर भी छिपाये रहते हैं । कहते तब हैं जब पीड़ा असह्य हो जाती है । तलाश किया जाय तो बाल-विवाह के फलस्वरूप प्रमेह, स्वप्नदोष, बहुमूत्र, पेशाब की जलन, नपुंसकता, शीघ्रपतन, बाँझपन, प्रदर, मासिक धर्म की गड़बड़ी एवं पीड़ा जैसे असंख्य यौन रोगों से ग्रसित लाखों नर-नारियाँ मिल सकती हैं । यह रोग शरीरों को खोखला करते रहते हैं और उनमें तरह-तरह की छोटी-बड़ी बीमारियों का मिलना रहता है ।

ऐसे दम्पति जिन्होंने छोटी आयु से ही अपने शरीरों को निचोड़ना शुरू कर दिया कभी परिपुष्ट, सुन्दर और निरोग संतान उत्पन्न नहीं कर सकते, कच्चे बीज यदि बोये जायें तो अच्छी फसल उगने की आशा कौन करेगा ? बाल-विवाह के कुचक्र ने जिन्हें चूसे हुए आम की तरह निचोड़ डाला है उनकी सन्तान कमजोर, बीमार, अल्पआयु, मंदबुद्धि तथा अध-पगली जैसी ही होगी । वे बच्चे किसी तरह जी भी लिये तो उनसे किसी महत्त्वपूर्ण प्रयोजन या पुरुषार्थ की आशा नहीं की जा सकती । ऐसे दुर्बलकाय और मानसिक दृष्टि से पिछड़ी हुई सन्तानें धरती माता के ऊपर भार बढ़ाना ही है । पीढ़ियाँ एक के बाद एक क्रमश: दुर्बल ही होती चली जायेंगी और राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं बौद्धिकता का स्तर दिन-दिन गिरता चला जायगा । बाल-विवाह सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए एक खतरा है । राष्ट्रीय समर्थता के लिए यह एक सघन संकट है । हमें अपनी नस्ल खराब करने का जोखिम नहीं उठाना है तो प्रचलित बाल-विवाह प्रथा की उपेक्षा करनी चाहिए । अपरिपक्व शरीर से अल्प आयु की लड़कियाँ यदि प्रजनन करती हैं तो उनका अपना जीवन भी संकट में रहता है । अस्पतालों की रिपोर्ट बताती है कि बीस वर्ष से कम उम्र की जितनी लड़कियाँ प्रसव पीड़ा में मरती हैं उससे चौथाई भी बड़ी आयु की स्त्रियाँ उस संकट में प्राण नहीं गँवाती । लड़कियों की जान को जोखिम में डालकर विवाह का हर्षोल्लास मनाने वाले अभिभावक किस प्रकार समझदार कहे जायें ? और कैसे माना जाय कि वे अपने बच्चों को सच्चा प्यार करते हैं ? बाल विवाह के शिकार लड़के प्रसव पीड़ा में तो नहीं मरते, पर उनकी भी कम दुर्दशा नहीं होती । रुग्ण शरीर, रुग्ण पत्नी, रुग्ण संतान को लेकर वे जिस तरह रोते-कलपते हैं उसे देखते हुए बाल-विवाह का खेल एक कौतुक मात्र नहीं रह जाता, वरन् एक भयावह अभिशाप के रूप में उन्हें आजीवन उस दुर्भाग्य के लिये रोना पड़ता है ।

बाल-विवाह का मनोवैज्ञानिक प्रभाव विशेषत: लड़कियों पर बहुत ही बुरा पड़ता है । सुसराल में बहू को कुछ दूसरे किस्म से रहना पड़ता है । उठती उमर की आकांक्षाओं को कुछ अधिक हँसी-खुशी और स्वच्छन्दता की जरूरत पड़ती है । माँ-बाप के घर ही यह सहज सुलभ स्थिति सम्भव है । इसी वातावरण में मनोविकास के लिए खुली हुई और उपयुक्त परिस्थितियाँ मिलती हैं । यदि उठती उमर की मनोवांछाएँ बन्दीगृह जैसी सुसराल में दबी-भिची बनादी जायें तो उसमें भीतर ही भीतर एक घुटन जैसी पैदा होती है । छोटी आयु की लड़कियाँ इस विवशता में भीतर ही भीतर बुरी तरह फड़फड़ाती हैं या कुछ कर नहीं सकतीं, उनकी यह विवशता मानसिक रोगों के रूप में फूट पड़ती है । नई उम्र की लड़कियों को मूर्च्छा, दौरा, मिर्गी, भूत-प्रेत, भयंकर स्वप्न, दिल की धड़कन, डर आदि कितनी ही ऐसी व्यथाएँ उपज पड़ती हैं जिनका एकमात्र कारण मनोवैज्ञानिक अवरोध एवं आन्तरिक घुटन ही होता है । बड़ी आयु की लड़कियाँ दाम्पत्य जीवन में रस लेने लगती हैं और वे सुसराल के दबे-भिचे वातावरण को भी सन्तुलित कर लेती हैं, पर छोटी आयु के अविकसित मस्तिष्क की भावुक लड़कियाँ उन परिस्थितियों में अपने आपको न ढाल सकने के कारण उद्विग्न, विक्षिप्त-सी रहने लगती हैं और अपना शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य खो बैठती हैं । भारतीय नारी की मानसिक दुर्दशा का एक बड़ा कारण असमय ही एक भार पड़ जाना है । बड़ी उम्र में विवाह होने पर मानसिक दृष्टि से समर्थ लड़कियाँ ही इस भार से बच सकती हैं और मानसिक स्थिरता बनाये रह सकती हैं ।

यह सोचना उचित नहीं कि जल्दी विवाह कर देने पर लड़कियाँ शीलवान् बनी रहती हैं और बड़ी आयु पर विवाहने से उनमें चारित्रिक दोष आने का खतरा रहता है । खतरा आयु से नहीं वातावरण से सम्बन्धित है । छोटे बच्चे भी कुमार्गगामी हो सकते हैं । दूषित वातावरण और गन्दी परिस्थितियों में रहना पड़े तो गृहस्थ, वैधव्य और वृद्धावस्था तक में चरित्रहीनता का खतरा बना ही रहेगा । अविवाहित दुराचारी हो जाते हैं और विवाहित सदाचारी बने रहते हैं यह सोचना भ्रमपूर्ण है । बाह्य प्रतिबन्धों से नहीं, मानसिक प्रतिबन्ध ही किसी को सदाचारी बनाये रह सकते हैं । सो हमें अपने बच्चों पर विश्वास करना चाहिए उन्हें मनस्वी और चरित्रवान् बनने के उपयुक्त वातावरण एवं प्रशिक्षण देना चाहिए, अन्यथा विवाह होने पर भी इस बात की कोई गारंटी नहीं कि ये पतनोन्मुख होने से बच ही जायेंगे ।

किसी जमाने में जब अनाचारी शासक प्रजा की लड़कियों पर कुदृष्टि लगाये रहते थे और सयानी बच्चियों की सुरक्षा संकट से भरी थी तब छोटे बच्चों के विवाह करके उन्हें घरों की आड़ में छिपाये रहना और विवाह कर देना सामयिक आवश्यकता के रूप में आवश्यक रहा होगा और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धर्म माना जाता रहा होगा । अब ऐसा कोई खतरा नहीं रहा । इसलिए अब बाल-विवाह को धार्मिकता के साथ जोड़ना व्यर्थ है । बच्चे हों या बच्चियाँ उनकी किशोरावस्था शिक्षण एवं स्वास्थ्य संवर्द्धन में लगाई जानी चाहिए उन्हें मानसिक और शारीरिक विकास का अवसर उठती उम्र में प्राप्त करने देना चाहिए । बूढ़े पुराने लोग अपने मरने की बात कहकर विवाह अपनी आँखों के आगे देख जाने की अभिलाषा आमतौर से व्यक्त करते रहते हैं और घर वालों को जल्दी ब्याह के लिए उकसाते रहते हैं । उन्हें समझना और समझाना चाहिए कि उनकी यह उतावली बच्चों के लिए कितने घातक परिणाम उत्पन्न करेगी । समय आ गया है कि हम विवेक के आधार पर हर बात सोचें और बाल-विवाह जैसी मूर्खता का अविलम्ब परित्याग कर दें ।

हमारे समाज का अभिशाप— बाल-विवाह

'मदर इंडिया' की लेखिका 'मिस मेयो' ने भारतीय समाज की भयंकर कुरीतियों का ऐसा चित्रण उस पुस्तक में किया है जिसे पढ़कर लोग हिन्दू समाज के प्रति घृणा से भर जायें । विदेशी लेखिका होने के नाते भारतीयों को यह पुस्तक बुरी लगी और लोगों ने उसका तीव्र विरोध भी किया, किन्तु विचारवान् व्यक्तियों ने इस पुस्तक की वस्तुस्थिति की उपेक्षा भी नहीं की । हमारे सिद्धान्त, चाहे कितने ऊँचे रहे हों, हमारा धर्म, तत्वज्ञान, दर्शन और विचार साहित्य चाहे कितनी ही श्रेष्ठ उपलब्धियों से ओत-प्रोत हो, पर समाज में जो कुरीतियाँ और अन्ध-परम्पराएँ छाई हुई हैं उनसे हम निरन्तर पतन की ओर ही अग्रसर हो रहे हैं । जाति-पाँति का भेद-भाव, नारी का उत्पीड़न, विवाहोन्माद, अन्धविश्वास आदि कुप्रथाएँ भयंकर राक्षस की तरह समाज की सुख-शान्ति और प्रगति, समृद्धि का शोषण करने में लगी हुई हैं । बाहर से खड़ा हुआ हिन्दू-धर्म भी भीतर ही भीतर पूरी तरह खोखला होता जा रहा है ।

कम उम्र में बच्चों का विवाह होना भी समाज के पतन का एक मुख्य कारण है । इससे अब तक करोड़ों निर्दोष बालकों का प्राणान्त हो चुका है । पारिवारिक परिस्थितियाँ भी ऐसी बिगड़ी हैं कि समाज की व्यवस्था काफी अस्त-व्यस्त हो गई है ।

सत्य से इन्कार न करें तो वस्तुस्थिति इससे कुछ कम नहीं है । शिक्षित नागरिकों में जहाँ अब कुछ शिक्षा का प्रसार हो चुका है अब यह कुप्रथा भले ही कम हो गई हो पर ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी अधिकांश बालिकाओं के विवाह १४ वर्ष के अन्दर ही हो जाते हैं । ८ से ११ वर्ष की उम्र तक की लड़कियों का अनुपात इसमें सर्वाधिक है । राजस्थान के कुछ इलाकों में तो अभी भी १-१ और २-२ वर्ष की कन्याओं के विवाह हो जाते हैं । ऐसी कन्याओं के विवाह, जिन्हें गुड़ियों से खेलने का भी ज्ञान न हो वे भला दाम्पत्य जीवन के महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्यों का पालन किस प्रकार कर सकती हैं ? गृहिणी और मातृत्व के बोझ को कच्ची उम्र की यह बालिकाएँ कैसे निभा पाती होंगी इस पर ठीक तरह विचार भी नहीं किया जा सकता ।

बाल-विवाह लड़कियों के लिए ही भयंकर नहीं वरन् बालकों के लिए भी उतना ही संकटपूर्ण है । कम उम्र में ही बच्चों का विवाह करना उनके स्वास्थ्य तथा सामाजिक स्थिति को पतित करना ही है । किसी जमाने में जबकि यवन शासकों से अपनी धर्म-रक्षा का प्रश्न था तब यह स्थिति भले ही अनुकूल रही हो पर अब तो ऐसी कोई सामाजिक या राजनैतिक बन्दिश भी नहीं जिसके कारण इस कुरीति को अपने गले से लगाकर रखा जाय ।

कुछ विचारवान् व्यक्तियों ने इस सम्बन्ध में श्री हरविलास शारदा के नेतृत्व में सन् १९२८ में सरकार के समक्ष एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया और सन् १८६० के इस कानून में, कि "पत्नी की कम से कम उम्र १० वर्ष हो" संशोधन की माँग की । इस पर जनता का अभिमत जानने के लिए सर मोरोपन्त जोशी की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्त की गई जिसने ४०० व्यक्तियों के बयान लिए और बाल-विवाह को एक सामाजिक बुराई मानकर उस प्रस्ताव को पास करने की सिफारिश की । फलस्वरूप शारदा एक्ट के नाम से १९२९ में यह कानून बना दिया गया और बाल-विवाह अवैध घोषित कर दिया गया और 'विवाह आयु लड़की लड़कों की क्रमशः १४ एवं १८ स्वीकृत की गई ।

किन्तु यदि जनता के दिमाग न बदलें तो कानून कर भी क्या सकता है । हिन्दू-समाज की दकियानूसी विचार-धारा तुरन्त देखने को मिली । कानून बनने के बाद उसे लागू करने के लिए ६ माह का समय दिया गया । इसी अवधि में ही ५ वर्ष की कम उम्र में लड़कियों की लगभग १ लाख शादियाँ हुईं और १६००० बाल-विधवाओं की संख्या बढ़ी । १९३१ में ऐसे आँकड़े इकट्ठे किये गये जो बाल-विवाह की स्थिति पर चिन्ताजनक प्रकाश डालते थे । इस समय केवल १ वर्ष की विवाहित वधुएँ ४४०८२ और विधवायें १५१५ थीं । १ से ५ वर्ष तक की ७५७७७० वधुएँ और २९३६५ विधवाएँ थीं । ५ से १० और १० से १५ वर्ष तक की वधुओं और विधवाओं की संख्या क्रमशः ४२००५३४, १५४८२ तथा ७२६९२०८, १८६३३९ थी । इस प्रकार सन् १९३१ में १५ वर्ष से कम आयु की विवाहित कन्याओं की संख्या १२२७१५४९ और विधवाओं की संख्या ३२१७०१ थी । इतनी बड़ी संख्या जो गृहस्थ के कर्त्तव्यों को समझने में समर्थ न हो तथा अल्प आयु में ही विधवाएँ हो चुकी हों उनसे पारिवारिक सुदशा तथा सामाजिक सदाचार की रक्षा कैसे सम्भव समझी जा सकती है?

बाल-विवाह की हानियाँ सबके सामने स्पष्ट हैं । सन्तानोत्पत्ति के लिए एक आयु निश्चित है उससे कम में कभी स्वस्थ सन्तान पैदा नहीं हो सकती । कम उम्र के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बालक-बालिकाएँ जिन्हें सन्तानोत्पत्ति का बहुत सामान्य ज्ञान होता है प्राय: स्वयं वासना के शिकार हो जाते हैं और उनका स्वास्थ्य भी बरबाद हो जाता है ।

बाल-विवाह का भयंकर राक्षस

प्राचीन कथा-कहानियों की पुस्तकों में प्राय: ऐसे राक्षसों का वर्णन पढ़ते रहते हैं जो मनुष्यों को मारकर खा जाते थे । वे ऐसा इसलिए नहीं करते थे कि उन मनुष्यों से उनकी शत्रुता अथवा किसी प्रकार की लड़ाई होती थी, वरन् वे स्वभाव से ही क्रूर और निर्दयी होते थे और सर्वथा निर्दोष व्यक्तियों को भी अपना शिकार बनाते रहना उनका नित्य कर्म होता था ।

ऐसे राक्षस चाहे उन कहानी लेखकों के कल्पनाप्रसूत ही क्यों न हों, पर वर्तमान समय में भी हम ऐसी अनेक प्रथाओं, रूढ़ियों, परम्पराओं को देखते हैं जो उन राक्षसों से अधिक भयंकर और निर्दोष प्राणियों का खून पीने वाली हैं । उन राक्षसों को तो प्रतिदिन एकाध मनुष्य को ही भक्षण करने वाला बतलाया जाता है, पर ये कुप्रथाओं और अन्धपरम्पराओं के राक्षस अनगिनती मनुष्यों को तन, मन का शोषण करके उदरसात् करते रहते हैं ।

हिन्दू-समाज में बाल-विवाह की प्रथा ने जो भयंकर रूप धारण कर रखा है उससे अभी तक करोड़ों निर्दोष बालिकाओं का प्राणान्त हो चुका है और होता रहता है यह सत्य है कि शिक्षा-प्रचार के परिणामस्वरूप कुछ अग्रगामी, प्रगतिशील जातियों में उसका ह्रास हो गया है पर अब भी ऐसे अनेक पिछड़े हुए प्रदेश और कोटि-कोटि नर-नारी मौजूद हैं जो इनके फन्दे में फँसे हुए हैं और मूढ़तावश अपनी सन्तान का सर्वनाश अपने हाथों करते रहते हैं ।

यह प्रथा कब और क्यों प्रचलित हुई यह तो हम नहीं कह सकते पर गत सौ-पचास वर्षों में इसके विरुद्ध जो आवाज उठाई जा रही है तथा समाज-सुधारक इसे मिटाने का जो प्रयत्न कर रहे हैं उससे इसकी भयंकरताओं का परिचय हमें अवश्य मिल रहा है । न जाने किस अशुभ मुहूर्त में यहाँ का कोई पंडित **'अष्टवर्षा भवेत गौरी'** वाला श्लोक गढ़कर लिख गया कि जिसने उच्च और सभ्य कहलाने वाली जातियों में भी अबोध और अविकसित शरीर की बच्चियों के विवाह का मार्ग खोल दिया और उनको गुड़ियों का खेल खेलने की आयु में ही पत्नी और माता बनने को विवश कर दिया । बाल-विवाह के कुपरिणामों और दाम्पत्य-जीवन के सर्वथा अनुपयुक्त छोटी लड़कियों के कष्टों को देखकर जब कुछ सुधारकों ने इस सम्बन्ध में आन्दोलन उठाया और अनेक सभा-समाजों में प्रस्ताव पास करके तत्कालीन सरकार से अनुरोध किया कि वह इस सम्बन्ध की जाँच कराये तो उसने इस कार्य के लिए एक कमेटी नियुक्त कर दी, इस कमेटी ने देश के अनेक गणमान्य पुरुषों तथा चिकित्सकों की गवाहियाँ लेकर जिन तथ्यों का पता लगाया उनमें से दो-चार नमूने के तौर पर नीचे दिए जाते हैं—

(१) कलकत्ता के महान् समाज-सेवक तथा प्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री पी. सी. राय से जब यह पूछा गया कि "क्या उन्हें मालूम है कि १३-१४ वर्ष की लड़कियाँ गर्भवती होती हैं और उसके दुष्परिणामों से बहुत दु:ख उठाती हैं ? तो उन्होंने उत्तर दिया—"हाँ, इसे तो सभी जानते हैं । यह बात इतनी कम नहीं कि मैं दो-एक मामलों को बताऊँ । मैंने शर्म और भय से ऐसी छोटी लड़कियों को माता होते देखा है ।"

(२) स्त्रियों के लिए विशेष रूप से स्थापित दिल्ली के लेडी हार्डिंज मेडिकल कालेज की महिला प्रिन्सिपल ने कहा— मैंने १२ से १६ वर्ष के बीच की लगभग १००० हिन्दू बालिकाओं को प्रसवावस्था में देखा है । उसके दुष्परिणामों के विषय में जितना भी कहा जाय थोड़ा है, अनेक को क्षय आदि रोग हो जाते हैं, हड्डियों के नर्म हो जाने के कारण मुझे २७ लड़कियों के पेट चीरकर बच्चे निकालने पड़े, पहले प्रसव के बाद ही लड़कियाँ १०-५ वर्ष अधिक आयु की जान पड़ने लगती हैं और उनके बच्चे छोटे से और अस्वस्थ रहते हैं ।

(३) लखनऊ के डॉ. ई. ए. डगलस ने कहा— "मैंने बारह वर्ष की एक ऐसी लड़की देखी जिसका गुप्त अंग बुरी तरह घायल हो गया था और मन की दशा से तो बिल्कुल पागल-सी हो गई थी, उसकी बहिन उसे जबर्दस्ती उसके पति के घर से निकाल कर लाई थी, जब वह अस्पताल में आई तो उसके गुप्त अंग में कीड़े पड़ चुके थे और उसे सुजाक की बीमारी हो चुकी थी, पर कुछ समय बाद उसके पति ने उसे अपने पास रखने के लिये मुकदमा चलाया और वह जीत गया ।"

(४) कलकत्ता की डॉ. एडिथ घोष ने बतलाया कि "मैंने एक २२ वर्ष की स्त्री को आठवीं बार गर्भवती होते देखा । इसके पहले एक २१ वर्ष की मदरासिन को सातवाँ बच्चा होते देखा था । उसने कहा मेरा मर जाना अच्छा है, मेरे हर साल बच्चा होता है । कुछ समय बाद ही वह दुर्बलता से मर गई । ऐसी स्त्रियों की शारीरिक दशा से मानसिक दशा अधिक बिगड़ती है । कलकत्ता में एक अमीर ७५ वर्ष के बुड्ढे को एक तेरह वर्ष की लड़की ब्याही थी । उसने पहले भी दो-तीन विवाह किये थे, परन्तु वे स्त्रियाँ विवाह के कुछ दिन बाद ही मर गईं ।

(५) मद्रास की सिस्टर सुब्बा लक्ष्मी से जब यह पूछा गया कि "क्या आप कह सकती हैं कि १५ वर्ष की आयु से पहले लड़की से सहवास किया जाता है" तो उन्होंने उत्तर दिया कि "९९ प्रतिशत लड़कियों का यही होता है । १४ वर्ष से कम उम्र की भी लाखों लड़कियाँ पत्नी बनाकर सहवास के लिए विवश की जाती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लड़कियों को १०-११ वर्ष की आयु में ही शादी करके ससुराल भेज दिया जाता है । वे बेचारी लड़कपन को जानती ही नहीं । सासें इनके साथ ऐसा व्यवहार करती हैं मानो वे पूरी आयु की स्त्रियाँ हों । उन्हें घर का सारा काम करना पड़ता है । इससे गर्भाशय में खराबी हो जाती है और दूसरी तकलीफें भी हो जाती हैं । मैंने एक ऐसी लड़की को देखा जिसके साथ ११ वर्ष की आयु में सहवास किया गया था । उसे प्रातःकाल ५ बजे से १० बजे रात तक घर का काम करना पड़ता था । वह चार बार अस्पताल में आई पर उसका पति पूरा इलाज हुए बिना ही उसे वहाँ से निकाल ले जाता था ।''

इस प्रकार की सैकड़ों गवाहियाँ और प्रत्यक्ष प्रमाण एकत्रित करके सरकारी कमेटी के अध्यक्ष श्री जोशी ने जो रिपोर्ट तैयार की थी उसके अन्त में उन्होंने लिखा था—

''बाल्यावस्था में मातृत्व बहुत बड़ी बुराई है । इसके कारण हजारों माताओं और शिशुओं की मृत्यु होती है । अनेक लड़कियों का स्वास्थ्य जन्मभर के लिए बिगड़ जाता है और इस प्रकार पूरे राष्ट्र का स्वास्थ्य नष्ट होता है । हमें कानून द्वारा बन्द की गई सती-प्रथा से बाल्यावस्था के मातृत्व की तुलना करनी चाहिए । सती तो कभी-कभी और कम ही होती थीं, उसके कुछ व्यक्तिगत उदाहरण ही ध्यान आकर्षित करते थे, परन्तु बाल्यावस्था का मातृत्व तो चारों ओर दिखाई पड़ता है । यह इतना विस्तृत है कि समाज के सारे ढाँचे पर इसका प्रभाव पड़ता है, अगर स्त्री जीवित रहती है तो तीस वर्ष बाद ही बुढ़िया हो जाती है । उसका सारा जीवन दुःखमय बन जाता है, इस कुप्रथा की भेंट चढ़ जाता है । कुप्रथा का प्रभाव इतना धीरे-धीरे होता है कि लोग समाज पर इसके दूषित प्रभावों के विषय में सोचते तक नहीं । अगर सती-प्रथा को रोकने के लिये कानून उचित था तो मनुष्यता और समाजिक न्याय की दृष्टि से इस कुप्रथा को रोकने के लिए कानून और भी उचित है ।''

इस प्रकार की घटनाओं के आधार पर ही विदेशियों को हिन्दू-समाज की बदनामी करने का मौका मिलता है । इस सम्बन्ध में मिस मैयो की लिखी 'मदर इण्डिया' की किसी समय बड़ी चर्चा हुई थी और उसकी निन्दा करते हुए भी भारतीय विद्वानों को उसके मूल्य तथ्यों को सही मानना पड़ा था । उसने लिखा है कि एक बड़ी आयु के पण्डे ने किसी छोटी-सी लड़की से विवाह किया, पर जब वह उसको संतुष्ट नहीं कर सकी तो उसे उठाकर नीचे फेंक दिया । उसने लिखा है कि ''वह छोटी-सी बच्ची जिसे वधू कहा जाता है, वर के माता-पिता की गृहस्थी में ही शामिल कर ली जाती है । वहाँ उसकी स्थिति एक दम अपनी सास की नौकरानी-सी हो जाती है । सास की भृकुटी सदा तनी रहती है । यदि दुर्भाग्य से 'बच्ची' को बच्चे पैदा करने में देर लगे या उसके लड़कियाँ ही होने लगें तब तो बूढ़ी सास की जीभ कटार हो जाती है । वह आये दिन नई बहू लाने की धमकियाँ दे-देकर उस बेचारी के जीवन को अन्धकारमय बना देती है ।'' कितने ही राजाओं के सम्बन्ध में ऐसी घटनाएँ सुनी गई हैं कि जब उनकी तबियत किसी अल्प-वयस्क लड़की पर आ गई तो उन्होंने उसे राजी से या जबर्दस्ती उपभोग्य वस्तु बना लिया । ऐसी लड़कियों में से कितनी ही का असमय में प्राणान्त भी हो जाता था, पर दूषित सामाजिक नियमों के कारण इसमें रोकटोक तो दूर कोई उनके कार्य की निन्दा करने का भी साहस नहीं करता था ।

इस कलियुग ने हिन्दू-समाज का कहाँ तक पतन किया है इसका कुछ आभास जनगणना की रिपोर्टों की खोज करने से मिलता है । सन् १९३१ की रिपोर्ट में बाल वधुओं और बाल-विधवाओं की संख्या बहुत बतलाई गई थी ।

इस कुप्रथा को मिटाने के लिए समाज-हितैषी पुरुषों ने बहुत पहले आवाज बुलन्द की थी। आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने विवाह की आयु लड़कियों के लिये १८ और पुरुषों को २१ वर्ष घोषित की थी । उनका कहना था कि वेदों में कहीं छोटी आयु के वर-कन्या के विवाह का संकेत नहीं मिलता और स्मृतियों में भी ब्रह्मचर्य आश्रम की कम से कम अवधि २५ वर्ष बतलाई है । इसी अनुपात से लड़कियों को १८ वर्ष तक ब्रह्मचारिणी रहने का नियम बतलाया गया है । ऐसी दशा में ९-१० वर्ष की आयु में विवाह करना शास्त्र विरुद्ध मानना चाहिये । ब्रह्म-समाज आदि संस्थाओं ने भी ऐसा ही प्रचार किया । यद्यपि सरकार की भी इससे सहानुभूति थी। पर प्रजा में असंतोष फैलने तथा अनावश्यक विरोध भड़कने के भय से उन्होंने इसमें शीघ्र ही हस्तक्षेप नहीं किया ।

तो भी कितने ही समाज सुधारक धारा सभाओं में इस बात के लिए प्रयत्न करते रहे कि पत्नी से सहवास की आयु जो १८६० के कानून में कम से कम दस वर्ष की नियत की गई थी बढ़ाकर १४ वर्ष कर दी जाय । पर अनेकों दकियानूसी विचारों के लोग इनका विरोध करते रहे जिससे कोई प्रभावशाली प्रस्ताव पास न हो सका । तब सन् १९२८ में श्री हरविलास शारदा ने एक प्रस्ताव पेश किया जिसमें लड़कियों के विवाह की आयु बढ़ाकर १४ वर्ष करने को कहा गया था । इस पर देशवासियों का अभिमत जानने को सर मोरोपन्त जोशी की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्त की गई, जिसने एक वर्ष में समस्त भारत का दौरा करके ४०० गवाहों की गवाहियाँ लीं और बाल-विवाह की बुराइयों को प्रकट करते हुए प्रस्ताव को पास करने की सिफारिश की और तब १९२९ में यह पास होकर कानून बन गया।

पर कानून पास हो जाने से ही क्या होता है जब तक समाज को स्वयं उसमें रुचि न हो। इसलिए शारदा एक्ट के कानून बन जाने पर भी उसका कोई विशेष परिणाम देखने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में नहीं आया । जब ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारत मंत्री से इस सम्बन्ध में प्रश्न किया गया तो उन्होंने बताया कि अगस्त १९३२ तक २ वर्ष ५ माह के भीतर इसके अनुसार ४७३ मुकदमे चलाये गये, जिनमें से १६७ में दण्ड दिया गया, २०७ छूट गये ९८ चल रहे हैं। सफल होने वाले मामलों में से केवल १७ में कैद की सजा-पूरी या अधूरी-दी गई । इस प्रकार के दण्ड से अन्धविश्वासी जनता अपनी परम्पराओं का त्याग कैसे कर सकती थी ?

इस कानून के इस प्रकार असफल होने का कारण यह था कि सरकार ने इसे कट्टरपंथी लोगों के विरोध के डर से डरते-डरते बनाया था और उसमें ऐसे नियम रख दिये थे जिससे उसका उपयोग करना कठिन था । कानून भंग करने वालों पर सरकार की तरफ से मुकदमा नहीं चलाया जाता था वरन् कोई पड़ोसी या सार्वजनिक कार्यकर्त्ता जब अदालत में अर्जी देकर इस प्रकार की घटना की शिकायत करता और सौ रुपया जमानत के रूप में जमा कर देता तब मुकदमा चलाया जाता था । सर्व साधारण का बहुमत पहले ही इस प्रकार के सुधार के पक्ष में न था तब थोड़े से सुधारक देश भर में होने वाले लाखों विवाहों पर कहाँ तक निगाह रखते ? फिर सभा में भाषण देकर अथवा अखबार में लेख लिखकर किसी कुप्रथा का विरोध करना एक बात है और उसे मिटाने के लिए तन, मन, धन से परिश्रम करना लोगों का विरोध मोल लेना दूसरी बात है । इसीलिए आरम्भ में कुछ लोगों को सजा मिल जाने पर भी सुधारकों का यह उत्साह क्षणस्थायी सिद्ध हुआ और उसके बाद वर्षों में कभी एकाध बार ही इस प्रकार के मुकदमें का नाम सुनने में आने लगा ।

बाल-विवाह की हानियाँ छिपी हुई नहीं हैं । इससे विधवाओं की संख्या असंदिग्ध रूप से बढ़ती है और उसके फलस्वरूप समाज में तरह-तरह के दुराचारों की वृद्धि होती है । स्त्रियों के स्वास्थ्य पर इसका बड़ा घातक प्रभाव पड़ता है और उनकी सन्तान निर्बल, अस्वस्थ और हीन वीर्य होती है । ऐसी स्त्रियों को प्रदर आदि योनि रोगों का होना तो अनिवार्य है । इससे उनका स्वास्थ्य सदा के लिए निर्बल हो जाता है । वे जन्म भर किसी न किसी रोग के पंजे में फँसी रहती हैं, वे अपनी गृहस्थी के कर्त्तव्यों का कभी समुचित रूप से पालन नहीं कर सकतीं और इस प्रकार परिवार तथा समाज के लिए भार रूप ही सिद्ध होती हैं ।

शिक्षा प्रचार में वृद्धि और स्त्रियों को समान राजनैतिक अधिकार मिल जाने से इन पन्द्रह वर्षों में उपर्युक्त अवस्था में स्वभावत: कुछ अन्तर पड़ा है, पर अब भी पुरुषों और स्त्रियों में इस सम्बन्ध में कोई जाग्रति देखने में नहीं आती । अब चाहे बाल-वधुओं और बाल-माताओं की संख्या प्रतिशत कुछ घट गई हो तो भी लाखों कोमल, निरीह बालिकाएँ इस बाल-विवाह रूपी भयंकर राक्षस की दाढ़ों तले कुचली जा रही हैं । राजस्थान आदि प्रान्तों की अनेक जातियों में तो अब भी एक-एक और दो-दो वर्ष की बच्चियों के विवाह साधारण बात समझी जाती है, पर उनको अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखते हुए भी किसी को उन्हें मिटाने या रोकने का ख्याल नहीं आता । इनसे भी अधिक दुष्परिणाम पैदा करने वाले विवाह वे हैं जो दस, बारह या पन्द्रह वर्ष की लड़कियों के चालीस, पचास या साठ वर्ष के पुरुषों के साथ कर दिये जाते हैं । ऐसे विवाहों में लड़की का स्वास्थ्य नष्ट होना और दस पाँच वर्ष में उसका विधवा होना सुनिश्चित होता है । तो भी खेद है कि लड़की के बदले रुपया लेने के लालच से या लम्बा-चौड़ा दहेज न दे सकने के कारण इस प्रकार के अनमेल विवाह पर्याप्त संख्या में होते रहते हैं ।

भारतीय स्त्रियाँ भी इस सम्बन्ध में कम दोषी नहीं हैं । यद्यपि इस समय वे पुरुषों के समान राजनैतिक अधिकार पा गई हैं और केन्द्रीय मंत्री तथा प्रान्तीय गवर्नर, राजदूत आदि जैसे सर्वोच्च पदों पर अधिष्ठित होती रहती हैं, पर भारतीय बालिकाओं पर होने वाले इस अमानुषिक अत्याचार को दूर करने की तरफ इन दिनों उन्होंने कोई चेष्टा नहीं की । चाहे तो यह कारण हो कि समाज के जिस उच्च स्तर से वे सम्बन्धित हैं उसमें इस कुप्रथा का अन्त हो चुका है, या वे इस प्रकार के सामाजिक सुधार के कार्यों में इसलिए भाग लेना न चाहती हों कि इससे जनता के एक भाग में उनका विरोध होने लगेगा और फिर चुनाव के अवसर पर उनके वोटों में कमी पड़ जायेगी । कुछ भी हो सुशिक्षित और साधन सम्पन्न महिलाओं तथा पुरुषों का समाज का पतन करने वाली इस कुरीति की तरफ से उदासीन रहना कभी उचित नहीं कहा जा सकता ।

बाल-विवाह अर्थात् बाल-वध

लड़के को श्रेष्ठ और लड़की को निकृष्ट मानने की मानसिकता आधी जनसंख्या को प्रताड़ित करने के समान है । इसे मानवीय अधिकारों का अपहरण भी माना जा सकता है । जिस वर्ग ने अपना रक्त-माँस देकर भ्रूण के शरीर का निर्माण और पयपाचन कराकर समर्थ बनाया, उसके उपकारों का यह दण्ड कि उसकी समूची बिरादरी को हेय माना जाय । इसी प्रकार जो धर्मपत्नी अपने समूचे जीवन में समर्पिता की तरह जुड़ी और परिवार वाटिका सुविकसित बनाने में अपनी समूची शक्ति लगाई, इसका दण्ड उनकी पुत्रियों को दिया जाय, यह कैसी अनीति है और कैसा अत्याचार ?

कन्या का जन्म दुर्भाग्य माना जाता है । उसके आगमन का समाचार सुनकर घर भर के मुँह लटक जाते हैं । लड़के-लड़कियों के साथ भोजन, वस्त्र, शिक्षा में अन्तर किया जाता है कि उन पर खर्च कम से कम करना पड़े । लाड़-दुलार में भी भारी भेदभाव है । इस भार को जल्दी से जल्दी उतार फेंकने के लिए जल्दी विवाह करके इस कूड़े-कचरे को दूसरे के घर में ठूँस देने का प्रयत्न किया जाता है । बाल-विवाह के पीछे हो सकता है कि यह ललक भी किसी सीमा तक काम करती हो कि एक धूम-धमाके वाले चहल-पहल का दृश्य जल्दी घर-आँगन में होती दीख पड़े,

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर मुख्य बात भार उतारने की ही होती है । सो इसके विरोध में कानून होते हुए भी उस प्रचलन में कहीं कोई कमी नहीं आ रही है । दुध-मुँही बच्चियों के बड़ी संख्या में विवाह होने के समाचार अभी भी मिलते जाते हैं । इन विवाहों का परिणाम एक प्रकार से उन बालिकाओं को धीमी आत्महत्या के लिए विवश करने के रूप में सामने आता है ।

बाल-विवाह में छोटी बच्चियों के विवाह प्रायः अवयस्क लड़कों से ही होते हैं । विवाह होते ही घर-बाहर का माहौल ऐसा बनता है, जो उन्हें यौनाचार के लिए उकसाता है । इच्छा या अनिच्छा से वह प्रसंग चल भी पड़ता है । इसका परिणाम यह होता है कि वर-वधू की उठती जवानी किशोरावस्था में ही निचुड़कर धूलि में मिल जाती है । जिस पेड़ की गोंद कुदाली मार-मारकर निकाली जाती रहती है, उसका विकास रुक जाता है और अल्पायु में ही सूखने, उखड़ने लगता है । यही दुर्दशा उन अल्प-वयस्क बालक-बालिकाओं की भी होती है, जिनका खेलने-कूदने की उम्र में विवाह कर दिया गया है । उनका स्वास्थ्य निश्चित रूप से बिगड़ता है । मानसिक विकास रुकता है ।

सर्वेक्षणों से पता चलता है कि १२ से १५ वर्ष की आयु वाली अवधि में लड़कियाँ तेजी से गर्भ धारण करती हैं । जिनका स्वयं का शरीर विकसित नहीं हो पाया है वह विकसित स्तर के बच्चों को जन्म दे सकेंगी इसकी आशा नहीं ही की जानी चाहिए । किशोरावस्था के आरम्भिक चरण में लड़कियों को रजोदर्शन होते ही उनके शरीर में विशेष शक्तिशाली डिम्ब कीट बनते हैं, जो दुर्बल शुक्राणुओं से भी गर्भ धारण कर लेते हैं । यह दूसरी बात है कि बालिकाओं के पेट में भ्रूण का निर्माण और परिपालन कैसा होता है ? निश्चय ही उनमें अनेक त्रुटियाँ रह जाती हैं । गर्भावस्था में जननी और बालक के बीच में रस्साकसी बनी रहती है । दोनों ही अपने-अपने शरीर की आवश्यकता पूर्ति के लिए छीन-झपट करते हैं । फलस्वरूप दोनों के ही शरीरों पर असाधारण दबाव पड़ते हैं और दोनों ही अविकसित, अस्वस्थ बनने लगते हैं ।

अविकसित आयु की गर्भिणियाँ आमतौर से रक्ताल्पता का शिकार हो जाती हैं । उनका पाचन तन्त्र गड़बड़ा जाता है और भोजन ठीक तरह नहीं पचता । अनिद्रा की शिकायत रहने लगती है । गुर्दों पर असाधारण दबाव पड़ने से उनकी मूत्र-विसर्जन प्रक्रिया दोषमुक्त हो जाती है । इसी प्रकार मरते-खपते किसी प्रकार नौ महीने पूरे करती हैं । अविकसित जननेन्द्रिय द्वार से बालक का उत्सृजन अत्यधिक कठिन पड़ता है । कई बार तो मार्ग में ही बच्चे मर जाते हैं या उन्हें पेट चीरकर बाहर निकालना पड़ता है । प्रसव के उपरान्त किशोरी माताओं के आहार-विहार, उपचार का बढ़िया प्रबन्ध न होने पर वे जो गँवाती है, उनकी क्षतिपूर्ति नहीं कर पातीं । इसलिए रुग्ण रहने लगती हैं । रोग निरोधक शक्ति के अभाव में वे जीर्ण रोगों से ग्रसित हो जाती हैं और थोड़े बहुत दिन जीकर अपना जीवनकाल तरुणाई आने से पूर्व ही समाप्त कर लेती हैं । इस बालहत्या का पाप या कलंक उन अभिभावकों पर लगता है जो जल्दी भार उतारने की सनक में कन्याओं को उस पिंजड़े में फँसा देते हैं, जिनमें उनका खेलकूद, विकास, अध्ययन आदि तो रुकता ही है, मरण का दिन भी समीप खिंच आता है ।

अमेरिका के हाफकिंस विश्वविद्यालय द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण से पता चला है कि १२ से १७ वर्ष की आयु में गर्भधारण करने वाली लड़कियों में से बहुत बड़ी संख्या में प्रसव-व्यथा से प्रताड़ित होकर दम तोड़ देती हैं । इस आयु से आगे निकल जाने पर, १७ से आगे निकल जाने वाली लड़कियों की प्रसव मृत्यु का अनुपात उनकी अपेक्षा आधा होता है और बीस वर्ष के बाद गर्भवती होने वाली तरुणियों की प्रसव मृत्यु एक चौथाई ही रह जाती है ।

जैमाइका (अफ्रीका) के समीपवर्ती एक सर्वेक्षण से महत्त्वपूर्ण जानकारी मिली है । इस जाँच-पड़ताल के लिए नाइजीरिया क्षेत्र को विशेष रूप से चुना गया है । वहाँ पाया गया कि १४ वर्ष की अल्पायु में गर्भवती होने वाली लड़कियों की प्रसव मृत्यु १७ प्रतिशत थी । १६ से २० वर्ष की आयु में यह दर घटकर ७ प्रतिशत रह गई किन्तु जो २० और २४ वर्ष के बीच गर्भवती हुयीं उनकी मृत्यु दर प्रायः ३ प्रतिशत थी । बाल-विवाह का प्रचलन जिन क्षेत्रों में है वहाँ गर्भवतियों की मृत्यु संख्या हजार पीछे ४३ पाई गयी । यह विचारणीय दुष्परिणाम है, जिन्हें जानबूझकर किया गया कन्या-वध कहा जा सकता है ।

अमेरिका में गर्भवती बालिकाओं की संख्या तो अत्यधिक होती है, पर उन्हें गर्भ पालने आदि से बचा लिया जाता है । मृत्यु भले ही न हो पर वे सदा के लिए रोगी और दुर्बल हो जाती हैं । उठती आयु में गर्भधारण की क्षमता अधिक होती है । इसे तो एक स्वर से स्वीकार किया गया है । अमेरिका में सहशिक्षा है और लड़की-लड़कों के एकान्त मिलन पर उतना प्रतिबन्ध भी नहीं है । इसी का परिणाम है कि वहाँ छोटी आयु की बच्चियाँ गर्भवती हो जाती हैं । वे पढ़ने के साथ-साथ नवजात बालकों को पालने की स्थिति में तो होती नहीं इसलिए सरकारी सुविधा का लाभ उठाकर सरकारी अस्पतालों में गर्भपात कराने जा पहुँचती हैं । अमेरिकी विशेषज्ञ स्टेनली हेनरिच ने आँकड़ों के आधार पर बताया है कि उस देश में अल्पवयस्क बालिकाओं का गर्भपात औसत हर चार के पीछे एक है । जो सरकारी अस्पतालों में जाने की अपेक्षा प्राइवेट डॉक्टर से निजी अपना कार्य करा लेती हैं वे इसके अतिरिक्त हैं । लगभग ऐसी ही स्थिति इंग्लैण्ड, आस्करलैण्ड, हालैण्ड, बेल्जियम आदि देशों की है ।

अब एक नया प्रचलन गर्भावस्था में भ्रूण का लिंग पहचानने की विधि निकली है । इस आधार पर जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं उससे भी कन्या भ्रूणों का प्रायः गर्भपात करा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिया जाता है । यह सब बालिकाओं के प्रति बरती जाने वाली उपेक्षाओं का ही परिणाम है ।

अपने देश में 'बाल-विवाह' को जितना दोष दिया जाय उतना ही कम है । जिन वर्गों में इसका प्रचलन है, उन्हें रोकने के लिए सरकारी और सामाजिक कदम दृढ़तापूर्वक उठाये जाने चाहिए ।

बाल-विवाह एक भयंकर व्याधि

भारत की जनसंख्या ९० करोड़ से अधिक है । दिन प्रतिदिन इसमें बढ़ोत्तरी होती जाती है, परन्तु दूसरी ओर समाज के प्रत्येक वर्ग कृषक, व्यापारी, कर्मचारी, श्रमिक, उद्योगपति की कार्यशक्ति का दिन-दिन ह्रास होता जा रहा है । देश में नागरिक अपने तन ढकने और पेट भरने की क्षमता से भी वंचित होते जा रहे हैं । यदि विदेशों से अनाज का आयात बन्द हो जाए तो बहुत बड़ी तादाद में देशवासियों को काल के गाल में चला जाना पड़े ।

इन परिस्थितियों और समस्याओं के वास्तविक कारणों की हमें खोज करनी पड़ेगी । ईश्वर अंश कहलाने वाला मनुष्य अपनी मानवोचित शक्तियों एवं विभूतियों से क्यों वंचित होता जा रहा है ? जिस पुत्र के जन्म पर परिवार, गाँव तथा देश को हर्षोत्फुल होना चाहिए, उसी का जन्म आज भार स्वरूप क्यों स्वीकार किया जा रहा है ? परिवार नियोजन योजना के अन्तर्गत कृत्रिम उपायों से सन्तति निरोध क्यों किया जा रहा है ?

इन सब प्रश्नों का उत्तर है कि नागरिकों में जो कार्यक्षमता होनी चाहिए वह नहीं है । उनकी बढ़ोत्तरी समाज पर भार है । यह भी विचारणीय है कि यह भार क्यों है ? क्योंकि सन्तानें कमजोर पैदा होती हैं । दुर्बल सन्तानें ही सब समस्याओं की हेतु हैं । जैसे कारखानों में अच्छे माल की जगह पर रद्दी माल निकलने लगे तो उसके उत्पादन पर लगाया गया धन और श्रम व्यर्थ जाता है साथ ही उसकी खपत भी नहीं होती । दोनों तरफ से उसकी छीछालेदर होना स्वाभाविक है ।

बिल्कुल यही स्थिति आज ईश्वर के विशाल कारखाने की है । इसमें से रद्दी, निकम्मी, कमजोर, गुणहीन सन्तानें बड़ी तेजी से जन्म लेती जा रही हैं ।

उसके अनेक कारणों में एक सबसे बड़ा कारण 'बाल-विवाह' का भी है । अन्य देशों की औसत आयु ५० वर्ष से ऊपर है, परन्तु हमारे देश की २३ वर्ष है । लड़के-लड़की अपने यौवन में पहुँचने से पहले ही बूढ़े हो जाते हैं । उनकी ज्योति कम हो जाती, दाँत उखड़ जाते और चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं । एक दो बच्चे जन्मने के बाद ही स्त्री बुढ़ापे के सोपान में पहुँच जाती है ।

यह सब इसलिए होता है कि वीर्य के परिपक्वावस्था में पहुँचने से बहुत पहले ही माँ-बाप, लड़के, लड़कियों का ब्याह कर देते हैं । माँ और दादी की सबसे बड़ी चाह 'बहू का मुँह देखने' की होती है । बच्चा १० वर्ष का भी नहीं हुआ कि उसकी शादी हो गई है । कुछ जातियों जैसे— कुर्मी, अहीर, कुम्हार, कहार आदि में तो जन्म के ५-६ वर्ष बाद ही लड़के-लड़कियों का ब्याह ही कर लेते हैं ऐसे भी उदाहरण दुर्लभ नहीं हैं कि लड़के लड़की को गोदी में लेकर भाँवर घुमाया गया ।

बेचारे बच्चे अपने विवाह के उत्सव को अपने अनेक खेलों में से एक खेल समझते हैं । वे भी खूब सजधज कर उसी प्रकार दौड़ते घूमते हैं जैसे अन्य बराती । उन्हें पता भी नहीं रहता कि माँ-बाप उनका बलिदान कर रहे हैं । बहुत बचपने से कामुकता के विचार पैदा कर दिये जाते हैं । यही कारण है कि समय से पूर्व सूखने वाले फल के समान उन्हें जीवन रस से वंचित हो जाना पड़ता है । फिर ऐसी सन्तानें अपनी जिन्दगी का क्या स्वाद पावें ? वे तो येनकेन प्रकारेण पशुवत जीवन जीकर मृत्यु को प्राप्त होते हैं ।

यह एक ऐसी भयंकर व्याधि है जो क्षय रोग के समान हमारे समाज में प्रवेश कर रक्त चूस रही है । जिस पशु के 'जोंक' लग जाए वह कितना ही पौष्टिक भोजन क्यों न करे, दुर्बल ही होता जाएगा, ऐसे ही समाज में बाल-विवाह रूपी जोंक लगी है, इसलिए उन्नति और विकास के सारे प्रयास निष्फल होते जा रहे हैं ।

प्राचीन आर्ष ग्रन्थों में २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करके गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने का विधान है । समाज में युगों तक यह प्रथा प्रचलित भी थी । कन्या को विवाह के समय १८ वर्ष की होना चाहिए और वर को २५ वर्ष का । तभी राम-कृष्ण, अर्जुन, भीम, कर्ण जैसे महारथी पैदा होते थे । अकेले भीम में दस हजार हाथियों का बल था । हनुमान जी संजीवनी बूटी वाला पहाड़ ही उठा लाये थे । कुछ विशेष व्यक्तियों तक ही वीरता सीमित नहीं थी, समाज के जन-साधारण लोग हृष्ट-पुष्ट और शारीरिक तथा मानसिक शक्ति से सम्पन्न होते थे ।

भारत के दुर्दिन के साथ अनेक रोग लगे । जब देश में विदेशी शासन हुआ तो यवनों के कामुक विचारों के सामने आर्य ललनाओं का सतीत्व और पतिव्रत धर्म भी सुरक्षित न रह सका । बादशाह लोग राजाओं की सुन्दर कन्याओं से विवाह कर लेते थे, राज कर्मचारी भी इसी प्रकार गाँव और नगर में जिस किसी की कन्या को सुन्दर देखते थे उसे अपनी अर्धांगिनी बनाने को उन्मुक्त हो उठते थे । सत्ता उनके हाथ में थी फिर शक्ति से अपने अरमानों को पूरा करने में उन्हें संकोच नहीं होता था ।

इसी कारण समाज में पर्दा प्रथा और बाल-विवाह का प्रचलन होने लगा । पुराने समय में हमारे समाज में पर्दा प्रथा नहीं थी । सीता और द्रौपदी निःसंकोच भाव से अपने पतियों के साथ वर्षों तक वन में भी रहीं ।

लेकिन जब लोगों ने अपना जीवन और सम्मान सुरक्षित नहीं देखा तो विवश होकर कन्याओं को घर में छिपाने लगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शीघ्रातिशीघ्र कन्या का पाणिग्रहण संस्कार सम्पन्न करके वे सम्मानपूर्वक अपने भार से मुक्त हो जाते थे । सत्ताधारी कामुक लोगों के सामने दलील प्रस्तुत करने का अवसर भी उन्हें मिल जाता था । इसी प्रकार आपत्तिकालीन अस्थायी व्यवस्था धीरे-धीरे स्थायी रूप ग्रहण करके समाज के जीवन को जोंक की तरह चूसने लगी । कई सौ वर्षों तक प्रचलित होने के कारण अब यह बहुसंख्यक लोगों द्वारा स्वीकृत हो चुकी है ।

भारत अब स्वतन्त्र हो चुका है । विदेशी दासता की बेड़ियों से मुक्ति मिल चुकी है लेकिन यह स्थिति लाने के लिए पचासों वर्ष तक अनेक विभूतियों को संघर्षरत रहकर अपना बलिदान करना पड़ा ।

राजनैतिक दासता के समान सामाजिक दासता और अधिक उग्र है । उसे सरलता से मिटाया नहीं जा सकता । जातीय जीवन में वह इतने गहराई तक पहुँच चुकी है जहाँ से निकालना सरल नहीं है ।

समाज का सत्यानाश करने वाली इन प्रथाओं को समूल नष्ट करने के लिए अनेक समाज सेवी युवकों को कमर कसकर आना पड़ेगा । प्रत्येक पढ़े-लिखे युवक को आज प्रहलाद के समान अपने माता-पिता से सत्य और कल्याण के लिए लोहा लेना पड़ेगा ।

शादी-ब्याह के अवसरों पर, सामूहिक आयोजनों में, घर-घर जाकर माता-पिता को समझाना चाहिए कि वे अपने लड़के-लड़की का विवाह अल्पायु में न करें ।

सरकार का शारदा ऐक्ट इसी प्रथा को रोकने के लिए बना था, लेकिन वह अपने दोषों के कारण निष्फल सिद्ध हो चुका । सरकार जब अनेक कानून बनाती रहती है तो उसे ऐसी प्रथाओं को रोकने के लिए भी अच्छे कानून बनाना चाहिए । 'बाल-विवाह' की कुप्रथा को रोकना आज की सबसे बड़ी माँग है । यह समय की पुकार है । इसे मिटाकर ही हम अपने जातीय जीवन को सबल और शक्तिशाली बना सकने में समर्थ हो सकते हैं तभी मनुष्य जीवन की श्रेष्ठता का वास्तविक प्रतिपादन होगा ।

बाल-विवाह जैसी कुरीतियों से पल्ला छुड़ाएँ

बाल-विवाह का समर्थन पुरातन भारतीय धर्मशास्त्रों में कहीं भी नहीं है । मध्य एशिया से आये लुटेरों और इस देश के सामन्तों द्वारा धन की लूटपाट के साथ-साथ जब युवतियों के अपहरणों का आतंक भी फैला तब समाज के विचारशीलों ने आपत्तिकालीन समय धर्म के अनुरूप बाल-विवाहों का प्रचलन किया । पर्दा प्रथा भी उन्हीं की देन है । आक्रामकों ने अपने चंगुल में फँसी हुई औरतों को किसी से बात तक न करने देने की दृष्टि से पर्दा चलाया । सामान्य जनों ने इस अनुकरण में यह भलाई देखी कि उनके घर परिवार की इज्जत बची रहे । लुटेरों को किसी के घर में सुन्दरी होने का पता न चले । बाल-विवाह में अधिक सुरक्षा समझी गई और वह प्रथा चलाई गई । अल्पवयस्क बालिकाओं के कन्यादान का अधिक पुण्य बताया गया । ऐसे उल्लेख भी धर्मशास्त्रों में उन्हीं दिनों ठूँसे गये ।

पर जब वह समय धर्म, स्थिर परम्परा बनने लगा तो विचारशीलों को चिन्ता भी कम नहीं हुई । उसे रोकने के लिए उन्होंने प्रयत्न भी कम नहीं किए ।

सन् १८२९ से राजा राममोहन राय जैसे समाज सुधारकों ने अँग्रेज सरकार को सहमत करके सती प्रथा पर प्रतिबन्ध लगवाया । उन दिनों विधवाओं की बड़ी दुर्गति थी । उन्हें पति के साथ जल जाने के लिए घर वाले उत्तेजित करते थे ताकि पीछे उनकी सुरक्षा एवं निर्वाह व्यवस्था का झंझट न रहे । इस कानून के बन जाने से उस कुप्रथा पर कारगर अंकुश लगा ।

इसके बाद इन्हीं दिनों सन् १८७२ में सिविल मैरिज एक्ट बना जिसमें बहू की न्यूनतम आयु १४ वर्ष और वर की १८ वर्ष ठहराई गई । उन दिनों यह भी एक बड़ा सुधार था, क्योंकि प्रथा के अनुसार इससे कहीं अधिक छोटी आयु में ही विवाह होने लगे थे । स्वामी दयानन्द जैसे अन्य समाज सुधारक भी इस कुप्रथा को हटाने के लिए वातावरण बनाने में लगे रहे ।

पुरातन धर्मशास्त्रों में बाल-विवाह का समर्थन कहीं नहीं है । वरन् वयस्क होने के उपरान्त ही विवाह करने का अनुबन्ध है । मनुस्मृति में कहा गया है कि रजस्वला होने के तीन वर्ष उपरान्त ही कन्या का विवाह हो इससे पूर्व नहीं । धनवन्तरि के अनुसार १६ वर्ष से कम आयु की कन्या और २५ वर्ष से कम आयु के वर को प्रजनन कर्म के अयोग्य ठहराया है । इस मर्यादा को तोड़ने पर जनक जननी का स्वास्थ्य नष्ट होता है और संतान रोगी उत्पन्न होती है । वैदिक ऋचाओं में, स्मृतियों में तथा सूत्र ग्रन्थों में भी ऐसा ही निर्धारण है ।

राजस्थान में विचारशील राजपूत वर्ग के लोगों ने समाज सुधार के उद्देश्य से फरवरी १८८९ में हित-कारणी सभा की स्थापना की । इसमें ऐसा कानून बनाने का निश्चय हुआ जिसमें लड़की की आयु १४ वर्ष, लड़के की आयु १८ वर्ष से कम न हो । इसके लिए उन्हीं दिनों कई रियासतों में कानून भी बने ।

यह सुधार आन्दोलन चलता रहा । २३ सितम्बर, १९२९ को केन्द्रीय धारा सभा में शारदा एक्ट पास हुआ । धारा सभा के सदस्यों में से ६७ ने उसके पक्ष और १४ ने विपक्ष में मत दिये । यह कानून ३० अप्रैल, १९३० से देश भर में लागू किया गया है इसमें भी न्यूनतम आयु १४ और १८ वर्ष रखी गई । कानून तोड़ने वालों को तीन महीने की सजा और एक हजार रुपये जुर्माने का प्रावधान रखा गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सन् १९७८ में इस कानून में संशोधन करके वधू की आयु १८ वर्ष और वर की २१ वर्ष निर्धारित कर दी गई, लेकिन फिर भी घटना प्रसंग ये सुनने को मिलते ही रहते हैं कि अमुक स्थान पर एक साथ कई बाल-विवाह हुए । कानूनी प्रतिबन्धों से तनिक भी भयभीत न होकर यह खिलवाड़ चलती ही रहती है ।

बाल-विवाह की कितनी ही हानियाँ प्रत्यक्ष हैं । कच्ची आयु में यौनाचार से बच्चों का स्वास्थ्य क्षीण होता है । इसका प्रभाव लड़कियों पर तो और भी बुरा पड़ता है । वे यौन रोगों से ग्रसित हो जाती हैं और आजीवन दुःख भोगती हैं । इस स्थिति में जन्मे बालक आरम्भ से ही दुर्बल एवं रोगी उत्पन्न होते हैं और बड़े होने पर भी असमर्थ, जर्जर एवं गई-गुजरी शारीरिक, मानसिक स्थिति में पड़े रहते हैं । उनसे कोई बड़ा पुरुषार्थ नहीं बन पड़ता ।

जनसंख्या वृद्धि की दृष्टि से भी कुप्रथा का व्यापक दुष्प्रभाव पड़ता है । छोटी आयु से ही प्रजनन चल पड़ने पर बच्चों की संख्या स्वभावतः अधिक हो जाती है । बढ़ी हुई जनसंख्या देश के लिए अभिशाप बनती जा रही है । इसका एक बड़ा कारण बाल-विवाह का प्रचलन भी है ।

विज्ञजनों के प्रतिपादन और विचारशीलों के सुधार प्रयत्नों के बावजूद इन दिनों भी बाल-विवाहों का दौर कम नहीं हुआ है । वह सुशिक्षित प्रगतिशील लोगों से एक-एक सीमा तक हट गया है, किन्तु पिछड़े लोग अभी तक इस कुप्रथा को छाती से चिपकाये हुए हैं और यह नहीं देखते कि इससे उनके बच्चों का, सारे समाज का किस प्रकार अहित होता है ।

गत वर्ष राजस्थान के मेवाड़ अंचल में के अवसर पर लगभग दस हजार बाल-विवाह हुए ।

बैसाख सुदी तीज, जिसे अक्षय तृतीया भी कहा जाता है, वर्ष में एक ऐसा दिन होता है, जिसमें विवाह के लिए बेपूछ साया माना जाता है । रिश्ता पक्का होने पर इस दिन विवाह करने हेतु 'पंडितजी' से पूछना नहीं पड़ता ।

राजस्थान तथा विशेष रूप से इसके मारवाड़ क्षेत्र में बाल-विवाह की परम्परा बहुत पुरानी है, आरवातीज का दिन विशेष रूप से मध्यमवर्गीय अथवा गरीब ग्रामीण परिवारों में विवाह हेतु सुविधाजनक भी रहता है । गेहूँ, चना, जौ व सरसों आदि फसलों का पैसा आ चुका है, खेतों में भी इस समय काम नहीं रहता । गर्मी आरम्भ हो जाती है, परन्तु कड़ी तपन नहीं होती ।

हर गाँव में इस दिन ५०-६० विवाह तो होते ही हैं, विवाह की अधिकता से कुछ समस्याएँ भी खड़ी होती हैं, परन्तु उनकी परवाह नहीं की जाती, एक ही धुन रहती है कि विवाह का सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त निकल न जाय, कई लोग तो बच्चे के गर्भावस्था में ही होने पर तय कर लेते हैं कि उनके पुत्र अथवा पुत्री का विवाह आगामी आरवातीज को होगा, फेरे पड़ते रहते हैं और ये बच्चे अपनी माताओं की गोद में झपकी लेते रहते हैं या सोते रहते हैं, पण्डितों के न होने पर परिवार या गाँव का कोई बुजुर्ग ही फेरे लगवा देता है ।

लखनऊ विश्वविद्यालय के जनसंख्या अनुसंधान विभाग के द्वारा किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार उत्तर प्रदेश के पिछड़े क्षेत्रों में अभी भी बाल-विवाह का बहुत प्रचलन है । प्रायः दो तिहाई विवाह ऐसे होते हैं जिनमें वधू १८ से और वर २१ से कम आयु के होते हैं । उपर्युक्त विवाह मर्यादा में से जोड़ में से एक तो कम होता ही है ।

आवश्यकता इस बात की है कि बाल-विवाह जैसी अन्यान्य कुरीतियों का निराकरण करने के लिए विचारशील समुदाय कटिबद्ध हो और उन भ्रान्तियों, विकृतियों से देशवासियों को छुड़ाएँ जिनके कारण तबाही और बर्बादी बढ़ती ही चली जा रही है ।

वैवाहिक कुरीतियों से समाज को बचाइए

विवाह मानव-समाज की एक महत्त्वपूर्ण व्यवस्था है । कहा जाता है कि संसार एक समय ऐसा था जब मनुष्य भी पशुओं की तरह निवास करता था और उसे माता, पिता, भाई, बहिन आदि का कोई ज्ञान न रहता था । उस समय वह पशुओं की अपेक्षा भी हीन अवस्था में रहता था, क्योंकि उनमें न हाथी के समान बल था, न शेर के समान तेज दाँत और नाखून थे, न उनका शरीर गैंडे के समान कठोर ढालों से सुरक्षित था और न वह गिरगिट की तरह रंग बदल कर आत्मरक्षा कर सकता था, पर उसमें एक ऐसी सहयोगी बुद्धि और संगठन की प्रवृत्ति अवश्य थी, जिसका सहारा लेकर वह पशुओं पर विजय पा लेता था और अपनी रक्षा और वृद्धि में समर्थ होता था, पर उस समय भी किसी नियत घर, भोजन और वस्त्रों की स्थायी व्यवस्था न होने से मनुष्य समुदाय बनाकर गुफाओं या घने पेड़ों में निवास करते थे । उस अवस्था में परिवार का निर्माण न होने से स्त्री-पुरुषों में पाये जाने वाले आजकल के से रिश्तों का अस्तित्व नहीं था और समूह की सब स्त्रियाँ सभी पुरुषों की पत्नियाँ समझी जाती थीं और उनसे उत्पन्न लड़के-लड़कियाँ भी समुदाय की सन्तान माने जाते थे । महाभारत में एक उपाख्यान आता है कि इस व्यवस्था की खराबियों को देखकर श्वेतकेतु नामक सामाजिक नेता ने विवाह-प्रणाली की स्थापना की और तभी से वर्तमान कुटुम्ब-व्यवस्था का श्रीगणेश हुआ ।

इसमें सन्देह नहीं कि विवाह-प्रथा ने मानव-समाज को सुसंगठित और विकसित बनाने में महत्त्वपूर्ण योग दिया है और इसके कारण मनुष्य बड़े-बड़े परिवारों में सम्मिलित होकर सहयोग की भावना को बहुत अधिक बढ़ाकर महत्त्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन कर सका है । इसीलिए भारतीय मनीषियों ने विवाह को एक धर्म-कृत्य का रूप देकर घोषणा की, कि पति-पत्नी सम्बन्ध सुनिश्चित और पवित्र माना जाय और वे जीवन-क्षेत्र में इस प्रकार एकात्म भाव से कार्य करें कि उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति एक और एक मिलकर ग्यारह के बराबर हो जाय । आगे चलकर यह परिवार ही जाति का आधार बन गया और उन्हीं से राष्ट्रों की रचना हुई ।

इस प्रकार के विवाह का प्रचार होने पर भिन्न-भिन्न प्रदेशों में स्थानीय परिस्थिति के अनुसार उसके रस्म-रिवाजों में कुछ अन्तर तो अवश्य रहा, पर उसका मुख्य रूप यही रहा कि कन्या का पिता किसी सुयोग्य वर को देखकर पुरोहित द्वारा कुछ धार्मिक कृत्य कराके अपनी कन्या को वर के लिए अर्पण कर देता था और साथ में उन्हें कुछ अन्न, वस्त्र, बर्तन आदि अपनी गृह-सामग्री में से दे देता था, जिससे उनको अपने निर्वाह की व्यवस्था बनाने में सुविधा हो । प्राचीन स्मृतियों तथा पुराणों के उपाख्यानों में विवाह-प्रणाली का जो वर्णन मिलता है उसमें कहीं विवाह के पहले दहेज की रकम तय करने, बड़ी-बड़ी बारात ले जाने, कई-कई दिन तक नाच-गान और दावतें होने का जिक्र नहीं है । उनमें हवन करके देवताओं की साक्षी में वैवाहिक प्रतिज्ञाओं के करने का विधान विस्तारपूर्वक अवश्य दिया गया है, पर तरह-तरह के अलन-चलन, नेग-जोग और खर्चीले आडम्बरों का उल्लेख कहीं नहीं पाया जाता । अगर कुछ काव्यों और महाकाव्यों में बढ़ा-चढ़ाकर उनका वर्णन भी किया गया है तो वह पिछले कवियों की रचना है जो उन्होंने अपने समय की परिस्थिति को देखकर तदनुसार गढ़ डाली है ।

विवाह की अधिकांश रस्मों का सामयिक होना इससे भी प्रकट होता है कि वे विभिन्न प्रदेशों और इलाकों में अलग-अलग रूप में प्रचलित हैं । कहीं लड़की वाला लड़के वाले को दहेज में हजारों रुपया देता है और कहीं लड़के वाले को लड़की के मूल्य स्वरूप सैकड़ों या हजारों रुपया देना पड़ता है । कहीं पर चार-चार गोत्र बचाकर विवाह-सम्बन्ध निश्चित किए जाते हैं और कहीं अपनी छोटी-सी उपजाति में गुंजायश न होने के कारण मामा, फूफा की लड़कियों से विवाह कर लेते हैं । मालावार की तरफ के ब्राह्मणों में विवाह का बहुत-सा कृत्य वर के बजाय उसका मामा ही करता है । अनेक जातियों में विवाह के पहले लड़की का विधवा जैसा वेश बनाकर खूब शोक मना लिया जाता है तो कहीं विवाह के पश्चात् ससुर बहू को गोदी में उठा कर ले जाता है । इस प्रकार समस्त हिन्दू समाज में ऐसी-ऐसी अलग-अलग तरह की प्रथाएँ और परम्पराएँ प्रचलित हैं जो एक दूसरे से बिल्कुल विपरीत हैं और अपनी-अपनी जातियों और उपजातियों में माननीय तथा धर्मानुकूल मानी जाती हैं । इस कारण अगर कोई यह खयाल करे कि इस समय उनके यहाँ जो प्रथाएँ प्रचलित हैं वे ही ईश्वरीय आदेश या 'वेद वाक्य' हैं तो यह उसके अज्ञान का ही परिचायक होगा ।

सबसे बड़ी खराबी

इस समय विवाहों में जो सबसे बड़ी खराबी पैदा हो गई है वह उसे अत्यन्त खर्चीले बना देना है । विवाह एक हर्षोत्सव अवश्य है और उस अवसर पर दो आत्माओं और दो परिवारों में एक गहरा सम्बन्ध स्थापित होता है, जिससे आगे चलकर अनेक शुभ परिणाम उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है । उस समय मनुष्य का एकाकीपन मिटकर उसे एक जीवन-संगी भी मिलता है, जिससे सुख-दुःख, सम्पत्ति-विपत्ति में सहारा मिलने का पूरा भरोसा रहता है । इसलिए ऐसे अवसर पर दस-पाँच इष्ट-मित्रों को बुलाकर थोड़ा आमोद-प्रमोद मनाया जाय तो इसमें कोई अनुचित बात नहीं है । इसी प्रकार यदि वर-कन्या के अभिभावकों की तरफ से उन दोनों को कुछ उपहार दिये जायें तो भी उसे बुरा नहीं कहा जा सकता । शास्त्र-विधि के अनुसार पाणिग्रहण करने के साथ-साथ थोड़ा-बहुत खुशी और मनोरंजन का कार्यक्रम बना लिया जाय तो उसे जीवन की एक विशेष घटना के रूप में याद रखने का अवसर मिलता है, पर जब ये बातें एक सनक या पागलपन का-सा रूप ग्रहण कर लेती हैं तो वे हमारी आर्थिक स्थिति के लिए खतरनाक बन जाती हैं । यही कारण है कि आजकल लोग विवाहों से बड़े परेशान हैं और विशेषतः लड़कियों के विवाहों से तो भगवान् के कोप की तरह डरते रहते हैं । इस समय कुछ बड़े लोगों ने नये-नये तरह के खर्चे बढ़ाकर विवाह प्रथा को ऐसा खर्चीला बना दिया है कि साधारण स्थिति के व्यक्ति का उसकी थोड़ी-बहुत नकल करने में ही दिवाला निकल जाता है और उसका कुपरिणाम उसको वर्षों तक सहन करना पड़ता है । इन प्रथाओं में भिन्न-भिन्न प्रान्तों में बड़ा अन्तर देखने में आता है, जैसे— पर्वतीय प्रान्तों में प्रायः लड़के वाला लड़की वाले को एक अच्छी खासी रकम देता है, जिसमें से वह विवाह का खर्च करता है और कुछ बचा भी लेता है, पर हमारे तीन-चार हिन्दी प्रान्तों में—जैसे उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार, पंजाब आदि की उच्च कहलाने वाली जातियों में अधिकतर लड़की वाले को ही बहुत अधिक खर्च करना पड़ता है ।

यह प्रथा पतन की राह है

विवाहों में अपव्यय करने से एक नहीं अनेक प्रकार की बुराइयाँ उत्पन्न हो रही हैं । सबसे पहली बात तो यह है कि कुछ वर्षों से देश में जैसी महँगाई बढ़ रही है उससे जीवन निर्वाह का व्यय पहले से बहुत अधिक बढ़ गया है और हर तरह से आमदनी बढ़ाने पर भी साधारण लोगों की गुजर कठिनाई से होती है । ऐसी हालत में वे लड़कियों के विवाह के लिए हजारों रुपये की रकम कहाँ से लावें ? इसके लिए लोगों को बेईमानी, रिश्वत, भ्रष्टाचार आदि ऐसे उपायों का भी सहारा लेना पड़ता है जिनको वे नैतिकता के विरुद्ध समझते हैं और जिनको करने के लिए उनका आत्म-सम्मान गवाही नहीं देता । यही कारण है कि इस समय देश में नैतिकता का घोर पतन हो रहा है और सरकार तथा समाज हितैषियों के लाख प्रयत्न करने पर भी इन दुर्गुणों में कमी नहीं हो रही है ।

दूसरी बुराई है कन्याओं की और स्त्रियों की भी बेकदरी । लड़की के विवाह में जब कोई व्यक्ति अधिक खर्च

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं करता तो द्वार-द्वार पर घूम कर वर की तलाश करनी पड़ती है और लड़के वालों द्वारा असम्मान का व्यवहार सहन करना पड़ता है । वह जहाँ तक सम्भव हो अपनी लड़की के लिए सुयोग्य वर ढूँढ़ना चाहता है, पर जब लेन-देन की बात चलती है और वह लड़के वालों का माँगा हुआ मूल्य देने में अपनी असमर्थता प्रकट करता है, कम लेने के लिए उनकी खुशामद करता है तो वह उसे दुरदुराकर निकाल देते हैं । इस अपमान से उसे मर्मान्तिक चोट लगती है और कुछ समय बाद निराश होकर वह कन्या को ही सब अनर्थों की मूल समझने लगता है । निर्दोष कन्या भी अपने पिता की यह दुर्दशा देखकर महादुःखी होती है और अनेक बार आत्महत्या करके इस समस्या का अन्त कर देती है । जिन कन्याओं का किसी तरह बुरे-भले घरों में विवाह हो जाता है, वे भी वहाँ तरह-तरह के उत्पीड़न सहन करती हैं । ससुराल वालों के ताने सुनना, सास-ननद की गालियाँ खाना, भोजन-वस्त्र की कमी रहना, घर के नीच कर्म कराये जाने की तो साधारण बातें हैं । अधिक नृशंस अथवा अर्थ-पिशाच लोग तो उनके साथ मारने-पीटने, भूखों रखने, अन्य प्रकार के अत्याचार करने में भी संकोच नहीं करते । इसके फलस्वरूप उनका जीवन नारकीय कष्टों से पूर्ण हो जाता है और विवश होकर वे किसी तरह अपने प्राण दे देती हैं ।

नारी जाति की हीन स्थिति का कारण

इन वैवाहिक कुप्रथाओं के कारण हिन्दू समाज में नारी का दर्जा बहुत घट गया है और उसका स्वाभिमान सर्वथा नष्ट हो गया है । यों वे फैशन, बनाव-शृंगार, आमोद-प्रमोद सब कुछ करती हैं, पर उनकी स्थिति सदा अस्थिर रहती है और पति अथवा परिवार वालों की निगाह बदल जाने पर वे तुरन्त कौड़ी की तीन हो जाती हैं । इतना ही नहीं हिन्दू-परिवारों में जन्मकाल से ही उनको भारस्वरूप एवं हेय समझा जाता है और उनके साथ अधिकांश घरों में पक्षपात का बर्ताव किया जाता है । खान-पान, वस्त्र, लाड़-दुलार में लड़कों की अपेक्षा उनको बहुत कम भाग मिलता है और पिता ही नहीं माता भी उसे 'राँड पत्थर' कहकर अपमानित करती रहती है और बिल्कुल छोटी अवस्था से ही उसके मन में यह बात जमा देती है कि उसकी लड़कों के साथ कोई समानता नहीं और उसे कभी उनके साथ किसी तरह की स्पर्द्धा नहीं करनी चाहिए । बड़े होने पर लड़कों की शिक्षा-दीक्षा के लिए जो व्यवस्था और खर्च किया जाता है उसका चौथाई भी लड़की के लिए नहीं किया जाता । अब भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो लड़की को पढ़ाना-लिखाना या उसके विकास में कुछ खर्च करना व्यर्थ समझते हैं, क्योंकि वे कहते हैं, "यह तो पराया धन है । इसे दूसरों के घर जाना है ।" ऐसे लोग लड़की को एक बहुत बड़ी विपत्ति के रूप में देखते हैं और रात-दिन यही मनाया करते हैं कि किसी प्रकार जल्दी से जल्दी इससे पीछा छूटे । यद्यपि अब पुराने समय की प्रत्यक्ष कन्या-वध की प्रथा तो नहीं रही है, पर यदि दुर्व्यवहार से या दैववश लड़की मर जाय तो मन से उसके लिए कोई दुःख नहीं करता और यही समझा जाता है कि चलो एक बड़े भार से छुट्टी मिल गई ।

नारी जाति की इस उपेक्षा और उनके साथ हीनता का व्यवहार करने का कुपरिणाम समस्त जाति को भोगना पड़ता है । इस प्रकार के व्यवहार निरन्तर तथा सर्वत्र देखते रहने से स्त्री भी अपने को हीन निकृष्ट समझने लगती है और उसके विचार, आचार-व्यवहार, मनोवृत्ति भी वैसी ही बन जाती है । उसकी त्रुटियों, दुर्गुणों का प्रभाव उसकी सन्तान पर भी पड़ता है उसको वह अपने घटिया स्तर के अनुरूप ही उनका पालन-पोषण और निर्माण कर सकती है । इससे उनके लड़के भी आगे चलकर घटिया नागरिक ही बनते हैं, उनमें अनेक प्रकार अनेक दोषों का स्थायी रूप से समावेश हो जाता है और वे अपनी तथा राष्ट्र की प्रगति के लिए अनुपयुक्त सिद्ध होते हैं । इन सब बुराइयों की शृंखला का मूल बहुत कुछ विवाह सम्बन्धी कुप्रथा ही है । अगर हम उसे इतना खर्चीला और आडम्बरपूर्ण न बना देते कि जिसके कारण वह एक साधारण गृहस्थ के लिए भयंकर अभिशाप सिद्ध होकर उसकी आर्थिक व्यवस्था को ही चौपट कर डालती, तो लड़कियों के प्रति मनुष्यों का दृष्टिकोण इतना ओछा न हो जाता । तब लड़कियों को भी साधारण मानवीय अधिकार प्राप्त होते, उनके साथ उपेक्षा न बरती जाती और इससे उनकी मनोभूमि का उचित रीति से निर्माण हुआ होता । शारीरिक दृष्टि से भी उनकी ठीक तरह से देखभाल की जाती, क्योंकि अगर किसी जाति की माताएँ आमतौर से शरीर से निर्बल और तरह-तरह की शारिरिक व्याधियों में ग्रसित होंगी तो उसके पुरुष किस तरह शारीरिक शक्ति और पौरुष सम्पन्न तथा जीवन-संघर्ष में पराक्रमी सिद्ध हो सकेंगे ?

अपव्यय का कारण मूर्खता

इस वैवाहिक अपव्यय के कारणों पर यदि गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय तो अपनी मूर्खता के अतिरिक्त और कुछ नहीं जान पड़ता । लोगों ने इस प्रकार विवाहों में रुपया फूँकने को 'इज्जत' की बात मान लिया है और उनकी यह धारणा बन गई है कि ऐसे अवसर पर जो जितना अधिक खर्च करता है, रुपये को खुले हाथों फेंकता है वह उतना ही 'बड़ा' या 'अमीर' समझा जाता है और सर्वसाधारण उसका उसी हिसाब से सम्मान करते हैं । इस प्रकार की मान्यता को मूर्खता न कहा जाय तो और क्या कहा जाय ? अगर धन को इस प्रकार खर्च करने से अमीरी मान ली जाय तो बाप की कमाई को उड़ाने वाले सभी कपूत लड़के उस सम्मान में अधिकारी बन सकते थे, पर हम जानते हैं कि लोग उनकी बुराई ही करते हैं और आवारा बतलाते हैं । इसी प्रकार विवाहों में अपनी हैसियत से अधिक खर्च करके दिवालिया या कर्जदार बन जाने वाले को न कोई अमीर समझता है, न उसकी कोई इज्जत करता है, पर सब उसे शेखीखोर और बेवकूफ ही बतलाते हैं । यों किसी के मुँह पर कोई ऐसी बातें नहीं कहता, पर मन में सब उसकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वास्तविक स्थिति को जानते हैं और समय आने पर वैसा ही व्यवहार करते हैं ।

बहुत से लोग इस प्रकार का अतिरिक्त खर्च इसलिए करते हैं कि समाज में वैसी ही परम्परा प्रचलित है और घर के बड़े-बूढ़े तथा जाति के मुखिया उसी का पालन करने की सलाह देते हैं । वे समझाते हैं कि यदि दूसरों की तरह दिल खोलकर खर्च न किया जायगा और शान-शौकत न दिखाई जायगी तो लोग तुमको छोटा या कंजूस समझने लगेंगे, पर ये भी सब दिखावटी चीजें हैं, जिनको उथली बुद्धि के लोग ही महत्त्व देते हैं । हमको उचित है कि बड़े-बूढ़ों तथा मुखियाओं का उनकी आयु और पदवी के अनुसार आदर करते रहें, पर इस प्रकार के मामलों में जिनका असर समस्त परिवार के भविष्य पर पड़ता है, उनकी बातों को आँखें बन्द करके न मान लें । हमको अधिक ध्यान धार्मिक संस्कार की पूर्णता और सज्जनोचित मानमर्यादा का ही रखना चाहिए, केवल अधिक रुपया खर्च करने से महत्त्व मानना व्यर्थ है । जनता तो भेड़चाल की ही अनुयायी होती है । जिस मार्ग पर ज्यादा आदमी चलने लगें उसी को प्रशंसनीय और बड़प्पन का चिह्न बतलाने लगती है । आज विवाहों में तरह-तरह के फिजूलखर्ची के काम किए जाते हैं तो लोग उनकी तारीफ करते हैं और यदि बहुत कम खर्च के आदर्श विवाहों का प्रचलन हो जायगा तो उन्हीं को प्रशंसनीय बताया जाने लगेगा ।

विवाहों में ज्यादा ठाट-बाट और शान दिखलाने की चेष्टा सब दृष्टियों से हानिकारक और समाज के लिए घातक है । यह एक ऐसा विष वृक्ष है जिससे सैकड़ों अन्य बुराइयों के फल उत्पन्न होते हैं । इससे व्यक्तियों को हर दर्जे की परेशानी उठानी पड़ती है, तरह-तरह की अनैतिकता के कार्य करने को विवश होना पड़ता है, नारी जाति का अधःपतन होता है और उसके फलस्वरूप समाज की भावी पीढ़ी हीन और निर्बल चरित्र की बनती है । यह हर तरह घाटे का सौदा है और अपनी रकम खर्च करके अपने को ही मूर्ख बनाना है । इस अपव्यय को शीघ्र से शीघ्र बन्द करने में ही समाज का कल्याण है ।

विवाह-प्रथा को समयानुकूल बनाया जाए

हिन्दू-समाज के विवाहों में जो विकृतियाँ आ गई हैं उनका निराकरण करके आदर्श विवाहों का प्रचलन जब तक न होगा, तब तक न तो व्यक्ति का कल्याण सम्भव है और न समष्टि का । समाज का बहुत कुछ आधार विवाह-संस्था पर ही है । उसके दूषित हो जाने से परिवार में खराबी आ जाती है और परिवारों के बिगड़ने से जाति की प्रगति में रोड़ा अटक जाता है । यह दृश्य आजकल हमारे यहाँ बहुत स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ रहा है । यदि यह कहा जाय कि आजकल सौ विवाहों में से ८० किसी न किसी दृष्टि से दूषित होते हैं और इसके परिणामस्वरूप उन सब लोगों का जीवन तरह-तरह के कष्टों और असन्तोष से व्याप्त हो जाता है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं । यदि हम इस स्थिति का सुधार करके अपनी जाति को स्वस्थ और सशक्त बनाना चाहते हैं तो विवाहों में घुसी दूषित प्रथाओं को दूर करके उनके सही रूप की पुनर्स्थापना करनी चाहिए ।

आयु और स्वास्थ्य का निरीक्षण

सबसे पहली आवश्यक बात वर-कन्या के स्वास्थ्य की उत्तमता और उनकी आयु का अनुपात शरीरशास्त्र के सिद्धान्तानुसार होना है । आजकल लाखों विवाह छोटी अवस्था में कर दिये जाते हैं जिससे वर-कन्या के शरीर परिपक्व होने से पहले ही वे दाम्पत्य जीवन बिताने लगते हैं और इससे स्वास्थ्य सदा के लिए निर्बल हो जाते हैं । इसके सिवाय यदि लड़की नई उम्र की और वर अधेड़ या बूढ़ा हुआ, जैसा यहाँ दूसरा विवाह करते समय हुआ करता है तो भी बेमेल जोड़ी होने से स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता है और मन के ठीक तरह न मिलने से भी कई अन्य तरह की हानियाँ होती हैं और लड़कियों को प्रायः कई प्रकार के यौन-रोग भी लग जाते हैं ।

वर-कन्या निरोग और स्वस्थ हों इस बात पर अब बहुत ध्यान दिया जाता है और कई देशों में तो वर-कन्या के स्वास्थ्य की डॉक्टरी जाँच किए जाने का भी प्रचलन हो रहा है । यह बात हमको चाहे भारतवर्ष में विवाह-प्रथा की वर्तमान दुरवस्था देखकर नई जान पड़े, पर स्मृतियों में इस बात को जोर देकर लिखा गया है कि वर-पक्ष कन्या के स्वास्थ्य तथा शील-सदाचार की जाँच कर ले और इसी प्रकार कन्या-पक्ष भी वर के सम्बन्ध में इन बातों का ठीक-ठीक पता लगा लें । मनुस्मृति के 'विवाह-प्रकरण' में लिखा है—

हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम् ।
क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रिकुष्ठिकुलानि च ॥
नोद्वहेत्कपिलां कन्यां नाधिकाङ्गीं न रोगिणीम् ।
नालोमिकां नातिलोमां न वाचाटां न पिङ्गलाम् ॥

अर्थात्—"जो कुल क्रिया हीन हो, जिसमें लड़कियाँ पैदा होती हों, विद्या से हीन हो, बहुत अधिक रोग हों, बवासीर, क्षय, मन्दाग्नि, अपस्मार अर्थात् मिरगी, श्वेतकुष्ठ, गलितकुष्ठ आदि रोग वाले कुलों की कन्याओं को छोड़ दें । इसी प्रकार भूरे बालों की, अधिक अंग वाली, सदा रोगी रहे, जिसके बहुत रोम हों या बिल्कुल रोम न हों, कंजी आँखों वाली कन्या से विवाह न करें ।"

अन्य स्मृतियों में इसी प्रकार से अन्य बातों की जाँच करने को भी लिखा है । इसका आशय यही है कि विवाह जैसे आजीवन बन्धन में बँधते समय इस बात का भली प्रकार निश्चय कर लेना चाहिए कि जिसके साथ हमको समस्त जीवन करना है वह इस योग्य है भी या नहीं ? इसके लिए अभिभावकों का धर्म है कि समान गुण, कर्म, स्वभाव के जोड़े ढूँढ़ने का प्रयत्न करें । पर खेद है कि इस युग में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धन का महत्त्व लोगों की दृष्टि में इतना बढ़ गया है कि उसके सामने लोग इन सब बातों को भूल जाते हैं और वर-कन्या के गुण-दोषों का मिलान न करके धन का मिलान करने लगते हैं । इसका परिणाम यह होता है कि धनी माँ-बापों की अयोग्य कन्याएँ सुयोग्य वरों को ब्याह दी जाती हैं और गरीबों की सब तरह से सदगुणी और सुशील कन्याओं को निकम्मे अथवा दूषित आचरण के लोगों के गले मढ़ दिया जाता है । इसी प्रकार दहेज की व्यवस्था न होने से जब लड़कियाँ बहुत बड़ी हो जाती हैं तो लाचार होकर ऐसे बड़ी उम्र वालों के साथ विवाह कर देना पड़ता है जिनसे उनका मेल नहीं मिल सकता और स्त्री-पुरुष दोनों को असन्तोष का जीवन बिताना पड़ता है । ये सब कुपरिणाम विवाह-प्रथा में कई तरह की गलत मान्यताएँ घुस जाने और खासकर विवाह का खर्च बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण ही निकलते हैं ।

विधवाओं के विवाह का प्रश्न

हम विधवा-विवाह को बहुत अधिक महत्त्व देने के पक्ष में नहीं हैं । जब हम वर्तमान परिस्थिति में जनसंख्या की अतिवृद्धि के कारण कुमार और कुमारियों के विवाह को भी अनिवार्य नहीं मानते और विवाह होने पर सन्तान उत्पन्न न करने की सलाह देते हैं, तो विधवाओं के विवाह पर जोर कैसे दे सकते हैं ? फिर भी न्याय की दृष्टि से भी जो विधवाएँ विवाह करना चाहती हों तो उनके लिए वे ही अधिकार मिलने चाहिए जो कि पुरुषों को प्राप्त हैं । इसका एक सहज तरीका यह हो सकता है कि जो विधुर पुरुष विवाह करना चाहें वे विधवाओं से ही करें । इसमें कुछ लोग तो वह भी संशोधन करने लगते हैं कि जिन विधुरों के पहली सन्तानें मौजूद हैं वे सन्तानयुक्त विधवाओं को विवाहों और निस्सन्तान विधुर बिना सन्तान वाली विधवाओं से विवाह करें । कुछ भी हो विवाह के सम्बन्ध में नर और नारी दोनों को समान अधिकार मिलने चाहिए और वर्तमान असमानताओं का यथासम्भव शीघ्र अन्त होना चाहिए । हमारा कहना यह नहीं कि विधवा विवाह महत्त्व की बात है जिससे उसे करना जरूरी है । हम भी शास्त्रों के इस कथन से सहमत हैं कि जो विधवाएँ पति के मरने पर सदाचारिणी रहकर पूर्ण संयम का पालन करती हैं वे प्रशंसनीय और वंदनीय हैं, पर साथ ही जो लोग ऐसे विवाहों को शास्त्रों अथवा प्राचीनता के नाम पर निषिद्ध या पाप कर्म बतलाते हैं वे भी गलती पर हैं । इस विषय में नर-नारी दोनों के लिये एक ही न्याय विधि से काम लेना उचित है ।

समयानुकूल नये परिवर्तन

इस समय हिन्दू जाति की विवाह समस्या ऐसी उलझनपूर्ण बन गई है कि उसे सुलझाने के लिए स्वतन्त्र प्रकृति के विचारशील नये-नये सुझाव पेश कर रहे हैं । जैसे एक सज्जन यह कह रहे थे कि आजकल दहेज के प्रश्न पर लड़कियों का विवाह टलते-टलते वे काफी बड़ी हो जाती हैं, कभी-कभी तो २८-३० वर्ष तक जा पहुँचती हैं, तब उनकी विवाह समस्या और भी कठिन हो जाती है कि इनकी उम्र के कुमार लड़के कहाँ से प्राप्त किए जायें ? ऐसी अवस्था में यदि उनसे कुछ छोटे वरों के साथ उनका विवाह कर दिया जाय तो क्या आपत्ति है ? आमतौर से हमारे देश में वर, वधू से चार-छह वर्ष बड़ा ही ढूँढ़ा जाता है, पर यदि कभी वधू, वर की अपेक्षा दो-चार वर्ष बड़ी भी हो तो क्या हानि है ? इसी प्रकार इन दिनों आमतौर पर यह मान्यता बनी हुई है कि वर-कन्या की अपेक्षा अधिक सुशिक्षित और योग्य ढूँढ़ा जाता है, पर यदि जो लड़की विवाह न होने के कारण पढ़ने में लगी है और वह कम शिक्षा प्राप्त व्यक्ति के साथ विवाह कर ले तो इसमें भी क्या हानि हो सकती है ? यदि आमतौर से पत्नियाँ पति के आश्रित और उससे दबी हुई रहती हैं, तो यदि कुछ पत्नियाँ भी पतियों को आश्रय देने वाली और उन पर अपना दबदबा रखने वाली हो जायें तो उसमें क्या आफत आ जायगी या क्या पाप लग जायगा ? बात यह है ये सब रस्में तो सामयिक हैं, अगर देश-काल के बदल जाने से उनमें भी अन्तर कर दिया जाय तो यह कोई बुरी बात नहीं है । अब भी भारत के ही कई दूरवर्ती प्रान्तों में जैसे ट्रावनकोर, कुर्ग, आसाम आदि में बहुसंख्यक हिन्दू स्त्रियाँ घर की सम्पत्ति पर पूरा अधिकार रखती हैं और बड़े-बड़े कारोबार स्वयं चलाती हैं, पुरुष की स्थिति आश्रित जैसी ही रहती है, पर इसके कारण वहाँ किसी प्रकार की हानि नहीं हो रही है और वहाँ निवासी सुखी जीवन बिता रहे हैं ।

छुटाई-बड़ाई का भ्रम दूर किया जाए

कुछ समय से समाज में एक मान्यता यह प्रचलित हो गई है कि लड़की वाले का दर्जा लड़के वाले की अपेक्षा कम होता है और उसे सदा प्रसन्न रखने, उसकी खुशामद करते रहने की आवश्यकता है । जो लोग अपनी हैसियत से बड़े घरों में लड़की देना चाहते हैं और उनसे दहेज की रकम कम करने की प्रार्थना करते फिरते हैं, वे ऐसा आचरण भी करते हैं, पर हमको तो इस मनोवृत्ति में कोई सार या वास्तविकता नजर नहीं आती । विवाह एक ऐसा कार्य है कि जिसकी दोनों पक्षों को आवश्यकता होती है, दोनों का समान हित होता है । ऐसी दशा में एक को छोटा समझा जाय और दूसरे को बड़ा यह बिल्कुल बेतुकी बात है ।

अगर गम्भीरता से विचार किया जाय तो इस कार्य में बड़प्पन लड़की वाले का ही मानना चाहिए क्योंकि वह अपने बहुत धन और श्रम द्वारा पाली-पोसी कन्या को निस्वार्थ भाव से दूसरे को देता है तो इसमें छोटेपन की क्या बात है ? अब भी पहाड़ों में इसी तथ्य के आधार पर वर से लड़की का मूल्य लिया जाता है और यहाँ भी किसी कारणवश जिनका विवाह होने में कठिनाई होती है वे किसी रूप में कन्या पक्ष को कुछ देकर विवाह करते हैं । यदि ऐसा ही तरीका सब लड़की वाले अख्तियार कर लें तो फिर लड़के वाले का दर्जा कैसा हो जाय ? वास्तव में ये सब बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गलत और मूर्खता अथवा नीचे दर्जे के स्वार्थ की हैं । विवाह सम्बन्ध में दोनों पक्षों का दर्जा समान है और उनको परस्पर वैसा ही व्यवहार करना चाहिए । इस तरह की कृत्रिम छुटाई-बड़ाई की कल्पना करके किसी को छोटा बताना, दबाना, अपमानित करना, उसके सामने अनुचित माँगें रखना नीचता का कार्य है । ऐसा करने से हम स्वयं अपने को हीन या निकृष्ट सिद्ध करते हैं और इसका परिणाम हमारे लिए कभी कल्याणकारी नहीं हो सकता । क्रिया की प्रतिक्रिया होना प्रकृति का स्वाभाविक नियम है । अगर लड़के या उनके अभिभावक कन्या वाले के साथ इस प्रकार का अनुचित व्यवहार करेंगे तो समय आ सकता है कि वे भी उसका बदला चुकाने लगें । अब भी ऐसे समाचार आते रहते हैं कि दहेज के लोभी वर को कन्याओं ने स्वयं फटकार कर निकाल दिया या बहुत रूपवती बहू तलाश करने वालों को 'खुद अपनी शकल दर्पण में देखने' की सलाह देकर अस्वीकृत कर दिया गया ।

विवाह एक धार्मिक आयोजन है

इस दूषित वातावरण को सुधारने का एक-मात्र उपाय यह है कि हम अपने प्राचीन आदर्श के अनुसार विवाह को एक धार्मिक संस्कार समझें । उसके अनुसार देवताओं की साक्षी में दो आत्माओं को एक सूत्र में बाँधा जाता है और यह प्रतिज्ञा की जाती है कि हम एक दूसरे के प्रति सच्चे रहते हुए सम्पद-विपद में एक दूसरे के साथी बने रहेंगे । इस अवसर पर जिन वेद मन्त्रों का उच्चारण किया जाता है उनका आशय भी यही है कि वर-कन्या को एक ऐसे पवित्र सूत्र में बाँधा जाय जिससे वे धर्म कृत्यों का पालन करते हुए मानव-जन्म को सफल बना सकें । उनमें कोई ऐसी बात नहीं बतलाई गई है जिससे विवाहों के आडम्बरपूर्ण प्रदर्शन और पचासों तरह के रस्म-रिवाजों का समर्थन हो सके, पर आजकल विवाह के धार्मिक विधान पर ध्यान न देकर इन रस्मों को ही सब कुछ समझ लिया गया है । विवाह कराने को तो किसी ऐसे पंडित नामधारी को बैठा दिया जाता है जो न मन्त्रों का शुद्ध उच्चारण कर सकता है न उनका अर्थ समझता है, तब वह उनका आशय और महत्त्व वर-कन्या को क्या समझायेगा ? दूसरी तरफ रस्मों का कार्य जिन बूढ़ी स्त्रियों अथवा पुराने पंच चौधरियों के मतानुसार किया जाता है । जरा-सी भी त्रुटि हो जाय तो वे ऐसा शोर मचाते हैं कि मानो सब विवाह ही भ्रष्ट और निरर्थक हो गया । इससे लोगों की धर्म नियमों सम्बन्धी अज्ञानता तथा रूढ़िप्रियता प्रकट होती है, जिसका बदला जाना आवश्यक है । ये रस्म-रिवाजें हर जाति में और हर प्रान्त में अलग-अलग पाई जाती हैं । कुछ तो ऐसी हैं कि जो एक-दूसरे से बिल्कुल विपरीत जान पड़ती हैं । इनके कारण हिन्दू विवाह की एकरूपता नष्ट हो गई है और अन्य लोगों की दृष्टि में उसका महत्त्व जाता रहा है । ईसाइयों के विवाह संसार भर में गिर्जाघर के भीतर पादरी द्वारा एक ही विधान से होते हैं और मुसलमानों का विवाह भी सर्वत्र काजी द्वारा एक ही ढंग से पढ़ाया जाता है । इससे उनका पुराना महत्त्व कायम है । हमको भी सैकड़ों तरह के रस्म-रिवाजों और अलन-चलन का अन्त करके विवाह कार्य कराना चाहिए जिससे विभिन्नता का अन्त होकर हिन्दू-विवाह उत्कृष्ट रूप में संसार के सामने आये ।

विवाहों का वातावरण पवित्र बनाया जाए

विवाहों को धार्मिक कृत्य का रूप देने के लिए यह भी आवश्यक है कि उस अवसर पर सब प्रकार के मादक पदार्थ, बीड़ी, सिगरेट, गन्दे मजाक, असभ्य वार्त्तालाप, तामसी भोजन आदि से बच कर उसे सभ्य, शिष्ट, प्रसन्नतादायक कार्यक्रम के रूप में पूर्ण किया जाय । कितनी ही जातियों में बराती शराब, माँस आदि के व्यवहार पर बहुत जोर देते हैं, कहीं भाँग छानने की धूम रहती है जिससे अधिक भोजन किया जा सके, कहीं दावत के पदार्थों में कागज, रुई, पत्ते आदि की नकली चीजें बनाकर दूल्हा के साथियों को बेवकूफ बनाने की चेष्टा की जाती है, कपड़ों पर हल्दी, रंग आदि के छापे लगाकर गन्दा कर दिया जाता है । ये सब बातें अनेक बार झगड़े फसाद का कारण बन जाती हैं और बहुत से लोग अप्रसन्न हो जाते हैं । इनसे वैवाहिक वातावरण दूषित हो जाता है और उसके वास्तविक महत्त्व को भूलकर उसे एक मनोरंजन या कुछ आर्थिक लाभ उठाने का जरिया समझ लिया जाता है ।

अब समय आ गया है कि विवाह के सच्चे स्वरूप को समझकर उसे एक मुख्य धार्मिक और सामाजिक प्रक्रिया की भाँति सम्पन्न किया जाय । समाज का बहुत कुछ सुधार और बिगाड़ विवाह संस्था की अच्छाई-बुराई पर अवलम्बित है । समाज को सुदृढ़ और स्थायी रूप देने का श्रेय इसको ही है । इसलिए वैवाहिक कुरीतियों को मिटाकर सभ्यता, शिष्टता और सज्जनता के अनुरूप बनाने की चेष्टा की जाय । आज भी इन बातों का दिखावा किया जाता है, पर उसके भीतर असलियत नहीं होती । उसकी आड़ में स्वार्थ और दुरभिसंधियों का ही प्राबल्य होता है । इसको मिटाकर विवाह को धर्मानुमोदित संस्कार बनाने से ही हमारा कल्याण हो सकता है ।

वैधव्य और उसकी समस्या

सामाजिक जीवन में 'वैधव्य' के प्रति कुछ ऐसी दुर्भाग्य पूर्ण मनःस्थिति बन गई है, जिसके कारण वैधव्य बुरा अपशकुन माना जाता है । यदि 'वैधव्य' शब्द के स्थान पर 'विधुर' शब्द सुनाई पड़े तो समाज में इतनी मनःस्थिति असंतुलित नहीं हो पाती है, जबकि विधुर भी दाम्पत्य जीवन से खंडित तो हुआ है, जिस भाँति विधवा हुई है, लेकिन विधुर के प्रति वे बुराइयाँ और अपशकुन नहीं हैं, जो विधवा के प्रति मान्य हैं । समाज व परिवार में आखिर वह पक्षपात पूर्ण दृष्टिकोण क्यों ? या तो विधवा के समान ही विधुर को भी दुर्भाग्य-पूर्ण समझा जाए या विधुर के समान उससे भी व्यवहार किया जाना चाहिए । क्या कभी इस पर विचार किया गया ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वैधव्य काल में विधवा को दुहरी पीड़ा का शिकार होना पड़ता है । एक ओर परिवार वाले न किन अपशब्दों को कहकर विधवा की उपेक्षा करते हैं, तो दूसरी ओर समाज भी विधवा को घृणा की दृष्टि से देखता है । इस दुहरी पीड़ा की चक्की में विधवा अपने मन ही मन घुटकर रह जाती है। यही घुटन उसके मन में हीनता की ग्रन्थि उत्पन्न कर देती है । वह अपने आपको समाज में हीन और दुर्भाग्य पूर्ण प्राणी समझने लगती है । वह मन से दुर्बल और शरीर से क्षीण हो जाती है, पर क्या ऐसा व्यवहार विधुर के साथ किया जाता है ? वह न परिवार में और न समाज में घृणा का पात्र बनता है, बल्कि वह प्रसन्न चित्त होकर परिवार और समाज में अपना जीवन व्यतीत करता है । आखिर परिवार और समाज में केवल विधवा के प्रति क्यों हीनता और घृणा की मान्यता निर्मित हुई ? विधुर के साथ क्यों नहीं ?

पति के जीवित रहते बहू को ससुराल में पति से मिलता-जुलता ही प्यार मिलता रहता है । यदि अपने दुर्भाग्यवश बहू अपना पति खो बैठे तो वही बहू विधवा हो जाने के कारण घृणा और असम्मान की पात्र बन जाती है । घर के सारे लोग उसे नीची निगाह से देखने लगते हैं । घर का छोटा से छोटा सदस्य भी उसे कुछ भी ताने आदि कसने में चूकता नहीं है । उस विधवा का पारिवारिक जीवन जो किसी दिन स्वर्गीय था, वह नारकीय बन जाता है । सभ्य परिवारों में विधवा को घृणा और असम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता है । ऐसे परिवारों में दृष्टि का विकास हुआ है । इसका परिणाम ही है जो विधवा को सम्मान एवं प्रेम पूर्ण वातावरण मिल पा रहा है, पर प्रतिशत की दृष्टि से स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती ।

पति के मरने के बाद यदि कहीं विधवा अपने पिता के घर चली जाये तो समझदार माता-पिता को उसकी दशा देखकर मन ही मन दुःखी रहना पड़ता है । अपनी बेटी का दुःख पूर्ण वैधव्य देखा नहीं जाता है । घर के भाई-भौजाई के लिए वह बोझ लगने लगती है, यदि कहीं वह अधिक दिनों तक रहने लगे तो न वह ससुराल में चैन से रह पावे और न वह अपने पिता के घर । फिर तो विधवा इस संसार रूपी समुद्र में अपने आपको पतवार विहीन समझकर डूब जाने की प्रतीक्षा करती है । विधुर यदि ससुराल जाये तो बेटी वाले उस विधुर दामाद के साथ कोई घृणास्पद और असम्मानजनक व्यवहार नहीं करते, बल्कि अपनी बेटी न रही, दामाद तो है । जीवन भर उस रिश्ते का निर्वाह करने का प्रयत्न करते हैं । कितना विपरीत चिन्तन है परिवार और समाज का विधवा और विधुर के साथ ।

विधवा दूसरा विवाह करे तो उसका पति व्रत धर्म भंग होना समझा जाता है । क्यों विधुर के लिए पत्नी व्रत धर्म भंग होना नहीं है? इन एक पक्षीय नियम को शिथिल किया जाना चाहिए । विधवा और विधुर दोनों की समस्या एक है । अस्तु नियम भी एक होना चाहिए । इसके लिए समाज व नारी दोनों को आगे आना चाहिए । अर्थात विधुर पुनर्विवाह के साथ-साथ विधवा पुनर्विवाह को प्रोत्साहन दिया जाना न्यायपूर्ण कदम है । वैसे विधवा पुनर्विवाह हुए हैं । संख्या की दृष्टि से उन्हें नगण्य ही समझा जाना चाहिए ।

इस समस्या को इस प्रकार हल किया जाना उचित है कि विधुर केवल विधवा से ही विवाह करें । एक दूसरों के पूर्व की सन्तान न हो तो सम्मिलित पालन-पोषण करें और नई सन्तान न हो, इसके लिए नियोजित रहें । इससे समाज में विधवा की सुरक्षा हो जायेगी और विधुर का पारिवारिक ढाँचा पुनः व्यवस्थित हो जायेगा । विधवा विवाह के स्थान पर विधुर-विधवा के विवाह को प्रोत्साहन दिया जावे तो समाज में से अनैतिकता भी दूर होगी और बहुत बड़ी समस्या का समाधान निकल आवेगा ।

विधवा विवाह के पीछे एक दृष्टिकोण अवरोध उत्पन्न करता है । परिवार के लोग किसी विधवा के साथ अपने विधुर का विवाह रचाने में आपत्ति करते हैं । कहा जाता है कि इस विधवा ने तो पूर्व से ही एक पुरुष को डायन की तरह खा लिया है, अब इससे पुनः अपने पुत्र का सम्बन्ध करके इसे से भी मृत्यु के मुँह में धकेलना है? बड़ा तरस आता है, इनके इस तर्क पर । क्या उनका पुत्र जो कि एक विधुर है, किसी नारी को नहीं खा गया है । फिर तो किसी नारी को उससे भी विवाह नहीं करना चाहिए, क्योंकि वह विधुर उस नई दुल्हन को भी निगल जावेगा ? इस प्रथा की विकृत विचार धारा जहाँ भी जड़ जमाएँ हो वहीं उसे निरस्त करना चाहिए ।

किन्तु यही आवश्यक नहीं है कि विधवा अपना पुनर्विवाह करें ही । वह चाहें तो विधवा की स्थिति में भी जीवनयापन कर सकती हैं । इसके लिए वह स्वतन्त्र है । विधुर भी इस प्रकार का निर्णय ले लिया करते हैं । विधुर के सामने जीवन-यापन की समस्या नहीं होती है । वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी होता है । ऐसी परिस्थिति में उसे कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता । दूसरी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति का उत्पन्न हो जाने जैसी तो कोई घटना उनके साथ होती ही नहीं है, परन्तु विधवा यदि पुनर्विवाह न करना चाहे तो उनके सामने दोनों समस्याएँ मुँह बाये खड़ी रहती हैं । वे समाज में अपने आपको हर दृष्टि से परावलम्बी समझने लगती हैं । सबसे बड़ा आर्थिक परावलम्बन उनके उनके सामने होता है । दूसरी ओर दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति तो उनके साथ है ही ।

हर परिवार के मातापिता को अपना परम कर्त्तव्य समझना चाहिए कि वह पुत्र व पुत्री दोनों को समान व्यवहार के साथ ही शिक्षित करें । लेकिन ऐसा हो पाता नहीं है, क्योंकि प्रथम तो लड़की के प्रति परिवारों में उपेक्षा रहती है । दूसरा लड़की को पढ़ाने-लिखाने से क्या लाभ ? इसे तो अन्त में चूल्हे-चौके से पाला पड़ने वाला है, किन्तु लड़की के भावी जीवन की कठिनाई को सामने रखा जाना चाहिए । फिर शिक्षित नारी सन्तान एवं परिवार की व्यवस्था के लिए अधिक सफल रहती है । इस प्रकार के दृष्टिकोण को परिवारों में विकसित किया जाना चाहिए । इसके माता-पिता अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लड़की को शिक्षित करने मे प्रोत्साहित होंगे । यही नहीं कि केवल पढ़ा-लिखा देना चाहिए, पर इससे भी आगे एक कदम बढ़ाना चाहिए कि लड़की किसी नौकरी या धन्धे को प्राप्त करके ही विवाह के बन्धन में आबद्ध हो ।

नारी शिक्षा के साथ साथ स्वावलम्बन के लिए औद्योगिक शिक्षण, अनिवार्य रूप से जुड़ा होना चाहिए । इससे गृह उद्योग के द्वारा परिवार में आर्थिक सुदृढ़ता आवेगी। दूसरी ओर नारी पर वैधव्य जैसी विपत्ति टूटने पर अपने हुनर के द्वारा वह अपना व अपने बालकों का भरण पोषण स्वावलम्बनपूर्वक कर सकेगी ।

इन बाल-विधवाओं का जिम्मेदार कौन

शाम को घर लौटा तो धर्म पत्नी बोली-बड़ा अशुभ समाचार है । अपने पड़ोसी उदयचन्द्र जी अग्रवाल की लड़की विधवा हो गई, बेचारी का विवाह पिछले वर्ष ही हुआ था । समाचार सुनकर एक बार तो मैं स्तब्ध रह गया । मृत्यु तो जीवन की अनिवार्य घटना है, आये दिन कोई न कोई मरता ही रहता है, पर वह कारण जिसके फलस्वरूप मैं यह समाचार सुनकर बेचैन हो उठा कुछ और था । गीता का विवाह जब हुआ था, तब वह ११ वर्ष की थी । अब १ वर्ष पीछे उसकी आयु १२ वर्ष की है अर्थात उसे यह भी अच्छी प्रकार पता नहीं कि उसे वैधव्य किस प्रकार काटना पड़ेगा ।

इस एक समाचार को लेकर क्या रोये । समाज में आज कितनी विधवाएँ बाल विवाह के कुत्सित परिणाम भुगत रही हैं । उसकी व्याख्या की जाये तो सारा विश्व रो पड़े । पर अभागे हिन्दू समाज को इससे क्या उसे तो पंड़ितों की राय से मतलब जो यह कहते हैं कि बालिकाओं का पिता के घर रजस्वली होना पाप है । विधवाओं के कारण सामाजिक जीवन में व्यभिचार और दुराचरण की कितनी घटनाएँ होती होंगी इसकी कल्पना तो बाद में की जायेगी अभी तो भारतवर्ष में बाल-विधवाओं की संख्या का रोना ही बहुत काफी है ।

दैनिक 'नवजीवन' के अंक में दिये गये आँकड़े हमारे सामने है । उस समय ४ वर्ष से ५ वर्ष के बीच की केवल हिन्दू बालिकाओं के विवाहों की संख्या ३०२४२५, ५ से १० वर्ष तक की विवाहित कन्याओं की संख्या २२१९७७८ और १० से ५ वर्ष के बीच की विवाही गईं कन्याओं की संख्या १००८७०२४ थी । जो लड़कियाँ ४ वर्ष से कम आयु में विवाही गई उनकी कुल संख्या २१४८५७ थी । संसार के इतिहास में कही भी इतनी कम आयु में इतने अधिक विवाह के आँकड़े नहीं मिलेंगे ।

फलश्रुति यह कि विवाहित कम आयु की लड़कियों में ४ से ५ वर्ष तक आयु की ७६०३ लड़कियाँ विधवायें हो गईं । केवल पाँच वर्ष की बाल-विधवाओं की संख्या १४७७५, ५ से १० वर्ष की आयु की बाल-विधवाएँ ७७५८५ और १० से १५ वर्ष के बीच की १८१५०७ थीं । ४ वर्ष से कम की विधवाओं की संख्या ७१७२ थी । बिहार, बंगाल और उत्तर प्रदेश में इनकी संख्या सबसे अधिक क्रमशः ३६२७५, १७५८३ और १७२०९ थी ।

इंगलैण्ड में लड़कियों के लिए विवाह की आयु कम से कम १६ वर्ष निर्धारित है इससे कम उम्र में विवाह नहीं हो सकता । फेडरल और जनवादी जर्मनी दोनों में भी यह आयु १६ वर्ष है । अमेरिका और फ्रान्स में पन्द्रह वर्ष । सोवियत संघ में १८ वर्ष से कम की कन्याएँ विवाह नहीं कर सकतीं । यद्यपि न देशों में विवाह युवक युवतियों के अपनी इच्छा से होते हैं, पर वहाँ अभिभावक इस बात के लिए पूर्णतया सचेत रहते हैं कि कच्ची आयु की लड़कियों की शादी हरगिज न हो ।

दूसरी ओर हमारा समाज हिन्दू समाज है यहाँ शारदा एक्ट बनाकर विवाह की कम से कम १५ वर्ष आयु कर दी गयी थी, तो भी हैदराबाद में लड़कियों के विवाह की आयु १२.६ वर्ष , म.प्र. में १३.६ वर्ष, उ.प्र में १३.८ वर्ष, राजस्थान में १४.२ वर्ष है । एक केरल प्रांत ही ऐसा है जहाँ १९.९ वर्ष की औसत आयु में लड़कियों की शादी होती है । उसका कारण साक्षरता है, पर और सारे प्रांतों में जहाँ शिक्षा की स्थिति अभी इतनी अच्छी नहीं लड़कियों के विवाह बहुत कम उम्र में होते हैं और उनके दुष्परिणाम उपर्युक्त समाचार के रूप में दिखाई देते हैं । इसके लिए उत्तरदायी हम हिन्दुओं के सिवाय कौन हो सकता है जो बाल विधवाओं की ओर से आँख मूँदे आज भी कन्याओं के विवाह जल्दी से जल्दी करने की तो सोचते हैं, पर उनके वैधव्य, असमय वृद्धावस्था और बीमारियों पर कुछ भी विचार नहीं करते ।

वैधव्य जीवन

पति की मृत्यु के बाद स्त्री को जो जीवन बिताना पड़ता है वह वैधव्य जीवन कहलाता है । प्राचीनकाल में यह प्रथा थी कि स्त्री को उसके मरे हुए पति के साथ जीवित जला दिया जाता था । इस प्रकार पति की चिता पर जीवित स्त्री को जलाने की प्रथा सती प्रथा कहलाती थी । महापुरुषों के प्रयास से वह प्रथा तो बन्द हो गई, लेकिन विधवा स्त्री की समस्या का कोई उचित और स्थायी हल नहीं निकला । आज समाज में विधवा तिल-तिल अपने को जलाती है या कवि की वाणी मे कहें तो 'उर अन्तर धुंधुआइ जरि जिमि काँच की भट्टी' । इस प्रकार का व्यथित और गलित जीवन बिताने से तो सती हो जाना ही अच्छा था । एक बार की मुसीबत थी । यह सुलगना उस सती होने से भी बुरा है ।

मेरा एक चचेरा भाई था जिसकी मृत्यु २३ वर्ष की अवस्था में हो गई । उसका विवाह २१ वर्ष की आयु में हो गया था । कोई सन्तान भी दो वर्ष में नहीं हुई । स्त्री की आयु उस समय १८ वर्ष की थी । इस घटना को इस समय तीन वर्ष हो चुके हैं । हम लोग चाहते है कि बहू के मायके वाले उसका विवाह कहीं दूसरी जगह कर दें किन्तु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यह दुर्भाग्य की बात है कि उसके माता-पिता दूसरी जगह विवाह करने से सहमत नहीं हैं । उनका विचार है कि यदि ऐसा किया गया तो इसे अगले जन्म में भी विधवा रहना पड़ेगा । माता-पिता उसकी उपेक्षा तो नहीं करते, किन्तु वह आदर-भाव जो उसके सधवा काल में था अब वैधव्य काल में नहीं रहा । १० वीं तक वह पढ़ी-लिखी भी है किन्तु उसके माता-पिता नौकरी भी नहीं करने देते । वे स्त्रियों को किसी प्रकार की नौकरी कराने के सख्त खिलाफ हैं और उसे उसकी ससुराल भी कम भेजते हैं । इस प्रकार भी तरुणावस्था में ही उसके जीवन को कसा जा रहा है । भविष्य में यह देखना बाकी है कि उनके भाई और भावज उसके साथ कैसा व्यवहार करेगी ।

समाज में विधवाओं की हालत बहुत दयनीय है । जवानी में विधवा होना तो परमात्मा का सबसे बड़ा अभिशाप है । समझा जाता है कि विधवा ब्रह्मचर्यपूर्वक अपना जीवन बिता देगी और समाज में उसके पुनर्विवाह से विकृति आएगी, किन्तु इनसे समाज में व्यभिचार बहुत बढ़ता है । कई विधवाएँ तो गरीबी और कमजोरी के कारण अपने को असहाय समझकर वेश्या की जिन्दगी बिताने के लिए बाध्य हो जाती हैं । यह समाज की बहुत स्वस्थ परम्परा है ।

कुछ विधवाएँ ऐसी होती है जिनके बच्चे होते हैं । लड़कियों के तो विवाह हो जाते हैं और वे अपनी ससुराल चली जाती हैं और लड़कों के भी विवाह हो जाते हैं और बहुएं घर बसाती हैं । थोड़े बहुत दिन (२,४ वर्ष) बहू अपनी सास को ठीक से रखती है, किन्तु फिर घर में कलह शुरू हो जाती है । लड़का अधिकतर बहू के प्रभाव में रहता है और माँ की ओर कम ध्यान देता है, तब उसे बहुत पीड़ा होती है । बहू सास को अलग कर देती है । थोड़ा बहुत खाने को दे देती है । इस प्रकार बच्चे होने के बाद भी विधवा का जीवन नीरस और भारस्वरूप हो जाता है ।

विधवा यदि हँसे तो उसे कुलटा और चुपचाप रहे तो मनहूस और घमण्डी समझा जाता है । उसे लोग हँसता भी नहीं देख सकते और रोता भी नहीं देख सकते । कहीं-कहीं विधवा के प्रातः दर्शन को अमंगल सूचक माना जाता है । कुछ स्त्रियाँ यदि सवेरे ही विधवा का दर्शन कर ले तो दिन भर उसे कोसती रहती हैं । शुभ काम जैसे विवाह आदि में विधवा की परछाई पड़ना भी सदोष माना जाता है । वह किसी पूजा-पाठ में भाग नहीं ले सकती है और न किसी काम में हाथ बंटा सकती है । उसकी परछाई से अनिष्ट और विघ्न की कल्पना की जाती है । कैसी विडम्बना है हिन्दू समाज की ?

विधवाओं के लिए अनेक आश्रम खोले गये हैं । इनमें उन्हें अच्छा जीवन बिताने के लिए शिक्षा दी जाती है । पढ़ाई-लिखाई, कढ़ाई-बुनाई, सिलाई आदि अनेक कलाएँ सिखाई जाती हैं जिन्हें सीखकर वे अपने जीवन को व्यवस्थित ढंग से बिता सकती हैं, किन्तु इन आश्रमों को भी व्यभिचार का अड्डा बना दिया गया है । यहाँ भी उनकी इज्जत को चोरी छिपे लूटा जाता है और जो ऐसा करने से इनकार करती है उन्हें बलात् काबू में लाया जाता है । जो लोग इन्हें खरीदने आते हैं उनसे ऊँची कीमत ली जाती है और उसे पत्रियों में दान के रूप में अंकित किया जाता है और जिन्हें यह विधवाएँ सौंपी जाती हैं उन्हें समाज-सुधारक, क्रान्तिकारी, देशभक्त आदि नामों से पुकारा जाता है, किन्तु आज यह कह सकना मुश्किल है कि इनमें से कितने लोग इन स्त्रियों को अपने घरों में ठीक से रख पाते हैं । अधिकतर लोग उन्हें ऐसे रास्ते पर लाकर छोड़ देते हैं जहाँ वे उससे भी ज्यादा नारकीय जीवन बिताती हैं और स्त्री वर्ग कलंक बन जाता है ।

भारत में आयु की दृष्टि से स्त्री की औसत आयु अधिक है, अतः विधवाओं की संख्या अधिक होना स्वभाविक है । विधवाएँ समाज के लिए तो भार हैं ही, साथ ही वे अपने लिए भी भार हैं । पुरुष का दूसरा विवाह पत्नी के मरते ही तुरन्त रचा दिया जाता है, किन्तु स्त्री को सारा जीवन अकेले ही बिताना पड़ता है । पुरूष की आयु चाहे कितनी ही हो वह विवाह अविवाहिता से ही करना चाहता है । विधवा के साथ विवाह करने की बात कहो तो वह कहता है कि "क्या मुझे विधवालय खोलना है ।" यह प्रवृत्ति बन्द होनी चाहिए । विधुर जनों के साथ विधवाओं का ही विवाह होना चाहिए । जो बहिनें बच्चों वाली हैं और विधवा हैं विवाह करना नहीं चाहतीं,अपने पति की स्मृति में ही जीवन बिताना चाहती हैं उन्हें विवाह नहीं करना चाहिए, किन्तु जो विवाह के तुरन्त बाद विधवा हो जाती हैं और जिन्हें जिन्दगी की लम्बी यात्रा तय करनी है उनका पुनर्विवाह होना ही चाहिए । इसके अलावा समाज की इस समस्या का कोई समाधान नहीं है । विधुरजनों को या विवाहित मित्रों को इस पुनीत कार्य के लिए आगे आना चाहिए और समाज की इस समस्या को साहस और दृढ़ता से हल करना चाहिए ।

यहाँ पर मैं एक बात और कहना चाहता हूँ । वह यह कि इस पुनर्विवाह सम्बन्धी कार्य में पुरुष तो एक बार सहमत हो जाता है, परन्तु स्त्रियों को सहमत कर सकना बहुत कठिन है । स्त्रियों का रुख बहुत कड़ा है और वह सबसे अधिक अधिक अवरोध प्रस्तुत करेंगीं, किन्तु हमें अपने प्रयास जारी रखने चाहिए । यदि कही इस तरह के पुनर्विवाह हों तो उनका समर्थन करना चाहिए व सहयोग देना चाहिए ।

अविवाहित लड़कियों के विवाह विधुर जनों के साथ यथासम्भव नहीं करना चाहिए । जब ऐसा होगा तो विधुर विधवाओं के विवाह करने पर सहमत हो जायेंगे, पर जब तक अविवाहित लड़कियाँ विवाह के लिए मिलतीं रहेंगी तब तक वे विधवा के साथ विवाह करना ठीक न समझेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विधवाओं के प्रति भेद-भाव निराधार

पुरुष प्रथम धर्मपत्नी के देहावसान के बाद यदि उसका एक बच्चा हो तो भी पुनर्विवाह को अपना अधिकार समझता है । कई बार तो लोगों को तीन-तीन चार-चार विवाह तक करते हुए पाया जाता है । कुछ लोग तो पुत्र की कामना से एक पत्नी के रहते हुए भी पुनर्विवाह कर लेते हैं, जबकि बेचारी नारी विधवा हो जाने, एक भी सन्तान न होने पर भी यदि पुनर्विवाह की इच्छा करे तो उसे धर्म विरुद्ध ठहराया जाता है । यह न्यायविवेक और स्वयं धर्म की मान्यताओं पर कुठाराघात की तरह है ।

प्राचीनकाल में विधुरों और विधवाओं दोनों को एक समान सुविधा थी । उनमें से जो चाहते थे दूसरा विवाह कर सकते थे । बलात् प्रतिबन्ध दोनों में से किसी भी पक्ष पर नहीं था । विधुरों के विवाह की तरह विधवाओं के परित्यक्ताओं के विवाह का भी प्रबन्ध था । पुनर्विवाह के सम्बन्ध में नर की तरह नारी को भी समान स्तर की छूट थी ।

पत्निनाशे यथापुंसो भर्तृनाशे यथा स्त्रियाः ।
पुनर्विवाह कर्त्तव्यः कलावपि युगे जनैः ॥

—व्याघ्रवाद ऋषि

पुरुषाणां इव स्त्रीणां विवाहा वह शोभताः ।
भर्तृनाशे तथा स्त्रीणां पुंसां पत्नित्यय यथा ॥

—वैशंपायन

जिस प्रकार स्त्रियों के मरने पर पुरुषों को दूसरा विवाह करने का अधिकार है, उसी प्रकार स्त्रियों को भी पुरुष के मरने पर दूसरे विवाह का अधिकार है ।

नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीव च पतिते पतौ ।
पंचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्योविधीयत ॥

—पराशर स्मृति अ. ४

पति के खोने, मरने, संन्यासी, नपुंसक या पतित होने आदि पाँच आपत्तियों में स्त्रियों को दूसरा पति करने की विधि है ।

महाव्याधिनाग्रस्तस्त्यागंकृत्वाप्रयाविच ।
प्रव्राजितोभवेद्राजन्धर्मशास्त्रषुदृश्यते
अनुद्वाहिताया: कन्यायाउद्वाहः क्रियतेबुधैः

—पद्म. भूमि. अ. ८५

पति दीर्घ रोगी या छोड़कर चला गया हो अथवा संन्यासी हो गया हो तो धर्म शास्त्रों में देखा जाता है । बुद्धिमान लोग विवाह हुई कन्या का दूसरा विवाह कर देते हैं ।

देवरः कस्माद्, द्वितोवो वर उच्यते ।

—निरुक्तकार

देवर को देवर क्यों कहते हैं, इसलिए कि वह विधवा का दूसरा वर है ।

इयं नारी पतिलोकं वृणाना नि पद्यत उप त्वा मर्त्य प्रेतम्
धर्म पुराणमनुपालयन्ती तस्यै प्रजां द्रविण चेह धेहि ।

—अथर्व. १८ ।३ ।१

यह विधवा स्त्री मरे हुए पति को छोड़कर पति सुख को स्वीकार करना चाहती हुई, हे मनुष्य ! तुझको पति प्राप्त करती है । तेरे पास नियोग विधान से प्राप्त होती है । उसको तू ग्रहण कर, इससे सन्तान पैदा कर । कैसी वह स्त्री ! वेद प्रतिपाद्य सनातन धर्म का पालन करती हुई, तुझ को नियोग से पति स्वीकार करती है । तू भी इसको स्वीकार कर । उस विधवा के लिए इस समय लोक में सन्तान को उत्पन्न कर और इसमें गर्भाधान धारण कर ।

हे नारि त्वं इतासुम् गत प्राणं एतम् पतिं उपशेषे उपेन्य शयन करोषि उदीर्ष्वं अस्मात्पतिसमीपदुतिष्ठ जीवोकमभि जीवन्त प्राणि समूहमभिलक्ष्य एहि आगच्छ त्वम् हतस्त ग्राभस्य पाणिग्राहवतः दिधिषोः पुनर्विवाहेच्छोः पत्यु एतत् जनित्वम् जामात्वं अभिसवभूय अभिमुख्येन सम्यक् प्राप्नुहि ।

—तैत्तिरीयारण्यक ६ ।१ ।१४

हे नारि ! तू इस मृत पति के पास बैठी है । इस पति के समीप से उठ । जीवित पुरुषों का विचार कर आ और तू हाथ पकड़ने वाले पुनर्विवाह की इच्छा करने वाले इस पति को जामा भाव (स्त्री भाव) से अच्छी तरह प्राप्त हो ।

उपर्युक्त उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि विधवा विवाह शास्त्र विरुद्ध नहीं धर्मनिहित है । यदि पुरुष पुनः विवाह कर सकते हैं तो नारी को इससे वंचित क्यों किया जाये ?

काश, विधवाओं के साथ न्याय किया जाता

लुहारू के एक वैश्य घराने की कन्या १४ वर्ष की आयु में विधवा हो गई । असहाय बालिका पर दया दिखाकर उसे किसी सम्मानजनक स्थिति में पहुँचा दिया जाता तो कितना अच्छा होता पर ससुराल वालों ने उसे मायके यह कहकर भेज दिया—डायन ने हमारे बेटे को खा लिया और मायके वालों से इतना भी न बना कि उसे पढ़ा-लिखाकर कहीं अध्यापन में ही लगा देते । बेचारी घर में कैद कर दी गई ।

कुछ सम्मानित व्यक्ति लड़की के माता-पिता से मिले और सुझाया कि लड़की की आयु ही कितनी है अच्छा हो यदि उसका पुनर्विवाह कर दिया जाये । उनकी दृष्टि में कम आयु का ही एक दूसरा विधुर लड़का था । अच्छा, सर्विस में था भी वैश्य ही, लेकिन लड़की के पिता किसी भी तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राजी न हुए । बोले—"लड़की का पुनर्विवाह अधर्म है ।" लड़का होता तो एक नहीं दस शादियाँ भी अनुचित न होती । स्त्री-पुरुष का यह भेद भारतीय समाज को भगवान् जाने किस स्थिति पर पहुँचा दे ।

लड़कियाँ कुछ वैसे ही भावुक होती हैं कुछ वैधव्य का बोझ । स्वाभाविक ही है कि वह किसी के भी बहकाये में आ जाएँ । यह भी तो नहीं कि हमारा सामाजिक वातावरण ऐसा हो कि लड़कियों का ध्यान काम-वासनाओं की ओर न जाये । आज तो जगह-जगह पर फिल्मी गाने ही उन कोमल भावनाओं को भड़का कर बच्चों को कुमार्गगामी बना रहे हैं वैधव्य के बोझ से दबी युवतियों के लिए तब यह कहाँ सम्भव है कि वे अपने पर कठोर नियन्त्रण रख सकें ।

आँखें तब खुलीं जब लड़की गर्भवती हो गई । पड़ौस के ही एक जुलाहे लड़के से सम्बन्ध स्थापित हो जाने के कारण यह हुआ । अवैध सन्तान आज समाज की एक और दूषित समस्या है, उसका कारण वह प्रतिबन्धित वैधव्य ही है जो बेचारी अधिकांश छोटी आयु में विधवा हो जाती हैं बाद में उन्हें घर बाहर सर्वत्र असम्मान ही मिलता है ।

लड़की को दो सम्बन्धियों के साथ लुधियाना अस्पताल भेज दिया गया । लड़की समझदार थी वह पहले श्रीमती जोन के पास गई पर माता-पिता की असहमति के कारण वह भी कुछ सहायता करने में असमर्थ रही । बाद में लड़की हरिद्वार चली गई । वहाँ उसने एक पुत्र को जन्म दिया । नवजात शिशु को गला घोंटकर मार दिया गया और उसे गंगाजी में फेंक दिया गया ।

लड़की दुबारा घर आ गई, पर हर किसी की यही इच्छा थी कि उसे मार दिया जाये । उसे दिन-रात तंग किया जाता । घर का परिश्रम वाला सारा काम उसे ही करना पड़ता । बात-बात पर पीटी जाती । दिन में सौ बार डाँटी जाती । उस पर भी उसे सन्देह बना रहता यह लोग किसी दिन खाने में विष देकर मार डालेंगे । अपनी ही कोख की कन्या के साथ यह अत्याचार, पर यह हिन्दू समाज है यहाँ धर्म के नाम पर इस तरह का अत्याचार तो क्षम्य है, पर किसी विधवा का विवाह कर लेना क्षम्य नहीं ।

लड़की ने गुरुकुल काँगड़ी जाकर रहने का निश्चय किया । उसने अपने माता-पिता से उसके लिए प्रार्थना भी की, किन्तु वे स्वयं वहाँ तक न जा सके । किन्हीं ऐसे दुष्टों के हाथ उसे भेजा कि उन्होंने बीच में ही सौदा कर लड़की एक मुसलमान को बेच दी । किसी तरह लड़की उससे बच कर पुलिस के पास पहुँची । पुलिस ने ससुराल वालों के सुपुर्द कर दिया पर न ससुराल वालों ने उसे स्वीकार किया न घर वालों ने । बेचारी कहाँ गई, कैसे जी या मरी उसका कुछ पता नहीं चला ।

यह घटना कार्तिक ३ सम्वत् १९७४ विक्रमी में आर्य गजट में छपी थी, पर ऐसी सैकड़ों घटनाएँ नित्य हिन्दू परिवारों में घटती रहती हैं जो छपती नहीं पर भीतर ही भीतर सामाजिक व्यवस्था को खोखला बनाये दे रही हैं ।

विधवा-विवाह का प्रश्न ?

महर्षि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा है—"हमारे देश में जो पतिभक्ति या पतिप्रीति है और थी, वह क्या है ? वह केवल व्यक्ति विशेष के ऊपर ही प्रीति अथवा भक्ति नहीं थी और न है । वह व्यक्ति विष को अतिक्रम करके भी वर्तमान थी । वह 'पतित्व' नामक जो भागवत अस्तित्व है उसी के प्रति भक्त थी । व्यक्ति विशेष उपलक्ष मात्र था, मुख्य पतीत्व ही था । इसी कारण व्यक्ति के भले बुरे होने से भी भक्ति में घटा बढ़ी नहीं होती थी । सब स्त्रियों को पति बराबर ही पूज्य थे । यूरोपीय स्त्रियों की भक्ति या प्रीति व्यक्ति विशेष में ही स्थापित है, वह भाव तक नहीं पहुँचती । इसी कारण वहाँ पति नामक व्यक्ति विशेष के गुण-दोषों के अनुसार उनकी भक्ति और प्रीति नियमित होती है । इससे वहाँ विधवा विवाह में दोष नहीं है । वहाँ की स्त्रियाँ भाव से विवाह नहीं करतीं व्यक्ति से विवाह करती हैं और इस हेतु व्यक्ति का अंत होने पर पतीत्व का भी अंत हो जाता है, परन्तु हमारे देश के अधिकांश व्यक्तिगत सम्बन्ध इस प्रकार सुगंभीर भावों पर ही स्थित होने से व्यक्ति नष्ट होते हुए भी पतीत्व भाव अस्तित्व में रहता है, इसके कारण भारत में विधवा विवाह निषिद्ध माना जाता है ।

पर्दा-प्रथा, अमानवीय—अवांछनीय

दुराव, छिपाव की जरूरत तो पड़ती है, पर पड़ती तभी है, जब कोई अवांछनीय स्थिति सामने हो । चोर डाकुओं से अपने पैसे का छिपाव करना पड़ता है । भिखारियों या उधार माँगने वालों को भी यही जवाब दिया जाता है कि हाथ खाली नहीं है, आगे चलो । अविश्वस्त बचकाने व्यक्ति के सामने ऐसी बातें नहीं कही जातीं जिसे वह ओछे पेट का आदमी दूसरों से कह कर बदनामी या संकट पैदा करे । जिसके साथ छल करना होता है, उससे भी वास्तविकता प्रकट नहीं करते । आततायियों के आक्रमण से बचने के लिए लुक-छिप कर जान बचाई जाती है । जीवन प्रसंग की अवांछनीय घटनाओं पर पर्दा डाल देते हैं ताकि उन्हें जानने पर लोगों की घृणा न बरसने लगे ।

मल-मूत्र, कूड़ा-कचरा, ढक कर रखते हैं ताकि उनकी दुर्गन्ध उड़ कर कुरुचि उत्पन्न न करे । कसाई लोगों के लिए कानून है कि जानवर खुलेआम न काटें, इससे दर्शकों को भावनात्मक चोट पहुँचती है । माँस भी ढक कर बेचने का नियम है । अनैतिक या सामाजिक कार्य प्रायः छिपकर ही किये जाते हैं । चोर-डाकू नकाब पहन कर हमला करते हैं ताकि वे पहचाने न जा सकें । अश्लील आचरण व्यभिचार जैसे कर्म भी पर्दे के पीछे होते हैं । मरे मुर्दे पर कफन डाल दिया जाता है ताकि उसकी बिगड़ी हुई शकल को देखकर डर न लगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुराव-छिपाव के जितने भी क्रिया-कलाप हैं उनके पीछे कोई न कोई अवांछनीय प्रकरण ही जुड़ा होता है । कुछ न कुछ ऐसा होता है जिसका प्रकट होना व्यक्ति एवं समाज के लिए अहितकर होता है । आक्रमणकारी अपनी बातें छिपाये रहते हैं और दुर्बल व्यक्ति अपनी जान बचाने के लिए छिपने का आसरा ढूँढ़ते हैं । अविश्वस्त लोगों से अथवा अवांछनीय व्यक्ति अपनी कलई न खुलने देने के लिए दुराव का आश्रय लेते हैं । अवांछनीय घटनाओं अथवा कुरुचि उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों पर भी पर्दा डाला जाता है । जहाँ छिपाने का प्रयत्न चल रहा हो समझना चाहिए कि यहाँ सामान्य स्थिति नहीं चल रही है वरन् कुछ गड़बड़ हो रही है अथवा इस प्रकार की आशंका है ।

अच्छी चीजें तो खुलेआम सुसज्जित रूप से रखी जाती हैं, जिसमें उन्हें देखकर प्रसन्नता हो और प्रस्तुतकर्त्ता को प्रशंसा मिले । प्रदर्शनियाँ इस उद्देश्य से लगाई जाती हैं । फूलों के गुलदस्ते मेज पर इसीलिए सजाये जाते हैं कि दर्शकों की आँखें तृप्त हों । आदर्श वाक्य खुली दीवारों पर लिखे और कमरों में टाँगे जाते हैं । उपयोगी प्रवचन खुले मंचों पर होते हैं । महापुरुषों की शोभा यात्राएँ निकाली जाती हैं । विवाह के समय वर-वधू सभी लोग देखते और उन्हें आशीर्वाद देते हैं । छिपकर तो चोर-डाकू ही रहते हैं । हत्यारों को जब फाँसी दी जाती है, तब भी उनके मुँह को काले टोपे से ढँक दिया जाता है ।

अपने देश में स्त्रियों को पर्दे में रखने का रिवाज है । इस रिवाज के पीछे कोई अवांछनीयता, जुगुप्सा हीं होनी चाहिए । सोचना होगा कि वे सम्भावित कारण क्या हो सकते हैं जिनके कारण मनुष्य को अपने सजातीय मनुष्य को इस प्रकार ढककर रखने की आवश्यकता पड़ी ? इस प्रश्न के उत्तर में कई तरह की आशंकाएँ उभरती हैं । एक सम्भावना यह हो सकती है कि पुरुष वर्ग की कामुक आक्रामकता इतनी बढ़ गई हो कि उनसे आत्मरक्षा के लिए स्त्रियों ने अपने लिए यह दीवार बनाई हो । दूसरी आशंका यह हो सकती है कि उस समाज के नारी समुदाय की चरित्रनिष्ठा समाप्त हो गई हो और उन पर कैदियों जैसे बन्धन पुरुष वर्ग को दूषित न करने देने की दृष्टि से लगाये गये हों । सामान्य स्थिति में नर और नर के बीच, नारी और नारी के बीच अथवा नर और नारी के बीच पर्दा किये जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

एक सभ्य परिवार में माता, पिता, भाई, बहिन, बच्चे अभिभावक सभी मिल-जुलकर सद्भावनापूर्वक रहते हैं । इनमें नर और नारी सभी होते हैं । यहाँ तक कि समान और नई आयु के भी । बहिन और भाई, किशोर-किशोरी, युवक-युवती आयु के भी होते हैं । देवर-भाभी के बीच भी आयु की समानता ही रहती है । कन्या, बहिन, पुत्र-वधू आदि उठती उम्र की ही होती हैं । वे समवयस्कों के साथ भी पूर्ण सुरक्षा और निश्चिन्तपूर्वक जीवन-यापन करती हैं । कदाचित ही उनके बीच कभी कोई लज्जाजनक अवांछनीय घटना घटित होती हो । यही बात बड़ी और छोटी उम्र के बीच भी रहती है । चाचा-ताऊ, जेठ, ससुर आदि बड़ी आयु के होते हैं, भाई, भतीजे, देवर आदि छोटे । सभ्य परिवारों में महिलाएँ छोटी-बड़ी सभी आयु की होती हैं और वैसे मर्द भी । उनका साथ-साथ रहना बिना किसी कठिनाई के चलता रहता है । नारी नर को और नर नारी को किसी प्रकार अवांछनीयता की ओर नहीं धकेलते । शालीनता के रहते किसी प्रकार के पर्दे की जरूरत नहीं पड़ती । फिर यदि कोई समाज सभ्य स्तर का है तो उसमें भी बिना किसी कठिनाई के नर और नारी के बीच शालीनता अक्षुण्य बनी रह सकती है ।

पर्दे का बन्धन दुराचार रोक सकता है, यह सोचना व्यर्थ है । दुनिया में जितने भी बुरे काम होते हैं प्रायः सभी लुक छिप कर होते हैं । मनुष्य का शरीर तो कपड़े से ढँका जा सकता है पर उसकी बुद्धि प्रवृत्ति पर अंकुश रखना कठिन है । मानवीय चतुरता अद्भुत है । वह जेल से सुरंग खोद कर कैदियों को निकल भागने का अवसर दे देती है यद्यपि चौकीदार पहरेदारों का जमघट ही उनके इर्द-गिर्द लगा रहता है । पाकेटमार भरी भीड़ के बीच अपना करतब दिखाते रहते हैं । लोहे के पिंजड़े में हाथ-पैर बाँध कर और मुँह तथा आँखों पर पट्टी बाँधकर बन्द किया जा सके तो बात दूसरी है, अन्यथा अवांछनीय व्यक्ति अपने साथी हर स्थिति में ढूँढ लेते हैं या पैदा कर लेते हैं । मन पर अंकुश न हो तो बाहरी प्रतिबन्ध एक बहुत छोटी सीमा तक ही रोकथाम कर पाते हैं । थोड़ी गहराई के साथ यदि वास्तविकता को जाना जाय तो प्रतीत होगा कि जिन देशों और जिन जातियों में पर्दे का रिवाज जितना अधिक है, उनमें दुराचार भी उतना ही अधिक बढ़ा-चढ़ा है । परिवार के भीतर की पवित्रता का उल्लंघन ऐसे ही लोगों के बीच आमतौर से होता रहता है । इसके विपरीत जिन देशों या जातियों में पर्दे का रिवाज नहीं है, उनमें कम से कम पारिवारिक पवित्रता तो कम ही नष्ट होती है । वे अपनी कुरुचि को पुनीत परम्परा के निर्वाह में बाधक नहीं बनने देते ।

यदि पर्दा अनाचार की रोकथाम के लिए किया जाता हो और उस तर्क को बहुत ही उपयुक्त मानने का आग्रह हो तो फिर उसकी व्यवस्था नारी से भी अधिक कड़ाई के साथ नर के साथ होनी चाहिए, क्योंकि उच्छृंखलता में वही सदा से आगे रहता रहा है । घर से बाहर स्वच्छन्द फिरने के कारण उसी के पतित होने की आशंका अधिक है । ऐसी दशा में स्त्रियों पर पर्दे के प्रतिबन्ध का समर्थन करने वालों को, पुरुषों को भी बुरका ओढ़कर, घूँघट मार कर रहने की बात मनवाने और वैसी प्रथा चलाने के लिए जोर देना चाहिए । आखिर मात्र स्त्रियाँ ही तो पातकी नहीं होती, पुरुष को भी पूर्ण सदाचारी और मनोजयी नहीं कहा जा सकता ।

पर्दा प्रथा किसके लिए, किस प्रकार कितनी लाभदायक है ? इस प्रश्न का उत्तर कहीं से भी नहीं मिलता । स्त्रियाँ एक तो वैसे ही छोटे से घरोंदे में कैद रहती हैं, फिर पर्दे के कारण उनका जन सम्पर्क एक प्रकार से समाप्त ही हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है । घर के दो-चार लोगों से ही थोड़ा-सा सम्पर्क रहता है । उसमें भी पुरुष अधिकतर बाहर रहते हैं । रात को खाने-सोने का रैन बसेरा लेने आते हैं और सबेरा होते-होते चारे दाने की तलाश में पक्षी की तरह उड़ जाते हैं । स्त्रियों को दिन भर चित्र-विचित्र प्रकृति के बालकों कूपमण्डूक परम्परा की महिलाओं के साथ समय गुजारना पड़ता है । उनमें विचारशीलता की कोई पूँजी नहीं होती । इसी वातावरण में जिन्दगी की सारी अवधि गुजारने वाली स्त्रियों का ज्ञान, अनुभव, स्वभाव, चिन्तन, दृष्टिकोण कितना छोटा होगा, इसका सहज ही अनुमान किया जा सकता है । इतने छोटे ज्ञान अनुभव के आधार पर इस जमाने की असीम गुत्थियों को सुलझाने की क्षमता नहीं हो सकती । चैन के दिन गुजरते रहें तो बात दूसरी है अन्यथा किसी उतार-चढ़ाव में उलझ जाने पर वे पग-पग पर पटकें खाती हैं और अपने लिए ही नहीं, सम्बन्धी लोगों के लिए भी विपत्ति खड़ी करती हैं । इस घोर धूर्तता के जमाने में पग-पग पर प्रस्तुत असंख्यों उलझनों से शान्तिपूर्वक निपटते हुए जीवन यात्रा पूरी कर लेना सहज नहीं है । उसके लिए ज्ञान और अनुभव की पूँजी चाहिए और उसे जुटाने के लिए जन सम्पर्क के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं । एकाकी दिन गुजारने वाला कितनी ही मस्तिष्कीय क्षमता का क्यों न हो, अनुभवहीन ही रहेगा और इस दुर्बलता के कारण पग-पग पर ठोकर खायेगा । प्रगति की दिशा में बढ़ने के लिए जिस दूरदर्शी प्रखर चिन्तन की आवश्यकता है उसे वह बेचारा कहाँ कैसे पा सकेगा ? ऐसी दशा में जिधर भी मुड़ेगा, उधर ही असफलता द्वार रोके खड़ी मिलेगी । जिन लोगों के साथ जिन परिस्थितियों में उसे रहना पड़ा है, उससे भिन्न कुछ हो सकता है और उससे निपटने के लिए भिन्न चिन्तन की भी आवश्यकता पड़ सकती है, भिन्न प्रकार के कदम भी उठाने पड़ सकते हैं, यह सोचने का तो उसे कभी अवसर भी नहीं मिलता । ऐसी दशा में उसे तनिक-सी विपन्नता अनुभवहीनता के कारण घोर विपत्ति में धकेल सकती है । पर्दा प्रथा पर जोर देने वाले यह भूल जाते हैं कि वे अपनी किसी प्रिय सम्बन्धिनी कोमल कलिका को इन बन्धनों के द्वारा कितनी निरीह स्थिति में धकेल रहे हैं ।

स्पष्ट है कि खुली हवा और धूप न मिलने से घर और शरीर में बीमारी के तत्व उत्पन्न होते और बढ़ते हैं । खुली विचार पद्धति का लाभ न मिलने से मनुष्य मानसिक दृष्टि से दुर्बल और रुग्ण होता चला जाता है । भारत के नारी समाज को चिर काल से पीढ़ी-दर पीढ़ी उन्मुक्त वातावरण में साँस लेने से वंचित रखा जाता रहा है । इसलिए परम्परागत दुर्बलताओं और रुग्णताओं में दिन-दिन बढ़ती हुई वर्तमान पीढ़ी उस स्थिति में आ पहुँची है, जिसको देखकर पत्थर में भी करुणा फूट सकती है । शारीरिक और मानसिक आरोग्य का लाभ ले सकने वाला व्यक्ति कितना समर्थ और कितना प्रखर हो सकता है, कितने महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकता है, उसकी तो शायद आज की भारतीय नारी कल्पना भी न कर सके । पर्दे के प्रतिबन्धों में उसका भाग्य और भविष्य भी निविड़ बन्धनों में जकड़ कर सीमाबद्ध रह गया है ।

नारी को असहाय असमर्थ बनाकर नर ने क्या खोया और क्या पाया ? इस प्रश्न पर जितनी गम्भीरता के साथ विचार किया जायगा, उतना ही स्पष्ट होता जायगा कि पाया कुछ नहीं, मात्र खोया ही खोया है । योग्यता, समर्थता और प्रतिभा को पर्दे का पिशाच क्रमशः चूसता ही चला गया है और नारी रक्त विहीन कंकाल मात्र रह कर किसी प्रकार अपनी जिन्दगी के दिन पूरे कर रही है । ऐसा साथी पाकर नर को क्या लाभ हुआ ? गले के पत्थर की तरह वह उस पर भार बन लदी हुई है । प्रतिभासम्पन्न होने पर वह अपना, अपने परिवार का कितना हित-साधन कर सकती थी और आज की भारभूत स्थिति में वह अपंग रहकर उलटी बोझ बन रही है । इस अन्तर को जितनी गम्भीरतापूर्वक सोचा जायेगा, उतना ही यह स्पष्ट होता जायगा कि पर्दा प्रथा और कुछ नहीं, अपनी ही कुल्हाड़ी से अपने ही पैरों को अनवरत रूप से काटते चले जाना है ।

कभी आपत्तिकालीन स्थिति रही होगी । आततायी शासकों से बहू-बेटियों की लूट-खसोट बचाने के लिए उन्हें पर्दे के पीछे छिपाकर रखना आपत्ति धर्म की तरह स्वीकार किया गया होगा, पर आज तो वे परिस्थितियाँ नहीं रहीं, फिर उसी बन्धन को गले से बाँधे रहने में क्या लाभ ? लुटेरे लोग अपहरण करके हरम भरते रहे होंगे और उस शोषण, उत्पीड़न से क्षुब्ध वे अपहृताएँ प्रतिशोध में कुछ भी कर गुजरने पर उतारू रही होंगी । इस स्थिति को दस्युओं ने समझा होगा और घर से बाहर न निकलने, किसी से बात न करने, मुँह ढँककर रहने जैसे अमानवीय बन्धन लगाये होंगे । उस जमाने की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति आज तो नहीं है । आज तो हम न्याय, विवेक और औचित्य अपनाने की स्थिति में हैं फिर उस अन्धकार युग की पर्दा-प्रथा जैसी विडम्बनाओं को अपनाने का आग्रह क्यों करें ?

पर्दा-प्रथा—बनाम आत्मविश्वास पर प्रहार

जिन रीति-रिवाजों और प्रथा-परम्पराओं ने नारी के व्यक्तित्व को कुण्ठित करने में बहुत बड़ा योग दिया है, उनमें से एक है- परदा । इन दिनों शिक्षा के बढ़ते हुए प्रसार से इस प्रथा के पिछड़ेपन और हानिकारक पक्ष को भी समझा जाने लगा है, किन्तु जिन परिवारों में परम्परागत मान्यताओं को ही प्रश्रय दिया जाता है- भले ही वे शिक्षित हों या अशिक्षित पर्दा नारी के शील और लज्जा का प्रतीक बना हुआ है । शहर में बसने वाले शिक्षित परिवारों की स्त्रियाँ भी बाहर के व्यक्ति से खुल कर बात कर लेती हैं, किन्तु जब घर का कोई बड़ा बुजुर्ग आ जाता है तो सिर ढाँक कर, घूँघट मार कर अलग जा बैठती हैं ।

शिक्षित और शहरी लोगों की यह दशा है तो फिर बिना पढ़े-लिखे और गाँव में रहने वाले व्यक्तियों की क्या स्थिति हो सकती है, कहने की आवश्यकता नहीं है । गाँवों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में तो परदा प्रथा का एकछत्र साम्राज्य है । ग्रामीण स्त्रियाँ अपने ससुर, जेठ, देवर, समधी, ननदोई और पति तक से परदा करती हैं । गाँव में, निम्न वर्ग के परिवारों में, परम्परा निष्ठ कुलों में स्त्रियों को हर उस पुरुष से परदा करना पड़ता है जो रिश्ते में थोड़ा भी बड़ा होता है या पति से अधिक उमर के होते हैं । कहने का अर्थ यह कि ससुराल में पतिगृह में स्त्री को इस प्रकार सिमट सिकुड़ कर रहना पड़ता है जैसे उसका कोई अस्तित्व ही न हो । मर्यादा और लज्जाशीलता के नाम पर स्त्री के लिए चौबीस घण्टे मुँह ढककर रहने की विवशता स्थूल दृष्टि से कोई बड़ी बात नहीं है, पर उसके मूल में जो संस्कार छिपे हैं और परदा उसके व्यक्तित्व को जिस प्रकार प्रभावित करता है वह पर्दा प्रथा को नारी जाति और मनुष्य समाज के माथे पर लगा एक बड़ा कलंक सिद्ध करता है ।

यों मुँह पर घूँघट डाल लेना, साड़ी का पल्लू माथे से नीचे लटका लेना कोई बड़ी बात नहीं है, पर उसके साथ जो प्रतिबन्ध और नियम जुड़े होते हैं, पर्दे के सम्बन्ध में जो मान्यताएँ थोपी जाती हैं वे नारी के मन में कितनी ही हीनता की ग्रन्थियाँ उत्पन्न कर देती हैं । उदाहरण के लिए पर्दे का कारण यही बताया जाता है कि कोई स्त्री का मुँह न देख पाये । मुँह देख लेने मात्र से ही उसके शील पर आँच आ जायगी ऐसा समझा जाता हो, अथवा यह माना जाता होगा कि सारे समाज में कामुक ही कामुक भरे पड़े हैं । जो स्त्री का मुँह देखते ही उस पर टूट पड़ेंगे तथा स्त्री इतनी निरीह और असहाय है कि वह ऐसे किन्हीं दुःखद संयोगों से अपनी रक्षा नहीं कर सकती ।

कारण चाहे जो भी हो, पर्दा स्त्री में संस्कारों से आत्मविश्वास की भावना को कम करता है और उसे असुरक्षित, असहाय बनाता है । मानसिक दृष्टि से वह अपनी रक्षा के लिए इसी बिन्दु पर आकर पति की या पुरुष के आश्रिता, सुरक्षिता हो जाती है । आज भारतीय स्त्रियों में कायरता, निर्बलता और भीरूता की जो कमजोरियाँ विद्यमान है, उनका एक बड़ा कारण यही है कि उसे सदियों से दूसरों की निगाह बचाकर रहना सिखाया जाता है । पर्दे में रखकर उसे कमजोर और अविश्वसनीय होने का अहसास कराया जाता रहा है ।

किसी समय पर्दा प्रथा समय और काल की परिस्थितियों के कारण आवश्यक रही होगी । यद्यपि यह मानना भी आधारहीन ही है । बताया जाता है कि मध्यकाल में किसी सुन्दर स्त्री को देखकर राजा और सामन्त उसे अपने हरम में डाल लेते थे । इससे किसी धनी और समर्थ व्यक्ति की निगाह ही स्त्री पर न पड़े, यह सोचकर पर्दा प्रथा प्रचलित हुई । यद्यपि यह तर्कसंगत नहीं जँचता क्योंकि कितना ही पर्दा किया जाय शरीर की सुडौल बनावट और सुन्दर गठन छुपाना मुश्किल ही है । फिर भी यदि उपर्युक्त कारण को पर्दा प्रथा के प्रचलन का आधार मान भी लें तो भी आज न राजा रहे हैं और न सामन्त, जिनके कारण किसी सुन्दर स्त्री के शील अपहरण की सम्भावना हो । अनाचार और दुर्बल के उत्पीड़न की घटनायें सभी युगों में होती हैं, उसका उपाय सिकुड़ कर बैठ जाना नहीं है, बल्कि उसका प्रतिकार कमजोर को शक्तिशाली और सामर्थ्यवान् बनाकर ही किया जा सकता है ।

पर्दा प्रथा—हमारे अपने देश या संस्कृति में कभी भी प्रचलित नहीं रही है । प्राचीनकाल में स्त्रियाँ सभी क्षेत्रों में काम करती थीं और उन्हे विद्याध्ययन योग्यता—अभिवर्धन और अपनी प्रतिभा से समाज को लाभ पहुँचाने की खुली छूट थी, उन्हें कहीं किसी प्रतिबन्ध में नहीं रहना पड़ता था । जिन दिनों भारत में विदेशी आक्रमणकारी आये तब उनके साथ ही पर्दा प्रथा भी भारत में आयी । सर्वविदित है कि परदा पहले पहल मुसलिम देशों में शुरू हुआ था । वहाँ के आक्रमणकारियों ने आक्रमण कर जब भारत में अपना साम्राज्य स्थापित किया तो उनकी सभ्यता और संस्कृति के लिए सर्वथा विजातिय है ।

यह तो निश्चित ही है कि माँ के व्यक्तित्व का प्रभाव सन्तान पर भी अनिवार्य रूप से पड़ता है । सन्तान कितनी भी प्रतिभाशाली और योग्य क्यों न हो, माँ से मिले संस्कार उसका पीछा करते रहते हैं और समय पर अपना प्रभाव भी बताते हैं । इसीलिए शिक्षित और वैज्ञानिक प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति भी अपने परिवार से प्राप्त संस्कारों के कारण बेतुके अन्धविश्वास तथा असंगत निरर्थक परम्पराओं का अनुकरण करते देखे जा सकते हैं । पर्दे में रहने के कारण नारी के व्यक्तित्व का ह्रास ही हुआ है और वही भारतीय नारी जो कभी वीर-प्रसूता थी, कालान्तर में व्यक्तित्व से अपाहिज और अपंग हो गयी । वह आज भी उन्हीं परम्पराओं और प्रथाओं से चिपकी हुई है ।

शिक्षित और आधुनिक कहे जाने वाले परिवारों में भी संस्कारों से प्राप्त इस प्रथा को उसी प्रकार अपनाया जाता है जैसा कि परम्परावादी परिवारों में । अपने आपको आधुनिक कहने वाले युवक भी विवाह के बाद अपनी पत्नी से पर्दे की अपेक्षा करते हैं और पढ़ी-लिखी लड़कियाँ भी विवाह के बाद अपनी ससुराल वालों को खुश रखने के लिए, उन पर अपना अच्छा प्रभाव छोड़ने के लिए अपनी पूर्व मान्यताओं को तिलांजलि देकर पर्दे में चली जाती हैं ।

यहाँ पर्दे से आशय इतना मात्र ही नहीं है कि सिर पर का पल्लू घूँघट बना कर मुँह ढाँप लिया जाय । पर्दे का सार रूप यही है कि पुरुष की उपस्थिति मात्र से अपने आपको भयभीत या लज्जित अनुभव करना । बार-बार अनुभव होने वाली यह लज्जा अथवा संकोच ठीक उसी स्तर का होता है जैसे कि किसी अपराधी को उस समय अनुभव होता है, जबकि वह पहले परिचित मित्रों के सामने पड़ता है । उन मित्रों पर उसका प्रभाव बहुत ही अच्छे व्यक्ति के रूप में रहा हो और बाद में उनके सामने पड़ने पर अपराध बोध से लज्जित हो उठा हो । स्त्रियों में प्रचलित पर्दा प्रथा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अथवा उसके संस्कार भी उसे जाने-अनजाने एक अपराध बोध की तरह लज्जित और संकुचित किये रहते हैं ।

इस घातक परम्परा को समूल नष्ट करने के लिए किसी स्त्री से घूँघट खुलवा देना या पर्दा न करने के लिए तैयार कर देन भर पर्याप्त नहीं है । वस्तुतः इसके लिए तो महिलाओं में आत्म-विश्वास पैदा करना जरूरी है । ऐसा आत्म-विश्वास जिसके जाग्रत होने के बाद वह स्वयं को आश्रिता, संरक्षिता अथवा अबला नहीं; समर्थ, स्वावलम्बी और परिस्थितियों की चुनौती शीघ्र स्वीकार करने वाली नारी अनुभव करने लगे । इसका अर्थ यह नहीं है कि परिवार के रूप में नर और नारी के सघन सहयोग से जो व्यवस्था बनी है, वह व्यवस्था ही तोड़ दी जाय । वस्तुतः तो सघन सहयोग भी तभी बन सकेगा, जबकि महिलाएँ भी आत्म-विश्वास और शक्ति सामर्थ्य से सम्पन्न हों अन्यथा इन दिनों प्रचलित परिवार व्यवस्था में तो नारी नर के कन्धों पर बोझ और मस्तिष्क पर तनाव ही अधिक बनी रहती है । पुरुष के समान ही समर्थ होने के आत्म-विश्वास से सम्पन्न, पर्दे की हीनता ग्रन्थि और अपराध भावना जैसी कुण्ठा से मुक्त होकर नारी जब परिवार को सम्भालेगी तो समाज पर भी इसका आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ेगा ।

क्या बहिन-बेटियों से पर्दा कराना आवश्यक है ?

आर्य धर्म के प्राचीन इतिहास को गवेषणापूर्वक देखा जाय तो आधुनिक परदे के आकार-प्रकार का विवेचन कहीं नहीं मिलता । परदे का समर्थन या विरोध किसी भी शास्त्रीय ग्रन्थ में दिखाई नहीं पड़ता । इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि पुरातन काल में परदे का अस्तित्व था ही नहीं जिसका विरोध या समर्थन करने की आवश्यकता पड़ती । रामायण तथा महाभारत काल में तो स्त्रियों ने पुरुषों की तरह युद्ध क्षेत्र में जाकर शत्रुओं से युद्ध किया था, उच्च शिक्षा में महिलाएँ पुरुषों से भी बाजी मार ले गयी हैं । पुरुषों की अनुपस्थिति में राजकीय कार्यों का संचालन भी वे किया करती थीं । अगर उस समय वर्तमान काल की तरह परदा प्रथा का भी प्रचार होता तो, महारानी कैकेयी महाराज दशरथ के साथ युद्ध क्षेत्र में जाकर अपना कौशल न दिखला सकतीं, सावित्री जैसी पतिव्रता अपने मृत पति की आत्मा को यमराज से वापिस नहीं ला सकतीं, सीता, अनुसूया, दुर्गा, गार्गीय, मैत्रेयी, द्रौपदी आदि के एक से एक बढ़ कर कार्यों से लिखित इतिहास के सुनहले पृष्ठ आज भी अन्य देशों के इतिहास को नतमस्तक करते दिखलाई नहीं पड़ते । उस समय भी दुर्भाग्यवश यदि परदे की बीमारी होती तो भारताकाश में स्त्री रत्न रूपी अनेक नक्षत्र चमकते हुए नहीं दिखाई पड़ते, वरन् उनके स्थान पर होते काले रक्त-बिन्दु, जिनकी दूसरे देशों के इतिहासाकाश में कमी नहीं है । विदेशी लोग भी पुरातन भारतीय स्त्रियों को शक्ति, साहस, बुद्धिमत्ता, बिलक्षणता की प्रशंसा मुक्त कण्ठ से करते हैं । इसका कारण यही है कि उस समय के पुरुष वर्तमान की तरह स्त्रियों को परदे में आच्छादित कर घर की चहारदीवारी में अपने पशु बल से बन्द नहीं कर देते थे, वरन् उनको विद्या-बुद्धि प्राप्त करने की पूर्ण सुविधा दे रखी थी । अस्त्र-शस्त्र चलाने, कला-कौशल के सीखने के लिए पूरा प्रबन्ध था । यही कारण था कि उनका विकास हुआ और इतना हुआ कि आज भी उनकी चरितावली घर-घर में गायी जा रही है ।

हिन्दू जाति ने अपने देश में बड़े-बड़े साम्राज्यों का उत्थान-पतन देखा है। जिस समय आचार-विचार, रहन-सहन में जैसे परिवर्तन की आवश्यकता हुई, उसे अंगीकार करने में हिन्दू जाति जरा भी पश्चातपद नहीं हुई । पंजाब के हिन्दुओं का आचार-विचार, रहन-सहन मद्रास के हिन्दुओं से आपको भिन्न मिलेगा, इसका कारण यही है कि पश्चिमी जाति के आक्रमणों में पंजाब ही सर्वप्रथम मोरचे का स्थान रहा है, अतः पंजाब को अपनी सामाजिक परिस्थिति, वेश-भूषा, रहन-सहन, उस ढाँचे में परिवर्तित करते जरा भी हिचकिचाहट न हुई, जिसकी वास्तविक आवश्यकता थी । आपको धर्म के विषय में पंजाब के हिन्दुओं के विचार उतने ही उदार तथा सुसंस्कृत मिलेंगे, जितने मद्रासी और उड़िया ब्राह्मणों के संकीर्ण कट्टरपन्थी । परदा प्रथा यवन साम्राज्य की स्मृति इस प्रथा द्वारा हिन्दुओं को दिलाती है । मुसलमानी सल्तनत में हिन्दू स्त्रियों की धर्म-रक्षा के लिए यह आवश्यक था कि वे नख-शिख से पर्दे में रह कर घर में बन्द रहें ताकि उनके सौन्दर्य की चर्चा तत्कालीन शासक सैनिकों के कान में न पड़ जाय और हाथ में कानून रखने वाली शासक जाति हिन्दू स्त्रियों के पवित्र धर्म को भ्रष्ट न कर सकें और तो क्या उस समय भगवान के मन्दिर भी पर्दे में रखे जाते थे । अर्थात् मकान के भीतर हिस्से में या सुरंग में जिससे धर्म प्राण हिन्दू स्त्रियों को देव-दर्शन करने के लिए भी बाहर न जाना पड़े और परदे में ही भगवान के दर्शन कर सकें । कुछ जातियों में तो परदे का इतना भयंकर साम्राज्य था कि आठ वर्ष का लड़का भी गृहस्थियों के अन्तःपुर में प्रवेश नहीं कर सकता था । लड़कियाँ भीतर ही भीतर बड़ी होती रहती थीं, किन्तु बाहरी आदमियों को इतना भी पता नहीं लग सकता था कि अमुक व्यक्ति के घर में इतनी स्त्रियाँ हैं । तत्कालीन समाज ने आत्मरक्षा के लिये परदे को करना भी कुलीनता का चिन्ह तथा प्रतिष्ठा का स्तम्भ समझा जाने लगा । लोगों के मस्तिष्क तथा भोली स्त्रियों के हृदय में इस बात को भली प्रकार पैठा दिया गया कि "परदा कुल की शान है, परम्परा की रीति है ।" मुसलमानी सल्तनत आयी और अपने करिश्मे दिखाकर रसातल को विदा हो गयी, किन्तु अपनी विदाई में शासित हिन्दुओं को परदा की प्रथा उपहार में दे गयी, जिसे लेकर आज के हिन्दू भी गर्वित हैं । अंग्रेजी सल्तनत कायम हो जाने पर हिन्दुओं ने अपनी वेश-भूषा, रहन-सहन में परिवर्तन कर लिया । कई कुप्रथाओं को तिलांजलि दे दी, शिक्षा को अपनाया, किन्तु परदे के पाप को हिन्दुओं ने अपने प्राणों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिपटा कर रख लिया । बड़े बड़े वकील, बैरिस्टर, पण्डित, डाक्टर, जज, मजिस्ट्रेटों के घर में से पुरानी सभ्यता की सब निशानी एक-एक कर विदा हो गई, किन्तु यह प्रथा अभी भी उनकी सहेली बन कर उनके घरों में खेल कूद रही है ।

क्या ही अच्छा हो कि भारत का वर्तमान समाज भी अपने घरों के अन्दर से इस बनावटी परदा को हटा कर उस भीषण भूल का प्रतिशोध करे, जिसके कारण हमारे घर की देवियाँ एक न एक रोग से पीड़ित रहती हैं । घर के बाहर की दुनिया से अनभिज्ञ रह कर आत्म-भीरु बनी हुई हैं । परमात्मा के नाम पर उनको भी प्रातःकाल की उस स्वच्छ वायु का सेवन करने दो, जो संसार के समस्त प्राणियों के लिए प्रकृति ने समान रूप से उपभोग के लिए दे रखी है । उनको भी देश और समाज में होने वाले परिवर्तनों से अवश्य परिचित कराओ जिसके बिना उनमें तथा पशु में कोई भेद नहीं रह जाता । समय पर बल और साहस का उनमें संचार करो जो उनकी आकस्मिक आत्म-रक्षा का कवच बन सकें । कितने ही लोगों का भ्रमण अब भी नहीं मिटा कि "परदा छोड़ देने से स्त्रियाँ स्वतन्त्र हो जाती हैं," किन्तु यह उनका भ्रम ही नहीं, अन्धा विश्वास है । गुजरात, महाराष्ट्र, मद्रास की स्त्रियों ने परदा हटा कर कौन से शील धर्म को नष्ट किया है ? वरन् यों कहिए कि भारत के नारी धर्म का वास्तविक मान इन्हीं प्रान्तों ने रख लिया । आज स्त्री अपहरण, बलात्कार की जितनी घटनाएँ अपने देश में घटित होती हैं, क्या उनसे शतांश घटनाऐं परदा हटाने वाले देशों में घटित हुई हैं ? यह तो माना हुआ सिद्धान्त है कि जो वस्तु जितनी छिपा कर रखी जायगी बाहरी परिस्थिति उसे प्रकाश में लाने के लिए उतनी विशेष उत्कण्ठा दिखायेगी और भीतरी परिस्थिति उसे छिपाने के लिये उतनी ही संकीर्ण और निर्बल होती रहेगी । रेलवे के प्लेटफार्म या सार्वजनिक स्थानों में परदे वाली कुरूप स्त्री को देखने तथा आवाजकशी करने के लिये उतनी भीड़ सहज ही में एकत्र हो जाती है जितने कि मदारी द्वारा किये जाने वाले बन्दर-बन्दरी के नाच में । इसके प्रतिकूल परदा रहित सुन्दर स्त्री के सम्मुख आँख उठाकर देख लेने का साहस भी कोई व्यक्ति सहसा नहीं कर सकेगा ।

पर्दे से केवल हानि ही हानि है

यद्यपि सहज कुटुम्ब में शिष्टाचार का प्रदर्शन कम ही होता है । दिन-रात का साथ और बाल्यावस्था की बेतकल्लुफी प्रदर्शन को कम करा देती है, फिर भी उम्र बढ़ने पर शिष्टाचार का काफी पालन होना चाहिए । आते-जाते समय गुरुजनों को या एक दूसरे की सुविधा-असुविधा का ख्याल, बातचीत करते समय स्वर की कोमलता, खाने-पीने आदि की चीजों में यथायोग्य सबके हिस्से का विचार आदि शिष्टाचार जरूरी है, विनय और न्याय दोनों दृष्टियों से जरूरी है । इससे प्रेम रहता है और सुकुटम्बता भी कायम रहती है और बढ़ती है ।

शिष्टाचार एक जरूरी चीज है और वह विनय का स्वाभाविक फल है । इसके लिए कहीं-कहीं पर्दा आदि की जो कुप्रथा है, वह शिष्टाचार की विडम्बना है, उसे दूर करना चाहिए ।

कहीं-कहीं तो इस शिष्टाचार का इतना अनुचित रूप है कि पुत्रवधू वर्षों तक अपनी सास से बातचीत नहीं कर सकती । जरूरी काम के लिए भी उसे मौन रखना पड़ता है या बँधे हुए इशारों से संकेत करना पड़ता है । यह सब बहुत भद्दा है ।

याद रखना चाहिए कि पुत्रवधू पुत्री के समान है, उसके साथ हर तरह की बात करना, उसके हृदय के सुख-दुख सुनना, गृहकार्य में स्पष्टता से सहयोग करना जरूरी है । हाँ, पुत्रवधू उद्दण्डता से न बोले, अवहेलना के साथ उत्तर न दे यह जरूरी है, पर इसके लिए शब्दों पर संयम रखना चाहिए, न कि शब्दों का इस्तेमाल ही बन्द कर देना चाहिए ।

घूँघट, बुर्का आदि के रूप में जो शिष्टाचार निभाया जाता है, पर्दा की वह प्रथा बुरी है ।

साधारणतः इसके तीन कारण बताये जाते हैं ।

ये तीन कारण इस प्रकार हैं—(१) गुरुजनों का सम्मान । (२) आर्थिक आदि महत्त्व का प्रदर्शन । (३) शील की रक्षा ।

पहला कारण ठीक नहीं है, क्योंकि माता-पिता का पर्दा नहीं किया जाता, गुरुजन तो वे भी हैं । सिर्फ ससुराल वालों का पर्दा किया जाता है, ससुराल का तुच्छ से तुच्छ आदमी माता-पिता से भी महान् है, यह मान्यता अनुचित है । दूसरी बात यह है कि पर्दा की स्वास्थ्यनाशकता तथा और अनेक हानियों को देखते हुए शिष्टाचार का यह तरीका ठीक नहीं है । नमस्कार करना, नीचे आसन पर बैठना, उद्दण्डता से या कठोरता से उत्तर न देना, साधारणतः नीची नजर रखना आदि नम्रता दिखलाने के अनेक तरीके हैं, जो सब जगह काम में लाये जाते हैं, उन्हीं का उपयोग करना चाहिए । पुत्रवधू के लिए यह अद्भुत और बेडौल तरीका क्यों ?

दूसरे पर्दा का आर्थिक महत्त्व भी समझा जा रहा है, एक जमाना ऐसा आया था कि जब किसी के पास पैसा हो जाता था तो उसका प्रदर्शन वह इस रूप में करता था कि उसकी स्त्री को किसी काम के लिए बाहर न निकलना पड़े, उसे कोई देख न पाये, असूर्यम्पश्या होना अर्थात् घर के भीतर घुसे रहने के कारण किसी स्त्री का सूर्य को भी न देख सकना—वैभव और महत्त्व की निशानी समझी जाती थी । इसके मूल में किस प्रकार पूँजीवाद, आलस्योपासना और मुफ्तखोरी की मनोवृत्ति है, यह तो कहना व्यर्थ है, पर महत्त्व के बहाने से नारी को किस प्रकार पंगु और पुरुष का गुलाम बनाया गया है, यह भी बहुत शर्मनाक है । इस प्रकार का लँगड़ापन और अन्धापन न तो नारी के लिए शोभा की बात है, न पुरुष के लिए, इससे तो एक हैवान और दूसरा शैतान बनता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तीसरा कारण शील की रक्षा है । कहा जाता है कि बाहर निकलने से या खुले मुँह रहने से बदमाश लोग टकटकी लगाते हैं, आक्रमण भी कर बैठते हैं, इसलिए पर्दा जरूरी है ।

इसमें पहली बात तो यह है कि इस दृष्टि से पर्दा प्रथा का पालन किया ही नहीं जाता । परिचितों में जहाँ गुण्डापन कम सम्भव है भी, वहीं पर्दा किया जाता है । अपरिचित स्थानों में घूँघट, बुर्का आदि हटा दिया जाता है । इसलिए टकटकी लगाने आदि की बात व्यर्थ है ।

दूसरी बात यह कि जहाँ पर्दा होता है, वहीं टकटकी लगाने की आदत लोगों में पड़ जाती है, पर्दा से पुरुषों का चरित्र गिरता है । जहाँ पर्दा नहीं होता, वहाँ टकटकी लगाने की फुरसत भी नहीं रहती । किस-किस को लोग कहाँ-कहाँ टकटकी लगाएँ ?

तीसरी बात यह है कि यह न्याय नहीं है कि पुरुषों के अपराध के लिए स्त्रियों को बन्धन में डाला जाय । पुरुषों में अगर दुष्टता है तो उनकी सजा उन्हें ही मिलनी चाहिए ।

चौथी बात यह कि किसी के घूर लेने से स्त्रियों का सतीत्व या शील भंग नहीं होता । सीता से बढ़कर सतीत्व और किसका होगा ? पर उन्हें रावण चुरा ले गया था । सतीत्व या शील का आधार अपना मन है, दूसरों की आँखें नहीं ।

पाँचवीं बात यह है कि पर्दा से स्त्री में मनोबल, साहस आदि की इतनी कमी आ जाती है कि वह जल्दी दुष्ट-पुरुषों का शिकार हो जाय, जिसने खुले मुँह दुनिया देखी है और दुनिया का अनुभव तथा अभ्यास पाया है, उसे इतनी जल्दी बहकाया नहीं जा सकता ।

इस प्रकार शील रक्षा की दृष्टि से भी पर्दा बेकार है । ये तीनों कारण पर्दा की कुप्रथा का समर्थन नहीं करते । इसके सिवाय पर्दा से बहुत-सी हानियाँ भी हैं, उनका निर्देश करने से भी पता लग जायगा कि पर्दा प्रथा किसी भी तरह उपयोगी नहीं है । पर्दा से होने वाली कुछ खास-खास हानियाँ इस प्रकार हैं—

(१) खुली हवा के न मिलने से स्वास्थ्य का नाश ।

(२) घर के बाहर न निकल सकने से अनुभव की कमी ।

(३) कुटुम्बी पुरुषों के ही आश्रित रहने से उनके द्वारा ठगाया जाना—खासकर वैधव्य आदि में ।

(४) बैंक आदि बाहर की दुनिया से सम्बन्ध कर सकने से असहाय, पंगु और पराश्रित बनकर रह जाना ।

(५) भ्रमण आदि के आनन्द में बहुत कमी ।

(६) पराश्रित होने से नौकर-चाकरों के बिना काम न चल सकना, इससे खर्च का बढ़ना या पड़ोसी आदि का सहारा लेने से ठगाया जाना और दीन बननां ।

(७) हिम्मत की कमी से दुष्टों का सामना न कर सकना।

(८) पर्दे में रहने के कारण शिक्षण की दुर्बलता ।

(९) पर्दा आदि के कारण सज्जनों के भी काम न आ सकना, दोनों तरफ काफी असुविधा बढ़ना ।

(१०) नारीत्व का अपमान ।

इस प्रकार पर्दा प्रथा किसी भी तरह अच्छी नहीं है । इसके कारण नारी को अनेकों हानियों एवं मुसीबतों का सामना करना पड़ता है ।

घूँघट के कारण दुलहनें बदलीं

पिछले दिनों एक स्टेशन पर उस समय अच्छा-खासा हंगामा मच गया जब मालूम पड़ा कि अपनी बारात के साथ दूसरी बारात की दुलहन उतर आई है और अपनी दुल्हन उस दूसरी बारात के साथ चली गई है ।

रेल के एक ही डिब्बे में एक साथ दो बारातें चढ़ीं मथुरा स्टेशन से । एक बारात को आगरा उतरना था तथा दूसरी को मुरैना । दोनों ही बारातें निकटस्थ गाँवों की थीं । कुछ बाराती और दूसरे डिब्बों में थे । दोनों दुल्हनों को एक ही डिब्बे में बिठाल दिया गया था तथा साथ में कुछ अन्य बाराती, जिनमें बुजुर्ग लोग ही अधिक थे । घूँघट में लिपटी सिमटी वे दोनों बैठी रहीं । पर्दा प्रथा के कारण बारातियों के सामने बोलना तो दूर—बेचारी पानी आदि भी स्वयं नहीं माँग सकती थीं । जब आगरा स्टेशन आया तो सब उतरने लगे । हड़बड़ी में आगे जाने वाली दुल्हन उनके साथ उतर आई और गाड़ी चल दी, किन्तु कुछ दैवयोग ही कहिए, कि लड़के का बड़ा भाई जो सामान की गिनती कर रहा था इधर आया और बहू का परिधान दूसरा पाकर बोल उठा कि "ये कपड़े तो अपने यहाँ से नहीं चढ़ाये गये थे । अपनी बहू तो अमुक रंग का दुपट्टा ओढ़े थी ।"

अब क्या था सभी के लिए यह एक कौतूहल तथा हँसी का विषय बन गया था, पर समस्या गम्भीर थी ।

अब बहू से पूछा गया कि वह अपना नाम तथा रहने का स्थान बतावे, पर वह बेचारी इस घटना से इतनी हतप्रभ हो गई थी कि सिवाय रोने के कुछ नहीं सूझ रहा था उसे ।

निदान—सारी बात स्टेशन मास्टर को बताई गई । वह समझदार व्यक्ति था । दुल्हन को अपने कमरे में लाने को कहा । कुछ व्यक्ति साथ लेकर गये, तब उसने उन व्यक्तियों को दूर हटा कर कहा "बेटी अब बताओ तुम्हें कहाँ जाना था ? तुम्हारी शादी कहाँ हुई है आगरे के पास सीकरा या मुरैना ?"

अब उसका स्वर फूटा और बोली "मुरैना में हुई है ।" और इसके साथ ही उसका रुदन और बढ़ गया । कहने लगी "मुझे तो मेरे घर (मायके) पहुँचा दो ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्टेशन मास्टर ने उसे धीरज बँधाया और कहा "तुम बिल्कुल चिन्ता मत करो । तुम्हें तुम्हारे घर पहुँचा दिया जायगा ।"

तत्काल अगले स्टेशन के स्टेशन मास्टर को फोन किया गया कि वे उक्त बारात को धौलपुर पर ही उतार लें—उनकी दुल्हन गलती से यहाँ दूसरी बारात के साथ उतर गई है ।

तब अगली आने वाली ट्रेन से उनकी दुल्हन धौलपुर से वापस आई और इन्होंने उनकी दुल्हन को लाने वाले व्यक्तियों के साथ धौलपुर भेजा ।

तब सभी ने इसका कारण पर्दा प्रथा को ही माना और उसका दुष्परिणाम देखते हुए उसे बहुत बुरा समझा । ठाकुर हरनाम सिंह ने—जो वर के पिता थे—उसी समय यह कहा कि अब वे अपने घर में किसी से पर्दा न करवायेंगे, बहू भी तो आखिर लाई हुई बेटी ही होती है ।

इसी तरह की एक अन्य घटना पिछले दिनों दुमावाड़ी रेलवे स्टेशन पर घटी जिसमें दो दुल्हनों में अदला-बदली हो जाने का दिलचस्प वाकया सामने आया ।

बताया जाता है करीमगंज से आने वाली पैसेन्जर गाड़ी से दो बारातें दुमावाड़ी में उतरीं । संयोगवश कुछ बराती और दोनों दुल्हनें एक ही डिब्बे में सफर कर रहे थे । स्टेशन पर उतरते समय घूँघट में होने के कारण एक की दुल्हन दूसरे के साथ और दूसरे की पहले के साथ चली गई । बारातें घर पहुँच गईं तब तक किसी को भी मालूम नहीं पड़ा । घर में स्त्रियों से बातचीत हुई तब पता चला कि दोनों दुल्हनें अदल-बदल कर आई हैं । घर वाले स्टेशन भागे और वहाँ से एक दूसरे से पता लगाते हुए अपनी-अपनी दुलहनों को वापस लाये । इस दिलचस्प खबर पर इस क्षेत्र में खूब मनोरंजन चल रहा है, जबकि विचारशील लोग इसे एक सामाजिक-कलंक मानकर पर्दा प्रथा की निन्दा कर रहे हैं ।

तमाशा देखते रहे

सराय दीनबख्शी (राज.) के गनगौर मेले में जितना अच्छा तमाशा एक पर्दे वाली औरत का हुआ उतना किसी सरकस, बाजीगर या खिलौने वाले का भी न हुआ होगा ।

वाणियों की घाणी से आई हुई उक्त ३५ वर्षीय स्त्री मेले की भीड़ में पति से बिछुड़ गई । बिछुड़े हुए घण्टों बीत गये जब पति का पता न चला तो स्त्री ने रोना चिल्लाना शुरू कर दिया । पुलिस वाले पहुँचे और उसका गाँव तथा पति का नाम पूछने लगे ताकि लाउडस्पीकर पर चिल्लाकर पति को बुलाया जा सके । स्त्री जो घोर पर्दे में अपना मुँह छिपाये थी गाँव का नाम तो बता दिया पर पति का नाम बोलने से इन्कार कर दिया । देखते-देखते अच्छी-खासी भीड़ जमा हो गई, पुलिस वाले पूछते रहे पर स्त्री बेचारी "नरक में जाने वाला काम क्यों करती" अन्त तक भी उसने जबान से पति का नाम नहीं ही लिया । कई लोग उसके गाँव के भी वहाँ उपस्थित थे पर हमेशा पर्दे में रहने वाली उस स्त्री को वे भी पहचान न सके आखिर गाँव की एक लड़की ने किसी तरह उसे पहचाना, तब कहीं उसके पति का नाम पता चल पाया । ठीक चार घण्टे बाद वह अपने पति से भेंट कर सकी ।

पर्दा प्रथा—नारी के साथ एक नृशंस अन्याय

नर और नारी मिलकर एक पूर्ण समाज बनाते हैं । जैसे दोनों पहिये मिलकर ही गाड़ी चलाते हैं, इसी प्रकार गृहस्थ जीवन भी नर और नारी दोनों के समान प्रयत्न और पुरुषार्थ से प्रगतिशील बनता और सुखी रहता है । संसार के समस्त सभ्य और प्रगतिशील देशों में यही प्रतीत होता है । दो बैल जिस प्रकार कंधे से कंधा मिलाकर काम करते हैं, उसी प्रकार नर और नारी एक गुट होकर अपनी योग्यता और सामर्थ्य के अनुरूप पूरा पुरुषार्थ करके परिवार को सुखी एवं समुन्नत बनाने के साधन जुटाते हैं । संसार की प्रगतिशीलता का यही रहस्य है ।

अपने समाज की कुछ विचित्र स्थिति है । यहाँ नारी को घर की चहारदीवार के भीतर बन्द रहने वाले कैदी की तरह जीवन-यापन करना पड़ता है । उसको घर से निकलना, अकेली कहीं जाना, दूसरों से बात करना निषिद्ध है।पर्दा प्रथा के कारण यहाँ स्त्रियों की इतनी दयनीय दशा है कि उनकी तुलना में पशु-पक्षी भी अच्छी स्थिति में पाये जा सकते हैं । गाय, भैंस, घोड़ी, बकरी आदि खुले मुँह रह सकती हैं और मन्दी या जोरदार की आवाज में चाहें जब बोल सकती हैं, पर यह सुविधा भारतीय नारी को प्राप्त नहीं है । चिड़ियों के चहकने-फुदकने पर प्रतिबन्ध नहीं, पर बेचारी भारतीय नारी के भाग्य में उतनी भी स्वतंत्रता नहीं बदी है । उन्हें खूनी कैदी की तरह हर घड़ी प्रतिबन्धों से जकड़ी हुई एक कोठरी में आजीवन इस तरह रहना पड़ता है जहाँ अनुभव स्वतन्त्रता की हवा भी नहीं पहुँचने पाती । इस बन्धन में वे अपनी आत्मिक और भौतिक सभी प्रतिभाएँ खोकर पराधीन, परावलम्बी असहाय और कातर किसी निरीह प्राणी की स्थिति में पहुँच जाती हैं ।

प्राचीन भारतीय नारी ने हर क्षेत्र में नर के कन्धे से कन्धा मिलाकर सृजनात्मक कार्यों में योग दिया है । घर और बाहर समान रूप से उसका कार्य-क्षेत्र रहा है । रोटी पकाने और बच्चा पैदा करने की मशीन तो वह इस युग में बनी है । सदा से तो, वह अपनी गौरव-गरिमा द्वारा समाज के हर क्षेत्र को अपनी प्रतिभा से चमत्कृत करती रही है और प्रगति एवं समृद्धि के लिए पुरुष के समान ही अपना योगदान देती रही है । संसार भर में आज भी पूरा-पूरा लाभ अपने समाज को दे रही है ।

पिछड़ा हुआ भारतीय समाज पर्दा-प्रथा जैसी अनीतिमूलक मूर्खतापूर्ण कुरीतियों को अब भी छाती से चिपकाये बैठा है, जबकि उसके बने रहने का कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आपत्तिकालीन कारण शेष नहीं रह गया है । यहाँ न अरब जैसे रेतीले अन्धड़ चलते हैं और न अब स्त्रियों की लूटपाट, खरीद-फरोख्त होती है जिसके कारण उन्हें लुकाने-छिपाने की जरूरत पड़े । अब तो विवेकशीलता की कसौटी पर इसे एक विशुद्ध सामाजिक अत्याचार और व्यक्ति के जन्म-जात ईश्वर प्रदत्त मानवीय अधिकार का हनन ही माना जाएगा । इस कुप्रथा ने समाज को अपंग बनाकर रख दिया है । बन्दी की तरह एक छोटे कटघरे में रहने वाली नारी दिनों-दिन शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से अशक्त होती चली जाती है । पुरुषों की तुलना में उसका स्वास्थ्य बहुत अधिक खराब है । प्रजनन के भार से उसकी बेतरह मृत्यु होती है । शिक्षा के अभाव में बालकों का उचित पालन-पोषण, गृह-व्यवस्था और पति का महत्त्वपूर्ण सहयोग करने में असमर्थ है । अनुभव के अभाव से परिवार की किसी बड़ी समस्या को सुलझाने में कोई योगदान नहीं दे सकती । पति द्वारा उपेक्षित या परित्यक्त कर दी जाय अथवा वैधव्य की विपत्ति सिर पर आ पड़े तो उसकी दयनीय दुर्दशा पत्थर को भी रुला दे सकती है ।

जिस समाज का, व्यक्ति का, आधा अंग नारी के रूप में इस प्रकार अपंग बना हुआ हो उसकी प्रगति और समृद्धि की आशा कौन करेगा ? बालक, वृद्ध, अपंग, रोगी तो गृहपति पर भार होते ही हैं, निरुपयोगी बनी बैठी नारी भी अब लगभग इन्हीं अपाहिजों में सम्मिलित हो गई है । पर्दा प्रथा ने हमारे समाज के आधे अंग को लकवा मारे जाने वाले रोगी की स्थिति में ला पटका । आधी जनसंख्या की नारी अपने प्रबल पुरुषार्थ से पुरुष जनसंख्या की तरह ही प्रगति के हर क्षेत्र में एक कदम आगे बढ़कर दिखा सकती थी और समृद्धि भरी सुविधाएँ उत्पन्न कर सकती थी पर आज निरीह बनी मन मसोसकर कैदी का तिरस्कृत और उपेक्षित जीवन जीने के लिए विवश हो रही है ।

समय आ गया है जबकि पर्दा प्रथा जैसी अनीतिमूलक कुरीति को हटाया जाय और नारी को भी नर की ही भाँति मनुष्योचित सम्मानपूर्ण जीवन दिया जाय । उसे शिक्षा की अब पुरुषों से अधिक सुविधा मिलनी चाहिए क्योंकि वह बहुत पिछड़ गई है । जब तक पिछड़ापन दूर होने और समानता के स्तर पर आने की स्थिति उत्पन्न न हो जाय, तब तक उसे शिक्षा-दीक्षा, स्वावलम्बन तथा कुशलता प्राप्त करने की अधिक सुविधा उपलब्ध करने का पूरा हक है और इस न्यायोचित सुविधा को उपलब्ध करने में हर पुरुष को पूरा-पूरा योगदान देना चाहिए । भारतीय नारी को अधिक शिक्षा, अधिक प्रतिभा, अधिक क्षमता, अधिक कुशलता प्राप्त करने का अवसर मिले तो वह राष्ट्र की प्रगति में देखते-देखते चार चाँद लगा सकती है । इस मार्ग में सबसे बड़ी बाधा पर्दा-प्रथा की है—उस पूतना का अब अन्त ही होना चाहिए ।

नर और नारी दोनों एक ही मानव समाज के अभिन्न हैं । दोनों के कर्त्तव्य और अधिकार एक हैं । नियम, प्रतिबन्ध और कानून दोनों के प्रति एक जैसे ही होने चाहिए । यदि पर्दा प्रथा शील सदाचार की रक्षा के लिए हो तो उसे नारी ही नहीं नर के लिए भी आवश्यक माना जाय, क्योंकि दुराचरण में सदा पुरुष ही आगे रहता है । यदि पुरुष के लिए पर्दा आवश्यक नहीं तो नारी पर उस प्रकार का प्रतिबंध लगाना अवांछनीय अनादर ही माना जाएगा । जब पशु-पक्षियों तक पर मुँह ढँक कर रहने का प्रतिबन्ध नहीं, मानवीय स्वाधीनता का इस प्रकार नृशंस अपहरण क्यों किया जाना चाहिए ?

यह कुरीतियाँ मिट रही हैं, मिटेंगी

अपव्यय एक स्पष्ट अनैतिकता है । जो व्यक्ति अपनी स्थिति से अधिक अनुपयुक्त कार्यों में खर्च कर रहा होगा उसे अविवेकी कहा जायगा । कुछ अविवेकी ऐसे भी होते हैं, जो एक सनक तक सीमित रहकर मनुष्य की मनोदशा को अस्त-व्यस्त करते रहते हैं । कुछ अविवेक ऐसे होते हैं जो सीधे भले ही अनैतिक न हों, पर उनके परिणाम अनैतिक होते हैं । शराब पीना यों अपनी मर्जी की और अपने पैसे से खरीदी हुई वस्तु पीना मात्र एक साधारण-सी क्रिया है । उसमें दलील के लिए यह भी कहा जा सकता है कि अपनी जेब का पैसा चाहे जिस काम में खर्च करने का अधिकार मनुष्य को है, फिर शराब के पीने में क्या बुराई है ? पर थोड़ा गम्भीरतापूर्वक विचार करने से स्पष्ट हो जाता है दलील थोथी है । शराब पीने के जो दुष्परिणाम होते हैं, उनसे शारीरिक, मानसिक और सामाजिक परिस्थितियाँ लड़खड़ा जाती हैं । मनुष्य न करने लायक काम करने लगता है, न कहने लायक बातें कहने लगता है । अस्तु नशेबाजी को उसके दुष्परिणामों के कारण अवांछनीय ठहराया गया और उसका उपयोग हर धर्म में निषिद्ध ठहराया ।

विवाहों में होने वाला अपव्यय यों अपने पैसे को फूँककर मनोरंजन करने के व्यक्तिगत अधिकार की सीमा में ही दिखाई पड़ता है । कहा जा सकता है कि मनुष्य अपनी कमाई का चाहे जो उपयोग करे उसमें किसी का क्या आता-जाता है ? पर थोड़ी गम्भीरता से सोचने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत जैसे गरीब देश में जहाँ हर व्यक्ति की औसत आमदनी रोटी, कपड़ा, शिक्षा, दवा-दारू, मकान जितनी अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा कर सकने जितनी भी नहीं है, वहाँ इस प्रकार का निरर्थक अपव्यय किया जायगा तो उस लम्बी रकम को जुटाने के लिए लोगों को अत्यधिक श्रम करने, अनिवार्य आवश्यक कटौती करने, अनीतिपूर्वक पैसा जुटाने, ऋण लेने, उपयोग की आवश्यक वस्तुएँ बेच देने, कुसमय के लिए बची हुई थोड़ी-सी पूँजी को समाप्त कर देने जैसे अवांछनीय तरीके ही अपनाने पड़ते हैं । मानव स्वभाव की दुर्बलता के अनुसार एक की देखादेखी दूसरों को ऐसे कार्यों के अनुकरण की इच्छा होती है, फलतः अमीरों की देखा-देखी गरीब भी वैसा ही करना अपनी प्रतिष्ठा का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रश्न बना लेते हैं और एक अनुपयुक्त परम्परा चल पड़ती है ।

यह अवांछनीय परिपाटी अगणित प्रकार के दुष्परिणाम उत्पन्न करती है । लड़के वालों का अनुचित लालच बढ़ता है । एक तो वैसे ही लालच को पाप का बाप माना गया है फिर भी वह हराम में मिलने की सम्भावना हो तो आदमी और भी तेजी से पतित होता है । नौकरी में पैसा बढ़वाने के प्रश्न को लेकर मजदूर कभी मालिक की हत्या नहीं करते, क्योंकि उनकी माँग के पीछे नैतिक आधार है । पर चोर डाकू तनिक से लोभ पर मनुष्यों की, छोटे-छोटे बच्चों तक की हत्या कर डालते हैं, क्योंकि उनकी माँग अनैतिक आधार पर अवलम्बित है । अनैतिक माँग अनैतिक काम करने पर विवश करती है । व्यापार में नफा नुकसान होने पर मनुष्य उतना अप्रसन्न नहीं होता, जितना कि दहेज जैसी हराम की कमाई के प्राप्त होने पर । देखा जाता है कि यह लालच जहाँ पूरा नहीं होता, वहाँ निर्दोष वधू को अकारण, लोमहर्षक त्रास दिए जाते हैं । दहेज देना न देना, लड़की के पिता पर निर्भर करता था, उसका दण्ड वधू को मिले इसमें अनीति और हृदयहीनता की ही झाँकी होती है । जिसने लड़की दी है, उसे लड़के वालों की मनमर्जी की रकम भी देनी चाहिए यह उसकी विवशता का लाभ उठाना है । उस माँग के पीछे कोई नैतिक आधार नहीं । अनैतिक माँग का एक परम्परा के रूप में विकसित होना किसी समाज के लिये कलंक ही सिद्ध होता है और उसके दुष्परिणाम भी उसे भुगतने पड़ते हैं जैसा कि हम भुगत रहे हैं ।

लड़के वाले पैसा माँगते हैं और लड़की वाले को देना पड़ता है, अब जब उस लड़की वाले को अपने लड़के का विवाह करना पड़ता है तब वह भी अपनी क्षतिपूर्ति के लिए वैसी ही माँग करने लगता है । यह भूल जाता है कि लड़की के विवाह के समय उसे कितनी कठिनाइयाँ उठानी पड़ी थीं या उठानी पड़ेंगी । लड़की के विवाह के समय दहेज का विरोध करना ही लड़के का विवाह का समय आने पर समर्थन करने लगना, दुमुही नीति को अपनाने से समस्या का कोई हल नहीं निकल सकता । हमें एक ही रास्ता अपनाना पड़ेगा, एक ही नीति निर्धारित करनी पड़ेगी । सामान्य विवेक का तकाजा वही है कि विवाह एक साधारण सा घरेलू संस्कार मात्र रहे । उसमें सामान्य पर्व-उत्सवों जैसा छोटा आयोजन किया जाय और प्रदर्शन के लिए उपहारों का आदान-प्रदान अपनी वास्तविक स्थिति के अनुरूप किया जाय । इसका प्रदर्शन न हो, ताकि वह किसी की प्रतिष्ठा-अप्रतिष्ठा का प्रश्न न बनने पावे । समय की माँग है कि विवाहों का स्वरूप, सादगी भरा हो । जिससे गरीब-अमीर किसी पर भी अनावश्यक दबाव न पड़े । इसी वातावरण में विवाहों के बारे में हर एक को निश्चिंतन्तता रह सकती है । कन्या को सुयोग्य एवं सुशिक्षित बनाने पर ध्यान दिया जा सकता है । ऐसी ही परिस्थितियों में कन्या का जन्म एक भार एवं दुर्भाग्य मानने की मान्यता बदल सकती है और लड़कियों के प्रति जो हेय भाव रखने की मनोवृत्ति है वह दूर हो सकती है । अवांछनीय कमाई के प्रति भी एक हिन्दू गृहस्थ का आकर्षण तभी कम होगा जब वह विवाहों की ओर से निश्चिन्तता अनुभव करेगा । आज की व्यापक अनैतिकता का एक बहुत बड़ा कारण हमारी प्रचलित कुरीतियाँ हैं । इनको उन्मूलन किये बिना हम न तो नीतिवान् बन सकते हैं और न विवेकवान् । प्रचलित मूढ़ता को बदलने के लिए प्रयत्न करना आज की स्थिति में हिन्दू जाति की व भारतीय समाज की सबसे महत्त्वपूर्ण सेवा मानी जायगी ।

आवश्यकता इस बात की है कि हममें से प्रत्येक यह प्रण कर ले कि वह अपने पुत्र के विवाह में कोई दहेज स्वीकार नहीं करेगा और उत्सव का स्वरूप छोटे से छोटा पूर्ण सादगी का रखेगा । जब तक यह स्थिति सुधरने में नहीं आती, तब तक उसे लड़की को कुछ देने के बारे में या उत्सव का स्वरूप बनाने में लड़के वालों की मर्जी पर चलने को विवश होना पड़ता है । इसलिए फिलहाल उसमें कुछ ढील भी रक्खी जा सकती है, पर लड़के के विवाह में ऐसी कोई विवशता नहीं है । लड़के वाले ऐसा साहस और त्याग करना चाहें किसी प्रकार की कोई कठिनाई सामने आवेगी । अनेकों लड़की वाले उनकी घोषणा का स्वागत करने को तैयार होंगे । इसी प्रकार लड़कियों पर लड़कों से दहेज लेने की प्रथा जिन पर्वतीय एवं आदिवासी लोगों में प्रचलित है वहाँ लड़की वाले यदि दहेज न लेने की घोषणा करें तो अनेक लड़के वाले उनका स्वागत एवं सहयोग करने के लिये आगे उपस्थित होंगे । जिसको लेना है, उसी को त्याग करने के लिए आगे बढ़ना होगा ।

वाक् शूरता का युग चला गया अब हमें कर्मवीर बनना चाहिए । जिन विचारों को सही मानते हैं उन्हें व्यवहार में लाने का साहस भी होना चाहिए । यह मनुष्यता की मानवीय अन्तरात्मा का अपमान है कि जिस बात को मनुष्य ठीक समझे उसे कार्यान्वित करने के लिए साहस करने में हिचकिचाये । कायरता एवं भीरुता इसी को तो कहते हैं । हमें न तो कायर बनना चाहिए और न भीरु । वरन् एक ईमानदार, सहृदय, सच्चरित्र और साहसी व्यक्ति की तरह जो बात विवेकयुक्त है उसे अपनाने के लिए हिम्मत के साथ आगे बढ़ना चाहिए । लोग हँसी या विरोध करेंगे, इसकी तनिक भी पर्वाह नहीं की जानी चाहिए । कुमार्ग पर चलते हुए लोकनिन्दा का ध्यान रखना चाहिए, पर सत्य और विवेक की दिशा में कदम बढ़ाते हुए सारा संसार एक ओर हो तो भी अकेले चल पड़ने की हिम्मत रखनी चाहिए । मनुष्यता का गौरव ऐसे ही साहस में सन्निहित है ।

प्रसन्नता की बात है कि ऐसी विवेकशीलता हमारे समाज में तेजी से जाग्रत हो रही है । अनेकों व्यक्ति ऐसे साहसिक कदम उठा रहे हैं । भेड़चाल चलने वाले जहाँ घुस-पुस विरोध करते हैं, वहाँ अगणित विवेकशील उस साहस की भूरि-भूरि प्रशंसा भी करते हैं और उन अग्रगामी लोगों की हिम्मत के पीछे वातावरण बदल जाने एवं कुरीतियों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

टूट जाने की सम्भावना का दर्शन करते हैं । ऐसे हर साहसी के ऊपर अनेकों अभिभावकों एवं कन्याओं का अदृश्य आशीर्वाद बरसता है, क्योंकि वे उद्धारकर्त्ता देवदूत के रूप में उनकी कठिनाइयों के समाधान का द्वार खोल रहे हैं ।

समाचार-पत्रों में कभी-कभी ऐसे साहसिक समाचार छपते रहते हैं । यों सभी घटनाओं का न तो पता चलता है और न वे अखबारों तक पहुँच पाती हैं, पर जो छपती हैं वे भी सर्वसाधारण के मन में आशा और उत्साह का संचार करती हैं । अनेक आदर्शवादियों ने यह मार्ग अपनाया है । कुरीतियों ने उनके पाँव जकड़ने की कोशिश की है तो उन्होंने उसको तोड़ फेंकने का भी साहस किया है । घर वालों से लेकर भेड़चाल के समर्थक कापुरुषों के मिमियाने की परवाह न करते हुए जो लोग आदर्शवादिता के पथ पर बढ़ चलते हैं, उनसे लोगों को बड़ी प्रेरणा मिलती है । पिछले दिनों छपे हुए कुछ समाचारों की कतरनें नीचे देखिये—

आदर्शवादिता की ओर बढ़ते हुए कदम

दहेज में सिर्फ एक रुपया—काशीपुर में नगर के एक वैश्य परिवार में हुई शादी की चर्चा है । इस विवाह में वर-पक्ष वालों ने सिवाय एक-एक रुपये के दहेज के और कुछ नहीं लिया । यह शादी नगर के श्री वी. एम. गुप्त की सुपुत्री कु. गिरजेश गुप्त व सरसावा (जि. सहारनपुर) के श्री पूर्णप्रकाश गोयल की हुई । वर तथा वधू दोनों ही उच्च शिक्षा प्राप्त हैं । इस बारात में भी केवल नौ व्यक्ति आये थे ।

मालिक के लड़के का मुनीम की लड़की से विवाह—डबरा स्थानीय प्रसिद्ध फर्म श्री नरेन्द्रलाल एण्ड कं. के मुनीम श्री जेठालाल की सुपुत्री नयना कुमारी (हायर सेकन्डरी उत्तीर्ण) का पाणिग्रहण संस्कार इसी फर्म के मालिक श्री सेठ केशवलाल के सुपुत्र श्री रमेशलाल बी. एस. सी. के साथ बिना किसी दहेज, आडम्बर के, पूर्ण सादगी के साथ सम्पन्न हुआ । फर्म के मालिक श्री केशवलाल ने दहेज इत्यादि के लोभ को तिलांजलि देकर अपने ही एक छोटे कर्मचारी की पुत्री को वधू के रूप में स्वीकार किया । इस आदर्शवादिता के लिए सर्वत्र उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की जा रही है ।

पूर्ण सादगी के साथ विवाह—रघुराजपुर (फतेहपुर) में युग-निर्माण योजना से प्रभावित होकर परिवार के सक्रिय कार्यकर्त्ता कुँवर उदय भानुसिंह ने अपने भतीजे की शादी में पूर्ण सादगी और मितव्ययता की व्यवस्था रक्खी, किसी प्रकार का दहेज स्वीकार नहीं किया गया । कन्या पक्ष का कुल १००/- रु. से भी कम खर्च हुआ । इस आदर्श विवाह का इस क्षेत्र में बहुत प्रभाव पड़ा है । दूसरे अनेक लोग भी अब ऐसा ही अनुकरण करेंगे ।

ढाई रु. में विवाह—सुजानगढ़ के एक प्रसिद्ध संगीतज्ञ ने अपनी सुपुत्री का विवाह सादगी से किया । वर-वधू दोनों पक्षों की ओर से दहेज-प्रथा को समाप्त करने की घोषणा की गई । फलस्वरूप 'मद्दे' के रूप में सवा रुपया तथा पहरावनी (विदाई) के अवसर पर सवा रुपया वधू परिवार की ओर से वर परिवार को भेंट स्वरूप दिया गया । इस प्रकार फिजूलखर्ची से बचकर एक आदर्श उपस्थित किया गया ।

तीन रु. में पुत्र का विवाह—सीकर में नगर के प्रमुख वकील श्री प्यारेलाल माथुर ने अपने पुत्र की शादी में केवल ३ रु. खर्च किए । अत्यधिक सादगी के साथ श्री माथुर के पुत्र श्री ज्योतिप्रसाद का पाणिग्रहण संस्कार सीकर तहसील के एक गिरदावर श्री नन्दलाल की पुत्री के साथ सम्पन्न हुआ । दहेज तथा अन्यान्य सामाजिक कुरीतियों का तो सर्वथा त्याग किया ही गया था, किन्तु गाजे-बाजे तथा घोड़े की सवारी तक का बहिष्कार किया गया । दूल्हा साधारण वेश-भूषा में अपने घर से पैदल ही दुल्हिन के घर गया । विवाह के पश्चात् नव दम्पति ताँगे में श्री माथुर के निवास स्थान तक आये और इसी में किराये के तीन रु. लग गये । लड़की के पिता को जो कुछ व्यय करना पड़ा वह अतिथियों के स्वागत-सत्कार में ही करना पड़ा ।

आदर्श विवाह—अलवर में गुजरपाड़ी के ठा. हरनाथ सिंह ने अपनी पुत्री रतनकुमारी का पाणिग्रहण चाँदपुर जिला बुलन्दशहर के ठा. मानसिंह के पुत्र जसवन्तसिंह के साथ बड़ी सादगी से किया । वर-पक्ष ने कोई दहेज नहीं लिया । शादी एक ही दिन में सम्पन्न हो जाने से लड़की वालों पर भी आर्थिक दबाव नहीं पड़ा । रिश्तेदारों के विरोध का ध्यान न देकर, दोनों पक्षों ने जो साहस का परिचय दिया है, विचारवान् लोगों ने उसकी बड़ी प्रशंसा की । लड़का हाईस्कूल पास है और लड़की इस वर्ष हाईस्कूल की परीक्षा देगी । इस विवाह ने यहाँ के लोगों की आँखें खोल दी हैं । दोनों पक्षों ने यह समझौता युग-निर्माण योजना से प्रभावित होकर किया ।

इञ्जीनियर युवक की आदर्शवादिता—नालागढ़ (अम्बाला) में इसी वर्ष इञ्जीनियरिंग पास करके विद्युत-विभाग में ऊँचे वेतन पर नियुक्त हुए श्री विष्णुकुमार भारती ने एक अशिक्षित और निर्धन परिवार की कन्या से विवाह करके अपने साथियों को आश्चर्य में डाल दिया । युवक ने पाँच वर्ष पूर्व ही यह घोषणा कर रखी थी कि वह किसी गिरी हुई स्थिति की लड़की को ऊँचा उठाने और पढ़ाने में अपने दाम्पत्य-जीवन की सफलता समझेगा । तब यह बात हँसी जैसी मालूम पड़ती थी, पर अब जबकि विवाह का समय आया तो उन्होंने भारी दहेज और ग्रेजुएट कन्याएँ मिलने के सभी अवसरों को ठुकरा कर एक अशिक्षित, निर्धन और साधारण कन्या के साथ विवाह करने में अपना गौरव समझा । लड़की वाला अन्त तक विश्वास न कर सका कि उसकी लड़की इतने ऊँचे घरवार की अधिकारिणी बन सकेगी । इसलिए वह विवाह के दिन तक असमंजस में रहा, पर जब लड़का अपने कुटुम्बियों और अभिभावकों की बारात लेकर जा पहुँचा, तभी उसने विश्वास किया और विवाह का सामान मँगाया । लड़की को विदा करते समय उसके माँ-बाप की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आँखों में से हर्ष के आँसू रोके न रुकते थे । युवक विष्णुकुमार ने विवाह के समय घोषणा की है कि वह इस लड़की को ग्रेजुएट बनने तक स्वयं ही पढ़ाया करेगा और उसे सुयोग्य बनाने मे अपने विवाह की सफलता समझेगा ।

आदर्श विवाह—चौमुहा (मथुरा) के श्री गोपाल प्रसाद वार्ष्णेय का विवाह-संस्कार गाँधी आश्रम के आडीटर श्री रामजस की सुपुत्री सोमवती के साथ सम्पन्न हो गया । २५ जनवरी को सम्बन्ध तय होकर सगाई लगन की रस्म हुई तथा २६ जनवरी को दहेज रहित विवाह हो गया ।

उत्साह-वर्धक आदर्श विवाह—शाहजहाँपुर के मोहल्ला बजरिया में एक बारात छिबरामऊ से ता. १२ जुलाई को एक गुलहरे वैश्य सज्जन के यहाँ आई । इसमें लड़के वालों की तरफ से किसी प्रकार के दहेज की माँग नहीं की गई और लड़की पर चढ़ाने के लिये आभूषण नहीं लाए, केवल आवश्यक वस्त्र ही दिये गये । इस जाति में समस्त जिले की दृष्टि में यह पहला ही अवसर है, जबकि एक विवाह बिना दहेज और अन्य आडम्बर के सादगी के साथ सम्पन्न किया गया । इसे सम्पन्न कराने का श्रेय छिबरामऊ के दो धनी-मानी सज्जनों को है जो स्वयं भी बारात में सम्मिलित हुए । उनके शुभ नाम हैं—सेठ रामकृष्ण जी तथा श्री दयानन्द जी गुप्त जी ।

बिना खर्च का विवाह—फरीदकोट में एक ऐसा आदर्श विवाह हुआ जिसमें वर-कन्या दोनों पक्षों ने विवाह में होने वाली फिजूलखर्ची का डटकर विरोध किया, फलस्वरूप विवाह पूर्ण सादगी और बिना खर्च के हुआ । वर-कन्या ने विवाह से पूर्व ही परस्पर विचार-विनिमय द्वारा इस प्रकार का निश्चय कर लिया था । उनकी दृढ़ता के कारण अभिभावकों को धूमधाम की सारी तैयारियाँ समाप्त करनी पड़ीं । लोकहित के कार्यों के लिये १५०/- रु. दान देकर उस विवाह में एक और दूसरा आदर्श उपस्थित किया गया ।

केवल सवा रुपये में विवाह सम्पन्न—हसनपुर (मुरादाबाद) में आदर्श-विवाह प्रणाली अपनाने से अभी हाल ही में दो कायस्थ परिवारों का उद्धार हुआ है । कायस्थ-समाज के बीच भयानक दहेज प्रथा का बहिष्कार कर श्री तुलसीराम सक्सेना ने अपने पुत्र चि. श्यामसुन्दर का विवाह रिटायर्ड पटवारी श्री शिवचरन लाल की सुपुत्री शीलादेवी के साथ सम्पन्न कर दिया । कन्या के पिता की आर्थिक स्थिति बहुत शोचनीय थी । धनाभाव के कारण उनकी पुत्री के विवाह में कठिनता हो रही थी । एक दिन एक बस-यात्रा में शिवचरनलाल का परिचय गायत्री परिवार के सदस्य श्री तुलसीराम जी से हो गया । उन्होंने शीलादेवी के पिता की व्यथा सुनी और तत्काल अपने सुशिक्षित, बेरोजगार पुत्र से उनकी कन्या का विवाह कर लेने का वचन दे दिया । विवाह केवल सवा रुपये में गायत्री-यज्ञ के साथ वर-माला पद्धति से सम्पन्न किया गया । उक्त अवसर पर क्षेत्र के लगभग सभी संभ्रान्त व्यक्तियों ने उपस्थित होकर वर-वधू को आशीर्वाद देने के साथ अभिभावकों की बड़ी सराहना की और उक्त विवाह-पद्धति का अनुकरण करने का संकल्प किया ।

बिना दहेज का विवाह—झाँसी में गायत्री महायज्ञ के अवसर पर बिना किसी प्रकार का खर्च किए वर-बजभूषण श्रीवास्तव और वधू-सुशीलादेवी का विवाह बड़े उत्साहपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ । वर के पिता श्री पन्नालाल जी श्रीवास्तव और कन्या के संरक्षक श्री बाबूराम श्रीवास्तव के साहस की सभी ने भूरि-भूरि प्रशंसा की । उपस्थित जनता में उत्साह और प्रसन्नता की लहर दौड़ गई । उसी समय लगभग १०० व्यक्तियों ने अपने लड़कों की शादियाँ पूर्ण सादगी के साथ करने की शपथपूर्वक प्रतिज्ञाएँ भाषण मंच पर खड़े होकर कीं ।

हठी पिता का उदार पुत्र—तालेगाँव (महाराष्ट्र) में एक बारात के दूल्हा की उदार सज्जनता से लोग इतने प्रसन्न हुए कि क्षेत्र के लगभग सभी संभ्रान्त व्यक्तियों ने उसे कुछ न कुछ भेंट दी । गजाधर भाई नामक वर की जब भाँवरें पड़ने को थीं तब उसके पिता को पता चला कि कन्या के मुँह पर चेचक के दाग हैं जो कि विवाह तय करते समय कन्या के पिता ने नहीं बताये थे ।

वर के पिता ने विवाह करने से इन्कार कर दिया और बारात वापिस करने को तैयार हो गया । पिता को किसी प्रकार न मानते हुए देख दूल्हा ने कहा कि उन्हें शादी मंजूर है और लड़की कितनी ही असुन्दर क्यों न हो वे उसे स्वीकार करेंगे । वे नहीं चाहते थे कि एक साधारण-सी बात के लिए दो कुलों की बदनामी हो । वर को उद्यत देखकर बिगड़ने वालों को झुकना पड़ा और विवाह बड़ी धूमधाम से हुआ ।

दहेज में एक रुपया, बारात में बीस व्यक्ति—सुलतानपुर के प्रतिष्ठित नागरिक एवं विद्यार्थी प्रेस के मालिक श्री बजरंगीलाल विद्यार्थी ने अपने तीन सुशिक्षित एवं सुयोग्य लड़कों का विवाह पिछले दिनों एक-एक रु. लेकर किया है । उन लड़कों के लिए दस-दस हजार रुपया देने वाले थे, पर इन्होंने उन सबसे इन्कार कर ऐसे घरों से सम्बन्ध स्वीकार किए, जो विशेष चिन्तित एवं परेशान थे । इन विवाहों में बारात भी बीस-तीस व्यक्तियों से अधिक की नहीं गई । जिन लड़कों के ये विवाह हुए हैं उनने भी ऐसी ही सादगी की शादी करने की बात अपने अभिभावकों से कह रक्खी थी ।

आदर्श-विवाह का उदाहरण—आगरा के दो प्रसिद्ध धनवान् व्यवसाइयों ने आदर्श विवाह का उदाहरण उपस्थित किया है । इसमें वर के पिता हैं—'नेशनल आयरन फाउन्ड्री' के मालिक श्री बालमुकुन्दजी 'बल्ला' और वधू के पिता हैं—समाज सेवी व्यवसायी श्री वेदपालजी गुप्त । इस विवाह में आरम्भ से अब तक कोई लेन-देन नहीं हुआ है । केवल एक रुपया वर-पक्ष द्वारा रस्म के तौर पर स्वीकार किया गया है । विवाह के दिन न तो बारात निकाली गई, न दावत दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गई और न किसी प्रकार का दहेज दिया गया । विवाह संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न किया गया ।

संगठित सत्प्रयत्न

यों आदर्शवादिता के लिए व्यक्तिगत रूप से एकाकी कदम भी उठाये जा सकते हैं और उनका भी सत्परिणाम सामने आता ही है, पर यदि संगठित रूप से कुछ कार्य किया जाय तो उसका प्रभाव इतना अधिक होता है कि अनेकों द्वारा सुधारवादी कदम उठाये जाने लगते हैं और व्यापक वातावरण बनने में सुविधा रहती है । संगठित प्रयत्नों की सफलता अधिक निश्चित रहती है । इसलिए विवाहोन्माद का उन्मूलन करने के लिए सर्वत्र संगठित प्रयत्न किये जाने चाहिए । किसी सुधार को देशव्यापी रूप देना हो तो उसके लिए संगठित प्रयत्नों की अनिवार्य आवश्यकता होगी । इस तथ्य को अनुभव करते हुए विचारशील लोग समाज सुधार कार्यों के लिए किस प्रकार संगठित प्रयत्न कर रहे हैं इसका एक झाँकी नीचे देखिये—

जाट पंचों का सराहनीय निर्णय—मेरठ क्षेत्र की जाट जाति के पंच चौधरियों की एक बड़ी पंचायत ने फैसला किया है कि बारात में ५ व्यक्ति जाया करें । ज्योनार में मिठाई न परसी जाया करे तथा गाजे-बाजे का अनावश्यक खर्च बिल्कुल न किया जाया करे । इस निश्चय के अनुसार इस क्षेत्र में पिछले दिनों हजारों विवाह हो चुके हैं । इनमें दहेज की कोई चर्चा नहीं होती । इस सुधारवादी प्रथा के प्रचलन से जाट जाति को उत्साहवर्धक सुविधा हुई है । सभी लोग एक बड़े झंझट से छुटकारा पा लेने के कारण प्रसन्न हैं । अब अन्य बिरादरी के लोग भी ऐसा ही सुधार अपने-अपने यहाँ करने के लिए पंचायतें बुलाने की तैयारी कर रहे हैं ।

छात्रों में उत्साह—कलकत्ता में समाज-सुधार दल के तत्वावधान में एकत्रित एक सभा में स्थानीय स्कूलों के ४०० छात्रों ने दहेज उन्मूलन आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने का निश्चय किया है । जो अविवाहित हैं वे आदर्शवादी रीति से अपना विवाह करेंगे । उपस्थित छात्रों ने अपने सहपाठियों को उसी भावना से प्रभावित करने के लिये भरसक प्रयत्न करने का भी निश्चय किया है । समाज-सुधार दल अब प्रत्येक सप्ताह ऐसी ही सभाओं का आयोजन किया करेगा । उसे अपने उद्देश्य की महानता और प्रयत्न की सफलता पर बहुत विश्वास है ।

समाज सेवियों की टोलियाँ—पिछले ही दिनों पूना के समाज सेवकों ने दहेज की कुरीति से समाज को मुक्त करने के लिए एक रचनात्मक कदम यह उठाया है कि वे चार-चार की टोली में जाकर वयस्क छात्रों में सम्पर्क बनायेंगे और उन्हें विवाह में होने वाले अपव्यय की हानियाँ समझाया करेंगे । जो छात्र इस विचारधारा से प्रभावित एवं सहमत होंगे, दूसरी टोली उनके अभिभावकों से मिला करेगी और इस सुधार से सहमत होने की प्रेरणा दिया करेगी ।

हर टोली दस व्यक्तियों से प्रतिदिन मिलने का कार्यक्रम लेकर चलेगी । सायंकाल के तीन घण्टे इसके लिए टोलियों ने नियत किये हैं । १६ समाज सेवियों ने चार-चार की टोलियाँ बना ली हैं । भाषण न देकर व्यक्तिगत विचार-विमर्श की शैली उनने अपनाई है । इस प्रकार यहाँ चार टोलियाँ प्रतिदिन ४० व्यक्तियों से सम्पर्क बनाकर महीने में लगभग एक हजार और वर्ष में बारह हजार व्यक्तियों से सम्पर्क बनावेगी । टोलियों को आशा है कि वे एक वर्ष में १००० व्यक्तियों को आदर्श-विवाह के लिए सहमत अवश्य कर लेंगी । इसमें उन्हें सफलता भी मिल रही है ।

जेवर कपड़ों का अपव्यय रुका—सोनगढ़ (सौराष्ट्र) में अभी हाल ही में कृषक जातियों ने कुप्रथाओं के विरोध में सक्रिय कदम उठाये हैं । सौराष्ट्र की कणवी और अहीर आदि जातियों में सोने चाँदी के गहने और बहुत बड़ी संख्या में कीमती कपड़ों का ब्याह-शादी में वर-वधू दोनों पक्षों की ओर से प्रस्तुत किया जाना विवाह संस्कार का एक प्रमुख अंग माना जाता था । कर्ज लेकर और अपना आर्थिक सन्तुलन बिगाड़ कर विवाह की यह परम्परा पूरी करनी ही पड़ती थी । अब वहाँ की उक्त जातियों ने इस प्रथा से होने वाली हानि को अनुभव कर लिया और इसे रुकवाने के लिए सक्रिय आन्दोलनों की शुरूआत कर दी है और ब्याह-शादी बहुत ही थोड़े व्यय में सादगी के साथ होना प्रारम्भ हो गया है ।

गुजराती समाज में सामूहिक विवाह— यवतमाल के कुछ उत्साही और तरुण गुजराती सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने गुजराती समाज में सामूहिक विवाह प्रथा शुरू करने का निर्णय किया है । इस विवाह समारोह में प्रत्येक पक्ष से नाममात्र का शुल्क १०१/- लिया जायेगा । विवाहों में होने वाले अनावश्यक खर्च को टालने तथा बढ़ती हुई महँगाई से उत्पन्न कठिन स्थिति का सामना करने और लोगों में भाईचारे की भावना का निर्माण करने के उद्देश्य से यह योजन अपनाई गयी है । इस योजना के प्रवक्ता ने बताया कि आजकल धनी लोगों को भी विवाह का भारी व्यय-खर्च जान पर आ रहा है । उक्त योजना के अन्तर्गत प्रतिवर्ष विवाहों का आयोजन किया जाता है ।

आदर्श सामूहिक विवाहों का निर्णय— मोहनपुर सराय (उ.प्र.) । विवाहों में होने वाले व्यर्थ खर्च, समय और झंझट बचाने के लिए यहाँ के विविध वर्गों के लोगों ने सामूहिक आदर्श-विवाहों का निश्चय किया है । सामूहिक विवाहों की कार्यविधि आयोजित करने के लिए एक कमेटी बनाई गई है, जो आदर्श-विवाहों के लिए प्रचार करेगी और निश्चित समयों पर सामूहिक विवाहों को सम्पादन करेगी । इन सामूहिक विवाहों में सम्मिलित होने वाले लोगों को केवल आवश्यक सामग्री और कमेटी को एक-एक रुपया दक्षिणा देनी होगी । एक ही यज्ञशाला में एक ही समय सारे वर-वधू अपनी-अपनी संस्कार प्रक्रियाओं को पूर्ण करेंगे । इस प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बहुत ही कम व्यय में एक ही समय में बहुत से विवाह हो जाया करेंगे ।

विवाहों में सभी प्रकार के भोज बन्द—झालदा, (मारवाड़) में मारवाड़ी समाज के बन्धुओं की एक सभा में सर्वसम्मति से निम्नलिखित नियम का निश्चय किया गया—देश की वेईमान खाद्य परिस्थिति को देखते हुए, विवाहों के अवसर पर होने वाले सभी तरह के भोज, बानाबटेरा, दिखावा एवं प्रदर्शन पूर्णतया बन्द रहेगा । बारात में कम से कम व्यक्ति सम्मिलित होंगे । झालदा में रस्तागीत पहले से ही बन्द हैं । उपर्युक्त नियमों का जो भी व्यक्ति उल्लंघन करेगा, उसका स्थानीय समाज पूर्णतः बहिष्कार करेगा ।

विवाह सादगी से होंगे—अहमदाबाद के आस-पास के गाँवों में बसने वाले पाटीदार जाति के पंचों ने खाद्यान्न की परिस्थिति को देखते हुए लग्न-समारोह बिल्कुल सादगी से सम्पन्न करने का निर्णय किया है । पंचों की यहाँ जो बैठक हुई, उसमें निर्णय किया गया कि लड़के की बारात में केवल पाँच व्यक्तियों को ही ले जाया जाय । इस नियम का कड़ाई से पालन करने के लिए पंचों ने शपथ भी ली । गुजरात में लग्न समारोह के पीछे इस जाति के लोग सबसे अधिक खर्च करते हैं । इन लोगों ने संकटकालीन परिस्थितियों को देखते हुए यह निर्णय किया है ।

विवाह में ४१ रु. से अधिक खर्च न हों—राजकोट (सौराष्ट्र) में जहाँ पहले ब्याह-शादियों में स्थानीय जैनी बहुत अधिक दिखावा और व्यय के साथ उत्सव किया करते थे और उसमें अपना बड़प्पन समझा करते थे, वहाँ अब नवोदित और शिक्षित जैन युवकों ने इस प्रथा में समुचित सुधार करना शुरू कर दिया है । स्थानीय 'जैन-युवक मण्डल' ने निश्चित किया है कि वे अब शादियों के अवसर पर होने वाले निरर्थक अपव्यय को हर प्रकार से रोकने का प्रयत्न करेंगे और यदि आवश्यकता हुई तो इसके लिए अपने अभिभावकों का भी विरोध करने में संकोच न करेंगे । उन्होंने निकट भविष्य में होने वाली अनेक शादियों में अपने नवीन विचारों को कार्यान्वित करने के लिए सारे खर्च की सूची बनाकर वर-कन्या के अभिभावकों को इस सूचना के साथ दे दी है कि यदि इन आवश्यक खर्चों के अतिरिक्त अनावश्यक व्यय किया गया तो 'जैन-युवक मण्डल' उसका विरोध करेगा ।

लड़के के विवाह में पूर्ण सादगी—सिकन्दरपुर (बलिया) के शाखा सदस्य ने देवोत्थान एकादशी के दिन गायत्री-यज्ञ करके अग्नि-देवता की साक्षी में यह प्रतिज्ञा की है कि वे अपने लड़कों के विवाह में न किसी प्रकार का दहेज लेंगे और न जेवर आदि चढ़ाने का दिखावा करेंगे । बारात में २५ व्यक्ति से अधिक नहीं ले जावेंगे और हर प्रकार की सादगी बरतेंगे ।

दहेज न लेने का प्रशिक्षण—लालगाँव (पंजाब) में एक सामूहिक यज्ञ अनुष्ठान के अवसर पर वेद-विद्वान श्री त्रियम्बक जी अत्रि ने विवाहों में प्रचलित खर्चीली प्रथा का विरोध किया और उपस्थित जनता से इस अधार्मिक कृत्य को बन्द करने का अनुरोध किया और भी कई वक्ताओं ने विवाह के खर्चीलेपन के कारण होने वाले अनेकों दुष्परिणामों को मार्मिक ढंग से समझाया । उपस्थित व्यक्तियों ने, लगभग २५० ने खड़े होकर सूर्य नारायण और यज्ञ भगवान् की साक्षी से यह प्रतिज्ञा की कि वे अपने पुत्रों के विवाह में कदापि दहेज स्वीकार न करेंगे और आदर्श विवाह विधि से शादियाँ करेंगे ।

कलाकारों का सहयोग—कटक (उड़ीसा) में स्थानीय कलाकारों की एक वृहद् गोष्ठी का आयोजन किया गया । संयोजन श्री सोमजी कानजी परमने ने उपस्थित संगीतज्ञों, चित्रकारों, अभिनयकर्त्ताओं एवं लेखकों से यह अनुरोध किया कि वे अपनी कला का उपयोग दहेज उन्मूलन जैसी सामाजिक क्रांति की आवश्यकता पूर्ण करने के लिए करना आरम्भ करें । अनुरोध से सभी बहुत प्रभावित हुए और निश्चय किया गया कि हर एक इस दिशा में कुछ ठोस काम करना आरम्भ करेगा । कवि कविता लिखें, चित्रकार सामाजिक कुरीतियों के दुष्परिणामों का चित्रण करेंगे । गायक उस प्रकार के गीत गाया करेंगे और अभिनयकर्त्ता कुछ नाटकों की तैयारी करेंगे, जिससे जनता का सोया हुआ विवेक जागे । अगले दिनों एक प्रदर्शनी, एक कवि सम्मेलन, एक नाटक जनता के सामने प्रस्तुत करने की तैयारी आरम्भ कर दी गई है ।

आन्दोलन के लिए आर्थिक सहायता—खिदिरपुर बंगाल में दहेज विरोधी आन्दोलन की महत्ता को समझाने वाले कुछ धनी लोग अपनी व्यक्तिगत कमजोरियों के कारण स्वयं तो पहल नहीं कर पा रहे हैं । पर वे चाहते हैं कि यह आन्दोलन पनपे और सफल बने । इसके लिए उन्होंने आर्थिक सहयोग देने का वचन दिया है । विवाह योग्य छात्र-छात्राओं एवं अभिभावकों में प्रसारित किए जाने के लिए साहित्य का साधन जुटाने के लिए ५० रु. मासिक और आन्दोलन के लिए भ्रमण करने तथा आवश्यक व्यय जुटाने के लिए ५० रु, दोनों मदों में १०० रु. मासिक खर्च करने का निश्चय किया है । सुधारवादी इन धनी व्यक्तियों ने दस-दस रुपये मासिक अपने पास से देते रहने और १०० रु. मासिक की व्यवस्था आन्दोलन को गतिशील बनाने के लिए सदा करते रहने का निश्चय किया है ।

सामूहिक विवाहों का प्रचलन—एक स्थान पर, एक ही दिन कई विवाह आदर्श रीति से होने लगें तो उसमें वह सम्मिलित उत्सव बहुत ही आकर्षक बन सकता है । उस आयोजन का प्रदर्शनात्मक और प्रचारात्मक स्वरूप भी बहुत अच्छा बन जाता है । जनता भी बड़ी संख्या में उसे देखने आती है । जो देखते हैं वे प्रभावित होते हैं और दूसरों से चर्चा करते हैं । फलस्वरूप वातावरण बनता है, वैसा करने का साहस उत्पन्न होता है और अनुकरण करने की आकांक्षा अनेकों के मन में जाग पड़ती है । इसलिए जहाँ भी सम्भव हो, आदर्शवादी विवाहों के सामूहिक आयोजन किए जाने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए । इस दिशा में कुछ प्रयत्न हो भी रहे हैं, उनके समाचार नीचे देखिए—

आनन्द-विवाह प्रथा की शताब्दी—फीरोजपुर (पंजाब) के नामधारी सिक्ख सम्प्रदाय के गुरु पं. रामसिंह जी ने सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में कई एक सुधार किए थे । अपने अनुयायियों में सामूहिक विवाहों की एक कम खर्चीली और आडम्बर रहित 'आनन्द पद्धति प्रथा' प्रचलित की थी । इस पद्धति के अनुसार एक स्थान पर, एक ही दिन अनेकों विवाहों का आयोजन होता है । इस अवसर पर 'कडाह' प्रसाद और हवन आदि पर होने वाले खर्च के लिए वर और वधू पक्ष सवा रुपये से लेकर तेरह रु. तक भेंट देते हैं । उन्हें कोई दहेज लेना-देना नहीं होता । निर्धनों से सवा रुपया की यह भेंट भी नहीं ली जाती । वधू घूँघट नहीं निकाल सकती । उसके लिए स्वर्ण-भूषण भी वर्जित हैं । प्रचलित 'आनन्द पद्धति' प्रथा के अनुसार हर साल बड़ी संख्या में सामूहिक विवाह होते रहे हैं । अब इस पुण्य-प्रथा के प्रचलन को पूरे सौ वर्ष हो जाने पर नामधारी सिखों ने उसका शताब्दी समारोह बड़ी धूमधाम से मनाया ।

एक साथ ६०० विवाह—पिछले दिनों बीकानेर में पुष्करणा ब्राह्मण जाति में ४ वर्षों बाद ६०० कुँआरों ने गृहस्थ जीवन में प्रवेश किया । इस प्रकार के समारोह चार वर्ष बाद आयोजित किए जाते हैं । चार साल में एक बार आने वाले इस विवाह पर्व के अवसर पर विभिन्न स्थानों से लगभग हजारों लोग एकत्रित होते और सामूहिक वातावरण में बड़ी सादगी से सैकड़ों विवाह एक ही दिन में सम्पन्न करते हैं ।

पुष्करणा समाज के विचारशील लोगों ने बहुत पहले ही सामूहिक विवाहों की उपयोगिता जान ली थी । इसलिए उन्होंने एक ही समय एक साथ अनेक विवाहों की बड़ी सुविधाजनक परिपाटी प्रचलित की थी । इस अनुकरणीय प्रथा से समाज के लोगों को बहुत सुविधा रहती है ।

सामूहिक विवाहों का आयोजन—कुछ समय पूर्व भरतपुर की कामा तहसील (भरतपुर) में खण्डेलवाल महासभा द्वारा सामूहिक विवाहों का आयोजन किया गया था । दहेज-प्रथा तथा फिजूलखर्ची का बहिष्कार करके १२ विवाह सम्पन्न हुए । इसी प्रकार उपर्युक्त महासभा ने आगरा में सामूहिक विवाहों का आयोजन किया था जिनमें कन्यादान का एक रुपया मात्र दहेज दिया था । इस अनुकरणीय उदाहरण के प्रति अन्य जातियों के लोगों में भी गहरी दिलचस्पी उत्पन्न हुई है ।

माथुर वैश्यों में सामूहिक विवाह—फीरोजाबाद (आगरा) में माथुर वैश्य सुधार समिति बहुत दिनों से यह प्रयत्न कर रही है कि विवाहों में होने वाले धन और समय के निरर्थक अपव्यय को रोकने के लिए कुछ ठोस और कारगर कदम उठाये जायें । इसलिए उसने सामूहिक विवाह आन्दोलन के लिए कई वर्ष से बड़ा सराहनीय और सफल प्रयत्न किया है । कुछ समय पूर्व आगरा में एक बड़ा समारोह इसी उद्देश्य से हुआ था, जिसमें कितने ही सामूहिक विवाह हुए । अब इस वर्ष फीरोजाबाद में माथुर वेश्य समाज का एक बड़ा उत्सव आयोजित किया गया जिसमें लगभग १० हजार जनता की उपस्थिति में ९ विवाह सामूहिक रीति से सम्पन्न हुए । हर विवाह में ११/- मात्र खर्च हुआ । इस समारोह का हृदयग्राही दृश्य देखकर अन्य जातियों के लोग भी ऐसा ही अनुकरण करने का प्रयत्न कर रहे हैं ।

विद्रोह की प्रतिक्रिया

जैसे-जैसे विवेकशीलता और दूरदर्शिता जाग्रत होती चली जा रही है, वैसे-वैसे दहेज एवं विवाहोन्माद के विरुद्ध घृणा एवं रोष की भावनाएँ बढ़ती जाती हैं । मूढ़तावादी न तो समय की माँग को देखते हैं और न युग की आवश्यकता को, वे अपनी हठवादिता पर ही अड़े रहते हैं । अविवेकयुक्त हठ, सदा विपरीत प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है । उसकी उपेक्षा एवं अवहेलना की जाने लगती है । यह स्वाभाविक भी है । विद्रोह के बिना जड़ जमाए बैठी हुई रूढ़िवादिता मिटती भी नहीं । जो इन कुरीतियों को जारी रखने के पक्ष में हैं और स्वार्थ एवं अज्ञान में अन्धे होकर हठ करते रहते हैं, वे देखें कि कितना तीव्र रोष जन-साधारण में छाया हुआ है और किस तरह इन कुरीतियों को तोड़-मरोड़ कर रख देने के लिए लोग व्याकुल हैं । नीचे के समाचार हम पढ़ें और सोचें कि समय रहते अपने विचारों को बदल लेना ही श्रेयस्कर है ।

आदर्शवादी युवक का साहस—जौनपुर में एक संभ्रान्त परिवार के सुशिक्षित कान्यकुब्ज युवक ने असाधारण साहस का परिचय देकर अपनी सहृदयता का जो परिचय दिया है उसका प्रभाव युवकों पर भी बहुत पड़ा है । कान्यकुब्ज समाज में दहेज का प्रचलन बहुत है । इससे लड़की वालों को बेतरह उत्पीड़न सहना पड़ता है । वस्तुस्थिति से क्षुब्ध होकर लड़के ने निश्चय किया कि वह निर्धन घर की लड़की से बिना किसी प्रकार के दहेज के ही विवाह करेगा । लड़के के अभिभावक लम्बी-चौड़ी रकमें तय करके, शादी पक्की करने ही वाले थे कि लड़के ने अपने निश्चय की सूचना दृढ़ता के साथ दे दी और कह दिया कि वह उनकी हर सेवा करने और बात मानने को तैयार है, पर दहेज जैसे अनैतिक कार्य में भागी होकर वह अपनी आत्मा का हनन न करेगा । कुछ दिन घर वाले उस पर क्रुद्ध रहे और भली-बुरी कहते रहे, पर वह जब टस से मस न हुआ तो घर वाले पसीज गये और लड़के की इच्छानुसार बिना दहेज गरीब घर की शादी करने की व्यवस्था बना रहे हैं ।

पुत्र की दृढ़ता, पिता की मजबूरी—अम्बरनाथ (महाराष्ट्र) के बसन्त जोशी नामक एक प्रगतिशील ब्राह्मण युवक ने स्वयं ग्रेजुएट होते हुए एक गरीब विधवा की लड़की से बिना कोई दहेज लिए विवाह करके शिक्षित नौजवानों के सामने समाज-सुधार का एक आदर्श उपस्थित किया है । कुमारी सुशीला पाठक केवल आठवीं कक्षा तक ही पढ़ी थी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु श्री जोशी ने शिक्षा की अपेक्षा शालीनता को अधिक महत्त्व दिया ।

बसन्त जोशी के पिता ने इस विवाह का बहुत विरोध किया । वे अपने पुत्र का विवाह लगभग सात हजार का दहेज लेकर एक सम्पन्न घर में तय कर रहे थे, किन्तु बसन्त इस मामले में अपने पिता से सहमत नहीं हुए । उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि दहेज के माध्यम से निश्चित हुए विवाह को वह कदापि स्वीकार न करेंगे । पिता के विवाह में शामिल न होने का निश्चय सुनकर भी जोशी ने अपनी दृढ़ता का परिचय दिया और जब वह अपने प्रगतिशील मित्रों के साथ जाकर विवाह कर लेने को उद्यत हुए तो पिता को पुत्र के सामने झुकना ही पड़ा ।

दहेज विरोधी लड़का गायब—खड़गपुर में बिहारीलाल नामक जिस खत्री के लड़के की पुलिस कई दिन से खोज कर रही थी वह अब सकुशल मिल गया । आशंका यह थी कि बदमाशों ने उसका अपहरण किया है, पर लड़के ने गुम होने के कारण बताते हुए कहा कि घर वाले मेरे विवाह में काफी दहेज लेना चाहते हैं, इसलिए उन्होंने ठहरौनी कर विवाह पक्का कर लिया था । पर मुझे दहेज से सख्त नफरत है, इसलिए मैंने विवाह से पूर्व गायब हो जाना उचित समझा ताकि दहेज वाला विवाह न हो सके । यदि फिर कभी दहेज लेकर मेरा विवाह किया गया तो मैं फिर इसी प्रकार गायब हो जाऊँगा और घर वालों का मनोरथ पूरा न हो सकेगा ।

लड़की आजीवन अविवाहिता रहेगी—मुजफ्फरपुर (बिहार) में एक कायस्थ परिवार की प्रबुद्ध लड़की ने अपने निश्चय की सूचना घर वालों को देकर उनकी एक बड़ी चिन्ता दूर कर दी है ।

लड़की इण्टर पास है और २४ साल की हो चुकी है । विवाह के लिये छह वर्ष से उसके पिता प्रयत्नशील हैं, पर मनमाना दहेज न जुटा सकने के कारण शादी न हो सकी । घर के सभी लोगों के लिए यही एक बहुत बड़ी चिन्ता का विषय था । सब इसी में घुलते रहते थे । लड़की बहुत दिन तक तो संकोचवश कुछ कह न सकी, पर इस वर्ष उसने खुले शब्दों में यह घोषणा कर दी है कि वह लालची लोगों को अपना जीवन सौंपकर गृहस्थ सुख पाने की अपेक्षा, उनसे दूर रहकर अविवाहित जीवन व्यतीत करना ही श्रेयस्कर समझती है । उसे विवाह करना नहीं है ।

कुछ दिन तक लड़की के निश्चय को घर के लोग सुधार सम्बन्धी धृष्टता बताते रहे, पर जब उसने जबरदस्ती करने पर आत्महत्या कर लेने की धमकी दी तो सबको चुप हो जाना पड़ा । अब लड़की बी.ए. कक्षा में पढ़ रही है । आगे वह अध्यापिका या समाज-सेविका बनकर अविवाहित जीवन व्यतीत करेगी ।

दहेज न जुटा पाने पर अन्तर्जातीय विवाह—वरबीघा (मुंगेर) में अभी हाल में ही हुए एक अन्तर्जातीय विवाह की समझदार लोगों में बड़ी सराहना की जा रही है । इस विवाह में वर श्री रामचन्द्र मिस्त्री और वधू श्रीमती सुमतिदेवी कुर्मी जाति की हैं । बताया जाता है कि वधू के प्रगतिशील पिता ने अपनी जाति में व्याप्त दहेज प्रथा के विरोध में यह कदम उठाया है और वर के पिता ने उनके प्रगतिशील विचारों में सहयोग करने के लिए यह सम्बन्ध सहर्ष स्वीकार कर लिया । यह विवाहोत्सव आर्य समाज में पं. विष्णुदयाल के आचार्यत्व में वैदिक विधि से सम्पन्न किया गया । उक्त अवसर पर नगर के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने वर-वधू को आशीर्वाद दिए और लोगों को ऐसे विवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रेरणा दी ।

२५ हजार का दहेज ठुकराया—पूर्णिया जिले की चूनापुर स्टेट के श्री सत्यनारायण के पुत्र गोविन्दराय को उनके विवाह में उनकी हैसियत के अनुरूप २३ हजार नकद दहेज मिल रहा था, पर उनने उसे पूर्णतया ठुकरा कर नवहटा गाँव निवासी एक बिल्कुल गरीब घर की कन्या के साथ विवाह कर लिया । इस विवाह में वर कन्या के पूर्व परिचय या प्रेम का कतई कोई सम्बन्ध न था, यहाँ तक कि एक दूसरे के बारे में कुछ जानते भी न थे । प्रश्न केवल सिद्धान्त का था । दहेज देने वाले लड़की वालों को लड़का यही उत्तर देता रहा है कि आप लोग धनवान्, अपने पैसे के बल पर कोई दूसरा लड़का ढूँढ़ सकते हैं, मुझे किसी निर्धन परिवार की लड़की के लिए सहारा बनने दीजिए ।

लड़के ने निर्धन परिवार ही अपने लिए उपयुक्त समझा और वहाँ स्वीकृति दे दी । बाद में उसके पिता भी सहमत हो गये ।

लड़का आजन्म कुँआरा रहने को तैयार—संग्रामपुर (मुंगेर) के एक प्रतिष्ठित परिवार में लड़की का विवाह था । बारात आई हुई थी, पर लेन-देन के प्रश्न को लेकर चख-चख चलने लगी । लड़की वाले जितना दे रहे थे उससे लड़के वाले सन्तुष्ट न थे और अधिक मिलने की पेशकश कर रहे थे । लड़का पढ़ा-लिखा था । उसे यह बात बुरी लगी और अपना मत व्यक्त किया कि इस प्रकार की अनैतिक सौदेबाजी बन्द की जाय, पर उसकी किसी ने न सुनी । निदान लड़का बारात छोड़कर गायब हो गया । बहुत खोजने पर भी वह न मिला तो बारात को वापिस लौटना पड़ा ।

कहते हैं कि लड़के ने यह प्रण कर लिया है कि उसका विवाह बिना दहेज के होगा तो ही करेगा, अन्यथा सदा कुमार बना रहेगा ।

छात्रों द्वारा अभिभावकों को सूचना—बार्शी (शोलापुर) में तिलक विद्यालय के छात्रों ने दहेज और विवाहों में होने वाले अपव्यय की हानियों को समझ लेने के उपरान्त यह निश्चय किया है कि जब उनका विवाह होगा तो वे किसी प्रकार का दहेज स्वीकार न करेंगे । कोई लड़का अपनी ससुराल वालों से किसी प्रकार के उपहार की माँग भी न करेगा । घर वाले कुछ ठहराव करेंगे तो उसका विरोध करेगा और इस प्रकार के विवाह को अस्वीकृत कर देगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लड़कों ने अपने-अपने अभिभावकों को अपने इस निश्चय की लिखित सूचना दे दी है, ताकि विवाह का अवसर आने पर वे पहले से ही इस बात को ध्यान में रखे रहें ।

कम पढ़े और छोटी आयु के वर से शादी—सावन्तबाड़ी (रत्नागिरि) में कुमारी शान्ती उपाध्याय ने अपने अभिभावकों की विवाह सम्बन्धी एक बड़ी चिन्ता को दूर करके उच्च शिक्षित कन्याओं के सामने एक नया आदर्श रखा है । श्री शान्ती जी एम. ए. बी. एड. पास हैं, वे स्थानीय कन्या विद्यालय में प्रोफेसर का काम कर रही थीं । आयु ३० वर्ष से अधिक हो चली थी । उपयुक्त लड़का ढूँढ़ने में घर वाले बहुत परेशान थे । छोटी आयु के लड़के बड़ी लड़की से विवाह करते न थे फिर उतने शिक्षित लड़कों की दहेज सम्बन्धी माँग भी बहुत थी । समस्या सुलझती न देखकर लड़की के घर वाले अक्सर चिन्तित रहा करते थे । इस समस्या को सुलझाने में लड़की ने साहस से काम लिया और पोस्ट ऑफिस में काम करने वाले एक मैट्रिक पास क्लर्क से जो तीन वर्ष छोटा भी था शादी करना स्वीकार कर लिया । विवाह के बाद लड़की ने अपने पति की नौकरी छुड़ा दी और उसे कालेज में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए दाखिल करा दिया । लड़की उसे अपने बराबर ही शिक्षित बनाने तक सारा खर्च वहन करेगी ।

लड़की का साहस—राजमहल (संथाल परगना) की एक लड़की ने अपने साहस के बल पर अपने गरीब पिता को एक बड़ी आर्थिक कठिनाई से छुटकारा दिला दिया । लड़की की शादी पड़ोस के गाँव में पक्की हुई थी, पर लड़के का बाप दहेज में इतना पैसा माँग रहा था, जो लड़की के पिता के लिए जुटाना कठिन था । बेचारा इसी कठिनाई में घुला जा रहा था ।

लड़की ने अपने भावी पति को सन्देश भेजा कि क्या वह उसे बिना दहेज के भी स्वीकार करने को तैयार है । लड़के ने वैसा ही वचन दे दिया । इस पर लड़की स्वयं भावी पति के घर चली गई और लड़के के आग्रह पर वहाँ उसी दिन उसका विवाह भी हो गया ।

ससुराल वाले पहले तो लड़की के इस दुस्साहस पर खफा हुए, किन्तु पीछे लड़के का रुख देखकर उन्हें विवाह की तैयारी करने को मजबूर होना पड़ा । आस-पास के लोगों में इस घटना को काफी महत्त्व दिया जा रहा है ।

जैसे को तैसे मिल गये—इलाहाबाद में एक सुधारवादी अग्रवाल धनी सज्जन दहेज के नाम पर नकदी तो न लेना चाहते थे, पर कीमती सामान प्राप्त करके अपना लालच पूरा करने के फेर में थे । जौनपुर के एक दलाल महोदय वस्तुस्थिति को समझ गये और उनने उनकी मनमर्जी की शादी करा देने का वायदा कर लिया, किन्तु जो सामान चाहिए उसकी लिस्ट लिखकर देने को उनसे कहा ताकि बात याद रहे और वायदे में भूल न पड़े ।

सम्बन्ध एक जगह पक्का करा दिया गया । प्रारम्भिक रस्म में जो माँगा गया था वह सामान भेज दिया गया, पर जो सामान लड़की वालों के यहाँ मिलने वाला था उसमें बहुत चालाकी की गई । चाँदी और पीतल के बहुत से बर्तनों की लिस्ट थी । ये बर्तन बहुत छोटे-छोटे बनवाये गये । एक-एक तोले के । पीतल के बर्तन जो लड़कियों के लिए गुड़िया खेलने के बिकते हैं उनको एक डिब्बा में रख लिया गया । वह चीजें भेंट की गईं तो वर के पिता बहुत लाल-पीले हुए । कन्या पक्ष के कितने ही संभ्रान्त लोग आये और बारात के भले आदमियों से झंझट निपटा देने को कहा । पंचायत बैठी । लालाजी के हाथ की लिखी लिस्ट पेश की गई । चीजें सभी थीं । तोल का कोई उल्लेख लिस्ट में न था । ऐसी दशा में उनका नाराज होना क्यों कर उचित हो सकता है ? यह पूछने पर बारात के मसखरे लोग भी लड़की वालों की बात का ही समर्थन करने लगे ।

निदान चाबी वाला खिलौना मोटर, आठ आने वाला नकली रेडियो, एक आने वाली घड़ी आदि सामान लेकर बारात को विदा होना पड़ा । दिल्लगी ऐसी रही कि महीनों तक लोग हँसते-हँसते लोट-पोट होते रहे ।

दहेज के कारण होने वाली दुर्घटनाएँ—ऐसी कितनी ही घटनाएँ सुनने में आती रहती हैं जिनमें दहेज की रकम तो दे दी जाती है पर पीछे उसके लिए लिया गया कर्ज चुकाने के लिए लड़की पर चढ़ाया गया जेवर गिरवी रख दिया जाता है, बेच दिया जाता है, या चोरी होने का बहाना कर दिया जाता है ।

सभी लड़की वाले कमजोर नहीं होते जो अपनी लड़कियों पर अत्याचार सहते रहें । कितनी ही बार वे इतने उग्र भी होते हैं कि दूल्हा, दूल्हे के पिता या उनके घर वालों को नाकों चने चबा दें और उनकी बदमाशी का ऐसा कठोर प्रतिशोध लें कि तिलमिलाते रह जाएँ । सताया कमजोर को ही जाता है । साहसी और उग्र स्वभाव के लड़की वाले आये दिन ऐसी वारदातें भी करते रहते हैं जिससे दहेज के लालच की पूर्ति की अपेक्षा वे अनेक गुने घाटे में रहें और लड़की को सताने की सोचने तक की हिम्मत न कर सकें ।

कभी-कभी अधिक सताये गये, क्षुब्ध व्यक्ति ऐसे अवांछनीय कार्य कर बैठते हैं जिनसे दुर्घटना घटती नहीं वरन् और भी बढ़ती है । कुछ ऐसे समाचार देखिये—

दूल्हे के पिता की गर्दन मरोड़ कर हत्या— नयापुरा (कोटा) में कुनाड़ी से आने वाली लोधों की एक बारात में दूल्हे तथा दुल्हन वालों का पुरानी दुश्मनी को लेकर खाने के समय झगड़ा हो गया । क्रोध में आकर लड़की वालों में से एक व्यक्ति ने दूल्हे के बाप की गर्दन मरोड़ दी, इससे वह बेहोश हो गया तथा अस्पताल में जाकर उसकी मृत्यु हो गई ।

बारात बिना शादी के लौट गई । पुलिस ने इस सम्बन्ध में ८ लोधे गिरफ्तार किये हैं ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लड़के तथा उसके पिता की नाक गई— क्षत्रिय परिवार की एक लड़की का विवाह कुछ दिन पूर्व राधोपुर नामक ग्राम में हुआ था । यथाशक्ति दहेज भी दिया गया, पर लड़के वालों को यह अपनी हैसियत से कम लगा । इसी बात पर कहन-सुनन होती रही । झगड़ा बढ़ता रहा । लड़की को तरह-तरह से सताया जाने लगा और अन्त में लड़के की दूसरी शादी की तैयारी होने लगी । लड़की से जेवर आदि छीनकर उसके पिता के यहाँ भेज दिया गया ।

एक रात को लड़के के घर पर बदमाशों का आक्रमण हुआ । माल तो कुछ नहीं लुटा पर लड़के तथा उसके पिता की नाक कट गई । इस दुर्घटना का सम्बन्ध लड़की के तिरस्कार और दहेज के लालच के साथ जोड़ा जा रहा है । चर्चा है कि यदि अनुचित माँग एवं लड़की को सताने की नीति इन लोगों ने न अपनाई होती तो नाक कटने की दुर्घटना न होती ।

आदर्श विवाहों का प्रचलन और प्रगति

मैथिल और जैन समाज के जातीय मेले—दरभङ्गा (बिहार) के मैथिल ब्राह्मणों का एक सम्मेलन इस जिले में ऐसा होता है, जिसमें बहुत करके विवाह-शादियों की समस्याएँ ही निपटाई जाती हैं । इस सम्मेलन का रूप यों एक जातीय मेले जैसा होता है । लोग कई दिन अपने डेरे लगा कर रहते हैं, परस्पर विवाह-शादियों की चर्चा चलाते हैं । कितने ही विवाह सम्बन्ध यहाँ पक्के हो जाते हैं और कितनी ही पक्की की हुई सगाइयाँ इसी अवसर पर विवाह रूप में परिणत हो जाती हैं ।

इसी प्रकार का एक जैन समाज का मेला मध्य प्रदेश के सोनागिरि स्थान पर होता है, जिसमें तीर्थयात्रा में अतिरिक्त इस समाज के लोग अपने बच्चों की शादियों की समस्याएँ भी सुलझाते हैं । कितने ही विवाह उन्हीं दिनों हो जाते हैं ।

यदि ऐसे ही मेले हर बिरादरी के होने लगें तो उपयुक्त लड़के-लड़की ढूँढ़ने की एक बहुत बड़ी समस्या सुलझ जाय । ऐसे सम्मेलन समाज-सुधार की कई आवश्यकताएँ पूर्ण करते एवं कुरीतियाँ मिटाने में भी सहायक हो सकते हैं । इन मेलों को देखने वाले अन्य जातियों के लोग भी वैसा ही अनुकरण करने की प्रेरणा लेकर जाते हैं ।

न लड़की वालों के लिए, न लड़के वालों के लिए, किसी भी पक्ष के लिए दहेज का लालच लाभकर नहीं । दोनों ही पक्षों की इससे अपरमित हानि है । विवाहोन्माद हिन्दू समाज की सबमें घृणित एवं सबमें अनैतिक कुरीति है । ऐसे भयङ्कर प्रचलन को भी जिस समाज के लोग सहन करते रहते हैं, उन्हें विवेक और साहस से रहित ही माना जायगा । हमें अपने ऊपर, अपने समाज के ऊपर यह लांछन नहीं आने देना चाहिए । इसके लिए यही उचित है कि हम सब संगठित रूप से ऐसे समाज की अभिनव रचना में संलग्न हों, जिसमें दहेज जैसी मूर्खतापूर्ण कुरीतियों के लिए कोई स्थान न हो ।

कुप्रथाओं का अन्त होगा ही

आज ऐसी अनेक प्रथाएँ और परम्पराएँ प्रचलित हैं, जिनमें लाभ किसी प्रकार का नहीं, हानि ही हानि है । कोई समय भले ही ऐसा रहा हो जब तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के कारण उनकी आवश्यकता पड़ी हो, पर आज परिस्थितियाँ बदल जाने पर भी उन्हीं को गले लगाये रहना बुद्धिसंगत नहीं कहा जा सकता । आज के बुद्धिवादी युग में कुप्रथाओं और कुपरम्पराओं के स्थान पर विवेक और तर्क को स्थान देकर वस्तुस्थिति को समझने का प्रयास हर समझदार व्यक्ति को करना ही चाहिए ।

मोदीनगर से १० मील दूर स्थित ग्राम खरखोदा से समाचार मिला है कि पिछले दिनों एक नव-युवती को घूँघट के कारण अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा । माँ के घर से उसकी विदा होकर आई थी । वह खरखोदा बस स्टैण्ड पर बस से उतरकर गाँव को जाने लगी, तो उसने ससुराल का क्षेत्र होने के कारण लम्बा-सा घूँघट कर लिया सड़क पार करते हुए विपरीत दिशा से आने वाली एक बस से वह कुचल गई ।

जब देश स्वतन्त्र हो गया हो, स्त्री-पुरुषों को कानून की दृष्टि से समान अधिकार प्राप्त हो गये हों, धर्म, राजनीति, विज्ञान, सैन्य संगठन आदि महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में भी उच्च पदों पर महिलाएँ आसीन हों, वहाँ ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं को अभी भी घूँघट में रहना पड़ता हो, तो इसे देश का दुर्भाग्य ही कहा जायगा । जब भारतीय संस्कृति विदेशियों द्वारा नष्ट की जा रही थी, समाज में हिन्दू महिलाओं का जीवन सुरक्षित नहीं था, उस समय घर की चाहरदीवारी में रखना अथवा घूँघट के लिए विवश करना किसी प्रकार उचित ठहराया जा सकता था, पर जब सबका जीवन सुरक्षित है । स्वतन्त्रतापूर्वक एक स्थान से दूसरे स्थान पर आ-जा सकते हैं, किसी भी प्रकार का भय नहीं, फिर समाज के एक उपयोगी अंग को घूँघट में बन्द रखकर उपेक्षित करना शक्ति का अपमान ही माना जायेगा । दकियानूसी विचारधारा के वे लोग जो सड़ी-गली परम्पराओं को आज भी अपने गले में लगाये हुए हैं, मुँह खोलकर चलने वाली महिलाओं पर भले ही चरित्रहीनता या पश्चिमी सभ्यता के अन्धानुकरण का आरोप लगायें, पर उनकी यह बातें अब नक्कार खाने में तूती की आवाज ही मानी जायेंगी । घूँघट में रहने वाली सभी महिलाएँ चरित्रवान् और शिक्षा ग्रहण कर स्वच्छन्द रूप से अपनी जीविका या अन्य कार्यों के लिए विचरने वाली महिलाएँ चरित्रहीन हों इस तर्क को कौन-सा विवेकशील मनुष्य मानने को तैयार होगा । पिछले वर्षों में तो विवाह के बाद दो बारातियों के बीच एक ही स्टेशन पर दुलहनें बदलने की आश्चर्यजनक घटना हो गई थी, जिसका प्रमुख कारण पर्दा प्रथा ही थी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१.९४ प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा

रामगढ़—शेखावाटी से १० मील दूर ढढिया गाँव में सर्वोदयी कार्यकर्त्ता श्री सेवाराम की धर्म-पत्नी श्रीमती सूरज देवी का मृत्यु भोज न कर, गाँव में ही नहीं वरन् आस-पास के क्षेत्र में एक उदाहरण प्रस्तुत किया है । सूरज देवी जीवन भर सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध संघर्ष करती रही थीं, फिर उन्हीं की मृत्यु पर कुप्रथा को पोषण दिया जाय तो उनकी आत्मा को दुःख ही होता । मृत्यु के बारहवें दिन गाँव में एक विशाल सभा हुई जिसमें इस क्षेत्र के पदयात्री श्री देवदत्त निडर ने मृत्यु-भोज की हानियों को उपस्थित जनता के सम्मुख रखा । सब व्यक्तियों ने यह स्वीकार किया कि मृत्यु भोज गलत प्रथा है इसे बन्द होना ही चाहिए ।

जब देश में जनसंख्या बढ़ रही हो, अनाज का उत्पादन कम हो उस समय ऐसे भोजों का आयोजन करके अनाज को बरबाद करना सामाजिक अपराध ही माना जायगा । पूड़ी, कचौड़ी तथा विभिन्न प्रकार के पकवान बनाकर घर के लोगों को खिलाना और मित्रों तथा परिचितों को आमन्त्रित करना इस बात का प्रतीक है कि कोई प्रसन्नता का प्रसंग होगा, पर यहाँ तो स्थिति बिल्कुल विपरीत होती है । जब परिवार में प्रियजन की मृत्यु हो गई हो उस समय उसके आश्रित लोगों को धैर्य बँधाने तथा भविष्य की व्यवस्था करने के स्थान पर मृत्यु-भोज करने के लिए विवश करना हृदयहीनता का ही साक्षात् प्रमाण है ।

ढढिया गाँव में तो उस दिन गाँव के सब लोगों ने मिलकर यज्ञ तथा सत्संग का आयोजन किया । कार्यक्रम के बाद गुड़ का प्रसाद वितरण किया गया । यज्ञ की वेदी पर कितने ही व्यक्तियों ने मृत्युभोज न करने की शपथ ली ।

मृत्युभोज के अतिरिक्त अन्य परम्पराएँ जो असामयिक हैं और हिन्दू परिवारों में जोंक की तरह लगकर खून चूस रही हैं, छोड़ने का प्रयत्न करना चाहिए । विवाह की समस्या हिन्दू समाज में आज भी सरदर्द बनी हुई है । कन्या के जन्म होते ही माता-पिता एक भार समझने लगते हैं और पेट काट-काटकर उसकी शादी के लिए पैसा जोड़ने का प्रयास करते हैं । कन्याओं को शिक्षित कर यह समझा जाता है कि उनके विवाह की समस्या शायद सुलझ जायेगी, पर जब वह कन्याएँ विवाह योग्य होती हैं तो शिक्षित वर और भी अधिक कीमत देने पर मिल पाते हैं ।

इस मँहगाई के समय में जब परिवार का पालन-पोषण कठिन हो रहा है, दो-तीन बच्चियों की शादी के लिए धन जुटाना कितना कठिन कार्य होगा इसे तो कोई भुक्तभोगी ही जान सकता है । पच्चीस-पच्चीस और तीस-तीस वर्ष की कन्याएँ हो जाती हैं, पर उनके विवाह नहीं हो पाते, कितने ही व्यक्तियों को बेमेल विवाह के लिए विवश होना पड़ता है ।

घटना समस्तीपुर की है । इच्छा के विरुद्ध बलपूर्वक विवाह किये जाने पर यहाँ की एक कन्या ने अपनी माँग का सिन्दूर शादी के तुरन्त बाद धो डाला और जिस वर से शादी हुई थी उसके साथ जाने से इन्कार कर दिया । वैसे इस कन्या का विवाह ९ मार्च को होने को था, पर उस दिन बारात नहीं आई । कन्या पक्ष वाले के यहाँ सारे रिश्तेदार रुके थे, पूरी तैयारियाँ थीं । अतः कन्या के पिता ने पास के गाँव से ही दूसरा वर निश्चित कर १० मार्च को शादी सम्पन्न करानी चाही पर दुर्भाग्य की बात कि वह शादी भी न हो सकी, फिर ११ मार्च को कन्या का पिता एक अधेड़ व्यक्ति को ढूँढ़ लाया । उसके साथ जबरन कन्या की शादी कर दी गई, पर बाद को उसने जाने से साफ इन्कार कर दिया ।

यदि कन्याएँ इस प्रकार कुप्रथाओं से लड़ने के लिए साहस दिखा सकें तो जो व्यक्ति दहेज के लालच में आज भी फँसे हैं, आँखें खुल सकती हैं । विवाह के समय कई व्यक्ति तो कन्या के पिता के सम्मुख ऐसे लड़कों के प्रस्ताव रखते हैं जो अयोग्य होते हैं, पर उनसे सम्बन्धित होने के कारण उनकी झूठ तारीफ कर शादी कराने का प्रस्ताव रखते हैं । समस्तीपुर की इस घटना में भी तो यही बात छिपी हुई है कि शादी का अच्छा प्रस्ताव सम्मुख आने पर पहले के तै किये गये सम्बन्ध को छोड़ दिया और लड़की वाले के सम्मान की तनिक भी चिन्ता न की । समाज की यह कुरीतियाँ समझदारी से ही छोड़ी जा सकें तब तो अच्छा ही है अन्यथा संघर्ष के लिए भी घबड़ाना न चाहिए ।

देश में कुपरम्पराओं और अंध-विश्वासों की कमी नहीं है, यदि कमी है भी तो इस क्षेत्र में लोगों को नये विचार देने की है । रामपुर जिले के साहावा थाने के अन्तर्गत कारापानी नामक स्थान का आदिवासियों के लिए धार्मिक दृष्टि से बड़ा महत्त्व है । इस देव स्थान पर देवता को खून चढ़ाने के लिए तीन व्यक्तियों की हत्या करने वाले परऊ नामक व्यक्ति को स्थानीय सब-न्यायाधीश श्री श्रीवास्तव ने मृत्यु दण्ड दिया है ।

घटना ८ अक्टूबर, १९६८ की है । रात्रि के समय खेत की बाड़ी में सोनु गौड़ उसकी पुत्री फूली तथा पुत्र बगदू सो रहे थे तभी अभियुक्त ने कुल्हाड़ी से हमला करके इनकी हत्या कर दी । परऊ को इस दुष्कृत्य की प्रेरणा उसके ही दो साथियों धनाजी तथा हगरन नामक व्यक्तियों ने दी थी । हत्या का प्रमुख कारण खून प्राप्त करके देवता पर चढ़ाना था । वह मूढ़ व्यक्ति यह न समझ सका कि देवता कहीं दूसरों की हत्या करवाकर प्रसन्न होते हैं । देवता तो प्रसन्न न हुये वरन् उसे अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा ।

अनेक स्वार्थी और धूर्त लोगों ने देवी-देवताओं को मनुष्य से भी अधम और नीच प्रवृत्ति का लालची समझ रखा है । अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए ऐसे व्यक्तियों को दूसरों का खून बहाते तनिक भी देर नहीं लगती । ऐसे दुष्ट लोगों को जो दण्ड दिया जा सके कम ही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहालग के चक्कर में व्यर्थ की असुविधा

सहालग क्या आते हैं—शादियों की धूम-सी मच जाती है । बड़ी हँसी आई, जब कुछ दूल्हों को साइकिलों पर और कुछ को पैदल ही वरयात्रा में निकलते देखा ।

अक्सर ऐसा ही होता है कि अमुक तिथि या अमुक लग्न ही शुभ है और उसी एक तिथि पर एक साथ इतनी शादियाँ होती हैं कि आवश्यक उपकरण भी मिलना दुर्लभ हो जाता है ।

यह लग्न भी कुछ ऐसी ही 'शुभ' थी । हर मुहल्ले में दस-बीस बारातें चढ़ रही थीं । जिन्होंने पहले से बुकिंग करा लिया था उन्हें धर्मशाला या होटल मिल भी गये थे बारात ठहराने के लिये और जो पीछे रह गये—उनकी बारातों को निजी घरों में या बड़े मैदानों में पण्डाल लगा कर ही ठहराना पड़ा था ।

रेलों तथा बसों का यह हाल था कि पैर रखने को जगह नहीं थी । किसी के आधे बाराती ही चढ़ पाये तो किसी का सामान स्टेशन पर ही छूट गया । बसों में भी कुछ बाराती बिचारे अन्दर स्थान न होने के कारण बस की छतों पर ही बैठे चले जा रहे हैं । सामान पर बैठे अपनी जान हथेली पर लिये हुए ।

सारे शहर में इतनी चहल-पहल तथा धूम-धाम थी कि जहाँ देखो वहाँ यही चर्चा थी । "आज का सहालग बहुत बड़ा है ।"

हमारे पड़ोस में ही जो शर्माजी रहते हैं उन्हें तो कोई पण्डित ही न मिला । तब कार्यक्रम इस प्रकार रखना पड़ा कि २ बजे तक वे एक विवाह कराके आयें तथा उसके पश्चात् यहाँ का करायें । पण्डित जी के इन्तजार में बेचारे वर तथा कन्या बैठे रहे तीन बजे तक, तब कहीं भाँवरों का कार्यक्रम प्रातः सात बजे तक पूरा हो पाया ।

किसी को बैण्ड नहीं मिला तो किसी को शामियाना भी उपलब्ध न हो सके ।

इस असुविधा से गुणेश्वर बाबू ने शिक्षा ली और अपने लड़के का विवाह जो अगले ही दिनों होने वाला था पहले से ही सतर्कता बरत ली । उन्होंने कन्या पक्ष वालों को बुलाया और कहा "देखिये ! एक ही तिथि पर इतने अधिक विवाह होने के कारण कितनी परेशानी हो रही है प्रत्येक वस्तु की उपलब्धि में । यह आप भली भाँति जानते हैं । फिर क्यों न हम उक्त तिथि के बजाय दो-चार दिन बाद की बसन्त-पंचमी तिथि रख लें । यों दिन सब भगवान् के बताये हुए हैं इसलिए सभी शुभ है । सहालग उस दिन नहीं है तो क्या सरस्वती का जन्म दिन होने से वह भी कम अच्छा नहीं ।

इस पर कन्या के पिता बोले "मैं आपकी बात से पूर्णतः सहमत हूँ । मैं तो स्वयं ही बड़ी उलझन में था कि आप लोगों के स्वागत-सत्कार के उपकरण किस प्रकार जुटाऊँगा । दोनों लड़के कई दिन से प्रयत्नशील हैं फिर भी हम लोग सारी वस्तुओं की व्यवस्था नहीं जुटा सके हैं ।"

अब हमारे गुणेश्वर बाबू ने कहा मुझे आपसे ऐसी ही आशा थी । भले-बुरे दिनों के अन्ध विश्वासी फेर में पड़कर आखिर हम कब तक इस तरह की निरर्थन उलझनों में पड़े असुविधाएँ उठाते रहेंगे । संसार के अन्य देशों और धर्मों में भी तो विवाह होते हैं वे कहाँ सहालग देखते हैं ।

घर की औरतें तथा अन्य बड़े-बूढ़े तो तैयार न थे इस बात के लिए । किन्तु बात विवेकपूर्ण थी, अतः सभी को अन्ततः माननी पड़ी । विवाह चार दिन बाद बसंत-पंचमी के लिए हटा दिया गया और बड़े ही हर्षोल्लास के साथ सारा कार्य संपन्न हुआ । किसी प्रकार की कोई परेशानी न हुई ।

गाली देने की गन्दी आदत

कोई बुराई जब आदत में शुमार हो जाती है, तब उसकी भयंकरता दृष्टि से ओझल होने लगती है । यदि वह आदत बहुत दिन के अभ्यास में आ जाय तब तो यह भी पता नहीं चलता कि वह बुराई भी है या नहीं । नशेबाजी के कारण स्वास्थ्य और धन जो बर्बादी होती है, मनोवृत्तियाँ दूषित होने से स्वभाव और चरित्र बिगड़ता है, उसका असर सन्तान पर तथा पारिवारिक शान्ति पर पड़ता है । यह बातें सर्वविदित हैं फिर भी अनेकों लोग तम्बाकू आदि नशे सेवन करते हैं । यह वह जानते हैं कि इससे कोई लाभ नहीं केवल हानि ही है, फिर भी वह बात आदत में शामिल हो जाने के कारण छोड़ने की बात सोचते भी नहीं, वरन् उस हानिकारक नशे को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं, खर्च करते हैं और प्राप्त होने पर प्रसन्न होते हैं । आदत ऐसी ही बुरी बला है ।

हमारे देश में गाली देने की एक ऐसी बुराई व्यापक रूप से प्रचलित है । जिसका उदाहरण सारे संसार में कहीं नहीं मिलता । जब कोई विदेशी नागरिक इस देश के लोगों की प्राचीन चारित्र्यिक महत्ता को सुनकर उनकी वास्तविकता देखने आता है और लोगों में घुलता-मिलता है, उनके पारस्परिक व्यवहार और वार्त्तालाप को देखता सुनता है तो यह गाली देने की बात उसे इतनी खटकती है कि यहाँ के निवासियों के चरित्र एवं मानसिक स्तर के दूषित होने की धारणा बनाते उसे देर नहीं लगती ।

बात-बात में जिन शब्दों का उच्चारण किया जाता हो, वही बातें उस व्यक्ति को अत्यंत प्रिय एवं आदर्श होंगी, यह अनुमान कोई भी व्यक्ति सहज ही लगा सकता है । गाली देने में प्रायः अश्लील शब्दों का प्रयोग किया जाता है । जिसे गाली देते हैं उसकी माँ, बहिन, बेटी के साथ बलात्कार या व्यभिचार करने का इरादा जाहिर किया जाता है । इस प्रकार की घोषणा खुलेआम करना किसी भी सभ्य देश के नागरिक के लिए बहुत लज्जाजनक बात है, इससे उसके चरित्र का घटियापन प्रमाणित होता है । यदि ऐसे शब्द

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार के अन्य किसी देश में कोई नागरिक किसी दूसरे नागरिक को कहे तो यह लड़ाई का भारी कारण हो सकता है । इस प्रकार के शब्दों को स्पष्टतः घोर मानहानिकारक माना जायगा । जो कोई सुनेगा वह उस कहने वाले से घृणा करेगा और ऐसी हरकत से बाज आने को विवश करेगा । स्पष्ट है कि कानून में इस प्रकार के गाली भरे शब्दों को मानहानि तथा अपराध माना जा सकता है और उस कहने वाले को कठोर दण्ड, राजदण्ड मिल सकता है, पर मनुष्य-मनुष्य को अपनी कमजोरी छोड़ने में बड़ी आपत्ति है ।

संसार के सभ्य शिष्टाचार की कसौटी पर 'गाली' एक बहुत ही घृणित एवं गर्हित बात मानी जायगी । दूसरे देशों में भी गाली तो दी जाती है, पर वे 'मूर्ख, बेवकूफ, नालायक' आदि शब्दों तक ही सीमित रहती है । किसी दूसरे की माँ, बहिन, बेटी की इज्जत पर आक्रमण करने वाले शब्द तो सभ्य-शिष्टाचार के अन्तर्गत किसी भी स्वाभिमानी व्यक्ति को असह्य हो सकते हैं और वह उस कहने वाले का घूँसे से मुँह तोड़ सकता है । जहालत का एक बहुत ही गंदा उदाहरण गाली है । इसके लिए हम सबको लज्जा अनुभव करनी चाहिए ।

गाली आदत में शामिल होने के कारण एक साधारण बात हो गई है । इस बात को छोड़कर यदि उस पर थोड़ी गम्भीरता से विचार करें तो शर्म से सिर नीचा हो जाता है । जब दो भाई किसी बात पर आपस में लड़ते हैं और वह लड़ाई गंदी गालियों में करते हैं तो प्रतीत होता है कि इन्होंने मानुषी शिष्टाचार को त्याग कर पशुता धारण कर ली है । जो माँ एक भाई की है वही दूसरे की है फिर उसके साथ बलात्कार या व्यभिचार करने की घोषणा करना स्पष्टतः अपनी स्त्री, माँ या बहिन के साथ दुष्कर्म करने का इरादा प्रकट करना है । यदि कहीं उसकी माँ उस घोषणा की प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए सामने आ खड़ी हो तो वे समझें कि मैं क्या कह रहा था, कितने पशुतापूर्ण इरादे की घोषणा कर रहा था । इसी प्रकार एक भाई की बेटी का नाम लेकर दूसरा भाई जो गन्दी गाली दे रहा है, यदि वह बेटी सामने आकर खड़ी हो जाय और कहे कि चाचाजी या ताऊजी मेरे लिए आप जो आदेश कर रहे थे, उस आज्ञा का पालन करने को मैं सामने उपस्थित हूँ, तो सम्भवतः मनुष्यता की सारी मर्यादाएँ लज्जा से जमीन में गढ़ जायेंगी ।

अपने या पराया कोई भी हो । किसी की भी बहिन बेटी की इज्जत करना, उसके सम्मान और शील के प्रति सद्भाव प्रकट करना हमारा परम पवित्र कर्त्तव्य है । नारी हमारे लिए पूजा एवम् सम्मान की वस्तु है । उसकी इज्जत के साथ हमारी अपनी इज्जत जुड़ी हुई है । जो उनकी इज्जत नहीं कर सकता उसे मनुष्यता से पतित समझना चाहिए । स्वाभाविक प्रेम एवं परस्पर आत्मीयता के आधार पर स्थापित हुए वैध दाम्पत्य सम्बन्ध के अतिरिक्त किसी नारी के प्रति बलात्कार का इरादा करना भी उस दुष्कर्म को करने में कुछ ही कम दर्जे का अपराध मानना चाहिए । इस दृष्टि से गाली एक नैतिक अपराध है । इसकी रोकथाम भी अन्य कानूनी अपराधों की भाँति ही की जानी चाहिए ।

अश्लील साहित्य, अश्लील चित्र इसलिए कानून द्वारा वर्जित हैं कि उनमें विषयविकार के कुत्सित भावों की अभिव्यक्ति होती है । उस प्रकार की अभिव्यक्ति राष्ट्रीय चरित्र के लिए हानिकारक है । सभ्य समाज ऐसी अभिव्यक्तियों को प्रकट होने देने में अपना अहित समझता है । इसी से ऐसे कानून बनाये गये हैं जिनके अनुसार गन्दी पुस्तकें व गन्दे चित्र रखना, छापना, बेचना, प्रचारित करना अपराध माना गया है और इन मर्यादाओं को तोड़ने वाले को कठोर दंड का विधान है । गाली भी एक ऐसी ही बुराई है, उसमें भी शब्दों के द्वारा उन्हीं अंगों तथा प्रसंगों की चर्चा होती है जो अश्लीलता निरोधक कानून के अनुसार सार्वजनिक जीवन के लिए अहितकर माने गये हैं । फिर गाली देना भी क्यों न वैसा ही अपराध माना जाय ? और गाली देने वालों को वैसी ही कड़ी सजा न दी जाय जैसी कि गन्दे चित्र प्रदर्शित करने वालों को दी जाती है । इस सम्बन्ध में भी एक कानून बनाया जाय या अश्लीलता विरोधी कानून में ही गाली को भी सम्मिलित कर लिया जाय तो यह उचित ही होगा ।

राष्ट्रीय चरित्र निर्माण के कार्यक्रमों में गाली देने की बुराई का उन्मूलन करने की बात को प्रमुख स्थान दिया जाना चाहिए । प्रत्येक भारतीय नागरिक को यह अनुभव कराना चाहिए कि सभ्यता की मर्यादाओं की रक्षा करना न केवल उसके व्यक्तित्व के लिए वरन् राष्ट्रीय चरित्र की दृष्टि से भी एक महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य है । विदेशी लोग यहाँ इसलिए आते हैं कि ऋषि की सन्तान कहलाने वाले, अध्यात्मवाद और धार्मिकता का सन्देश समस्त विश्व को देने वाले जगद्-गुरु बनने वाले भारतवासियों को निकट से देखा जाय । इस इच्छा से प्रेरित होकर वे सुदूर देशों से आवें और हमें गंदी अश्लील गालियों का बात-बात में प्रयोग करते हुए देखें तो हमारे बारे में सहज ही यह धारणा बनावेंगे कि गाली में घोषित भावना एवम् क्रिया ही इनके जीवन का प्रधान अंग होगी । इतना समय तो किसी को होता नहीं कि वह बारीकी से किसी के चरित्र या कार्य की जाँच करे । ऊपरी बातों को देख-सुनकर ही किसी के बारे में अनुमान लगाया जा सकता है । गाली वह बुराई है जो मुख से निकलते ही किसी विचारशील की आँखों में हमें गिरा सकती है । ऐसे ही गिरे हुए लोग जिस देश में बहुत संख्या में भरे पड़े हों, उसके बारे में क्या कोई अजनबी व्यक्ति अच्छी धारणा बना सकता है ? यह बुराई हमारी दृष्टि में छोटी बात भले ही हो पर जब हम सभ्य संसार के नागरिकों की पंक्ति में खड़े किये जायेंगे तो निश्चय ही हमारे लिए यह एक लज्जा की बात ही होगी ।

शब्द के विज्ञान और उसकी शक्ति से जो लोग परिचित हैं वे जानते हैं कि उच्चारण किया हुआ प्रत्येक शब्द एक विचार तथा भार लेकर आकाश में तरंगों का रूप धारण कर बिखर जाता है । उसका प्रभाव दूसरों पर पड़े बिना नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहता । भजन, कीर्तन, कथा, उपदेश, वेद पाठ आदि की महत्ता इसीलिए है कि वाणी से निकले हुए इस प्रकार के शब्द उन उच्चारण-कर्त्ताओं को, उच्चारित सत् शब्दों की शक्ति से अनुप्राणित करें और सुनने वालों को उन प्रेरणा तरंगों से तरंगित करें । निश्चय ही अच्छी वाणी का अच्छा प्रभाव कहने और सुनने वाले दोनों पर ही पड़ता है । उन शब्दों की शक्ति इतने तक ही सीमित नहीं रहती वरन् सूक्ष्म आकाश में ध्वनि तरंगों के रूप में वह शक्ति सारे संसार में फैल जाती है और प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में टकरा कर उन पर न्यूनाधिक प्रभाव छोड़ती है । रेडियो द्वारा प्रसारित शब्द जिस प्रकार सारे संसार में सुने जाते हैं वही बात उच्चरित शब्दों के बारे में भी है । प्रत्येक व्यक्ति की जीभ एक ध्वनि प्रसारक ट्रान्समीटर है, उसके द्वारा प्रसारित हुए शब्द कुछ दूरी तक तो कानों द्वारा सुने जाते हैं, पर वह दूरी समाप्त होते ही कान तो नहीं सुन पाते, परन्तु मस्तिष्क का सूक्ष्म भाग उनकी अनुभूति उसी प्रकार करता है जैसे घरों में लगे हुए रेडियो सैट संसार के विभिन्न रेडियो स्टेशनों से घोषित ब्राडकास्ट को सुनते हैं । शब्दों के साथ एक बिजली रहती है जो उसे एक पदार्थ के रूप में सारे संसार में फैला देती है ।

गाली में कहे हुए बुरे शब्द भी अपने अन्दर एक बुरी अभिव्यक्ति धारण किये रहते हैं । उन शब्दों को कान से जो सुनता है उसके मन में क्षोभ उत्पन्न होता है । यह क्षोभ विश्व मानव के अनन्त मानस में भी उत्पन्न होता है । उसका बुरा प्रभाव उत्पन्न होता है और बुरी प्रतिक्रिया प्रतिध्वनित होती है । इसका असर सब पर बुरा पड़ता है । जिस प्रकार अश्लील गीत गाने से लोगों के मन में कामुकता के विचार उठते हैं, छोटे बच्चों तक पर उनका बुरा असर पड़ता है, वैसे ही गाली भी अनन्त आकाश में कामुकता, वासना, उत्तेजना, घृणा, द्वेष, विक्षोभ आदि बुरी प्रतिक्रियाएँ अपने साथ लेकर उड़ती रहती है और अपनी दुर्गन्ध से जन-मानस को दुर्गन्धित करती रहती है । यह दुनिया के खेल में कंटीले विषैले पौधे बोने के समान दुखदायी काम है । ऐसे ही दुष्कर्मों की गणना पाप में की जाती है ।

जिस प्रकार आँखें मटकाना, औंधे-सीधे कटाक्ष करना आँखों का दूषण है, उसी प्रकार गाली देना वाणी का दूषण है । शरीर के अवयवों की कुचेष्टा उस व्यक्ति के व्यक्तित्व को हेय बना देती है । मुँह बिचकाने, जीभ निकालने, अँगूठा चलाने, ताली बजाकर बात करने, बात करते समय मुँह से झाग टपकाने, सुनने वाले को नोंचते जाने जैसी बुरी आदतें कई लोगों में होती हैं, यह बातें उन्हें स्वयं अपने आप तो बुरी प्रतीत नहीं होतीं पर देखने वालों को वे घृणित लगती हैं और इस प्रकार के व्यक्ति के साथ रहने या बात करने में सुरुचिपूर्ण व्यक्तियों को नफरत होती है । वैसे ही बात-बात में गाली देने वाले व्यक्ति अपने ही जैसे घटिया लोगों के बीच भले ही सभ्य हों पर सभ्य लोगों के बीच उनको असंस्कृत ही समझा जाता है, वे किसी भले आदमी पर अपनी अच्छी छाप नहीं छोड़ सकते ।

वह बेकार-सी बुरी आदत जो दूसरों की आँखों में अपने को गिरा दे किसी को क्यों प्रिय होनी चाहिए ? नाक में उँगली, कान में लकड़ी, दाँत में तिनका दूँसते रहने, सिर खिजलाने, उँगलियाँ मरोड़ते रहने, कुर्सी पर बैठ कर पैर हिलाते रहने जैसी बेकार आदतों की तरह बात-बात में गाली निकालते रहने, थोड़ी-थोड़ी देर में किन्हीं वस्तुओं या व्यक्तियों के नाम के साथ-साथ गाली के शब्द जोड़ते रहने की आदत कई लोगों को पड़ जाती है । उनकी बातचीत बड़ी भोंड़ी, कुरुचिपूर्ण एवं प्रभावहीन होती है, सुनने वाला ऊबता है और पीछा छुड़ाना चाहता है । उसे एक प्रकार का मूर्ख या जाहिल माना जाता है । ऐसे लोग अपनी तर्क और तथ्यपूर्ण बात से भी किसी को प्रभावित नहीं कर पाते । वाणी का सारा सौन्दर्य ही गाली का पुट लग जाने से नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है ।

बड़ों को गाली देते देखकर छोटे उसका अनुकरण करते हैं । वे भी जल्दी ही उस बुराई को सीखते हैं । घर में और स्कूल में बच्चे वे ही गंदी गालियाँ देते हैं जो अपने अभिभावकों या अपने से बड़ों से सुनते हैं । इस प्रकार यह बुराई अपनी वंश वृद्धि करती हुई पीढ़ी दर पीढ़ी फैलती चलती है । यदि इस कुचाल को कहीं से तोड़ा न गया, इसकी रोकथाम के लिए कोई आन्दोलन खड़ा न किया गया तो इस बुराई के टूटने या छूटने का समय ही न आवेगा । जहाँ गाली को प्यार या दुलार का रूप मिल गया हो वहाँ उसके छूटने-टूटने का सवाल ही कहाँ उठता है !

ओछे संस्कारों में पले हुए, ओछी श्रेणी के लोग गाली को एक प्यार या आत्मीयता का चिह्न मानते हैं, एक दूसरे से अधिक गंदी गाली देकर अधिक प्यार प्रकट करना मानते हैं । जो जितनी कंटीली गाली देगा, वह होशियार माना जाता है । कुछ सगे-सम्बन्धी आपस में गंदे मजाक करना एक अच्छा मनोरंजन मानते हैं । जो गंदे मजाक में जिसे हरा दे, निरुत्तर कर दे, वह ज्यादा होशियार माना जाता है । साले बहनोई के बीच होने वाली गंदी मजाक वैध ही नहीं आवश्यक भी मानी जाती है । यदि इस प्रकार की मजाक न हो तो समझा जाता है कि दोनों में कोई प्रेम-भाव ही नहीं है । साले और बहनोई एक दूसरे की बहिनों के प्रति कुत्सित दुष्कर्म करने की आकांक्षा में शब्द बाण छोड़ते हैं । वे आपस में इससे प्रसन्न होते हैं । सुनने वाले भी इससे प्रसन्न होते हैं । कई बार तो इस प्रकार का मजाक बुजुर्गों की मौजूदगी में भी होता है । गंदे मजाक भी गाली का ही एक रूप हैं । गाली क्रोध में दी जाती है, गंदे मजाक विनोद में किये जाते हैं । शब्दों, भावों, अभिव्यक्तियों और दुष्परिणामों की दृष्टि से इन दोनों प्रकारों में कोई विशेष अन्तर नहीं है । यह प्रवृत्तियाँ निश्चय ही हमारे लिए सब प्रकार अशोभनीय हैं ।

अश्लील ही नहीं, शाप या गालियाँ भी देना बन्द करना चाहिए । स्त्रियाँ एक दूसरी को जब गालियाँ देती हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो ''सौत, रंडी'' आदि शब्द कह कर उसे व्यभिचारिणी घोषित करती हैं । नारी जाति की सबसे ऊँची सम्पत्ति उसका सतीत्व ही है, उस पर आक्रमण करने वाले शब्दों का प्रयोग नितान्त निन्दनीय है । स्त्रियों को यह आदत छोड़नी चाहिए । कई स्त्रियाँ अपने बच्चों को बात बात पर ''मर जाय, कट जाय, जल जाय, गड़ जाय'' आदि अशुभ शब्द कहती हैं । संयोगवश कभी उनकी वाणी फलित हो जाय तो उससे बच्चों का ऐसा अनिष्ट हो सकता है जिसके लिए उन्हें जीवन भर पश्चाताप करना पड़े। गाली देने की आदत मनुष्य जंगलीपन की, जहालत की निशानी है । ऐसे घृणित शब्दों का एक दूसरे के लिए प्रयोग करना हमारी सभ्यता पर कलंक है । इस व्यापक बुराई के विरुद्ध धर्मयुद्ध आरम्भ किया जाय, इसका समय आ गया । यदि हमें संसार की सभ्य जातियों के बीच अपना नाम भी लिखना है तो गाली देने की गंदी आदत को छोड़ना ही होगा ।

इस आदत की बुराई को आसानी से समझा जा सकता है, पर जीभ पर चढ़ी कुटेव को छोड़ना थोड़ा मुश्किल है । इसके लिए आवश्यक है कि इस बुराई के विरुद्ध व्यापक प्रचार किया जाय और लोगों में इस लत को छोड़ने के लिए तैयार किया जाय । यह हो सकता है कि प्रतिज्ञा करने वालों से भी भूल होती रहे और अनायास ही वे गंदे शब्द मुँह से निकल जाया करें । इसके लिए कुछ प्रायश्चित रखा जाना उचित है । दिन में जितनी बार गाली मुख से निकले उसे नोट करते रहें और रात को सोने से पूर्व उतनी बार कान पकड़ कर बैठक लगावें । इसमें न तो कुछ हँसी की बात है और न शर्म की । अपनी गलती को मानना और उसका प्रायश्चित करना बहादुरी का चिह्न है । यदि दिन में छह बार मुख से गाली निकली है तो रात को सोने से पूर्व छह बार कान पकड़ कर बैठक करना उसका उचित प्रायश्चित है । इस प्रक्रिया को जारी रखने से धीरे-धीरे यह आदत छूटती जाती है और कुछ ही दिनों में उससे पूर्णतः छुटकारा मिल जाता है ।

पूर्वाग्रह पर अड़े ही रहना, बुद्धिमत्ता नहीं

प्राचीन और अर्वाचीन की दीवार सत्य और असत्य के निर्णय में सहायक नहीं हो सकती । पुराना अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी । जो नया है उसमें उपयुक्त भी है और अनुपयुक्त भी । यह परख एवं गुण और अगुण की कसौटी पर की जानी चाहिए । उसके नये और पुराने का पक्षपात नहीं रखा जाना चाहिए । जो पुराना सो अच्छा, 'जो नया सो बुरा यह कोई तथ्य नहीं । इसके लिए दुराग्रह करने पर हम सत्य के निकट नहीं, पहुँचते वरन् उससे दूर ही हटते जाते हैं ।

पुराने समय के लोग सत्य की शोध में जितने सफल हुए उसे अन्तिम नहीं मान लेना चाहिए वरन् यह समझ कर चलना चाहिए कि सत्य के परम लक्ष्य तक पहुँचने में अभी लम्बी मंजिल पार करनी है । और उस पर पीढ़ी-पीढ़ी आगे ही बढ़ते ही चलना पड़ेगा । जो निष्कर्ष पूर्वजों ने निकाले वे अन्तिम नहीं थे । उनमें भावी प्रगति का मार्ग अवरुद्ध कर दिया है, यह मानकर नहीं चलना चाहिए । यह समय एक परिस्थिति में जो बात उपयुक्त जँचती है उसमें आगे चलकर सुधार करना पड़ सकता है । ऐसा विशाल दृष्टिकोण रखकर ही सत्य की शोध में प्रगति हो सकती है।

किसी जमाने में पृथ्वी को चपटी-ब्रह्माण्ड का केन्द्र स्थिर माना जाता था । ग्रह गणित का जाँच इस मान्यता पर भी 'फिट' बैठ गया । पीछे उसे ज्ञान में प्रगति हुई । पृथ्वी को गोल असंख्य और मण्डलों में से अपने 'आदित्य' सूर्य का छोटा ग्रह पाँच गतियों में भ्रमण करने वाला माना गया । पुराने आग्रह पर अड़े रहना आवश्यक नहीं । चन्द्रमा और मण्डल का स्वतंत्र ग्रह है, इसी बात पर अड़े रहने से कुछ लाभ नहीं । चन्द्रमा का पृथ्वी का उपग्रह है, इस तथ्य से इन्कार करके यदि पुरातनवादी ही बने रहें तो सत्य से विमुख ही अपने को सिद्ध करेंगे ।

अनेक प्राचीन सिद्धान्त सही हैं । वे जैसे प्राचीन काल में सत्य थे उपयोगी थे—वैसे ही आज भी यथावत् है । सत्य, न्याय, प्रेम, संयम, सदव्यवहार की उपयोगिता भूतकाल की तरह वर्तमान में भी अक्षुण्य है। सत्य के लिए काल का आग्रह उचित नहीं । तन ढकने की आवश्यकता प्राचीनकाल में समझी गई थी वह तथ्य आज भी यथा स्थान है, पर पोषाक जिस तरह की पुराने लोग पहनते थे वैसी ही आज भी पहनी जाय यह आवश्यक नहीं।

सर्दी के दिनों में भारी और गर्मी में हलके वस्त्र पहनने पड़ते हैं। ऋतु-परिवर्तन के साथ-साथ वस्त्रों का स्तर बदल जाता है। बदली हुई परिस्थिति का ध्यान न रखकर यदि कोई व्यक्ति पूर्व परम्परा का पालन करे और एक ही तरह के वस्त्र हर ऋतु में पहनने के लिए अड़ा रहे तो उसे बुद्धिमान नहीं कहा जायेगा। भले ही वह अपने को पुरातन पंथी मानता रहे।

समयानुसार कितनी ही प्रथा-परम्पराओं में भारी हेर-फेर होता रहा है। सघन वन प्रदेशों में कृषि और पशुपालन के लिए भूमि और जल की व्यवस्था देखकर लोग किसी जमाने में बिखरे हुए छोटे गाँव बसा कर रहते थे । हिंस्र पशुओं और दस्युओं से जूझने के लिए आजीविका के लिए बड़े कुटुम्ब की आवश्यकता पड़ती थी । उन दिनों बहु पत्नी प्रथा तथा अधिक सन्तान को सौभाग्य चिन्ह मानने का कारण था, तब उन्हें उचित समझा जाता था । आज के विकसित समाज में बहुपत्नी प्रथा अवांछनीय हो गई और जनसंख्या बढ़ने से संतान निग्रह की आवश्यकता अनुभव हुई । पुरानी मान्यता को बदलने के लिए अड़ने वाला परम्परावादी अदूरदर्शी ही माना जायेगा।

पुरानी रस-भस्में अच्छी मानी जाती हैं, पर पुराना घी कोई नहीं खाता। एक समय की उपयोगी वस्तुएँ समयानुसार निरर्थक हो जाती हैं, तब उसे सुधारने या बदलने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यकता पड़ती है । मान्यताओं और परम्पराओं में भी हेर-फेर होते रहने का क्रम अनादि काल से चल रहा है। उसके लिए हमें अपना मस्तिष्क खुला हुआ ही रखना चाहिए ।

इन मूढ़-मान्यताओं को उखाड़ फेंकना ही श्रेयस्कर है

अपने समाज में कुरीतियों, विकृत परम्पराओं तथा अन्धविश्वासों की भरमार है। ऐसी प्रथाएँ जड़ जमाये बैठी हैं जिनसे अपार हानि होती है, किन्तु लोग इसलिए उन्हें छाती से चिपकाये बैठे हैं कि वे लम्बे समय से चली आ रही हैं । बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा, दहेज-प्रथा, विवाहों में होने वाला अपव्यय, मृत्यु-भोज, छूत-अछूत, पशु-बलि जैसी कुरीतियों से राई-रत्ती भर भी समाज को लाभ नहीं है उल्टे अपार हानि होती है फिर भी जन-सामान्य प्रथा-परम्परा के नाम पर उन्हें अपनाये हुए है। ऐसा लगता है कि उन्हें छोड़ने से वे धर्मच्युत हो जायेंगे। ठीक ऐसी ही एक मूढ़-मान्यता यह है कि सन्तान होना सौभाग्य का तथा न होना दुर्भाग्य का चिन्ह है। इस मान्यता के समर्थन में जो तर्क दिये जाते हैं वे और भी विचित्र हैं।

कहा जाता है कि परलोक में सन्तान के हाथ ही जल-पिण्डदान मिलता है अन्यथा भूखों मरना पड़ता है । दीर्घकाल तक नारकीय यंत्रण सहनी पड़ती है। यही बात औचित्य की कसौटी पर कसी जाय तो खरी नहीं उतरती। थोड़ी देर के लिए उपर्युक्त मान्यता को सच मान लिया जाय तो ऐसी स्थिति में कर्मफल के सिद्धान्त को भी समाप्त करना होगा जिसमें यह कहा गया है कि हर प्राणी को अपने ही कर्मों का फल भोगना पड़ता है, दूसरे का नहीं। बेटे के हाथ का दिया हुआ अन्न ही परलोक में मिलता तो पितरों को भूखों मरने की नौबत आ जाती। तर्पण और पिण्डदान की प्रक्रिया में यदि कुछ सच्चाई है तो मात्र इतनी कि पितरों के प्रति श्रद्धा बनी रहे । धार्मिक कर्मकाण्ड उस श्रद्धा अभिव्यक्ति और मनुष्येत्तर जीवन के प्रति विश्वास को सुदृढ़ बनाने के लिए किये जाते हैं । आवश्यक नहीं कि यह क्रिया-कृत्य पुत्र के हाथों सम्पन्न हो परिवार के अन्य सदस्य जो मृतक से भावनात्मक रूप से जुड़े रहते हैं, भी यह कार्य सम्पन्न कर सकते हैं। अस्तु यह तर्क निराधार है कि पुत्र के हाथों दिया गया पिण्डदान ही पितरों तक पहुँचता तथा उन्हें शान्ति प्रदान करता है।

दूसरा तर्क दिया जाता है कि सन्तान द्वारा वंश चलता है । कुछ व्यक्तियों के सन्तान न होने से उनका वंश डूब ही जाये ऐसा सम्भव नहीं । अपने ही वर्ण और गोत्र के कितने ही सन्तानोत्पादन में पीछे नहीं हैं । वंश प्रक्रिया उनसे भी चलती रह सकती है । अपनी सन्तान न हो तो समाज को हानि नहीं, हर तरह से लाभ ही लाभ है । बढ़ती हुई जनसंख्या, परमाणु विभीषिका की भाँति देश को अपने जाल में जकड़े है । जीवनोपयोगी साधन कम पड़ रहे हैं, ऐसी स्थिति में कुछ व्यक्ति स्वेच्छा से अथवा किन्हीं अन्य कारणों से बच्चों की संख्या न बढ़ायें तो इसे एक प्रकार से युग धर्म का पालन ही कहा जायेगा । सामान्य तथा तीन चार पीढ़ी के बाद लोग अपने पूर्वजों के नाम तक भूल जाते है । कोई मृतक भूत बन जाय और अपने पोते पर पोतों से कुछ पाने की अपेक्षा करे तो उसे हटाने का ही उपक्रम करना होगा । सृष्टि के आदि से अब तक जन्मे मनुष्यों में से यदि प्रत्येक का वंश चला होता तो अब तक अपनी पृथ्वी जैसी लाखों धरती बसाने की आवश्यकता पड़ गयी होती। प्रकृति एक हाथ से वंश वृद्धि का उपक्रम करती है और दूसरे हाथ से बालू से बनाये महलों को बच्चों द्वारा लात मारकर बिगाड़ देने जैसे खेल भी रचती है। वंश नाश भी उसका एक उद्देश्य है ताकि धरती पर दूसरों को भी खड़े होने का अवसर मिलता रहे।

नाम चलने का सीधा सम्बन्ध मनुष्य के कृत्य से है, न कि सन्तानोत्पादन से । मूर्ख से मूर्ख और निकृष्ट स्तर के व्यक्ति भी अपने जैसे कितने ही बच्चे पैदा कर देते हैं पर उससे उनका यश कहाँ बढ़ता है । ऐसा सम्भव रहा होता तो इतिहास के पन्ने उन व्यक्तियों के नाम एवं जीवन चरित्र से भरे होते जो अधिक सन्तान पैदा करने में सक्षम हुए। महान् कार्यों के लिए सदुद्देश्यों में जीवन खपा देने वालों को कोई क्यों कर याद रखता। इतिहास के पन्ने ऐसे महापुरुषों के नामों से नहीं भरे होते पर सच्चाई तो सच्चाई है, इतिहास उसकी उपेक्षा कैसे कर सकता है । नाम और यश उनका अमर होता है जिन्होंने समाज-देश और संस्कृति के लिए कुछ विशेष काम किया हो । नाम और काम वस्तुतः एक दूसरे से अन्योन्याश्रित रूप से जुड़े हुए हैं । नाम यश चलने की परम्परा का सम्बन्ध प्रजनन से होता तो उन व्यक्तियों को कोई क्यों कर श्रद्धापूर्वक याद करता जो जीवनपर्यन्त ब्रह्मचारी रहकर देश, समाज और संस्कृति की सेवा करते रहे। फिर विवेकानन्द को क्यों स्मरण किया जाता ? महर्षि दयानन्द का नाम आज भी क्यों लिया जाता ? सन्तान के आधार पर ही नाम याद रखने की बात में थोड़ा भी औचित्य होता तो योगीराज अरविन्द का नाम कभी का विस्मृत पड़ गया होता । महर्षि रमण और राम कृष्ण परमहंस को असफल व्यक्ति घोषित करना पड़ता मात्र इस आधार पर कि उनकी सन्तानें नहीं थीं । फिर विनोबा जैसे तपस्वियों का त्याग-बलिदान निरर्थक माना जाता, पर यथार्थता तो यथार्थता है । कुरीतियाँ उन्हें प्रकट होने से रोक नहीं सकती।

महँगाई के इस युग में सन्तान का न होना दुर्भाग्य का नहीं वरन् सौभाग्य का चिन्ह है। जिनके ऊपर बच्चों का अनावश्यक बोझ नहीं, उन्हें अपने को सौभाग्यशाली समझकर सन्तोष करना चाहिए। अपनी सामर्थ्य को उन कार्यों में नियोजित करना चाहिए जिसमें समाज एवं देश का कल्याण निहित हो। अपनी सन्तान के अभाव में किसी दूसरे के बच्चे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

को गोद लेने की परम्परा भी आज की परिस्थितियों में उपयोगी नहीं है । सामान्य तथा अपने ही खानदान के किसी बच्चे को वंश चलाने के लिए गोद लिया जाता है तथा उत्तराधिकार में सम्पत्ति देकर जाने की बात सोची जाती है । सम्पत्ति उत्तराधिकार के लोभ में गोद लिये बच्चे की दृष्टि सदा यह रहती है कि मालिक का प्राण कब निकले कि वह हराम का माल शीघ्रतिशीघ्र हड़प कर सके । ऐसे बच्चे कभी भी कृतज्ञ नहीं हो सकते, क्योंकि वे जानते हैं कि उन्हें वंश चलाने के लिए पिण्डदान पाने की, स्वार्थ सिद्धि के कारण गोद लिया गया है । प्राय: देखा यह गया है कि बड़े होते हुए गोद लिए बच्चे अपने कृपाकांक्षी का ही अहित करते और कभी हत्या जैसे अधन्य अपराध करने तक का जाल-जंजाल बुनते हैं ।

बच्चों में यदि अधिक प्यार है अथवा उनसे मनोरंजन करना ही है तो किसी दीन-दुखी के परिवार के बच्चों को पालन-पोषण के लिए लिया जा सकता है । इससे वह बच्चा तथा उसके घर वाले कृतज्ञ होंगे । अपने ही खानदान के समर्थ व्यक्तियों के बच्चों को गोद लेकर स्वयं के लिए संकट मोल लेने की तुलना में यह कहीं अधिक श्रेयस्कर है कि असमर्थ बच्चों के पालन-पोषण का दायित्व वहन किया जाय । यह कहीं अधिक सन्तोष और शान्ति प्रदान करने वाला सिद्ध होगा।

यह अत्यन्त ओछे स्तर की क्षुद्रता है कि अपनी ही स्त्री के पेट के बच्चे अपने माने जायँ और उन्हें ही प्यार दुलार दिया जाय । मदर टेरेसा जैसा प्रेरक उदाहरण भी प्रस्तुत कर सकना सम्भव है । जिन्हें सन्तान उत्पन्न करने की उत्कंठा हो उन्हें भी सर्वप्रथम पत्नी की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति तथा अपनी आर्थिक परिस्थितियों पर बार-बार विचार करना चाहिए । साथ ही यह भी सोचना चाहिए कि क्या उन्होंने नवागन्तुक के पालन-पोषण के लिए अभीष्ट स्तर की योग्यता सम्पादित कर ली है। यदि नहीं तो सन्तानोत्पादन का घृणित दुस्साहस नहीं करना चाहिए । किन्हीं कारणों से जिनकी सन्तानें नही हैं । उन्हें उसे ईश्वर की कृपा मानकर धन्यवाद देना चाहिए । ऐसे व्यक्ति अपने समय श्रम, सामर्थ्य एवं सम्पदा का नियोजन श्रेष्ठ कार्यों में करके सही अर्थों में अपने नाम और यश को अजर अमर बना सकते हैं ।

अवांछनीयताओं को रोकना होगा

जिन सूत्रों ने नारी को हीनता की ग्रन्थियों में जकड़ा है, उन्हीं के लिए उचित है कि अपनी भूलों को सुधारें, पापों का प्रायश्चित करें । अनीति के प्रचलन को समाप्त करने के लिए वे ही आगे आयें । इसके बिना समय आने पर विग्रह खड़े होंगे और प्रतिकार उभरने पर ऐसा माहौल बनेगा जिसमें प्रतिशोध-विग्रह खड़ा होगा और जहाँ शान्ति-सहयोग की आशा की जाती है वहाँ विग्रह, आक्रोश एवं प्रतिशोध का वातावरण उभरेगा। स्वाभिमान की आकांक्षा मनुष्य की मौलिक प्रवृत्ति है । उसे कुछ समय तो अनीतिपूर्वक दबाया जा सकता है, पर वह सदा-सर्वदा के लिए दमन की जाती रहे, यह सम्भव नहीं । पशुओं पर किया गया प्रयोग मनुष्यों पर लागू नहीं किया जा सकता और न यह स्थिर रह सकता है । पशुओं में न्याय-अन्याय का, उचित-अनुचित का भेद करने का माद्दा बहुत कम होता है, फिर वे अनीति का कोई प्रतिकार भी नहीं सोच सकते । इन्हीं कमियों के कारण उनके साथ मनुष्य द्वारा कैसा भी व्यवहार किया जाता और दमित वर्ग द्वारा सहा जाता रहा, पर मनुष्य के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं है । वह कितनी ही मानसिक और शारीरिक विशेषता की प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकता है । आक्रोश को दबा नहीं सकता । प्रतिशोध को सर्वथा छोड़ भी नहीं सकता, वह किसी न किसी प्रकार प्रकट होकर रहेगा, भले ही वह आक्रमण के रूप में या आँसू के रूप में हो । घुटन की प्रतिक्रिया हुए बिना नहीं रह सकती, भले ही उसके पीछे चीत्कार न हो ।

नर और नारी मानवीय दृष्टि के दो अविच्छिन्न अंग हैं । दबाव या अन्याय या आश्रय लेकर ही किसी को कुछ दिन तक वशवर्ती रखा जा सकता है, पर उसकी प्रतिक्रिया को सर्वथा रोका नहीं जा सकता । अनुचित व्यवहार का प्रतिफल अनुचित बनकर ही सामने आ सकता है । क्षमा-विवशता का नाम है अथवा कोई परमहंस योगी उसे पचा सकता है अन्यथा अनीति का प्रतिशोध उभरता ही है और यदि उसे प्रकट होने का प्रत्यक्ष अवसर न मिले तो फिर घुटन बनकर ऐसी विशेषता के रूप में उभरता है जो प्रतिफल की दृष्टि से और भी भयंकर है, पर उनमें ऐसी कहीं कोई गुञ्जायश नहीं है कि एक पक्ष अनीति करता रहे और दूसरा पक्ष सहता रहे । विवशता में इसके लिए मजबूर नहीं किया जाय अन्यथा उससे समूचा सामाजिक ढाँचा लड़खड़ा जायेगा और जो भयानक प्रतिक्रियाएँ प्रतिशोध के रूप में उभर कर आयेंगी, उनकी प्रताड़ना और भी अधिक भयंकर रूप में सहनी पड़ेगी ।

नर और नारी के मौलिक एवं मानवीय अधिकार एक जैसे हैं । दोनों के बीच सहयोग तो रहना चाहिए, पर ऐसा नहीं हो सकता कि दोनों को एक-दूसरे से सर्वथा दूर रहने के लिए बाधित किया जाय । परिवारों की संरचना स्वाभाविक है । उसमें माता-पिता, भाई-बहिन, पिता-पुत्री, भतीजे-भतीजी आदि दोनों वर्ग के लोग मिल-जुलकर रहते हैं । दोनों के बीच पवित्रता और शालीनता भी बनी रहती है। कोई किसी के प्रति न तो विद्वेष करता है, न अनौचित्य बरते जाने की आशंका करता है । फिर बड़ा कुटुम्ब जो समाज कहलाता है, इसी प्रकार की विश्वसनीयता और पवित्रता बरतें तो उसमें उँगली उठाने का प्रश्न क्यों उठाना चाहिए ? एक-दूसरे के मिलन को अविश्वास की दृष्टि से क्यों देखा जाना चाहिए ? छोटी कक्षाओं में तो लड़के-लड़कियों के स्कूल या खेलकूद अलग भी हो सकते हैं, पर बड़ी आयु हो जाने पर वह संख्या घटती जाती है और फिर ऐसा अवसर नहीं रहता कि

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दोनों के लिए पृथक् व्यवस्था का खर्चीला प्रबन्ध सहन किया जा सके । व्यवसाय क्षेत्र में अकेले पुरुष का ही आधिपत्य रहे और महिलाओं को उससे सर्वथा पृथक् रखा जाय, इसमें मानवीय अधिकार कटते हैं और अर्थ-व्यवस्था बनाने में भी दूसरे पक्ष के साथ अनाचार होता है । जब कल-कारखानों में दोनों वर्ग अपने-अपने हिस्से के काम कर सकते हैं, सरकारी दफ्तरों में दोनों को बिना किसी भेदभाव के स्थान मिल सकता है, फिर अन्य क्षेत्रों में दोनों के पृथक्-पृथक् रहने का प्रतिबन्ध क्यों रहे ? खेलकूदों से लेकर अन्यान्य प्रतिस्पर्द्धाओं में जब लड़के और लड़कियाँ समान रूप से भाग लिया करते हैं, तो घर-गृहस्थी के, अन्यान्य समाज व्यवहार के तथा उत्पादन उपार्जन के क्षेत्र में ऐसी पृथकता क्यों अपनानी चाहिए कि यह कार्य नारियों के लिए प्रतिबन्धित है और उसे नर के लिए ही सुरक्षित रखना चाहिए । यह बरताव तो ईश्वर की व्यवस्था में सीधा हस्तक्षेप है ।

सम्भवत: मध्यकाल में यह कुरीति पनपी हो कि नर और नारी के बीच पवित्रता और शालीन सहयोग के रिश्ते शिथिल पड़ गये हों और नारी वर्ग के प्रति नर की कुदृष्टि ही पनप गयी हो । ऐसे अवांछनीय समय में संभवत: यह उचित समझा गया हो कि दोनों वर्गों के प्रति दूरी बनाये रखा जाय। सहयोग में अश्लीलता की गंध सूँघी जाने लगी हो, तब संभवत: विलगाव की प्रथा चल पड़ी हो । पर यह न तो भारतीय परम्परा का प्रचलन है और न इसके पीछे नीति-सदाचार का कोई अनुबन्ध बाधक होता है । यह प्रथा भारत को छोड़कर जहाँ-तहाँ मुट्ठी भर देशों में ही देखी जाती है । संभवत: वहाँ ऐसी विवशता आड़े आई हो और ऐसे प्रचलन को आश्रय मिला हो, पर आज भूगोल के नक्शे पर दृष्टिपात किया जाय तो अधिकांश दुनिया में नर-नारी के बीच बिना किसी भेदभाव का सहयोग ही चलता दिखाई पड़ेगा। इससे वहाँ लाभ ही हुआ है। आधी जाति को अपने पराक्रम, पुरुषार्थ और दक्षता का प्रतिफल प्राप्त करने का अवसर मिल रहा है तो उसमें औचित्य ही है । पर्दे के पीछे व्यभिचार को पनपने का अधिक अवसर मिलता है, जबकि खुले सहयोग में वैसी कुसंभावनाएँ कम ही रहती हैं । परिवारों में दोनों पक्ष मिलजुल कर ही रहते और काम करते हैं। बड़े परिवार, समाज में कोई कार्य मिल-जुलकर ही कार्यान्वित हो तो उसमें क्या बुराई है? वस्तुत: जहाँ अनीति और कुदृष्टि होती है, वहाँ ही फूट सात पर्दे के पीछे रहते हुए भी अनर्थ करने के लिए अवसर ढूँढ़ निकालती है। पर जहाँ भाई-बहिन, पिता-पुत्री, माता-सन्तान जैसे पवित्र संबंध को मान्यता मिली हुई हो, वहाँ सहयोग में किसी प्रकार की बाधा नहीं आती। यदि रोकथाम करनी ही हो तो नर-नारी के बीच कुदृष्टि की अवांछनीयता को रोका जाना चाहिए। बीमारी खाँसी की हो और दवा बुखार की दी जाय, तो इससे क्या बनने वाला है ।

अनेक देशों, वर्गों और समुदायों में पिछले दिनों नर-नारी के बीच पर्दा रखने का रिवाज चलता रहा है। संभव है वहाँ बहु विवाह की प्रथा रहने के कारण ऐसी आशंका समझी गई हो और कुशंका को ध्यान में रखते हुए पर्दा प्रथा संबंधी अनुबंधों को प्रश्रय मिला हो। पर इन दिनों अधिकांश देशों में ऐसा वातावरण नहीं है। सुरक्षा के लिए नारी को भी वैसी ही स्थिति प्राप्त है जैसी नर को। शिक्षा की सहायता से किसी भी वर्ग की अवांछनीयता को रोका जा सकता है, फिर सामाजिक प्रचलनों का भी तो अपना दबाव होता है। समुन्नत देशों में राष्ट्रीय प्रगति के क्रम में नारी भी नर के समान ही भाग लेती है। दोनों ही वर्ग समर्थ और समृद्ध हैं। शिक्षा और योग्यता में भी कोई किसी से पीछे नहीं। ऐसी दशा में यह क्यों माना जाय कि अपने ही यहाँ कोई गड़बड़ी फैलेगी और पारस्परिक सहजीवन के कारण चारित्रिक या दूसरे प्रकार की विकृतियाँ पनपेंगी। जहाँ अनर्थों की वृद्धि हो, वहाँ साज-सज्जा का आकर्षण अथवा दृष्टिकोण में अवांछनीयता का समावेश ही प्रमुख कारण है। यही नैतिक, चारित्रिक एवं सामाजिक स्वस्थ विकास के सिद्धान्त हैं। उदयीमान को समझाया जाय तो मनुष्य अपनी भलाई-बुराई स्वयं समझ सकता है और खतरे से बचे रहने की प्रवृत्ति को सहज ही पनपने दे सकता है।

शरीर विज्ञान के रहस्यों को यदि सही ढंग से समझाया जाय और स्वस्थ रहने तथा बीमार पड़ने के भेद को गंभीरता पूर्वक समझा जाय, तो हर युवक और युवती को यह भान होगा कि समय से पहले अनुचित छेड़छाड़ करना अपने ही पैरों कुल्हाड़ी मारना है। विष खाने, आग पकड़ने की हानियों को जब मनुष्य समझ सकता है और ऐसे खतरों के अवसरों से अपने को सतर्क रख सकता है, तो कोई कारण नहीं कि कच्चे फल तोड़ने जैसी मूर्खता करने के लिए कोई समझदार आगे कदम बढ़ाये।

वैज्ञानिक प्रगति के बाल-विवाहों के फलस्वरूप होने वाले असंख्यों अनर्थों की लम्बी सूची सर्वसाधारण के सामने प्रस्तुत की है। इस जल्दबाजी में लड़के और लड़की दोनों ही अपने स्वाभाविक विकास पर बुरी तरह कुठाराघात करते हैं। अनेकों बीमारियों के शिकार बनते हैं। अगली पीढ़ियों को गई-गुजरी बनाते हैं, साथ ही उस बौद्धिक क्षमता से वंचित रह जाते हैं जो अपनी परिपक्वता के लिए पुरुषों जितना ही समय चाहती है। इस कुप्रथा से बचा जा सके एवं कुदृष्टि की हानियों को रोका जा सके तो नर और नारी को दूर-दूर रखने की आवश्यकता ही न पड़े समाज की सर्वांगीण प्रगति का मार्ग प्रशस्त होने लगे।

भेदभाव की इन जड़ों को उखाड़ फेंकें

समाज शास्त्री फ्रेंकल का मत है कि "किसी भी व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक शक्तियों का समुचित लाभ समाज स्वतन्त्रता की स्थिति में ही उठा सकता है। यह स्वतन्त्रता राजनीतिक ही नहीं वैचारिक क्षेत्र में भी होनी आवश्यक है। यह विचित्र विडम्बना ही है कि स्वतन्त्र होते हुए भी कितने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ही पिछड़े देशों की नारियों की स्थिति गुलामों से बेहतर नहीं है। वैचारिक क्षेत्र में उनकी परतन्त्रता देखते ही बनती है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव उस समाज पर पड़ता है जिसमें वे रहती हैं। वह पिछड़ेपन से ग्रस्त रहता तथा उसकी प्रगति अवरुद्ध बनी रहती है। जिस भी समाज को उठना तथा द्रुतगति से आगे बढ़ना हो उसे सर्वप्रथम नारी को पराधीनता के पाश से निकालना होगा तथा समानता का दर्जा देकर उसके विकास के लिए प्रयत्न करना होगा।''

फ्रेंकल ने जिन देशों की ओर इशारा किया है उनमें अपना देश भी एक है। एक समय था कि यहाँ नारी देवी के रूप में मातृशक्ति के रूप में पूजी जाती थी। समाज में उसे विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त थी। हर कार्य में वह पुरुष से कन्धा से कन्धा मिलाकर सहयोग देती थी। समान दर्जा एवं सम्मान मिलने का ही परिणाम था कि समाज भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही दृष्टियों से प्रगति के शिखर पर था। न कहीं अभाव था न कहीं विपन्नता। चारों ओर सुख-सन्तोष की परिस्थितियाँ दृष्टिगोचर होती थीं।

अधःपतन का युग तब शुरू हुआ जब से नारी को अन्य वस्तुओं की तरह मात्र उपभोग की वस्तु माना गया-उसे कामिनी, रमणी, भोग्या की विकृत उपमाओं से अलंकृत किया गया। मध्यकालीन युग की विकृतियों ने नारी का जो स्वरूप उजागर किया, उसकी इतिश्री नहीं हुई। जनमानस के मन-मस्तिष्क में सदा सर्वदा के लिये नारी को कनिष्ठ मानने-पुरुष की तुलना में हेय समझने की प्रवृत्ति ने अपनी जड़ें गहरी जमा लीं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी नारी की स्थिति को अधिक बेहतर नहीं कहा जा सकता। अनेकानेक प्रयत्नों-सुधार आन्दोलनों के बावजूद भी नारी अपनी गरिमामयी स्थिति नहीं प्राप्त कर सकी।

इसे प्रगतिशीलता का परिचायक समझा जाय कि लड़की का जन्म होते ही अपनी प्रगति ढिंढोरा पीटने वाले अधिकांश व्यक्ति ऐसी मुख मुद्रा बनाते देखे जाते है जैसे दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा हो जबकि वे ही लड़का जन्मते ही इतने प्रसन्नचित देखे जाते हैं जैसे कि कोई बड़ी रकम की लाटरी खुल गयी हो। समझदारी, नासमझी दोनों ही की यह मूर्खता कितनी ही सामाजिक समस्याओं को जन्म देती है यह उन्हें कैसे और किस प्रकार समझाया जाय। यह भेदभाव ही दहेज प्रथा को प्रश्रय देता है, लड़कियों की विवाह समस्या तथा विवाहोपरान्त भी कितनी ही प्रकार की समस्याओं को जन्म देता है, यह उन्हें कैसे बताया जाय? दहेज प्रथा उन्मूलन के लिए रुग्ण वृक्ष के पत्ते तोड़ने जैसे उपाय ढूँढने वाले बालबुद्धि सम्पन्नों को यह कैसे बताया जाय कि समस्या की जड़ें लड़के-लड़की के बीच भेद-भाव, छोटा-बड़ा मानने की उस विकृत प्रवृति में सन्निहित हैं जिस पर प्रायः शायद ही किसी का ध्यान जाता हो।

प्रगति के इस युग में जबकि संसार के प्रगतिशील समाज निरन्तर आगे बढ़ने के लिए प्रयत्नशील हैं, नर-नारी के बीच भेदभाव बना रहना पिछड़ेपन का चिन्ह है। विचारशीलों ने मानसिक क्षमता एवं कार्य-कुशलता को ही प्रमुखता दी है। उम्र, लिंग, जाति, वंश, गोत्र के आधार पर किसी का वर्चस्व स्वीकार कर लेने की परम्परा बीते युग की बात हुई, यह संसार के सभी विज्ञजन अब स्वीकार करने लगे हैं। आधुनिक समाज डेमोक्रेटिक सिद्धान्तों को अधिक उपयोगी मानने लगा है। ऐसे में नर नारी के बीच मात्र लिंग के आधार पर भेदभाव बरता जाना पिछड़ेपन का ही चिन्ह माना जाएगा।

शरीर की बनावट, मानसिक प्रकृति की दृष्टि से स्त्री, पुरुष के बीच थोड़ा अन्तर है। यह देखा गया है कि कठोर शारीरिक श्रम पुरुष स्त्री की तुलना में अधिक समय तक करते रह सकता है जबकि नारियाँ गृह व्यवस्था, कला-संगीत के कार्यों में अधिक निपुण पायी जाती हैं । यान्त्रिक कार्यों में पुरुष कुशल होता है जबकि प्रत्यक्ष ज्ञानबोध, मौखिक वाद-विवाद प्रतियोगिता, भाषा विषयक समस्याओं के क्षेत्र में स्त्रियाँ आगे होती हैं। नारी के भीतर नागरिकता, सामाजिकता, मिलनसारिता के गुण अधिक होते हैं जबकि पुरुष उग्रवादी स्वभाव के अधिक देखे जाते हैं। पर ये बायोलॉजिकल तथा साइकोलॉजिकल फैक्टर इतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं कि जितना एक को उनके आधार पर वरिष्ठ मान लिया जाय तथा दूसरे को कनिष्ठ।

औचित्य की कसौटी पर कसा जाय तो पलड़ा नारी का ही भारी पड़ता है। अपनी भावनात्मक विशेषताओं के कारण वह नैसर्गिक रूप से महान है । गर्भ में शिशु का पालन, शिशु जन्म के उपरान्त अनेकानेक कष्टों को सहन करते हुए भी सदा प्रसन्न रहना उसकी असाधारण सहिष्णुता का परिचायक है । बच्चे को माँ का वह अनुदान न मिले तो उसका विकास सम्भव न हो सकेगा। अपने दमन का सहारा पुरुष को न दे-दाम्पत्य की छत्र-छाया प्रदान न करे तो पुरुष उच्छृंखल, लम्पट, मर्यादाहीन बनकर अनैतिक आचरण करने लगे।

प्रकृति प्रदत्त अगणित विशेषताओं के कारण ही विश्व की सभी प्रगतिशील संस्कृतियों ने मातृशक्ति का अभिनन्दन किया है। खानाबदोशों तथा जंगली जातियों को छोड़कर अधिकांश समाजों में नारी को सम्माननीय स्थान प्राप्त है। वेविलोनिया, इजीप्ट, फोनिशिया आदि देशों में तो आज भी मातृशक्ति की पूजा अर्चना की जाती है। वेविलोनिया में नारी को श्रद्धापूर्वक 'इशतार' नाम से, फोनेशिया में असटारसे, इजिप्ट में आइसिस नाम से पुकारा जाता है। भारत में भी देवी, दुर्गा गायत्री आदि शक्तियों की पूजा मातृशक्ति के रूप में की जाती है।

पर दूसरे देशों ने नारी के प्रति सम्मान मात्र पाषाण प्रतिमा तक सीमित नहीं रखा है बल्कि उसे समानता का दर्जा देकर अपनी श्रद्धा का सच्चा उदाहरण प्रस्तुत किया है। जापान, जर्मनी, इटली, डेनमार्क, यूगोस्लाविया, स्वीडेन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूस, इसराइल, चीन, जैसे अनेकों देश हैं जहाँ नारियों ने न केवल समानता का कानूनी दर्जा प्राप्त किया है वरन् सामाजिक क्षेत्र में भी समान अवसर एवं प्रतिष्ठा पाकर समाज की प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया है।

अवसर मिल सके तो अपने समाज में भी वे उसी तरह हर क्षेत्र में पुरुष को सहयोग कर सकती हैं, जिस प्रकार अन्य प्रगतिशील देशों की नारियाँ कर रही हैं। जिन क्षेत्रों में उन्हें वह सुविधायें मिली हैं, उन्होंने अपनी कार्यकुशलता का प्रमाण भी प्रस्तुत किया है। पर इतने पर भी उनकी स्थिति में अधिक सुधार नहीं हो सका है। कारण क्या है? इस पर गम्भीरता से विचार करते हैं तो यही निष्कर्ष निकलता है कि नर, नारी के बीच भेदभाव की जड़ें मान्यताओं के क्षेत्र में गहराई तक प्रतिष्ठापित हैं जिन्हें अनवरत पोषण मिलता रहा है। धार्मिक अन्ध-विश्वासों की भी उसे पोषण देने में एक भूमिका रही है। पुत्र के बिना स्वर्ग मुक्ति नहीं मिलती है, इस अन्ध-विश्वास ने उस भेदभाव की जड़ों को और भी मजबूत किया है।

मान्यताओं की जड़ें कितनी गहरी तथा प्रभावकारी हो सकती हैं, इसे अपने समाज में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। बीसवीं सदी के वैज्ञानिक युग में संसार के हर प्रगतिशील देश के नर-नारी परस्पर पूरक तथा अभिन्न घटक बनकर सहयोगी की भूमिका निभाते हुए अपने देश एवं समाज की प्रगति में योगदान दे रहे हैं। नर-नारी के बीच वरिष्ठता, कनिष्ठता जैसी भेदभाव की प्रवृत्ति उनमें नहीं दिखायी पड़ती। लड़के-लड़कियाँ समाज से समान-सुविधायें, समान प्रतिष्ठा तथा विकास के अवसर प्राप्त करते हैं। समानता की इस दृष्टि के कारण ही वे निरन्तर आगे बढ़ते जा रहे हैं और बढ़ते ही जायेंगे।

अपने समाज की यह दुर्भाग्यपूर्ण विडम्बना है कि प्रगति के इस युग में भी समाज के अधिकांश व्यक्ति चाहे शिक्षित हों अथवा अशिक्षित, उन दकियानूसी विचारों तथा मान्यताओं से ग्रस्त हैं जिनके कारण अगणित समस्याएँ पनपती-पोषण पाती तथा घुन की तरह समाज को खोखला बनाती हैं। पर मरी लाश की तरह उन मान्यताओं को हम सीने से चिपकाये हुए हैं जिनमें औचित्य का राई रत्ती भर भी नहीं, उल्टे उन्हें अपनाने से हानियाँ अनेक हैं।

नर-नारी, लड़के-लड़की में भेदभाव की प्रवृत्ति प्रगति शीलता का नहीं पिछड़ेपन का परिचायक है। इस संबंध में कहा एवं लिखा बहुत कुछ जाता रहा है, पर व्यावहारिक धरातल पर उसे कितना चरितार्थ किया गया है, यह पता लगाना हो तो समाज का गहराई से अध्ययन करना होगा।

इस सम्बन्ध में आने वाले समय पर निष्कर्ष वास्तविकता का रहस्योद्घाटन करते हैं यह बताते हैं कि शिक्षित एवं अशिक्षित दोनों ही वर्गों में लड़के-लड़कियों को वरिष्ठ-कनिष्ठ मानने की प्रवृत्ति बनी हुई है। भारतीय पोषक आहार संस्थान द्वारा किये गए एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में अधिकांश महिलायें नवजात लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को अपना दूध पिलाने में अधिक रुचि लेती है। गरीब वर्ग की ९० प्रतिशत मातायें स्वयं कुपोषण का शिकार होने पर नवजात लड़कों को तो पूरी रुचि के साथ स्तनपान कराती हैं। जबकि नवजात लड़कियों को मात्र ७२.७ प्रतिशत महिलायें ही अपना दूध पिलाती हैं।

संस्थान के विशेषज्ञों का कहना है कि कन्याओं के प्रति माँ की उदासीनता का उनके आर्थिक स्तर से कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि अमीर वर्ग की महिलाएँ भी लड़के के पालन पोषण पर ही अधिक ध्यान देती हैं। दिए गए अपने रिपोर्ट में उन विशेषज्ञों ने कहा है कि यदि पहली सन्तान लड़की होती हैं तो उसके प्रति परिवार का रुख थोड़ा उदार रहता है पर यह उदारता तभी तक कायम रहती है जब तक कि लड़की इकलौती सन्तान है। उनकी संख्या बढ़ने पर अभिभावकों को खीझ उत्पन्न होती है जबकि लड़कों की वृद्धि की स्थिति में वह मनोवृत्ति नहीं दिखायी पड़ती ।

नारी होकर भी मातायें स्वयं लड़के-लड़की में लड़की को कनिष्ठ मानकर उपेक्षा बरते इसके लिए प्रत्यक्षतः उन्हें दोषी ठहराया जा सकता है। पर इस मनोवृत्ति का कारण ढूँढ़ना हो तो अध्ययन जन सामान्य के मानस का करना होगा जिसकी गहरी परतों में लड़की को 'नम्बर दो' का प्राणी मानने की हेय प्रवृत्ति अपनी गहरी जड़ें जमाये हुए है। उसे उखाड़ने उन्मूलन करने की बात न सोची गयी तो वह भेदभाव जो सदियों से चला आ रहा है, अभी सैकड़ों वर्षों तक और भी चलता रहेगा और उसकी विषाक्तता दहेज प्रथा से उत्पन्न जलाने, मारने के घिनौने अमानवीय कारनामों के रूप में दृष्टिगोचर होती रहेगी।

कुरीतियाँ कैसे मिटें, कैसे हटें

क्या उचित है और क्या अनुचित? क्या करने में लाभ है तथा क्या करने से हानि होगी? इसका निष्कर्ष निकालने और किधर चलना है तथा किधर नहीं चलना है? इसका निर्णय करने में समर्थ उपयुक्त बुद्धि परमात्मा ने मनुष्य को दी है। वह इसका उपयोग भी करता है किन्तु देखा जाता है दैनिक जीवन की साधारण बातों में तो विवेक ठीक काम करता है किन्तु वही विवेक किन्हीं महत्वपूर्ण मामलों में कुंठित हो जाता है। उदाहरण के लिए परम्पराओं को ही लिया जाए, समाज में अच्छी परम्पराएँ भी प्रचलित हैं तथा बुरी परम्पराएँ भी। स्वस्थ परम्पराओं और उत्कृष्ट आचरण के लिए प्रत्येक समाज में स्थान है साथ ही कुछ बुराइयाँ और कुरीतियाँ भी सभी समाजों में प्रचलित हैं। दोनों में से किसी को भी चुनना व्यक्ति के स्वयं के ऊपर निर्भर है।

क्या कारण है कि लोग कुरीतियों और बुराइयों को प्रश्रय देते हैं तथा उन परम्पराओं को अपनाए चले जाते हैं, जो परिणाम में अहित कर ही हैं? इसके उत्तर में यही कहना पड़ेगा कि परम्पराओं का चुनाव करते समय व्यक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का विवेक कुंठित पड़ जाता है तथा आन्तरिक असहमति होते हुए भी वह पानी में बहते हुए तिनके की तरह अनिच्छित दिशा में बहने लगता है। परम्पराओं को चुनने में सावधानी बरती जाए, विवेक बुद्धि, का उपयोग किया जाए तथा कुरीतियों की अवमानना करने, उन्हें प्रश्रय न देने का साहस बरता जाए तो समाज में व्याप्त कुप्रथाओं को देखते ही देखते जड़ मूल से उखाड़ा जा सकता है।

ऐसी बात नहीं है कि लोग कुरीतियों और सुरीतियों का अन्तर न जानते हों । लड़का बेचने की, दहेज लेने या देने की बुराई को कौन नहीं स्वीकार करता ? इसके द्वारा होने वाली हानियों से कौन अपरिचित है? शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति मिले जो खुलेआम दहेज प्रथा का समर्थन कर सके। इतने पर भी जब अपना लड़का विवाह योग्य होता है तो हर व्यक्ति का मन दहेज पाने के लिए ललचा उठता है। जो व्यक्ति अपनी कन्या का विवाह करते समय दहेज का घोर विरोधी था, दहेज माँगने वालों की कटु शब्दों में आलोचना-भर्त्सना करता था, वही जब अपने लड़के के विवाह में बेटी वालों का कलेजा निकालने की पेशकश करता है, तब लगता है कि यह बुराई मनुष्य में लोभ वृत्ति के निर्लज्ज सीमा तक पहुँच जाने का ही प्रतिफल है।

दहेज का अभिशाप हर भारतीय परिवार के गले फाँसी बना हुआ है। इस तथ्य से कोई इनकार नहीं करता। ऐसी हत्यारी, अनैतिक और नृशंस प्रथा का समर्थन करने के लिए किसी के पास कोई तर्क नहीं। फिर भी देखा-देखी के कारण हो अथवा परम्पराओं के कारण, इस प्रथा का निर्वाह इसलिए किया जाता है कि लोग लड़की के समय जो चेहरा ओढ़े रहते हैं लड़के के समय उसे तुरन्त बदल देते हैं तथा दूसरा मुखौटा पहन लेते हैं। लोभ वृत्ति के कारण की जाने वाली इस बेईमानी का परित्याग किया जा सके तो देखते ही देखते समाज को इस कुरीति से मुक्त किया जा सकता है। इतना साहस करने के बाद देखा-देखी ऐसा करने का बहाना बनाने की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी।

इस स्थिति में जागृत विवेक कहेगा कि देखा-देखी ही करना है तो इस बुराई को प्रश्रय देने के स्थान पर अच्छाई को क्यों न अपनाया जाए। देखा-देखी के लिए ऐसे हजारों उदाहरण पहले से ही विद्यमान हैं जिनमें लोगों ने अत्यन्त सादगी और मितव्ययता के साथ विवाह कार्य सम्पन्न किया। इन आदर्शों की परम्परा निभाने में क्या कठिनाई है। समाज में बुरी से बुरी और अच्छी बातें प्रचलित है। अच्छी बातों को अपनाने में क्या अडचन है।

सही बात तो यह है कि अच्छे बुरे का विवेक करने की सामर्थ्य अपने पास होते हुए भी मन जिन्हें अपनी रुचि के अनुकूल मान लेता है, उन्हीं का अनुकरण करता है। जो बातें अपनी रुचि के प्रतिकूल होती हैं उन्हें अपवाद मानता है और उन्हें छोड़ देता है क्योंकि कोई भी प्रथा-परम्परा निरपवाद और सर्वमान्य नहीं है। अपनी मानसिक या नैतिक दुर्बलता के कारण ही व्यक्ति सही परम्पराओं की तुलना में बुरी परम्पराओं को चुनता है और समाज में रहता है तो परम्परा तो निभानी ही पड़ती है, का बहाना किया करता है। लोकापवाद या समाज निन्दा के भय से ऐसा करने की विवशता उत्पन्न होने का कारण बताता है। इस तरह के तर्क सर्वथा असंगत और बहाने बाजी के सिवा कुछ नहीं हो सकते क्योंकि आदर्शवादिता को अपनाने और सुरीतियों का समर्थन देने का साहस किया जाए तो इस विवेकशीलता को सर्वत्र सराहा जाएगा तथा दुर्बल मनोभूमि के व्यक्ति भी इसका अनुकरण करने के लिए उत्साह स्फुर्त होता अनुभव करेंगे।

इस तरह की कई कुरीतियाँ केवल थोड़ा-सा साहस न कर पाने के कारण प्रचलित हैं और उन्हें रोकने के लिए कानून बन जाने, विचारशील व्यक्तियों द्वारा निंदित होने के बावजूद भी प्रचलित है। सभी कोई जानते हैं कि देवताओं के आगे अपनी कोई मनौती मानने के लिए पशु-पक्षियों की बलि चढ़ाना हृदयहीनता का कार्य है। हर कोई जानता है कि दूसरों को कष्ट देने का परिणाम आज तक किसी के भी लिए श्रेयस्कर नहीं हुआ है। अपकार के बदले कभी भी सुख नहीं मिला है। इतने पर भी परम्परा भक्त अन्ध श्रद्धालु व्यक्ति यह सब करते हैं। ऐसा क्यों नहीं सोचा जाता कि जो लोग बलि नहीं चढ़ाते, उनके देवता भी तो प्रसन्न रहते हैं। उनकी मनोकामनाएँ भी तो पूरी होती हैं उनका अनुकरण करने में क्या बाधा है ?

पर्दा प्रथा अपनाने के कारण महिलाओं को अस्वस्थता, परावलम्बी, अशिक्षित, अनुभवहीन और आत्महीनता की ग्रन्थि के ग्रास बनाये रहने में कौन-सी समझदारी है। साथ के सभी देशों और समाजों में अब महिलाएँ पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर काम कर रही हैं और अपने देश व समाज को प्रगति पथ पर अग्रसर कर रही है तो उस परम्परा को क्यों न अपनाया जाए, ताकि नारी की सुविकसित क्षमता का लाभ उसे स्वयं को, अपने परिवार को तथा सारे समाज को मिल सके। पिंजड़े में बन्द पक्षी की तरह नारी को घर की चार-दीवारी के भीतर ही कैद रखना न तो बुद्धिमत्तापूर्ण है और न ही दूरदर्शिता युक्त। इसलिए इस मूर्खता को प्रश्रय देने का कोई औचित्य नहीं है।

कहा जा चुका है कि समाज में भली और बुरी दोनों ही प्रकार की प्रथाएँ प्रचलित हैं। उनमें से केवल बुरी प्रथाओं को ही चुनना अपनी व्यक्तिगत दुर्बलता, मूर्खता, भीरुता और प्रतिगामिता का परिचय देना है। कुरीतियों और अनुपयुक्त हानिकारक प्रथा-परम्पराओं को छोड़ने में कभी कोई विशेष कठिनाई नहीं होनी चाहिए। संभव है प्रचलित परम्पराओं की उपेक्षा करने पर कुछ लोक निन्दा आलोचना करें। उनकी परवाह करने की आवश्यकता नहीं है। लोग तो चोरी, बेईमानी और बदमाशी करते हुए भी लोग निन्दा की चिन्ता नहीं करते फिर सन्मार्ग पर चलते हुए यदि लोक निन्दा का सामना करना पड़ता है तो उसमें घबड़ाने की क्या बात है। इस कार्य को करते हुए तो प्रसन्नतापूर्ण

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गौरव अनुभव करना चाहिए और लोक निन्दा भी हमेशा कहाँ होती है। लोग दो चार दिन आलोचना कर चुप हो जाते हैं तथा अपने काम में लग जाते हैं। किसे फुरसत है कि दिन रात आलोचना ही करता रहे।

प्रत्येक विचारशील व्यक्ति को समाज में स्वस्थ परम्पराओं का प्रचलन करने के लिए उत्साहपूर्वक आगे आना चाहिए। सच्चाई और बुद्धिमानी के मार्ग को अपनाते हुए अकेले ही आगे बढ़ा जाए तो भी कोई हर्ज नहीं है। संसार में अनेक महापुरुषों ने अकेले होने की चिन्ता किये बिना अपना पथ आप प्रशस्त क्रिया है स्मरण रखा जाना चाहिए कि अन्धपरम्पराओं और कुरीतियों की जड़ मनुष्य की भीरुता में छुपी हुई है अन्यथा प्रत्येक व्यक्ति उनकी हानियों से भलीभाँति परिचित है, अभाव है तो केवल साहस का, संकोच दूसरों को वैसा करते हुए न देखने से ही होता है। थोड़े से मनस्वी लोग इस तरह के प्रयास आरम्भ करें तो शेष अपने आप पीछे आ जाएँगे।

दुर्बल बनाने वाली प्रतिगामिता से मोर्चा लेना होगा

भगवान बुद्ध के धर्मचक्र प्रवर्तन में परिव्राजकों की तरह परिव्राजिकाओं की संख्या भी प्राय: समान और लाखों की संख्या में थी। उतना बन पड़ने से ही-**बुद्धं शरणं गच्छामि** का उद्घोष तत्कालीन विचार क्रान्ति के रूप में विकसित हुआ था और संसार भर की दिशा बदलने के लिए बाधित करने में उसने अद्भुत और अभूतपूर्व भूमिका निभाई थी। ईसाई धर्म के विस्तार में पुरुष पादरियों की तरह महिला ननों का योगदान भी बढ़-चढ़कर ही प्राय: समान स्तर का देखा गया है।

अगली शताब्दी में नवयुग के गंगावतरण में नारी की भूमिका ही प्रमुख रहने जा रही है। आधी जनसंख्या का पुनरुत्थान सुनिश्चित है। उसे न केवल अपनी योग्यता बढ़ाकर उसका मूल्य नौकरी के पैसों के रूप में वसूल करके सुविधा-सम्पदा का समय बिताना है,वरन् ऐसा कुछ करना है जिसे अरुन्धती, अनुसूया स्तर का कहा जा सके । सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा के रूप में विश्ववंद्य नारी शक्ति को अब न कामिनी बनकर रहना होगा और न उसे वर्तमान गई-गुजरी स्थिति में क्रीतदासी की तरह दिन गुजारने तक सीमित रहने के लिए बाधित किया जा सकेगा। इन बंधनों में बाधित रहने पर उनके कदम उस लक्ष्य की ओर कैसे बढ़ सकेंगे जिस पर कि न उसे स्वयं पहुँचना है, वरन् समूचे संसार को अवगति से उबार कर प्रगति के उच्च शिखर तक पहुँचाना है। इस नियति से प्रतिभावान भावनाशील महिलाएँ यदि इन्कार करें तो उन्हें घाटा ही पड़ेगा । आत्मप्रताड़ना उन्हें चैन से बैठने भी तो नहीं देगी । इस खींचतान के बीच वे शान्ति से रह भी तो नहीं सकेंगी। भलाई उसी को अपनाने में है जो उनके लिए नियत ने पूर्व निर्धारित कर रखा है।

लोकसेवी महिलाओं की आवश्यकता इन दिनों और भी अधिक पड़ेगी जबकि महाकाल ने नारी के कंधों पर अगली सदी के हर पक्ष को समुन्नत बनाने का दायित्व लादा है। उससे इन्कार करके पीछा छुड़ाने और किसी प्रकार यथास्थिति में रहकर दिन गुजारने से भी काम चलने वाला नहीं है। महाकाल का निर्धारण हर जागृत आत्मा को झकझोरेगा कि आत्म-व्यथा प्रकट करने और उसका उपचार खोजने के लिये बाधित होना पड़ेगा। इसके लिए जन सम्पर्क में आना ही होगा। महिलाओं को सर्वथा अलग करके कोई आन्दोलन, अभियान या आयोजन संभव नहीं हो सकता। सुधार का सर्वांगीण प्रयोजन नारी से ही नर में भी कुछ करने के लिए बाधित करेगा। वृद्धाओं की तुलना में नवोदित स्तर की समाज सेविकाएँ ही कुछ महत्वपूर्ण पराक्रम दिखा सकेंगी। कार्यक्षेत्र इतना गुँथा हुआ है कि नर और नारी को सर्वथा पृथक करके एक कदम भी नहीं चला जा सकता। इस दिशा में कदम उठाने पर वह लोकोपवाद सामने आता है जो बहुप्रचलन के कारण संभ्रान्त लोकसेवियों को भी अपनी चपेट में ले लेता है और चर्चा का विषय बन जाने पर लोकसेवी की क्षमता-शक्ति में भारी कटौती हो जाती है। उसकी सफलता बहुत धीमी चाल से ही किसी प्रकार चल पाती है।

पर्वतारोही जानते हैं कि कदम उठाने के दिन से लेकर शिखर पर पहुँचने तक आये दिन कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। तपस्वियों की तपश्चर्या और महामानवों की सेवा-साधना ही उन्हें देवोपम समझे जाने की स्थिति उत्पन्न करती है। उत्साह के लिए, विश्व-कल्याण के लिए, निजी जीवन को कृतकृत्य बनाने के लिए जिन आदर्शवादी महिलाओं को महानता तक पहँचने वाले मार्ग पर चलना है, उन्हें उसके लिए पूर्व तैयारी में जुट जाना चाहिए ।

उन्हें प्रथम और प्रधान इस खतरे के प्रति जागरूक और संघर्षरत होना पड़ेगा कि उन परकामुकता का जाल तानने वालों के चंगुल में न फँसने के लिए तत्पर रहना चाहिए, अन्यथा यही नर-पिशाच ही तो भावुक प्रकृति वाली महिलाओं का सर्वनाश करते हैं। उनकी आदर्शवादी उमंगों को तोड-मरोड कर कहीं से कहीं पहुँचा देते हैं जनता की दृष्टि में अप्रामाणिक सिद्ध करते हैं और सामान्य जीवन को दलदल में फँसा देने वाला संकट खड़ा करते हैं। प्रेम पत्र लिखवाकर उनको उजागर करने की धमकी देते हैं और मनमानी कीमत वसूल करते हैं । उनकी, उनके परिवार की इज्जत मिट्टी में मिला देने में कोर-कसर नहीं रखते, तब आँखें खुलती हैं कि यह प्रेम-प्रलोभन देने वाले वस्तुत: बुरी किस्म के नर-भक्षी भेड़िये भर थे। इन्हीं की करतूतें हैं कि दर-दर की ठोकरें खाने वाली, सब कुछ गँवा बैठने वाली महिलाएँ दुर्गति के अन्तिम चरण तक पहँचती हैं और अबला से भी नीचे गिर कर पतिता कहलाने तक न उबरने देने वाले दल-दल में फँसा देते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विवाह करना एक बात है और लुक- छिपकर प्रेम-प्रसंग चलाना सर्वथा दूसरी। दोनों के बीच जमीन आसमान का अन्तर है। जिन्हें महिला मंगल के लिए सेवा मार्ग अपनाना है उन महिलाओं को विशेष रूप से इस खतरे को समझना चाहिए। जिस हेय समाज के उत्थान के लिए काम करना चाहिए उसी का एक बड़ा वर्ग अपनी दुष्प्रवृत्तियों का सीधा प्रहार लोकसेवियों पर भी कर सकता है। ऐसी दशा में उनके लिए परिवार भी कलह का केन्द्र बन जायगा और आदर्शवादिता का निर्वाह करते हुए सेवा में भी दु:खदायी अवरोध खड़ा हो जायगा।

नारी को दुर्बल और बाधित बनाने वाली प्रतिगामिता के अनेक स्वरूप हैं। उनने पुरुषों और महिलाओं को समान रूप से अपने शिकंजे में कसा है। उस कारण साधारण महिलाओं को तो गई-गुजरी जिन्दगी जीने के लिए बाधित होना ही पड़ता है, पर उसका एक पक्ष तो और भी खतरनाक है, जो युग धर्म के निर्वाह में अपने स्तर का व्यामोह उत्पन्न करके उन्हें दीन-दुनिया दोनों में से किसी भी प्रयोजन के योग्य नहीं रहने देता। यह है प्रसंगों के आवेदन करने वालों की कुटिलता। इससे उन सभी महिलाओं को सचेत होना चाहिए जो उनकी क्रियाशीलता में मात्र अवरोध ही उत्पन्न करते हैं। बच्चों का निर्वाह करने की न ऐसों की इच्छा ही होती है और न वैसा कुछ कर ही पाते हैं। ऐसी दशा में सारा खामियाजा नारी को ही भुगतना पड़ता है। फलत: वह संदिग्ध अविस्वस्त समझी जाने पर उन बड़े कामों को कर सकने में भी असमर्थ हो जाती हैं, जिनकी सफलता लोक श्रद्धा पर अवलम्बित है। अच्छा हो प्रगतिशील नारी द्वारा ऐसे अवरोधों से प्रथम चरण में ही निपट लिया जाय।

चर्चा प्रसंग में अश्लील प्रसंगों के संकेत को भी सहन न किया जाय और उसके प्रति अपनी अप्रसन्नता को, अनिच्छा को प्रकट कर दिया जाय। ताकि दुबारा वह प्रश्न उठने का अवसर ही न आने पाये। इस संदर्भ में एक बात और ध्यान देने की है कि लोकसेवा के क्षेत्र में प्रवेश करते-करते अपनी काया को श्रृंगारिक सजावट से विरत कर लिया जाय। यह भी एक ऐसा भ्रम पैदा करने वाला कारण है जो श्रृंगार सज्जा और कामुक आकर्षण का एक स्वरूप समझने की भ्रान्ति उत्पन्न करता है।

लेनिन की माता को अपना चेहरा कुछ दवा-पोतकर इसीलिए काला करना पड़ा था कि साथी के रूप में कार्य करने वालों के दबाव से अपना पिण्ड छुड़ा सकें। रामकृष्ण परमहंस की एक प्रतिभावान् शिष्या अत्यंत सुन्दरी होने के कारण अपनों के द्वारा ही पथभ्रष्ट किये जाने की परिस्थिति में फँसी रहती थी, उनने चेहरे पर मिट्टी पोतकर स्वैच्छिक कुरूपता को वरण किया। गौरी माता के नाम से जानी जाने वाली महिला की प्रामाणिकता बढ़ जाने से उनका सम्मान और प्रभाव भी अधिक बढ़ गया। बंगाल की विधवाएँ जब वृन्दावन में भजन करने जीवन बिताने पहुँचती हैं तो सिर के बाल मुड़ा लेती हैं। उस हद तक बढ़ सकना संभव न हो तो लोकसेविकाओं को कम कम इतना तो करना ही चाहिए कि वे सादगी भरा साध्वी जैसा रहन सहन अपनाएँ। अपनी भाव-मुद्रा में कहीं भी बचकानेपन को, अस्वाभाविक चंचलता को किसी भी रूप में प्रश्रय न दे। इससे उनकी प्रामाणिकता बढ़ेगी और उस लोकश्रद्धा में भी अभिवृद्धि होगी जिसके सहारे उन्हें अपना कठिन कार्य सम्पन्न करना है।

अरुणोदय का रंग नारंगी होता है। नवयुग का, नारी जागरण का प्रतीक रूप भी इसी वर्ण को अपनाया गया है। यदि महिलाएँ इसी रंग के वस्त्र धारण किया करें तो कुदृष्टि रखने वाले निशाचरों को अपनी दाल गलती दिखाई न पड़गी और वे निराश होकर दाव-पेंचों को समेटेंगे।

महिला लोकसेवियों के लिए एक प्रतीक दण्ड धारण किए रहना भी निश्चित किया गया है कि नारी शालीनता, सेवा की प्रतीक तो है, पर साथ ही उसने अनाचार से संघर्ष करने का अपना दुर्गा रूप सर्वथा छोड़ नहीं दिया है।

नर की दृष्टि से नारी को देवी रूप में श्रद्धास्पद माना जाय। नारी उसे देव स्तर की पवित्रता समझे। इसके लिए यह अधिक उपयुक्त होगा कि दोनों के बीच यही संबोधन भी चल पड़े। माता, भगिनी एवं पुत्री को ही नहीं धर्मपत्नी को भी धर्म की धुरी मानकर देवी शब्द से ही संबोधन करें साथ ही पुरुष मात्र को अपने सहयोगी, सहायक की मान्यता दें। बच्चे मम्मी-डैडी कहने की अपेक्षा माता-पिता अथवा देवी-देव कहकर सम्मानित करें। कुदृष्टि तो असुरता की दानवी मनोवृत्ति का परिचय देती है। जिसके साथ किसी को भी खा जाने, निगल जाने और बन्धनों के नागपाश में जकड़ कर उसे नारकीय गर्त में धकेल देने की दुष्टता चरितार्थ होती है। ऐसा प्रयत्न जिस ओर से भी चल रहा है उसे धिक्कारा, रोका और निरस्त, प्रताड़ित किया जाय। नारी उत्थान के मार्ग पर प्रयास करने वाली महिला को अपनी वरिष्ठता का प्रमाण परिचय देने के लिए यह निश्चय कर ही लेना चाहिए कि वे कुचक्रियों के चंगुल से अपने को बचाये ही रहेंगी और अनाचारियों से सहयोग पाने की भी अपेक्षा न करेंगी।

आत्मबल इसी निश्चय के आधार पर बनाये रखा जा सकेगा। इसी क्षमता के सहारे ऐसा कुछ बन पड़ेगा जिसके सहारे अपने समूचे समुदाय की गरिमा को अक्षुण्ण रखा जा सके। अन्यान्य भी आदर्शवाद अपनाने और परमार्थ पथ पर चल कर युग समस्याओं को सुलझाने के लिए कारगर पुरुषार्थ कर सकें।

प्रभातकालीन अरुणोदय का नारंगी रंग स्वयं धारण करने के अतिरिक्त अपनी सहेलियों को भी ऐसे ही वस्त्र धारण करने पर सहमत किया जा सके, बच्चों के लिए वैसे ही कपड़े रँग दिया जाया करें तो प्रतीत होगा कि नवोदय के प्रतीकों को घर परिवार के वातावरण में प्रवेश मिला और उसकी परिणति पवित्रता एवं सात्विक समर्थता के रूप में होकर ही रहेगी। ऐसे परिणाम कुदृष्टि वाले मानस को भी बहुत हद तक बदलने में समर्थ हो सकते हैं। पुरुष भी यदि

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बसंती चोला पहनने लगे तो उन्हें अपनी सांस्कृतिक परम्परा का, मानवी गरिमा का स्मरण आता रहेगा। ऐसी स्थिति में उनके लिए कुदृष्टि भारी पड़ती जायगी और समानता की मान्यता भी बढ़ती जायगी। नारी पुनरुत्थान के लिए ऐसी मान्यताएँ, ऐसा माहौल आवश्यक भी है।

यह दुष्प्रवृत्ति निरोध आन्दोलन चलना ही चहिए

बाल विवाह एवं दहेज जैसे विवाहोन्माद प्रतिरोध आन्दोलन आज के मानव समाज की सबसे बड़ी एवं सबसे प्रमुख आवश्यकता है। उसकी पूर्ति के लिए हमें इन्हीं दिनों बहुत कुछ करना होगा। हमारा यह प्रयत्न निश्चित रूप में सफल होगा। अगले दिनों हवा बदलेगी और आज खर्चीली वैवाहिक कुरीतियाँ अगली पीढ़ी वालों के लिए एक कौतूहल की बात रह जायेंगी। कुछ वर्षों बाद भावी सन्तान को यह खोज करनी पड़ेगी कि हमारे पूर्वज थे तो बुद्धिमान पर ऐसी मूर्खतापूर्ण रीति-रिवाज के जंजाल में फँसकर इतना कमर तोड़ अपव्यय आखिर करते क्यों थे?

वे दिन निश्चित रूप में आने हैं। समय की माँग युग की पुकार इतनी प्रबल होती है कि उसके द्वारा बड़े-बड़े प्रवाह मोड़ दिये जाते हैं। इस परिवर्तन का लाभ अगली पीढ़ी को मिलेगा, हमें तो इसके लिए भागीरथ तप ही करना है और प्रतिरोध करते हुए गोली न हो तो कम से कम गाली तो खाते ही रहना है। अन्ध मान्यताओं की भी नशेबाजी जैसी लत होती है, वह मुश्किल से छूटती है। इसलिये काम बहुत कठिन है। पर कठिन काम भी मनुष्य ही करते हैं। हम कठिनाइयों को चीरते हुए आगे बढ़ेंगे और समय को बदल डालने की प्रतिज्ञा पूरी करके रहेंगे।

विवाहोन्माद की जड़ें काफी गहरी हैं। उन्माद रोग ग्रस्त व्यक्ति के गले कोई बात उतरना काफी कठिन होता है। रूढ़ियों की चुड़ैल जिनकी गर्दन पर सवार है उनके लिए समझ की बात मानना अपनाना काफी कठिन होगा। यह प्रचार करते हुए जहाँ जाया जाय वहाँ प्रथम बार में ही सफलता मिल जाय, इसकी आशा कम ही होगी। कितनी ही बार प्रचारक को निराश और तिरस्कृत होकर लौटना पड़ेगा। ऐसी दशा में मानव मनोविज्ञान के अनुसार यह हो सकता है कि तिरस्कृत करने वाले और तिरस्कार सहने वाले के बीच मनोमालिन्य का अंकुर उत्पन्न हो जाय और उसके कारण आगे मिलने-जुलने या मधुर सम्बन्ध बनाये रहने में बाधा उत्पन्न होने लगे। यदि ऐसा हुआ तो उससे अपने मिशन को नुकसान ही पहुँचेगा।

इस समस्या का हल करने के लिए यह आवश्यक प्रतीत हुआ है कि विवाहोन्माद प्रतिरोध आन्दोलन के साथ साथ एक छोटा सहायक आन्दोलन और भी चालू रखा जाय। जिससे जो लोग आदर्श विवाहों की पद्धति अपनाने के लिए तैयार न हो सकें उन्हें उस सहायक आन्दोलन के किसी अंश के साथ सहमत करने का प्रयत्न किया जाय। किसी न किसी बात पर यदि व्यक्ति को सहमत कर लिया जाय तो विदाई के समय मधुरता बनी रहती है और आगे के प्रेम सम्बन्धों में अन्तर नहीं आता। आज की थोड़ी सहमति आगे चलकर बड़ी सहमतियों के रूप में परिणत हो सकती है। अतएव एक सरल आन्दोलन भी साथ-साथ चलते रहने की आवश्यकता अनुभव की गई है।

इस सहायक आन्दोलन का नाम है -'दुष्प्रवृत्ति निरोध आन्दोलन' यों इसकी उपयोगिता, आवश्यकता एवं महत्ता भी किसी प्रकार कम नहीं। समाज निर्माण एवं सुधार के लिए दूसरा सहायक आन्दोलन के अन्तर्गत आने वाले काम भी कम महत्व के नहीं है। चरित्र निर्माण, व्यक्ति निर्माण एवं समाज निर्माण में इनका भी भारी योगदान रहेगा। पर सहायक आन्दोलन उसे इसलिये कहा गया है कि उसमें बताये हुये दस कार्यों में से किसी न किसी के लिये कोई भी व्यक्ति आसानी से सहमत किया जा सकता है और बिना अधिक कठिनाई के आन्दोलन में सम्मिलित होने वाला, कोई एक प्रतिज्ञा लेने वाला बन सकता है।

दुष्प्रवृत्ति निरोध आन्दोलन के अन्तर्गत दस कार्यक्रम रखे गये हैं-

(१) **माँसाहार-माँस,** मछली, अण्डे एवं काटे हुए पशुओं के चमड़े का उपयोग।

(२) **नशेबाजी**—तम्बाकू, भाँग, गाँजा, अफीम, कोकीन, हेरोइन, स्मैक, ब्राउन शुगर, शराब आदि नशों का सेवन।

(३) **पशु बलि**—देवी देवताओं के नाम पर निरीह पशु-पक्षियों की हत्या।

(४) **मृत्यु भोज**—मृतक भोज के नाम पर धूमधाम भरी दावतों का अपव्यय।

(५) **ऊँच-नीच**—गुणों की अपेक्षा पद, वंश, जाति के कारण किसी को ऊँचा या नीचा मानना।

(६) **नारी तिरस्कार**— पुरुष की तुलना में नारी का गौरव, महत्व, सम्मान या अधिकार कम मानना।

(७) **बेईमानी**—चोरी, छल, जुआ, समर्थ होते हुए भी अपने लिये भिक्षा याचना, अनीत एवं बिना परिश्रम की कमाई।

(८) **अपव्यय**—फैशन, जेवर, आडम्बर, विलासिता एवं व्यसनों की फिजूलखर्ची।

(९) **अन्ध विश्वास**—भूत-पलीत, टोना, टोटका, जादू-मंतर, शकुन-अपशकुन जैसी मूढ़ मान्यताएँ ।

(१०) **असभ्यता**—गाली-गलौज, गन्दगी, आलस, अशिष्टता, कृतघ्नता, आवेश जैसे मूढ़ मान्यताएँ ।

इन दोष-दुर्गुणों में से कुछ न कुछ तो हर व्यक्ति में पाये जाते हैं। उनमें से एक दो को भी छोड़ दिया जाय तो उससे व्यक्ति एवं समाज के उत्थान में बड़ी सहायता मिलती है। जिस प्रकार बुरी आदतें छूत की बीमारी की तरह फैलती हैं और दूसरों को भी वही लत लगाती हैं उसी प्रकार उनका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

त्याग करने और आदर्शवाद अपनाने की प्रवृत्ति भी यदि पनपे तो उसका प्रभाव अनेक लोगों पर पड़ता है और वे भी उसी प्रकार प्रभावित होते हैं और यह श्रृंखला तेजी के साथ आगे चलने लगती है।

'दुष्प्रवृत्ति निरोध आन्दोलन ' भी साथ साथ ही हमें चलाना है। इसके लिये विवाहोन्माद आन्दोलन जैसे प्रतिज्ञा पत्र भी छपायें जा सकते हैं और उन्हें भरने वालों के लिये प्रमाण पत्र जैसे छोटे-छोटे अभिनन्दन पत्र भी। इस संदर्भ में हमने कई ट्रैक्ट और पुस्तकें भी छापी हैं। इनके माध्यम से इन दुष्प्रवृत्तियों के विरुद्ध प्रचार करना और वातावरण बनाना भी संभव हो जायेगा। इन्हें पढ़कर कोई भी प्रवचनों एवं विचार-विनिमय द्वारा लोगों को आवश्यक तथ्य समझाते रह सकते हैं और इन बुराइयों को छुड़ाने का आन्दोलन चलाया जा सकता है।

नवनिर्माण की दिशा में यह दोनों आन्दोलन भी महत्वपूर्ण है। दोनों मिलकर सोने में सुगंध का कार्य करेंगे। टोलियाँ बनाकर या अकेले भी इन आन्दोलनों से जनता को परिचित एवं प्रभावित करने के लिये उनमें सम्मिलित एवं प्रतिज्ञाबद्ध करने के लिये हमें जुट जाना चाहिये। हमारा आज का श्रम उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएँ प्रस्तुत करेगा। आज का अपना काम बीज के गलने पर वृक्ष की उत्पत्ति का उदाहरण बनेगा ।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

बलि प्रथा मानव जाति पर कलंक

देवी-देवताओं के नाम पर पशुबलि एक घोर जघन्य कर्म

हिन्दू धर्म का मूलभूत तत्वज्ञान इतना महान है कि उसके प्रत्येक सिद्धान्त एवं विधान में विश्वकल्याण की, मानवता के चरम उत्थान की सम्भावनाएँ ही सन्निहित हैं । देवताओं और ऋषियों ने इस महान धर्म का ढाँचा इतने उच्चकोटि के आदर्शों द्वारा विनिर्मित किया है कि उसके व्यवहार का परिणाम स्वर्गीय वातावरण का निर्माण ही हो सकता है । परन्तु दुःख की बात है कि पिछले अज्ञानान्धकार युग में उसमें जहाँ-तहाँ अनैतिक और अहितकर मान्यताओं और रूढ़ियों का भी समावेश होने लगा और आज जो रूप हिन्दू धर्म का हमारे सामने है, उसमें कई चीजें बहुत खटकने वाली ही नहीं, उन भावनाओं के सर्वथा प्रतिकूल भी हैं जिनको लेकर ऋषियों ने इस महान धर्म की रचना की थी ।

ऐसी विकृतियों में पशुबलि एवं नरबलि को सर्वोपरि कलंकी प्रथा कहा जा सकता है । मूक पशु-पक्षियों का देवी देवताओं के नाम पर कत्ल किया जाना उन देवताओं की महिमा को समाप्त करके सारे सभ्य समाज के सामने उन्हें घृणित, निंदित, नीच, क्रूर एवं हत्यारा सिद्ध करना है । जिस देवता को प्रसन्न करने के लिये बलि चढ़ाई जाती है, वस्तुतः उन्हें असीम कष्ट और असीम लज्जा इस कुकृत्य से होती है क्योंकि 'देवता' शब्द ही दिव्य-तत्व, दया, करुणा, दान, उदारता, सेवा, सहायता आदि सत्प्रवृत्तियों का द्योतक है । जिसमें यह गुण न हों—उलटे नन्हें-मुन्ने, बेबस और बेकस प्राणियों का खून पीने की इच्छा हो, उन्हें देवता कौन कहेगा ? वे तो असुर एवं पिशाच ही गिने जायेंगे । देवताओं के महान गौरव को नष्ट कर उन्हें दुनिया के सभ्य समाज के समुख इस बुरे रूप में उपस्थित करना वस्तुतः उनके साथ दुश्मनी करना है । उन्हें कलंकित करने का प्रयत्न करने वाले के प्रति वे प्रसन्न होंगे, इसकी आशा कदापि नहीं की जा सकती । परिणामस्वरूप जो लोग पशुबलि करते हैं, उनमें उलटे रोग, शोक, अज्ञान आदि क्लेश कलह, दुष्टता, दुर्बुद्धि आदि अनेक दुःखों की ही वृद्धि होती है । पशुबलि करने वाले लोगों में से फलते-फूलते कोई विरले ही देखे जाते हैं, अन्यथा उन्हें निर्दोष जीवों की हत्या तथा देवता को कलंकित करके उनके क्रोध एवं शाप के फलस्वरूप नाना प्रकार के कष्ट ही मिलते हैं ।

पशुबलि प्रथा से देवताओं का भारी अपयश होता है, हत्या का नृशंस पाप लगता है और बलि करने करने वालों को पाप का निश्चित परिणाम भुगतने के लिये इस लोक में नाना प्रकार के दुःखों एवं परलोक में नारकीय यंत्रणाओं का भागी बनना पड़ता है । यह कुप्रथा निश्चित रूप से हिन्दू धर्म पर भारी कलंक है । जिस धर्म का मूल ही दया और अहिंसा हो उसमें इस प्रकार के कुकृत्यों को किसी भी प्रकार धर्मानुकूल नहीं कहा जा सकता ।

धर्म के नाम पर अधार्मिक कृत्यों का प्रचलन प्रत्येक धर्म प्रेमी को एक मार्मिक पीड़ा पहुँचाने वाली बात है । कोई खाने की दृष्टि से माँस खावे तो उसकी व्यक्तिगत स्वार्थपरता ही मानी जायगी, इससे सारा समाज या सारा धर्म कलंकित नहीं होता, पर पशुबलि सरीखे कृत्यों से तो हमारे अहिंसा, सत्य, प्रेम और दयामूलक धर्म की मूल मान्यताओं पर ही कुठाराघात होता है, इसे देखकर सच्चे धर्मप्रेमी यदि चिन्तित, खिन्न और विह्वल हों तो यह सर्वथा उचित ही है ।

अनेक देव-मन्दिरों में पशुबलि होते देखकर किसी भी ऐसे विचारशील व्यक्ति के मन पर भारी आघात लगता है, जिसने हिन्दूधर्म के महान स्वरूप को समझने का प्रयत्न किया है । हिन्दूधर्म दया, प्रेम, भ्रातृत्व, मानवता और प्राणिमात्र के प्रति स्नेह सद्व्यवहार सिखाने वाला धर्म है । इसके सभी देवता दयालु, सहृदय, उदार, करुणा और सहायता करने वाले हैं । फिर वे पशु-पक्षियों का खून पीकर प्रसन्न हों, यह कैसे सम्भव है ? धर्मशास्त्रों को जितना ही गम्भीर दृष्टि से देखा जाय, उतना ही यह निश्चय होता जाता है कि हमारा धार्मिक तत्वज्ञान और आदर्श कभी भी इस बात से सहमत नहीं हो सकता है कि कोई देवता पशु-पक्षियों का माँस खाने या खून पीने की आकांक्षा करता है या इस कार्य में उसे कुछ प्रसन्नता हो सकती है ।

बहुधा देवी काली के मन्दिरों में, भैरव आदि के मठों में एवं ग्राम देवताओं के चबूतरों पर बकरे-भैसों की, मुर्गे-कबूतरों की बलि चढ़ाई जाती है । काली के तो अनेक मन्दिर अभी भी ऐसे हैं जहाँ हर साल सहस्रों पशु-पक्षियों का गला काट डाला जाता है । बंगाल, राजस्थान और हिमालय के पहाड़ी प्रदेश इस कार्य में अग्रणी हैं । यों तो आये दिन, यह हत्या कर्म होते ही रहते हैं पर नवरात्रि के दिनों में तो यह नृशंसता अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है । कई बड़े-बड़े मन्दिरों में उन दिनों जो बूचड़खाने जैसा घृणित दृश्य उपस्थित होता है, उसे देखकर किसी भी सहृदय और धार्मिक भावना वाले व्यक्ति की अन्तरात्मा काँप उठती है । उस दृश्य को देख कर कोई भी विचारवान व्यक्ति यह स्वीकार नहीं कर सकता कि यहाँ देव मन्दिर है और यहाँ कोई धर्मकार्य किया जा रहा है ।

हमारे धर्म ग्रन्थों में इस कुकर्म का कहीं समर्थन नहीं है । कहीं-कहीं आलंकारिक रूप में ऐसा वर्णन अवश्य मिलता है कि अपने आंतरिक दोष-दुर्गुणों को पशु मानकर उनका परित्याग, बलिदान—देव सान्निध्य में किया जाय । लगता है कि स्वार्थी लोगों ने उस साहित्यिक पहेली की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आलंकारिक भाषा को तोड़-मरोड़ कर अपनी जिह्वा लोलुपता की पूर्ति का साधन बनाया है । माँसाहार, मद्यपान और व्यभिचार यह तीन पाप हमारे यहाँ बहुत बड़े माने गये हैं । लोग अपनी आसुरी वृत्तियों से प्रेरित होकर इन्हें करते हैं पर इसके लिये समाज में उनकी निन्दा होती है और अन्तरात्मा भी धिक्कारती है । इन दोनों ही विरोधों से बचने के लिये माँसाहार को पशुबलि के बहाने उचित ठहराने का किन्हीं ने निन्दनीय प्रयास किया होगा । खेद है कि उन्हें सफलता भी मिली और पिछले दिनों यह पाप प्रचण्ड रूप से पल्लवित हुआ । इस विचारशीलता के युग में वह घटता तो जा रहा है पर मिटता अब भी नहीं है ।

साधारणत: भोले-भाले अज्ञानग्रस्त लोग ऐसा सोचते हैं कि काली माई हमारे द्वारा पशु-पक्षियों का माँस खिलाने से प्रसन्न होगी और हमारी मनोकामनाएँ पूरी करेगी । बाल-बच्चे पैदा नहीं होते होंगे तो बच्चे पैदा कर देगी, मुकद्दमा जिता देगी, धन देगी, शत्रुओं पर विजय प्राप्त करावेगी, हमारे हर कार्यों में सफलता देगी । वे एक रिश्वत के रूप में देवी को मद्य, माँस खिला-पिला कर प्रसन्न करना चाहते हैं और उससे मनमाने वरदान प्राप्त करना चाहते हैं। यह मान्यता सर्वथा असम्भव एवं भ्रमपूर्ण है । वास्तव में बात बिल्कुल उल्टी है । देवता हमेशा सत्कर्म से प्रसन्न होते हैं और कुकर्मों से अप्रसन्न । जो कुकर्म से, हत्या जैसे महान पाप से प्रसन्न हो वह देवता ही नहीं माने जा सकते । देवता लोग कुकर्म करने वाले से रुष्ट रहते हैं और उसे कोई वरदान देना, लाभ पहुँचाना तो दूर उल्टे हानि एवं दण्ड की व्यवस्था करते हैं ।

देवी भगवान की दिव्य शक्ति का नाम है । यों दीनदयाल, दयानिधान, करुणासिन्धु भगवान् अपने पुत्रों को, संसार के सभी प्राणियों को अपार स्नेह करते हैं, पर माता भगवती की करुणा एवं वात्सल्यता का तो कहना ही क्या है ? माता का हृदय पिता की अपेक्षा अनेक गुना अधिक करुणापूर्ण होता है । जब मनुष्य योनि की साधारण स्त्रियाँ अपने बच्चों को प्राण के समान प्यार करती हैं, उन्हें तनिक-सा कष्ट होने पर व्याकुल हो जाती हैं, तो फिर उस दिव्य माता का—देवी काली की करुणा का तो ठिकाना ही क्या है जिसके अन्त:करण से निरन्तर स्नेह और वात्सल्य की धारा बहती रहती है । वे मनुष्यों की ही नहीं पशु-पक्षियों की भी माता हैं ।

उसी जगदम्बा माता भवानी के पवित्र नाम पर जब पशुबलि होती है तो देवत्व की आत्मा काँपने लगती है । बेचारे निरीह बकरे, भैंसे माता के आगे निर्दयतापूर्वक कत्ल किये जाते हैं और उनका रक्त माँस माता को खाने के लिये उपस्थित किया जाता है, यह कितना नृशंस कार्य है । इससे स्वर्गलोक निवासिनी देवी की तो क्या इस मृत्युलोक की साधारण नारी की भी अन्तरात्मा चीत्कार करने लगेगी । यदि कोई दुष्ट मनुष्य किसी माता की गोदी से उसका बच्चा छीनकर उसकी आँखों के आगे ही कत्ल करे और फिर उसके कलेजे के टुकड़े, उस बच्चे का खून माँस उस माता के मुँह में ठूँसे तो उसे कितनी मार्मिक व्यथा होगी, इसकी कल्पना कोई बाल-बच्चेदार सहृदय व्यक्ति ही कर सकता है। जिस दुष्ट व्यक्ति ने यह नृशंस कर्म किया है, क्या उससे वह माता कभी प्रसन्न होगी ? क्या उसे कोई उपहार या वरदान देगी ? निश्चय ही ऐसा नहीं हो सकता । वह उस कुकर्मी को शाप और दण्ड देने की बात ही सोच सकती है ।

अर्थ का अनर्थ हो गया—देव प्रतिमाओं के सामने पशुबलि करने का विचार उसी तांत्रिक भ्रष्ट परम्परा का आधुनिक संस्करण है जो वेद का वास्तविक अर्थ न जानने के कारण मध्यकालीन अन्धकार युग में फैली थी । उसी को हटाने के लिये भगवान बुद्ध को अवतार लेना पड़ा था । वेदों में सर्वत्र अहिंसा का प्रतिपादन है । देव-पूजा में उत्कृष्ट भावनाओं तथा सात्विक उपकरणों के प्रयोग का निर्देश है । ऐसी ही पूजा आध्यात्मिक उद्देश्यों को उपलब्ध करा सकती है, देवता भी उसी से प्रसन्न होते हैं ।

आलंकारिक रूप में धर्मशास्त्रों में कहीं-कहीं पशुबलि शब्द का प्रयोग हुआ है । उसका प्रयोजन अपनी पशुता-पाशविक दुर्गुणों को नष्ट करना है । बलि का एक अर्थ भेंट है, दूसरा त्याग । ईश्वर को अपने सत्कार्यों की श्रद्धाञ्जलि अर्पित करना, सत्यप्रयोजनों के लिए परमार्थ के लिए अपने व्यक्तिगत स्वार्थों का परित्याग कर देना बलिदान का मूल अभिप्राय है । दूसरा अभिप्राय यह है कि जो बुरी आदतें हमारे स्वभाव का अंग बन गई हैं, जिन दुर्भावनाओं ने मन:क्षेत्र में अड्डा जमा लिया है, उन्हें साहसपूर्वक उखाड़-पछाड़ कर नष्ट कर दिया जाय ।

मानवीय अन्त:करण में दो तत्व काम करते हैं, एक देवत्व-दूसरा असुरता । असुरता को ही पशुता भी कहते हैं । इन दोनों में निरन्तर संघर्ष होता रहता है । पुराणों में देवासुर संग्राम का चित्रण इस भावनात्मक अन्तर्द्वन्द्व का ही किया गया है । इन दोनों में से एक बढ़ेगा तो दूसरा दुर्बल होगा । पशुत्व बढ़ेगा तो देवत्व क्षीण होगा, देवत्व बढ़ेगा तो पशुता क्षीण होगी । इसलिये कहा गया है कि देवत्व का अभिवर्द्धन करने के लिये उनके पक्ष में पशुत्व का वध किया जाय । यह कथन आलंकारिक है । देवत्व या पशुत्व कोई मूर्तिमान प्राणी नहीं है, जिनमें से एक के सामने दूसरे को मारा-काटा जाय । यह तो अदृश्य प्रवृत्तियाँ मात्र हैं । इनमें से किसी का विकास या विनाश भावना स्तर पर ही हो सकता है । छुरी, तलवार का प्रयोग इस सन्दर्भ में हो ही नहीं सकता । लोगों ने इस सीधे-से निर्देश में प्रयुक्त हुये अलंकार की वास्तविकता को न समझ कर अर्थ का अनर्थ कर डाला और बेचारे निरीह जानवरों की जान के गाहक बन गये । धर्म के नाम पर अधर्म को विराजमान कर दिया ।

प्राचीन ग्रन्थों में आलंकारिक रूप से आध्यात्मिक भूमिका में दुर्गुणों को छोड़ने एवं स्वार्थों को छोड़कर परमार्थ के लिये त्याग एवं साहस दिखाने के अर्थ में पशुबलि का प्रयोग हुआ है । मध्यकालीन अन्धकार युग में यज्ञों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पशुबलि की प्रथा चल पड़ी । अर्थ का अनर्थ करने वालों ने यज्ञ में गौ, घोड़े, बकरे, मनुष्य होमने शुरू कर दिये । गौमेध यज्ञ, अश्वमेध यज्ञ, अजमेधयज्ञ, नरमेधयज्ञ के जो वास्तविक अभिप्राय थे उन्हें भुलाकर पवित्र यज्ञ कार्यों को नृशंस हत्याकाण्डों से परिपूर्ण कर दिया । यह प्रचलन जिन दिनों हो रहा था उन दिनों भी विचारशील लोगों ने इसका समुचित विरोध किया था । प्राचीन पुस्तकों में इस विरोध का स्पष्ट उल्लेख मिलता है । पर उन दिनों शासकों और पुरोहितों की ऐसी सम्मिलित दुरभिसंधि चल पड़ी कि आँधी-तूफान की तरह यह बढ़ती हुई दुष्प्रवृत्ति रुक न सकी । बहुत दिन तक यज्ञों को कलंकित करने वाले ये हत्याकाण्ड होते रहे । अन्त में इसी दुष्टता की प्रबल प्रतिक्रिया के रूप में जैन धर्म के संस्थापक महावीर स्वामी और बुद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध का अवतरण हुआ । उन्होंने अथक परिश्रम करके इस कुप्रथा को हटाया और भारतीय धर्म की आत्मा में अहिंसा की पुनः प्रतिष्ठापना की ।

यज्ञों में होने वाली पशुबलि ने न केवल पशुबलि के ही विरुद्ध वरन् यज्ञों के विरुद्ध भी जनमत बना दिया । फलस्वरूप पिछले दिनों काफी लम्बी अवधि तक यज्ञ-प्रणाली एक प्रकार से उपेक्षित ही हो गई । यदा-कदा ही उनके आयोजन कहीं देखे-सुने जाते थे । फिर भी वह दुष्ट परम्परा किसी रूप में लोगों के मन में घर किये रही और उन्होंने यज्ञ के स्थान पर देव प्रतिमाओं के सामने निरीह पशु-पक्षियों की हत्या करना आरम्भ कर दिया । दुर्गा एवं भैरव को तो विशेष रूप से रक्त पिपासु घोषित कर दिया और कहा गया कि वे मद्य, माँस खा-पीकर ही सन्तुष्ट होते हैं । अन्धविश्वासियों के मन पर कोई भी औंधी-सीधी बात चतुर लोग आसानी से बिठा सकते हैं । जिन्हें मद्य, माँस का चस्का था, उनके लिये तो यह प्रचलन एक वरदान दीखने लगा । मद्य, माँस का सेवन व्यवहारतः अधर्म माना जाता है, इसलिये उनका सेवन करने वालों की निन्दा एवं भर्त्सना होती थी । पर जब देवता के नाम पर इन वस्तुओं का उपयोग किया गया और उनके प्रसाद रूप में इन अभक्ष्य पदार्थों की खाने की बात सामने आई तो उनकी मनोकामना पूर्ण हो गई । एक प्रकार से खुले आम अवांछनीय मार्ग पर चलने की छूट मिल गई । छूट ही नहीं मिली वरन् वह अधर्म, धर्म के रूप में मान्य एवं उचित ठहराया जाने लगा ।

आज वही अनीतिपूर्ण बलि प्रथा जहाँ-तहाँ प्रचलित है । कुछ दिन पूर्व यह अन्धेर जितने उग्र रूप में होता था उतना अब नहीं होता, क्योंकि प्रत्येक विचारशील व्यक्ति इसके विरुद्ध है । मानवीय अन्तरात्मा कभी-भी ऐसे दुष्ट कर्मों को धर्म अंग नहीं मान सकती, इसलिये जहाँ-कहीं भी यह अन्धेर होता था वह विवेक के प्रतिरोध ने बहुत अंशों में अपने आप बन्द कर दिया है । फिर भी जहाँ-तहाँ इस कुप्रथा का प्रचलन है । कितने ही देव-मन्दिर अभी भी इससे कलंकित हैं । नवरात्रियों में तथा अन्य अवसरों पर भी लोग अपनी उचित-अनुचित मनोकामनाएँ पूरी कराने की रिश्वत के रूप में बेचारे निरीह पशुओं का प्राण इन तथाकथित देवताओं के आगे हरण करते हैं । यह कृत्य होता तो धर्म के नाम पर है पर वस्तुतः धर्म की आत्मा इस नृशंसता को देखकर हाहाकार कर रही होती है ।

जिन्हें यह भ्रम है कि पशुबलि धर्म का अंग है उनके लिये अगले पृष्ठों पर कुछ तथ्य प्रस्तुत करते हैं । उन्हें वे ध्यानपूर्वक पढ़ेंगे तो सहज ही यह अनुभव करेंगे कि यह प्रथा सर्वथा अधर्मपूर्ण एवं तुरन्त ही त्याग देने योग्य है । कोई व्यक्तिगत रूप में मद्य, माँस सेवन करे यह दूसरी बात है पर धर्म के नाम पर उसका औचित्य तो नहीं ही ठहराया जाना चाहिए । नीचे कुछ शास्त्रीय प्रमाण देखिए—

'पशु' शब्द के विभिन्न अर्थ—यज्ञों की अनेक, कोटियों में एक कोटि 'पशुयज्ञ' की भी आती है । एक शब्द के कई अर्थ होते हैं । पशु शब्द के भी अनेक अर्थ हैं पर कुछ संकुचित विचार के व्यक्ति वेद और यज्ञ की मूलभूत भावना के विपरीत उसका अर्थ पशु हिंसा करने लगे । अर्थ का अनर्थ हुआ । मध्यकालीन युग में लोगों ने सचमुच ही पशुयज्ञ का वास्तविक रूप न समझकर पशु-हत्या आरम्भ कर दी और घोड़े, गाय, बकरे एवं सर्प तक मार-मार कर होमने शुरू कर दिये ।

यह हत्याकाण्ड जब फैला तो उसके विरुद्ध जनता में घोर घृणा पैदा हुई । यज्ञों की निन्दा हुई । लोग यज्ञों का विरोध करने लगे । बौद्ध और जैन धर्म ने इस प्रकार की हिंसा का डटकर विरोध किया और धीरे-धीरे वह अनर्थ बन्द होता गया । बलि जैसी इन अज्ञानमूलक बातों का जितना विरोध हो, उतना ही उत्तम है और हमारे पवित्र धर्म को कलंकित करने वाली यह घृणित प्रथाएँ जितनी जल्दी बन्द हो जायें, उतना ही अच्छा है ।

वैदिक पशु-यज्ञ का वास्तविक तात्पर्य क्या है, नीचे की पंक्तियों से इस पर कुछ प्रकाश डाला जाता है ।

उपनिषद का वचन है—

''काम, क्रोध लोभादयः पशवः ।''

''काम, क्रोध, लोभ, मोह यह पशु हैं, इन्हीं को मारकर यज्ञ में हवन करना चाहिए।''

'कामं क्रोधं सुलोभ मोहं पशु नांच्छित्वा कांच्छित्वा विवेकासिना ।
मांसं निर्विषयं परात्म सुखदं भुञ्जन्ति तेषां बुधाः।।''

(भैरवयामल)

''विवेकी पुरुष काम, क्रोध, लोभ, और मोह रूपी पशुओं को विवेक रूपी तलवार से काटकर दूसरे प्राणियों को सुख देने वाले निर्विषय रूप माँस का भक्षण करते हैं ।''

'महानिर्वाण तन्त्र' में भी इसी आशय का श्लोक आया है ।

''कामक्रोधौ द्वौ पशु इमावेव मनसा बलिमर्पयेत ।
काम क्रोधौ विघ्नकृतौ बलिं दत्वा जपं चरेत् ।।''

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"काम और क्रोध रूपी दोनों विघ्नकारी पशुओं का बलिदान करके उपासना करनी चाहिए, यही शास्त्रोक्त बलिदान का रहस्य है ।"

आलंकारिक रूप से यह आत्मशुद्धि की, कुविचारों, पाप, तापों, कषाय-कल्मषों से बचने की शिक्षा है । 'ब्रह्मोपनिषद' का वचन है—

"अश्वमेधो महायज्ञ कथा तद्ज्ञा ब्रह्मचर्यमाचरन्ति ।
सर्वेषां पूर्वोक्त ब्रह्मयज्ञ क्रमं मुक्ति क्रम मिति ॥"

"अश्वमेध बड़ा यज्ञ है किन्तु उसके अभ्यासी ब्रह्मचर्य ही पालते हैं । इस ब्रह्मचर्यात्मक यज्ञ का सिलसिला मुक्ति का उत्तरोत्तर कारण है ।"

गीता में लिखा है कि मन और बुद्धि को अर्पण करना चाहिए (१२/८) किन्तु विषयासक्त मन बुद्धि की संज्ञा पशु है और अर्पण ही बलि है ।

परमार्थसार में लिखा है कि **'मायापरिग्रह वशाद् बोधो मलिनः पुमान् पशुभवति'** अर्थात् माया के कारण मलिन बुद्धि होने से मनुष्य पशुभाव को प्राप्त होता है । तन्त्र में कहा है कि **'इन्द्रियाणि पशून हत्वा'** अर्थात् इन्द्रिय रूप पशु का वध करे ।

एक विद्वान का कहना है कि पशु-जगत में इन्द्रियाँ सर्वोपरि हैं और उन्हीं का संचालन वहाँ प्रधान साधन है । किन्तु मनुष्य में जीवात्मा सर्वोपरि है और जीवात्मा तथा इन्द्रियों के मध्य में अन्तःकरण है । इनके पशु स्वभाव को कामात्मक स्वार्थ के लिये व्यवहृत न कर ईश्वर के अनेक होने के संकल्प **(एकोऽहं बहुस्याम्:)** अर्थात् इच्छा शक्ति की जिसकी, संज्ञा महाविद्या है, पूर्ति रूपी यज्ञ में व्यवहृत होने के लिये महाविद्या को समर्पित करना अर्थात ईश्वर के दिव्य गुण, शक्ति, सामर्थ्य आदि के प्रकाशित करने योग्य बनाना ही यथार्थ पशुबलि है । जीवात्मा रूपी होता को सद्बुद्धि रूपी स्रुवा में इस पशु स्वभाव के साथ संयोजित कर ब्रह्माग्नि में अर्पण करना अर्थात् ब्रह्म के निमित्त सृष्टि हित कार्य में प्रवृत्त करना यज्ञ में इनकी बलि करना है ।

तन्त्र के एक प्रसिद्ध लेखक ने अपने एक ग्रन्थ में बकरे को काम, भैंस को क्रोध, बिलाव को लोभ, मेढ़े को मोह और ऊँट को मात्सर्य कहा है और इन्हीं विकारों के त्याग को पशुबलि कहा है ।

यजुर्वेद में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे यह अभिप्राय निकलता है कि अग्नि, वायु और सूर्य ही पशु हैं । यथा—

"अग्निः पशुरासीत्तेनायजन्त ॥"

अर्थात् अग्नि पशु था, उस द्वारा यज्ञ किया ।

"वायुः पशुरासीत्तेनायजन्त ॥"

अर्थात् वायु पशु था, उस द्वारा यज्ञ किया ।

"सूर्यः पशुरासीत्तेनायजन्त ॥"

अर्थात् सूर्य पशु था, उस द्वारा यज्ञ किया ।

एतरेय ब्राह्मण १। २। १० में **'पशवो व इमा हुआ'** इस पृथ्वी को ही पशु कहा गया है । क्या इन सबको काट-काटकर होमा जायेगा ? अन्न से बनी हुई वस्तु तथा (रोटी, पूरी आदि) खाद्य पदार्थों को भी पशु माना गया है ।

'चरक संहिता' में 'अज' औषधि का वर्णन है—

अजानामौषधि रज शृंगति विज्ञायते ।

(चरक संहिता प्र.)

क्या उपर्युक्त वाक्य में वर्णित 'अजा' बूटी के स्थान पर बकरी की औषधि बनाई जायेगी ?

महाभारत में भी 'अज' का अर्थ औषधि और बीज ही किया गया है ।

वैद्यक ग्रन्थों में अनेक पशुवाचक शब्द आते हैं । यथा—अश्व = अश्वगन्धा । ऋषभ = ऋषभक कन्द । श्वान = कुकुरमुत्ता । वराह = बराहीकन्द । काक = काकमाची । अज अजमोद । मत्स्य = मत्सयाक्षी । लोम = जटामांसी । महिष = महिषाक्ष = गुग्गुल । मेष = चकबड़, मेषपर्णी । मातुल = धतूरा । मृग = सहदेवी बूटी । पश =मोथरा । कुमारी = घिवकुमारी । रुधिर = केशर । पेश = जटामांसी । हृद = दालचीनी ।

पुरुष सूक्त में लिखा है कि **'अवध्नन् पुरुषं पशून्'**—अर्थात् ईश्वर को ही पशु मान यज्ञ में समर्पण किया । ईश्वर के अपने को यज्ञ अथवा बलि करने से ही सृष्टि हुई और ऋषि देवता आदि ने भी उन्हीं की शक्ति को बलि अथवा प्रयोग कर सृष्टि यज्ञ किया, यही आदि पशुबलि हुई ।

ऊपर अनेक प्रकार के पशुवाचक शब्द बतलाये गये हैं जो हमारे साहित्य में उपलब्ध हैं । माँस लोलुपों ने केवल उसके स्थूल अर्थ को लेकर बलि करना आरम्भ कर दिया, यह अर्थ का अनर्थ है—अशास्त्रोक्त है ।

पशु बलि से नरक मिलता है—यह कहा जाता है कि देवी या देवता पर बलि करने वाला, यज्ञ में पशु को काटकर आहुति देने वाला अथवा जो पशु यज्ञ में होमा जाता है एवं वध होता है, वह स्वर्ग को जाता है । बुद्धिवादी युग में आज ऐसी बातों को कोई स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं कि पाप करने से पुण्य होता हो, दुःख देने से सुख मिले, पशुवध जैसा अत्याचार करने से स्वर्ग प्राप्त हो या वह पशु ही स्वर्ग का टिकट कटा ले ।

इस सम्बन्ध में एक कवि ने मुँहतोड़ उत्तर दिया है—

नाहं स्वर्गफलोपयोगतृषितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया ।
संतुष्टस्तृण भक्षणेन सततं साधो ! न युक्तं तव ॥
स्वर्गे यान्ति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो ।
यज्ञं किं न करोषि मातृ-पितृभिः पुत्रैस्तथा बान्धवैः॥

"मुझे स्वर्ग फल के भोगने की इच्छा नहीं है । और नहीं मैंने तुमसे यह प्रार्थना ही की है कि तुम मुझे यज्ञ में डाल कर स्वर्ग में पहुँचाओ । मुझे तो घास, आदि खाकर ही सन्तोष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । इसलिये तुम्हें यह काम शोभा नहीं देता । यदि यही मान लिया जाये कि तुम्हारे द्वारा यज्ञ में होमे जाने वाले प्राणी स्वर्ग में जाते हैं तो फिर तुम अपने प्रिय से प्रिय माता, पिता, पुत्र और भाइयों को यज्ञ में होमकर उन्हें स्वर्ग क्यों नहीं भेजते ?''

कवि ने सच्चे तर्क से काम लिया है । यदि इस प्रकार स्वर्ग प्राप्त हो जाये तो सब से पहले अपने प्रिय-जनों को ही भेजना चाहिए । स्वयं भी हर एक व्यक्ति सुख की आशा में रहता है, दिन, रात उसी के लिये प्रयत्नशील रहता है, क्यों नहीं वह स्वयं अपनी आहुति देकर सीधा स्वर्ग का भागी बनता है ?

चार्वाक सम्प्रदाय के ग्रन्थों में इसी सम्बन्ध का एक श्लोक मिलता है ।

पशुश्चेत्रिहतः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति ।
स्वपिता यजमानेन तत्र कस्यान्न हिंस्यते ॥

''यदि ज्योतिष्टोमादि में मारा हुआ पशु स्वर्ग को चला जाता है तो यजमान अपने पिता को यज्ञ में क्यों नहीं मार डालता ताकि उसे भी सीधे स्वर्ग की प्राप्ति हो ?''

मनुष्य जैसा कर्म करता है, वैसे ही फल को वह प्राप्त करता है, बुरे का बुरा और अच्छे का अच्छा फल होता है । बबूल को बो कर आम कदापि नहीं खाया जा सकता । जैसा कर्म या व्यवहार हम दूसरों के साथ करते हैं वैसा ही हमारे साथ भी किया जाता है । पशुवध एक क्रूर कर्म है जिसका अच्छा फल कोई भी विचारशील व्यक्ति नहीं बता सकता । धर्मशास्त्रों में अनेकों ऐसे उदाहरण मिलते हैं—

देवोपहार व्याजेन यज्ञाव्याजेन येऽथवच ।
हनन्ति जन्तून गत घृणा घोरां ते यान्तिदुर्गतिम् ॥

''जो लोग देवता पर चढ़ावे या यज्ञ के बहाने पशुओं को मारते हैं वह निर्दयी घोर दुर्गति को प्राप्त होते हैं ।''

यूपं छित्वा पशून हत्वा कृत्वा रुधिर कर्दमम् ।
यद्येव गम्यते स्वर्गे नरके केन गम्यते ॥

''यूप को काटकर और पशुओं का वध करके और उनका खून बहाकर यदि स्वर्ग मिलता हो तो नरक कौन जायेगा ?''

प्राणिघातात् तु यो धर्म मोहनं मूढ़ मानसाः ।
स वांछन्ति सुधादृष्टि कृष्णाहिमुख कोटरात् ॥

जो मूढ़ मति वाले व्यक्ति अन्य प्राणियों का वध करके धर्म की आकांक्षा करते हैं वह काले साँप के मुख से अमृत की इच्छा रखते हैं ।''

अन्धे तमसि मज्जाम, पशुभयै यजामहे ।
हिंसा नाम ये वेद धर्मो न भूतो न भविष्यति ॥

''हम में से जो व्यक्ति यज्ञ में पशु का वध करते है, वह महान अन्धकार की ओर अग्रसर होते हैं । हिंसा का परिणाम न कभी धर्म हुआ, न होगा ।''

छागं यो हन्ति, छागो भुत्वा च खड्गमृत ।
सुरथं परलोके हि, पशवो जघ्नारित्युत ॥

''जो व्यक्ति बकरे का हनन करता है, उसका वह बकरा परलोक में खड्ग को धारण करके हनन करता है । जैसे बलि में दिये हुए पशु ने परलोक में सुरथ राजा को हनन किया था ।''

पद्मपुराण—'पद्मोत्तर खण्ड' में पार्वती जी अपने श्रीमुख से कहती हैं—

स्वयं कामाशयो भूत्वा योऽज्ञानेन विमोहितः ।
हन्त्यन्यान् विविधान जीवान, कृत्वा मन्नाम शंकरः ॥
तद्राज्यवंश सम्पत्तिज्ञा निदारादिसम्पदाम् ।
अचिराद्दै भवेन्नाशो मृतः स नरकं व्रजेत ॥

(१०४ / १०५)

''हे शंकर ! स्वयं फल की इच्छा वाले होकर अज्ञान से मोह को पाया हुआ जो व्यक्ति, मेरे नाम से विभिन्न प्रकार के जीवों का वध करता है, उसका राज्य, वंश, सम्पत्ति, ज्ञान और स्त्री आदि, समस्त ऐश्वर्य कुछ ही समय में नष्ट हो जाते हैं और वह मृत्यु को प्राप्त होकर नरक में जाता है ।''

देव यज्ञे पितृश्राद्धे तथा मांगल्य कर्मणि ।
तस्यैव नरके वासो यः कुर्यज्जीवघातनम् ॥
मद्व्याजेन पशून हत्वा, यो यज्ञेन सह बन्धुभिः ।
तल्लोमसंख्यादैरसिपत्रवने वसेत ॥
आत्मपुत्रकलत्रादिसुसम्पत्ति कुलेच्छया ।
यो दुरात्मा पशून हन्यात् आत्मादीन घातयेत् सवुं ॥

देव यज्ञ, पितृ श्राद्ध तथा अन्य कल्याणकारी कार्यों में जो व्यक्ति जीव हिंसा करता है, वह नरक में जाता है । मेरे बहाने से जो मनुष्य पशु का वध करके अपने सम्बन्धियों सहित माँस खाता है, पशु के शरीर के जितने रोम होते हैं, उतने वर्ष तक असिपत्र नामक नरक में रहता है । इसी तरह जो मनुष्य आत्मा स्त्री, पुत्र, लक्ष्मी और कुल की इच्छा से पशुओं की हिंसा करता है, वह स्वयं अपना नाश करता है ।''

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है पशुवध का परिणाम नरक ही होता है, स्वर्ग कदापि नहीं हो सकता ।

पशुबलि का निषेध—वेद में एक भी ऐसा मन्त्र नहीं है जिसमें किसी भी प्राणी की हिंसा की ओर संकेत किया गया हो बल्कि उन्हें न मारने के आदेश स्थान-स्थान पर मिलते हैं—

''मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः

—ऋग्वेद १ / ११४ / ८

''हमारी गायों और घोड़ों को मत मार ।''

दूंमर्णायुं वरुणस्य नाभिं त्वयं पशूनां द्विपदां चतुष्पदाम् ।
त्वष्टुः प्रजानां प्रथम जनित्रमग्ने मां हिंसीरमेव्योमन् ।।''

—यजु. १३ / ५०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"ऊन जैसे बालों वाली बकरी, ऊँट आदि चौपायों और पक्षियों आदि दो पगों वालों को मत मार।"

न कि देवा इनीमसि न क्या योपयामसि ।
मन्त्रश्रुत्यं चरामसि ॥

(सामवेद, छन्द आर्चिक, अध्याय २, खं. ७ के द्वितीय मन्त्र)

इसमें स्पष्टतया पशुबलि का निषेध किया है और कहा है कि हे देवो ! हम हिंसा नहीं करते और न ही ऐसा अनुष्ठान करते हैं, वेद मन्त्र के आदेशानुसार आचरण करते हैं ।

इससे स्पष्ट और निर्णय नहीं हो सकता, जिसमें देवों को सम्बोधित करते हुए कहा गया हो कि हम तुम्हारे लिए हिंसा करके माँस की आहुति नहीं करते और कोई भी वेदनिषिद्ध कर्म नहीं करते बल्कि हम वह आचरण करते हैं जिसका वेद में आदेश है ।

यजुर्वेद में अहिंसा का प्रतिपादन करते हुए कहा गया है कि—

अश्वं... मा हिंसी... ॥ ४१ ॥
मा हिंसीरदितिं विराजम् ॥ ४२ ॥
अविं... मा हिंसी:... ॥ ४३ ॥
इमं मा हिंसीर्द्विपादं पशुम् ॥ ४७ ॥
इमं मा हिंसी रेकशफं पशुं कनिक्रदं
वाजिनम् ॥ ४८ ॥
घृतं दुहानामदितिं जनायाग्ने मा हिंसी ॥ ४९ ॥
इममूर्णायुं... मां हिंसी:... ॥ ५० ॥

(यजु. अ. १३)

ओषधे त्रायस्व, स्वधिते मैन हिंसी: ॥ १ ॥

(यजु अ.४)

मा हिंसिष्ठ पितर: केन चिन्नो ॥

(यजु. १९/६२)

मा हिंसी:पुरुषम् जगत् ॥ (यजु. १६/६२)
मा हिंसीस्तन्वा प्रजा ॥ (यजु. १२/६२)
कृत्याथपसुव ॥ (य. ३५/११)

"घोड़े की हिंसा न कर । मारने योग्य गाय नहीं है, उसकी हिंसा न कर । भेड़ की हिंसा न कर, दो पैर वाले प्राणियों की हिंसा न कर, घोड़े की हिंसा न कर, दूध और घी देने के कारण गाय की हिंसा न कर, ऊन देने के कारण बकरे की हिंसा न कर । हे औषधि ! रक्षण कर, हे शस्त्र हिंसा न कर, हे रक्षको ! किसी की भी हिंसा न करो, मनुष्य की हिंसा न कर, प्रजाओं की हिंसा न कर, हिंसा को तू छोड़ दे ।

महाभारत में हिंसा का विरोध—महाभारत में अनेक स्थलों पर पशुबलि का निषेध है । उसमें से कुछ प्रमाण नीचे प्रस्तुत करते हैं—

सुरामत्स्यांमधुमांसमासवंकृरुरौदनम ।
धूर्तै:प्रवर्तितंह्यतेत्रैतद्वेदेषुकल्पितम ॥ १० ॥
मानान्मोहाच्चलोभाच्चलोभ्यमेतत्प्रकल्पितम् ।
विष्णुमेवाभिजानन्तिसर्वयज्ञेषुब्राह्मणा: ॥११ ॥
पायसै:सुमनोभिश्च तस्यापियजनंस्मृतम् ।
यज्ञियाश्चैवयेवृक्षावेदेषुपरिकल्पिता: ॥ १२ ॥

(महाभारत. शान्ति)

"सुरा, मत्स्य, शराब, माँस, आसव आदि सब व्यवहार धूर्तों का चलाया हुआ है । उसका वेदों में कोई प्रमाण नहीं है । मान, मोह, लोभ और जिह्वा की लोलुपता के कारण यह बनाया गया है ।"

शान्तिपर्व के २६४वें अध्याय में यज्ञ में पशुवध करने वालों की घोर निन्दा की गई है और ब्राह्मणों का कर्त्तव्य बताते हुए भीष्म युधिष्ठिर से कहते हैं—

अव्यवस्थितमर्यादैर्विमूढैर्नास्तिकैर्नरै: ।
संशयात्मभिरव्यक्तैर्हिंसासमनुवर्णिता॥ ४ ॥
सर्वकर्मस्वहिंसाहिधर्मात्मामनुब्रवीत ।
कामकाराद्धिहिंसन्तिबहिर्वेद्यान्पशून्नरा: ॥ ५ ॥
तस्माद्यमाणत:कार्योधर्म:सूक्ष्मोविजानता ।
अहिंसासर्वभूतेभ्योधर्मेभ्योज्यायसीमता ॥ ६ ॥
यदियज्ञाश्चवृक्षाश्चयूपांश्चोद्दिश्यपानवा ।
वृथामांसंनखादन्ति,नैष्धर्म: प्रशस्यते ॥ ७ ॥

"उच्छृङ्खल मर्यादाशून्य, नास्तिक, मूढ़ तथा संशयात्मक लोगों ने यज्ञ में हिंसा का विधान वर्णित किया है । वस्तुत: यज्ञ में हिंसा नहीं करनी चाहिए । धर्म में आस्था रखने वाले मनुजी ने भी अहिंसा की प्रशंसा की है । पण्डितों का यही कर्त्तव्य है कि उसके अनुसार सूक्ष्म धर्मानुष्ठान करें । सभी धर्मों में अहिंसा को ही श्रेष्ठ धर्म माना गया है । जो मनुष्य यज्ञ, वृक्ष और यूप के उद्देश्य से पशुछेदन करके अवृथा माँस खाते हैं, उनका धर्म किसी प्रकार प्रशंसनीय नहीं है ।"

इसी पर्व में अन्यत्र लिखा है कि जब यज्ञ का विचार किया गया और यह प्रश्न आया कि यज्ञ में पशु-हिंसा होनी चाहिए या नहीं तो उस समय ब्राह्मणों और ऋषियों ने राय दी की पशु-हिंसा नहीं होनी चाहिए । बलि के प्रसंग में जो 'अज' शब्द का प्रयोग हुआ, उससे लोग बकरा शब्द ले लेते हैं किन्तु—

अजसंज्ञानि बीजानि वै त्रिवर्षोषितानि च ।

"तीन वर्ष के पुराने बीजों का नाम 'अज' है ।" यहाँ बकरा अर्थ तो मांस लालुपों ने किया है ।

इसकी पुष्टि में और स्थान पर भी आया है—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बीजैर्यज्ञेषुयष्टव्यमितिवैवैदिकीश्रुतिः ।
अजसंज्ञानिबीजानिच्छागंनोहन्तुमर्हथ ॥
नैषधर्मः सतांदेवयत्रवध्येतवैपशुः ॥

(महाभारत. शान्ति. ३३७)

"यज्ञ में बीजों से ही हवन करना चाहिए, यह वेद की श्रुति है । 'अज' संज्ञा के बीज होते हैं । अतः बकरे की हत्या नहीं करनी चाहिए । जिस कर्म में पशुओं की हत्या होती हो, वह श्रेष्ठ पुरुषों का धर्म नहीं है ।"

महामना भीष्म ने युधिष्ठिर से एक बार कहा था कि "प्राणियों की हत्या से धर्म लाभ होता हो और उसके फलस्वरूप स्वर्ग मिलता हो, तब संसारी पुरुषों के लिये नरक कैसे प्राप्त होगा ? हे युधिष्ठिर ! प्राणी हिंसा निश्चय रूप से यज्ञ में नहीं होती । यज्ञ तो हिंसा रहित होते हैं । इसलिये हमेशा हिंसा रहित यज्ञ ही करने चाहिए ।"

"पशुबलि के बाँधने के खूँटे को गाड़कर, पशुओं को मारकर, खून-खच्चर मचाकर यदि कोई स्वर्ग चला जाएगा तो नरक कौन जायेगा?"

पुराणों की पशुबलि विरोधी घोषणाएँ—पुराणों में स्थल-स्थल पर पशुबलि और हिंसा का विरोध किया गया है । उनमें से कुछ का वर्णन नीचे दिया जा रहा है ।

'पद्म पुराण पद्मोत्तर खण्ड' अध्याय १०४ व १०५ में पार्वती जी शिवजी के प्रति यज्ञों में पशुवध के सम्बन्ध में कहती हैं—

ये ममार्चं नमित्युक्त्वा प्राणिहिंसनतत्पराः ।
तत्पूजनं ममोमेध्य य द्योषातदधोगतिः ॥
मदर्थे शिव कुर्वन्ति तामसा जीवघातनम् ।
आकल्पकोटि निरये तेषां वासो न संशय ॥
यस्तु यज्ञे पशुन्हत्वा कुर्याच्छोणित कर्दमान् ।
स पचन्नरके तावद्यावल्लोमानि तस्य वै ॥
जानानि को वेद पुराण तत्वं ये कर्मठाः पण्डितमायुक्ताः ।
लोकाधमास्ते नरकं पतन्ति कुर्वन्ति मूर्खाः पशुघातं चेत् ॥

"जो व्यक्ति मेरी पूजा के विचार से प्राणियों का वध करते हैं, उनकी वह पूजा अपवित्र है । इस हिंसा के दोष से निश्चय ही उनकी अधोगति होगी । हे शिव ! तामसिक वृत्ति के व्यक्ति ही ऐसा करते हैं । करोड़ों कल्पों तक उनका नरक में वास होता है, यह निश्चय है । जो व्यक्ति यज्ञ में पशुओं को मारते हैं, उन्हें नरक में असह्य कष्ट प्राप्त होते हैं । वास्तव में अभिमानयुक्त कर्मकाण्डी वेद और पुराण के तत्व को नहीं समझते । पशुओं की हत्या करने वाले लोकाधम और मूर्ख हैं, वे अवश्य नरक में जाते हैं ।"

कोई निर्दोष जीव चाहे यज्ञ में मारकर देवी के ऊपर चढ़ाया जाये, चाहे वह कसाईखाने में काटा जाये, हर हालत में हत्या ही है और उसका परिणाम वही प्राप्त होता है जो हत्यारों को होना चाहिए । प्राचीन बर्हिष राजा ने यज्ञ में हिंसा की थी । उससे नारद मुनि कहते हैं—

भो भो प्रजापते राजन्य शून्यश्य त्वयाध्वेरे ।
संज्ञापितान् जीव संघान्निर्घृणेन सहस्रशः ।
एते ता सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशसं तव ।
सम्परेतमयः कुटैश्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ।

(भागवत. २ / २५ / ७-८)

"हे राजन् ! तेरे यज्ञ में सहस्रों पशु निर्दयतापूर्वक मारे गये । वे तेरी क्रूरता को याद करते हुये क्रोध में भरे हुए तीक्ष्ण हथियारों से तुझे काटने को बैठे हैं ।"

निम्न श्लोक में पशुवध का परिणाम कर्ता को प्राप्त होना बताया गया है—

तं यज्ञपशवोऽनेन सज्ञप्तास्तेऽदयालुता ।
कुठारैश्चिच्छिदुः क्रुद्धाः स्मरन्तोऽमीवसस्य तत्॥

(भा. ४ / २८ / २६)

"इस दयाहीन ने जो यज्ञ में पशुवध किया था, वही पशु क्रोध में आकर उस कुकर्म को याद करते हुए, उसको कुल्हाड़ों से छिन्न-भिन्न करने लगे ।"

भागवत स्कन्ध ११, अध्याय २१, श्लोक ३० में आया है, जो मनुष्य श्राद्ध और यज्ञ में पशुवध करते हैं, वास्तव में वह माँस के लोभ से ऐसा करते हैं और निश्चय रूप से छल और कपट करने वाले हैं—

हिंसाविहारा हालब्धैः पशुभि स्वसुखेच्छया ।
यजन्ने देवता यज्ञैः पितृभूत पतित खलाः ॥

वध होने वाले पशुओं की जो रक्षा करते हैं, पशु हिंसा के सम्बन्ध में फैली हुई भ्रान्तियों को जनता के हृदयों से निकालने का प्रयत्न करते हैं, पशुवध जैसे अन्याय और अत्याचार को सहन न करके जो उसके विरोध में आवाज उठाते हैं, उन्हें अभय दान देते हैं, उनके सम्बन्ध में भागवत ३ । ३ । ७ में लिखा है—

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानिचानघ ।
जीवाभयदानस्य न कुर्वीरन कलामपि ॥

"हे अकलंक ! सर्व वेद, यज्ञ, तप, दान उस मनुष्य के पुण्य के सामने अंशमात्र भी नहीं हैं जो जीवों को अभयदान प्रदान करके रक्षा करते हैं ।"

"जो जीवनपर्यन्त किसी प्रकार का माँस नहीं खाता, उसे स्वर्ग में विपुल स्थान प्राप्त होता है । यदि वह माँस खाता है तो सारे जाप, होम, नियम, तीर्थ स्नान व्यर्थ हैं ।"

(विष्णु पुराण)

हिंसा भार्या त्वधर्मस्य ततो जज्ञे त्वानृतम ।
कन्या च निकृतिस्ताभ्यां माया जज्ञे च वेदना ॥
माया च वेदना चैव मिथुनं त्विदमेतयोः ।
तवोर्जज्ञेथ वै माया मृत्युं भूतापहारिणम ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वेदना स्वसुतं चापि दुःखं जज्ञेऽथ रौरवात् ।
मृत्योर्व्याधिजराशोकतृष्णाक्रोधाश्च जज्ञिरे ॥

(विष्णु पुराण १। ७)

उपर्युक्त श्लोकों में अधर्म के परिवार की गणना करते हुए बताया गया है कि अधर्म की पत्नी हिंसा है । इन दोनों के द्वारा असत्य और दुष्कर्म उत्पन्न होते हैं । फिर उनकी सन्तानें भय, नरक, माया और वेदना जन्मती हैं । इनका वंश आगे बढ़ता है तो मृत्यु, दुःख, व्याधि, जरा, शोक, तृष्णा और क्रोध जैसे क्लेशकारक दुष्परिणाम सामने आ जाते हैं ।

"जिस धर्म में माँस और मद्य सेवन का विधान है, वह धर्म केवल नरक के लिये होता है" (नारद)

'नारद पञ्चरात्र' में श्रुति को माता कहा गया है और माता किसी भी पुत्र की हत्या नहीं करना चाहती । सभी प्राणी उसके सामने एक समान होते हैं—

श्रुतिर्वदति विश्वस्य जनजीव हितं सदा ।
कस्याहि द्रोहजननं न वल्कि प्रभु तत्परा ॥ १८

अर्थ—"श्रुति माता की भाँति सब प्राणियों के हितार्थ उपदेश करती है, वह किसी जाति या प्राणी के वध की आज्ञा नहीं देती।"

स्मृतियों में अहिंसा का प्रतिपादन—भारतीय धार्मिक साहित्य में स्मृतियों का एक विशिष्ट स्थान है । धार्मिक बातों में स्मृतियों से अधिक मान्य कोई ग्रन्थ नहीं है जिनमें वेद में वर्णित धार्मिक विषयों को अधिक विकसित रूप में दिया गया है । स्मृतियों में प्रधानतया तीन विषयों का प्रतिपादन है—आचार, व्यवहार और प्रायश्चित । स्मृतियों को धर्म का कानून कह सकते हैं । इस कानून की कसौटी पर बलि और हिंसा को भी रखना चाहिए । स्मृतियों में मिलने वाले उदाहरणों को जो अहिंसा का प्रतिपादन करते हैं, नीचे दे रहे हैं—

पञ्च सूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः ।
कण्डनी चोदकुंभश्च बध्यते यास्तु वाहयन ॥
तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः ।
पञ्च क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम् ॥
अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥

(मनुस्मृति ३। ६८, ६९, ७०)

"प्रत्येक गृहस्थ के यहाँ चूल्हा, चक्की, झाड़ू, ओखली और जल पात्र यह पाँच हिंसा के स्थान हैं । इनको काम में लाने से गृहस्थ पाप में बँधता है । इनसे छूटने के लिये (ब्रह्मयज्ञ) अध्यापन, (पितृयज्ञ) पितरों की तृप्ति, (देव यज्ञ) हवन, (भूत यज्ञ) अन्नदान, (नृयज्ञ) अतिथि सत्कार—यह पाँच महायज्ञ ऋषियों ने कहे हैं ।"

मां स भक्षयिताऽमुत्रयस्य मांसमिहादम्यहम।
एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥

जिसका माँस खा रहा हूँ, वह परलोक में मेरा माँस खायेगा । माँस का यही अर्थ है ।

—(मनुस्मृति. अ. ५ / ५५)

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी ।
संस्कर्त्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः ॥

(मनु. ५। ५१)

"पशुवध के लिये सम्मति देने वाला, माँस को काटने, पशु आदि के मारने, उनको मारने के लिये लेने और बेचने, माँस के पकाने, परोसने और खाने वाले यह आठ मनुष्य घातक हैं ।"

नाकृत्वा प्राणिनां हिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित् ।
न च प्राणिवधः स्वर्गयस्तस्यान्मांसं विवर्जयेत् ॥

(मनु. ५/४८)

"प्राणियों के वध के बिना माँस प्राप्त नहीं हो सकता । प्राणों की हिंसा से स्वर्ग उपलब्ध नहीं होता । इसलिये माँस का त्याग करना चाहिए ।"

योऽहिंसकानि भूतानि हिनस्यात्मसुखेच्छया ।
स जीवंश्च मृतश्चैव न क्वचित्सुखमेधते ॥

"जो व्यक्ति अपने सुख के लिये अहिंसक पशु की हिंसा करता है, वह जीते हुए भी मरा हुआ है । उसे कुछ भी सुख नहीं मिलता ।"

पशु हिंसा से होने वाली हानि की ओर संकेत करते हुए कहा है—

यावन्ति पशुरोमाणि तावत्कृत्वो ह मारणम् ।
वृथापशुघ्नः प्राप्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि ॥

"वृथा पशुओं का वध करने वाला व्यक्ति उतनी बार प्रति जन्म हिंस्य बनता है जितने कि उसके शरीर पर बाल होते हैं ।"

वर्षं वर्षऽश्वमेधेना यो यजेत शतं समाः ।
मांसानि च न खादेद्यस्तयोः पुण्यफलं समम् ॥

(मनु. ५। ५३)

"माँस भक्षण न करने वाले और सौ वर्ष तक हर अश्वमेध यज्ञ करने वाले को समान फल की प्राप्ति होती है ।"

पराशर स्मृति में यज्ञों तथा श्राद्धों में पशुवध का निषेध किया गया है और ऐसा करने वाले को मूर्ख कहा गया है ।

यस्तु प्राणिवधं कृत्वा मांसेन तर्पयेत्पितॄन ।
सोऽविद्वाश्चन्दनं दग्ध्वा कुर्यादंगारलेपनम् ॥

"जो व्यक्ति प्राणियों की हत्या कर, उनके माँस से देवताओं और पितरों का तर्पण करता है, वह ऐसा ही कर्म

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करता है जैसे एक मूर्ख चन्दन को जला कर अंगारों का लेपन करता है ।''

याज्ञवल्क्य स्मृति में माँस न खाने वाले की प्रशंसा की है । यथा—

सर्व्वान् कामानवाप्नोतिवाजिमेधफलं तथा
गृहेऽपि निवसन् विप्रोमुनिर्मासस्य वर्जनात् ॥

(आचार्य प्रकरण ७ श्लोक १८०)

''विद्वान सभी इच्छाओं तथा अश्वमेध के फल को पाता है । वह गृहस्थ मुनि है जो माँस भक्षण नहीं करता ।''

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि स्मृतियाँ जिन्हें धर्म का कानून मानते हैं, उनमें भी माँस भक्षण, हिंसा व पशुवध का निषेध किया गया है । उनसे होने वाले दुःखदायी परिणामों पर भी प्रकाश डाला गया है । जहाँ चूल्हा, चक्की आदि में होने वाली हिंसा के लिये प्रायश्चित का विधान बताया गया है, वहाँ हिंसा और बलि जैसे क्रूर कर्म के लिये कैसे समर्थन किया जा सकता है ? इसके विपरीत उनमें हिंसा न करने वाले को अनन्त सुख की प्राप्ति और सैकड़ों अश्वमेध यज्ञों के समान फल बताया गया है ।

अन्यान्य धर्मशास्त्रों का आदेश—हिन्दू धर्म-शास्त्रों में तो परोपकार, पर-दुःख कातरता, दया, करुणा आदि गुणों को ही मनुष्य का भूषण और मोक्ष का प्रदाता बतलाया है । उनमें ''**परोपकारयसतांविभूतयः**''।— ''**अहिंसा परमोधर्मः**—'' ''**प्राणिनामार्तनाशनम्**'' । ''**पापाय पर पीड़नम्**'' आदि जैसे वाक्य भरे पड़े हैं । मानव-जीवन का सबसे बड़ा लाभ यही बतलाया है कि वह अन्य प्राणियों के दुःख, कष्ट, अभावों को दूर करने में प्रयुक्त हो सके । प्राणी-वध, जीव हिंसा, किसी को कष्ट पहुँचाना आदि बातों की सर्वथा निन्दा की गई है ।

धर्म की व्याख्या और सदाचार की शिक्षा की दृष्टि से महाभारत सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है । उसमें धर्म के सत्य सिद्धान्त जगह-जगह भरे पड़े हैं । उसमें धर्म के मर्म को जानने वाले महात्मा भीष्म ने माँस, मदिरा आदि निकृष्ट पदार्थों का निषेध करते हुये कहा है कि— ''यज्ञों में माँस, मदिरा, सुरा आदि का व्यवहार धूर्तों ने प्रचलित किया है । वेदों में कहीं इसका उल्लेख नहीं है । अहंभाव मोह और जिह्वा की लोलुपता के कारण ही इनका प्रचार किया गया है अन्यथा सच्चे ब्राह्मण सब प्रकार के यज्ञों में उसी कण-कण में व्याप्त प्रभु का ही भजन दूध, पुष्प आदि के द्वारा करते हैं और वैदिक नियम के अनुसार हवन में वृक्षों की समिधाओं का ही उपयोग करते हैं । जो व्यक्ति इसके विपरीत यज्ञों में हिंसा का विधान बतलाते हैं उनको धर्म निन्दक, अज्ञानी और संशयात्मा ही समझना चाहिए । धर्म का उपदेश करने वाले मनु भगवान ने भी अहिंसा को ही सब कर्मों में श्रेष्ठ बतलाया है । सज्जन व्यक्तियों का कर्त्तव्य है कि इस उपदेश को शिरोधार्य कर अहिंसा-धर्म का पालन करें । जो लोग इसके विरुद्ध आचरण करते हुए यज्ञों के नाम पर पशुहिंसा करके माँस का सेवन करते हैं, उनको कदापि धर्मात्मा नहीं कहा जा सकता, वे पापी ही कहे जायेंगे ।''

देवी-देवताओं को बदनाम करने वाले—धर्म-शास्त्रों के प्रमाणों को छोड़कर भी यदि हम अपनी सामान्य बुद्धि से इस विषय पर विचार करें तो पशुओं की इस तरह हत्या करने का कभी समर्थन नहीं कर सकते । यद्यपि पशुओं को किसी प्रकार का ज्ञान या विवेक नहीं होता तो भी प्रकृति की प्रेरणा से उनको भी अपने प्राणों का मोह अवश्य होता है । इसलिये जब उनके प्राणों पर कोई संकट आता है तब वे भयभीत और व्याकुल होकर जान बचाने के लिये इधर-उधर भागने लगते हैं, डरकर चिल्लाने-पुकारने लगते हैं । ऐसे निरपराध जीवों को-जो लोग घेर-बाँधकर बलपूर्वक काट डालते हैं उनका कार्य निश्चय ही घोर पाप माना जायेगा । इसीलिये कसाई का पेशा सब कोई निन्दनीय बतलाते हैं और किसी को 'कसाई' कह देना एक तरह की गाली समझी जाती है ।

जब सामान्य रूप से माँस खाने के लिये पशुओं का मारना बुरा समझा जाता है, देवी-देवताओं के सामने पशुओं की गर्दन काटना उससे कहीं अधिक बुरा और गर्हित कर्म कहा जायेगा । जब हम देवताओं को परमात्मा का विशेष अंश और मनुष्यों के लिये कल्याणकारी बतलाते हैं, तो फिर यह कैसे सम्भव हो सकता है कि वे सीधे-सादे पशु-पक्षियों के रक्त और माँस से प्रसन्न हो सकें । ऐसे देवताओं की कल्पना तो राक्षसी स्वभाव के मनुष्य ही कर सकते हैं । सभ्य और शिक्षित लोग तो ऐसे कार्य को घृणा और विरक्ति के भाव से ही देखेंगे । उन धार्मिक स्थानों में जहाँ मनुष्य प्रभु का दर्शन करके कुछ आत्मिक लाभ प्राप्त करने की भावना से जाता है, इस प्रकार वीभत्स दृश्य उपस्थित करने वाला व्यक्ति धार्मिक किस प्रकार कहा जा सकता है, यदि ऐसा कुकृत्य करने वाले व्यक्ति को भगवान धन-संतान, सुख, सौभाग्य का उपहार देने लगेंगे तो फिर वे नरक में किसको भेजेंगे ?

अन्य मतावलम्बियों द्वारा जीव हिंसा का निषेध—इस प्रकार की जीव-हिंसा की निन्दा भारतीय अध्यात्म शास्त्रों एवं विद्वानों ने ही नहीं की है, वरन् संसार के सभी धर्माचार्यों तथा सन्तपुरुषों ने उसे बुरा बताया है चाहे आजकल मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि का परम्परागत अभ्यास के कारण आमतौर से माँस, चमड़े आदि का व्यवहार करते हैं पर उनके धर्मग्रन्थों में तथा महापुरुषों के उद्गारों में जीव हिंसा का निषेध पाया जाता है ।

ईसामसीह अपनी क्षमा और करुणा के लिये प्रसिद्ध हैं । वे सदा यही कहा करते थे कि मैं दुखियों के दुःख दूर करने आया हूँ । उन्होंने कहीं भी पशु-पक्षियों के बलिदान की बात नहीं कही है । इसके विपरीत उन्होंने ईश्वरीय विधान का वर्णन करते हुये कहा है—''मैं न तो तेरे यहाँ से बैल और न तेरी पशुशाला से बकरे लूँगा क्योंकि जंगल व पहाड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के सब पशु-पक्षी मेरे ही हैं । क्या मैं बकरे का खून पियूँ और बैल का माँस खाऊँ । मुझ परमेश्वर को तो धन्यवाद रूपी बलि चाहिये ।'' बाइबिल में ही एक अन्य स्थान पर कहा गया है कि ''जंगल की सब वस्तुओं का तुझे ज्ञान हो पर तेरे हृदय में दया न हो तो परमेश्वर के सन्मुख वह ज्ञान किसी काम न आवेगा ।'' ईसाई धर्म में जगह-जगह सब प्राणियों की रक्षा और उनके साथ मेहरबानी का बर्ताव करने का उपदेश पाया जाता है । स्वयं ईसामसीह तथा उनके सब संत-पुरुष पशुहिंसा से पृथक रहकर दूध, रोटी, खजूर, अंजीर आदि से उदरपोषण किया करते थे । बाइबिल में गाय, बैल आदि की हत्या को भी मनुष्य की हत्या की तरह बुरा बतलाया गया है ।

यहूदी तथा पारसी धर्म बड़े पुराने हैं । यद्यपि तत्कालीन परिस्थितियों के कारण वे अन्न और वनस्पतियों की कमी के कारण माँस का भी प्रयोग करते थे पर उन्होंने धर्म की दृष्टि से पशुहिंसा को अनुचित ही बतलाया है । यहूदी धर्म ग्रन्थ का वचन है कि ''बकरों और बछड़ों के रक्त से नहीं वरन् अपने ही पश्चिम व त्याग से स्वर्ग और मुक्ति की प्राप्ति हो सकती है । यह कभी संभव नहीं कि बैल व बकरियों का खून तुम्हारे पापों के धब्बों को छुड़ा सके ।'' इसी प्रकार पारसी धर्म में कहा गया है कि ''ऐ पवित्र मनुष्य ! प्रभु की आज्ञा है कि पृथ्वी को खून, मैल और माँस से अपवित्र मत बनाओ । जो दूसरों को पशुओं को मारने की प्रेरणा देते हैं अहुरमज्द (परमात्मा) उनको बुरा समझते हैं ।''

यद्यपि मुसलमानों में माँस का प्रचार अधिक है और निर्दयता की भावना भी अधिक प्रकट होती है तो भी उनके प्रमुख धर्म-वाक्य (कलमा) में कहा गया है कि ''परमात्मा का आदेश है कि तुम सब जीवों पर दया करो ।'' इसी प्रकार कुरान के प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में ''अर्रहमान-अर्रहीम'' शब्द दिये गये हैं जिनका अर्थ है कि ''परमात्मा इस संसार को बनाते समय दयालु थे और अब भी मनुष्यों के कर्मों पर विचार करते समय दयालु हैं ।'' उनके सर्वप्रधान तीर्थ मक्का की यात्रा के अवसर पर किसी प्रकार की जीव हिंसा का सर्वथा निषेध है । इस्लाम के सर्वप्रथम नेता हजरत अली का उपदेश था कि ''तू अपने पेट को पशु-पक्षियों की कब्र मत बना ।'' महान बादशाह अकबर भी कहा करता था कि ''मैं अपने पेट को दूसरे जीवों का कब्रिस्तान बनाना नहीं चाहता ।''

जीव हिंसा का कुपरिणाम—स्वार्थी मनुष्य सोचता है कि ये धर्म-कर्म की बातें तो दकियानूसी हैं । जब हम पशुओं से अधिक शक्तिशाली और साधन सम्पन्न हैं तो हमको उनसे हर तरह का लाभ उठाना चाहिए । मनुष्य तथा पशु-पक्षियों के बीच किसी प्रकार की आत्मीयता के सम्बन्ध की कल्पना एक प्रकार की भावुकता ही है । इस तरह के विचारों वाले मनुष्य पशुओं के सुख-दुःख पर मरने-जीने की चिन्ता छोड़कर केवल अपने लाभ और सुविधा पर निगाह रखते हैं और पशुओं को आत्मा से रहित समझ कर उनके साथ जड़ पदार्थ की तरह व्यवहार करते हैं । पर अन्त में इसका दुष्परिणाम भी उन्हीं को भोगना पड़ता है ।

जैसा हम ऊपर कह चुके हैं अमरीका तथा यूरोप के प्रमुख नगरों में वहाँ निवासियों को ताजा माँस पहुँचाने के लिये बड़े-बड़े कसाईघर खोले गये हैं जिनमें प्रति-दिन लाखों निरीह पशुओं की गर्दनें काटी जाती हैं । इस कार्य के लिये वहाँ कई-कई हजार व्यक्ति पशुओं को पकड़ कर लाने, उनको मारने, काटे हुये पशुओं का चमड़ा उधेड़ने और इन सब वस्तुओं को ढोने तथा कसाईघर की सफाई रखने में संलग्न रहते हैं । ये सब लोग इस प्रकार नृशंस हत्याकाण्ड करते-करते ऐसे हृदयहीन तथा निर्दय बन जाते हैं कि फिर उनमें किसी प्रकार की सहृदयता का अंश शेष नहीं रहता । ऐसे व्यक्ति समाज के हितकारी सदस्य बनने के अयोग्य हो जाते हैं और फिर किसी न किसी रूप में अशान्ति, अन्याय, हलचल उत्पन्न करने के निमित्त बनते रहते हैं । अमरीका के जिस शिकागो नगर का कसाईखाना संसार में सबसे बड़ा बतलाया जाता है वहाँ पर गुण्डों, खूनियों, गुप्तघातकों का भी बड़ा प्राबल्य है । कुछ वर्ष पूर्व वहाँ के एक प्रधान पुलिस अधिकारी ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट में लिखा था कि ''अनेक वर्षों से अपराधों की रिपोर्टों की जाँच करने से विदित होता है कि अधिकतर अपराध कसाई का कार्य किये जाने वाले व्यक्तियों द्वारा ही किये जाते हैं ।'' इस घातक पेशे को करते-करते इन लोगों की समस्त सद्वृत्तियाँ कुण्ठित हो जाती हैं और फिर वे अकसर मनुष्यों के ऊपर भी अपनी छुरी चलाने लग जाते हैं । इस तरह एक के जरिये दूसरे अन्य अनेक प्रकार के अपराधों की वृद्धि होते रहने से समाज की सुख-शान्ति को बड़ा धक्का लगता है और ऊपर से धन वैभव सम्पन्न दिखलाई पड़ने पर भी लोगों का जीवन भीतर से अशान्तिपूर्ण और सारहीन हो जाता है ।

मनुष्य जाति ने आज तक जो उन्नति की है उसका मूल आधार पारस्परिक सहयोग और मिलकर काम करने की भावना ही है । अन्यथा हाथी, शेर, साँड, भैंसा आदि पशु मनुष्य से इतने अधिक शक्तिशाली हैं कि उनको वशीभूत करके अपने अधीन कर सकना कदापि संभव न था । इसी प्रकार पहाड़ों का काटना, नदियों का बाँधना, जंगलों का काटना आदि विशाल कार्यक्रम भी मनुष्य की सामूहिक शक्ति से संभव हो सके हैं । हिंसा की भावना सामूहिकता, सहयोग के भाव को बड़ी हानि पहुँचाने वाली है । यह ख्याल करना कि हिंसक स्वभाव का व्यक्ति यदि किसी दूसरे व्यक्ति को मारता या हानि पहुँचाता है तो उससे हमारा क्या बिगड़ता है, ठीक नहीं है । जिस व्यक्ति का स्वभाव मारने-काटने, गुण्डापन करने का पड़ जायेगा, वह जब दूसरों को न पायेगा या किसी कारण उन पर अत्याचार न कर सकेगा तो उसकी वह दूषित प्रवृत्ति अपने ही साथियों पर प्रकट होने लगेगी । इस प्रकार हिंसक, दुष्टतापूर्ण स्वभाव का व्यक्ति अन्त में अपने-पराये सभी के लिये कष्टकारक ही सिद्ध होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दया-भावना का महत्त्व—इस समस्या पर यदि अधिक गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय तो मानवीय सभ्यता का मूल सहयोग, सहिष्णुता, क्षमा, दया की उच्च भावनाएँ ही हैं इनके बिना मनुष्य भी एक प्रकार का पशु ही है । जो मनुष्य स्वभावत: लड़ते-झगड़ते, मरते-मारते रहते हैं, जिनमें पारस्परिक सहयोग, सहायता की भावना नहीं है वे एक प्रकार से पशु ही हैं और उनका जीवन पशुओं की तरह ही व्यतीत होता है । जिन विद्वानों ने पृथ्वी पर मनुष्य के आविर्भाव और विकास की खोज की है, उनका यही कथन है कि कुछ लाख वर्ष पहले मनुष्य वनमानुष से मिलते-जुलते एक प्राणी के रूप में ही था जो बन्दरों की तरह पेड़ पर या जंगली पशुओं की तरह गुफा में रहकर अपनी जीवन रक्षा करता था । शारीरिक शक्ति या तेज चाल की निगाह से तो वह अधिकांश पशुओं से घटकर था । जिससे उसे सदा उनसे भागकर और कहीं छुपकर ही अपना बचाव करना पड़ता था, पर उसमें सोचने-विचारने की शक्ति अन्य प्राणियों से कुछ अधिक थी । इसी की सहायता से धीरे-धीरे उसने अनुभव किया कि यदि वह मिल-जुलकर सम्मिलित रूप से दूसरे पशुओं का मुकाबला करे तो अधिक सफलता प्राप्त कर सकता है ।

पर ऐसा होना तभी सम्भव था जब वह आदिम-मानव अपने भीतर सहिष्णुता, उदारता, क्षमा आदि की भावना को विकसित करता । मनुष्य में अधिकांश पशु-पक्षियों की तरह मारकाट कर दूसरे का सत्व अपहरण करने की प्रवृत्ति तो प्राकृतिक रूप से पायी जाती है । जैसा कि जीव-विज्ञान और विकास सिद्धान्त के ज्ञाताओं का मत है कि "प्राणियों में संघर्ष की प्रवृत्ति स्वाभाविक है और उस संघर्ष में जो विजयी होता है वही कायम रहकर अपनी वृद्धि कर सकता है ।" मनुष्य भी आरम्भ में इसी प्रवृत्ति के अनुसार आचरण करता था, पर क्रमश: वह यह समझने लगा कि इस प्रकार लड़ते-भिड़ते रहने की अपेक्षा वह मिल कर काम करने की विधि से अधिक लाभ उठा सकता है और अन्य बड़े-बड़े पशुओं को स्ववश करके लाभ उठा सकता है । जब मनुष्य इस ढंग से काम करने लगे तो उनको स्वयं ही सहयोग की उपयोगिता विदित होने लगी और वे यह भी समझने लगे कि इसमें स्थायी सफलता तभी प्राप्त हो सकती है जब मनुष्य दूसरे लोगों की छोटी-बड़ी त्रुटियों और अपराधों को माफ करना सीख ले । जानबूझ कर या अनजान में गलती होना असम्भव नहीं है और यदि ऐसे हर एक अवसर पर मनुष्य लड़ने-मरने को तैयार हो जाय तो सहयोग का भाव स्थिर नहीं रह सकता ।

इसलिये मानवीय-सभ्यता के निर्माताओं ने मनुष्यों को प्राचीनकाल से ही सहानुभूति, दया, क्षमा आदि गुणों का महत्त्व बतलाना आरम्भ किया था । प्रत्येक धर्मप्रचारक महापुरुष ने भी अपने अनुयायियों को परस्पर में प्रेम, स्नेह, करुणा का भाव रखने का आदेश दिया । पर मनुष्य इन शिक्षाओं को सुनकर भी उनका पालन कम अंशों में ही कर पाते थे, क्योंकि स्वार्थ के लिये दूसरों को दबाने, मारने की भावना उनकी प्रकृति में थी । इसका निराकरण करने के लिये यह आवश्यक जान पड़ा कि मनुष्य को जहाँ तक सम्भव हो अपने सभी कार्य इस दृष्टि से करने चाहिए जिससे उसके आन्तरिक कठोरता के भावों में कमी हो और करुणा के भावों की वृद्धि हो । इस सम्बन्ध में सबसे अधिक प्रभावशाली कार्य भगवान बुद्ध ने अब से ढाई हजार वर्ष पहले किया । उन्होंने मनुष्यों को अहिंसा का उपदेश दिया और बतलाया कि प्राणिमात्र को कष्ट न पहुँचाने के व्यवहार के द्वारा ही मनुष्य की क्षमा और दया की भावना का विकास हो सकता है और तभी वे मारने-काटने की पाशविक प्रवृत्ति से छुटकारा पाकर सच्चे अर्थों में सहयोग-मूलक समाज की रचना में समर्थ हो सकते हैं और मानवता के सर्वोच्च आदर्श की प्राप्ति कर सकते हैं ।

प्राणियों के साथ निर्दयता का व्यवहार करने की प्रवृत्ति केवल दया, धर्म और परलोक के विचार से ही अवांछनीय नहीं है, समाज की स्थायी सुख-शान्ति की दृष्टि से भी उसमें बड़ा दोष दिखायी पड़ता है । उससे हमारे मानसिक क्षेत्र में कठोरता तथा स्वार्थपरता की ऐसी भावनाओं का समावेश हो जाता है जिससे सामाजिक ऐक्य, संगठन और पारस्परिक सहानुभूति में व्याघात होता है । जो लोग भोजन अथवा मनोरंजन किसी भी दृष्टि से प्राणियों के साथ निर्दयता करने में संकोच नहीं करते वे प्राय: अपने स्वजन और पड़ोसियों के प्रति भी कठोरता के भाव ही रखते हैं और अवसर आने पर उन्हें कार्य रूप में परिणत भी कर डालते हैं । प्राचीन इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिन जातियों में हिंसा या प्राणियों के प्रति निर्दयता की प्रवृत्ति बहुत अधिक बढ़ गई थी अन्त में हर तरह के वैभव, ऐश्वर्य, सत्ता के होते हुये भी उनका अध:पतन ही हो गया । रोम, यूनान, फ्रांस आदि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं । इसलिये अपना कल्याण चाहने वाले समाज को माँसाहार, चमड़े का प्रयोग, शिकार, फैशन के लिये जीव हिंसा आदि जैसी प्रवृत्तियों को यथासंभव कम से कम घटाने की चेष्टा करनी चाहिए और निर्बल प्राणियों के प्रति दया, करुणा का भाव रखने की प्रेरणा देनी चाहिए। इससे लोगों में आत्मीयता की भावना की वृद्धि होती है जो अन्त में सामाजिक सुख-शान्ति के विस्तार में भी सहायक सिद्ध होती है ।

धर्म की आड़ में पल रहीं अन्ध-परम्पराएँ

धर्म समाज के लिए निश्चय ही आवश्यक है, किन्तु इसकी आड़ में छिपी धार्मिक मूढ़-मान्यताएँ उतनी ही हेय व घृणित हैं । अन्धविश्वासों से मानव समाज का जितना अहित हुआ है उतना अधर्म नास्तिकवाद ने भी नहीं किया ।

प्राचीनकाल में धर्म के नाम पर नरबलि जैसी अन्धपरम्पराओं का जन्म हुआ । मूढ़ता की इस बलिवेदी पर अगणित नर-नारी होम दिये गये, क्रंदन से आकाश गूँजा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

फिर भी निष्ठुर धर्मभीरुता क्रूर ही बनी रही और यह अनर्थ हजारों वर्षों तक चलता रहा, किन्तु आश्चर्य तो यह है कि इस प्रकार के धर्मानुष्ठान करने वाले धर्मभीरु ठेकेदारों को जनता का सहयोग-सहकार सतत् मिलता रहा । उन दिनों नरबलि के ऐसे वीभत्स क्रियाकृत्य प्रचलित थे जिन्हें सुनकर आज भी रोमांच हो आता है । देव-प्रतिमाओं के समक्ष उन्हें प्रसन्न करने के लिये नर-नारियों का बलि चढ़ाना, राजाओं अथवा सम्पन्न व्यक्तियों के मरने पर उनके दास-दासियों व नौकरों को उनके साथ जिन्दा दफना देना आदि क्रूर कृत्यों के ऐसे अगणित उदाहरण हैं जिनसे इतिहास भरा पड़ा है ।

प्राचीन समय में अपने देश में एक मूढ़-मान्यता सतीप्रथा के रूप में प्रचलित थी, जिसमें पत्नी को अपने दिवंगत पति के साथ जलना पड़ता था ताकि पत्नी की सेवा भक्ति उसे दूसरे लोक में भी प्राप्त हो सके । मिस्र आदि देशों में सम्बन्धियों के निधन पर उत्तराधिकारी न सिर्फ उनकी प्रिय वस्तुओं को शव के साथ दफनाने का प्रबन्ध करते थे अपितु पत्नियाँ व नौकर-चाकर भी उनके साथ ही दफना दिये जाते, जिससे उनका उपभोग कर वे सन्तुष्टि प्राप्त कर सकें ।

मैक्सिको के नेशनल म्यूजियम में सात फीट का एक गोलाकार पत्थर है । माना जाता है कि इस प्रकार का खूनी पत्थर विश्व में दूसरा कोई नहीं है । यह पाषाण खण्ड प्राचीन अजटेक्स राज्य के निवासियों की बलिवेदी था ।

निरीह अजटेक्सवासियों का विश्वास था कि नरबलि चढ़ाने से देवता प्रसन्न होते हैं और सबकी भलाई करते है । यदि उन्हें यह भेंट नहीं दी जाये तो कुपित हो तरह-तरह से प्रताड़ित करते हैं । इस विश्वास के आधार पर वे स्वजनों को ही बलि चढ़ा देते थे । जब कोई विशेष उत्सव आता तो नर-संहार प्रतिष्ठा का प्रश्न बन जाता । ऐसे मौकों पर पहले से अधिक संख्या में नर-नारियों का होम दिया जाता । इसी में वे अपनी प्रतिष्ठा व सम्मान मानते । बलि का तरीका भी बहुत वीभत्स और रोमांचकारी होता था । सिर काटकर चढ़ाने का सामान्य तरीका वे नहीं अपनाते वरन् छाती चीरकर कलेजा निकालने की कष्टप्रद पद्धति अपनाई जाती और कलेजे के टुकड़े को इष्ट देव के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता । इसी में वे अपनी शान मानते और धर्म-भावना की उत्कृष्टता प्रदर्शित करते ।

कोलम्बस ने जब अमरीका का पता लगाया उससे दो सौ वर्ष पूर्व इन अजटेक्सवासी आदिवासियों ने 'युद्ध-देव' का एक मन्दिर निर्माण किया । इसके लिये वर्षों पूर्व से तैयारी शुरू की । इस अवसर पर बलि चढ़ाये जाने वालों को बड़ी संख्या में कैद कर रखा गया था । जब उत्सव का वह विशेष दिन आया तो बलिनरों का एक बड़ा जुलूस निकाला गया । जुलूस शनैः-शनैः आगे बढ़ता रहा । अनेक पुजारी बलिनरों की छाती चीरने में निरंतर लगे रहे । इस प्रकार लगातार चार दिनों में यह अनुष्ठान पूरा हो पाया और अविरल रक्त-प्रवाह से उस पवित्र मंदिर का पत्थर धोया जाता रहा ।

मिस्र के राजाओं की कब्र विस्तृत क्षेत्र में फैली हुई है । पहाड़ियों के बीच भयंकर खाई व रेगिस्तानी इलाकों को ही वे अपनी श्मशान भूमि बनाते थे । अधिक सुविधाजनक एवं सुरक्षित होने के कारण राजा काहिरा से विदेश चले गये । वहीं पर यह घाटी है जहाँ उनकी कब्रें बनी हुई हैं । इस कब्रिस्तान में तूतन खामन की कब्र सबसे मूल्यवान मानी जाती थी । एक उत्साही एवं साहसी अँग्रेज युवक हार्वर्ड कार्टर के लगातार परिश्रम के बाद यह बहुमूल्य कब्र खोज निकाली गई ।

तूतन खामन की कब्र से प्राप्त सन्दूक तो ठोस सोने का बना था । लाश को दफनाते समय व्यक्ति की प्रिय वस्तुएँ, आभूषण, अस्त्र-शस्त्र, सौन्दर्य प्रसाधन, कपड़े व सैनिक-नौकर आदि भी दफना दिये जाते जिससे उनका पारलौकिक जीवन भी ऐश-आराम में बीते ।

पिरामिड इतने विशालकाय प्रस्तर खण्डों से निर्मित हैं कि आज के मशीनी युग में उसकी कल्पना नहीं की जा सकती । इन्हें घिसकर इस प्रकार बैठाया गया है कि उनके बीच सुई की नोंक के बराबर भी स्थान नहीं । पिरामिडों के निर्माण में गारे का बिल्कुल भी उपयोग नहीं हुआ है । मोकत्तम के पहाड़ों से विशालकाय वजनी शिलाओं को काटकर नीचे उतारना, छाती से रस्सी बाँध कर उन्हें पिरामिडों तक पहुँचाना और चार-चार सौ फीट की उतुंग ऊँचाई तक पहुँचाना इतना कठिन कार्य है जिसकी कल्पना आज नहीं की जा सकती । विवशता में आकर ही गुलाम ऐसे दुरूह कार्य स्वीकारते । इन्कार करने पर हण्टरों की मार झेलनी पड़ती और विदीर्ण होना पड़ता ।

मिस्र में इस प्रकार के छोटे-बड़े असंख्यों पिरामिड हैं । इनके रक्तरंजित इतिहास में कितने नर-नारी होम दिये गये—यह अकल्पनीय है । निश्चय ही इनके निर्माण में खून जलाते, पसीना बहाते, पिटाई व यंत्रणा सहते, घुलते-घुलते प्राण देने वालों की संख्या लाखों को पार कर करोड़ों तक पहुँच गई होगी ।

अफ्रीका में तो आज भी नर बलि के ऐसे उदाहरण पाये जाते हैं । धर्म पुरोहित अफ्रीकी महिलाएँ अपने इष्टदेवों को प्रसन्न करने के नाम पर अगणित मानवों का प्राण-हरण किया करती हैं । यद्यपि ऐसे कृत्य अब बड़े पैमाने पर नहीं होते पर यदा-कदा आज भी ऐसी जघन्य घटनाएँ वहाँ प्रकाश में आती रहती हैं ।

हाल में मानव बलि चढ़ाये जाने के अभियोग में अफ्रीका की तीन महिलाओं के विरुद्ध वहाँ के उच्च न्यायालय में एक मुकदमा चलाया गया जिससे बलि पूजा के अनेक उदाहरण सामने आये ।

पूर्वी अफ्रीका में डायनों का प्रभुत्व है । वहाँ इसे एक धार्मिक कृत्य माना जाता है । देवी-देवताओं की कृपा-दृष्टि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त करने के लिये वे इस प्रकार के कुकर्म किया करती हैं । उनका विश्वास है कि बलिदान देने से देवता प्रसन्न होते हैं और उनका अनुग्रह प्राप्त होता है । अफ्रीकियों का भी विश्वास है कि ये तथाकथित 'डायन' बलि देकर अपने आराध्य देवों को वशीभूत कर लेती हैं और उनकी सहायता से किसी का भी भला-बुरा कर सकती हैं । अस्तु वे भी उनके विरुद्ध आवाज उठाने का साहस नहीं कर पाते और गुलामों की तरह उनकी आज्ञाओं का पालन करते रहते हैं ।

पाँच हजार वर्ष पहले ईरान में दजला और फरात नदियों के तटवर्ती क्षेत्र में शासन करने वाली रानी शुवाद की कब्र जब सन् १९२७ में खोदी गई तो उसमें भी बहुत सारे स्वर्णाभूषण मिले और पास ही पड़े दो नर-कंकाल पाये गये जो सम्भवत: उनके सेवक रहे होंगे । समीपस्थ एक अन्य कब्र में दस और अस्थिपंजर पाये गये । इन सबों की बगल में विष के प्याले पड़े थे । सम्भवत: इसी के द्वारा उन लोगों को अपने प्राण अन्त करने के लिये विवश किया गया हो ।

अन्धविश्वास पिछड़ेपन का प्रतीक माना जाता है, पर वह इतना वीभत्स हो सकता है, उसके पीछे जघन्य कुकृत्य किये जा सकते हैं—यह कम ही लोगों को पता है । यह वर्षों से मानवों का शोषण करता रहा और अब भी कर रहा है । भारत में भूत-पलीत, बाल-विवाह, पशु-बलि, नरबलि, छुआछूत, पर्दा प्रथा के रूप में आज भी इसका प्रचलन कम नहीं है । पिछले दिनों कुछ इसी तरह की एक घटना सबके सामने प्रकाश में आई । जसरान (सवाई मधोपुर) की चामुण्डा देवी के मन्दिर में एक भैंसे के साथ तीन आदमियों की भी बलि चढ़ गई ।

बताते है जिस भैंसे की बलि दी जा रही थी वह काफी तगड़ा था । उसे बलि देने के लिये ही गाँव वालों ने खूब खिलाया-पिलाया था । दुर्गाष्टमी पर जब उसे बाँधकर बलि की तैयारी की जा रही थी, भैंसा एक झटके में रस्सा तोड़कर उलझ पड़ा और वहाँ उपस्थित दो आदमियों तथा एक लड़के को सींगों से उछाल कर पटक दिया और पाँव से कुचल कर मार डाला । पढ़े-लिखे लोग इसे पशुबलि का दुष्परिणाम मान रहे हैं और अनपढ़ डर रहे हैं कि चामुण्डा गाँव वालों से नाराज हो गई है । वस्तुत: धर्म की आड़ में होने वाले ऐसे कुकर्मों का उन्मूलन जब तक नहीं होगा, मानवता यों ही कटती और छटपटाती रहेगी । अत: इसके परित्राण के लिये इन अन्ध-परम्पराओं का अवसान होना ही चाहिए ।

अन्याय करना ही नहीं, अन्याय सहना भी पाप है

यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि सत्कर्म से ही सुख मिलता है । दुष्कर्म करने वाले दण्ड, हानि, नरक और दुर्गति के भागी बनते हैं । भगवान के इस अमिट विधान में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता । निरपराध पशुओं की हत्या जैसा क्रूर कर्म करके यदि कोई चाहता है कि उसे धन, सन्तान, विजय, स्वास्थ्य या सफलता मिले तो वह उतने ही अन्धेरे में है जितना कि विष पीकर दीर्घजीवन की आशा करने वाला । दुष्ट कर्म का फल केवल दु:ख ही हो सकता है । निर्दोष, निरीह प्राणियों की हत्या सर्वमान्य पाप है । इस पाप के बदले में जो लोग सुख चाहते हैं, धन सन्तान का वरदान मिलने की आशा करते हैं निश्चय ही वे भारी भ्रम और अज्ञान में डूबे हुए हैं । औंधे मार्ग को अपनाकर न तो कोई आज तक सुख-शान्ति प्राप्त कर सका है और न आगे प्राप्त कर सकेगा । इस भ्रम और अज्ञान का जितनी जल्दी परित्याग किया जा सके उतना ही कल्याण है ।

यह बात भली प्रकार समझ लेनी चाहिये कि किसी जीव को सताकर, उसका प्राण लेकर किसी भी प्रकार अपना भला नहीं हो सकता । भगवान का यह अटल नियम कभी टल नहीं सकता कि "पाप करने वाले को दु:ख और दण्ड मिलता है ।" माँस खाने के लिये किसी जीव का मारना पाप है पर धर्म को कलंकित करने एवं देवी-देवताओं को आसुरी अभिरुचि का सिद्ध करने के लिये पशु बलि देना तो दूना पाप है । इसका दण्ड भी दूना मिलता है । जो लोग किसी की हत्या करके अपने लिये धन, पुत्र, स्वास्थ्य आदि की आशा करते हैं, उन्हें यह वस्तु तो तभी मिल सकती है जब भगवान का सारा विधान ही उलट जाय और पाप करने से सुख-शान्ति मिलना आरम्भ हो जाय । ऐसा कभी नहीं हो सकता । इसलिये यह भी निश्चित है कि बलि चढ़ाने वालों पर उल्टा दैवी कोप बरसता है और वे पहले से भी अधिक दु:ख-दारिद्र में फँस जाते हैं । जिस प्रकार उन्होंने किसी जीव को रुलाया, दु:ख दिया, उसी प्रकार ईश्वर उन्हें रुलाता है और नारकीय यन्त्रणाओं से पीड़ित करता है । जैसी करनी वैसी भरनी के अटल सिद्धान्त को कोई नहीं मेंट सकता । पशु बलि देने वाले इस अटल सिद्धान्त के प्रतिकूल फल की आशा करते है तो वे भारी अज्ञान और भ्रम में हैं । उनके मनोरथ कभी सफल नहीं हो सकते ।

भागवत ४ । २५ । ७-८ में एक ऐसे ही हत्यारे राजा का वर्णन है जो देव कार्य के लिये पशुबलि करता था । मरने के बाद उसे परलोक में उन पशुओं ने तीक्ष्ण शस्त्रों से काटा ।

वस्तुत: यही ध्रुव सत्य है । किसी को चाहे धर्म के नाम पर सताया जाय या स्वार्थ के नाम पर, अन्याय का फल हर किसी को भोगना ही पड़ता है, पशुबलि करने वाले अपने मन को यह धोखा भले ही देते रहें कि हमने यह कार्य देवता की प्रसन्नता के लिये किया है और वह देवता हमें इस पाप कर्म के दण्ड से बचा लेगा, पर ऐसा कभी नहीं हो सकता । कोई सच्चा देवता पशुबलि से कदापि प्रसन्न नहीं हो सकता और न ऐसा पापकर्म करने वाले को दण्ड से बचा सकता है ।

अन्याय करना पाप है, साथ ही अन्याय सहन करना भी । जो अपने ऊपर होने वाले अत्याचार का प्रतिकार करने में समर्थ नहीं उनका पक्ष लेना, उन्हें अन्याय से बचाना उन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समस्त विवेकशील और धर्म-भावना युक्त मनुष्यों का कर्त्तव्य है जो मानवता के कर्त्तव्य पालन में विश्वास करते हैं बेचारे पशु अपनी गरदन पर चुपचाप छुरी चलवा लेते हैं उनमें इतना बुद्धि बल नहीं है कि इन अत्याचारियों से बदला ले सकें या उनके विरुद्ध आवाज उठाकर न्याय प्राप्त कर सकें । इस प्रकार बेकसों का हिमायती बनने की जिम्मेदारी प्रत्येक मानवता पर विश्वास करने वाले की है ।

इस विपन्न स्थिति को आखिर कब तक चलने दिया जाय ? यह विचारणीय प्रश्न है । पिछले कुछ दिनों से हिन्दू धर्म की महानता को कलंकित करने वाली यह बातें अपनी जड़ें जमाये बैठी हैं । क्या आगे भी इनको ऐसे ही रूप में बैठे रहने दिया जाय ? इस नवयुग की जागरण वेला में जबकि आत्मनिरीक्षण, आत्मसंशोधन और भविष्य निर्माण के लिये प्रयत्न चल रहा है तो यह भी उचित एवं आवश्यक है कि पशुबलि जैसी कलंकी कुप्रथाओं का उन्मूलन किया जाय ।

पशु बलि कुछ लोग करें और शेष लोग चुपचाप देखें, उसके विरुद्ध न कुछ कहें, न कुछ करें यह सब प्रकार अशोभनीय है । भगवान ने हमें वाणी और शक्ति, दया और करुणा इसलिये दी है कि उसका उपयोग अन्याय को रोकने, अधर्म का प्रतिकार करने और दुर्बलों का पक्ष लेने में व्यय करें । पशुबलि एक ऐसा ही अन्याय है, जो धर्म को तो कलंकित करता ही है, साथ ही असहाय जीवों पर अत्याचार भी है, इस अन्याय को रोकने के लिये प्रयत्न करना हम सभी का धर्म कर्त्तव्य है । इस धर्म कर्त्तव्य को पालन करते हुये पशुबलि को रोकने के लिये उपयुक्त वातावरण बनावें, जो लोग इस कुप्रथा पर विश्वास करते हैं, उन्हें समझाकर धर्म मार्ग पर लावें और जहाँ सम्भव हो वहाँ इस कुप्रथा के विरुद्ध सत्याग्रह आदि का भी आयोजन करें । इन उपायों द्वारा पशुबलि रोकी जा सकती है और उसके लिये प्रयत्न करने वाले भारी पुण्य के भागी बन सकते हैं ।

पशुबलि भारी भ्रम है, भारी पाप है । जिसका फल दुःख और दण्ड के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता इससे स्वयं बचने का और दूसरों को बचाने का प्रयत्न करना प्रत्येक विचारशील एवं धर्मप्रेमी का परम कर्त्तव्य है ।

पशुबलि प्रथा इस प्रकार रोकी गयी

भोली जनता को धोखे में डालकर कुछ स्वार्थी लोग किस तरह अपने कुटिल उद्देश्य पूरे करते हैं, यह देखना और जानना हो तो उन पर्वोत्सवों को ढूँढ़ने का प्रयत्न कीजिये जिनका हमारे शास्त्रों में कोई उल्लेख नहीं है । ऐसे तामसी-त्यौहार बहुत से गाँवों में मनाये जाते हैं जिनमें देवी को भाँग, चरस, शराब तथा बकरे आदि चढ़ाये जाते हैं और बाद में इस प्रसाद को देवी के भक्तजन बड़ी निर्ल्लज्जतापूर्वक छकते हैं । प्रसन्नता की बात है कि अब लोग इन तथ्यों को समझने लगे हैं और ऐसी असुरता को मिटाने के लिये अब लोगों में जाग्रति भी आ रही है ।

पिछले दिनों नदिया क्षेत्र में निवास करने वाली अनेक जातियों में कई वर्षों से एक रिवाज चली आ रही थी कि परिवार में किसी का विवाह हो जाने अथवा लड़के का जन्म होने पर महर्षि मर्दिनी-देवी पर एक बकरा चढ़ाया जाता था । यह बलि प्रथा पर्व में दो बार आश्विन में दशहरा के दिन और कार्तिक में दिवाली के दिन होती थी ।

आज भी अनेक ऐसे लोग हैं— जो समय-समय पर मनौती लेते हैं और उनकी मनोकामना के पूर्ण हो जाने पर वे भी बकरे की बलि चढ़ाते हैं । ऐसा अनुमान है इन अवसरों पर दो-दो सौ जीवों की हत्या हो जाती है ।

सन् १९७१ में स्वामी गजानन्द जी महाराज की अध्यक्षता में पन्द्रह साधुओं की टोली उस क्षेत्र के तीस गाँवों में घूम-घूम कर बलि-प्रथा की भर्त्सना कर रही थी और भक्तों से यह निवेदन कर रही थी कि उन्हें देवी के मन्दिर में नारियल चढ़ाना चाहिए । कोई भी माँ या देवी यह नहीं चाहती कि उसकी एक संतान की हत्या करके दूसरी संतान को प्रसन्न रखा जाये । किसी माँ की बेटी को सताकर यह इच्छा की जाये कि वह हमसे प्रसन्न हो जाये और हमें प्रतिफल स्वरूप आशीर्वाद दे कि हमारे परिवार की समृद्धि हो, तो यह सब कैसे सम्भव है ?

साधुओं ने यह भी कहा कि देवी-देवता तो श्रद्धा के, भाव के और प्रेम के भूखे रहते हैं । यदि वास्तव में तुम्हारी देवी खून की प्यासी है तो हम लोगों के सम्मुख बकरा काट कर दिखाना कि तुम्हारी देवी उसमें से कितना रक्त या माँस उपयोग में लाती है । तुम लोग देवी-देवताओं को बदनाम कर उनके माध्यम से स्वयं माँसाहार करते हो ।

साधुओं के प्रचार से कितने ही व्यक्तियों पर अनुकूल प्रभाव पड़ा, उन्होंने भी अपने गाँव के रहने वाले व्यक्तियों को इसकी हानियों के सम्बन्ध में समझाया । बलि देने के उत्सुक व्यक्तियों को बकरे के स्थान पर नारियल चढ़ाने के लिये तैयार किया गया ।

मेले के अवसर पर चालीस स्वयंसेवक तैयार किये गये । इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया कि कोई व्यक्ति मन्दिर की सीमा में आकर पशु की बलि न चढ़ावे । स्वामी गजानन्द ने तो यहाँ तक कह दिया कि यदि तुम्हारी देवी बलि से ही प्रसन्न होती है तो मेरी गरदन काट कर अपनी देवी को चढ़ा दो । मेरा शरीर तुम लोगों के काम आ गया और तुम्हारी इच्छाएँ पूरी हो गईं ऐसा जानकर मैं अपने को धन्य समझूँगा ।

पर लोगों का इतना साहस कहाँ था ? विरोध के लिये स्वयंसेवकों को उपस्थित देखकर जो व्यक्ति बलि चढ़ाने आये थे वे भी लौट गये । श्रद्धालु लोगों ने तो केवल नारियल ही चढ़ाया । इस प्रकार उस वर्ष से किसी भी पशु का वध नहीं हुआ ।

इसी तरह महाराष्ट्र में एक गाँव है डिगराउत पाठा, आस-पास के गाँवों की तरह यहाँ भी प्रतिवर्ष फागुन के महीने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में वध चौथ मनाई जाती रही है । इस दिन देवी का जुलूस निकाला जाता था और इसके बाद उसके आगे भेड़-बकरों की बलि दी जाती थी । लेकिन युग-निर्माण परिवार के साहसपूर्ण प्रयत्नों से, बहुत दिनों से चली आ रही यह कुप्रथा समाप्त हुई उसके स्थान पर सात्विक-पूजा का प्रबन्ध किया गया ।

प्राणियों के साथ निर्दयता न करें

मनुष्य को संसार के समस्त प्राणियों में श्रेष्ठ, बुद्धिमान और सत्ताधारी माना गया है । हमारे धर्मशास्त्रों के अनुसार तो वह ईश्वर का प्रतिरूप ही है और उसमें वे सब शक्तियाँ बीज रूप से निहित हैं जो परमात्मा में बतलाई जाती हैं । ऐसी दशा में मनुष्य का उत्तरदायित्व भी बहुत बढ़ जाता है और जगत की सुव्यवस्था, सुख, शान्ति का भार उसी पर आ पड़ता है । केवल अपनी और अपने कुटुम्ब वालों का भरण-पोषण और रक्षण कर लेना, अथवा अपने जाति भाइयों के लिये धर्मशाला, अस्पताल, मार्ग, पाठशाला, कुआँ, तालाब आदि की सुविधा कर देने से ही उसका कर्त्तव्य पूरा नहीं हो जाता वरन् मनुष्यों से भिन्न अन्य प्राणियों का ध्यान रखना भी उसका धर्म है ।

यदि यह कहा जाय कि इस संसार और उसमें रहने वाले समस्त जीवों को उस परमपिता ने पैदा किया है तो यह भी मानना पड़ेगा कि मनुष्य उन सब में ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है और अन्य प्राणी उसके छोटे भाई-बहिन हैं । यद्यपि वे बुद्धि और विवेक की कमी से मनुष्य की तरह संगठित होकर कोई कार्य नहीं कर सकते और न उसकी तरह अपने मनोभावों को स्पष्ट रीति से प्रकट करने में समर्थ हैं तो भी इसमें सन्देह नहीं कि उन्हें भी हमारी ही तरह अपने प्राण प्यारे हैं और वे भी सुख-सुविधा प्राप्त करने की ऐसी ही इच्छा रखते हैं । इसलिये ज्ञानी, धर्मात्मा, कर्त्तव्यपरायण व्यक्ति उसी को कहा जायेगा जो इन प्राणियों के प्रति भी वैसी ही भावना रखता है जैसी हम अपने घर, परिवार, सम्बन्धियों के छोटे-बड़े बालकों की तरफ रखते हैं । इसी तत्व को दृष्टिगोचर रख हमारे धर्मग्रन्थों से 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के महान सिद्धान्त की घोषणा की गई है और मनुष्य को आदेश दिया गया है कि वह इन अबोल प्राणियों के प्रति सदैव दया और करुणा का व्यवहार करे । संसार के सभी सन्त और साधु पुरुषों ने भी अपने अनुयाइयों को यही उपदेश दिया है कि सभी जीव जन्तुओं पर दया रखी जाय और निरर्थक कभी किसी को कष्ट न पहुँचाया जाय ।

पर वर्तमान समय में संसार की गति और मनुष्यों की प्रवृत्ति इसके विपरीत ही जान पड़ती है । कहने को तो यह उन्नतशील युग कहा जाता है और मनुष्य पंचतत्वों पर आधिपत्य स्थापित करके चन्द्रमा और ग्रहों तक को अपने अधिकार क्षेत्र में लाने की चेष्टा कर रहा है । पर जब हम वास्तविकता पर निगाह डालते हैं तो ढोल के भीतर पोल ही दिखाई पड़ती है । सब प्रकार की उन्नति और प्रगति का परिणाम जो सुख और शान्ति होना चाहिए उसका दिन पर दिन अभाव ही होता जाता है । यों मूर्ख व्यक्ति चाहें तो चमकती हुई मोटरों और वायुयानों, एयर कण्डीशन, सिनेमागृहों और फैशनेबिल होटलों को उन्नति का चिह्न समझ लें पर दरअसल इनके कारण मनुष्यों का शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य नष्ट हो रहा है, वह गन्दे और गर्हित व्यसनों का शिकार बनता जाता है, उनकी नैतिकता और चरित्र भ्रष्ट होता जाता है और वे प्रेमपूर्वक व्यवहार करने और पाने के बजाय ईर्ष्या, द्वेष, घृणा का शिकार होते जाते हैं । इसका मुख्य कारण यही है कि आज शिशु अवस्था से बालक को उदाहरण और पुस्तकों द्वारा जो शिक्षा दी जाती है वह सब ऊपरी होती है, उसमें भौतिकता और स्वार्थ की प्रधानता ही रहती है । पर मनुष्य का जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंश हृदय और आत्मा है उसकी तरफ कोई ध्यान नहीं देता । फल यह होता है कि तरह-तरह के नये साधनों तथा शक्ति के प्राप्त होते रहने पर भी मानव-दानव बनता चला जाता है । वह अपने स्वार्थ के लिये, अपने आराम के लिये दूसरों का अहित करने, उन्हें कष्ट पहुँचाने, उनकी उपेक्षा करने में कुछ भी संकोच नहीं करता । इसी दुष्प्रवृत्ति का परिणाम है कि एक ओर उन्नति की पराकाष्ठा होते हुए भी दूसरी ओर मानव जाति के विनाश की सम्भावना प्रकट हो रही है ।

पशुओं तथा अन्य प्राणियों के साथ क्रूरता और निर्दयता का व्यवहार करने से मनुष्य का हृदय कठोर बनता है और उसकी कोमल वृत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं । इसका परिणाम यह होता कि वह अन्य मनुष्यों के साथ भी अमानुषिकता का व्यवहार करने में संकोच नहीं करता । इस सम्बन्ध में एक विद्वान ने लिखा है कि "जो व्यक्ति प्राणियों के साथ दया का व्यवहार करता है वही अन्य मनुष्यों पर दया कर सकता है । दुनिया में सब मनुष्य एक से स्वभाव के नहीं होते । जिस प्रकार मनुष्यों के शरीर में हमको अन्तर जान पड़ता है वैसा ही उनके स्वभाव और विचारों में भी फर्क रहता है । ऐसे कोई दो मनुष्य नहीं मिल सकते जो सब विषयों में बिल्कुल एक से विचार रखते हों । कुछ लोग तो इस प्रकार के आपसी मतभेद को प्रकृति का स्वाभाविक नियम समझ कर उसे अधिक महत्व नहीं देते अथवा शान्तिपूर्वक आपस में किसी प्रकार का समझौता कर लेते हैं । पर अन्य लोग ऐसे भी होते हैं जो जरा से मतभेद को हठ और क्रोध का समावेश करके बढ़ाते चले जाते हैं और अन्त में छुरी, तलवार, बन्दूक से उसका फैसला करने को तैयार हो जाते हैं । यह सब हार्दिक भावों और बाल्यावस्था से हृदय-पटल पर जमी हुई क्रूरता की प्रवृत्तियों का ही परिणाम होता है । यदि हम इस संसार को वास्तव में प्रभु का एक बगीचा बनाना चाहते हैं जिसमें सर्वत्र उपयोगी फल-फूल उत्पन्न हो रहे हों, सुन्दर पक्षी अपने मनमोहक शब्दों से श्रोताओं के चित्त को प्रफुल्लित कर रहे हों, प्रत्येक पथिक को अनायास मधुर फल और शीतल जल उपलब्ध हो सके, तो हमको मानव-जाति की मानसिक वृत्तियों में परिवर्तन करके उनमें दया, करुणा, पारस्परिक स्नेह, सौजन्य भावों का उद्रेक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करना होगा । इस सम्बन्ध में अमरीका के एक प्रचारक श्री ऐंजल का कथन है—

"गरीब और अनबोल प्राणियों के वकील की हैसियत से मैं आपको यह बतलाना चाहता हूँ कि जितनी शीघ्रता से हमारी समस्त शिक्षण संस्थाओं में जीव दया और समस्त प्राणियों के प्रति सहानुभूति के गीत, कविता, साहित्य का प्रचार बढ़ाया जायेगा उतने ही अंशों में इस नाशकारी हिंसा की भावना की जड़ कटेगी । इतना ही नहीं वरन् सब प्रकार के अपराधों का मूल नष्ट होगा । कुकृत्य के बदले सजा देने, जेल में बन्द करने से जहाँ कि एक अपराध को रोका जा सकता है वहाँ मीठे शब्दों से, दया की भावना जाग्रत करने से हजारों दुष्ट कार्यों को मिटाया जा सकता है ।"

आत्मा की अमरता का सिद्धान्त—पशु-पक्षियों के साथ सद्व्यवहार करने का एक बड़ा आधार आत्मा की अमरता का सिद्धान्त है जिसे हिन्दू धर्म की आधारशिला कह सकते हैं । कोई भी सच्चा हिन्दू चाहे वह पढ़ा-लिखा हो और चाहे उसकी अक्षरों से कभी भेंट भी न हुई हो, इस तथ्य को कदापि अस्वीकार नहीं कर सकता कि चींटी से लेकर हाथी तक प्राणिमात्र में एक ही आत्म तत्व का प्रकाश हो रहा है। पशु-पक्षियों में भी प्रेम-भावना और अपने साथ भलाई करने वाले के प्रति कृतज्ञता का गुण बहुत बड़ी मात्रा में पाया जाता है । प्राचीन और नवीन साहित्य में हाथी, घोड़ों, कुत्तों आदि की वफादारी और सेवा भावना के ऐसे हजारों सच्चे उदाहरण मिलते हैं । हाथियों की बुद्धिमानी की अनेक घटनायें प्रसिद्ध हैं और जो उनके साथ प्रेम का व्यवहार करता है उसे वे बरसों तक याद रखते हैं और अवसर आने पर उसकी उदारता का बदला चुकाते हैं । घोड़ों ने अनेक बार युद्ध में अपने प्राणों का मोह त्यागकर स्वामी की प्राण-रक्षा की है । महाराणा प्रताप के चेतक घोड़े की कथा इतिहास के पन्नों पर अंकित है और झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के घोड़े ने भी युद्ध-सेना में स्मरणीय वीरता प्रदर्शित करके घायल रानी को युद्ध क्षेत्र से बाहर पहुँचा दिया था । कुत्तों की स्वामिभक्ति और अपने स्वामी मालिक की आज्ञापालन तत्परता हम प्राय: देखते ही रहते हैं । इंग्लैण्ड में एक कुत्ते ने दीन-दु:खियों की सहायता करने वाली संस्थाओं के लिये लाखों रुपया चन्दा करके दिया था । इसी प्रकार स्विट्जरलैण्ड के सेंट बर्नार्ड ईसाई गिर्जाघर के 'बेरी' नामक कुत्ते ने अपने जीवन में चालीस व्यक्तियों की प्राण-रक्षा की थी । वहाँ पर उस कुत्ते का एक स्मरण चिह्न स्थापित किया गया है । गायें भी अपने पालने वाले परिवार के व्यक्तियों से कैसी हिल-मिल जाती हैं और घर के एक व्यक्ति की तरह ही जीवन व्यतीत कर देती हैं इसके उदाहरण भी प्रत्येक स्थान में मिल सकते हैं ।

पशुओं के साथ इस प्रकार आत्मीयता का सम्बन्ध रखते हुये यदि उनके मारने का विचार मन में लाया जाय अथवा उन्हें जानबूझ कर कष्ट पहुँचाया जाय तो यह मनुष्य के लिये एक कलंक की बात ही होगी । धार्मिक दृष्टि से तो किसी भी प्राणी को अकारण कष्ट देना या उसका प्राणनाश करना एक बड़ा पाप है और उसका प्रतिफल इस जन्म या आगामी जन्म में मिलता ही है । किसी को दु:खी करने से सबसे पहले तो अपनी आत्मा ही निर्बल और व्याकुल होती है और फिर उससे जो संस्कार हमारे अन्तर्मन पर पड़ते हैं वे आजीवन हमारे साथ रहते हैं और अन्तकाल में भी उनका स्मरण हमें अधोगति की तरफ प्रेरित करता है ।

इसलिये हमारा कर्त्तव्य है कि हम पशुओं से भी प्रिय और मीठे शब्दों में ही कुछ कहें ! जैसा कुछ लोग सोचते होंगे यह कोई हँसी की बात नहीं है, वरन् सचमुच अनेक पशु-पक्षी ऐसे भावनाशील होते हैं कि उन पर हमारी सद्भावनाओं का प्रभाव मनुष्यों की अपेक्षा भी अधिक पड़ता है । चाहे घोड़ा हमारे शब्दों का अर्थ ठीक-ठीक न समझे पर भाव को वह तुरन्त हृदयंगम कर लेता है । रूस के जगत प्रसिद्ध सन्त पुरुष टाल्सटाय घोड़ा गाड़ी में चलते समय अपने घोड़े को कभी चाबुक नहीं मारते थे । जब उनसे इसका कारण पूछा गया तो उन्होंने कहा कि "मैं तो अपने घोड़े के साथ बात करता हूँ, उसको मैं मार कैसे सकता हूँ ।"

चमड़े के लिये होने वाला पशुसंहार—अधिकांश व्यक्ति यह समझा करते हैं कि पशुओं की हिंसा माँस के लिये ही की जाती है, पर यह ख्याल ठीक नहीं है । वर्तमान समय में माँस से भी अधिक चमड़े के लिये पशु काटे जाते हैं । आजकल देश और विदेशों में चमड़े की माँग बहुत बढ़ गई है इसलिये जिन पशुओं को काटते हैं उनकी अधिकांश कीमत चमड़े से ही वसूल हो जाती है । कहा जाता है कि चमड़े के लिये इस देश में जितने पशु काटे जाते हैं, उन सब का माँस यहाँ नहीं खप सकता । इसलिये उसे जहाजों में भर कर विदेश भेजा जाता है और यह आज-कल एक बड़ा व्यवसाय बन गया है । अमरीका के शिकागो नगर के कसाई खाने ने बहुत समय पहले एक विज्ञापन छपाया था जिसमें अपने कारोबार की प्रशंसा करते हुये यह कहा था कि "हम प्रतिवर्ष ८० लाख से ऊपर बैल, सूअर, घेंटा (छोटे सूअर) आदि को काटकर हजारों कोस तक माँस पहुँचाते हैं ।" इस तरह के और भी सैकड़ों कसाईखाने संसार के विभिन्न देशों में बने हैं । इन सब में प्रतिवर्ष कितने करोड़ पशु माँस और चमड़े के लिये मारे जाते हैं उनकी पूरी संख्या दिल को कँपा देने वाली है ।

यह समझना कि इन पशुओं की हत्या का पाप केवल कसाई को लगता है एक बड़ी भूल है । पाप का मुख्य भागीदार वह व्यक्ति होता है जो प्रेरणा या लालच देकर उसे कराता है । अगर चमड़े और माँस का प्रयोग करने वाले काफी मूल्य देकर इन पदार्थों को न खरीदें तो कसाई उन जानवरों को क्यों मारेगा ? आजकल लोग फैशन के ख्याल से बढ़िया चमड़े के जूते ही नहीं पहिनते वरन् चमड़े के ही हैण्ड बैग, बटुआ, बक्स, कमर की पेटी आदि का भी उपयोग करने लगे हैं । लोहे के ट्रंक तो साधारण लोग काम में लाते हैं और अमीर लोगों के साथ चमड़े के ऐसे ट्रंक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चलते हैं जिनका मूल्य लोहे वालों की अपेक्षा बीस गुना अधिक होता है । इसी प्रकार साधारण व्यक्ति एक दो रुपये की कीमत का प्लास्टिक का बटुआ काम में ले आते हैं पर अमीर महिलाओं की पर्स किसी ऐसे दुष्प्राप्य चमड़े की बनी होती है जिसके लिये घातक लोग दूर-दूर जाकर प्राणियों को मार कर लाते हैं । पुराने जमाने में हम केवल थोड़ी-सी योरोपियन स्त्रियों को अपने कोटों में लोमड़ी आदि का बालों सहित नर्म चमड़ा लगाये देखते थे अब सौ-दो सौ पाने वाले व्यक्ति भी चमड़े के दस्ताने और बास्कट आदि पहिने दिखाई पड़ते हैं । वे इस बात का ख्याल नहीं करते कि हमारे इस तुच्छ शौक अथवा झूठी शान के लिये कितने निरीह प्राणी क्रूरतापूर्वक मारे जाते होंगे । चाहे वे लोग शहरों की सौदागरों की सजी हुई दुकानों से ऐसे चमड़े के पदार्थ खरीदते समय दूरवर्ती स्थानों में होने वाले उन हत्याकाण्डों का ख्याल न करें, पर भगवान और धर्म की दृष्टि में वे कदापि पाप और उसके दण्ड से नहीं बच सकते ।

यह स्पष्ट है कि यदि बहुसंख्यक लोग माँस और चमड़े का उपयोग करना बन्द कर दें तो पशुवध का कार्य अपने आप बन्द हो जाय या बहुत ही घट जाय । अपने उपयोग के लिये स्वयं पशु का गला काट कर और उसका चमड़ा उधेड़ कर माँस काम में लाये ऐसे व्यक्ति हजार में से एक भी नहीं मिल सकते । कसाई लोगों को चमड़े का जो बढ़ा-चढ़ा दाम प्राप्त होता है उसी के लालच से वे अधिक पशु हत्या करने लगे हैं । यद्यपि कसाई का धन्धा सब देशों में हीन समझा जाता है और सभ्य कहलाने वाले सफेदपोश लोग उसके प्रति घृणा का भाव भी प्रकट करते हैं, पर शोक है कि वे तनिक ठण्डे दिल से कभी यह विचार नहीं करते कि कसाई को हत्या की प्रेरणा देने वाले हम ही हैं । एक बार अमेरिका के 'श्वेत गिर्जा' नामक स्थान में किसी माँसाहारी ने एक कसाई की निन्दा की तो कसाई ने जो उत्तर दिया वह बहुत उचित और विचारणीय था । उसने कहा था—

"मैं इस हीन कार्य को तुम्हारे ही लिये करता हूँ । तुम्हारे जैसे व्यक्ति ही हमारे जैसों को इस तरह अधम बनाते हैं ।"

'क्रोम' चमड़े का महापाप—इस चमड़े के शौक के कारण पशुओं पर कैसा जुल्म ढहाया जाता है उसका वर्णन बड़ा रोमांचकारी है । वर्तमान समय में मनुष्य वास्तविक अर्थों में 'अर्थ-पिशाच' बनता जाता है, और धन प्राप्त करने के लिये कैसा भी पैशाचिक कृत्य करने में संकोच नहीं करता । जब चमड़े के व्यवसायियों को यह बात मालूम हुई कि मारे जाने के बाद पशु का चमड़ा उतारने के बजाय यदि उसे जीवित अवस्था में ही विशेष विधि से उतार लिया जाय तो वह अधिक कोमल और चिकना होता है तब से पशुओं पर मानो जुल्म का पहाड़ ही टूट पड़ा है । इसके लिये जीवित बैल, गाय या भैंस को पहले हाथ पैर और मुँह बाँध कर डाल देते हैं । फिर उस पर खौलता हुआ पानी और तेल आदि डाल कर उसे बेंतों से घण्टों तक पीटते रहते हैं । ऐसा करने से रक्त का कुछ अंश चमड़े में समा जाता है और वह अधिक नर्म व मजबूत बन जाता है । तब उसे मशीन या छुरी द्वारा पशु की जीवित अवस्था में ही शरीर से अलग कर देते हैं । यह 'क्रोम' नामक चमड़ा आजकल जूते के लिये अधिक पसन्द किया जाने लगा है, इस कारण प्रतिदिन जाने कितने निर्दोष पशुओं को लोमहर्षक यंत्रणाएँ सहकर प्राण त्यागने पड़ते हैं । यह मानवता का निस्सन्देह बहुत बड़ा पतन है कि ऐसे तुच्छ शौक के लिये अथवा थोड़ा अधिक पैसा प्राप्त करने के लिये ऐसे कृत्य करने लगता है जिनको राक्षस भी करने को तैयार न हों । उनके लिये तो यही कहा जाता है कि वे पशुओं और मनुष्यों को मार कर खा जाते हैं, पर यह 'सभ्य' कहलाने वाला शैतान इन्सान अपनी ही जैसी आत्मा रखने वाले पशुओं को जिस तरह घण्टों तड़पा-तड़पा कर मारता है उसके लिये उसे जितना धिक्कारा जाय उतना ही कम है ।

इससे भी घृणित वह तरीका है जिसमें गाय को नमक का बहुत-सा पानी पिलाकर खूब दौड़ाया जाता है जिससे उसका गर्भ गिर जाय ऐसे गर्भस्थ बच्चे का चमड़ा बहुत अधिक दामों में बिकता है और फैशन की बढ़िया-बढ़िया चीजें बनाने के काम आता है । पर इससे गाय को जो अपार कष्ट होता है और वह भी प्रायः मर जाती है इस तरफ कोई ध्यान देना नहीं चाहता ।

शिकार का निर्दयतापूर्ण व्यसन—जो लोग मनोरंजन या किसी प्रकार के लाभ की दृष्टि से शिकार करते हैं, वे भी प्राणियों के साथ निर्दयता का व्यवहार करने के दोषी हैं । शेर, चीता या अन्य भयंकर जंगली जानवरों के शिकार को तो क्षम्य माना जा सकता है क्योंकि उससे अन्य बहुसंख्यक उपयोगी पशुओं और मनुष्यों की रक्षा होती है, पर खरगोश, लोमड़ी, हिरन आदि निर्दोष पशु और सुन्दर पक्षियों को मारने का कोई सयुक्ति कारण नहीं बतलाया जा सकता । कोई भी विचारशील व्यक्ति ऐसा कार्य नहीं कर सकता । गौतमबुद्ध जैसे महापुरुष ने अपनी बाल्यावस्था में ही तीर से घायल हंस की रक्षा करके शिकार की प्रथा का विरोध किया था । अन्य भावनाशील व्यक्तियों के अनुभव से भी यही विदित होता है कि शिकार से मनुष्य की कोमल वृत्तियाँ कुण्ठित होती हैं और सहानुभूति तथा सहयोग से गुणों का ह्रास होता है । इस सम्बन्ध में 'टर्जबीफ' नामक रूसी लेखक ने अपना अनुभव लिखते हुये कहा है—

"मैं जब दस वर्ष का था तो मेरे पिता एक दिन मुझे अपने साथ शिकार करने को ले गये । जंगल के समीप पहुँचने पर एक सुनहरे रंग का जंगली तीतर फरफराहट करता दिखाई दिया । उसी समय मैंने अपनी छोटी बन्दूक ऊँची करके चला दी और तुरन्त ही वह पक्षी लुढ़कता, फुदकता, तड़फड़ाता हुआ मेरे समीप आ गिरा । वह पक्षी अब मृत्यु के समीप था और उसके शरीर से प्राण निकल ही रहे थे । पर बच्चों के प्रति उस मादा पक्षी का प्रेम मृत्यु की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ और वह अपनी बची-खुची

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शक्ति लगा कर उड़कर अपने घोंसले के पास पहुँच गया । वहाँ उसके छोटे बच्चे, जो अभी तक भय से अनजान थे, उसे देखकर खुशी से चहचहाने लगे । वह मादा अपने बच्चों की रक्षा के लिये घोंसले का द्वार अपने पंखों से बन्द करके वहीं पड़ी रही । मैं वहीं खड़ा हुआ यह सब हाल देखता रहा । मुझे ऐसा जान पड़ा कि वह मेरी ओर ताकती हुई चोट पहुँचाने के लिये मुझे उलाहना दे रही है और बच्चों की रक्षा के लिये विनय कर रही है । मैं अपने को अपराधी समझ कर हृदय में पश्चात्ताप करने लगा । इतने में उस पक्षी का प्राण उड़ गया और अपने घोंसले के समीप ही नीचे गिर गयी । मैंने भयभीत होकर अपने पिता की तरफ देखते हुए कहा "पिताजी ! यह मैंने क्या कर डाला ?" पिता ने कहा "प्रिय पुत्र ! तूने ठीक किया । बन्दूक चलाने का प्रथम अवसर होने पर भी तेरा निशाना ठीक लगा और थोड़े समय में ही तू अच्छा शिकारी बन सकेगा ।" मैंने उत्तर दिया—"नहीं पिताजी ! नहीं अब मैं कभी ऐसा कार्य नहीं करूँगा । मैं कभी किसी जीवित प्राणी का विनाश नहीं करूँगा । अगर आप इसे मनोरंजन कहते हों तो मुझे उसकी जरूरत नहीं । मुझे मृत्यु की अपेक्षा जिन्दगी अधिक प्रिय है । किसी को जिन्दगी दे नहीं सकता तो मुझे उसके लेने का क्या अधिकार है ।"

कुछ लोग स्वयं तो शिकार नहीं करते, पर शिकारियों द्वारा मारे गये शेर, बारहसिंघा, जंगली भैंसा आदि के चेहरों को मसाले द्वारा सुखाकर सजावट के तौर घर की दीवारों पर टाँग देते हैं । इसी प्रकार छोटे घड़ियालों, लोमड़ियों और अन्य कई जन्तुओं को भी मुद्रा हालत में भुस आदि भरकर सजावट के काम में लाया जाता है । यह कार्य प्रकट में विशेष दूषित नहीं जान पड़ता, पर ऐसी वस्तुओं पर सदैव दृष्टि पड़ते रहने से ऐसे जीवों के जीवन-मरण के प्रति उपेक्षा की मनोवृत्ति उत्पन्न हो जाती है और करुणा की भावना का नाश होता है । खासकर जो बालक छोटी अवस्था से ही ऐसे वातावरण में रहते हैं वे पशुओं को भी अपने आमोद-प्रमोद के जड़-पदार्थों की तरह समझने लगते हैं और बड़े होने पर उनमें शीघ्र हिंसा और पशुओं के प्रति निर्दयता की भावना का उदय हो जाता है ।

'परीक्षण' के नाम पर होने वाली निर्दयता—आजकल स्कूलों और कालेजों में जीवविज्ञान की शिक्षा के नाम जो 'विविसेक्शन' पद्धति प्रचलित है उससे भी मनुष्यों के हृदय में कठोरता और निर्दयता के भावों की वृद्धि होती है । इसके लिये मेढक, खरगोश और अन्य कई प्रकार के जीवों को काटकर, जलाकर, तपाकर, टुकड़े-टुकड़े करके, बिजली का झटका देकर तरह-तरह के परीक्षण किये जाते हैं । इस प्रकार शिक्षा के नाम पर निर्बल प्राणियों के साथ जो घातक व्यवहार किया जाता है और उनको कष्ट पहुँचाकर मारा जाता है । वह निन्दा के योग्य कार्य है । अनेक विदेशी विद्वानों ने इसको अनावश्यक बतलाया है और कहा है कि इस तरह कोई निर्दयतापूर्ण और अनैतिक परीक्षण किये बिना भी शिक्षा दी जा सकती है । खासकर छोटी अवस्था में बालकों के सन्मुख इस प्रकार का उदाहरण उपस्थित करने से उनकी श्रेष्ठ मनोवृत्तियों का हनन होता है और अपने भावीजीवन में विशेष स्वार्थी और अन्य लोगों के सुख-दुःख के प्रति उपेक्षा का भाव रखने वाले बन जाते हैं । यह बात सामाजिक कल्याण की दृष्टि से बहुत हानिकारक है । यदि कोई शिक्षा की दृष्टि से इसको अनिवार्य भी मानते हों तो भी ऐसे प्राणियों को विद्यार्थियों के सामने मृत अवस्था में लाकर शारीरिक अंगों का ज्ञान कराना चाहिए ।

यही बात औषधियों के लिये मारे जाने वाले प्राणियों के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है । उदाहरण के लिये 'काडलिवर आयल' बनाने के लिये लाखों मछलियों को नष्ट किया जाता है और भी बहुत-सी दवाएँ पशु-पक्षियों को मार कर तैयार की जाती हैं । पर तो भी रोगों का ठीक इलाज नहीं हो पाता । क्योंकि मनुष्य तथा अन्य प्राणियों के शारीरिक संगठन में कई प्रकार का अन्तर पाया जाता है । इसलिये पशुओं के द्वारा बनायी गयी औषधियाँ एक अनिश्चित परीक्षण के रूप में ही ग्रहण की जाती हैं । रोगों का वास्तविक इलाज तो संयम और प्रकृति के नियमानुसार जीवन-निर्वाह करना है । पर पहले तो तरह-तरह के अनाचारों, विपरीत रहन-सहन के परिणामस्वरूप रोगी बनना और फिर उन रोगों से छुटकारा पाने के लिये निरपराध जीवों का बुरी तरह से नाश करना प्रत्यक्षतः अन्याय युक्त और पागलपन का काम है ।

पशुओं से अधिक काम लेना—मानव-समाज पशुओं का बड़ा ऋणी है । यद्यपि आज हम भाप, पेट्रोल, बिजली आदि की शक्ति का प्रयोग करने के कारण पशुओं के महत्त्व को पूरी तरह समझने में असमर्थ हो गये हैं पर अब से दो सौ वर्ष पहले ही बैल, घोड़ा, ऊँट, हाथी, भेड़, बकरी, कुत्ता आदि पशु ही मानवीय-सभ्यता के निर्माण और प्रसार में सबसे बड़े सहायक थे । अति प्राचीनकाल में जब मनुष्य समस्त कार्य अपने ही हाथों से मामूली लकड़ी और धातु के औजारों द्वारा करता था तो अधिक परिश्रम करने पर भी बहुत थोड़ी प्राप्ति होती, जिससे वह कठिनाई से अपना जीवन निर्वाह कर सकता था । पर जब उसने बैल, घोड़ा आदि से खेती और अन्य व्यवसाय सम्बन्धी कार्य कराना आरम्भ किया तो उसके निर्वाह-साधन बहुत बढ़ गये और उसे साहित्य, कला, विज्ञान आदि अन्य विषयों की तरफ ध्यान देने का अवसर मिलने लगा । इस प्रकार हजारों वर्षों से पशु हमारे सहयोगी रहकर एक प्रकार से मानव परिवार के अंग ही बन गये हैं और उनके साथ उदारता, सहृदयता, दया का व्यवहार करना हमारा कर्त्तव्य है । यदि कोई व्यक्ति स्वार्थपरता की भावना से उनसे शक्ति से अधिक काम लेता है, उनको ठीक खाना न देकर डण्डे के जोर से चलाने की कोशिश करता है, उनके बीमार, घायल, अशक्त हो जाने पर भी मार-मार कर उनसे काम कराता रहता है तो ऐसा मनुष्य निन्दा का पात्र ही नहीं वरन् सामाजिक दण्ड का भी अधिकारी है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यों तो पशुपालन का कार्य हमारे देश में सदैव से ही एक प्रमुख लाभदायक एवं शुभ कार्य माना जाता रहा है । लोग भिन्न-भिन्न उद्देश्य, सवारी, दुग्ध, कृषि, भारवहन आदि के लिये पशु पालते आये हैं किन्तु पशुपालन का सम्बन्ध केवल उक्त उद्देश्य के लिये ही नहीं होता था वरन् प्रत्येक व्यक्ति पशुओं की इतनी सम्हाल-संरक्षण रखता था जैसे किसी कौटुम्बिक परिजन की । पशुओं को अपने परिवार का अंग समझा जाता था । उनके भोजन, रहने के स्थान, बीमारी, सुरक्षा आदि का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता था । उनसे आवश्यकता से अधिक काम लेना पाप समझा जाता था । उनके आराम का भी विशेष ध्यान रखा जाता था । इस प्रकार पशुओं के साथ दया, क्षमा, सहृदयता एवं आत्मीयता का व्यवहार इस पुण्यमयी भारतभूमि का महान आदर्श रहा है ।

आज उसी देश में पशुओं के साथ बरती जाने वाली निर्दयता हमारे उक्त आदर्श के लिये कलंक है । आज पशुपालन में मुख्य प्रवृत्ति अनुचित स्वार्थ साधन की हो गई है । स्वार्थ साधन के समक्ष मनुष्य आज पशुओं के साथ सहृदयता, दया, प्रेम एवं आत्मीयता के भावों को भूलता जा रहा है । आजकल पशुओं के साथ बरती जाने वाली निर्दयता का दृश्य कहीं भी देखा जा सकता है । क्योंकि पशुपालन का उद्देश्य केवल अपनी धन लोलुपता एवं अनैतिक स्वार्थवृत्ति को पूरा करना ही रह गया है । पशुओं के साथ निर्दयता एवं हृदयहीनता-पूर्वक व्यवहार निम्न तरीकों से किये जाते हैं—

(१) शक्ति और सामर्थ्य से अधिक काम लेना—जब मनुष्य अपने स्वार्थ साधन में अन्धा हो जाता है तो उसके हृदय में मानवोचित सहृदयता नष्ट होने लगती है और वह अपने मन्तव्य को पूर्ण करने के लिये कैसा भी उचित-अनुचित कार्य करने में हिचकिचाहट नहीं करता । ठीक यही व्यवहार आज पशुओं के साथ किया जा रहा है । उनसे आवश्यकता से अधिक काम लेना आज साधारण-सी बात बन गई है । उदाहरणार्थ, अनेक ताँगे वालों को ही देखिये । सरकारी कानून के अनुसार घोड़ा ताँगे में अधिक से अधिक चार सवारी का बोझ ढो सकता है । किन्तु ताँगे वाले उस मूक पशु की शक्ति और सामर्थ्य को भूल जाते हैं । बहुधा देखा जा सकता है कि वे अधिक आय के लालच में ४ से अधिक सवारियाँ जिस प्रकार भी उसमें आ सकती हैं, बैठाते हैं । ८, १० सवारियाँ और काफी वजन धर लेना तो उनके लिए साधारण-सी बात है । जब शक्ति और सामर्थ्य से बाहर इतने भार को खींचने में घोड़ा असमर्थता प्रकट करता है तो उस बेचारे पर कोड़े, चाबुक एवं डण्डे आदि की मार पड़ती है । बेचारा घोड़ा अपने दुर्भाग्य पर रोता हुआ ऊपर से बरसने वाली मार से तड़पकर, चलता है । असहनीय भार, कोड़े एवं चाबुकों की मार और मार्ग की दीर्घता से उसका दम फूल जाता है । इस बर्बरता पूर्ण व्यवहार से उसकी अन्तरात्मा रो उठती है । यही व्यवहार बैलों, भैसों एवं गधों आदि के साथ होता है । बैलगाड़ी वालों का अत्यधिक भार ढोना बैलों के लिये एक नारकीय यंत्रणा से कुछ कम नहीं होता ।

(२) जखमी जानवरों से काम लेना—मनुष्य पशुओं की शक्ति और सामर्थ्य से अधिक काम लेता है इससे भी अधिक उसकी क्रूरता और हृदयहीनता का पता तब लगता है जब वह जखमी और बीमार एवं छोटी उम्र के पशुओं से काम लेता है । अक्सर ताँगे, गाड़ी आदि में जोते जाने पर घोड़े एवं बैल के शरीर में बहुधा जखम देखे जाते हैं । किन्तु इनकी परवाह कौन करता है ? स्वार्थलोलुप व्यक्ति उन्हें जखमी होते हुए भी काम में जोतते रहते हैं । इतना ही नहीं कई हृदयहीन ताँगे वाले घोड़ों के मर्मस्थलों एवं कोमल स्थानों पर स्वयं घाव बना देते हैं जिससे उस घाव पर चाबुक की मार पड़ने से घोड़ा तेजी से चलने लगे । होता भी यही है । जखमी स्थान पर चाबुक की मार पड़ते ही उस मूक पशु के शरीर में दुःख एवं तड़पन की लहर दौड़ उठती है और वह छटपटा कर उस असहनीय दुःख से बचने के लिए जोर से दौड़ता है किन्तु दौड़कर कहाँ जाये ? यही हाल बैल, भैंसे, गधे आदि के साथ भी होता है । इतना ही नहीं जब वृद्ध, रोगी पशुओं को काम में जोता जाता है तो उसकी दम फूल जाती है । कई बार तो वे गिर पड़ते हैं और मर भी जाते हैं । जिस प्रकार ताँगे वाले घोड़े के मर्मस्थलों में घाव बना देते हैं इसी प्रकार बैल एवं भैसों को भी नुकीली कील जो एक लम्बी लकड़ी में गढ़ी हुई होती है चुभाई जाती है । असहाय मूक पशुओं को अपने लौहपाश में बाँध कर इस प्रकार यन्त्रणा देना क्या मानवता के ऊपर कलंक नहीं ? क्या यह पैशाचिक कृत्य माँस खाने से भी अधिक बुरा नहीं है ? पाठक स्वयं निर्णय कर सकते हैं ।

(३) फूँका प्रथा—उक्त कृत्यों से भी अधिक भयंकर, हृदयवेधक एवं तड़पा देने वाली 'फूँका प्रथा' है । दुधारू पशुओं से अधिक दूध लेने के लिये उनके बच्चों को मार डालते हैं । बिना बच्चे के दूध देने में जब गाय, भैंस आनाकानी करती है तो ग्वाले लोग एक मोटा-सा रस्सा या टाट का गोल-गोल पुलन्दा या उसी पशु की पूँछ, उस दूध देने वाले जानवर के मूत्र मार्ग में ठूँस देते हैं । जिसकी भयंकर पीड़ा से वह पशु काँप उठता है और असह्य दुःख के कारण अपनी पिछली टाँगों को फैला कर और बदन को ढीला सा कर लेता है । जिससे अधिक दूध निकलता है । प्रतिदिन की 'फूँका' के कारण उसके शरीर की सारी शक्तियाँ निचुड़ जाती हैं । वह दूध तो अपनी साधारण सामर्थ्य से अधिक देता रहता है पर दूसरी बार गर्भ धारण करने में असमर्थ हो जाता है ऐसी दशा में दूध बन्द होते ही उनके निरुपयोगी हो जाने के कारण उन्हें कसाइयों को बेच दिया जाता है ।

(४) पशुओं की वृद्धावस्था और सँभाल—जिन पशुओं ने जन्म भर कमा-कमा के हमारे घर भर की सेवा की और उक्त दुःखों एवं दर्दों को सहन करके मालिक की मुराद पूरी की उनकी वृद्धावस्था में क्या स्थिति होती है यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसी से छिपा नहीं है । वृद्ध, दुर्बल-घायल या रोगी होते ही या तो वे अभागे कसाइयों को बेच दिये जाते हैं या यों ही छोड़ दिये जाते हैं । जो यों ही छोड़ दिये जाते हैं वे भूखे, प्यासे तड़पकर कहीं भी अपने जीवन को समाप्त कर देते हैं । कई लूले, लँगड़े, अपाहिज पशु जो एक समय अच्छी नस्ल के कहे जाते थे, जिन्होंने अपने मालिक की सेवा करने में कमी नहीं रखी थी, उनका ऐसा दुःखद अन्त हमारी मनुष्यता को कलंकित करने वाली बात है ।

वृद्धावस्था से पूर्व भी पशुओं की देखभाल, भोजन, आराम, सफाई आदि का अधिकतर ध्यान नहीं रखा जाता । वे बेचारे आधे भूखे-प्यासे देखे जाते हैं । अपनी भूख को शान्त करने के लिये बेचारे गन्दी वस्तुओं का भक्षण करते देखे जाते हैं ।

यह स्थिति है आज भारत में पशुओं की । अहिंसा, दया, सहृदयता, धर्म के देश में पशुओं की यह हालत ? क्या उक्त घटनाएँ हमारे लिए लज्जा का विषय नहीं है ? क्या भारतीयता के ऊपर यह अभिशाप नहीं है ?

सरकारी प्रयत्नों के अनुसार इसके लिये कुछ न कुछ किया जा रहा है । जैसे पशु चिकित्सालय, पशुओं पर निर्दयता रोकने के लिये इन्सपेक्टर, फूँका प्रथा के लिये कानून आदि । किन्तु इसके लिये समाज-सेवकों के प्रयत्न की विशेष आवश्यकता है । जनता में उक्त घटनाओं का उल्लेख करते हुये दर्द एवं दया की भावनाओं को जगाना होगा । पशुओं के प्रति भी कौटुम्बिक सदस्यों का-सा व्यवहार करना होगा । पशुओं की सुरक्षा, आराम एवं सेवा का पूरा-पूरा ध्यान रखना प्रत्येक पशुपालक का आवश्यक कर्त्तव्य है । उन्हें मास में कम से कम एक दिन का आराम भी अवश्य देना चाहिए जैसा कि कई प्रदेशों में किसान अमावस्या को करते हैं । अमावस्या के दिन पशुओं से काम लेना वैसे भी शास्त्रों में वर्जित है । समाज की ओर से स्थान-स्थान पर पशुपालन, गौशालाएँ खोलना, सार्वजनिक स्थानों पर चरागाह पानी की सामूहिक व्यवस्था करना आदि भी करने चाहिए । यदि हम अपनी पुरानी व्यवस्था के अनुसार पशुपालन एवं संरक्षण का कार्य कर सकें तो अवश्य ही वह दिन आयेगा जिस दिन भारत में दूध की नदियाँ बह उठेंगी । राष्ट्र का पशुधन ज्यों-ज्यों बढ़ेगा निरोग, बलवान एवं सहृदयतापूर्वक परिपालित होगा त्यों-त्यों समृद्धि, सम्पन्नता, प्रगति दिन-दिन बढ़ती जायगी ।

न्याय और सद्व्यवहार पालतू पशुओं के साथ भी बरता जाय

करुणा, मैत्री, सहकारिता, उदारता जैसे सद्गुण मनुष्यता के अंग माने जाते हैं । इनकी चर्चा भी बहुत होती है । न्याय और सद्व्यवहार का प्रतिपादन हर मंच से होता है । पर दुर्भाग्य यह है कि यह सद्भावना मात्र अपने ही समुदाय तक सीमित रखने की बात सोची जाती है । मनुष्य-मनुष्य के साथ सद्व्यवहार करे इतना ही पर्याप्त मान लिया जाता है । यह भुला दिया जाता है कि अन्य प्राणी भी इसी संसार के निवासी हैं । उन्हें भी भगवान ने हमारी ही तरह पैदा किया है । उन्हें भी न्याय और सहयोग पाने का अधिकार है ।

वैसे तो बुरे लोग भी अपने स्त्री-बच्चों के साथ न्याय ही नहीं उदार व्यवहार भी करते हैं । उनके लिये कष्ट सहते और बहुत कुछ त्याग करते हैं । पर जब बाहर वालों का प्रश्न आता है तो निष्ठुरता बरतने और आक्रमण करने से नहीं चूकते । ऐसी दशा में उनका घर वालों के साथ उदारता बरतने का कोई मूल्य नहीं रह जाता जबकि वे दूसरों के साथ दुष्टता बरतते हैं ।

मानवी दृष्टिकोण और अन्तःकरण की माँग है कि न्याय और औचित्य का दायरा मनुष्य समाज तक सीमित न रह कर उसका विस्तार अन्य प्राणियों तक भी होना चाहिए । अन्यथा संकीर्ण क्षेत्र तक सीमित रहने वाली उदारता मात्र पक्षपात बनकर रह जायगी । वर्ग स्वार्थ और दलगत स्वार्थ ही आदर्शों का दायरा घेरे रहेंगे तो वे उपहासास्पद ही कहे जा सकेंगे ।

देखा जाता है कि मनुष्य अपने काम आने वाले सेवा संलग्न पालतू पशुओं तक से वह न्यायोचित व्यवहार नहीं करता जो उसे करना चाहिए । यों सद्व्यवहार तो प्राणिमात्र के साथ होना चाहिये । जियो और जीने दो की नीति सर्वत्र अपनाई जानी चाहिये पर वे निरीह पशु जो अपने साथ कुटुम्बी की तरह रह रहे हैं और अपना सर्वस्व अर्पण किये हुये हैं उनके साथ तो उदार नहीं न्यायोचित व्यवहार तो होना ही चाहिए ।

घरेलू जानवरों या अन्य पशु-पक्षियों से उसे यह भय तो रहता नहीं कि वे उसका कोई नुकसान कर देंगे । फिर भी इन जानवरों के साथ उसका व्यवहार तभी तक ठीक रहता है जब तक कि वह समझता है इनसे हमें काम लेना है । जैसे भारत के गाँवों में बैलों की स्थिति को ही लें । आवागमन और यातायात के मशीनी साधनों का सर्वत्र प्रचलन होने के बावजूद भी गाँवों में बैल का महत्त्व आज भी है । यातायात और आवागमन के साधनों का पर्याप्त प्रचलन केवल शहरों और कस्बों तक ही सीमित है । गाँवों में तो आज भी सामान ढोने से लेकर सवारी ले जाने और यात्रा करने का काम बैलगाड़ियों के जरिये होता है । गाँव के ऊबड़-खाबड़ रास्ते और टक्करें तथा गड्ढों से भरे हुये मार्ग ट्रैक्टर तथा बसों के उपयुक्त नहीं हैं । इन रास्तों पर तो बैलगाड़ी ही चल सकती है और चलती है ।

हालांकि सम्भव स्थानों पर ट्रैक्टर और बसें जाने लगी हैं । लेकिन बैलगाड़ी का अस्तित्व ग्रामीण सभ्यता के साथ इतना रच और पच गया है कि ब्याह-बारात में ट्रैक्टर या बस ले जाने पर गाँव वालों को वह मजा नहीं आता जो बैलगाड़ी में गीत गाते और बैलों के गले में बँधी घंटियों के साथ बारातियों को आता है । क्योंकि गाँव वाले बैलगाड़ी के साथ अपनापन अनुभव करते हैं । ट्रैक्टर या बस का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयोग उन पर बड़प्पन की छाप और सम्पन्नता का दबदबा तो जरूर छोड़ देते हैं । परन्तु गाँव वालों का अपनापन उनके साथ अभी नहीं जुड़ा है ।

बैलों का खेती से लेकर हाट-बाजार और सवारी यात्रा में इतना घनीभूत उपयोग ही उन्हें घरेलू चौपायों के रूप में बन जाने का कारण है । लेकिन बैलों के साथ ग्रामीणों का व्यवहार कैसा है ? लगता है इन्हें पशु या प्राणी समझने के स्थान पर मशीनी पुर्जा ही समझा जा रहा हो और इनकी सार-सँभाल तथा देख-रेख तभी तक आवश्यक समझी जाती है जब तक कि ये काम के रहते हैं । प्राय: ग्रामीण अपने बैलों और जानवरों को हृष्ट-पुष्ट रखने के लिये अच्छी खुराक देते हैं । उनकी देख-रेख भी बड़े मनोयोगपूर्वक करते हैं । लेकिन इसका एक खेदजनक पहलू भी है वह यह कि देखरेख और हृष्ट-पुष्ट रखने का ध्यान तभी तक किया जाता है जब तक कि वे गाड़ी में जुतने लायक हों और गाड़ी में जोतते समय भी उन पर अधिक से अधिक भार लादने की चेष्टा की जाती है । ताकि दूसरा चक्कर लगाने की इल्लत से बचा जा सके । बैल कितना ही ताकतवर हो पर उसकी ताकत असीम तो नहीं होती । यहाँ आकर इनके साथ मशीन से भी बुरा व्यवहार किया जाता है ।

मशीनों की सामर्थ्य भी एक सीमा के अन्दर ही है । बिजली की मोटर भी घोड़ें की शक्ति से मापी जाती है । एक हॉर्स पावर (अश्वशक्ति) की मोटर दो हॉर्स पावर की मोटर । इस शक्ति से ज्यादा मोटर काम नहीं करती और जब उस पर काम का भार बढ़ता है तो वह जल जाती है । उसके साथ न मारपीट की गुंजायश है और न जोर-जबर्दस्ती की । लेकिन जानवरों के साथ यह सब किया जा सकता है, किया जाता है । उनकी सामर्थ्य से अधिक भार लाद कर उनसे यह आशा की जाती है कि वे बोझा खींचें । यह तो साफ है कि जानवरों में आदमी की तरह कामचोरी या आलस्य की आदत नहीं होती । फिर भी वे अधिक भार नहीं खींच पाते तो उन पर इतनी निर्मम मार पड़ती है कि बेचारे जानवर होने के कारण विद्रोह नहीं कर पाते यही गनीमत है ।

बैलों की जननी गाय भी घरेलू प्राणी है । गाँव की कृषि-व्यवस्था में गाय की भी अहम् भूमिका होती है । इसलिये जिनके पास खेती की जमीन है वे गाय भी पालते हैं । लेकिन गाय को कोई प्राणी समझने के स्थान पर दुधारू मशीन भर समझा जाता है और उसकी तभी तक कद्र की जाती है जब तक कि वह दूध देती है । कहने को तो हम गाय को माता कहते हैं । भारतीय संस्कृति की मान्यता भी गायों के प्रति पूज्य भाव रखने की है । यह उचित भी है । लेकिन इसके साथ यह आग्रह भी जुड़ा हुआ है कि उसे मात्र दुधारू जानवर ही न समझा जाय वरन् उसके प्रति पूज्य भाव रखते हुये उससे परिवार के सदस्य के समान ही सदाशयता और सद्भावनापूर्ण व्यवहार किया जाय । लेकिन हम गाय के प्रति पारिवारिक आत्मीयता विकसित करना तो दूर रही उसे प्राणी भी नहीं मानते उसे दुधारू मशीन समझ कर तभी तक उसकी उपयोगिता मानते हैं जितने समय तक वह दूध देती है । दूध निकालने के बाद लोग गाय को ऐसे ही छोड़ देते हैं और वह इधर-उधर भटकती हुई लोगों का नुकसान करती है, सड़कों और सार्वजनिक स्थानों पर गन्दगी फैलाती रहती है । हालांकि प्राणी को मशीन तो नहीं कहा जा सकता पर एक क्षण के लिये हम उसे मशीन भी मान लें तो कोई मशीन को काम लेने के बाद ऐसे ही तो नहीं छोड़ दिया जाता । उसकी भी सफाई, स्वच्छता, देख-रेख और तेल पानी का इन्तजाम करना पड़ता है । उसकी सुरक्षा का ध्यान रखना पड़ता है । इस मायने में गाय-बैल के प्रति मनुष्य का मशीनी दृष्टिकोण भी कहाँ रहा ?

जानवरों पर ज्यादा बोझ लादने से लेकर उन्हें यों ही बेगारी में छोड़ देने तक की लापरवाही को क्या कहा जाय ? यह तो मनुष्यता नहीं है । इससे आगे हम अन्य प्राणियों के साथ में मनुष्य के व्यवहार को देखें, परखें तो मनुष्यता से भी गिरा हुआ ही पायेंगे । सभी जानवर-माँस भोजी नहीं होते हैं और जो माँसभोजी भी होते हैं वे अपने शिकार का उपयोग पेट भरने तक ही करते हैं—इससे ज्यादा नहीं । मनुष्य तो फिर जानवरों से हजार गुना श्रेष्ठ और लाख गुना ऊँचा कहा गया है वह है भी । इसका कारण है मनुष्य का बुद्धितत्व जिसकी उपलब्धि उसे जानवरों से ऊँचा उठा देती है । लेकिन मनुष्य ने इस तत्व का उपयोग किया किस दिशा में है ?

हथियार की उपयोगिता सुरक्षा में ही है । औजार मनुष्य के काम को सुविधाजनक बनाने तथा उसके श्रम को हल्का करने के लिये ही बनाये गये हैं । चाकू काट-छाँट करने और फलों तथा सब्जियों को खाने योग्य स्थिति में लाने के लिये ही निर्मित हुये हैं । आग का महत्त्व धातुओं को गलाने से लेकर भोजन को पकाने के लिए प्रयुक्त करने में ही है । इन चीजों का उपयोग दूसरों को हानि पहुँचाने में किया जाय तो यह प्रयोक्ता का पागलपन अथवा अपराधी वृत्ति का ही परिचायक है । इन अर्थों में यदि बुद्धि की उपलब्धि को उपयोगिता की कसौटी पर कसा जाय और देखा जाय कि उसकी बुद्धि के उपयोग की क्या दिशा है, तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ेगा कि बौद्धिक उपलब्धि मनुष्य के पतन में ही सहायक हुई है । उसकी सार्थकता मनुष्यता के वरण में, मानवीय आचरण में है न कि दूसरे प्राणियों को हानि पहुँचाकर अपने झूठे अहं को तृप्त करने अथवा अपने ही स्वार्थों की अन्धी पूर्ति में ।

जानवरों का उपयोग उनकी जीवन-चेतना को नकार करना तथा जानवर है, उनमें प्राण है इसलिये निर्जीव मशीनों से भी बुरा उपयोग करना मनुष्य के लिये जरा भी शोभा नहीं देता । यह तो निर्ममतापूर्वक दोहरा लाभ उठाने की घृणित और ओछी मनोवृत्ति हुई । इसी प्रकार यह स्थिति पाशविकता से भी निम्न स्तर की रही कि हम उनकी खाल को अपने घर में बैठने या शोभा बढ़ाने के लिये प्रयोग करें । अपनी मौत से मरे हुये जानवरों की खाल ही निकाली जाती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तो भी थोड़ा था, पर चर्म प्राप्त करने के लिये पशुओं को निर्दयतापूर्वक मारा जाना कहाँ की मनुष्यता है ?

अनेक शिकारी केवल इसलिये जंगलों में हिरनों और अन्य दूसरे पशुओं का शिकार करते हैं कि उनका चमड़ा, माँस, हड्डियाँ, दाँत और सींग महँगे दामों पर बिक जाते हैं । यदि मानवीय संवेदना को इस सन्दर्भ में रखकर जरा भी सोचा जाय तो यह ठीक इसी प्रकार होगा जैसे पैसे के लिये किसी की हत्या कर देना । जानवर मनुष्य से बुद्धि में ही तो पिछड़े हैं अन्यथा उनमें भी मनुष्यों के समान जान होती है, उनका भी जीवन होता है, भूख, प्यास, नींद और आवास उनकी भी आवश्यकताएँ हैं । क्या केवल बुद्धि न होने से ही उन्हें मार दिया जाय और उनका उपयोग अपनी सुख-सुविधाओं के लिये किया जाय । यदि बुद्धिहीनता ही उनके जीवन का मूल्य शून्य करने का कारण हो तो फिर उन हजारों, लाखों, करोड़ों मनुष्यों का क्या किया जाय जिनमें बुद्धि का विकास औसत स्तर का भी नहीं हुआ है ?

नहीं—ये सभी कारण झूठे हैं जो जानवरों की हिंसा और उनके निर्मम उपयोग का समर्थन करते हैं । सही बात तो यह है कि बौद्धिक चेतना, रहन-सहन, सभ्यता और संस्कृति का निरन्तर विकास होने के बावजूद भी मनुष्य अपनी मानवीय चेतना को इतना विकसित नहीं कर पाया है कि उसे दूसरों में भी अपने ही समान प्राणों का आभास हो । वह अभी भी उसी स्तर पर जी रहा है जिस पर कि दूसरे हिंसक पशु जीते हैं और अपनी क्षुधा तृप्ति के लिये दूसरे प्राणियों को मार डालते हैं ।

बुद्धि की उपलब्धि ने तो उसे और भी पतन के गर्त में धकेल दिया है । अन्य हिंसक पशु तो केवल भूख को तृप्त करने के लिये ही हिंसा करते हैं । पर मनुष्य अपने कमरे को सजाने के लिये, व्यापार-व्यवसाय को बढ़ाने के लिये जीभ का स्वाद पूरा करने के लिये और अन्य अनेक प्रयोजनों के लिये पशु-हत्या और जीव-हिंसा को अपनाता है । पशुओं के प्रति बरती जाने वाली यह निर्दयता मानवता के सर्वथा विपरीत है । ऐसा क्रूर व्यवहार सर्वथा निंदनीय है । सोचना चाहिए कि हम इन पशुओं की स्थिति में होते तो अपने ऊपर कैसी बीतती । असम्भव नहीं कि कभी अपने को भी पशु योनि में जाना पड़े और ऐसी ही क्रूर निर्दयता का शिकार बनना पड़े । उचित यही है कि जनमानस में सहृदयता जगायी जाय जिससे इस स्तर की नृशंसता पर अंकुश लग सके । यद्यपि कानून में 'निर्दयता निवारक' एक धारा है और ऐसी क्रूरता करने वालों को घायल पशुओं को जोतना तथा अधिक सवारी बिठाने तथा बोझ लादने वालों को अदालत के कटघरे में खड़ा करके उन्हें जेल पहुँचाया जा सकता है पर वह कानून आज पुस्तकों तक ही सीमित है । पुलिस पर इस कानून के पालन कराने की जिम्मेदारी है पर वह कितना कर पाती है, यह सभी जानते हैं ।

सहृदय लोगों को यह कार्य हाथ में लेना चाहिए और जिनका भी पालतू पशुओं से किसी प्रकार का सम्बन्ध है उन्हें मनुष्यता के आदर्श और कर्त्तव्य के प्रति—दया और करुणा अपनाने के प्रति—चेतना जगानी चाहिए । पशुपालकों के लिए उचित है कि उनसे उतना श्रम ले जो उनकी साधारण शक्ति के अन्तर्गत है । निर्दयतापूर्वक मार-पीट न करें, घायल हों तो जोते नहीं, इतना भार न लादें जिससे उन्हें घायल होना पड़े । यदि घाव हो गया है तो पूरी तरह अच्छा हो जाने तक उसे विश्राम दें । अशक्त और घायलों को घर से पीटकर निकाल देने और कौए, कुत्तों के खा जाने के लिये अक्सर गधे और घोड़े वाले छोड़ देते हैं, यही बुरी बात है । अशक्तता या बुढ़ापे की स्थिति में—पेन्शन की तरह उन्हें कुछ दिन बिना काम लिये भी भोजन देना चाहिए । अशक्त एवं वृद्ध गाय बैलों को कसाई के हाथ बेच देना एक बुरे किस्म की कृतघ्नता है ।

पक्षियों को पिंजड़े में बन्द करके पालना एक प्रकार से उन्हें आजीवन कैद में डाल देना है । घर की शोभा बढ़ाने के लिये उसे स्वतन्त्र जीवन-यापन की सुविधा से वंचित करना एक निर्दयता ही है । जो पक्षी पिंजड़े से बाहर रखकर कबूतर, मोर आदि की तरह पाले जा सकते हैं उनकी बात समझ में आती है पर पिंजड़ा तो साक्षात् नरक है । तोते, तीतर सुन्दर लगते हैं तो उसका मतलब यह नहीं है कि उनकी सुन्दरता को बन्दी बनाया और सताया जाय । हमारे द्वारा दी हुई तथाकथित बढ़िया योजना और बढ़िया निवास से पक्षी को सदा अपना स्वच्छन्द विचरण पसन्द होता है । उन्हें भी मनुष्य की तरह स्वतन्त्रता प्रिय है तो पक्षियों को पिंजड़े में क्यों परतन्त्र बनायें ।

रेशमी कपड़े पहनने वाले यह नहीं जानते कि यह धागा किस निर्दयता से प्राप्त किया जाता है । रेशम का कीड़ा जीवित ही खौलते पानी में उबाला जाता है और असह्य वेदना के साथ उसका प्राण लिया जाता है । तब कहीं उसके शरीर से वह खोल छूटता है । जिसके धागे से रेशम बनता है । असंख्य प्राणियों का प्राण लेकर रक्त-रंजित रेशम पहनकर इतराना प्रसन्नता की नहीं लज्जा की बात है । मोटे और भद्दे किस्म का एक रेशम ऐसा भी होता है जिसे कीड़ा छोड़ जाता है और उसमें हत्या की आवश्यकता नहीं पड़ती । उसका उपयोग हो सकता है । पर अधिक महीने धागे वाला और अधिक चमकने वाला रेशम तो एक पूरे बूचरखाने की तरह ही प्राप्त किया जाता है । ऐसी वस्तुएँ धारण करना आँखों को शोभायमान भले ही लगे सहृदय अन्तःकरण को वे कचोटती ही रहेंगी । अच्छा हो ऐसी फैशन और चमक-दमक से हम बाज आयें जिसके लिये असंख्यों जीवों को तड़प-तड़पकर अपना प्राण देना पड़ता हो । ऐसी ही कई अन्य वस्तुएँ भी हैं जो प्राणि वध के हत्यारे तरीकों से ही प्राप्त की जाती हैं । कस्तूरी जीवित मृग को मारकर निकाली जाती है । चँवर डुलाने की शोभा तब बनती है जब चँवरी गाय की हत्या करके उसकी पूँछ काटी जाती है । मोती जीवित सीपों को पकड़ कर उन्हें तेजाब के पानी में तड़पा कर मारा जाता है तब उनका पेट फाड़कर मोती निकलते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बालों वाले बच्चों के कोट, मोजे, दस्ताने, टोपे आदि के लिये लाखों सुन्दर लोमड़ियाँ बन्दूक का निशाना बनती हैं । हिरन अब अपनी मौत नहीं मरते शिकारी ही उन्हें भून डालते हैं । मृगछाला बिछाकर भजन करना उस जमाने में उचित रहा होगा जब हिरन स्वाभाविक रूप से अपनी मौत मरते थे । आज तो मृगछाला वाले सन्तों की जरूरतें पूरी करने को बेचारे हिरन कराहते हुए प्राण गँवाते हैं और इन भजन करने वालों को शाप देते जाते हैं जिन्होंने उनके प्राण लेने की आवश्यकता व्यक्त की एवं भूमिका बनायी । आजकल चमड़ा आमतौर से काटे हुए पशुओं का आता है । स्वाभाविक मौत तो कोई भाग्यवान पशु ही मरता है । पशुवध में माँस से जितना लाभ है उससे बहुत ज्यादा चमड़े में है । चमड़े का अधिक उपयोग होने से पशुवध का प्रचलन बहुत बढ़ा है । यदि हम चमड़े का उपयोग छोड़ दें और उसकी जरूरत रबड़, कैनवेस आदि से निकाल लें तो हर साल करोड़ों निरीह पशुओं की हत्या रोकी जा सकती है । अच्छा हो अपने भीतर करुणा मिश्रित मानवता जगायें और हम तनिक-से फैशन के लिये असंख्य प्राणियों को अकारण हत्या से बचायें ।

दवाओं के लिये, पौष्टिक आहार के लिये विज्ञान ने नापकर प्रतिदिन करोड़ों प्राणी काटे, उबाले, जलाये और भूने, चीरे जाते हैं । यह दवायें तत्काल कुछ लाभ भले ही दिखादें पर अन्ततः उन निरीह प्राणियों का चीत्कार उन सेवनकर्ताओं को भी रुलाकर ही रहेगा । परमात्मा के दरबार में देर है अन्धेर नहीं । दूसरों के प्राण लेकर अपना सुख चाहने वालों को निराश ही होना पड़ेगा । बिना हत्या की दवाएँ भी हर रोग की मौजूद हैं । उनका प्रयोग इन घृणित रक्त मिश्रित दवाओं से लाख गुना अधिक लाभदायक है । फिर भी न जाने किस बहकावे में आकर लोग मद्य-माँस मिश्रित इन घृणित दवाओं का सेवन करते हैं । सम्भव है इनसे किसी का शरीर सुधर जाय पर आत्मा का पतन तो निश्चित रूप से होगा । माँसाहार शरीर को बढ़ाने का नहीं गिराने का ही निमित्त बन सकता है । भले ही वह दवाओं के रूप में प्रयुक्त किया जाय । प्राणियों के प्रति बरती जाने वाली हर व्यापक निर्दयता का अन्त जितनी जल्दी हो सके उतना ही मनुष्यता का गौरव कलंक रहित बन सकेगा ।

सुन्दरता के लिए यह निर्दय व्यवहार

सुन्दर दीखने की आकांक्षा, गहराई में दूसरों का प्रेम प्राप्त करने, औरों का प्रिय बनने की लालसा से ही जन्मती है । इसके लिये अपने व्यक्तित्व को गुणों से सम्पन्न और चरित्र को नैतिक आदर्शों से सँवारने का मार्ग ही सही मार्ग है । फैशन और शृंगार के द्वारा अपने आपको सजाने की मनोवृत्ति तो चिन्तन के उथलेपन और दृष्टिकोण के छिछोरेपन की ही परिचायक है । यह स्थिति उस बिन्दु पर जाकर और भी भयंकर एवं भीषण हो जाती है जब हम नारी के लिये सुन्दरता की भिन्न-भिन्न कसौटियाँ निर्धारित कर लेते हैं और उन कसौटियों को ही सुन्दरता का प्रतीक मानकर उसके शरीर में आकर्षण की खोज करते हैं । स्पष्ट है इस तरह की मान्यताएँ नारी की विलासिनी, भोग्या और रमणी समझने की हीन मनोवृत्ति से उत्पन्न होती हैं । इसी कारण अब तक हम अपनी आकांक्षा और वासना के अनुरूप सुन्दर नारी की कल्पना करते हैं ।

मनोरंजन के लिये अतिथि कक्ष में बिठाये गये खिलौनों और तराशी हुई मूर्तियों की तरह नारी को भी काटने, छाँटने और मनोरंजन का साधन बनाने के लिये उस पर कई तरह के अत्याचार किये हैं । सदियों से व्यवहार में लायी गयी इन मान्यताओं के कारण स्वयं स्त्रियों के स्वभाव में भी आकर्षक दीखने की आकांक्षा सम्मिलित हो गई और वे उत्साहपूर्वक निर्धारित पात्रता के अनुरूप स्वयं को प्रस्तुत करने के लिये रहने लगीं । भले ही इसके लिये उन्हें कितना ही कष्ट क्यों न सहना पड़ता हो ।

सद्गुणों से सम्पन्न गृहिणी, वात्सल्य भाव से पूरित हृदय की स्वामिनी और सेवापरायण पत्नी की सभी विशेषताएँ पीछे छूट गईं और सुन्दरता-आकर्षक शरीर ही उन सब विशेषताओं की तुलना में वजनदार हो गया । कल्पनाएँ सभी की एक-सी तो नहीं होतीं, आकर्षण भी सभी का एक ही नहीं रहता इसलिये सुन्दर शरीर के भी भिन्न-भिन्न मापदण्ड बने और उन मापदण्डों पर खरा उतारने के लिये स्त्री शरीर को अलग-अलग ढंग से काटा, तराशा जाने लगा । इसमें स्त्रियों को कितनी पीड़ा होती है—मानवीय सम्वेदनाएँ वहाँ मौन हो गईं और प्रधानता सौन्दर्य के काल्पनिक मापदण्डों पर खरा सिद्ध होने को ही दी जाने लगी । उदाहरण के लिये चीन में किसी जमाने में लड़कियों को बचपन से ही पाँवों में लोहे की जूतियाँ पहना दी जाती थीं । आयु के साथ-साथ शरीर भी बढ़ता था और पाँव भी । परन्तु पाँवों में लोहे के जूते कसे रहते थे जिससे उनके पाँवों में अपार पीड़ा होती थी और उनका एक कदम भी चलना कठिन हो जाता । इसका एक ही कारण रहा कि चीन में जिस स्त्री के पाँव जितने छोटे होते थे उसे उतना ही सुन्दर माना जाता था ।

बर्मा की एक पहाड़ी जाति पडाग में आज भी लम्बी गर्दन को सुन्दर समझा जाता है । जिसकी गर्दन जितनी लम्बी वह उतनी ही सुन्दर । इसके लिये लड़की जब सात आठ वर्ष की होती है तो उसके गले में एक के ऊपर एक अनेक पीतल के कड़े पहना दिये जाते हैं । ज्यों-ज्यों लड़की आयु के साथ-साथ बड़ी होती जाती है त्यों-त्यों उसके गले में कड़ों की संख्या भी बढ़ा दी जाती है ताकि इसकी गरदन और लम्बी हो जाय । कोई स्त्री तो इस प्रकार पूर्ण यौवन प्राप्त करने तक लगभग ३०-३० कड़े पहन लेती हैं ।

मलेशिया के उत्तर में फैले कई छोटे-छोटे द्वीपों के समूह को माइक्रोनेशिया कहा जाता है । वहाँ की आदिम जातियों में लम्बे कान सुन्दरता के प्रतीक समझे जाते हैं । सुन्दर दिखाई देने के लिए यहाँ के लोग कानों में छेद करवा कर उनमें वजनदार बालियाँ पहन लेते हैं । इससे उनके कानों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का नीचे वाला हिस्सा लटक कर गरदन तक आ जाता है । कई स्त्रियाँ तो एक-एक किलो वजन की बालियाँ पहनती हैं ।

इसी प्रकार अफ्रीका की आदिम जातियों में लम्बे और मोटे होंठ सुन्दरता के प्रतीक समझे जाते हैं । वहाँ की लड़कियाँ चार-पाँच वर्ष की होते ही अपने दोनों होंठों को कील से छिदवा लेती हैं । फिर उनमें लकड़ी के गोल टुकड़े फँसा दिये जाते हैं । जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है वैसे-वैसे लकड़ी के गोल टुकड़ों का आकार भी बढ़ाया जाता रहता है । इस प्रकार उनके होंठ इतने लम्बे हो जाते हैं कि वे तरल पदार्थों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं खा सकतीं । किन्हीं-किन्हीं क्षेत्रों में तो बच्चों के होंठों से भारी-भारी चीजें लटका दी जाती हैं ताकि होंठ खिंचकर बड़े होते रहें । कई बच्चों की तो बेचारों की जान भी उसमें चली जाती है ।

छोटे पैर, लम्बी गरदन, लम्बे होंठ और लम्बे कान को सुन्दर मानने के अलावा कई स्थानों पर चौड़ा और चपटा सिर सुन्दर माना जाता है । मलेनेशिया के निवासियों की मान्यता है कि जिस स्त्री का सिर जितना चौड़ा और जितना चपटा होगा वह उतनी ही सुन्दर और भाग्यशाली है । इसलिये माँ-बाप जन्म होते ही लड़की को सुन्दर और भाग्यवान बनाने का प्रयत्न करने लगते हैं । लड़की का जन्म होते ही उसका सिर गरम पानी में भीगे कपड़े से तब तक बार-बार दबाते रहते हैं जब तक कि वह चपटा होकर गरदन के बराबर नहीं हो जाता । इसके बाद लड़की के सिर में लोहे का एक पहिया फँसा दिया जाता है । पन्द्रह वर्ष की आयु तक उसे अपने सिर में यह पहिया फँसाये रखना पड़ता है । तब तक बेचारी लड़की असह्य वेदना भोगती रहती है उसे निकाला भी नहीं जा सकता क्योंकि कोई भी मलेनेशिया युवक ऐसी लड़की से शादी करना पसन्द नहीं करता जिसका सिर चपटा और चौड़ा न हो । मलेनेशिया के पश्चिम में बसे पोलेगेशिया में तो सिर को चौड़ा और चपटा बनाने के लिए बच्चे के सिर को आगे और पीछे दोनों ओर लकड़ी या पत्थर के टुकड़े लगा कर धीरे-धीरे दबाया जाता है । यह उपचार इस ढंग से किया जाता है कि बच्चे को प्राणसंकट भी न हो और उसका सिर भी चौड़ा हो जाय ।

हमारे यहाँ और अन्य देशों में सुन्दर, स्वच्छ, पंक्तिबद्ध दाँत सुन्दर माने जाते हैं, पर आस्ट्रेलिया की आदिम जाति के लोग दाँतों को कुरूपता की निशानी समझते हैं । वहाँ की स्त्रियों के दाँत महज इसलिये तोड़ दिये जाते हैं कि वे सुन्दर लगें । अब वहाँ कोई डेण्टिस्ट या दाँतों का डाक्टर तो होता नहीं जिनसे दाँत उखड़वाये जा सकें । हों भी तो परम्परा का तकाजा उनसे दाँत उखड़वाने की अनुमति नहीं देता । अतः दन्तहीन पोपला सुन्दर मुख प्राप्त करने के लिये बड़ा कष्टकर उपाय किया जाता है । लड़कियाँ शैशव और किशोरावस्था को पार कर जैसे ही जवानी में कदम रखती हैं वैसे ही उनके दाँतों की ठोंक पीट आरम्भ हो जाती है । पहले छड़ी से मार-मार कर दाँतों की जड़ें ढीली की जाती हैं और फिर पत्थर के टुकड़े से ठोककर उन्हें उखाड़ दिया जाता है ।

इस क्षेत्र में तो फिर भी कुछ युवतियाँ दाँत उखाड़ने में होने वाले कष्ट को न सह पाने के कारण इस परम्परा का पालन नहीं करतीं परन्तु इण्डोनेशिया के सैलोबीज द्वीप में इसके बिना युवतियों का कोई निस्तार ही नहीं है । कारण वहाँ की जातियों में यह धारणा प्रचलित है कि जो स्त्री अपने दाँत नहीं तोड़ती वह अपने पति को खा जाने के लिये दाँत रखती है । वहाँ के युवक भी किसी ऐसी युवती के लिये मिले विवाह प्रस्ताव पर विचार ही नहीं करते जिसने अपने दाँत न तोड़ लिये हों, वहाँ की सरकार ने इस प्रथा को रोकने के लिए कानून भी बनाया पर कानून से तो अपने यहाँ भी बाल-विवाह निषिद्ध है—इससे क्या बाल विवाह रुक गये ।

फिलीपीन में तो स्त्री और पुरुष दोनों के लिये ही दाँतों का प्राकृतिक रूप में होना कुरूप समझा जाता है । वहाँ के लोग रेती से घिस-घिसकर अपने दाँतों को नुकीला बना लेते हैं । वहाँ की इगरोट जाति में यह रिवाज इसी प्रकार प्रचलित हैं जैसे कि हमारे यहाँ की कई जातियों में गोदना गुदवाने का रिवाज । यही नहीं इगरोट जाति के लोग अपने दाँतों को नुकीला करने के साथ-साथ एक विशेष विधि से उन्हें काला भी कर लेते हैं । उनका विश्वास है कि दाँत यदि काले हों तो उससे सुन्दरता में चार चाँद लग जाते हैं ।

पूर्वी अफ्रीका में रहने वाली उकम्बा जाति की स्त्रियाँ तो अपने आगे के दाँत घिसकर सिर भी मुड़ा लेती हैं । यद्यपि कई देशों में लम्बे और घने केशों का होना सुन्दर समझा जाता है । उन देशों के लोग जब उकम्बा जाति में प्रचलित परम्परा के बारे में सुनते होंगे तो वहाँ के निवासियों को बुद्धू बताते होंगे, जबकि उकम्बा जाति के लोग भी और देशों के निवासियों को बुद्धू समझते होंगे । वास्तव में गलत कौन है कहना कठिन है ।

भारत की कई आदिवासी और पिछड़ी जातियों में गोदना गुदवाने की प्रथा है और भी कई देशों में गुदवाने तथा शरीर पर तरह-तरह की चित्रकारी करने की परम्परा है । इसके पीछे यह विश्वास किया जाता है कि गुदवाने या चित्र काढ़ने से स्त्री में सुन्दरता का आकर्षण और बढ़ जाता है । पता नहीं यह सच है अथवा झूठ परन्तु गुदवाते समय सुई की नुकीली धार जब शरीर के अंगों को खरोंचती है तो यह अनुमान लगाना कठिन हो जाता है कि उससे कितनी पीड़ा होती है । अफ्रीका की कुछ जातियाँ तो मात्र सुई से ही अपने शरीर पर तरह-तरह की आकृतियाँ काढ़ती हैं—बल्कि शरीर को जगह-जगह से जलाकर घाव कर लेती हैं । उन घावों के निशान शरीर सुन्दरता के प्रमाण माने जाते हैं ।

कुछ जातियों में विषैले पौधों का रस शरीर पर लगा कर घाव बना लिये जाते हैं । उनका विष जब शरीर पर अपना प्रभाव डालने लगता है तो बड़े-बड़े फफोले पड़ जाते

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं और ये फफोले शरीर पर अपनी स्थायी छाप छोड़ देते हैं । शरीर पर जब विष असर करने लगता है तो उससे होने वाली पीड़ा के कारण स्त्रियाँ देर तक बुरी तरह छटपटाती रहती हैं ।

इसी प्रकार सौन्दर्य वृद्धि के लिये गहनों का भी प्रयोग किया जाता है । ग्रामीण स्त्रियाँ अपने हाथ-पैरों में सेरों चाँदी लादे रहती हैं और उनके अनभ्यस्त हाथ-पाँव आरम्भ में महीनों तक दर्द से पके फोड़े की तरह चटखते रहते हैं । अपने देश में तो सोने, चाँदी के ही गहने पहने जाते हैं, पर एक देश है कांगों जहाँ की स्त्रियाँ अपने शरीर की चमड़ी को काट कर शरीर में ही आभूषण काढ़ती हैं । हाथ-पैरों में जगह-जगह चाकू से घाव कर दिये जाते हैं, घावों को उत्तेजक पदार्थों से महीनों तक हरा रखा जाता है । इस प्रकार काफी समय बाद कटा हुआ भाग शरीर पर उभर आता है और जीवन भर के लिये आभूषण बन जाता है ।

सुन्दर दिखाई देने के लिये विदेशी जातियों में नारी को होने वाली इस निर्मम पीड़ा को हम तटस्थ भाव से नहीं देख सकते । क्योंकि जितनी यन्त्रणा उन देशों की स्त्रियों को भोगनी पड़ती है, हमारे देश की स्त्रियों पर भी उसकी तुलना में सौन्दर्य के लिये कम अत्याचार नहीं किया जाता । उदाहरण के लिये गहने के प्रचलन को ही लें । ग्रामीण क्षेत्रों में तो स्त्रियों के पाँवों में बचपन से ही चाँदी के कड़े और हाथ में बाजूबंद पहना दिये जाते हैं जिनके निशान उनके हाथ-पाँवों में पड़ जाते हैं । उन ग्राम किशोरियों को पाँवों में वजनदार चाँदी की बेड़ियाँ पहनने से कितना कष्ट होता है और चलने-फिरने में कितनी परेशानी होती है कहा नहीं जा सकता, कोई भुक्तभोगी ही जान सकता है । नाक, कान छिदवाने की रिवाज तो शहरों में भी है । छोटी उमर में ही सुई से लड़कियों के नाक, कान छेद दिये जाते हैं और उनमें लौंग तथा तार डाल दिये जाते हैं । एक काँटा लगने पर भी असह्य वेदना होती है तो नाक और कान की चमड़ी से सुई को आर-पार करने पर कितनी पीड़ा होती होगी और कभी खेल-खेल में किसी ने उन हिस्सों में पिरोये तार खींच दिये तो जीवन भर की मुसीबत । कई मर्तबा तो इनके घाव महीनों तक नहीं भरते । और भी कई तरह के रीति-रिवाज हैं, जिनका सम्बन्ध केवल स्त्री को सुन्दर और सुलक्षण बनाने से ही है । प्रकृति ने मनुष्य को शरीर दिया है उसे तोड़-फोड़कर नहीं, स्वस्थ और स्वच्छ रखकर ही सुन्दर बनाने का प्रयास करना चाहिए । यदि इस विवेक को नहीं अपनाया जाता तो यही मानना पड़ेगा कि हम आधुनिक सभ्यता को प्रगतिशील समझने का भ्रम ही पाले हुए हैं । आधुनिक सभ्यता में तो शरीर को रँगने, पोतने के और भी भौंडे रिवाज चल पड़े हैं । उनका भी कोई औचित्य समझ में नहीं आता । इन परम्पराओं और शृंगार-मेकप की रीतियों को विवेकशीलता के सन्दर्भ में देखा जाय तो यही कहना पड़ेगा कि नारी को हमने अभी भी मानवी नहीं माना है । वरन् उसे एक सजी-सँवरी और रँगी-पुती गुड़िया बनाकर उसे मनोरंजक खिलौना बनाने में ही हमारी रुचि व प्रवृत्ति रही है ।

क्रूरता पर टिका सौन्दर्य प्रसाधनों का संसार

शरीर पर रंग-रोगन लपेट लेने और चमड़ी पर पाउडर पोत लेने से कोई भी सुन्दर बन सकता है— यह मान्यता सर्वथा बचकानी और भ्रमभरी है । सौन्दर्य स्वाभाविक है, जिसे प्रकृति का अनुदान कह सकते हैं । फूल अपनी विशेषता से ही सुन्दर लगता है । तितली की सुन्दरता प्रकृति प्रदत्त है । मोर का आकर्षण किसी का दिया हुआ नहीं है ।

मनुष्य के नैसर्गिक सौन्दर्य में स्वस्थता, स्वच्छता और सौम्य सज्जनता का समावेश ऐसा है, जिससे कुरूप काया भी आकर्षक लगती है । स्वभाव और चरित्र में शालीनता हो तो वह किसी को भी अपनी ओर आकर्षित एवं प्रभावित करने में पूरी तरह सफल होती है ।

किन्तु आज का विकृत दृष्टिकोण सुन्दर दीखने की लालसा को शृंगार-प्रसाधनों के आधार पर पूरी करता दिखाई पड़ता है । इससे कितनों को दृष्टि भ्रम से बहकाया जा सकता है, यह कहना कठिन है । आये दिन फैशन के, साज-सज्जा के अनेकानेक तरीके इसी निमित्त निकलते रहते हैं कि उन्हें पहनने-ओढ़ने या धारण करने के उपरान्त व्यक्ति सुन्दर, सुसज्जित दीखने लगे । ऐसे लोग यह भूल जाते हैं कि स्वाँग-नाटकों वाले ऐसी ही लीपा-पोती के आधार पर राजा-रानी, सेठ, सन्त आदि बन जाते हैं, पर उन्हें वास्तव में कोई वैसा मानता नहीं । सभी जानते हैं कि यह स्वाँग बनाया हुआ है ।

यदि यह सब बाल-विनोद भर रहा होता, तो प्रसंग की उपेक्षा भी हो सकती थी, पर देखा यह जाता है कि इस निमित्त ढेरों धन खर्च होता है और साथ ही ऐसी वस्तुओं का प्रयोग अधिक होता है, जो विषाक्त होने के कारण स्वास्थ्य के लिये हानिकारक भी है । इनमें से कुछ तो ऐसी हैं, जिनके निर्माण में निरीह पशु-पक्षियों का निर्दयतापूर्वक वध होता है । जिन प्राणियों को इस हेतु अपार कष्ट सहते हुये प्राण गँवाने पड़ें, वे उन उपयोग करने वालों को सुन्दर कहते होंगे या कुरूप यह उन्हीं से जाकर पूछा जाय । तनिक-सी ठोकर लगने पर व्यक्ति को कितना कष्ट पहुँचता है, फिर प्राण-गँवाने जैसी व्यथा में कितनी भीषण पीड़ा होती होगी यह अकल्पनीय है । इतने पर भी यह परम्परा अब भी ज्यों-की-त्यों बनी हुई है । इसके अतिरिक्त इन विडम्बनाओं में जो धन खर्च होता है, वह भी असामान्य है । यदि उसे सत्प्रयोजनों में लगाया गया होता, तो उसका सुनिश्चित सत्परिणाम भी सामने आता, पर उसे न लगना था, न लगा ।

प्रसाधनों के परीक्षण और इन्न-सेण्टों के आविष्कार में प्रतिवर्ष कितने जीवों को अपना जीवन होमना पड़ता है, यह तो सही-सही नहीं कहा जा सकता, पर एक अनुमान के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अनुसार विश्वभर में इसकी संख्या अरबों-खरबों में हो सकती है । इतने पर भी यह कुप्रथा निकट भविष्य में जल्दी समाप्त होती नहीं प्रतीत होती । हाँ, धीरे-धीरे इसके प्रति जनचेतना अवश्य जागृत हो रही है और लोग इसका विरोध करते भी दिखाई पड़ने लगे हैं । इन्हीं लोगों में से एक हैं—स्कूल ऑफ ऐरोस्पेस मेडीसन के शोध विज्ञानी डॉ. बोनाल्ड बार्नेस, जिनने उक्त कुप्रचलन के विरोध में पिछले दिनों अपने पद से त्यागपत्र दे दिया । उन्होंने प्रसाधन के नाम पर पशुओं पर होने वाले निर्मम अत्याचारों का विवरण तैयार किया है वह किसी भी सहृदय व्यक्ति का दिल पिघला देने वाला है । डॉ. बोनाल्ड बार्नेस के लेखों व विचारों से प्रभावित होकर पश्चिमी राष्ट्रों के नागरिकों के दिल में उन प्राणियों के प्रति सद्भावना जगी है और इनका विरोध किया जाने लगा है ।

प्रसाधनों में चेनल नं. ३ एक विशेष सुगंध है । इस चेनल की उत्पादिका जेक्स लील का कहना है कि उक्त सुगंध को बनाने के लिये अफ्रीकी जंगलों में पाई जाने वाली सिबेट बिल्ली के प्राण तक हर लिये जाते हैं । इस बिल्ली को लोहे के नुकीले पिंजड़े में बन्द कर दिया जाता है फिर उसमें उसे लकड़ी घोंप-घोंपकर पागल कर दिया जाता है, जिससे उसकी ग्रन्थि विशेष से एक प्रकार का रस स्रावित होने लगता है । रस निकलना प्रारम्भ होते ही सिबेट की पूँछ और पीछे के पैर बाँधकर उसके पेट में सुगन्धि वाली ग्रन्थि में एक चीरा लगाया जाता है । इस बीच बिल्ली को बाँधे रखा जाता है । सुगन्धि एक पात्र में एकत्रित होती रहती है । यह क्रिया लगातार १०-१२ दिनों तक जारी रखी जाती है । प्राय: इतने समय में जन्तु मर जाता है । जिसके बाद उसे फेंक दिया जाता है । यह सेण्ट, जिसे चेनल नं. ३ के नाम से जाना जाता है, सोने से भी ५ गुना महँगे भाव में बिकता है ।

ऐसे ही शैम्पू, आफ्टर शेव लोशन, युडी कोलोन आदि के परीक्षण के लिये खरगोश का उपयोग किया जाता है । जन्तु को एक पिंजड़े में जकड़कर बन्द कर दिया जाता है । नये बनाये शैम्पू की २-४ बूँदें उसकी आँखों में डाली जाती हैं, जिससे प्रयोक्ता में जलन, खुजली व चिनमिनाहट का अनुमान लगाया जाता है । इस प्रयोग में खरगोश प्राय: अन्धे हो जाते हैं । इसी प्रकार लोशन की जाँच के लिये प्राणी की चमड़ी में टेप चिपकाकर उसे झटके से खींचा जाता है । यह क्रिया तब तक दोहरायी जाती है, जब तक माँस न दिखाई पड़े । बाद में लोशन या कोलोन लगाकर ३-४ दिन तक खरगोश को हिलने-डुलने नहीं दिया जाता । कभी-कभी खरगोश प्रयोग पूरा होने के पूर्व ही मर जाते हैं ।

शृंगारों में इक्ट्रोजन नामक जो पदार्थ प्रयुक्त किया जाता है, वह गर्भवती घोड़ी के मूत्र से प्राप्त किया जाता है । इसके लिये घोड़ी के जीन्स को ऐसा नियंत्रित किया जाता है कि एक लम्बे समय तक कष्ट सहते हुये भी गर्भधारण किये रहती है । उसे अधिक पेशाब करने वाली विषाक्त औषधियाँ भी दी जाती हैं । अन्त में उसकी जान लेकर ही उसे छोड़ा जाता है । इसी प्रकार तेल, क्रीम, साबुन के लिये ह्वेल मछली को बड़ी बेरहमी से मारा जाता है ।

यूरोपीय देशों में फर वाले कोटों का विशेष प्रचलन है । इसे प्राप्त करने के लिये सील मछली की नृशंस हत्या की जाती है । इसके लिये नवजात सील मछली का उपयोग किया जाता है । इसमें १०-१५ दिन के बच्चे को पकड़कर डण्डों से मार-मारकर लहूलुहान कर दिया जाता है । तड़पते बच्चे के स्नेहवश अवसर पाकर मादा सील उसके पास आ जाती है, तो उसे भी गोली से मार दिया जाता है । इस प्रकार ६-७ सील मछलियों से एक कोट आसानी से बन जाता है । इसकी कीमत कई हजार डालर होती है । इन दिनों इस व्यवसाय के कारण सील मछलियों की संख्या विश्व भर में निरन्तर घटती जा रही है ।

एक आँकड़े के अनुसार पिछले वर्ष पश्चिमी जर्मनी में शृंगार-प्रसाधनों के निर्माण के लिये ४० लाख जन्तुओं की हत्या की गई । इंग्लैण्ड में ५५ लाख, अर्जेण्टीना में २० लाख, उत्तरी कोरिया में ४२ लाख, रूस में २५ लाख, फ्रांस में ७० लाख, जापान में ५२ लाख पशु-पक्षी मारे गये ।

अमेरिका के 'कालेज ऑफ एलरजिज' में किये गये अनुसंधान में पाया गया कि नेल पॉलिस करने वाली अधिकांश महिलाओं में चर्म रोग का कारण नेल पॉलिस ही है । इसी प्रकार आँखों में 'कुकरे' रोग का कारण आँखों का काजल या सुरमा लगाने वाली सलाई को बताया गया है, लिपिस्टिक से भी चर्म रोग बढ़े हैं । इन चर्म रोगियों द्वारा कृत्रिम प्रसाधनों का प्रयोग बन्द कर दिया गया, तो ७० प्रतिशत मामलों में लोगों को लाभ पहुँचता देखा गया ।

इसी प्रकार कितने ही ऐसे प्रसाधन हैं, जिनके इस्तेमाल से कैंसर जैसे असाध्य रोगों की सम्भावना विशेषज्ञ प्रकट करते हैं । इन सौन्दर्य साधनों के निर्माण में कितना समय, श्रम, धन लगा एवं कितने जीवों को अब तक प्राण गँवाने पड़े हैं, इसका कोई हिसाब नहीं । स्वास्थ्य-हानि जो हुई है, उसे हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं । अच्छा होता मनुष्य इस बाहरी साज-सज्जा की तुलना में अपने भीतरी सौन्दर्य को निखारता, तो वह लोगों को, समाज को उस बनावटीपन की अपेक्षा अनेक गुना अधिक आकर्षित कर पाता, जो इन दिनों बनाव-शृंगार के रूप में नर-नारी पर बुरी तरह सवार है । हम सद्गुणों का शृंगार सजायें । इसका आकर्षण कृत्रिम सौन्दर्य से कहीं अधिक प्रबल और टिकाऊ है, इसमें दो राय नहीं ।

सुसंस्कारिता प्रयासपूर्वक जगानी पड़ती है

अन्त:करण में उच्चस्तरीय तत्वों के बीज अवश्य हैं, पर हैं वे इतनी प्रसुप्त स्थिति में कि उनका प्रयोग सर्वसाधारण के लिये नहीं हो सकता । उसे समाज सम्पर्क एवं नैतिक वातावरण के माध्यम से जगाना पड़ता है। यदि इसे प्रशिक्षण,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जागरण का अवसर न मिले तो पूर्व जन्मों की पशु-प्रवृत्तियाँ ही काम करती रहती हैं और व्यक्तित्व हेय स्तर का ही बना रहता है ।

अन्तःकरण का उच्चस्तर जीवन्त है, इसका इतना ही प्रमाण मिलता है कि सभी अपने लिये न्याय चाहते हैं । सज्जनता बरते जाने की अपेक्षा करते हैं, बुराई से उसी सीमा तक घृणा करते हैं जिससे वह अपने ऊपर आक्रमण न करे । चोर भी अपने यहाँ चोर नौकर नहीं रखना चाहता । व्यभिचारी भी अपनी पत्नी को पतिव्रता देखना चाहता है । भगवान के दरबार में उसे दुःख-दण्ड न भुगतना पड़े, उसका अनुग्रह-अनुदान सहज ही मिलता रहे । मित्रों की मित्रता हर कसौटी पर खरी उतरे । जहाँ तक अपनेपन का सम्बन्ध है वहाँ तक सभी भले हैं, पर जब दूसरों के साथ व्यवहार करने का प्रसंग आता है तो स्थिति उलट जाती है । तब लोगों पर स्वार्थ सवार होता है और वह मनोभूमि नहीं रहती जो दूसरों से अपने लिये चाही गई थी । दूसरों के साथ ठगी, चोरी, बेईमानी आदि दुष्कृत्य करने और आक्रमण का शिकार बनाने में संकोच नहीं होता ।

यह संकीर्णता की स्थिति है जिसमें दूसरों को अपना शिकार समझा जाता है । उसकी पीड़ा या कठिनाई को इस दृष्टि से नहीं देखा जाता कि वैसी ही विपत्ति अपने ऊपर टूटे तो कितनी कष्टकर हो । दूसरों की पीड़ा एक विनोद मालूम पड़ती है । कई बार तो दूसरों को छटपटाने की स्थिति में देखकर एक ऐसा मनोविनोद भी होता है जिसे नृशंस स्तर का कहा जा सकता है ।

मेढ़ा, तीतर, मुर्गे, बटेर, हाथी आदि की लड़ाई देखने में कितनों को ही बड़ा मजा आता है और ऐसे आयोजनों को देखने के लिये ठट्ट-के-ठट्ट जा पहुँचते हैं । उन निरीह प्राणियों को उत्तेजित करने के लिये किस प्रकार आहत कराया जा रहा है, यह करुणा भरा दृश्य होता है, पर हृदयहीन आँखें उसमें भी मजा लूटती हैं । रोम का बादशाह नीरो नगर में आग लगवा देता था और उसके कारण होने वाली जानमाल की हानि से अपना विनोद करता था । चौराहों पर जब फाँसी लगा करती थी या सरेआम कैदियों के, शत्रु सैनिकों के सिर काटने का प्रचलन था तब भी लोग उस नृशंस कृत्य को देखने के लिए हज्जूम बाँधकर पहुँचते थे ।

माँसाहारियों का समुदाय भी धीरे-धीरे अपनी मानवोचित दया-भावना खो बैठता है । अपने शरीर में सुई चुभ जाये तो प्राण निकलते हैं, पर दूसरों की गर्दन इसलिये काटी और चमड़ी उधेड़ी जाती है कि वे बदला लेने की स्थिति में नहीं होते । सिंह-व्याघ्र आदि जो बदला ले सकते हैं, उन्हें माँस खाने के लिये मारने की कोई योजना नहीं बनाता । सबकी निगाह उन्हीं प्राणियों पर जाती है जो आसानी से हाथ आ जाते और काटते-मारते समय बधिक के लिये कोई संकट खड़ा नहीं करते ।

कभी-कभी तो इस क्रूर कृत्य में धर्म भावना भी जोड़ ली जाती है । देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिये पशुबलि चढ़ाना पुण्य माना जाता है और सोचा जाता है कि इस उपहार के बदले देवता से माँगी हुई मनौती पूरी होगी ।

यह निर्दयता मात्र अन्य जीवधारियों तक ही सीमित नहीं रहती । जब मनुष्य स्वार्थ की चरमसीमा तक पहुँचता है और नृशंसता में अपने अहंकार की पूर्ति देखता है तो क्रूर कर्मों की झड़ी लगा देता है । तब उसे स्वजातियों और प्रियजनों का मोह नहीं रहता । मध्यकाल के सत्ताधारी मरने से पूर्व ऐसा प्रबन्ध करते थे कि उनके दफन होने के साथ ही उनके दास-दासी, स्त्री-बच्चे भी जीवित दफन कर दिये जायें जिससे वे परलोक में उनकी उपस्थिति का लाभ उठाते रहें । किसने कितनों का वध किया इसकी चर्चा पिछले दिनों बड़े उत्साह के साथ हुआ करती थी ।

पशुबलि में माँसाहार का लाभ और देवी-देवताओं का अनुग्रह तथा बधिक के दुस्साहस, बल, आतंक आदि में वृद्धि होती थी । इसलिये छोटी-छोटी बातों को लेकर युद्ध भी छिड़ जाते थे । सैनिक इसकी ताक में रहते थे कि उन्हें वेतन के अतिरिक्त लूटमार में से भी अच्छी कमाई हो जाती थी । भले घरों के युवक-युवती उन्हें पकड़कर दास बनाते और पशुओं की तरह काम लेते थे । इन्कारी तो वह किसी से नहीं कर सकते थे । सिर हिलाते ही निर्दय उत्पीड़न चल पड़ता था और वह तब तक जारी रहता था जब तक कि उसके प्राण न निकल जायें । यह एक प्रकार का मान्यता प्राप्त प्रचलन था । राजदण्ड में कैद बन्द करने की अपेक्षा उनके सिर उतार लेना ही सस्ता पड़ता था । कैदियों के लिये भोजन, वस्त्र तथा चौकीदारी का प्रबन्ध करना पड़ता था जबकि उसको छोटे अवरोध के बदले मार डालने की सजा देकर सदा के लिये पीछा छुड़ा लिया जाता । मांत्रिक-तांत्रिक देवताओं को बलि देकर प्रसन्न करने और उनसे मनौती माँगने पर पूरी होने की आशा करते थे ।

उन दिनों धर्म रुचि, समाज के पंच अधिकारी, सामन्त, राजा एक कदम आगे बढ़कर नरबलि को महत्त्व देने लगे थे । सोचा जाने लगा था कि पशु से मनुष्य का मूल्य और महत्त्व अधिक है इसलिये उसकी बलि चढ़ाने पर लाभ भी अधिक मिलेगा । नरबलि का यह प्रचलन किसी जमाने में इतना अधिक रहा है कि दक्षिण अमेरिका के आदिवासी क्षेत्रों में पेड़ों के नीचे तथा कुएँ खड्डों में विशाल संख्या में नरमुण्ड पाये गये हैं ।

यह क्रूरता के विदित और अविदित अनेक तरीके हैं, जिससे प्रतीत होता है कि मानवीय अन्तःकरण की उत्कृष्टता उसके अपने लिये प्रयुक्त किये जाने की कामना तक ही सीमित हैं । जब दूसरों के सम्बन्ध में बात आती है तो वह हिंसक पशुओं की भूमिका निभाने लगता है । जंगल का कानून बरतता और जिसकी लाठी उसकी भैंस पर विश्वास करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन् १५१९ में ऐटेक साम्राज्य काल में देवी-देवताओं को प्रसन्न रखने हेतु नरबलि का प्रचलन था । केलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के जनसांख्यिकी विभाग के प्रवक्ता डॉ. 'शेरबर्न कुक' द्वारा किये गये अनुसंधानों से जो निष्कर्ष सामने आये हैं उनके अनुसार मैक्सिको के ऐटेक मन्दिर में प्रतिवर्ष एक प्रतिशत जनसंख्या को नरबलि का शिकार बनना पड़ता था । एटेक के राजा के बारे में यह भी कहा जाता है कि वह इतना क्रूर था कि स्वजातिओं का माँस खाने की भी उसकी आदत थी । इसी तरह की परम्पराएँ उसके सैनिकों ने भी अपनायी हुई थीं ।

भूतकालीन तथ्यों को देखते हुये हमें यह मानकर चलना होगा कि मनुष्य में सुसंस्कारिता जगाने की जिम्मेदारी समाज की है, अन्यथा बालक जैसे भी वातावरण में पलेंगे, जिन लोगों के बीच रहेंगे, उन्हीं की रीति-नीति अपना लेंगे चाहे वे कितने भी घिनौने क्यों न हों । यह मान्यता एक सीमा में ही उचित है कि मनुष्य की अन्तरात्मा स्वभावत: पवित्र है । यदि ऐसा भी हो तो भी सामाजिक कर्त्तव्य है कि शालीनता सज्जनता, दयालुता, नीतिमत्ता बढ़ाने-सँजोने के लिये योजनाबद्ध प्रयत्न किये जायें अन्यथा लोकप्रचलन में पड़कर अधिकांश लोग निष्ठुर, उद्दण्ड और अपराधी प्रवृत्ति अपनाते चले जायेंगे ।

पशुबलि—अपवित्र पूजा

दुर्गा-पूजा (नवरात्रि) का दिन हिन्दुओं का बहुत बड़ा पर्व माना जाता है । विशेष करके बंगाल, बिहार, असम, उड़ीसा इत्यादि कई प्रान्तों में दुर्गा-पूजा का त्योहार बड़े धूम-धाम से मनाया जाता है । देवी भक्तगण अपने इस त्योहार में सब प्रकार के आनन्द प्राप्त करने के लिये खर्च करने की कमी नहीं रखते हैं । अपना मकान सजाते, मण्डप बनाकर शृंगार करते जिसमें दुर्गा माता की सुशोभित भव्य प्रतिमा की प्रतिष्ठा करके नाच-रंग करवाते तथा मनाते हैं, अर्थात् मौज-मजा में वृद्धि करने की कोशिश करने में अपनी शक्ति व्यय करते हैं । इतना आनन्द उत्सव होते हुये भी दु:ख का विषय तो यह है कि इन दिनों में देवी-देवताओं के पवित्र मण्डपों और मन्दिरों में बकरे, मेड़ा, भैंसा, (देहातों में) सुअर, मुर्गों वगैरह लाचार गरीब, नि:सहाय, मूक असंख्य प्राणियों के बलिदान निमत्ति क्रूर की रीति से वध किया जाता है, जिससे उन पवित्र स्थानों में मल, मूत्र, रक्त इत्यादि गन्दी चीजों की धारा बहती है ।

बलिदान एवं माँसाहार से जीव हत्या होती है धर्म के नाम पर अधर्म होता है । शारीरिक हानि अर्थात् रोगों की वृद्धि, आर्थिक बर्बादी और देश की अवनति होती है । निष्पक्ष दृष्टि से यदि देखा जाय तो यह प्रथा सर्वथा अनुचित है । कोई भी सहृदय व्यक्ति इसके औचित्य को स्वीकार नहीं कर सकता । पूजा तीन तरह की है—सात्विकी पूजा फल, फूल, मेवा, मिष्ठान, घी, शक्कर, दूध, केला, गुड़, नारियल, खीरा, तिल, दही वगैरह से की जाती है और वही सर्वोत्तम है फिर हम क्यों तामसी पूजा करें जिसके करने पर हमें प्रायश्चित करना पड़े । पहले कीचड़ में पैर लिपटा कर धोने की अपेक्षा कीचड़ में न घुसना ही अच्छा है ।

भगवती दुर्गा को जब हम जगत-जननी और जगत-रक्षिका मानते हैं और यह भी स्वीकार करते हैं कि छोटे प्राणी से लेकर बड़े तक उसकी प्रिय संतान है । तो फिर क्या वे मूक पशु उसकी सन्तान नहीं हैं जो हम उनका वध उनकी माता के समक्ष करें ? कोई भी माता अपने खोटे से खोटे पुत्र को भी दु:खी देखना नहीं चाहती । वह नहीं चाहती कि किसी पुत्र का रक्तपात हो । देखा जाता है कि जिस माता के चार पुत्र होते हैं उन सबको वह एक दृष्टि से देखती है, फिर कोई कारण नहीं कि वह अपनी तृप्ति के लिये मूक पशुओं का रक्त माँगे । संसार में अपराधी को दण्ड दिया जाता है । पशु मूक निरपराध है । उन्होंने कभी झूठ नहीं बोला, चोरी नहीं की, किसी किस्म का कोई अत्याचार नहीं किया । फिर क्या कारण है कि हम उस मूक निरपराध प्राणी की गर्दन पर छुरी चलायें और वह भी धर्म के नाम पर । जगत जननी के सामने पशु वध करना उस पवित्र मन्दिर को मल, मूत्र एवं रक्त से रँग कर अपवित्र करना हिन्दू धर्म के अहिंसा सिद्धान्त को और दुर्गा माता के नाम को कलंकित करना है । आश्चर्य तो यह है कि बलि करने वाले उसमें होने वाली हिंसा को भी **''वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति''** ऐसा कहकर हिंसा नहीं मानते । यह कितनी दुर्बल उक्ति है । यह मनगढ़न्त केवल अपने स्वार्थ साधन के लिये ही है । जो हिंसा है वह हिंसा ही है । आप कहेंगे कि वध करने से उस पशु को कोई दु:ख नहीं होता । अगर ऐसा है तो वह क्यों रोता चिल्लाता है, क्यों तड़फड़ाता है और इससे बचने की कोशिश करता है ? जैसे प्राण हमारे हैं वैसे उसके भी हैं अगर हमको जरा-सा काँटा लगने पर दु:ख होता है, तो क्या उसे छुरी से काटने पर भी दु:ख नहीं होता ? अपितु अवश्य होता है।

कुछ मनुष्य कहते हैं कि बलि से प्राणी मर कर स्वर्ग को जाता है । यदि यह सत्य है तो अपनी ही बलि क्यों न की जाये । इससे अनायास ही स्वर्ग मिल जायेगा और फिर नरबलि और सिंह आदि की बलि न देकर क्यों उन मूक पशुओं की ही बलि दी जाती है, और दीन पशु तो आपसे यह भी नहीं कहता कि भाई मुझे स्वर्ग पहुँचा दो, मैं यहाँ पर दु:खी हूँ । किन्तु वह तो केवल घास वगैरह खाकर ही अपने को सुखी मानता है ।

स्वयं सहृदय व्यक्ति बलि के लिये लाये गये पशु की दयनीय अवस्था और दु:ख का अनुमान कर सकते हैं । मन्दिर में पशु के हृदय विदारक आह और रक्तपात के कारण बहुत से दयालु दुर्गा के भक्त पुरुषों को मन्दिर में जाने का साहस नहीं होता । इसलिये प्रत्येक हिन्दू का परम कर्त्तव्य है कि मन्दिर को इतना पवित्र, शान्त और सुखद बनायें जिससे प्राणिमात्र उसके दर्शन कर अपने को धार्मिक और सुखी बना सकें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूज्यपाद महात्मा गाँधी कलकत्ते की काली माता के मन्दिर में घातकी पशुबलि प्रथा को देख कर कम्पित हो गये थे और आपने कहा था कि "काली माता के मन्दिर का पशु-बलिदान निमित्त भयभीत बकरों को भयभीत रीति से वध कर माँस खाते हैं यह बहुत सोचनीय है ।" पशु बलि की अपवित्र प्रथा एक कलंक है । इससे हिन्दू धर्म को शीघ्र ही मुक्त किया जाना चाहिए ।

स्वार्थान्ध को ईश्वरीय दण्ड

घटना सीधी के निकटवर्ती एक गाँव की है । वहाँ के एक कृषक दम्पत्ति ने ऐसी अमानवीयता का परिचय दिया है जिसकी कल्पना तक दु:सह है और इस कुकृत्य के पीछें बल है, उस अन्धविश्वास का जो आज के वैज्ञानिक तथा बुद्धिवादी कहे जाने वाले युग में भी भारत की ग्रामीण जनता के दिलों में धड़कन की तरह ही समाया हुआ है ।

भंजन के कोई सन्तान न थी । विवाह को पन्द्रह वर्ष व्यतीत हो चुके थे । किन्तु बजाय इसके कि वह अपनी पत्नी को किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाता या इलाज की उचित व्यवस्था करता, उसने किसी सयाने ओझा का आश्रय लिया ।

ओझा ने दोनों का हाथ देखा और जन्मपत्री देखी । तीन-चार पीढ़ियों का ब्यौरा माँगा । शुक्रवार, शनिवार को वह उन्हें बुलाता और कभी कुछ, कभी कुछ पूजा-भेंट में मँगवाया करता । जब दो तीन माह इसी प्रकार की पूजा-पत्री में बीत गये तो भंजन का धैर्य टूटने लगा । उसने कहा कि अब तो सन्तान होनी ही चाहिए ।

ओझा के पास भला नियति को बदल डालने वाला ब्रह्मास्त्र तो था नहीं । वह तो भेंट-पूजा लेकर अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहा था । जब इस प्रकार का तकाजा देखा तो उसने सोचा कि अब इन्हें किसी ऐसे विधान में उलझाना चाहिए जो ये पूरा न कर सकें और मेरी धाक भी बनी रहे । अत: उसने कहा कि "तुम्हारी जन्म कुण्डली में सन्तान का योग बहुत ही कठिन है । वह तभी सम्भव हो सकता है जब किसी की सन्तान की बलि दी जाये; और वह भी तुम्हारे कुल का ही होना चाहिए । पुत्र के बदले में ही पुत्र पाया जा सकता है ।"

भंजन तो सहसा तैयार न हुआ । पर उसकी पत्नी का विश्वास ओझा जी पर इतना प्रगाढ़ था कि वह तो पीछे ही पड़ गई ।

भंजन के बड़े भाई के एक पुत्र था दो ही भाई थे । एक दिन उसने अपनी जिठानी को बुलाया और उस दिन वहीं रहने को कहा । वह बेचारी क्या जानती थी कि इनका उद्देश्य क्या है ?

रात को जब सब सो रहे थे तब भंजन की पत्नी ने सोते हुए बालक को उठाया और खेत पर जाकर गड़ाँसे से उसका सिर अलग कर दिया । सिर लेकर वह ओझा के पास पहुँची । इतनी रात गये उसे बच्चे का सिर लेकर आया देखकर वह भी घबरा गया । उसे विश्वास न था कि भंजन की पत्नी सचमुच ही अपने ही कुल का दीपक यों बुझा देगी ।

पर क्या कहा जाय इस अन्धविश्वास को । न जाने कितने जीवन, कितने घर इस जंजाल में फँस कर आये दिन नष्ट होते रहते हैं ।

ओझा ने सिर तो नहीं लिया । वह चतुर था । केवल कुछ बाल काट लिये और कहा कि इसी से पूजा कर दूँगा ।

उधर सोती हुई माँ की आत्मा ने अपने बच्चे का करुण चीत्कार महसूस किया और वह आधी रात को ही जाग पड़ी । न वहाँ बच्चा था न भंजन की पत्नी । भेद खुलना था खुल गया । न्याय के चंगुल से ओझा जी भी न बचे । जेल की चक्कियाँ पीसीं तो भंजन की पत्नी को भी महसूस हुआ कि ईश्वर तो न्यायकारी है । अच्छाई का परिणाम अच्छा तथा बुरे का बुरा ही होता है । अब वह रोती थी और कहती थी कि "इस जन्म में तो मैं बाँझ थी ही । अपनी जिठानी की गोद सूनी कर दी । अब भगवान मुझे अगले जन्म में भी बाँझ ही रखेगा ।" पर पछताना ही शेष रहता है बाद में । आवश्यकता है कि इन अन्ध मान्यताओं को समाज से निकाल फेंका जाय जिससे समय रहते लोग अपने विवेक से कार्य कर सकें ।

पशुबलि का अन्धविश्वास नरबलि तक जा पहुँचा

जरा कल्पना कीजिये ! एक निर्बोध शिशु जिसकी आयु केवल दो वर्ष है, निर्ममता से काटा जाता है और उसके रक्त से स्नान किया जाता है । वह भी एक माँ कहलाने वाली—मातृत्व की देवी, उदारता तथा वात्सल्य की मूर्ति नारी जाति की एक इकाई के द्वारा ।

सुनकर ही रोमांच हो आता है । अन्त:करण घृणा तथा क्षोभ से भर उठता है । घृणा उस वीभत्स कृत्य के प्रति तथा क्रोध, समाज में फैली उन अन्ध-मान्यताओं तथा भोली-भाली जनता को बहकाने वाली सारहीन झाड़ा-फूँकी की परम्परा के प्रति । उन्तीस सितम्बर के दैनिक हिन्दुस्तान में छपी एक घटना के अनुसार मेरठ से लगभग चालीस किलोमीटर की दूरी पर स्थित थाना मवाना के नगला नामक ग्राम में उक्त घटना घटी ।

एक ग्रामीण महिला को यह शिकायत थी कि जब भी वह गर्भवती होती थी—तो समय पूरा होने से पूर्व ही अर्द्ध परिपक्व अवस्था में ही उसका गर्भ गिर जाता था । कई बार ऐसा हुआ किन्तु माँ बनकर बच्चे को गोद खिलाने की लालसा दिन प्रतिदिन प्रबल ही होती गई । और यहाँ तक बढ़ी कि पुत्रेषणा ने उसके विवेक को बिल्कुल ही नष्ट कर दिया । इधर उसकी सास को भी नाती का मुँह देखने की बड़ी लालसा थी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह सब था किन्तु बजाय इसके कि शहर जाकर किसी अच्छे डाक्टर से या अस्पताल में इलाज करवाती—वह एक ओझा के पास गई । ओझा ने कुछ जन्तर-मन्तर पढ़े और मनमानी दक्षिणा वसूल की । फिर यह दुष्टतापूर्ण सलाह दी कि "यदि ये किसी के दूध पीते बच्चे को मारकर उसके रक्त से स्नान करें तो बालक अच्छी तरह जन्म लेगा और दीर्घायु भी होगा ।"

कच्चे मस्तिष्क की सास तथा बहू दोनों अन्धविश्वास में आ गईं और उन्होंने पास के किसी हरिजन के बच्चे को चुराकर उसे मार डाला और उसके रक्त से स्नान किया ।

किन्तु कुकृत्य भी कहीं छिपाये से छिपते हैं । पता चल गया और पुलिस द्वारा सास तथा बहू दोनों को गिरफ्तार कर लिया गया ।

धर्म तथा अध्यात्म क्षेत्र में जगतगुरु कहलाने वाला भारत । परोपकार, दया, क्षमा, करुणा तथा सौजन्य संवेदना की मूर्ति सन्तों की अक्षुण्ण परम्पराओं वाला भारत और उसी का समाज आज ऐसे-ऐसे अन्धविश्वासों तथा मूढ़ताओं में ग्रस्त पड़ा रहे, यह उस पढ़े-लिखे तथा अपने आपको प्रगतिशील तथा सभ्य कहलाने वाले व्यक्तियों के मुँह पर करारा तमाचा है । सदा से यह होता रहा है कि पशुबलि के नाम पर भोली-भाली जनता के मन में निर्मम हत्याओं को करने की दुष्टता को बढ़ावा मिलता रहा है । किसी प्राणी की जान लेकर कोई देवी या देवता प्रसन्न होता हो यह बहुत ही अविवेकपूर्ण बात है । देवताओं की प्रकृति तो सदा देना ही देना होती है । वे किसी की बलि लेकर कभी प्रसन्न नहीं होते । किन्तु इस अनैतिक तथा अमानवीय कार्य का प्रभाव इतना भयंकर होता है कि फिर उसे देवी-देवताओं के अतिरिक्त स्वयं को स्वार्थ सिद्धि के लिये भी प्रयुक्त किया जाने लगता है ।

इस दुर्बुद्धि को दूर करने के लिये प्रबुद्ध व्यक्तियों द्वारा बड़े पैमाने पर शीघ्र ही सक्रिय प्रयत्न किये जाने चाहिए ।

पशुबलि की भयंकरता ने बच्चे की जान ली

राजावटी से बलि का भयानक दृश्य देखकर एक पाँच वर्षीय बालक की दु:खद मृत्यु का समाचार मिला है । घटनास्थल पर जाकर और बच्चे के अभिभावकों से मिलकर स्थिति का अध्ययन करके मनोविज्ञान के प्राध्यापक श्री ब्रह्मदत्त बोहरा ने जो विस्तृत समाचार दिया है, वह इस प्रकार है—

यहाँ से ११ मील उत्तर जिन्नोद गाँव के रहने वाले गूजरों में माँसाहार का व्यापक प्रचलन है । इन लोगों की मनोवृत्तियाँ बड़ी कठोर हैं । दया-धर्म को ये लोग अतिमानवीय गुण मानकर उससे दूर रहते हैं । माँसाहार के लिये माँस की उपलब्धि होती रहे इसके लिये यहाँ आये दिन पशुबलि और जीव-हिंसा की जाती है । हिंसा की प्रथम देन है—निर्दयता और उसके प्रत्यक्ष दर्शन किसी भी पशुबलि जैसे अमानवीय कृत्य का समर्थन करने वाले व्यक्ति में देखे जा सकते हैं ।

असली चेहरे का पता तो स्वच्छ दर्पण से ही हो सकता है । साफ चादर में कालिख की हल्की रेखा भी दूर से ही दीख जाती है, दूध में हल्का रंग भी साफ नजर आ जाता है जबकि किसी रंगीन कपड़े पर वैसा ही रंग चढ़ाया जाये तो नये रंग की पहचान नहीं हो पाती । घटना से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि कौन-सा कार्य अच्छा या बुरा है—इसकी पहिचान बच्चों पर उसकी प्रतिक्रिया देखकर हो सकती है । बच्चों में दर्पण, स्वच्छ वस्त्र और दूध जैसी पवित्रता एवं निश्छलता होती है । श्रेष्ठ सद्गुण और पवित्र आचरण की प्रतिक्रिया को तो वे दर्पण में प्रकाश, दूध में मिठाई और वस्त्र में अनुकूल रंग की तरह पचा ले जाते हैं किन्तु कोई भी भयानक दुष्कृत्य या मानवीय कमजोरी का प्रभाव उन्हें तत्काल मूर्छित और परेशान कर देता है । भूतों, साँपों, लड़ाई तथा तीखे-कड़वे शब्दों से उन्हें दूर रखने के पीछे यही मनोवैज्ञानिक आधार है कि बच्चे पर गलत प्रतिक्रिया न पड़े । पशुबलि की भयंकरता को बरदास्त न कर बच्चे की मृत्यु के मुख में ले जाने वाली यह घटना इसी तथ्य का प्रत्यक्ष प्रमाण है । स्वभाव में पड़ जाने के कारण, पशुबलि से उन लोगों ने कभी कोई पीड़ा, दर्द, भय या छटपटाहट अनुभव नहीं की, किन्तु बच्चा एक ही ग्रास में मृत्यु का ग्रास बन गया ।

जिन्नोद के गूजर मोहरसिंह ने कोई मनौती मना रखी थी, सो उसे पूरा करने के लिये बकरे की बलि देने का निश्चय किया । ऐसे विवेकहीन निश्चय यहाँ प्राय: होते रहते हैं । गिरनार की गुफा पर एक कालभैरव का चबूतरा प्रसिद्ध कर रखा है, जहाँ आये दिन कोई-न-कोई पशुबलि चढ़ा दिया जाता है । मोहरसिंह अपने साथियों के साथ उस चबूतरे की ओर गया तो पीछे-पीछे उसका पाँच साल का लड़का भी चला गया । यह स्थान अपने गाँव से दो फर्लांग से अधिक नहीं है । किसी ने बच्चे की ओर ध्यान नहीं दिया । वह चुपचाप चबूतरे के सहारे खड़ा हो गया और देखने लगा कि ये क्या कर रहे हैं । जैसे ही बकरे की गर्दन पर जोर से गड़ाँसे से प्रहार किया, बकरा वीभत्स रूप से चिल्लाया और खून की लम्बी धार फूट निकली । इस विकराल दृश्य को बच्चा सहन न कर सका । वह भयभीत होकर चिल्लाया और अचेत होकर गिर पड़ा ।

मोहरसिंह ने बच्चे को उठाया और घर को भागे । अच्छे-अच्छे वैद्य, ओझा, मन्त्रज्ञ आये पर बच्चे को अच्छा न कर सके । मूर्छावस्था में भी बच्चा चौंक पड़ता था, जो उस डरावने दृश्य की कोमल हृदय पर प्रतिक्रिया थी । अन्त में ४-५ घंटे इस अवस्था में रहकर बच्चा मर गया ।

इस घटना से आस-पास के गाँवों में बड़ा भय पैदा हुआ है । लोग अनुभव करने लगे हैं कि पशुबलि पाप-कृत्य है । जिन्नोद में तो लोगों ने पशुबलि न देने का निश्चय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर लिया है । आस-पास के ग्रामीण भी इस घटना से होश में आ रहे हैं ।

सन्तान के लिये शिशु-हत्या

'पागल न बनो'—हरिहर जाटव की स्त्री ने पति को समझाते हुये कहा—मुझे सन्तान देनी होती तो भगवान स्वयं दे देते । उन्हीं की इच्छा नहीं तो इन गण्डे, ताबीज वालों से कुछ बनेगा नहीं । तुम किसी के बच्चे की जान लेने पर क्यों तुले हो । यदि किसी निरपराध को मारकर ही मुझे बच्चा मिल सकता है तो उसकी अपेक्षा मैं बाँझ अच्छी ।

हरिहर चिल्लाया—मूर्ख तू क्या जाने बच्चा न होना पाप है, गाँव के पण्डित से पूछ आ—नरक में जाना पड़ता है, जिसको सन्तान नहीं होती । यदि तू नहीं जा सकती तो मैं जाता हूँ । खबरदार, यदि किसी को कानों-कान खबर हुई तो तुझे जान से मार दूँगा ।

यह उस अन्धविश्वास की, देश में लाखों की संख्या में घटनाओं में से चुनी गई, एक छोटी-सी घटना है पर इतनी वीभत्स कि रोंगटे खड़े हो जाते हैं । मनुष्य की भोंडी अक्ल को क्या कहा जाये जो अपने स्वार्थ के लिये कुछ भी करने को तैयार हो जाते हैं । इतना भी नहीं सोचते जो स्याने-दीवाने अपनी स्थिति आप नहीं सुधार सकते उनके ढोंगी देवी-देवता किसी को सन्तान क्या दे सकते हैं ? दुर्भाग्य है इस देश का कि लाखों लोग पंडितों के फलितार्थ, ओझाओं की झाड़-फूँक और स्याने-दीवानों के कथन का विश्वास कर अपना भविष्य बिगाड़ते और अनेक संकट औरों के लिये भी उत्पन्न करते हैं ।

हरिहर जाटव का विवाह हुये ६-७ वर्ष हुये हैं । कोई बच्चा नहीं हुआ चिन्ता हो गई बिरादरी में नाक कट जाने की । मानो बच्चे के जन्म से ही नाक बचती है । भले ही वह कितना ही दुष्ट, माल उड़ाऊ और माता-पिता को ही सताने वाला क्यों न हो । करकटिया के ओझाओं के चक्कर में पड़ गया । उन्होंने कान में कहा—यह दवा ले जाओ । सात बच्चों को खिलाना एक से अधिक जितने बच्चे उनमें मर जायेंगे उतने ही बच्चे तुम्हें होंगे पर यह बात किसी को बता दी तो दवा असर नहीं करेगी । हरिहर जाटव बच्चे के लिये मरा रखा था । उसने हित-अहित का ध्यान भी नहीं दिया । दवा ली, दाम दिये पूरे दो सौ रुपये और चला आया ।

स्त्री से कहा । कोमल हृदय स्त्री ने प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया । समझदार थी पर हिन्दू समाज में एक नहीं लाखों पढ़े-लिखे पुत्र के लिये, नौकरी के लिये, सिद्धि चमत्कार के लिये, रोग-शोकों की निवृत्ति के लिये अब भी इन ओछी तन्त्र विद्याओं पर विश्वास करते हैं । तन्त्र जैसी महान शक्तिदायी विद्या के लिये साहस व्यक्त कर सकें ऐसे तो अब करोड़ों में एक भी नहीं । भारतीय जनता की श्रद्धा का दोहन करने वाले अनेक निकल पड़ेंगे जो आज भी तरह-तरह के अन्धविश्वास कर लोगों को मूँड़ते रहते हैं ।

हरिहर जाटव घर से चुपचाप निकला । पेड़े में रख कर कोई चीज गाँव के बनिये लाला केदारनाथ के लड़के को खिला दी । आधे घण्टे में बच्चा अचेत होकर नाक मुँह से फेन उगलने लगा । गाड़ी में डालकर कस्बे ले गये । सौभाग्य से डॉ० मिल गये । वमन कराया गया तब वह भीतर का मलवा निकला डॉक्टर ने बताया किसी ने जहर दे दिया । लालाजी ने बहुत प्रयत्न किया पर पता न चला किसने विष दिया । व्यर्थ ही अनेक लोगों पर सन्देह करते रहे ।

पहला दाँव खाली गया । पखवारा पीछे एक धीमर के लड़के को दे दिया । दवा का कोई प्रबन्ध न हो सकने से ३-४ घण्टे के भीतर बच्चा तड़प कर मर गया । श्री साधूराम स्वर्णकार और ठा. भभूत सिंह के छोटे बच्चे मौत के मुँह से तो बच गये पर बेचारे ८-१० दिन बाद खेलने-कूदने योग्य हुये इतने पर भी उस मूरख की नृशंसता न गई ।

भगवान भी कब तक अत्याचार देखता । एक जाटव की स्त्री ने ही एक कुम्हार के लड़के को प्रसाद खिलाते देख लिया । उसने शोरगुल मचा दिया । तब कहीं हरिहर जी पकड़ में आये । पुलिस के सामने उसने अन्य चार बच्चों को विष देने का अपराध स्वीकार कर लिया। ओझा सहित गिरफ्तार करके उसे जेल भेज दिया गया । १७ वर्ष की सजा हुई पर यह दुष्ट अन्धविश्वास अब भी हमारे समाज में जीवित है सैकड़ों निरपराध व्यक्तियों की जान लिया करता है ।

पुत्र की कामना और पत्नी की हत्या

सन् १९६९ में 'माँ बाप एवं पुत्र को आजीवन कैद' शीर्षक से नवभारत टाइम्स के २७ अगस्त अंक ने एक समाचार छापा है जिससे पता चलता है हिन्दू समाज में 'पुत्र की कामना' ने कितना घृणित रूप ले लिया है ।

इटावा के सेशन जज श्री अशफाक अहमद ने हत्या के अभियोग में अभियुक्त वीरभान उसके पिता सिलेटी सिंह और माँ तीनों को आजीवन कैद की सजा दी है ।

तीनों अभियुक्त जसवन्तनगर थाने के अन्तर्गत ग्राम नगला इंद्रा के निवासी बताये जाते हैं । सबूत पक्ष के अनुसार यह हत्या इसलिये की गई क्योंकि पहली पत्नी से उन्हें किसी सन्तान की आशा नहीं थी । उसके बच्चे होकर मर जाते थे । युवक और उसके माँ, बाप लड़के की दूसरी शादी करना चाहते थे पर पहली पत्नी के रहते यह सम्भव नहीं दिखाई दिया । इसलिये इन्होंने उस बेचारी की हत्या ही करदी ।

इस युग में जबकि देश में १ मिनट में २२५ बच्चे अर्थात् एक दिन में लगभग सवा तीन लाख बच्चे अपनी माताओं की गोद में खेलने लगते हैं, कुछ लोगों की मान्यता तो ऐसी होनी चाहिए जिसमें राष्ट्रीय हित को प्राथमिकता दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गई हो । रहा होगा पुण्य किसी समय संतान का होना पर आज के भीषण जनसंख्या वाले समय में जबकि देश के सामने भीषण खाद्य संकट, स्वास्थ्य संकट, बेकारी की समस्याएँ मुँह बाये खड़ी हैं कोई भी समझदार सन्तान होना पुण्य नहीं मानेंगे । एक दृष्टि से तो यह अभिशाप जैसा है कि कुछ दिन के लिये बच्चे पैदा करना बिलकुल बन्द कर दिया जाये तो यह पुण्य की ही बात होगी ।

सन्तान की कामना हो ही तो वह ऐसी घृणित तो न हो कि उसके लिये धर्म-पत्नी की हत्या की जाय । मानवीय भावनाओं और आदर्शों का यह रक्तपात जहाँ भी जिस भी समाज में हो रहा होगा वहाँ के लोग सुखी नहीं रह सकते । पुत्र की कामना ही इन दिनों घटिया और ओछा दृष्टिकोण है, उसके लिये पत्नी की हत्या करना तो नृशंसता ही है । जब मनुष्य की पुत्रेषणा विद्रूप ले लेती है तो मनुष्य ऐसा ही पागल और खूँखार हो उठता है जैसे यह लोग । इसलिये समझदार लोग कभी भी पुत्र की कामना न कर हँसी-खुशी और उल्लासपूर्ण दाम्पत्य जीवन-यापन करना चाहेंगे ।

दोषी वह वृद्ध-वृद्धाएँ भी कम नहीं जो नाती-पोतों से गोद भरना सौभाग्य समझती हैं । वीरभान को अपनी पत्नी के प्रति ऐसा दुर्व्यवहार करना न पड़ता पर उसके माता-पिता उसके निसन्तान होने को अशुभ मानकर निंदा करते रहे । धीरे-धीरे वीरभान का भी यही विचार हो गया और इस सब का दोष उस बेचारी बहू के मत्थे मढ़ा गया मानो वह स्त्री न होकर भगवान हो और बच्चों को मारना जिलाना उसके वश में रहा हो । उसे मारकर भी हत्यारों ने कौन-सा पुत्र पा लिया । यह समझ मनुष्य में थोड़ा समय रहते आ जाये तो क्यों ऐसी क्रूर घटनाओं को जन्म लेने का अवसर मिले ।

पहले तो वे तीनों उस बेचारी पर ताने कसते रहे । उससे भी जी न भरा तो उसकी पिटाई करनी प्रारम्भ की । एक दिन तीनों ने रात में मिलकर उसकी गला घोंटकर हत्या ही कर डाली । शव को रस्सी से बाँधकर छत से लटका कर अफवाह फैला दी—'बहू ने आत्महत्या कर ली ।'

मनुष्य की क्षुद्रता छिप नहीं सकती । पड़ोसियों को, गाँव वालों को पहले से पता था कि घर में क्या हो रहा है, उन्होंने हत्या का सन्देह किया जाँच करने पर वह सत्य पाया गया और मुकदमे में तीनों अभियुक्तों को आजीवन कैद की सजा दी गई ।

समझने पर बलि देने का विचार छोड़ा

छारेड़ा से दो फर्लांग दूर बैजवाड़ी ग्राम । शक्ति का पर्व दशहरा, जिस दिन असुरता के प्रतीक रावण के संहार की लीला देखने दूर-दूर से हजारों आदमी एकत्रित होते हैं और मन ही मन यह भावना लेकर जाते हैं कि बुराई का अन्त सदैव बुरा ही होता है । ऐसे दिन माता के मन्दिर पर बलिदान करने के लिये बैजवाड़ी ग्राम के निवासियों ने एक भैंसे को तैयार किया । भैंसे के तिलक लगाया गया, गले में फूल मालाएँ डाली गईं, आरती घुमाई गई और पूजन किया गया । गाँव के सब नर नारी उस भैंसे के पीछे-पीछे चलने लगे, जैसे किसी महापुरुष की शोभायात्रा निकाली जा रही हो, या नगर कीर्तन किया जा रहा हो । घण्टे और शंख ऊँचे स्वर में बज रहे थे और उस भैंसे को माता के मन्दिर की ओर ले जाया जा रहा था ।

पिछले कितने ही वर्षों से उस देव स्थान पर दशहरे के दिन भैंसे की बलि दी जाती थी, फिर इस वर्ष बलि नहीं दी जायेगी तो गाँव की देवी नाराज हो जायेगी और तरह-तरह से अनिष्ट करने लगेगी । उधर देव स्थान पर बलि की पूरी तैयारी हो चुकी थी । गाँव के भगत भी तैयार थे कि जैसे ही भैंसा यहाँ आवे उसका बलिदान करके उसका माँस प्रसाद के रूप में लोगों को बाँटा जाय ।

युग निर्माण शाखा के कुछ कार्यकर्ता उस दिन बैजवाड़ी ग्राम गये हुये थे और जब उन्हें यह मालूम हुआ कि थोड़ी ही देर में एक निरपराध मूक पशु की धर्म के नाम पर जान ली जाने वाली है तो वह गाँव के प्रमुख व्यक्तियों से मिले । भोरा पटेल को समझाते हुये उन्होंने कहा भाई ! यह तो माता का स्थान है और आप सबका यह विश्वास है कि माता आपके गाँव की पूरी-पूरी सुरक्षा करती है फिर यदि उसे खुश नहीं रखा जायेगा तो वह अनिष्ट कर देगी । पर पटेल जी यह बताइये कि माता का हृदय कितना सुकोमल तथा विशाल होता है, वह भला यह कैसे सहन करेगी कि उसी का एक बड़ा बेटा मारकर पूजा के नाम पर खालें । घर में माताएँ होती हैं भला कौन-सी माता ऐसी होगी जो अपने एक बच्चे को मार कर खा जाये या दूसरों को खाने के लिये दे दे ?

पटेल को बात तो समझ में आई पर पिछले वर्षों से चली आ रही अन्ध परम्परा को तोड़ने का साहस उनमें न था । यह सब कार्य तो नारायण भगत, शंकर भगत तथा कालू भगत के द्वारा होता था अतः जब तक उन लोगों को तैयार न किया जाय यह बलि किसी भी प्रकार न रुक सकती थी । वहाँ अब सभी लोग एकत्रित हो गये थे । काफी भीड़-भाड़ थी लोग खुशियाँ मना रहे थे ।

तीनों भगतों को आगे बुलाकर एक कार्यकर्ता ने कहा, "आप लोगों की तो धर्म में आस्था है, आप सब तो भगवान को मानने वाले हैं फिर मूर्तियों पर पूजन के समय पुष्प, अक्षत, रोरी, नैवेद्य आदि चढ़ाने का विधान है । पशुओं की हत्या देवी के नाम पर करके तो आप लोग हत्यारों की श्रेणी में आ जाते हैं । यदि आप बलि देना ही चाहते हैं तो दुर्गुणों की बलि दीजिये ।"

'दुर्गुणों की बलि कैसी ?' भीड़ में से एक स्वर सुनाई पड़ा । इतनी बातचीत के बाद उन कार्यकर्त्ताओं को ऐसा लग रहा था कि जनता उनके पक्ष में होती जा रही है । अब उन्होंने सबको बिठाल कर अपनी बात समझाई उन्होंने कहा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"हमारे अन्दर माँस खाने, जुआ खेलने, शराब पीने, धूम्रपान करने और चोरी करने जैसी अनेक बुराइयाँ हैं क्या ही अच्छा हो माता का पूजन करके हम उससे प्रार्थना करें कि हमारे अन्दर की बुराइयों को छोड़ने की शक्ति प्रदान करो और एक बुराई का त्याग ऐसे पुनीत अवसर पर किया जाय । आप खीर, मिठाई, फल आदि का खूब भोग लगा कर प्रसाद रूप में वितरित कीजिये । यहाँ भी भजन, कीर्तन आदि के रूप में उत्सव मनाइये ।" पूरे गाँव ने स्वीकार कर लिया कि बलिप्रथा बुरी और त्याज्य है । वहीं देवी के सम्मुख सबने बलिप्रथा से मुक्त होने का संकल्प लिया और यह प्रतिज्ञा की कि भविष्य में हम लोग अबोध एवं निर्दोष पशुओं की बलि न होने देंगे ।

नरबलि का कलंक मिटाया ही जाना चाहिए

मानव के माथे पर नरबलि के कलंक का टीका कैसे लगा, इसकी सही जानकारी तो उपलब्ध नहीं किन्तु समाजशास्त्रियों की मान्यता है कि इस बर्बर, क्रूर और अमानवीय प्रथा का प्रचलन उसी समय में हुआ होगा जब मनुष्य पाषाण युग में गुजर रहा था और वन, पर्वत, कन्दराओं में निवास करता और आखेट के सहारे जीविका उपार्जन किया करता था । तभी उसे किसी अदृश्य शक्ति का भय व्याप्त हुआ और दैवी प्रकोपों, हिंसक पशुओं, ईति-भीति से बचने के लिये कभी नरबलि प्रारम्भ हुई होगी । किन्तु अब न पाषाण युग है न वन-कन्दराओं का निवास, न हिंसक पशुओं का भय, न देवी-देवताओं का आकस्मिक त्रास । फिर भी नरबलि का सिलसिला इस सभ्यता के युग में समाप्त नहीं हो पा रहा ।

इस सबके लिये विचारकों का कहना है कि सभ्यता के विकास के साथ मनुष्य की लोभी-लालची वृत्ति समाप्त न होकर उल्टे विकसित हुई है और शिक्षित होकर भी अन्धविश्वास जैसी भ्रान्त धारणाएँ भूत की तरह आज उन पर सवार हैं ।

संसार के सभी देशों के लोक साहित्य और किंवदन्तियों में नर बलियों का उल्लेख मिलता है । प्राचीन काल में विकसित सभ्यता वाले समाज भी इस क्रूर और बर्बर प्रथा से पीड़ित रहे हैं । कितनी ही बार पुरातत्ववेत्ताओं को उत्खनन में प्राप्त नर-कंकाल और नरमुण्डों से नरबलि के प्रमाण मिले हैं । चीन की विशाल दीवार के निर्माण काल में अनेक नरबलियाँ इसलिये दी गयी कि दीवाल का निर्माण सुदृढ़ और निर्विघ्न हो । मिस्र के तूतन खामन के कब्रगाह, अरब देशों के शासकों के करबले, दक्षिणी अमेरिका के पेरू, मैक्सिको में कुओं, बावड़ियों, तालाबों से प्राप्त नरमुण्ड, नर कंकाल नरबलि की कहानी कहते नजर आते हैं ।

भारत जैसे धर्मपरायण देश में भी तांत्रिक, ओझा, सयाने, जैसे करामाती, कुचमाती आज भी देवी-देवताओं के नाम पर भोली, अशिक्षित जनता को चित्र-विचित्र लोभ-लालच देकर मनोकामनाओं की पूर्ति के बहाने नरबलि जैसे क्रूर और जघन्य कुकृत्यों में संलग्न किये हुये हैं । किन्तु आश्चर्य तब होता है जब इस घिनौने अपराध में गरीब और अशिक्षित ही नहीं, धनी, शिक्षित व्यक्ति भी जा फँसते हैं । कोई गढ़े-खजाने को पाने के लालच में तो कोई बाँध, कुआँ, भवन निर्माण की सुदृढ़ता सफलता के लोभ में, कभी बाँझपन मिटाने, सूनी गोद में बच्चा पाने के चक्कर में, मुकद्दमे की जीत, प्राकृतिक प्रकोप, बाढ़, अनावृष्टि जैसी विपदाओं से बचाव, अच्छी फसल पाने के लोभ में बालक, बूढ़े, स्त्री तक की बलि चढ़ाने में नहीं हिचकते ।

गत वर्षों में दी गई नरबलियों के समाचार विभिन्न समाचार-पत्रों में छपे थे जो अपने आप में दिल दहलाने वाले और वीभत्स थे । राजस्थान में मादरा नामक स्थान पर निर्माणाधीन बाँध की सफलता व सुदृढ़ता के लिये ठेकेदार द्वारा स्कूली छात्र की बलि दे दी गई जिसे बाद में पुलिस ने गिरफ्तार किया तब पूरा रहस्य सामने आया । इसी प्रकार बाराबंकी जिले के खेता सराय गाँव के एक धोबी ने अपने डेढ़ वर्षीय बालक को अपनी सोती हुई पत्नी की बगल से उठाकर गोबर की मूर्ति के सामने चौराहे पर गला काटकर इसलिये बलि चढ़ा दिया कि किसी तांत्रिक ने उसे बताया था कि ऐसा करने से उसे गढ़ा धन मिल जायगा । उसे धन तो नहीं मिला बेटे से हाथ धोना पड़ा और कारागार की सजा भी भुगतनी पड़ी ।

इसी प्रकार की एक घटना पिछले दिनों समाचार-पत्रों में थी कि मुकद्दमे की जीत के लिये देवी के सामने बेतिया (चम्पारन) बिहार में एक व्यक्ति ने अपने पुत्र को बलि दे दिया । उपस्थित भीड़ भयवश हाथ जोड़े खड़ी रही । चिंगलपुर त्रिचूर में ३२ वर्षीय ग्रामीण को पुलिस ने गिरफ्तार किया । किसी स्वामीजी की सलाह पर उस व्यक्ति ने अपनी पुत्री को इसलिये बलि चढ़ा दिया था कि अनावृष्टि के प्रकोप से उसकी फसल बच जांय । बाढ़ और अतिवृष्टि के भय से डीमाडोह के ग्रामीणों ने एक गर्भवती स्त्री व उसके भ्रूण की बलि देवी को अर्पित कर दी । उत्तर प्रदेश के बेलखरा ग्राम में एक अन्धे नवयुवक की नेत्र ज्योति की वापसी के लिये उसके परिवार वालों ने पड़ोस की ९ वर्षीय बालिका को ही देवी के सामने बलि दे दिया । इसी प्रकार राजस्थान के किसी गाँव में सन्तानहीन दम्पत्ति ने सन्तान प्राप्ति के लालच में दो अबोध शिशुओं की बलि दे दी और देवी को रक्त-स्नान कराया तथा स्वयं स्नान किया, इसके अतिरिक्त वनवासी, गिरिजनों, आदिवासी जातियों में नरबलि की अजीब व अनोखी प्रथा है । वे युद्ध, विजयोल्लास, पर्व, त्योहारों, अच्छी फसल, अच्छा शिकार प्राप्त करने, वांछित मंगेतर मिलने के उपलक्ष्य में नरबलि देते रहते हैं । गत दिनों अखबारों में था कि बिहार के पलामू जिले के पूचक भरमाती गाँव में एक आदिवासी ने 'उठाँगपूजा' के अवसर पर अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सात वर्षीय पोते को इसलिये बलि चढ़ा दिया कि आगामी फसल अच्छी हो । इससे पूर्व भी उठाँगपूजा पर बलि दिये जाने की प्रथा प्रचलित रही है । अब भी बस्तर, असम, मेघालय आदि की जन-जातियों में अच्छी फसल प्राप्त करने के लिये नर-मुण्ड खेत में गाड़े जाने की प्रथा है । बस्तर जिले में कायमपल्ली गाँव में मन्दिर के एक पुजारी के कहने पर अच्छी फसल व अच्छी शिकार हाथ लगाने हेतु ढाई साल के बच्चे की बलि दे दी गई ।

कितने ही लोगों की बलि से पूर्व आकस्मिक सहायता मिलने से जान बचा ली गई है । १५ दिसम्बर सन् ८१ के नवभारत टाइम्स में छपी खबर के अनुसार रायपुर जिले के अटारी और सरसीवा ग्राम में दो वर्षीय बालक चन्दन को व ४ अन्य व्यक्तियों को नरबलि से पूर्व लोगों द्वारा देख लिये जाने पर ही उनकी जान बचाई जा सकी अन्यथा नर बलि से पूर्व की तैयारियाँ स्नान-पूजन आदि की जा चुकी थी । इसी प्रकार ३१ दिसम्बर सन् १९८१ को नवभारत टाइम्स में छपे समाचार के अनुसार पाली जिले में १२ किलोमीटर दूर पहाड़ पर स्थित देवी के मन्दिर में पुजारी के चंगुल में भँवरसिंह को छूटने का मौका मिला । यदि लोगों ने समय पर पहुँचकर पगला गये पुजारी का विरोध न किया होता तो भंवरसिंह की जिन्दगी भंवर में ही डूब गई होती और किसी दुनियादार को खबर भी न होती ।

नरबलि के सही आँकड़े तो ज्ञात होना सम्भव नहीं क्योंकि इस कुकृत्य को लोग लुक-छिपकर करते हैं किन्तु समाचार-पत्रों में छपी खबरों के आधार पर समाजशास्त्रियों का आकलन है कि भारत में अभी भी वर्ष भर में ३०० (तीन सौ) से अधिक नरबलियाँ दे दी जाती हैं । इसके अतिरिक्त दहेज जैसी घृणित परम्परा, प्रथा प्रचलन की वेदी पर निर्दोष लड़कियों की बलि देश में प्रतिवर्ष चढ़ा दी जाती है । यह सब कुकृत्य इस अध्यात्मवादी देश में तब होते हैं जब ८० लाख बाबाजी और ढाई करोड़ पण्डे-पुजारी मात्र धर्म को जीवित रखने की दुहाई देकर आजीविका चलाते और सुविधाएँ प्राप्त करते रहते हैं । किन्तु कुरीतियाँ, मूढ़मान्यताएँ, अन्धविश्वास, रूढ़िवादिता, दहेज, अशिक्षा जैसी अवांछनीयताएँ घटने के बजाय सुरसा के मुँह जैसी फैलती चली जाती हैं जब कि धर्मध्वजी, प्रहरियों के रहते इन्हें पनपने का अवसर ही नहीं मिलना चाहिए था । समय रहते चेता जाय यही श्रेयस्कर है । समझदार लोग आगे आयें तो इन कुरीतियों को देखते-देखते मिटाया जा सकता है । इसमें जन-जन का सहयोग अपेक्षित है ।

भिक्षा व्यवसाय देश और समाज का कलंक

भिक्षावृत्ति मानवीय स्वाभिमान पर एक कलंक

मनुष्यता का प्रधान लक्षण है--स्वाभिमान । बल, धन, विद्या, सत्ता आदि सम्पदाओं का अहंकार करना बात दूसरी है, घमण्ड की निन्दा की गई है और उसे पतनकारी दुष्प्रवृत्ति बताया गया है, स्वाभिमान इससे सर्वथा भिन्न है । आत्म-गौरव एवं आत्म-सम्मान आत्मा की भूख है । आत्मा महान है, उसकी महत्ता एवं श्रेष्ठता का वारापार नहीं, इसलिए उसे अपने गौरव के अनुरूप परिस्थितियों में ही रहना चाहिए । तिरस्कार एवं अपमान की स्थिति उसके लिए न तो वांछनीय ही हो सकती है और न उपयुक्त ही । तिरस्कृत रहते हुए भी यों जिन्दगी को जिया जा सकता है । अन्न मिलता रहे तो साँस चलती रहेगी, पर इससे आत्मिक महानता जीवित नहीं रह सकती, उसके लिए तो स्वाभिमान एवं आत्मगौरव की रक्षा करने वाली स्थिति ही चाहिए ।

आत्मगौरव का हनन—आत्म-गौरव को सबसे अधिक ठेस पहुँचाने वाली और आत्मा को तत्काल नीचा दिखाने वाली वस्तु है—भिक्षा । भिखारी तिनके से भी हलका होता है, उसका न कोई सम्मान रहता है और न मूल्य । हर व्यक्ति से ओछा, गया-गुजरा, दीन-दरिद्र, एवं अपाहिज, असमर्थ समझता है और उसके प्रति तिरस्कार एवं घृणा के भाव रखता है । ऐसा सम्मानरहित व्यक्ति अपने आपकी दृष्टि से भी छोटा हो जाता है । हीनता एवं दीनता उसकी नस-नस में भर जाती है । इन परिस्थितियों में पड़ा हुआ व्यक्ति जीवित ही मृतक है ।

भिक्षा माँगने का अधिकार केवल दो प्रकार के व्यक्तियों को है, एक उनको जो अपाहिज, असमर्थ, अन्धे, कोढ़ी, अशक्त हैं । हाथ-पैर इस लायक नहीं कि अपना पेट भरने लायक भी कमा सकें, ऐसे व्यक्ति को यदि उनके स्वजन सम्बन्धी जीवित रखने लायक सुविधा नहीं देते तो जीवन धारण करने की विवशता में उन्हें भिक्षा माँगने का अधिकार है । यह आपत्ति-धर्म है, अपवाद है । जो मनुष्य तो है पर मनुष्य के उपयुक्त शरीर नहीं मिला, ऐसी दशा में जीवित कैसे रहा जाय ? आपत्ति-धर्म के रूप में भिक्षा उनके लिए एक आश्रय हो सकती है । अग्निकाण्ड में जिनका सब कुछ स्वाहा हो गया, बाढ़ में सब कुछ बह गया या ऐसी ही किसी आकस्मिक विपत्ति में कुछ भी शेष न रहा । कर्ज मिलने की सम्भावना नहीं रही, कोई सहारे की सम्भावना न रही, कोई स्वजन सम्बन्धी ऐसा नहीं जो सामयिक सहायता कर सके, ऐसी दशा में तत्काल जीवन-धारण करने और आघात सह सकने योग्य प्राथमिक स्थिति प्राप्त करने के लिए दूसरों से मुफ्त सहायता भी माँगी जा सकती है । यद्यपि ऐसी स्थिति में भी उचित यही है कि मन में यह भाव रखा जाय कि स्थिति अनुकूल होते ही उस सामाजिक ऋण को किसी न किसी रूप से समाज को फिर वापस कर देंगे । हाँ, जो अपाहिज, असमर्थ एवं स्वजन सम्बन्धियों से निराश्रित हैं वे बदला चुकाने में विवश होने के कारण सर्वथा मुफ्त भिक्षा भी प्राप्त कर सकते हैं ।

दूसरे उन लोगों को भिक्षा माँगने का अधिकार है जो अपने समाज के उत्थान-उत्कर्ष के लिए दूसरों की सहायता एवं उन्नति के लिए सार्वजनिक कार्य का आयोजन करते हैं । सामूहिक सेवा-कार्य मिल-जुलकर श्रम एवं धन देने से ही सम्भव होते हैं । एक व्यक्ति ऐसे कार्यों को करे तो उससे जनता में सेवा एवं सहयोग की भावनाएँ विकसित नहीं हो पातीं । इसलिए साधन एकत्रित करने के लिये ही नहीं, जनता की सद्भावनाओं को जगाने के लिए भी इस प्रकार धन संचय करना होता है । यह भिक्षा लोक-संग्रह के लिए है इसलिए इसे ऐसे प्रमाणित तंत्र के माध्यम से एकत्रित किया जा सकता है जिससे किसी प्रकार की गड़बड़ी, सन्देह और अविश्वास की गुंजाइश न रहे । दान देने वाला यह जान सके कि जो मैंने दिया था, उसका उचित ही उपयोग हुआ । इस प्रयोजन के लिए सार्वजनिक संगठन और उनका आर्थिक नियन्त्रण और निरीक्षण रहना आवश्यक है ।

उज्ज्वल व्यक्तित्व आदर्श चरित्र—प्राचीनकाल में यह प्रयोजन साधु, ब्राह्मण पूरा करते थे । वे स्वयं एक संस्था होते थे । उनका व्यक्तित्व इतना उज्ज्वल, तपा हुआ और निस्पृह होता था कि किसी आर्थिक गड़बड़ी या स्वार्थ-साधना की उनके बारे में कोई व्यक्ति कल्पना तक न करता था । जिन्होंने अपना आहार-विहार अत्यन्त मितव्ययतापूर्ण रखा है, जिन्होंने अपरिग्रह का व्रत लिया है, संयम को जिन्होंने अपना साधना का माध्यम माना है, ऐसे ऋषिकल्प किसी का धन लेकर उसका करते भी क्या ? इसलिए प्राचीनकाल में सार्वजनिक सेवा-संगठनों की आवश्यकता नहीं समझी जाती थी । साधु, ब्राह्मणों का उज्ज्वल व्यक्तित्व उस प्रयोजन की सहज पूर्ति करता था । जनता उन्हें समय-समय पर मुक्तहस्त से प्रचुर दान-दक्षिणा दिया करती थी और वे उसमें से पेट भरने और तन ढकने जितना अपने लिए रखकर शेष को लोक कल्याण के कार्यों में खर्च कर देते थे । उन दिनों जनता को यह पूछने की भी आवश्यकता नहीं थी कि यह धन किस कार्य में खर्च किया जायगा । यह कार्य साधु, ब्राह्मणों का था कि वे देखें कि इस समय कहाँ, किस प्रकार की, किस ढंग से, कौन सत्प्रवृत्तियाँ चलाई या बढ़ाई जानी हैं । जब जहाँ जैसी आवश्यकता प्रतीत हुई, तब वहाँ वैसी व्यवस्था वे लोग बना लेते थे । जनता दान देकर निश्चिन्त हो जाती थी, उसे पूर्ण विश्वास रहता था कि जिन्हें दिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया है वे उसे अपनी व्यक्तिगत पूँजी बनाकर बैठने वाले नहीं हैं, वरन् इसकी एक-एक पाई लोकमगंल के लिए धर्म, संस्कृति एवं समाज के कल्याण में खर्च होगी ।

यह परम्परा अभी तक चलती चली आ रही है । रेलवे स्टेशनों पर जब जनता महात्मा गाँधी के दर्शनों को पहुँचती थी, तब रुपया-पैसा जेवर आदि भी स्त्री-पुरुष उनकी झोली में फेंकते थे । यह काम गाँधीजी पर छोड़ देते थे कि देश-कल्याण के किस कार्य में वे किस तरह व्यय करेंगे । परिस्थितियाँ बदल गईं, पर अभी भी यह प्रथा प्रचलित है कि दान-दक्षिणा के रूप में साधु, ब्राह्मणों को जनता प्रचुर धन-दान करती रहती है और उनसे यह प्रश्न नहीं करती कि आप उसे किस कार्य में किस प्रकार खर्च करेंगे । यह भारतीय जनता की अतिशय उदारता ही कहनी चाहिए कि दान के धन का लोकहित के कार्यों में खर्च किये जाने पर, उसे व्यक्तिगत पूँजी की तरह काम में लाये जाने पर भी यह प्रश्न नहीं किया जाता कि आप को दान दिया गया है, उसको आपने किस सत्कर्म में व्यय किया । व्यक्तिगत पूँजी बन जाने से या उसका इसमें किसी लोकसेवा न करने वाले व्यक्ति के निजी खर्च में काम आ जाने से तो कोई पुण्य नहीं हुआ । पुण्य तो दान से होता है और वही दान कहलाता है जो जनकल्याण की सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्द्धन के लिए किया जाय ।

दान के दो प्रयोजन—तात्पर्य यह है कि भिक्षा माँगने या दान देने के दो ही प्रयोजन हो सकते हैं, एक व्यक्ति की नितान्त असमर्थता और लाचारी । दूसरे सार्वजनिक सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्द्धन के लिए एकत्रित किया हुआ जन सहयोग । यह सहयोग व्यक्ति के माध्यम से एकत्रित हो या संस्था के माध्यम से, यह परिस्थितियों के ऊपर निर्भर रहता है । जब व्यक्तियों के अविश्वस्त होने की आशंका हो तो फिर संगठनात्मक माध्यम ही अपनाना अच्छा है । यद्यपि उनमें भी कम गड़बड़ी नहीं होती ।

भारतीय जनता की धर्मप्रियता और उदारता विख्यात है । वह एक-एक प्रथा परम्परा ही बन गई है । कोई धार्मिक प्रयोजन बिना दान पुण्य के सम्भव नहीं होता । तीर्थ-यात्रा, कथा-वार्त्ता, पूजा-अर्चा, व्रत, अनुष्ठान हर कार्य में तो दान पुण्य अनिवार्य शर्त के रूप में जुड़ा हुआ है । हर शुभ कार्य पर ब्राह्मण भोजन कराने और दक्षिणा देने का प्रचलन है । इस पुण्य परम्परा का प्रयोजन यही था कि लोकमगंल एवं मानवीय चरित्र में सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्द्धन के लिए जितना अधिक सहयोग सम्भव हो सके बार-बार करना चाहिए । उस समय हर साधुब्राह्मण की स्थिति विशुद्ध लोकसेवी एवं धर्म-प्रचारक की थी । इसलिए उन्हें अन्न-वस्त्र आदि देना भी किसी व्यक्ति को भिक्षा देना नहीं वरन् समाज कल्याण की व्यवस्था बनाना ही था । सार्वजनिक कार्यकर्त्ता का भरण-पोषण भी तो करना ही होता है अन्यथा वह जीवित कैसे रहेगा । मोटर चलानी हो तो पेट्रोल तो चाहिए ही । इसलिए ब्राह्मण भोजन या उन्हें अन्न, वस्त्र, गौ आदि का दान सर्वथा उचित ही था । इस औचित्य को ध्यान में रखकर ही ब्राह्मण इस दान को ग्रहण एवं स्वीकार भी करते थे । जो सेवा-संलग्न नहीं होते थे वे स्पष्ट रूप से दान लेने से इन्कार कर देते थे । अभी भी ऐसे लाखों ब्राह्मण हैं जो किसी का दान किसी भी प्रकार स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हो सकते । जो व्यक्तिगत कार्यों में संलग्न हैं, जिसकी अपनी निज की जीविका भी है, ऐसे व्यक्ति को दान लेने का अधिकार है भी नहीं । जो लोकसेवा में निरन्तर रत न होते हुए भी दान लेता है वह तो एक प्रकार से भिक्षुक हो गया । वैसी भिक्षा केवल अपाहिजों के लिए ही सभ्य कही जा सकती है, अन्य व्यक्तियों के लिए तो यह एक पाप पूर्ण अनधिकार चेष्टा ही है । प्राचीनकाल के साधु, ब्राह्मणों का व्यक्तित्व इतना महान था कि वे भिक्षाजीवी होकर तिरस्कृत जीवन व्यतीत करना किसी भी मूल्य पर स्वीकार न करते थे । यह उन्होंने तभी स्वीकार किया था जब उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उनके समय का एक-एक क्षण और भावना का एक-एक कण लोकमंगल के लिए, जनता जनार्दन के हित साधन के लिए समर्पित है, तो संसार की उपयोगी अमानत इस देह को जीवित रखने के लिए अन्न-वस्त्र जैसी स्वल्प सहायता स्वीकार कर लेने में कोई हर्ज नहीं है । इस उच्चतम आदर्श के कारण ही वे संसार को वह अनुदान दे सके जिसका लाभ अन्तकाल तक लोगों को मिलता रहेगा ।

उपर्युक्त दो परिस्थितियों को छोड़कर अन्यत्र जहाँ कहीं भी भिक्षा आचरण हो रहा हो समझना चाहिए वहाँ अनीति बरती जा रही है और मानवता को तिरस्कृत एवं लांछित किया जा रहा है ।

दान का दुरुपयोग और भिक्षाजीवियों की समस्या

भारतीय धर्मशास्त्रों में दान की बड़ी महिमा गाई है । उसे मानवता का एक बड़ा लक्षण बतलाया गया है और यहाँ तक कहा है कि जो कमाई में से दूसरों को एक भाग नहीं देता उसका उपभोग करना चोरी के समान है । भगवद्गीता का वचन है—

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥

अर्थात् "यज्ञ, दान, तप रूप जो कर्म हैं वे अवश्य करणीय हैं, उनको त्यागना कभी नहीं चाहिए । यह कर्म निश्चित रूप से बुद्धिमानों को पवित्र करने वाले हैं ।"

गीता में यज्ञ को सृष्टिसंचालन का मूल आधार कहा है और उसी की श्रेणी में दान को रखने से अनुमान किया जा सकता है कि गीताकार की दृष्टि में उसकी महिमा कितनी अधिक है । उन्होंने दान को यज्ञ का एक अंग ही माना है और कहा है कि "यज्ञ के रूप में अन्य व्यक्तियों तथा समाज का उपकार करने के पश्चात् शेषांश से अपना निर्वाह करना ही पुण्य-मार्ग है ।" उसके मतानुसार अपना जीवन-निर्वाह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने से भी पहले मनुष्य को दूसरों की आवश्यकता का ध्यान रखकर दान और त्याग द्वारा उसकी पूर्ति करनी चाहिए । यही पशु और मनुष्य के बीच का सबसे बड़ा अन्तर है । मनु भगवान ने भी दान को इस युग का सबसे बड़ा धर्म बताया है—

तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते ।
द्वापरे यज्ञमेवादुर्यनिमे क कलौ युगे ॥

अर्थात् "सतयुग में तप, त्रेतायुग में ज्ञान, द्वापर में यज्ञ और कलियुग में दान ये ही धर्म के मुख्य लक्षण हैं ।" हेमाद्रि में लिखा है कि "श्रेष्ठ ब्राह्मणों के निकट रह कर आत्म-संयम, दान और दया का अभ्यास करना चाहिये ।" व्यास जी का कथन है, "सत्पात्र को दान देना ही मनुष्य की सच्ची सम्पत्ति है ।" गौतम मुनि ने "दान को पापों के नाश करने का अमोघ साधन बतलाया है ।" पाराशर ने लिखा है कि "चारों आश्रमों में सर्वश्रेष्ठ गृहस्थ आश्रम है और उस आश्रम का श्रेष्ठ धर्म दान है ।" इस प्रकार समस्त शास्त्रों ने दान की प्रशंसा करते हुए उसे मनुष्य मात्र का परम धर्म बतलाया है ।

पर खेद है कि जिस गुण की ऋषि-मुनियों ने इतनी महिमा बतलाई है और निस्सन्देह जो मनुष्य का एक बहुत बड़ा भूषण है, उसकी वर्तमान समय में बड़ी बुरी दशा हो गई है । जहाँ शास्त्रों में परोपकारी, जन-सेवा में संलग्न सत्पात्रों को दान देने का आदेश दिया है ताकि वे लोक-कल्याण के कार्यों को निर्विघ्न करते रहें, वहाँ आज ऐसे लोगों को दान दिया जाता है जो या तो निकम्मे, निठल्ले रह कर समय को बर्बाद किया करते हैं या नशा, विषयभोग, फैशन, ठाठ-बाट में संलग्न रह कर तुलसीदास जी की इस चौपाई को चरितार्थ करते रहते हैं—

तपसी धनवन्त दरिद्र गृही कलि कौतुक तात न जात कही।

पुराने जमाने में ब्राह्मणों का कर्म 'दान लेना और दान देना' बतलाया गया था । इसका कारण यही था कि ब्राह्मण वे ही कहलाते थे जो सर्वथा अनासक्त, अपरिग्रही, त्यागी रह कर अपना तमाम समय परोपकार और लोक-कल्याण के कार्यों में लगाया करते थे । वे परोपकार के लिए धन, श्रम और समय की तो बात ही क्या अपने शरीर को अर्पण करने में तनिक संकोच नहीं करते थे । ऐसे सेवाभावी व्यक्तियों के भरण-पोषण की चिन्ता समाज न करेगा तो और कौन करेगा ? इसी से दान की परम्परा को इतना महत्त्व दिया गया था कि स्वयं खाने से पहले ऐसे देव-पुरुषों को खिलाने का ध्यान रखा जाय । इसके लिए जन्म, मरण, विवाह तथा अन्य समस्त संस्कारों और पर्वोत्सवों पर ऐसे सत्पात्र साधु-ब्राह्मणों को दान देने का नियम बनाया गया था, पर कौन जानता था कि ऐसा भी जमाना आयेगा जब ढोंगी और मक्कार लोग दान लेने को एक पेशा बना लेंगे । अन्य सब पेशे वाले तो धन पाने के बदले कुछ असली या दिखावटी काम करेंगे भी, पर दान लेने वाले धर्मजीवी सोलह आना हराम की कमाई खायेंगे । इस सम्बन्ध में इस प्रकार के अनेक व्यक्तियों का अनुभव करके हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्री चतुरसेन शास्त्री ने एक बार लिखा था—

"समस्त भारत में सब मिलाकर १५०० से अधिक प्रसिद्ध तीर्थ हैं । वहाँ के अगणित मन्दिर और असंख्यों देवता बैठे-बैठे यात्रियों की राह देखा करते हैं । इन तीर्थों को प्रति वर्ष ४ करोड़ के लगभग यात्री जाते हैं और डेढ़ अरब के अनुमान धन खर्च करते हैं । इसमें ६० प्रतिशत मन्दिर, महन्त और पुजारियों के पेट में जाता है । इनमें से बहुत से महन्त, मठाधीश और पुजारी तो राजाओं के समान ठाट-वाट से रहते हैं । उनके लिए हाथी, घोड़ा, महल सजावट का हर एक सामान होता है । कुछ महन्तों को तो राजाओं के से अधिकार भी मिले हैं, उनकी आमदनी बेशुमार है और वे देवताओं पर चढ़ाए हुए समस्त धन के स्वामी होते हैं । ये लोग अधिकांश में वेश्यागामी, परस्त्रीगामी, धूर्त, पाखण्डी और मिथ्याज्ञान वाले होते हैं ।"

इसी प्रकार एक अन्य विद्वान ने इन साधु नामधारी लोगों का चरित्र-चित्रण करते हुए कहा है—

"इन भिक्षाजीवियों में फुटपाथों पर पड़े रहने वाले पैसा माँगने वालों, गाँजा की दम लगाने वाले, धूनी पर बैठे साधु-फकीरों से लेकर बड़े से बड़े आचार्य और गद्दीधारी महन्तों का भी समावेश होता है । इन सबके जीवन एक समान नहीं होते । कुछ थोड़े खर्चे में काम चलाने वाले होते हैं, तो कुछ खूब मौज, शौक करने वाले भी होते हैं पर इनमें से किसी से जनता का कोई हित पूरा नहीं होता । उनके द्वारा सर्वसाधारण को एक पाई का भी लाभ नहीं मिलता । इनमें से एक भी साधु या महन्त निस्स्वार्थ भाव से जनता को सदुपदेश नहीं देता । इन लोगों को कमाने की कुछ फिकर नहीं रहती और ये 'सवै भूमि गोपाल' की कहते हुए सब लोगों की सम्पत्ति को अपनी ही समझते हैं । वे धर्म-श्रद्धा रखने वालों से बड़ी शान के साथ धन वसूल करते हैं । कितने ही साधु नामधारी तो 'देता है कि नहीं' कहकर धमकी अथवा गुण्डागर्दी द्वारा भी रुपया वसूल करते हैं ।"

जब इन लोगों के ऐसे कृत्यों पर विचार किया जाता है तो यही कहना पड़ता है कि वर्तमान समय में जो व्यक्ति साधु या संन्यासी आदि का भेश बनाकर माँगते-खाते फिरते हैं, वे पेशेवर भिखारी हैं जिन्होंने प्राचीन परम्परा का लाभ उठाकर जनता के धन का दुरुपयोग करना अपना काम बना रखा है । यदि वे वास्तव में प्राचीन ग्रन्थों में बतलाये हुए साधुओं के नियमों का पालन और वैसा आचरण करते तो आज भी किसी को साधु समाज पर आक्षेप करने का मौका नहीं मिलता, तब वे समाज के लिए भार स्वरूप सिद्ध होने के वजाय हितकारी ही सिद्ध होते । उदाहरणार्थ गरुण पुराण में साधुओं के जो लक्षण दिये जाते हैं उनको देखिये—

"जो सम्मान से प्रसन्न और अपमान से क्रुद्ध नहीं होते और यदि कभी असंतुष्ट भी हुए तो कठोर वचन मुँह से नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निकालते, वे ही साधु हैं । साधु सदा शरीर सुख तथा भोगेच्छा से विरत होते हैं और सब प्राणियों के हित के लिए ही चेष्टा करते रहते हैं । वे पराये दुःख से कातर-कातर होते हैं, और तो क्या, दूसरे का दुःख देख कर अपना सारा सुख भूल जाते हैं । वृक्ष जैसे स्वयं घोर ताप सहन करता हुआ भी दूसरों को ताप से बचाता है, साधु भी वैसे ही स्वयं कष्ट सहकर दूसरे का उपकार किया करते हैं ।''

यह तो हुई साधुओं के लक्षणों की बात । इसके अतिरिक्त जब हम संन्यास-उपनिषदों में साधुओं के नियमों को पढ़ते हैं तो पता चलता है कि साधु-संन्यासी होना निकम्मा और निठल्ले लोगों का काम नहीं है, वरन् उसके लिये बड़े त्याग और कष्ट सहन की आवश्यकता पड़ती है । आजकल जो लोग एक पैसे के गेरू से कपड़े रँग कर संन्यासी बन जाते हैं अथवा किसी महन्त या गुँसाई के चेले बनकर अपने को पूजनीय समझने लगते हैं, वे तो उस वर्णन के अनुसार सर्वथा हँसी के पात्र हैं । शास्त्रों में भिक्षुओं और संन्यासियों के कर्मों का वर्णन करते हुये कहा गया है—

''भिक्षु व्यक्ति को धर्म-अर्थ-काम रूप त्रिवर्ग साधन तथा विभिन्न अनुष्ठानों का परित्याग करना चाहिए । उनको शत्रु-मित्र और छोटे-बड़े सब प्राणियों का हितचिन्तक बन जाना चाहिए । वाक्य, मन या कर्म द्वारा किसी जीव का कदापि अनिष्टाचरण न करें । सदा योगरत रहें और सबका संग छोड़ दें । इन्हें गाँव में एक रात और नगर में पाँच रात से अधिक न ठहरना चाहिए । इसके सिवा वे ऐसे स्थान में रहें जहाँ न प्रीति उपजे न द्वेष । जिस समय गृहस्थों के चूल्हों की आग बुझ जाय और सबका आहार समाप्त हो जाय उस समय भिक्षु द्विजों के घर भिक्षा माँगने को पहुँचे ।''

कहाँ तो साधु-संन्यासियों का यह आदर्श और कहाँ आजकल के पेटू, स्वार्थी और लम्पट भिक्षाजीवी लोग । इन नियमों में इन लोगों को किसी भी स्थान पर ज्यादा देर ठहरने का निषेध है ताकि किसी के प्रति राग-द्वेष की भावना उत्पन्न न हो, पर आजकल के साधु तो किसी एक ही स्थान पर मन्दिर या मठ बनाकर और जायदाद इकट्ठी करके ऐसी गहरी जड़ जमाते हैं मानो अनन्तकाल तक उनको वहीं बैठे रहना है । इसी प्रकार जहाँ उपर्युक्त विवरण में सबसे खा-पी लेने के पश्चात् गृहस्थों के यहाँ भिक्षार्थ जाने का नियम है, आजकल के साधू सबसे पहले भोग लगाना अपना अधिकार समझते हैं और कितने ही भिक्षुक लोगों के खाते समय ही छाती पर जा खड़े होते हैं ।

इस वर्णन के अनुसार साधु और संन्यासी का सबसे बड़ा गुण त्याग और परोपकार है जो जितना ही निस्पृह और अपरिग्रही होगा वह उतना ही अधिक साधु माना जा सकता है । पर आज तो इन लोगों को धन-संग्रह और वैभव बढ़ाने में कुछ भी संकोच नहीं जान पड़ता । यह इस जमाने की खूबी है कि तन तोड़ मेहनत करने वाले व्यक्ति तो रूखी-सूखी खाकर गुजारा कर रहे हैं और आलस्य अथवा निरर्थक बातों में समय गँवाने वाले साधू लखपती, करोड़पति बने हुए हैं । ये लोग साधू का वेश धारण करते हुए, गेरूआ वस्त्र पहनते हुए भी जमींदारी करते हैं, खेती कराते हैं, किराए के लिए इमारतें बनवाते हैं, व्यापार करते हैं ।

एक दिन दो सज्जन कहीं से कर्ज लेने के विषय में बातचीत कर रहे थे । एक ने कहा कि अमुक अखाड़े के महन्त के पास चलो, वह पचास हजार तक कर्ज दे सकता है । पूछने पर मालूम हुआ कि उक्त महन्त ने कितने ही व्यवसाइयों, जमींदारों और अन्य लोगों को लाखों रुपया उधार दे रखे हैं और उनकी बाकायदा व्यापार की कोठी बनी हुई है । नागा लोगों के निरंजनी अखाड़ा की जायदाद कुछ वर्ष पहले दस करोड़ से ऊपर बतलाई जाती थी । इसके व्यवस्थापक संन्यासी मोटर और बढ़िया घोड़ा-गाड़ी रखते हैं और अमीरों की तरह ऐश आराम की जिन्दगी बिताते हैं । यद्यपि ये लोग साधारण भिखारियों की तरह घर-घर भिक्षा माँगने नहीं जाते, पर उनकी समस्त सम्पत्ति जनता के दान से ही प्राप्त हुई है । लोग उन्हें धर्मात्मा समझ कर धर्म कार्यों के लिये धन देते हैं, पर वे उसके द्वारा जमीन, जायदाद इकट्ठी करके गृहस्थियों से भी अधिक सांसारिक पचड़ों में फँस गये । यही हाल अयोध्या में बैरागियों के हनुमान गढ़ी मन्दिर, नाथ द्वारे के श्रीनाथ जी, जगन्नाथ, द्वारिका आदि के मन्दिरों का है । इन सबमें प्रतिवर्ष लाखों रुपये भेंटस्वरूप चढ़ता है जो सब महन्त और पुजारियों के सुखोपभोग में खर्च होता है । ऐसे लोग साधू कहलाते हुए भी हाथी घोड़े रखते हैं । अपनी सम्पत्ति के रक्षा के लिए बन्दूकधारी संतरी नियुक्त करते हैं, सोने-चाँदी के बर्तनों में खाते हैं, जरी और किमखाब के कपड़े पहनते हैं, लाखों रुपये मूल्य के रत्नजड़ित मुकुट, आभूषण आदि धारण करते हैं और दुनिया की नयी से नयी सुख-सामग्रियाँ उन्होंने अपने उपभोग के लिए एकत्रित कर ली हैं ।

सदाचार साधुओं का एक अनिवार्य नियम है, पर आजकल साधुओं का जीवन जैसा विलासी और खर्चीला बन गया है उसे देखते हुए उनके द्वारा सदाचार की रक्षा हो सकनी सम्भव ही नहीं । जो साधु नित्य बढ़िया कीमती भोजन करते हैं, सजे हुये आरामदेह मकानों में रहते हैं, मखमली गद्दे-तकियों पर सोते हैं, सुगन्धित तेल और इतर लगाते हैं, पान, बीड़ी, सिगरेट, गाँजा, भाँग, शराब आदि अनेक नशीली और उत्तेजक वस्तुओं का सेवन करते हैं, केसर, कस्तूरी, सोने के वर्क, मोती का चूना जैसी शक्तिशाली चीजों का सेवन करते हैं, ऐसी दशा में अगर उनका चित्त चलायमान हो और वे दासियों, चेलियों या वेश्याओं को कृतार्थ करते रहें तो इसमें आश्चर्य की बात क्या है ? इस तरह की सामग्री का उपभोग करते हुए भी जो निर्विकार रह सके उसे जीवन्मुक्त ही कहा जायगा अथवा सर्वथा नपुंसक व्यक्ति ऐसी परिस्थिति में निश्चल रह सकेगा पर ये साधू और महन्त न तो विदेह पदवी को पहुँच सके है और न वे हिजड़े बन गए हैं । तब वे इन विलास सामग्रियों का सेवन करके कामदेव के बाण से व्यथित न हों, यह कैसे सम्भव है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सच पूछा जाय तो अब तक इन लोगों की इतनी व्यभिचार लीलाओं का भण्डाफोड़ हो चुका है और उनके मुकदमे अदालतों में भी पहुँच चुके हैं कि अब उनकी दुश्चरित्रता में सन्देह की कोई गुंजायश नहीं है । इनमें ब्रह्मचर्य और संयम का पालन करने वाला दो-चार सौ में एकाध मिल जाय तो कहा नहीं जा सकता अन्यथा सभी थोड़े या अधिक अंशों में गृहस्थियों से भी अधिक विषय भोगों में लिप्त देखे जाते है ।

इस साधु समुदाय या भिक्षु मण्डली की संख्या अब बढ़ते-बढ़ते साठ लाख से ऊपर पहुँच चुकी है । इन लोगों को केवल भोजन-वस्त्र की ही आवश्यकता नहीं होती, वरन् उससे भी अधिक उनकी माँग भाँग, गाँजा, सुलफा आदि मादक पदार्थों के लिए होती है । अगर इन सब खर्चों को जोड़ा जाय और उन बड़े 'भिखारियों' का खर्च भी जोड़ लिया जाय जिनकी आमदनी प्रति वर्ष लाखों रुपये की है और जो रईसों की तरह शान और ठाठ से रहते हैं तो यह रकम इस महँगाई के युग में निस्सन्देह दो अरब रुपये तक पहुँच जायेगी । यह समस्त हिन्दू जाति के जेब से ही निकलती है जिसके बदले में उसे अन्धविश्वास और ढोंग बढ़ाने वाली शिक्षाएँ और तरह-तरह की दुष्प्रवृत्तियों की प्रेरणा प्राप्त होती है । अब तक न मालूम कितने गृहस्थ व्यक्ति इनकी धूनी पर गंजेड़ी बन गये और कितने अपने कर्त्तव्य कर्म से विमुख होकर हरामखोरी का जीवन व्यतीत करने लगे, इसका कोई हिसाब नहीं । इस प्रकार यह दल हिन्दू-समाज की एक बहुत बड़ी अर्थ-राशि को नष्ट करता हुआ उलटा उसका अपकार करता रहता है । फिर भी हिन्दू उन्हें पूजनीय समझते हैं और उनके चरणों में मस्तक नवाते हैं, इसे यदि परले सिर की मूढ़ता अथवा अन्ध-श्रद्धा न कहें तो और क्या कहें ?

इन लोगों के सुधार का प्रश्न प्राय: समाज हितैषियों के सामने आया करता है और अब तो सरकार भी इस समस्या को सुलझाने के लिए प्रयत्नशील जान पड़ती है, पर अभी तक कोई सुफल दृष्टिगोचर नहीं हुआ । पिछले कई वर्षों से बड़े नगरों में भिक्षा माँगना गैरकानूनी ठहरा कर भिक्षुकों को औसत दर्जे का भोजन-वस्त्र संस्था की तरफ से देना और जो कुछ काम वे आसानी से कर सकें उतना कराना निश्चय हुआ है । पर प्रथम तो बहुत ही कम संख्या में भिखारी इनमें रहने को पहुँचे और जो गये भी वे थोड़े ही दिनों में वहाँ से भाग आये और पुन: भिक्षा माँगने का ही पेशा करने लगे । इससे उन भिक्षुक-गृहों को बन्द करना पड़ा और प्रत्येक प्रान्त में कई-कई लाख रुपये इन परीक्षणों पर यों ही बर्बाद चला गया । अब ये लोग अपने समुदाय वालों में संगठित रूप से इन भिक्षुक-गृहों के विरुद्ध आन्दोलन फैला रहे हैं और उनमें कभी किसी को न जाने की सलाह दे रहे हैं । उधर बड़े महन्तों तथा मन्दिरों की सम्पत्ति को सरकार सार्वजनिक ट्रस्टियों के हाथ में देने की व्यवस्था कर रही है । पर वे भी अब अपने मन्दिरों को प्राइवेट घोषित करके उनकी सम्पत्ति और सामग्री को निजी वस्तुओं की तरह रखने लगे हैं । केवल दस-बीस बहुत बड़े स्थानों की व्यवस्था में सरकार निरीक्षक नियुक्त कर सकी है । इस प्रकार अभी तक हिन्दू-समाज का एक अरब से अधिक धन व्यर्थ में जा रहा है । जिस धन से सैंकड़ों धर्म-प्रचार और समाज-सुधार की योजनाएँ कार्यान्वित की जा सकती हैं वह थोड़े से निठल्ले लोगों के सुखोपभोग में बर्बाद किया जा रहा है । इसका सुधार तभी सम्भव है कि जब हिन्दुओं की आँखें खुलें और वे स्वयं इन स्थानों को धन इसी शर्त पर दें कि उसका समाज के हित में सदुपयोग किया जाय । जनसेवकों का कर्त्तव्य है कि वे इस भावना को सर्वसाधारण में फैलावें और अपने-अपने यहाँ के मन्दिरों तथा मठों के लिए स्थानीय रूप से आन्दोलन आरम्भ करें ।

भिक्षा-वृत्ति की अवमानना हो

हमारे देश में भिक्षा को एक व्यवसाय का रूप दे दिया गया है । पिछली जनगणना के अनुसार भिक्षाटन करने वालों की संख्या ८० लाख थी । मात्र उतनी ही संख्या प्रच्छन्न रूप से व्यवसाय चलाने वालों की मान ली जाय तो कुल एक करोड़ साठ लाख व्यक्ति इसमें लगे पाये जायेंगे । भारत की कुल ९० करोड़ की आबादी में से एक करोड़ अस्सी लाख व्यक्ति भिक्षा जैसे कार्य को अपना व्यवसाय बना लें, यह लज्जा की बात है । इससे हमारी प्रतिष्ठा घटती है और नैतिक स्तर गिरता है ।

भिक्षा-वृत्ति में लगे लोगों के व्यक्तिगत जीवन को देखने से पता लगता है कि उनका नैतिक पक्ष बहुत ही दुर्बल है । उन्हें अपनी प्रतिष्ठा तथा सम्मान का जरा भी ध्यान नहीं रहता । अगर प्रतिष्ठा का ध्यान रहता तो बार-बार के फटकारे जाने पर भी वे द्वार-द्वार हाथ फैलाते नहीं फिरते । झोली फैलाने की इस प्रवृत्ति ने उनके मनोबल को काफी गिरा दिया है ।

भिक्षा-वृत्ति व्यक्तिगत जीवन में अनेक दुष्प्रवृत्तियों को जन्म देती है । मुफ्त में मिले पैसे का दुरुपयोग करने जैसे-गाँजा, भाँग, चरस, शराब तथा व्यभिचार जैसे दुर्गुण उनके जीवन के अंग से बन जाते हैं । उनकी विवेक शक्ति काम नहीं करती, जिससे वे अनैतिक आचरण पर उतर आते हैं ।

भिक्षा-वृत्ति की ओट में कितने ढंग के अनैतिक कार्य होते हैं, इसका कोई हिसाब नहीं । भोले-भाले असहाय बच्चों को अन्धे-लँगड़े बनाकर भिक्षा व्यवसाय में लगा दिया जाना और उस पैसे से मौज उड़ाना, कितना निन्दनीय और जघन्य कार्य है । आये दिन समाचार-पत्रों में बच्चों की चोरी के समाचार मिलते रहते हैं । यह आचरण पराये बच्चों के साथ ही नहीं, बल्कि अपनी पत्नी और पुत्र के साथ भी होता है । मुम्बई में पिछले दिनों सखिया नामक एक भिखारी ने पहले अपनी पत्नी को लँगड़ी बनाकर इस व्यवसाय को खूब चलाया था, फिर अपने दस वर्षीय पुत्र को सोते समय गर्म सूजा घुसेड़ कर दोनों आँखें फोड़ डालीं । इस अपराध में पकड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जाने पर उसने बतलाया कि इस भिक्षा-वृत्ति से उन्हें प्रति माह तीन से चार सौ रुपये बचत होती है ।

भिक्षा-वृत्ति ने अनैतिकता को यहाँ तक बढ़ा दिया है कि अवांछनीय तत्व इसमें प्रवेश कर चोरी, ठगी तथा राहजनी जैसे कृत्य करते पाये जाते हैं । रेलगाड़ियों तथा तीर्थ-स्थानों में यह कार्य निःसंकोच ढंग से चल रहा है । यही नहीं भिखारियों का निवास स्थान अनैतिक कार्यों का गढ़ बना हुआ है, जहाँ समाज से भागे गुण्डे एवं गुमराह व्यक्ति आश्रय पाते हैं ।

भिक्षा व्यवसाय ने हमारी सामाजिक एवं राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था को काफी प्रभावित किया है । भारत की लगभग दो करोड़ की आबादी आज निठल्ली तथा दूसरों की कमाई पर निर्भर है । करोड़ों भिखारियों की जमात कब से भीतर ही भीतर अर्थ-व्यवस्था की नींव खोद रही है, यह समझ में नहीं आता । स्वस्थ और पेशेवर भिखारियों की संख्या अगर पचपन लाख भी मानकर चलें और प्रति व्यक्ति औसत आय दो रुपये के हिसाब से लें तो देखेंगे कि एक दिन में एक करोड़ दस लाख तथा एक वर्ष में तीन अरब छियानवे लाख रुपये की राष्ट्रीय सम्पत्ति नष्ट हो रही है । भारत की पंचवर्षीय योजनाओं के हिसाब से पाँच वर्ष में उन्नीस अरब अस्सी करोड़ की सम्पत्ति पेशेवर भिखारियों द्वारा बर्बाद की जा रही है । यदि इतनी बड़ी रकम देश की योजनाओं में लग पड़े, तो देश का कायाकल्प हो जाये ।

भिक्षा व्यवसाय से मनोविकार पैदा होता है । धन संग्रह की प्रवृत्ति बढ़ती है तथा उसे छिपाकर रखने में संतोष का अनुभव होता है । आत्म-तुष्टि के अलावा इससे कुछ भी लाभ नहीं । वे न तो उसका स्वयं उपयोग करते हैं और न दूसरों को करने देते हैं ।

मुफ्तखोरी करने वालों के बहुत-से उदाहरण भरे पड़े हैं । बिहार के भोजपुर जिले में एक जाति विशेष के लोगों का मुख्य व्यवसाय भिक्षाटन करना है, इसमें सम्पन्नता बाधक नहीं होती । उनके समाज में जितने लोटे चलते हैं, उतनी ही प्रतिष्ठा बढ़ती है । पिछले दिनों इसी जिले के एक गाँव में एक भिखारी मृत पाया गया, उसके पास एक हजार दो सौ सैंतीस रुपये मिले । बनारस के पास एक बाबाजी के पास से सात सौ तेरह रुपये के नोट तथा पैंतालीस चाँदी के सिक्के उसके मरने के बाद मिले । कानपुर के एक भिखारी को एक अपराध में पकड़ा तो उसके पास से एक बड़ा चाकू तथा सात सौ रुपये के नोट बरामद किये गये ।

भिक्षा व्यवसाय ने हमारी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा को गिराया है । विश्व के रंग-मंच पर हमारा चित्रण एक कंगाल के रूप में हुआ है । अपनी प्रतिष्ठा को खोकर भी हमें कभी पी. एल. ४८० 'केयर' को स्वीकार करना पड़ा था । यदि हम भिक्षा-वृत्ति जैसे राष्ट्रद्रोही कार्य बन्द कर सकें तो देश का बहुत उपकार हो सकेगा ।

भिक्षा व्यवसाय के मूल स्रोत पर ध्यान देने से पता चलता है कि इसका पोषण हमारे अन्धविश्वास, मूढ़-श्रद्धा तथा अविवेक के कारण होता है । भिक्षा-वृत्ति में लगे चतुर व्यवसायियों ने हमारी अविवेकता का लाभ उठाकर हममें मूढ़-श्रद्धा का आरोपण किया तथा समाज में अन्धविश्वास का जाल फैलाया, हमारी धार्मिक धारणाएँ इस प्रकार की बन गई हैं कि भिक्षावृत्ति को धर्म का एक अंग मान लिया गया है । कितने ही छद्मवेशी विदेशी जासूस तथा असामाजिक तत्व हमारी अविवेकता एवं अज्ञानता का लाभ उठाकर अपना काम कर रहे हैं । कलकत्ता से भागे हुए ऐसे ही पाकिस्तानी जासूस वृन्दावन में पकड़े गये थे ।

देश में दान की परम्परा प्राचीन युग से चली आ रही है । हमारा सारा प्राचीन इतिहास दानियों का यश गाता है । हम भी अपनी उदारता दिखला कर आत्म-सुख प्राप्त करते हैं । उदारता अपने आप में अच्छा गुण है । इसकी परिपुष्टि होनी ही चाहिए ? परन्तु दान देने से पूर्व पात्रता की परख तथा प्रतिफल पर अवश्य ध्यान रखना चाहिए । चोर, आवारा, व्यसनी तथा जासूसों को दिया जाने वाला दान सर्प को दूध पिलाने की तरह ही है । हमारी उदारता सराहनीय तथा उपयोगी तब होगी, जब हम विवेकपूर्ण कदम उठायेंगे ।

उदारता-प्रदर्शन के अनेक क्षेत्र भरे पड़े हैं । अपंग-असहायों की मदद कर, विद्यालय-औषधालय खोलकर तथा कुएँ-तालाब का निर्माण कर हम अपनी उदारता दिखाकर भी आत्म-सन्तोष प्राप्त कर सकते हैं । अगर हम ऐसा न कर कुपात्रों का परिपोषण करते रहे, तो हम स्वयं दोष के भागी होंगे ।

समाज और देश के हित में हमें भिक्षा व्यवसाय पर पूर्ण नियंत्रण कर लेना चाहिए । राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के मार्ग में गतिरोध पैदा करने वाले रोड़े को यथाशीघ्र दूर करने में ही कल्याण है । ऐसे अधःपतित व्यक्तियों से देश की भलाई सम्भव नहीं ।

समाज सुधार में लगे व्यक्तियों को बड़े धैर्य और साहसपूर्ण कदम उठाने चाहिए । किसी के सम्मान पर प्रत्यक्ष आघात की प्रतिक्रिया उलटी हो सकती है । भिखारियों ने भी अपने निन्दनीय कार्य को अपने सम्मान की परिधि में रख लिया है । अतः उनकी मान्यताओं में परिवर्तन लाने के लिए बड़ी चतुरता की जरूरत है ।

भिक्षा-वृत्ति करने वाले लोगों को स्वेच्छापूर्वक उस धन्धे को छोड़ देने के लिए प्रेरित करना चाहिए । उनके लिए सम्मानपूर्ण कामों की व्यवस्था करनी चाहिए तथा प्रोत्साहन देना चाहिए । समाज सेवा के योग्य भिखारियों के लिए सामूहिक दान से सार्वजनिक कार्य दिये जाने चाहिए, जिससे वे अपनी प्रतिष्ठा को बढ़ा सकें । भारत को अपना आत्म-गौरव पाने के लिए भिक्षावृत्ति का उन्मूलन करना आवश्यक है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाज शरीर का रिसतावृण

भिक्षा-वृत्ति

भारतीय समाज के दैन्य व दारिद्रय का परिचय देने वाले भिखारियों की उपस्थिति के बिना किसी भी नगर के रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड, पब्लिक पार्क तथा अन्य सार्वजनिक स्थलों का चित्र अधूरा ही रह जायगा । तीर्थ स्थानों पर तो इनका जमाव बहुत बड़ी संख्या में दृष्टिगोचर हुए बिना नहीं रहता । विवशता, निराशा, दैन्य, दारिद्रय व गन्दगी के प्रतिरूप ये दुबले, पतले, हट्टे-कट्टे स्वस्थ, रोगी, पूर्णांग, विकलांग सभी प्रकार के मिल जाएँगे ।

१९६१ की जनगणना के अनुसार कर्महीनों की संख्या ९९,६१,५७२ थी । जिनमें ५५ लाख विशुद्ध रूप से भिक्षा-वृत्ति पर ही आधारित हैं । इन ५५ लाख भिखारियों पर प्रति दिन हमारा समाज एक करोड़ दस लाख रुपयों की धनराशि व्यय करता है । एक सर्वेक्षण के आधार पर तब यह तथ्य प्रकाश में आया था कि एक भिखारी की औसत आय दो रुपये प्रतिदिन होती है । वह एक दिन में ७५ पैसे नकद व १.२५ पैसे की भोजन सामग्री व वस्त्रादि पा लेता था । अब तो यह कमाई कई गुनी अधिक बढ़ गयी है ।

हमारे देश में जितने अधिक भिखारी हैं उतने अन्य किसी देश में नहीं हैं । बाहर से आने वाले पर्यटक जब इन्हें इतनी बड़ी संख्या में देखते हैं तो उनके मन मस्तिष्क में हमारे देश का जो चित्र बनता है वह निश्चय ही हमारे लिए लज्जा का विषय होना चाहिए । वे भारत को भूखे नंगों, कर्महीनों व निर्लज्जों का देश समझें तो उनका दोष क्या ? वे जैसा देखते हैं वैसी ही तो धारणाएँ बनाते हैं । हर सौ आदमी के पीछे एक आदमी का भिखारी होना ही उनकी इस धारणा का आधार है ।

यह विचारणीय प्रश्न है कि भारतवर्ष की गरीब जनता ८० लाख भिखमंगों का भार वहन करती है । प्रति दिन लोगों पर करोड़ों रुपये का व्यय समाज को करना पड़ता है । इस भार को वहन करते रहने का कोई औचित्य समझ में नहीं आता । समाज से इनको कुछ लाभ मिलता हो तो भार वहन का औचित्य समझ में भी आ सकता है किन्तु ये लोग अपराधहीनता, चारित्रिक पतन, दारिद्रय व बदनामी ही फैलाते हैं । अत: भिक्षावृत्ति का मूलोच्छेदन अनिवार्य हो जाता है ।

इन ८० लाख भिखारियों में से एक लाख आधे पागल, आठ लाख अन्धे, तीन लाख गूँगे-बहरे, डेढ़ लाख कोढ़ी हैं । इन्हें विकलांग व रोगी माना जाय तो इनकी संख्या कुल मिलाकर साढ़े तेरह लाख होती है । शेष बयालीस लाख तो ऐसे व्यक्ति हैं जो कमाकर खाने योग्य हैं । इन्हें तो बैठे-ठाले खाने की कुटेव पड़ गयी है जिसे मिटाना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है ।

विकलांगों को बैठे-बिठाये खिलाने का भी कोई औचित्य समझ में नहीं आता । हाँ उन्हें उनकी क्षमता के अनुरूप काम दिया जाय । उन्हें किसी कार्य विशेष में दक्ष बनाने के लिए सरकारी व सामाजिक संस्थान खोले जाएँ, उन्हें आत्म-निर्भर बनाने, सम्मानित जीवन जीने की स्थिति में लाने के लिए व्यय करना तो जरूरी है, किन्तु उन्हें अकर्मण्य की तरह बैठे-बिठाए, खिलाने से तो उनका स्वाभिमान भी नष्ट होता है तथा मुफ्त की रोटियाँ खाकर उनका दिमाग भी खराब होता है यही नहीं 'खाली दिमाग शैतान का घर' वाली उक्ति उन पर अक्षरश: लागू होकर उन्हें पतित भी बना देती है । अत: ऐसे लोगों को स्वावलम्बी बनाने का प्रयास करना चाहिये तथा स्वस्थ व पूर्णांग भिखारियों को कमाकर खाने के लिए विवश करना चाहिए ।

भिक्षावृत्ति को अधिकांश भिखारी अपनी विवशता नहीं वरन् इसे अपना व्यवसाय मानते हैं । वे इसमें कोई लज्जा व शर्म नहीं मानते । अपनी दीनता का प्रदर्शन विकृत अंगों व घावों का प्रदर्शन, करुण आवाज में पुकारना तथा झूठ-मूठ अन्धे-बहरे बन जाने की मक्कारियों को अपना व्यवसाय कौशल मानते हैं । इस प्रवृत्ति को समय रहते ही कुचल देना आवश्यक है ।

इनके भी पत्नियाँ होती हैं, बच्चे होते हैं । वे सभी इस घृणित कर्म को अपना व्यवसाय मानते हैं । इसके नये-नये तरीके व तकनीक खोजते रहते हैं । केरल से तो एक समाचार आया है कि तेलीचेरी, कन्नानोर व कोजीकोड़ के भिखारियों ने अपनी यूनियन भी बनाई है । ऐसे लोगों को पैसा व रोटी देना पुण्य कदापि नहीं हो सकता यह तो पाप ही कहा जायगा, क्योंकि इनमें से कई लोग अपराध भी करते हैं ।

मनुष्य में दूसरों के दु:ख, कष्ट देखकर स्वाभाविक रूप से दया व सहानुभूति उमड़ पड़ती है । यह मानवीय संवेदना ही उनके इस घृणित व्यवसाय का मूल आधार है । साथ ही साथ धर्म, ईश्वर व दान के नाम पर भी ये लोग पैसा ऐंठने में सफल हो जाते हैं ।

कुछ लोग यह मानते हैं कि अपने घर कोई कामना लेकर आने वाला व्यक्ति निराश लौटे तो यह अच्छी बात नहीं । अत: वे पात्र कुपात्र की चिंता न करते हुए भीख दे देते हैं । महिलाएँ स्वभाव से ही ममतामयी व सहृदया होती हैं, अत: वे अक्सर अपने द्वार आए हुए भिखारी को निराश नहीं लौटाना चाहतीं किन्तु ये सब बातें व्यर्थ की भावुकता ही हैं ।

यह मान्यता उन दिनों की उपज है जब हमारे देश में स्वेच्छा से समाज सेवा का कठिन व्रत अपनाने वाले व्यक्तियों को 'साधू' कहा जाता था । ये साधू प्राय: वानप्रस्थी हुआ करते थे । वानप्रस्थ आश्रम का पालन प्रत्येक व्यक्ति करता था । परिवार का भार वयस्क पुत्रों पर छोड़कर वे समाज-कल्याण, लोक-सेवा व लोक-शिक्षण का कार्य अपना लेते थे । उनमें से अधिकांश का भरण-पोषण उनके पुत्रादि करते थे । किन्तु जिनके पुत्र नहीं होते थे या वे अपने समाज सेवी पिता के भरण-पोषण करने की सामर्थ्य नहीं रखते थे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो ऐसे समाज-सेवियों का भार समाज उठाता था । उन्हें किसी के पास कुछ माँगने नहीं जाना पड़ता था । यह गृहस्थों का दायित्व होता था कि वे इनकी स्वल्प आवश्यकताओं की पूर्ति उनके पास जाकर स्वयं करें अथवा उनके घर पर आते ही श्रद्धा, सम्मानपूर्वक उनके निर्वाह की व्यवस्था बना दें ।

यह सामाजिक व्यवस्था बड़ी सहज तथा उपयोगी थी । यह अनुभव व ज्ञान की पूँजी से युक्त वानप्रस्थ वर्ग शिक्षा, न्याय, धर्म, चिकित्सा, साहित्य सृजन, लोक-शिक्षण, समाजकल्याण आदि के दायित्वों का निर्वाह स्वल्प आवश्यकताओं की समाज द्वारा पूर्ति कर दिए जाने पर पूरी निष्ठा-लगन व भावना से सहज रूप से करता रहता था । अत: श्रद्धा व सम्मान का पात्र भी था । ऐसे लोगों को अपने द्वार से खाली लौटाना निश्चय ही अनुचित था ।

समय के साथ आश्रम परम्परा समाप्त होती गयी । इन लोक-सेवियों के स्थान पर अवसरवादियों तथा अकर्मण्यों ने उस सामाजिक व्यवस्था से लाभ उठाना आरम्भ कर दिया । उन निस्पृह लोक-सेवियों और आज के इन कर्महीनों में कुछ भी साम्य नहीं हैं, अत: हमारे अभ्यास में आयी हुई इस बात का कि घर से कोई निराश न लौटे का महत्त्व अब विवेक की कसौटी पर कसने के बाद ही स्वीकारना चाहिए । ऐसा सत्पात्र आ जाय तो उसे निराश करना भी नहीं चाहिए पर इन निठल्लों को तो हतोत्साहित ही करना चाहिए ।

जो लोग श्रम देवता की उपासना करना नहीं जानते । कर्म करना जिन्हें प्रिय नहीं, ऐसे लोगों को दिया गया धन व भोजन वस्त्र न तो दान है और न पुण्य । दान व पुण्य तो समाज के लिए लाभकारी होते हैं, जबकि उन्हें दिया गया धन समाज की कलंक कालिमा को बढ़ाने का ही काम करता है ।

दान के साथ पात्रत्व की शर्त अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है । आज दान के नाम पर कुपात्रों को दी जाने वाली धनराशि हमारा अनिष्ट ही कर रही है । ऐसे लोग धन कुबेर बन जाते हैं जो कहीं कमाने नहीं जाते, जिन्हें समाज के हित से कुछ लेना-देना नहीं । वे परोपजीवी अमरबेल की तरह समाज रूपी विटप के प्राण हरते रहते हैं । ये प्रकट नहीं, किन्तु प्रछन्न भिखारी इन भूखे-नंगों से कम हानिकारक नहीं हैं ।

दान तभी तक पुण्य है, जब तक सत्पात्र को दिया जाय । कुपात्र को दिया गया दान कुकर्मों में ही लगता है । अत: वह नर्क का ही पथ प्रशस्त करता है, स्वर्ग का नहीं । लोकहित के लिए सत्पात्रों को, लोकसेवी संस्थानों को दान तो दिया ही जाना चाहिए पर उनके चरित्र व कर्तृत्व को कसौटी पर कस कर खरा सोना सिद्ध होने पर ही दान दिया जाना चाहिए ।

भगवान के नाम पर हट्टे-कट्टे स्वस्थ लोगों को भी भीख माँगते देखा जाता है । रोगी, विकलांग व वृद्ध सहायता के पात्र हो सकते हैं, किन्तु स्वस्थ लोगों का इस प्रकार हाथ फैलाना सर्वथा अनुचित है । जिस व्यक्ति में जरा-सा भी स्वाभिमान होता है, वह तो माँगने से मर जाना बेहतर समझता है । अत: ऐसे परोपजीवियों को कमा कर खाने के लिए बाध्य करने के लिए जन-सामान्य के लिए सीधा-सरल रास्ता यही है कि वे उन्हें भीख न दें ।

मानवीय संवेदनशीलता के प्राकृत सद्गुण के कारण उत्पन्न हुई दया व सहायता करने की कामना का सच्चा परिपोषण—प्रकटीकरण भीख माँगने वाले को पाँच दस पैसा या रोटी कपड़ा दे देना नहीं है वरन् उन्हें स्वावलम्बी व स्वाभिमानी बनाने के लिए ऐसे संस्थानों की व्यवस्था करना है जो हमारे अभीष्ट की पूर्ति कर सकें ।

रोगी व विकलांग होने के कारण मनुष्य की क्षमताओं में इतनी कमी नहीं आ जाती है कि वह अपना पेट भी न भर सकें । विरजानन्द सरस्वती, हेलन केलर, डोरीना डी ग्वाइया आदि कई प्रज्ञा चक्षुओं के उदाहरण हमारे सामने हैं जिन्होंने स्वाभिमानपूर्वक जीवनयापन ही नहीं किया वरन् समाज का बहुत बड़ा उपकार भी किया । यदि भिक्षावृत्ति को घृणित बतायी जाय, भिखारियों के स्वाभिमान व संकल्पों को जगाया जाय तो यह कोई कठिन बात नहीं है कि वे भी अन्य नागरिकों की तरह ही स्वाभिमानपूर्वक जीवनयापन कर सकें । इसके लिए व्यक्तिगत, सामाजिक व राजकीय स्तर पर बहुत कुछ किया जाना शेष है ।

तिरस्कृत और अपमानजनक भिक्षावृत्ति

मुम्बई भिक्षावृत्ति निरोध अधिनियम १९४५ तथा भारतीय संसद द्वारा पारित बाल अधिनियम १९६० के अनुसार "एक सार्वजनिक स्थान में भिक्षा माँगने के लिए प्रार्थना करना या भिक्षा प्राप्त करना अथवा किसी के व्यक्तिगत निवास स्थान में जाकर भिक्षा माँगना अथवा इस हेतु प्रार्थना करना भिक्षावृत्ति कहलाती है । अक्सर नाचने, गाने, भविष्यवाणी करने अथवा कोई करतब दिखाने, कोई चमत्कारी वस्तु बेचने, जादू दिखाने, स्वयं के अथवा किसी अन्य व्यक्ति अथवा जानवर के घाव होने, चोट लगने, अंगभंग होने आदि का प्रदर्शन करके अथवा रोगादि के कारण भीख माँगी जाती है ।"

भारत में पुरातनकाल से ही भिक्षावृत्ति का चलन किसी न किसी रूप में रहा है । प्रसिद्ध अर्थशास्त्री कौटिल्य ने कहा है कि "संन्यासी को छोड़कर अन्य कोई समर्थ व्यक्ति भिक्षा माँगता पाया जायेगा अथवा अपने परिवार में माता, पिता, भाई, बहिन, पुत्र और पुत्री आदि की उपेक्षा करता दिखाई देगा उसे राज्य की ओर से दण्डित किया जायेगा । इसके साथ ही उन्होंने राजा के कर्तव्यों का उल्लेख करते हुए यह भी कहा है कि राजा को अनाथों, वृद्धों, असहायों तथा निराश्रितों के पालन-पोषण का प्रबन्ध करना चाहिए ।"

पुरातन भारत के नैतिक नियमों, संयुक्त परिवार तथा वर्ण-व्यवस्था ने भिक्षावृत्ति पर पर्याप्त नियन्त्रण रखा था, पर अब समाज की स्थिति एक दम बदल गई है । व्यक्ति ने अपना स्वाभिमान खो दिया है । गाँव में निवास करने वाले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेहनतकस मजदूरों को फसलों के अतिरिक्त समय में काम नहीं मिलता तो वे रोजगार की तलाश में शहरों की ओर भागते हैं । वहाँ के औद्योगिक प्रतिष्ठानों में उन्हें नौकरी नहीं मिल पाती तो वे उदर पूर्ति के लिए भिक्षा व्यवसाय अपना लेते हैं । कितने ही व्यक्तियों ने इसे तुच्छ एवं निम्न लाभदायक व्यवसाय के रूप में अपना लिया है । घर के सभी सदस्य विभिन्न क्षेत्रों में निकल जाते हैं और शाम तक कुछ न कुछ कमाकर लौटते हैं । जिस परिवार में सदस्य संख्या जितनी अधिक है, उसकी आय भी उतनी ही अधिक है । एक-एक भिखारी परिवार की मासिक आय कभी-कभी तो सात सौ रुपये तक पहुँच जाती है । कितने व्यक्ति ब्याज का धन्धा करते हैं और अपना पैसा बैंक में जमा कर देते हैं ।

भिक्षावृत्ति के मूल में मुख्य कारण निर्धनता का ही है, पर कुछ ऐसे लोग भी हैं जिन्हें भिक्षावृत्ति के लिए विवश किया जाता है । वयस्क भिखारियों का गिरोह साधु-संन्यासियों के वेश में इधर-उधर घूमता रहता है । यहाँ की धर्म प्राण जनता उन पर किसी प्रकार का शक भी नहीं करती । अवसर पाकर वे वयस्क भिखारी बच्चों का अपहरण कर लेते हैं । कभी-कभी बड़े मेलों में माता-पिता की असावधानी से कुछ बच्चे बिछुड़ जाते हैं जिन्हें भिखारी अपहृत कर दूर के किसी स्थान में ले जाते हैं । पिछले दिनों मुम्बई में एक ऐसा व्यक्ति पकड़ा गया था जो बिलासपुर, कलकत्ता और दिल्ली से तीन बच्चों को उड़ा कर लाया था । वह व्यक्ति बच्चों द्वारा लायी गई भीख से अपना जीवनयापन करता था ।

अपहृत बच्चों के साथ बड़ी निर्दयतापूर्वक व्यवहार किया जाता है । उनकी आँखें फोड़ दी जाती हैं । हाथ पाँव से लूला लँगड़ा बना दिया जाता है या शक्ल ऐसी विद्रूप कर दी जाती है जिससे देखने वालों के मन में करुणा उत्पन्न हो जाए और वह भिक्षा देने को बाध्य हो जाएँ ।

सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार देश में १४ वर्ष से कम आयु के भिखारियों की संख्या १,००,५६५ थी। यह भिखारियों की कुल संख्या का लगभग १० प्रतिशत है । सन् १९३१ में देश में १४ लाख तथा १९६७ में २० लाख भिखारी थे अब यह संख्या एक करोड़ को भी पार कर चुकी है । कितने ही व्यक्ति धर्म के नाम पर भीख माँगते हैं, उनका उद्देश्य उदरपूर्ति ही होता है । ऐसे बहुत कम लोग हैं जो लोक-मंगल के लिए धन एकत्रित करते हैं ।

इस समय अपने देश में यह एक ऐसा व्यापार चल रहा है जिसमें न परिश्रम करना पड़ता है और न पूँजी लगानी पड़ती है, सदैव लाभ ही लाभ प्राप्त होता है । आय कर की चिन्ता से मुक्त बिना परिश्रम और पूँजी लगाये अधिक लाभ दिलाने वाले व्यापार हैं यह । यदि किसी से यह कहा जाए कि भिक्षावृत्ति एक लाभदायक व्यवसाय है तो वह इस आश्चर्यजनक सत्य को एक दम मानने के लिए तैयार नहीं होगा पर सत्य तो सत्य ही होता है ।

क्या कभी आपने यह भी सोचा है कि जो भिखारी दिन भर अपने को दीन-हीन स्थिति में अभिव्यक्त कर दाताओं को आत्म-सन्तोष का अनुभव कराता है । वह वास्तव में कुशल व्यापारी है जो अपने व्यवसाय को चलाते रहने के लिए अनेक हथकण्डों से काम लेता है ।

भिखारियों द्वारा भीख माँगने के जो तरीके अपनाये जा रहे हैं वह समाज के लिए बड़े घातक हैं । कोई भी सार्वजनिक स्थान ऐसा न मिलेगा जहाँ भिखारियों के दर्शन न होते हों । भिखारी हाथ में टीन का डिब्बा लिए गन्दे-फटे-कपड़ों से अपने अंगों को ढके, आने-जाने वाले व्यक्ति के पीछे मनुहार करते देखे जा सकते हैं । राहगीर उनसे अपना पीछा छुड़ाने के लिए कुछ न कुछ देते हैं । प्रत्येक भिखारी अच्छी तरह जानता है कि वह लोगों में सहानुभूति तथा दया की भावना जितनी अधिक उभार सकेगा उतनी ही सफलता उसे अपने व्यवसाय में मिलेगी । दूसरों के कष्टों को देखकर स्वाभाविक रूप से हमारे मन में दया और करुणा उत्पन्न होती है और यह संवेग हमारी जेब से पैसे निकलवा देता है ।

भिखारियों का यह निजी अनुभव है कि उन व्यक्तियों को अधिक भिक्षा मिलती है जो लँगड़े, लूले, अन्धे, कोढ़ी या विकृत अंग वाले होते हैं । यही कारण है कि वे अपनी दयनीत स्थिति तथा शरीर के घावों का प्रदर्शन कर भीख माँगते हैं । कभी-कभी मनुष्यों की लाशों को साधन बना कर पैसा इकट्ठा किया जाता है । शव को सड़क पर रख कर, कपड़ा उढ़ाकर कई भिखारी या एक परिवार के ही सब लोग रोने-चिल्लाने लगते हैं । कफन तथा दाह-संस्कार के लिए राह चलते लोगों से पैसा माँगते हैं । कभी-कभी तो कोई भिखारी ही कपड़ा ओढ़कर लेट जाता है और कभी किसी के शव को लाकर पैसा वसूल करते हैं । भोले-भाले व्यक्तियों को धोखा देना निन्दनीय कृत्य ही है ।

कितने ही निपुण भिखारी स्वयं भीख न माँग कर दूसरों से यह व्यवसाय कराते हैं और उसका पूरा-पूरा लाभ स्वयं प्राप्त करते हैं । ऐसे व्यक्ति छोटे-छोटे बच्चों को बाजारों से उड़ाकर उनके अंग विकृत कर देते हैं और फिर भिक्षावृत्ति का प्रशिक्षण देकर अपनी रोजी चलाते हैं । पिछले दिनों कानपुर स्टेशन पर एक ऐसे साधु को पकड़ा गया था जो दो छोटे बच्चों को बोरी में डालकर ले जा रहा था । ऐसे अपराध आये दिन हमारे देश में होते रहते हैं जो समाज की दृष्टि में नहीं आते । इस तरह हम देख सकते हैं कि यह दीन-दुःखी बनने वाले भिखारी मानवता का कितना बड़ा अहित कर उसे कलंकित करते हैं ।

आर्थिक विषमता, गरीबी, बेकारी, बढ़ती हुई जनसंख्या शारीरिक और मानसिक दुर्बलताएँ, आलस, स्वयं परिश्रम न करके दूसरों के टुकड़ों पर निर्भर रहने की प्रवृत्ति और जनता की अन्ध-श्रद्धा जैसे अनेक कारणों को भिक्षावृत्ति के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

निर्धन और असहाय व्यक्ति विवश होकर भीख माँगता है और जब अभ्यस्त हो जाता है फिर इस धन्धे को छोड़ना नहीं चाहता । सैकड़ों वर्षों से देशवासी साधु और भिखारियों को दान देकर पुण्य प्राप्त करते रहे हैं । देशवासियों की अन्ध-श्रद्धा का अनुचित लाभ उठाकर ईश्वर के नाम पर भिखारी इतना पैसा और खाद्य-सामग्री जुटा लेते हैं कि ब्याज का सहायक धन्धा शुरू कर देते हैं ।

शारीरिक और मानसिक दृष्टि से दुर्बल और अपंग व्यक्तियों को यदि थोड़ी देर के लिए छोड़ भी दिया जाये तो भी ऐसे व्यक्तियों की संख्या भी लाखों में है जो आत्म-सम्मान त्यागकर आलस्य और काहिली के कारण कोई परिश्रम का कार्य करना ही नहीं चाहते । यदि इन्हें किसी प्रकार का काम भी दिया जाये तो वे बहाना बनाकर उसे छोड़ देते हैं । यह भिखारी हमारे देश के गौरव को आघात पहुँचाने वाले हैं । ऐसी स्थिति में समाज-सेवी, राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री तथा बुद्धिजीवी वर्ग के व्यक्तियों का यह कर्त्तव्य है कि शताब्दियों से फलती-फूलती इस भिक्षावृत्ति को दूर करने का प्रयास किया जाये । इसके लिए निम्नलिखित प्रयत्न किए जा सकते हैं—

(१) सरकार भिक्षावृत्ति के विरुद्ध ऐसा कड़ा कानून बनाये कि सार्वजनिक स्थानों पर भीख माँगना दण्डनीय अपराध घोषित किया जाये । आज प्लेटफार्म पर तथा रेलगाड़ी में इतने अधिक भिखारी मौजूद रहते हैं कि टिकट लेकर चलने वाले यात्रियों को असुविधा होती है । कानून के द्वारा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि इस कानून के चुँगल से कोई व्यक्ति न बचे ।

(२) अपंग, कोढ़ी तथा विकृत अंग वाले भिखारियों के लिए आश्रमों की स्थापना होनी चाहिए । ऐसे भिखारियों की संख्या अधिक नहीं है प्रयत्न करने पर इन्हें आश्रमों में रखा जा सकता है ।

(३) किसी भिखारी को तभी रोका जा सकता है जब उसकी जीविका का पूरा-पूरा प्रबन्ध किया जाये । भिखारियों की मानसिक और शारीरिक क्षमता के अनुसार कृषि तथा विविध कुटीर उद्योगों में उन्हें लगाया जा सकता है । यदि उनमें से कुछ व्यक्ति काम छोड़कर भागना चाहते हैं तो उनसे काम लेना सरकार का कर्त्तव्य है । यह कार्य सरकार को इसलिए कठिन लगता है कि किसी भिखारी को भीख माँगने से तब रोका जा सकता है, जब उसकी जीविका का प्रबन्ध हो जाये ।

(४) पूर्व परम्परा से चली आ रही धारणा 'भिक्षा देना पुण्य का कार्य है'— जब तक नहीं बदलती इस समस्या का समाधान कठिन ही है । भिखारियों ने अपने व्यवसाय के लिए इसी भ्रामक धारणा को आधार बनाया है । किसी स्वस्थ व्यक्ति को भीख देना भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहित करना है । इससे भिखारी का तो अहित करते ही हैं देश की बहुत बड़ी हानि भी करते हैं क्योंकि वह व्यक्ति सदैव के लिए राष्ट्र का भार बन जाता है । यदि हम चाहते हैं कि स्वस्थ भिखारियों को रोजी कमाने के लिए विवश करें तो सीधा उपाय यही है कि उन्हें भीख देने से स्पष्ट मना कर दिया जाये और उसका कारण भी बता दिया जाये ।

महात्मा गाँधी तो यह कहा करते थे कि जो व्यक्ति शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ होने पर भी दूसरे के श्रम पर आश्रित हैं तो उन्हें जीवित रहने का भी कोई अधिकार नहीं है, इसीलिए उन्होंने एक बार निःशुल्क भोजनगृहों को बन्द कराने की सलाह दी थी ।

समाज को कलंकित करने वाली भिक्षावृत्ति से यदि मुक्ति पाना चाहते हैं तो अपनी दानशीलता पर अंकुश लगाना होगा, क्योंकि कुपात्र को दिया गया दान व्यक्ति और समाज दोनों के लिए हानिकारक है । यदि हम दान देना ही चाहते हैं तो अपने समय, श्रम और धन को मानव सेवा के लिए समर्पित कर युग निर्माण की भूमिका अदा कर सकते हैं ।

ये अमीर भिक्षुक

एक समय था, जब इसी भारतवर्ष में भिक्षा देना पुण्य कार्य समझा जाता था । और था भी ऐसा ही । जो लोग समाज से भिक्षा के रूप में अन्न, वस्त्र अथवा द्रव्य प्राप्त करते थे, वे उसके द्वारा अपनी आजीविका चलाते हुए बदले में समाज को विभिन्न रूपों में इतनी सेवाएँ देते थे कि परोक्ष रूप से वे उस भार से उऋण हो जाते थे ।

किन्तु आज स्थिति कुछ और ही है । भिक्षा को आलसी, काहिल तथा कापुरुषों ने एक व्यवसाय बना रखा है जितने व्यक्ति भिक्षावृत्ति से जीवनयापन करते हैं, उनमें केवल इस प्रतिशत ही अपंग-दीन-हीन तथा असहाय होते हैं । शेष तो केवल आदत पड़ जाने के कारण अथवा कम परिश्रम में अधिक आय के कारण ही इस वृत्ति को अपनाए हुए हैं । फटे तथा मैले कपड़ों में लिपटे वे भिखारी दयनीय लगते हैं, किन्तु कोई-कोई इसी माध्यम से कितना अधिक कमा लेते हैं, इसके कुछ उदाहरण देखिए ।

पश्चिमी पाकिस्तान से एक व्यक्ति विस्थापित के रूप में आया । जीविका के लिए और कुछ कार्य न किया— भिक्षा-वृत्ति प्रारम्भ कर दी । उधर मकान छोड़ कर आने का मुआवजा मिला— तीस हजार रुपये । वह बैंक में जमा कर दिया । भिक्षावृत्ति चलती रही । जब वह मरा तो उसका बैंक बेलेंस पचास हजार रुपये था । बीस हजार उसने भिक्षावृत्ति से कमाये थे ।

जनरल अस्पताल मुंगेर में एक भिखारिन की मृत्यु हो गई । नर्सों ने जब उसके कपड़े आदि देखे तो उनमें सिले हुए सौ-सौ के नोट तथा सोने के कुछ सिक्के प्राप्त हुए । कुल सम्पत्ति लगभग पन्द्रह हजार की थी ।

बूँदी के समीपवर्ती एक गाँव में एक सर्वेक्षण के परिणामों से ज्ञात हुआ है कि यहाँ भिक्षुकगण दाताओं से कहीं अधिक धनाढ्य हैं । कुछ भिखारियों के पास सौ बीघा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तक जमीन है जिससे चार-पाँच हजार रुपये महीना तक की आय है । कुछ के पक्के मकान हैं ।

दिल्ली स्थित झुग्गी निवासियों में एक गंगाराम नामक भिक्षुक है । वह सूद पर रुपये उधार देता है । उसका लेन-देन कुल मिला कर सात-आठ हजार रुपये में फैला हुआ है ।

इलाहाबाद का एक भिक्षु जब मरा तो उसकी झौंपड़ी में दाल तथा आटा रखने के बर्तनों में लगभग बारह हजार के नोट, कुछ चाँदी के रुपये तथा जमीन में गड़े हुए कुछ आभूषण पाये ।

काश, ये धनराशि, किन्हीं सामाजिक संस्थाओं तथा सेवा समितियों को मिल गई होती तो लोक-कल्याण के कार्यों में कितनी सहायता मिली होती ।

भिक्षा भी अब एक व्यवस्थित व्यवसाय बन गया है । स्थान-स्थान पर इनके भी अपने ट्रेनिंग सैन्टर्स होते हैं, जहाँ भीख माँगने का प्रशिक्षण दिया जाता है । जान-बूझ कर लोगों की दया पाने तथा करुणा को जाग्रत करने के लिए हाथ, पैर तोड़े जाते हैं, न भरने वाले घाव किए जाते हैं और नाना प्रकार से शरीर को विकलांग तथा कुरूप बनाया जाता है ।

अधिकांश स्थानों पर सरकार की ओर से इनके निवास, भोजन तथा वस्त्रों की व्यवस्था की गई है पर उन्हें वहाँ अच्छा नहीं लगता, बहुत ही कम संख्या में ये वहाँ पहुँचते हैं । यों समस्या हल न हो सकेगी । वह तभी होगी, जब प्रत्येक व्यक्ति यह शपथ ले ले कि हम भिक्षा नहीं देंगे । तब जो वास्तव में अपंग तथा निःसहाय हैं, वे उन लंगरखानों की शरण लेंगे । मक्कार लोगों की न चल सकेगी ।

भिक्षा व्यवसाय की आड़ में पनपते अनैतिक दुष्कर्म

भिक्षावृत्ति संसार के अन्य देशों में न हो ऐसा तो नहीं कहते, पर भारतवर्ष में यह रोग सब देशों से अधिक व्यापक रूप से फैला हुआ है । पिछली जनगणना के समय पेशेवर भिखारियों की संख्या ८० लाख तक पहुँची थी और लगभग इतने ही लोग और भी आंशिक या अप्रत्यक्ष रूप से भिक्षा की आजीविका पर निर्भर रहते हैं । ९० करोड़ की आबादी वाले देश में एक करोड़ केवल भिखारियों की संख्या उदीयमान राष्ट्र के लिए लज्जा की बात है । इतने लोग जीविका के अतिरिक्त अन्य अनैतिक दुष्कर्मों की भी जड़ बने हुए हैं जिसका कुप्रभाव सारे समाज पर पड़ रहा है ।

भिक्षा माँगने वाले व्यक्तियों को नैतिक दृष्टि से पतित की संज्ञा दी जाय तो बुरी बात नहीं होगी । मुफ्त में पैसा मिलने और उससे अपनी लिप्साएँ पूरी करने का उन्हें जो खुलकर अवसर मिलता है उसके कारण उनका स्वाभिमान नष्ट हो जाता है और बार-बार हाथ पसारने में उन्हें कोई लज्जा या संकोच नहीं होता । ऐसे पतित व्यक्ति बढ़ेंगे तो उससे राष्ट्र का अधःपतन ही होगा ।

यह भिखारी अपनी उदरपूर्ति की, आवश्यकता की पूर्ति ही नहीं करते, वरन् कभी-कभी तो इतना अधिक धन संग्रह कर लेते हैं जितना कोई साधारण गृहस्थ भी नहीं जुटा पाता । ऐसे समाचार प्रायः अखबारों में छपा भी करते हैं । कुछ दिन पूर्व शाहाबाद जिले के किसी गाँव में एक भिखारी मृत पाया गया । उसके सामान की देखभाल की गई तो उसके पास से एक हजार दो सौ सैंतीस रुपये एक थैली में बँधे हुए मिले । इलाहाबाद और बनारस के बीच रेलगाड़ी पर सफर करते हुए बिना टिकट एक बाबा जी की किसी टी. टी. आई. ने तलाशी ली तो उसके पास से सात-सौ तेहत्तर रुपये के. नोट और ४५ रुपये विक्टोरिया के जमाने के चाँदी के सिक्के निकले ।

अर्थसंग्रह के अतिरिक्त इन भिक्षाजीवी व्यक्तियों को अनैतिक आचरण करने वालों का जिन्दा और चलता-फिरता केन्द्र ही समझना चाहिए । यह अपने आचरण से कितने ही भोले-भाले लोगों का जीवन बर्बाद करते हैं और कितनों को ही अनेक प्रकार की बुराइयाँ सिखा देते हैं । कानपुर में ही कुछ दिन पूर्व एक व्यक्ति की हत्या के अपराध में एक भिक्षाजीवी साधु को मृत्यु दण्ड की सजा दी गई थी ।

कुछ दिन पूर्व चित्रकूट की ओर जाते हुए किसी भिक्षाजीवी को पुलिस ने पकड़ कर उसे जेल भेजा । उस व्यक्ति पर यह आरोप लगाया गया था कि वह छोटे-छोटे बच्चों को भिक्षा माँगने के चुटकुले सिखाया करता था और उनकी कमाई का हिस्सा स्वयं खा जाता था । बताया जाता है कि वह बाबा जिस स्थान से भागा था वह अनैतिक कार्यों का केन्द्र-सा बन गया था और अनेक गुण्डे उसके पास आते-जाते रहते थे ।

अखबारों में इन भिखारियों के जो समाचार छपते हैं वे प्रायः बहुत ही कम होते हैं । वैसे इनमें इतने अधिक अनैतिक व्यापार चलते हैं कि उन सबकी जानकारी इकट्ठी की जाय तो उससे बड़े-बड़े ग्रन्थ तैयार किए जा सकते हैं । हमारे देश में एक कठिनाई यह है कि भिक्षा व्यवसाय एक प्रकार का धार्मिक आचरण बन गया है, इसलिए उसमें हस्तक्षेप करने से भी लोग डरते हैं । यही कारण है कि विदेशी जासूसों को और अपराध किए हुए फरार व्यक्तियों को इनमें घुल-मिल जाने से पहचानना कठिन हो जाता है और यह लोग आराम से अपना काम चलाते रहते हैं । अभी हाल ही में कलकत्ता से आये हुए एक महात्मा जी को वृन्दावन में पकड़ा गया था यह व्यक्ति पूर्वी पाकिस्तान का जासूस था । बाद में पता चला कि कलकत्ता जाते हुए वह रास्ते में ही पुलिस की आँखों में धूल झोंककर भाग निकलने में सफल हो गया ।

भिखारियों को भीख देना हिन्दू समाज में पुण्य समझा जाता है, पर यह आज की स्थिति में जबकि भिक्षाटन एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यवसाय और अनैतिकता को प्रोत्साहन देने वाली प्रवृत्ति बन गई है कदापि पुण्य का साधन नहीं हो सकता । इन्हें भिक्षा देने वाले स्थूल दृष्टि से भले ही पुण्यात्मा मालूम पड़ें पर जो लोग इन कुपात्र भिक्षुकों को दान देकर उन्हें उस पतित स्थिति में पड़े रहने और बुरे कर्म करते रहने के लिए प्रोत्साहित करते रहते हैं वे वस्तुतः एक पाप ही करते हैं । जिस दान से दुष्प्रवृत्तियाँ बढ़ें वह पुण्य कहाँ रहा ? यदि किसी चोर, डाकू, जासूस, व्यसनी, आवारा, जुआरी नशेखोर को दान दिया जाय तो उससे सर्प को दूध पिलाने की तरह दुष्टता ही बढ़ेगी और उससे जो पाप बढ़ेगा उसका उत्तरदायित्व भी ऐसे ही लोगों पर आयेगा जो आर्थिक सहायता देकर उन्हें उन कार्यों के लिये समर्थ बनाते हैं ।

दया मनुष्य का दैवी गुण है, दान से मनुष्य को आन्तरिक सुख और शान्ति मिलती है, पर इसका एक ही क्षेत्र नहीं है । दया अपने बच्चों पर, अपने मुहल्ले में रहने वाले किसी गरीब पर भी की जा सकती है । दान कुपात्र को देने की अपेक्षा चिड़ियों को अन्न चुगा देना, किसी गरीब को देना, कुआँ खुदवा देना, पाठशाला की सहायता कर देना, किसी असहाय छात्र की पढ़ाई के लिए छात्रवृत्ति के रूप में दे देना कहीं अधिक पुण्यदायक हो सकता है । शरीर की दृष्टि से समर्थ और पेशेवर भिखारियों को दान देना और उन पर कृपा दिखाना एक प्रकार से दान का दुरुपयोग ही हुआ । उससे किसी सद्गति की आशा रखना, हमारी बड़ी भूल है ।

मुफ्तखोर भिखारियों की आत्मा इतनी पतित हो जाती है कि वे अपने आश्रितों को, बच्चों को अन्धा-लँगड़ा या हाथ तोड़कर ऐसा बना देते हैं जिससे दूसरे लोगों को द्रवित कर आसानी से और अधिक मात्रा में भिक्षा ली जा सके ।

दुःख इस बात का है कि यह ढोंगी भिक्षुक हमारे ही अन्धविश्वास, अविवेक एवं मूढ़-श्रद्धा पर जीवित हैं । हम तर्क, विवेक और सच्चाई से काम लें और वास्तविकता का पता लगावें तो इनके प्रति घृणा बढ़ाने वाले ही परिणाम मिलेंगे । इन अधिकांश बुरे व्यक्तियों के कारण जो थोड़े बहुत साधु हमारी दया के पात्र तथा सच्चे अर्थों में साधु या सन्त हैं वे भी कलंकित होते हैं ।

आज राष्ट्र ऊपर उठ रहा है । बहुत दिनों की राजनैतिक परतन्त्रता के बन्धन टूट चुके हैं, पर सामाजिक जीवन में अभी भी इतनी कुरीतियाँ हैं जो राष्ट्र के सर्वांगीण विकास में गतिरोध पैदा कर रही हैं । भिक्षावृत्ति भी उनमें से एक व्यापक समस्या है । इसके उन्मूलन के लिए हमें कटिबद्ध होना ही चाहिए । जब तक इस प्रकार के अधःपतित व्यक्ति हमारे समाज में बने रहेंगे, तब तक भारतीय समाज को आत्म-गौरव प्राप्त करने से वंचित ही रहना पड़ेगा ।

जो स्वेच्छा से भिक्षावृत्ति का परित्याग कर सकें उन्हें वैसा करने की प्रेरणा देनी चाहिए । जो किन्हीं सामाजिक सेवाओं की योग्यता रखते हों उन्हें उन कार्यों में लगाकर भिक्षा की अपेक्षा सामूहिक दान व्यवस्था से स्वस्थ जीवन जीने की सलाह देनी चाहिए । यह कार्य हम सबको मिल-जुलकर पूरा करना चाहिए । भिक्षावृत्ति को सामाजिक जीवन से बहिष्कृत करने में हम जितना सहयोग दे सकें वह सच्चे अर्थों में पुण्य ही होगा ।

भिक्षा माँगना ही नहीं देना भी पाप

नई दिल्ली करौल बाग के एक व्यक्ति श्रवणकुमार ने एक महीने से लापता अपने ११ वर्षीय बालक की ३ सितम्बर १९६९ के दिन अचानक यहीं के हनुमान मन्दिर पर ढूँढ़ लिया । कथित अपहरणकर्त्ता उससे यहाँ भीख मँगवाने, प्रसाद इकट्ठा करने और अपाहिज बनाये भिखमंगे बालकों के ठेला खिंचवाने का काम करवा रहे बताते हैं ।

अबोध बालकों के अपहरण की सैकड़ों घटनाओं में से यह एक ऐसा समाचार है, जिसका अन्त सुखद है । बच्चा मिल गया यह उसका सौभाग्य, पर कितने ही अपने माँ-बाप से बिछुड़कर अब भी दुःखद जीवनयापन कर रहे होंगे उसका किसी को शायद ही पता हो । यह सब इसलिए गोपनीय है कि हमारे समाज में भिक्षा-व्यवसाय आज भी तेजी से चल रहा है । जो अब तक भिक्षा देना पुण्य समझ रहे हों, उन्हें विचार करना पड़ेगा कि इस दुष्प्रवृत्ति को पोषण देकर कहीं वे पाप तो नहीं कर रहे ।

पाप स्पष्ट है । एक समय था जब साधु-ब्राह्मण समाज सेवा में लगे रहते थे । आत्म-शुद्धि के लिए उन्हें जप, तप, स्वाध्याय और लोक-शुद्धि के लिए उन्हें निरंतर यहाँ से वहाँ घूमते रहना होता था, इससे न तो वे अपनी आजीविका ही कमा सकते थे और न ही कोई सम्पत्ति रखते थे । बौद्धिक क्षमता के विकास के साथ अहंकार बढ़ जाने का भय होता था उससे बचने के लिए यह लोग अपने को छोटा बनाये रखें इससे उन्हें भिक्षाटन अनिवार्य कर दिया गया था, पर अब न वह साधु-ब्राह्मण रहे, न लोक-मगंल की प्रवृत्ति, इसलिए भिक्षा देने का भी कोई औचित्य नहीं रहा ।

अब भिक्षा व्यवसाय बन गया है । धूर्त और अकर्मण्य आदमियों ने देखा लोगों की उक्त श्रद्धा और धार्मिक भावना को दुहना सरल है, इसलिए भिखारियों, साधुओं की भरमार होती गई यदि लोग भिक्षा देना बन्द कर दें तो साधु भिखारियों की बाढ़ अपने आप रुक जावे । यह दोष समाज का है कि अपनी दानवृत्ति का परिचय देकर इस दुष्प्रवृत्ति का आकर्षण बनाये हुये हैं । फल यह हुआ कि कुचाली उसका लाभ उठाने लगे । सैकड़ों बालकों का अपहरण कर लिया जाता है, जान-बूझकर उनके हाथ या पैर तोड़ दिये जाते हैं, आँखें फोड़ दी जाती हैं, इस तरह का बना दिया जाता है जिससे दर्शकों में करुणा जाग्रत कर उसका अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सके । इससे एक ओर जहाँ राष्ट्र की जनता पर अप्रत्यक्ष बोझ बढ़ता है, वहाँ दूसरी ओर असुरक्षा, क्रूरता और दुष्टता का वातावरण विकसित होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उक्त बालक बताते हैं चाँदनी चौक में अपने साथियों से बिछुड़ गया । उसे दो व्यक्तियों ने, जिनका नाम सुरजन और भगवान था फुसला लिया । जब तक बाहर बचकर निकल जाने का प्रबन्ध न हो, तब तक वे दोनों स्थानीय हनुमान मन्दिर में शरण लिये थे । इस तरह इस दुष्प्रवृत्ति के कारण हमारे धार्मिक संस्थाओं को भी कलंक लग रहा है । भिक्षावृत्ति अलग बनी रहती तो कम से कम उसकी बुराइयाँ स्पष्ट पकड़ में तो भी आ जातीं, पर धार्मिक जामा पहन लेने के कारण और भी कोढ़ में खाज की स्थिति बन गई है ।

लड़के के पिता श्रवणकुमार को सन्देह था कि हो न हो यह ऐसे ही बुरे तत्वों का कृत्य हो इसलिए पुलिस में रिपोर्ट दर्ज कराने के साथ ही वह सारे शहर के मन्दिरों में ढूँढ़-खोज करते रहे । उस दिन हनुमान मन्दिर पर मंगल का मेला था । लड़का सो गया था, इसलिए बदमाश एक ओर छुपे बैठे उसके जगने की प्रतीक्षा में थे । बताते हैं उसे भीख माँगने का काम उन्होंने शुरू भी करा दिया था । तलाश करता हुआ, पिता यहाँ आया तो उसने लड़के को देख लिया उसे उठाते हुए उसने शोरगुल मचाया जिससे कथित अपहरणकर्त्ता गिरफ्तार कर लिए गए । हमें निश्चित ही दुष्प्रथा को पोषण देना बन्द करना चाहिए यदि भीख न मिले तो कम से कम हजारों बच्चों का अपहरण और उन्हें निरर्थक सताने के पाप तो रुकें ।

पतन का यह प्रवाह रोका जाए

आवश्यकताओं की पूर्ति न होना और धन को अत्यधिक महत्त्व मिलना ये दोनों अनैतिकता के प्रधान कारण हैं । 'अभाव से स्वभाव नष्ट' और 'मरता क्या न करता' ये कहावतें इसी दीर्घकालीन अनुभव को व्यक्त करती हैं । विपत्ति के समय भी नीति में दृढ़ रहने वाले बिरले ही होते हैं, ऐसे व्यक्तियों को ही आदर्श पुरुष बताकर धार्मिक ग्रन्थों में उनका गुणगान करते हुए जनता को वैसे बनने की प्रेरणा की गयी है ।

अनैतिकता का जो दूसरा कारण है वह तो सर्वथा हेय है । मध्ययुग में धन को बहुत महत्त्व दिया गया । समाज में सर्वाधिक प्रतिष्ठा उसी को मिली जिसके पास अधिक संग्रह है । विद्वानों एवं गुणीजनों का निर्वाह भी उन्हीं के द्वारा होने से विद्वान की प्रतिष्ठा फीकी पड़ गयी । मुद्रा के द्वारा वस्तुओं के लेने-देने का व्यवहार बढ़ने पर सब आवश्यकताओं की पूर्ति का माध्यम मुद्रा बन गयी । फलतः उसके अधिकाधिक संग्रह का प्रयत्न होना स्वाभाविक था । ज्यों-ज्यों लाभ होता जाता है, मनुष्य का लाभ उसी अनुपात से बढ़ता जाता है और उस लोभ तथा तृष्णा के कारण मानव नीति-अनीति का विचार भूलकर, जिस किसी भी प्रकार से हो, मुद्रा एवं अन्यान्य वस्तुओं के अधिकाधिक संग्रह में जुट जाता है । इस वृत्ति के परिहार के लिए तत्त्व-चिन्तकों ने संतोष को ही परम सुख का कारण तथा जीवन के लिए आवश्यक बतलाया है, क्योंकि तृष्णा का कहीं अन्त नहीं, वह द्रौपदी के चीर की भाँति बढ़ती ही चली जाती है ।

जीवन के प्रत्येक व्यवहार में स्वार्थवश अनैतिकता घुस गयी है । भारत में इस कलुषित वृत्ति को हटाने के लिए बड़े-बड़े धर्मग्रन्थों का निर्माण हुआ । विधि, नियम बनाये गये । हजारों कथाओं का निर्माण किया गया, धर्म-प्रचारकों ने जोरों से धार्मिक या नैतिक नियमों को प्रचारित किया । फलतः दया, परोपकार स्वधर्मपालन-दृढ़ता, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, संतोषी एवं संयमित जीवन के अनेक दृष्टांत मिलते हैं । उनको बतलाकर इन गुणों के अधिकाधिक विकास पर जोर दिया गया है । इसी प्रकार आश्रमों की व्यवस्था द्वारा मनुष्य के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयत्न किया गया ।

लाखों व्यक्तियों ने संन्यास ग्रहण कर पूर्णतः नियमबद्ध तथा धार्मिक जीवन बिताना प्रारम्भ किया । इसी से भारतवर्ष एक धर्म प्रधान देश कहा गया है, पर धर्मों में नित्य नये सम्प्रदाय खड़े होने लगे । उनमें पारम्परिक संघर्ष प्रारम्भ हो गया । नैतिक नियमों के प्रचार में शिथिलता आने लगी और धर्म के नाम से हिंसा, छल-कपटादि अनैतिक कार्य भी होने लगे । इससे जनजीवन में सद्गुणों की प्रतिष्ठा कम हो गयी तथा वे दुर्गुण और अधिक पनपने लगे । युद्धकालीन स्थिति ने अनैतिकता को बहुत बड़ा बल दिया, जिसका परिणाम आज प्रत्यक्षरूप से अनुभव किया जा रहा है । स्वराज्य मिला तो अवश्य पर नियन्त्रित कठोर शासन के अभाव में अनीति और भी बढ़ गयी तथा दिनों-दिन उसकी मात्रा बढ़ती ही जा रही है, घटने का कोई आसार अभी दिखलायी नहीं देता ।

भारत में आज सर्वतोमुखी अनीति बढ़ रही है । पहले लोग व्यापारियों को अधिक दोष देते थे, पर अब तो कोई बचा हुआ नहीं रहा । 'कुएँ भाँग पड़ी' वाली कहावत चरितार्थ हो रही है । सरकारी किसी भी विभाग में चले जाइए, सर्वत्र घूसखोरी का बोलबाला है । पैसे की मोहिनी ने सब पर अपना जादू फेर दिया है, कोई बिरला ही बचा होगा । रेलवे विभाग को देखिए, अदालतों को देखिए, सप्लाई-विभाग में जाइये, पुलिस तो सदा की बदनाम है । इस प्रकार प्रायः सभी कर्मचारी घूस के आदी हो गये हैं । कहीं माल भेजना हो तो बिना पैसे दिये गाड़ी नहीं मिलती और पैसे देने पर असम्भव कार्य सम्भव तथा तत्काल हो जाते हैं । कानून या नियम के भरोसे बैठे ही रहिये, कचहरी में रजिस्ट्री ऑफिस में जाइये, पद-पद पर चपरासी और क्लर्क तक सभी का टैक्स चुकाइए, जैसे बँधा-बँधाया पड़ा है, बोलने की आवश्यकता नहीं । पैसा देते हैं, तो दस्तावेज की तुरन्त रजिस्ट्री हो जाती है, नहीं तो कोई-न-कोई नुक्स निकालकर रख दिया जाता है, क्योंकि वे ऐसा न करें तो उनको भेंट दे कौन ? हरेक व्यक्ति अपने-अपने काम में रास्ता निकालने की होशियारी या अक्लमन्दी रखता ही है । सेलटैक्स में जाइए चाहे इन्कम टैक्स में, ट्रेजरी में चाहे एकाउन्ट ऑफिस में, किसी भी विभाग में जाइये सर्वत्र घूसखोरी और अनीति का साम्राज्य है । अब तो किसान और मजदूर भी उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखा-देखी अनीति सीख गये हैं और तो और, भीख माँगकर खाने वाले भी ठगी और धोखा करते नजर आते हैं, उसी के कुछ उदाहरण प्रस्तुत लेख में उपस्थित किये जा रहे हैं ।

भारतवर्ष में भिक्षावृत्ति साधु-संन्यासी के जीवन-निर्वाह के लिए आदर्श वृत्ति थी । वे लोग वस्तुओं के संग्रह एवं उन्हें उपभोग के योग्य बनाने की खटपट में नहीं पड़ते थे, क्योंकि इससे उनकी साधना एवं उपदेश आदि लोक-कल्याण की प्रवृत्तियों में बाधा उपस्थित होती थीं । वे शरीर को जब भी आवश्यकता हुई, मधुकरी-वृत्ति से इधर-उधर से कुछ गृहस्थों के यहाँ जाकर थोड़ा-थोड़ा आहार-वस्त्रादि लेकर अपना काम चला लेते थे । गृहस्थ भी अहोभाग समझकर बड़े चाव तथा भाव से उन्हें देते थे और इसमें वस्तु का साफल्य मानते थे । अर्थात् उक्त भिक्षावृत्ति दोनों के लिए लाभदायक सिद्ध होती थी पर वह तब तक ही आदर्श रही या रह सकती है, जब तक भिक्षु आवश्यकता से अधिक संग्रह की ओर न झुके । भिक्षु पेट में समाये इतना ही आहार ले । सुबह की भिक्षा को संध्या के लिए भी संग्रह न करे । संन्यासी के अतिरिक्त अन्य भिक्षुक जो अन्धे, लूले, लँगड़े, अनाथ अर्थात् काम करने में अशक्त होते, वे भी भिक्षा माँगकर जीवन-निर्वाह करते । लोग उन्हें दया-करुणा की भावना से देते । अत: संन्यासी भिक्षुकों को श्रद्धा से एवं अशक्त भिक्षुओं को करुणा से देने वाला भी लाभ में ही रहता तथा लेने वाले का भी निर्वाह हो जाता पर जब कई लोगों ने भिक्षावृत्ति को कमाई का या धन-संग्रह का साधन (पेशा) ही मान लिया और उसके द्वारा संग्रह करना प्रारम्भ किया, तब इसमें सहज ही अनैतिकता का प्रवेश हो गया, जनता की भावना भी बदल गयी और उभय दृष्टि से वह लाभ के बदले हानिकारक सिद्ध होने लगी ।

आवश्यकतावश किसी से कोई चीज माँगकर जीवन-निर्वाह करना भिक्षा है । प्राचीनकाल की भिक्षावृत्ति सात्त्विक थी । उसमें लेने वाला साधक अपने सहायक-शरीर को टिकाए रखने मात्र के लिए ही लेता और देने वाला श्रद्धा भाव से देता । अत: दोनों में सात्त्विकता थी ।

भारत में मध्य काल में कई लोगों का तो देने वालों का कुछ काम करके अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वरूप उनसे कुछ द्रव्य या वस्तुएँ लेने का पेशा हो गया था । यह विशुद्ध वृत्ति तो नहीं थी, पर कुछ-न-कुछ काम करके लेने से वह निभाने योग्य रही । जैसे ब्राह्मण लोग क्रिया-काण्डादि अनुष्ठान कराते । इनका जीवन-निर्वाह यजमानी पर चलता । राजपुरोहित भी इसी श्रेणी के थे । कुलगुरु अपने यजमानों के वंशों के इतिहासादि लिखने का धंधा करके दान पाते थे । चारण, भाट एवं विद्वान अपनी कविता से राजाओं को प्रसन्न कर दान और सत्कार पाते थे । इसमें दाता को भावना का लाभ तो नहीं मिलता, पर कर्त्तव्य का पालन होता है ऐसा माँगना और देना राजसी कहा जाता है । नाना प्रकार के काम करके याचना करने वालों की माँग को 'व्यावहारिक भिक्षा' कह सकते हैं ।

तीसरी श्रेणी तामसी भिक्षा की है, जिसमें दाता को बाध्य होकर देना पड़ता है । लेने वाला ऐसी परिस्थिति पैदा कर दे कि अनिच्छापूर्वक उसकी माँग पूरी की जाय । क्रोध से और लोकलाज के भय से दिया हुआ और लिया हुआ दान तामसी है । ऐसा दान या भिक्षा दोनों के लिए हानिकारक है । भिक्षा जहाँ तक आवश्यकता की पूर्ति तक सीमित हो, उसमें छल-कपट या संग्रह-वृत्ति न हो और दान जहाँ तक सद्भावना एवं कर्त्तव्य समझ कर दिया जाता हो, वहीं तक ठीक कहा जा सकता है । इसके विपरीत असंग्रह-वृत्ति से न लिया हुआ या कर्त्तव्य बुद्धि से न दिया दान अनैतिक है, समाज का पतन करने वाला है ।

इधर कई वर्षों से भिक्षावृत्ति में अनैतिकता खूब बढ़ रही है । बहुत बार तो यह घृणित व्यवसाय-सा नजर आता है । अत: अब लोगों में धार्मिक या करुणा की भावना का बहुत बड़ा ह्रास हो गया है, जो स्वाभाविक ही है । इधर महँगाई के जमाने में अपना निर्वाह भी दुष्कर, उधर श्रम करके कमा खा सकने वाले हट्टे-कट्टे जवान स्त्री-पुरुष भिक्षा को ही अपना धंधा बना लें तो मानव-हृदय का आन्दोलित होना स्वाभाविक है । आज तो भिक्षुओं को, जहाँ जाते हैं, दुत्कार मिलती है । कहा जाता है कि 'मजूरी करके पेट क्यों नहीं भरते ? क्या तुम श्रम करने के लायक नहीं हो ? अपंग हो, अन्धे, लूले, लँगड़े हो ?' आज भिखमंगों की अनीति के किस्से जगह-जगह देखने-सुनने को मिलते हैं । भिक्षा के नाम से वे धोखा देते हैं । उदाहरण के लिए कुछ घटनाएँ इस प्रकार हैं—

जिन्होंने भिक्षा के बहाने धोखा देने का धंधा स्वीकार किया है, वे अपनी ऐसी दयनीय स्थिति उपस्थित करते हैं कि एक बार तो उनके दु:ख-दर्द से पाषाण हृदय भी पिघल जाता है । कोई आकर कहते कि 'हम शरणार्थी हैं । अमुक स्थानों के रहने वाले हैं । बहुत ही दयनीय स्थिति हो जाने से सब छोड़-छाड़कर इधर आने को बाध्य हुए हैं । हमारे अमुक को मार डाला गया, धनादि वस्तुएँ लूट ली गयीं, क्या करें ? पेट भरने के लिए माँगना पड़ता है ।' वे भिक्षा की कला में बड़े निपुण होते हैं । ऐसा पार्ट अदा करते हैं कि अविश्वास सहज नहीं होता । वे सब भाषा एवं धूर्तता की कलाएँ जानते हैं । जैनों के पास माँगेंगे तो अपने को जैन बतलायेंगे, वैष्णव के सामने वैष्णव । जिस प्रकार से जिस व्यक्ति को प्रभावित करके पटाया जा सकता है, वैसे ही उससे बर्तते हैं । इस पेशे में बड़ी ही निपुण कई महिलाएँ तो अँग्रेजी, गुजराती, हिंदी आदि कई भाषाएँ भी जानती हैं । अपने को कभी जैन बतलाती हैं । किसी सज्जन को प्रभावित कर उससे सहायता देने के लिये विज्ञप्ति-पत्र दिखाकर घर-घर से चन्दा वसूल करती हैं । आप चार आना देना चाहते हैं तो वे आठ आना देने को मजबूर कर देती हैं । ऐसी करुणाजनक स्थिति शब्दों से व्यक्त करती हैं कि दिल पसीजे बिना नहीं रह सकता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कई पुरुष और स्त्री यह कहकर माँगते हुए नजर आते हैं कि हमारे अमुक को बच्चा हुआ है, उस बच्चे और माता के लिए सामान तथा पैसा इकट्ठा करते हैं या कई तो हमारा अमुक मर गया है, कफनादि के लिये पैसा या वस्त्रादि चाहिये, ऐसे झूठे फरेबों से पैसा इकट्ठा करते हैं ।

कलकत्ता आदि कई शहरों में कई व्यक्ति मैले-फटे, थोड़े से चिथड़े लपेटे हुए सड़कों में दौड़ते, पीटते चीत्कार करते हुए माँगते नजर आते हैं । सुना गया है कि उनमें अधिकांश ने तो पैसे माँगने के लिये ही अपने हाथ-पैरों को विकृत कर डाला है । कई गुंडे लोगों ने इधर-उधर से अनाथ बच्चों को लाकर उनकी दयनीय स्थिति कर दी है । उनसे कमाई करने का धन्धा कराने के भी संवाद मिले हैं । ऐसे भिखमंगों में से कइयों के पास तो हजारों रुपये हैं, पर वे अब इस कुत्सित वृत्ति के ऐसे अभ्यस्त हो गये हैं कि सुबह से शाम तक यही करते रहते हैं । इस धंधे को वे छोड़ नहीं पाते ।

अभी कुछ दिन पहले की एक घटना है । कलकत्ते से बीकानेर जा रही गाड़ी में एक व्यक्ति मध्यवर्ती स्टेशन पर आया और लोगों से कहने लगा कि 'हम बड़ी मुसीबत में हैं, हमारे टिकट खो गये या यहीं तक के टिकट के पैसे पास हैं, अतिरिक्त पैसे खो गये हैं । हमें जाना अमुक जगह है सहायता कीजिये । ऐसी स्थिति में मानव-सुलभ दया आना स्वाभाविक ही है । सुनने वालों ने कहा—कुछ नहीं जी, ढोंगी है, इसका यही धन्धा है, क्योंकि हम इसी प्रकार पहले धोखा खा चुके हैं और ऐसी घटनाएँ सुन चुके हैं । पास में बैठे हुए एक व्यक्ति को यह बात जँची नहीं । अत: उसने जितने पैसे माँगे थे, उसे दे दिये । वह उन्हें लेकर दूसरे डिब्बे में घुसकर वहाँ भी ठीक वहीं माँग करने लगा । तब पैसे देने वाले व्यक्ति से नहीं रहा गया । वह उठकर उसके पास तत्काल गया और दुत्कारते हुए उससे पैसा वापस ले आया और उससे कहा कि 'जितने पैसे तुम्हें आवश्यक थे, हमने पूरे-के-पूरे दे दिये, फिर भी तुम दूसरों से टिकट के पैसे की माँग करते ही रहे, तो मालूम होता है तुमने यही कमाई खोल रखी है ।

प्रश्न पैसे का नहीं है, वरन् दु:ख इस बात है कि ऐसे ठग व्यक्तियों के कारण ही वास्तविक आवश्यकता वालों के लिये भी द्वार बंद हो जाता है, लोग सभी को ढोंगी समझने लग जाते हैं । सच्चे जरूरतमन्द या सहायता योग्य व्यक्ति भी ऐसे धोखा देने वालों के कारण कष्ट उठाते हैं तथा सहायता से वंचित रह जाते हैं । इसीलिए सरकार को भिक्षुवृत्ति प्रतिबन्धक कानून बनाना पड़ रहा है । कैसी दयनीय स्थिति है ? अनैतिकता का कितना बोलबाला हो गया है ? जीवन के हर क्षेत्र में उसने कितने लंबे पैर पसार दिये हैं । न मालूम कैसे और कब उसका अन्त होगा ? भिक्षुवृत्ति जैसा सात्त्विक कर्म भी इन ठगों के कारण गर्हित हो गया है ।

इस दूषित वृत्ति का समापन हो, लोगों का नैतिक स्तर ऊँचा हो, इसके लिए प्रयत्न किया जाना चाहिए तथा ऐसे लोगों को विविध उद्योगों की शिक्षा दी जानी चाहिए और कुछ नये उद्योग-धन्धे या काम चालू कर उनमें इनको लगाना चाहिए । आशा है विचारशील व्यक्ति इस अनैतिकता को शीघ्र समाप्त करने के उपायों को सोचेंगे तथा व्यक्त करेंगे और सरकार भी उन्हें अपना कर देश के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने का भरसक प्रयत्न करेगी ।

७६० करोड़ के दानी हम भारतवासी

भिखारी है तो क्या रईसत की भावना उनमें भी कम नहीं । काम-काजी लोग यदि आलस में पड़े रहकर अपनी उन्नति का मार्ग बन्द कर सकते हैं तो भिखारी भी अपने आराम के लिए आजीविका का मोह क्यों नहीं छोड़ सकते । सीमित आमदनी के बाद वे शौक-मौज करते हैं सिनेमा देखते हैं और गपशप का मजा भी लेते हैं ।

हँसी जैसी लगने वाली यह बात अन्य राष्ट्रीय समस्याओं की ही भाँति चिन्ताजनक है । जबकि ८ घण्टे कठोर श्रम करने वाले श्रमिकों की औसत आय बारह आने प्रतिदिन है तब भिखारियों द्वारा ४.५ रुपये की दैनिक कमाई हमारे समाज पर से केवल बोझ है, वरन् देश के लिए कलंक भी । इसका मतलब यह हुआ कि श्रम भिक्षा वृत्ति से भी गया-गुजरा है अन्यथा लोग श्रम को महत्त्व न देकर भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहन क्यों देते ?

भारतवर्ष में ३०१८ नगर हैं सब में स्थान-स्थान पर दान पात्र रखवा दिए जाएँ और भिखारियों को दिया जाने वाला पैसा उनमें डालना प्रारम्भ कर दिया जाये तो कानपुर के सर्वेक्षण के अनुसार ७००० × ३०१८ = २११२६००० (दो करोड़ ग्यारह लाख छब्बीस हजार रुपये) की दैनिक आमदनी सरकार को होने लगे । एक महीने में यही आय ६३३७८०००० रुपये और १ वर्ष में ७६०५३६०००० (सात अरब साठ करोड़ तिरेपन लाख साठ हजार रुपये) की शुद्ध आय सरकार को हो सकती है । इससे विकास कार्यों के लिए उतना धन मिल सकता है कि फिर विदेशों से धन लेने की भी आवश्यकता न रहे । अमेरिका से पी. एल. ४८० के अन्तर्गत कुल ३९१ करोड़ ९० लाख की सहायता मिली है, जबकि भिक्षावृत्ति के समानान्तर चलाये गये इस कार्यक्रम से दूने के लगभग ७६० करोड़ ५३ लाख की आमदनी हो सकती है । तात्पर्य यह कि हमारे देश के भिखारी विदेशों से प्राप्त ऋण, जितने भार हैं और यह भार हमारे ऊपर हमारी अपनी कृपा के कारण है ।

हमारी उदासीनता के कारण ही भिक्षावृत्ति बढ़ रही है । उसमें अपाहिज कम पर पेशेवरों की संख्या अधिक हो रही है । कानपुर के ४२७ कोढ़ी, ३५३ अंधे, १३५ लूले-लँगड़े और अपाहिज, १०३ रोगी और ५५ पागलों की कुल संख्या १०७३ हुई । यह संख्या कुल की तिहाई है अर्थात् २ तिहाई भिखारी तो कभी भी काम पर लगाये जा सकते हैं । नगर में ९११ भिखारी २० वर्ष की आयु के लगभग के हैं । ३१३२ की आयु २० और ७० के बीच है यह भी बखूबी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काम कर सकते हैं, २० वर्ष की आयु वाले तो एक समर्थ मजदूर जितना उत्पादन दे सकते हैं । १०३० भिखारी ऐसे हैं जिनके परिवार भी हैं और उनके सदस्यों की संख्या ५ तक है १९१२ भिखारी पूर्ण स्वस्थ हैं । ३९५ पुरुष और ३५ स्त्रियाँ तो ऐसी हैं जो कहीं भी अच्छी नौकरी कर सकती हैं । युवकों में ४५५ और लड़कियों में १९० ऐसी हैं जो कहीं भी काम-धन्धा कर सकती है, पर चूँकि भिक्षावृत्ति में परिश्रम नहीं करना पड़ता, इसलिए वे काम करना नहीं चाहते । कई मुस्लिम भिखारिनों के सम्बन्ध में तो यह कहा जाता है कि वे लखनऊ के नवाब खानदान से सम्बन्धित हैं ।

यह स्थिति एक शहर की है । सारे भारतवर्ष का हिसाब लगायें तो पता चलेगा कि लाखों भिखारी ऐसे हैं जो काम करके औरों को भी खिला सकते हैं, जबकि वे ऐसा न करके स्वयं हमसे ७६० करोड़ रुपये खाने को लेते हैं । यह सब हमारी मूढ़मान्यता के कारण होता है, यदि भिक्षा देना बन्द कर दें तो समाज के ऊपर यह अकारण बोझ क्यों पड़े ?

आर्थिक और नैतिक हानि—यह तो हुई आर्थिक हानि । इतने लोगों द्वारा भिक्षा व्यवसाय अपना लिए जाने पर देश की जो चारित्रिक हानि होती है उसकी भयंकरता तो आर्थिक हानि से भी कहीं अधिक भयानक है । मुफ्तखोरी को कोई पसंद नहीं करता । हट्टे-कट्टे तन्दुरुस्त आदमी की उसको विलासिता और आवारागर्दी के लिए कोई अपनी गाढ़ी कमाई का पैसा क्यों लुटावे ? इन आवारा लोगों के सामने यह प्रश्न उत्पन्न होता है, जिन्होंने भिक्षा-व्यवसाय अपना लिया है, उन्हें गुजारा चाहिए फिर "खाली दिमाग शैतान की दुकान" वाली कहावत के अनुसार ऐसे लोग नशेबाजी आदि व्यसनों से भी ग्रसित होते हैं उसके लिए और भी अधिक पैसा चाहिए । लोग सीधे ढंग से देते नहीं । ऐसी दशा में उन मुफ्तखोरों के पास एक ही तरकीब रह जाती है कि कोई ऐसा जाल रचें जिससे प्रभावित होकर लोग इन्हें बिना कुछ परिश्रम किए भी प्रचुर धन प्रदान करते रहें । बार-बार भिक्षा माँगने से तिरस्कार भी होता है । लोग देने में भी आना-कानी करते हैं । ऐसी दशा में सरल रीति से भीख माँगने से समस्या हल नहीं हो सकती । उसके लिए कुछ न कुछ विलक्षण और आकर्षक तरकीब चाहिए, ताकि लोगों को देते हुए बुरा भी न लगे, तिरस्कार के स्थान पर सभ्यता भी मिले और बिना प्रत्यक्ष रूप से माँगे भी देने वालों से अपने आप मिलने का ढंग बना रहे ।

आवश्यकता आविष्कार की जननी है । मस्तिष्क की विशेषता यह है कि हमें जिस दिशा में कुछ आकांक्षा होती है वह उसी दिशा में अनेक प्रकार की सूझ-बूझ का काम करता है और अनेकों तरकीबें समझ में आ जाती हैं । विज्ञान, कृषि, उद्योग, नीति, धर्म, सदाचार, चिकित्सा, शिल्प आदि सभी विषयों में प्रगति मनुष्य की इच्छाओं और आवश्यकताओं ने ही तो की है । जिन्हें बिना श्रम किए, पराई कमाई पर जीवित रहने के लिए भिक्षा ही उपयोगी जँची है, उनको भी तो मस्तिष्क प्राप्त है । वे भी तो सूझ-बूझ से काम ले सकते हैं । आविष्कार उनका दिमाग भी तो कर सकता है । उसने किया भी है । धार्मिकता का आवरण उठा कर ऐसे अनेक प्रपंच रचकर खड़े कर दिये हैं जिनके आधार पर आज लाखों शिक्षित-अशिक्षित निठल्लों की रोटी बड़े आनन्द से चल रही है । इतना ही नहीं देवताओं की तरह पुज भी रहे हैं ।

अन्ध-विश्वासों का प्रचार—भूतवाद, रहस्यवाद, परोक्षवाद, चमत्कारवाद का इतना विशाल जंजाल आज भारत में प्रचलित है, जितना संसार के पिछड़े हुए प्रदेशों में भी नहीं पाया जाता । अफ्रीका, आस्ट्रेलिया आदि में जो जंगली जातियाँ पाई जाती हैं उनमें इस प्रकार के अन्ध-विश्वास पाये जाते हैं, पर वे थोड़े से ही हैं । विज्ञान एवं शिक्षा का प्रकाश अभी वहाँ तक नहीं पहुँचा है, इसलिए वे प्रकृति के आश्चर्यजनक पदार्थों एवं परिवर्तनों के पीछे किन्हीं देवताओं की कल्पना करते हैं और अज्ञात कष्टों एवं असुविधाओं का कारण उन देवताओं को मानते हैं । प्रयत्न यह करते हैं वे देवता अप्रसन्न न होने पावें, इसके लिए उन्हें एक ही बात सूझती है कि उन्हें कुछ अच्छा भोजन कराया जाय चूँकि उनके सामने प्रधान समस्या भोजन की रहती है । इसलिए वे सोचते हैं कि देवता की प्रसन्नता-अप्रसन्नता का आधार भी भोजन ही हो सकता है । वे देवता का अनुग्रह प्राप्त करने के लिए जानवरों की, कभी-कभी मनुष्यों की बलि देते रहते हैं । यही उनका प्रधान अन्ध-विश्वास है । कुछ छुट-पुट सामाजिक रिवाज भी उनके ऐसे हैं, जिन्हें विचित्र एवं अनैतिक कह सकते हैं । बस इतनी-सी ही इन वन्य लोगों की मूढ़ता है जिसे हम उनका पिछड़ापन कहते और उपहास उड़ाते हैं ।

पर हमने शिक्षित होते हुए भी इतनी किस्म के अन्ध-विश्वास पाल रखे हैं जिनकी कोई सीमा नहीं । सामाजिक रीति-रिवाजों में इतनी बेसिर-पैर की विसंगतियाँ 'उलटवासियाँ' घुस पड़ी हैं कि आश्चर्य करना पड़ता है कि आखिर यह सब पाखण्ड किस प्रयोजन के लिए रचा गया है ? इसी प्रकार हमारे यहाँ प्रचलित रहस्यवाद इतना दुसह एवं विलक्षण है जिन बातों की तर्क से कोई संगति नहीं खाती, जिनकी वास्तविकता का कोई प्रमाण नहीं, ऐसी अनर्गल बातें हमारे समाज में इतने घटा-टोप के साथ मानी एवं अपनाई जाती हैं जितनी शायद किसी सचाई को भी न अपनाया जाता होगा, आखिर यह सब हुआ कैसे ? इतना अन्ध-विश्वास आखिर घुस कहाँ से पड़ा ? उसका इतना व्यापक प्रचार कैसे हो गया ? इसकी खोजबीन करने पर यही स्पष्ट होता है कि यह जंजाल खाली दिमागों की खुराफात है । उनको मकड़ी के ताने-बाने की तरह भ्रम-जंजाल रचकर खड़ा कर दिया है, जिसमें उलझे हुए लोगों का समय ही नहीं, नियुक्त धन भी बर्बाद होता है । इस प्रचलन के पीछे कोई न कोई तरकीब ऐसी जरूर होती है जिनसे इन निठल्ले लोगों की आमदनी का जरिया चलता रहे । सीधी भिक्षा माँगने पर जितनी सफलता मिलती, आमदनी होती,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसकी अपेक्षा इन तरकीबों के सहारे उन्हें अनेक गुनी सम्मान सहित आजीविका मिलने लगती है ।

देव उपासना का स्वरूप—देवता ईश्वर की दिव्य-शक्तियों को कहते हैं । उनकी अनुकम्पा प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अपना अन्तःकरण सद्भावनापूर्ण और आचरण सत्कर्मों से ओत-प्रोत बनाना होता है । उस साधना से मनुष्य के मुख्य गुण बढ़ते हैं । फलस्वरूप स्वभावतः उसका आत्मिक एवं भौतिक जीवन सुविकसित एवं विभूति-सम्पन्न होना चाहिए । देव आराधना का इतना-सा मार्ग है । देव प्रतिमाओं तथा उनके उपासना विधान के सहारे उसी प्रयोजन की सिद्धि की जाती है । मनुष्य जितना देवत्व अपने भीतर बढ़ाता चलता है, उसी अनुपात से उसका वैभव भी सुविकसित होता है । यह तथ्य मनोविज्ञान, नीतिशास्त्र एवं समाज विज्ञान के सर्वथा अनुरूप है । ऐसे देववाद को तर्क एवं प्रमाणों समेत सिद्ध किया जा सकता है । ऋषियों ने इसी आधार पर उन मान्यताओं और उपासनाओं को प्रचलित किया था ।

अब आजकल जो देववाद प्रचलित है, वह प्राचीनकाल की ऋषि मान्यताओं से सर्वथा भिन्न है । आजकल की मान्यता के अनुसार देवता एक प्रकार के मनुष्य मात्र हैं, जिनमें लोभ, क्रोध, पक्षपात स्वार्थ गिरे दर्जे के व्यक्तियों जैसा है । पूजा मिलने में देर हो जाय या कमी रहे तो झट नाराज हो जाते हैं और कल तक जिस भक्त पर कृपा करते थे, जिससे पूजा अर्चन पाते थे, उसे बिना सूचना दिए बड़ी से बड़ी हानि पहुँचाने को तैयार हो जाते हैं । क्यों, यही देवताओं की महानता है ? कोई भक्त पूजा-पत्री का, बलिदान आदि का प्रलोभन देता है तो बिना इस बात की जाँच किए कि जो माँगा जा रहा है, वह उचित है या अनुचित, न्याय युक्त है या अन्याय युक्त देने को तैयार हो जाय तो उन्हें देवता कैसे कहा जाय ? फिर उनमें और स्वार्थी मनुष्यों में क्या अन्तर रहा ? काली, भैरव आदि के बारे में ऐसी ही मान्यता है कि वह मद्य, माँस, बलि आदि लेकर किसी को मारने के लिए 'घात' करती है, चोरी, डकैती, जुआ आदि की सफलता में सहायता करती है । कार्य चाहे कितना ही अनीतियुक्त क्यों न हो, उसे अपनी मनौती रिश्वत से काम । अधिकारी, अनधिकारी, उचित-अनुचित का, पाप-पुण्य का कोई अन्तर वह समझती नहीं । अपनी पूजा मिली कि भक्त का मनचाहा काम कर दिया ।

आज की मान्यताओं के अनुरूप लगभग सभी देवताओं का स्तर उसी प्रकार का है । उनसे बुरी से बुरी कामनाएँ पूर्ण करने की माँग की जाती है । पुरुषार्थ और क्षमता की बात भुलाकर मनमानी मनौती मानी जाती है । कितने ही देव मेले उसी आधार पर चलते हैं । हजारों लाखों की संख्या में लोग इसी प्रकार की कामना से और मान्यताएँ लेकर पहुँचते हैं । वे देवता जिनके अस्तित्व तक के बारे में सन्देह है भला देंगे तो किसी को क्या, संयोग से तीर-तुक्का जिसका लग गया, उसका श्रेय देवता को मिल जाय यह बात दूसरी है, पर अधिकांश लोगों के हाथ समय और धन की बर्बादी के सिवाय और कुछ नहीं मिलता । हाँ, भेंट-पूजा को देवता तो लेते नहीं, उनके सहारे जो लोग अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेते हैं, वे नफे में जरूर रहते हैं ।

नित नये देवताओं का सृजन—वैदिक काल में इन्द्र, विष्णु, वरुण, अग्नि, वसु, पुष्पा, मरुत, विश्वेदेवा आदि जो देवता थे, उन्हें लोग भूल गये । पौराणिक काल आया उसमें गणेश, सरस्वती, लक्ष्मी, अम्बिका, पार्वती, नवग्रह, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, हनुमान, गंगा आदि देवता पुजे, पनपे । पीछे तीन सौ वर्षों में तो इतने अधिक भूत, देवता उपज पड़े हैं, जिनकी तुलना बरसाती मेढ़कों से ही की जा सकती है । हर गाँव का एक नया नामधारी देवता, हर बिरादरी का, हर खानदान का एक देवता, वह भी ऐसा जिसका नाम विचित्र, ढंग विचित्र, रुचि विचित्र, आहार विचित्र, पूजा विचित्र । इनको कुल देवता, ग्राम देवता, कुल देवी, ग्राम देवी आदि नामों से पुकारते हैं । किसी शास्त्र, इतिहास, पुराण ग्रन्थ में इनका कोई पता नहीं चलता । लगता है कि भिक्षा-जीवी गुरुजन बहुत बढ़ गये होंगे और एक देवता की पूजा में कइयों को हिस्सा बँटाना पड़ता होगा, तो उन्होंने इस प्रकार के नये-नये देवताओं को गढ़ना आरम्भ कर दिया होगा, ताकि नये देवता की पूजा का लाभ नये पुरोहित को मिलने लगे । अब तो स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है कि यार लोग किसी अनगढ़ पत्थर के टुकड़े पर सिन्दूर पोतकर रख दें तो बेचारी भोली महिलाएँ दूसरे दिन से ही उसे देवता मानकर पूजना शुरू कर देती हैं । तथ्य का कोई पता नहीं लगाता है कि जिसकी पूजा हम कर रहे हैं वह आखिर कुछ है भी या नहीं ।

अभी पिछले ही दिनों उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान के कुछ भाग में एक नई देवी उपज खड़ी हुई हैं । उसका नाम है 'सन्तोषी माता' । शुक्रवार के दिन उसकी पूजा होती है । भुने चने और गुड़ से उसका भोग लगता है । उस दिन घर भर का कोई व्यक्ति खटाई नहीं खाता । एक बहू को वह कह भी जाती है, जिसे उसके ससुराल वाले सताते थे, उसे सन्तोषी माता का परिचय हुआ, थोड़ी-सी पूजा की कि देवी झट प्रसन्न हो गई । बहू की मनोकामना पूरी कर दी और जिन सास आदि ने उसे सताया था उन्हें पूरा-पूरा दण्ड दिया । इस कहानी को पूजा करने वाले कहते और सुनते हैं । तीन-चार वर्षों के भीतर की यह सन्तोषी माता जन्मी और आँधी तूफान की तरह फैली है । अब तो मुम्बई, कलकत्ता तक में जा पहुँची हैं । भुने चने और गुड़ जहाँ ढूँढ़े नहीं मिलते अब उसके बढ़िया पैकिंग बने हुए ऊँची से ऊँची दुकानों पर धड़ा-धड़ बिक रहे हैं ।

देवताओं की पूजा पर हमारा विश्वास है । मूर्ति पूजक भी हैं । सनातन धर्म वातावरण में हम जन्मे और पाले-पोषे गये हैं । देव पूजा और पौरोहित्य कर्म हमारी वंश परम्परा से होता आया है । अतएव पूजा उपासना का वातावरण बनते देखकर हमें प्रसन्नता अनुभव होना स्वाभाविक ही है । हमें तो चुभती केवल इतनी भर बात है कि बिना किसी आधार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के नये देवी-देवता तक गढ़कर लोग कैसे खड़े कर देते हैं । इस आँखों देखी नई उपज को जिन्होंने इस तरह बढ़ते पनपते देखा है वे यदि यह कहने लगें कि उनका भारतीय धर्म एवं संस्कृति से कोई सम्बन्ध नहीं है । यह तो मनचले लोगों की मनगढ़न्त है, तो फिर उनके इस आक्षेप का क्या उत्तर दिया जायगा ? आखिर प्रामाणिकता, प्राचीनता, परम्परा आदि का कुछ तो आधार होना ही चाहिए ?

अपने नाम पर कुछ माँगने की अपेक्षा देवता की मनौती पुजापा, भेंट-पूजा आदि के नाम पर माँगना अधिक सुविधाजनक है । इस सूझबूझ ने कितने देवी-देवताओं की, कितने भूत-पलीतों की सेना बनाकर खड़ी कर दी और उनकी विविध विधि-पूजा में कितने लोगों को उलझा दिया गया, यह अचम्भे की बात तो है, पर उसमें असम्भव कुछ नहीं । इतने ठाली बैठे व्यक्ति अपने गुजारे के लिए ऐसी गढ़न्त गढ़ते और उन्हें फैलाने में लगे रहते तो भारत जैसे भावुक देश की भोली जनता के लिए उसे देखते-देखते अपना लेना कुछ कठिन बात नहीं है ।

भिक्षाजीवियों के स्तर—निम्न स्तर के भिक्षा-जीवी सीधे-सादे ढंग से रोटी, कपड़ा, पैसा आदि माँगते हैं । इनमें से जो कुछ चतुर हैं वे अपने को कुछ विपत्तिग्रस्त बताते हैं, रास्ते में जेब काटने, चोरी हो जाने, कन्या के विवाह योग्य होने, घर में बीमारी या और कोई संकट होने की बात कहते हैं और जो उनकी बात पर विश्वास कर लेते हैं उनसे अपेक्षाकृत कुछ अधिक कमाई कर लेते हैं । कई व्यक्ति वस्तुतः अन्धे, बहरे, गूँगे, अपाहिज आदि वस्तुतः नहीं होते, पर वैसा अभिनय करते हैं ताकि लोगों की करुणा जागे और भिक्षा का पात्र समझकर सहायता करें । कई स्त्रियाँ सुहागिन होते हुए भी अपने को विधवा बता कर गोदी के छोटे बच्चे लिए फिरती हैं और उनके दूध, कपड़े आदि के लिए पैसे माँगती हैं । सीधी भीख की अपेक्षा उन्हें इस तरह कुछ अधिक भी मिल जाता है ।

अधिक चतुरों का अधिक पाखंड—इससे अधिक चतुर भिक्षुक साधु महात्मा का वेश बनाते हैं । लाल, पीला कपड़ा रँगकर पहनने में एक दो पैसे खर्च होते हैं, पर प्रमाण-पत्र ऋषि-महात्मा होने का मिल जाता है । कमण्डल, चिमटा, त्रिशूल, मोटे दाने की माला, बड़ा-सा तिलक धारण कर लिया दाढ़ी रखा ली या सिर मुड़ा लिया तब तो कहना ही क्या है ? फिर तो उच्चकोटि के सिद्ध महात्मा कहलाने में कोई कमी नहीं रह गई । सिद्धि, चमत्कार, योग, मंत्र-तंत्र जादू-टोना, देवता, भूत, नक्षत्र शाप, वरदान, स्वर्ग, नरक, मुक्ति, भविष्यवाणी जैसी आकाश-पाताल की चर्चाएँ उनके मुख से सुनाई पड़ती रहती हैं । जिससे सर्वसाधारण की दृष्टि से उन्हें असामान्य समझा जाय और लोग उनकी सहायता से कुछ दैवी कृपा प्राप्त होने की आशा लगाकर अभीष्ट भेंट-पूजा अपने आप ही प्रस्तुत करते रहें ।

कोई अपने को अधिक तेजस्वी तपस्वी सिद्ध करने के लिए ऐसे प्रदर्शन करते हैं, मानो उन्होंने कुछ विलक्षणताएँ एवं सिद्धियाँ प्राप्त कर ली हों, कुम्भ आदि के बड़े धार्मिक मेलों में लोहे की कीलों या काँटों पर सोते हुए, जमीन में छाती तक गड़े हुए, एक पैर से खड़े हुए, चारों ओर आग जलाकर धूनी तपते हुए इन तथाकथित महात्माओं का प्रदर्शन देखा जा सकता है । इनका प्रयोजन दर्शकों को अधिक प्रभावित करके अधिक भिक्षा प्राप्त करना मात्र होता है । अन्यथा मेले-ठेलों में सड़क के किनारे भीड़-भाड़ में भी भला कहीं तपस्याएँ होती हैं ? इसके लिए एकान्त स्थान चाहिए जिसकी कहीं भी कमी नहीं है ।

कुछ दिन से इसी तरह का एक खेल चल पड़ा है समाधि लगाना, जमीन में गड्ढा खोद कर एक व्यक्ति उसमें भीतर बन्द हो जाता है । कई दिन बाद उसे बाहर निकाला जाता है । तब भोले भक्तों द्वारा उस पर भेंट-पूजा की वर्षा होने लगती है । इस करतब में कई व्यक्ति मिले-जुले होते हैं । कई बार तो उस देखे हुए व्यक्ति को दूसरी जगह जमीन खोदकर सुरंग से बाहर निकाल लेते हैं और फिर नियत समय पर उसे भीतर पहुँचा देते हैं । कई बार भीतर बैठा हुआ व्यक्ति नींद की गोली खाता रहता है, जब जाग्रति आई जी घबराया कि फिर एक नींद की गोली खाली । इस प्रकार नियत समय आ पहुँचता है और सहज ही सिद्ध पुरुष होने की घोषणा हो जाती है । कुछ दिन पूर्व गाजियाबाद (उ.प्र.) में एक नवयुवक को इसी प्रकार समाधि में बन्द किया गया, बेचारा नौसिखिया था, पूरे हथकण्डे सीख नहीं पाया था, गड्ढे में घुस गया । सरकारी कड़ा निरीक्षण हो जाने से साथी उसे बाहर निकाल न सके बेचारा उसी में मर गया । पुलिस ने उसके गिरोह के सभी धूर्तों को पकड़कर जेल में बन्द करा दिया । गुजरात के एक अत्यन्त विलासी व्यक्ति का एक बार गायत्री तपोभूमि मथुरा में भी आना हुआ था । उसने अपने द्वारा कई जगह समाधि लगाने के फोटो और प्रमाण-पत्र बताये और कहा यहाँ भी उसकी समाधि का प्रदर्शन कराया जाय । जो आमदनी होगी उसमें से वह आधी हमें दे देगा । हमने तुरन्त ही उसे दुत्कार कर उल्टे पाँव भगा दिया था और कहा था ऐसे खेल करने से तो योग और समाधि दोनों बदनाम हो जायेंगे । समाधि शहरों में प्रदर्शन के लिए नहीं वरन् आत्म-कल्याण के लिए एकान्त वनों में लगाई जाती है, योगी शहरों में समाधि का सरकस नहीं करते और न कमीशन पर गिरोह इकट्ठा कहते हैं । आप कृपाकर यहाँ से तुरन्त ही उलटे पाँव चले जाइये । खिसियाता हुआ वह तुरन्त बिस्तर लपेट कर अन्यत्र चला गया । इससे मिलते-जुलते अनेकों चमत्कार लोग दिखाते और अपना व्यवसाय चलाते रहते हैं ।

एक से एक बढ़ कर—हमारी अपनी जानकारी में अब तक ४७ व्यक्ति ऐसे हैं जो अपने को भगवान का अवतार बताते हैं । उनकी बात पर कितने ही लोग विश्वास करते हैं और अन्ध-भक्त बने हुए हैं । उन्होंने कितनी ही चेलियों का सतीत्व अपहरण किया है और कितने ही चेलों का धन लूटा है । बाहर से ऐसा प्रदर्शन करते हैं जिससे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नये लोग मोहित हो जाएँ, भीतर से वे बिल्कुल संसारी वरन् उनसे भी गये बीते होते हैं । बड़े-बड़े मठाधीशों का यही हाल है । कितने ही धर्म-प्रवर्तक बने बैठे हैं । केवल मथुरा वृन्दावन से दर्जनों सम्प्रदायों का आविष्कार हुआ है । प्राचीन वेद धर्म-स्थान पर उन्होंने अपने-अपने नाम के अलग सम्प्रदाय चलाये ताकि उनके अनुयायी किसी और के पास न जाकर उनके ही चंगुल में फँसे रहें । अपने को अलौकिक या ईश्वर का अवतार बताने वालों को लोगों ने कई बार कहा कि आप चीन और पाकिस्तान जैसे आक्रमणकारियों को अपने चक्र-सुदर्शन से पीछे हटा दीजिये । गौओं की रक्षा की व्यवस्था बना दीजिए । इन प्रश्नों के उत्तर में वे केवल दाँत निकाल देते हैं । उनका अवतारपन तो केवल थोड़े से अन्धभक्तों को लूटने-खाने तक ही सीमित है । न उन बेचारों के पास कुछ है और न वे किसी का कुछ भला-बुरा कर सकते हैं ।

हमने अपने प्रारम्भिक जीवन में करामाती सिद्ध बाबाओं की बहुत खोज की है । उन दिनों हमारा अनुमान था कि जो जितना करामाती होगा, उसे उतना ही बड़ा सफल आध्यात्मिक साधक माना जाना चाहिए । इस मान्यता के आधार पर हमने समस्त भारतवर्ष के सभी प्रख्यात करामाती लोगों का पता लगाया और उनके दरवाजे पर खाक छानी । जितनी अधिक सेवा उनकी सम्भव थी वह की, पर बारीक दृष्टि से पता लगाने पर इतना ही विदित हुआ कि उनके पास बाजीगरी हथकण्डों के अलावा वास्तविक सिद्धि कुछ भी नहीं है । ऐसे लोगों के चमत्कारों का रहस्य उन दिनों हमने 'योग के नाम पर मायाचार' पुस्तक में किया था । पुस्तक छापने का उद्देश्य यह था कि ऐसे धूर्तों के चंगुल में फँसने से लोग बचें, पर हुआ उलटा जो रहस्य उनसे प्रकट किए गए थे उन्हें अपनाकर बहुत से लोग भोले लोगों को ठगने के लिए वैसा ही षड्यन्त्र स्वयं रचने लगे । इस प्रकार वह पुस्तक नए धूर्तों के लिए एक शिक्षण-ट्रेनिंग पुस्तक बन गई । अतएव उसे छापना बन्द करना पड़ा । ऐसे कितने ही करामाती सिद्धों के सम्पर्क में रहने का अवसर हमें मिला है जो ईश्वर का दर्शन करा देने तक का दावा करते थे, पर उनके पास ढोल की पोल के अतिरिक्त था कुछ भी नहीं ।

चोर बनाम भिक्षुक—यह एक सच्चाई है कि चोर की अपेक्षा भिखारी अधिक निकृष्ट है । चोर को साहस, पुरुषार्थ और सूझबूझ से काम लेना पड़ता है, इसलिए पाप के दण्ड का अधिकारी बनते हुए भी वह कम से कम कुछ सद्गुणों का तो अभ्यस्त बना रहता है । उसे अपना स्वाभिमान तो नहीं खोना पड़ता । भिक्षुक एक प्रकार का आत्म-हत्यारा है, उसे पगपग पर आत्म-तिरस्कार का, हीनता, दीनता एवं तुच्छता का अनुभव अपने सम्बन्ध में करते रहना है । जिनसे उसे लाभ लेना है उनकी चापलूसी करनी पड़ती है । उनके असत्य एवं अनुपयुक्त कार्यों का भी समर्थन करना पड़ता है । भिक्षुक को ठगी और दम्भ का सहारा लेना पड़ता है । जो बातें उसमें नहीं हैं वे दूसरों को बताने का मिथ्यापवाद फैलाना पड़ता है । इसी प्रकार मूढ़ विश्वास में दूसरों को फँसाकर उनके पतन का पथ प्रशस्त करते हुए अपना लाभ कमाना होता है । चोर इतना तो नहीं करता । वह केवल धन चुराता है जिसकी पूर्ति पीछे भी हो सकती है पर ढोंगी भिक्षुक ने धन के साथ-साथ जिन अन्ध-मान्यताओं एवं भ्रम-जंजालों में फँसा दिया उनके कारण तो उस बेचारे को भविष्य में भी पग-पग पर ठोकरें खानी पड़ती रहेंगी । यह पाप चोर ने तो नहीं किया था । उसने तो चोरी करने के साथ-साथ अपने यजमान को यह शिक्षा भी दी है कि भविष्य में वह अधिक सावधानी बरते और अपना सामान इस प्रकार न रखे जिससे किसी को चोरी करने का अवसर मिले । इस प्रकार चोर तो एक तरह का शिक्षक भी है, पर ढोंगी भिक्षुक तो आगे के लिए भी अज्ञान के अन्धकार में धकेल जाता है । चोर की आत्मा जितनी पतित होती है उससे भिक्षुक की कहीं अधिक पाई जाती है । भिक्षुक को हर घड़ी असत्य का आवरण ओढ़े रहना पड़ता है और निरन्तर असत्य का प्रचार प्रतिपादन करना पड़ता है, जबकि चोर अपनी घात के समय ही छिपाव की क्रिया करता है । बाकी समय वह सीधा रास्ता अपनाये रहता है । कम से कम वह चोरी सिखाने के लिए कोई सत्संग, प्रवचन का आयोजन तो नहीं करता, अपनी बात को धर्मसम्मत तो नहीं ठहराता, दूसरों से ऊँचा और अच्छा तो अपने को सिद्ध नहीं करता । ढोंगी भिक्षुक तो यह सब भी करते रहते हैं, इसलिए उनका पाप भी चोर की तुलना में सहस्र गुना अधिक माना गया है । नरक की पारलौकिक दुर्गति वाली बात यदि सत्य हो तो निश्चय ही चोरी की अपेक्षा इन ढोंगियों को सहस्र गुनी अधिक दंड भुगतना पड़ेगा ।

हमारा कलंक एवं अभिशाप—भिक्षुकों की संख्या किसी देश में बढ़ना उसके लिए लज्जा और कलंक की बात है, पर ढोंगी भिखारी तो किसी समाज के अभिशाप ही होते हैं, कहते हैं कि बिच्छू के बच्चे अपनी माँ का पेट भीतर ही भीतर खा जाते हैं और तब उसे फाड़कर बाहर निकलते हैं । इस किंवदन्ती में कितना तथ्य है यह मालूम नहीं, पर यह निश्चित है कि ढोंगी भिक्षुक जिस समाज में बढ़ते हैं, वे उसे पूरी तरह खोखला, पतित, पराश्रित, दीन हीन और दुर्भाग्यग्रस्त ही बनाकर छोड़ते हैं । रक्त पीने वाली जोंक की तुलना में इतनी भयंकरता अधिक ही है, कम नहीं ।

अतएव यह नितान्त आवश्यक है हम अपने समाज को भिक्षाजीवियों से रहित बनावें । जो वस्तुतः असहाय, अपंग, असमर्थ हैं उनके लिए सरकार की ओर से अथवा सेवा संस्थाओं की ओर से आश्रय की व्यवस्था करें । ऐसे नितान्त असमर्थ जो कुछ भी नहीं कर सकते वर्तमान भिक्षुकों में से हजार पीछे शायद एक भी न होगा । जो हों, उनको द्वार-द्वार पर हाथ पसारने जाकर अपना स्वाभिमान खोने का अवसर नहीं दिया जाना चाहिए । समाज का कर्त्तव्य है कि सम्मानपूर्वक उनको रोटी देने का प्रबन्ध करें । हमें यह करना ही चाहिए । अधिकांश इनमें ऐसे हैं जो एकाध अंग से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपंग हैं शेष अंग कामचलाऊ हैं । ऐसे लोगों की श्रम एवं स्वावलम्बनपूर्वक आजीविका कमाने के साधन जुटाए जाने चाहिये । अन्धे अब पढ़ सकते हैं । हाथ पैरों से हो सकने वाले काम बड़ी आसानी से कर सकते हैं । लँगड़े, बहरे, गूँगे भी कितने ही काम कर सकते हैं । उन्हें जो देना हो वह उनके श्रम का मूल्य चुकाने के रूप में उदारतापूर्वक देना चाहिए पर मुफ्तखोर किसी को भी नहीं बनने देना चाहिए, मुफ्तखोर भिखारियों की आत्मा इतनी पतित हो जाती है कि वे अपने बच्चों को अपने हाथों अंधा, लँगड़ा, लूला आदि बनाने की निर्दयता स्वयं करते देखे गए हैं । शरीर में कोई घाव बना लेते हैं और फिर उसे अच्छा नहीं होने देते ताकि उसे देखकर लोग अधिक भिक्षा दें । चोरी, उठाईगीरी, नशेबाजी आदि अगणित दुर्गुण मुफ्त का पैसा सिखा देता है । इसलिए यह प्रयत्न होना ही चाहिए कि भारत के अधिकांश भिक्षुकों में से जो काम कर सकने में किसी भी प्रकार समर्थ हों, उन्हें काम पर लगाने के लिए विवश किया जाय । ऐसे लोगों को दान देकर हम उनकी कोई सहायता नहीं करते, वरन् उस बुरी आदत को अपनाये रहने की अप्रत्यक्ष रूप से प्रेरणा ही देते हैं । यह पुण्य नहीं एक प्रकार से पाप ही है ।

ढोंगी, भिक्षुक हमारे अन्ध-विश्वास, अविवेक एवं मूढ़ श्रद्धा पर जीवित हैं । हम तर्क से काम लें, विवेक से काम लें, सच्चाई को ढूँढ़ें, वास्तविकता का पता लगावें तो प्रकाश उदय होते ही जैसे अन्धकार नष्ट हो जाता है, वैसे ही इन ढोंगियों द्वारा फैलाया हुआ मायाजाल भी समाप्त हो जायगा और वे स्वयं भी उल्लू और चमगादड़ों की तरह अपने खौंतरों में जा छिपेंगे ।

दयालुता मानवोचित् गुण है । मनुष्य को सहृदय होना ही चाहिए । अतिथि सत्कार भारतीय परम्पराओं के अनुकूल है । इन सद्गुणों को कार्यान्वित किया ही जाना चाहिए । दीन-दुःखियों की, असहाय-असमर्थों की सेवा हमें करनी ही चाहिए । लोक-सेवियों के निर्वाह की उदारतापूर्वक व्यवस्था करनी चाहिए, पर साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इन तथ्यों का दुरुपयोग न होने पावे । दुरुपयोग होने पर तो अमृत भी विष बन जाता है । अविधिपूर्वक खाया हुआ अन्न जीवन-संकट बन जाता है । जिस अन्न पर हमारा जीवन स्थिर रहता है वही यदि अधिक मात्रा में या अभक्ष रूप से खाया जाय तो बीमारी का कारण बन जायगा । इसी प्रकार दयालुता, उदारता, सहृदयता जैसे श्रेष्ठ तत्वों का यदि कुपात्रों के लिए भी प्रयोग किया जायगा तो वे हानिकारक ही सिद्ध होंगे ।

मुफ्त में पैसा पाने की जिसे आदत पड़ जाती है वह फिर निश्चय ही कमाई नहीं करना चाहता । नये-नये बहाने रचकर वह अपनी भिक्षा पात्रता सिद्ध करता है । जब मिलने लगता है तो उसे एक व्यवसाय बना लेता है । जिसे बार-बार दूसरों के आगे हाथ पसारना पड़ता है, वह अपना स्वाभिमान खो देता है । न उसे अपने इस निकृष्ट प्रयत्न पर लज्जा आती है, न संकोच होता है । स्वाभिमानरहित जीवन जीना आत्मा का घृणित पतन करना है । जिस व्यक्ति ने समर्थ होते हुए भी व्यक्तिगत गुजारे के लिए भिक्षा का व्यवसाय अपनाया, समझना चाहिए उसने अपनी आत्मा का बुरी तरह पतन कर लिया । ऐसे पतित व्यक्ति जिस देश समाज में बढ़ेंगे, उनका अधःपतन ही होगा । किसी सभ्य राष्ट्र के नागरिक को स्वावलम्बी और स्वाभिमानी ही होना चाहिए ।

जो लोग इन कुपात्र भिक्षुकों को दान देकर उन्हें उस पतित स्थिति में पड़े रहने के लिए प्रोत्साहित करते हैं वे वस्तुतः एक पाप ही करते हैं । स्थूल दृष्टि से वे पुण्यात्मा भले ही मालूम पड़ें, अपने आपको वे दानी भले ही मानें, पर वास्तविकता उससे सर्वथा विपरीत है । दान वही सार्थक है जिसके द्वारा सत्प्रवृत्तियाँ बढ़ती हों । जिस दान से दुष्प्रवृत्तियाँ बढ़ें वह पुण्य कहाँ रहा ? यदि किसी चोर, डाकू, व्यसनी, आवारा, जुआरी, को दान दिया जाय तो उससे सर्प को दूध पिलाने की तरह उसकी वह दुष्टता बढ़ेगी, इससे जो पाप बढ़ेगा उसका उत्तरदायित्व ऐसे लोगों पर भी होगा जिन्होंने उन्हें आर्थिक सहायता देकर अधिक समर्थ बनाया । जिस दान से किसी को आलसी, व्यसनी एवं स्वाभिमानहीन बनने का अवसर मिलता है वह दान उस देने वाले के लिए पाप परिणाम ही उपस्थित करेगा । अविवेकपूर्वक चलाई हुई तलवार आत्मरक्षा की तरह आत्मघात का दुष्परिणाम उपस्थित कर सकती है, उसी प्रकार अविवेकपूर्वक दिया गया दान स्वर्ग पहुँचाने की अपेक्षा दाता को नरक में ही ले जाकर पटक देता है ।

दान में विवेक की अत्यधिक आवश्यकता है । किसे दे रहे हैं ? क्यों दे रहे हैं, उस दिए हुए पैसे का किस कार्य में उपयोग होना और उससे क्या परिणाम निकलेगा ? इन प्रश्नों का उत्तर बारीकी से ढूँढ़ना चाहिए और जहाँ उपयुक्तता दृष्टिगोचर हो वहाँ उदारतापूर्वक दान देना चाहिए । किन्तु यदि यह प्रतीत हो कि किसी समर्थ व्यक्ति को आलसी एवं परावलम्बी बनाने के लिए दिया जा रहा है तो उसे देने से पहले सौ-बार सोचना चाहिए और विवेक कहे तो साहसपूर्वक याचक को स्पष्ट इन्कार भी कर देना चाहिए । इस इनकारी में उसका वास्तविक हित है । जब भिक्षा व्यवसाय उसे लाभदायक प्रतीत न होगा तो फिर वह गुजारे का दूसरा उपाय सोचने के लिए विवश होगा । यदि ऐसा हो सका तो वह एक स्वाभिमानी नागरिक की जिन्दगी जी सकेगा । ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करने वाला 'सूम' कहलाकर भी दूरदर्शी ही कहलावेगा । उस दानी से हर हालत में अच्छा रहेगा, जिसने कुपात्रता को बढ़ावा देने के लिए अपने पैसे का दुरुपयोग किया ।

राष्ट्र को भिक्षुक-विहीन बनाना नितान्त आवश्यक है । ८० लाख पेशेवर और लगभग इतने ही आंशिक रूप से दान लेने वाले अर्थात् एक करोड़ लोग किसी न किसी बहाने भिक्षा की आशा करने लगे और अपना स्वाभिमान खोते रहे तो किसी उदीयमान राष्ट्र के लिए लज्जा से डूब मरने की बात है । ४६ करोड़ में से १ करोड़ भिखारी मनोवृत्ति के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हों तो उस समाज को संसार के सामने गर्व से मस्तक उठाने का अवसर कैसे मिलेगा ? इतने निठल्ले लोग अपनी आजीविका चलाने के लिए जो अनैतिक खुराफातें सोचेंगे और करेंगे उसका प्रभाव सारे समाज को दिग्भ्रान्त करने के लिए कितना भयानक होगा उसकी कल्पना करने मात्र से आँखों के आगे अन्धेरा आ जाता है ।

इस दुष्प्रवृत्ति से राष्ट्र का पिण्ड छुड़ाया ही जाना चाहिए । मनुष्यों को पतित स्तर का बने रहने की अपेक्षा उसे स्वावलम्बी एवं स्वाभिमानी बनाने में ही विवेकपूर्वक योग देना ही चाहिए । कुपात्रों को दान देने की सस्ती भावुकता पर नियंत्रण करना ही चाहिए । हमें यह सोचना ही चाहिए कि पुण्य के नाम पर पाप बढ़ाने से क्या लाभ ?

देश में मुश्किल से एक लाख ऐसे असमर्थ होंगे जो भिक्षा के बिना जीवित नहीं रह सकते । इनके लिए किन्हीं प्रामाणिक संस्थाओं द्वारा निर्वाह की व्यवस्था होनी चाहिए, उनसे यथासम्भव श्रम कराया जाए । जिसका एक दो अंग भी ठीक हैं कुछ न कुछ उपार्जन कर सकता है, उनके लिए वे सामान जुटाए जाएँ ताकि अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ न कुछ करते रहें और किसी न किसी रूप से अपने पुरुषार्थ को उत्पादन ढंग से जाग्रत रख सकें । ऐसी सहायता से उनका निर्वाह भी होगा और आत्मिक पतन भी न होगा । शेष जो ५५ लाख भिक्षा व्यवसायी देश के सर्वतोमुखी अधःपतन का गढ़ बने हुए हैं, उन्हें इस व्यवसाय से विरत होने के लिए विवश किया ही जाना चाहिए । विवेकपूर्ण दयालुता का यही मार्ग है ।

भिक्षा को व्यवसाय न बनने दिया जाए

भिक्षावृत्ति का अन्धाधुन्ध मात्रा में बढ़ जाना, इस देश के स्वाभिमान का स्तर बेतरह गिर जाने का प्रत्यक्ष प्रमाण है । मानवीय स्वाभिमान का तकाजा है कि हर व्यक्ति अपनी आजीविका स्वयं कमाए । यदि शारीरिक दृष्टि से कुछ अपूर्णता है तो भी विकलांगों द्वारा किए जा सकने वाले कार्यों का अवलम्बन उसे लेना चाहिए । यदि स्वाभिमान की भावना, परिश्रम की इच्छा और उत्साह की मात्रा विद्यमान हो तो १०० में से ८० विकलांग ऐसे होते हैं जो कुछ कमा सकते हैं और अपने बलबूतों पर अपनी गुजर कर सकते हैं ।

साधु-महात्माओं का एक बड़ा वर्ग परावलम्बी जीवन जीता है । सरकारी जनगणना के अनुसार इनकी संख्या ८० लाख से अधिक है । इसके अतिरिक्त पंडित-पुरोहित वे लोग अलग हैं जो कुछ अन्य धन्धा भी करते हैं तथा दान-दक्षिणा भी लेते हैं । दान लेने वाले, मुफ्त का ब्रह्म-भोज खाने वाले लोगों की संख्या भी यदि गिनी जाय तो वह ४४ लाख और भी निकल आवेंगे । इस प्रकार दोनों वर्गों को जोड़ लेने से भिक्षाजीवियों की संख्या १ करोड़ में हो जाती है । ९० करोड़ की आबादी वाले देश में १ करोड़ भिक्षुक, हर पचास पीछे एक आदमी भिखारी, सो भी समर्थ और हट्टे-कट्टे, निस्संदेह यह किसी देश की मानसिक और सामाजिक स्थिति गयी-गुजरी होने का चिह्न है ।

इस दिशा में हमें गहराई से विचार करना चाहिए और इस गम्भीर प्रश्न के समाधान का हल सोचना चाहिए । इस प्रवृत्ति को बढ़ाने वाले वे लोग हैं जो दान के साथ विवेक और दूरदर्शिता को नहीं जोड़ते, वरन् अन्धविश्वास से ग्रस्त होकर उन लोगों को दान देते हैं जो उसके अधिकारी किसी भी दृष्टि से नहीं । उनके मन में एक भ्रम यह जमा होता है कि साधु का वेश और ब्राह्मण का वेश दीखना ही पर्याप्त है । ऐसे लोगों को दान देने से भगवान् प्रसन्न होते हैं, पुण्य लाभ मिलता है और स्वर्ग का द्वार खुलता है । यह बात तभी ठीक थी जब यहाँ साधु और ब्राह्मण उच्च चरित्र, उद्भट विद्वान, आत्मबल सम्पन्न तपस्वी और निरन्तर लोक-कल्याण में परायण प्रवृत्ति के होते थे । ऐसे लोगों को उपयोगी कार्यों में ही निरन्तर लगा रहकर अधिक समाज सेवा सम्भव हो सके इसलिए उन्हें उपार्जन की चिन्ता से मुक्त रखा जाता था । उदार लोग उन्हें भिक्षा एवं दान-पुण्य से सहायता करते थे । अपने सेवा कार्यों की तुलनात्मक उपयोगिता का विचार करके वे उन सत्पात्रों द्वारा सम्मानपूर्वक दिए हुए सहयोग को प्रेमोपहार मान कर स्वीकार भी कर लेते थे । उस समय की बात दूसरी थी आज की दूसरी है ।

लोक-मंगल के लिए यदि अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित नहीं है तो फिर हर स्वाभिमानी को दान स्वीकार करने से इन्कार ही करना चाहिए । निजी स्वर्ग और मुक्ति प्राप्त करने के लिए भजन साधन करना उचित है । पर चूँकि यह व्यक्तिगत लाभ का क्रिया-कलाप है, इसे अपने उपार्जन पर निर्वाह करते हुए ही करना चाहिए साधु होना ही आवश्यक हो तो उन दूरदर्शी साधुओं का अनुकरण करना चाहिए जो कृषि आदि से स्वयं उपार्जन करते हैं । शान्तिकुंज हरिद्वार के समीप ही साधुओं का एक ऐसा सम्प्रदाय रहता है जो कृषि द्वारा अपनी रोटी कमाता है । भिक्षा ग्रहण नहीं करता और बचे हुए समय में भजन करता है । दूसरों के दान पर निर्वाह और अपने स्वर्ग का उपार्जन यह सरासर अन्याय है । यदि भिक्षा लेते हैं तो बदले में समाज सेवा के लिए आगे आयें । यदि वैसा उत्साह नहीं है तो फिर भिक्षा भी नहीं लेनी चाहिए । यही बात दान देने वालों को भी ध्यान में रखनी चाहिए और देते समय उसके परिणामों पर भी विचार करना चाहिए । पुरोहित, पंडित अपना पारिश्रमिक निर्धारित करें और स्वाभिमानपूर्वक, वकील, डाक्टर आदि की तरह उसे स्पष्ट बताकर ले लें । यह सीधी और साफ बात है । परिश्रम का, समय का, मूल्य लेना उचित है । उसे दान-दक्षिणा के स्वाभिमान गिराने वाले रूप में ग्रहण नहीं किया जाना चाहिए।

ब्राह्मण छात्र को संस्कृत पढ़ने के लिए मुफ्त भोजन यह भी निरर्थक है । मुफ्त का अन्न खाने से स्वाभिमान और ब्रह्म तेजस् जिन्होंने गँवा दिया है, वे भावी जीवन में विद्वान बनकर भी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति न बन सकेंगे । जिन दीनता के संस्कारों में रहते हुए उन्होंने पढ़ा है वह आगे चलकर उनके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तित्व को विकसित होने में बाधक ही बनेंगे । असमर्थ छात्रों को पढ़ने के लिए छात्रवृत्ति दी जानी चाहिए और देते समय उन्हें यह स्पष्ट बता दिया जाना चाहिए कि जब वे उपार्जन करने लगें तो यह उधार दी हुई राशि दूसरे असमर्थ छात्रों को देकर इस ऋण से उऋण होने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध रहें । विद्या पढ़ना आवश्यक है, पर स्वाभिमान का संरक्षण उससे भी अधिक आवश्यक है । ब्राह्मण होने के नाम पर समर्थ परिवार के लड़के भी मुफ्त भोजन, वस्त्र पाने के लिए संस्कृत पढ़ें इससे तो उनका न पढ़ना और न पढ़ाना अधिक शोभनीय है ।

शारीरिक दृष्टि से थोड़ी कमी वाले लोगों को गुजारा उपार्जन करना कठिन पड़ता है । उदार लोगों का कर्तव्य है कि उन्हें काम देने की ऐसे संस्थाएँ स्थापित करें जहाँ वे श्रम करके मजूरी प्राप्त कर सकें । आरम्भ में शारीरिक दृष्टि से त्रुटिपूर्ण लोगों को काम करने में अड़चन पड़ती है, पर यदि उनको उपयुक्त काम मिल जाय, करने का उत्साह हो और सिखाने की पद्धति ठीक हो, तो फिर कोई कारण नहीं कि वे निर्वाह के लायक उपार्जन न कर सकें । उनके लिए इस प्रकार के साधन जुटाना, मुफ्त में भीख देने से कहीं अधिक पुण्य फल-दायक है । महाराष्ट्र में बाबा साहब आप्टे ने कोढ़ियों तथा विकलांग लोगों के लिए ऐसा ही विशाल आश्रम बनाया है । वे वहाँ रहकर स्वाभिमानपूर्वक अच्छा उपार्जन करते हैं । ऐसी ही संस्थान हर जगह स्थापित होने चाहिए । उन्हें चलाने के लिए मानवता प्रेमियों का उदार सहयोग मिलना चाहिए ।

जो सर्वथा अपंग-असमर्थ हैं और घर-परिवार की ओर से निराश्रित हैं ऐसे लोगों को सुविधा और सम्मानपूर्वक जीवित रहने के साधन जुटाना समाज का कर्तव्य है । ऐसे लोगों के अपंग आश्रम खुलने चाहिए । यदि अपंग असमर्थों को निर्वाह के लिए दर पर भटकना पड़े तो यह समाज की उदारता को चुनौती है । यह उस देश के लोगों के स्वाभिमान का पतन है । ऐसे स्थानों के लिए अयाचित दान पहुँचना चाहिए । साथ ही अपंग भिक्षुक भी मलीन और गंदे संस्कारों में न पड़े रहें, इसलिए उन्हें स्वच्छता, प्रार्थना जैसे उपयोगी कार्यों में उनकी शारीरिक-मानसिक स्थिति के अनुसार लगाये रहना चाहिए । भिक्षा माँगनी ही पड़े तो उनके लिए किसी परामर्थ प्रेमी को घर-घर जाकर रोटी माँगकर लानी चाहिए । भिक्षुक को भटकना पड़े इसकी तुलना में एक परमार्थ प्रेमी का उनके लिए भिक्षा माँगना अधिक उपयुक्त है ।

बहुत से लोग भिक्षुक बनना नहीं चाहते, उनकी शारीरिक असमर्थता भी उतनी नहीं है, पर काम न मिलने के कारण उन्हें उदर पोषण के लिए भीख माँगनी पड़ती है । ऐसे लोगों के लिए ऐसे हलके कामों की व्यवस्था की जानी चाहिए जिन्हें अनभ्यस्त व्यक्ति भी कर सके, यदि जो जितनी देर श्रम करे वह उतना लाभ प्राप्त कर सके । जो लोग अपने लाभ के लिए विशाल भीमकाय कारखानों की योजना बना सकते हैं, उनमें लगाने के लिए लाखों करोड़ों की पूँजी का प्रबन्ध कर सकते हैं, उन्हें इस प्रकार के कामों का भी प्रबन्ध करना चाहिए, जिससे मृत्यु और भिक्षा के चौराहे पर खड़े हुए लोग कुछ परिश्रम करके राहत प्राप्त कर सकें ।

"दान किसी को भी दिया जाय उस से पुण्य ही होता है" और इसी प्रकार वंश और वेश को दान के लिए अधिकारी माने जाने वाली अन्धमान्यता ने भी कितने ही काम के आदमियों को निठल्ला बनाकर रख दिया है । "खाली दिमाग शैतान की दुकान" वाली कही बात सोलह आने सच है । भिक्षाजीवी लोग अपने दिमाग और समय की ऐसे अनैतिक अन्धविश्वास फैलाने में लगाते रहते हैं जिनके आधार पर वे अधिक धन और अधिक सम्मान अनायास ही उपार्जित करते रह सकें । उनके द्वारा फैलाई हुई मूढ़-मान्यताओं का समाज को बेतरह दंड भुगतना पड़ता है । इस देश में एक से एक उलझन भरे अन्धविश्वासों के प्रसार में यह मुफ्तखोरी की पलटन ही मुख्य आधार रही है ।

हमें मानवीय स्वाभिमान जाग्रत करना चाहिए । दान विपत्तिग्रस्तों की सहायता के लिए अथवा सत्प्रवृत्तियों के लिए ही लिया या दिया जाना चाहिए । जहाँ विवश लोगों की सहायता करना आवश्यक है वहाँ यह भी उचित है कि अवांछनीय हेय भिक्षावृत्ति का कठोरतापूर्वक उन्मूलन किया जाय ।

दान में विवेक की आवश्यकता

दान लेने और देने वाले के मन में यह प्रश्न पूरी सतर्कता के साथ उपस्थित रहना चाहिए कि इस पैसे का उपयोग (१) यज्ञार्थाय, (२) विपद् निवारणाय, इन दो कार्यों के अतिरिक्त और किसी तीसरे काम में तो नहीं होगा । जब यह पूर्ण निश्चय हो जाय तभी दान देना और लेना चाहिए । संसार में शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक विभूतियों की संवृद्धि के लिए एवं पाप तापों को हटाने के लिए जो प्रयत्न होते हैं, वे यज्ञ हैं और विपद्ग्रस्तों को अपने पैरों पर खड़ा कर देने के लिए एवं असमर्थों की जीवन रक्षा के लिए जो कार्य किये जाते हैं वे विपद् निवारण की श्रेणी में आते हैं । इन कार्यों में पैसा, समय, बल-बुद्धि और आवश्यकता होने पर प्राण तक दे देने चाहिए । यह दान की शास्त्रीय मर्यादा है ।

उपर्युक्त शास्त्रीय मर्यादा के अतिरिक्त अन्य प्रयोजनों के लिए जो दान लिया या दिया जाता है वह सब प्रकार अनिष्टकर, घातक, भयंकर परिणाम उत्पन्न करने वाला तथा पाप कर्म है । अशास्त्रीय भिक्षा—पाप, अनाचार, दुःख, दुर्गुण एवं नरक की सृष्टि करती है । भिक्षा सचमुच एक लज्जा की चीज है । सर्वत्र भिक्षा माँगने को मृत्यु के समान कष्टदायक अपमानजनक कहा है । सचमुच अशास्त्रीय भिक्षा अत्यन्त ही गर्हित है । वह नीचता, हीनता, निर्लज्जता एवं पशुता को प्रकट करती है ।

हमारे देश एवं धर्म का यह दुर्भाग्य है कि आज अशास्त्रीय भिक्षा पर जीविका निर्भर करने वाले मनुष्यों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संख्या लाखों तक पहुँच गई है, पिछली सरकारी जनगणना के अनुसार भारतवर्ष में भिखारियों की संख्या ५६ लाख के लगभग पहुँच गई है । इनमें से भिक्षा के वास्तविक अधिकारी अँगुलियों पर गिनने लायक निकलेंगे । लोक-कल्याणकारी, जनसेवा के कार्यों में सर्वतोभावेन लगे हुए विद्वान निस्पृह ब्राह्मणों की संख्या अत्यन्त ही न्यून निकलेगी, सब कुछ त्यागकर संन्यासी होकर जनता जनार्दन की आराधना में प्रसन्न साधु-संन्यासी चिराग लेकर खोजने पड़ेंगे । आकस्मिक, घोर अनिवार्य विपत्ति से पीड़ितों एवं असमर्थ, असहाय दरिद्रों की संख्या भी बहुत ही कम निकलेगी । इन छप्पन लाख भिक्षुकों में पाँच हजार भिक्षुक भी कठिनाई से ऐसे निकलेंगे जो शास्त्रीय भिक्षा के अधिकारी हैं, शेष साढ़े पचपन लाख लाख तो ऐसे मिलेंगे जिन्होंने भिक्षा को एक लाभदायक व्यवसाय बना लिया है ।

ब्राह्मणत्व के समस्त गुणों से रहित व्यक्ति भी अपने को इस आधार पर भिक्षा का अधिकारी बनाते हैं कि हम ब्राह्मणों के वंशज हैं । यह झूठा दावा है । ब्राह्मणत्व कोई जागीर नहीं है जो पुश्त दर पुश्त विरासत में मिलती चली जाय । जो व्यक्ति ब्राह्मणत्व के गुण-कर्म-स्वभाव से युक्त है उसे भिक्षा जीविका करनी चाहिए, पर यदि उसके बेटे में वे गुण न रहें तो उसे ब्राह्मणत्व के लिए मिलने वाली भिक्षा ग्रहण करने का अधिकार नहीं है । इसी प्रकार संसार को मुक्ति दिलाने के प्रयत्न में अपनी मुक्ति तक को त्यागे हुए जो संन्यासी हैं वे ही अपनी सेवा के बदले में संसार से भिक्षा ले सकते हैं । जो केवल मात्र अपनी-निज की मुक्ति के लिए प्रयत्नशील हैं, दुनिया को झूठा कहते हैं, लोकसेवा से दूर रहते हैं वे पक्के स्वार्थी हैं, वे अपने निज का लाभ में ही तो प्रवृत्त हैं चाहे वह लाभ धन का हो, स्वर्ग को हो या मुक्ति का हो । जैसे धन कमाने के लिए ही सदा अपने व्यापार में प्रवृत्त कोई व्यापारी भिक्षा का अधिकारी नहीं, वैसे ही अपनी निज की मुक्ति में तल्लीन योगी संन्यासी भी भिक्षा के अधिकारी नहीं । जब संसार झूठा है तो भिक्षा भी झूठी है । जब संसार की सेवा से उपेक्षा करते हैं और अपने को उससे अलग मानते हैं तो फिर भिक्षा से भी अलग रहना चाहिए, उसकी भी उपेक्षा करनी चाहिए । भजन करना व्यक्तिगत नित्य कर्म है । स्नान, भोजन, व्यायाम की भाँति भजन भी एक अत्यन्त लाभप्रद नित्यकर्म है । भजन करना किसी दूसरे पर अहसान करना नहीं है । न इसके करने से किसी को भिक्षा लेने का अधिकार मिलता है ।

देखा जाता है कि धर्म के नाम पर या दीनता के नाम पर नाना प्रकार के आडम्बरों, घृणित मायाचारों से भिक्षा उपार्जन की जाती है । इन मायाचारों से जहाँ जनता का पैसा बर्बाद होता है, वहाँ उसके मस्तिष्क में अन्धविश्वास, भ्रम, भय, अज्ञान एवं अविचार का विष भी प्रवेश होता है । पुरुषार्थ, प्रयत्न, कर्म और साहस को छोड़ कर लोग आकाश में से देवताओं द्वारा स्वर्ण पुष्प बरसाये जाने की आशा करने लगते हैं । अनेकों व्यक्ति अपने कार्यों में दोष ढूँढ़ कर उन्हें सुधारने की अपेक्षा दैव कोष की अनिष्ट कल्पना करके हतोत्साह हो जाते हैं । धर्म का आडम्बर करके जीविका कमाने वालों के पास विद्या-बल, विवेक-ज्ञान, अनुभव, तप आदि महत्ताएँ तो होती नहीं, इनके न होने पर वे झूठा आधार ग्रहण करते हैं, अपने आपको देवताओं का प्रतिनिधि, कृपापात्र या एजेन्ट साबित करते हैं जिससे भोली जनता उन्हें देव कृपा प्राप्त करने के लिए पूजे । यह मायाचार जनता में ऐसे विषैले अन्ध-विश्वास पैदा करता है, जो संसार में भयंकर अनिष्ट उत्पन्न करते हैं ।

गरीबी का आडम्बर बना कर भिक्षा माँगने वाले अधिकांश ऐसे व्यक्ति होते हैं, जिनके शरीर में श्रम करने की, जीविका उपार्जन करने की पर्याप्त क्षमता होती है । वे चाहें मेहनत मजूरी करके आसानी से अपना गुजारा कर सकते हैं, पर उन्हें बिना परिश्रम किये, आसानी से जब भिक्षा मिल जाती तो पसीना बहाने के लिए क्यों तैयार हों ? वे गरीबी के, बीमारी के, विपत्ति के झूठे बहाने बनाकर भिक्षा माँगते रहते हैं । कुछ अत्यन्त घृणित कोटि के भिक्षुक तो अधिक जीविका कमाने के लिए बड़े लोमहर्षक कार्य करते हैं । वे अपने शरीर में स्वेच्छापूर्वक घाव बनाते हैं, घावों को अच्छा नहीं होने देते, अपने बालकों के नेत्र, हाथ, पैर आदि तोड़ देते हैं, इस घृणित काम को वे इसलिए करते हैं कि दर्शक लोग दया द्रवित होकर उन्हें अधिक पैसा दें, गायों या बछड़ों को पाँच पैर का या अधिक अंग का बनाने के लिए कसाइयों द्वारा कलम लगवाई जाती है । एक बछड़े का पैर काट कर और दूसरे बछड़े की पीठ का माँस काट कर इन दोनों को कसाई लोग सीं देते हैं, जब तक वह घाव अच्छा नहीं होता तब तक बछड़े को इस प्रकार जकड़ा रहने देते हैं कि वह जरा भी हिल न सके । जब वह जुड़ जाता है तो इसे शिवजी का वाहन नान्दी बताकर भिखारी लोग भीख माँगते हैं । बहुत से बछड़ों के पैर की जगह माँस का लोथड़ा भी जोड़ देते हैं । इस क्रिया में एक बछड़ा तो आरम्भ में ही मार डाला जाता है, दूसरा जिसमें कलम लगाई गई थी या तो मर जाता है या बड़ी मुश्किल से मृत्यु तुल्य कष्ट सहकर जी पाता है । ऐसे निर्दय हिंसा पूर्ण कार्य करते हुए उन्हें तनिक भी दया नहीं आती । धर्मजीवी भिक्षकों में से भी अनेक ऐसे ही निर्दय हो जाते हैं । देवी-भैरव, भवानी, पीर, मसान आदि के नाम पर बकरा, मेंड़ों, भैंसा, मुर्गा आदि पशु-पक्षियों का गला काटते और कटवाते हैं ।

अशास्त्रीय भिक्षा पाप रूप है । ऐसा अन्न खाने वालों के रोम-रोम में दुर्गुणों का समावेश हो जाता है । वे झूठ, चोरी, छल, व्यभिचार, मद्यपान, नशेबाजी, ढोंग, पाखण्ड, आलस्य, प्रमाद, हिंसा, असहिष्णुता, अनुदारता आदि असंख्यों दोषों से ग्रसित हो जाते हैं । स्वाभिमान एवं स्वावलम्बन नष्ट होने के साथ साथ आत्मा की भव्य ज्योति बुझ जाती है और उनसे मन मरघट में पैशाचिक कुविचार नंगा नृत्य करने लगते हैं । अशास्त्रीय भिक्षा का अन्न सद्बुद्धि पर बड़ा घातक आक्रमण करता है और ऐसा अन्न खाने वाले को तो शीघ्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ही एक घृणित दयनीय नारकीय प्राणी के रूप में परिणत कर देता है । ऐसे प्राणियों की वृद्धि होना किसी भी देश या जाति के लिए एक भारी खतरा है, क्योंकि वे प्राणी संक्रामक रोगों के कीटाणुओं की भाँति जहाँ भी फिरते हैं, वहीं अनिष्ट उत्पन्न करते हैं ।

सच्चे यज्ञार्थी भिक्षुकों की अभिवृद्धि किसी भी समाज के लिए गौरव की बात है । त्यागी, परोपकारी, विद्वान, विशेषज्ञ, अपने सम्पूर्ण निजी स्वार्थों को तिलांजलि देकर जन-कल्याण के कार्य में जुटे रहें यह बड़ा ही ऊँचा आदर्श है । जहाँ थोड़ी-सी योग्यता वाले मनुष्य अपनी योग्यता के बदले में प्रचुर धन कमा कर ऐश्वर्यवान बन जाते हैं, वहाँ महान् तप योग्यताओं को जनता जनार्दन के चरणों में अर्पित करके केवल मात्र भिक्षा के दानों पर निर्वाह करना दैवी त्याग है, ऐसे त्यागियों की वृद्धि होना गौरव की बात है, परन्तु खेद पूर्वक कहना पड़ता है कि ऐसे भिक्षाजीवी अब प्रायः विलुप्त हो चले हैं । अब तो व्यवसायी लोग इस यज्ञ सामग्री की, भिक्षा की लूट कर रहे हैं । यह शर्म की, कलंक की और दुःख की बात है ।

भिक्षावृत्ति का सदुपयोग हो, सच्चे भिक्षुकों का हक, चोर लुटेरे न लूटने पावें इसके लिए भिक्षा देने वालों की जिम्मेदारी अब बहुत बढ़ गई है । उन्हें देखना चाहिए कि माँगने वाला यर्थाय विपद् निवारणार्थ ही मँगाता है न ? यदि इन दोनों में से कोई प्रयोजन न हो और वह मुफ्त का माल पाने की वृत्ति से माँग रहा हो तो उसे एक तिनका भी देने से मना कर देना चाहिए । अविवेकपूर्वक, कुपात्रों को दिया हुआ दान, उस दान-दाता को नरक में ले जाता है, क्योंकि उन निठल्ले भिक्षुकों द्वारा फैलने वाली अनैतिकता का उत्तरदायित्व उन अविवेकी दानदाताओं पर ही पड़ता है । यदि उन्हें भिक्षा न मिले तो सीधे रास्ते पर आने के लिए स्वयं ही मजबूर होंगे, परन्तु यदि अविवेकी दाता उनका घड़ा भरते ही रहेंगे तो उनके सुधारने की, सीधे रास्ते पर आने की कोई आशा नहीं करनी चाहिए ।

दान में विवेक आवश्यक है । जो दान के अधिकारी हैं उन्हें जी खोलकर मुक्तहस्त होकर देना चाहिए । संसार में सात्विकता, सद्भावना, ज्ञान, विवेक तथा सुख-शान्ति बढ़ाने के लिए एवं विपत्तिग्रस्तों को संकट से बचाने के लिए हर समय सहायता दी जानी चाहिए । शरीर से, बुद्धि से, पैसे से, यहाँ तक कि प्राण देकर भी विश्व के कष्ट मिटाने और सुख बढ़ाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए । सच्चे ब्राह्मणों को, सच्चे साधुओं को, सच्चे ब्रह्म साधकों को, सच्ची संस्थाओं को ढूँढ़कर उन्हें भिक्षा देनी चाहिए, उनके पुष्ट होने से धर्म की, वैभव की, सुख-शान्ति की पुष्टि होती है । विपद् ग्रस्तों को उठाकर छाती से लगाना चाहिए, उनके लिए हर सम्भव एवं उचित सहायता पहुँचानी चाहिए, परन्तु सावधान ! गौ का ग्रास शृंगाल न छीनने पावें, भिक्षा का हवन-शाकल्य यज्ञकुण्ड में पड़ने की जगह अपवित्र नाली में न बह जाय । यज्ञार्थाय और विपद् निवारणाय प्रयुक्त न होकर कहीं आपका दान कुपात्रों द्वारा न लूट लिया जाय ।

इन अन्ध-परम्पराओं के अनुकरण की क्या आवश्यकता?

किन्हीं परिस्थितियों में कभी, किन्हीं लोगों को सामयिक परिस्थितियों से निपटने के लिए कुछ कार्य करने पड़ते हैं, उनके अबोध परिजन ऐसा समझते हैं कि यह उनके लिए कोई अनुकरणीय निर्देश दिया जा रहा है, या ऐसा कुछ बहुत सोच-समझकर किया गया है । ऐसे ना समझ लोग अपने पूर्वजों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के साथ-साथ उनकी ऐसी गतिविधियों का भी अनुकरण करने लगते हैं जिनकी उनके लिए न कोई तुक होती है न आवश्यकता ।

पूर्वजों के प्रति श्रद्धा रखना उचित है, उनके श्रेष्ठ सत्कर्मों को, विवेकपूर्ण निर्देशों को स्वीकार करना भी ठीक है, पर जो कुछ भी जिस किसी भी परिस्थिति में किया हो उसे 'बाबा वाक्यम् प्रमाणम्' मानकर बैठ जाया जाय और लकीर के फकीर बनकर चला जाय इसमें न कोई पूर्वज-भक्ति है और न विवेकशीलता । संसार के विभिन्न भागों में ऐसी पुरातन भक्ति प्रथा-परम्पराओं के नाम पर चल रही है जिसे विवेक की कसौटी पर कसने से उनमें उपहासास्पद निरर्थकता ही दृष्टिगोचर होती है ।

उत्तर भारत में एक जाति है 'कोरबा' । इसके लोगों का यह विश्वास है यदि मृतक के प्रेत को रोका न गया तो वह श्मशान-स्थल से आकर घर के लोगों को विविध प्रकार से सताता है । अतएव ये शव को टेढ़े-मेढ़े मार्ग में ले जाते हैं जिससे कि प्रेत सहज ही न आ सके, रास्ता भूल जाये । सारे मार्ग पर काँटे भी बिछा देते हैं । इतना सब करके भी सन्तुष्टि नहीं होती, इसलिए कोरबा लोग जिस स्थान पर शव को जलाते हैं, उसके चारों ओर पत्थरों की बाड़ बना देते हैं । मृतकात्मा को किसी प्रकार की परेशानी न हो इसलिए भोजन, जल, धूप और वर्षा से बचने के लिए छाता आदि भी रख देते हैं ।

आस्ट्रेलिया की कुछ आदिवासी जातियाँ ऐसी भी हैं जो कि मृत्यु का कारण जादू-टोना समझती हैं । जब कोई मृत्यु शैया पर होता है तो परिजन चारों ओर से उसे घेर लेते हैं तथा जोर-जोर से रोना-चिल्लाना प्रारम्भ कर देते हैं । स्त्रियाँ नुकीले औजारों से अपनी जाँघों में घाव करने लगती हैं । कभी-कभी तो ये घाव इतने गहरे हो जाते हैं कि काफी रक्तस्राव होता है तथा खड़ा रहना भी कठिन पड़ जाता है । व्यक्ति की मृत्यु होने पर स्त्री-पुरुष हाथों में छुरी-लाठी लेकर एक दूसरे को भौंकते-पीटते जुलूस बनाकर निकलते हैं । इस प्रक्रिया में बहुतों का शरीर भी रक्त रंजित हो जाता है । तदुपरान्त लाश को किसी पेड़ की खोह में छोड़ दिया जाता है । तीन दिन बाद लोग जाकर देखते हैं उस पर वन्य पशु का कोई चिह्न से अंकित नहीं है । यदि किसी पशु के खुर पंजे आदि के निशान उस पर मिलते हैं तो वे मृतक की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मृत्यु का कारण उसी को मानकर उस पशु से बदला लेते हैं । यदि इस प्रकार का कोई चिह्न नहीं मिलता तो एक वर्ष तक शव वहीं पड़ा रहने दिया जाता है । उसके बाद मृतक के भूत से अनुमति लेकर एक किशोर पत्थर के कुल्हाड़े से अस्थि पंजर को तोड़ता है और हाथ की एक हड्डी को छोड़कर अन्य सभी को पत्ते और डालों में लपेट कर वहीं छोड़ दिया जाता है ।

'हो' जाति का विश्वास है कि मृतक की आत्मा समाज से बदला लेती है और जीवन काल में जिन व्यक्तियों ने उसे सताया था उन्हें परेशान करती है । अतएव वे कब्र के चारों ओर पत्थर, काँटे गाढ़ देते हैं जिससे कि मृतक का प्रेत निकलने न पाये । साथ ही उसे प्रसन्न बनाये रखने के लिए वे दैनिक उपयोग की समस्त वस्तुएँ यहाँ तक कि दातौन भी कब्र पर रख देते हैं ।

चीन में कुछ समय पूर्व यह प्रथा थी कि जब कोई व्यक्ति मरता था तो परिवार का मुखिया मृतक की कमीज लेकर घर की छत पर खड़ा हो जाता था और उत्तर की ओर मुँह करके तीन बार झाड़ता था । इसके बाद उस वस्त्र को मृतक के ऊपर डाल दिया जाता था जो कि तीन दिनों तक पड़ा रहता था । लोगों का विश्वास होता था कि यदि रूह को शरीर से प्यार होगा, उसकी आवश्यकता होगी तो वह तीन दिन में वापस आ जायेगी । प्रतीक्षा के उपरान्त चौथे दिन शव रखने को सुन्दर से सुन्दर ताबूत बनाये जाते थे जिसमें धनी और निर्धन सभी अधिकाधिक धन खर्च करने का प्रयास करते थे ।

जीवन की आकांक्षा सभी को होती है, जन्म दिवस पर खुशियाँ सभी मनाते हैं, परन्तु मैक्सिको में कुछ जन-जातियाँ ऐसी भी हैं जो कि अपनी मृत्यु की कल्पना और कामना बड़े आनन्द से करती हैं । ये लोग मानते हैं कि मृत्यु भी एक नया जीवन है, अतएव मृत्यु दिवस पर भी उसी प्रकार से आमोद-प्रमोद मनाते हैं । जिस प्रकार से हम जन्म दिवस पर मनाते हैं । वहाँ के लोग अपने लिए सुन्दर से सुन्दर शव-पेटी पसन्द करते हैं । शव-यात्रा के समय कौन से गीत गाये जायें, कौन-कौन से पकवान तैयार किये जायें, कब्र पर हर वर्ष होने वाली संगीत गोष्ठियों तथा जलपान-आयोजन में किस-किस को बुलाया जाये इन सबका निर्णय वे खूब सोच-समझ कर करते हैं और वसीयत के रूप में लिखकर रख जाते हैं । अफसोस बस इतना रह जाता है इस राग-रंग में सम्मिलित होने को वह व्यक्ति नहीं रह जाता ।

दक्षिण मोरक्को में 'तेमने' एक आदिवासी जाति है । इसके समुदाय का राजा यह अच्छी प्रकार जानता है कि उसे किस दिन मरना है । इस जाति की प्रथा के अनुसार राजा का अभिषेक बड़ी शान से किया जाता है । अभिषेक वाले दिन उसे समुद्र के किनारे ले जाया जाता है और आँखों पर पट्टी बाँधकर हाथों में अधिक से अधिक कंकड़ भरने को कहा जाता है । बस, इन कंकड़ों की गिनती में ही उसके जीवन के दिन भी गिन लिए जाते हैं । अन्तिम दिन फिर उसी शान-शौकत से समारोह मनाया जाता है । जहर का प्याला पीकर राजा मृत्यु की गोद में सो जाता है ।

कुछ समय पूर्व चीन में यह प्रथा थी कि यदि कोई ऋण नहीं चुकाता था तो महाजन आकर उसके मुख्य द्वार की किवाड़ें उतार कर ले जाता था । इसके पीछे यह विश्वास सन्निहित था कि किवाड़ न रहने से उस घर में बिना किसी बाधा के भूत-प्रेत घुस आयेंगे और घर वालों को परेशान करेंगे । परिणाम यह होता था कि लोग भूतों से डरकर किसी न किसी प्रकार ऋण अवश्य चुका देते थे ।

'सोन्टे' जाति में पुरुष दो विवाह तो कर लेते हैं, परन्तु तृतीय विवाह करने से डरते हैं । वे तीन की संख्या को अत्यन्त अशुभकारक मानते हैं । उनका विश्वास है कि तीसरी शादी करने पर या तो पत्नी मर जायगी या फिर वह स्वयं ही अकाल मृत्यु के गाल में समा जायेंगे । अतएव दो पत्नियों के मरने पर यदि किसी को विवाह करना ही होता है तो तृतीय विवाह किसी कबूतरी से होता है तदुपरान्त चौथी पत्नी के रूप में स्त्री से विवाह किया जाता है ।

उत्तरी काँगो में सुन्दरता का विचित्र मापदण्ड, दाँतों का नुकीला होना है । दाँतों को नुकीला बनाने के लिए लोग दन्त-विशेषज्ञ के पास जाते हैं जो कि किसी तेज औजार से काँट-छाँट कर दाँत नुकीले बनाता है । इस प्रक्रिया में असह्य कष्ट सहने पड़ते हैं ।

बोर्नियो के लोगों की सुन्दरता का पैमाना कुछ और ही है । वे सुन्दर दीखने के लिए अपनी भौहों तथा बरौनियों को उखाड़ डालते हैं । वहाँ चपटी भौहें और चौड़ा माथा सुन्दरता का प्रतीक है । माथे को चौड़ा बनाने के लिए बच्चों के सिर को बड़े कष्टप्रद उपकरणों द्वारा चौड़ा बनाया जाता है । स्त्रियों की सुन्दरता उनके कानों के निचले भाग में बड़े होने पर निर्भर है । अत: वे अपने कानों में लोहे के बड़े-बड़े छल्ले पहने रहती हैं ।

मिश्र में प्रथा है कि प्राय: बालकों के सिर घुटा दिये जाते हैं, परन्तु चोटी की भाँति कुछ बालों का गुच्छा सिर पर छोड़ दिया जाता है । लोगों को विश्वास है कि स्वर्ग जाते समय एक संकरे पुल पर से गुजरना होता है यदि कोई गिर जाये तो देवता चोटी पकड़कर बचा लेते हैं ।

क्या इन प्रथाओं के पीछे कोई औचित्य है ? क्या आज की स्थिति में इनकी कुछ उपयोगिता है, इन पर यदि विचार किया जाय तो यही प्रतीत होगा कि इन निरर्थक अविवेक पूर्ण और असभ्य रीति-रिवाजों की किसी भी दृष्टि से कुछ भी आवश्यकता नहीं है ।

हर वर्ग अपने क्षेत्र में ऐसी ही उपहासास्पद प्रचलित प्रथा परम्पराओं को रोक सकता है । आवश्यकता है कि इन व्यर्थ के मकड़ी के जालों से मुक्ति पाई जाय ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मृतक भोज की क्या आवश्यकता?

वर्तमान समय में मृतात्मा की सद्गति के लिए सात्विक दान-पुण्य के शास्त्रीय विधान के बजाय लोगों में 'मृतकभोज' की ऐसी प्रथा का चलन हो गया है जो प्राचीन या नवीन किसी सिद्धान्त के अनुकूल नहीं है और जिससे मृतक की सद्गति का कुछ भी सम्बन्ध नहीं माना जा सकता । ये मृतकभोज प्राय: बड़ी-बड़ी दावतों के रूप में होते हैं जिनमें एक-एक हजार पाँच-पाँच सौ तक सजातीय व्यक्ति और परिचित इष्ट-मित्र पूरी, मिठाई, पकवान खाने को बुलाये जाते हैं । उस अवसर पर ऐसा जान पड़ता है मानो इस घर में कोई बड़ा हर्षोत्सव है, जिसके उपलक्ष में इतनी बड़ी संख्या में लोगों को खिलाया-पिलाया जा रहा है । भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों में भी ऐसे भोजों का रिवाज कम ही है, परन्तु राजस्थान, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, मालवा और मध्य प्रदेश के उत्तरी भाग में इनका विशेष जोर-शोर देखा जाता है । इस भू-भाग की छोटी, बड़ी सभी जातियों, यहाँ तक कि कई मुसलमान जातियों में भी इसका प्रचलन है ।

वर्तमान समय में भारतवर्ष की आर्थिक स्थिति गिरी हुई है । थोड़े से व्यवसायी लोगों या ऐसे सरकारी नौकरों को छोड़कर, जिनको रिश्वत का अनाप-शनाप रुपया मिलता है, शेष सब लोग अपना निर्वाह कठिनाई के साथ ही करते हैं । खाना, कपड़े, मकान, स्वास्थ्य-रक्षा, शिक्षा, यात्रा आदि की ठीक व्यवस्था कर सकें ऐसे सौभाग्यशाली परिवार सौ में से पच्चीस भी कठिनता से निकलेंगे । शेष लोगों को सदैव किसी न किसी बात का अभाव बना ही रहता है । अनेक लोग अपने बच्चों की शिक्षा का खर्च करने की सामर्थ्य नहीं रखते और कितने ही बीमार होने पर दवादारू के लिए भी तरसते रहते हैं । ऐसे भी करोड़ों व्यक्ति मौजूद हैं जिनको दोनों वक्त भरपेट रोटी नसीब नहीं होती । ऐसी दशा में किसी तरह का अनावश्यक व्यय किसी भी गृहस्थी के व्यक्ति के लिए भार स्वरूप ही सिद्ध होगा ।

हिन्दू-समाज में पहले तो लड़के-लड़कियों के कई प्रकार के संस्कार, विवाह आदि में ही इतना खर्च करना पड़ता है कि उनकी आर्थिक अवस्था निरन्तर कठिन बनी रहती है । इसके सिवाय नाते-रिश्ते के लेन-देन, तरह-तरह की रस्में और नेग-जोगों में भी समय-समय पर कुछ खर्च करते ही रहना पड़ता है । ऐसी दशा में यदि मृतकभोज का भी अनावश्यक भारी व्यय ऊपर लाद लिया जाय तो इसे बुद्धिमानी का चिह्न नहीं समझा जा सकता । इससे हमारी पहले से ही अस्त-व्यस्त आर्थिक दशा और भी शोचनीय हो जायगी । हम जीवन निर्वाह के अत्यावश्यक कार्यों की भी पूर्ति न कर सकेंगे और हमको अपने परिवार सहित भयंकर संकटों का सामना करना पड़ेगा ।

इस प्रकार की गलती समझदार लोग भी क्यों करते हैं ? इसका एकमात्र कारण यही जान पड़ता है कि वे अपना बड़प्पन दिखाने के लिए या अपनी 'नाक ऊँची' रखने के उद्देश्य से ही ऐसा करते हैं । मृतकभोज के मूल में प्राय: यही भावना काम करती है कि जब अन्य लोगों ने अपने बाप-दादे के मरने पर इतना बड़ा भोज दिया तो हमको भी देना चाहिए । यदि हम इसमें कमी करेंगे या इसे बन्द कर देंगे तो हमारी बदनामी होगी या लोग हमें कंजूस या कंगाल समझेंगे । इस प्रकार के विचारों से प्रेरित होकर और दूसरे लोगों द्वारा बढ़ावा दिए जाने पर वे अपनी हैसियत न होने पर भी मृतकभोज या 'नुकते' के नाम पर इतना अधिक खर्च कर डालते हैं जिससे उनकी आर्थिक स्थिति लड़खड़ा जाती है, वे सदा के लिए कर्ज के बोझ से दब जाते हैं और उन्नति करने के बजाय अवनति के मार्ग पर फिसलने लगते हैं ।

अनेक बार इसमें बदले की भावना का भी समावेश हो जाता है और यह विचार आता है कि जब हम दूसरों के यहाँ मृतभोजों में जाकर पूरी-मिठाई खा चुके हैं तो हमको भी उन्हें खिलाना पड़ेगा । आस-पास के इष्ट मित्र, विशेषत: जाति के पंच, चौधरी कहलाने वाले इन चारों को प्रोत्साहन देते हैं और प्राय: दबाव डालकर भी 'नुकता' करा देते हैं । राजस्थान में तो इनकी ऐसी प्रबलता है कि उनके दबाव से लोगों को अपना घर द्वार बेचकर, कर्ज लेकर भी मृतकभोज करना पड़ता है । जिस परिवार में कमाने वाला मुख्य व्यक्ति मर गया है और अपनी विधवा पत्नी और दो-चार छोटे बच्चों को निराश्रित छोड़ गया है, उससे भी ये निष्ठुर लकीर के फकीर मृतकभोज करा लेते हैं । नतीजा यह होता है कि बाद में उस विधवा को अपने बच्चों के सहित दाने-दाने के लिए तरसना पड़ता है और मेहनत-मजदूरी करके किसी तरह जीवन व्यतीत करना पड़ता है । यदि कोई विवशतावश उनके आदेश का पालन नहीं कर सकता तो उसको जाति बहिष्कार का दण्ड देकर अत्यन्त दुर्दशा की जाती है । हिन्दी के प्रसिद्ध दैनिक-पत्र 'विश्व मित्र' के संस्थापक श्री मूलचन्द अग्रवाल की आत्मकथा में हमने पढ़ा है कि उनके पिता कर्ज हो जाने के कारण प्रायश्चित और भोज आदि न करा सके तो उनको जाति बहिष्कृत करके ऐसे कष्ट दिये गए कि उनका स्मरण करके ऐसे क्रूर लोगों के प्रति अत्यन्त घृणा की भावना उत्पन्न होती है । इस प्रकार की प्रथा या परम्परा को अमानुषी ही कहा जा सकता है और उसका जितना शीघ्र अन्त हो सकता है उतना ही अच्छा है ।

जब हम मृतकभोज की प्रथा के मूल स्वरूप और उसकी वास्तविकता पर विचार करते हैं तो यही प्रतीत होता है कि इसकी जड़ में कोई धार्मिक सिद्धान्त या तथ्य नहीं है । हमारे धर्मशास्त्रों में तो आत्मा को अमर माना है । उनका कथन है कि जब हमारा यह दिखाई पड़ने वाला पंच-भौतिक देह नष्ट हो जाता है, तो आत्मा का उसके साथ अन्त नहीं हो जाता, वरन् वह किसी न किसी रूप में कहीं न कहीं स्थित रहती ही है । कई पुराणों में बतलाया गया है कि मृतात्मा दूसरा जन्म ग्रहण करने के पहले कुछ समय परलोक में रहकर अपने भले-बुरे कर्मों का फल भोगती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनमें एक पितृलोक का भी उल्लेख किया गया है जहाँ सभी मृतात्माएँ एक बार जाती हैं । वेदों में भी पितृयान और देवयान मार्गों का जिक्र आया है, यद्यपि उनमें पुराणों की तरह उसका विस्तार नहीं है और न सदैव श्राद्ध आदि कर्म करते रहने का विधान है ।

मरणोत्तर जीवन की वास्तविकता को मालूम कर सकना एक प्रकार से असम्भव है । अन्य धर्म के विद्वानों की बात को छोड़ दीजिए स्वयं हिन्दू धर्म के आचार्यों ने ही उसके सम्बन्ध में जो कुछ कहा है वह एक दूसरे से सर्वथा पृथक् है । जहाँ पौराणिक विद्वान स्थायी पितृलोक की कल्पना करके मृतात्मा के नाम पर सदैव जलदान, पिण्डदान, ब्राह्मण भोजन आदि को आवश्यक बतलाते हैं, वहाँ वेदान्त, सांख्य आदि सिद्धान्तों के अनुयायी आत्मा को इस प्रकार के बन्धनों से सर्वथा अलग मानते हैं और आश्रम-धर्म के अनुसार भी संन्यास ग्रहण करके देह त्याग करने वाले के लिए एकादशी, तेरहवीं, वार्षिक श्राद्ध आदि सब क्रिया-काण्डों को अनावश्यक बतलाया गया है । प्रत्यक्ष देखने में भी आता है कि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, तुलसीदास जी, सूरदास, रामकृष्ण परमहंस, दयानन्द जी, विवेकानन्द, रामतीर्थ, महात्मा गाँधी आदि महापुरुषों का यदि प्रतिवर्ष श्राद्ध नहीं किया जाता, न उनको तर्पण और पिण्डदान आदि किया जाता है तो क्या वे परलोक में दुर्दशा ही भोग रहे होंगे ?

फिर भी हम साधारण श्रेणी के व्यक्तियों के लिए इसको अनुचित नहीं समझते कि वे अपने परिवार के मृत व्यक्तियों के नाम पर शास्त्रों के विधानानुसार कुछ दान-पुण्य करें । एक तो इससे मृतात्मा के सम्बन्धियों को कुछ सान्त्वना प्राप्त होती है कि ऐसा करने से हमारे प्रियजनों को परलोक में सुख-शान्ति की उपलब्धि होगी और दूसरे अधिकांश व्यक्ति जो जीवन भर सांसारिक मायामोह में पड़े रहकर सब प्रकार के उत्तम, मध्यम कार्य करते हैं, उनकी आत्मा इस प्रकार के क्रिया-कलापों से कुछ सहायता भी पा सकती है । इसी दृष्टि से किसी व्यक्ति का देहान्त होने पर वेदमन्त्रों तथा सुगन्धित सामग्री तथा घृत की आहुतियों के साथ उसका अन्त्येष्टि संस्कार करने का नियम है । फिर दस दिन बाद पिण्डदान, तर्पण, श्राद्ध, गृह-शुद्धि आदि की क्रियायें की जाती हैं । इन सब के साथ दीनजनों की सेवा अथवा अन्य लोक हितकारी कार्यों के लिए विश्वस्त संस्थाओं या सत्पात्र व्यक्तियों को दान देना भी प्रशंसनीय माना गया है । इसके लिए वर्तमान समय में जो कुछ भोजन कराना या दान देना होता है, वह सब ब्राह्मणों को ही दिया जाता है, क्योंकि किसी जमाने में वे ही सच्चे समाज सेवी थे और उनका समस्त जीवन लोक-कल्याण के लिए उत्सर्ग होता था । इसलिए मृतात्मा की पवित्र स्मृति में दान का श्रेष्ठ अधिकारी उन्हीं को समझा जाता था, पर अब परिस्थिति के बदल जाने पर भी जो लोग उसी रूढ़ि का पालन करते हैं वे परिश्रम तथा अर्थ व्यय करने पर भी मृतक-श्राद्ध के वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर पाते ।

जो लोग ऐसा सोचते या कहते हैं कि इस प्रकार के मृतकभोज से मृतात्मा को कोई पुण्य फल प्राप्त होता होगा और परलोक में उसे अच्छी गति मिलती होगी वे बड़े भ्रम में हैं । हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने तो स्पष्ट शब्दों में कह दिया है कि "जीव को जो कुछ शुभ या अशुभ परिणाम प्राप्त होता है वह उसके कर्मानुसार ही होता है । जो जैसा भला-बुरा करता है उसका फल उसको अवश्य भोगना पड़ता है ।" कर्मफल का सिद्धान्त अटल और अपरिवर्तनीय है । गीता में अर्जुन ने भगवान् कृष्ण से प्रश्न किया कि क्या जो व्यक्ति साधना करते-करते बाद में उससे च्युत हो जाता है उसका सब परिश्रम और प्रयत्न व्यर्थ चला जाता है ? इसका उत्तर देते हुए कृष्ण जी ने कहा—

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥

(गीता—६/४०)

अर्थात्—"हे अर्जुन किसी भी मनुष्य का कोई शुभ कर्म कभी नष्ट नहीं होता और इसलिए ऐसी साधना वाला इस लोक और परलोक में अपने कर्म के परिणाम के अनुसार अच्छी गति पाता ही है ।"

आगे चलकर अशुभ कर्मों के फलस्वरूप परलोक में दुर्गति होने का वर्णन भी स्पष्ट शब्दों में किया गया है ।

अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः ।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥
तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान् ।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥
आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि ।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥

(गीता—१६/२०)

अर्थात्—"जो व्यक्ति अहंकार, बल, घमण्ड, लोभ और क्रोध आदि के वशीभूत होकर दूसरों से द्वेष करते हैं, उनकी निन्दा करते हैं वे पापी होते हैं । मैं उनको संसार में बारम्बार शूकर-कूकर की अधम योनियों में ही गिराता हूँ । ऐसे कुकर्मी व्यक्ति जन्म-जन्म में आसुरी योनियों में पड़कर मुझ भगवान से दूर होते जाते हैं और घोर नरकों में पड़कर कष्ट भोगते हैं ।"

इस कर्म सिद्धान्त के अनुसार मृतात्मा को परलोक में जो सुख या दुःख प्राप्त होता है वह मुख्यतः जीवित अवस्था में किये गये शुभ और अशुभ कर्मों के अनुसार ही होता है । जिनका जीवन छल, कपट, निन्दा, कुत्सा, ठगी, जालसाजी करते बीता है उनके लिए यह आशा करना कि बहुत-सा क्रियाकर्म या विशाल मृतकभोज करने से उनके पाप मिट जायेंगे और वे परलोक में अच्छी गति के अधिकारी बन सकेंगे, स्वयं अपने को धोखा देना है । भगवान् कृष्ण ने कहीं पर यह नहीं कहा है कि भोजन भट्ट ब्राह्मणों अथवा जाति बिरादरी वालों को खूब लड्डू पूरी खिला देने या मृतक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के नाम पर नशेबाज पंडे-पुरोहितों को बहुत-सा अन्न, वस्त्र, गाय, सोना, चाँदी का दान देने से उसे अच्छी गति मिल जायगी । उन्होंने साफ बतला दिया है कि जो अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष के भावों से अन्य लोगों के साथ बुरा व्यवहार करेगा, उन्हें हानि पहुँचायेगा, उसे बार-बार नीच स्थिति में ही जन्म लेना पड़ता है और अपने पापों का फल भोगना पड़ता है ।

हाँ, इतना सम्भव है कि यदि शुद्ध भाव से इस अवसर पर मरते हुए और मरणोत्तर संस्कार के अवसर पर मृतात्मा के नाम पर कुछ लोक कल्याणकारी कार्यों के लिए निःस्वार्थ भाव से दान किया जाय, राष्ट्र की प्रगति के लिए स्कूल, पुस्तकालय, उद्योग-कला विद्यालय आदि की स्थापना की योजना की जाय या जो संस्थाएँ इन कार्यों को सचाई के साथ कर रही हैं उनको सहयोग दिया जाय, तो उससे मृतात्मा को कुछ शान्ति प्राप्त हो सकती है और परलोक में उसके कष्ट और अभावों में कमी हो सकती है । अब भी अनेक विचारशील व्यक्ति अपने पिता, पितामह, माता आदि की मृत्यु होने पर मृतक भोज करने के बजाय उसमें खर्च होने वाला समस्त धन किसी सार्वजनिक हित के कार्य में खर्च कर देते हैं । इस प्रथा का अवलम्बन करने से मृतकभोजों में प्रतिवर्ष खर्च होने वाला दो-चार करोड़ रुपया जनहितकारी कार्यों के लिए प्राप्त हो सकता है और उससे भारत की प्रगति में पर्याप्त सहायता प्राप्त हो सकती है ।

ब्राह्मण और साधुओं को कब दिया जाय?—कुछ लोग इस अवसर पर ब्राह्मण, साधु, संत, भिक्षुक आदि को दान देने पर जोर देते हैं । निःसंदेह प्राचीनकाल में यही प्रथा थी और यह समाज कल्याण की दृष्टि से ही प्रचलित की गई थी । उस समय के ब्राह्मण और साधु पूर्ण-रूपेण स्वार्थत्यागी, अपरिग्रही और लोकसेवक होते थे । वे अपना सारा समय और शक्ति सार्वजनिक हित के कार्यों में ही व्यय किया करते थे और अपने निर्वाह अथवा हानि-लाभ की किंचितमात्र चिन्ता नहीं करते थे । ऐसे निस्पृह लोकसेवकों के भरण-पोषण और जीवन-निर्वाह का भार स्वभावतः समाज और राज्य पर ही रहता था और इसी दृष्टि से उस समय जन्म-मरण विवाह आदि समस्त अवसरों पर ऐसे लोगों को यथाशक्ति दान देने का विधान था । वे दान देने वाले भी अपने उत्तरदायित्व को समझते थे और प्राप्त धन में से अपने लिये कम से कम खर्च करके शेष को परोपकारार्थ ही व्यय कर देते थे । इस प्रकार समाज में सात्विक दान और त्याग की एक स्वस्थ परम्परा प्रचलित होती थी और उसके कारण अनेक असमर्थों तथा किसी आकस्मिक कारणवश विपदग्रस्त हो जाने वालों का निर्वाह बिना माँगे हो जाता था और उन्हें क्षुधा-निवारण के लिए स्वाभिमान को नष्ट नहीं करना पड़ता था ।

पर आज दशा इससे बिल्कुल विपरीत हो गई है । अब न दान लेने वाले सुपात्र मिलते हैं न देने वालों के मन में सात्विक भावना होती है । इस समय इस प्रथा ने एक पेशे का रूप धारण कर लिया है और इस कार्य को करने वाले चाहे जन्म से और नाम के लिए ब्राह्मण हों, पर आचार, व्यवहार की दृष्टि से उनका बहुत कुछ पतन हो गया है । उनमें तरह-तरह के दुर्व्यसन घुस गये हैं, स्वार्थ की मात्रा अत्यधिक बढ़ गई है, नैतिकता और चरित्र गिरे हुए हैं और धन की खातिर वे करने, न करने योग्य सभी कामों के लिये तैयार हो जाते हैं । वे जानते भी नहीं कि आध्यात्मिकता किस चिड़िया का नाम है, जबकि प्राचीनकाल में उनकी सबसे बड़ी विशेषता यही थी । वे संसार को सर्वथा नगण्य और अध्यात्म को ही साररूप मानते थे । इस प्रसंग में हमें महाभारत की वह कथा याद आती है जिसमें एक ब्राह्मण को महाराज युधिष्ठिर ने एक बड़ी धनराशि दान देने को कहा था । वह ब्राह्मण पहले तो दान ग्रहण करने को बिल्कुल तैयार ही नहीं हुआ, फिर जब राजा के बहुत अधिक आग्रह करने पर राजी भी हुआ तो बीच में ही रोने लग गया । उसे रोता देख कर युधिष्ठिर भी रो दिये और तब भगवान कृष्ण भी जो वहाँ उपस्थित थे रो पड़े । इस लीला को देखकर भीमसेन जो शान्ति रक्षार्थ वहाँ निरीक्षण करता हुआ आया था आश्चर्य में पड़ गया और कृष्ण जी से इस रहस्य को समझाने की प्रार्थना करने लगा । उन्होंने कहा "कि यह ब्राह्मण इसलिए रोया कि वह राज-धन को ग्रहण करना आध्यात्मिक लक्ष्य के प्रतिकूल समझता है । युधिष्ठिर इसलिए रोने लगे कि मेरा धन कितना निकृष्ट है जिसे ग्रहण करना ब्राह्मण अधर्म समझता है । मैं इसलिए रो पड़ा कि मैं देख रहा हूँ कि आज तो ब्राह्मणों में धर्म का इतना ध्यान है कि वे सात्विक के सिवाय राजसी दान ग्रहण करना भी बुरा समझते हैं, पर आगे चल कर ऐसा समय आयेगा जब कि राजसी की क्या बात ब्राह्मण तामसी दान के लिए भी दौड़ेंगे और उसके लिए मानापमान का भी कुछ ध्यान न रखेंगे ।"

दान का दुरुपयोग न हो—वर्तमान समय में दान लेने वाले समुदाय का ऐसा पतन हो जाने के कारण मरणोत्तर कर्म में दान की समस्या और भी अधिक विचारणीय हो गई है । हम जिस धन को अपने किसी प्रियजन की आत्मा के कल्याणार्थ दान दे रहे हैं यदि उसका उपयोग नशा करने, सुलफा की दम लगाने, भंग छानने आदि जैसे किसी दुर्व्यसन में हो या उसके द्वारा जुआ खेलने, व्यभिचार करने, ठगी-जालसाजी में भाग लेने जैसी दुष्प्रवृत्तियों की वृद्धि हो, तो हमको कैसा लगेगा ? इसी प्रकार जिन लोगों को भोज दिया जाता है है वे भी मृतात्मा के प्रति किसी प्रकार की सहानुभूति नहीं रखते, वरन् उल्टा उसकी आलोचना करके तरह-तरह की निन्दा की बातें करते हैं । भोजन को खाने के बाद उसमें भी प्रायः त्रुटियाँ ही निकालते हैं । इस प्रकार मृतक श्राद्ध में इन दिनों रुपया व्यय किया जाता है वह अकारथ ही जाता है । उससे न किसी दूसरे की भलाई होती है और न हमारी ही कोई प्रशंसा होती है । मृतात्मा की सद्गति की कल्पना तो ऐसे निरर्थक अपव्यय से की ही किस प्रकार जा सकती है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मृतात्मा के उपलक्ष्य में दान का उचित मार्ग—भौतिक, शरीर से छूटने के बाद मृतात्मा सूक्ष्म शरीर में और सूक्ष्म वातावरण में ही रहती है । परलोक एक अत्यन्त सूक्ष्म तत्व है, जिसमें आत्मा का आवागमन प्रकाश की किरणों द्वारा ही होता रहता है । ऐसे अत्यन्त सूक्ष्म तत्व में अगर कोई चीज प्रभाव डाल सकती है तो वह आध्यात्मिक भावना और तदनुकूल कार्य-कलाप ही हो सकते हैं । मरणोत्तर कृत्य में ऐसी भावना तभी उत्पन्न हो सकती है, जबकि उसके कराने वाले पूर्ण सात्विकवृत्ति के सदाचारी और समस्त नीच विचारों से परे रहने वाले हों, पर ऐसे व्यक्तियों का इस समय अभाव ही दिखाई पड़ता है । प्रथम तो उच्च मनोभूमि के व्यक्ति इस क्षेत्र में आते ही नहीं और अगर कोई आ भी गया तो उनकी संख्या इतनी नगण्य है और उनकी पहचान इतनी कठिन है कि सामान्यत: उनका प्राप्त हो सकना असम्भव-सा है । इसलिए हमारा कर्त्तव्य है कि अब हम समयानुसार अपनी रीति-नीतियों में परिवर्तन करें और उनको उपयोगी तथा सार्थक बनाने की चेष्टा करें । दान का मुख्य उद्देश्य यही है कि उसके द्वारा अधिक से अधिक व्यक्तियों का अधिकतम हित हो सके ।

अब यह कार्य व्यक्तियों के बजाय सार्वजनिक संस्थाओं के जिम्मे आ गया है । यों इन संस्थाओं में भी दो एक व्यक्ति ही प्रमुख कार्यकर्त्ता होते हैं, तो भी उनका संगठन इस प्रकार किया जाता है कि उनके कार्यों पर सभी लोगों की निगाह रहती है और जब वे कोई अनियमित कार्रवायी करती हैं तो लोग उनकी आलोचना और नुक्ताचीनी करने लगते हैं । इससे उनको चन्दा या दान के रूप में प्राप्त धन का उपयोग करने में सावधान रहना पड़ता है । अगर कोई बेईमानी कर भी लेता है तो वह दो-एक बार ही ऐसा कर सकता है, क्योंकि भेद के खुलते ही उसकी बदनामी हो जाती है और उसे अपने स्थान से राजी से या दवाब से हटना पड़ता है । जो संस्थाएँ प्राप्त धन का उपयोग ईमानदारी से नहीं कर सकतीं वे शीघ्र ही बदनाम भी हो जाती हैं और फिर लोग उनका भरोसा नहीं करते । इसलिए संस्थाओं के लिए ईमानदारी ही ऐसा गुण है जिससे उनकी निरन्तर वृद्धि होती रहती है और लोग उन पर विश्वास करके सार्वजनिक कार्यों के लिए उचित सहायता देते रहते हैं ।

मरणोत्तर क्रिया की शास्त्रीय विधि—मरणोत्तर कृत्य के लिए धर्मशास्त्र के निर्देशानुसार तर्पण, पिण्ड, बलि आदि का संक्षिप्त कार्यक्रम पूर्ण करना ही अधिक सुविधाजनक है । किसी विद्वान और सदाचारी व्यक्ति द्वारा कर्मकाण्ड का सविधि पूरा करा सकना न तो बहुत बड़ी उलझन का काम है न विशेष खर्च करना । अपनी परिस्थिति के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति उसे दस-बीस रुपये में निबटा सकता है । इसके पश्चात् बारहवें या तेरहवें दिन श्राद्ध के रूप में दो-चार ब्राह्मणों को विधानानुसार सादा भोजन करा सकते हैं । बस, अन्त्येष्टि और मरणोत्तर क्रिया के रूप में इतना कार्यक्रम पर्याप्त है जिससे शास्त्र का निर्देश पूरा हो जाता है और जिसका छोटे-बड़े प्राय: सभी व्यक्ति अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार पालन भी करा सकते हैं । इसी अवसर पर मृतात्मा के उपलक्ष्य में परोपकारी और सार्वजनिक हित के कार्य सम्पादन करने वाली संस्थाओं को श्रद्धापूर्ण वातावरण में दान दिया जाय । यह दान अपनी शक्ति और स्थिति के अनुसार कम या ज्यादा हो सकता है, पर इसमें किसी का व्यक्तिगत स्वार्थ न होने से देने वालों के ऊपर कोई ऐसा दबाव नहीं पड़ता जिससे विवश होकर उसे शक्ति से बाहर खर्च करने को विवश होना पड़े और उसके कारण आगामी जीवन में घोर कष्ट सहन करना पड़े । यही वर्तमान समय में प्रचलित मृतकभोज और ऊपर प्रस्तावित दान प्रणाली में एक बहुत बड़ा अन्तर है । जो लोग आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं वे अधिक परिमाण में दान देकर मृतक के नाम पर कोई स्वतंत्र परोपकारी कार्य, छोटा या बड़ा स्कूल, पुस्तकालय आदि की स्थापना कर सकते हैं । जहाँ आवश्यकता हो वहाँ धर्मशाला, जलशाला (प्याऊ) आदि की व्यवस्था भी की जा सकती है । तात्पर्य यही है कि मनुष्य श्रद्धा और सामर्थ के अनुसार उतना ही व्यय करे जिससे भविष्य में उसे किसी प्रकार परेशानी न उठानी पड़े और साथ ही कर्त्तव्य का उचित पालन भी हो जाय । लालच या उपेक्षावश सामर्थ और सुविधा होते हुए भी ऐसे अवसर पर दान-पुण्य की तरफ से बिलकुल हाथ खींच लेना भी अनुचित है और उससे स्वार्थपरता, संकीर्णता और मृतात्मा के प्रति उपेक्षा भाव प्रकट होता है ।

बड़प्पन की भावना वाले—एक श्रेणी उन मनुष्यों की भी होती है जो बड़े-बड़े मृतकभोज बड़प्पन की भावना से करते हैं । जब वे देखते हैं कि बिरादरी में अमुक व्यक्ति ने अपने मृत पिता या अन्य सम्बन्धी का भोज इतना खर्च करके किया जिससे उसकी बड़ी नामवरी हुई, तो वे सोचते हैं कि हम भी उन्हीं के मुकाबले का या उनसे भी बढ़कर भोज दें जिससे लोग हमको बड़ा समझें और आदर सम्मान करें । ऐसे लोग बड़ी छिछोरी बुद्धि के होते हैं, उनको यह ज्ञान नहीं होता कि संसार में स्थायी बड़प्पन कैसे मिल सकता है ? जो अपव्यय का उपाय वे सोचते हैं उससे तो एक-दो दिन चर्चा या वाहवाही हो जाती है । इन वाहवाही करने वालों में भी अधिकांश ऐसे होते हैं जो मुँह पर तो बड़ाई, पर पीछे बुराई और हँसी करते हैं । परिणाम यह होता है कि ऐसे बड़प्पन के शौकीन अपना धन भी बर्बाद करते हैं और जब इसके फल से उनकी स्थिति बिगड़ जाती है तो वे दूसरों के हँसी के पात्र बन जाते हैं । उस समय भोज की प्रेरणा देने वाले और बड़प्पन का सब्जबाग दिखाने वालों की सूरत दिखाई नहीं देती ।

जब लोगों में अविद्या और मूढ़ता का अन्धकार अधिक फैला था तब तो लोग ऐसे दिखाऊ कामों की तारीफ भी करते थे, पर अब वह जमाना बदल गया है । अब साधारण जनता भी प्रत्येक काम को उपयोगिता और लोकहित की कसौटी पर कसकर देखती है । पैसा बड़े परिश्रम और संयमित व्यवहार से ही एकत्रित हो पाता है, अतएव उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयोग ऐसे कार्यों में ही होना चाहिए, जिससे हमारा शारीरिक, मानसिक, आत्मिक कल्याण हो सके । उसे क्षणिक वाहवाही या झूठी शान-शौकत के कार्यों में उड़ा देना कदापि बुद्धिमानी का काम नहीं कहा जा सकता । वर्तमान समय में प्रचलित मृतकभोज की प्रथा ऐसे ही कामों में समझी जा सकती है, क्योंकि उससे किसी का हित तो होता नहीं, उल्टा अन्य लोगों के सामने एक गलत उदाहरण पेश होता है और वे समर्थ न होते हुए भी इतना खर्च कर बैठते हैं जिससे उनको जन्मभर दु:ख उठाना और पछताना पड़ता है । इसलिए जो लोग नामवरी या बड़प्पन की खातिर बड़े-बड़े मृतकभोज करते हैं वे अपनी ही बर्बादी नहीं करते, वरन् दूसरों की दुर्दशा के भी कारण बनते हैं ।

मरणोत्तर क्रियाकर्म में अपव्यय—मृतकभोज की तरह अनेक लोग मृतक के क्रियाकर्म में भी बहुत अधिक व्यय करते हैं । उनके नाम पर बर्तन, कपड़े, बिस्तर, चारपाई आदि दान देते हैं । बहुत बड़े धनवान और राजाओं को तो घोड़ा, हाथी, गाड़ी आदि का भी दान करते देखा गया है । पुराने जमाने में मिस्र के निवासी भी अन्ध-विश्वास के कारण बादशाहों के मरने पर उनके साथ सब प्रकार की जीवनोपयोगी सामग्रियाँ, जो बहुत ऊँचे दर्जे की सुवर्ण आदि कीमती धातुओं से बनी होती थीं और जिनकी लागत करोड़ों रुपये होती थी, उनकी समाधि के भीतर रख देते थे । इस प्रथा का पालन करने वाले लोगों का विश्वास होता था कि परलोक भी इस लोक की तरह ही है और वहाँ भी मनुष्यों को खाने-पीने, पहनने, सोने के लिये सब चीजों की आवश्यकता होती है, पर अब लोगों को मालूम हो गया कि परलोक अत्यन्त सूक्ष्म तत्व से निर्मित है और वहाँ मनोभावनाओं के अतिरिक्त किसी स्थूल पदार्थ का प्रवेश नहीं है । अतएव किसी पुरोहित को वस्त्र, बर्तन, बिस्तर, हाथी, घोड़ा आदि देकर यह ख्याल करना कि इसके फल से मृतात्मा को ये वस्तुएँ प्राप्त हो सकेंगी हद दर्जे का भोलापन है । इस प्रकार की प्रथाएँ मध्यकाल में कुछ स्वार्थी और लालची पुरोहितों ने सीधे-सादे व्यक्तियों को बहकाकर प्रचलित करा दी थीं उन्हीं का बचा-खुचा प्रभाव अभी तक अशिक्षित अथवा रूढ़िवादी लोगों में चला जाता है पर इस समय शिक्षा और विज्ञान के प्रकाश में आत्मा और परलोक के सम्बन्ध में हम जितने वास्तविक तथ्यों की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं, उन्हें देखते हुए इस लकीर को पीटते रहना निरर्थक है ।

मरणोत्तर क्रियाकर्म का रूप, जैसा हम ऊपर बतला चुके हैं, बहुत सादा होना चाहिए । उसमें बजाय खाने-पीने, पहनने, ओढ़ने की बहुत अधिक सामग्री के बजाय आन्तरिक श्रद्धा भावना की विशेषता होनी चाहिए । शास्त्र में उस समय जिस हवन, ईश्वर प्रार्थना, श्रद्धांजलि अर्पण करने का विधान बतलाया गया है उतना ही कृत्य खूब शान्ति और मनोयोग पूर्वक करना चाहिए । एकाग्रचित से किए हुए कर्मकाण्ड ही वास्तव में परलोक में कुछ प्रभावशाली हो सकते हैं । केवल जोर-जोर से शुद्ध-अशुद्ध मन्त्रों का उच्चारण करते रहना और अपना ध्यान वेदी पर रखी जाने वाली दक्षिणा के पैसों पर लगाये रखने से मृतात्मा की कोई भलाई नहीं हो सकती ।

मृतक के लिए शोक करने का गलत तरीका—किसी की मृत्यु होने के अवसर पर हिन्दू घरों में जिस प्रकार शोक मनाया जाता है वह भी एक गलत और हानिकारक ढंग है । ज्ञानीजनों का तो कथन है कि यह मानव-जीवन ईश्वर की एक धरोहर की तरह है, इसलिए जब कभी वह इसे वापस ले ले उसमें किसी प्रकार का शोक या खेद करने की आवश्यकता नहीं । यह ठीक है कि इस प्रकार का मोह माया शून्य मनोभाव रख सकना साधारण संसारी मनुष्यों के वश से बाहर की बात है । फिर भी मृत्यु पर बहुत अधिक रोना-पीटना और माथा, छाती कूटना कोई प्रशंसनीय कार्य नहीं है । लोग समझते हैं कि ऐसा करने से मृतक के प्रति हमारा प्रेम प्रकट होता है, पर अन्य दर्शकों को इसमें दिखावे का भाव ही जान पड़ता है । प्राय: देखा जाता है कि यदि किसी को अत्यन्त निकट आत्मीय के मरने से वास्तव में बड़ा धक्का लगता है, तो उस समय उससे अधिक रोया भी नहीं जाता, वरन् मन का शोकोद्गार भीतर ही रह जाता है ।

दूसरी वर्जनीय बात यह है कि जो लोग किसी आत्मीय के प्राण निकलते समय वहीं पर बहुत अधिक रोना-पीटना करते हैं वे परलोक यात्रा करने वाले व्यक्ति के मार्ग में बाधक बनते हैं । उस समय उस व्यक्ति की आत्मा इस लोक को छोड़ते हुए अपने जीवन भर के कर्मों का लेखा-जोखा करती है और आगामी जीवन की सम्भावनाओं पर भी विचार करती है । ऐसे समय में यदि उसके निकट ही रोना-पीटना करके उसकी शान्ति को भंग किया जायगा तो इससे अवश्य ही उसकी यात्रा में बाधा पड़ेगी और उसका भविष्य बिगड़ेगा । इस अवसर पर तो हमको पूर्ण शान्त रहकर धर्म-ग्रन्थों आदि का पाठ करके उसके शान्तिपूर्वक प्रयाण कर सकने का वातावरण उत्पन्न करना चाहिए, जिससे वह आशा और विश्वास के साथ नये जीवन में प्रविष्ट हो और तदनुसार उत्तम फल प्राप्त कर सके ।

यह भी एक स्मरणीय विषय है कि अधिकांश मनुष्यों को अपने परिवार, धन-सम्पत्ति, इष्टमित्रों से जरूरत से ज्यादा मोह रहता है और मरते समय वे उनके वियोग में व्याकुलता का अनुभव करते हैं । ऐसे अवसर पर यदि उनके सम्बन्ध में अधिक रोना-धोना करते हैं तो उनका मोह का भाव और अधिक भड़कता है तथा वे उन सबको छोड़ने में और अधिक व्याकुलता का अनुभव करते हैं । इसके फलस्वरूप उनकी आत्मा शीघ्र अपने लक्ष्य की तरफ अग्रसर नहीं हो पाती, वरन् अपने घर तथा परिवार के मोह बन्धन में जकड़ी हुई वहीं आसपास बनी रहती है । यह भी एक अनुचित और हानिकारक बात है । आत्मा को तो अन्त में अपने निर्दिष्ट स्थल पर जाना ही होगा और उसका पृथ्वी पर मौजूद अपने सम्बन्धियों से सम्बन्ध टूटेगा ही, पर इस समय इस प्रकार मोह का बन्धन दृढ़ होने से आत्मा उच्च गति में जाने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बजाय बहुत समय तक निम्नगति में ही बनी रहती है और उसकी सद्गति होने में बड़ी बाधा उपस्थित हो जाती है ।

वैसे भी आजकल अनेक जातियों में किसी के देहान्त होने के पश्चात जो रोना-पीटना या स्यापा कई दिन तक किया जाता है, वह किसी दृष्टि से युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता । उसमें प्राय: ऐसी स्त्रियाँ मृत व्यक्ति के लिए घण्टों तक रुदन करती हैं जिनको उससे न तो मोह होता है न किसी प्रकार का सम्बन्ध होता है । ये स्त्रियाँ इस प्रकार छाती पीट-पीटकर रोती हैं कि उससे उनके स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर पड़ता है । कभी-कभी तो जाति में अधिक मृत्यु हो जाने पर उनको दिन में एक से अधिक बार भी यह कृत्य करना पड़ता है । यद्यपि यह शोक प्रदर्शन बिल्कुल दिखावटी होता है, क्योंकि मृतक के घर से निकलने के बाद ही माना जा सकता है ।

मृतक के परिवार की सहायता करें—यदि इस समस्या पर सामाजिक हित की दृष्टि से गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय तो अधिक सही तरीका यह जान पड़ता है कि लोग ऐसे अवसर पर अधिक शोक और सहानुभूति का भाव प्रकट करने के बजाय मृतक के परिवार को सब तरह से धैर्य बँधावें और उसकी सहायता करने को तत्पर हों । वास्तव में किसी समय जातियों का संगठन इस उद्देश्य से भी किया गया था कि हर्ष-विषाद् और कठिनाइयों के अवसर पर जाति वाले एक दूसरे को सहयोग देकर परिस्थिति को सुधारने का प्रयत्न करें । कितने ही परिवारों में जब कमाने वाले एकाकी व्यक्ति की कुसमय में मृत्यु हो जाती है तो वास्तव में उसके आश्रित व्यक्तियों के सम्मुख अन्धकार छा जाता है, कि जीवन निर्वाह कैसे होगा ? ऐसे अवसर पर जाति के पंच-चौधरी या मुखिया कहलाने वाले किसी भी रूप में उस विपत्ति-ग्रस्त परिवार की सहायता को आगे बढ़ें और उसके बचे हुए साधनों तथा जातीय सहायता द्वारा ऐसी व्यवस्था करें जिससे उनका जीवन निर्वाह सम्भव हो जाय तो यह एक नि:स्सन्देह प्रशंसनीय बात समझी जायगी । ऐसा होने से विभिन्न जातियों का अस्तित्व कुछ अंशों में सार्थक माना जा सकता है ।

यदि विभिन्न जातियों के मुखिया इस प्रकार का शुभ संकल्प करके एक जातीय फण्ड की स्थापना करें और सामर्थ्यवान व्यक्ति मृतकभोज के लिए खर्च होने वाले धन को उस फण्ड में दान स्वरूप जमा करके उसको पुष्ट करें तो नि:स्सन्देह यह एक लाभकारी कार्य माना जा सकता है । इस धन के द्वारा जाति के असहाय और असमर्थ व्यक्तियों की अनेक प्रकार से सहायता की जा सकती है । आकस्मिक घटनाओं के समय आपत्तिग्रस्त जातीय सदस्यों को सहायता पहुँचाना तो इससे सम्भव ही होगा, साथ ही शिक्षा, व्यवस्था, बीमारी आदि के लिए विशेष कार्यक्रमों की भी पूर्ति की जा सकती है । अब भी पारसी जाति के दूरदर्शी व्यक्तियों ने अपने समाज में इस प्रकार के फण्ड की स्थापना कर रखी है और उसके द्वारा वे जातीय कल्याण की अनेकों उपयोगी प्रवृत्तियों का संचालन करते रहते हैं । इस सुव्यवस्था के परिणामस्वरूप किसी पारसी को कभी आकस्मिक आपत्ति या गरीबी के कारण दर-दर का भिखारी नहीं बनना पड़ता । अवसर पड़ने पर वह हर प्रकार की विपत्ति से छुटकारा पाने के लिए अपनी जातीय निधि से सहायता प्राप्त कर सकता है और कुछ समय में पुन: अपने पैरों पर खड़ा होकर अपनी स्थिति को सुधारने में समर्थ हो जाता है ।

और भी कई जातियों में ऐसी प्रथा प्रचलित की गई है कि जिस व्यक्ति के कोई पुत्र या निकट उत्तराधिकारी न हो, वह अपने घर में अकेला ही हो, तो वह जीवितावस्था में ही लिखा-पढ़ी करके अपनी स्थावर तथा जंगम सम्पत्ति को पंचायती मन्दिर को दान कर जाते हैं इस प्रकार से कालान्तर में मन्दिरों के पास काफी जायदाद और सम्पत्ति एकत्रित हो जाती है जिससे वे अनेक समाज हितकारी कार्य कर सकते हैं । यह सच है कि वर्तमान समय में ऐसे मन्दिर अपना कार्यक्रम प्राय: धार्मिक क्षेत्र तक ही सीमित रखते हैं, पर यदि हम धर्म की व्यवस्था को विस्तृत रूप दे दें और जिस प्रकार कुछ धार्मिक संस्थाएँ शिक्षा, चिकित्सा, उद्योग आदि के सम्बन्ध में उल्लेखनीय कार्य कर रही हैं, उसी का अनुकरण करने लगें तो कुछ ही समय में समाज की काया-पलट हो सकती है । अब समय आ गया है कि हम अपने धन को बिना सोचे-समझे व्यर्थ के दिखावे या मूढ़तापूर्ण रस्मों की पूर्ति में खर्च करने के बजाय ऐसे तरीके से खर्च करें जिससे उसके द्वारा देश और जाति का अधिक-से-अधिक हित हो सके और अभावग्रस्त लोगों की अपनी स्थिति के सुधारने में किसी प्रकार की सहायता प्राप्त हो सके ।

यदि हम एक मृतक भोज का औसत व्यय पाँच सौ रुपया भी मान लें और इस नब्बे करोड़ की आबादी वाले देश में प्रति वर्ष पचास लाख मृत व्यक्तियों के लिए भी ऐसे भोज दिए जाते हों, तो यह रकम कई अरब तक पहुँच जाती है । इतनी बड़ी धनराशि को यदि उचित व्यवस्था के साथ एकत्रित करके देश हित के कार्यों में लगाया जाय तो उससे कुछ ही समय में हमारे सैकड़ों अभावों की पूर्ति हो सकती है और भारतीय समाज की वर्तमान अवस्था में जमीन-आसमान का अन्तर पड़ सकता है । इस धन से यदि शिक्षा संस्थाओं का विस्तार ही किया जाय तो कम से कम एक लाख नये स्कूल चलाये जा सकते हैं जिनमें दो-तीन करोड़ विद्यार्थी प्रतिवर्ष शिक्षा पा सकते हैं । यदि पुस्तकालय, प्रौढ़ पाठशालाएँ, व्यायाम शालाएँ आदि की स्थापना की जाये तो भी देश भर में इनका जाल फैल सकता है और करोड़ों व्यक्तियों को बौद्धिक तथा शारीरिक उन्नति कर सकने के साधन प्राप्त हो सकते हैं । यदि इसका उपयोग किसी प्रकार के उद्योग-धन्धे के विस्तार करने में किया जाय तो कितनी ही आवश्यक वस्तुओं का निर्माण होने लग सकता है और लाखों व्यक्तियों को रोजगार मिल सकता है । भारतवर्ष में अब भी करोड़ों लोगों का स्तर इतना नीचा और आर्थिक हीनता का है कि उनकी इच्छा करने पर भी जीवन में आगे बढ़ने का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अवसर नहीं मिलता । यदि हम मृतकभोजों में प्रतिवर्ष खर्च हो जाने वाली अरबों रुपये की रकम का सदुपयोग करने लग जायें तो अनेक ऐसे कार्यों का श्रीगणेश हो सकता है जिनमें लाखों व्यक्तियों को काम करने का अवसर मिल सकता है और वे अपने विकास तथा उन्नति के साधन पाकर जीवन को सार्थक बना सकते हैं ।

जब हम संसार के अन्य देशों की सामाजिक प्रथाओं से अपनी प्रथाओं की तुलना करते हैं तो स्पष्ट प्रकट होता है कि हमारे यहाँ साधारण संस्कारों में भी उनकी अपेक्षा बहुत अधिक खर्च किया जाता है और वह भी बड़े निरुपयोगी ढंग से । इंग्लैण्ड, अमरीका आदि के व्यक्ति भी मरणोपरान्त बड़ी-बड़ी रकमें खर्च करते हैं, पर उनका उद्देश्य चन्द लोगों को पूरी मिठाई खिलाना नहीं होता, वरन् वे उसका उपयोग प्राय: समाज हितकारी कार्यों के लिए ही करते हैं । वहाँ पर मृत्यु के अवसर पर दिये गए दान द्वारा हजारों बड़े-बड़े अस्पताल चल रहे हैं, जिनसे करोड़ों व्यक्तियों को कष्ट के समय सहायता प्राप्त होती है । हजारों स्कूलों को भी ऐसी सहायता दी जाती है और उसके द्वारा वे निरक्षरता तथा अविद्या के उन्मूलन में उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं । एक धनी व्यक्ति की स्मृति में बहुत बड़ी धनराशि लगाकर दस हजार कृत्रिम फेफड़े बनवाये गये जो संसार के किसी भी भाग में फेफड़े के मरीजों को उधार दिये जाते हैं । इनकी सहायता से ऐसे व्यक्ति जिनकी मृत्यु श्वास सम्बन्धी रोग से एक-दो महीने में ही हो जाती कई-कई वर्ष तक जीवित रहकर अपना कारोबार नियमित रूप में करने में समर्थ हो जाते हैं । उनकी मृत्यु के उपरान्त वे फेफड़े मूल संस्था को लौटा दिये जाते हैं और तब वे किसी अन्य मरीज की प्राण-रक्षा के लिए प्रयुक्त होते ।

इसी प्रकार एक अन्य उद्योगपति की स्मृति के उपलक्ष्य में एक ऐसी निधि स्थापित की गई है जिससे विभिन्न देशों के कई हजार चुने हुए होनहार विद्यार्थियों को प्रतिवर्ष बड़ी-बड़ी छात्रवृत्तियाँ दी जाती हैं, जिनकी सहायता से वे अमरीका जाकर किसी विशेष कला, विज्ञान या कारीगरी की शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं । इस पवित्र दान के फलस्वरूप भारतवर्ष के भी सैकड़ों विद्यार्थी, जो सामान्य स्थिति के थे लाभान्वित हो चुके हैं और अमेरिका में इंजीनियरी, विद्युत यंत्र-विज्ञान या किसी अन्य उपयोगी विषय की शिक्षा प्राप्त करके बड़े-बड़े पदों पर कार्य करने में समर्थ हो गये हैं । कुछ लोगों ने अपना नाम कायम रखने के लिए ऐसी संस्थाएँ कायम करा दी हैं जिनके द्वारा बेकार लोगों की सहायता की जाती है और उनको सदा के लिए भिखारी अथवा पराश्रित बनने से बचाकर सामयिक सहायता प्रदान की जाती है और उनके लिए कुछ ही महीनों में कोई काम ढूँढ़कर फिर से समाज का उपयोगी सदस्य बना लिया जाता है । उन देशों में ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है जिन्होंने अपनी स्मृति के लिए लाखों-करोड़ों रुपये दान करके व्यायाम शालाएँ, स्वास्थ्यप्रद खेल, शक्ति और साहस सम्बन्धी प्रतियोगिताएँ, पर्वतों के अभियान, अगम्य प्रदेशों का अन्वेषण जैसे मानव सभ्यता को अग्रगामी बनाने वाली प्रवृत्तियों को बढ़ाने की व्यवस्था की है । हम सदैव जो अनेक साहसी विदेशी व्यक्तियों के ज्ञानवर्द्धक अन्वेषणों, पर्यटकों के साहसपूर्ण अभियानों की कथाएँ पढ़ते रहते हैं वे सब ऐसे ही देश-काल के अनुकूल मरणोत्तर क्रिया करने वाले विवेकशील व्यक्तियों की करनी का परिणाम होता है ।

इसके मुकाबले में एक हम हैं जो अपने किसी सम्माननीय व्यक्ति की मृत्यु होने पर दो-चार सौ अथवा हजार-पाँच सौ व्यक्तियों का पकवान या खीर-पुआ की दावत देकर धन और अन्न की बर्बादी करते हैं । इस तरह की दावतों में कई-कई सौ मन अन्न एक दिन में खर्च हो जाता है और उस समय खाने वालों की जो भावना होती है, उससे उसका अधिकांश नष्ट ही होता है । भोज के अतिरिक्त जिनके पास अधिक साधन हुए तो वे किसी पण्डा, पुजारी, पाधा, महाब्राह्मण को दो-चार हजार या इससे भी अधिक की सामग्री दान कर देते हैं जिसमें से अधिकांश उसके किसी काम नहीं आती और औने-पौने दामों में बेचकर ठिकाने लगानी पड़ती है । हमने एक बड़े तीर्थ में अवध के एक राजा को देखा जो अपनी मरणोत्तर क्रिया स्वयं ही करने के एक रूप में एक पंडा को भोजन-सामग्री, कपड़े और बर्तनों से लेकर हाथी घोड़े तक दान दे रहा था । कहा गया कि वह समस्त सामग्री सवा लाख रुपये के करीब मूल्य की है और वह राजा १५-१६ तीर्थों में ऐसा ही दान कर चुका है या करने का संकल्प कर चुका है । जिस वंशगत पंडे को वह दान दिया गया वह बहुत साधारण स्थिति का था, उसके छोटे से खपरैल के मकान में न घोड़े को जगह थी, न हाथी को और न उसमें पालकी और घोड़ा गाड़ी ही रखी जा सकती थी । अन्त में वह कुछ समय में धीरे-धीरे सब चीजों को बेचकर खा गया और दो-चार वर्ष में उस रकम को बर्बाद करके फिर जैसा का तैसा गंगा किनारे हाथ फैलाकर माँगने और खाने वाला बन गया ।

जो लोग इस प्रकार दस-पाँच घण्टे का दिखावा करने की मूर्खता से आगे बढ़कर कुछ अधिक बुद्धिमानी का परिचय देते हैं, वे इस प्रकार की रकम को किसी मन्दिर आदि के रूप में परिवर्तित कर देते हैं और उसके नाम कोई ऐसी स्थायी जायदाद कर देते हैं जिससे नियमित आमदनी होती रहे, पर यह धन भी प्राय: मन्दिरों की पूजा, भोग, उत्सव, नाच-गान आदि में खर्च किया जाता है । उससे किसी व्यक्ति या समाज का उपकार होने के बजाय कुछ लोगों का जीवन निकम्मा ही बनता है । जिन्होंने ऐसे मन्दिरों में रहने वाले कर्मचारियों की दिनचर्या को देखा है और उनकी हीनता प्रकट करने वाले वार्त्तालाप को सुना है, वे स्पष्ट: यही अनुभव करते हैं कि वर्तमान समय में यह मन्दिर रूपी संस्था लोगों का उत्थान करने के बजाय उसके अध:पतन का ही कारण बन गई है और उसके फलस्वरूप समाज में अनैतिक और हानिकारक प्रवृत्तियों की ही वृद्धि होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसमें सन्देह नहीं कि यह मन्दिर रूपी संस्था बड़ी उपयोगी थी और हमारी समस्त सामाजिक हलचलों और कार्यक्रमों का केन्द्र उन्हीं को माना जाता था । प्रत्येक मन्दिर के एकाध पाठशाला होती थी जिसमें छोटे-बड़े विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर सकते थे । बर्मा में तो अब भी प्रत्येक बौद्ध मन्दिर में रहने वाला भिक्षु अपने अवकाश के समय को गाँव के बालकों को पढ़ाने में ही लगाया करता है, जिसका परिणाम यह है कि उस देश के ग्रामीणों में भी निरक्षरों की संख्या नाम मात्र को है । मंदिरों में प्रात: और सायंकाल शास्त्रों का स्वाध्याय या कथा प्रवचन आदि होते थे जिनको बहुसंख्यक व्यक्ति श्रवण करके अप्रत्यक्ष रूप से धार्मिक और नैतिक शिक्षा प्राप्त करते थे । कितने ही मन्दिरों में दवा-दारू बाँटने का भी इन्तजाम होता था और असमर्थ रोगी उन्हीं के द्वारा आरोग्य लाभ कर लेते थे । मन्दिरों की तरफ़ से जो वार्षिक उत्सव, मेले होते थे अथवा बड़े त्योहारों पर जो सार्वजनिक समारोह किये जाते थे उनमें जगह-जगह के व्यवसायी आकर उद्योग-धन्धों द्वारा प्रस्तुत पदार्थों का क्रय-विक्रय करके देश की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाते थे । साथ ही उन अवसरों पर विभिन्न स्थानों के व्यक्ति परस्पर विचार-विनमय करके सार्वजनिक विषयों के सम्बन्ध में निर्णय करते थे जिससे धर्म और समाज को एकरूपता प्राप्त होती थी । ऐसी उपयोगी और लोक-कल्याणकारी संस्था होने के कारण ही मन्दिरों को उस समय बहुत ऊँचा और सम्मानास्पद स्थान प्राप्त हुआ था । आज भी मन्दिरों को जो जन-साधारण की श्रद्धा तथा सहयोग प्राप्त है, वह उस समय के कार्यों तथा ख्याति का परिणाम है । यदि अब भी हम इन देवस्थानों को पुन: सार्वजनिक हितकारी कार्यों के केन्द्र बना दें तो वे फिर अपने पुराने गौरवशाली स्थान को प्राप्त कर सकते हैं और जनजीवन के उत्थान में महत्त्वपूर्ण भाग ले सकते हैं ।

सारांश यही है कि हम अपनी सामर्थ्य और स्थिति के अनुसार मृत व्यक्ति के प्रति अपनी श्रद्धा अवश्य प्रकट करें, पर उसमें समयानुकूलता और विवेकशीलता का ध्यान रखना न भूलें । कोई भी कार्य क्यों न हो, उसके भले-बुरे होने का निर्णय उसके नतीजे को देखकर ही किया जा सकता है । हम मृतकभोज की वर्तमान प्रणाली का निषेध इसीलिए करते हैं, क्योंकि उसमें कोई सार नहीं है और न किसी का उसके द्वारा वास्तव में हित साधन होता है क्योंकि वर्तमान समय में जातियों का प्राचीन संगठन टूट चुका है, उनमें पेशे, वेश, शिक्षा आदि की एकरूपता नहीं पाई जाती और न वह संगठन तथा सहयोग का भाव शेष है जिसके लिए किसी समय उनका प्रादुर्भाव हुआ था । इसलिए अब जातीय नियमों के नाम पर केवल मृतकभोज जैसी व्यर्थ व्यय कराने वाली और अनेक संकटों को जन्म देने वाली प्रथाओं को जीवित रखना बुद्धिमत्ता का परिचायक नहीं है । उनको समयोचित उपयोगी रूप देना नितान्त आवश्यक है ।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि मृतक-संस्कार एक महत्त्वपूर्ण धार्मिक प्रक्रिया है, जिसमें दिखावट या कृत्रिमता का भाव रहना न तो हमारे लिए और न हमारे दिवंगत स्वजन के लिए लाभदायक हो सकता है । उस अवसर पर हमको पूरी सात्विकता, शुद्धता और सत्यता का परिचय ही देना चाहिए और अपने मन में या कर्म में कोई ऐसा भाव न आने देना चाहिए जिससे मृतात्मा का अनिष्ट हो । वर्तमान समय में जो मृतकभोज किए जाते हैं वे सर्वथा लौकिक दृष्टि से होते हैं और उनमें दिखावा, नामवरी और कभी-कभी किसी प्रच्छन्न स्वार्थ सिद्धि की भावनाएं भी सम्मिलित होती हैं । ऐसे अवसरों पर अनेक बार घर वालों में या सगे सम्बन्धियों में मतभेद भी हो जाते हैं और उनके कारण जो मनोमालिन्य उत्पन्न होता है उससे बहुत समय तक तरह-तरह के कुपरिणाम उत्पन्न होते हैं । ये बातें मृतात्मा के कल्याण की दृष्टि से अनुचित ही होती हैं । इसलिए यदि मृतक-संस्कार को धार्मिक विधि-विधान और यथाशक्ति निस्वार्थ भाव से दान पुण्य तक ही सीमित रखा जाय तो वह प्रशंसनीय माना जायगा ।

यह समय बड़े व्यापक परिवर्तनों का है और संसार के उन्नतिशील देशों के निवासी जल, थल और आकाश में अपना पूरा अधिकार जमाने का प्रयत्न कर रहे हैं । वे प्रकृति की गूढ़ से गूढ़ शक्ति का स्वामित्व प्राप्त करके ऐसे-ऐसे कार्य करके दिखा रहे हैं जो अभी तक असम्भव समझे जाते थे । यदि हम कहें कि इस समय संसार की कायापलट हो रही है और एक नई दुनिया का निर्माण हो रहा है, तो इसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं है । ऐसे समय में मृतकभोज जैसी सामयिक रीति-रिवाजों को, जो पिछले दो-सौ वर्षों के अध:पतन के युग में ही भ्रमवश प्रचलित हो गई हैं, अधिक महत्त्व देना और परिस्थिति के पूर्णत: बदल जाने पर भी उससे चिपटे रहने का प्रयत्न करना हमारी बुद्धिहीनता का ही प्रमाण है । इस समय जब कि देश में अन्न का अभाव निरन्तर बढ़ता जा रहा है और लोगों को भूखों मरने से बचाने के लिए हजारों कोस की दूरी पर विदेशों से अनाज मँगाना पड़ता है, मृतकभोज जैसे खाद्य-पदार्थों की बर्बादी करने वाली प्रथा को बनाये रखना बुद्धिहीनता ही कही जायगी । हमारा कर्त्तव्य है कि अब इसमें समयानुकूल परिवर्तन करें और हमें मृतात्मा के उपलक्ष्य में जो कुछ व्यय करना हो उसे ऐसे ढंग से करें जिससे देश और समाज की भलाई हो और हमारी निजी अर्थ-व्यवस्था पर भी कोई हानिकारक प्रभाव न पड़े ।

मृतकभोज बन्द किया जाए

जब किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो उसकी आत्मा की शान्ति और सद्गति के लिए शास्त्रों में कुछ पुण्य कार्य करने का विधान है । जब शरीर शान्त हो जाय तो उसे अंत्येष्टि संस्कार विधि के अनुसार वेद मंत्रों के साथ घी तथा सुगन्धित द्रव्यों की आहुतियाँ देते हुए अग्नि संस्कार किया जाय । पिण्डदान, तर्पण आदि क्रियाओं के साथ-साथ श्राद्ध करके गृह शुद्धि का भी विधान है । इसके अतिरिक्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ऐसे शुभ कार्यों के लिए कुछ दान, पुण्य किया जाय जिनसे धर्म भावनाओं की वृद्धि तथा दीन-दुःखियों की सेवा होती है । ऐसे दान पुण्य में समाज सेवी, लोकहित में संलग्न, अपरिग्रही तथा ब्रह्म परायण साधु ब्राह्मणों को भोजन कराने का विधान भी है, क्योंकि जिन लोगों ने अपना सारा जीवन समाज सेवा के लिए उत्सर्ग किया हुआ है, जिन्होंने अपनी कोई आजीविका न रखकर अपरिग्रही बनकर ईश्वरेच्छा पर अपनी निर्वाह व्यवस्था अवलंबित रखी है, उन देव मानवों को भोजन-वस्त्र देना समाज का कर्त्तव्य है । यह कर्त्तव्यपालन धर्म या पुण्य भी कहलाता है । ऐसे अधिकारी सत्पात्र साधु ब्राह्मणों को मृतक श्राद्ध के समय तथा अन्यान्य सभी पुण्य अवसरों पर भोजन-वस्त्र एवं दक्षिणा देने का विधान है । मृतक श्राद्ध का धर्मकृत्य इतने ही कर्मकाण्ड के साथ सम्पन्न हो जाता है ।

अपनी शक्ति, सामर्थ्य और परिस्थिति के अनुसार इस क्रिया कर्म को पूर्ण करना उचित है पर आज 'मृतकभोज' नाम में एक ऐसी कुरीति चल पड़ी है जिसका उपर्युक्त धर्मकृत्य से कोई सम्बन्ध नहीं है । होता यह है कि किसी व्यक्ति के मर जाने पर उसकी तेरहवीं के दिन या वर्षी के दिन बड़ी-बड़ी विशाल दावतों का आयोजन किया जाता है जिसमें भारी संख्या में लोग मिठाई, मालपुआ उड़ाने आते हैं । इस प्रीतिभोज को देखकर साधारणतः यही अनुमान होता है कि इस परिवार में कोई बड़ी उत्साहवर्द्धक, आनन्ददायक, लाभकारी घटना घटित हुई है जिससे प्रसन्न होकर इतना बड़ा हर्ष-उत्सव मनाया जा रहा है । साथ ही यह भी अनुमान होता है कि यह लोग कोई बहुत बड़े अमीर हैं । इनके पास इनकी आवश्यकता से अधिक बहुत-सा निरुपयोगी धन बचा पड़ा है, जिसका कोई उपयोग न देखकर दावतों के बहाने समाप्त किया जा रहा है, क्योंकि आम रिवाज के अनुसार दावतें एक प्रकार की सामाजिक विलासिता मानी जाती हैं, जिसमें आवश्यकता से अधिक धन एकत्रित हो जाने पर उसे यार, दोस्तों के बीच हँसी-खुशी के वातावरण में खा पीकर समाप्त कर दिया जाता है ।

देखा गया है कि 'मृतकभोज' इन दो कारणों से नहीं होते । न तो किसी की मृत्यु होना ऐसे हर्ष की बात है कि उसके घर वाले आनन्द मनावें और खुशी की दावतें दें और न उसके घर में इतना अनावश्यक धन ही भरा होता है कि उसे लुटाये बिना काम न चलता हो । शास्त्रीय विधान की दृष्टि से देखा जाय तो भी यह 'मृतकभोज' उस सीमा में बिल्कुल नहीं आता, क्योंकि, इन दावतों में ऐसे सत्पात्र साधु-ब्राह्मणों के तो दर्शन भी दुर्लभ होते हैं, जिन्हें खिलाने से धर्म-सेवा होती हो । वैसे लोग अब ढूँढ़े भी नहीं मिलते । साधु ब्राह्मण के नाम पर आजीविका कमाने वाले कुछ वेशधारी, नामधारी लोग तो बहुत हैं पर उन महान् कर्त्तव्यों में संलग्न होने के कारण अपनी पात्रता सिद्ध करने वाले ब्रह्मपरायण व्यक्ति कहाँ हैं ? और जब तक भोजन कराने के लिए उस श्रेणी के लोग न मिलें तब तक 'ब्रह्मभोज' शब्द सार्थक नहीं हो सकता ।

पर इन मृतकभोजों में उन नामधारी साधु-ब्राह्मणों की संख्या भी बहुत कम होती है । इसमें तो यार दोस्त, परिचित, व्यवहारी लोगों की भरमार होती है जिनके यहाँ हम दावतें खाने जाते हैं, उनका बदला चुकाने के लिए या दूसरों को अपने घर में दावत देने में गर्व और प्रशंसा अनुभव करने के उद्देश्य से यह दावतें की जाती हैं और इनमें शास्त्र विधान का कोई दृष्टिकोण न रहकर एक कुरीति और अन्ध-परम्परा के रूप में ही लकीर पीटी जाती है । चूँकि दूसरे लोग अपने बाप के मरने पर इतनी बड़ी दावत दे चुके हैं तो हमें भी वैसा ही करके अपनी बात उससे छोटी क्यों करनी चाहिए? आमतौर से यही दृष्टिकोण रहता है । एक दूसरे की देखा-देखी अपने को एक दूसरे से अधिक बड़ा आदमी, अमीर और खुले हाथ लुटाने वाला उदारमना सिद्ध करने के लिए यह आयोजन किये जाते हैं और इसमें इतना धन खर्च कर बैठते हैं कि कई साधारण परिवारों की तो आर्थिक दृष्टि से कमर ही टूट जाती है ।

चन्द अमीरों की बात जाने दीजिए, हमारे देश में आम लोगों की आर्थिक स्थिति बहुत दुर्बल होती है । स्वास्थ्य को कायम रखने के लिए जितना दूध-घी मिलना चाहिए उतना किस परिवार को मिलता है ? बच्चों की अच्छी शिक्षा के लिए जितना पैसा चाहिए उतना कौन परिवार जुटा पाता है ? छोटे बच्चे जब समर्थ हो जाते हैं तो उन्हें कुछ काम-धन्धा करने के लिए पूँजी के अभाव में नौकरी कराने के लिए विवश होना पड़ता है । यदि नौकरी सरकारी है तो उसमें बदली होती रहती है और माता-पिता जो अपने बालकों के बड़े होने पर उनके साथ हिलमिल कर दिन काटना चाहते हों, अपने मनोरथ पूर्ण नहीं कर पाते । नौकरी-सम्मिलित परिवार के स्वर्गीय आनन्द की परम्परा को जीवित नहीं रहने देती । आर्थिक विवशता के अभिशापों में सर्वसाधारण का जीवन कितना अव्यवस्थित, अभावग्रस्त एवं अविकसित रह जाता है यह किसी से छिपा नहीं है ।

हमारे खर्चीले रीति-रिवाज में अकेला विवाह एक ऐसी विभीषिका भरी समस्या है कि जिसे सुलझाने में अधिकांश परिवार अपना आर्थिक सन्तुलन खो बैठते हैं । कन्या के विवाह में कितना खर्च करना पड़ता है और लड़के की शादी में कितनी दौलत लुटाई जाती है, यह किससे छिपा है । एक यही सिरदर्द हिन्दू परिवारों के लिए कम नहीं है । इसके अतिरिक्त मृतकभोज भी इसी रूप में चले, जैसा कि अब चलता है तो यह निश्चित है कि हमारी आर्थिक परिस्थितियों के लिए यह एक अभिशाप ही सिद्ध होगी । इससे हम दिन-दिन तबाह ही होते जाएँगे । जो पैसा घर के लोगों के स्वास्थ्य, शिक्षा, व्यवसाय एवं उन्नति के साधनों को विकसित करने में लगना चाहिए वह पैसा इस तरह बर्बाद किया जाय तो इसमें कोई बुद्धिमत्ता नहीं मानी जा सकती ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मृतकभोज को किसी भी कसौटी पर कसा जाय वह हर दृष्टि से व्यर्थ और निरुपयोगी ही नहीं हानिकारक एवम् अशोभनीय भी सिद्ध होता है । क्या घर के किसी व्यक्ति का मर जाना ऐसे आनन्द की बात हो सकती है जिसकी खुशी में दावत उड़ाई जाय ? दावतें आमतौर से खुशी के अवसरों पर दी जाती हैं, संसार भर में यह एक ही परम्परा है फिर किसी की मृत्यु होना, विशेष तथा अपने प्रियजनों की मृत्यु होना भला किस प्रकार ऐसा हर्ष अवसर माना जा सकता है जिसमें दावत देना आवश्यक हो ? कई बार तो ऐसा होता है कि घर का कोई कमाऊ आदमी जवान अवस्था में अपने आश्रितों को भारी वेदना और आर्थिक समस्याओं में डालकर स्वर्गवासी हो जाता है, उसके आश्रितों को न केवल वियोगजन्य पीड़ा सहनी पड़ती है, वरन् भविष्य की आर्थिक चिन्ता के भय से भी भयभीत होना पड़ता है । ऐसी परिस्थितियों में भी कुचलित परम्परा के अनुसार मृतकभोज करना पड़ता है जिसके कारण घर के थाली बर्तन भी बिक जाते हैं, कर्ज हो जाता है और थोड़े दिनों के लिए काम दे सकने लायक जो कुछ बचा-खुचा था वह भी समाप्त हो जाने पर आँसू सूखने से पहले ही भारी अर्थ संकट मुँह फाड़कर सामने आ खड़ा होता है । ऐसी विषम परिस्थिति उत्पन्न करने वाली प्रथा परम्परा किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कही जा सकती । उस का अन्त जितनी जल्दी हो जाय उतना ही उत्तम है ।

कई व्यक्ति अपने मन को समझाने के लिए ऐसा सोचते हैं कि इस मृतकभोज से स्वर्गीय आत्मा को कोई पुण्य फल प्राप्त होगा । यह धारणा सर्वथा मिथ्या है । पुण्य उन कार्यों में होता है जिससे किसी दीनदुःखी की सेवा हो, किसी की उचित उन्नति में सहायता मिले या समाज में धर्म-भावनाएँ बढ़ाने वाली सत्प्रवृत्तियों की अभिवृद्धि हो । इन उद्देश्यों के लिए विवेकपूर्वक कुछ दान पुण्य सत्पात्रों को किया जाय तो उसे पुण्य माना जा सकता है, उससे स्वर्गीय आत्मा को कुछ शान्ति मिल सकती है, पर मृतकभोज में जो लोग दावत उड़ाने आते हैं वे इस उद्देश्य की पूर्ति में किसी भी प्रकार सहायक नहीं होते । वे न तो दीनदुःखी होते हैं और न अपरिग्रही, लोकसेवा, तप-साधना युक्त ब्रह्मपरायण सत्पात्र साधु ब्राह्मण ही । फिर उन्हें खिलाने से कैसे कुछ पुण्य सम्भव होगा ? जब पुण्य हुआ ही नहीं तो स्वर्गीय आत्मा को उससे मिलने वाला ही क्या है ?

मृतकभोज के मूल में वही 'बड़प्पन दिखाने' की भावना काम करती है जिससे प्रेरित होकर लोग ब्याह-बरातों में अन्धाधुन्ध फिजूलखर्ची करते हैं । लोगों की एक व्यर्थ कल्पना यह है कि इस प्रकार पैसा फूँकने का खेल करने से दूसरों की आँखों में हम बड़े आदमी दिखाई देंगे, पर यह धारणा सर्वथा भ्रमपूर्ण है । अब समझदारी का जमाना आ रहा है । इसमें इस प्रकार के ऊलजलूल काम करने वाले शेखीखोर लोग न तो बुद्धिमान माने जाते हैं और न बड़े आदमी । कोई खुशामदी या मसखरे उनके मुँह पर झूठी वाहवाही कर सकते हैं पर भीतर ही भीतर वे भी उस मूर्खता पर हँसते हैं । पैसा बड़े परिश्रम से कमाया जाता है । उसका उपयोग केवल उन आवश्यक कार्यों में होना चाहिए जो जीवन के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास में वस्तुतः सहायक हों । शान-शौकत, वाहवाही, बड़प्पन के लिए पैसा फूँकने वाले लोग समझदार लोगों की दृष्टि में सिर्फ अहमक ही समझे जा सकते हैं । वस्तुतः बात भी ऐसी ही है— जीवन की वास्तविक आवश्यकताओं की उपेक्षा करके इस प्रकार के व्यर्थ कामों में धन की बर्बादी करना किसी भी प्रकार उचित नहीं माना जा सकता ।

कई बड़े-बूढ़े कहलाने वाले, पंच चौधरी लोग जिनकी दृष्टि में समझदारी व्यर्थ की और लकीर का फकीर होना सबसे बड़ी बात है, ऐसे कामों पर बहुत जोर देते हैं । उनके पास कोई तर्क या सिद्धान्त तो होते नहीं केवल परम्परा की दुहाई देकर अपना प्रभाव मानने वाले लोगों को मृतकभोज करने के लिए विवश करते हैं । वे यही कहते हैं अमुक ने अपने बाप के मरने पर इतना बड़ा भोज किया, "अमुक ने अपने भाई या पति के मरने पर इतनी बड़ी दावत दी । अब वे बार-बार मरने थोड़े ही आवेंगे । यही एक मौका है जो कुछ करना हो उनका नाम रोशन करने के लिए कर लो । न करोगे तो लोग तुम्हें कंजूस या मृतक से प्रेम न करने वाला कहेंगे । बदनामी होगी । मृतक आत्मा भी नाराज होगी इसलिए जितना ज्यादा हो सके उतना ज्यादा मृतकभोज करना चाहिए ।" बेचारे भावुक और भोले आदमी इन "लाल बुझक्कड़ों की बातों में आ जाते हैं । वे उन्हें बड़ा-बूढ़ा अधिक समझदार मानकर अपनी परिस्थिति न होते हुए भी अन्य आवश्यक कार्यों को रोक कर भी बड़ी सी दावत का आयोजन करते हैं । परिणाम वही होता है जो होना चाहिए । मामूली स्थिति का आदमी इसी में तबाह हो जाता है और कई बार तो वह झटका इतना घातक सिद्ध होता है कि वह गरीब, परिवार जीवन भर सँभल नहीं पाता । गरीबी और कर्जदारी सारी जिन्दगी के लिए उसके गले बँध जाती है ।

वे चौधरी और पंच जो अपने बालों की सफेदी दिखाकर, उम्र के वर्ष गिनाकर इस प्रकार की अविवेकपूर्ण सलाह देते हैं, लकीर पिट जाने में ही बड़प्पन अनुभव करते हैं, वस्तुतः बौद्धिक दृष्टि से बालक हैं । बुड्ढों की तरह बिना दाँत के बच्चे भी होते हैं । दाँत न होने के कारण कोई उन बच्चों को समझदार नहीं मानता न उनकी सलाह पर चलता है । इसी प्रकार बालों की सफेदी या उम्र के वर्ष गिनाकर जो लोग नासमझी की बातों पर जोर दें, उन्हें बाल हट के समान ही वृद्ध हट मानकर उपेक्षा की जानी चाहिए । इन नासमझी की बातों से जितनी जल्दी विरति हुआ जा सके उतना ही कल्याण है ।

अब समय आ गया है कि हम समझदारी से काम लें और उचित-अनुचित का विचार कर उपयोगी दृष्टिकोण अपनायें । मृतकभोज हर दृष्टि से त्याज्य है । धार्मिक कर्मकाण्ड की दृष्टि से जितना आवश्यक हो श्राद्ध कर्म कराया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सकता है, उस अवसर पर शोक प्रकट करने आये हुए सम्बन्धी या कुटुम्बी भी साथ-साथ खाना खा सकते हैं, पर दावत के रूप में मृतकभोज बिल्कुल न किया जाय यही उचित है । पंजाब में यह रिवाज है कि तेरहवीं श्राद्ध के दिन सभी मित्र-सज्जन, कुटुम्बी-रिश्तेदार इकट्ठे होते हैं और मृतक के आश्रितों की आर्थिक सहायता के लिए अपना-अपना कर्त्तव्यपालन करते हैं उन्हें धैर्य, साहस और आगे के लिए किस प्रकार व्यवस्था करनी चाहिए इसके लिए आवश्यक सलाह और सहयोग देते हैं । यह तरीका बुद्धिमता का है । यदि हम यह न कर सकें तो किसी गरीब को बर्बाद करने के लिए मृतकभोज की दावतें करने के लिए भार तो न बनें । उन दुःखी और परेशान लोगों के यहाँ जिनके आँसू भी सूख नहीं पाये हैं दावत उड़ाने जाना, सचमुच ही बड़ा घटिया दर्जे का काम है, इसे करने के लिए किसी सहृदय व्यक्ति को कदापि तैयार नहीं होना चाहिए ।

श्रेष्ठ पुरुषों का हृदय तो दूसरों को दुःखी देख कर पिघल जाता है और वे उनके दुःख को दूर करने का प्रयत्न करते हैं । उनके दुःख को अपना ही दुःख समझने लगते हैं । यदि दुखिया की सहायता न की जा सके तो उसकी हँसी भी नहीं उड़ानी चाहिए । इससे उसके दुःख में वृद्धि ही होती है । जिसके घर में मृत्यु हुई है, उसका समस्त परिवार उसके वियोग में शोकग्रस्त है, वहाँ माल-पुआ खाने की बात सोचना या उनको ऐसी सलाह देना बहुत ही बुरी बात है । यह तो उनके ताजे जख्मों पर नमक छिड़कने की तरह है । मातम में इस प्रकार की दावत से होने वाले दुःख का अनुमान तो तब हो सकता है जब हमारे स्वयं के घर में ऐसी स्थिति हो, मन बैठा हुआ हो, धन का अभाव हो । कर्ज लेना पड़ रहा हो । उस समय इस कुप्रथा के विरुद्ध दो खरी-खोटी सुनाने के लिए तैयार हो जायेंगे । जीभ के क्षणिक स्वाद के लिए मृतक के घर में भोज खाने जाना या उनको इसके लिए बाध्य करना मनुष्यता से गिर जाने के बराबर है । हमारा कर्तव्य तो यह है कि सान्त्वना देते हुए, उनकी आर्थिक सहायता करें ।

हमें चाहिए कि मृतकभोजों में दावत खाने के लिए न जाने की प्रतिज्ञा लें । दूसरों को भी ऐसी ही सलाह दें । जिनके यहाँ मृत्यु हो गई हो उन्हें आवश्यक धार्मिक कर्मकाण्ड से आगे न बढ़ने की बात समझावें । श्राद्ध कर्म में जाने को सब ब्राह्मण भी तैयार नहीं होते । उस अन्न को खाने पर दस हजार गायत्री जप करके उसका पुण्य स्वर्गीय आत्मा को देना श्राद्ध भोजी ब्राह्मण के लिए आवश्यक माना जाता है । फिर साधारण लोग उस अन्न का प्रायश्चित कैसे कर पावेंगे ? जो न तो ब्राह्मण हैं और न दस हजार गायत्री जप कर उसका प्रायश्चित ही कर सकते हैं, वे भी यह मृतकभोज खाने जाते हैं तो एक भारी भूल करते हैं । यह भूल उनके लोक और परलोक को बिगाड़ने वाली ही सिद्ध हो सकती है ।

मृतकभोज हर दृष्टि से त्याज्य है । इसे छोड़ने के लिए आवश्यक वातावरण बनाना प्रत्येक विवेकशील एवं धर्मप्रेमी का कर्त्तव्य है ।

यह कुरीतियाँ मिटनी ही चाहिए

अनेक वैयक्तिक और सामाजिक बुराइयों का जन्म केवल उन परम्पराओं के कारण होता है जो न तो लाभदायक होती हैं और न बुद्धिसंगत । किसी समय उनकी उपयोगिता थी, इसलिए वे प्रचलित की गई थीं । पर चूँकि सामाजिक स्थिति निरन्तर बदलती रहती है, इसलिए परम्पराओं और प्रथाओं का भी शुद्धीकरण आवश्यक है, यदि स्वेच्छा से ऐसा नहीं किया जाता तो वह मान्यताएँ ही भार बन जाती हैं ।

उदाहरणार्थ—एक समय था जब हमारे देश में धान्य की कोई कमी न थी । पर चूँकि उन दिनों सब के काम बँटे रहते थे, इसलिए कुछ लोग ऐसे भी होते थे, जिनकी अन्न की आवश्यकतपूर्ण न हो पाती थी, तब लोग सामाजिक व्यवस्था को अपनी पारिवारिक व्यवस्था ही समझते थे । इसलिए इस तरह के लोगों के प्रति भी दया बनी रहती थी । उन्हें अन्न देने से पुलक और प्रसन्नता होती थी, इसलिए यह कार्य पुण्य माना जाता था और उससे किन्हीं मृतात्माओं की शान्ति का भी विश्वास किया जाता था, फलस्वरूप मृत्युभोजों की प्रथा प्रचलित थी, किन्तु अन्न निर्धनों को ही खिलाया जाता था ।

अब जबकि न तो कोई कार्यों का विभाजन है और न यही स्थिति है कि भोज गरीबों को दिया जाता हो, इसलिए मृत्युभोज का कोई धार्मिक औचित्य नहीं रहा । उससे खाद्य समस्या बिगड़ती ही है, इसलिए उसे छोड़ देने में क्या बुराई है ? समझदार लोग अगुआ बनकर भी ऐसा ही कर रहे हैं—

रतलाम से प्राप्त एक खबर में बताया गया है कि बड़नगर में आयोजित एक सभा में सैकड़ों व्यक्तियों ने मुनि श्री गगनलाल और श्री धर्मचन्द्र जी पीयूष के समाज सुधारवादी प्रेरक भाषणों से प्रभावित होकर मृत्युभोज बंद करने की किसी के मृत्युभोज में सम्मिलित न होने की प्रतिज्ञा की । इस क्रान्तिकारी निर्णय की प्रतिक्रिया समीपवर्ती क्षेत्र में जोर पकड़ रही है ।

जैसीकला (सहारनपुर) की पंचायत में भी मृत्युभोज न करने का फैसला गत वर्ष किया गया था । तब से वहाँ किसी ने मृत्यु-भोज नहीं दिया । जिन्हें कुछ करना होता है, वह कन्या विद्यालय या विकास कार्यों के लिये पंचायत की मदद करते हैं ।

मालवाड़ (अलवर) के मजिस्ट्रेट ने रहणीव हरेल के दो कृषकों को मृत्युभोज करने के अभियोग में ६-६ माह की सजा दी । अभियुक्तों ने सेशन जज से अपील की । सजा की रियायत को अस्वीकार करते हुए सेशनजज श्री रणछोड़दास जी भट्टानी ने अपने फैसले में कहा कि जब देश को गम्भीर खाद्य संकट का सामना करना पड़ रहा है, तब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देश के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि वह सुधारवादी प्रेरक भाषणों से प्रभावित होकर मृत्युभोज बन्द करने एवं किसी के मृत्युभोज में सम्मिलित न होने से अन्न के प्रत्येक दाने को बचायें । ऐसे अवसर पर भोज का आयोजन अराष्ट्रीय कार्य है और समाज के प्रति पाप है ।

मृतकभोज ही नहीं ऐसी जो भी कुरीतियाँ दिखाई देती हों, जो असामाजिक और असामयिक हैं, उन सबको ही छोड़ना चाहिए । किन्हीं प्रभाव वाले क्षेत्रों को ऐसी प्रेरणाएँ भी दी जा सकती हैं । जिस तरह इन्दौर के अतिरिक्त जिलाधीश ने शक्कर बाजार स्थित दिगम्बर जैन मन्दिर में दूध और दही से अभिषेक पर प्रतिबन्ध लगा दिया दूसरे क्षेत्रों में भी इस तरह की बर्बादी को रोका जा सकता है ।

कुछ साल पहले गुजरात प्रदेश के खेड़ा जिले में यह प्रथा थी कि यदि किसी ग्रामवासी के पाँच से अधिक लड़कियाँ पैदा होती थीं तो उन्हें दूध में डुबोकर मार दिया जाता था । उसे 'दूध पिलाती' प्रथा कहा जाता था । इसका कारण यह बताया जाता है कि गाँववासियों की आर्थिक हालत इतनी खराब थी, वे अधिक लड़कियों के ब्याह का भार नहीं सँभाल सकते थे ।

अच्छा तो यह होता कि लोग इसके लिये २ या ३ सन्तानों के बाद स्वयं ही और सन्तान न पैदा करते, पर यदि अपनी भूल के कारण कोई आत्मा आ ही गई तो फिर उसकी हत्या करके मनुष्य-जीवन को खिलवाड़ नहीं बनाना चाहिए । इस परम्परा को खेद है कि वहाँ के पढ़े-लिखे लोग नहीं रोक पाये पर वैसे न सही खेड़ा सहकारी दूध योजना के प्रयत्न से ही यह प्रथा बन्द हो गई । इसने इस क्षेत्र के लोगों को व्यवसाय भी दिया और यह विचार भी किया कि इस तरह का जघन्य कार्य उन्हें नहीं करना चाहिए ।

भारतीय समाज में जाति-पाँति और छूत-अछूत के बन्धन भी ऐसे हैं जिनसे गरीब पिसते और धनी मौज उड़ाते हैं । व्यक्ति को ऋणी बनाने से लेकर आत्म-हत्याओं तक के अनेक दुष्कर्म इन मान्यताओं के कारण होते हैं—सांगली से १२ मील दूर एक युवक और एक युवती के शव पाये गये । पुलिस को ये शव उस गाँव के एक स्रोते में मिले । बाद में उनकी शिनाख्त हो गई । युवक का नाम सुनीलगोविन्द कामथ और युवती का नाम मालिनी गोपाल कुलकर्णी बताया जाता है ।

कहते हैं उन दोनों में प्रेम था । एक ही स्कूल में दोनों पढ़ते थे और उनकी विवाह की हार्दिक इच्छा थी, किन्तु विभिन्न जातियों के होने के कारण दोनों का विवाह संभव नहीं था । ऐसी अनेक आत्म-हत्याएँ केवल जाति-पाँति के बन्धनों के कारण होती हैं, जबकि दूसरी ओर विवाहों में दहेज के कारण भी लोगों की हैरानी कम नहीं है कदाचित जाति-पाँति के यह बन्धन ढीले हो सकते तो दहेज का ही मुँह काला न होता, वरन् अनेक सामाजिक बुराइयाँ जो लुक-छिपकर होती हैं, कम पड़ जातीं ।

बेकारी अब इसलिए नहीं है कि देश में काम का अभाव है, वरन् इसलिए भी लोगों का स्तर जितना है, काम उससे बहुत बड़ा चाहते हैं । काम में भी छूत-अछूत का भेद किया जाता है, अन्यथा नौकरी तो कोई भी हो नौकरी ही है । महाद के एक मध्यम वर्गीय नवयुवक ने मेहतर की नौकरी स्वीकार करके यह साबित कर दिया कि कोई भी काम अपमानजनक नहीं है । काम को दक्षता और ईमानदारी से न करना ही वस्तुत: अपमान और धोखेबाजी है ।

मधुकर आनन्द वैद्य नामक युवक को जब नौकरी ढूँढ़ने में बहुत कोशिश के बाद भी सफलता न मिली तो उसने स्थानीय नगरपालिका में मेहतर की नौकरी कर ली ।

जबलपुर की हरिजन बस्ती में वाल्मीक सुधार समिति का गठन किया गया है । यह समिति हरिजनों की स्थिति सुधारने और उन्हें सामाजिक सम्मान दिलाने के कार्य करेगी । इस तरह के प्रयत्नों से इन कुरीतियों को तेजी से सुधारा जा सकता है और सामाजिक जीवन में जाति-पाँति के स्वस्थ तौर-तरीकों का आविर्भाव किया जा सकता है ।

भारतीय समाज में कुरीतियों की कमी नहीं । कुछ अभाव है तो उन्हें रोकने और साहसपूर्वक नई परम्पराएँ विकसित करने वालों का अभाव है । यदि कुछ हिम्मती लोग इन प्रयत्नों में जुट जायें तो देखते-देखते जनमत कुरीतियों के विद्रोह में तैयार किया जा सकता है । पाकुरिया (बिहार) के मुखिया बुद्धिसिंह की लड़की के विवाह में बारातियों ने शराब और गोश्त की माँग की । कन्या पक्ष ने शराब देना तो स्वीकार कर लिया पर माँस देने की असमर्थता प्रकट की । इस पर बाराती नाराज हो गये । दोनों पक्षों में विवाद हो गया । वर पक्ष के पुरोहित यह सब सुन रहे थे, उन्होंने दोनों पक्षों को करारी फटकार लगाई और कहा कि तुम शादी कर रहे हो या शराब और माँस की दूकान । खबरदार ऐसे मंगल समय में ऐसी घृणित बातें कीं, तो कोई भी पण्डित तुम्हारे विवाह में न आयेगा । इस डाँट से दोनों पक्ष स्तब्ध रह गये । विवाह मीठे भोजन के साथ सम्पन्न हुआ ।

तात्पर्य यह है कि कुरीतियाँ समझदारी से छोड़ी जा सकें तो सर्वोत्तम है, पर यदि उन्हें संघर्ष करके मिटाया जा सके तो उससे भी अब चूक नहीं जाना चाहिए ।

विवाह की तैयारी मृतकभोज खा गया

खिरसौद (म.प्र.) ग्राम के एक किसान की कन्या का विवाह न हो सका, उसका कारण मृतकभोज बताया जाता है ।

सम्वाददाता के अनुसार विवाह की सारी तैयारियाँ हो चुकी थीं । लग्न के लिए एक माह ही शेष था कि लड़की की आजी का देहान्त हो गया । प्रचलित परम्परा के अनुसार जब मृतकभोज का दिन आया तो लड़की के शिक्षित भाई ने पिता से कहा कि मृतकभोज मत करो, करना ही है तो अधिक से अधिक १३ ब्राह्मणों को खिला दो पर जाति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बिरादरी और अन्य-परम्परा के भय से उन्होंने बेटे की विवेक सम्मत बात नहीं मानी । भोज हुआ जिसमें ३६७ व्यक्तियों ने भोजन किया और विवाह की तैयारी वाला सारा सामान चट कर दिया । उन्होंने विवाह बढ़ाने के लिए लड़के वालों से अनुरोध किया, लड़के वालों ने उसे अस्वीकार कर दिया और विवाह करने की तैयारी न हो पाने के कारण उन्होंने लड़के का विवाह भी अन्यत्र कर लिया । लड़की का पिता अब अपने भाग्य को कोस रहा है और कह रहा है कि हत्यारी मृतकभोज प्रथा ने उसका सत्यानाश कर दिया ।

समय का तकाजा है कि ऐसी प्रथाएँ बन्द हों

प्राचीनकाल में मृत्युभोज की शुरूआत सम्भवत: इस लक्ष्य को लेकर हुई होगी कि मृतक की कमाई हुई संपत्ति को दीन-दु:खियों में, जरूरतमंदों में अथवा समाज में वितरित करके उसका सदुपयोग कर दिया जाय । उस सम्पदा को गरीबों को खिलाने उनमें बाँटने को सार्थक माना जाता था । यह मान्यता भी सकारण थी कि इस कृत्य से मृतक की आत्मा को शान्ति मिलती । व्यक्ति और समाज के सर्वांगीण विकास पर गम्भीरता से मनन करने वाले मनीषियों की दृष्टि यह थी कि यदि मृतक के घर के सदस्यों को विरासत में मुफ्त की संचित कमाई हाथ लग जाती है तो उनको कामचोर एवं हरामखोर बनने का अवसर मिलेगा । यह सोचते हुए मृतकभोज, पिण्डदान आदि के माध्यम से सम्पत्ति के सदुपयोग की दूरदर्शी योजना बनायी थी । अभावग्रस्त साधु-संतों को ही वह सम्पदा मिलती जिसका उपयोग वे समाज के परमार्थ के कार्यों में करते थे, पर इस प्रथा में अपव्यय की, उद्धत प्रदर्शन की किसी प्रकार की छूट न थी ।

जो प्रथा कभी उपयोगी थी विवेक का अंकुश न रहने से आज सर्वथा अनुपयोगी तथा अहितकर बन चुकी है । मृतकभोज की प्रचलित कुप्रथा से जितनी बर्बादी होती है, उसके आँकड़े एकत्रित किये जाएँ तो मालूम होगा कि उस व्यर्थ गयी धनराशि से कितनी ही रचनात्मक योजनाएँ चल सकती हैं । गरीब तो परम्परा के नाम पर पिस जाते हैं, पर उसे तोड़ने का साहस नहीं दिखा पाते । अमीरों को अपने अहम् के प्रदर्शन का एक उद्धत तथा उथला मार्ग सूझता है । यश लूटने की वाहवाही में वे पैसे को पानी की तरह बहाते हैं जिससे कितने ही गरीबों को रोटी मिल सकती तथा कितने ही सृजनात्मक कार्य हो सकते हैं । सस्ता यश कमाने की ललक कभी-कभी ऐसे परिणाम लेकर भी प्रस्तुत होती है जिसकी कल्पना तक न की गई थी । विगत दिनों एक ऐसी ही घटना प्रकाशन में आयी ।

पिछले दिनों प्रकाशित एक समाचार के अनुसार नैनीताल जिले के दिनेशपुर क्षेत्र में एक अस्सी वर्षीय वृद्धा का मृतक भोज बड़े धूमधाम से आयोजित हुआ । वृद्धा के पुत्र ने भोज में तीन हजार से भी अधिक व्यक्तियों को आमंत्रित किया । घर में पैसे की किसी प्रकार की कमी न होने के कारण विविध पकवानों-व्यंजनों में अन्धाधुन्ध पैसा फूँका गया । कई दिनों पूर्व से ही भोज की तैयारियाँ आरम्भ हो गयी थीं । हिन्दू धर्म में वर्जित होते हुए भी स्वाद लिप्सा की पूर्ति के लिए क्विंटलों मछलियाँ भी मँगाकर पकाई गयीं । २६ नवम्बर १९८३ की संध्या चार बजे से दावत शुरू हुयी तथा बारह बजे रात तक चली । हजारों व्यक्तियों ने भोजन किया ।

पर लगता है प्रकृति को भी वह उल्टी रस्म अच्छी न लगी । थोड़े ही समय बाद चारों ओर कुहराम मच गया । आयोजन में बना भोज्य पदार्थ न जाने किन कारणों से विषाक्त हो गया । डेढ़ हजार व्यक्ति तत्काल गम्भीर रूप से बीमार पड़ गये । एक चौदह वर्षीय बालक की मृत्यु हो गयी । सैकड़ों को कई दिनों तक उल्टी, दस्त की शिकायत बनी । निकटवर्ती हॉस्पिटल में हजारों व्यक्ति इलाज के लिए भर्ती हुए जिन्हें उपचार दिया गया । कुमाउँ रेंज के कमिश्नर ने पहुँचकर स्थिति की गम्भीरता को समझते हुए चिकित्सकों को दूसरे अस्पतालों तथा कस्बों से बुलवाया तथा गाँव-गाँव जाकर प्रभावित लोगों के उपचार की व्यवस्था बनायी । गाँव के सारे लोग इस अवैध मृत्युभोज के बाद सामूहिक भोज की परम्परा के प्रति अब आशंकित हो उठे हैं ।

उद्धत प्रदर्शन के द्वारा अपनी उदारता का ढिंढोरा पीटने तथा मृतक की आत्मा की शान्ति के लिए इस तरह के स्वाँग रचने में जितने पैसे की बर्बादी होती है, सचमुच ही उसे सत्प्रयोजनों में लगा दिया जाता तो उससे आत्मा को संतुष्टि भी मिलती और मृतात्मा को शान्ति भी । जिस कुप्रथा को हर विज्ञ ने, विचारशील व्यक्ति ने वर्तमान परिस्थितियों के लिए हानिकर ठहराया है, उसको किसी भी हालत में जनता का प्रश्रय नहीं मिलना चाहिए ।

पिता की इच्छा पुत्र ने पूरी की

निसरपुर (धार) निवासी श्रीमान सेठ मोतीलाल जी खुराना का ९० वर्ष की अवस्था में १९ फरवरी ६७ को देहावसान हो गया । सेठ साहब धार्मिक व्यक्ति थे । समाज सुधार में उनकी गहरी रुचि थी ।

मृत्यु से पूर्व एक दिन उन्होंने अपने पुत्र गेंदालाल खुराना को नजदीक बुलाया और कहा "बेटा ! हम धार्मिक विचारों के आदमी हैं । सदैव परमात्मा पर भरोसा किया है, उपासना, शास्त्र स्वाध्याय, कथा-कीर्तन, संस्कार, खान-पान, रहन-सहन इन सब में सदाचार और सात्विकता का व्यवहार किया है । यही धर्म और अध्यात्म है कि मनुष्य अपनी शक्तियों को विकसित करता हुआ परमात्मा की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहे ।"

"हमने भी अपनी शक्ति-भर उसका पालन किया है पर रूढ़िवादिता के पक्ष में नहीं रहा । जो परम्पराएँ और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थितियाँ धर्म और समाज को कमजोर बनाती हों उन्हें हमने कभी स्वीकार नहीं किया । हम चाहते हैं कि हमारी मृत्यु के अनन्तर भी इसका परिपालन हो ।''

अपनी बात और स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा—''हमारे समाज में पलायनवाद और मृत्युभोज जैसी कुरीतियाँ घुस गई हैं उनका विरोध न कर सके तो न सही पर उन्हें प्रोत्साहन देने का कर्त्तव्य पाला जा सकता है । यह भी न हो तो कम से कम मेरी मृत्यु के बाद मृतकभोज न किया जाय । इसमें लगने वाला धन किसी नेक कार्य में खर्च कर दिया जाये । मृत्युभोज में हुआ आर्थिक अपव्यय और अन्न की बरबादी बारूद फूँकने की तरह थोड़ी-सी चमक तो पैदा करती है, पर सारे वातावरण को दूषित कर डालती है ।''

इसके कुछ दिन बाद ही सेठजी ने सुखपूर्वक अपना नश्वर शरीर छोड़ दिया । अब यह देखना था कि पुत्र पिता की इच्छा और अभिवचन की पूर्ति किस तरह करता है ।

सम्बन्धियों और मित्रों ने यही सलाह दी—''मृतक-भोज करना चाहिए, उससे मृतक को आत्म-शान्ति मिलेगी।''

पर बेटे ने विचार किया—आत्म-शांति तो इच्छा-पूर्ति से होती है । पिताजी की इच्छा थी कि यह धन किसी नेक काम में लगे सो भी ठीक ही था । धन फूँकने की अपेक्षा किसी ऐसे कार्य में लगाया जाये जिससे दीन-दुःखियों का भला हो, समाज-कल्याण हो तो वह पुण्य अनावश्यक लोगों को खिलाने में कहीं बड़ा होगा । बेटे का विचार पिता के विवेक से मिल गया । मृतकभोज का पत्ता कट गया ।

पुण्य की परम्परा का पालन करना था सो बेटे ने उठावनी के समय अपना निश्चय सुना दिया । ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रुपये के एक ट्रस्ट की स्थापना की घोषणा कर समाज सुधार का आदर्श उपस्थित किया । स्व. पिता की अन्तिम इच्छा और आदर्श की पूर्ति कर दी ।

इस ट्रस्ट से अनाथ बालकों की शिक्षा और विधवाओं की सहायता की जाया करेगी । श्री गेंदालाल जी ने उस ट्रस्ट में समय-समय पर और भी धन देते रहने का आश्वासन दिया है ।

भोज होता तो सौ-दो-सौ व्यक्ति दस-पाँच मन अन्न खा-पीकर चुप हो गये होते, पर अब जब तक यह ट्रस्ट जीवित रहेगा, तब तक उससे सैकड़ों अनाथ, अपंग, असहाय और दीन-दुःखियाओं का भला होगा । इन दोनों में किसका पुण्य ज्यादा है, पाठक इस पर स्वयं विचार करें ।

युग की परिस्थितियों के अनुरूप इन परम्पराओं में परिवर्तन आवश्यक है । मृतकभोज, दहेज, बलि प्रथाओं आदि का अन्त होना ही चाहिए । हम यदि समाज और भावी पीढ़ी को कुछ दे नहीं सकते तो उन पर सामाजिक प्रतिबन्धों का बोझ क्यों डाला जाय? हमें वही कार्य करना चाहिए जिससे अपने पीछे के लोगों को भी पुण्य परमार्थ का प्रकाश मिलता रहे । सेठजी के इस आदर्श कार्य से सैकड़ों लोगों को प्रेरणा मिलेगी ।

मृतक की आत्म-शान्ति वैसे नहीं—ऐसे

इधर किसी की मृत्यु होती है तो सर्वांगपूर्ण अन्त्येष्टि संस्कार पर उतने से कम खर्च नहीं होता जितने से एक लड़के या लड़की की शादी हो जाती है । मृतकभोज के कारण तो किन्हीं-किन्हीं परिवारों का आर्थिक ढाँचा बुरी तरह चरमरा जाता है, वह फिर दसियों वर्ष कड़ा परिश्रम और कटौती करने पर भी काबू में नहीं आता । इसका जीवन-विकास और परिवार कल्याण पर बड़ा दूषित प्रभाव पड़ता है ।

गनेशपुर (ज्योंता) जिला फर्रूखाबाद निवासी भैरव सिंह 'भारतीय' ने प्रचलित अन्ध-परम्परा का उल्लंघन कर अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया । आपने उस साहस को जन्म दिया है, भविष्य में जिसे अपनाकर अनेकों निर्धन ग्रामीण, आर्थिक अपव्यय, कर्ज और पारिवारिक दुर्दशा से बचेंगे ।

मरने पर मृतक की दाह-क्रिया करते हैं, पिंडदान देते हैं, दसवें दिन बाल बनवाते हैं, शाम को मृतकभोज होता है । इसमें उड़द तथा चावल बनता है । यह घर के बाहर ही बनता और बाहर ही खाया जाता है । ग्यारहवें दिन महापात्र (महाब्राह्मण) बुलाया जाता है । उसे चारपाई, बिस्तर, सभी कपड़े, सवारी आदि दी जाती है ।

शाम को कढ़ी-चावल आदि पकते हैं सो सभी खाते हैं, तेरहवें दिन १३ ब्राह्मणों को पद दिया जाता है । वे खाते हैं तथा प्रत्येक को धोती, कुर्ता, टोपी, अंगोछा, लोटा, खड़ाऊँ आदि वस्तुएँ और दक्षिणा में रुपये भी दिये जाते हैं । औसत खर्च २०० रुपये से ऊपर ही बैठता है । चाहे कितनी ही सस्ती वस्तुएँ खरीदी जायें और इसके बाद बिरादरी, सम्बन्धी, मित्रों और पड़ोसियों का नम्बर आता है । उन्हें पूड़ी, कचौड़ी, सब्जी तथा लड्डुओं की दावत दी जाती है । किसी अनजान व्यक्ति के सामने इतना सब कर्मकाण्ड किया जाये तो वह यही अनुमान करेगा इस घर में कोई उत्सव या प्रसन्नता की बात हुई है और इस घर के लोग काफी सम्पन्न होंगे जो इस प्रकार मुक्त हस्त दान-दक्षिणा और दावत कर रहे हैं ।

पर स्थिति कुछ दूसरी ही होती है । केवल प्रचलित परम्परा का बोझ समाज के निर्धन और विषम परिस्थिति के लोगों को खाये जा रहा है । समाज के विशृंखलन में अभागे मृतकभोज का स्थान विवाहों के अपव्यय से कुछ बढ़ कर ही है ।

यह बात भैरवसिंह जी पहले ही अनुभव कर चुके थे । अभी कुछ दिन पूर्व ही उनकी भाभी का देहान्त हुआ । इस बार भी वही समस्या आई तो उन्होंने अनुभव किया कि इस तरह यदि मृतकभोज की परम्परा को जीवित रहने दिया गया तो हम और हमारे बच्चे आज तो क्या १०० वर्षों में आगे न बढ़ सकेंगे । इसी अज्ञान और निर्धनता की स्थिति में पड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहेंगे, क्योंकि उन्हें रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठाने के लिए न धन रहेगा न साधन ।

आपने देखा अब वह ब्राह्मण नहीं जो २४ घण्टे समाज कल्याण में जुटे रहते हैं । सदाचार और विद्वता की दृष्टि से भी उन्हें पूजने का कोई औचित्य नहीं रह गया । उधर बिहार से अकाल पीड़ित है, देश की और भी समाज सेवी संस्थाएँ हैं जो धनाभाव के कारण चाहते हुए भी अपनी योजनाएँ नहीं पूरी कर पातीं, ऐसी स्थिति में मृतकभोज की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती ।

इसलिए उन्होंने इन सभी कर्मकाण्डों का बहिष्कार कर एक नई और स्वस्थ परम्परा को जन्म दिया । पिंड दान नहीं दिया गया । अभिनव संस्कार पद्धति से अन्त्येष्टि संस्कार कराया गया । भोज के स्थान पर २०० रुपये ग्राम सभा में स्थायी निधि के रूप में जमा किये जिससे जरूरत मंद निर्धन लोग समय पर अपने रुके हुए काम चलाते रहें । १०० रुपया बिहार के अकाल पीड़ितों और १६० युग निर्माण विद्यालय मथुरा को भेजे । ५० रुपये गाँव की एक निर्धन लड़की की शादी में दिये और दो बीघा भूमि गरीबों को दी । इस दान से अच्छे कार्यों को सहयोग मिलेगा ।

प्रारम्भ में कुछ लोगों ने विरोध किया, पर अधिकांश लोग बहुत प्रभावित हुए । गरीबों के लिये मार्ग खोल कर भैरवसिंह जी ने समाज की आदर्श सेवा की है ।

मृत्युभोज की एक उपयोगी विकल्पना

मुजफ्फरपुर के श्री वीरेन्द्रसिंह भदौरिया ने अभी-अभी एक साहसपूर्ण कदम उठाकर अपनी विवेकशीलता का परिचय दिया है ।

कुछ दिन पूर्व ही उनकी वृद्ध माता का देहावसान हुआ है । शोक प्रगट करने जैसी कि सभी जातियों में रीति है, समस्त परिजन कुटुम्बी सम्बन्धी तथा मित्र आदि आते हैं । इनके यहाँ भी सभी आये थे और घर में अच्छी खासी भीड़-भाड़ हो गई थी ।

वीरेन्द्र सिंह जी युग निर्माण शाखा के कर्मठ कार्यकर्ता हैं । अभी तक लोक-कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रमों में बड़े उत्साह से भाग लेते रहे हैं । झोला पुस्तकालय द्वारा लोगों को सद्प्रेरणा तथा प्रकाश देते रहते हैं ।

जब घर में यह प्रश्न सामने आया कि—"तेरहवीं पर बड़ा भोज होना चाहिये" तो वे इससे असहमत हुए । यद्यपि अब अपने घर में सब भाइयों में वे ही बड़े थे—तथापि उनके चाचाजी आदि भी अभी जीवित थे जो उनसे बड़े और महत्त्वपूर्ण स्थान रखते थे परिवार में ।

मृत्युभोज के लिए जब वीरेन्द्र ने मना किया तो उनके चाचाजी बहुत बिगड़े । कहने लगे—"भाभी ने घर में इतना छोड़ा है कि तुम अपना एक भी पैसा मत लगाओ, फिर भी उनकी तेरहवीं छै बार हो सकती है । खाना-पीना नहीं होगा तो बिरादरी वाले क्या कहेंगे?"

वीरेन्द्र ने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया—"जरा आप सोचिये तो सही चाचाजी ! इतने लोगों को खिलाने-पिलाने में हम एक, डेढ़ हजार रुपया खर्च कर दें—उसका कोई लाभ नहीं । वही पैसा यदि हम किसी सार्वजनिक काम में लगा दें तो उससे अनजाने ही बहुत व्यक्ति लाभान्वित हो सकते हैं । रहा प्रश्न कहने सुनने का—सो चाचाजी ! हर अच्छे काम की आजकल के नासमझ लोग आलोचना ही करते हैं शुरू में । बाद में जब उसकी उपयोगिता मालूम पड़ती है, तब वे ही उसकी प्रशंसा करने लगते हैं ।"

अब चाचाजी ने जरा नम्र स्वर में कहा—"मैं मानता हूँ तुम्हारी बात को । वह भी अपनी जगह पर सही है, लेकिन खाना-पीना करने के बाद भी तो तुम उनके नाम पर कुआँ, धर्मशाला भी चाहो सो बनवा सकते हो, भगवान् का दिया सब कुछ है तुम्हारे पास ।"

अब वीरेन्द्र ने कहा—"लेकिन चाचाजी! बात तो वही रही न ! कि हम अविवेकपूर्ण परम्पराओं को भी गले से लगाये रहें और कहते भी रहें कि गलत काम नहीं करना चाहिए, जिससे सिवाय दिखावे तथा झूठी नामबरी पाने के कोई लाभ नहीं । ऐसी रूढ़ियों तथा परम्पराओं को जब तक समाप्त नहीं किया जायेगा लोग उसके अँधेरे में घुटते रहेंगे । परम्पराएँ ऐसी उपयोगी होनी चाहिए कि अमीर-गरीब सब खुशी-खुशी उन्हें एक रूप में अपनाये रह सकें ।"

और वही हुआ जो वीरेन्द्र ने तय किया था । १३ ब्राह्मणों के स्थान पर अनाथालय के २०-२५ बच्चों को खाना खिलाया गया । घर में बाहर से आये हुए अतिथियों के लिए भी सीधा सरल भोजन बना । मिठाई आदि का कोई उपक्रम नहीं था । पाँच सौ व्यक्तियों की—जो सामान्य जाति बिरादरी के वह दूर के सम्बन्धी थे, लिस्ट बनाई गई थी दावत की वह रद्द कर दी गई ।

और उनकी माता की छोड़ी हुई जो सम्पत्ति थी उसे रुपयों के रूप में परिणत करके एक बड़ा पुस्तकालय बनवाया गया, जिसमें जीवन निर्माण विषय के अतिरिक्त कोर्स की पुस्तकें भी बड़ी संख्या में रखी गईं और बोर्ड लगा दिया गया कि—"निर्धन विद्यार्थी यहाँ की सामग्री का उपयोग निःशुल्क करें ।" पुस्तकों के अतिरिक्त शिक्षा सम्बन्धी अन्य उपकरण भी वहाँ रखे गये । विज्ञान के छात्रों के लिए बड़ी पुस्तकों के अतिरिक्त प्रैक्टिकल से सम्बन्धित समस्त सामग्री भी उपलब्ध थी । यह था पैसे का सही सदुपयोग जिसके द्वारा हजारों व्यक्तियों को अतुलनीय लाभ मिला ।

मृतकभोज के व्यय से साहित्य वितरण

आनन्दपुर के श्री कमलकिशोर जी की माँ का देहान्त हो गया था । उन्होंने प्रचलित परम्परा को तोड़कर तेरहवीं के भोज का बहिष्कार कर उसके स्थान पर जो साहित्य वितरण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का साहसपूर्ण नया कार्य किया—वह बड़ा ही उपयोगी तथा प्रशंसनीय है ।

गत १३ मई को उक्त आयोजन सम्पन्न हुआ । प्रात: गायत्री हवन के साथ संस्कार पद्धति द्वारा समस्त क्रियाकाण्ड सम्पन्न किया गया । उसके पश्चात् सभी को 'सत्संकल्प' 'दैनिक हवन पद्धतियाँ'—'गायत्री चालीसा' तथा 'गायत्री की दैनिक उपासना'—पुस्तकें बाँटी गईं ।

इसके पश्चात् केवल घर वालों ने तथा उन अतिथियों ने भोजन किया जो बाहर से आये थे । कुछ अनाथालय के बच्चे भी बुलाये गये थे । भोजन भी एकदम सादा था । मिठाइयों का एकदम बहिष्कार कर दिया गया था । उधर कीर्तन का प्रबन्ध हुआ । दोपहर भर अतिथि आते रहे । कीर्तन चलता रहा । प्रत्येक आगन्तुक को दो-दो ट्रैक्ट—उसकी रुचि के दिए जाने का क्रम था ।

कुछ व्यक्तियों ने, जो तनिक विचारशील थे, इस आयोजन की प्रशंसा की । कुछ ऐसे भी थे जिन्हें ये सब तमाशा-सा लग रहा था । उन्हीं में से एक सज्जन पूछ ही तो बैठे "आप ये पुस्तकें बाँट रहे हैं इससे भला मृतक की आत्मा को क्या शान्ति मिलेगी? ब्राह्मण भोजन का बहिष्कार करके आपने अच्छा नहीं किया । अनाथालय के बच्चे भी कहीं ब्राह्मणों की बराबरी कर सकते हैं?"

तब कमल किशोरजी नम्र वाणी में बोले "बड़ी संख्या में भोजन कराने का उपयोग अथवा उद्देश्य, मात्र एक परम्परा है । जो आज के महँगे युग में एकदम अनुपयोगी है । रहा प्रश्न ब्राह्मणों का । सो वे तो सर्वसाधन सम्पन्न हैं । ये अनाथ बच्चे, जिन्हें जीवन की अनिवार्य आवश्यकताएँ ही मिल पाती हैं कहीं अधिक तृप्ति का अनुभव कर रहे होंगे ।

मृतक आत्मा की शान्ति का प्रश्न भी ऐसा ही है । आत्मा को शान्ति मिलती है पुण्य से । पुण्य का आधार है दान । यों अन्नदान-द्रव्यदान आदि का महत्त्व अपने स्थान पर पूरा है, लेकिन सर्वश्रेष्ठ दान—ज्ञान-दान ही माना गया है । पढ़े-लिखे व्यक्ति भी आज अन्ध-विश्वासों, रूढ़ियों तथा मूढ़ मान्यताओं को अपने आप से जोंक की तरह चिपकाए हुए हैं, जो दिन-रात सिवाय मानव का रक्त चूसकर उसे खोखला बनाने के कुछ नहीं कर रहीं । बुरा कहते हैं, किन्तु उसे छोड़ नहीं सकते । इन पुस्तकों में वह दिशा है, वे विचार हैं, जो जीवन जीने का सही ढंग-सही रास्ता बताते हैं । यदि सौ व्यक्तियों ने पढ़ा और पचास ने भी अपने जीवन की दिशा बदल दी, तो हमारा प्रयास सफल रहा ।"

तभी एक अन्य सज्जन भी बोल पड़े "आप की बात बिल्कुल ठीक है कमल जी ! मृतकभोज की परम्परा तो एकदम बन्द हो ही जानी चाहिये । अपना आदमी जाता है । सौ-दो-सौ क्रिया कर्म में जाते हैं, फिर हजार पाँच सौ भोज में लगाओ । फिर दावत या सामूहिक भोज तो प्रसन्नता के प्रतीक हैं । अवसाद में इनका क्या काम ।" तभी पहले वाले सज्जन कहने लगे—"बातें तो आपकी सब ठीक हैं, लेकिन हम अगर ऐसा करने लगे तो हमें दुनिया कुछ का कुछ कहेगी ।"

तब कमल किशोरजी ने कहा—"दुनिया वालों का डर हमेशा गलत काम करने से पहले करना चाहिए । सही और उद्देश्यपूर्ण मार्ग पर चलने के लिए व्यर्थ की आलोचनाओं की परवाह नहीं करना चाहिए ।"

और प्रश्नकर्त्ता का समाधान हो गया । वह सोचने लगा मैं ही अभी इनके कार्य की आलोचना कर रहा था । पर वस्तुस्थिति समझने पर वास्तविकता को मानना ही पड़ा ।

दो हजार व्यक्तियों का मृत्युभोज न हो सका

पिछले दिनों जैसलमेर जिले के अधिकतर गाँवों को अकालग्रस्त घोषित किया गया था । जहाँ न पीने को पानी है और न खाने को अन्न । पानी न बरसने के कारण कई वर्षों से वहाँ की रेतीली जमीन पर घास तक नहीं उग रही है, जिसे खाकर पशु अपनी जीवन रक्षा तो कर सकें । जहाँ मनुष्यों को ही पीने के लिए पानी लाने के लिए मीलों जाना पड़ता हो और घण्टों प्रतीक्षा करनी पड़ती हो वहाँ के पशुओं की कितनी दयनीय स्थिति होगी, इसे आसानी से समझा जा सकता है ।

ऐसे अकाल ग्रस्त क्षेत्र में भी एक राजपूत परिवार ने आस-पास के दस गाँवों के दो हजार व्यक्तियों को निमंत्रण देकर मृत्युभोज का आयोजन किया । उस परिवार में एक सम्बन्धी की मृत्यु दो माह पूर्व हो चुकी थी और वह उसकी आत्मा को शान्ति पहुँचाने और अपनी बात बढ़ाने का दिखावा करने के लिए मृत्युभोज का आयोजन करने के लिये बड़े उत्सुक थे ।

गाँव के कई सम्भ्रान्त व्यक्तियों ने उस परिवार के सदस्यों को समझाया और कहा कि जब इस क्षेत्र में भुखमरी फैल रही हो उस समय आप चार-पाँच हजार रुपये की राशि ऐसे निरर्थक कार्य में लगा रहे हो तो यह आपके लिए भी शोभा नहीं देता । यदि आप खिलाना ही चाहते हैं तो वास्तव में जो सहायता के योग्य हैं उन्हें कपड़ा या अनाज का वितरण कर दिया जाय, पानी की सुविधा करा दी जाय तो उनकी भूखी-प्यासी आत्माएँ खुश होकर आशीर्वाद देंगी । इसमें आपका नाम भी होगा और पीड़ितों को राहत भी मिलेगी ।

पर भला यह भूखे व्यक्तियों को दावत क्यों देने लगे, वह तो उन व्यक्तियों को शुरू से खिलाते रहे हैं जिनके यहाँ समय-समय पर स्वयं खाकर आये हैं । दावतों में जितना सामान खाया जाता है लगभग उतना ही पत्तलों पर जूठन छोड़कर बरबाद किया जाता है ।

उनके ही एक सम्बन्धी ने उन्हें यह भी सलाह दी थी कि यदि आप मृतक व्यक्ति की स्मृति को स्थायी बनाने के इच्छुक हों तो उसके नाम से किसी विद्यालय, कुआँ, पंचायत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घर या तालाब आदि के निर्माण के लिए उतनी धनराशि दे दीजिए तो उस व्यक्ति का नाम भी हो जायगा और इस क्षेत्र के अभावग्रस्त लोगों को कुछ फायदा होगा । उनका सुझाव किसी सार्वजनिक निर्माण कार्य में धन लगाने का कितना तर्क संगत था । कुएँ या विद्यालय की स्थापना कितने परिवारों को आराम देती । जिन बच्चों को दूर-दूर के विद्यालयों में पढ़ने के लिए जाना होता है यदि उनके गाँव में ही प्राथमिक विद्यालय खुल जाय तो उन्हें कितनी सुविधा हो सकती है । जो माता-पिता अपने बच्चों को दूर की वजह से स्कूल नहीं भेजते वह भी पढ़ा सकते हैं और यह जीता जागता स्मारक, अन्य व्यक्तियों को भी ऐसे ही रचनात्मक कार्यों में धन लगाने की प्रेरणा देता साथ ही मृतक व्यक्ति के प्रति सबसे अच्छी श्रद्धांजलि सिद्ध होती ।

पर उन्हें तो खीर, पूड़ी, लड्डू और मालपुए खिलाने की धुन थी । सो उसी के अनुसार घी, आटा, शक्कर तथा अन्य उपयोगी वस्तुएँ जुटाने लगे । जब गाँव के विवेकशील व्यक्तियों की एक भी न चली तो उन्होंने अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट को सारी स्थिति से अवगत कराया । वह पुलिस के जवानों को लेकर उस गाँव पहुँच गये और सारी खाद्य सामग्री अपने कब्जे में कर ली । अब मजबूरी में उस परिवार को यह दावत टालनी पड़ी ।

जूठन छोड़ने एवं दावत लुटाने की कुरीति बन्द हो

अपने देश में एक ओर जहाँ अनेकों को पेट भरना मुश्किल हो रहा है वहीं दूसरी ओर अधिकांश बच्चों को जिगर, तिल्ली, अपच की बीमारियाँ घेरे हुए हैं । इन बीमारियों का मूल कारण है अति भोजन । पेट की आवश्यकता से अधिक आहार देकर भोजन तो बरबाद करते ही हैं, रोगों को अलग से निमंत्रण देते रहते हैं । एक ओर अन्न की बर्बादी, दूसरी ओर औषधियों की माँग और आर्थिक असंतुलन—सभी मिलकर सामाजिक विकास के मार्ग में आड़े खड़े हो जाते हैं । छोटे बच्चों को कम आहार दिया जाय, अधिकांश दूध-मट्ठा जैसे पेय पदार्थ दिये जायें तो इससे उनकी खेलने की शक्ति बनी रहती है, फलस्वरूप शारीरिक अवयवों का विकास और रक्त में तेजस्विता की तेजी से वृद्धि होती है । बच्चे खूब स्वस्थ और प्रसन्न रहते हैं । अभिभावक भी निश्चिन्त और अपने कार्यों में भली प्रकार लगे रहते हैं । अन्न-बर्बादी का एक स्रोत है बालकों का अति भोजन । इसे दूर करें तो उसके साथ अनेकों दूसरी समस्यायें भी दूर होती हैं । बालकों को परिमित भोजन देने की आदत डाल दी जाये तो अनेक रोगों से बचेंगे और खाद्यान्न की बचत होगी ।

यह बुराई बालकों में ही हो सो बात नहीं । उनकी आहार की मात्रा की दृष्टि से यह अपव्यय तो बहुत ही कम समझा जाता है, पर अधिक उम्र के लोगों में भी कुछ ऐसी गलत धारणाएँ हाती हैं कि जो अधिक खाता है अधिक स्वस्थ रहता है । थाली में भोजन छोड़ना भी बड़े होने का लक्षण मानते हैं । एक कमजोरी यह भी है कि थाली में एक बार में अनेक स्वादों के अनेक भोजन सजाते हैं । इससे भी अति भोजन और अन्न की बरबादी ही होती है । यह मानना गलत है कि अति भोजन से स्वास्थ्य अच्छा रहता है । मनुस्मृति में इस सम्बन्ध में लिखा गया है—

अनारोग्य-मनायुष्यमस्वर्ग्यं चातिभोजनम् ।
अपुण्यं लोकविद्विष्टम् तस्मात्तत्परिवर्जयेत् ॥

अर्थात्—"अति भोजन स्वास्थ्य के विनाश का कारण, आयु नाश करने वाला, स्वर्ग का विरोधी, पुण्य नष्ट करने वाला तथा अपयश प्रदान करता है । अत: उससे दूर रहें और मितभोजी बनें ।"

नीवल्पाहारी व्यक्ति सदैव ही निरोग रहते हैं, उनकी आयु लम्बी होती है, संयम सध जाता है, शारीरिक व मानसिक शक्तियाँ प्रदीप्त होती हैं और सांसारिक सुख प्राप्त होते हैं पर अति-भोजन से अपच, अजीर्ण, वद्धकोष्ठ, रक्त विकार आदि अनेकों बीमारियाँ ही पैदा होती हैं । उपवास का प्रयोजन अति भोजन से उत्पन्न पाचन संस्थान की थकावट को दूर कर उसे कार्य सक्षम बनाना होता है । अतएव यह नहीं कहा जा सकता कि अति भोजन स्वास्थ्य और बल प्रदान करता है, वरन् इसके विपरीत जो कम खाते हैं उन्हें ही आयुर्बल, उत्तम स्वास्थ्य आदि की प्राप्ति होती है ।

अति भोजन अन्न की बरबादी के अतिरिक्त और कुछ नहीं । अत: यह सभी का राष्ट्रीय उत्तरदायित्व भी है कि वे आहार में आवश्यकता से कुछ कम मात्रा ही लिया करें और सप्ताह में कम से कम एक प्रहर का आंशिक उपवास भी किया करें ।

थाली में जूठन छोड़ने की आदत भी अत्यन्त निकृष्ट होती है । इसका कारण भी अति-भोजन की प्रवृत्ति, स्वादप्रियता या परोसने वालों की असावधानी ही कही जायेगी । इसमें एक अंश दोष स्त्रियों का भी है कि वे आवश्यकता से अधिक भोजन तैयार कर लेती हैं फिर उसका अधिकांश भाग जूठन में बर्बाद होता है या उसें कई दिन तक खाया जाता है । देहातों में तो यह रीति चल गई है कि प्रात:काल चारपाई से सोकर उठते ही बच्चों को पहले दिन की बासी रोटियाँ दे दी जाती हैं । यह सारा अन्न बर्बादी का ही लक्षण है । इसमें एक ओर तो बहुत-सा अन्न कटोरियों और नापदानों में बह जाता है दूसरी ओर पेटों में विकार बन कर फूटता और स्वास्थ्य की समस्या जटिल बना डालता है ।

चाहिए यह कि थाली में कम भोजन परोसा जाय और जो परोस दिया जाय उसे छोड़ा न जाय बाद में यदि थोड़ी-सी भूख शेष रह जाती है तो पेट का उतना हिस्सा खाली रखना कोई बुरी बात नहीं है उससे किसी का शरीर कमजोर नहीं होगा । अधिक भूख लगे तो थोड़ा-थोड़ा भोजन दो के बजाय तीन बार किया जा सकता है, किन्तु एक बार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में ही आवश्यकता से अधिक भोजन थाली में परोस लेना फिर उसे जूठन के रूप में छोड़ना या अधिक उदरस्थ कर जाना यह सभी आदतें हानिकारक हैं । मनुष्य को दिन में दो बार भोजन चाहिए और वह भी जितना हल्का और सुपाच्य रहे उतना ही अच्छा ।

पार्टियों, सहभोजों, विवाह-बारातों, ब्रह्म भोजों में तो अन्न की और भी दुर्दशा देखने को मिलती है । भारतवर्ष में गोत्र और वंश के नाम पर चलने वाले भोजों में इतने अधिक आदमी इकट्ठा हो जाते हैं कि बेचारे मेजबान की सारी कोठियाँ ही खाली कर जाते हैं । भोजन करने वाले इसे अपनी शान और पुण्य वृद्धि का साधन मानते हैं कि इस तरह बाद में उन्हें कितना पारिवारिक संकट उठाना पड़ता है यह किसी से छुपा नहीं । घर वाले भूखों मरें, बालकों का विकास रुके, कर्ज बढ़े आदि अनेकों परेशानियाँ उठती हैं ।

हमारे यहाँ बड़ी-बड़ी दावतों का रिवाज बहुत अधिक है । अनेक लोगों की निगाह में तो ऐसी दावतें नामवरी और प्रतिष्ठा का साधन मानी जाती हैं । बहुत से व्यक्ति दूसरों की होड़ करने के लिए हजार-हजार, पाँच-पाँच सौ व्यक्तियों के भोज कर डालते हैं । इस समय तो महँगी और सरकारी नियमों से प्राय: रुक जाना पड़ा है अन्यथा कुछ ही वर्ष पहले अनेक लोग चार-चार सौ, पाँच-पाँच सौ व्यक्तियों की बारात ले जाते थे और कई दिन तक दावतें उड़ाकर भोज्य-सामग्री का अपव्यय करते थे । अब भी कितने ही बड़े लोगों के यहाँ ऐसा दृश्य देखने में आता है । गाँवों में अब भी प्राय: ऐसे मृतकभोज होते हैं जिनमें चार-चार, पाँच-पाँच हजार व्यक्ति भोजन करते हैं । अनेक लोग तीर्थयात्रा के उपलक्ष्य में सैकड़ों व्यक्तियों की दावतें कर डालते हैं । यहाँ के साधु नामधारी भी, जो दूसरों से माँग कर अपना पेट पालते हैं, प्राय: हजार, दो-हजार लोगों के भण्डारे करके पचासों मन खाद्य सामग्री खर्च कर डालते हैं ।

इन दावतों के उद्देश्य पर और उनके तरीके पर जब हम विचार करते हैं तो हमें उनकी कोई उपयोगिता या लाभ नहीं जान पड़ता । हम विभिन्न संस्कारों या खुशी के अवसरों पर इष्ट-मित्रों का सत्कार करने का विरोध नहीं करते पर इस प्रकार के भोज स्वाभाविक और उपयुक्त रीति से दिये जाने चाहिए । दस-बीस मित्रों या सगे सम्बन्धियों का स्वागत, सत्कार करना और बात है और चार-पाँच सौ परिचित-अपरिचित व्यक्तियों की बहुत बड़ी ज्यौनार या भोजों का भार उठाना और बात है । ऐसे भोज प्राय: परम्परा या रूढ़ि का पालन करने के लिए दिए जाते हैं और उनके खर्च तथा व्यवस्था का भार व्यक्ति विवश होकर ही उठाते हैं । इनमें मृतकभोज की रूढ़ि तो अत्यन्त अदूरदर्शिता और अविवेक की सूचक है । किसी परिवार का कोई प्रिय सदस्य मर जाय, घर के सब व्यक्ति उसके लिए दु:खी और सन्तापित हों, स्त्रियाँ दिन-रात करुण विलाप करती रहती हों और उसी अवसर पर उनसे भोज देने को कहना और उनके घर में हँसी-मजाक करके मिठाई उड़ाना एक ऐसी अजीब बात जान पड़ती है कि जिसका कोई तुक ही समझ में नहीं आता । ऐसे लोगों को न तो सभ्य कहा जा सकता और न समझदार । एक तो पराया अन्न ही मनुष्य को जल्दी ग्रहण नहीं करना चाहिए और वह भी किसी मृतक के नाम पर खाया जाना तो और भी गर्हित है ।

इन दावतों में जो एक बड़ा दोष पाया जाता है वह है जूठन के रूप में बहुत से अन्न की बर्बादी । हमारे यहाँ ज्यौनारों या दावतों में प्रत्येक मनुष्य को उसकी आवश्यकतानुसार नहीं वरन् एक समान खाद्य-सामग्री परोस दी जाती है । यदि परोसी हुई चीजों में से कोई चीज किसी को पसन्द न हो, या स्वास्थ्य सम्बन्धी कारण से वह उसे न खा सकता हो, तो भी वह उसकी पत्तल में रख दी जाती है । लेने वाला इन्कार नहीं करता, पर बाद में उसे प्राय: ज्यों का त्यों छोड़ देता है । फिर बड़े आदमियों के यहाँ ब्याह-बारात के अवसर पर प्राय: जबरदस्ती खाना परोसा जाता है, ताकि यह प्रकट हो सके कि वे वर पक्ष की कितनी अधिक खातिर कर रहे हैं । इसका नतीजा यह होता है कि जितना खाना खाया जाता है प्राय: उतना ही फेंका जाता है ।

कई व्यक्ति सोचते हैं कि वे जूठन छोड़कर मेहतर पर कोई बड़ा उपकार या अहसान कर रहे हैं । ऐसे व्यक्तियों को समझना चाहिए कि किसी को जूठन खिलाना उसके स्वाभिमान को भारी आघात पहुँचाना है । इससे खाने वाले में आत्महीनता की भावना बढ़ती है और खिलाने वाले में अहंकार की प्रवृत्ति । यह दोनों के लिए ही अहितकर है । फिर जूठन के साथ खाने वाले के घृणित, छूत वाले या गुप्त रोग उस बेचारे मेहतर पर आक्रमण कर सकते हैं और उसको तथा उसके बच्चों को भारी आघात पहुँचा सकते हैं ।

यदि दान और उदारतावश मेहतर या दूसरे किसी गरीब को कुछ देना है तो अच्छा और शुद्ध भोजन उसे सम्मानपूर्वक दिया जाना चाहिए । जितनी जूठन दी गई है भले ही उससे चौगुना दिया जाय, पर वह देना चाहिए मनुष्यता की मर्यादा के अन्दर । जूठन खाना और खिलाना दोनों ही अनैतिक है । इस दुष्प्रवृत्ति को बढ़ाने वाले किसी का उपकार नहीं करते वरन् अपने धन की बर्बादी के साथ-साथ दूसरों के लिए शारीरिक एवं मानसिक अभिशाप भरी परिस्थिति उत्पन्न करते हैं ।

बड़े आदमियों को और अनेक मध्यम श्रेणी वालों को भी अपने घर जूठन छोड़ने की आदत पड़ जाती है । यदि इस जूठन का भी देशव्यापी स्तर पर हिसाब लगाया जाय तो प्रतिवर्ष हजारों लाखों मन इस प्रकार व्यर्थ में नष्ट होता है । जिस समय देश में अन्न की कमी का रोना रोया जाता है और हर साल करोड़ों रुपये का अन्न बाहर से मँगाया जाता है, उस जमाने में इस प्रकार जूठन छोड़कर अपना बड़प्पन जाहिर करना अथवा उस आदत को न सुधारना कितना बुरा और समाज के प्रति एक अपराध है, यह कहने की आवश्यकता नहीं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अगर धार्मिक और नैतिक दृष्टि से भी विचार किया जाय तो इस प्रथा में अनेक दोष जान पड़ते हैं । हमारे यहाँ अन्न को देवता माना गया है । वेदों तक में "अन्नै वै प्राणा:" कहकर उसका महत्त्व स्वीकार किया गया है और अनेक स्थलों में तो उसे ईश्वर का ही रूप बतलाया गया है । वास्तव में जब मनुष्य का अस्तित्व ही अन्न और अन्य प्रकार के खाद्य पदार्थों पर है, तो उसे देवता मानना ही उचित है । जिस प्रकार वायु, जल, प्रकाश के बिना हम जीवित नहीं रह सकते और उनको वायु देवता आदि नामों से पुकारते हैं, उसी प्रकार अन्न देवता का महत्त्व भी स्पष्ट और सर्वविदित है । बड़ी-बड़ी दावतें करके उसका अपव्यय करना और जूठन छोड़कर उसका अपमान करना किसी दृष्टि से युक्तियुक्त और उचित नहीं कहा जा सकता । ये बड़ी हानिकारक कुरीतियाँ हैं जिनसे समाज की बड़ी क्षति होती है । बड़े लोग तो अपना बड़प्पन दिखाने को सैकड़ों, हजारों व्यक्तियों की दावतें करते हैं और साधारण लोगों को उनकी देखादेखी अथवा जाति-बिरादरी वालों के दबाव से वैसी दावतें करनी पड़ती हैं और फलस्वरूप उनकी आर्थिक अवस्था बिगड़ जाती है । अनेक परिवार तो ऐसी दावतों के कारण पूर्णत: नष्ट हो चुके हैं । ऐसी मूर्खतापूर्ण कुरीति को जारी रखना और उसके प्रचलन में सहयोग देना पक्का समाजद्रोह का कार्य है । इसे जितना जल्दी त्याग दिया जाय उतना ही हम सबका कल्याण है ।

अपव्यय का ओछापन

धन कमाने का एक बड़ा उद्देश्य अपनी हर रोज की आवश्यकताओं की पूर्ति माना गया है । जो लोग धन को धन के लिए ही कमाते हैं अथवा जो उसे मनमाने ढंग से बर्बाद कर डालने में ही खूबी समझते हैं, वे दोनों ही वास्तविक मार्ग से भटक जाते हैं और अपने लक्ष्य को खोकर झाड़-झंखाड़ों में जा फँसते हैं । हमको अपना परिश्रम से कमाया हुआ धन ऐसे ही कामों में खर्च करना चाहिए, जिनसे हमारी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक प्रगति होती रहे और हम अपने साथ ही निकटवर्ती लोगों के जीवन को सुखी बना सकें ।

पर हमारे समाज में ऐसे लोगों की कमी नहीं जिन्होंने धन का उद्देश्य उपयोगिता और उन्नति के बजाय जूठी शान-शौकत, दिखावा, फैशनपरस्ती और दुर्व्यसन की पूर्ति समझ रखा है । केवल अमीर कहलाने वाले व्यक्तियों में ही नहीं साधारण श्रेणी वालों में भी अपनी सामर्थ्य से अधिक व्यय करके दूसरों के सामने शान दिखलाने की प्रवृत्ति पाई जाती है । ऐसे अनेक व्यक्ति देखे जाते हैं कि जिनके स्त्री-बच्चे घर में भरपेट भोजन के लिए भी तरसते रहते हैं, पर वे बाहर सूट-बूट धारण करके तथा अन्य लोगों के सामने पान, सिगरेट, चाय आदि में मुक्तहस्त से खर्च करके अपने को पैसा वाला सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं । अपव्यय के बहुत से मार्ग और कारण हो सकते हैं, पर अधिकांश की जड़ में यह भाव अवश्य काम करता रहता है कि ऊपरी ढोंग और भड़कीली पोशाक के बल पर लोग हमको बड़ा आदमी समझने लगें ।

यदि इस प्रवृत्ति पर जरा गहराई से विचार किया जाय तो इसका मूल आधार मनुष्य का थोथापन, उथलापन और संकुचित दृष्टिकोण ही प्रतीत होता है जो व्यक्ति जितना ही कम योग्यता वाला, उच्चमानवीय गुणों से हीन, सुशिक्षा और सद्विचारों से शून्य होता है, वह उतनी ही अधिक बनावट, सजावट तथा प्रदर्शन करता है । जिन लोगों में विद्या और ज्ञान का अभाव होता है वे ही अपने को समझदार सिद्ध करने के लिए इधर-उधर की लम्बी-चौड़ी गप्पें हाँका करते हैं । जिनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती है वे ही प्राय: कई तरह की फिजूलखर्ची करके अपनी गरीबी की बात को ढकना चाहते हैं । जो स्त्रियाँ अनपढ़ और छोटे दर्जे की होती हैं वे आधुनिक फैशन के वस्त्र पहनकर या बाहरी बनाव शृंगार करके अपने को ऊँची श्रेणी की प्रकट करने की चेष्टा किया करती हैं । सुन्दर न होने पर भी वे साबुन, तेल, पाउडर के बल पर सौन्दर्ययुक्त बनने का प्रयत्न करती हैं और घर में कुछ जमा पूँजी न होने पर भी कुछ असली-नकली आभूषणों को पहनकर अपने को धन-सम्पन्न साबित करना चाहती हैं ।

इस प्रवृत्ति का एक ही कारण लोगों की यह अभिलाषा होती कि हम किसी से कम न समझे जायें, हमारा दूसरों के समान ही आदर हो । हमने सौ-पचास रुपया मासिक पाने वालों को बीस-पच्चीस की बुशशर्ट या साड़ी पहनते देखकर जब उनकी निरर्थकता बतलाई तो हमको यही उत्तर मिला कि यदि इस प्रकार के वस्त्र न पहनें तो संगी-साथियों में हमारी अप्रतिष्ठा होगी । ऐसे लोगों के दिमाग में यही विचार घुसा रहता है कि जैसा दूसरे करते हैं, वैसा ही यदि हम भी न करेंगे तो हम छोटे समझे जायेंगे और हमारी बात हलकी पड़ जायेगी । ऐसे ही व्यक्ति दूसरों को सवारी में जाते देखकर स्वयं भी वैसा ही करते हैं और अन्य लोगों के यहाँ नौकर चाकर लगे देखकर अपने यहाँ भी कम से कम एक बर्तन साफ करने वाली ही लगा लेते हैं । इस प्रकार के मिथ्या प्रदर्शन से यद्यपि उन लोगों की आर्थिक कठिनाइयाँ और भी बढ़ जाती हैं, अनेक बार उनको कर्ज में फँस जाना पड़ता है, पर झूठी नामबरी और दिखावटी बड़प्पन का भूत उन पर ऐसा सवार रहता है कि वे धन का अपव्यय करके अपने तथा परिवार के भावी जीवन को संकटापन्न कर लेते हैं ।

पोशाक सम्बन्धी कृत्रिमता—आजकल सबसे अधिक फिजूलखर्ची वस्त्रों के सम्बन्ध में दिखलाई पड़ती है । भारत की प्राचीन संस्कृति कम से कम वस्त्र पहनने को प्रशंसनीय बतलाती है और हम प्राचीन ग्रन्थों में तत्कालीन लोगों का जो वर्णन पढ़ते हैं उससे जान पड़ता है कि वे प्राय: एक धोती और एक ओढ़ने का दुपट्टा ही काम में लाते थे । सिले हुए वस्त्रों का प्रचार नहीं था अथवा वे बहुत ही कम काम में लाये जाते थे । इसका एक कारण यह भी था कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारतवर्ष की आवहवा कहीं गर्म और कहीं समशीतोष्ण है, इसमें अधिक वस्त्र पहनने अथवा कसे हुए (फिट) वस्त्रों का प्रयोग करने से असुविधा और बेचैनी ही रहती है । दूसरी बात यह भी है कि वस्त्रों को जितना अधिक काट-छाँटकर फैशनेबिल बनने की कोशिश की जायगी उतना ही अधिक कपड़ा काटने में बर्बाद जायगा, कपड़े की मजबूती घटेगी और उसकी उपयोगिता में कमी पड़ जायगी । बहुत टुकड़ों में काटकर सिला हुआ कपड़ा प्राय: कहीं न कहीं से खुलता, फटता ही रहता है और सदा उसकी मरम्मत की आवश्यकता पड़ा करती है ।

पर आजकल लोगों ने फैशन की होड़ में फँसकर इन सब बातों को भुला दिया है । इस समय तो सबको यही लालसा लगी रहती है कि ज्यादा से ज्यादा भड़कीले, चमकीले, मुलायम कपड़े पहने जायें, उनको कलप, इस्तरी से नये की तरह बनाये रखा जाय और उनमें कहीं जरा-सी भी शिकन न आवे । फैशन के भूत ने लोगों को यहाँ तक वशीभूत कर लिया है कि वे बीस रुपये के कपड़े की बीस ही रुपया या उससे भी अधिक सिलाई देने में नहीं हिचकिचाते और उसे ऐसा 'फिट' सिलाते हैं कि वह दूसरे किसी के काम आ ही नहीं सकता । यह सब योरोप, अमेरिका की कृत्रिमतापूर्ण सभ्यता का प्रताप है, जहाँ लोगों का जीवन और रहन-सहन अधिकांश में नकली बन गया है । इस सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द के जीवन की एक घटना बहुत शिक्षाप्रद है । जब वे अमेरिका में एक बड़े नगर में भारतीय साधुओं के से सादे वस्त्र पहन कर सड़क पर जा रहे थे तो लोग उनको कौतूहल की दृष्टि से देखने लगे और कितने ही बाजारू व्यक्ति और लड़के तमाशे की तरह उनके पीछे लगकर हँसी-मजाक करने लगे । स्वामीजी ठहर गये और उन लोगों की तरफ मुड़कर बोले—"सज्जन ! आप मेरे वेश को देखकर परेशान न हों । मैं जिस देश से आया हूँ वहाँ मनुष्य की सज्जनता की परीक्षा उसके चरित्र से की जाती है, पर आपके यहाँ 'सज्जनता' का निर्माणकर्ता दर्जी को मान लिया गया है, अर्थात् जो जितना अधिक बढ़िया और अपटूडेट सूट पहने तो वह उतना ही सम्माननीय मान लिया जाता है । मेरे सम्बन्ध में कोई निर्णय आप इस कसौटी के द्वारा न करें ।"

इस फैशन-प्रियता के कारण न मालूम कितने लोगों को जीवन निर्वाह की कठिनाइयाँ सहन करनी पड़ रही हैं और उनके सम्बन्धियों को परेशान रहना पड़ता है । आप अगर ध्यान दें और जाँच करें तो आपको सूट-बूट, सैलून में कटे बाल, घड़ी, छड़ी से सुसज्जित युवकों में सैकड़ों ऐसे मिलेंगे जिनके घर की दशा दयनीय है, आश्रित लोग कष्ट से जीवन बिता रहे हैं, पर वे 'बाबू' या 'साहब' बनने के शौक में अपनी थोड़ी-सी कमाई या घर की साधारण पूँजी को फैशन-देव की वेदी पर चढ़ाते रहते हैं । उनके दिमाग में यह झूठा विचार प्रविष्ट हो गया है कि लोग हमारे बाहरी रूप को देखकर हमें इज्जतदार और शरीफ आदमी समझेंगे और हम उनको रौब में लाकर अपना मतलब पूरा कर लेंगे पर वे बेचारे यह नहीं जानते कि ऐसे बहुरूपियों को देखते-देखते दुनिया उनकी असलियत को समझ गई है और चाहे मुँह पर कुछ न कहे, पर मन में असली बात को समझती है और उनके ऊपर हँसती है ।

यह फैशन का रोग इतना घातक है कि हजारों, लाखों सम्पन्न घरानों के व्यक्ति इसके कारण कौड़ी-कौड़ी को मुहताज बनकर नष्ट-भ्रष्ट हो गये । जिन अनुभवहीन नवयुवकों को अपने पूर्वजों की कमाई अनायास मिल जाती है, वे प्राय: दूसरों की नकल करके रुपया को पानी की तरह बहाने लगते हैं । वे यह जानते भी नहीं कि इसे कमाने में कितना परिश्रम करना पड़ता है । बस, बड़े लोगों की तरह नये-नये डिजाइन के कीमती वस्त्र पहनना और तमाशे में लगे रहना ही उनको जीवन का सार जान पड़ता है । अनेक चालाक व्यक्ति भी उनके मित्र और प्रशंसक बनकर उनको उभाड़ते रहते हैं । अन्त में सब जमा पूँजी खर्च होकर वे खोखले हो जाते हैं तो आँखें खुलती हैं, पर 'तब पछताये होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत' । उस समय तमाम स्वार्थी मित्र भी किनाराकशी करने लगते हैं और फैशन के भक्तों को शेष जीवन अत्यन्त लांछनापूर्ण दुरवस्था में बिताना पड़ता है ।

स्त्रियाँ और फैशनपरस्ती—फैशन का रोग स्त्रियों में भी बहुत अधिक फैला हुआ है । उनको सदा नये डिजाइन और रंगों की साड़ियाँ तथा ब्लाऊज आदि चाहिए । इसके लिए वे अपना जितना समय और धन खर्च करती हैं उतना किसी अन्य उपयोगी कार्य में किया जाय तो उनका अपना तथा परिवार वालों का जीवन कहीं अधिक प्रगतिशील और सुखी बन सकता है । ऐसी स्त्रियाँ प्रतिदिन घण्टों साज-सज्जा, वेश-शृंगार में लगा देती हैं और वह सिर्फ इसलिए कि उनकी दो-चार सखी-सहेली उनकी बनावट की प्रशंसा कर दें । इस कारण स्त्रियों में पारस्परिक ईर्ष्या का भी बहुत अधिक प्रादुर्भाव होता है और बेचारे पति की आफत आ जाती है । श्रीमती जी न उनकी हैसियत तथा आमदनी को देखती हैं और न उनके अन्य उत्तरदायित्वों का ख्याल करती हैं, बस झट से फर्मायश कर देती हैं कि जैसी साड़ी या कोई अन्य शृंगार की सामग्री अमुक स्त्री ने धारण कर रखी है, वैसी ही मेरे लिये भी उपस्थित करो । अगर पति उनकी बात पर ध्यान नहीं देता, अवहेलना करता है तो घर में क्लेश का वातावरण उत्पन्न होता है, गृह प्रबन्ध में अव्यवस्था होने लगती है, समय पर ठीक भोजन भी मिलना कठिन हो जाता है, छोटे बच्चे अलग रोते-चिल्लाते रहते हैं । अन्त में तंग आकर उसे झुकना ही पड़ता है और इस अपव्यय के लिए जब सीधी तरह परिश्रम से रुपया नहीं मिलता तो बेईमानी, रिश्वत, चोरी, गबन, ठगी जैसे अधन्य कृत्यों का भी सहारा लेना पड़ता है । इसका अन्तिम परिणाम घर का नैतिक पतन तो होता ही है, कभी-कभी पति के ऊपर भयंकर विपत्ति के बादल भी मँडराने लगते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह रोग कॉलेज, स्कूलों की लड़कियों में बहुत फैला हुआ है । वे पश्चिमी रहन-सहन की नकल करना बड़े गर्व का विषय समझती हैं और इसके लिए अनेक बार ऐसी मर्यादाशून्य पोशाक में बाहर निकलती हैं जिस पर भले आदमियों को शर्म से सिर नीचा कर लेना पड़ता है और आवारा तथा लफंगों को आवाज कसने का मौका मिलता है । इस सम्बन्ध में हमको एक तीस-पैंतीस वर्ष पुरानी घटना याद आती है जब लाहौर की किसी कॉलेज-गर्ल ने महात्मा गाँधी को पत्र लिखकर यह शिकायत की थी कि वहाँ के कॉलेजों में लड़के, लड़कियों के साथ बहुत छेड़छाड़ करते हैं । बीच बाजार में उनके प्रति तरह-तरह के अपशब्द, अश्लील संकेत करते हैं और कभी-कभी थोड़ी हाथापाई भी कर बैठते हैं । महात्माजी ने अपने अखबार में इस पत्र का उत्तर देते हुए लड़कों की चरित्रहीनता की निन्दा की थी, उनको बहुत फटकारा भी था, पर साथ ही यह भी पूछा था कि "क्या लड़कियाँ इस सम्बन्ध में बिल्कुल निर्दोष हैं? क्या वे अपने शरीर के कितने ही अंगों को उघाड़ा रखने वाले निर्लज्जतापूर्ण फैशन से उन युवकों की उच्छृंखलता को बढ़ावा नहीं देतीं?" उन्होंने यह सुझाव दिया था कि यदि लड़कियाँ इस आरोप को असत्य बतलाती हैं तो वे बिल्कुल सादे वस्त्रों में सर के बाल मुड़ाकर बाजार में निकलें और फिर देखें कि कौन युवक उनको छेड़ता है या असभ्यतापूर्ण शब्दों का प्रयोग करता है? ताली दोनों हाथों से बजती है । जब लड़कियाँ मर्यादा को त्याग और अर्धनग्न फैशनों का प्रदर्शन करती हैं तो युवकों की अभद्रता का भाव भी उभड़ता है और वैसी शर्मनाक घटनाएँ घटने लगती हैं जिनकी शिकायत उक्त पत्र-लेखिका ने की थी ।

इस समय तो यह प्रवृत्ति एक अभिशाप का रूप धारण करती जाती है । सिनेमा के भीषण प्रकोप के फलस्वरूप स्त्रियों में सिनेमा अभिनेत्रियों के से वस्त्र धारण करने की आकांक्षा भड़क उठी है । वे इसके लिए मनमाना खर्च करके नये से नये डिजायनों के कपड़े सिलवाती हैं । अभी एक समाचार-पत्र में छपा था कि पंजाब के कई नगरों में तो ऐसी फैशनप्रिय स्त्रियाँ दर्जियों को अपनी तरफ से सिनेमा देखने का खर्च देकर वहाँ भेजती हैं, जिससे वे किसी विशेष अभिनेत्री की पोशाक देखकर उसी डिजायन के कपड़े उनके लिए भी तैयार कर सकें । शौक और पतन की हद हो गई! अगर ऐसी फैशनेबिल पुतलियों को दुवृत्त व्यक्तियों द्वारा लांछना सहन करनी पड़े तो इसमें आश्चर्य क्या है?

जेवर और आभूषणों में बर्बादी—धन की बर्बादी की निगाह से जेवरों का शौक वस्त्रों से भी अधिक बढ़-चढ़ कर है । यद्यपि जेवरों की प्रथा प्राचीन समय से चली आई है और जंगली जातियों की स्त्रियाँ भी कांसा, पीतल, हड्डी आदि के किसी प्रकार के आभूषणों में अपनी देह को सजाने का प्रयत्न करती हैं, पर इस शौक ने आजकल हमारे देश में जैसा रूप धारण कर लिया है और जेवरों में अपव्यय करने के कारण जिस प्रकार अनेक घरों की अर्थव्यवस्था ही भंग हो जाती है, उससे वह एक शोचनीय परिस्थिति ही कही जायगी । जब लोग मकान-जमीन पशु अथवा अन्य उपयोगी वस्तुएँ बेचकर, गिरवी रखकर भी सोने के आभूषण पहनने का शौक पूरा कर लेना चाहते हैं, तो इसे सिवाय मूर्खता और लापरवाही के और क्या कहा जा सकता है ? इस शौक या व्यसन में कोई ऐसी बात नहीं है जिससे उसे व्यक्ति या समाज के लिए हितकारी कहा जा सके । यद्यपि कई लोग दुराग्रहवश जेवरों को 'घरेलू बैंक' की उपमा देते हैं जिससे मनुष्य के पास संकटकाल के लिए कुछ पूँजी सोने और चाँदी के रूप में बनी रहती है, पर यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो जेवरों द्वारा की जाने वाली बचत ऐसी है कि कुछ वर्षों में पूंजी भी समाप्त हो जाती है, ब्याज की तो बात ही क्या । जबकि बैंक में रखा रुपया पन्द्रह वर्ष में दुगना हो जायगा तब जेवरों में लगाये गये रुपयों का आधा, तिहाई मिलना भी कठिन होता है । यदि जेवरों के प्रयोग से होने वाली समस्त हानियों की गणना की जाय तो हमें निश्चित रूप से यह प्रतीत हो जाता है कि यह एक बहुत अधिक घाटे का ही सौदा है सबसे प्रथम तो सोने, चाँदी के आभूषणों की शुद्धता ही सन्देह-युक्त रहती है । ग्राहक बाजार से असली सोना और चाँदी खरीद कर सुनार को देता है, पर उनका जेवर बन जाने के बाद किसी को यह विश्वास नहीं हो पाता कि उसमें किसी तरह की मिलावट नहीं है । हमारे देश में आमतौर से यह धारणा पाई जाती है कि सुनार जेवरों में तोड़ी या अधिक मिलावट किये बिना कभी नहीं मान सकते । कहा जाता है कि "सुनार अपनी माँ का गहना भी बिना मिलावट के नहीं बना सकते ।" ऐसी दशा में धातु के जेवर के रूप में परिणत होते ही उसकी कीमत दस-बीस प्रतिशत कम मानली जाती है ।

(२) जेवर जितना अधिक फैशनदार बनाया जाता है उसमें उतना ही टाँका अधिक लगता है और गढ़ाई अधिक देनी पड़ती है । ऐसा जेवर जब पुराना पड़ जाने अथवा रुचि के बदले जाने से बेचा या बदला जाता है तो कम से कम एक-चौथाई मूल्य कट जाता है ।

(३) जो जेवर सदा पहने जाते हैं उनमें घिसाई का होना भी अनिवार्य है । हमारे एक मित्र ने एक बार कहा कि पिछले दस सालों में हम एक तोला सोना तो भोजन के साथ खा गये । जब उनसे इसका भेद पूछा गया तो उन्होंने बतलाया कि उनकी स्त्री के लिए दस वर्ष पूर्व दो तोला सोने के हाथों के पत्तर वाले कड़े बनवाये गये थे । वह प्रतिदिन तरकारी में डालने के लिए सिल पर पानी डालकर मसाला पीसा करती थी । इसकी रगड़ लगने से कड़े जरा-जरा घिसते गये और दस साल बाद जब टूट जाने पर उनको सुनार के पास लाया गया तो उनका सोना दो तोले के बजाय एक तोला ही ठहरा । इस प्रकार प्रति वर्ष न मालूम कितने हजार तोला सोना घिसाई में बर्बाद हो जाता है और देश को लाखों रुपये की हानि उठानी पड़ती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(४) जेवरों का पहनना स्वास्थ्य की दृष्टि से भी हानिकारक है । भारी गहनों के दबाव से उन अंगों में रक्त-संचरण में बाधा पड़ती है । साथ ही जो स्थान गहने से ढका रहता है उसकी सफाई ठीक तरह से नहीं हो पाती और वह गन्दा बना रहता है । खासकर नाक की कील, बुलाक तथा कानों की बालियों के आस-पास प्राय: काफी मैल जम जाता है जिसकी प्रतिदिन सफाई हो सकनी कठिन होती है । हाथों और पैरों में जहाँ चूड़ियाँ और कड़े, लच्छे आदि पहने जाते हैं उनके नीचे का चमड़ा काला पड़ जाता है । पैरों में तो घट्टे भी पड़ जाते हैं । इससे चर्म रोग पैदा होने का अंदेशा रहता है और उन अंगों की कुरूपता तो सहन करनी ही पड़ती है । वास्तव में देखा जाय तो जेवर पहनना असभ्य युग की एक बची-खुची प्रथा है । आजकल भी ऐसी जातियों की स्त्रियाँ और कुछ नहीं मिलता तो हड्डी-सींग, लकड़ी आदि के आभूषण बनाकर देह को भर लेती हैं । बहुत-सी अपने शरीर को रंग-बिरंगे गोदनों से गुदवा लेती हैं । इन सब रिवाजों का पालन इस ज्ञान-विज्ञान के युग में करते रहना एक उपहासास्पद बात ही है ।

(५) यह प्रथा गृह-कलह का भी एक बड़ा भारी कारण है । देवरानी-जिठानियों की प्रतिस्पर्धा प्रसिद्ध है जिसके कारण भरे-पूरे घरों में बँटवारा हो जाता है और टुकड़े-टुकड़े हो जाने के कारण उनकी सम्पन्नता में घुन लग जाता है । जहाँ घर की किसी एक स्त्री को दूसरी से कम जेवर मिले कि उनमें द्वेष का बीज वपन हो जाता है और वे अन्धी होकर अपने ही पैरों में कुल्हाड़ी मारने लगती हैं । घर की किचकिच और हाय-हाय से पुरुषों के मन में भी खिन्नता आती है, पारस्परिक सद्भाव भी घटने लगता है और परिणाम यही होता है कि चलती गाड़ी में रुकावट पड़ने लगती है । इसका कुप्रभाव आमदनी पर पड़ना अनिवार्य है और फिर घर के प्रत्येक व्यक्ति को कुछ-कुछ अंशों में जीवन-निर्वाह की सामग्री से वंचित होना स्वाभाविक है । जिन जेवर और कपड़ों के पीछे घर की स्त्रियाँ कलह करना आरम्भ करती हैं, वे भी उनको पहले की अपेक्षा कम मिलने लगते हैं । पुरुष की परेशानी के कारण उनकी अप्रसन्नता सहन करनी पड़ती है सो अलग ।

(६) छोटे बच्चों की हत्या का मुख्य कारण प्राय: किसी प्रकार का आभूषण पहनना ही होता है । समाचार-पत्रों में जो खबरें छपा करती हैं उनसे प्रकट होता है कि लोग दो-दो, चार-चार रुपये की चीजों के लिए लड़के-लड़कियों को मार डालते हैं । एकान्त स्थानों में यात्रियों को लूटे जाने की घटनाएँ, चोरी, डाँके आदि में भी जेवरों का बड़ा हाथ रहता है । उनको पहनते देखकर चोर मालदार होने का अनुमान कर लेते हैं और मौका पाकर किसी तरह सब मालमता लूटपाट लेते हैं । इस भय से छोटे गाँवों की स्त्रियाँ तो जेवर होते हुए भी उन्हें पहनने का साहस ही नहीं कर सकतीं, जिन लोगों के पास अधिक गहने होते हैं, उन्हें उनकी रक्षा के लिए मजबूत, ताले, बक्स, तिरोजी, बैंकों के 'लॉकर' आदि की व्यवस्था करनी पड़ती है और फिर भी चालाक चोर कभी-कभी इन सब उपायों को बेकार करके माल को निकाल ही लेते हैं । इससे बहुमूल्य जेवर सदैव खटके का कारण बने रहते हैं और उनके मालिकों को चिन्ता लगी ही रहती है ।

(७) इस समय हमारे समाज में जो वैवाहिक कुरीतियाँ बढ़ रही हैं और जिनके कारण अनेक व्यक्तियों का जीवन नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है, उसका एक बड़ा कारण यह जेवरों का मोह भी है । बड़े अमीर कहलाने वाले तो विवाहों में लाख-लाख रुपये के जेवर चढ़ाते हैं और उन्हें देखकर मध्यम स्थिति वालों को भी दस-बीस हजार के और साधारण श्रेणी वालों को दो-चार हजार के जेवर चढ़ाने ही पड़ते हैं । अपनी सामर्थ्य से अधिक खर्च करने के कारण वे इस रकम को लड़की वाले से दहेज के रूप में वसूल करते हैं जिससे उनका कचूमर निकल जाता है । दहेज की प्रथा ने इस समय कैसा भयंकर रूप धारण कर लिया है, इसे यहाँ ज्यादा विस्तार से बतलाना जरूरी नहीं है । इसके कारण न मालूम कितनी होनहार कन्याएँ खिलते ही कलियों की तरह मुरझा गईं और न जाने कितने खाते-पीते खुशहाल परिवार मटियामेट हो गये, इसका हिसाब लगा सकना कठिन है । सच पूछा जाय तो इस कुप्रथा ने इस समय हिन्दू समाज की जड़ को हिला रखा है और प्रत्येक लड़की का बाप विवाह-समस्या के कारण भयभीत रहता है । अगर विवाह में जेवरों को चढ़ाने का नियम बन्द कर दिया जाय तो दहेज की प्रथा को मिटाया जाना भी बहुत कुछ सम्भव हो सकता है ।

(८) जेवरों के प्रयोग को केवल एक वैयक्तिक शौक ही नहीं समझना चाहिए वरन् दरअसल यह एक राष्ट्रीय समस्या भी है । भारतवर्ष का कोई प्रान्त ऐसा नहीं जहाँ किसी न किसी रूप में जेवरों का कम या अधिक प्रचार न हो । कितने ही प्रान्तों में नाक के गहने, हाथों की चूड़ियाँ अथवा माथे का आभूषण सौभाग्यवती होने का चिह्न मान लिये गये हैं और इसलिए बहुत मामूली दर्जे के लोग भी किसी प्रकार इनको बनवाते ही हैं । यों तो देश में ऐसे भी लोग हैं जिनके पास हजार-हजार तोले के सुवर्ण आभूषण और एकाध मन चाँदी के जेवर मिल सकते हैं, पर यदि हम औसत हिसाब से प्रत्येक स्त्री के पास एक तोला सोना और पाँच तोला चाँदी के आभूषण भी मान लें तो बीस करोड़ स्त्रियों के पास तीस-चालीस अरब मूल्य के जेवर होना स्वाभाविक है । राष्ट्र की इतनी बड़ी रकम के जेवरों के रूप में बेकार पड़े रहने से कितनी हानि हो रही है इसकी कल्पना कर सकना भी कठिन है । अगर इनका कम से कम दर से भी हिसाब लगाया जाय तो जेवरों में लगे हुए रुपये पर एक अरब से भी अधिक रुपया ब्याज के रूप में मिल सकता है ।

यदि इतने रुपये को किसी साधारण व्यवसाय में लगाया जाय तो दस प्रतिशत का मुनाफा निश्चित रूप से प्राप्त हो सकता है । इससे प्रति वर्ष तीन-चार अरब की आय हो सकती है । यह इतनी बड़ी रकम है जिससे देश के प्रत्येक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

व्यक्ति की शिक्षा का सुप्रबन्ध किया जा सकता है अथवा उनके लिए स्वास्थ्यप्रद मकानों की व्यवस्था की जा सकती है । यदि जेवरों के रूप में लगी हुई पूरी रकम को उद्योग-धन्धों में लगा दिया जाय तो देश में इतने कारोबार स्थापित किए जा सकते हैं जिससे विदेशों से सब तरह का सामान मँगाना बन्द किया जा सकता है । इस रकम से जो कारखाने स्थापित किए जायेंगे उनमें कम से कम एक-दो करोड़ व्यक्तियों को काम करके जीविका कमाने का अवसर प्राप्त हो सकता है । इसी तथ्य को सामने रखकर स्वर्ण-नियन्त्रण कानून की घोषणा करते हुए श्री मोरारजी देसाई ने जेवर पहनने को राष्ट्रहित के विरुद्ध बतलाया था । यह केवल एक कल्पना ही नहीं है और न इसमें किसी प्रकार की अतिशयोक्ति है, क्योंकि इस समय धन कमाने का सबसे बड़ा साधन पूँजी का होना ही माना गया है । अगर पूँजी को साधारण योग्यता वाला व्यक्ति भी किसी व्यवसाय में या सामूहिक कम्पनियों आदि में लगायेगा तो उससे अवश्य ही दस-पाँच प्रतिशत के हिसाब से आमदनी होगी । इस आय पर यदि सामूहिक रूप से विचार किया जाय तो यह रकम अरबों तक पहुँचती है जिससे राष्ट्रीय विकास में बड़ा योगदान प्राप्त हो सकता है ।

जेवर स्त्रियों की दासता के प्रतीक हैं—सच पूछा जाय तो धातुओं के बने आभूषण प्रयोग में लाना कोई प्रशंसनीय बात नहीं । एक समय ऐसा भी था जब कि संसार में मारकाट और लड़ाई-झगड़े बहुत हुआ करते थे और जीतने वाला दल हारने वालों का धन-सम्पत्ति ही नहीं लूटता था, वरन् उनकी स्त्रियों और लड़कियों को भी पकड़ ले जाता था । उन स्त्रियों को प्राय: वे अपनी पत्नियाँ या दासी बनाकर रख लेते थे और वे भाग न जायें इसके लिए उनके हाथ-पैरों में पीतल, काँसा, ताँबा आदि किसी धातु के भारी-भारी कड़े पहना देते थे । ये एक प्रकार से हथकड़ी-बेड़ी का उद्देश्य भी पूरा करते थे । कुछ समय बाद जब वे उनके घरों में राजी से रहने लग जाती थीं और प्रेम करने लगती थीं तब उनको हलका कर दिया जाता था या उतार दिया जाता था । धीरे-धीरे इस प्रकार के कड़ों आदि का पहनना अभ्यास में आ गया और लोग बिना स्त्रियों के भागने की आशंका के भी उनको घटिया धातुओं का बनाने के बजाय चाँदी, सोना आदि का बनाकर पहनाने लगे । इस दृष्टि से देखा जाय तो जेवरों का रिवाज स्त्रियों की दासता का प्रतीक है और इसमें सन्देह नहीं कि आज भी जेवरों के कारण स्त्रियों की स्वतन्त्रता में बाधा पड़ती है । जो स्त्रियाँ स्वतन्त्रता के मूल्य को समझने लगी हैं और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हैं, वे जेवरों का प्रयोग त्यागने लग गई हैं, जबकि अशिक्षित, मूर्ख और दकियानूसी विचारों की स्त्रियाँ अब भी जेवरों के लिये लालायित रहती हैं और इसके लिए अन्य उपयोगी और लाभदायक कार्यों की उपेक्षा करके अन्त में हानि उठाती हैं ।

सोने में कलियुग का निवास है—हिन्दुओं के प्रसिद्ध धर्म-ग्रन्थ भागवत में राजा परीक्षित की कथा लिखी है कि उसने एक बार कलियुग को गाय-बैल रूपी पृथ्वी धर्म को मारते देखा । राजा ने इस पर उसे दंड देना चाहा तो उसने क्षमा-प्रार्थना की और कहा कि आप जहाँ आज्ञा दें मैं वहीं रहूँ । राजा ने उसे जूआ, चोरी, वेश्यागृह और सुवर्ण में रहने का आदेश दिया । राजा भी अनेक अवसरों पर सोने का मुकुट धारण किया करता था, इसलिए मौका पाकर कलियुग ने उस पर प्रभाव जमा लिया और उसके हाथ से एक बड़े ऋषि का अपमान करा दिया । ऋषि के पुत्र ने उसे साँप के काटने से मरने का शाप दे दिया । परीक्षित ने साँप को रोकने का बहुत प्रयत्न किया पर सातवें दिन तक्षक ने किसी युक्ति से उसे डस ही लिया । इस कथा से इतना तो प्रकट होता ही है कि सुवर्ण मनुष्य की बुद्धि को भ्रष्ट करने वाला है और उससे बहुत घातक परिणाम उत्पन्न होते हैं । हम अपने दैनिक जीवन में भी इस तथ्य की सचाई प्राय: देखते रहते हैं । सोने की अधिकता से अधिकांश मनुष्यों में अहंकार का भाव बढ़ जाता है और उसके कारण वे कितने ही अनुचित कार्य करने लग जाते हैं । सोने के जेवरों के कारण भी पहनने वालों में घमण्ड और गरीब लोगों के प्रति उपेक्षा का भाव उत्पन्न होता है, जिसका अन्तिम परिणाम स्वयं उनके लिए हानिकारक सिद्ध होता है ।

मेले और उत्सवों में फिजूलखर्ची—हिन्दू समाज में त्योहारों, धार्मिक उत्सवों, तीर्थों में होने वाले मेलों आदि की अधिकता है । फिर प्रत्येक जाति और सम्प्रदाय के अपने निजी उत्सव और सम्मेलन आदि होते रहते हैं । इनमें लोगों को भाग लेना पड़ता है और कितने ही व्यक्तियों को उनमें भाग लेने का शौक भी होता है । ऐसे अवसरों पर कितने ही लोग शान दिखलाने के लिये अपनी शक्ति से बहुत ज्यादा खर्च कर डालते हैं अथवा अन्य लोगों को खर्च करते देखकर स्वयं भी उनकी स्पर्द्धा करने लगते हैं । इसी प्रकार विवाह-शादियों में सम्मिलित होने के लिए लोग ऐसे बढ़िया कपड़े बनवा डालते हैं जो साधारणत: उनकी पहुँच से बाहर होते हैं । ऐसा करने में उनका उद्देश्य यही होता है कि वे अन्य लोगों के मुकाबले में किसी तरह घट कर न जान पड़ें । इस प्रकार अपने बजट से दूना-तिगुना खर्च कर डालने पर उनको आगे चलकर बड़ी कठिनाई उठानी पड़ती है । फिर या तो कई महीने तक आवश्यक खर्चों को भी बन्द कर देना पड़ता है या कर्जदार होना पड़ता है, जिस फन्दे में एक बार फँसकर फिर निकल जाना मुश्किल होता है ।

लेन-देन, दान-पुण्य आदि—कुछ ऐसे भी व्यक्ति होते हैं जो अपने निज के लिए तो अधिक व्यय नहीं करते, पर नाते-रिश्तेदारों को, लेन-देन, विभिन्न पर्वों पर दान-दक्षिणा, ब्राह्मण-भोजन, तीर्थ-यात्रा जैसे पुण्यदायक समझे जाने वाले कार्यों में बहुत अधिक खर्च करते रहते हैं । यों इन कार्यों को बुरा नहीं कहा जाता, पर जब इनमें भी अति कर दी जाती है, आमदनी और व्यय के सन्तुलन का ख्याल नहीं रखा जाता तो ये भूषण के बजाय दूषण बन जाते हैं और उसके कारण दाताओं तथा उनके परिवार वालों को बहुत कष्ट

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उठाना पड़ता है । हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि दान-पुण्य समझे जाने वाले कार्यों में भी विवेकशीलता को छोड़कर व्यवहार करने से उनकी अच्छाई मिट जाती है और खराबी पैदा हो जाती है । हमने ऐसे अनेक प्रसिद्ध लोगों के दृष्टान्त पढ़े हैं जिनमें धनवान लोगों ने अन्य लोगों की सहायता करने के कामों में इतना अधिक व्यय कर डाला कि उनकी आर्थिक स्थिति लड़खड़ा गई और उनके उत्तराधिकारियों को इसका कटु परिणाम भुगतना पड़ा ।

स्वामी विवेकानन्द की जीवनी से विदित होता है कि उनके पिता अपने रिश्तेदारों के साथ उदारता का व्यवहार करने में बहुत आगे बढ़ हुए थे और उनके यहाँ दस-पाँच, दूर-पास के सम्बन्धी सदा महीनों तक रहते थे । इन लोगों की तरह-तरह की फर्मायशों को पूरा करने में उनका काफी रुपया खर्च हो जाता था । अन्त में जब उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर हो गई तो इन्हीं सम्बन्धियों में से कितनों ने उनकी जायदाद को हड़पने का कुचक्र रचा । उनका थोड़े समय में देहान्त हो गया, पर विवेकानन्द (जिनका नाम उस समय नरेन्द्र था) तथा उनकी माता, भाई आदि घर वालों को कई वर्ष तक बहुत कष्ट सहन करने पड़े । सम्बन्धियों ने उनके रहने के मकान पर भी अपना अधिकार बतला कर दावा कर दिया । परिणाम यह हुआ कि इन लोगों को खाने के भी लाले पड़ गये और कभी-कभी ऐसे भी अवसर आने लगे जब घर के सब लोगों को निराहार रह जाना पड़ता था । इससे नरेन्द्र को बड़ी परेशानी पड़ी और बड़ी कठिनाई से वे इसका सुधार कर सके ।

अरविन्द घोष के पिता बंगाल के एक मशहूर सरकारी सिविल सर्जन थे और उनकी आमदनी बहुत थी । वे अंग्रेजी रहन-सहन के इतने भक्त थे कि उन्होंने अपने पुत्रों को शिशु अवस्था से ही अँग्रेजी पढ़ाने की व्यवस्था की और सात-आठ साल की आयु में ही उनंको विलायत पढ़ाने के लिए भेज दिया । इस प्रवृत्ति के साथ ही उनकी दानशीलता भी बहुत बढ़ी थी और वे जितना कमाते थे, लोगों को देने में सहायता माँगने वालों तथा भिखारियों के लिए अपनी आमदनी से ज्यादा खर्च कर डालते थे । इसका नतीजा यह हुआ कि कुछ समय में उनको आर्थिक तंगी का शिकार होना पड़ा और जब अरविन्द सोलह-सत्रह वर्ष के ही थे उनको विलायत में पढ़ते हुए भी खर्च की बड़ी तंगी होने लगी । अनेक समय उनको एक बार खाकर ही रह जाना पड़ता था और कभी-कभी केवल चाय और बिस्कुट खाकर ही दिन भर के लिए सन्तोष कर लेना पड़ता था । वह तो अरविन्द स्वयं इतने अधिक प्रतिभाशाली थे कि उन्होंने परीक्षाओं में बहुत उच्च स्थान प्राप्त करके छात्रवृत्ति द्वारा किसी तरह अपना काम चलाया और शिक्षा को पूरी कर सके पर उनके पिता को अन्त तक खाली हाथ ही रहना पड़ा और वे अपने दोनों पुत्रों के लिए कुछ भी सम्पत्ति न छोड़ सके ।

बंगाल के सुप्रसिद्ध नेता श्री आर.सी. दास की घटना भी प्रसिद्ध है । उनके पिता एक बड़ी सम्पत्ति के स्वामी होने पर भी अपनी अमितव्ययता के कारण अन्त में दिवालिया हो गये और बहुत बड़ा कर्ज छोड़ कर मर गये । दास बाबू ने इस प्रकार की स्थिति को अपने ऊपर एक कलंक समझा और जब वे बैरिस्टरी पास करके काफी कमाने लग गये तो उन्होंने अपना पहला कर्त्तव्य उस ऋण को चुकाना ही समझा और अन्त में उसे पूरा करके ही सन्तोष की साँस ली ।

अखण्ड ज्योति परिवार के सुपरिचित सदस्य श्री रामचरण महेन्द्र के परिवार की एक ऐसी ही घटना है । उनके बाबा साहू बैजनाथ जी एक बड़े जमींदार और सम्पत्तिशाली व्यक्ति थे, पर स्वभाव के अत्यन्त दयालु, सत्कार्यों में प्रवृत्ति रखने वाले, दान-धर्म के कार्यों में अत्यधिक दिलचस्पी रखने वाले थे । तीर्थयात्रा, दान करना, पाठशाला, धर्मशाला आदि कार्यों में उन्होंने बहुत धन खर्च कर दिया । दान देना उनके लिए एक व्यसन की तरह बन गया था । अपने जीवन के अन्तिम दिनों में उन्होंने एक कन्या पाठशाला खोली जिसमें हजारों रुपया का खर्च था । खोलने से पहले उनको यह पता न था कि यह खर्चीला पुण्य-कार्य है । पाठशाला कई वर्ष तक चलती रही और उसमें उनका इतना रुपया खर्च हो गया कि फिर साधारण निर्वाह में भी कठिनाई पैदा हो गई । साहू बैजनाथ जी का मुख्य व्यवसाय जमींदारी था और उनकी आय मुख्यतया वर्ष में दो बार फसल पैदा होने के अवसरों पर ही होती थी । बीच के महीनों में पाठशाला का खर्च प्रायः कर्ज लेकर चलाना पड़ता था । यह कर्ज बढ़ता ही चला गया और सात-आठ गाँवों की बड़ी जमींदारी उसमें समाप्त हो गई । एक बार जो ऋण चढ़ जाता है उसका उतरना कठिन हो जाता है । उनके पुत्र को भी तकाजा करने वालों से परेशान होकर कई गाँव सस्ते-मन्दे दामों में बेचकर अस्सी हजार का कर्ज चुकाना पड़ा । महेन्द्र जी उस समय उनकी स्थिति का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि— "बाबूजी तकाजा करने वालों से डरे, सहमे घर के भीतर ही बैठे रहते । एक ऋण चुकाने के लिए किसी दूसरे से ऊँचे सूद पर रुपया लेते । फिर उसका ऋण चुकाने के लिए तीसरे से, फिर चौथे से । इस प्रकार सब सम्पत्ति स्वाहा हो गई और बाबूजी तो उसकी चिन्ता में घुलते-घुलते संसार से ही विदा हो गये ।" सच है कर्ज जिसे एक बार पकड़ लेता है फिर उससे उसका छुटकारा हो सकना कठिन होता है ।

यद्यपि दान-पुण्य और दूसरों की सहायता के कार्यों को प्रशंसनीय बतलाया जाता है और अधिकांश व्यक्ति उसको अच्छा ही कहते हैं, पर ऐसे कार्य भी जब आँखें बन्द करके, परिणाम को बिना विचारे किये जाते हैं तो उनकी गिनती फिजूलखर्ची में ही करनी पड़ती है । जब लोग ऐसे व्यक्तियों की आदत को समझ लेते हैं तो वे किसी तरह के बहाने बनाकर उनको घेरे रहते हैं और बढ़ावा देकर, पीछे पड़कर अपना स्वार्थ सिद्ध करते रहते हैं । शास्त्रों में दान की प्रशंसा अवश्य की गई है, पर साथ ही यह भी स्पष्ट बतला दिया गया है कि दान तभी फलदायक होता है, जब वह सुपात्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को दिया जाता है । पर ऐसे दान का व्यसन लगा लेने वालों को जो लोग घेरे रहते हैं, वे सुपात्र होने के वजाय स्वार्थी होते हैं और इसलिए दाता के हानि-लाभ या कल्याण की परवाह न करके अपने स्वार्थ पर ही निगाह रखते हैं । ऐसे लोगों की सहायता करना हानिकारक ही होता है ।

हानिकारक व्यसनों में अपव्यय—प्रत्येक प्रकार का व्यसन रुपया को नष्ट करने का एक साधन होता है । पान, बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू, भाँग, चाय, सिनेमा आदि में जो धन खर्च किया जाता है वह शरीर और चरित्र के लिये हानिकारक होने के साथ ही धन का भी बड़ा नाश करता है । उन लोगों की बात तो छोड़ दीजिए जो इन व्यसनों में हद से ज्यादा लिप्त हो जाते हैं और अपना तन-मन, धन इन्हीं में स्वाहा करके अकाल में ही अपनी करनी का फल भोगने के लिए दुनिया से चल बसते हैं, पर जो लोग इनमें मामूली ढंग से भी खर्च करते हैं, उनको भी इसके कारण प्राय: अन्य उपयोगी कार्यों में तंगी उठानी पड़ती है । पान-बीड़ी में यदि चार-पाँच आना रोज भी खर्च किया जाय तो महीने भर में ८ या ९ रुपये और वर्ष में सौ रुपया तो खर्च कर ही डालते हैं । जिन लोगों को सिगरेट की लत लग जाती है वे कम से कम इससे दुगुना-तिगुना खर्च कर डालते हैं । शराब के खर्च का तो कहना ही क्या, वह तो कुछ वर्ष में मनुष्य को दर-दर का भिखारी बनाकर ही छोड़ती है । यदि मनुष्य व्यसनों में खर्च किए जाने वाले धन को बचाकर बुद्धिमानीपूर्वक उपयोगी कार्यों में लगावे तो दस-बीस वर्ष में हजारों रुपये की रकम इकट्ठी हो सकती है जिससे हम अपने और दूसरों के हित-साधन करने वाले सैकड़ों कार्य पूरा करके दिखला सकते हैं ।

मितव्ययता एक बहुत बड़ा गुण है—फिजूलखर्ची करके हमेशा आर्थिक कठिनाइयों में फँसे रहने वालों में अधिकांश व्यक्तियों में विचारशीलता की कमी होती है । उनको संसार में अपना महत्त्व प्रकट करने का कोई अच्छा मार्ग दिखाई नहीं पड़ता, इसलिए वे बाहरी दिखावट, सजावट के रास्ते को अपना लेते हैं । वे समझते हैं कि हमको मनमाने ढंग से खुले हाथ खर्च करते और दूसरों की अपेक्षा ज्यादा शान, चटक-मटक से रहते देखकर परिचित और अपरिचित हमारी ओर आकर्षित होंगे और तारीफ करेंगे, पर यह एक बचकानी अथवा छिछोरेपन की मनोवृत्ति है । फिजूलखर्ची के द्वारा न तो कोई स्वयं सुख पा सकता है और न दूसरों की दृष्टि में आदर का पात्र बन सकता है । ऐसे लोग सदा खर्च की तंगी का अनुभव करते रहते हैं, क्योंकि धन को व्यर्थ के कामों में फेंकने वाले के लिए तो राजा का खजाना भी पूरा नहीं पड़ सकता और सचमुच ऐसे राजा भी देखने में आये हैं जिनकी आय लाखों-करोड़ों की होने पर भी जो ऐब आदतों के कारण कंगाल बन गये और जिनको अपना अन्तिम समय दुर्दशा में व्यतीत करना पड़ा ।

ऐसे लोग मितव्ययता के गुणों और शक्ति से अपरिचित होते हैं । वे नहीं जानते कि अगर हम केवल उपयोगी कामों में भी व्यय करें और अनावश्यक खर्चों को त्याग दें अथवा उनमें कमी करके थोड़ा-बहुत रुपया बचाते जायें तो हमारी स्थिति में जमीन-आसमान का अन्तर पड़ सकता है और आज जिस प्रकार हमको समय-समय पर दूसरों के आगे हाथ फैलाकर काम चलाना पड़ता है, कर्ज के चक्कर में फँसना पड़ता है, वैसी नौबत कभी न आवे । यदि मनुष्य अपने नियमित खर्चों का बजट बनाकर चले, वास्तविक और कृत्रिम आवश्यकताओं के अन्तर को समझ ले, भविष्य के लिए कुछ बचाने का ध्यान रखे तो कोई कारण नहीं कि वह अपनी मौजूदा आमदनी में सुविधापूर्वक निर्वाह न कर सके । ऐसे भी उदाहरण देखने में आये हैं कि हजार-आठ-सौ वेतन पाने वाले अफसर, साहब खाली हाथ रहते हैं, पर उनका सत्तर-अस्सी रुपया पाने वाला चपरासी सुख-शांति की जिन्दगी गुजारता है और समय पड़ने पर 'साहब' को सौ-पचास रुपया कर्ज देकर उनकी मान-रक्षा भी कर देता है । सुनने में तो यह बात कुछ अटपटी और अविश्वसनीय-सी लगती है, पर इसमें सन्देह नहीं कि फिजूलखर्ची और मितव्ययता में इतना ही अन्तर है । हजार-आठ-सौ पाने वाले अफसर अपने से बड़े वेतन वालों की नकल करके महीने में बारह सौ का खर्च करते और सदा तंग हाल रहते हैं, जबकि सत्तर-अस्सी पाने वाला चपरासी भविष्य का ख्याल रखकर अपना खर्च साठ रुपये के भीतर ही रखता है और धीर-धीरे दो-चार हजार रुपये की पूँजी इकट्ठा कर लेता है ।

जो लोग इस प्रकार सोच-समझ कर अपनी आमदनी की हद में ही खर्च करके कुछ बचत करने वालों को कंजूस समझते हैं वे बड़ी गलती पर हैं । मितव्ययी जो धन कमाता और बचाता है वह उचित और आवश्यक खर्चों की पूर्ति के लिए होता है, जबकि कंजूस का धन एक अतृप्त लालसा के कारण उचित खर्च में कमी करके, मान-अपमान का भी ख्याल न रखकर जोड़ा जाता है और अन्त में नष्ट ही होता है । मितव्ययी व्यक्ति केवल अपनी आमदनी या साधनों का ख्याल रखकर खर्च करता है और उसकी बचत का उद्देश्य यही होता है कि जब कोई विशेष या आकस्मिक आवश्यकता आ पड़े तो दूसरों के सामने हाथ न फैलाना पड़े । फिजूलखर्च आदमी जब अपना ही खर्च ठीक तरह से नहीं चला सकता और उसे अक्सर दूसरों का आश्रय ताकना पड़ता है, तब मितव्ययता वाला व्यक्ति स्वयं सन्तुष्ट जीवन व्यतीत करके समय पर आये गये का स्वागत-सत्कार भी करता रहता है, काम पड़ने पर दूसरों की सहायता कर सकने में समर्थ होता है ।

सादगी का गुण अपनाइए—इन बातों पर विचार करके हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सुखी जीवन का वास्तविक मूलमन्त्र 'सादा जीवन और उच्च विचार' ही है । संसार के बड़े-बड़े विद्वान और बुद्धिमान कहलाने वालों ने अपने जीवन अनुभव से यही शिक्षा प्राप्त की है कि सच्चा बड़प्पन सादगी में ही ढका रहता है । वैदिक-युग के जिन वशिष्ठ, विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज आदि ऋषियों-महर्षियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के नाम हम आज तक लेते रहते हैं और जिनका वंशज होने का गर्व किया करते हैं, वे क्या फैशन, सजावट तथा दिखावट करते थे ? वर्तमान ऐतिहासिक काल में बुद्ध, महावीर, ईसा, शंकराचार्य आदि जो महापुरुष हुए हैं, क्या वे लंगोटी अथवा फटा-पुराना कपड़ा पहनने पर भी संसार में पूजनीय नहीं माने गये ? भारतवर्ष का प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और अर्थशास्त्र का ज्ञाता चाणक्य जिस समय भारतवर्ष के प्रतापी सम्राट् चन्द्रगुप्त का प्रधानमन्त्री था तब भी घास-फूस से बनी कुटी में ही जीवनयापन करता था । तुलसीदास, सूरदास, कबीरदास आदि जिन महाकवियों की रचनाओं को पढ़कर आजकल हम ज्ञानी और विद्वान कहलाते हैं, वे कौन-सी शान या सजावट करते थे ? इसके विपरीत जो लोग हमारे सामने ही रुपये को व्यर्थ के कामों में पानी की तरह बहा गये या आतिशबाजी की तरह फूँक गये, उनकी याद अब भी किसी को नहीं आती ।

हमको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि दुनिया में आदर गुणों और सत्कर्मों का होता है । अशिक्षित अथवा विचारशीलता से रहित व्यक्ति ही बाहरी टीमटिमाक को महत्त्व देते हैं और उसके लिए बिना आगा-पीछा सोचे खर्च करते रहते हैं । इसका परिणाम यह होता है कि उनकी मासिक आय पन्द्रह दिन में ही खर्च हो जाती है और वे सदा तंग हाल बने रहते हैं । यदि वे अपनी इस त्रुटि को अनुभव करके आमदनी के हिसाब से खर्च करें, झूठी आवश्यकताओं को त्याग दें, तो कोई कारण नहीं कि उनकी हालत सुधर न सके ।

वैसे तो आवश्यकताओं का कोई अन्त नहीं, मामूली आदमी चाहे तो एक के बाद दूसरी आवश्यकता पैदा करके आडम्बर बढ़ा सकता है, पर इसमें कोई प्रशंसा की बात नहीं । बुद्धिमानी आवश्यकताओं को घटाने में है, बढ़ाने में नहीं । यद्यपि आजकल लोगों ने नये-नये उपकरणों का उपयोग करने और खर्च करने में ही आराम समझ लिया है, पर दरअसल जितनी आवश्यकताएँ बढ़ाई जाती हैं, उतनी ही मनुष्य की परेशानी बढ़ती है और उनकी पूर्ति के लिए उचित-अनुचित साधनों का प्रयोग करना पड़ता है । हम अपनी आँखों से देख रहे हैं कि इस तरह जिन लोगों को फिजूलखर्ची की आदत पड़ गई है उनमें से निन्यानवे प्रतिशत बेईमानी, रिश्वत, घूस, चोरी, ठगी आदि की दुष्प्रवृत्तियों को ग्रहण कर लेते हैं । जिन लोगों की आवश्यकताओं तथा इच्छाओं की कोई सीमा नहीं वे कभी सुखी और सन्तुष्ट नहीं रह सकते और न नैतिकता के नियमों का पालन ही कर सकते हैं । जिन लोगों को इस तरह के व्यसन लग जाते है उनकी ईमानदारी या सचाई का कोई भरोसा नहीं किया जा सकता, वे चाहे जब थोड़े-से प्रलोभन या लालच के लिए उचित रास्ते से फिसल सकते हैं, हर तरह का बुरा काम करने को तैयार हो सकते हैं ।

अपव्यय की मूर्खता—फिजूलखर्ची करके अपनी आर्थिक स्थिति को खराब कर लेना अथवा कर्जदार बनना ऐसा मूर्खतापूर्ण कार्य है कि जिसकी बुराई आजकल ही नहीं की जाती वरन् प्राचीन ग्रन्थों में भी जिसको अत्यन्त निन्दनीय और गर्हित बतलाया गया है । ऋग्वेद में ऋणग्रस्त व्यक्ति के सम्बन्ध में एक सूक्त है जिसमें उसकी दुर्दशा का बड़ा करुणाजनक चित्र खींचा गया है । उसमें कहा गया है कि "कर्जदार मनुष्य का कोई साथी या मित्र नहीं होता । उसके माँ-बाप भी उसको अपना नहीं बतलाते और उसकी स्त्री भी उसे छोड़ देती है । बाजार में कोई उस पर विश्वास नहीं करता और मार्ग में लोग अँगुली से उसकी ओर इंगित करते हैं ।" 'यजुर्वेद' में कहा गया है—'अनृणा स्याम' अर्थात्—कभी कर्जदार मत बनो और कभी ऐसे व्यर्थ कार्य मत करो जिससे कर्ज लेना पड़े । इसी प्रकार 'अथर्ववेद' (६/११७/१) में कहा है—

"अनृणो मवामि" अर्थात्—"मनुष्य ! किसी के ऋणी मत हो और अपनी स्थिति से बढ़कर खर्च न करो जिससे कर्ज लेना न पड़े ।"

निश्चय ही फिजूलखर्ची एक ऐसी मूर्खता है जिससे मनुष्य अपने पैरों में स्वयं कुल्हाड़ी मारता है । इससे लाभ तो किसी प्रकार का होता नहीं, उलटी हमारी आदतें खराब होती हैं, हम तरह-तरह के दोषों में फँस जाते हैं और अनेक प्रकार की व्याधियाँ हमारे पीछे लग जाती हैं । अपव्यय करने वाले व्यक्ति का ऋणग्रस्त होना स्वाभाविक है, क्योंकि जब पास का रुपया खर्च हो जाता है, तब भी वह अपनी आदत से मजबूर होकर खर्च करना बन्द नहीं कर सकता और इधर-उधर से कर्ज लेकर काम चलाता है । ऐसा करने में हर तरह से हानि होती है । यदि आप किसी से नकद रुपया कर्ज लेते हैं तो उसका ब्याज दिन-रात बढ़कर आपके सर पर चढ़ता जाता है । अगर नकद रुपया लेने के बजाय आप दुकानदारों से किसी तरह की चीजें उधार लेते हैं तो भी वे आपको घटिया सामान अधिक दामों में देंगे ।

उधार खरीदने वाला व्यक्ति न तो चार दुकानों पर सौदा देखकर अच्छा-बुरा देख सकता है और न ठीक तरह से मोल-तोल कर सकता है । उसको तो जैसी भी चीज दुकानदार जिस दाम पर दे देता है वही लेनी पड़ती है । अगर वह उसकी चीज को महँगी या खराब बतलाकर दूसरी जगह से लेना चाहता है तो दुकानदार अपना रुपया माँगता है । इस प्रकार व्यर्थ के कामों के लिए अपव्यय करने वाला अपनी मूर्खता अथवा दूसरों के बहकाने में आकर अपने लिए ऐसी स्थिति पैदा कर लेता है, जिससे उसका छुटकारा होना कठिन ही नहीं असम्भव हो जाता है । इसलिए जो व्यक्ति कर्ज की भयंकर व्याधि से बचना चाहता है उसको अवश्य ही फिजूलखर्ची की आदत से दूर रहकर सादगी का जीवन अपनाना ही उचित ही है ।

भारतीय संस्कृति में सादगीपूर्ण जीवन को सदा से बहुत अधिक महत्त्व दिया गया है । यहाँ के बालकों को प्राचीनकाल में शिक्षा प्राप्त करने के लिए जिन गुरुकुलों में भेजा जाता था, वहाँ सबसे अधिक ध्यान सादा और परिश्रमयुक्त जीवन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यतीत करने पर ही दिया जाता था । राजा से लेकर दो-चार बीघा खेत ही करने वाले किसान तक के पुत्र को वहाँ एक-सी वेश-भूषा में रहना पड़ता था, साथ-साथ जंगल में जाकर लकड़ी, घास और अन्य फल-फूल संग्रह करके लाने पड़ते थे और बिना किसी भेद-भाव के भिक्षा लाकर भोजन करना पड़ता था । इसका नतीजा यह होता था कि जो व्यक्ति वहाँ शिक्षा प्राप्त करके निकलते थे वे सब तरह से स्वावलम्बी और कर्मठ होते थे । वे संसार की कठिनाइयों का अनुभव कर लेने के कारण व्यावहारिक जीवन में भी सादगी और मितव्ययता से ही काम लेते थे । इससे उनके जीवन में असन्तोष के लक्षण बहुत कम देखने में आते थे और वे जीवन में प्राय: सफल ही होते थे । इसके विपरीत आजकल स्कूल और कॉलेजों में फैशन और हर तरह के शौकों का दौरदौरा दिखाई पड़ता है और लड़के पाठ्य-ग्रन्थों में तो निपुणता प्राप्त करें या न करें पर बनाव-श्रृंगार और शौक के कामों में व्यर्थ का खर्च करना अवश्य सीख लेते हैं । ऐसी प्रवृत्ति सदा निम्नगामी ही होती है और इस प्रकार के लड़के प्राय: पतन के मार्ग पर ही अग्रसर होते हैं । प्राचीन और नवीन के इस अन्तर को समझ कर हमको कृत्रिमता और दिखावट की भावना को त्याग कर सादगी और वास्तविकता की प्रवृत्ति को अपनाना चाहिए । फिजूलखर्ची से बचकर मितव्ययिता का व्यवहार रखने से हम केवल सुखी जीवन और सज्जन कहलाने का लाभ ही प्राप्त नहीं करते वरन् अनेक आत्मिक गुणों और गौरव की भी अनुभूति करते हैं जिससे हमारा मनुष्य-जीवन सार्थक बनता है ।

फिजूलखर्ची

जिसे देखिए, वही इस बात का रोना रो रहा है कि उसकी सीमित आय में निर्वाह नहीं होता, दैनिक खर्चे पूरे नहीं हो पाते, महीने के अन्त से पहले ही बीस तारीख को मास का वेतन समाप्त हो जाता है और बराबर बाजार का कुछ ऋण भी चढ़ा रहता है ।

जिसे सौ रुपये मासिक वेतन मिलता है, वह हाथ की तंगी का रोना रो रहा है, जिसे डेढ़ सौ मिलता है, वह महँगाई की शिकायत करता है और जिन्हें तीन चार सौ मासिक मिल रहे हैं, वे भी अपने खर्चे पूरे नहीं कर पा रहे हैं । बड़े-बड़े पूँजीपति और मिल मालिक आय में आवश्यकताओं की पूर्ति न होने की शिकायत कर रहे हैं । राजाओं और ताल्लुकेदारों के दमखम ढीले हो चुके हैं । आर्थिक कठिनाइयों के सामने जैसे उन्होंने हथियार डाल दिये हैं ।

पुरुष कहते हैं हमारी आय में न हमें शरीफाना कपड़े मिलते हैं, न स्वादिष्ट भोजन, न बढ़िया मकान और न साइकिल या मोटर ही; स्त्रियाँ कहती हैं, हमें नई-नई डिजाइनों की न धोतियाँ मिलती हैं, न नाइनोल की साड़ियाँ, न चप्पल और न श्रृंगार प्रसाधन । युवक कहते हैं कि हमारे बुशशर्ट पुराने हो चुके हैं, पेन्टों में क्रीज नहीं है, फैशन करने के लिए कंघा-क्रीम और नेकटाई यादि का योग नहीं बैठ रहा है । कॉलेज में पढ़ने वाली आधुनिकाएँ अपनी मनपसंद न दिलाने के लिए माँ-बाप के कंजूसीपन की निरंतर नई-नई शिकायतें किया करती हैं । बूढ़ी स्त्रियाँ दान-दक्षिणा तीर्थ-यात्रा आदि न कर सकने की सुविधाएँ नहीं पा रही हैं । कहने का तात्पर्य यह है कि आज के समाज में बच्चे, युवक युवतियाँ और प्रौढ़ सभी आय की कमी और महँगाई से परेशान हैं । सभी अपनी आय कम और आवश्यकताएँ अपूर्ण पा रहे हैं । उनकी बचत नहीं के बराबर है । नतीजा यह है कि आकस्मिक व्ययों के लिए उन्हें ऋण लेना पड़ रहा है ।

इसका कारण मनुष्य के द्वारा की गई फिजूलखर्ची है । क्या पहले युग में कम आय वाले अपने खर्चे पूरे नहीं करते थे ? क्या कपड़ा, मकान, शिक्षा, तेल, साबुन या विवाह, तीर्थ-यात्रा इत्यादि में व्यय नहीं करते थे ? क्या उनकी आवश्यकताएँ नहीं थीं? स्वास्थ्य रक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन, दान इत्यादि सभी कुछ उस अपनी सीमित आय में करने होते थे । आज जो हमें पूरी-पूरी मेहनत और ईमानदारी से कमाई करने पर भी आय कम मालूम होती है, उसका प्रधान कारण हमारी फिजूलखर्ची की आदतें हैं । हम बहुत-सी उन वस्तुओं में व्यय करते हैं, जिनसे धन बचाना चाहिए ।

फिजूलखर्ची हमारे समाज का एक रोग है । जैसे हम वास्तव में नहीं हैं, वस्तुत: हम दूसरों के सामने अपना बढ़ा-चढ़ा शान-शौकत से भरा हुआ अतिरंजित स्वरूप रखना चाहते हैं । लोग हमें धन-धान्यपूर्ण-समृद्धिशाली और अमीर मानें, समाज में हमारी बड़े आदमियों की तरह मान प्रतिष्ठा हो वैसे ही हमारे सम्बन्ध हों, विवाह-शादियाँ हों, हमें कोई साधारण न मानें, प्रत्युत उच्च वर्ग में ही हम गिने जाते रहें—यही हमारी बलवती आन्तरिक भावना होती है, जबकि वास्तव में हम इसके अधिकारी नहीं होते । दूसरों के सामने हम अपनी असलियत प्रकट नहीं होने देना चाहते । हम अपना आर्थिक खोखलापन छिपाये रखना चाहते हैं । जैसे कोई सन्दूक ऊपर से बढ़िया चित्रकारी से सजा हुआ हो, शानदार मालूम होता हो, किन्तु अन्दर से उसमें चिथड़े भरे हुए हों, ऐसी स्थिति हमारी होती है । हम उस रंग-बिरंगे चित्रों से सजे गुब्बारे की तरह हैं, जो बाहर से बहुत खूबसूरत और आकर्षक है, पर जिसमें अन्दर केवल हवा मात्र भरी है । असलियत आखिर कब तक छिप सकती है ? समाज को आखिर कब तक धोखे में रखा जा सकता है ? बाहरी टीप-टाप कब तक बनी रह सकती है ? एक दिन तो भांडा फूटता ही है और जिस दिन फूटता है, रही-सही इज्जत को भी विनष्ट कर देता है ।

फिजूलखर्ची क्या है?

आप जो भी व्यय करते हैं, उसे मन में आवश्यक मान कर ही करते हैं । उसके बिना आपकी कार्यशीलता में कमी आती है और आपका शरीर पूरा-पूरा काम नहीं कर पाता, आप ऐसा मानते हैं । एक सज्जन ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बतलाया "डॉक्टर साहब, डेढ़ दो सेर सुपारी एक महीने में व्यय कर देता हूँ । इतनी से कम के बिना तो काम चल ही नहीं सकता ।" कुछ सिगरेट-बीड़ी और पान को इतना आवश्यक मानते हैं कि एक डेढ़ रुपया प्रतिदिन इसी में फूँक देते हैं और उसे अपने लिए बेहद जरूरी वस्तु मानते हैं । कुछ सिनेमा के इतने शौकीन होते हैं कि मासिक टिकट बनवा लेते हैं और प्रतिदिन बिना नागा सिनेमा देखते हैं । इसी प्रकार प्रतिदिन चाट-पकोड़ी खाने वाले स्त्री-पुरुष उसे आवश्यक मानते हैं । चटोरपन की तृप्ति के लिए स्त्रियाँ घर का अनाज तक बेचती देखी गई हैं । नई सभ्यता और शिक्षा में पनपने वाली लड़कियाँ मेकअप (पाउडर, क्रीम, सुर्खी, इत्र तेलपालिशी आदि को इतना आवश्यक समझती हैं कि एक समय भूखा रहना पसन्द करेंगे, पर बचे हुए पैसे से प्रसाधन और शृंगार की सामग्री अवश्य खरीदेंगी । कम पढ़ी-लिखी देहाती औरतें अपना पेट काट-काट कर गहने बनवाना अधिक पसन्द करेंगी । ये सभी व्यक्ति अपनी-अपनी कमजोरी को आवश्यकता समझते हैं और अधिक से अधिक उसमें व्यय करते हैं । इनके दृष्टिकोण से इनमें से कोई भी आदत फिजूलखर्ची नहीं है, तो आखिर फिजूलखर्ची हम किसे कहें ?

फिजूलखर्ची एक सापेक्ष (रिलेटिव) चीज है । मनुष्य की जितनी आय हो और उसी के अनुसार उसकी जितनी सर्वोपरि (बेहद जरूरी) आवश्यकताएँ हों, उन दोनों का सामंजस्य रखते हुए उचित मर्यादापूर्ण न्याय ही उचित है । इस मर्यादा का उल्लंघन ही फिजूलखर्ची है फिजूलखर्ची की परिभाषा और अर्थ प्रत्येक मनुष्य की आय के अनुसार अलग-अलग ही है । जिसे हम एक व्यक्ति की आवश्यकता समझते हैं, वही दूसरे के लिए फिजूलखर्ची के अन्दर सम्मिलित हो सकती है ।

मान लीजिए, एक डॉक्टर को मरीजों की हालत देखने के लिए एक मोटर साइकिल या मोटर कार की आवश्यकता है । यदि वह मोटर खरीद लेता है, तो अपनी एक जरूरत पूरी करता है । इसके विपरीत यदि कोई साधारण व्यक्ति मोटर खरीदता है जिसे दैनिक जीवन में उसकी कोई खास जरूरत नहीं पड़ती, तो वह एक प्रकार की फिजूलखर्ची ही है । एक उपन्यास के शौकीन सज्जन ने पचास उपन्यासों के एक सेट किश्तों में रुपया अदा करने की शर्त पर मोल लेकर रख लिया । फिर दो सौ पचास रुपये में से केवल बीस रुपये मात्र दे पाये । किसी पुस्तकालय के लिए यह एक आवश्यक खर्च हो सकता था, पर एक व्यक्ति के लिए तो यह व्यय एक प्रकार की फिजूलखर्ची ही था । उन सज्जन को अपनी आय का कोई पता नहीं था, नतीजा यह हुआ कि इस रुपये का उन पर मुकदमा चला और कई गुने रुपये देने पड़े ।

अच्छी आमदनी वाला यदि गहनों, दावतों, सैरसपाटा सिनेमा शो आदि में व्यय करता है, तो वह शायद फिजूलखर्ची न कहा जाय, पर यदि मामूली हैसियत का आदमी इन बातों में व्यय करता है, तो उसे फिजूलखर्ची ही कहा जायगा । यदि साधारण आय वाले व्यक्ति का काम मामूली मुफ्त पढ़ाई कराने वाले स्कूलों में हो जाता है, तो बड़ी फीसों और कीमती वस्त्रों या ज्यादा खर्चा वाले स्कूलों में पढ़ने भेजना फिजूलखर्ची है । अपनी आय के अनुसार साधारण कपड़ों और मामूली मकानों में ही यदि काम चल सकता है, तो बढ़िया रेशमी कपड़े पहनना या ऊँचे किराये के मकानों में रहना फिजूलखर्ची है ।

फिजूलखर्ची परिवार के सदस्यों की संख्या पर भी निर्भर है । यदि परिवार में सदस्य अधिक हैं, तो प्रत्येक सदस्य की औसत आय बहुत कम पड़ती है । इसलिए फिर स्थिति साधारण हो जाती है और उस व्यक्ति को कई खर्चों में तुरन्त कटौती कर देनी पड़ती है, तब जाकर स्थिति संतुलित होती है ।

मान लीजिए एक व्यक्ति की आय सौ रुपये है । खाने वाले दो बड़े व्यक्ति और एक बच्चा है । इस परिवार तथा इसी आय में छह सात बड़े और दो-तीन बच्चे होने से खर्च में अन्तर आ जायगा और कुछ खर्च, जो पहले आवश्यक थे, अब फिजूलखर्ची की सीमा में आजायेंगे । ज्यों-ज्यों सहस्रों की संख्या में वृद्धि होती है, त्यों-त्यों आवश्यकता और फिजूलखर्ची की सीमा बदलती रहती है । एक ही सदस्य बढ़ जाने से व्यय में परिवर्तन हो जाता है तथा रहन-सहन का स्तर नीचे गिरने लगा है ।

फिजूलखर्ची का नतीजा अभाव, गरीबी, ऋणग्रस्तता, असमर्थता, झूठ, कपट, रिश्वत, भ्रष्टाचार और अनाचार हैं । आय से अधिक व्यय करने से पैसा हाथ में नहीं रहता और जीवन की ठोस और वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति तक के लिए कुछ शेष नहीं बचता । आदमी अनुचित और अनैतिक रीतियों से रुपया पैदा करना चाहता है । जनता को भिन्न-भिन्न तरीकों से परेशान किया जाता है । दफ्तर से जो कागज दो दिन में निकलना चाहिए, उसे अधिक से अधिक देर की जाती है, जिससे परेशान होकर प्रार्थी से कुछ रिश्वत ऐंठी जा सके । अनेक दफ्तरों के काम में ढीलापन इसी से अधिक आ गया है, क्योंकि अप्रत्यक्ष रूप से कुछ रिश्वत चाही जाती है । नौकर 'टिप' अर्थात् बख्शीस, इनाम इत्यादि चाहते हैं, क्योंकि उन्हें भी ऊपर से कमाने की चाट-सी लग गई है । उनके भी खर्चे बढ़े हुए हैं । आमदनी सीमित है । अतः वे अपने खर्चे पूर्ण नहीं कर पाते हैं । प्रायः सुना जाता है कि मोटरों तथा रेलवे विभागों में काम करने वाले कर्मचारियों की ऊपर की आमदनी वेतन जितनी ही होती है, उतना ही दिन भर में पान, बीड़ी, सिगरेट, चाय, सोडा-लेमन, शरबत, लस्सी, फल इत्यादि में अनाप-शनाप फूँकते चलते हैं, पर नौकरी के अन्त में वे भी बिल्कुल खोखले देखे जाते हैं । अनुचित और अनैतिक तरीकों से जो रुपया आता है, वह ठहरता नहीं, न उससे कोई स्थायी लाभ ही होता है । अतः इस पाप की कमाई से सावधान रहना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फैशन का परिणाम फिजूलखर्ची है । आज के दिखावे से भरे समाज में फैशनों का चलन दिन-प्रति-दिन बढ़ोत्तरी पर है । पाश्चात्य देशों की नकल हम अंधाधुंध तरीकों से कर रहे हैं । फैशन के क्षेत्र में हमारी अर्द्धशिक्षित बहिन सबसे आगे हैं । एक से एक नई किस्म की ड्रेस, पहनने के तौर-तरीके और मेकअप बनाया करती हैं । उनके व्यय बेतरह बढ़े हुए हैं । परिणाम यह है कि उनके पतियों को अनैतिक तरीकों से आय बढ़ानी पड़ती है ।

फिजूलखर्ची के कारण अनावश्यक खर्च बेतरह बढ़ता है । सीमित आय में हमारी ठोस आवश्यकताएँ भी पूर्ण नहीं होतीं । मनुष्य आज अपनी फिजूलखर्ची की आदतों का गुलाम बन गया है । ये ही अलक्षित शत्रु आज के मानव को परेशान किए हुए हैं और वह अभावों में जकड़ा है ।

फिजूलखर्ची ने हमारे मन में अपनी हैसियत का गलत भाव भर दिया है । समाज में प्रत्येक मनुष्य की ऊँची या नीची एक हैसियत है । बाहर से उजले दीखने वाले और ऊँची हैसियत का घमंड करने वाले आखिर क्या हैं ? पेट पर पट्टी बाँधने वाले और अन्दर से खोखले रहने वाले व्यक्ति ! ये समाज के शत्रु हैं । समाज में इनकी ऊँची नाक जरूर है, पर पेट भूख से तिलमिलाया करता है । ये बड़ी शान से रहते दीखते हैं, पर ऋण लेकर काम चलाते हैं । जब ऋण नहीं उतरता, तो दिवालिया हो जाते हैं । कितनों का रुपया हड़प लेते हैं ।

फिजूलखर्ची देखादेखी बहुत बढ़ती है । आप यदि अधिक बनाव-शृंगार करने वाले समाज में उठते-बैठते हैं या व्यवहार करते हैं, तो आपकी स्वत: यह इच्छा होती है कि हम भी ऐसे ही बढ़िया-बढ़िया कीमती वस्त्र पहनें, फैशन और टीप-टाप करें, मित्रों को दावतें दें, विवाह-शादियों में अनाप-शनाप व्यय करें, रेडियो रखें, दर्जियों और धोबियों का बिल अदा करें ।

जब हम उन वस्तुओं की इच्छा करने लगें, जो हमारी पहुँच के बाहर हों या जिन्हें काम में लेकर हम अपने भविष्य को ऋण की कालिमा से भर लें, तभी हमें सावधान हो जाना चाहिए । वह मनोरंजन किस काम का जो क्षण भर के आनन्द के लिए हमें उम्र भर के लिए कर्जदार बना दे ।

पैसा पानी की तरह न बहायें

पैसा कमाना दुनिया में थोड़ा-बहुत सभी जानते हैं, पर उसका खर्च करना कोई-कोई ही । जितनी बुद्धिमानी पैसा कमाने में नहीं चाहिए उससे कहीं अधिक उसको खर्च करने में आवश्यक होती है ।

जिनको पैसा खर्च करने का तरीका पता नहीं होता, जो यह नहीं जानते कि पैसा किस काम में कितना और किस प्रकार खर्च करना चाहिए, वे अपनी कमाई से समुचित लाभ नहीं उठा सकते । हर समय उनको पैसे की कमी ही बनी रहेगी । वे अपनी जरूरतें पूरा करने के सम्बन्ध में सदा परेशान ही बने रहेंगे । पैसा कब किस काम के लिए कितना खर्च करना चाहिए, जिसने इस कला का अभ्यास सिद्ध कर लिया है उसने मानो जीवन की बहुत-सी उलझनों से निजात पाली ।

बहुत से लोग पैसे को मनमाने ढंग से पानी की तरह बहाने में ही विशेषता समझते हैं । उनका ख्याल रहता है कि जब वे समाज में खुले हाथ पैसा खर्च करते हैं, तब लोग उन्हें देख बड़ा आदमी समझते हैं । यह विचार गलत है । किसी को बुरी तरह खर्च करते देख लोग ज्यादातर यही अनुमान लगाते हैं कि अमुक आदमी के पास जरूर ही कहीं से बेजा आमदनी होती है, तभी तो वह इस बेरहमी से इतना खर्च कर रहा है । नहीं तो कोई अपनी परिश्रम की कमाई को बुरी तरह क्यों उड़ाने लगा ? इस प्रकार पैसा, फिजूल के काम में फूँकने वाले अपनी धारणा के विपरीत ओछे ही समझे जाते हैं ।

यदि एक बार यह भी मान लिया जाये कि पैसा खर्च करते समय लोग उनको बड़ा आदमी समझ भी लेते हैं तो क्या वे इससे बड़े आदमी हो जाते हैं । समाज में उनकी इज्जत बढ़ जाती है ? क्या लोग उनका अदब और आदर करने लगते हैं ? कभी नहीं, ऐसे फिजूलखर्च को बड़ा आदमी समझना तो दूर लोग घटिया आदमी ही समझते हैं । सब जानते और मानते हैं कि बड़े आदमी इस प्रकार फिजूल की बातों में पैसा खर्च नहीं किया करते । वे पैसे की इज्जत करना जानते हैं और यह भी जानते हैं कि पैसा ठीक से किस प्रकार खर्च किया जाता है ।

फिजूलखर्च आदमी को अधिकतर लोग फूहड़ ही समझा करते हैं । वे जानते हैं कि जो पैसे का दुश्मन बना हर समय उसमें आग ही लगाता रहेगा, उसके पास पैसा रह ही नहीं सकता ।

पैसे के मामले में लोग बड़ा आदमी उसी को समझते हैं जिसके पास पैसा होता अथवा रहा करता है । जो अपव्ययी और फिजूलखर्ची है उसके पास पैसा रुकना सम्भव ही नहीं । पैसा होने की सम्भावना उसी के पास हो सकती है जो मितव्ययी है, जिसकी मुट्ठी पैसे के मामले में सँकड़ी रहती है ।

बहुधा लोग जिसे बड़ा आदमी समझते हैं उससे कुछ आशा भी रखते हैं । समय-असमय उसके पास जाते और अपनी आकस्मिक आवश्यकताएँ पूरी करते हैं । यदि किसी अपव्ययी को लोग उसकी धारणा के अनुसार बड़ा आदमी समझ लेते हैं और किसी समय आवश्यकतावश उसके पास जाते हैं तो क्या वह किसी का कोई काम निकाल सकता है ? जब फिजूलखर्ची के कारण उसके पास पैसा होगा ही नहीं तो वह किसी आवश्यकताग्रस्त के काम भी क्या आ सकता है ? इस प्रकार किसी के आने पर, अपनी फिजूलखर्ची से अमीरी की छाप छोड़ने वाले, नकली अमीरजादे की क्या वकत रह जायेगी ? तब वह किसी की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मदद में मजबूरी के दाँत निकालेंगे । इसलिए फिजूलखर्ची से समाज में अमीरी की छाप छोड़ने के विचार वालों को अपनी धारणा में सुधार करना चाहिए और ठीक से अपना हाथ रोककर पैसे को वहीं पर और उसी काम में खर्च करना चाहिए, जहाँ खर्च करना जरूरी हो और उचित भी हो ।

समाज में झूठी शान-शौकत दिखलाने के लोभी व्यक्ति वास्तव में अन्दर से बड़े दरिद्र होते हैं । यद्यपि खर्च की बुरी आदत को अपनी दरियादिली और रईसाना तबीयत समझते हैं, किन्तु यथार्थ में वे होते बड़े ही दीन और दयनीय है । जो अन्दर से खोखला होगा, गरीब होगा वही बाहर से अपनी टीमटाम बनाकर सम्पन्नता दिखाने की कोशिश करेगा । इसके विपरीत जो सम्पन्न होगा, अन्दर से भरा-पूरा होगा वह बाहर के बनाव शृंगार अथवा फिजूलखर्ची करके न तो अपने को बड़ा आदमी सिद्ध करने की कोशिश करेगा और न उसको इसकी आवश्यकता ही अनुभव होगी । उसके बड़प्पन की तरी और ताजगी अपने आप यों ही बनी रहेगी ।

धन का वास्तविक उद्देश्य अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ उसे ऐसे कामों में खर्च करना होता है जिससे अधिक से अधिक शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक उन्नति की ओर प्रगति की जा सके । इसके विपरीत जो झूठी शान-शौकत, दिखावा और दुर्व्यसनों में पैसे का दुरुपयोग किया करते हैं, वे पैसे का उद्देश्य ठीक-ठीक नहीं समझते ।

यद्यपि सदाचार, सद्व्यवहार और नैतिक गुण ही मनुष्य की वास्तविक उन्नति के हेतु हैं तथापि आज के आर्थिक युग में पैसे की भी कम महत्ता तथा उपयोगिता नहीं है । आजकल पैसे के अभाव में बहुधा गुणी व्यक्तियों की भी प्रगति रुक जाया करती है और वे बहुत से करने योग्य कार्य नहीं कर पाते । सदाचारी और गुणी व्यक्ति को भी पैसे का अभाव कभी-कभी व्यग्र एवं विचलित कर दिया करता है, तब ऐसे व्यक्ति उसके अभाव में कितने व्यग्र और विचलित हो उठेंगे जिनके पास गुणों का भी अभाव होता है ।

यदि परोपकार और समाज के हितकारी कार्यों के लिए पैसे की उपयोगिता को छोड़ भी दिया जाये तब भी अपनी व्यक्तिगत एवं पारिवारिक सुख-सुविधा, उन्नति तथा प्रगति के लिए भी तो आर्थिक व्यवस्था की नितान्त आवश्यकता है । आत्मदर्शी, तत्त्व-ज्ञानी मनीषी और महात्मा लोगों की बात तो दूसरी है, वैसे साधारणत: सामान्य लोग आर्थिक कठिनाइयों में अपना मानसिक सन्तुलन बनाये रह सकें यह बात कठिन ही नहीं, असम्भव है ।

साधारण गृहस्थ एवं सांसारिक लोगों में ऐसे मनीषी व्यक्ति कितने होते हैं जो अर्थाभाव की परिस्थितियों के बीच अपनी मानसिक शान्ति की रक्षा करते रह सकते हैं और कितने ऐसे बुद्धिमान होते हैं जो पैसे की आवश्यकता उपस्थित होने पर भी अपना काम बना सकें और मानसिक परेशानी से बचे रह सकें ?

हममें से अधिकतर साधारण गृहस्थी लोग ही हुआ करते हैं । हम लोग सामान्यत: सांसारिक जीवन में तत्त्वदर्शियों की वीतराग मन:स्थिति लेकर नहीं चल सकते । हमें अपने तथा अपने परिवार की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिये पैसे की आवश्यकता होगी ही और उसके अभाव में परेशान होना ही पड़ेगा । यदि एक बार हम लोग अपने में ऐसी गम्भीरता तथा दृढ़ता पैदा भी कर लें कि जिससे पैसे की कमी हमको परेशान न करने पावे, आवश्यकताएँ पूरी न होने पर भी हम अशान्त अथवा असन्तुष्ट न हों, तब भी तो हम स्त्री-बच्चों से ऐसी आशा नहीं कर सकते । आवश्यकताओं की अपूर्ति में वे तो परेशान होंगे ही । यदि उनकी परेशानी की परवाह भी हम अपनी गम्भीरता एवम् दृढ़ता के बल पर नहीं करेंगे तो एक प्रकार से अपने उत्तरदायित्व से विचलित होकर उनके साथ अन्याय ही करेंगे । और किसी के साथ नहीं, वरन् उनके साथ जो हमारे आश्रित हैं और जिनके पालन-पोषण अथवा सुख-सुविधा का दायित्व हमने अपने कन्धों पर खुशी से लिया है । उनके साथ अन्याय करना, उनकी दु:ख-तकलीफों की उपेक्षा करना भी तो हमारे उक्त गम्भीर एवं दृढ़ व्यक्तित्व के अनुरूप न होगा । इसलिए हमारा यह नैतिक, धार्मिक एवम् मानवीय कर्त्तव्य है कि हम अपनी ओर से कोई ऐसी स्थिति उत्पन्न न होने दें जिससे हमारे परिजनों को किसी प्रकार का कष्ट हो ।

कहना न होगा कि जो बुद्धिमत्तापूर्वक अपनी आर्थिक व्यवस्था को ठीक बनाये रहता है उसके सामने इस प्रकार की समस्याएँ बहुत कम उपस्थित हुआ करती हैं । इस आर्थिक युग में जीवन की अधिकतर जटिलताएँ उस व्यक्ति के सम्मुख आया करती हैं जो पैसे की कद्र करना नहीं जानता । अपनी आमदनी को फिजूल के कामों में खर्च करता रहता है और उसका फिजूलखर्ची हो जाना स्वाभाविक ही है जो समाज में झूठी शान-शौकत दिखाकर अपने को अमीर अथवा बड़ा आदमी सिद्ध करने के लिए लालायित रहा करता हैं अथवा अपनी आदत बच्चों की तरह चटोरी-पटोरी बना लिया करता है ।

आचार में सादगी और विचारों में शालीनता का विकास कर लेने से मनुष्य बहुत-सी अपव्ययिताओं से बचा रहता है । व्यसन के भूत उसके पीछे नहीं लगने पाते । जो नादीदी स्त्रियों की तरह अपना बाहरी टीम-टिमाक बनाने, दिखावा करने में और बच्चों को तरह चटोरे बनकर अपना पैसा फूँकते रहते हैं उनकी आर्थिक स्थिति सदैव अस्त-व्यस्त बनी रहती है, जिससे अपने पारिवारिक उत्तरदायित्व को कभी भी ठीक से नहीं निभा सकते और तब ऐसी अवस्था में घर में क्लेश, कलह का रहना अनिवार्य ही होता है । इस प्रकार जिसकी जिन्दगी अशान्त है, जिसके चारों और कलहपूर्ण वातावरण बना रहता है, वह क्या तो कोई उन्नति कर सकता है और क्या समाज की सेवा कर सकता है? किसी का कोई उपकार अथवा परमार्थ कर सकना तो दूर ऐसा, आदमी जीवन में शान्तिपूर्ण दो श्वासों के लिए भी तरसता रहता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ईमानदारी और परिश्रम से कमाइए और उसे ठीक तरह से उपयोगी एवं वास्तविक आवश्यकताओं में बुद्धिमत्तापूर्वक व्यय करिए । आपको पैसे के कारण कभी भी कोई परेशानी नहीं होगी, आप पैसे की इज्जत करेंगे तो पैसा आपका सहायक मित्र बनेगा । यदि आप उसे चटोरे-पटोरे बनकर रंग-रोगन में खर्च करते रहेंगे अथवा दुर्व्यसनों के माध्यम से बहाते रहेंगे तो आपको कभी भी भले आदमियों की तरह सुख-शान्ति की जिन्दगी बिता सकना नसीब न हो सकेगा ।

अपव्ययी की दुर्गति

धन का श्रेष्ठतम सदुपयोग एक कला-कौशल है, जिसके सहारे मनुष्य अपने लिए सुख-साधन एकत्रित कर सकता है और दूसरों को भी लाभ पहुँचा सकता है । किन्तु दुरुपयोग से तो अमृत भी विष हो जाता है । घास छीलने का छोटा-सा उपकरण भी किसी की जान का ग्राहक बन सकता है । धन का उपार्जन और संग्रह उतनी ही मात्रा में होना चाहिए जितने में औसत नागरिक अपना काम चलाते हैं । विषमता गरीब और अमीर दोनों के लिए विपत्तिकारक होती है ।

अमीरों के लिए उसके द्वारा उपलब्ध होने वाले सुविधा-साधन और अहंकारी प्रदर्शनों की उच्छृंखलता इतनी बढ़ जाती है कि वह मानवीय शिष्टाचार और मर्यादा-पालन का क्रम छोड़कर व्यवहार करने पर उतारू हो जाता है, जिसे प्रेत-पिचाश ही कर सकते हैं ।

धन का होना एक बात है और उसके लालच में कुकृत्य करने लगना सर्वथा दूसरी । बैंकों में, राजकोषों में धन जमा रहता है, पर उसके अधिकारी उसे मात्र सार्वजनिक अमानत मानते हैं और सुरक्षा के हर सम्भव उपाय करते हैं, उसमें से उतना ही अंश प्राप्त करते हैं जितना कि उनका निर्धारित वेतन होता है, पर लोभ के वशीभूत तो एक प्रकार का उन्मादी हो जाता है और जिस प्रकार मद्यप को भले-बुरे का कुछ मान नहीं रहता उसी प्रकार उसे यह नहीं सूझ पड़ता कि इसका उचित उपयोग क्या है ? कितनी मात्रा में इसका उपार्जन एवं उपयोग किया जाय ?

जौ, चना, गुड़ सामान्य खाद्य पदार्थ हैं, उनका साधारण उपयोग सभी करते रहते हैं, पर जब इन्हीं वस्तुओं को शराब के रूप में परिणत कर लिया जाता है तो पीने वाले की विवेक बुद्धि तथा मर्यादा सभ्यता सभी का अपहरण कर लेती है । ऐसा आवेशग्रस्त अपराधों पर उतारू होता है, क्योंकि साधारण मात्रा से उसकी हविश पूरी नहीं हो पाती ।

फ्रांस के एक सामन्त परिवार में अब से कोई पाँच सौ वर्ष पहले एक व्यक्ति का जन्म हुआ, उसका नाम था गिल्स डी. लावेल । उसकी पैतृक सम्पदा भी बहुत और चालू आमदनी भी इतनी थी कि उसके आधार पर शाही ठाठ-बाट से जिया जा सकता था, किन्तु उसकी ललक-लिप्सा इतनी बढ़ी कि दुर्व्यसनों में आमदनी को वह बुरी तरह फूँकने लगा । उसने अपनी पैतृक सम्पदा कुछ ही समय में स्वाहा कर दी । इतने से भी काम न चला तो अपनी जमींदारी के कितने ही गाँव बेच डाले, वह भी कम पड़े । एक से बढ़कर एक दुष्टता पर उतारू हो गया । ऐसा कोई कुकर्म उसने बाकी नहीं रहने दिया, जिससे धन की प्राप्ति हो सकती थी । उसका पिता बीस वर्ष की आयु में ही मर गया था । इससे पूर्व भी वह उसका कहना न मानता था, फिर मरने के बाद तो वह पूर्ण स्वच्छंद हो गया और नर-पिशाच स्तर की गतिविधियाँ अपनाने लगा ।

उसे लोगों ने ठगा भी खूब और भ्रमाया भी बहुत । दोस्तों के जमघट लग गये और उसको मनचाही सलाहें देने में एक दूसरे से बाजी मारने लगे । किसी ने सुझाया कि सोना बनाने की विद्या सीख लेनी चाहिए, इस प्रकार धन की कमी न रहेगी । संसार भर से ढूँढ़कर कीमियागर बुलाये गये । उन्होंने अपने को इस विद्या का प्रवीण पारंगत भी बताया । बनाने, सिखा देने या बनाते रहने का वायदा भी किया, किन्तु अन्ततः सभी की बात झूठ निकली । उनमें से कोई भी सोना न बना सका ढेरों खर्च करा लेने के उपरान्त वे एक-एक करके खिसक गये ।

आमदनी बहुत थी, पर खर्च उससे भी बढ़ा-चढ़ा । निदान कर्ज बढ़ने लगा तो अचल सम्पत्ति का भी सफाया होने लगा । फिर भी लगे हुए दुर्व्यसन और कम होने का नाम नहीं ले रहे थे । हारे हुए जुआरी की तरह वह अपना खर्च बढ़ाता ही जा रहा था । उसकी पूर्ति का एक ही उपाय रह गया कि अपराधियों का गिरोह बनाया जाय, उन्हें प्रश्रय और लाभांश दिया जाय । इस रीति-नीति को अपनाकर वह अपने समय में अपराधियों का सरताज बन गया । हर कोई उससे बचने और डरने लगा । बाजार में कोई साख नहीं रह गयी, न कोई उसके सम्पर्क परिचय में आना चाहता था और न किसी प्रकार का लेन-देन करना चाहता था । मित्र बनाने और बढ़ाने के लिए वह मुक्तहस्त से धन खर्च करता था, पर सच्चा मित्र और सलाहकार एक भी न मिला, जो मिला सो उससे अपना उल्लू सीधा करता रहा ।

अन्य उपाय इच्छित धन नहीं दे सके, अपनाये गये तरीके को लोग ताड़ गये और पहले से ही सावधान रहने लगे । अब एक नया हथकंडा लोगों ने उसे समझाया, किसी तांत्रिक से भेंट कराई और उसकी सिद्धियों की बढ़-चढ़कर गुण-गाथा गाई । कहा कि इसकी कृपा से गढ़े खजाने मिल सकते हैं और इतनी दौलत हाथ आ सकती जो हजारों वर्ष मनचाहा खर्च करने पर भी समाप्त न हो ।

इस तांत्रिक का नाम था—लोवल । उसने नई तरकीबें सुझाईं और नई विधियाँ बताईं । उसने कहा पिशाच सिद्ध करने के लिए दस कुमारी कन्याएँ चाहिए । वे भी उसके गिरोह द्वारा जहाँ-तहाँ से चुरा कर लाई गईं और उनकी बलि हो गई । अन्त में किसी गर्भवती के भ्रूण की बलि देने की माँग की गई । एक से एक बढ़कर कुकृत्यों का सिलसिला चलता रहा, पर वह सोने की गुफा मिल ही नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकी—जिसमें अटूट सोना भरा हुआ था, जिसको दिलाने का उससे वायदा किया गया था ।

गिल्स का विवाह एक राजकुमारी से हुआ था । वह पति को इन कुकृत्यों के दुष्परिणाम समझाया करती थी, इसलिए वह उससे भी चिढ़ गया और एक कमरे में बंद कर दिया । विवाह की खुशियाँ मनाने भी न पाई थी कि उसे इस यंत्रणा का शिकार बनना पड़ा ।

गिल्स का आतंक उसकी युवावस्था में सब ओर छाया रहा । पालतू अपराधियों के सहारे वह किसी का कुछ भी अहित करा सकता था, पर जैसे-जैसे उसके धन के स्रोत सूखते गये, जवानी ढलती गई और बुद्धि ने साथ देना छोड़ दिया, वैसे-वैसे ही उसके मित्र खिसक गये और वह सर्वथा अकेला रह गया । पत्नी भी वैसा समय देखने के लिए जीवित तो रही, पर कुछ कर नहीं सकी । उसके भाई, भतीजे, सम्बन्धी कुछ सहायता भेज देते थे, उसी के सहारे वह उदार नारी किसी प्रकार अन्नपूर्णा की व्यवस्था बना दिया करती थी । गिल्स बड़ी तिरस्कृत, असंतुष्ट और भर्त्सना भरी परिस्थितियों में मरा ।

खर्च आमदनी से कम करें

बचत का ध्यान न रखने से विश्व के बड़े-बड़े लोगों को घनघोर मुसीबतों का सामना करना पड़ा है । बड़ी-बड़ी जायदादें फिजूलखर्ची एवं विलासी जीवन में समाप्त हो गयी हैं । घर में एक व्यक्ति के फिजूलखर्ची होने से सारी जायदाद चौपट होती देखी गई है । अतीत काल में लखनऊ के करोड़पति, आज ताँगा हाँकते देखे गये हैं । अनुभवहीन लोग व्यापार में घाटा उठाते हैं एवं जीवन भर उस घाटे को पूरा करना पड़ता है । इनका जीवन मूलधन एवं ब्याज देने में ही व्यतीत हो जाता है । रूसी लेखक डास्टाएव्सकी ने पहले अनाप-सनाप खर्च किया फिर आजीवन लिखता रहा एवं कर्ज उतारता रहा । वह कर्ज के कारण अपनी बुनियादी आवश्यकताओं को भी कभी पूर्ण नहीं कर पाया । गोल्डस्मिथ मस्त दिमाग का लेखक था, उसने कितने ही धन्धे किए । वह ऋण लेता एवं अदायगी की बात तक नहीं सोचता था ।

गोल्डस्मिथ के घर, एक पैसा माँगने वाला आया वह साथ में पुलिस भी लाया था । पैसा उसके पास था नहीं । एक मित्र को गोल्डस्मिथ ने लिखा, उस मित्र ने गोल्डस्मिथ की एक पुस्तक बेच कर कर्ज अदा किया । एक बार आदमी गलत आदत में पड़ जाता है तो जीवन भर उसकी आदत नहीं छूटती है, वे गलत आदतें उसको पछाड़ती ही रहती हैं ।

जो आदमी अपने खर्चे बढ़ा लेता है एवं फिजूलखर्ची करता है, आमदनी के अनुसार खर्चे में कटौती नहीं करता उसे जिन्दगी भर भूखों मरना पड़ता है । इसके कारण बड़े-बड़े लोगों का भी कभी-कभी यही हाल होता है ।

पान, सिगरेट, सिनेमा, दुर्व्यसन, व्यभिचार में फँसने वाले सदा दूसरों के आगे हाथ फैलाते रहते हैं । उनके व्यसन कभी भी पूरे नहीं होते हैं । प्रसिद्ध लेखक लार्ड ने दुर्व्यसन में इतना पैसा खर्च किया कि उसे इतना ऋण लेना पड़ा जिसकी अदायगी जीवनपर्यन्त वह न कर सका ।

ब्रिटेन के राजा चार्ल्स पर इतना ऋण हो गया था कि विवश होकर उसने अमेरिका का पेनसिलवेनिया प्रान्त केवल १५,००० पौण्ड में विलियर पेन के हाथ बेच दिया ।

लिंकन के मरने के बाद उसकी खर्चीली पत्नी के पास इतने पैसे भी नहीं रहे कि वह अपना गुजारा भी ठीक तरह कर सके । लिंकन की कमीजों को बेच-बेच कर ही उसने कुछ समय बिताया ।

अनेक लोग ऐसे हुए हैं जिनकी लाखों की सम्पत्ति कर्जे में ही स्वाहा हो गई । बिना बजट के अव्यवस्थित खर्च के कारण सूद दर सूद से बढ़े हुए कर्जे से छुटकारा पाये बिना ही ऐसे लोग परलोक सिधार जाते हैं । ऋणग्रस्त व्यक्ति अपने घरेलू और सामाजिक जीवन में भी कभी सुख-शान्ति अनुभव नहीं कर पाते ।

जो किसी का कर्जदार नहीं है प्रतिदिन कुछ बचत करता है एवं न कभी झूठ बोलता है, वह निश्चित सुखी जीवन जीता है । अपनी जरूरतों को कम करते रहना चाहिए । कभी किसी के देनदार नहीं बनें ।

जीवन में आवश्यकताएँ अनन्त हैं, यह हम मानते हैं । मनुष्य की कुछ आवश्यकताएँ तो ऐसी हैं जो कि बहुत ही आवश्यक हैं, कुछ बहुत ही साधारण भी हैं । कभी-कभी अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति भी हम लोग नहीं कर पाते हैं ऐसा समय आता है । इसलिए अपनी आर्थिक स्थिति को देखकर ऐसी व्यवस्था बनानी चाहिए कि अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति पहले हो फिर दूसरी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके ।

ओछे लोगों की उद्धत सनक फिजूलखर्ची

उपलब्धि एक बात है और साधनों का सदुपयोग सुझा सकने वाली विवेकबुद्धि सर्वथा दूसरी । यह हो सकता है कि किसी के पास विपुल-वैभव हो पर उसके सहारे वह न कर सके जिससे अपना कल्याण और दूसरों का हित साधन होता है । यह भी हो सकता है कि वह हस्तगत साधनों को अनर्थ में न सही व्यर्थ में गँवाता रहे । कितने व्यक्ति दुर्व्यसनों और क्रूर-कर्मों में रस लेने लगते हैं । आवश्यकता या विवशता न होने पर भी ऐसी कार्यपद्धति अपनाते हैं । जिससे असंख्यों को त्रास मिले, प्रस्तुत किए अनाचरणों से दुर्बल मन वालों को वैसा ही अनुकरण करने को मन चलता है । सम्पन्नों का, समर्थों का उत्तरदायित्व है कि वे साधनों के बल पर ऐसी परम्परा विनिर्मित न करें जिससे अपना और दूसरे अनेकों का भविष्य अन्धकारमय बनता हो ।

आवश्यक नहीं सम्पन्नों में विवेक बुद्धि भी हो । कई बार वे सम्पदा को इस प्रकार व्यर्थ बर्बाद करते हुए भी देखे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाते हैं जिसके आधार पर उन्हें सनकी, अपव्ययी जैसे शब्दों में भर्त्सना की जा सके । धन अपने अधिकार में है । उसका अर्थ यह तो नहीं होना चाहिए कि उन्हें अहंकार के उद्धत प्रदर्शन में बेतरह लुटाया जाय । कुछ चाटुकार अपना उल्लू सीधा करने के लिए ऐसे लोगों की झूठी बड़ाई भी कर सकते हैं, पर मुँह फेरते ही सच्चाई हर किसी के मुँह से निकलती है । अपव्ययी की सच्चे मन से कोई समझदार व्यक्ति प्रशंसा नहीं कर सकता । जिन साधनों से अनेकों उपयोगी कार्य हो सकते थे, उसे उद्धत अहंकार की पूर्ति में ऐसे ही लुटा दिया जाय तो उसे कोई किस प्रकार समझदार मानेगा ।

इतिहास में ऐसे अपव्ययी सनकियों के अनेकानेक उल्लेख मिलते हैं ।

बगदाद के खलीफा हसन जब कभी यात्रा पर निकलते, उनके सेवक हजारों मील तक उनके सामने चाँदी के सिक्के बिखेरते चलते । इसका अभिप्राय उन्हें सभी लोग धनी-मानी जानने-मानने का था । ऐसी यात्राएँ उन्होंने सैकड़ों बार सम्पन्न कीं और हर बार यही तरीका अपनाया जाता ।

फारस के शाह फतह को बेश-कीमती रत्नजटित पोशाक पहनने का बहुत शौक था । हर रोज नया वस्त्र पहनता । राज्याभिषेक के समय तो उसकी पोशाक सोने-चाँदी, हीरे-जवाहरात, पन्ना व लाल से इतने जटित थी कि पोशाक का वजन उसके वजन से कहीं अधिक था । अधिक भार के कारण उसका खड़ा होना मुश्किल रहता था ।

१२वीं शताब्दी के प्रख्यात यमन सम्राट् मलिक अल-अजीज तो बेमिसाल था । नित नये कपड़ों को तैयार करने के लिए सैकड़ों कारीगर उसके यहाँ लगे रहते थे । वस्त्र भी कोई सामान्य नहीं—हीरे-पन्नों से जटित होते थे, जिसका मासिक खर्च लाखों में आता था । इस अपव्यय से प्रजा अत्यधिक रुष्ट हो गयी । अन्ततः राज्य में बगावत हुई और वह शासक मारा गया ।

हैदराबाद के छठवें निजाम 'मीर बहबूब अली खाँ' की विचित्र आदत थी । प्रतिदिन नई पोशाक सफेद बारीक मलमल की पहनता था । उसे दूसरे नौकरों आदि में बाँट देता, स्वयं एक बार का पहना कपड़ा, दुबारा नहीं पहनता था ।

गजनी के बादशाह 'मसूद' को अपने खजाने के प्रदर्शन का बड़ा शौक था । वह जब कभी यात्रा करता, तो अपना सम्पूर्ण खजाना ऊँटों की पीठ पर लादकर ले चलता था । तीन हजार ऊँट इस कार्य के लिए प्रशिक्षित और नियुक्त थे । प्रशिक्षण इस बात का कि चोरों-डकैतों से वे अपनी रक्षा स्वयंमेव कर सकें । कहते हैं कई बार डाकुओं ने यात्रा के बीच उसकी धनराशि लूट ली, पर विपुल धनराशि को साथ लेकर, युद्ध के मैदान में भी चलने की आदत उसकी अन्तिम दिनों तक समाप्त नहीं हुई ।

मिस्र के एक धनाढ्य 'अमीर बेसारी' की सनक और भी विचित्र थी । उसे विरासत में बेशुमार धनराशि मिली, जिसे शराब में बर्बाद कर डाला । जिन सोने के प्यालों में एक बार शराब पीता था, उसे मिट्टी के सकोरों की तरह फेंक देता । दुबारा शराब नये सोने के प्याले में ही पीता । धीरे-धीरे उसने सम्पूर्ण पैतृक सम्पत्ति शराब में गँवा दी । मरते समय उसके पास कफन के लिए पैसे न रह गये । उसकी अन्त्येष्टि क्रिया निकटवर्ती लोगों की व्यवस्था से सम्पन्न हुई ।

काफी समय पहले अफ्रीका के गायना में एक सम्राट् हुआ था—व्यूविस्स । उसे नित नये सिंहासन पर बैठने का शौक था । उसे रोज सिंहासन मिल सके, इसके लिए देश के चुने हुए कारीगरों की स्थायी नियुक्ति हुई थी । सिंहासन की डिजाइन भी हर बार नये ढंग की होती थी । साथ ही मूल्यवान रत्न उसमें जड़े हुए होते थे । ऐसे सिंहासन पर सम्राट् एक ही बार बैठता । यही नहीं उस सिंहासन को यह कहकर नदी में प्रवाहित करा दिया जाता कि यदि कोई दूसरा इस सिंहासन पर बैठेगा, तो सम्राट् की गरिमा गिरेगी ।

मंगोलिया के शेख शाहरुख को अपने जन्मदिन विचित्र ढंग से मनाने का शौक था । इस दिन जो भी व्यक्ति आता उसे हीरे-मोतियों से भरा थाल उपहार में मिलता । यह क्रम उसने अपने ४३ जन्मदिनों पर सम्पन्न किये । फलतः उसकी सारी सम्पत्ति हाथ से चली गई ।

मिस्र के टकसाल का मालिक खलील था । हेरी की मक्का यात्रा बड़ी विचित्र होती । रास्ते में सोने की मोहरें इस उद्देश्य से बिछाई जातीं कि उसका ऊँट जमीन पर नहीं, सोने पर ही कदम रखता हुआ चले । बाद में उसे अन्य यात्री उठा लिया करते । उसका समस्त कोष इसी प्रकार समाप्त हो गया ।

बगदाद के खलीफा हारुन अलरशीद पर दानशीलता का भूत सवार था । वह प्रतिदिन घोड़े पर बैठकर निकलते और जो भी सामने पा जाता उसकी ओर १०० चाँदी के टुकड़ों की थैली उछाल देता । भले ही वह जरूरतमन्द हो या नहीं । उसके इस सनक ने उसे तो कंगाल बना दिया, लेकिन धूर्तों ने इससे पर्याप्त लाभ उठाया ।

भारतीय नवाब अलीशाह का नाम भी ऐसे ही व्यक्तियों की श्रेणी में आता है । वह बिना सोचे-समझे अपने कृपापात्रों को विपुल धनराशि यों ही दे देता । एक बार तो उसने अपने बाल काटने वाले नाई पर प्रसन्न होकर उसे चौलखी इमारत का एक समूह ही मुफ्त में दे दिया । विशेषज्ञों ने उन इमारतों की कीमत एक करोड़ रुपये आँकी थी ।

बेबिल के अलेक्जेण्डर को एक बार अपनी अदूरदर्शिता पर बहुत पछतावा हुआ उसने अपने प्रिय दोस्त की मृत्यु के शोक का विचित्र रूप में प्रदर्शन किया । ९६ करोड़ डालर की सोने की सिल्लियाँ दोस्त के साथ उसने दफना दीं जिसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरे ही दिन चोर खोद ले गये । अलेक्जेण्डर को अपनी मूर्खता पर पछताने के अलावा कुछ हाथ नहीं लगा ।

अमीर खुसरो के नाना के पास २०० तुर्क और २,००० गुलाम व नौकर सिर्फ उनकी सेवा के लिए थे । इसके अतिरिक्त ५०-६० गुलाम तो मात्र सभा में पान पेश करने के लिए नियुक्त थे । यदि कोई सुन लेता कि किसी खान या मालिक ने ५०० आदमियों को खाना खिलाया है तो वह १,००० को निमन्त्रित करने का प्रयास करता था । अगर कोई घोड़े पर निकलता हुआ २०० तन्का खैरात करता तो दूसरा ४०० तन्का बाँटने का इरादा करता । कोई यदि किसी पान गोष्ठी में ५० घोड़े और २०० वस्त्रों के जोड़े समर्पित करता तो दूसरा १०० घोड़े व ५०० वस्त्रों के जोड़े देने की योजना बनाता । इस तरह फिजूलखर्ची के कारण 'उमरा' हमेशा ऋण की ओर से दबे रहते थे । वे हुण्डी-पर्चे लिखकर सेठ-साहूकारों से रुपया उधार लेते तथा अपना खर्च चलाते । बड़े कर्जों पर सूद की दर १० प्रतिशत तथा छोटों पर २० प्रतिशत वार्षिक थी ।

यह उन सम्पन्नों और समर्थों के फिजूलखर्चों के कुछ नमूने हैं, जिसके पास अनाप-शनाप सम्पदा भरी पड़ी है और सदुपयोग की सूझ-बूझ का अभाव है । वे ऐसे उद्धत आचरण करें तो बात एक सीमा तक समझ में आती है, पर उनके लिए क्या कहा जाय जो निजी एवं पारिवारिक प्रगति के आवश्यक खर्चों की तो उपेक्षा करते रहते हैं पर जेवर, फैशन, शृंगार, दुर्व्यसन आदि पर ढेरों पैसा बहाते रहते हैं । उन लोगों की मनःस्थिति और भी अधिक दयनीय है जो विवाह-शादियों के अवसर पर आवेशग्रस्त विक्षिप्तता अपना लेते हैं और आवश्यक कामों को रोककर बाहर से कर्ज लेकर ऐसा दिखावा करते हैं, मानों पैसा कहीं कूड़े-करकट की तरह पड़ा मिल गया हो और उसकी होली जलाकर मजा लूट रह हों ।

अपव्यय और सदुपयोग

लक्ष्मी कह रही थी "किस-किस को छोड़ोगे आखिर! जिसे नहीं ले जाओगे वही बुरा मानेगा ।"

तब बद्रीप्रसाद जी बोले— "लेकिन हमें सबसे पहले कन्या पक्ष वालों का ख्याल करना है । दूसरे, इस अन्न संकट के युग में लम्बी दावतें करना राष्ट्रीय अपराध है ।"

लक्ष्मी इस पर तुनक कर कह उठी— "कन्या पक्ष वाले जब इतना बड़ा ब्याह रचाने चलेंगे तो क्या सौ आदमियों को खाना भी न खिला सकेंगे?"

समझाते हुए बद्रीप्रसाद जी बोले— "सौ क्या हम दो सौ भी ले जायें तो उन्हें अपनी इज्जत रखने को सभी कुछ करना पड़ेगा, लेकिन यह हमारे सोचने का विषय है । कम व्यक्ति ले जाने से उन पर आर्थिक दबाव भी कम पड़ेगा और व्यवस्था करने में भी सुविधा रहेगी । दिनेश तथा सुरेश के विवाह में हम सभी सम्बन्धियों को ले गये थे । एक में सब न गये तो क्या? किसी भी आदर्श को अपनाने के लिये आखिर थोड़ा साहस तो दिखाना ही पड़ता है ।"

इतने में ही उनका बड़ा पुत्र दिनेश भी वहाँ आ गया । पिताजी बोले— "दिनेश तुम्हीं अब अपनी माँ को समझाओ । मेरा कहना है कि प्रकाश की बारात में कुल पच्चीस बाराती ले जाये जायें, पर ये कहती हैं कि सभी को ले जाना पड़ेगा नहीं ले जायेंगे तो लोग क्या कहेंगे ?"

दिनेश ने उत्तर दिया— "यह तो बड़ा ही विवेकपूर्ण निर्णय है आपका । हमारी शादी में गये तो थे पूरे एक सौ पचास व्यक्ति, पर कितनी परेशानी हुई थी । कन्या पक्ष वाला यों ही क्या कम परेशान होता है, विवाह सम्बन्धी व्यवस्थाओं में । फिर ठहरने, नहाने आदि में भी कितनी देर लगती है । याद है पिताजी कलेवे को कितनी देर हो गई थी ? चालीस बच्चे तैयार होने में आखिर समय तो लगता ही है । बेकार की भीड़-भक्कड़ जोड़ने से सिवाय परेशानी के और कुछ नहीं । जितना व्यय किराये भाड़े में होता है इतने व्यक्तियों का उतने में हम नई बहू के लिए कोई उपयोगी उपहार जुटा सकते हैं ।"

अब लक्ष्मी ने हार-सी मानते हुए कहा— "अब जब तुम पिता-पुत्रों की एक-सी ही मर्जी है—तो मैं ही क्यों बीच में रोड़ा बनूँ । जैसे चाहो वैसे करो ।"

बात ठीक थी । बारात गई । केवल बाईस व्यक्ति ही गये । बद्रीप्रसाद जी आगरे में रहते हैं । वहाँ से इलाहाबाद तक का किराया काफी होता है । व्यर्थ ही इतना पैसा किराये में जाता । कम व्यक्ति होने से कन्या पक्ष वालों को भी बहुत सुविधा रही । सारे कार्यक्रम भी समय से तथा सरलता से निबट गये । व्यवस्थाएँ भी सुरुचिपूर्ण तथा सुखकर हो सकीं ।

जब बहू आ गई और मुँह दिखाई का समय आया, तो दिनेश से भी कहा गया, पर उसने सबके बाद में अपनी ओर से उपहार देने की इच्छा व्यक्त की । जब सभी मेहमान कर चुके, तब दिनेश ने अपना सामान खोला और कहा "बहू! तुम सर्विस में हो, समय की तुम्हारे लिये बहुत कीमत है । सो तुम्हारे लिये ये प्रैशर कुकर तथा गैस का सैट । दिन में घर पर नहीं रहोगी, अतः सामान की सुरक्षा के लिए दो बड़ी अलमारी ।" और कौने में खड़ी अलमारी की ओर संकेत किया ।

सभी प्रसन्न तथा विस्मय-विभूत थे । आखिर लक्ष्मी से न रहा गया । पूछ ही तो लिया "इतना सामान-तू कब ले आया रे दिनेश! मुझे तो पता भी नहीं ? एक ही चीज काफी थी ।"

दिनेश हँसता हुआ बोला— "तुम समझती हो कि माँ यह सब मैं लाया हूँ ? मैं तो गरीब आदमी हूँ माँ यह तुम्हारी सौ आदमियों की बारात का किराया है ।" लक्ष्मी के साथ सभी हँस पड़े, पर तथ्य की महत्ता को सभी ने स्वीकार किया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जेती लम्बी सौर—तेते पाँव पसारिए

स्त्रियों-पुरुषों के लिए आदर्श शिक्षा । जितनी आमदनी हो खर्च उसी के भीतर ही रहे । बड़े दिखने का अभिमान न करें । एक बार कोई यह कह जाये कि यह लोग गरीब हैं, पुराने जमाने के हैं वह अच्छा, सौर से अधिक पाँव फैलाना सदैव हानिकारक ही होता है ।

उदाहरण—बायें हाथ की दुकान—क्राकरी का सामान मिलता है आज से दो वर्ष पहले यही क्यों सारे कस्बे में यह एक ही क्राकरी की दूकान थी । अच्छी आमदनी हो जाती थी कोई ३०-४० रुपये रोज तक की बचत थी । घर में मजेदारी थी । धर्मपत्नी का दिल खुला था । जितनी आमदनी खर्च भी उतना ही । लोग घर आयें तो अफसरों जैसा स्वागत । गरज यह कि उनके सम्पन्न होने की खूब चर्चा थी, लोग मानते थे कि यह बहुत बड़े आदमी हैं ।

रहन-सहन में भी वही बात । कपड़ों की चाहे साज-सम्हाल न हो, पर अनाप-शनाप कपड़े बनते, बच्चों के लिए घर का नाश्ता ठीक नहीं, मिठाइयों, चाकलेट में ढेर सारे पैसे, बिजली पंखों का खर्च अनाप-शनाप, ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ से किसी को यह कहने का अवसर मिले, यह लोग छोटे आदमी हैं ।

समय बदलते देर नहीं लगती । दो वर्ष पीछे सामने एक और क्राकरी की दूकान हो गई । शहर में तो अब चार-पाँच दुकानें हो गई हैं । आमदनी सब दुकानों में बँट गई तो स्वाभाविक ही था रतनचन्द्र क्राकरी वालों की आमदनी कम हो जाती । अब दिन में कुल १०-१२ रुपये ही बचते हैं । लालाजी ने पत्नी को बहुतेरा समझाया—देखो अब पहले जैसी स्थिति नहीं रही, खर्च हाथ साध कर किया करो, पर पत्नी के सिर पर बड़प्पन का ऐसा भूत सवार कि पति से लड़ना-झगड़ना स्वीकार, खर्च कम करने का बूता न हुआ । अच्छे खाते-पीते घर के होकर भी इनके ऊपर ऋण बना ही रहता है, घर में परस्पर खींचातानी रहती है सो अलग ।

आमदनी घटने के साथ रहन-सहन के स्तर में थोड़ी सादगी करली जाती तो उसमें शान न घटती, पर परस्पर खींचातानी से जो उपहासास्पद स्थिति बनी है यदि उसे घर की स्त्रियाँ समझ लेतीं तो न यह दुर्गति लालाजी की होती और न स्वयं उनकी स्त्री की । झगड़े-फसाद के कारण बच्चों में जो बुरे संस्कार पड़ रहे हैं सो अलग ।

यह तो हो गई दूकान की बात । अब घर के बगल की बात आती है । प्रोफेसर दीवान चन्द्र के पुत्र सुभाष सक्सेना एक फैक्ट्री के सुपरवाइजर हैं । तीन सौ रुपये के लगभग मिलते हैं । प्रोफेसर को ५-६ सौ रुपये मिलते थे । एक ही सन्तान उसकी धर्मपत्नी और बाल-बच्चे । घर खर्च बहू ही तब भी चलाती थी, अब भी वही चलाती है । पहले उसके हाथ में ८-९ सौ रुपये प्रतिमाह आते थे तब घर का रहन-सहन, खान-पान, ठाट-बाट कुछ और ही थे, उल्लास फूटा करता था, हर घड़ी मित्र-मेहमान आते तो घण्टों स्वागत होता, हँसी-विनोद के दौर चलते रहते, कोई बाहर से देखता तो ईर्ष्या करता मानो सारा आनन्द सिमट कर इन्हीं के घर आ गया हो ।

परिस्थितियों का फेर प्रोफेसर साहब का हृदय-गति रुक जाने से अचानक एक वर्ष पूर्व निधन हो गया । सरकारी सर्विस में थे न कि बराबर पेंशन मिलती । वह आय एक दम बन्द हो गई । अब बहू के हाथ इतने ही लगते हैं जितनी पति की आय है ।

अब घर में जो नहीं है वह है फिजूलखर्ची । पहले जो फालतू के राग पाल लिये गये थे, वह अब नहीं है । चाय वही बनती है, खाना वैसा ही बनता है, कपड़े वही पहनते हैं, अन्तर केवल यही है कि तब चाय के साथ मीठा, नमकीन भी होता था, अब आपड़-पापड़ में ही काम चल जाता है, खाने में घी का उपयोग बन्द, सब्जी एक ही बनती है । कपड़े धोबी के बजाय घर में ही धुलते और क्रीज होते हैं । कोई कहता रहे कि रहन-सहन का स्तर गिर गया है, पर हम देखते हैं उनकी हँसी-खुशी और शान-स्वाभिमान में कोई अन्तर नहीं पड़ा, क्योंकि उन्होंने अपने पाँव 'सौर' से आगे नहीं बढने दिये ।

हमारा समाज असभ्य और अविवेकी न हो

असभ्य समाज में अविवेकी लोगों में रहने वाला कोई श्रेष्ठ व्यक्ति भी शान्ति लाभ नहीं कर सकता । कोई असाधारण मनस्वी उन्हें सुधारने में अपनी असाधारण प्रतिभा व्यय करते हुए कुछ अनुकूलता तो उत्पन्न कर सकता है और ऐसा हो भी सकता है कि सर्पों के लिपटे रहने पर भी अप्रभावित रहने वाले चन्दन वृक्ष की तरह अपनी मानसिक शान्ति को स्थिर रख सके, पर ऐसा होता कम ही है, कोई बिरले ही लोग इस उच्च स्थिति के होते हैं । महात्मा इमर्सन जैसे लोग अँगुलियों पर गिनने लायक ही होते हैं जो यह दावा कर सकें कि—"मुझे नरक में भेज दो, मैं अपने लिए वहाँ भी स्वर्ग बना लूँगा ।"

बुरे लोगों के बीच रहते हुए सज्जनों को भी कष्ट ही होता है । जहाँ नर बलि चढ़ाने की प्रथा है उन निर्दय, अविवेकी, जंगली, असभ्य लोगों की बस्ती में रहने वाले भले मानुस को भी अपनी सुरक्षा कहाँ अनुभव होगी ? बेचारा डरता ही रहेगा कि किसी दिन मेरा ही नम्बर न आ जाय । गन्दे लोगों के मुहल्ले में रहने वाले सफाई पसंद व्यक्ति का भी कल्याण कहाँ है ? चारों ओर गन्दगी सड़ रही होगी, बदबू उठ रही होगी तो अपने एक घर की सफाई रखने से भी क्या काम चलेगा । दूसरों के द्वारा उत्पन्न की हुई गन्दगी हवा के साथ उड़कर उस स्वच्छ प्रकृति मनुष्य को भी प्रसन्न न रहने देगी । बाजार में हैजा फैले तो स्वास्थ्य के नियमों का पालन करने वाले भी उसकी चपेट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में आते हैं । मुहल्ले में आग लगे तो अपना छप्पर भी उसकी लपेटों में आता है ।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि स्वयं अपराध न करना ही हमारी निर्दोषिता का प्रमाण नहीं है । अपराधों और बुराइयों को रोकना भी प्रत्येक सभ्य एवं प्रबुद्ध नागरिक का कर्त्तव्य है । यदि किसी की आँखों के सामने हत्या, लूट, चोरी, बलात्कार आदि नृशंस कृत्य होते रहें और वह मौन पत्थर की तरह चुपचाप खड़े देखता रहे, कोई प्रतिरोध न करे, तो यह निष्क्रियता एवं अकर्मण्यता भी कानूनन अपराध मानी जायगी और न्यायाधीश इस जड़ता के लिए दण्ड देगा । इसे कायरता और मानवीय कर्तव्यों की उपेक्षा माना जायगा । गाँवों में जिनके पास बन्दूकें रहती हैं उनका यह कर्त्तव्य भी हो जाता है कि यदि गाँव में दूसरों के यहाँ डकैती पड़े तो डाकुओं से मुकाबला करने के लिए उन बन्दूकों का उपयोग करें । यदि बन्दूक वाले डरके मारे अपने घरों में चुपचाप जान बचाये बैठे रहें और डकैती बिना प्रतिरोध पड़ती रहे तो इस काण्ड में डकैतों की तरह उन डरपोक बन्दूकधारियों को भी अपराधी माना जायगा और सरकार उनकी बन्दूकें जब्त कर लेगी ।

हमारे समाज में यदि चारों ओर अज्ञान, अविवेक, कुसंस्कार, अन्धविश्वास, अनैतिकता, अशिष्टता का वातावरण फैला रहेगा तो उसका प्रभाव हमारे अपने ऊपर न सही तो अपने परिवार के अल्पविकसित लोगों पर अवश्य पड़ेगा । जिस स्कूल के बच्चे गन्दी गालियाँ देते हैं, उसमें पढ़ने जाने पर हमारा बच्चा भी गालियाँ देना सीखकर आवेगा । गन्दे गीत, गंदे फिल्म, गन्दे प्रदर्शन, गंदी पुस्तकें, गंदे चित्र कितने असंख्य अबोध मस्तिष्कों पर अपना प्रभाव डालते हैं और उन्हें कितना गंदा बना देते हैं, इसे हम प्रत्यक्ष अपनी आँखों से देख सकते हैं । दो वेश्याएँ किसी मुहल्ले में आकर रहती हैं और वे सारे मुहल्ले में शारीरिक न सही, मानसिक व्यभिचार के कीटाणु फैला देती हैं । यदि मुहल्ले वाले उन वेश्याओं को हटाने का प्रयत्न न करें तो उनके अपने नौजवान लड़के बर्बाद हो जावेंगे । बुराई की उपेक्षा करना पर्याप्त नहीं है, पाप की ओर से आँखें बन्द किये रहना सज्जनता की निशानी नहीं है । इससे तो अनाचार की आग फैलेगी और उसकी लपटों से हम स्वयं भी अछूते न रह सकेंगे ।

समाज में पनपने वाली दुष्प्रवृत्तियों को रोकना केवल सरकार का ही काम नहीं है, वरन् उसका पूरा उत्तरदायित्व सभ्य नागरिकों पर है । प्रबुद्ध और मनस्वी लोग जिस बुराई के विरुद्ध आवाज उठाते हैं वह आज नहीं तो कल मिटकर रहती है । अँग्रेजों के फौलादी चंगुल में जकड़ी हुई भारत की स्वाधीनता को मुक्त कराने के लिए, गुलामी के बन्धन तोड़ने के लिए जब प्रबुद्ध लोगों ने आवाज उठाई तो क्या वह आवाज व्यर्थ चली गई ? देर लगी, कष्ट आये पर मोर्चा सफल ही हुआ । समाजगत अनैतिकता, अविवेक, अन्धविश्वास और अविश्वस्तता इसलिए जीवित है कि उनका विरोध करने के लिए वैसी जोरदार आवाजें नहीं उठतीं, जैसी राजनैतिक गुलामी के विरुद्ध उठी थीं । यदि उसी स्तर का प्रतिरोध उत्पन्न किया जाय तो हमारी सामाजिक गंदगी निश्चय ही दूर हो सकती है, सभ्य समाज के सभ्य नागरिक कहलाने का गौरव हम निश्चय ही प्राप्त कर सकते हैं ।

हम अपनी सामाजिक कुरीतियों पर ध्यान दें तो लगता है कि लोहे की गरम सलाखों से बनी हुई जंजीरों की तरह वे हमें जकड़े हुए हैं और हर घड़ी हमारी नस-नस को जलाती रहती हैं । घर में तीन-चार कन्याएँ जन्म ले लें तो माता-पिता की नींद हराम हो जाती है । वे जैसे-जैसे बढ़ने लगती हैं, वैसे ही वैसे अभिभावकों का खून सूखता चला जाता है । विवाह—विवाह—विवाह ! कन्या का विवाह उनके माता-पिता के यहाँ डकैती, लूट, बर्बादी होने के समान है । आजकल साधारण नागरिकों की इतनी आमदनी ही मुश्किल से हो पाती है कि वे अपना पेट पाल सकें । जितना धन दहेज के लिए चाहिए उतना जमा करना तभी सम्भव है, जब या तो कोई अपना पेट काटे, नंगा रहे, दवा-दारू के बिना भाग्य भरोसे बीमारी से निपटे, बच्चों को शिक्षा न दे या फिर कहीं से बेईमानी कर लावे । इन उपायों के अतिरिक्त सामान्य श्रेणी के नागरिक के लिए उतना धन जमा करना कैसे सम्भव हो सकता है, जितने की कन्या के विवाह में जरूरत पड़ती है, माँगा जाता है ? यह संकट कौन कन्या का पिता किस पीड़ा और चिन्ता के साथ पार कर सकता है ? इसके पीछे लम्बी करुण कहानी छिपी रहती है । कर्ज का ब्याज, भावी जीवन में अँधेरा, शेष बच्चों की शिक्षा एवं प्रगति में रुकावट जैसी आपत्तियों को कन्या का विवाह अपने पिता और छोटे भाई-बहिनों के लिए छोड़ जाता है । विवाह का पत्थर छाती पर से हटा तो अर्थ संकट का आरा अपनी काट शुरू कर देता है । कई कन्याएँ हैं तब तो जीवित ही मृत्यु है । मृत्यु एक दिन कष्ट देकर शान्ति की गोद में सुला देती है, पर यह जीवित मृत्यु तो पग-पग पर काटती, नोचती, छेदती और चीरती ही रहती है ।

यह एक कुरीति की चर्चा हुई । ऐसी अगणित कुरीतियाँ हमें घेरे हुए हैं । स्वास्थ्य सुधार, शिक्षा के लिए, मनोरंजन के लिए, दूसरों की भलाई के लिए, आत्म-कल्याण के लिए हम कुछ नहीं कर पाते, आधी से अधिक कमाई उन व्यर्थ की बातों में बर्बाद हो जाती है, जिनका कोई प्रयोजन नहीं, कोई लाभ नहीं, कोई परिणाम नहीं । धर्म के नाम पर हमारे मनों में जो उच्च कोटि की भावनाएँ उठती हैं, दान देने की जो श्रद्धा उत्पन्न होती है उनका लाभ ज्ञान और धर्म बढ़ाने वाले, पीड़ित पतितों को राहत देने वाले कार्यों की वृद्धि के रूप में विकसित होना चाहिए था, पर होता इससे सर्वथा विपरीत है । काल्पनिक सब्जबाग दिखाकर संडे-मुसंडे लाल-कपड़े पहन कर लोगों को ठगते रहते हैं । भोले लोग समझते हैं धर्म हो गया, पुण्य कमा लिया, पर वास्तविकता ऐसी कहाँ होती है ? धूर्त लोगों को गुलछर्रे उड़ाने के लिए दिया हुआ धन भला धर्म कैसे हो जायगा ? पुण्य कर्म कैसे माना जायगा ? जिसका परिणाम न तो ज्ञान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की सत्प्रवृत्तियों की अभिवृद्धि हो और न पीड़ितों को कोई राहत मिले, वह कार्य पाखण्ड ही रहेगा, धर्म नहीं । आज धर्म के नाम पर पाखण्ड का बोलबाला है और भोली जनता अपनी गाढ़ी कमाई का अरबों रुपया उसी पाखंड पर स्वाहा कर देती है । पाखंडों पर खर्च होने वाला समय और धन यदि उपयोगी कार्यों में लगे तो उसका कितना बड़ा सत्परिणाम उत्पन्न हो । मृत्युभोज, पशुबलि, बाल-विवाह, नीच-ऊँच, स्याने दिवाने, भूत-पलीत, कन्या-विक्रय, स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले गंदे-गंदे गीत, पर्दा, होली में कीचड़ उछालना, दिवाली पर जुआ खेलना आदि अगणित ऐसी कुरीतियाँ हमारे समाज में प्रचलित हैं, जिनके कारण अनेक रोगों से ग्रसित रोगी की तरह हम सामाजिक दृष्टि से दिन-दिन दुर्बल होते चले जा रहे हैं ।

ऊपर धार्मिक मान्यताओं के आधार पर प्रचलित कुरीतियों की कुछ चर्चा की गई है । राष्ट्रीय दृष्टि से स्वार्थपरता, व्यक्तिवाद, असहयोग, संकीर्णता हमारा एक प्रमुख दोष है । सारी दुनिया परस्पर सहयोग के आधार पर आगे बढ़ रही है । मनुष्य सामाजिक प्राणी है, वह परस्पर सहयोग के आधार पर ही बढ़ा और समुन्नत हुआ है, जहाँ प्रेम, ममता, एकता, आत्मीयता, सहयोग और उदारता है, वहीं स्वर्ग रहेगा । समाजवाद और साम्यवाद की मान्यता यही है, कि व्यक्ति को अपने लिए नहीं, समाज के लिए जीवित रहना चाहिए । सामूहिक सुख-शान्ति बढ़ाने के लिए अपनी समृद्धि और सुविधा का त्याग करना चाहिए । धर्म और अध्यात्म की शिक्षा भी यही है कि व्यक्ति अपने लिए धन वैभव जमा न करके अपनी प्रतिभा, बुद्धि, क्षमता और सम्पदा को जीवन निर्वाह की अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए ही उपयोग करे और शेष जो कुछ बचता हो उसको सामूहिक उत्थान में लगा दे । जिस समाज में ऐसे परमार्थी लोग होंगे वही फलेगा, फूलेगा और वही सुखी रहेगा । जहाँ स्वार्थपरता जमाखोरी की प्रवृत्ति पनप रही होगी, वहाँ न अनैतिकता के सभी कुकर्म बढ़ेंगे और फैलेंगे । सामान्य नागरिकों के स्तर से अत्यधिक ऊँचे स्तर का सुखोपभोग करने की प्रवृत्ति जहाँ भी पनपेगी वह शोषण, अन्याय, दुराचार, द्वेष, संघर्ष, ईर्ष्या आदि बुराइयाँ विकसित होंगी । प्राचीनकाल में जिनकी प्रतिभा अधिक कमाने की होती थी वे अपने राष्ट्रीय स्तर से अधिक उपलब्ध धन को लोक हित के कार्यों में दान कर देते थे । जीवन की सार्थकता, सेवा कार्यों में लगी हुई शक्ति के आधार पर ही आँकी जाती थी ।

समाजनिष्ठा, व्यवहार, आत्मगौरव जैसे सद्गुणों का नाम ही सभ्यता है । इसी को संस्कृति या भारतीय संस्कृति कहते हैं । भारतीय संस्कृति तो निश्चित रूप से यही है । इसी के आधार पर हम प्राचीनकाल में महान थे और अपने प्राचीन अतीत को पुनः वापस लाने के लिए हमें व्यक्ति और समाज में उन्हीं गुणों का आविर्भाव एवं विकास करना होगा । पोशाक, वेश-भूषा, शिक्षा, धन, पद आदि की दृष्टि से हम भले ही अपने को सभ्य मानते रहें पर यह तो बिडम्बना मात्र है । सच्ची सभ्यता मानवीय गुणों के सामूहिक विस्तार पर ही निर्भर रहती है और उसी के आधार पर कोई समाज या राष्ट्र फलता-फूलता है और तभी उससे सम्बन्धित नागरिकों का सच्चा हित साधन होता है ।

सामाजिक कुरीतियों और सामूहिक दुष्प्रवृत्तियों का कायम रहना सज्जनों के लिए भी विपत्ति का कारण ही रहेगा । व्यक्ति कितनी ही उन्नति कर ले पतित वातावरण में यह उन्नति भी बालू की भीति की तरह स्थिर रहेगी जैसे हमें जितनी व्यक्तिगत उन्नति की चिन्ता है उतना ही सामाजिक उन्नति का भी ध्यान रखना होगा और उसके लिए हर सम्भव प्रयत्न करना होगा । इस दिशा में की हुई उपेक्षा हमारे अपने लिए ही घातक होगी । अपने समाज के सुधार पर ध्यान देना उतना ही आवश्यक है जितना अपने स्वास्थ्य एवं उपार्जन की समस्याओं का सुलझाना । समाजगत पापों से हम निर्दोष होते हुए भी पापी बनते हैं । भूकम्प, दुर्भिक्ष, युद्ध, महामारी आदि के रूप में भी ईश्वर हमें सामूहिक दण्ड दिया करता है कि हम अपने को ही नहीं सारे समाज को भी सुधारें । स्वयं ही सभ्य न बनें, समाज को भी सभ्य बनाने के लिए हम कटिबद्ध हों ।

परम्पराएँ बदली जा सकती हैं

जो बातें आज के समाज के लिए प्रथाएँ अथवा परम्पराएँ बनी हुई हैं वे वास्तव में कभी समाज के लिए ऐसे नियम रही होंगी जिनको अपनाये बिना समाज की व्यवस्था न बन रही होगी ।

यह अनिवार्य नहीं कि आज की बदलती हुई परिस्थितियों में कल की वे बातें यथावत् हितकारक हों । कल जो नियम हमारे पूर्व पुरुषों ने बनाये थे, वे उस समय की परिस्थितियों के अनुसार ही बनाये थे । ऐसा करते समय उन्होंने कोई ऐसी व्यवस्था अथवा आदेश नहीं दिया था कि यदि यह नियम आगे चलकर हितकर सिद्ध न भी हों तब भी इन्हें अपनाए रहना चाहिए । इसी प्रकार आज की परिस्थितियों के अनुसार जो नियम हम बनायेंगे वे आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए आज की तरह ही हितकारी होंगे, यह आवश्यक नहीं? परिवर्तन जहाँ अनिवार्य है वहाँ वांछनीय भी है ।

यह सही है कि बन्धन बन गई परम्पराओं को अवश्य त्याग देना चाहिए । प्राचीनता किसी बात को अपनाए रहने के लिए कोई शपथ नहीं है, किन्तु यह भी सत्य नहीं है कि कोई बात पुरानी होने से त्याज्य ही है ।

संग्रह अथवा त्याग की कसौटी नवीनता अथवा प्राचीनता नहीं है, बल्कि इन दोनों में रहने वाला हितकारक तत्व ही है । आज अनेकों ऐसी पुरानी बातें, परम्पराएँ, प्रथाएँ विश्वास एवं विचार-धाराएँ हैं जिनको त्याग देने से अतुलनीय हानि हो सकती है । यहाँ तक कि मानव मनुष्यता से योजनों दूर जा सकता है । साथ ही अनेकों ऐसी नवीनताएँ हैं जिनको अपनाये बिना मनुष्य का एक कदम बढ़ सकना असम्भव हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जायेगा । नवीनता एवं प्राचीनता के संग्रह त्याग में कोई दुराग्रह नहीं करना चाहिए, बल्कि किसी बात को विवेक एवं अनुभव के आधार पर अपनानी अथवा छोड़नी चाहिए ।

जिस बात को अन्तरात्मा स्वीकार न करती हो, विवेक जिसे मानने से इन्कार कर दे उसे अवश्य ही त्याग देना चाहिए, फिर वह कितनी ही पुरानी क्यों न हो ।

समाज की सुव्यवस्था, सुविधा और हित के लिए जो नियम बहुत समय पहले बनाये गये हैं, वह आज के भी परिवर्तित समाज के लिए यथावत् हितकारक हों, यह आवश्यक नहीं । किसी भी नियम की हितकारिता की एक साधारण कसौटी है—वह यह कि देखो पूर्व नियम जिस प्रकार समाज के विकास और उसकी उन्नति में सहायक होता था आज भी हो रहा है या नहीं । यदि वह पहले की अपेक्षा आज अपनी उपयोगिता खो चुका है, तो वह आवश्यकता एवं समयानुसार परिवर्तनीय अथवा त्याज्य है । उसे त्याग कर नये हितकारी नियम अपनाना चाहिए । इसमें संकोच करने का अर्थ है स्वयं अपनी प्रगति में रोड़े अटकाना ।

दहेज प्रथा, भिक्षा व्यवसाय एवं मृतकभोज जैसी अनुपयोगी परम्पराओं से चिपटा रहना इस बात का प्रमाण है कि अमुक व्यक्ति अथवा समाज में नवजीवन का अभाव हो गया है । जागरूक तथा जीवित समाज का यह एक निश्चित लक्षण है, कि वह इस अवांछनीय अथवा असामयिक प्राचीनता को त्याग कर उसके स्थान पर एक नवीन प्रगतिशीलता को स्थान देता है ।

कोई भी विचारशील व्यक्ति किसी अविवेकपूर्ण प्रथा को इसलिए अपनाए नहीं रह सकता कि वह बहुत जमाने से चली आ रही है, किसी बात को प्राचीनता ही उसकी उत्तमता की कसौटी नहीं है ।

प्रथाएँ और परम्पराएँ कोई ईश्वरीय आदेश नहीं होतीं । ये सुख-सुविधा तथा सुव्यवस्था के लिए मानव समाज द्वारा ही बनाई जाती हैं । जब इनका उक्त उद्देश्य नष्ट हो जाये तो इन्हें भी किसी प्राचीन तथा निर्जीव वस्तु की भाँति त्याग देना चाहिए । यदि हम सड़ी-गली पुरानी रूढ़ियों की हानि उठाकर भी प्राचीनता के लोभ में अपनाए रहेंगे तो अवश्य शीघ्र ही ऐसा समय आ सकता है कि हम जमाने के इतने पीछे रह जायें कि जो हमसे छोटे हैं, बाद के हैं, वे हम से आगे निकल जायें और हमसे ज्येष्ठ तथा श्रेष्ठ बनने लगें । इन कुप्रथाओं, कुपरम्पराओं को हर हालत में बदलना ही होगा, समय का यही तकाजा भी है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम भाग्यवादी नहीं, कर्मवादी बनें

जीवन भाग्य प्रधान नहीं, कर्म प्रधान है

अज्ञान एक प्रकार का अन्धकार है । अन्धकार में पास रखी हुई वस्तु का स्वरूप भी ठीक से दिखाई नहीं पड़ता, कुछ का कुछ प्रतीत होता है । कई बार तो जो चीज सामने रखी है वह भी ढूँढ़नी पड़ती है फिर भी मिलती नहीं । अन्धकार ऐसा ही दोषपूर्ण है । इसी से उसकी निन्दा की जाती है । अँधेरा भय का कारण भी है । रात को सूने घर में डर लगता है । अकेले कहीं जंगल में सुनसान में जाना पड़े तो भी भय प्रतीत होता है, यद्यपि डर का कोई कारण नहीं होता । दिन में वहाँ रहें या गुजरें तो कुछ भी भय प्रतीत नहीं होता पर रात डरावनी मालूम पड़ती है। मन में हर क्षण ऐसी आशंकाएँ उठती रहती हैं कि कहीं कोई खतरा न हो । चोर का, साँप का, भूत का और न जाने किस-किस का डर मन में उठता है और कहीं कोई पत्ता खड़के, चूहा कूदे तो बिल्कुल यही लगता है कि कोई भूत उछला । कभी-कभी छोटे-छोटे निर्दोष पेड़-पौधे, रीछ, व्याघ्र, चोर, भूत-पलीत जैसे लगते हैं और कई बार तो उनमें आँख, दाँत, हाथ बढ़ते हुए तथा हरकत करते हुए दिखाई देते हैं । कहते हैं—'शंका डायन, मनसा भूत' आशंका डायन के बराबर भयानक रूप धारण करती है और मन में उत्पन्न हुई आशंका भूत का डरावना रूप बनाकर खाने-पकड़ने को दौड़ती है ।

अन्धकार और भय का जोड़ा—अन्धकार अपने आप में एक प्रकार का भय भरे बैठा रहता है । अँधेरा वस्तुस्थिति का वास्तविक ज्ञान नहीं होने देता, फलस्वरूप डरावनी परिस्थितियाँ अनायास ही चारों ओर बन जाती हैं । इस विषम-स्थिति में बचने के लिए रात को भी कृत्रिम प्रकाश उत्पन्न करना पड़ता है । दिन के प्रकाश में ९० प्रतिशत डर समाप्त हो जाता है और रात में अकारण ही डरावनी परिस्थितियों की घटा घिर आती है । प्रकाश की इसीलिए प्रशंसा और अँधेरे की इसीलिये निन्दा की जाती है । एक, जहाँ हमें दूरदृष्टि एवं वस्तुस्थिति का वास्तविक ज्ञान कराता है वहाँ दूसरा, हमारी ज्ञान-परिधि को कुंठित कर देता है, अनजान बना देता है । अनजान स्थिति में सर्वत्र भय ही भय है । भय में हर दृष्टि में हानि ही हानि है । इसलिए उपनिषद्कार ने **'तमसो मा ज्योतिर्गमय'** का उद्घोष करते हुए अंधकार से विरत होकर प्रकाश की ओर चलने का निर्देश किया है ।

अज्ञान की तुलना अन्धकार से की जाती है । जो दोष अन्धकार में हैं वे सभी अज्ञान में मौजूद हैं । अज्ञान भी उसी तरह डराता है जिस तरह अँधेरा । वस्तुस्थिति की जानकारी के अभाव में हम कुछ का कुछ सोचते और कुछ का कुछ करते हैं । विचारना और कार्य-पद्धति गलत हो जाने का परिणाम त्रासदायक अनर्थ के रूप में ही सामने आता है । जिसमें ज्ञान का जितना अभाव है वह उतना ही उद्विग्न और भ्रमित रहता है । मृगतृष्णा वाली बात विख्यात है । कहते हैं कि प्यासा हिरन रात की चाँदनी में जमीन पर फैले हुए सफेद नमक, रेह को दूर से पानी समझता है और दौड़कर वहाँ पहुँचता है, पर वहाँ अभीष्ट वस्तु नहीं मिलती । पानी की कल्पना मिथ्या सिद्ध होती है और सफेद नमक जमीन पर बिखरा हुआ मिलता है । अँधेरे में पड़ी हुई रस्सी साँप प्रतीत होती है । भ्रम जंजाल में पड़ा हुआ मनुष्य वास्तविकता की जानकारी न होने के कारण अगणित कष्ट सहता और अपने श्रम व समय को बर्बाद करता रहता है । अन्त में जब उसे अपनी भूल मालूम पड़ती है, तब आत्मग्लानि और पश्चाताप का नया दुःख और सामने आ खड़ा होता है ।

ज्ञान-प्राप्ति का पुरुषार्थ—ऋषियों ने अज्ञान से उबरने और ज्ञान को प्राप्त करने में मनुष्य का सर्वोपरि पुरुषार्थ माना है । अध्यात्म तत्व-ज्ञान का सारा ढाँचा ही 'ज्ञान नेत्रोन्मीलन' के उद्देश्य से खड़ा किया गया है । शास्त्र मानता है कि अज्ञानी मनुष्य एक प्रकार से अन्धा है । सूरज के न रहने पर रात्रि का अंधेरा फैलता है उससे भौतिक जगत में बिखरी हुई वस्तुओं के बारे में जानकारी से वंचित एवं पदार्थों की वस्तुस्थिति के सम्बन्ध में भ्रमित होना पड़ता है, पर बौद्धिक अन्धकार से अज्ञान उत्पन्न होता है उससे विचार-जगत में भारी भ्रम उत्पन्न हो जाता है, कुछ का कुछ प्रतीत होने लगता है और मृगतृष्णा में भटकने वाले हिरन की अपेक्षा भी मनुष्य अनेक गुना भ्रमित होकर दुःख पाता, हानि उठाता एवं न करने लायक निन्दनीय कार्य, न सोचने लायक उपहासास्पद विचार करता देखा जाता है ।

मानव-जीवन का गौरव इस बात में है कि वह अन्धकार को परास्त कर प्रकाश की परिस्थितियाँ प्राप्त करे । जिसे अंधेरी रात में दीपक जलाने का भी सऊर न हो, घनघोर अंधेरे में ऐसे ही डरता-मरता पड़ा रहे, उसे गया-गुजरा ही माना जायगा । इसी प्रकार जो विचार क्षेत्र में फैले हुए अज्ञानान्धकार की निविड़ परिस्थितियों में पड़ा रहे, उससे छुटकारा पाने का प्रयत्न न करे, उसे निम्न स्तर का ही समझा जायगा । अध्यात्मवाद का उद्देश्य और आदर्श यह है कि मनुष्य विवेकशील बने । हर बात और हर परिस्थिति की गहराई में घुसे और वास्तविकता तलाश करने का प्रयत्न करे । इस संसार में भला-बुरा सब कुछ है । बुरे से बुरे और अच्छे से अच्छे आदर्श उदाहरण, विश्वास, व्यक्ति एवं प्रचलन यहाँ विद्यमान हैं । प्रकाशवान् उदाहरण ढूँढ़ना चाहें तो निकट या दूर उनका भी बाहुल्य मिल जायगा और यदि अन्धकार पूर्ण व्यक्तित्व एवं विश्वासों की खोज की जाय तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे और भी अधिक मात्रा में उपलब्ध हो सकेंगे । ऐसी दशा में यह मानकर चलना कि जैसा सब कर रहे हैं वैसा हम भी करेंगे एक प्रकार से असम्भव एवं उपहासास्पद है । अपने आस-पास ही हमें परस्पर घोर विरोधी आदर्श एवं उदाहरण दृष्टिगोचर हो सकते हैं । उनमें से हमें जो रुचते हैं, जिनके प्रति आकर्षण, झुकाव या पक्षपात होता है उन्हें ही स्वीकार करते हैं और उसी रास्ते पर चलते हैं । ''जो सब करते हैं वह हम भी करेंगे'' यह उक्ति सर्वथा असत्य है । अपनी रुचि एवं रुझान के अनुकूल ही अनेक प्रकार के प्रचलनों में से कोई एक प्रचलन चुना एवं अपनाया जाता है ।

हर बात बारीकी से सोचें—अध्यात्म-तत्व ज्ञान की शिक्षा यह है कि हर समस्या, हर आदर्श, हर विचार, हर मान्यता एवं हर परम्परा पर बारीकी से विचार करें । उसके गुण-दोषों का विश्लेषण करें और जहाँ औचित्य एवं सत्य दिखाई पड़े वहीं अपनी निष्ठा को आश्रय दें । विचारणा के विवेक को प्रकाश कहा गया है और छानबीन न करके प्रचलित किसी ढर्रे का अन्धानुकरण करते रहने को अन्धकार । दर्शन शास्त्र में अविचार को, अविवेक को, ढर्रे को अपनाये रहने को ही अन्धकार कहकर पुकारा गया है और यह भी कहा गया है कि इस मार्ग पर चलते रहने वालों की दुर्गति होती है । जिसे आत्मोत्कर्ष करना है उसे सबसे पहला काम अपनी जिज्ञासा को, ज्ञान-पिपासा को, अन्वेषण वृत्ति को तीव्र करना चाहिए । वेदान्त दर्शन का प्रथम सूत्र है—''**अथातो ब्रह्म जिज्ञासा**'' अर्थात् सबसे पहले अपनी जिज्ञासा सजग करनी चाहिए । प्रकाश की ओर उन्मुख होने का यही तरीका है । सद्गति एवं आत्म-कल्याण का उद्देश्य इसी मार्ग पर चलने से पूर्ण होता है ।

यों आलस्य हर प्रकार का बुरा है, पर मानसिक आलस्य सबसे बुरे स्तर का है । जो करने योग्य काम नहीं करते, शरीर को परिश्रम से दूर रखना चाहते हैं, वे आलसी कहलाते हैं । ऐसे लोगों को अस्वस्थता एवं दरिद्रता घेरे रहती है । जो लोग उचित-अनुचित का भेद नहीं करते, उपयुक्त-अनुपयुक्त की परख करने का कष्ट नहीं उठाते और बुद्धि की वास्तविकता-अवास्तविकता का विश्लेषण करने का बोझ नहीं उठाने देते, ऐसे लोग मानसिक आलसी कहलाते हैं । उन्हें न विवेक का दर्शन होता है और न प्रकाश का । ऐसे लोग अज्ञानान्धकार में भटकते हुए, दिग्भ्रान्त बने अपने जीवन का नाश करते रहते हैं ।

भौतिक जीवन में शारीरिक आलस्य के कारण जिस प्रकार शारीरिक तेजस्विता एवं प्रखरता नष्ट हो जाती है, मुर्दनी, काहिली, पराधीनता और मलीनता छाई रहती है, इसी प्रकार मानसिक दृष्टि से आलसी बने हुए व्यक्ति भी अपनी मौलिकता, विवेकशीलता, विशेषता एवं श्रेष्ठता खो बैठते हैं । एक प्रकार से वे पड़ोसियों के मानसिक गुलाम बन जाते हैं । आस-पास के लोग जैसा कुछ भला-बुरा सोचते मानते हैं, उसी भेड़िया धसान में उन्हें भी अपना गुजारा करना पड़ता है । कहते हैं कि एक भेड़ जिधर चलती है उधर ही पीछे वाली भेड़ें भी चलने लगती हैं । आगे वाली भेड़ कुएँ में गिरें तो पीछे वाली भी अगली का अनुकरण करती हुई उसी खड्ड में गिरती चली जाती हैं । मानसिक दासता एवं बौद्धिक आलस्य का यही चिह्न है । यह लक्षण जिस समाज, राष्ट्र या व्यक्ति में पाये जायें, समझना चाहिए कि यह मानसिक दासता के दलदल में फँसकर चिरकाल तक दारुण दुःख सहता एवं दुर्गति की यातना भोगता हुआ पतन की ओर बढ़ता चला जायगा ।

अन्धकार की विरासत—हम पिछले दो हजार वर्षों से अज्ञानान्धकार के युग में रहते चले आये हैं । विदेशी आक्रमणों से जहाँ हमारा बहुत कुछ अपहरण हुआ वहाँ बौद्धिक प्रखरता को भी कुंठित कर दिया । सम्भवतः इस मानसिक अधःपतन के पीछे उन लोगों का हाथ रहा है जो हमें देर तक शोषित, पतित और पराधीन देखना चाहते थे । अँग्रजों ने छल-बलपूर्वक जहाँ राजनैतिक एवं आर्थिक प्रभुत्व प्राप्त किया, वहाँ उन्होंने अपनी संस्कृति के प्रति हमारी श्रद्धा को आकर्षित करने के लिए प्रबल प्रयत्न किया । चुपके-चुपके उनके परोक्ष प्रयत्न यह रहे कि भारतीय जनता अपनी संस्कृति को हेय एवं हीन मानकर उसकी उपेक्षा करे । इस षड्यंत्र में उन्हें आशाजनक सफलता मिली । फलस्वरूप अन्त में अँग्रेजों के चले जाने पर भी अँग्रेजी सभ्यता और अँग्रेजी भाषा दिन दूनी, रात चौगुनी पनपती और फलती-फूलती चली जा रही है ।

अँग्रेजों से पूर्ववर्ती मुसलमान शासकों के जमाने में यह कार्य दूसरे विलक्षण ढंग से चला है । इस समय इतने अधिक अन्धविश्वासों, मूढ़मान्यताओं और उद्धत परम्पराओं का प्रचलन हुआ जिसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । आर्ष ग्रन्थों में जहाँ पग-पग पर आत्म-निर्माण, पुरुषार्थ, उत्कर्ष, परमार्थ एवं कठोर कर्त्तव्यनिष्ठा का निर्देश पाया जाता है, वहाँ उन दिनों ऐसी विचारधाराएँ प्रचलित हुईं जो हमें एक प्रकार से मानसिक गुलामी की जंजीरों में जकड़कर रख देती हैं । वे सिखाती हैं कि मनुष्य कुछ भी नहीं, किसी अदृश्य शक्ति की कठपुतली मात्र है, उसका प्रारब्ध पूर्व निश्चित है, जो होना है होकर रहेगा । संसार का भविष्य भी पूर्व निर्धारित है, जो होनी है, होतव्यता है, होकर रहेगी । उसे कोई टाल नहीं सकता । पुरुषार्थ का कोई महत्त्व नहीं, जो विधि का विधान है वही होगा ।

प्रस्तुत मान्यता का अनौचित्य—विचारणीय प्रश्न है कि क्या उपर्युक्त मान्यता ठीक है ? यदि ठीक हो तब फिर मानवीय प्रयत्नों का कोई महत्त्व एवं मूल्य नहीं रह जाता । फिर कठोर कर्म करने का झंझट और जोखिम उठाने से क्या लाभ ? जो होतव्यता है , जितना लाभ-हानि मिलने वाला है, जितना कष्ट उठाना है, वह तो विधि-विधान के अनुसार उठाना ही होगा, इसलिए उसके प्रतिरोध का प्रयत्न करने या उपस्थित संकट को टालने के लिए उधेड़बुन करने से क्या लाभ ? जब तक अच्छे दिन न आवेंगे, तब तक कुछ होना जाना नहीं है । जब समय बदलेगा, तब देखते-देखते सब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ अपने आप सुधर जायगा । इस प्रकार की विचारणा हमें भाग्यवाद ने दी है । पुरुषार्थवादी भारतीय दर्शन भाग्यवादी कैसे बन गया ? मान्यताएँ बिल्कुल उल्टी कैसे हो गईं ? इस प्रश्न का कोई उत्तर सूझ नहीं पड़ता । लाखों वर्ष से एक सुनिश्चित दिशा में प्रवाहित होने वाली भारतीय संस्कृति की मूल धारा बिलकुल उल्टी होकर पूरब से पश्चिम की तरफ कैसे मुड़ गई ? किसने उसे उलट-पलट कर रख दिया इस गुत्थी को हल करते नहीं बन पड़ता ।

भारतीय धर्म का प्रत्येक अनुयायी, भारतीय दर्शन का प्रत्येक आस्थावान सदा से पुरुषार्थवादी, कर्मवादी रहा है । उसकी यह सुनिश्चित मान्यता रही है कि "मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है ।" उसके भीतर अनन्त शक्तियों का समुद्र लहरा रहा है । अपनी शक्तियों का सदुपयोग करने वाला हर मनुष्य उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँच सकता है । पुरुषार्थ में परिस्थितियों को बदल डालने की पूरी-पूरी सामर्थ्य विद्यमान है । जिस प्रकार हिमालय का वक्ष चीरकर निकलने वाली गंगा अपने प्रियतम समुद्र से मिलने का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए तीर की तरह बहती, सनसनाती बढ़ती चली जाती है और उसका मार्ग रोकने वाले चट्टान चूर-चूर होते चले जाते हैं, उसी प्रकार पुरुषार्थी मनुष्य अपने लक्ष्य को अपनी तत्परता एवं प्रखरता के आधार पर प्राप्त कर सकता है । हर अवरोध को उसका रास्ता छोड़कर हटना पड़ता है ।

हम और हमारे पूर्वज—इन्हीं मान्यताओं को अपनाये रहने वाले हमारे पूर्वज विश्वविजय कर सकने में—चक्रवर्ती धर्म साम्राज्य स्थापित कर सकने में समर्थ हुए थे । उनकी इसी गौरव-गरिमा के सामने संसार के मानव-समाज ने अपना मस्तक झुकाया था और जगद्गुरु स्वीकार किया था । किसी समय हमारा देश प्रगति के उच्च शिखर पर था । यहाँ धन, बल, कौशल, शिल्प, ज्ञान, विज्ञान किसी बात की कमी न थी । समस्त विश्व को हमने बहुत कुछ दिया था । देवताओं जैसा अपना उच्च स्तर बना सकने और संसार को अपने महान् अनुदानों से कृत्य-कृत्य बनाने का जो श्रेय किसी समय भारतवासियों ने प्राप्त किया था, उसके पीछे उनकी पुरुषार्थवादी कर्मठता ही थी । वे जानते थे कि हर कर्मठ व्यक्ति के पीछे ईश्वर की सहायता सन्निहित रहती है । शुभ कर्मों के साथ तो ईश्वर की सहायता सुनिश्चित ही है । कहने वाले तो यहाँ तक कहते हैं कि अशुभ और अनुचित दिशा में पुरुषार्थ करने वाले कर्मनिष्ठों को भी ईश्वरीय सहायता मिलती है । डाकू और तस्कर तक अपने पुरुषार्थ के बलबूते पर एक सीमा तक आश्चर्यजनक सफलताएँ प्राप्त करते रहे हैं । उनके बुरे कर्म का दण्ड मिलेगा यह दूसरी बात है, पर पुरुषार्थ का लाभ अपनी कतिपय सफलताओं के रूप में आये दिन प्राप्त करते रहते हैं । कहने का तात्पर्य इतना भर है कि पुरुषार्थ की सामर्थ्य अपरिमित है । ईश्वर को पुरुषार्थी ही सबसे अधिक प्रिय है । इसी से तो वह हर कर्मठ व्यक्ति को उसके प्रयत्न एवं श्रम के अनुरूप सफलता प्रदान करता है ।

प्राचीनकाल में यही भारतीय दर्शन था । यहाँ का हर व्यक्ति इसी ढंग से सोचता था और इन्हीं भावनाओं के आधार पर अपनी नस-नाड़ियों को प्रगति के लिए अपार उत्साह और अनौचित्य को हटा-मिटा डालने के लिए प्रचण्ड शौर्य भरे रहता था । हमारी इन्हीं आस्थाओं ने तो हम तेतीस कोटि भारतवासियों को समस्त विश्व में तेतीस कोटि देवताओं के नाम से विख्यात कराया था और यह भारत-भूमि 'स्वर्गादपि गरीयसी' कहकर सम्मानित की जाती थी ।

उलटे विचार उलटे परिणाम—आज हमारी स्थिति कितनी उलट गई यह देखकर गहरा सन्ताप होता है । ऐसा आखिर हुआ क्यों ? इस प्रश्न पर विचार करते हुए एक ही उत्तर सूझता है कि हमारा जीवन दर्शन उलट गया । हम पुरुषार्थवादी कर्मठता को तिलांजलि देकर मानसिक दासता के जंजाल में जकड़ गये और दीन-हीन, अकर्मण्य, कायर एवं अविवेकी लोगों की तरह भाग्यवाद का पल्ला पकड़कर बैठ गये । उलटी सोचने वाले को उलटा परिणाम सहने के लिए भी तैयार रहना चाहिए । लम्बी अवधि से हम अपनी भ्रान्त विचारणा का दुष्परिणाम सहते हुए चले भी आ रहे हैं ।

विचारणीय बात यह है कि यदि सब कुछ भाग्य में ही बदा लिखा है, जो कुछ होना है सब विधि के विधान से ही होने वाला है तो फिर मनुष्य को किसी असफलता या दुष्कर्म के लिए क्यों तो उसे दोषी ठहराया जाय ? और क्यों किसी सफलता या सत्कर्म का श्रेय दिया जाय ? फिर ईश्वर क्यों किसी का भाग्य बुरा बनाता है और क्यों किसी का अच्छा ? विधाता तो सहृदय है फिर किन्हीं प्राणियों को त्रास देने वाली परिस्थितियाँ क्यों उत्पन्न करता है ? ईश्वर को तो अपने सभी पुत्र समान रूप से प्रिय होने चाहिए, फिर वह क्यों किसी के साथ पक्षपात करके उसे उन्नतिशील बनाता और क्यों किसी के साथ निष्ठुरता बरतकर उसे दुःख-दरिद्रता की विषम परिस्थितियों में धकेल देता है ? जब ईश्वर ही भाग्य बनाता है, कर्म करने की प्रेरणा देता है तो उपकरण मात्र बने हुए विवश मनुष्य को उस बलात् कराये दुष्कर्म का दण्ड क्यों भोगना पड़ता है ? वह दण्ड उस विधाता को ही क्यों न मिले, जिसने किसी को बुरी प्रेरणा दी और बुराई कराई ?

यह ऐसे प्रश्न हैं जिनका भाग्यवाद के पास कोई उत्तर नहीं है । यदि यह विधि के विधान वाली मान्यता सही हो तो निश्चय ही किसी व्यक्ति को कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है । करता है तो बेकार कष्ट उठाता है और व्यर्थ ही झंझट में पड़ता है । तब तो "**अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम । दास मलूका कह गये, सबके दाता राम**" की उक्ति के अनुसार व्यापार, व्यवसाय, कृषि, मजदूरी, व्यायाम, अध्यापन आदि करने की भी आवश्यकता नहीं है । जितना भाग्य में लिखा है वह तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिल ही जाने वाला है, फिर व्यर्थ श्रम क्यों किया जाय ? व्यर्थ कष्ट क्यों सहा जाय ?

यदि यह सत्य होता तो—यदि यह बात सत्य होती तो किसी स्वजन-सम्बन्धी की चिकित्सा कराना भी व्यर्थ होता । जितनी आयु लेकर जो आया है उसे उतने ही दिन जीना है, जिस रोग का कष्ट जितने दिन सहना है उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता हो तो फिर चिकित्सा कराने की क्या आवश्यकता ? रोगी का कष्ट निश्चित है और मृत्यु का दिन भी पूर्व निश्चित है तो फिर चिकित्सा में पैसा, समय और श्रम लगाने की न तो कोई उपयोगिता है और न आवश्यकता । देखा जाता है कि तथाकथित भाग्यवादी भी व्यवहार में अपनी मान्यता को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं । वे केवल पुरुषार्थ के कष्ट से बचने और अपनी अकर्मण्यता पर लीपा-पोती करने के लिए इस सिद्धान्त का प्रतिपादन भर करते हैं । यदि उन्हें अपने कथन पर विश्वास होता तो कोई भाग्यवादी न तो अपनी कष्ट निवृत्ति के लिए और न आजीविका उपार्जन के लिए कोई प्रयत्न करता, पर देखा इससे सर्वथा विपरीत जाता है । दिन-रात भाग्यवाद की दुहाई देने वाले और उसी से अपनी आजीविका चलाने वाले ज्योतिषी भी जब दरवाजे-दरवाजे पर मारे फिरते हैं और अनेक छल-प्रपंच करके अपना धन्धा चलाते हैं तो यही कहना पड़ता है कि यदि उन्हें भाग्यवाद पर सच्चा विश्वास रहा होता तो अपने घर पर ही बैठे रहते और जो आमदनी उनके भाग्य में लिखी होती उसका ही लाभ उठाते रहते । कथनी और करनी में अन्तर रहने से यह सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि हाथी के दाँत दिखाने भर के हैं ।

पुरुषार्थवादी आदर्शों के स्थान पर हमारी जाति में यह भाग्यवादी आँधी विचारधारा चल कैसे पड़ी ? इसकी खोज इस निष्कर्ष पर पहुँचाती है कि आक्रमणकारियों और अत्याचारियों ने अपने अन्यायों से पीड़ित लोगों को विद्रोह करने पर उतारू न होने देने के लिए यह सम्मोहन अस्त्र चलाया । आपरेशन करते समय रोगी कराहना और हरकत करना बन्द रखे उसके लिये 'क्लोरोफार्म' नामक औषधि सुँघा दी जाती है । उसे सूँघ कर रोगी का मस्तिष्क मूर्छित हो जाता है, हाथ-पैर शिथिल हो जाते हैं, शरीर सुन्न हो जाता है, ऐसी स्थिति में आकर लोग मनचाहे ढंग से किसी भी अंग की निश्चिन्ततापूर्वक चीरफाड़ करते रहते हैं । अन्याय-पीड़ित शोषितों के मन में प्रतिकार की, विद्रोह की आग न कड़कने लगे इसलिए अनाचारी लोगों ने यह भाग्यवादी विचारधारा तथाकथित पण्डितों और विद्वानों के माध्यम से प्रचलित करायी । वे स्वयं इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करते तो सम्भव है लोगों को आशंका होती और उनकी बात न मानते, पर जब पण्डित लोग, विद्वान लोग, संस्कृत भाषा में लिखे श्लोकों के सहारे किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं और उसकी पुष्टि में कतिपय कथा उपाख्यान भी सुनाते हैं, तब भोली, भावुक, श्रद्धालु एवं भारत जैसे धार्मिक देश की जनता को उसे स्वीकार करने में कोई आपत्ति होनी भी क्यों चाहिए ?

अतीत पर दृष्टिपात—पिछले अज्ञानान्धकार वाले दिनों के इतिहास पर जब हम दृष्टिपात करते हैं, तब प्रतीत होता है कि भारत के भीतर उत्पन्न हुए अनाचारी सामन्तों ने जनता को विविध प्रकार से पद-दलित किया है । छोटे-छोटे राज्यों में बँटे हुए जागीरदार अपनी लुटेरी सेना बनाकर चाहे जिस छोटे से पड़ोसी राज्य पर चढ़ दौड़ते थे । मारकाट मचाने के अतिरिक्त जनता की लूटपाट भी खूब होती थी । लड़कियों का अपहरण, एक-एक सामंत के घर में पचासों-सैकड़ों रखैलियों का रहना उन दिनों गौरव और गर्व का विषय समझा जाता था । मारकाट ही उन दिनों वीरता बनी हुई थी । शासकों की मर्जी ही न्याय बना हुआ था । इस स्थिति में जनता को कितना त्रास मिलता होगा, सर्वसाधारण का मन कितना दुःख एवं क्षोभ से भरा रहता होगा इसका अनुमान लगा सकना भी आज कठिन है । उन दिनों पुरोहितगण राज्याश्रय पर ही निर्भर रहकर अपनी आजीविका चलाते थे । जो शासकों की मर्जी को शास्त्र सम्मत बताता था वही अधिक पुरस्कार पाता था । इस वातावरण ने उन दिनों पुरोहितों को भी उसी ढाँचे में ढाल दिया था, वे भी जनहित की बात छोड़कर अपने लाभ की ही बात सोचने लगे थे । भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य जैसे मनीषियों को अन्न-दोष से अनीति का समर्थन करना पड़ता था तो सामान्य स्तर के विद्वानों का तो कहना ही क्या । चारण और पण्डितों का उन दिनों बही काम रह गया था कि शासक जो कुछ उचित-अनुचित करें उसका समर्थन करते रहा जाय । चारण वैसी ही कविताएँ बनाते थे और पण्डित वैसे ही श्लोक गढ़ते थे । अशिक्षित जनता संस्कृत में लिखे पद्यों को शास्त्र या ऋषि वचन ही मानती थी । अतएव उन्हें शिरोधार्य भी करती थी । उसी मध्यकालीन सामन्तवादी युग में ऐसी अगणित मान्यताएँ प्रचलित की गईं । जनता उस विचारधारा को स्वीकार करती गई । भाग्यवादी विचारधारा भी उसी युग की देन है ।

अशुभ प्रयोजन-जन्य मान्यता—इस विचारधारा का मूल प्रयोजन यह है कि जो कुछ हो रहा है उसे प्रारब्ध का योग एवं विधि का विधान समझकर सहन करते रहा जाय । नृशंस शासक यदि क्रूरता बरतते हैं, उद्धत आचरण करते हैं और अनीतिपूर्वक सुख-साधन जुटाते हैं तो उसे इन पर ईश्वर की कृपा, उनके पूर्व जन्मों का पुण्योदय माना जाय । जिस पर अत्याचार हुआ है उसके बारे में यह समझा जाय कि इसने पूर्व जन्म में कोई पाप किया होगा जो कि आज सता रहा है उसने पहले सताया होगा, इसलिए उसे उसका दण्ड मिल रहा है । इस विचारधारा ने शोषितों को दूसरों की सहानुभूति से वंचित कर दिया । जो जितना सताया गया, वह पूर्व जन्म का उतना ही बड़ा पापी माना गया । जिसने अनीतिपूर्वक जितना लाभ उठा लिया, वह उतना ही पूर्व-जन्म

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का पुण्यात्मा माने जाने के कारण श्रद्धा एवं प्रशंसा का अधिकारी बन गया ।

अनीति के प्रति विद्रोह करना, अनुपयुक्त को बदल देना, मनुष्य का नितान्त आवश्यक एवं नैतिक कर्त्तव्य है । यह कर्त्तव्य-भावना यदि शोषितों में जाग पड़े तो वे शोषकों को चूर-चूर कर सकते हैं । अतएव जन-साधारण की विद्रोह भावना दबी रहे, वे झूठे आत्मसंतोष में पड़े उस स्थिति को सहन करते रहें इस दृष्टि से उन दिनों के सत्ताधारियों ने यह उचित ही सोचा कि भाग्यवाद की नशीली गोली खिलाकर सर्वसाधारण की मनोभूमि को अर्द्धमूर्च्छित एवं लुंज-पुंज बना दिया । गोली ठीक निशाने पर लगी । परिणाम वही हुआ जो सोचा गया था । लम्बी अवधि तक भारतीय जनता देशी और विदेशी अत्याचारियों के अनाचार सिर झुकाये सहन करती रही । उसमें विद्रोह की, प्रतिशोध की क्षमता नहीं थी, ऐसी बात नहीं । उलटे दर्शन ने जिसकी बुद्धि को भ्रमित कर दिया हो उसे अपना सही रास्ता सूझता भी कहाँ है ?

विदेशी आक्रमणकारी भारतीय जनता की इस अवसादग्रस्त मनोभूमि से परिचित हो चुके थे, इसलिये उनके छोटे-छोटे लुटेरे दल केवल लूट-पाट के उद्देश्य से इस देश में आते रहे और जब यह देखा कि यहाँ पैर जमाने को बहुत बढ़िया स्थिति मौजूद है, तब वे शासक बनकर बैठते गये । इतनी कम संख्या वाले, इतनी कम शक्ति वाले विदेशी आक्रमणकारियों ने इतनी लम्बी अवधि तक, इतना नृशंस शासन कर सकने में कैसे सफलता प्राप्त कर ली ? इस प्रश्न का एक ही उत्तर है कि भाग्यवाद के नाम पर यहाँ की जन-मनोभूमि मूर्छित स्थिति में पड़ी हुई थी । जहाँ प्रतिरोध की सम्भावना न हो, वहाँ हर बुराई मनमाने ढंग से पनपती और फलती-फूलती रह सकती है ।

दुहरा व्यवहार दुहरा प्रयोजन—हम देखते हैं कि मुसलमानी शासनकाल में जहाँ सचेष्ट, प्रबुद्ध और भावनाशील लोगों के कत्लेआम होते रहे हैं, तेजस्वी साधु और ब्राह्मणों का नृशंस उत्पीड़न होता रहा है, वहाँ उन्हीं दिनों कुछ साधु और पंडितों को खुलकर खेलने का अवसर मिला है । मुसलमान शासकों ने उनके मार्ग में तनिक भी असुविधा उत्पन्न नहीं की वरन् गुप्त रूप से उन्हें प्रचुर धन दिया एवं उनकी सिद्धि चमत्कारों की किंवदन्तियाँ फैलाने में अपने जासूसों द्वारा पूरी-पूरी सहायता पहुँचायी । कारण एक ही था कि वे भारतीय जनता को अन्याय सहन करने के लिए अधिक अभ्यस्त बना रहे थे । भाग्यवाद का अधिकाधिक प्रचार कर रहे थे । अनीति के प्रतिरोध का उपाय वे विद्रोह न बताकर यह कह रहे थे कि ईश्वर की भक्ति करो, भजन कीर्तन में मन लगाओ । ऐसा करने से भगवान् प्रसन्न होंगे जो कष्ट उठाने पड़ रहे हैं, वे अपने आप सरल हो जायेंगे । 'दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा' का लोकशिक्षण उन्हीं दिनों जोर-शोर से किया गया । जो दिल्ली का राजा है, वही जगदीश्वर है । इस मान्यता ने अनीति के आगे सिर झुकाने की ही नहीं आत्म-समर्पण करने की भी पृष्ठभूमि तैयार की ।

उपयुक्त अवसर देखकर इन भारतीय दर्शन को उलटा करने के प्रयत्न में संलग्न तथाकथित विद्वानों ने यह सोचा कि प्रस्तुत प्रयास का लाभ शासक वर्ग ही क्यों उठावें ? हमें भी अपने वर्ग और वंश के लिए कोई लाभ क्यों न उठाना चाहिए ? उनकी इस कल्पना ने नई पृष्ठभूमि तैयार कर दी । "हर मनुष्य ग्रह-नक्षत्रों का गुलाम है । उनकी कृपा एवं अकृपा से ही किसी का भला-बुरा समय आता जाता है । वे ग्रह-नक्षत्र कब किसी की भलाई या बुराई करेंगे, इसकी जानकारी के लिए हमने शास्त्र तैयार कर लिया है और वैसे मंत्र-तंत्र ढूँढ़ लिए हैं, जिनके आधार पर प्रतिकूल ग्रह-नक्षत्रों को अनुकूल और अनुकूलों को प्रतिकूल बनाया जा सकता है ।" भाग्यवाद की यह नई शाखा बनकर देखते-देखते तैयार हो गई और इसे फलित ज्योतिष के नाम से जोर-शोर के साथ प्रख्यात कर दिया गया । देखते-देखते ढेरों ग्रन्थ इस संदर्भ में बनकर खड़े हो गये ।

ज्योतिष-शास्त्र की वास्तविकता—ज्योतिष-शास्त्र भारत में प्राचीन शास्त्र है । भारतीय ऋषियों ने उसकी खोज में अपने जीवन खपाये थे । ग्रहों की चाल, उनकी कक्षाएँ, वेध, उदय-अस्त की गणना उन्होंने उन परिस्थितियों में कितनी सूझ-बूझ एवं परिश्रम के साथ की है, उसके लिए आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है और उनके महान् प्रयासों के लिए हमारा मस्तक श्रद्धा से नत हो जाता है । ज्योतिष विद्या का विस्तार भारत से ही समस्त संसार में हुआ । यहाँ बड़ी-बड़ी वेधशालाएँ बनीं । दुर्बीनों तथा इन दिनों जैसे परिष्कृत यंत्र उस समय न थे फिर भी उन्होंने वेधशालाएँ बनाकर ग्रहचार का महत्त्वपूर्ण अनुसंधान करने में सफलता प्राप्त की । अनेक आर्य ग्रन्थ इस संदर्भ में लिखे गये । आज रूस, अमेरिका आदि देशों ने ज्योतिष-शास्त्र में असाधारण प्रगति की और उसी के आधार पर अन्तरिक्ष में कृत्रिम ग्रह-उपग्रहों का भेज सकना, उन्हें निर्देशानुसार गति प्रदान करना, लौटाना आदि कैसे सम्भव होता यदि ज्योतिष-शास्त्र की इतनी उन्नति न होती । यह एक अत्यन्त उपयोगी विद्या है । विज्ञान के विद्यार्थी जानते हैं कि अब उस सम्बन्ध में जो शोध एवं अन्वेषण हो रहे हैं, उन्होंने मानव जाति का भविष्य अब ज्योतिष-शास्त्र के ही हाथ में सौंप दिया है । इस विद्या का सर्वोपरि ज्ञान जिस देश के पास होगा भविष्य में विश्व का राजनैतिक नेतृत्व उसी के हाथ में चला जायेगा । आकाश से पृथ्वी के नियंत्रण की अनेक योजनाएँ अगले दिनों ज्योतिष विद्या के विद्वान कार्यान्वित करने जा रहे हैं ।

यह सब ठीक है, पर यह सब समझ में आने लायक बात नहीं है कि आकाश में रहने वाले जड़ ग्रह-नक्षत्र मनुष्य के भाग्य को कैसे प्रभावित करते हैं ? यह हो सकता है कि किसी ग्रह-नक्षत्र की कोई किरणें पृथ्वी पर आवें और उनका कोई विशेष प्रभाव समस्त पृथ्वी पर या उसके किसी भाग पर पड़े, पर यह कैसे सम्भव है कि एक ही घर या गाँव में रहने वाले, अलग-अलग व्यक्तियों पर, अलग-अलग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रभाव वे ग्रह-नक्षत्र डालें और किसी को कोई लाभ तथा किसी को कोई हानि पहुँचावें ? अब विज्ञान की उन्नति ने ग्रह-नक्षत्रों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर ली है । किसी जमाने में भले ही उन्हें सर्वशक्तिमान देवता माना जाता हो, पर अब तो वे निर्जीव पिण्ड मात्र सिद्ध हो चुके हैं । चन्द्रमा के सम्बन्ध में तो इतनी अधिक जानकारी प्राप्त कर ली गई है कि अब उस पर मनुष्य के उतरने, ठहरने और बसने तक की योजना बनने लगी है । विज्ञान ने यह भ्रम दूर कर दिया है कि चन्द्रमा कोई देवता है, अब उसकी एक निर्जीव भौतिक पिण्ड से अधिक और कोई स्थिति नहीं रह गई है । साहित्य और कविता में उसको भले ही अलंकार के रूप में प्रयुक्त किया जाता रहे, पर बुद्धिजीवियों की दृष्टि में उसका वैसा मूल्य नहीं रह गया है । यही बात अन्य ग्रहों के बारे में भी है । अभी तक केवल मंगल के बारे में यह कल्पना की जा रही है कि शायद उस पर जीवधारियों के रह सकने की परिस्थिति हो । शेष में तो हवा पानी तक का अस्तित्व सन्दिग्ध बना हुआ है । कई तो सूर्य की तरह अग्नि-पिण्ड मात्र हैं । ऐसी दशा में वे बेचारे भारतवर्ष के भाग्यवादियों में से गिन-गिनकर कैसे इतना सब कर पावेंगे कि कब किस पर प्रसन्न और कब किस पर अप्रसन्न रहें ? कब किसे कितनी, किस प्रकार की हानि पहुँचावें और कब किसे कितना लाभ दें ? निश्चित रूप से यह सर्वथा असम्भव बात है ।

आश्चर्यजनक उलटबाँसी—फिर भी कितने आश्चर्य की बात है कि गणित ज्येतिष-शास्त्र के महाविज्ञान के साथ फलितवाद की यह कीचड़ चिपक गई । लोगों ने कैसे स्वीकार कर लिया कि उनकी क्रिया, प्रतिभा एवं योग्यता नहीं वरन् ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति उनके शुभ-अशुभ, लाभ-हानि की उत्तरदायी है । यह भ्रम जंजाल उन्हीं दिनों की उपज है जिन दिनों अन्यायी सत्ताधारी शोषित जनता में प्रतिशोध और प्रतिरोध उत्पन्न न होने देने के लिए भाग्यवाद की अफीम वितरण करा रहे थे । पण्डितों ने एक कदम और आगे बढ़कर हाथ मारा । उन्होंने उसी शृंखला में एक नई शाखा और खड़ी कर दी । उन्होंने बताया कि केवल विधि का विधान एवं भाग्य की रचना ही नहीं, वरन् ग्रह-नक्षत्र भी किसी व्यक्ति के सुख-दुःख का कारण होते हैं । भाग्य को अटल कहा जाता था, इसलिए उसमें तो किसी हेर-फेर की गुंजाइश थी नहीं । ग्रह-नक्षत्रों के बारे में यह कहा गया कि वे बदलते-पलटते रहते हैं और कुछ मंत्र-तंत्र ऐसे हैं जिनसे उनकी प्रतिकूलता अनुकूलता में बदली जा सकती है । यह विश्वास तथाकथित फलित ज्योतिष की पुस्तकें गढ़कर जब पैदा कर दिया गया तब यह सरल ही था कि ज्योतिषी लोग उसके सहारे अपनी पाँचों अँगुली घी में रखें और भ्रम-ग्रस्त जनता से मनमाना लाभ उठावें ।

फलादेश कहने में चतुरतापूर्वक मनोविज्ञान का प्रयोग किया जाता है । हर व्यक्ति के बारे में उसके जन्मदिन को लेकर ऐसी बातें कही जाती हैं, जिनमें से अधिकांश हर व्यक्ति के बारे में लागू हो सकती हैं । जो खाँचे ठीक बैठ जाते हैं उनके आधार पर मनुष्य यह अनुमान लगा लेता है कि ज्योतिष की बात बिल्कुल ठीक है । बेचारा उन बातों की उपेक्षा ही करता रहता है जो बिल्कुल भी नहीं मिलतीं और सर्वथा गलत होती हैं । भाग्यवाद पर विश्वास करने वाले भोले लोगों के बहकाने और ठगने का यह सरल तरीका है जो आजकल फलित ज्योतिष के नाम पर चल रहा है ।

भाग्यवाद के जाल-जंजाल में न जकड़ें

प्राचीनकाल में ज्योतिष विद्या विज्ञान सम्मत थी । अन्तर्ग्रही परिस्थितियों का अध्ययन तथा समूचे संसार पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन उसका प्रमुख विषय था । गणनाओं के आधार पर इस विद्या के विशेषज्ञ यह जानने का प्रयास करते थे कि ग्रह-नक्षत्रों की गति एवं स्थिति में किस तरह के परिवर्तन हो रहे हैं तथा सौरमण्डल की अविछिन्न घटक होने के कारण पृथ्वी के वातावरण पर क्या प्रभाव पड़ने वाला है ? प्रकाश, ताप, प्राण तत्व जैसे कितने ही अनुदान पृथ्वी को सूर्य से प्राप्त होते हैं । अविज्ञात होते हुए भी अन्यान्य ग्रह-नक्षत्रों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका पृथ्वी के सन्तुलन तथा असन्तुलन में हो सकती है । सम्बद्ध जानकारियाँ ज्योतिष विद्या के माध्यम से प्राप्त होती थीं । गणनाओं के आधार पर यह जान सकना सम्भव था कि आगामी परिस्थितियों तथा वातावरण में क्या परिवर्तन होने वाले हैं । तदनुरूप कृषि आदि कार्यों के लिए योजनाएँ बनाई जाती थीं । इस विद्या के विशेषज्ञों में आचार्य वाराहमिहिर, आर्यभट्ट, भाष्कराचार्य आदि ऋषियों का नाम आज भी श्रद्धापूर्वक लिया जाता है ।

आत्म-विद्या का एक गूढ़ विज्ञान भी है जिसके द्वारा भविष्य बोध सम्भव है । प्रचलित भाषा में जिसे अतीन्द्रिय सामर्थ्य कहा जाता है, उसका एक सुनिश्चित विज्ञान है । ऐसे समर्थ कितने ही अतीन्द्रिय चेतना सम्पन्न सिद्ध पुरुष होते रहे हैं जिन्होंने वर्तमान के गर्भ में समाहित अदृश्य भविष्य की जानकारियाँ देकर जनमानस को अचम्भित किया है । उस रहस्यमय विद्या को जानने वालों की संख्या विश्वभर में अँगुली पर गिनने योग्य है । ढूँढ़ने पर ऐसे बिरले महापुरुष आज भी इस धरा पर मिल जायेंगे जिनके लिए कुछ भी अविज्ञात नहीं है, पर भविष्य बोध की क्षमता से सुसम्पन्न होते हुए भी किसी व्यक्ति विशेष के विषय में भावी उद्घोष शायद ही वे करते हैं । इसका कारण यह है कि कर्मफल के सिद्धान्त पर सृष्टि की व्यवस्था परिभ्रमण कर रही है । भविष्य कथन उस सृष्टि चक्र में व्यतिरेक उत्पन्न करता है । ऐसी स्थिति में असमय भावी घटनाओं का उद्घोष प्रकृति मर्यादा एवं व्यवस्था के प्रतिकूल है । तो भी आपत्तिकालीन परिस्थितियों में मानव जाति के हित के लिए उनकी अन्तर्निहित क्षमता का लाभ मिलता है । ऐसी सामर्थ्य सम्पन्न व्यक्तियों को प्रामाणिकता की कसौटी पर पूर्वी तथा पश्चिमी दोनों ही देशों में कसा जा चुका है, जिसके निष्कर्ष यह बताते हैं कि अध्यात्म विद्या में वह रहस्यमय विद्या विद्यमान है जिसके द्वारा त्रिकाल बोध सम्भव है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

४.७ प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा

जो कार्य आज अंतरिक्ष विज्ञान के माध्यम से पूर्ण हो रहा है, वह पुरातनकाल में ज्योतिष विज्ञान की गवेषणाओं द्वारा पूरा किया जाता था । विज्ञान-सम्मत वह उपयोगी विद्या के जानकार तो अब यत्किंचित ही मिलते हैं, पर उस विद्या का ध्वंसावशेष फलित ज्येतिष की भ्रान्त मान्यताओं के रूप में विज्ञ तथा अविज्ञ दोनों ही समाजों में लोकप्रिय बन रहा है । जन्मकुण्डली देखकर, हाथ की, मस्तक की रेखाएँ पढ़कर व्यक्ति विशेष का भविष्य बताने वाले ज्योतिषियों की इन दिनों कमी नहीं है । नौकरी, दुकानदारी, कृषि की भाँति एक बड़े वर्ग का यह व्यवसाय बना हुआ है । बाजार मेले, ठेलों में घूमते-फिरते ऐसे ज्योतिषी हर किसी को मिल सकते हैं जो थोड़े से पैसे लेकर सम्पूर्ण भविष्य की जानकारी कुछ ही मिनटों में इस ढंग से दे सकते हैं जैसे चलचित्र की भाँति भावी घटनाएँ उनकी नजरों के सामने से गुजर रही हों । तोता की भाँति शब्दों के हेर-फेर से भूत एवं भविष्य की एक जैसी बात रटते रहने वाले व्यवसायी वक्ताओं की इन दिनों कमी नहीं है । चन्द सिक्कों की कीमत पर हर कोई उनकी इस क्षमता का लाभ उठा सकता है तथा अन्ध-विश्वासों के जाल-जंजाल में जकड़ कर भाग्यवाद के चक्कर पर अपनी कार्यक्षमता नष्ट कर सकता है ।

विवेक की कसौटी पर फलित ज्योतिष की मान्यताओं को कसने पर उसमें रत्ती भर औचित्य नहीं दीखता । कारण कार्य की श्रृंखला में सम्पूर्ण सृष्टि आबद्ध है । पुरुषार्थ के बल पर हर कोई अपना भविष्य स्वयं गढ़ सकता है । मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है यह बात शत-प्रतिशत सही है । अमुक ग्रह-नक्षत्र का योग अमुक व्यक्ति को प्रभावित करके अमुक प्रकार की परिस्थितियाँ पैदा करेगा यह बात बुद्धि के पल्ले नहीं पड़ती । ग्रहों-नक्षत्रों के समष्टिगत प्रभाव की बात तो समझ में आती है और विज्ञान विवेकसम्मत भी लगती है, पर ग्रह विशेष का व्यक्ति विशेष के ऊपर प्रसन्न अथवा अप्रसन्न होकर वरदान, अभिशाप देना, सफलता असफलता का कारण बनना औचित्यपूर्ण नहीं लगता ।

भाग्यवाद को प्रश्रय देने वाली फलित ज्योतिष की मान्यताएँ हर दृष्टि से हानिकारक हैं । प्रचण्ड पुरुषार्थ के सहारे अभीष्ट प्रकार की सफलता सम्पादित कर सकना हर किसी के लिए सम्भव है । भाग्यवाद मनुष्य की शक्तियों को कुण्ठित करता है । जो कुण्डली में लिखा होगा वही होगा, यह मान्यता जड़ता को जन्म देती तथा पुरुषार्थ की दृष्टि से नपुंसक बनाती है । सब कुछ पूर्व में ही सुनिश्चित हो चुका है, यह सोच लेने पर किसी प्रकार के काम करने की गुंजाइश नहीं रह जाती । उस स्थिति की कल्पना की जाय कि हर व्यक्ति ऐसी धारणा बनाकर यदि हाथ पर हाथ धरे बैठ जाय तो मनुष्य जाति का भविष्य क्या होगा ? सुनिश्चित है कि विकास क्रम अवरुद्ध हो जायेगा ।

भारतीय परिस्थितियों का अध्ययन, विश्लेषण करने वाले समाजशास्त्रियों का मत है कि भारत के लम्बे समय तक पिछड़ेपन के गर्त में पड़े रहने तथा गुलामी की जंजीरों में जकड़े रहने के मूलभूत कारणों में फलित ज्योतिष की भ्रान्त मान्यताओं की भी प्रमुख भूमिका रही है । शकुन, मुहूर्त, कुण्डली के चक्कर में देश की पीढ़ियों ने बहुत कुछ गँवाया है । यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं होगा कि भाग्यवाद ने देश के पुरुषार्थ को ही दीर्घकाल तक प्रसुप्ति की तमसाछन्न स्थिति में रखा । गुलामी की जंजीरें इसलिए हजार वर्ष तक जकड़ी रहीं कि जनमानस में यह विश्वास जड़ जमाये था कि प्रस्तुत संकट को दूर कर सकना मानवीय पुरुषार्थ द्वारा सम्भव नहीं होगा । देश के भाग्योदय का सुयोग दैवी अनुकम्पा से अपने आप प्रस्तुत होगा । फलतः देश का पुरुषार्थ सोया रहा । हजार वर्ष से भी अधिक समय गुलामी की कष्टकारक पीड़ा सहनी पड़ी । जिसके फलस्वरूप देश पिछड़ता गया । जन-मानस शोषण एवं दमन के कारण शारीरिक, मानसिक, आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से जर्जर हो गया ।

उल्लेखनीय है कि तथाकथित पंडितों के अन्ध-विश्वास के कारण ही अथाह सम्पत्ति से युक्त सोमनाथ का मंदिर लूटा गया । मुहूर्तवाद तथा देववाद के परावलम्बन की मनोवृत्ति जैसे कारण आड़े नहीं आये होते तो राजपूत सेनानियों का बाहुबल महमूद गजनवी की लुटेरी सेना का सामना करने तथा पराजित करने में पूर्णतया सक्षम था, पर भाग्यवाद के फेर में पड़ने से ही क्षत्रियों का यह शौर्य एवं पराक्रम से युक्त पुरुषार्थ किसी काम न आ सका। गजनवी अपने लक्ष्य में सफल रहा तथा लूट-खसोटकर चलता बना ।

भारत में मुगल साम्राज्य की नींव डालने वाले बाबर के जीवन की प्रख्यात घटना है—एक फलित ज्योतिष के विशेषज्ञ ने आकर बाबर से कहा कि अभी आप युद्ध न करें । इस समय युद्ध करने पर आपको सफलता नहीं मिल सकती । बाबर ने पूछा आपको यह जानकारी कैसे मिली ? उत्तर में उसने कहा मैं भविष्य जानता हूँ । बाबर ने कहा फिर तो आप अपना भविष्य भी जानते होंगे, यह बताइये कि आप कितने वर्ष और जीवित रहेंगे उस ज्योतिषी का उत्तर था ३७ वर्ष । बाबर ने म्यान से तलवार खींची तथा ज्योतिषी का सिर धड़ से अलग कर दिया तथा सैनिकों को सम्बोधित करता हुआ बोला जिसे अपने जीवन का अगला क्षण नहीं मालूम ऐसे पाखण्डी पर विश्वास नहीं किया जा सकता । उल्लेखनीय है कि उस इतिहास प्रसिद्ध युद्ध में बाबर को सफलता मिली तथा ज्योतिषी की बात मिथ्या सिद्ध हुई ।

अन्ध-विश्वासी फलित ज्योतिष की मान्यताएँ न केवल मनुष्य को अकर्मण्य बनाती हैं, वरन् कितनी बार क्रूर कर्म करने की भी प्रेरणा देती हैं जिन्हें जघन्य अपराध की संज्ञा दी जा सकती है । कहते हैं कि रोमन बादशाह विटेलियस को एक ज्योतिषी ने परामर्श दिया कि यदि रोमन सम्राट् की माता अधिक दिनों तक जीवित रही तो सम्राट् की गद्दी खतरे में पड़ सकती है । बादशाह को गद्दी अधिक प्रिय थी बिना सोचे-विचारे उसने ज्योतिषी की बात पर विश्वास कर लिया,

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माँ को एक कमरे में बन्द करा दिया तथा भोजन आदि देने पर कड़ी पाबन्दी लगा दी । कुछ ही दिनों में वह भूख, प्यास से तड़पते हुए चल बसी ।

भविष्य जानने की ललक का एक मनोवैज्ञानिक पक्ष यह है कि मनुष्य की सहज जिज्ञासा अविज्ञात भविष्य की जानकारी प्राप्त करने की होती है । कम ही ऐसे हैं जो इसे निरर्थक मानते तथा पुरुषार्थ को अधिक महत्त्व देते हैं, बहुतायत उनकी होती है जो सफलताओं के लिए आतुर तो होते हैं पर अभीष्ट परिणाम में उसकी कीमत नहीं चुकाना चाहते । शार्टकट का वे मार्ग ढूँढ़ते हैं । भविष्य जानने के इच्छुकों में ऐसों की संख्या अधिक होती है जो भाग्य के सहारे बड़ी सफलताओं के सपने देखते रहते हैं । कहावत है कि 'धूर्तों' की दाल मूर्खों की हाँडी में ही गलती है । भीड़ की भाग्यवाद रूपी कमजोरी को देखकर पेशेवर ज्योतिषियों ने धन्धा करने का एक अच्छा सुयोग माना और फलित ज्योतिष की लोकप्रियता अन्धविश्वास की छत्रछाया में बढ़ती गई । संयोगवश कहीं कुछ लगा हुआ तीर-तुक्का ऐसे भविष्यवक्ताओं की ख्याति को और भी अधिक बढ़ा देता है ।

विचारणीय बात यह है कि यदि ऐसे ज्योतिषियों को भविष्य की कुछ जानकारी रही होती तो सर्व-प्रथम अपना भविष्य बनाने का प्रयत्न करते । दस पाँच रुपये की दैनिक आमदनी के लिए उन्हें दर-दर नहीं भटकना पड़ता अथवा ग्राहकों के लिए ज्योतिष-शास्त्र के मर्मज्ञ का लम्बा-चौड़ा बोर्ड लगाकर फुटपाथों अथवा दुकानों में बैठकर बाट नहीं देखनी पड़ती । सत्यता का मात्र इतना अंश है कि उनकी वाक्पटुता ही अल्पविकसित मस्तिष्कों को आकर्षित करती तथा अपने जाल में फँसाने में समर्थ होती है ।

मनुष्य के विकास की दृष्टि से भी यह उचित है कि पुरुषार्थ का अवलम्बन लेकर वर्तमान का सदुपयोग किया जाय । उज्ज्वल भविष्य इसी आधार पर विनिर्मित होगा । भविष्य की जानकारी अनावश्यक ही नहीं हानिकारक भी है । सफलता, असफलता, हानि-लाभ, जीवन-मरण सम्बन्धी बोध आदि यदि समय के पूर्व ही हो जाय तो इससे कितने ही संकट प्रस्तुत होंगे । सुनिश्चित रूप से यदि किसी विद्यार्थी को यह मालूम पड़ जाय कि वह परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होगा तो परिश्रम से जी चुराने लगेगा और भाग्य के भरोसे बैठा रहेगा अथवा किसी विद्यार्थी को यह मालूम हो जाय कि उसे सफलता नहीं मिलेगी तो वह पहले से ही हिम्मत हारकर बैठ जायेगा, मृत्यु की जानकारी दस पाँच वर्ष पहले मिल जाय तो उस व्यक्ति का जीवन निराशा से ग्रस्त हो जायेगा । वह एक-एक दिन मृत्यु का दिन गिनेगा तथा उस आनन्द से वंचित रह जायेगा जो वर्तमान के सदुपयोग से प्राप्त कर सकता था ।

कहा जा चुका है कि फलित ज्योतिष की भविष्य बोध की जानकारियाँ भ्रान्तिपूर्ण हैं पर ज्योतिर्विज्ञान तथा आत्मविज्ञान की विद्या द्वारा भविष्य ज्ञान सम्भव है । उस गूढ़ और उपयोगी विद्या का पुनरोद्धार हो यह तो उचित है, पर ज्योतिर्विज्ञान के नाम पर फैलते पाखण्ड एवं अन्ध-विश्वास को अविलम्ब रोका जाय ।

कर्म के सहारे या भाग्य के मारे

प्राचीनकाल में ज्योतिष का सीधा सम्बन्ध नक्षत्र विद्या से था । सुदूर स्थिति ग्रह-नक्षत्रों का ज्ञान, उनकी गति-गणना और स्थिति का वैज्ञानिक अनुसंधान अपने देश में उस समय चरमसीमा पर पहुँचा हुआ था, जबकि पृथ्वी के कई क्षेत्रों के लोग नदी, सोतों और झरनों के किनारे बैठकर जानवरों की तरह पानी पिया करते थे । जब तक ज्योतिष विशुद्ध विज्ञान का विषय रहा, तब तक इस दिशा में काफी प्रगति होती रही और लोगों में कर्म, परिश्रम तथा पुरुषार्थ के प्रति आस्था भी बनी रही, पर न जाने किस काल में यह मान्यता चल पड़ी कि लाखों करोड़ों मील दूर पर स्थित तारे और नक्षत्र एक-एक व्यक्ति के निजी जीवन पर अपना विशिष्ट प्रभाव डालते हैं ।

फलित-ज्योतिष, हस्तरेखा, अंक विज्ञान, आकृति विज्ञान न जाने कितनी विद्याएँ चल पड़ीं जिनके माध्यम से मनुष्य अनागत को जानने की चेष्टा करने लगा । कहा जाता है कि इन विद्याओं से भविष्य को जानकर व्यक्ति सम्भावित विपत्तियों से बच सकता है । इस मान्यता की संगति भारतीय संस्कृति के प्राण—कर्मफल के सिद्धान्त से कहाँ मेल खाती है ? प्रत्येक भारतीय धर्मानुयायी यह जानता और मानता है कि हम जो कर्म कर चुके हैं उनका ही फल आज भोग रहे हैं और जो आज कर रहे हैं उनके सत्परिणाम या दुष्परिणाम कल भोगने पड़ेंगे तो भविष्य की सम्भावित घटनाएँ जानकर व्यक्ति उनसे कहाँ तक बच सकता है । पहली बात तो यह कि उन घटनाओं को जाना ही नहीं जा सकता और जान भी लिया जाय तो उनके परिणामों से बच पाना असम्भव है फिर उन्हें जानने से क्या लाभ ?

इस तथ्य को किसी कहानीकार ने एक कथा के माध्यम से बड़े सुन्दर ढंग से समझाया है—कहा जाता है कि सृष्टि के निर्माण होने के बाद विधाता ने प्रत्येक मनुष्य को जन्म लेने पर उसका भविष्य सुना देने का नियम बनाया था । उस नियम का बराबर पालन भी किया जाता । एक बार किसी कुकर्मी व्यक्ति ने पुनर्जन्म लिया पिछले जन्म के पापों का दुष्परिणाम उसे इस जन्म में भोगना था, अतः उसका भाग्य बड़े ही भयंकर ढंग से लिखा गया । ६० वर्ष की आयु तक उसकी किस्मत में तमाम कठिनाइयाँ और विपत्तियाँ लिखी गई थीं। फिर उसे एक ऐसे भयंकर रोग से ग्रस्त होना बताया गया कि उसके सारे शरीर में कीड़े पड़ जायें । चालीस वर्ष तक रोग की इन यातनाओं को सहते हुए उसके भाग्य में सौ वर्ष की आयु पार करने के बाद मृत्यु लिखी गई ।

यह भविष्य उस व्यक्ति के जन्म लेते ही नियमानुसार सुनाया गया । एक-एक विपत्ति का वर्णन सुन कर वह व्यथित होता गया और अन्त में जाकर वह इतना चिंतित तथा उद्विग्न हो उठा कि सौ वर्ष की उम्र जीना तो दूर रहा वह तत्क्षण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ही भय के कारण मर गया । यह एक रूपक की तरह है जिसे पढ़कर समझना चाहिए कि दूरदर्शी और करुणामय परमात्मा यदि कर्मफल की दृष्टि से किसी का भाग्य निश्चित करता भी हो तो उसे जानने के कोई सूत्र नहीं छोड़ता । यदि इस प्रकार के सूत्र छोड़े जाते तो मनुष्य अपना सारा भविष्य पहले से ही जान लेता और यदि भाग्य में सुख-सुविधाएँ लिखी हैं तो पहले से ही निश्चिन्त होकर बैठ जाता, क्योंकि करने से तो कुछ होना ही नहीं है नियति ने पहले से ही सब कुछ निश्चित कर रखा है । फिर कुछ करने कराने से क्या अन्तर पड़ता है और यदि भाग्य में कष्ट विपत्तियाँ ही हैं तो क्यों न पहले से ही आत्महत्या कर उनसे छुटकारा पा लें ।

कर्मफल के इन सामान्य सिद्धान्तों से परिचित होने के बावजूद भी शिक्षित-अशिक्षित लोगों को अपना भाग्य जानने के लिए इधर-उधर भटकते हुए देखा जा सकता है लोगों में अपना भविष्य जानने की इतनी उत्सुकता है कि ज्योतिष आज-कल एक लाभदायक व्यवसाय के रूप में विकसित है । ज्योतिषी, हस्तरेखाविद्, आकृतिविज्ञानी, रमलविद्, आदि भविष्यवक्ता भोली जनता को भाग्य सितारों की चाल बताकर दोनों हाथों से अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं । यही नहीं तथाकथित प्रगतिशील अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में भी दैनिक, साप्ताहिक, मासिक तथा वार्षिक राशिफल छपते रहते हैं । कई लोग तो राशिफल देखने के लिये ही अखबार खरीदते हैं । समझ में नहीं आता कि अपनी प्रगतिशीलता का ढिंढोरा पीटने वाले अखबार भी इस अवसरवादिता से लाभ उठाने में क्यों संकोच नहीं करते ?

अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं की भविष्यवाणियों में स्पष्ट रूप से अन्तर देखा जा सकता है । यह मान भी लिया जाय कि नक्षत्र और फलित ज्योतिष विद्या सही भी है और उसका प्रभाव भी होता है तो एक-एक व्यक्ति के लिए निश्चित भविष्य रहना चाहिए और फलित ज्योतिष के गणित से सभी ज्योतिषियों को समान निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए । जैसे दो और दो चार होते हैं भविष्य विद्या की सत्यता भी इतनी ही निश्चित रहनी चाहिए । दो और दो का जोड़ कोई भी लगाये योगफल चार ही आता है, उसी प्रकार भविष्य जानने के लिए लगाया गया हिसाब भी निश्चित परिणाम देने वाला रहे, परन्तु ऐसा नहीं होता । एक राशि का सप्ताह फल किसी अखबार में कुछ छपा है और किसी में कुछ और । कोई अखबार वृश्चिक राशि के लिए यह सप्ताह शुभ तथा मंगलकारी बताता है तो कोई अखबार अशुभ और खतरों से सतर्क रहने का निर्णय देता है । हालांकि ये भविष्यवाणियाँ कभी सच सिद्ध नहीं होतीं फिर भी लोग प्रति सप्ताह या प्रतिदिन इन भविष्यफलों के पृष्ठ बड़ी बेताबी से उलटते तथा पढ़ते हैं । यह कहाँ तक सच सिद्ध हो सकता है कि संसार में केवल १२ प्रकार की घटनाएँ या परिस्थितियाँ ही होती हैं, जिनमें मेष, वृषभ आदि राशियों के लोग को जीना पड़ता है । जबकि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी निजी परिस्थितियाँ और घटनाएँ अलग-अलग होती हैं।

इस साधारण-सी बात पर भी कोई ध्यान न देते हुए अपना भविष्य जानने के लिए सड़कों पर बैठकर दस या पच्चीस पैसे में भाग्य देखने वाले लोगों से लेकर एयरकण्डीशन होटलों में ठहरने वाले ज्योतिषियों तक के चक्कर काटते रहते हैं । सच तो यह है कि ज्योतिष आज विशुद्ध व्यवसाय बन गया है और इस व्यवसाय में लगे लोग अपने फन में ऐसे माहिर होते हैं कि आस-पास जैसे ही ग्राहक मण्डराता दिखाई दे वे तुरन्त उसे फाँस लेते हैं । लोग भी इतने आँख से अन्धे होते हैं कि छोटे-छोटे कार्यों से लेकर बड़े अभियानों तक के मुहूर्त ढुँढ़वाने के लिए ज्योतिषियों के आस-पास चक्कर काटते रहते हैं । शादी का मुहूर्त निकलवाना हो या बच्चे को स्कूल में भर्ती करवाना हो, नया घर बनवाना हो अथवा किसी यात्रा पर निकलना हो—बिना ज्योतिषी से पूछे कोई काम करवाने की हिम्मत नहीं पड़ती ।

साधारण पढ़े-लिखे या अशिक्षित लोग इस तरह की रीति-नीति अपनाते हों, ऐसी बात भी नहीं है । शिक्षित और प्रबुद्ध आधुनिकतावादियों में भी ऐसी अन्धविश्वासी व्यक्तियों की कमी नहीं है । फिर भी प्राय: साधारण मध्य वर्ग के लोगों को ज्योतिषियों के चक्कर में फँसते अधिक देखा जाता है । इसका कारण है कि गरीब आदमी कम से कम मध्यम वर्ग की-सी सुविधाओं वाला जीवन जीने की आशा करता है और मध्यम वर्ग का व्यक्ति धनवान व्यक्ति की तरह जीना चाहता है । गरीब व्यक्ति तो फिर भी किसी तरह सन्तोष कर रह सकता है, पर मध्यमवर्ग में धनवान बनने की उत्कण्ठा इस कदर व्याप्त रहती है कि वह बिना परिश्रम और पुरुषार्थ किए ही धनवान बनने की आकांक्षा करने लगता है और इसी आकांक्षा की सम्भावना को जानने के लिए ज्योतिषियों के चक्कर में फँसता जाता है ।

जिस प्रकार सभी क्षेत्रों में नये प्रयोग हो रहे हैं और नई पद्धतियाँ चल पड़ीं उसी प्रकार ही ज्योतिष के क्षेत्र में भी अंक विज्ञान की नई धारा लोकप्रिय होने लगी है । अंक विज्ञानी प्रत्येक अंक की अलग-अलग संख्या निर्धारित रखता है जैसे क की १ तो ख की २ । अब प्रश्नकर्त्ता के नाम से या प्रश्न के अक्षरों से हिसाब लगाकर उसका मूल्य निकालता है फिर उसके अनुसार भविष्यवाणी करता है । कहना नहीं होगा कि अंकों की विशेषताएँ पहले से ही निर्धारित रहती हैं और उन्हीं के अनुसार भविष्य बताया जाता है ।

अंकों की निर्धारित विशेषताओं का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं होता । वे केवल कल्पना द्वारा ही निर्धारित किए जाते हैं । अत: उनकी प्रामाणिकता और सत्यता का कोई आधार नहीं बताया जा सकता है । नई पद्धतियों की तरह

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भविष्यवाणियों का यह नया ढंग भी आजकल आधुनिक लोगों में काफी लोकप्रिय हो रहा है ।

फलित ज्योतिष के पक्षपातियों का कहना है कि यह एक विशुद्ध विज्ञान है और पश्चिम में भी बड़ा लोकप्रिय है । वस्तुत: यह तर्क फलित ज्योतिष की प्रामाणिकता को सिद्ध नहीं करता, वरन् हमारी मानसिक दासता का ही परिचय देता है । बहुत से विषयों में हम पश्चिमी धारणाओं का हवाला देकर यह बताने की कोशिश करते हैं कि हम गलत नहीं हैं । हम गलत हैं या नहीं है यह इससे भले ही सिद्ध नहीं होता है, पर यह अवश्य सिद्ध हो जाता है कि हम तीस साल बीत जाने के बाद भी मानसिक दृष्टि से पश्चिम के ही अनुयायी हैं ।

निस्सन्देह पश्चिम ने विज्ञान के क्षेत्र में आशातीत प्रगति की है, पर इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वहाँ जो कुछ भी प्रचलित है वह सब सत्य है । विज्ञान के क्षेत्र में पश्चिम के लोग आगे हैं, पर अन्ध-विश्वास के क्षेत्र में भी वे हमसे पीछे नहीं हैं, बहुत आगे हैं । वहाँ ऐसे-ऐसे अन्ध-विश्वास प्रचलित हैं कि जिनकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते । जैसे कहा जाता है कि पश्चिमी देशों में अधिकांश लोग तेरह का अंक अशुभ मानते हैं । वहाँ के कई होटलों में इस नम्बर का कमरा नहीं रखा जाता । ग्यारह, बारह के बाद सीधे चौदह की संख्या आ जाती है तो फलित ज्योतिष को लेकर भी वहाँ इसी तरह के अन्ध-विश्वास चलते हैं तो इसमें क्या आश्चर्य । यह जरूर आश्चर्य की बात है कि हम लोग उनके संदर्भ देकर अपने को सही प्रमाणित करने की चेष्टा करते हैं ।

ज्योतिष विद्या के अन्तर्गत प्राय: अज्ञात अंकों और कल्पित शक्तियों का आधार लेकर निष्कर्ष निकाले जाते हैं । एक आकृति विज्ञान और हस्तरेखा विद्या ही ऐसी पद्धतियाँ हैं जो शरीर को आधार बना कर चलती हैं । हस्तरेखाओं को विधाता की लिपि समझा जाता है और एक मर्मज्ञ कहा जाने वाला हस्तरेखा शास्त्री जो कह देता है उसे अटल सत्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है । सब लोगों की रेखाएँ भी भिन्न-भिन्न होती है । इसलिए उनके अलग-अलग परिणामों के भी निष्कर्ष निकाले जाते हैं तो कहा जा सकता है कि भविष्य ज्ञान के लिए हस्तरेखाएँ तो प्रामाणिक आधार है ।

यहाँ हस्तरेखा के सम्बन्ध में कुछ बातें जान लेनी चाहिए । हस्तरेखाएँ सभी व्यक्तियों की अलग-अलग होती हैं और किसी की एक दूसरे से नहीं मिलती यह तो ठीक है, परन्तु यह कोई भविष्यज्ञान का स्रोत नहीं है । मनोवैज्ञानिकों के अनुसार हस्तरेखाएँ मनुष्य के मनोभावों और प्रवृत्तियों का संकेत देती हैं, न कि उसके भविष्य का । तीव्र संकल्प शक्ति द्वारा उन्हें कभी भी बदला जा सकता है और वैसे भी सात वर्ष में हस्तरेखाएँ अपने आप बदल जाती हैं, क्योंकि तब व्यक्ति की रुचियाँ और प्रवृत्तियाँ काफी कुछ बदल जाती हैं, तो हस्तरेखाओं के आधार पर भविष्य का सुनिश्चित ज्ञान कैसे सम्भव हो ? सच्चाई तो यह है कि व्यक्ति का अपने जीवन के भविष्य में झाँकना कठिन ही नहीं असम्भव है ।

हमें अनुगृहीत होकर भाग्य के जानने के लिए इधर-उधर भटकने की अपेक्षा परिश्रम और पुरुषार्थ द्वारा अपने भाग्य का निर्माण करने में लगना चाहिए । भाग्य को जानना असम्भव है, पर उसका निर्माण किया जा सकता है । यह चेतना जब प्रत्येक व्यक्ति में जागेगी तो समाज में कर्मठता, पुरुषार्थ और लगन की भावना पैदा होगी ।

भाग्यवादी बनें या पुरुषार्थी

काफी समय से अपने देश में फलित ज्योतिष, कुण्डली, ग्रह-नक्षत्रों के आधार पर मनुष्य के भाग्य निर्धारण की परम्परा चलती रही है । भाग्यवाद की धारणा ने भारतीय समाज का जितना अहित किया है, उतना सभी सामाजिक कुरीतियों ने मिलकर भी नहीं किया । कुरीतियों ने तो आम जनता की समृद्धि ही छीनी, पर भाग्यवाद ने उसे अकर्मण्य, आलसी और कायर ही बना डाला ।

इन दिनों भाग्यवाद को पोषण देने के लिए हस्तरेखा अंक-ज्योतिष जैसी विधाएँ भी जो पश्चिम में विकसित हुई हैं, चल पड़ी हैं । लोग कुछ अंकों को जोड़ बाकी और गुणा भाग कर अपनी सफलता या असफलता का पूर्वज्ञान करना चाहते हैं, जबकि प्रयत्न करने से पहले सफलता या असफलता का ज्ञान होना असम्भव ही है । विश्व प्रयत्न और पुरुषार्थ प्रधान है न कि भाग्य प्रधान है । भाग्य की न तो कोई सत्ता है और न कोई वास्तविकता । दुर्भाग्य या बुरी किस्मत उन्हीं के लिये है जो प्रयत्न-पुरुषार्थ को छोड़कर उसमें विश्वास करते है ।

किन्हीं सितारों, शरीर पर बनने वाले चिह्नों या अन्य बातों को जो अपने भवितव्य का निर्णायक मानेगा, यह कहना नितान्त भ्रामक है कि वह सुखी रहेगा । भाग्य या फलित ज्योतिष की आधारभूत मान्यता यह है कि व्यक्ति भविष्य में आने वाली प्रतिकूल परिस्थितियों को जान ले और समय रहते उनसे बचने का प्रयत्न करे । मनुष्य अब तक तो भविष्य के गर्भ में झाँक नहीं सका है और किन्हीं अंशों में वह भविष्य को जानने में सफल भी हुआ हो तो आम जनता पर उसका विपरीत प्रभाव ही हुआ है । वह बजाय आने वाली प्रतिकूलताओं को झुठलाने की चेष्टा करने के, जो कुछ करता है वह भी छोड़ बैठता है और स्वयं को अभागा मान लेता है ।

अभागा वह नहीं है जिसका आने वाला कल संघर्षपूर्ण है, वरन् अभागा वह है जो भावी संघर्षों का यत्किंचित पूर्वाभास पाकर या कि यों ही दुर्भाग्य की कल्पनाएँ करता हुआ स्वयं को दीन-हीन बना लेता है । अपने प्रति रखे गये विश्वास के अनुसार ही मनुष्य का जीवन घटित होता है । तत्वदर्शन का यह सुनिश्चित सिद्धान्त है कि मनुष्य अपना जितना मूल्यांकन करता है उससे राई-रत्ती भी अधिक नहीं प्राप्त कर सकता । व्यक्ति स्वयं ही अपने लिए जिस मूल्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का दावा करेगा, न केवल समाज बल्कि अदृश्य शक्तियाँ भी उसके साथ वैसा ही व्यवहार करेंगी इस प्रकार स्वयं को अभागा या हेय हीन समझने वाला व्यक्ति कभी प्रगति नहीं कर सकता ।

उसका एक मनोवैज्ञानिक कारण भी है । हीनता का भाव आदमी के मनोबल को तोड़ता है । फिर उसके प्रयत्न या तो दुर्बल हो जाते हैं अथवा समाप्त । उसका पुरुषार्थ टूट जाता है, संघर्ष क्षमता शिथिल हो जाती है और मनोबल भी गिर जाता है, जबकि संघर्ष पुरुषार्थ और मनोबल के आधार पर ही व्यक्ति सफल या असफल होता है ।

भाग्य निर्धारण में जिन भारतीय और पश्चिमी विधाओं की सर्वाधिक चर्चा की जाती है उनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं—कुण्डली दर्पण, राशिफल, हस्तरेखा, अंक-ज्योतिष, सामुद्रिक-ज्ञान और ग्रह दशा । मुख्यत: भविष्य ज्ञान के लिए इन्हीं जाल-जंजालों के चतुर्दिक चक्कर काटा जाता है ।

इनमें से सर्वप्रथम कुण्डली को लें । जन्म के समय पर ज्योतिष विज्ञान के कुछ नक्षत्रों की कल्पित गतियों और प्रभावों के आधार पर इसकी रचना की जाती है और फलित ज्योतिष की कुछ मान्यताओं के आधार पर इनका निष्कर्ष निकाला जाता है । कुण्डली का आधार ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति ही है । यहाँ इस संदर्भ में यह जान लेना चाहिए कि कई ग्रह-नक्षत्रों का तो प्रकाश भी धरती पर नहीं पहुँचता । मंगल जो पृथ्वी के सर्वाधिक निकट ग्रह है की ही पृथ्वी से दूरी ४० करोड़ मील है और अब तक सबसे ज्यादा तेज गति से उड़ने वाले अन्तरिक्ष यान को भी वहाँ तक पहुँचने में लगभग एक वर्ष का समय लगा । यह निर्जीव ग्रह इतना दूर स्थित है कि पृथ्वी पर यह भी पता नहीं चल पाता कि वहाँ क्या हो रहा है तो पृथ्वी पर बसने वाले तीन अरब मनुष्यों में प्रत्येक पर वह क्या असर डालेगा और कोई असर हो तो भी इतना क्षीण होगा कि सर्वशक्तिमान परमात्मा के अंश मनुष्य का उससे प्रभावित होना असम्भव ही लगता है ।

राशि का निर्धारण नाम के आधार पर भी किया जाता है और जन्मदिन के आधार पर भी । इस प्रकार एक ही व्यक्ति जिस का जन्म नाम अलग हो और प्रयुक्त होने वाला नाम अलग तो उसकी दो भिन्न राशियाँ हो गईं । अब राशि विज्ञान के हिसाब से उस पर दो अलग-अलग प्रभाव होंगे ।

यदि किसी एक राशि को ही सही मान लिया जाय तो राशियों की संख्या होती है बारह, जबकि दुनिया में तीन अरब व्यक्ति हैं यानी कि एक राशि के औसतन पच्चीस करोड़ । उन पच्चीस करोड़ एक ही नामकरण या राशि वाले व्यक्तियों में से कई तो करोड़पति और अरबपति होंगे तथा कइयों को फाकाकशी में दिन गुजारना पड़ता है । एक इन्दरलाल नाम का व्यक्ति जन्म लेता है तो दूसरा इसी अक्षर से आरम्भ होने वाले नाम की राशि का मर रहा है । कोई जमशेद जी टाटा अकूत सम्पत्ति का स्वामी है तो कोई जगमोहन दास शाम के लिए खाने की चिन्ता में ही घुला जा रहा है । इस प्रकार राशिफल की अवास्तविकता यहीं स्पष्ट हो जाती है और वैसे भी पच्चीस करोड़ व्यक्तियों के साथ एक ही घटना घटित होना असम्भव है ।

राशिफल के बाद हस्तरेखाओं द्वारा भविष्य जानने की सर्वाधिक चेष्टा की जाती है । हाथ की रेखाएँ निश्चित ही प्रत्येक व्यक्ति की अलग-अलग हैं, पर उनके आधार पर भी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती । क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की रेखायें एक निश्चित अवधि में बदलती रहती हैं । इस कारण एक रेखा की स्थिति के आधार पर किया गया भविष्य का विश्लेषण कुछ ही समय बाद अलग अर्थ धारण कर लेता है । अब्बल तो भविष्य के संदर्भ में हस्तरेखाओं की कोई अर्थवत्ता ही नहीं है । आधुनिक मनोविज्ञान इस संदर्भ में जिस तह तक पहुँच सका है वह केवल व्यक्तित्व की पहचान तक ही सीमित है न कि भविष्य के ज्ञान का कोई आधार सिद्ध हुआ है । सामुद्रिक ज्ञान अर्थात् शरीर के चिह्नों के संदर्भ में भी यही तथ्य है ।

अंक ज्योतिष के आधार पर भी भविष्य का विश्लेषण सम्भव नहीं है । इस विद्या की आधारभूत मान्यता यह है कि प्रत्येक अंक का अपना विशिष्ट गुण है । जन्मदिन या नाम के आधार पर व्यक्ति का भाग्यांक निकाला जाता है और फिर उन गुणों के आधार पर उसका भविष्यफल तैयार किया जाता है । विचारशील व्यक्ति इसके स्वरूप को देखकर ही यह निष्कर्ष निकाल लेते हैं कि इसकी वास्तविकता क्या है ।

भविष्य को जानने के जितने प्रयत्न होते हैं इन सबमें प्राय: अटकलबाजियाँ ही लगाई जाती हैं अन्यथा यदि कोई व्यक्ति अपना भाग्य पढ़ सका होता तो वह आने वाली कठिनाइयों और संघर्षों से इतना विकल हो जाता कि सुखद वर्तमान का आनन्द भी मिट्टी में मिल जाता । यह बात अलग है कि पुरुषार्थ एवं परिश्रम से जी चुराने वाले व्यक्ति ही भाग्य की दुहाई दिया करते हैं । वर्तमान विचारधारा इस भाग्यवाद को भी शोषण-चक्र का ही एक रूप मानती है । किसी कवि ने कहा भी है—

एक मनुज संचित करता है अर्थ बाहु के बल से ।
उसे छिनता दूसरा भाग्यवाद के छल से ।।

ठग और शोषणकर्त्ताओं के लिए भाग्यवाद एक चालाकी का ही काम देता है और दूसरे लोग परिश्रम पुरुषार्थ द्वारा अपने लिए कुछ अर्जित करते हैं और उस चक्र में फँसकर अपनी सुख-सुविधाएँ गँवा बैठते हैं वे भाग्य में ही नहीं था, मानकर संतुष्ट हो बैठ जाते हैं ।

कोई यदि अपने भाग्य को पढ़ भी ले और आने वाले दु:ख-कष्टों को जान भी ले तो उसे और ज्यादा पुरुषार्थी तथा श्रमशील होना चाहिए क्योंकि यह स्पष्ट हो चुका होता है कि उसके भाग्य में सुख-सौभाग्य नहीं लिखा है । इसलिए उसे लाने का प्रयत्न करना ही पड़ेगा । विपत्तियाँ सामने पाकर उससे बचने का प्रयत्न न करना सबसे बड़ी मूर्खता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामने गड्ढा देखकर भी उससे स्वयं को बचाने की कोशिश नहीं करना उलटे दिमाग की निशानी नहीं तो क्या है ?

किस्मत जैसी चीज का यदि वास्तव में कोई अस्तित्व भी है तो भगवान् ने प्रतिकूलताओं को अनुकूलता में बदल डालने की शक्ति-सामर्थ्य भी मनुष्य में दी है । शरीर बल, मनोबल, आत्मबल, पुरुषार्थ, परिश्रम, शक्ति-सामर्थ्य आदि कितने ही उपहार परमात्मा ने अपने प्रिय पुत्र को दे रखे हैं जिनके द्वारा वह दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदल सकता है । इतना होने पर भी कोई व्यक्ति हाथ पर हाथ धरे बैठा रहे तो और कौन उसकी मदद करेगा ।

देखा जाय तो भाग्यवादी व्यक्ति सही मायने में मानसिक दृष्टि से रुग्ण है । विक्षिप्त और मनःरोगी जिस प्रकार सदा सभी परिस्थितियों में अपने दिमाग में घुसी हुई बात को ही दोहराया करते हैं उसी प्रकार भाग्यवादी भी सभी मौकों पर अपने दुर्भाग्य का रोना ही रोया करते हैं । जिसके मस्तिष्क में यह विचार घर कर बैठा है कि जो भाग्य में बदा है वही होगा उसके भाग्य में निश्चित ही दुःख-दारिद्रय लिखा हुआ है और उसके सम्बन्ध में निश्चिन्ततापूर्वक यह भविष्यवाणी की जा सकती है ।

यद्यपि संसार में ऐसे हजारों व्यक्ति हैं जिनकी परिस्थितियाँ देखकर भाग्यवादी भविष्यवक्ता यही कहते रहे कि इनका भाग्य खोटा है । वस्तुतः उनके आसपास की परिस्थितियाँ भी बड़ी बुरी रहीं, जिनमें वे जन्मे, पले और बड़े हुए, पर आगे चलकर उन्होंने अपने प्रयत्नों तथा पुरुषार्थ के बल पर ऐसे चमत्कारी परिणाम उपस्थित किए कि लोग देखते ही रह गये । इतिहास ने भी उनकी सफलताओं का अभिलेख सुनहरे अक्षरों में लिखा, पर खेद है कि तो भी भाग्यवादी पुरुषार्थ और प्रयत्नों पर भरोसा न कर सके और किन्हीं दूर बैठे ग्रह-नक्षत्रों की कृपादृष्टि ही मानते रहे । ऐसे व्यक्तियों को मानसिक दृष्टि से रुग्ण नहीं तो और क्या कहा जाना चाहिये ?

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में उन्नति करने और आगे बढ़ने के अनेकों अवसर आते हैं । भाग्यवाद को स्वीकार करने का अर्थ है उन अवसरों से लाभ उठाने के लिए इन्कार करना । कड़ी भूख लगने पर सामने रखे हुए भोजन को न खाने की विवशता व्यक्ति का हतभाग्य ही है । भाग्यवादी तो उनसे भी ज्यादा अभागा है, क्योंकि उसके सामने ऐसी कोई विवशता नहीं होती पर वह भाग्यवाद के कुल्हाड़े से अपने हाथों को घायल कर स्वयं ही मजबूरियाँ पैदा कर लेता है । भाग्य के भरोसे बैठे रहने वाला व्यक्ति यही आशा करता है कि यदि किस्मत में इन अवसरों का लाभ बदा होगा तो वह अपने आप ही मिल जायेगा ।

यह निर्णय करना अपने हाथ में है कि हम भाग्यवादी बनें या पुरुषार्थी । निर्णय भी नहीं चयन ही कहना चाहिए । भाग्यवाद और पुरुषार्थ में से हम जिसे चुन लेंगे और अपनायेंगे उसी आधार पर अपने भविष्य के भवन को खड़ा कर सकेंगे । भाग्य की सच्चाई को जानते हुए विवेकशील व्यक्ति निश्चित ही पुरुषार्थी बनने की चेष्टा करेगा और उसी आधार पर अपना भाग्य खुद अपने ही हाथ से लिखेगा ।

भाग्यवाद को तिलांजलि देने के साथ-साथ भाग्यवादियों की संगति को भी तिलांजलि देना चाहिए । भाग्यवादी असफलता का कारण अपना उदाहरण देते हुये खुद की कमजोरियों को तो नहीं बताते, वरन् सारा दोष भाग्य के माथे ही मढ़ते हैं । आलसी और अकर्मण्य होते हुए भी कोई व्यक्ति स्वयं को परिश्रमी और पुरुषार्थी बनाना ही पसन्द करेगा । पर साथ ही यदि वह भाग्य को दोष भी देता जाय तो मानना चाहिए कि इसका साथ हमें भाग्यवादी बना सकता है । अतः उसकी बातों पर बिना ध्यान दिए अपने सामने आने वाले सुअवसरों से लाभ ही उठाना चाहिए ।

अन्त में यह भी विचार कर लेना चाहिए कि यदि भाग्य ही सब कुछ होता तो इस संसार में प्रयत्न और पुरुषार्थ की व्यवस्था होती ही नहीं । परमात्मा को यदि मनुष्य के परिश्रम की व्यवस्था नहीं करनी थी तो वह उसकी न तो आवश्यकताएँ बढ़ाता और न उसके लिए जरूरतें ही पैदा करता । न केवल व्यक्तिगत रूप से वरन् पूरे मानव समाज के लिये भी पुरुषार्थ ही एकमात्र प्रगति का कारण है । अब तक मानव समाज ने जितनी प्रगति की है उसके मूल में एक ही विशेषता है, पुरुषार्थ केवल पुरुषार्थ ।

भाग्यवाद और ग्रहगोचर

कर्म और उनका प्रतिफल यह अन्योन्याश्रित है । दिन भर परिश्रम करने पर शाम को मजूरी मिल जाती है । पूँजी जमा करने पर बैंकें ब्याज देने लगती हैं । व्यवसायी दुकान चलाते और अपना गुजारा निकालते हैं । किसान बीज बोता है और उत्साहवर्द्धक फसल काटता है । अध्ययनशील विद्वान बनते हैं । अखाड़े में नियमित रूप से जाने वाले पहलवान बनते हैं । कलाकार भी उसी प्रकार अभ्यास करते और अपने-अपने विषय में प्रवीण-पारंगत बनते हैं । कर्म का फल स्पष्ट है । अभक्ष्य खा लेने पर पेट में दर्द उठ खड़ा होता है । आत्महत्या करने वाले मृत्यु के मुख में चले जाते हैं, किन्तु संयमी और सुव्यवस्थित जीवन पद्धति अपनाने वाले पुष्ट, निरोग और दीर्घजीवी बनते हैं । मृदुल, नम्र और सज्जनोचित स्वभाव वालों के अनेक मित्र, सहयोगी देखे जाते हैं, जबकि क्रोधी, कर्कश और दुर्गुणी अनेकों को अपना निन्दक विरोधी बना लेते हैं । यह सब अपने ही कर्तृत्व का प्रतिफल है । कर्म का फल मिलने में देर हो सकती है, पर उस प्रतिफल में अंधेर नहीं है ।

आज का कर्म कल का भाग्य बन जाता है । आज का दूध कल दही बन जाता है । उसका नाम, रूप बदल जाता है, पर ऐसा नहीं होता कि बिना दूध के दही जमने लगे । भले बुरे कर्म ही हमारे लिए सुखद और दुःखद प्रतिफल लेकर उपस्थित होते हैं । हमें कर्म फल की सुनिश्चितता स्वीकार करनी ही चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कभी-कभी तत्काल प्रतिफल नहीं मिलता । विलम्ब हो जाता है । इतने भर से आतुर लोग धैर्य खो बैठते हैं और यह संदेह करने लगते हैं कि जो किया है उसका फल मिलेगा भी या नहीं । इस प्रकार का अविश्वास ही दार्शनिक नास्तिकता है । ईश्वर को मानने और उसकी उपासना करने का फलितार्थ अन्तःकरण में यह विश्वास जमाना है कि ईश्वर सर्वव्यापी, सर्वदर्शी और न्यायशील है । उसकी दृष्टि में कोई कर्म छिपे नहीं रहते वह समयानुसार सभी को उसके कर्मों का फल इस या उस रूप में देता है । वे परिणाम भौतिक लाभ-हानि के रूप में भी हो सकते हैं और आत्मिक प्रगति प्रसन्नता के रूप में भी । दुष्कर्मों की परिणति विपन्नताओं के रूप में ही होती है चाहे उसमें विलम्ब ही क्यों न लगे ।

किसान बीज बोता है उसके फसल बनकर काटने में कई महीने लग जाते हैं । माली बगीचे में पेड़ लगाता है । उनके भी प्रौढ़-परिपक्व बनने में वर्षों लग जाते हैं । बरगद, पीपल जैसे वृक्ष तो प्रौढ़ होने में लम्बी अवधि लगा लेते हैं । फिर भी कोई किसान, कोई माली न तो अधीर होता है और न विश्वास खोता है । देरी लगने के कारण कोई ऐसा नहीं करता कि काम को छोड़ बैठे और निराशा अपना ले ।

इस सुनिश्चित सिद्धान्त की सर्वथा उपेक्षा करके कुछ नासमझ लोग भाग्यवाद का एक अजीब सिद्धान्त अपनाते हैं । वे मानने लगते हैं कि भाग्य लिखने वाला विधाता कोई और है । जो किसी के मस्तक में कुछ किसी के कुछ अपनी मनमर्जी के अनुसार लिखता रहता है । इस मान्यता के कारण कर्मफल की संगति टूट जाती है । विधाता जब अपनी मर्जी से ही सब कुछ लिखता है तो उसमें कर्मफलों की जाँच-पड़ताल की क्या आवश्यकता पड़नी चाहिए ?

यदि यह भाग्यवादी मान्यता सही हो तो विधाता को ही सारा श्रेय या दोष मिलना चाहिए । कौन क्या करेगा ? क्या फल भोगेगा ? यह निर्धारण यदि विधाता के ही हाथ हो तो किसी को श्रेय, सुख और किसी को दुःख, अपयश देने के लिए विधाता ही उत्तरदायी हुआ । मनुष्य तो कठपुतली मात्र रह गया । कठपुतली के नाच का मूल कारण बाजीगर को ही माना जाता है और श्रेय या पुरस्कार उसी को दिया जाता है । कठपुतली तो निमित्त मात्र है । वह दीखती भर है । उसका कर्त्ता ही लाभ उठाता है । बन्दूक, तलवार आदि से हत्या की जाती है, पर उस कृत्य का दण्ड चलाने वाले मनुष्य को ही मिलता है । बन्दूक तो निर्जीव है निमित्त मात्र है उसे फाँसी कहाँ लगती है । यदि विधाता ही सब कुछ रच देता है तो उस आधार पर बन पड़े कृत्यों की जिम्मेदारी भी उस पर आती है जिसने यह सब निर्धारण किया है । ऐसी दशा में किसी मनुष्य को पापी या पुण्यात्मा नहीं ठहराया जा सकता । उसने भाग्य विधान से विवश होकर ही कुछ किया है । इस प्रकार उस निमित्त मात्र पर न कोई दोषारोपण हो सकता है और न उसे कुछ श्रेय मिल सकता है तब किसी की निंदा, प्रशंसा होने का कुछ औचित्य ही नहीं रह जाता फिर उसे दण्ड पुरस्कार तो मिलना ही क्यों चाहिए ?

विधाता भाग्य की रचना करता है । इस मान्यता के पीछे कोई तुक नहीं है । अधिक से अधिक यह माना जाता है कि पिछले कर्मों के प्रतिफल की व्याख्या कोई अदृश्य शक्ति अपने नियमानुसार बनाती है । यदि ऐसा है तो मनुष्य को ही अपने भाग्य का निर्माता माना जाना चाहिए । यह दूसरी बात है कि कुछ पौधे जल्दी उग जाते हैं और कुछ को उनकी प्रकृति के अनुसार थोड़ा विलम्ब लग जाता है । इतने पर भी कर्त्ता ही प्रधान हुआ । उसी की कृतियाँ समयानुसार फली-फूलीं । इसलिए विधाता को आड़े डालकर अपनी कृतियों को गौण बनाने उपेक्षित करने की चेष्टा नहीं ही की जानी चाहिये ।

ग्रह-नक्षत्रों द्वारा किसी को सुख-दुःख दिये जाने की मान्यता तो और भी अधिक बेतुकी है । सौरमण्डल के सभी ग्रह उपग्रह पृथ्वी से बहुत दूर हैं । फिर वे पदार्थ पिण्ड मात्र हैं । उनमें न तो जीवन पाया गया है और न वे स्वयं जीवित हैं । जड़ वस्तुओं की तरह अपना अस्तित्व भर बनाये हुए हैं । प्रकृति क्रम के अनुसार सभी आकाशस्थ पिण्डों की तरह वे भी अपनी कक्षाओं और धुरियों पर परिभ्रमण करते हैं, यह उनकी अपनी विधि-व्यवस्था है । इसी के अनुरूप वे अपनी गतिविधियाँ अपनाये रहते हैं । उनका प्रकाश और हल्का-सा प्रभाव भर धरती पर आता है । ऐसी दशा में यह कैसे सम्भव हो सकता है कि वे धरती के निवासी ५०० करोड़ मनुष्यों में से हर एक को ढूँढें, पहचानें और उन्हें चुन-चुन कर भले या बुरे परिणाम प्रस्तुत करें । इतनी खोज कर सकना तो किसी धरती निवासी अत्यन्त बुद्धिमान मनुष्य के लिए भी सम्भव नहीं हो सकता । फिर यह कैसे सम्भव है कि आकाशस्थ ग्रह व्यक्तियों को ढूँढें । उस पर इतने दिन की ऐसा फल देने वाली दशा चढ़ाएँ । उन्हें त्रास या उपहार प्रदान करें ।

हर क्षण लाखों बच्चे उत्पन्न होते हैं । उन सब की कुण्डलियाँ भी एक-सी होनी चाहिए । ऐसी दशा में एक समय में जन्मे सभी बालकों का भाग्य एवं भविष्य एक जैसा होना चाहिए । पर ऐसा होता कहाँ है ? जनजातियों में जन्मे और समृद्ध परिवारों में जन्मे अपने-अपने ढंग का जीवन-यापन करते देखे जाते हैं । ऐसी दशा में उस मान्यता का क्या तुक बैठा जिसके अनुसार जन्मकाल के अनुसार एक समय में जन्मे एक-सी कुण्डली वाले बच्चों का भाग्य एवं जीवन का स्वरूप भिन्न-भिन्न प्रकार का दीख पड़ता है ।

फिर यह और भी विचित्र बात है कि जिस ग्रह की भेंट-पूजा कर दी जाय वह अपना अशुभ फल छोड़कर उलटी अनुकम्पा दिखाने लगे । यह तो मनुष्यों के भ्रष्ट समुदाय में पाया जाने वाला रिश्वतखोरी, चापलूसी जैसा प्रचलन हुआ । सही तरीके छोड़कर गलत काम करा लेने के लिए उसी समुदाय में यह हथकंडे चलते हैं । यदि देवता भी उसी हथकंडे को अपनाने लगें तो उनके देवत्व पर विश्वास कौन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करेगा ? फिर उन्हें हेयजनों जैसी रीति-नीति अपनाने वाला क्यों न कहा जाय ? जो सम्पन्न लोग भेंट-पूजा का खर्च उठा सकते हैं वे तो उस लाभ को उठा लेंगे । जो दरिद्र या असमर्थ हैं, वे वैसा न कर पाने की दशा में उनके कोपभाजन ही बने रहेंगे । ऐसी दशा में देवताओं को न्याय का समर्थक न कहकर भ्रष्टाचारियों की पार्टी में ही बिठाया जाने लगेगा । यह उनके लिये और भी लज्जा की बात है । जो इस बहाने पूजा-पत्री की राशि हड़पते हैं और कलंक लांछन का भागी उन देवताओं को बनाते हैं जिनकी सत्ता और समर्थता का बखान करते वे नहीं अघाते । आखिर उन्हें न्याय-निष्ठ भी तो होना चाहिए, अपने निश्चय में दृढ़ता भी तो बनाये रखना चाहिए । भेंट-पूजा का प्रलोभन सामने आते ही अपनी विधि-व्यवस्था बदलने लगे तो उनकी महानता पर विश्वास कौन करेगा ?

वस्तुत: वैसा है कुछ नहीं । ग्रह-नक्षत्र या देवता अपने कार्य में व्यस्त हैं । उन्हें इतनी फुरसत कहाँ जो करोड़ों लोगों में से चुन-चुनकर कुछ को त्रास दें और किसी पर उपहारों की वर्षा करें । कभी उन्हें कोई सजीव मानते रहे होंगे उसके ऊपर और ऐसी ही उलट-पुलट करते रहने का आरोपण थोपते रहे होंगे, पर आज तो विज्ञान का युग है । सौर-मण्डल के सभी ग्रह-उपग्रहों की स्थिति को जान लिया गया है और अब यह सम्भव नहीं रहा कि उन पर व्यक्ति विशेष को चुन-चुनकर उलटा-सीधा प्रभाव डालने की बात कही जा सके । उन्हें भाग्य या भविष्य का निर्माता ठहराया जा सके ।

ग्रहों का प्रभाव यदि पड़ता होगा, तो उससे धरती का कोई बड़ा भाग प्रभावित होता होगा । उतने क्षेत्र में रहने वाले समान रूप से प्रभावित होते होंगे । व्यक्ति विशेष से उनका कोई राग-द्वेष हो सकता है ऐसी कल्पना करने या मान्यता बनाने के पीछे कोई आधार दिखाई नहीं पड़ता ।

कभी-कभी किसी लड़की या लड़के को मंगली ठहरा दिया जाता है । मंगली का अर्थ है जन्म-कुण्डली के किसी विशेष कोष्ठक में मंगल का अंकन होना । ऐसे बच्चों के सम्बन्ध में समझा जाता है कि यह वैधव्य या विधुरदायी है । लड़की मंगली होगी तो उसे विधवा बनना पड़ेगा, लड़का होगा तो उसे विधुर होने का त्रास सहना पड़ेगा । इसीलिए यह उपाय सोचा गया है कि मंगली लड़के-लड़की का ही आपस में विवाह किया जाय ।

मंगल का अर्थ होता है कल्याण । वह जहाँ भी रहेगा, बैठेगा वहीं कल्याण करेगा, पर यह कैसा मंगल जो अपने निवास स्थान का ही सफाया करे । लड़की की कुण्डली में पति के स्थान पर बैठे तो पति का सफाया करे । लड़के की कुण्डली में पत्नी भाव पर विराजे तो वधू का सफाया करे ? इसका क्या कारण हो सकता है यह गहरा विचार करने पर भी कोई वजह मालूम नहीं पड़ती । बिना छेड़े तो साँप भी नहीं काटता फिर मंगल का कोई अपमान, नुकसान करने पर भी वह ऐसा अनर्थ करेगा, यह समझ से बाहर की बात है ।

इस कुचक्र में कई सुयोग्य लड़की-लड़के उपयुक्त जोड़ा मिलने से वंचित हो जाते हैं । मंगली लड़की को न मंगला लड़का मिल पाता है और न मंगले लड़के को मंगली लड़की । इस खोज-बीन में मुद्दतें बीत जाती है और बहुत से विवाह योग्य आयु निकल जाने पर कुँवारे ही रहना पड़ता है । इसमें बेसिर पैर का भ्रम जंजाल ही एक-मात्र कारण है । इतनी दूरी पर विद्यमान मंगल किसी की विवाह शादी में बाधक बनने के लिए किस प्रकार दौड़कर पृथ्वी तक आ सकता है ? इसे कुकल्पना और भ्रान्त धारणा के अतिरिक्त और क्या कहा जाय ?

एक तो दहेज जाति-पाँति आदि कारणों से सुयोग्य जोड़े तलाश करना ऐसे ही कठिन पड़ता है । इस पर भी जन्म कुण्डलियाँ मिलाने का एक और संकट मोल ले लिया जाय तो कठिनाई और भी अधिक बढ़ जायेगी । संसार भर में अनेकों धर्म सम्प्रदाय हैं, कहीं कोई जन्मपत्री न तो बनाता है और न विवाह-शादी के अवसर पर उन्हें मिलाने की आवश्यकता समझी जाती है । मात्र भारत के सवर्ण हिन्दुओं में से एक छोटा-सा तवका है जो कुण्डली मिलाकर लड़के-लड़की की शादी करने की बात पर विश्वास करता है । हिन्दू समाज में भी तीन चौथाई ऐसे हैं जो इसकी तनिक भी आवश्यकता नहीं समझते और पसंदगी के वर-वधू का धड़ल्ले से सम्बन्ध पक्का करते हैं । उनका न कोई अनर्थ होता है और न असमंजस आड़े आता है । बुद्धिमानों की मूर्खता ही ऐसे निरर्थक ताने-बाने बुनती और हैरानी मोल लेती रहती है ।

वर्तमान को सँवारें, दैववाद की उलझनों से बचें

'दैव' एक बहुअर्थधर्मी शब्द है । इसमें सृष्टि की विधि-व्यवस्था, उसके नियम-विधानों का समावेश है । व्यक्ति के खुद के शुभाशुभ कर्मों के संस्कार, समूह के संस्कार तथा इनकी मिश्रित प्रक्रियाएँ, देश-काल की सूक्ष्मताएँ इन सबका प्रभाव इतना व्यापक और अनेक रूपी होता है कि सीमित मानव बुद्धि के लिए उनकी सामान्य जानकारी भी सम्भव नहीं विस्तृत विश्लेषण तो सम्भव हो ही नहीं सकता । इसीलिए दैव को अज्ञेय ही कहा गया है । अज्ञेय वह है जिसे पूरी तरह जाना जा सकना नितान्त असम्भव है । दैवज्ञ का अर्थ होगा अज्ञेयज्ञ । जो स्वयं अपनी काट करने वाला शब्द है । संस्कृत में इसे 'स्वतोव्याहत' कहेंगे । जो स्वयं ही अपने को आहत कर रहा हो । जो दैवज्ञ होने का दावा करते हैं । वे अज्ञेयज्ञ होने का दावा करते हैं, तब वह अज्ञेय कैसे रहा ?

यह सही है कि विश्व-चेतना के गर्भ में विद्यमान सूक्ष्म हलचलों को पकड़कर भविष्य का आभास प्राप्त किया जा सकता है और उसकी ऐसी पूर्व सूचना दी जा सकती है, जो समय होने पर पूरी तरह सही और प्रामाणिक सिद्ध हो,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर यह दैवज्ञ होने का प्रमाण नहीं है । घटना प्रवाह की बारीक समझ और विश्व चेतना से सम्पर्क का परिणाम है । किन्तु घटना प्रवाह के नियामक घटक जड़ न होकर चेतन हैं । अत: उनके भावी स्वरूप के बारे में पूरी तरह निश्चिन्त नहीं रहा जा सकता है । प्रचण्ड चेतन सत्ता में भिन्न-भिन्न घटक अपने सामूहिक पराक्रम से सामान्य प्रवाह को उलट-पुलट सकते हैं । अत: भविष्य की वह जानकारी जो विश्व गर्भ में पल रही घटनाओं को जानकर दी गई थी, गलत सिद्ध हो सकती है । यह तो हुई सूक्ष्मदर्शियों की बात कहने का तात्पर्य सिर्फ इतना ही है कि दैवज्ञ होना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है ।

सामान्य व्यक्ति तो ऐसी सूक्ष्म दृष्टि से भी वंचित रहते हैं । ऐसी स्थिति में उन्हें तो भविष्य के बारे में और भी कुछ मालूम नहीं हो पाता । विडम्बना यह है कि ऐसे ही लोग भाविष्य जानने और बताने के लिये व्याकुल रहते हैं ।

इसका अर्थ यह नहीं है कि भविष्य की योजना न बनाई जाय और विगत का लेखा-जोखा न लिया जाय । ऐसा करना तो बहुत जरूरी है । किन्तु उससे भी अधिक ध्यान देने योग्य दो बातें हैं—(१) योजना और कल्पना का भेद हमेशा याद रखा जाय । (२) भविष्य का स्वरूप अनिश्चित है तथा वर्तमान निश्चित है, यह स्मरण रखा जाय और अनिश्चितता से बहुत अधिक समय उसे दिया जाय, जो निश्चित है, उपलब्ध है ।

योजना व्यवस्थित होती है । कल्पना भी व्यवस्थित हो सकती है, पर वह तब तक कल्पना ही कहलायेगी, जब तक साधनों का विचार न कर लिया जाय और कार्यपद्धति निश्चित कर क्रम निर्धारण न कर लिया जाय । सामान्यत: तो कल्पनाएँ अव्यवस्थित ही होती हैं, पर उन्हें व्यवस्थित कर लेने भर से काम चलने वाला नहीं है । योजना की एक विशेषता यह भी है कि उसमें इच्छाओं की परस्पर पूरकता का ध्यान रखा जाता है । अभी पहलवान बनने की योजना बना ली, दूसरे दिन संगीतकार बनने की योजना तैयार होने लगी और अगले दिन दार्शनिक बनने की योजना सामने आ गई । इसे योजना नहीं काल्पनिक उड़ान ही कहा जायेगा । योजना बनाने पर साधनों, परिस्थितियों का गम्भीर विश्लेषण तथा कार्यपद्धति की व्यापक जानकारी आवश्यक होती है । हम जो कुछ करना चाहते हैं, वैसा ही अब तक जिन लोगों ने किया है, उन्हें कौन-कौन से साधन जुटाने पड़े ? किन-किन परिस्थितियों से कैसे-कैसे मुकाबला करना पड़ा और उन परिस्थितियों से वर्तमान का अन्तर कैसा और कितना है ? यह सब जानना-समझना होता है । इस सबके बाद निष्ठा-लगन की तीव्रता-तत्परता अपेक्षित होती है ।

उन्नति और प्रगति की आकांक्षा छोड़ देने पर मनुष्य जीवन का प्रयोजन ही विलुप्त हो जाता है । संकल्पों-इच्छाओं से रहित व्यक्ति तो जड़ीभूत ही हो जायेगा । उस हेतु प्रयास पराक्रम आवश्यक है, किन्तु उसकी आशा और चिन्ता में उलझे रहना मानसिक शक्ति का अपव्यय है । जो शक्ति-आनन्द, प्रसन्नता और क्रियाशीलता बनाये रखने के लिये सौंपी गयी है, वह काल्पनिक उड़ानों और विभीषिकाओं में ही डूबते-उतराते रहने और इस तरह निष्क्रियता बढ़ाते रहने का आधार बना दी जाय तो इससे बड़ी मूढ़ता और क्या होगी ?

भविष्य का ताना-बाना बुनने का अभ्यास हो जाने पर सम्भावित विफलताओं-विपत्तियों का भास भी मन:क्षेत्र में सजीव होने लगता है, तब चिन्ता रोग मनुष्य को अपनी लपेट में ले लेता है और उसे तहस-नहस करने लगता है । यदि सोचने का क्रम ऐसा हो जाय, तो भयंकर सम्भावनाओं के चित्र सामने आ-आकर रात-दिन भयभीत और परेशान करने लगेंगे । स्पष्टत: इनसे खिन्नता बढ़ती है और पुरुषार्थ क्षमता घटती चली जाती है किसी कार्य को आरम्भ करते ही यदि असफलताएँ ही सामने खड़ी दीखने लगीं तो फिर उत्साह शिथिल हो जाने से कार्य सिद्धि कठिन ही मानी जानी चाहिए ।

भविष्य के प्रति हताश होने या काल्पनिक उड़ानें भरने के स्थान पर एक सुनिश्चित योजना बनाकर उस पर निरन्तर चलते रहना ही सार्थकता-सफलता का मार्ग है । भविष्य की कल्पनाओं में उलझने से पहले वर्तमान परखना-तोलना जरूरी होता है । वर्तमान में अभावों का ही नहीं उपलब्धियों का भी स्मरण चिन्तन करें । यह देव-दुर्लभ मानव उपलब्धि है । उपलब्धियों का स्मरण कर मन को प्रफुल्ल रखें कि प्रगति और उन्नति का उत्साह प्रफुल्ल मन में ही उत्पन्न होता है । भविष्य की मृगतृष्णा के पीछे दौड़ने वालों को सदा दूर के भवन ही लुभाते रहते हैं । उन्हें सदा वही सौन्दर्य और प्रसन्नता दिखाई देती है, जहाँ वह आज नहीं है, पर यह मृगतृष्णा सिर्फ निरर्थक दौड़-धूप और थकान का ही कारण बनती है । ऐसी दौड़ कभी भी समाप्त नहीं होती, क्योंकि उसका कोई लक्ष्य नहीं होता । निश्चित लक्ष्य के लिए की जाने वाली दौड़ वर्तमान का भली-भाँति लेखा-जोखा करने और अपनी उपलब्धियों का स्मरण कर प्रसन्न रहने से ही सम्भव हो पाती है ।

अतएव अच्छा यही है कि भविष्य के ताने-बाने में अपने को अधिक न उलझाया जाय । इस तरह के उलझाव से जहाँ शारीरिक स्तर पर क्रियाशीलता में व्यतिरेक आता है वहीं मानसिक सामर्थ्य यों ही कल्पना की उड़ानें भरने में खपत होती रहती है । आज का भविष्य कल का वर्तमान है । इसके लिए इतना ही काफी है कि जागरूक रहा जाय । कोई ऐसा कार्य न बन पड़े जिनसे इसके सौन्दर्य में कोई कमी आ सके । यदि एकाग्रचित्त हो वर्तमान को सुधारने, सँवारने, सुलझाने में जुट पड़ा जाय तो भविष्य भी सुलझा, सँवरा, सुधरा ही मिलेगा । यदि इसमें कतिपय उलझनें भी रहीं तो भी सुलझाने-सँवारने की जो कला हस्तगत की जा चुकी है, उसका उपयोग करके इसे निखारा जा सकेगा ।

अतएव भविष्य में क्या होने वाला है, इसके बारे में चिन्तित-परेशान न रहें । यदि इसका अता-पता लगाने का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोभ संवरण न हो पाता हो तो वह परिस्थितियों, आधारों एवं लक्ष्यों के आधार पर जानने का प्रयास करना चाहिए । इस प्रकार की सम्भावनाएँ तथ्यपूर्ण सांख्यिकीय आकलन के आधार पर ही की जा सकती है न कि ज्योतिषियों द्वारा की गई ग्रह-गणना के आधार पर । ग्रह गणित अन्तरिक्षीय व्यवस्था पर प्रकाश डालता है । उससे ऋतु परिवर्तन जैसे अनुमान लगाये जा सकते हैं । पृथ्वी के वातावरण पर उसका क्या प्रभाव पहुँचा ? यह भी ग्रह विद्या का विषय हो सकता है । अन्तर्ग्रही हलचलें व्यापक क्षेत्र पर असर डाल सकती हैं, पर ऐसा नहीं हो सकता कि हर व्यक्ति की हर स्थिति उसी से प्रभावित होती हो । फिर भविष्य में किस व्यक्ति को किस कार्य में कब सफलता मिलेगी ? इसका आकलन ज्योतिष के आधार पर करने का कोई तुक ही नहीं है । ऐसे दुर्बल आधार पर यदि भविष्य की सम्भावनाएँ सोची गईं तो समझना चाहिए कि भ्रम-जंजाल में उलझकर अहित ही किया जा रहा है । इस उलझाव के जाल में उलझकर वर्तमान को भरपूर सँवारने की नीति अपनानी चाहिए, क्योंकि यही भविष्य का आधार जो है । यदि आधार सुदृढ़ बनाया जा सका तो भवन का सौन्दर्य टिकाऊ और स्थाई रह सकेगा ।

दोष—भाग्य या ईश्वर को क्यों दें ?

अन्ध-विश्वासी या विश्वासी प्राय: यह कहते सुने जाते हैं कि ईश्वर की जैसी मर्जी होगी, वैसा होगा । इस कथन में मनुष्य को भविष्य के सम्बन्ध में अधिक चिन्तित न होने के सम्बन्ध में आश्वस्त किया गया है और साथ ही भक्ति भावना में अधिक आस्था रखने के लिए तत्पर करने वाले तत्व भी हैं, किन्तु वास्तविकता की दृष्टि से इस कथन का निरीक्षण पर्यवेक्षण किया जाय तो इस प्रतिपादन में मन समझाने वाला, दम दिलासा देने जैसा ही कुछ तथ्य प्रतीत होता है । वास्तविकता के सम्बन्ध में जितने तथ्य जुटाये जायें, यथार्थता की कसौटी पर वह उतनी ही झीनी प्रतीत होती जाती है ।

ईश्वर को अपनी सभी सन्तानें समान रूप से प्रिय हैं । सभी को उनके सीमित संसार में भली प्रकार काम चलाने लायक समर्थता एवं कुशलता प्रदान की है, साथ ही इतनी स्वतंत्रता भी दी है कि इच्छानुसार कार्य कर सके । साधन जुटा सके और भले-बुरे भविष्य का ताना-बाना बुन सके । ईश्वर किसी के दैनिक कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करता और न इस बेतुके काम में लगता है कि किसी का भाग्य भला बनाये, किसी का बुरा । यदि ऐसा रहा होता तो फिर पुरुषार्थ की आवश्यकता ही न पड़ती । उसकी कोई उपयोगिता ही न रहती । मनुष्य कह सकता था कि जो कुछ भला-बुरा बन पड़ा वह ईश्वर की इच्छा से बन पड़ा । ऐसी दशा में श्रेय और दोष का भाजन भी ईश्वर ही बनता । मनुष्य को सर्वथा निर्दोष-निर्लिप्त माना जाता । ऐसी दशा में उसे दण्ड पुरस्कार मिलने का भी कोई औचित्य न रहता । बन्दूक से गोली चले और उससे किसी की मृत्यु हो जाय तो फाँसी बन्दूक को नहीं लगती वरन् उसे चलाने वाला पकड़ा जाता है और दण्ड भुगतता है । यदि ईश्वर की इच्छा से ही मनुष्य के सब कार्य चलें तो फिर यही समझा जायेगा कि मनुष्य एक चलने-फिरने वाला प्राणी मात्र है । उसकी लगाम तो किसी दूसरे ने पकड़ रखी है । वाहन को सीधे या गलत रास्ते पर ले चलने की जिम्मेदारी सवार की है । घुड़दौड़ में जो जीतता है उसका पुरस्कार मालिक को ही मिलता है । घोड़े को तो नित्य जैसा चारा-दाना ही मिलता है, उसका कुछ विशेष सम्मान-समारोह किया जाय ऐसा भी नहीं होता । दुर्बल रखने पर घोड़े के मालिक को ही दोष दिया जाता है कि उपयुक्त खुराक या प्रशिक्षण में कमी रखी गई अन्यथा उसके पिछड़ने की नौबत न आती ।

ईश्वर की इच्छा से ही मनुष्य चलता तो उसे अपूर्णता दूर करने के लिए सत्प्रवृत्तियाँ बढ़ाने में संलग्न रहना चाहिए था और उसके विश्व उद्यान को सुरम्य बनाने में अपने कौशल का परिचय देना चाहिए था । अन्तरात्मा की पुकार निरन्तर यही तो कहती-सुझाती रहती है । इस मूल प्रेरणा की तो उपेक्षा कर दी जाय और दैनिक क्रिया-कलापों में अपने बरताव की भूलों के लिये ईश्वर को दोषी ठहराया जाय तो इस चतुरता से पार नहीं पड़ती । कोई विश्वास भी नहीं करता कि इस व्यक्ति को प्रमाद करने या दुष्कर्मों में निरत रहने के लिए ईश्वर ने विवश किया होगा । यदि ऐसा रहा होता तो निन्दा, भर्त्सना परमेश्वर की होती और दोषों का, कुकर्मों का भागी भी परमेश्वर को ही बनाया जाता । कर्त्ता की निर्दोषता पर विश्वास किया जाता जिसे सिद्ध करने के लिए उसने इस बहाने का आश्रय लिया होता ।

यदि मान्यता यही रही होती तो कोई कुछ प्राप्त करने या पुरुषार्थ करने के झंझट में न पड़ता । जब विधाता ने भाग्य में सब कुछ लिख दिया है तो वह टलने वाला भी नहीं है और प्रयत्न करने की कोई उपयोगिता, आवश्यकता नहीं रह जाती । जो लाभ जिस समय मिलना है, वह उस समय उतनी मात्रा में मिल ही जायगा । फिर पूँजी जुटाने और व्यवसाय का सरंजाम जुटाने की आवश्यकता ही क्यों पड़े ? जब जितना नुकसान होना है वह होकर ही रहेगा, ऐसा सोचने वाला क्यों सुरक्षा का प्रबन्ध करेगा और क्यों सावधानी बरतेगा ? इस प्रकार की मान्यता वाले को अपने या अपने सम्बन्धियों के बीमार पड़ने पर इलाज कराने की आवश्यकता भी नहीं होती । जो जब मरेगा, तब मरेगा ही । जिसे जितना कष्ट भुगतना है, वह उतना भुगतेगा ही । ऐसी दशा में उसका इलाज कराने या परिचर्या में निरत रहने की भी आवश्यकता नहीं रह जाती । क्या कोई भाग्यवादी या दैव विश्वासी ऐसा है जो अपनी शरीर रक्षा, परिवार व्यवस्था के लिये दौड़-धूप न करता हो ? यह आशा लगाये बैठा रहता हो कि समय पर ईश्वर की इच्छा से सब काम अपने आप हो जायेंगे ? यदि यह प्रतिपादन सही रहा होता तो व्यक्ति को हर विषय में निमित्त ही नहीं निष्क्रिय हो जाना चाहिए था, पर वैसा व्यवहार में चरितार्थ होता हो ऐसा कहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखा नहीं गया । इससे प्रकट है कि मनुष्य का विवेक इस कथन पर विश्वास नहीं करता । सृष्टा ने मनुष्य को असहाय, परावलम्बी बनाकर भेजा हो, ऐसा कोई भी मानने को तैयार नहीं । भले ही अपने किसी विचार के निमित्त ईश्वर इच्छा या भाग्य दोष का बहाना बनाकर मन समझाने और दूसरों की भर्त्सना को हल्की करने की दृष्टि से इस मान्यता की दुहाई भर देता है ।

फिर इस मान्यता को कहा, सुना और दुहराया क्यों जाता है ? इसके पीछे एक विशेष स्थिति में घबराये हुए मनुष्य को तन्द्रित कर देने की दवा पिलाने जैसा उपचार है । घाटा तो हो ही गया । मृत्यु या विपत्ति का झटका तो लग ही गया । उस आघात से तिलमिलाहट होती है । कभी अपना दोष सोचकर सिर घूम जाता है, कभी दूसरों पर दोषारोपण करने का मन होता है । फिर भी जो गुजर चुका वह लौट नहीं सकता । चैन पाने के लिए कोई सिखावन, समझावन काम नहीं करती, तब उद्विग्नता को घटाने के लिये इस लँगड़े-लूले सिद्धान्त का प्रयोग किया जाता है कि जैसी ईश्वर की इच्छा थी, विधि का विधान था वैसा हो गया । उनके आगे अपना क्या वश चलता है । ऐसी स्थिति में संताप करने, धीरज रखने के अलावा और कोई चारा नहीं ।-आमतौर से किसी की मृत्यु हो जाने पर उसके शोक-संतृप्त परिवार को धैर्य बँधाने, शोक घटाने के लिए इस प्रतिपादन को कहने-समझाने के लिए बन्द डिब्बों में से निकालकर काम में लाया जाता है और फिर काम निकलने के बाद उसे डिब्बे में बन्द कर दिया जाता है ताकि उसका अनुपयुक्त अवसर पर प्रयोग न होने लगे । कोई बीमार पड़ा हो, घर के लोग उपचार की भाग-दौड़ कर रहे हों, तब भी यदि उसी प्रतिपादन को दुहराया जाने लगा तो कहने वाले को मूर्ख या शत्रु कहा जायेगा, बुरा-भला मनाया जायेगा । भला यह कौन सुनने को तैयार होगा कि यह भाग-दौड़ बेकार है, मरीज को जब मरना है तभी मरेगा । ईश्वर जो चाहेगा सो ही होगा । ऐसे समय में इस प्रकार के कथन को बेतुका ही समझा जायेगा ।

एक समय में और भी इस कथन का उपयोग हो सकता है । अब अपने को कोई सफलता मिले । श्रेय-सम्मान का अवसर आये तो कहा जाय कि यह ईश्वर की कृपा, बड़ों के आशीर्वाद अथवा मित्रों के सहयोग से सम्भव हो सका । मैं अकेला क्या कर सकता था । इस कथन में निरहंकारिता, नम्रता का भाव प्रकट होता है । साथ ही श्रेय अनेकों को बाँट देने, सहयोगियों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने का दृष्टिकोण भी छलकता है । ऐसी मनःस्थिति सराहनीय मानी जाती है, किन्तु ऐसा कुछ तब न हो जाय जब अपने से भूल बन पड़े या अकर्म का लांछन अपने ऊपर लगे । ताकि उस भर्त्सना को स्वयं ही सहना चाहिए और जिम्मेदारी अपनी ही बतानी चाहिए ।

भाग्य का रोना न रोइए, पुरुषार्थ कीजिए

"परमात्मा ने जो विधान रचकर रख दिया है उससे न तिलभर घट सकता है न रत्तीभर बढ़ सकता है ।" "विधि को लिखौ ललाट ताहि को मेटै नाई," "कर्म रेख ना मिटै करै कोऊ लाखों चतुराई" इस तरह के अनेक सूक्त रचकर कुछ भाग्यवादी व्यक्तियों ने भारतीय समाज का भारी अहित किया है और जब परमात्मा ही सब कुछ करने वाला है तो मनुष्य कुछ क्यों करे ? यह कहकर उन्होंने उसके पौरुष को लँगड़ा कर दिया ।

अब लोग भाग्य के पीछे पड़े रहते हैं । कभी किसी ज्योतिषी को जन्मकुण्डली दिखायेंगे । कभी किसी हस्तरेखाएँ देखने वाले को हाथ दिखाकर यह जानना चाहेंगे कि उन्हें कब बड़ी सम्पत्ति मिलेगी ? बेटी का विवाह कब तक हो जायेगा, इस वर्ष खेतों में फसल कौन-सी अच्छी उगेगी, व्यापार गेहूँ का करें या कपड़े का ? यात्रा पूर्व की करें या पश्चिम की ? पण्डितों और ज्योतिषियों की बन आती है । वे जानते हैं भाग्य पर भरोसा करने वालों पर बुद्धि और विवेक से सोचने की तो कोई क्षमता होती ही नहीं, इसलिए वे भी निःसंकोच प्रश्नों के ऐसे सामान्य उत्तर देते हैं जिनमें प्रश्नकर्त्ताओं की आशाएँ तो बनी रहें, उन्हें कुछ बुरा भी न लगे और वे लोग इनकी पकड़ में न आयें ।

बस पण्डितों, ज्योतिषियों का तो काम बन गया, पर दुर्दशा हुई यजमान की । जब उसने देखा कि जो कुछ मिलता है, भाग्य के सहारे से ही मिलता है तो फिर उसने रहे सहे प्रयत्न करने भी बन्द कर दिये । आज देश की पचास प्रतिशत जनशक्ति इसी मान्यता के कारण उन्नति की ओर जाने से वंचित है । हमारा जो अहित का परिणाम है वह यह कि इस मान्यता के कारण आलस्य, भ्रष्टाचार, चोरी, छली आदि बुराइयों को आश्रय मिलता है । अकेली अन्धमान्यता के सैकड़ों पाप-पुत्र समाज को गिराये उस पर चढ़े बैठे हैं ।

पुरुषार्थवादी आदर्शों के स्थान पर यह भाग्यवाद कैसे पनपा ? यह बड़ी दिलचस्प बात है । पिछले दिनों यहाँ विदेशी आक्रमण-कारी आये । यहाँ के राजाओं और सामन्तों की प्रवृत्ति भी जनता के शोषण की रही । शोषित वर्ग विद्रोह न करे इसके लिए भाग्यवाद का समर्थन और उसकी जोरदार वकालत ही बढ़िया उपाय था । उसी का आश्रय लिया गया । यह कुटिल चाल कालान्तर में हमारे समाज का स्वभाव बन गई और आज लोगों की क्रियाशीलता पर बुरी तरह छाकर भारतीय समाज को आगे बढ़ने से रोक रही है ।

भाग्यवाद सच रहा होता तो, आज संसार साम्यवादी न हो गया होता । भाग्यवाद का पल्ला पकड़े बैठे रहते, संघर्ष और पुरुषार्थ न करते तो आज देश में चुनावों के दर्शन भी न होते । यहाँ अँग्रेजी झण्डे की सलामी चल रही होती । भारत में जो सैकड़ों कल कारखाने और भाखड़ा जैसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़े-बड़े बाँध बनते जा रहे हैं, वह भाग्यवाद की नहीं पौरुष की देन है । उनके लिए धन खर्च किया गया, इंजीनियर जुटाये गये, परिश्रम किया गया, तब कहीं निर्माण सम्भव हुआ ।

यदि भाग्य को मान भी लें तो **''कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस करई, सो तस फल चाखा''** की उक्ति माननी पड़ेगी । अर्थात् कर्म और पुरुषार्थ प्रधान हैं भाग्य तो उनका परिणाम मात्र है । जो जैसा करता है उसी का फल मिलता है । यही निरर्थक बैठे रहने और बुरे कर्मों के परिणाम बुरे निकल सकते हैं तो ईमानदारी, सच्चाई, प्रयत्न और परिश्रम के साथ किये गये कर्मों के प्रतिफल भी प्रसन्नता और सन्तोषदायक होने चाहिए । इसी सिद्धांत के आधार पर ही पाश्चात्य देश आगे बढ़े हैं ।

सफलता की कुञ्जी न तो भाग्य के पास मिलेगी न किसी पंडित ज्योतिषी के पास । परमात्मा ने दो-दो हाथ, पाँव, बुद्धि और विचार-क्षमता दी है, उसी के आधार पर स्थायी प्रगति सम्भव है । अब हमें इस सच्चे सिद्धान्त को छोड़कर भाग्य का ढिंढोरा नहीं पीटना चाहिए ।

पद-दलितों के लिए अफीम—भाग्यवाद के अनेकों प्रयोजन हैं और वे सभी एक से एक बढ़कर हेय हैं । भारत में कुछ वंशों को नीच और कुछ को ऊँच माना जाता है । जिन्हें नीच माना जाता है, उन्हें मानवोचित् नागरिक अधिकारों से वंचित रहना पड़ता है । लोग उन्हें छूते तक नहीं फिर अन्य प्रकार के सम्बन्ध रखने की तो बात ही क्या है ? अपना तिरस्कार और उपेक्षा भला किसे अच्छी लगेगी ? जिनके नागरिक अधिकार छिने हैं, जिन्हें तिरस्कृत और पद-दलित किया गया है, उनमें रोष उत्पन्न होना स्वाभाविक है । शासकों के उत्पीड़ितों की तरह सामाजिक अन्याय भी तो मनुष्य को कष्टकर होता है । अन्याय की प्रतिक्रिया कभी भी उग्ररूप धारण कर सकती है । उससे कैसे बचा जाय ? उच्च वर्ण के तथाकथित अहंकारियों को यही तीर इस प्रयोजन के लिए भी उपयुक्त जँचा । ऊँच-नीच की परिपाटी ईश्वर ने चलाई है । शास्त्रों में लिखी है, भाग्य से ही ऊँच या नीच कुल में जन्म मिलता है । इस मान्यता को अन्याय-ग्रस्त लोगों के मन में बिठाये रखा जाय तो वे जो कुछ हो रहा है उस पर सन्तोष करते रह सकते हैं और यथास्थिति को बचाये रहने में सहमत हो सकते हैं । जो लोग किसी वर्ग को पिछड़ा रखकर उनके शोषण का लाभ उठाना चाहते हैं उनके लिए यह भाग्यवादी विचारधारा बहुत ही लाभकर सिद्ध हो सकती थी, हो रही है और जब तक वह जीवित है तब तक होती भी रहेगी । अछूत जातियों की तरह नारी जाति की भी पद-दलित स्थिति हमारे समाज में विद्यमान है । उसे पर्दे के अन्दर बन्द घर में पिंजड़े के पक्षी की तरह जिन्दगी गुजारनी पड़ती है । पुरुष की हर दृष्टि से बाधित दासता स्वीकार करनी होती है । न्याय और विवेक कहता है कि क्या नर क्या नारी दोनों का स्तर और अधिकार समान है । इसलिए दोनों को समान अवसर उपलब्ध होने चाहिए । पर मनुष्य की शैतानी का अन्त नहीं । उसने पहले पशुओं को गुलाम बनाया, फिर पिछड़े हुए मनुष्यों को, फिर स्त्रियों को । अपनी इस क्रूरता को उचित एवं ईश्वर-निर्देशित बनाने के लिए उसने एक दर्शन ही गढ़ दिया उसी दर्शन का नाम है— भाग्यवाद ।

भाग्यवाद को तिलांजलि देना ही श्रेयस्कर

एक समय था जब भारत संसार का शिरमौर माना जाता था । भारत से ही निकल-निकल कर सभ्यता, संस्कृति एवं मनुष्यता के सन्देश देश-देशान्तर में फैले । हमारे पूर्वजों ने न जाने कितनी बार विश्व-विजय कर संसार में धर्म राज्य की स्थापना की । जीवन-दर्शन से परिप्लावित ज्ञान देने के कारण ही भारत को 'जगत्गुरु' की पदवी प्राप्त हुई थी ।

उस स्वर्णिम समय की याद अभी संसार को बनी हुई है, जब हमारा भारत देश उन्नति एवं प्रगति के शिखर पर विराजमान था और सारा संसार उससे कौशल, शिल्प एवं ज्ञान-विज्ञान सीखने के लिए अपने प्रतिनिधि भेजा करता था । बल, बुद्धि विद्या एवं धनधान्य की प्रचुरता के कारण ही भारतवासियों को देवता करके माना गया था और इस धरती को 'स्वर्गादपि गरीयसी' कहा गया था ।

भारत की इस उन्नतिपूर्ण स्थिति का कारण यहाँ का जीवन-दर्शन ही रहा है जिसके आधार पर भारतवासी पुरुषार्थ, परिश्रम, कर्मठता, न्याय, औचित्य एवं विवेक के प्रति अखण्ड निष्ठा रखकर उसी के अनुसार आचरण किया करते थे ।

आज भारत संसार में पिछड़े हुए देशों में गिना जाता है । उसकी धन-सम्पत्ति नष्ट हो गई और उसे एक अभावग्रस्त गरीब देश माना जा रहा है । कायरता, आलस्य एवं अकर्मण्यता भारतवासियों के स्वभाव के अंग बन गये हैं जिससे उनकी दशा दिन-दिन गिरती चली जा रही है । अविवेक एवं अन्ध-विश्वासों का तो कोई पारावार ही नहीं रहा ।

भारतवासियों का यह पतन कोई आजकल की बात नहीं है । उसमें प्रमाद एवं अविवेक का दोष बहुत प्राचीन समय से चला आ रहा है, जिसके कारण उन्हें गत सात-आठ सौ साल तक विदेशी आक्रमणों एवं दासता की यातना भोगनी पड़ी है । शोषण, संहार एवं अपहरण की लज्जाजनक स्थिति यद्यपि आज नहीं रही है, विदेशी शासन एवं प्रभाव नष्ट हो चुका है, देश आजाद है, उस पर किसी का बाहरी दबाव भी नहीं रहा है तथापि इसकी दशा दयनीय बनी हुई है । इसका अविवेक एवं अन्ध-विश्वास यथावत् अक्षुण्ण रहने से प्रगति की कोई सम्भावना दृष्टिगोचर नहीं हो रही है ।

भारतवासियों के इस पतन के कारणों में मुख्य कारण 'भाग्यवाद' का पाप ही रहा है । 'भाग्यवाद' 'पुरुषार्थवाद' अथवा 'कर्मवाद' का विरोधी है । जहाँ 'भाग्यवाद' जड़ जमाये हुए होगा, वहाँ पुरुषार्थ की महत्ता नहीं रह सकती में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भाग्यवाद ने जड़ जमा ली है फलतः उनका पुरुषार्थ एवं कर्त्तव्यवादी जीवन-दर्शन आलस्य, प्रमाद, पलायन एवं प्रतिगामिता आदि के अवनतिकारक पाप से दूषित हो गया है और नंगे-भूखे, दीन-दलित होकर भी भारतवासी, यथावत् स्थिति पर अज्ञानजन्य सन्तोष किए हुए जिए जा रहे हैं । उनके मस्तिष्क में परिस्थितियों को बदलने, उनका कारण खोजने का विचार जन्म लेकर सक्रिय नहीं हो पा रहा है ।

'भाग्यवाद' में विश्वास करने वाले, फिर चाहे वे व्यक्ति हों, अथवा राष्ट्र बहुत अधिक हानि उठाया करते हैं । जहाँ 'कर्मवाद' मनुष्य को उत्साही, परिश्रमी, साहसी, आत्म-विश्वासी तथा स्वावलम्बी बनाता है वहाँ 'भाग्यवाद' में अन्ध-विश्वास रखने वालों में निष्क्रियता, निराशा, निरुत्साह, परावलम्बन आदि की हीन वृत्तियाँ आ जाती हैं, जिनका परिणाम अवनति के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता ।

भाग्यवाद का बन्दी मनुष्य अपनी असफलता अथवा दीन दशा का दोष भाग्य को देकर बैठ जाता है और सोच लेता है कि सफलता उसके भाग्य में ही नहीं है । जब अच्छे दिन आयेंगे, भाग्य साथ देगा उसकी उन्नति होते देर न लगेगी । किसी बात के लिए हाथ-पैर मारना, सिर खपाना व्यर्थ है, यदि वह चीज भाग्य में बदी होगी तो किसी न किसी बहाने मिल ही जायेगी । ऐसे अकर्मण्य निष्क्रियतावादी व्यक्ति आत्म-निरीक्षण, आत्मशोधन, आत्मसुधार एवं आत्मविकास का प्रयत्न नहीं करते । सब कुछ भाग्य के भरोसे छोड़कर सफलता अथवा प्राप्ति की राह देखा करते हैं ।

भाग्यवाद पर विश्वास रखने वाले की विचार-शक्ति कुंठित हो जाती है । वह अपने दुःख-दर्द, आपत्तियों, कठिनाइयों तथा हानि-असफलता के कारणों की खोज-बीन करने का उत्साह नहीं रखता, उसका अन्ध-विश्वास उसको ऐसा करने से रोकता है । अभावों एवं कठिनाइयों का वास्तविक कारण तभी समझा जा सकता है, जब विवेक को अपना काम करने का अवसर दिया जाये । जिसका विवेक बन्दी है, विचार-शक्ति कुंठित हो गई है, तार्किक दृष्टिकोण पर प्रतिबंध लगा हुआ है, वह आपत्ति अथवा अभाव का कारण खोज सकने में सर्वथा असमर्थ ही रहेगा । वास्तविक कारण को खोजने के स्थान पर जब भाग्य को दोष देकर छुट्टी पा ली जायेगी तो निश्चय है कि ऐसी अवस्था से उनको दूर किये जाने का प्रश्न ही नहीं रहता । यही कारण है कि अधिकतर भाग्यवादी आलसी, अकर्मण्य होकर दीन-हीन जिन्दगी ही भोगा करते हैं ।

संसार में कर्म को प्रधानता है । कर्म किए बिना यहाँ किसी प्रकार की उपलब्धि सम्भव नहीं । भाग्य के भरोसे हाथ-पर-हाथ रखे बैठे रहने वाले, अपनी दयनीय परिस्थितियों में ही पड़े-पड़े मरा करते हैं । भारतवासियों में भाग्यवाद की उल्टी विचारधारा जब से चल पड़ी है, तभी से इसका पतन आरम्भ हो गया । जब तक वह अपने यथार्थ जीवन-दर्शन कर्मवाद पर विश्वास करता और उसका आचरण करता रहा संसार में सर्वश्रेष्ठ स्थान का अधिकारी बना रहा । भारत का सारा आध्यात्मिक दर्शन ही कर्म पर आधारित है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष उपलब्धियों को पुरुषार्थ के बल पर प्राप्त करने का निर्देश किया गया है । मनुष्य के लिए यदि भाग्य की कोई सत्ता रही होती तो निश्चय ही साहित्य एवं त्रिकालदर्शी ऋषि अपने अनुयायियों को कर्म का उपदेश न करते । रूस, अमेरिका, जापान, जर्मनी, इंग्लैण्ड आदि देशों को उन्नति किए हुए बहुत दिन नहीं बीते । कतिपय दशाब्दियों में ही वे उन्नति के शिखर पर जा पहुँचे । जिन दिनों वे अवनति के अन्ध गर्त में पड़े थे, आज के भारत के समान ही वे भी भाग्य, दैव के अदृष्टवादी थे । न जाने कितने अकर्मण्यताजनक विश्वास उन्हें घेरे हुए थे, किन्तु जब उन्होंने आँख खोल अपनी दुर्दशा पर विचार किया और भाग्यवाद को त्याग कर कर्मवाद को अपनाया, उन्नति करते देर न लगी ।

भारत में भाग्यवाद की विचारधारा चल पड़ने के कारणों की खोज करने पर दो कारण समझ में आते हैं—एक तो अज्ञान और दूसरा विदेशी आक्रमणकारियों का षड्यन्त्र । अज्ञान एक प्रकार का अन्धकार है । जिस भाँति अन्धकार से वस्तुस्थिति का वास्तविक ज्ञान नहीं हो पाता, अज्ञान भी किसी बात को ठीक से समझने और उसकी तह तक जाने नहीं देता । अज्ञानान्धकार से ग्रस्त व्यक्ति की विचार एवं कार्य-पद्धति सर्वथा विपरीत विचारधारा की ही कही जानी चाहिए । अविद्याजन्य अज्ञान के कारण भारतवासियों में बहुत समय से विचार-निर्णय मिट गया है और वे वास्तविकताओं को छोड़कर अवास्तविकता पर विश्वास करने लगे हैं ।

अज्ञान को आर्य पुरुषों ने पाप बतलाया है और इसीलिए 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' का उद्घोष किया है । अज्ञान एक भय है, नरक की परिस्थितियों को ले जाने वाला है, इसलिए मनुष्य को अन्धकार अर्थात् अज्ञान से विरत होकर प्रकाश अर्थात् ज्ञान की ओर चलना चाहिए । ऋषियों ने अज्ञान से निकलने और ज्ञान को प्राप्त करने में सबसे बड़ा पुरुषार्थ को माना है । पुरुषार्थ ही वह उपाय है जिसके बल पर भौतिक ही नहीं अपवर्ग सुखों तक को प्राप्त किया जा सकता है । लोक से लेकर परलोक तक की किसी भी उपलब्धि को पुरुषार्थ के बिना नहीं पाया जा सकता है । अर्थ-विकास से लेकर आत्मविकास तक सारी सम्भावनाएँ पुरुषार्थ पर ही निर्भर हैं ।

कर्मवादी भारतवासियों में भाग्यवाद की विचारधारा को जन्म देने में विदेशी शासकों का बहुत हाथ रहा है । उन्होंने देखा कि भारतीयों का ज्वलन्त जीवन-दर्शन जिसमें कि पुरुषार्थ, उत्कर्ष, परमार्थ एवं कर्त्तव्य की प्रबल निष्ठा सन्निहित है, राजनीतिक दासता की अवस्था में भी उनको आदर्शोत्कर्ष की ओर प्रेरित करता जाता है, उनका आत्मगौरव इतना बढ़ा-चढ़ा है कि वे अपने विदेशी शासकों को तृण तुल्य भी नहीं समझते । किसी दिन भी वे उठकर खड़े हो सकते हैं और बात-की-बात में हमारी सत्ता को धूल में मिला सकते हैं । इसलिए आवश्यक है कि इन प्रबल पुरुषार्थियों को कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी विचारधारा दी जाये जो इनकी चेतना पर अफीम का काम करे । निदान उन्होंने देशद्रोही धर्माधिकारियों को मिलाकर विचार-विमर्श किया और भाग्यवाद की अफीम खोज निकाली ।

विदेशी शासकों ने तथाकथित धर्म-नेताओं, पण्डों, पुजारियों तथा पुरोहितों को, जो कि जन-जीवन में गहराई तक धँसे हुए थे, अधिकाधिक पुरस्कार एवं पारिश्रमिक दे-देकर समाज में भाग्यवाद का विष फैलाना प्रारम्भ किया, जिसका फल यह हुआ कि कुछ ही समय में भारतवासियों के मस्तिष्क में कर्मवाद के प्रति अविश्वास तथा भाग्यवाद के प्रति आस्था उत्पन्न होने लगी । प्रचार के अनुसार लोग यह समझने लगे कि संसार में जो कुछ होता है वह सब पूर्व निर्दिष्ट ही है । मनुष्य का सुख-दुःख, भाव-अभाव, विपत्ति-सम्पत्ति आदि हर परिस्थिति का कारण भाग्य ही है जो कि विधाता द्वारा पहले से ही निश्चित किया हुआ है । इतना ही नहीं जनता शासकों के अत्याचार, अनाचार, शोषण तथा अपहरण को भी अपने भाग्य का दोष समझने और सन्तोषपूर्वक सहने लगी, जिससे शासकों को विद्रोह-विप्लव अथवा प्रतिरोध का भय जाता रहा और वह देशवासियों को मनमाने ढंग से सताने तथा लूटने में निःसंकोच रहने लगे । जब गुलामी तथा शोषण उसके भाग्य के पूर्व निर्धारित फल थे, जिनको कि बदला नहीं जा सकता था, तब उसके लिए प्रयत्न करना ही बेकार था । इस आरोपित भाग्यवाद का फल यह हुआ कि भारतवासी आलसी और अकर्मण्य, कायर और कुंठित होकर अज्ञानपूर्ण जिन्दगी बिताते और हर प्रकार का अपमान एवं अत्याचार सिर झुकाकर सहते रहे । एक लम्बे समय के बाद कुछ चेतना आई । जनता ने संघर्ष कर अपने को राजनीतिक गुलामी से तो मुक्त किया, किन्तु दुर्भाग्यवश वह अपनी मानसिक गुलामी तथा अन्ध-विश्वासों की दासता से अब भी अपने को मुक्त न कर सकी है ।

भारतवासियों को अत्याचारियों द्वारा दिए अज्ञान-पोषित इस भाग्यवाद को त्यागकर अपने सच्चे आदर्श—कर्मवाद को अपनाना, होगा तभी उनकी आर्थिक से लेकर आत्मिक उन्नति सम्भव हो सकेगी अन्यथा नहीं ।

संसार की गतिविधियाँ देखें—संसार में अन्यत्र कहाँ क्या हो रहा है इस पर दृष्टि उठाकर देखिये । गोरे और काले रंग के नाम पर भारत के अछूतों जैसा जो अन्याय अफ्रीका महाद्वीप में चल रहा था, वह देखते-देखते हवा हुआ जा रहा है । अमेरिका के नीग्रो मानवीय अधिकार प्राप्त कर चुके । राष्ट्र संघ के माध्यम से विश्व की जनता ने मनुष्य-मनुष्य के बीच बरते जाने वाले भेद-भाव को अनैतिक ठहरा दिया और उसके उन्मूलन का विश्वव्यापी प्रयत्न हो रहा है । यदि भाग्य से ही ऊँच-नीच बनना पड़ता तो ईश्वर के अटल विधान में ऐसा परिवर्तन कैसे सम्भव होता ? धनी और निर्धन के भेद-भाव साम्यवादी देशों में समाप्त हो गये । यदि यह अन्तर ईश्वरकृत ही होता तो संसार की लगभग एक तिहाई आबादी इस अन्तर को मिटा डालने में सफल कैसे हो गई ? यदि 'दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा' की उक्ति ठीक रही होती तो अँग्रेज यहाँ से क्यों उखाड़ फेंके गये होते ? स्त्रियाँ यदि भाग्य से ही निकृष्ट स्तर की पैदा की गई होतीं तो संसार के प्रगतिशील देशों में वे क्यों पुरुषों से भी बढ़कर पुरुषार्थ दिखला रही होतीं ? यदि भाग्य ही उन्नति-अवनति का कारण रहा होता तो रूस वाले ४० वर्षों में और अमेरिका वाले ८० वर्षों में गई—गुजरी स्थिति से उठकर सर्वोच्च स्थिति पर क्यों जा पहुँचे होते ? और भारत जैसा धार्मिक देश जहाँ ग्रह-नक्षत्रों और देवी-देवताओं की दिन-दिन पूजा-आराधना होती रहती है, क्यों हजारों वर्षों से इस अधःपतित स्थिति में पड़ा होता । हमारे ज्योतिषी, तन्त्र-मन्त्र, देवी-देवता कुछ नहीं तो चीन और पाकिस्तान के आक्रमणकारियों को ही पीछे हटा देते तो भी उनकी शक्ति एवं वास्तविकता का कुछ पता चल जाता ।

हमें विचार करने की अपनी पद्धति को सुधारना पड़ेगा । मानसिक आलस्य को छोड़ना पड़ेगा और वस्तुस्थिति को परखना पड़ेगा । विवेक की कसौटी को उपेक्षणीय ही बनाये रहेंगे तो लाभ कुछ नहीं हानि अपार है । अन्धकार के अभ्यस्त हो जाने के कारण हो सकता है हमें प्रकाश की उपयोगिता न जँचे । उसे देखकर बुरा भी लगे और प्रकाश का विरोध एवं अन्धकार का समर्थन करना अच्छा लगे, पर इससे कुछ बनने वाला नहीं है । वस्तुस्थिति ज्यों-की-त्यों बनी रहेगी । हमारे भ्रमग्रस्त बने रहने से वास्तविकता तो बदल जाने वाली नहीं है । शिकारी को सामने देखकर भयभीत शुतरमुर्ग अपने बचाव के लिए कोई और उपाय न देखकर बालू में मुँह गाड़ लेता है और सोचता है मैंने देखना बन्द कर दिया तो शिकारी का अस्तित्व भी समाप्त हो गया होगा, पर वैसा होता कहाँ है ? शिकारी उसे दबोच लेता है और बेचारे शतरमुर्ग को अपनी जान गँवानी पड़ती है । हम अपनी कठिनाइयों की जिम्मेदारी भाग्य के ऊपर, विधाता के ऊपर, ग्रह-नक्षत्रों के ऊपर थोपना चाहें तो थोपें, इससे झूठा आत्म-संतोष मिल सकता है । अपनी हीनता के लिए आत्म-ग्लानि करने और सुधार के लिए पुरुषार्थ करने का झंझट जरूर बच सकता है, पर इससे प्रयोजन तो कुछ भी हल न होगा । कठिनाइयों में रत्ती भर भी कमी न होगी, वरन् वे बढ़ती ही चली जायेंगी ।

किसी विशेष प्रयोजन के लिए—जब कोई व्यक्ति असफलता, वियोग एवं हानि के आघात से क्षुब्ध, उद्विग्न हो रहा हो, तब उसे शांति देने के लिए भाग्य, होतव्यता जैसी बात कही जा सकती है । सिर दर्द बहुत तेज होता है तो 'एस्प्रो' की गोली खिला सकते हैं, पर वे गोलियाँ रोज की खुराक का एक अंग नहीं बन सकतीं । कई आकस्मिक दुर्घटनाएँ ऐसी हो जाती हैं जिनमें मनुष्य का कोई बस नहीं होता, उसमें अपनी गलती भी नहीं होती, पर संयोगवश कुछ अप्रत्याशित कारण उपस्थित हो जाते हैं और कोई आकस्मिक हानि-लाभ सामने आ जाता है । यद्यपि वे संयोग मात्र ही होते हैं, पर उन्हें चाहें तो भाग्य भी कह सकते हैं । इसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार कोई जन्मजात अन्धे-अपंग, पैतृक रोगों से ग्रस्त उत्पन्न होते हैं, इन्हें भाग्य कहा जा सकता है यद्यपि उसमें भी माता-पिता के कोई ज्ञात या अज्ञात दोष दिए रहते हैं । कुछ ऐसे कारणों को छोड़कर आमतौर से मनुष्य अपने ही शुभ-अशुभ पुरुषार्थ का भला-बुरा फल भोगता रहता है । उचित यही है कि अधिक प्रगति के लिए अधिक व्यवस्थित पुरुषार्थ की बात सोची जाय और जो असफलता मिली है उसमें अपना दोष जितने अंशों में रहा हो उसे सुधारा जाय । कभी-कभी परिस्थितियाँ भी असफलता का कारण होती हैं, पर उससे निराश क्यों हुआ जाय—अनेक असफलताएँ सहते हुए भी जिसका पुरुषार्थ प्रबल बना रहे उसे आज नहीं तो कल सफलता मिलनी ही है । एक बार की असफलता से निराश होकर पुरुषार्थ छोड़ बैठना और भाग्य की प्रतिकूलता को दोष देने लगना किसी विचारशील मनुष्य को शोभा नहीं देता ।

यदि पूर्वजन्म के कर्मों के अनुसार भाग्य का बनना माना जाय तो भी प्रधानता कर्म की ही सिद्ध होती है । कल जिस वस्तु का नाम दूध था जो पतला था, आज वह दही बन गया, गाढ़ा दीखने लगा तो भी प्रधानता तो दूध की ही रही । दूध न होता तो दही कहाँ से आता ? यदि पिछले जन्म के शुभ-अशुभ कर्मों से ही इस जन्म में हमें भले-बुरे फल प्रारब्ध रूप में भोगने पड़ रहे हैं, तो भी इतना तो मानना ही चाहिए कि कर्म ही प्रधान है । अपने कर्मों के अतिरिक्त हमारे भाग्य और भविष्य के बनाने बिगाड़ने वाला जब कोई और है ही नहीं तो क्यों न हम अपने कर्मों की प्रखरता एवं उत्कृष्टता को बढ़ाने पर ही अपना सारा ध्यान केन्द्रित करें ।

बौद्धिक आलस्य छोड़ें—बौद्धिक आलस्य हमें छोड़ना ही चाहिए । अन्धकार में भटकने की प्रवृत्ति से बचना ही चाहिए । हमें अपने विचार-क्षेत्र में प्रविष्ट हुई हर मान्यता को खरे-खोटे की कसौटी पर कसना चाहिए और देखना चाहिए कि इनमें क्या उपयुक्त और क्या अनुपयुक्त है । अन्ध-विश्वासों से हमें पीछा छुड़ाना ही होगा, उनसे लाभ कुछ नहीं, हानि बहुत है । ऐसे ही अनुपयुक्त विश्वासों में एक है बहुचर्चित 'भाग्यवाद' । इस मान्यता पर विश्वास करने से हमारी क्रिया शक्ति कुंठित होती है, निराशा घेरती है, उत्साह शिथिल पड़ता है और हीनता की वृत्ति उदय होती है। आत्म-निरीक्षण, आत्म-शोधन और आत्म-विकास का अवसर ही चला जाता है । जब अभावों और असफलताओं के सम्बन्ध में अपनी त्रुटि होने की बात सोचने की अपेक्षा भाग्य-दोष मानकर मिथ्या आत्म-संतोष कर लिया जाय तो फिर कोई क्यों अपनी गलती ढूँढ़ेगा और क्यों उसे सुधारेगा ? इस जंजाल में दूसरों द्वारा ठगे जाने की पूरी-पूरी गुंजायश है । ग्रह-नक्षत्र के एजेन्ट आमतौर से ऐसे ही मूढ़-विश्वासियों को ग्रह-शांति के नाम पर बुरी तरह ठगते और अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं ।

भाग्यवाद हमें वस्तुस्थिति को समझने और उसका निराकरण करने की क्षमता से वंचित करता है । उससे हमारा विवेक कुण्ठित होता है और तर्क, विचार एवं खोजबीन करने में रुचि नहीं रह जाती । यह स्थिति मानवीय प्रगति में भारी बाधा है । अभावों और कठिनाइयों की वास्तविकता तभी समझ में आती है, जब उनका मूल कारण विदित हो और यह जानकारी तभी सम्भव है, जब मस्तिष्क की गतिशीलता को भाग्यवाद जैसी कुण्ठाओं ने अवरुद्ध न कर रखा हो । भलाई की प्रशंसा और बुराई की निन्दा होनी चाहिए । मनुष्य के कर्त्तव्य को उसकी उन्नति-अवनति के लिए उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए तभी तो वह अपने मार्ग निर्धारण में सावधानी बरतेगा, यदि भाग्यवाद की सरल आड़ मिल जाय तो हर आलसी, निकम्मा, कामचोर, काहिल, कुमार्गगामी व्यक्ति अपनी त्रुटियों को न तो स्वीकार करेगा और न सुधारेगा, वरन् जब दुष्परिणामों के कारण भर्त्सना सुनने का अवसर आवेगा तब चट से भाग्यवाद की आड़ लेकर अपने आपको निर्दोष सिद्ध करने का प्रयत्न किया करेगा । इस स्थिति से बचने के लिए यही उचित है कि हम विचारशील बनें और भाग्यवाद जैसी अनुपयुक्त, अविवेकपूर्ण और असंगत विचारधाराओं को अपने विचार क्षेत्र से हानिकारक झाड़-झंखाड़ों की तरह उखाड़ कर फेंक दें ।

कर्म से भाग्य का निर्माण—भाग्य का दूसरा नाम 'कर्म' भी है । कहते हैं—"हमारे करम में ऐसा ही लिखा था ।" कहते हैं "करम रेख नहि मिटै, करै कोई लाखों चतुराई" इन उक्तियों में कर्म शब्द का भी भाग्य के अर्थ में प्रयोग किया गया है । यही उचित भी है । जैसा कर्म किया जाता है, वैसा ही फल मिलता है । मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं ही है । वह जैसे भले-बुरे कर्म करता है, उसी के अनुरूप अपनी उन्नति-अवनति का पथ-प्रशस्त करता चलता है ।

करम में क्या लिखा है ? क्या लिखाकर लाये हैं ? इस खोज-बीन में समय नष्ट करना सर्वथा निरर्थक है । यदि भवितव्यता मिटने वाली ही नहीं है, तो भी उसका जानना हानिकारक है और यदि मिट सकती है तो भी उसके जानने की आवश्यकता नहीं है । मान लीजिए कि अपनी या अपने किसी प्रियजन की इतने दिन पश्चात मृत्यु होने वाली है यदि यह बात मालूम हो जाय तो इतने दिन पूर्व से ही शोक मनाना, दुखी एवं उद्विग्न रहना आरम्भ हो जायगा, निराशा छा जायेगी । या तो मोह बढ़ेगा या उपेक्षा । भविष्य जानने के कारण उत्पन्न हुई इस मानसिक अस्त-व्यस्तता के कारण साधारण दैनिक कार्यों में भी कठिनाई उत्पन्न होने लगेगी । स्पष्टत: क्षुब्ध व्यक्ति न तो किसी से ठीक तरह व्यवहार कर सकता है और न उसका कोई काम ही ठीक तरह हो पाता है । फलत: नये-नये दुष्परिणाम सामने आने लगते हैं । यदि यह बुरा भविष्य पहले से प्रतीत न हुआ होता तो अन्तिम समय तक सामान्य स्थिति बनी रहती और जो कष्ट होने वाला होता, समय पर हो लेता ।

यदि भाग्य किसी जप, पूजन आदि से टल सकता है, तब उसका कोई महत्त्व ही नहीं रहता । उपाय करने से जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बदल गया वह भवितव्यता कैसी ? उसे तो एक खाँसी-जुकाम जैसी छोटी-सी सम्भावना मात्र समझना चाहिए । जो साधारण दवा-दारू से अच्छे होते रहते हैं । थोड़ी-सी पूजा-पत्री करा देने पर जो शनिश्चर या राहु अपना दुष्परिणाम बन्द कर सकता है । जो सम्भावना किसी के आशीर्वादी वरदान या अनुष्ठान से टल सकती है उससे कुछ भी डरने की आवश्यकता नहीं है । उसे किसी और उपाय से भी टाला जा सकता है । जो जुकाम होम्योपैथी की दवा खाने से अच्छा हो सकता है, उसके लिये आयुर्वेद, ऐलोपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा जैसे उपचार भी कारगर हो सकते हैं । पूजन के अतिरिक्त सत्प्रयत्न और उत्साहपूर्ण परिश्रम भी वह उपाय हो सकता है जिससे हम अब तक की कठिनाइयों एवं बुरी परिस्थितियों को बदल सकें और भविष्य के लिए अशुभ सम्भावनाओं के स्थान पर आशाजनक परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकें ।

कर्म ही प्रधान समझें और कर्मठता अपनावें—वस्तुतः इस संसार में कर्म की ही प्रधानता है । भाग्य यदि कोई वस्तु होता भी हो तो उसे अपने कर्मों का प्रतिफल ही कहना चाहिए । कर्मों के द्वारा यदि बुरे भविष्य के बुरे परिणामों की स्थिति हमने उत्पन्न की है तो हमीं यह भी कर सकते हैं कि श्रेष्ठ कर्मों का सम्बल पकड़ें और उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करें । आहार में असंयम बरतने से पेट का दर्द हमने ही उत्पन्न किया; वह दर्द कोई अमिट भाग्य रेखा नहीं है । औषधि लेकर उसका उपचार करके जितने समय तक दर्द की सम्भावना थी उसे कम या समाप्त भी कर सकते हैं । इसी प्रकार यदि पिछले दिनों कोई अशुभ कर्म किये हैं और उनके फलस्वरूप बुरे भविष्य की सम्भावना बन भी गई तो नया सत्प्रयत्न उसे समाप्त भी कर सकता है । वाल्मीकि डाकू थे, उन्होंने जो दुष्ट कर्म किये थे, उनके फलस्वरूप उनका भविष्य अन्धकारमय एवं कष्टप्रद होना चाहिए था, पर जब उसने अपना जीवन-क्रम बदल दिया और सन्त बन गये तो उस कार्य-परिवर्तन के साथ-साथ उनका भाग्य-परिवर्तन भी हो गया । उन्हें नारकीय यातनाएँ नहीं सहनी पड़ीं, वरन् वे सम्मानपूर्ण, श्रेष्ठ एवं सुखी जीवन बिता सकने के अधिकारी बन गये । नये सत्कर्म आरम्भ कर देने से पुरानी भूल-चूकों पर पर्दा पड़ सकता है । टूटी-फूटी पुरानी मैली-कुचैली दीवार पर यदि सीमेन्ट, प्लास्टर, सफेदी आदि की व्यवस्था कर दी जाय तो वह फिर नई एवं सुन्दर दीखने लगती है । पिछले दुष्कर्मों का प्रायश्चित करके यदि भविष्य के लिए सत्कर्मों की क्रम-व्यवस्था बना ली जाय तो किसी का बुरे से बुरा भविष्य एवं भाग्य भी आनन्द एवं अच्छाई के रूप में परिणित हो सकता है ।

हमें व्यर्थ की शंका-आशंकाओं के जंजाल से निकलकर आशावान्, उत्साही, कर्मशील बनना चाहिए । यह विश्वास करना चाहिए कि मनुष्य का प्रयत्न एवं परिश्रम ही उसका भाग्य एवं भविष्य का निर्माण करता है । उसे किसी दूसरे से नहीं अपने से ही पूछना चाहिए ज्योतिषी की अपेक्षा हम अपना भाग्य अधिक अच्छी तरह जानते हैं, क्योंकि अपने को ही यह पता रहता है कि पिछले दिनों जीवन-क्रम क्या रहा है और उसका प्राकृतिक परिणाम क्या हो सकता है ? भविष्यवाणी का यही आधार सर्वोत्तम है । इसी प्रकार यदि भाग्योदय की आकांक्षा हो तो अपने मन देवता की मनौती मनानी चाहिए और उसे ही अपनी गतिविधियाँ सुधारने के लिए मनाना चाहिए ।

भाग्य और कुछ नहीं पुरुषार्थ की छाया मात्र है । कर्मशील व्यक्ति का भाग्य अनुचर की तरह उसके पीछे-पीछे फिरता है । गम्भीरतापूर्वक अपनी कार्य-पद्धति एवं विचारधारा में रहने वाली त्रुटियों को ढूँढ़ना चाहिए और उनके सुधारने के लिए तत्परतापूर्वक कटिबद्ध हो जाना चाहिए । हमारा भाग्योदय होकर रहेगा । भाग्यवान बनकर रहेंगे ।

अर्थ-लाभ के क्षेत्र में भाग्यवाद का जहर

अर्थ-लाभ का वैध और नैतिक तरीका एक ही है श्रम, पूँजी, साहस, सूझ-बूझ और धैर्य का समन्वित उद्योग । ये साधन, सुविधाएँ जिसके पास जितनी अधिक हैं, वह उतना ही अधिक अर्थ-लाभ कर सकता है । इस वैध और नैतिक तरीके के अतिरिक्त भी कुछ मार्ग ऐसे हैं जिससे अप्रत्याशित अर्थ-लाभ सम्भव होता है । व्यक्ति उपर्युक्त साधन, सुविधाओं और क्षमताओं से जिस चीज को अधिक महत्त्व देने लगता है वह है, भाग्य । एक रुपये की पूँजी लगा कर लाखों रुपये का स्वामी बन जाने की, एक ही रात में दस के सौ और सौ के हजार बना लेने की, बिना किसी माल के वायदा करके हजारों लाखों के वारे-न्यारे कर देने की महत्त्वाकांक्षा व्यक्तियों को कानूनी और गैर-कानूनी जुआ की ओर प्रोत्साहित करती है जिसके लिए जार्ज वाशिंगटन ने कहा है— "जुआ लालच का बेटा, दुराचार का भाई और बुराइयों का जनक है ।"

अर्थ-लाभ का वैध और दक्षिण मार्ग एक ही है, उद्योग । ऊपर बताया जा चुका है कि उद्योग के आधार क्या-क्या हैं । यह मार्ग लक्ष्य पर देर से पहुँचाने वाला भले ही हो पर नीति संगत यही है । भाग्य के सहारे एक दम धनवान हो जाने की बात सोचने वाले वाम मार्ग के लाखों पथिकों में से एक की ही कामना पूरी हो सकती है, किन्तु दक्षिण मार्ग के निष्ठावान पथिकों में से प्रत्येक की इच्छा पूरी हो जाती है ।

जुआ एक बुराई है । यह भी अन्य बुराईयों की तरह पहले सेवक बनकर सामने उपस्थित होती है और जब उसकी बात मान ली जाती है तो फिर मालिक ही बन जाती है और मनुष्य को अपना वशवर्ती बनाकर छोड़ती है । फिर वह उसे मनचाहा नाच नचाती है ।

मोटे तौर पर भाग्य के सहारे अर्थ-लाभ के तरीके—जुआ को दो भागों में बाँटा जा सकता है । एक तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकट और दूसरे प्रछन्न । प्रकट तो वह जुआ है जिसे सरकार ने अवैधानिक घोषित किया हुआ है । प्रकट जुआ वह है जो सरकार द्वारा गैर कानूनी करार नहीं दिया गया है, पर वह भी वैसा ही रोग है जैसा कि प्रकट जुआ । प्रकट जुआ को जहर कहा जाय तो प्रछन्न को मन्द विष कहना ठीक होगा । मार्ग दोनों ही गलत हैं । हानि दोनों ही से होती है, व्यक्ति की भी और समाज की भी ।

भाग्य के सहारे एक दम पैसे वाले हो जाने की कामना करने वाले लोगों को ठगने के लिए तेज दिमाग पर धूर्त लोगों ने कई गैर-कानूनी तरीके खोज निकाले हैं । मटका, दड़ा आदि ऐसे ही तरीके हैं । भारत में इन दिनों मटका नामक जुआ खूब चलता है । भारत में ही नहीं श्रीलंका, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बर्मा, सिंगापुर और लन्दन में भी इसके शिकार पाये जाते हैं ।

अनुमान है कि प्रतिदिन कोई दो-तीन करोड़ व्यक्ति करोड़ों रुपया मटकों पर लगते हैं । कितने ही कुख्यात व्यक्ति इस व्यापार को चलाते हैं, जिनके ऐजेंट सारे देश में फैले हुए हैं । इसके चस्के में पड़ कर लाखों करोडों व्यक्तियों का जीवन नारकीय हो चुका है । मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, उत्तर प्रदेश, हरियाणा आदि प्रान्तों तथा देश के कई अन्य शहरों में यह जुआ चोरी-छिपे चलता है । भाग्य पर विश्वास करने वाले करोड़ों लोग इस कुचक्र में फँसते हैं, जिसमें से सौ-पचास को थोड़ा बहुत लाभ होता है शेष तो लुट जाते हैं । जिन्हें मिलता भी है, वे फिर दूसरे-तीसरे दिन उन्हें भी दाँव पर लगा देते हैं और फिर खाली के खाली रह जाते हैं ।

इस चस्के में पड़े कई लखपति कंगाल हो गये और कई गरीब बेहाल हो गये । और तो और मजदूरी करने वाले कई मजदूर बीबी-बच्चों के लिए राशन नहीं खरीद कर दिन भर की कमाई इसमें लगा देते हैं और आशा करते हैं कि उसके चार गुने, पाँच गुने हो जायेंगे, पर निराशा ही हाथ लगती है ।

सट्टा बाजार शेयर बाजार में हजारों, लाखों के वारे-न्यारे करने वाले व्यापारी जो कभी कोठियों में रहते थे दर-दर के भिखारी हो जाते हैं । पैसे की तो नियति है, जैसा आता है, वैसा ही जाता है । इसकी हानि सटोरियों को ही नहीं समाज को भी कम नहीं भुगतनी पड़ती । इनकी सट्टे बाजारी का वस्तुओं के मूल्यों पर प्रभाव पड़ता है । सटोरियों द्वारा बढ़ाई हुई कीमतों से सामान्यजन त्रस्त हो जाता है ।

मटका चलाने वाले भी कहते हैं कि जब रेस खेलना, सट्टा खेलना आदि गैर-कानूनी है । स्वयं सरकार भी तो लाटरियाँ निकालती है तो मटके पर ही प्रतिबन्ध क्यों ? बात कुछ विचारने योग्य है । लाटरी से सरकार के राजस्व में तो अप्रत्याशित वृद्धि हो जाती है, पर क्या यह उचित है । आय तो सरकार को शराब पर लगाये जाने वाले कर और बनाई गयी शराब से भी होती है, पर क्या सरकार का शराब बेचना उचित है ? नैतिकता और सामाजिक स्वास्थ्य की दृष्टि से तो यह उचित नहीं कहा जा सकता ।

पिछले दिनों सन् १९८४-८५ में सरकार को आसाम, बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-काश्मीर, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल प्रान्तों में कुल मिलाकर लगभग ३६ करोड़ रुपयों की आय हुई जिसमें से पुरस्कार की राशि, व्यवस्था, खर्च, कमीशन आदि सब निकालने के बाद लगभग १७ करोड़ रुपये का विशुद्ध लाभ हुआ । इससे स्पष्ट है कि लगभग ३६ करोड़ ही टिकिट बिके । यदि एक आदमी ने औसतन दो टिकट ही खरीदे हों तो प्रायः १८ करोड़ व्यक्तियों का मन लखपती बनने को ललचाया और उन्होंने अपने पुरुषार्थ पर नहीं भाग्य पर विश्वास किया ।

जो लखपति बन गये उनमें से अनेकों को कुछ विशेष लाभ नहीं हुआ । पैसा जैसा आया था वैसा ही चला भी गया। बम्बई के डोंगरी इलाका के मोहम्मद अली को जून माह में एक लाख रुपये का लाटरी का दूसरा इनाम मिला, पर उसके पास एक वर्ष बाद भी बहुत पुरानी जर्जर इमारत का वही एक छोटा-सा गन्दा-सा कमरा है और वही फटा बिस्तरा, पलंग भी नहीं । बैंक में अब उनके पास मुश्किल से कुछ हजार रुपये जमा हैं जो भी बहुत शीघ्र समाप्त होने की स्थिति में हैं ।

एक लाख मिला तो कुछ भिखारियों को बाँटा, कुछ इधर-उधर के नाते-रिश्तेदार उधार ले गये जिन्होंने फिर नहीं लौटाया । जिन्होंने लिया उन्होंने भी यही सोचकर लिया, वापस नहीं करना है सो उन्होंने भी उसका उपयोग उड़ाने में ही किया । मोहम्मद अली ने दो कारें खरीदीं । वे खराब हुईं । उन्हें आधी कीमत पर बेच देनी पड़ीं फिर मसाला पीसने का धन्धा चलाया जिसमें घाटा पड़ा । फोकट का पैसा पर लगाकर उड़ता गया और अब सोचते हैं पहले होटल में बैरा थे सो लाटरी का पैसा खत्म होने पर फिर बैरा बन जायेंगे ।

जुआ तो जुआ है चाहे वह प्रकट हो या प्रछन्न, कानूनी हो या गैर कानूनी, शिष्ट हो या असम्मानजनक । 'मटका किंग' रतन लाल खत्री चलाता हो या सरकार चलाती हो, हानि ही होती है फेर में पड़ने वालों की । साथ ही समाज में श्रम के प्रति निष्ठा घटती है, अनैतिकता को प्रोत्साहन मिलता है । दाँव लगाने वालों को तो मिलती है निराशा ।

क्लब में रमी और फ्लेश के रूप में खेला जाय या रेस के घोड़े पर दाँव लगाया जाय, यह चस्का एक बार लगा तो आदमी को दिवालिया बनाकर ही छोड़ता है । बम्बई में चलने वाली रेस में दाँव लगा कर हजारों रुपये हारना हो या सरकार की लाटरी का एक रुपये का टिकिट खरीद कर रुपया गँवाना हो, यह चस्का है बुरा । यह एक बहुत बुरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदत है जो आगे चलकर बहुत बुरा परिणाम उपस्थित कर सकती है ।

युधिष्ठिर धर्मराज कहलाते थे, पर एक जुआ की आदत ने उन्हें ही नहीं उनके पाँचों भाइयों और द्रौपदी पर संकट ला दिया था । पूरे महाभारत का आधार उनका यह द्यूत कर्म था । कोई व्यक्ति शौकिया ही सही पैसों से रमी या फ्लेश खेलता है । लाटरी का टिकिट खरीदता है या और कोई प्रकट या प्रछन्न जुआ खेलता है तो कोई गारण्टी नहीं कि वह अगले दिनों उसे आदतन खेलने न लग जाय ।

पिता को लाटरी का टिकिट खरीद कर लखपति बनने का सपना देखते देख यदि पुत्र मटका या दड़ा खेलने का प्रयास करने लग जाय तो उसके लिए तो मटका के समर्थकों की तरह यह कहने को रह जायेगा कि लाटरी और मटका में कोई विशेष अन्तर क्या है ? दुस्साहस तो देखिये मटका के एजेंट इसे जुआ नहीं व्यापार कहते हैं ।

चोरी अन्ततः चोरी है, चाहे वह छोटी हो या बड़ी । जुआ भी तो उसी परिवार का सदस्य है जिसकी चोरी । इसे चाहे कोई व्यक्ति चलाये, जुआखोर संगठन चलाये या और कोई तन्त्र । व्यक्ति और समाज के लिए यह विघातक ही है । यह कोई अच्छी प्रवृत्ति नहीं है । श्रम का सम्मान, साहस की प्रतिष्ठा, सूझ-बूझ की महत्ता और धैर्य की उपयोगिता को स्वीकारने की बजाय हँसी-हँसी में ही सही या शौकिया ही सही इस ओर झुकना कुछ लाभ दे जायगा यह मानने, सोचने को कोई भी, कभी भी तैयार नहीं होगा ।

सरकार काला धन पकड़ने के पीछे पड़ी हुई है और काले धन वाले उसी के क्रिया-कलापों में अपनी गलियाँ खोज रहे हैं । उन्हें पता लगते ही कि अमुक व्यक्ति के नाम लाखों की या हजारों की लाटरी खुली है, वे उसके पास पहुँच जाते हैं टिकिट खरीदने के लिये, एक लाख के डेढ़ लाख दो लाख देकर वे अपने काले धन को सफेद धन में बदल देने का प्रयास करने लगते हैं । कभी उनकी दाल गलती भी है, कभी नहीं भी गलती ।

चाहे कोई भी फैलाये इस प्रकार के एक दम लखपती हो जाने के जाल पर जनता को सावधान रहना चाहिए । अपने हाथों पर भरोसा करना चाहिए । मेहतन से धन कमाने पर उसका मूल्य भी मालूम होता है तो उपयोग की तमीज भी आती है । ऐसा इनाम मिल भी जाय, दुगुने-चौगुने या दस गुने हो भी जायें तो भी क्या ? हजारों लाखों को कोई ठग कर दस पाँच को उसका थोड़ा-सा अंश दे दे तो पाने वालों को भी क्या लाभ हो सकता है । ऐसे पाने से तो न पाना ही बेहतर है ।

हमारे देश में पहले से ही श्रम को सम्मानित दृष्टि से नहीं देखा जाता । 'जो जितना कम काम करे वह उतना ही बड़ा आदमी' ऐसी भ्रान्त धारणाएँ हमारे देशवासियों के दिल दिमाग में बैठी हुई हैं । उन्हें भाग्यवादी नहीं पुरुषार्थी बनाने की आवश्यकता है । सिद्धान्ततः इसे अच्छी बात नहीं कहा जा सकता । इसका परिणाम भी कोई अच्छा होने वाला नहीं । मटके, दड़े आदि को सरकार ने गैर कानूनी करार दे रखा है । फिर भी वे धड़ल्ले से चल रहे हैं । इस दिशा में सरकार को दृढ़ व्यवस्था करनी चाहिए । साथ ही प्रछन्न जुआ पर भी प्रतिबंध नहीं अंकुश तो लगाना ही चाहिए । लाटरी के माध्यम से राजस्व की आपूर्ति करने की अपेक्षा बचत योजनाएँ चला जनता का आर्थिक उत्थान करने की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए । राष्ट्रीयता की भावनाएँ बढ़ेंगी तो अपने आप राजस्व बढ़ जायेगा, जब सरकार चाहेगी । देश की प्रगति का आधार मात्र राजस्व की आय नहीं होती जनता का नैतिक बल उससे हजार गुना काम करता है । यदि इस बल को बढ़ाने की ओर ध्यान दिया गया तो अर्थबल तो अपने आप बढ़ जायेगा ।

जुआ समाज का बड़ा शत्रु है

मानव-प्रकृति में जो कई प्रकार के दुर्गुण पाये जाते हैं उनमें अपहरण की वृत्ति भी सामान्यतः सर्वत्र देखने में आती है । यद्यपि शास्त्रकारों ने अति प्राचीनकाल से इस बात का उपदेश दिया है कि **'पर द्रव्येषु लोष्ठवत्'** अर्थात् कभी दूसरे के धन की आकांक्षा मत करो और उसे मिट्टी के ढेले के समान उपेक्षणीय मानो, परन्तु इस उपदेश पर आचरण करने वाले सदा अंगुलियों पर गिनने योग्य रहे हैं । उस समय की बात तो छोड़ दीजिए कि जब मनुष्य पाशविक अवस्था में था और दूसरे को मारकर उसका सर्वस्व अपहरण कर लेने में भी कोई दोष नहीं समझता था, पर बाद में जब वह 'सभ्य' और 'धार्मिक' बन गया, तब भी दूसरों की सम्पत्ति ठगने या छीन लेने की प्रवृत्ति बहुसंख्यक लोगों में पाई जाती थी ।

फिर भी जहाँ तक प्राचीन साहित्य का अध्ययन करने से पता चलता है उस समय सिक्कों का अधिक प्रचलन न होने और खरीदने-बेचने की प्रथा के बहुत सीमित होने के कारण सम्पत्ति का रूप आजकल के समान न था और सामान्य लोगों को वर्तमान समय की तरह छीन-झपट करने की सुविधा न थी, पर जब संसार में सिक्कों का प्रचार बढ़ा और रुपया, अशर्फी और आजकल नोटों के रूप में धन के सहज ही हस्तान्तर होने की एक के पास से दूसरे के पास पहुँच सकने की सुविधा हो गई, तब से यह प्रवृत्ति दिन-दूनी और रात-चौगुनी बढ़ रही है । इस समय मनुष्य का लक्ष्य ही यह हो गया है कि किसी भी तरह धन संग्रह किया जाय, क्योंकि हर प्रकार के सुखोपभोग का, सुख सामग्री प्राप्त करने का प्रत्यक्ष साधन वही दिखलाई पड़ रहा है । इसलिए नीति और धर्म के सिद्धान्तों का इतना विकास और प्रचार हो जाने पर भी अब भी चोरी, डाका, लूटमार, ठगी आदि के द्वारा दूसरों का धन अपहरण करने में संकोच नहीं करते, पर इन सब कामों में खतरा जरूर रहता है, शासन संस्था इनको रोकने के लिए नियम बनाती रहती है और जो कोई उनके अनुसार दोषी सिद्ध हो जाता है वह दण्डित होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इसलिए चतुर और सावधान लोग ऐसी तरकीब से काम लेने की कोशिश करते हैं जिससे दूसरे के धन का अपहरण भी किया जा सके और सरकारी कायदे, कानूनों के चक्कर से भी बचा जा सके । जुआ की प्रवृत्ति का बढ़ना इसी परिस्थिति का परिणाम है ।

अनेक लोग समझते हैं कि जुआ केवल वही है जो किसी फड़ पर बैठकर कौड़ियों, गोटों या पासों द्वारा खेला जाय । यह ठीक है कि जुआ का पुराना रूप वही है और अब भी पुराने ढंग के साधारण व्यक्ति उसी तरह का जुआ खेला करते हैं, पर उसे भी कानून द्वारा अवैध घोषित कर दिया है और जो लोग उस तरह का जुआ खेलते पकड़े जाते हैं, वे राज्य नियमों द्वारा जुमनि या कैद का दण्ड पाते हैं । जिनको इस दुर्व्यसन की लत पड़ गई है ऐसे लोग तो जब कभी मौका लगता है तभी जुआघर में पहुँच जाते हैं, पर अन्य लोग जो सदा जुआ नहीं खेलते, दिवाली के अवसर पर इस प्रकार जुआ खेलना आवश्यक समझते हैं । उन्होंने इसे भी एक 'धर्म' मान लिया है । सच पूछा जाय तो यह धर्म भी घोर अधर्म है, क्योंकि अधिकांश जुआरियों को जुआ की लत इस दिवाली के दिन खेले जाने वाले जुए से ही लगती है और बाद में सुविधानुसार वह धीरे-धीरे बढ़ती जाती है ।

पर इस प्रकार का कौड़ियों और गोटों से खेला जाने वाला जुआ अब साधारण अशिक्षित अथवा असभ्य लोगों का काम समझा जाता है । शिक्षित, सभ्य और चतुरचालाक समझे जाने वाले लोगों ने अब इस दुष्कर्म को भी अपनी विद्या-बुद्धि के बल से ऐसा परिष्कृत रूप दे दिया है कि जिससे न तो उसको निन्दनीय कहा जाय और न वह सरकारी कानूनों के फन्दे में आ सके । सट्टा, लाटरी, घुड़दौड़, फीचर, दड़ा, प्रतियोगिता आदि विविध नामों और नये-नये तरीकों से जुआ खेला और खिलाया जाता है । इसमें बेवकूफ लोग ही हमेशा फँसते हैं, अपना धन खोते हैं और चालाक लोग नफा कमाते रहते हैं । कार्नीवाल आदि में गेंद फेंककर या निशाना लगाकर जुआ खिलाया जाता है जिसको बुद्धि का खेल कहकर निर्दोष सिद्ध करने की कोशिश की जाती है, पर वहाँ अनेक मनुष्य घण्टे, आध घण्टे के भीतर हजारों रुपया हार जाते हैं । घुड़दौड़ को भी कानूनन जुआ नहीं माना जाता, पर उसमें अनेकों लखपती, करोड़पती देखते-देखते दरिद्री बन गये । दड़ा का जुआ जो आजकल पश्चिमी उत्तर प्रदेश के नगरों में जोर पकड़े हुए, गरीबों का गला काट रहा है । इसमें बिल्कुल छोटे मजदूर, खौंमचे वाले, इक्के, ताँगे, रिक्शे वाले, तरकारी और लकड़ी तथा घास बेचने वाले तक दो-चार आना फेंक कर ही चले जाते हैं । कभी-कभी किसी को सौ-पचास मिल जाता है तो उसे देखकर अन्य सैकड़ों लोग आकर्षित होकर दड़ा लगाते हैं, पर सौ में से पिच्यानवें व्यक्ति अपना पैसा गँवाकर ही आते हैं ।

जुआ का व्यसन हर तरह से हानिकारक और पतनकारी है । जो हारता है वह तो तरह-तरह की आपत्तियों में फँस जाता ही है, पर जो जीतता है वह भी उसे मुफ्त का माल समझकर तरह-तरह के दुर्व्यसनों और खराब कामों में खर्च कर देता है । इससे उसकी आदत बिगड़ती है और बाद में अपनी कमाई को भी हानिकारक व्यसनों में खर्च करने लग जाता है । एक जुआ ही नहीं जितना भी धन किसी प्रकार के अनीति के कामों द्वारा कमाया जाता है वह प्राय: इसी प्रकार बर्बाद होता है । यही कारण है कि चोर, डाकू, उठाईगीर, ठग, जेबकतरे यद्यपि काफी धन पा जाते हैं, पर दो-चार दिन बाद पहले की तरह ही भूखे-नंगे दिखाई पड़ते हैं । एक साधारण गृहस्थ सौ-पचास रुपया मासिक में भी सुखपूर्वक जीवन निर्वाह कर लेता है, पर ऐसे दुष्कर्म वाले सैकड़ों रुपया पा जाने पर भी अभावग्रस्त ही बने रहते हैं ।

समाज और देश की दृष्टि से भी यह दुष्प्रवृत्ति बड़ी हानिकारक है । जुआरी व्यक्ति कभी अच्छा नागरिक और समाज का उपयोगी सदस्य नहीं बन सकता । वह तरह-तरह से समाज में अनाचार का बीज वपन ही करेगा । बड़े जुआरी, जो बड़े-बड़े नगरों में शानदार दुकानों पर बैठकर सट्टे का काम करते हैं और 'सेठजी' कहलाते हैं प्राय: बाजार के भावों में उथल-पुथल पैदा करते रहते हैं । उनकी दिखावटी खरीद-फरोख्त के कारण जीवनोपयोगी वस्तुओं का मूल्य व्यर्थ ही बढ़ जाता है, जिससे उनकी जेब तो भर जाती है, पर सर्वसाधारण को घोर असुविधा सहन करनी पड़ती है । लोग इसे व्यापार कहते हैं, पर समाज के हित की दृष्टि से विचार किया जाय तो यह साफ तौर पर जुआ-चोरी है, जिसको कोई न्यायशील और जनकल्याण का ध्यान रखने वाली सरकार कभी चलने नहीं दे सकती । समाज हितैषी व्यक्तियों का कर्त्तव्य है कि इन तमाम बड़े और छोटे जुओं को समझा-बुझाकर और आन्दोलन द्वारा बन्द कराने की चेष्टा करें और समाज में इस धारणा का प्रचार करें कि किसी प्रकार की हराम की कमाई नहीं, वरन् ईमानदारी का पैसा ही मनुष्य को सुख और शांति प्रदान कर सकता है ।

जुआ एक सत्यानाशी विषवृक्ष

एक समय था जब हर आदमी यही सोचता था कि उसे अपने पसीने की, बीसों अंगुलियों की कमाई खानी चाहिए । हराम की कमाई खाना एक लज्जाजनक पाप कर्म माना जाता था । जिस पैसे के कमाने में मनुष्य का भरपूर शारीरिक और मानसिक परिश्रम न लगा हो, उसे प्राप्त करना, उसका उपयोग करना उसके विचार और विवेक में चरित्र और व्यवहार में भारी गड़बड़ी पैदा करने वाला सिद्ध होता है । हरामी, हरामखोर शब्द एक गाली के रूप में प्रयोग होता है । बिना परिश्रम की कमाई निश्चय ही ऐसी चीज है, जिसकी निन्दा ही की जानी चाहिए । वह अनैतिक है और समाज की व्यवस्था में भारी बाधा उत्पन्न करती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आज लोगों की विचारधारा उलट गई है । हर आदमी अन्धाधुन्ध खर्च करना चाहता है । विलासिता और शान-शौकत में एक दूसरे से अग्रगामी बनना चाहता है । इसकी पूर्ति उचित साधनों से बीसों अंगुलियों की कमाई से सम्भव नहीं, अतएव कोई सरल तरीका ढूँढ़ता है । इन तरीकों में चोरी, बेईमानी, लूट, डकैती, ठगी, शोषण, भ्रष्टाचार, रिश्वत आदि तरीके प्रसिद्ध हैं, पर इनमें थोड़ी कठिनाई यह है कि इसमें प्रतिपक्षी से विरोध मोल लेना होता है, संघर्ष की सम्भावना रहती है और यह बातें कामून द्वारा निषिद्ध होने के कारण पकड़े जाने पर राजदण्ड तथा बदनामी का भी भय रहता है । इसलिए इन कामों को खुले रूप में करने की हिम्मत हर किसी की नहीं पड़ती । कमजोर तबियत के आदमी इन बातों को कभी-कभी मौका मिलने पर थोड़ी मात्रा में ही कर पाते हैं । इससे जो कोई कमाई हो सकती थी, उससे उन्हें सन्तोष नहीं होता ।

इन बातों का बचाव करते हुए हराम की कमाई करने का एक आसान तरीका 'जुआ' है । इसमें कानूनी जोखिम है तो पर बहुत थोड़ा है । पकड़े जाने पर थोड़ा-सा जुर्माना देकर पीछा छूट जाता है । वह पकड़ा जाना भी आसान नहीं, क्योंकि जो लोग खेलते हैं उनमें से दोनों ही पक्ष में स्वार्थ समान होते हैं । उनमें से कोई प्रतिपक्षी नहीं होता जो अपने को शोभित समझे और विरोध खड़ा करे । यह गुपचुप हर जगह हो सकता है, होता है । इसलिए जुआ एक व्यापक बुराई के रूप में सारे समाज में बुरी तरह फैलता रहा है । मुफ्त का माल प्राप्त करने की नीयत से लोग जुए पर दाँव लगाते हैं और आशा करते हैं कि उन्हें तुरन्त ही लगाए हुए दाँव की अपेक्षा दस गुना, सौ गुना या हजारों गुना लाभ मिलेगा ।

अखबारों में छपने वाली शब्द प्रतियोगिता में, तरह-तरह की लाटरी, घुड़दौड़, ताश का, कौड़ी का, पाशे या गोटी जुआ, सट्टा, फीचर, दड़ा, मटका आदि के रंग रूप तरीके अलग-अलग हैं, पर उद्देश्य एक ही है । व्यापार क्षेत्र में वायदे के सौदे के नाम पर यही सब होता है । तेजी मन्दी की भावी कल्पना के आधार पर लोग दाँव लगाते हैं और भाग्य भरोसे लाभ की आशा लगाये बैठे रहते हैं । जिस कार्य में लाभ-हानि की कोई निश्चित प्रणाली न हो, केवल 'संयोग' ही जिनका आधार हो वे कार्य 'जुआ' की श्रेणी में आते हैं । चाहे वे कानूनी पकड़ में आते हों या न आते हों । कार्नीवाल सरकसों में, क्लबों में कानूनी पकड़ से बचकर अनेकों तरह के जुए होते हैं, बुलियान एक्सचेंज चेम्बर के नाम पर सेठ लोग वारे-न्यारे करते हैं, यह प्रक्रियाएँ राज्य-नियम के विरुद्ध भले ही न हों, परन्तु परिणाम लगभग समान ही होते हैं । इनके मूल में भावनाएँ भी प्राय: एक ही काम करती हैं । 'कम समय में बिना परिश्रम के अधिक लाभ कमाना ।' यह मनोवृत्ति निश्चित रूप से अनैतिक है । इसका परिणाम सभी दृष्टियों से हानिकारक है । हारा हुआ जुआरी एक ही झटके में गरीब हो जाता है । उस हार के परिणाम से बचने के लिए वह छटपटाता है और उसी मार्ग से धन लौटाना चाहता है जिससे गँवाया था । यदि दाँव फिर भी उलटा ही पड़ा तो गरीबी और कर्जदारी का बोझ और भी अधिक हो जाता है, जिससे उसकी आर्थिक कमर ही टूट जाती है । यदि व्यापार में स्वाभाविक घाटा होता है तो धीरे-धीरे ही होता और जमा पूँजी कई वर्ष तक चलती है, पर जुआ सट्टा तो दो चार दिन में ही अमीर को गरीब बना देता है । आटे की गोली के लोभ में मछली कील निगल जाती है और अपनी जान जोखिम में डालती है । हारे हुए जुआरी को इस मूर्ख मछली की श्रेणी में गिना जा सकता है ।

जीता हुआ जुआरी और भी खतरनाक है । मुफ्त में, अनायास ही बिना परिश्रम के मिला हुआ धन मनुष्य को अन्धा बना देता है । खर्च करने में उसे जरा भी दर्द नहीं होता और उस हराम की कमाई को जल्द से जल्द उड़ा देने के लिये बेचैन बना फिरता है । ऐसा जुआरी ढूँढ़े न मिलेगा जो दाँव में मिले हुए पैसे को गाढ़ी कमाई की तरह सुरक्षित रखे और उसको केवल उचित कार्यों में ही खर्च करे । ऐसी शराब मिलनी मुश्किल है जिसमें नशा न हो, ऐसी हराम की कमाई भी कहीं नहीं देखी जाती जो फिजूलखर्ची के कुमार्गगामिता के विचार पैदा न करे । एक बार जुए में कुछ कमा लेने पर जीते जुआरी का हौंसला बढ़ जाता है, वह और अधिक कमाने के लालच में बार-बार दाँव लगाता है और अन्त में एक दिन ऐसा भी अवश्य आता है, जब हार का संयोग आवे और वह सारी कमाई ब्याज समेत चली जाय ।

जुए की हार और जीत दोनों ही घातक सिद्ध होती हैं । जो धन ईमानदारी, से परिश्रम से, पसीने से नहीं कमाया गया है, वह फिजूलखर्ची में तो उड़ता ही है साथ ही ईश्वरीय विधान के अनुसार उसके बहुत शीघ्र नष्ट होने के दूसरे कष्टदायक साधन भी बन जाते हैं । बीमारी, मुकदमा, शत्रुता, कोई आकस्मिक हानि, कुटुम्बी, रिश्तेदारों में से किसी की विशेष आवश्यकता जैसे कई अवसर सामने आ खड़े होते हैं और उनमें अनायास ही वह मुफ्त की कमाई खर्च हो जाती है । अनीति के उपार्जित धन को पाकर कोई फलता-फूलता नहीं, ऐसा पैसा किसी के पास देर तक ठहरता नहीं । चोर, उठाईगीरे, जेबकट, जुआरी रोज ही ढेरों पैसा लाते हैं, यदि इस धन में ठहरने की शक्ति होती तो सारे उठाईगीरे और जेबकट, सभी चोर और जुआरी अब तक लखपती-करोड़पती हो गये होते, पर होता इसके सर्वथा विपरीत है । वे सदा अभावग्रस्त और खाली हाथ ही देखे जाते हैं, जब देखो तब पैसे की तंगी की ही शिकायत करते रहते हैं । जो कमाकर लाते हैं वह तो चार दिन भी उनके पास ठहरने नहीं पाता । हराम की कमाई सदा इसी प्रकार बरबाद होती रही है, आगे भी यह ईश्वरीय विधान बदलने वाला नहीं है ।

जुआ खेलना, एक अनैतिक कार्य है । जैसे अन्य अपराध व्यवसायी जरायमपेशा लोग अपना विश्वास खो बैठते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं, उसी प्रकार जुआरी का भी कोई विश्वास नहीं करता । चाहे उसे किसी आवश्यक और उन्नति के लिए ही आर्थिक आवश्यकता क्यों न पड़े, पर दूसरे लोग यही समझते हैं कि इसे जुए के लिए जरूरत पड़ रही होगी । कोई बहाना बनाकर सहायता माँगता है । देने वाला सोचता है कि यदि मुझसे पैसे लेकर यह जुए में हार गया तो पैसा भी डूबेगा और बदनामी भी होगी । लोग मूर्ख बतावेंगे और कहेंगे जुआरी को दिया पैसा डूबने ही वाला था, अब माँगने या अफसोस करने की क्या बात है ? देखा गया है कि जुआरी कठिन आवश्यकता के समय भी दूसरों की सहायता से वंचित रह जाते हैं और अपनी कठिनाई में अकेले असहाय पड़ जाने के कारण भारी कष्ट भोगते हैं ।

हराम का पैसा प्राप्त करने का चस्का ऐसा है जो जुए तक ही सीमित नहीं रहता । यह विचार और विश्वास धीरे-धीरे विकसित होता है और वह अन्य प्रकार से भी अनुचित धन प्राप्त करना वैसा ही स्वाभाविक मानता है जैसा जुए से । धीरे-धीरे बेईमानी के अन्य कामों में उसका दिल खुलता जाता है और वह क्रमशः अधिक अनैतिक, अधिक बेईमान बनता जाता है । जुआरी के लिए चोरी करना बायें हाथ का खेल है । बहुधा वे करते भी ऐसा ही हैं । जब पैसे नहीं मिलते तो घर की चीजें, स्त्री के जेवर चुरा ले जाते हैं और उन्हें बेचकर दाँव खेलते हैं । घर में चोरी करने के बाद बाहर वालों पर हाथ साफ करना उनके लिए कुछ कठिन नहीं रहता । बीसियों आदमियों से वे तरह-तरह के बहाने बनाकर कर्ज लेते हैं और फिर चुकाने का नाम नहीं लेते । ठगी, धोखाधड़ी, चोरी, डकैती, जो भी उनके लिए सम्भव और सुगम होता है वह सब कुछ करने लगते हैं । जुआ आरम्भ में छोटा अपराध हो सकता है, पर धीरे-धीरे वह अनेक बुराइयाँ, अनेकों दुष्प्रवृत्तियाँ पैदा कर देता है । मनुष्य के चरित्र को गिराने के लिए यह एक विष बीज के समान है जिसके फलने-फूलने पर जीवन में सर्वत्र विषैलापन पैदा हो जाता है ।

इतिहास साक्षी है कि राजा नल जैसे बुद्धिमान राजा की दुर्गति जुए के कारण हुई । पांडवों ने अपना राज्य गँवाया, वनवास भोगा, युद्ध की आग में झुलसे, द्रौपदी का अपमान कराया । उन्हें क्या-क्या कष्ट नहीं सहने पड़े ? जुए से मनुष्य ही नहीं बैल तक हारा है । जुए का भार लादे-लादे बेचारे पशु का जीवन ही भार बन जाता है ।

तेजी मन्दी का सौदा, वायदे के सौदे देश की आर्थिक स्थिति जैसी नाजुक समस्या के साथ खिलवाड़ करने के लिये कुछ लोगों को खुली छूट देना है । समाज का कर्त्तव्य है कि इसके विपरीत वातावरण पैदा करे और सरकार को इस पर प्रतिबंध लगाने के लिए विवश करे । सटोरिये लोग कृत्रिम मन्दी और तेजी उत्पन्न करते हैं, उससे वस्तुस्थिति के विपरीत परिस्थिति उत्पन्न होने से देश का आर्थिक ढाँचा लड़खड़ा जाता है । साधन सम्पन्न सटोरिये बड़े पैमाने पर अन्न, वस्त्र आदि जीवनोपयोगी चीजों का सट्टा करके वस्तु स्थिति के विपरीत मनमानी तेजी मन्दी उत्पन्न कर सकते हैं । इससे उत्पादकों और उपभोक्ताओं का स्वार्थ खतरे में पड़ता है, उन लोगों की आर्थिक स्थिति बर्बाद होकर इन सटोरियों की तिजोरी भरती है । इस अस्वाभाविक कमाई में लगे हुए सटोरिये भी सुन्द, उपसुन्द असुरों की तरह आपस में ही कट-मरकर बर्बाद होते रहते हैं । जुए की तरह सट्टे में भी हार-जीत होने के कारण कोई भी अच्छा व्यवसायी दिवालिया हो सकता है और उसके कारोबार में लगे हुए अनेकों कारीगर, मजदूर एवं उत्पादक मुसीबत में पड़ सकते हैं । ऐसी आकस्मिक हलचलें पैदा होते रहना राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है । समाजवादी देश सट्टे का उन्मूलन कर चुके हैं, पूँजीवादी स्वार्थों का जहाँ बोल-बाला है, वहाँ ही यह धाँधली चल रही है । हमारा कर्त्तव्य है कि इस समस्त जुये-सट्टे के खतरे के विरुद्ध जनमत जाग्रत करें और राष्ट्र के आर्थिक जीवन में से इस बुराई का अन्त करावें ।

जुआ देखने में छोटी बुराई प्रतीत हो सकती है । पर इसके मूल में वह घातक मनोवृत्ति काम करती है जो किसी भी समाज की आर्थिक एवं नैतिक स्थिति को बर्बाद करने के लिए जलती हुई चिनगारी का काम करती है । हराम की कमाई करने का लालच निश्चित रूप से समस्त पापों का जनक है । जुआ इस दुष्प्रवृत्ति को भड़काने का एक प्रमुख माध्यम है । प्रश्न यह नहीं है कि कौन हारा-कौन जीता ? किसे हानि हुई ? किसने कमाया ? तथ्य एक ही है कि हारने और जीतने वाले दोनों ही पक्ष हराम की कमाई खाने की नीयत बनाते हैं । यह मनोवृत्ति जितनी ही विकसित होगी उतना ही हमारा सर्वतोमुखी सत्यानाश होगा । जुआ सत्यानाश की जड़ है ।

प्रत्येक विचारशील व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि इस अनैतिक मनोवृत्ति को, इस आर्थिक बर्बादी की प्रक्रिया को रोकने के लिए शक्ति भर प्रयत्न करे । जिन्हें यह लत पड़ गई है, उन्हें समझा-बुझाकर इसे छोड़ने के लिए समझावें । सभा, व्याख्यान, प्रवचन, पर्चे, पोस्टर, भजन-गान आदि प्रचारात्मक तरीकों से या व्यक्तिगत परामर्श से इस बुराई की हानियाँ लोगों को समझावें । इसे छोड़ने की प्रतिज्ञाएँ करावें । साथ ही सरकार पर भी जोर डालना होगा कि जो निर्जीव कानून जुआ के विरुद्ध बने हुए हैं उन्हें कड़े करें । वर्तमान कानून एक दिल्लगीबाजी मात्र है, उसमें जो ढीलपन भरी है उससे कोई भी अपराधी आसानी से अपने को बचा सकता है । सबूत होने पर दो-चार रुपया जुर्माना हो भी गया हो तो उससे जुआरी का क्या बनता-बिगड़ता है । इस सम्बन्ध में जहाँ जनमत जाग्रत करने की आवश्यकता है, वहाँ कानूनी कड़ाई भी अपेक्षित है ।

जहाँ-जहाँ यह सत्यानाशी विषवृक्ष पनप रहा हो, वहाँ इसके उन्मूलन के लिए इसके विरुद्ध व्यापक विचार-प्रसार करना चाहिए और संगठित होकर इसके नाश का प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि आज के युग में संगठन ही एक ऐसा बल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है जिसके द्वारा ऐसी सामाजिक बुराइयाँ दूर की जा सकती हैं ।

जुआ-सट्टे का अनैतिक व्यापार बन्द हो

इतिहास बतलाता है कि जब पांडवों ने हस्तिनापुर का अपना राज्य अत्यंत वैभवशाली बना लिया, भगवान् श्री कृष्ण की सहायता से अश्वमेध यज्ञ करके अपनी विजय पताका समस्त संसार में फैलादी तो कौरव उनसे ईर्ष्या करने लगे और पांडवों को नीचा दिखाने के उपाय सोचने लगे । जब उन्हें कोई अन्य उपाय न सूझा तो उनके मामा शकुनी ने दुर्योधन को यह सलाह दी कि युधिष्ठिर को जुआ खेलने के लिये आमंत्रित किया जाय । जुआ खेला गया, जुआ खेलने में जहाँ शकुनी अत्यंत चतुर और अभ्यस्त था वहाँ युधिष्ठिर और उनके भाई उसमें निरे बुद्धू थे, फलतः युधिष्ठिर की जुए में हार हुई, हार भी इतनी कि वह न सिर्फ जुए में अपना सब कुछ ही हार गये वरन् अपने आपको, अपने चारों भाइयों व अपनी पत्नी द्रौपदी को भी जुए के दाँव पर हार बैठे जिसके कारण महाभारत के युद्ध का बीज उत्पन्न हुआ ।

जुए की एक घटना ने भारत में वह महाभारत कराया था जिसमें १८ अक्षौहिणी सेना कौरव और पांडवों की युद्ध भूमि में काम आ गई थी । जितना नर संहार उस युद्ध में भारत में हुआ था, उतना आज तक किसी युद्ध में नहीं हुआ, लेकिन आज कल तो जुआ और सट्टा ऐसा साधारण हो गया है, जैसे कि हम अपने जीवन के अन्य कार्य करते हैं ।

जुआ और सट्टे के पीछे केवल एक ही भावना काम करती आई है कि मनुष्य बिना मेहनत किए क्षणभर में धनवान बनने की इच्छा करता है । इसके लिए वह अपने भाग्य के सहारे अपना थोड़ा-सा पैसा दाँव पर लगाता है और आशा करता है कि उस दाँव को जीता कि वह धनवान बना । अतः मोटे रूप में जुआ और सट्टा बिना परिश्रम किए धन कमाने की भावना का मूर्तरूप है ।

इस लेख में हम आजकल होने वाले सट्टे का ही विशेष रूप से विवेचन करके यह जानने की चेष्टा करेंगे कि सट्टा क्या है ? कितने प्रकार से होता है और यह समाज के लिए कितना हानिकारक है ?

जिस प्रकार जुआ के एक नहीं सैकड़ों रूप और तरीके हैं, जिस प्रकार जुआ कौड़ियों, ताशों, गोटियों चूड़ियों, चिड़ियों, गेंदों आदि अनेक तरह से खेला जाता है और उसमें तत्काल हार-जीत होती है, उसी प्रकार सट्टे के भी विभिन्न तरीके हैं, परन्तु हम सट्टे को मोटे रूप में दो भागों में बाँट सकते है— पहले व्यापारिक सट्टा जिसमें व्यापारी लोग सोना, चाँदी, गुड़, गल्ला आदि का सट्टा करते हैं । व्यापारिक सट्टे के लिए व्यापारिक संस्थान जिन्हें व्यापार मण्डल या काटन एक्सचेंज बुलियन एक्सचेंज आदि कहते हैं के माध्यम से होता है । इस सट्टे में विशेष बात यह होती है कि बेचने वाला माल नहीं देता और न खरीदने वाला ही माल की डिलीवरी लेता है । यों ही चाँदी सोने की सिलों के भाव की खरीद-बेच होती है और यह खरीद बेच वर्तमान व भविष्य दोनों के भावों की होती है । इसमें मुख्यतः तीन पक्ष होते हैं खरीदने वाले, बेचने वाले व बीच के दलाल जो इन सौदों को कराया करते हैं । इस सट्टे में बेचने वाला व खरीदने वाला किसी भी वस्तु के भविष्य में क्या भाव होने हैं इसका अटकल लगाकर पर्चे खरीदते, बेचते हैं और उन पर्चों पर हानि लाभ का कटान उसी मास की पूर्णिमा या अगले मास की पहली तारीख को हो जाता है ।

इस प्रकार माल की वास्तविक आमद रफ्त हुए बिना ही सट्टे के कारण कभी-कभी इतनी असाधारण तेजी-मन्दी आ जाती है कि न सिर्फ हजारों व्यापारी ही बिगड़ जाते हैं, वरन् लाखों-करोड़ों गरीब देशवासियों का जीवन संकट में पड़ जाता है ।

दूसरे प्रकार का सट्टा वह है जिसका सम्बन्ध आम गरीब, अनपढ़ और लालची जनता से है । इस सट्टे को घड़े का या हंडिया का सट्टा भी कहते हैं । इसमें सट्टा लगाने वाला व सट्टा खाने वाले दो पक्ष मुख्यतः होते हैं । लोग १ से ९ तक की गिनती के अंकों का सट्टा लगाते हैं या १ से १०० तक के अंकों में से किन्हीं नम्बरों का धड़ा लगाते हैं । अंक लगाने वाले को उसका लगाया हुआ अंक आ जाने पर एक रुपया के नौ रुपया मिलते हैं व उसका धड़ा आ जाने पर स्थानीय बाजार भाव के मुताबिक एक रुपये से दो रुपये तक के सौ रुपये मिलते हैं । सुनने में बात बड़ी अच्छी लगती है कि दोपहर को एक अंक पर एक रुपया लगाया और रात को ही नौ रुपये मिले गये या एक कोई धड़ा एक रुपये का अभी लगाया और चंद घंटों में सौ रुपये खनखनाते हुए आ गये, जबकि रात दिन जी तोड़ मेहनत करने पर भी रुपया दो रुपया कठिनाई से मिल पाते हैं । क्या हुआ इस सट्टे में मिलने वाले धन के लिए किसी बाबा को सुलफे की दम लगवानी पड़ी, किसी देवता के सामने धड़ा फल जाने पर चोला चढ़ाने की मनौती कर दी अथवा किसी ज्योतिषी महाराज से सट्टा पूछने के लिए उसके दो घंटे पैर दबाने पड़ गये ।

देखने लायक सूरत तो तब होती है, जबकि कोई लगाने वाला सट्टा खुलने पर सटोरिया महाराज की दूकान पर जाकर सुनता है कि उसका लगाया हुआ दाँव खाली गया और जब वह देखता है कि जो दो रुपये उसने दिन भर कड़ी मेहनत करके अपने बच्चों का जाकर उनका पेट भरने के लिए कमाये थे, वे उसी मृगतृष्णा के कारण सट्टा खाने वाले लालाजी के पेट में शराब पीने के लिए चले गये और उसके बच्चों को भूख से बिलबिलाते हुए यों ही अगले चौबीस घंटे बिताने पड़ेंगे तो उसके पैरों के नीचे से जमीन धसक जाती है, उसका मुँह लटक जाता है । उस पर मुरदनी छा जाती है ।

सट्टे का यह रोग इतना फैल गया है कि न सिर्फ शहरों में, वरन् गाँव-गाँव में सट्टा लगाने वाले पैदा हो गये हैं और गाँव-गाँव में सट्टा खाने वाले भी । सट्टा लगाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गरीब और अनपढ़ लोगों में इतना आम हो गया है कि माँ-बाप, भाई-बहिन, पति-पत्नी, पिता-पुत्र सब आपस में एक दूसरे से सट्टे के सम्बन्ध में खुलकर बातें करते हैं और सट्टा लगाना उसी प्रकार आवश्यक समझने लगे हैं जैसे पेट भरने के लिए रोटी खाना । कोई किसी से सट्टे की बात करते झिझकता नहीं, डरता नहीं ।

ताँगे वाले को लो, इक्के वाले को लो, नाव वाले को लो, मजदूर को लो, किसान को लो, पंडित जी, लालाजी, ठाकुर साहब सब एक दूसरे से पूछते मिलते हैं कल क्या आया और आज क्या आने की आशा है ? फलां बाबा ने कौन-सा धड़ा बताया है या उनके गाँव में कौन-सा बाबा है जो धड़ा बतलाता है जिससे वे भी उससे पूछ आवें और अपनी तकदीर के फाटक खोल कर मालामाल हो जायें । लेकिन खेद की बात है कि यदि कभी दुर्भाग्य से एक बार कुछ मिल भी जाता है तो साल दो साल जाता ही जाता रहता है, परन्तु बुद्धि के दुश्मन सैकड़ों हजारों रुपया गँवाने पर भी अपनी इस बुरी लत को नहीं छोड़ते यहाँ तक कि सट्टा लगाने के लिए जब पास में पैसा नहीं रहता तो कर्ज लेकर, अपने घर के कपड़े, बर्तन बेचकर यहाँ तक कि चोरी करके, जेब काटकर पैसा लाते हैं और सट्टे में लगाते हैं और रात को हाथ मलते, मुँह लटकाये घर चले जाते हैं ।

अब तो यहाँ तक सुना जाता है कि सट्टा और फीचर न सिर्फ गरीब, अशिक्षित पुरुष ही लगाते हैं वरन् सभ्य पढ़े, लिखे, और सम्पन्न परिवारों के स्त्री-पुरुष तक सट्टा लगाते हैं और इस प्रकार अपने धन की ही नहीं, वरन् अपनी नैतिकता का भी दिवाला पीटते हैं ।

एक समय था जब मनुष्य कहता था कि बिना पसीने की कमाई हराम की कमाई है, अतः त्याज्य है, परन्तु आज तो समय ही बदल गया है । आज तो हम यह चाहने लगे हैं कि हाथ-पैर न हिलाना पड़े और मनचाहा धन हमें मिल जाय । बिना मेहनत किए धन किसी भी प्रकार मिल नहीं सकता तो फिर आदमी जुआ, सट्टा आदि तरीकों से ही धन प्राप्त करने का दुस्साहस करता है, परन्तु जब जुआ, सट्टे में अपने पास के पैसे को भी गँवा कर भूखों मरने लगता है, जब उसके परिवार वाले उसे उसके कुकर्म के लिए गालियाँ देते हैं, नाते-रिश्तेदार, मित्र आदि उसे पास नहीं बैठने देते तो वह फिर बेशर्म होकर चोरी करने लगता है, जेब काटने लगता है, डाके डालने लगता है, शराब पीने लगता है, अन्य नशा करने लगता है, वेश्यागामी हो जाता है । कहने का अर्थ यह है कि जब मनुष्य एक बुराई करने लगता है तो और अन्य अनेकों बुराइयाँ स्वतः ही उसके पास आकर उससे लिपट जाती हैं और इस प्रकार उसे इतना पतित बना देती हैं कि वह समाज में मुँह दिखाने लायक नहीं रहता या तो ऐसा आदमी अपने दुर्गुणों के कारण अनेकों बीमारियों का शिकार बनकर खाट पकड़ लेता है अथवा जेल खाने की हवा खाता है ।

इस प्रकार का धड़े व अंक का सट्टा सरकारी कानून के विरुद्ध है और गैम्बलिंग एक्ट में आता है जिसके अनुसार सट्टा लगाने वाला व खाने वाला दोनों कानून की दृष्टि में दोषी होते हैं और गिरफ्तार कर लिए जाने पर जेल की हवा खाते हैं । अतः जो लोग सट्टा लगाते हैं उन्हें पुलिस से उसी प्रकार भयभीत रहना पड़ता है, जैसे कि चोर और जेबकतरे को व सट्टा खाने वाले को भी हर समय पुलिस का भय लगा रहता है । पुलिस से बचने के लिए उसे पुलिस को रिश्वत देनी पड़ती है व गुण्डों और बदमाशों से हमेशा डरते रहना पड़ता है और उन्हें हर समय कुछ न कुछ भेंट देते रहना पड़ता है । इस प्रकार सूक्ष्म में हमने देखा कि सट्टा लगाने व खाने वाले दोनों ही कानून की दृष्टि में अपराधी होते हैं जिसका फल बेइज्जत होना ही नहीं, जेल जाना भी होता है, गुण्डों व बदमाशों को पालना पड़ता है, उनसे डरना पड़ता है और सभ्य समाज के सामने कभी सिर ऊँचा करके बात करने की हिम्मत नहीं होती । कभी बिना मेहनत की, बिना पसीने की कमाई किसी को मिलती नहीं और कभी मिल भी जाती है तो वैसे ही निकल भी जाती है, कभी बचती नहीं, पास रहती नहीं । अतः यह सभी दृष्टियों से हेय है, त्याज्य है ।

प्रश्न यह है कि सट्टे की इस बीमारी के खिलाफ क्या कदम उठाये जायें, जिससे गरीब लोगों की यह खुली लूट न हो सके, हमारे होनहार नवयुवकों का जीवन नष्ट न हो, हमारी माता और बहिनों की अस्मत गुण्डों द्वारा मिट्टी में न मिलाई जाय । यदि हम गहराई से सोचें तो हमें इसके दो उपाय समझ में आते हैं जिन्हें हम पाठकों के विचारार्थ प्रस्तुत करते हैं ।

पहला यह कि नगर-नगर और गाँव-गाँव में जुआ व सट्टा के विरोध के लिए संगठन बनाये जायें जिसके सदस्य पहले स्वयं इन बुराइयों से दूर रहने की शपथ लें, फिर अपने-अपने क्षेत्रों में धुआँधार प्रचार करके लोगों को जुआ व सट्टे की बुराइयाँ समझाएँ और इस प्रकार जनमत बनाकर लोगों से सट्टा व जुआ न खेलने की प्रतिज्ञा करावें । इस पर भी जो जुआ, सट्टे आदि बुराइयों के आदी हो गये हैं उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाय । उनके घर न कभी कोई जाय न उन्हें अपने यहाँ किसी काम में बुलावें, उनके पुत्र-पुत्रियों से विवाह सम्बन्ध न करें और अगर आवश्यकता पड़े तो ऐसे लोगों को पुलिस से पकड़वाया भी जाय, उन्हें समाज में जलील, बेइज्जत करने के समस्त प्रयत्न किए जाने चाहिए जिससे नये सटोरिए व जुआरी पैदा न हों और जो इस समय जुआ व सट्टा खेलने के आदी हैं वे मजबूर होकर इस कार्य को बंद करके भले मानसों जैसा शांतिप्रिय जीवन व्यतीत करने लगें ।

दूसरा उपाय जुआ सट्टे को बंद कराने का यह है कि स्थान-स्थान पर सरकार से यह माँग की जाय कि वह वर्तमान गैम्बलिंग एक्ट (जुआ-सट्टा कानून) को कड़ा करें । जुआ व सट्टे के मुलजिम की जमानत न ली जाय और जुर्म साबित

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाने पर अपराधी को कम से कम तीन साल की कड़ी सजा की व्यवस्था हो जिससे आदमी डरे और इस बुराई से बचे । आजकल जो इस सम्बन्ध में कानून हैं, वे बड़े लचीले और नरम हैं । उन कानूनों के शिकंजे में या तो दोषी आते ही नहीं और अगर कभी आ भी जाते हैं तो कोतवाली और अधिक से अधिक अदालत तक जाते हैं और जमानत पर छूट आते हैं, अत: कानून में ऐसे प्रावधान होने चाहिए जिससे अपराधी को कठोर से कठोर सजा दी जा सके ।

एक बुराई से अनेक बुराइयाँ पैदा होती हैं व एक बुराई के शमन से अनेकों बुराइयाँ स्वयं ही अपनी मौत मर जाती हैं । जनतंत्रीय और जन-कल्याणकारी राज्य का वह प्रथम कर्त्तव्य होता है कि यह जनता की नैतिक उन्नति के लिए अनैतिक कार्यों को रोकने के लिए कड़ी कार्यवाही का आश्रय ले ।

भाग्य और पुरुषार्थ

भाग्य हमारे कर्मों का फल है, कोई ईश्वर इच्छित वस्तु नहीं । हम नित्यप्रति कुछ न कुछ किया करते हैं और उसका परिणाम भी हमें मिला करता है । बस, यही परिणाम हमारा भाग्य होता है । जैसे यदि कोई नटखट बच्चा चारपाई आदि पर चढ़कर कुछ शैतानी करने लगे और गिर पड़े तो उसे कुछ न कुछ चोट अवश्य ही आवेगी । इस घटना पर यह कहा जा सकता है कि चोट उसके भाग्य में बदी थी, परन्तु यदि इस चोट के अनुकूल कार्य न किया गया होता तो बच्चे को चोट भी न आती । अत: चोट लगनी ही थी यह बात अनुचित है अर्थात् भाग्य को मनुष्य स्वयं ही बनाता है, ईश्वर नहीं ।

ठीक इसी प्रकार यदि एक विद्यार्थी परीक्षा के लिए कठिन परिश्रम करता है तो अवश्य उत्तीर्ण होगा, परन्तु यदि वही विद्यार्थी परिश्रम बिल्कुल नहीं करता तो उसका उत्तीर्ण होना असम्भव है । यहाँ पर हम देखते हैं कि एक ही विद्यार्थी उत्तीर्ण भी हो सकता है और अनुत्तीर्ण भी । इस विषय पर कोई भी निश्चित रूप से यह नहीं बता सकता कि वह उत्तीर्ण होगा अथवा अनुत्तीर्ण । इसका केवल यही कारण है कि विद्यार्थी जैसा चाहे वैसा ही होगा ।

आगे हम यह भी देखते हैं कि ईश्वर ने मनुष्य को कोई भी व्यर्थ की वस्तु नहीं दी है । किसी न किसी रूप में प्रत्येक वस्तु का उपयोग मनुष्य द्वारा होता ही रहता है । ईश्वर ने मनुष्य को मस्तिष्क इसलिए दिया है कि वह अपने प्रयत्न और पुरुषार्थ द्वारा अपने भाग्य का स्वयं निर्माण करे, यदि सब कुछ पूर्व निर्धारित ही होता तो मस्तिष्क, बुद्धि और चेतना की क्या आवश्यकता थी ? फिर उसकी विचार शक्ति, क्रियाशीलता और पुरुषार्थ की आवश्यकता और उपयोगिता ही क्या रह जाती ?

इसके बाद हमें यह भी दिखाई देता है कि कोई दु:खी है, कोई सुखी, कोई धनवान है, कोई दरिद्र और कोई बुद्धिमान है, कोई मूर्ख । यदि यह कहा जाय कि यह भी ईश्वर की देन है या ईश्वर ने किसी के भाग्य में ऐसा ही लिख दिया था तो यह सरासर मूर्खता होगी । ईश्वर तो सच्चा न्यायी है, वह अन्याय कर ही नहीं सकता । ईश्वर तो न्यायपूर्वक सभी को एक दृष्टि से देखता है । वह न किसी को नीचा समझता है और न किसी को ऊँचा । वह सभी को एक सा चाहता है और सभी को बराबर देता है ।

यह प्रश्न उठ सकता है कि जब ईश्वर सभी को बराबर-बराबर शक्तियाँ और सम्पत्तियाँ देता है तो कोई साधन-सम्पन्न और कोई साधनहीन क्यों दिखाई देता है ? हमें जानना चाहिए कि ईश्वर तो सबको बराबर शक्तियाँ और सम्पत्तियाँ देकर भेजता है, परन्तु कोई उनका सदुपयोग करता है कोई उपयोग करता ही नहीं और कोई उनका दुरुपयोग करता है । इस समय एक सीधे सिद्धान्त द्वारा सदुपयोग करने वाला उन्नति करता है, दुरुपयोग करने वाला अवनति करता है और जो उपयोग करता ही नहीं उसकी शक्तियाँ तथा सम्पत्तियाँ बेकार हो जाती हैं । यहाँ भी मनुष्य ही अपने भाग्य का विधाता दीखता है ।

तुलसीदास जी ने अपनी रामचरितमानस में लिखा है— "होइ है सोई जो राम रचि राखा" । इसी प्रकार अन्य विद्वान भी भाग्य को ईश्वर के आधीन बतलाते हैं तो क्यों ? ऐसा सन्देह करने से भ्रम में पड़ने की आवश्यकता नहीं है । तुलसीदास जी या अन्य विद्वानों के भाग्य को ईश्वराधीन बताने के दो कारण हो सकते हैं— पहला यह कि मनुष्य कर्म के फल को ईश्वराधीन समझे और कर्त्तव्य को अपने आधीन । इस प्रकार मानकर चलने से मनुष्य का मन फल की ओर आकर्षित न होकर केवल कर्त्तव्य की ओर ही आकर्षित होता है और वह अपने कार्य को अधिक सरलता एवं पूर्णता से कर सकता है । दूसरा कारण यह हो सकता है कि यदि किसी मनुष्य को कर्त्तव्य करते हुए भी कुछ कारणों से असफलता प्राप्त हो तो वह यह जानकर अपना धैर्य न छोड़े कि ऐसा तो होना ही था और पुन: उसी कार्य को करे । इस प्रकार अनेकों प्रयत्नों के पश्चात् उसे सफलता मिल ही जायेगी, क्योंकि प्रत्येक असफलता उसे उसकी त्रुटियाँ बता देगी, जिनसे कि वह मनुष्य भविष्य के लिये सावधान हो जावेगा ।

जैसे पहले दिन जमाया हुआ दूध दूसरे दिन दही बन जाता है वैसे ही कल का किया हुआ कर्म आज हमारे लिए प्रारब्ध या भाग्य के रूप में उपस्थित होता है । इसलिए भाग्य को कर्म लेख या कर्म रेख भी कहते हैं । यह कर्म लेख, ईश्वर ने अपनी इच्छा से हमारे ऊपर नहीं थोपा है, वरन् हमारे किए हुए भूत-काल के कर्मों का फल है । शराब पीने का परिणाम नशा, सनाय खाने का परिणाम दस्त और विष खाने का परिणाम प्राणांत होता है, उसी प्रकार भले-बुरे हमारे ही कर्म कुछ समय उपरान्त भाग्य रूप में उपस्थित हो जाते हैं । वस्तुत: अपने भाग्य के निर्माता हम स्वयं ही हैं । ईश्वर यदि किसी का भाग्य भला, किसी का बुरा बनाता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो उस पर अन्यायी होने का, पक्षपाती होने का दोषारोपण किया जा सकता है जिससे कि वह सर्वथारहित है ।

प्रभु ने मनुष्य को कर्म करने की पूर्ण स्वाधीनता दी है । वह हमारी गतिविधि एवं कार्य-पद्धति में कोई हस्तक्षेप नहीं करता । वह अन्तरआत्मा में बैठकर सदा शुभ कार्य पर चलने की ही प्रेरणा करता है । बुरा काम करते ही भीतर से एक आवाज उसे बन्द करने की आती है । लोग उस ईश्वरीय आवाज को अनसुनी करके पाप एवं कुकर्म करते हैं और पीछे बुराई प्रकट होने पर इसका दोष ईश्वर पर मढ़ते हैं । कहते हैं ईश्वर की ऐसी ही मर्जी थी । यह केवल आत्मलंचना है । ईश्वर की मर्जी यह कभी नहीं हो सकती कि हम दुष्कर्म करें और उसके फलस्वरूप दु:ख-शोक के समुद्र में गोते लगावें । वह तो हमें सन्मार्गगामी और सुख-शान्तिमय जीवन व्यतीत करता हुआ देखना चाहता है । इसी दशा में यह अन्तरात्मा के भीतर से सदैव संकेत भी करता है । आप बुराई करना और दुष्परिणाम के लिए ईश्वर को दोषी ठहराना एक उपहासास्पद बात ही कही जा सकती है ।

भाग्य का रोना अक्सर आलसी, अकर्मण्य और कायर प्रकृति के मनुष्य अपनी कमजोरी को छिपाने के लिए रोया करते हैं । पुरुषार्थी लोग अपना रास्ता पहाड़ और समुद्र को चीरकर बनाते हैं । जो कठिनाइयाँ प्रारब्धवश सामने आती हैं, उनका वे वीरतापूर्वक मुकाबला करते हैं और आगे के लिए अपना भविष्य बनाने में सदैव संलग्न रहते हैं । यदि कोई अमिट घटना घटित होने वाली भी हो तो भी उससे निराश होने का कोई कारण नहीं । पुरुषार्थ हमारा कर्त्तव्य है । इस कर्त्तव्य पथ पर आरूढ़ रहने से वह समय अवश्य आवेगा जब अभीष्ट परिणाम की प्राप्ति होगी । प्रारब्ध की कोई त्रासदायक बदली पुरुषार्थ रूपी सूर्य को कुछ समय के लिये ढकले तो भी उसका अँधेरा देर तक नहीं रह सकता ।

मनुष्य अपने भाग्य का आप ही मालिक है

भारतवर्ष में आप कहीं भी चले जायें और कैसे भी लोगों में पहुँच जायें आपको 'भाग्य' की बात अवश्य सुनाई पड़ेगी । 'भाग्य में बदा है यही होगा', 'दाने-दाने पर मुहर है'— ऐसी अनेकों उक्तियाँ आपको छोटे-बड़े लोगों के मुख से सुनने को मिल सकती हैं, पर क्या यह भाग्य की सर्वशक्तिमानता पूर्णतया सत्य है ? क्या हमारे प्रयत्नों से कुछ नहीं हो सकता ? क्या प्रत्येक व्यक्ति का और प्रत्येक राष्ट्र का प्रारब्ध हमेशा के लिए बन गया है ?

उपर्युक्त प्रश्नों का उत्तर जानने के लिए हमको मनुष्य के मन के विश्वास पर दृष्टि डालना आवश्यक है । पहले पहल नवजात शिशु प्रकृति के आधीन रहता है । प्राकृतिक नियमानुसार उसे जो कुछ प्रेरणा होती है, उसी प्रकार उसका आचरण रहता है । भूख लगने से कष्ट होने के कारण वह रोता है । पहले-पहल स्तन मुँह में डालते ही वह दूध पीने नहीं लगता, उसे कुछ सिखलाना पड़ता है । कई बार के अनुभव से बच्चा जानने लगता है कि स्तन के दूध से उसकी भूख का कष्ट दूर होगा और फिर स्तन मुँह में लगते ही वह दूध पीने लगता है, पर इसका अर्थ यह नहीं कि वह समझ-बूझ कर ऐसा करता है । यह एक भीतरी प्रवृत्ति (अन्त:प्रवृत्ति) का कार्य है, विचार की क्रिया उसमें कुछ नहीं होती । जो कुछ प्रेरणा होती है वह सब प्राकृतिक रहती है । बालक की निजी प्रेरणा कुछ भी नहीं होती, पर बार-बार के अनुभव से वह ज्ञान प्राप्त कर लेता है कि स्तन के पीने से उसकी भूख मिटेगी इसे समझ लेता है । इसी प्रकार आस-पास की अनेक वस्तुओं के अनुभव से उसका ज्ञान-भण्डार बढ़ता रहता है । इसी ज्ञान से हमारे भीतर एक प्रेरणा शक्ति बढ़ने लगती है और उसी के द्वारा हम सब प्रकार के कार्य करने में समर्थ होते हैं ।

पर इसके आधार पर यह कहना कि मनुष्य में केवल प्रकृतिजन्य अथवा परिस्थितिजन्य ज्ञान ही पाया जाता है और उसमें स्वतंत्र प्रेरणा शक्ति बिल्कुल नहीं होती, ठीक नहीं है । यदि ऐसा होता तो बहुधा समान परिस्थिति में रहकर दो बालकों या दो सगे भाइयों में ज्ञान और नीति का बहुत अधिक भेद क्यों हो जाता ? एक मनुष्य प्रतिकूल परिस्थिति में पैदा होने पर भी विद्वान हो जाता है, और दूसरा पढ़ने-लिखने की समस्त अनुकूल परिस्थिति रहने पर भी मूर्ख बना रहता है । क्या यह परिस्थिति अथवा प्राकृतिक रूप से ही होता है ? बहुत से मनुष्य एक मनुष्य को भी काबू में नहीं रख सकते, पर कितने ही मनुष्य विद्या न रहने पर भी सैकड़ों को अधिकार में रख सकते हैं । इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार करने से यह मानना पड़ता है कि मनुष्य में स्वतंत्र प्रेरणा शक्ति, इच्छा शक्ति या आत्म-प्रवृत्ति भी होती है जिसके द्वारा वह प्राकृतिक वातावरण पर विजय पाकर विशेष कार्य करके दिखला सकता है ।

इसी समस्या पर जब हम अध्यात्म दृष्टि से विचार करते हैं तो प्रत्येक धर्म के उपदेशों का यही सार मालूम पड़ता है कि इस दृश्य-जगत के परे जो अनन्त-तत्व है उसकी प्राप्ति का प्रयत्न करो । आप चाहे किसी भी मजहब के अनुयायी हों, आपको इतना तो अवश्य मानना होगा कि हमको कोई उच्च स्थिति प्राप्त करनी है । अब यह उच्च स्थिति कैसे प्राप्त हो ? क्या परमेश्वर कुछ मनुष्यों पर दया करके सब कुछ देता है और कुछ के प्रति क्रूर बन जाता है ? ऐसा कहना तो परमेश्वर को हीन बनाना है । इसलिए यही मानना पड़ेगा कि हमारे कर्म ही हमको सुख-दु:ख देते हैं । इसलिए यह सिद्धांत सर्वत्र माना जाता है कि 'जो कुछ करोगे वैसा पाओगे'— जैसा बोओगे वैसा काटोगे' । अर्थात् कर्म करना हमारे अधिकार में अवश्य है । यदि कर्मों के करने में तुम्हारी स्वतंत्र प्रवृत्ति नहीं है, तो कर्म भी तुम्हारा नहीं होगा और कर्म तुम्हारा नहीं है तो उसका फल भी तुम्हारा न होगा । ऐसी दशा में किसी की सद्गति या बुरी गति का कोई प्रश्न हो ही नहीं सकता । इस दृष्टि से स्वतंत्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मप्रवृत्ति के न मानने से सभी धर्मों के अध्यात्मशास्त्र निकम्मे हो जायेंगे । अगर सदाचरण द्वारा सद्गति का सिद्धांत मानना है तो आत्म-प्रवृत्ति, स्वतंत्र प्रेरणा, स्वतंत्र इच्छा-शक्ति आदि का अस्तित्व स्वीकार करना ही पड़ेगा ।

दुनिया की ओर देखने से भी यही प्रतीत होता है कि लोग अपने प्रयत्नों द्वारा उन्नति करते जा रहे हैं । प्रकृति के नियमों को समझकर, उनका ज्ञान प्राप्त करके, उसे अपने काबू में कैसे ला सकेंगे ? सभी भौतिकशास्त्र इसी उद्देश्य की पूर्ति में लगे हैं । हम सर्वथा प्रकृति के इशारे पर नहीं चलते । जिधर भाग्य ले जाय उधर ही जाने को सभी लोग तैयार नहीं रहते । हम अपनी ओर से सब प्रकार के प्रयत्न किया ही करते हैं । इस प्रकार हम अपने आचरण में आत्म-स्वातंत्र्य का अस्तित्व अवश्य मानते आये हैं । इसमें त्रुटि इतनी ही जान पड़ती है कि किसी कारणवश हम उसका पूरा उपयोग नहीं करते । समाज में आलसी, निकम्मे और भाग्यवादी मनुष्य भी बहुत बड़ी संख्या में मौजूद हैं । उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि अपना उद्धार वे स्वयं ही कर सकते हैं । साधारण व्यवहार में कोई उन्हें दोषी न कहे, पर तात्विक दृष्टि वे अपने कर्मों के कारण दोषी अवश्य हैं । प्रकृति के आधीन हो जाना और प्रयत्न से मुख मोड़ लेना कभी क्षम्य नहीं समझा जा सकता ।

जब कोई भयंकर परिस्थिति हमारे सामने होती है, अथवा जीवन भर इस सृष्टि की अन्धकारमय बातें ही दिखलाई पड़ती हैं, तो मामूली लोग अपना साहस खो बैठते हैं और उस परिस्थिति की तरफ से आँखें फेर लेते हैं । अथवा वे रात-दिन निराश रहते और भय का अनुभव करते रहते हैं । ऐसी परिस्थिति में अपनी रक्षा या परिस्थिति को बदलने के लिए जो प्रयत्न करना चाहिए वह उनके साहस से परे है । पर वीर या सत्साहसी लोगों का मार्ग अलग होता है । उन्हें जो बातें अग्राह्य, इच्छा के विपरीत या हानिकारक जान पड़ती हैं, उनसे वे तनिक भी भयभीत नहीं होते और अपने निश्चित कार्यक्रम पर ज्यों के त्यों डटे रहते हैं । संसार ऐसे मनुष्यों की पूजा और चाह करता है । वे ऐसी कठिन परिस्थिति में भी मन को शान्त और स्थिर रखने का जो प्रयत्न करते हैं, उसी से उनके कार्य और महत्त्व को नापा जा सकता है । ऐसा आदमी अपने मार्ग में आने वाली इन भयंकर बाधाओं को भूलने अथवा उनकी तरफ से निगाह हटा लेने का प्रयत्न नहीं करता, वरन् वह उनका सामना करता है । इस प्रकार वह प्रकृति या भाग्य के अधीन हो जाने के वजाय जीवन पर प्रभुत्व पा लेता है । तब वह इस दुनिया में सम्मान की निगाह से देखा जाने लगता है और अन्य लोग उससे कुछ शिक्षा ग्रहण करने लगते हैं, पर जिन्हें अपने जीवन को खतरे में डालने से डर लगता है अथवा जो खतरे की बातों का विचार ही नहीं कर सकते, उनसे कोई कुछ आशा नहीं रखता और न कोई उनकी परवाह करता है । हम लोगों को जीवन के व्यवहार के लिए खतरा उठाने की आवश्यकता तो ज्यादा नहीं, पर धर्म के लिए खतरे में पड़ने का अवसर प्राय: आ जाता है । जिस प्रकार दूसरे की हिम्मत देखकर हममें हिम्मत आती है, उसी प्रकार दूसरे की श्रद्धा देखकर हममें श्रद्धा उत्पन्न होती है ।

तात्पर्य यह कि प्रयत्न करने से आत्म-प्रवृत्ति इतनी बढ़ सकती है कि मनुष्य अपने जीवन का सुधार करके दूसरे के जीवन का भी सुधार कर सकता है । आत्म-प्रवृत्ति अथवा स्वतंत्र प्रेरणा शक्ति के बिना हमारा उन्नति के शिखर पर चढ़ सकना असम्भव है । केवल ज्ञान से सफलता नहीं मिल सकती, पर उसके साथ आत्म-प्रवृत्ति अथवा कर्म का भी सहयोग होना आवश्यक है ।

भाग्यवादी नहीं, पुरुषार्थवादी बनिए

इस पुरुषार्थ प्रधान विश्व में दुर्भाग्य का दोष उन्हीं के लिये है जो इस पर विश्वास करते हैं अन्यथा दुर्भाग्य नाम का कोई दोष इस दुनिया में नहीं है । जो व्यक्ति अपने को अभागा मानेगा, सदा दुर्भाग्य का रोना लिए बैठा रहेगा वह अभागा होने के सिवाय और क्या हो सकता है । अपने प्रति रखे गये विश्वास के अनुसार ही मनुष्य का निर्माण होता है । मनुष्य स्वयं अपने लिए जिस मूल्य का दावा करेगा समाज में उसका वही मूल्य आँका जायेगा । अपने को हेय एवं हीन समझने वाले लोग संसार में कभी भी आगे न बढ़ सके हैं । अपने को अभागा मानने वाले कभी भी सुख-सौभाग्य के दर्शन नहीं कर सकते ।

मनुष्य ईश्वरीय सत्ता का एक अंश है उसके जीवन का एक विशेष मूल्य एवं महत्त्व है । जो मानवजीवन का मूल्य महत्त्व घटाता है, ईश्वर की दी हुई शक्तियों में विश्वास नहीं करता, उसे दुर्भाग्य के रूप में उस अपराध का दंड भोगना ही पड़ता है । अपने चारों ओर अपनी जैसी परिस्थितियों के लोगों को नित्य आगे बढ़ते और उन्नति करते देखकर भी जो व्यक्ति भाग्य के भरोसे यथास्थान अभावग्रस्त होकर पड़ा रहता है, वह वास्तव में ही इस योग्य है कि वह दिन-दिन दयनीय होकर कीड़ों-मकोड़ों की मौत मर जाये ।

पुरुषार्थ एवं परिश्रम के चोर ही दुर्भाग्य की दुहाई दिया करते हैं । आलस्य एवं प्रमाद के वशीभूत रहकर ऐसे लोग बिना हाथ-पाँव हिलाये ही रोगियों की भाँति पड़े रहते हैं और कामना करते हैं कि उन्हें संसार का सारा सुख-सौभाग्य यों ही मिल जाये । नि:सन्देह यह कितनी अन्यायपूर्ण कामना है । यह देखते हुए भी कि लोग जीवन में स्थान पाने और सुख-साधनों को उपलब्ध करने के लिए माथे का पसीना नहीं सूखने देते स्वयं अपने लिए यों ही पड़े-पड़े सुख सम्पन्नता की चाह करते हुए संकोच भी तो नहीं करते । इस प्रकार की निकम्मी कामना करने वालों पर दुर्भाग्य एवं दुर्दैव की जितनी फटकार पड़े थोड़ी ही है ।

ऐसे व्यक्ति को किस न्याय से क्या अधिकार है कि वह पुरुषार्थ की डाली पर खिलने वाले सुख-सुविधा के पुष्पों की कामना करे । बात दरअसल यह है कि पुरुषार्थ ही अकर्मण्य व्यक्तियों को सुख-सम्पत्ति की कामना मौलिक नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती वह वास्तव में दूसरों का उत्थान देखकर ईर्ष्या से जन्मी प्रतिक्रिया भर होती है । यदि उनकी यह कामना सच्ची और मौलिक हों तो क्या वे स्वयं भी उसे पूरा करने के लिए वैसी ही कोशिश न करें, जैसी कि उनकी आँखों के सामने दूसरे लोग किया करते हैं ।

यदि किसी ने रावण की तरह अपना भाल पढ़ लिया है और पता लगा लिया है कि उसमें दुर्भाग्य के अक्षर लिखे हैं तब तो उसे और भी पुरुषार्थी एवं क्रियाशील होना चाहिए । क्योंकि यह स्पष्ट हो चुका होता है कि उसके भाल में सुख-सौभाग्य नहीं लिखा है, इसलिए उसे लाने का प्रयत्न ही करना होगा । आपत्ति स्पष्ट देखकर भी उससे बचने का उपाय न करना एक इतनी बड़ी मूर्खता है जो ईश्वर अंश मनुष्य को शोभा नहीं देती । यदि दुर्भाग्य कुछ है और उसे बदला जाना दैव के अपेक्षित न होता तो वह मनुष्य को परिवर्तनकारी शक्तियाँ नहीं देता । बुद्धि एवं विवेक से शून्य करके कीट-पतंगों की तरह विवश करके डाल देता । मनुष्य को दुर्भाग्य के साथ हाथ-पैर, शक्ति सामर्थ्य, बुद्धि विवेक देकर भाग्य लेखक ने अवश्य ही अवसर दिया है कि यदि वह चाहे तो इन शक्तियों का उपयोग करके अपने दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदल सकता है । ऐसा होने पर भी जो अभागा अपने दुर्भाग्य पर बैठा-बैठा रोने के सिवाय और कुछ करना ही नहीं चाहता तो उसका उद्धार स्वयं उसका भाग्य विधाता भी नहीं कर सकता । वह यों ही विपन्नता के बीच आँसू बहाता हुआ एक दिन तड़प-तड़प कर मर जायेगा । यही है उसका भाग्य और यही है उसका होनहार ।

सच्चे कर्मवीर दुर्भाग्य के अस्तित्व में विश्वास नहीं करते । वे इसे सांसारिक परिस्थितियों की उलझन-भर मानते हैं और सुलझाने का पूरा प्रयत्न करके सुलझा भी लेते हैं । पुरुषार्थी व्यक्ति अपने बाहु एवं विवेक बल पर ही विश्वास करते हैं और यदि भाग्य शब्द पर विश्वास करते हैं तो केवल सौभाग्य पर, दुर्भाग्य पर नहीं । वे सुख-सौभाग्य को मानव का जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं और उसे प्राप्त करने में अपनी पूरी शक्ति लगा देते हैं । सफल होते हैं और उसे प्राप्त करके ही छोड़ते हैं ।

भाग्यवाद वास्तव में एक मानसिक रोग है जो मनुष्य की पुरुषार्थ शक्ति को पंगु बना देता है । जिसके मस्तिष्क में यह विचार घर कर बैठा है कि जो भाग्य में बदा होगा वह ही होगा । उसके भाग्य में दुःख-दारिद्र्य ही लिखा है यह निश्चय मानना चाहिए । मनुष्य की विचारधारा से उसकी होनी का पता लगाया जा सकता है । उसके जीवन के प्रति भविष्यवाणी की जा सकती है । अक्षत शरीर तथा स्वस्थ मस्तिष्क वाला कोई व्यक्ति जब आपको यह कहता सुनाई दे कि "भाग्य की लिपि अमिट होती है, वह परिश्रम, प्रयास, पुरुषार्थ अथवा किसी उपाय से बदली नहीं जा सकती, मनुष्य का भाग्य जन्म के साथ लिख कर आता है उसको बदल देना किसी की सामर्थ्य में नहीं है"— तो आप असंदिग्ध रूप से यह भविष्यवाणी कर सकते हैं कि अमुक व्यक्ति जीवन में सदा दरिद्री रहेगा । सुख और शांति उसे स्वप्नों में भी देखने को न मिलेगी और उसके जीवन का अन्त इस परिस्थिति से भी बुरी परिस्थिति में होगा जिसमें वह इस समय रो रहा है ।

संसार में ऐसे हजारों व्यक्ति हुए हैं जिनकी जीवन परिस्थिति देखकर भाग्यवादी लोग हमेशा यही कहा करते थे कि इसका भाग्य खोटा है देखो न, बेचारे किस दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में जन्मे, पले और जीवनगाड़ी खींच रहे हैं, पर उन्होंने अपने भाग्य को पुरुषार्थ-पूर्वक बदल कर दिखा दिया । समाज में वह सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त किया जो आज भी इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्णाक्षरों में लिखा है और सदा सर्वदा लिखा रहेगा । किन्तु खेद है कि अभागे भाग्यवादी फिर भी उसका श्रेय मनुष्य के पुरुषार्थ को न दे सके और तब यह कहने लगे इनके दुर्भाग्य में अवश्य ही इस सौभाग्य की रेखा खिंची थी जिससे कि यह इस पद एवं परिस्थिति में पहुँचे । ऐसे विवेकान्ध भाग्यवादियों का उद्धार भला किस प्रकार हो सकता है । उन्हें अपनी लांछित परिस्थितियों में ही पड़ा रहना होगा और यों ही भाग्य-भाग्य रटते हुए जीवन समाप्त करना होगा ।

भाग्यवाद का रोग उन कमजोर आदमियों को ही घेरा करता है जो स्वयं अपने और अपनी शक्तियों में विश्वास नहीं रखते । अपने को दीनहीन और दयनीय समझने वाले ही भाग्यवाद के रोगी बना करते हैं । वैसे मनुष्य में सब कुछ कर सकने की सामर्थ्य है । मनुष्य के अन्दर अद्भुत शक्तियों के पुंज भरे पड़े हैं । उसकी बुद्धि, उसका विवेक पुरुषार्थ के सहारे जीवन की पुरानी परिस्थितियों को बदल नई परिस्थितियों का निर्माण कर सकता है । भाग्यवादी अपनी आँखों पर पट्टी बाँधकर जीवन यात्रा में चला करता है, इसीलिए वह बलपूर्वक परिस्थितियाँ बदल देने वालों के उदाहरण नहीं देख पाता । भाग्य के भरोसे रहने से एक तो वह पुरुषार्थ ही नहीं करता और यदि करता भी है तो अधूरे मन से यह सोचता हुआ कि अधिक पुरुषार्थ किया जाये अथवा कम, मिलेगा उतना ही जितना कि भाग्य में लिखा होगा । अपने दाता भाग्य के भरोसे रहने वाले भाग्यवादी जीवन में कभी कुछ पा सकेंगे, कोई उन्नति कर सकेंगे ऐसा विश्वास नहीं किया जा सकता ।

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में उन्नति एवं विकास के अनेक अवसर आते रहते हैं, किन्तु उनका लाभ नहीं उठा पाते हैं जो सजग रहकर अपने पुरुषार्थ पर भरोसा किया करते हैं । कोई भी अभागा भाग्यवादी उनका रंचमात्र भी लाभ नहीं उठा पाता । वह पात्र के स्थान पर छलनी लिए हुए दूध दुहा करता और दुर्भाग्य को कोसा करता है । सुवर्ण अवसर को सामने देखकर भी भाग्यवादी अपने पुरुषार्थ में तत्पर नहीं होता । वह भाग्य के भरोसे यही सोचता रहता है कि यदि उसे इसका लाभ बदा होगा तो बिना कुछ किए ही मिल जायेगा और यदि नहीं बदा होगा तो पुरुषार्थ भी कुछ नहीं कर सकता । निस्सन्देह इस प्रकार के अन्ध-भाग्यवादी कितनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाल बुद्धि के होते हैं । उनसे पूछा जाये कि यदि सब कुछ भाग्य के बल पर ही होना होता तो परमात्मा मनुष्य के लिए पुरुषार्थ की व्यवस्था क्यों करता । यदि उसे मनुष्य का परिश्रम वांछित न होता तो वह न तो उसके लिए आवश्यकताओं का निर्माण करता और न उसमें आगे बढ़ने, कुछ कर दिखाने की कामना ही उत्पन्न करता और शायद वह उसके पुरुषार्थ को प्रोत्साहित करने के लिए न पेट बनाता और न भूख का सृजन करता और यदि करता भी तो घास-फूस की तरह जहाँ वह रहता रोटी उगा देता जिसे मनुष्य चर लेता और पड़ा रहता, किन्तु मनुष्य को एक शरीर के सिवाय सब कुछ अपूर्ण देन में उसका यही मन्तव्य रहा है कि मनुष्य परिश्रमपूर्वक अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करे । परमात्मा के इस पावन मन्तव्य के विरुद्ध भाग्यवादी बनकर मनुष्य उसकी महिमा के विरुद्ध धृष्टता करता है जो उसे नहीं करना चाहिए ।

आशा है आप भाग्यवादी न होंगे और यदि किसी कारण से आप में यह कमजोरी आ गई है तो तुरन्त ही उसे दूर कर दीजिए । भाग्यवाद आपकी शक्तियों, आपके पुरुषार्थ को पत्थर से मार कर पंगु बना देगा । आज यदि आप सुख-सुविधापूर्ण परिस्थितियों के बीच भाग्य पर गर्व करते हुए पुरुषार्थ से उदासीन हो जायेंगे तो निश्चय ही जानिए कल आपका भाग्यवाद आपसे इन परिस्थितियों को भी छीन लेगा । भाग्य के भरोसे बैठे रहने पर यदि आप प्रतिकूल परिस्थितियों से घिरे हैं तो यों ही घिरे रहेंगे । संसार की कोई भी शक्ति आपको उनसे उबार न सकेगी । यदि स्वयं अपने पुरुषार्थ पर विश्वास करके अपने पैरों पर खड़े नहीं होते हैं ।

स्वयं तो भाग्यवादी नहीं ही बनिए साथ ही भाग्य-वादियों को अपने पास तक न फटकने दीजिए । भाग्यवाद तथा भाग्यवादियों का संग दोनों ही मनुष्य का कल्याण नष्ट कर देने वाले होते हैं । कोई भी असफल व्यक्ति अपना उदाहरण देकर अपने को कितना ही योग्य क्यों न कहे कि उसने परिश्रम एवं पुरुषार्थ की हद कर दी फिर भी वह जो सफल न हो सका यह भाग्य का ही दोष था, पर आप उसकी बात पर जरा भी ध्यान न दें और विश्वास रखें कि अवश्य ही उसके आयोजन, प्रयत्न, पुरुषार्थ, परिश्रम अथवा उपाय में कोई कमी रही है अन्यथा पुरुषार्थ के निष्फल होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता ।

इसी प्रकार यदि कोई साधन, सुविधा एवं सम्पत्ति सम्पन्न व्यक्ति लाख सौभाग्य की दुहाई देकर कहे कि उसने कोई पुरुषार्थ नहीं किया, तब भी वह भाग्य के बल पर सब कुछ पा गया, किन्तु आप उस पर विश्वास न करें समझ लें कि वह झूठ बोल रहा है । उसके पास जो कुछ है या तो उसे चुराया है अथवा किसी संयोगवश पा लिया है । इस सम्पत्ति की उत्पत्ति अवश्य ही पुरुषार्थ से हुई है जिसे किसी न किसी ने किया है । भाग्यवादी नहीं पुरुषार्थवादी बनिए । इसी में हित है और इसी में मनुष्यता ।

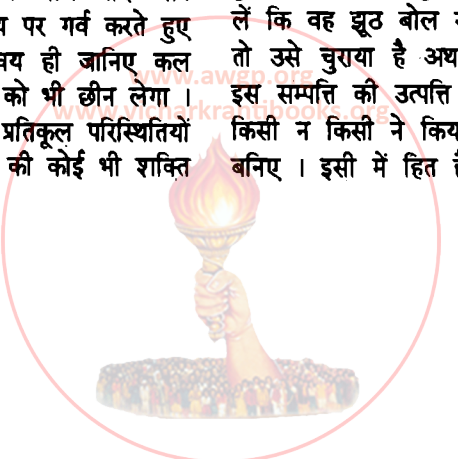

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रतिगामी नहीं, विवेकशील बनिये

अन्धविश्वास से लाभ कुछ नहीं, हानि अपार है

मनुष्य की कृतियों में अनेक दूषण हो सकते है, परमात्मा की कृतियों में नहीं । भगवान् ने जो कुछ बनाया है सुन्दर एवं शुभ है । मनुष्य के सम्पर्क में आने से कई बार प्रभु की अच्छी कृतियाँ भी दोष-युक्त बन जाती हैं । उनके दोष-दुर्गुण ही उत्तमता को निकृष्टता में बदल देते है । परमात्मा दोष-दुर्गुणों से रहित है, इसलिए उसकी कृतियाँ भी एक से एक अद्भुत एवं शुभ हैं । उनमें दोष ढूँढ़ना, मनुष्य की अपनी बुद्धि-विकृति का भौंडा प्रदर्शन मात्र ही कहा जायगा ।

मनुष्य जिन चीजों को बनाता है, वे अल्पजीवी और दोषपूर्ण रहती हैं । वे समय के प्रभाव से अथवा प्राणियों के सम्पर्क से बिगड़ती और दूषित होती रहती हैं । पीछे उनमें सुधार भी होता रहता है, पर जो कुछ ईश्वरकृत है, उसका बाह्य कलेवर भले ही प्रकृति-नियमों के अनुसार बदलता रहे । मूल स्वरूप में कोई हेर-फेर नहीं होता । स्वरूपवान् वस्तुओं में तो यह संसर्ग दोष आता भी है, पर जो सूक्ष्म और सनातन तथ्य हैं उनमें इस प्रकार की विकृतियों की भी गुंजायश नहीं है । सूर्य, चन्द्रमा, तारागण, समुद्र, मेघ, वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश जैसे तत्व सृष्टि के आदि से ही एक रस हैं । दिन-रात, मास, पक्ष, ऋतु आदि के स्वरूप में भिन्नता है, उससे हमारी सुविधा-असुविधा में अन्तर पड़ सकता है, पर उनकी पवित्रता में कोई अन्तर नहीं ।

कौन सा दिन शुभ और कौन सा अशुभ है—यह विचार करते हुए हम एक प्रकार से ईश्वर की महानता पर और उसकी महान् कृतियों पर लांछन लगाने का ही दुस्साहस करते हैं । हमें जानना चाहिए कि हर दिन पवित्र है । शुभ कर्मों के लिए हर दिन शुभ है और अशुभ कामों के लिए हर दिन अशुभ । शास्त्रों ने कहा है जब तेरी इच्छा दान देने की हो तो बाएँ हाथ में जो है उसे दाएँ में लाने तक का विलम्ब न कर । कौन जाने कितनी देर में आसुरी प्रवृत्तियाँ उभर आयें और सत्कर्म करने का विचार बदल जाय । शुभ विचारों को सत्कर्मों में परिणत करने के लिए कहा गया है और बताया गया है कि मृत्यु के द्वारा एक हाथ में हमारे बालों को पकड़ा हुआ है और दूसरे में तलवार तनी हुई है, न जाने उसका बार कब हो जाये और न जाने कौन-सा शुभ मनोरथ अधूरा पड़ा रह जाय । इसलिए शुभ प्रयोजन में तनिक भी देर न करनी चाहिए ।

कौन दिन अच्छा है, कौन दिन बुरा, ऐसा विचार अशुभ कर्मों के लिए करना चाहिए । इसी बहाने आज की घड़ी टल जाय तो जो उफान-आवेश दुष्कर्मों के लिये उठ रहा है, सम्भव है किसी प्रकार शिथिल ही हो जाय और टल ही जाय । यदि ऐसा हो सका तो यह समय टालने वाली बात अपने लिए कल्याणकारक ही सिद्ध होगी । चोरी, हत्या, लूट, अपहरण, व्यभिचार, छल, जुआ, मद्यपान आदि दुष्ट-कर्म करने के लिए मन की नीच वृत्तियाँ आदि बहुत प्रबल हो रही हों और वे काबू में न आ रही हों तो उसका एक उपाय यह भी है कि कोई शुभ-मुहूर्त ढूँढ़ा जाय । फलित ज्योतिष के हिसाब से हर दिन में कोई न कोई दोष जरूर होता है । तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, चन्द्रमा, भद्रा, भरणी आदि के इतने अधिक जंजाल हैं कि हर दिन किसी न किसी आधार पर दोष-युक्त सिद्ध किया जा सकता है । पूर्ण शुद्ध तो कदाचित ही वर्ष में एकाध दिन निकले । ऐसी दशा में उस अशुभ घड़ी को शुभ-मुहूर्त की प्रतीक्षा में चिरकाल तक टाला जा सकता है ।

किन्तु यह बात शुभ-कर्मों के सम्बन्ध में लागू नहीं होती । उनमें विलम्ब किया जायगा तो जो उत्साह आज है कल ठण्डा हो सकता है, जो परिस्थिति आज है, वह कल बदल सकती है । ऐसी दशा में जो आज हो सकता है वह कल के लिए टाला जाय तो सम्भव है । वह 'कल भी न आवे ।' इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए मनीषियों और तत्वदर्शियों का सदा से यह मत रहा है कि शुभ-कर्म के लिए हर दिन शुभ है और हर घड़ी अमृतमय है ।

मुहूर्तवाद का जंजाल—जिन दिनों मुहूर्तवाद का जंजाल अपने पूर्ण यौवन की दशा में था और लोग बिना मुहूर्त देखे टट्टी भी नहीं फिरना चाहते थे, उन दिनों भी विचारशील लोग इस प्रयत्न में थे कि इस अकारण की भ्रान्ति से हानि उठाने वाली जनता को किसी प्रकार बचाया जाय । तब उन्होंने हर दिन को, हर रात को कोई 'चौघड़िया' की एक पद्धति फलित ज्योतिष के अन्तर्गत ही निकाल दी थी और उससे मुहूर्तवाद का विष ९० प्रतिशत दमन हो गया था । मुहूर्तवाद की रक्षा भी हो गई, इसका खण्डन भी न करना पड़ा और लोग उस आधार पर शुभ-कर्मों के उत्साह के शिथिल होने की आशंका से भी बच गये । चौघड़िया उस गणना को कहते हैं जिसके अनुसार हर दिन और हर रात को चार चार घड़ी अन्तर से शुभ-अशुभ योग आते हैं । जिस दिन भी कोई काम करना है, उस दिन की अशुभ घड़ियों को बचाकर शुभ घड़ियों में कोई भी अच्छा काम किया जा सकता है । चार घड़ी का अर्थ है लगभग डेढ़ घण्टा आगे पीछे काम कर लिया जाय तो उससे कुछ बनता बिगड़ता नहीं है । मुहूर्त वाली बात भी रह गई और समय टालने पर शुभ-कर्म के टालने की आशंका का भी कोई कारण न रह गया । यह मध्यवर्ती मार्ग किसी बुद्धिमान, विचारशील और दूरदर्शी पंडित की सूझ-बूझ है । सम्भव है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस सुधारवादी प्रक्रिया के प्रचलन करने वाले को मुहूर्तवाद के आधार पर उपयोगी कार्यों में अनावश्यक विलम्ब होने के कारण उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों के अनुभव हुए होंगे और उसने उस भ्रान्ति का आमूल खण्डन करने की अपेक्षा यह सुधारवादी मध्यमार्ग निकाल दिया होगा । चौघड़िया विधान के आधार पर कोई व्यक्ति कोई भी शुभ-कार्य किसी भी दिन कर सकता हैं । केवल मुहूर्त की रक्षा करने के लिये एक-दो घण्टे मात्र का आगा-पीछा करना पड़ेगा, क्योंकि अशुभ घड़ी तो डेढ़ घण्टे मात्र रहती है, इसके बाद शुभ का परिवर्तन हो जाता है ।

तथ्यों को आँख से ओझल न करें—नैपोलियन बोनापार्ट का सेनापति पाँच मिनट लेट पहुँचा । इस छोटे से विलम्ब से जीत-हार के रूप में परिणत हो गई और नैपोलियन कैद कर लिया गया । यों पाँच मिनट का कोई मूल्य नहीं, पर कितने ही अवसर ऐसे होते हैं जो मुहूर्त के नाम पर या किसी भी आधार पर यदि चुका दिए जाएँ तो उसका परिणाम सदा हाथ मल कर पछताते रहना ही होता है ।

मुहमूद गजनवी ने सोमनाथ पर चढ़ाई की । गजनवी की फौज की अपेक्षा राजपूतों की सेना कहीं अधिक बड़ी और कहीं अधिके साधन सम्पन्न थी, पर जब आक्रमण हुआ तो पंडितों ने बताया कि अभी प्रत्याक्रमण करने का मुहूर्त नहीं है । इस समय लड़ेंगे तो हार जायेंगे इसलिए अभी इतने समय और ठहरना चाहिये । उन दिनों भला ज्योतिषी की बात कौन टाल सकता था, अतः राजपूतों को चुप बैठना पड़ा । फलस्वरूप गजनवी का आक्रमण सफल हुआ, उसने शिव-प्रतिमा के टुकड़े टुकड़े कर दिए, प्रचुर सम्पत्ति लूट ले गया और हजारों नर-नारी कैद किए, जिन्हें गजनी के बाजार में गुलाम बनाकर बेच दिया । मुहूर्तवाद के अभिशाप ने भारतीय इतिहास में एक कलंक पृष्ठ जोड़ दिया ।

बख्तियार खिलजी ने बंगाल पर चढ़ाई की, वहाँ का राजा ज्योतिषियों का अन्धभक्त था । बिना उन्हें पूछे वह पत्ता भी नहीं तोड़ता था । यह जानकारी खिलजी को मिल गई । उसने राज्य-ज्योतिषियों को गहरी रिश्वत देकर अपने पक्ष में मिला लिया । उन्होंने कह दिया अभी लड़ने का मुहूर्त नहीं, लड़ेंगे तो हार जायेंगे । राजा कोई और उपाय न देखकर राज्य छोड़कर चुपचाप भाग लिया और बख्तियार खिलजी, बिना लड़ाई किए ही बंगाल का राजा बन गया ।

यह ऐतिहासिक घटनाएँ बताती हैं कि शुभ-अशुभ दिनों के जंजाल में, उलझन में न तो कोई बुद्धिमत्ता है और न तथ्य । ईश्वर विनिर्मित दिनों में से किसी को शुभ, किसी को अशुभ बताना ईश्वर की मूर्खता का प्रतिपादन करने की उपहासास्पद चेष्टा करना मात्र है । जो ऐसा विश्वास करते हैं वे पाते कुछ नहीं खोते बहुत हैं ।

केवल असुविधा—केवल परेशानी—आजकल उत्तर भारत में विवाह-शादियाँ कुछ नियत मुहूर्तों में ही होती हैं । जनसंख्या विशेषतया शहरों की आबादी बढ़ जाने से एक दिन में कई-कई हजार शादियाँ होती हैं, फलस्वरूप उन दिनों रेलों, मोटरों, ताँगों, रिक्शों में इतनी भीड़ें होती हैं कि जगह मिलना मुश्किल हो जाता है । बाजार में खाद्य पदार्थों के दाम दूने हो जाते हैं । हलवाई ढूँढ़े नहीं मिलते । धर्मशाला, होटल भरे रहते हैं । बाजे, गैस-बत्ती आदि चीजें ढूँढ़े नहीं मिलती यहाँ तक कि विवाह पढ़ने वाले पंडितों तक का अकाल पड़ जाता है । इस अन्धा-धुन्ध भीड़-भाड़ में हर किसी को असुविधा होती है । यदि अन्य दिनों में सुविधानुसार विवाह होते रहें तो सब काम सस्ता होता रहे और जो भगदड़ अब मचती है उसका कोई कारण न रहे ।

पंजाब में सिख नहीं, सनातनी हिन्दू भी उन महीनों में प्रसन्नतापूर्वक विवाह करते हैं, जिनमें विवाह के मुहूर्त नहीं होते । दक्षिण भारत में भी उत्तर भारत जैसी—मुहूर्त मान्यता नहीं है । बंगाल, असम के प्रान्तों में उत्तर प्रदेश जैसी परिपाटी नहीं है । हिन्दू धर्म में ही अनेक मान्यताएँ प्रचलित हैं और वे विवाहों के मुहूर्त सम्बन्धी विश्वासों की दृष्टि से परस्पर सर्वथा भिन्न हैं । ऐसी दशा में उस बहम का कोई आधार नहीं रह जाता जिसके अनुसार यह कहा जाता है कि बिना मुहूर्त विवाह करने से लड़की या लड़का मर जाता है अथवा उसका परिणाम बुरा होता है । यदि यह बहम ठीक रहा होता तो सिख, जैन, पंजाबी, बंगाली, मद्रासी, असमी, सनातनी, हिन्दुओं के सब विवाहों के ऐसे ही दुष्परिणाम हुए होते । जो लोग निर्धारित सहालग पर ही विवाह करते हैं क्या उनमें से कोई विधवा या विधुर नहीं होते ? क्या वे सभी विवाह सफल कहे जाने योग्य होते हैं ? यदि नहीं तो उन मुहूर्तों की फिर क्या उपयोगिता रह गई ?

जो तथ्य वास्तविक होते हैं वे किसी प्रदेश या सम्प्रदाय पर ही लागू नहीं होते, वरन् सभी देशों और जातियों पर समान रूप से लागू होते हैं । मध्यभारत के हिन्दुओं की मान्यताओं के प्रतिकूल संसार के सभी देशों और जातियों में ऐसे दिनों में विवाह होते हैं जिनमें शादी करना अशुभ माना जाता है । ऐसी दशा में उन सबके विवाहों को असफल ही होना चाहिए था, पर ऐसा होता कहाँ है ? इसलिए इस सम्बन्ध में विस्तृत दृष्टिकोण से विचार करने पर यही मानना पड़ता है कि यह दिनों के शुभ-अशुभ होने की मान्यता चन्द लोगों का अपना विश्वास भर है, उसके पीछे न कोई आधार है न कोई तथ्य । संसार के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार के रीति-रिवाज, प्रथा प्रचलन और बहम-विश्वास प्रचलित हैं, उसी प्रकार अपने लोगों में यह मुहूर्तवाद की मान्यता जड़ जमा कर बैठ गई है ।

खण्डन और समाधान—'मुहूर्त दोष परिहार' नामक एक पुस्तक सहपऊ (जिला मथुरा) निवासी पंडित आनन्दीलाल शर्मा ज्योतिषाचार्य ने छापी है । उसमें विवाह अभी बनता है, नहीं बनता, जैसे अड़ंगों में से लगभग हर एक को काटकर रख दिया है । प्रतिपादन उन्होंने ज्योतिष ग्रन्थों के आधार पर ही किया है । कोई दोष किसी जाति पर, किसी देश पर लागू होता है, किसी पर नहीं, ऐसे अनेक प्रमाण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस पुस्तक में भरे हुए हैं । उस आधार पर सिद्ध किया जा सकता है कि जो हम मध्यभारत के थोड़े से लोग विवाहों की प्रचलित मुहूर्त-मान्यता पर विश्वास करते हैं उनके लिए ८० प्रतिशत बच निकलने की गुंजायश है । फिर यदि कन्या १२ वर्ष से ऊपर आयु की है, उसे मासिक धर्म होने लगा है तो शीघ्रबोधकार की स्पष्ट घोषणा है कि उसके विवाह में अच्छी घड़ी-मुहूर्त देखकर विवाह कर देना चाहिए और किसी दिन, मास, गुरु, सूर्य, चन्द्र की पूजा या चौथे, आठवें, बारहवें होने की अगुणता के झंझट में नहीं पड़ना चाहिए । आजकल आमतौर से सयानी कन्याओं के विवाह होते हैं । बाल-विवाह निषेध कानून के अनुसार १४ वर्ष से कम आयु की कन्या का विवाह हो भी नहीं सकता । ऐसी दशा में हर हिन्दू-विवाह स्वभावतः सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त हो जाता है ।

यह बात भुक्तभोगी ही जानते हैं कि विवाह की सब बात पक्की हो चुकी है, दोनों पक्ष बिल्कुल तैयार हैं और उन्हें सुविधा भी है । तब भी मुहूर्त के नाम पर कई-कई वर्षों के लिए विवाह टाले जाते हैं, तो उससे कितनी असुविधा होती है । कई बार ऐसे समय में विवाह करने पड़ते हैं, जब ऋतु सर्वथा प्रतिकूल एवं असुविधाजनक होती है । होने को तो यों सभी कुछ होता है, काम तो किसी प्रकार चलता ही है, पर असुविधा इतनी रहती है कि आनन्द के स्थान पर क्षोभ और उद्वेग ही हाथ रह जाता है ।

इसी प्रकार कई बार लड़के-लड़की का जोड़ा हर दृष्टि से उपयुक्त होता है दोनों ओर के सम्बन्धी आपस में सन्तुष्ट और प्रसन्न हैं, किन्तु विधि वर्ग न मिलने से ऐसा अड़ंगा निकल आता है कि इस आधार पर वह विचार छोड़ देना पड़ता है और उस अभाव की पूर्ति फिर कभी भी नहीं हो पाती । कई बार अच्छा विधि वर्ग मिलने की बात की प्रधानता देने वाले ऐसे फूहड़ जोड़े भिड़ जाते हैं, जिनसे आजीवन असन्तोष और कलह छाया रहता है । जो बातें देखने, तलाश करने और मिलाने की हैं, उन्हें लोग मिलाते नहीं और जन्म कुण्डलियाँ इधर से उधर घुमाते रहते हैं । कोई पंडित क्या कह देता है, कोई क्या, इस भ्रम जंजाल में पड़े हुए लोग बहुत-सा समय और श्रम गँवाते रहते हैं । जहाँ विवाह अच्छा रहता वहाँ से छोड़ देते हैं और जहाँ कुछ भी अच्छाई नहीं थी, वहाँ 'विधि वर्ग' की मान्यता के आधार पर स्वीकार कर लेते हैं । अविवेकपूर्ण किए गए निर्णयों के आधार पर जो परिणाम निकलने चाहिए वही लोगों को भुगतने भी पड़ते हैं ।

निर्दोषों पर दोषारोपण—कई लड़कों और लड़कियों को 'मंगली' घोषित कर दिया जाता है । उनके लिए 'मंगली' ही साथी चाहिए । इस अड़ंगे में कितनी ही कन्याएँ बहुत बड़ी हो जाती हैं । उनकी आयु के लड़के नहीं मिल पाते, तब उन बेचारी की जिन्दगी ही एक तरह से बर्बाद हो जाती है । उसी प्रकार कई लड़के 'मंगली' होते हैं, उन्हें 'मंगली' लड़की न मिली तो देर तक अविवाहित बने रहते हैं फिर कभी विवाह हुआ भी भागते भूत की चोटी उतारने की तरह ज्यों-ज्यों कुमारपन उतारना पड़ता है और अनुपयुक्त साथी से पल्ला बँध जाता है । उपयुक्त जोड़ी ढूँढ़ने में यह मंगली होने की मान्यता कितनी भारी अड़चन उत्पन्न करती है, इसके हमने कितने ही दुःखान्त उदाहरण देखे हैं । उन घटनाओं का वर्णन यदि किया जाय तो हर सहृदय और विवेकशील व्यक्ति यही कहेगा कि इन व्यर्थ के भ्रम-जंजालों से हिन्दू समाज को जितनी जल्दी छुड़ाया जा सके उतना ही उत्तम है ।

अमुक घड़ी में, अमुक दिन उत्पन्न हुआ बालक अशुभ होता है । इस मान्यता ने अनेक बच्चों को आजीवन उपेक्षित एवं तिरस्कृत रहने के लिए विवश कर दिया । अट्ठाईस नक्षत्रों में से छह नक्षत्र 'मूल' माने जाते हैं । मूलों में उत्पन्न हुए बच्चे पिता, माता, बहिन, मामा आदि के लिए अशुभ बताते हैं, उन्हें धन-हानि तथा रोग, शोक उत्पन्न करने वाला भी कहा जाता है । ऐसे बच्चे जब उत्पन्न होते हैं, तब अभिभावकों का दिल धड़कने लगता है । घर में शिशु-जन्म की खुशी होना तो दूर सब अशुभ-अनिष्टा की आशंका से ग्रसित रहने लगते हैं । कन्या हुई तो उसके मरने की मनौती मनाई जाती है । लड़का हुआ तो मूल शान्ति का खटराग रोपा जाता है । सौ-दो सौ रुपये इसी जंजाल में देखते-देखते खर्च हो जाते हैं । फिर भी वह आशंका दूर नहीं होती ।

अट्ठाईस नक्षत्रों में छह मूल होने के कारण लगभग २२ प्रतिशत बच्चे मूलों में उत्पन्न होते हैं और वे सब माँ-बाप के लिए प्रसन्नता की अपेक्षा आशंका का कारण बनें, यह कितनी बुरी बात है । ऐसे बच्चों को न तो पूरा-पूरा प्यार ही माँ-बाप का मिलता है और न पालन-पोषण ही । वे सहज स्नेह कर्त्तव्य और लोक-लाज से उन्हें पालते तो हैं, पर मन ही मन अशुभ अनिष्ट का प्रतीक समझकर घृणा और भय भी करते रहते हैं । बच्चे और उनके अभिभावकों के बीच ऐसी दीवार खड़ी कर देने वाली मान्यता ने किसी का क्या हित साधन किया ? यदि इसमें कुछ भी वास्तविकता होती तो भी यह कहा जाता कि सत्य के लिए मानना पड़ता है । सच्चाई यह है कि हर दिन और हर नक्षत्र शुभ है । किसी दिन किसी का जन्म शुभ है न अशुभ । प्रयत्न और कर्त्तव्य से हर व्यक्ति अच्छा हो सकता है और बुरा । यह मिथ्या अन्ध-विश्वास अकारण ही असंख्य लोगों के लिए भय, त्रास, उद्वेग, आशंका का कारण बना हुआ है और अगणित दुष्परिणाम उत्पन्न करता रहता है ।

भोलेपन का शोषण—एक व्यक्ति को किसी भविष्यवक्ता ने बताया कि उसकी मृत्यु आज से दो वर्ष बाद हो जायगी । बेचारे ने यह बात सच मान ली । जो कुछ पैसा था तीर्थ-यात्रा, ब्रह्म-भोज आदि में खर्च कर दिया । जमीन जायदाद थी उसका बँटवारा और वसीयत कर दी । काम-धन्धा बन्द कर दिया । लगभग पूरी तरह खाली हाथ हो गया । नियत समय पर मौत की प्रतीक्षा करता रहा, पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह आई ही नहीं । इसके बाद वह दस वर्ष और जिया । इतने दिनों असहाय-अनाथ जैसी जिन्दगी उसे गुजारनी पड़ी । सब लोग उसका मजाक बनाते रहे और मूर्ख बनाते रहे । उसे हर किसी के सामने लज्जित और सहमा जैसा रहना पड़ता था ।

सस्ते नुस्खे ढूँढ़ने वाले बेचारे—सस्ते नुस्खे खोजना मनुष्य की आन्तरिक हीनता, दुर्बलता एवं कायरता का चिह्न है । अपने देश में ऐसे ही लोगों की भरमार पाई जाती है । श्री-सूक्त का पाठ करके लक्ष्मी बटोरने का सपना देखने वाले, हनुमान चालीसा पढ़कर मुकदमा जीतने की आशा लगाने वाले, भैरोंजी का दीपक जलाकर रोग दूर होने की आकांक्षा करने वाले और अमुक बाबा का आशीर्वाद मिलने पर नौकरी में तरक्की हो जाने की उम्मीद किये बैठे रहने वाले लोगों की संख्या इतनी अधिक है कि धार्मिकता और पूजा-पाठ के नाम पर मची हुई सारी धमा-चौकड़ी इसी आधार पर कागज के महल की तरह खड़ी दिखाई देती है । लगता है अभी भी इस देश में आध्यात्मिकता और धार्मिकता का वातावरण मौजूद है, पर यदि ऐसा सचमुच ही रहा होता तो इससे अधिक प्रसन्नता और सौभाग्य की बात हमारे लिए क्या हो सकती थी, पर यह तो उससे मिलती-जुलती एक बिल्कुल ही दूसरे किस्म की चीज है । हीरा और काँच की शक्ल ही एक समान होती है, उनके मूल्य में तो जमीन आसमान जितना अन्तर रहता है । ठीक यही बात इस सस्ते मोल में मनमानी महत्त्वाकांक्षाओं को पूर्ण करने की मान्यता पर टिकी हुई पूजा-पत्री और वास्तविक आध्यात्मिकता में अन्तर होता है । अध्यात्मिकता का अनुयायी श्रमशील, पुरुषार्थी, व्यवस्थित, धैर्यवान् और साहसी होता है, वह उचित मार्ग का अवलम्बन कर प्रगति के लिए भरपूर प्रयत्न करता है । फल के लिए लालायित नहीं होता, अपने कर्त्तव्य-पालन को ही सफलता मान लेता है और उसी से परिपूर्ण सन्तोष अनुभव करता है । यह कर्त्तव्य-पालन करते हुये जो भौतिक लाभ मिल जाता है वह तो उसे मुफ्त का उपहार समझकर दुहरी प्रसन्नता अनुभव कर लेता है । सफलता न मिली तो गम नहीं । एक बार सफलता न मिली तो अगली बार मिलेगी और न भी मिली तो कुछ चिन्ता की बात नहीं; जो श्रम, साहस एवं कर्त्तव्य-पालन किया उसका आनन्द भी क्या कम महत्त्व का है । उससे अपनी क्षमता एवं प्रतिभा के विकास एवं कई तरह के कड़ुये-मीठे अनुभव प्राप्त करने का सुअवसर मिल जाता है । आत्मोत्कर्ष की दृष्टि से उसका भी महत्त्व कम नहीं है । गीता की यही शिक्षा है । यह कर्म का दर्शन और अध्यात्म का सार है । जिसे यह आता है, वह जीवन का लक्ष्य और कार्यक्रम निर्धारित करता है और उसी दशा में सुनिश्चित गति से, स्थिर चित्त से बढ़ता चला जाता है । न उसे हानि विचलित करती है और न लाभ की तृष्णा से उद्विग्नता ही बढ़ती है ।

बिना परिश्रम विपुल लाभ की तृष्णा—जिन्हें लाभ की लालसा तो बढ़ी-चढ़ी है पर अपनी योग्यता, सामर्थ्य, श्रमशीलता आदि को बढ़ाना नहीं चाहते । बिना प्रयास या स्वल्प प्रयास के बढ़े-चढ़े लाभ प्राप्त करने वाले और उसके लिए सस्ते उपाय ढूँढ़ने वाले लोग वस्तुतः अधीर, अव्यवस्थित एवं अविकसित स्तर के लोग ही माने जाते हैं । ऐसे लोगों की लालसा स्वरूप प्रयास में अपनी योग्यता एवं सामर्थ्य की तुलना में अधिक चाहने वाले लोग ही सस्ते नुस्खे, शार्टकट ढूँढ़ते फिरते हैं । अँधेरे में टटोलते हुए वे एक परीक्षण पूजा-पत्री का भी करते रहते हैं । दो चार पैसे फूल-पत्ते देव मूर्तियों को चढ़ा कर, किसी देवी-भवानी के दर्शन कर, किसी सिद्ध महात्मा को माला मिठाई देकर, किसी मन्त्र-तन्त्र की दस-पाँच दिन तक टंट-घंट करके वे विपुल सम्पदा के स्वामी बनना चाहते हैं । ऐसे लालची अधीर और गए-गुजरे लोग सच्चे मन से न कोई पूजा कर पाते हैं न भक्ति भावना । उन्हें जल्दी-जल्दी लूट का माल उड़ाने की और क्षमता की तुलना से अत्यधिक फल पाने की लालसा परेशान करती रहती है । इसी की तृप्ति के लिए वे पूजा-उपासना का बाना कुछ दिन पहनते हैं और जब अभीष्ट फल मिलता नहीं दीखता तो उसे छोड़ ही नहीं बैठते, वरन् देवता, पूजा, मन्त्र, गुरु आदि की भरपूर निन्दा भी करते हैं ।

उपासना का प्रचलित स्वरूप विशुद्ध रूप से अन्ध-विश्वास मात्र है । उससे किसी का कोई लाभ नहीं हो सकता । उपासना एवं आध्यात्मिकता का परिणाम मनुष्य की अन्तरात्मा पर चढ़े हुए मल-आवरण विक्षेपों का समाधान कर्त्तव्यपरायण, धैर्य, साहस, विवेक, श्रमशीलता, व्यवस्था आदि सद्गुणों का अभिवर्द्धन ही हो सकता है । उससे मनुष्य का व्यक्तित्व निखरता है । दृष्टिकोण उदार, विशाल एवं परिमार्जित होता है । यह लाभ इतने बड़े हैं जिनके आधार पर मानव-जीवन का लक्ष्य प्राप्त होता है और साधारण जीवन महापुरुषों जैसा बनकर सच्ची सुख-शान्ति का पथ प्रशस्त करता, पर हम देखते हैं कि इस ओर लोगों की तनिक भी रुचि नहीं है । जो कर्म पुरुषार्थ से न बन पड़े, उसे देवता द्वारा करा लेना ही पूजा का प्रयोजन बन गया है । इस प्रकार का हेय दृष्टिकोण किसी सच्चे अध्यात्मवादी का नहीं, वरन् गए-गुजरे लालची का ही हो सकता है ।

पूजा, उपासना, धार्मिकता, आध्यात्मिकता सभी अच्छी हैं । इन सबके लाभ भी असीम हैं, पर वे होनी चाहिए उचित आधार और उचित माध्यम को लेकर । देवताओं जैसा दिव्य जीवन बनाने की कामना से देव पूजा, ईश्वरीय सत्प्रवृत्तियों और सद्भावनाओं का स्रोत अन्तःकरण से प्रवाहित करने के लिए ईश्वरीय उपासना, साहस, धैर्य, संयम, श्रमशीलता जैसी विभूतियों को उपलब्ध करने के लिए गुरुभक्ति, विवेक, दूरदर्शिता एवं नीर-क्षीर विवेक प्राप्ति के लिए, कथा-सत्संग का श्रवण पारायण, समाज को सुसंस्कृत, सद्गुणी एवं सुविकसित करने का प्रयोजन पूर्ण करने के लिए, दान, पुण्य, श्रेष्ठ पुरुषों से सम्पर्क स्थापित करके व्यक्तित्व को समुन्नत करने वाली प्रेरणा प्राप्त करने के लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तीर्थ-यात्रा करनी चाहिए । इन सदुद्देश्यों की पूर्ति के लिये जो भी आध्यात्मिक प्रक्रिया अपनाई जायगी, सार्थक होगी, उसके सत्परिणामों को पाकर मनुष्य धन्य हो जायगा, पर जिसका प्रयोजन लूट के माल की तरह देवताओं का वरदान प्राप्त करके अपने भौतिक जीवन की उन कमियों को पूरा करना मात्र है जो आवश्यक योग्यता, प्रतिभा एवं श्रमशीलता के मूल्य में मिलती हैं—एक प्रकार से अनधिकार चेष्टा करना है । हम देखते हैं कि कर्त्तव्यनिष्ठा, धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता के मूल में आज लोगों की अनधिकार चेष्टा और असीम कामनाएँ ही कोलाहल कर रही हैं । इसे विडम्बना ही कहना चाहिए । अच्छा हो हम विडम्बना छोड़ें, वस्तु-स्थिति समझें और वह सोचें जो सोचने योग्य है, वह करें जो करने योग्य है ।

हमें हर वस्तु की, हर बात की वास्तविकता परखनी चाहिए । देखना चाहिए कि कहाँ-क्या तथ्य है ? जो तथ्य हो उसे स्वीकार करना चाहिए । किंवदन्ती के रूप में प्रचलित अधिकांश बातें ऐसी हैं जिन पर बिना समझे-बूझे विश्वास कर लिया जाय तो उसमें लाभ की कम और हानि की अधिक आशंका रहेगी । जिस समाज में अशिक्षितों की संख्या अधिक होती है, जिनमें मनचले लोग अनेक तरह की अफवाहें बनाते और उड़ाते रहते हैं । भोले लोगों का मस्तिष्क कुछ ऐसा विलक्षण होता है कि बुद्धिमत्ता की, हित की, वास्तविकता की बात कही जाय तो उस पर शायद ही विश्वास करें, क्योंकि वह सीधी, स्वाभाविक और कुछ कठिनाइयों से भरे स्वभावों की होती हैं, पर वे ऐसी बातों पर सहज ही भरोसा कर लेते हैं जिनमें जादू, चमत्कार, कौतूहल का पुट रहता है और कम समय तथा कम खर्च से अधिक लाभ मिलने की बात कही जाती है । अपने इसी भोले स्वभाव के कारण अशिक्षित अथवा भावुक लोग अनावश्यक जंजालों में फँस जाते हैं और अपनी शक्ति-सामर्थ्य की खेदजनक बर्बादी करते रहते हैं ।

अन्ध-विश्वास से दूर रहिये

इसमें सन्देह नहीं कि अन्ध-विश्वास की शक्ति भी बड़ी विलक्षण है और सावधान न रहा जाय तो अच्छे पढ़े-लिखे व्यक्ति भी उसके फन्दे में फँस जाते हैं । हमारा देश तो अभी तक इसका घर बना ही हुआ है, पर योरोप और अमेरिका के वैज्ञानिक प्रगति वाले देश भी इससे अछूते नहीं हैं ।

पर भारत की भी यह दशा सदा से नहीं है । एक समय वह भी था, जब संसार में सबसे पहले यहाँ दार्शनिक ज्ञान का प्रकाश हुआ था । यहाँ के विद्वानों ने सांख्य और वैशेषिक जैसे सिद्धान्त ढूँढ़कर निकाले थे, जिनसे सृष्टि और परमात्मा के मूल स्वरूप का भी स्पष्ट रूप से पता लगा लिया गया था । यहीं पर छह वेदान्त-सिद्धान्त का सूर्योदय हुआ, जिसके समीप आधुनिक विज्ञान अब पहुँच रहा है । यहाँ के विद्वानों ने ब्रह्म और जीव की एकता पर बड़े-बड़े ग्रन्थ लिख डाले । फिर भी खेद है कि भूत-पलीत, टोना-टोटका, सयाने-ओझा आदि का जितना व्यापक जंजाल इस देश में पाया जाता है, उतना अन्यत्र कहीं दिखाई नहीं देता । हमें यह कहने में कुछ भी संकोच नहीं कि इन दिनों भारतीय जनता का एक बड़ा भाग सच्चे धर्म को भुला बैठा है और उसने अन्ध-विश्वास को ही अपना 'धर्म' बना लिया है ।

इस अन्ध-विश्वास का परिणाम कितना घातक होता है, इसके लिए एक छोटा-सा उदाहरण लगने का ही पर्याप्त लगता है । यहाँ के अशिक्षित स्त्री-पुरुष और खासकर ग्रामीण लोग छोटे बच्चे को किसी तरह की तकलीफ होते ही उसका कारण नजर लग जाना या किसी प्रकार का टोना-टोटका समझ लेते हैं । इसलिए वे रोग का उचित इलाज कराने के बजाय ओझाओं अथवा सयानों के पास ही पहुँचते हैं । वहाँ पर उसकी झाड़-फूँक करके फूल, बताशा और पैसा आदि से भरा एक दोना चौराहे पर रखवा दिया जाता है । ओझा कहते हैं कि जो व्यक्ति इस 'उठावा' को लेगा, उसी के ऊपर बच्चे की बीमारी चली जायेगी । ऐसी ही मनगढ़न्त बातों पर विश्वास करके माँ-बाप बच्चे का उचित इलाज करने पर ध्यान नहीं देते । परिणाम यह होता है कि बीमारी बढ़ जाती है और बच्चा असमय में ही चल बसता है ।

इस प्रकार की सैकड़ों मूढ़ताएँ इस देश की जनता में फैली हुई हैं, जिनसे व्यक्ति और समाज की बहुत कुछ हानि होती रहती है, पर अन्ध-श्रद्धा के नाम पर कोई उनके प्रतिकार का कुछ उपाय नहीं करता । उदाहरणार्थ—हिन्दू लोग हनुमान जी की आकृति का होने से बन्दरों को और गणेशजी का वाहन समझ कर चूहों को मारना बहुत बड़ा पाप समझते हैं । इतना ही नहीं हजारों व्यक्ति तो बन्दरों को बुला-बुला कर रोटी, चना तथा अन्य खाद्य पदार्थ देते हैं, पर बदले में बन्दर लोगों के कपड़े, जूते, बर्तन आदि उठा ले जाते हैं, 'बच्चों को काट लेते हैं और अनेक बार छतों पर से ईंट, पत्थर गिराकर प्राण-हानि भी कर देते हैं । चूहे भी खेतों, गोदामों और घरों में से हजारों, लाखों मन अनाज खा डालते हैं जिससे मनुष्यों को उसकी कमी पड़ जाती है, पर अन्ध-विश्वास के कारण इस तरह की हानि का प्रतिकार करने का कोई कारगर प्रयत्न नहीं किया जाता ।

आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य में नीर-क्षीर विवेचन कर सकने की विवेक-बुद्धि जाग्रत हो और वह वास्तविकता और सचाई को परखना सीखे । वह कुछ भी कठिन नहीं है । भोजन बनाना कठिन हो सकता है, पर उसका स्वाद चखकर यह बताना सरल है कि यह ठीक बना या नहीं । रोगी और निरोग, कुरूप और सुन्दर की परख कर सकना कुछ कठिन नहीं है । यदि थोड़ी विवेक बुद्धि का उपयोग किया जाय और गहराई तक घुसने का प्रयत्न किया जाय तो वास्तविकता और अवास्तविकता का अन्तर सहज ही समझ में आ जाता है । हमें यह परख करनी चाहिए और इतना साहस एकत्रित करना चाहिए कि जो कुछ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोगों द्वारा कहा, बताया या माना जा रहा है, वह यदि ठीक न जँचे तो हिम्मत के साथ उसे अस्वीकार कर दें ।

श्रद्धा बड़ी उत्तम वस्तु है । उसमें बल भी बहुत होता है । श्रद्धा के बल पर लोग धर्म, अध्यात्म एवं ईश्वर प्राप्ति की उच्च कक्षा तक जा पहुँचते हैं, पर वह होनी चाहिए विवेकसम्मत । तर्क-बुद्धि की कसौटी पर कसकर आवश्यक प्रमाणों की सहायता से पूरी छान-बीन के साथ जो बात स्वीकार की गई है, उसी में दृढ़ता रहेगी और दृढ़ श्रद्धा ही किसी प्रयोजन को पूर्ण करती है । अन्ध-श्रद्धा जो ऐसे ही किसी के कहने-सुनने से अपना ली गई है, देर तक ठहरती नहीं, कोई दूसरा आदमी उसे सहज ही अस्त-व्यस्त भी कर सकता है । ऐसे अन्ध-श्रद्धालु अपनी मान्यताओं के प्रति शंकाशील बने रहते हैं और जब कभी कोई राई-रत्ती व्याघात उपस्थित होता है तो पूर्व मान्यता को छोड़ते हुए भी देर नहीं करते । अन्ध-श्रद्धा हमेशा अधूरी रहती है, चूँकि उसे सचाई की कसौटी पर कसा नहीं गया है, इसलिए उसका आधार हमेशा थरथराता रहता है ।

देखा जाता है कि अनेक देवताओं को पूजने वाले वस्तुतः किसी पर भी विश्वास नहीं करते, अनेक मन्त्रों को जपने वाले थोड़ी-थोड़ी सब की बानगी लेते हैं । दृढ़ता तो किसी बात में तभी उत्पन्न होती है, जब किसी बात को गहराई तक समझ लिया गया हो और उसे भली-भाँति परख लिया गया हो । यह दृढ़ता जब तक श्रद्धा के साथ सम्मिलित न हो, तब तक वह अन्ध-श्रद्धा ही कहलाती रहेगी और उसकी अस्थिरता भी बनी ही रहेगी । अन्ध-श्रद्धा ने हमें इस स्थिति पर पहुँचा दिया है कि कोई भी 'ऐरा गैरा नत्थू-खैरा' कोई भी आडम्बर रचकर हमें ठग सके । इस स्थिति का अन्त होना ही चाहिए । हमारी विवेकशीलता को जाग्रत होना ही चाहिए ।

अन्ध-विश्वास हटाएँ

जब शरीर, वस्त्र या घर की सफाई नहीं की जाती है और जो मलीनता उत्पन्न होती है, उसे जहाँ का तहाँ पड़ा रहने दिया जाता है तो कुछ ही समय में दुर्गन्ध उत्पन्न हो जाती है । इसलिये नियम यह है कि जल्दी-जल्दी हर वस्तु की सफाई करते रहा जाय ।

सफाई आवश्यक—शरीर की सफाई न की जायगी तो पसीना, दाँत, आँख, कान का मल बढ़ता, सूखता और जमा होता चला जायगा । शरीर में असंख्यों छोटे-बड़े छिद्र हैं और वे सभी निरन्तर गन्दगी निकालते रहते हैं । यह गन्दगी हानिकारक होती है, अधिक मात्रा में जमा हो जाने पर दुर्गन्ध कृमि एवं रोग उत्पन्न करती है । अतएव स्नान आदि के द्वारा देह पर भीतर से निकले हुए एवं बाहर से आकर जमा हुए मैलों को साफ करते रहना एक आवश्यक कर्त्तव्य माना गया है । जो इस कर्त्तव्य का पालन नहीं करते वे मलीनता लपेटे रहने के कारण समाज में घृणित समझे जाते और तिरस्कृत होते हैं । बीमारियाँ भी उन्हें घेर लेती हैं ।

हवा में उड़ने वाली धूलि और शरीर में भीतर से निकलने वाली गन्दगी कपड़ों को मैला करती रहती है । आज जो कपड़ा धुला हुआ था वह कल मैला हो जाता है । इसलिए बार-बार उसे धोना, सुखाना पड़ता है । यदि कपड़े न धोए जाएँ तो वे दुर्गन्धयुक्त मैले-कुचैले घृणास्पद बन जायेंगे । पहनने वाले को निन्दा, तिरस्कार एवं अस्वस्थता का भागी बनावेंगे । कमरों को झाड़ा न जाय तो हवा में उड़ने वाली धूल से फर्श ढक ही जायगा, दीवारों की सफाई न की जाय तो मकड़ी के जाले तथा दूसरे कीड़े-मकोड़ों के घर बन जायेंगे । बर्तनों को न माँजा जाय तो वे काले पड़ जायेंगे और अपनी चमक खो बैठेंगे । उनका उपयोग करते हुए घृणा उपजेगी । भौतिक जगत में हर जगह सफाई को आवश्यक एवं अनिवार्य माना जाता है । म्युनिसिपल बोर्ड सड़कों, नालियों, पाखाने, पेशाब-घरों एवं कूड़े-कचरे के साफ करने के लिए खर्चीली व्यवस्था वहन करती है । यदि उसमें जरा भी त्रुटि रहे तो नगर गन्दगी और बीमारी के घर बन जायें और वहाँ रहना भी कठिन हो जाय ।

मस्तिष्क की भी ठीक यही स्थिति है । उसमें निजी दुर्बुद्धि दुष्प्रवृत्तियों एवं कुसंस्कारों के कारण भीतरी मलीनता निरन्तर उत्पन्न होती रहती है । फिर बाह्य जगत में भी अच्छाई की अपेक्षा बुराई अधिक है, उनका प्रभाव पड़ता ही है । ऐसी दशा में मानसिक संस्थान में धीरे-धीरे अनेक विकृतियाँ जमा होती चलती हैं । इनकी सफाई के लिए स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन-मनन आदि क्रिया के प्रयोगों को आवश्यक बताया गया है । मन में भी आलस्य की मात्रा कम नहीं है । शरीर यही चाहता रहता है कि उसे काम न करना पड़े, आराम के साथ दिन गुजर जायें । दबाव पड़ने पर ही वह कुछ करने को तैयार होता है, इसी प्रकार मन का भी यह स्वभाव है कि जो कुछ आस-पास होता दिखाई पड़ता है, उसी को ठीक मानकर अपना लेता है और फिर धीरे-धीरे उसी परिपाटी का अभ्यस्त बन जाता है ।

नीर-क्षीर विवेक की आवश्यकता—कहने की आवश्यकता नहीं कि आज चारों ओर अनुपयुक्त प्रथा-परम्पराओं और परिस्थितियों का ही बाहुल्य है । बुराइयों और मूर्खताओं में अपना कुछ विशेष आकर्षण रहता है जिसे लोग सहज ही अपना लेते हैं । बीड़ी-सिगरेट को ही लीजिये, इसमें सब प्रकार से शारीरिक, मानसिक, आर्थिक हानि ही हानि है । इस हानि से सब लोग परिचित हैं फिर भी देखा-देखी प्रतिस्पर्द्धा के कारण यह बुराई दिन-दूनी, रात-चौगुनी पनपती ही जाती है । यही बात अन्य प्रथा-परम्पराओं के बारे में भी लागू होती है । आज कितनी ही बातें हमारे समाज में ऐसी प्रचलित हैं जिनका न कोई कारण है, न लाभ । उनकी वास्तविकता भी कुछ नहीं, फिर भी वे चलती हैं और खूब चलती हैं । लोग उन्हें सचाई से भी अधिक सच मानते हैं, यद्यपि उनमें आदि से अन्त तक केवल मात्र भ्रान्ति ही भ्रान्ति भरी होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

५.७ प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा

शरीर, वस्त्र और मकान में निरन्तर बढ़ने, पनपने वाली गंदगी की तरह समाज में भी अनेकों कुरीतियाँ, विकृतियाँ उपजती, बढ़ती रहती हैं । मनुष्य का आलसी स्वभाव हर बात को तर्क की कसौटी पर नहीं कसता और न विवेकपूर्वक तथ्यों को ढूँढ़ने का कष्ट उठाना चाहता है । स्वतंत्र चिन्तन और मौलिक प्रतिभा की न्यूनता के कारण वह बुराइयाँ और मूर्खताएँ आस-पास अधिक मात्रा में प्रचलित होती हैं, उन्हें अपनाकर अपने जीवन-क्रम में सम्मिलित कर लेता है । आवश्यकता इस बात की है कि लोगों में जब कि मूर्खों की ही संख्या अधिक है और उनकी गतिविधियों में भी अधिकांश मूर्खतापूर्ण ही होती हैं तो हर बात की विवेचना और समीक्षा की जाती है और जो कुछ उपयोगी दिखाई पड़ता है उसे अपनाकर शेष अनुपयुक्त की उपेक्षा कर दी जाती है । यदि ऐसा हुआ होता तो हम उन विचारों और कामों को अपनाने से बचे रहते जो हमारे लिए न तो उपयोगी हैं और न आवश्यक । यदि इस प्रकार की विवेकशीलता हममें रही होती तो हानिकर रूढ़ियों और अवांछनीय मान्यताओं के गुलाम होकर हम जो अपार हानि उठाते रहते हैं, उससे बच गये होते । लेकिन हमारा दुर्भाग्य ही है कि किसी प्रकार की भी विचारशीलता को हम अपने भीतर जाग्रत नहीं कर पाते और अपनी मानसिक, शारीरिक एवं आर्थिक क्षमताएँ उन बातों में बर्बाद करते रहते हैं, जो उपहासास्पद तो हैं ही हानिकर भी कम नहीं हैं ।

छिपकली का शकुन—कुछ उदाहरण लीजिए । छिपकली एक घरेलू जीव है जो दीवारों पर चिपका रहता है, कीड़े-मकोड़े खाता रहता है । उसकी चलने की शक्ति यह है कि कभी-कभी ही थोड़ा रुक-रुक कर चल पाती है । दीवारों और छत पर निरन्तर चिपके रहने की उसके पंजों की पकड़ कभी-कभी ढीली हो जाती है, फलस्वरूप अक्सर नीचे गिर पड़ती है । उसी समय यदि नीचे कोई आदमी बैठा है तो उसके किसी अंग पर गिर पड़ना भी स्वाभाविक है । यदि खाली जमीन पर भी वह गिरे तो फिर उठकर वह ऊपर चढ़ना चाहती है । कहाँ चढ़े, किधर से चढ़े का पूरा विवेक उस मन्द-बुद्धि कीड़े को नहीं होता, अतएव कभी-कभी वह उधर ही कहीं बैठे, खड़े मनुष्य के शरीर पर चढ़ जाती है । इस मामूली-सी महत्त्वहीन बात में न तो कोई विशेषता की बात है न अचम्भे की ।

पर यार लोगों ने बात का बतंगड़ और तिल का ताड़ बनाकर खड़ा कर दिया । 'पल्ली-पतन' एक पूरा शास्त्र ही बन गया । छिपकली किधर से गिरी, किधर को भागी, उसका सिर किधर था, पूँछ किधर थी, किस अंग पर चढ़ी, किस तिथि वार को गिरना, चढ़ना हुआ आदि बातों के अनेक प्रकार के फलादेश गढ़ दिए गए । किसी का फल हानि या किसी को लाभप्रद बता दिया गया । व्यर्थ की एक मानसिक उलझन खड़ी कर दी गई । जिसको हानिकर फल बताया गया उसे यह भी सुझाया गया कि क्या-क्या खर्च करने से वह अशुभ शान्त होगा । इस शान्ति में ऐसे विधि-विधान भी सम्मिलित किए गए जिनसे यह फलादेश बताने वाले पंडितों को आर्थिक लाभ होता है ।

बेचारी छिपकली, नींद या थकान से पंजों की पकड़ ढीली होने पर अक्सर नीचे गिरती है । उसका किसी के शरीर पर गिर पड़ने में क्या अनहोनी बात है । उसके गिरने-चढ़ने में शुभ-अशुभ की कौनसी बात हो सकती है ? क्यों हो सकती है ? इसका न कोई कारण है और न आधार । पर जो हुल्लड़ चल पड़ा सो चल पड़ा । ऐसी ऊटपटांग बातें एक से दूसरे तक पहुँचती हैं और लोग उसे सचाई जैसी मानकर अपने विश्वास का अंग बना लेते हैं ।

कुत्ते का कान फड़फड़ाना—कुत्तों के कानों में अक्सर छह पैर वाले लाल कीड़े चिपके रहते हैं और वे उन्हें काटते रहते हैं । कई बार उनके चौड़े कर्ण-छिद्रों में मक्खियाँ घुसने लगती हैं, इसलिए अक्सर वे अपने कान फड़फड़ाते रहते हैं । किसी कुत्ते की गतिविधियों का लेखा-जोखा रखा जाय तो प्रतीत होगा कि वह प्रतिदिन सौ-पचास बार कान फड़फड़ाता है । यह उसकी एक स्वाभाविक दैनिक क्रिया है, पर यार लोगों ने उसे भी किसी अशुभ अनिष्ट का संकेत मान लिया है । कभी कोई व्यक्ति कहीं बाहर जा रहा है या किसी प्रसंग की चर्चा चला रहा है अथवा कुछ तैयारी कर रहा है या कुछ सोच रहा हो और उसी समय कुत्ता कान फड़फड़ा दे तो समझा जायगा कि अपशकुन हो गया, अब वह काम बनने वाला नहीं है । इसी आधार पर लोग अपने महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम को रद्द कर देते हैं, वे मान बैठते हैं कि अपशकुन हो जाने से यह काम तो अब बनने वाला है नहीं, इसलिए इसके लिए प्रयत्न भी क्यों किया जाय । स्थायी रूप में योजना बदली न गई तो भी उस समय तो कार्यक्रम रद्द कर दिया या रोक दिया ही जाता है । उपयुक्त काम करने की प्रक्रिया में इस प्रकार बाधा पड़ जाने से हो सकता है कि अवसर निकल जाय, वह होने वाला काम स्वत: ही बिगड़ जाय । कोई यह नहीं सोचता कि आखिर कुत्ते के कान फड़फड़ाने से मनुष्य का कोई काम बिगड़ने का सम्बन्ध किस प्रकार हो सकता है ? सम्बन्ध हो चाहे न हो इतना जरूर है कि इस प्रकार का विश्वास करने वालों के मन में एक बेसिर-पैर की आशंका जरूर उत्पन्न हो जाती है, जिसकी उथल-पुथल आत्म-विश्वास को डगमगा देती है और अधूरे एवं आशंकित मन से किये हुए काम को असफल बनाने की पृष्ठभूमि रचने लगती है ।

बिल्ली आगे से निकल जाय, छींक हो जाय, तेली दिखाई पड़ जाय तो शकुन बिगड़ गया । ऐसी बीसियों-पचासों चीजें हैं जो दिखाई पड़ जायें तो यह संदेह किया जाने लगता है कि अपशकुन हो गया और अब काम बिगड़ ही जायगा । किसी काम की सफलता के लिए मनोविज्ञान-शास्त्र के अनुसार मनुष्य में आवश्यक उत्साह, सफलता की आशा, अविचल धैर्य और समुचित आत्म-विश्वास होना ही चाहिए । इनमें कमी रहेगी तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपेक्षित एकाग्रता, श्रमशीलता एवं तत्परता घट जायगी । फलस्वरूप सफलता की सम्भावना में भी कमी पड़ेगी । शकुनवाद के मानने में यही सब से बड़ा नुकसान है कि अकारण मन आशंकित और आतंकित होता है । मन में असफलता की आशंका घुमड़ने लगती है । बहुत बार होता भी यही है कि शंका-शंकित व्यक्ति अपनी मानसिक दुर्बलता के कारण सचमुच सफलता से हाथ धो बैठता है । शकुनों के जंजाल में फँसने पर इसी प्रकार की हानि उठानी पड़ती है ।

शुभ और अशुभ का भ्रम—घर में आई हुई कौन वस्तु शुभ और कौन अशुभ है, इसकी मान्यता अपनी अनोखी ही है । शनिश्चर के दिन लोहे की बनी कोई चीज खरीद ली जाय तो शनिश्चर देवता उस लोहे में लिपटे हुए घर चले आते हैं और अशुभ परिणाम उत्पन्न करते हैं । दिवाली के दिन जो पैसा घर में आता है यह लक्ष्मी का वरदान माना जाता है और उसे सम्भाल-सम्भाल कर रखते हैं । कार्तिक वदी धन त्रयोदशी के दिन लोग हर वर्ष जरूरत न होने पर भी बर्तन खरीदते हैं, क्योंकि उस दिन पर जो भी बर्तन घर में आवेगा वह शुभ होगा । इस वहम के कारण हर वर्ष बर्तन वालों की खूब बिक्री होती है और खरीददारों के घर में अनावश्यक चीजें भी इकट्ठी होती रहती हैं । सम्भव है यह किसी होशियार बर्तन विक्रेता ने फैलाया है ताकि उसकी अधिक बिकवाली हो सके ।

अन्ध-विश्वास उन्हें कहते हैं जो किसी मनचले व्यक्ति द्वारा कोई शकुन बनाकर फैला दिए जाते हैं और जिन्हें लोग बिना किसी तर्क-वितर्क किए ऐसे ही स्वीकार कर लेते हैं । भोली और भयभीत प्रकृति के मनुष्य आमतौर से ऐसी बातों को अपनाने में अग्रणी रहते हैं । भारतवर्ष का नारी-समाज इस तरह के अन्ध-विश्वासों को जल्दी अपनाने और देर तक पकड़े रहने में अग्रणी रहता है । धूर्त लोग आये दिन कुछ न कुछ शिगूफे छोड़ते रहते हैं । इन भोली अबलाओं को बे-सिर-पैर की बातों में उलझाकर वे पैसे कमाने का तमाशा देखने का मजा लूटते रहते हैं । कई बार तो कितने ही शिगूफेवान अपना उल्लू भी खूब सीधा करते रहते हैं ।

मनचले लोगों द्वारा प्रचलित अफवाहें—कुछ दिन पहले किसी मनचले ने अफवाह फैला दी कि—"एक जंगल में देवी रोती हुई मिली । रास्तागीरों ने पूछा कि तू कौन है, क्यों रोती है ? उसने कहा मैं भगवती देवी हूँ । इस वर्ष ऐसा होने वाला है कि जो स्त्री अपने भाई के घर बिना बुलाये, बिना सूचना दिये पहुँचेगी और नारियल की गिरी का गोला तथा मिश्री भेंट करेगी उसका भाई तो बच जायगा, अन्यथा शेष सबके भाई या तो भयानक रूप से बीमार पड़ेंगे या मर जायेंगे ।" यह अफवाह तेजी से फैली । एक स्त्री ने दूसरी से, दूसरी ने तीसरी को कहा और देखते-देखते यह दूर तक प्रचलित हो गई । उसी बात को जब कई के मुँह से सुना जाय तब तो उसके पक्के होने में कोई सन्देह ही नहीं रहता । अब स्त्रियाँ अपने भाइयों के यहाँ गोला और मिश्री ले-लेकर बिना बुलाये चलने लगीं । दो-चार जब हो आईं तो उन्होंने औरों से कहा और उन्हें भी जाने की प्रेरणा दी । अब तो ऐसी भगदड़ मची कि एक भी घर की स्त्री ऐसी न बची जो अपने मैके इसी प्रयोजन के लिए न गई हो । गाड़ियों में बारातों जैसी भीड़ें रहने लगीं । कहीं भी जाइए सवारियाँ मिलनी मुश्किल हो गईं । जिधर देखिए उधर स्त्रियों का यातायात भारी संख्या में दिखाई देने लगा । किराये भाड़े में लाखों करोड़ों रुपया बर्बाद हो गया । गिरी के गोला इतने बिके कि दुकानदारों की बन आई, उन्होंने इस अवसर का लाभ उठाया और दाम दूने-डयौढ़े कर दिए । जाने-आने के प्रसंग में काम हर्ज हुए । जिन भाइयों की बहिनें नहीं पहुँच पाईं या बहिनें थी ही नहीं, उन्होंने किन्हीं नाते-रिश्ते की बहिनों को पत्र डालकर बुलाया ताकि वे कहीं मर या बीमार न पड़ जायें । यह उत्तर-प्रदेश, बिहार, राजस्थान, मध्य प्रदेश के अधिकांश जिलों में चलता रहा ।

इसी प्रकार की एक अफवाह किसी ने फैला दी कि किसी देवी ने भविष्यवाणी की है जिनकी गोदी में लड़के हैं वे स्त्रियाँ सोमवार के दिन तालाब के किनारे बैठकर आधा सेर जलेबी खावें तो उनके लड़के बचेंगे, नहीं तो एक वर्ष के भीतर वे मर जावेंगे । अफवाह जोरों से फैली । जलेबी की माँग बढ़ी । जो लोग और धन्धा करते थे उन्होंने जलेबी बनाना आरम्भ कर दिया । सोमवार के दिन जिधर देखें उधर जलेबी बाजार में छाई दिखाई पड़ने लगीं । फेरी वाले गली मुहल्लों में जलेबी के खौंमचे लेकर पहुँच गये और अफवाह का जोरों से समर्थन करने लगे । बच्चे वाली अधिकांश स्त्रियों ने जलेबी खरीदीं । तालाब के किनारे पहुँचीं और खाने लगीं । सोमवार के दिन तालाबों पर सैकड़ों स्त्रियों के झुण्ड पहुँचने लगे और वहाँ मेला लगने लगा । मसखरे लोग इस बेवकूफी का खूब रस लेने लगे । बात एक गाँव से दूसरे गाँव में फैली और आँधी-तूफान की तरह उसका अनुकरण हर गाँव में किया जाने लगा । किंवदन्ती में कहा गया था कि—आधा सेर जलेबी केवल बच्चे वाली स्त्री को ही खानी है । न खा सके तो तालाब में फेंक देनी है, पर उसमें से एक टुकड़ा भी किसी बच्चे या व्यक्ति को नहीं देना है । इस आधार पर बच्चों के लिए अलग से जलेबियाँ खरीदी गईं । माताएँ जब आधा सेर न खा सकीं तो उन्हें बची हुई जलेबी तालाब में फेंकनी पड़ी । मनो जलेबी तालाब में इस प्रकार फेंकी गई तो वे सड़ीं, कीड़े उत्पन्न हुए, बदबू फैली और तालाबों का पानी गन्दा हो गया । जब तक लगभग सारी स्त्रियाँ जलेबी न खा चुकीं, तब तक लगभग एक साल तक गाँव-गाँव यह धमा-चौकड़ी चलती रही । जलेबी वालों ने अपने धन्धे में गहरी कमाई कर ली । घटिया से घटिया चीज बनाकर महँगे से महँगे दाम में खपा दीं । खराब जलेबियाँ भूख से अधिक मात्रा में खाने पर हजारों स्त्रियों को दस्त, कै, पेट का दर्द, खाँसी आदि का शिकार बनना पड़ा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पति के सिर में जूते—इसी प्रकार एक बार अफवाह फैलाई गई कि अगले वर्ष कोई बीमारी फैलेगी और सुहागिनों को विधवा होना पड़ेगा । यह बात देवी ने अपने किसी भक्त को सपना देकर कही है और साथ ही यह बताया है कि शनिश्चर को प्रातःकाल दिन निकलने से पूर्व-बिना टोके जो स्त्री अपने पति के सिर में पाँच जूते लगा देगी, वह उस विपत्ति से बच जायेगी । कुछ स्त्रियों ने अपने पतियों को इसके लिए सहमत कर लिया और देवी के निर्देशानुसार शनिश्चर के दिन उनके सिर में पाँच जूते लगा दिए । बात पतियों के अपमान और निन्दा की थी । इसलिए गुपचुप उसका प्रचार हुआ । स्त्रियों ने दूसरी स्त्रियों से गुपचुप अपनी करनी बखानी कि उन्होंने किसी प्रकार पति के मना करने पर भी उन्हें सहमत कर लिया । जिन पुरुषों ने जूते खा लिए थे, उनसे दूसरी स्त्रियों के पतियों ने पूछताछ की तो उन्होंने इसमें कुछ हर्ज न होने की बात और अपनी सहमति प्रकट कर दी । बात फैली तो गुपचुप पर उसका प्रचार इतना अधिक हुआ कि हर स्त्री और हर पुरुष तक यह बात पहुँच गई । जो पति आनाकानी करते हैं उनके घरों में कलह फैला, स्त्रियाँ रूठ गईं, रोटी खाना छोड़ बैठीं, रोने-गाने लगीं, आखिर पतियों को उनके आग्रह के आगे झुकना पड़ा । शनिश्चर को बिना दिन निकले, बिना टोके हल्के-हल्के पाँच जूते सिर में खाने पड़े । जिन स्त्रियों ने जूते मार लिए उन स्त्रियों ने अनुभव किया कि उन्होंने कोई बड़ी सफलता प्राप्त कर ली और किसी बड़ी विपत्ति से छुटकारा ही पा लिया ।

किसी कुएँ, तालाब के बारे में कभी-कभी ऐसी किंवदन्ती फैला दी जाती है कि उसे किसी महात्मा का वरदान मिला है कि जो कोई उसमें स्नान करेगा या उसका जल पियेगा उसके सारे रोग दूर हो जायेंगे । अफवाह फैलती है और लोगों की भारी भीड़ जमा होने लगती है । एक को देख दूसरा पहुँचता है और दूसरे को देखकर तीसरा । इस प्रकार अन्धी भेड़चाल का ढर्रा चल पड़ता है । बहुत लोग जिस काम को करते दिखाई पड़ते हैं उसे कमजोर मस्तिष्क वाले अटल सत्य मान लेते हैं और कहते हैं जब सारी दुनिया ऐसा कर रही है तो जरूर वह बात ठीक होनी चाहिए और हमें भी उसका लाभ उठाना चाहिए । देखते-देखते ऐसे कुआँ, तालाब पुजने लगते हैं । उनका कोई महन्त-पुजारी बन बैठता है और भेंट चढ़ाने का लाभ उठाता है । राजस्थान में कोटा जिले के एक गाँव में कुछ दिन पूर्व ऐसी ही अफवाह एक तालाब के बारे में फैलाकर उसका पुजापा लाखों रुपया इकट्ठा कर लिया था । इस प्रकार की लूटमार का षड्यन्त्र करने के आरोप में पुलिस ने उन्हें पकड़ा और मुकदमा चलाया था । तालाब में वास्तविकता कुछ भी न थी । पुजापा लेने वालों के ऐजेन्ट अफवाह फैलाने के लिए नौकर थे । उनका काम यही था कि किसी अन्धे को नेत्र-ज्योति मिलने, किसी कोढ़ी के अच्छा होने और किसी दमा या लकवाग्रस्त को देखते-देखते भला-चंगा होने की अफवाह फैलाया करें । दो-चार आदमी भी ऐसी उद्धत अफवाह फैलाने को खड़े हो जायें तो निःसन्देह वह गप्प देखते-देखते हजारों-लाखों व्यक्तियों में फैल जाती है और लालची या भीरु लोगों का यह देश देखते-देखते उस जंजाल में पड़कर अपना समय और धन गँवाने लगता है ।

करामाती छलावे—मथुरा जिले में एक तालाब है, जहाँ अष्टमी के दिन नहाने से सन्तानहीनों के सन्तान होने की बात कही जाती है । तथ्य उसमें रत्ती भर भी नहीं, पर एक को देखकर दूसरा उसकी नकल करता है । परिणाम चाहे किसी को कुछ न मिलें पर कहीं भीड़ होना ही इस बात का प्रमाण मान लिया जाता है कि जब इतने लोग आते हैं तो क्या वे सब कोई बेवकूफ थोड़े ही हैं । एक दूसरे की बुद्धिमानी पर भरोसा करते हुए इस प्रकार अन्ध-विश्वासियों की शृंखला बढ़ती रहती है । अगली पंक्ति के लोग निराश होकर पछताते हैं, पर पीछे वाले उनका अनुकरण करते चले जाते हैं । इस प्रकार यह भ्रम-जंजाल की जंजीर काफी लम्बी खिंचती चली जाती है ।

उड़ीसा प्रान्त के अंगुल नामक छोटे से ग्राम में उत्पन्न हुए एक दस वर्षीय बालक के बारे में यार लोगों ने अफवाह उड़ाई कि वह पूरा सिद्ध और चमत्कारी है । उसके दर्शन मात्र करने से हर मनोकामना पूरी हो जाती है । अफवाह बहुत जोरों से फैली और उड़ीसा के ही नहीं सैकड़ों मील दूर तक के आदमी वहाँ पहुँचे । छोटे गाँव में पानी, भोजन, सफाई का उतना प्रबन्ध न हो सका । फलस्वरूप कुछ ही दिन में वहाँ भयानक हैजा फैला और अन्धी भेड़ों में से हजारों आदमी हैजे कि शिकार होकर मर गये । आखिर पुलिस को वह लड़का तथा उसके बहाने अपना उल्लू सीधा करने वाले उस्ताद लोग फिर गिरफ्तार करने पड़े ।

मथुरा जिले में राया स्टेशन के पास एक धूर्त बाबा ने अपने चेलों के सहारे ऐसा ही षड्यन्त्र रचा । उसके पास एक ही मिट्टी का बर्तन रहता था । ऐसे बर्तन को उधर 'मलरिया' कहते हैं । चूँकि उसकी पहचान मलरिया से की जाती थी, इसलिए उसका नाम 'मलरिया बाबा' रख दिया गया । उसके सिद्ध और करामात की बात खूब उड़ाई गई । लाखों की संख्या में भीड़ पहुँचने लगी । ताँगे, इक्के वालों ने किराया दूना-चौगुना कर दिया । खाद्य पदार्थ बेचने वालों की पौ-बारह हुई । मनोकामना पूरी कराने के लिए लाखों लोग जा पहुँचे । लाभ तो किसी का क्या होना था, पर बाबा के खूब गुलछर्रे उड़े । इस झुण्ड में जेब कटों, उठाईगीरों और दूसरे बदमाशों ने भरपूर मनमानी की । पीछे पुलिस के हस्तक्षेप करने पर उसे भागना पड़ा । जाँच करने पर पता चला कि वह बाबा कई बार का सजाबार अभ्यस्त अपराधी था । अब उसने अपराध करने का यह नया तरीका ढूँढ निकाला ।

सिद्ध पुरुषों के चमत्कार—सिद्ध पुरुषों और करामाती बाबाओं के पीछे ऐसे ही षड्यन्त्र छिपे रहते हैं । उनके पीछे दस-बीस निठल्ले किस्म के अवांछनीय व्यक्ति होते हैं । वे इन करामाती बाबाओं के चमत्कारों की अनर्गल किम्वदन्तियाँ

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फैलाते रहते हैं । भोले व्यक्ति उनके बहकावे में आते रहते हैं और अन्ध-श्रद्धा में ग्रस्त अपना धन एवं समय गँवाते रहते हैं । कई बार तो इन षड्यंत्रों में बहकाई हुई स्त्रियाँ अपना शील सन्तोष तक गँवाने लगती हैं और पुरुष किसी भयानक षड्यन्त्र के शिकार बन जाते हैं ।

यह धन्धा गाँव-गाँव और नगर-नगर पनप रहा है । कई करामाती बाबा हर जगह मिल जाते हैं । शहरों में यह लोग सट्टा बताते हैं । सट्टा खेलने वाले जुआरी अब हर जगह बढ़ रहे हैं । मुफ्त का धन पाने की हविस लोगों को चोर, डाकू, ठग, उचक्का बनने के लिए बाध्य करती रहती है, जो उसे नहीं कर पाते वे या तो जुआरी बनते हैं या धोखेबाज । जुआ अपने विविध रूप में खूब पनप रहा है । कस्बों और शहरों में हर गली-मुहल्ले में सट्टा खाने वाले दुकानदार पैदा हो गये हैं । दिखाने को तो वे कोई और रोजगार लिये बैठे रहते हैं, पर खास धंधा उनका सट्टा होता है । इसी बहाने वे भोले लोगों का धन अपहरण करते रहते हैं । इन लोगों की मिलीभगत उन करामाती बाबाओं से रहती है । लोग बाबा से सट्टा पूछने जाते हैं । बाबा किसी को गाली देते हैं, किसी को प्रसाद देते हैं, किसी की ओर अँगुली उठाते हैं, किसी से ऊट-पटाँग बातें कहते हैं । बस इसी आधार पर भक्त लोग सट्टा खुलने के नम्बर की सम्भावना पर उखाड़-पछाड़ करते हैं । कोई कुछ अनुमान लगाता है कोई कुछ । सभी भक्त अपने-अपने ढंग से अन्दाज लगाकर सट्टा लगा आते हैं । इनमें से किसी एकाध का आ गया तो वह बाबा की भेंट-पूजा चढ़ाता है और सिद्धाई का विज्ञापन करता है । इससे दूसरे लोग प्रभावित होते हैं । सोचते हैं हमारी भेंट पूजा में कुछ कमी रही उसी से बाबा की कृपा नहीं हुई । अब अधिक भेंट पूजा करेंगे ताकि बाबा की कृपा से हमें भी लाभ हो जायेगा । यह सिलसिला चलता रहता है । पुराने निराश भक्त हटते जाते हैं । नये आते जाते हैं, इस प्रकार यह धन्धा बराबर चलता रहता है । सट्टा बताने से लेकर सन्तान पैदा करने तक और बीमारियाँ दूर करने से लेकर भूत-पलीतों को वश में करने तक हर विद्या में यह बाबा पूर्ण निष्णात होते हैं । हर मनोकामना की पूर्ति का व्यापार इनकी दुकानों पर होता है । सौ आते हैं तो पचास को सफलता और पचास को असफलता मिलती ही है । जो असफल रहते हैं वे अपने भाग्य को कोसते हैं और जो सफल हो जाते हैं वे बाबा के गुण गाते और नये-नये चन्दूलों को फँसा कर लाते रहते हैं ।

सबसे सस्ता, सबसे लाभदायक धन्धा—अब तो थोड़ी समझदारी भी बढ़ गई है, और लोग कुछ-कुछ तर्कवादी भी बन गये हैं, थोड़ी उखाड़-पछाड़ और जाँच-पड़ताल भी करते हैं, पर कुछ समय पहले इतना भी न था । तब भोले लोगों की संख्या अधिक थी, तब धूर्त लोगों द्वारा उनकी श्रद्धा का शोषण खूब होता था । कुछ दिन पहले ऐसे तथाकथित सिद्ध पुरुष बहुत थे और उनमें से कई तो बहुत विख्यात हो गये हैं तथा उनके उत्तराधिकारी आज करोड़ों रुपये की सम्पत्ति के स्वामी बने हुए हैं । महाराष्ट्र के एक मुसलमान बाबा कुछ दिन पूर्व ऐसे पुजे कि लोगों ने उन्हें शंकर जी का अवतार तक कहना शुरू कर दिया । उनके फोटो घर-घर में पूजे जाते हैं और बच्चों के गले में उनके चित्र के ताबीज लटकाये जाते हैं । उन्हें मरे काफी दिन हो गये, पर अभी भी उनके अनुयायी उन्हें अर्ध-जीवित बताते हैं और छाया रूप में लोगों को दर्शन देने तथा मनोकामनाएँ पूरी करने की किंवदन्ती बताते हैं । इसी आधार पर उनका धन्धा अब पहले से भी अधिक बढ़ गया है । इस करामात के पीछे और कुछ नहीं केवल एक ही तथ्य रहता है, दलालों द्वारा किया मिथ्या प्रचार । यह प्रचार धीरे-धीरे किंवदन्ती बनता चला जाता है और लोग उसे लगभग सत्य मान बैठते हैं । फिर वही प्रचार अन्ध-विश्वासी भक्तों द्वारा एक दूसरे में चलने लगता है ।

बेचारे बालाजी की दुर्गति—कहीं मनुष्य सिद्ध पुरुष बनते हैं तो कहीं देवता की करामात से यह धन्धा चलाया जाता है । पिछले दिनों 'बालाजी' (हनुमान जी) के नाम की इस सम्बन्ध में बड़ी दुर्गति की गई है । बेचारे 'बालाजी' (हनुमान जी) की आत्मा जहाँ होगी, वहाँ से इन दुराचारियों पर अपार रोष और धिक्कार बरसा रही होगी कि उनके रामभक्त, धर्मपरायण एवं लोकसेवी स्वरूप को बदलकर क्या से क्या बना दिया गया ।

मथुरा में घाटी बहालराय मुहल्ले में एक किराये का मकान लेकर एक व्यक्ति ने दीवार पर सिन्दूर और घी से बालाजी (हनुमान जी) की मूर्ति बना ली । चार-पाँच खुराफाती औरतें और तीन-चार पुरुष अपने ऐजेन्ट बना लिए, आमदनी में सब का हिस्सा निश्चित कर दिया । अब वे लोग सवेरे से ही आकर जम जाते । धूप जलती, दीपक जलता, बालाजी उन लोगों के शरीर में आते । मुख्य महन्त पूछता—इस भगत का कष्ट कब तक दूर होगा ? क्यों यह कष्ट में पड़ा है ? अब बालाजी का आवेश अन्य-अन्य बातें बताता । इसे अमुक भूत लगा है, इसकी विपत्ति का अमुक कारण है । मेरी पूजा में यह लाओ, यह दोगे तो अच्छा होगा । वह वस्तुएँ लाई और दी जातीं । अच्छे होने की घोषणा की जाती । जिस पर आवेश आता वह कहता—बस अब मैं अच्छा हो गया ऐसे-ऐसे ही प्रपंच दिन भर गढ़े जाते । दर्शक बढ़ने लगे । नये-नये लोग आने लगे । संसार में किसी न किसी प्रकार का कष्ट सब को है । उनके ऐसा करने में यदि देवता की सहायता मात्र से काम चल जाता है तो इससे सस्ता तरीका और क्या हो सकता है ? लोगों की संख्या दिन पर दिन बढ़ती गई । साधारण प्रश्न पूछने का नाम 'कच्ची अर्जी' और उपचार कराने की प्रार्थना का नाम 'पक्की अर्जी' रखा गया । कच्ची अर्जी की फीस दस रुपये और पक्की अर्जी की पच्चीस रुपया रखी गई । दिन भर में सौ-दो-सौ कच्ची अर्जी और पक्की अर्जी वाले आने लगे । रोज दो चार हजार का धन्धा होने लगा । दलाल और बढ़ाये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गये जो गली-मुहल्लों में जाकर प्रचार करते और नये-नये शिकार फँसाकर लाते । इस तरह अच्छी-खासी आमदनी होने लगी और कोई बीमार या कष्ट ग्रस्त बनकर अपने को बहुत दूर से आया हुआ परदेशी बताकर वहाँ आने वाले और शरीर में बालाजी का आवेश प्रदर्शित करने वाले दलाल भारी आमदनी करने लगे । यह षड्यंत्र जब बहुत बढ़ चला और उसकी आड़ में अनेक तरह के अनाचार पनपने लगे, तब उस मुहल्ले के लोगों ने उग्र विरोध किया और पुलिस को बुलाया । तब वे लोग अपना बोरिया-बिस्तर बाँधकर भागे । सुनते हैं कि अब उन्होंने भरतपुर के आसपास दूसरी किसी जगह अपना वही धंधा चालू कर लिया है ।

'बालाजी' के नाम पर उत्तर प्रदेश, राजस्थान और मध्य प्रदेश में ऐसे ही षड्यंत्रपूर्ण अड्डे चल रहे हैं । जहाँ अधिकांश तो दलाल लोग कौतुक रचते रहते हैं । कुछ भोले और कमजोर तबियत के लोग भी उससे प्रभावित होकर वैसा ही अनुकरण की मनोवैज्ञानिक परिपाटी में उलझ जाते हैं । मानसिक दुर्बलताओं से ग्रस्त व्यक्तियों की इस देश में कमी नहीं । अन्ध-मान्यताएँ उन्हें घसीट कर ऐसे अड्डों पर पहुँचा देती हैं । विश्वास बन जाने और चित्त हल्का हो जाने से कई व्यक्तियों को लाभ भी होता है, पर अधिकांश को निराश ही होना पड़ता है, क्योंकि वहाँ कुछ भी नहीं होता । जो कुछ लाभ-हानि होती है उसमें यदि कुछ तथ्य तलाश किया जाय तो पहुँचने वाले का विश्वास मात्र ही एक छोटा कारण दिखाई देता है । ऐसा विश्वास तो किसी भी छोटे-बड़े माध्यम को अपनाकर लिया जाय तो मानसिक दुर्बलताग्रस्त, भूत-पलीत के सताए हुए व्यक्ति को लाभ हो सकता है । जिन पर उस प्रकार का मनोवैज्ञानिक प्रभाव नहीं पड़ता वे सर्वथा खाली हाथ लौटते हैं, उन्हें रत्ती भर भी लाभ नहीं होता । लाभ तो तब हो जब वहाँ कुछ तथ्य भी तो हो ।

भूत-पलीतों की भ्रान्त कल्पना—छोटे दर्जे के लोग किसी व्यक्ति को सिद्ध बनाकर या देवता के चमत्कार पर अपना धन्धा चलाने की अपेक्षा भूत-पलीतों के नाम पर अपनी दुकान चलाते हैं । ओझा, सयाने, झाड़-फूँक करने वाले दूसरी श्रेणी में आते हैं । किसी को बुखार, खाँसी, दर्द, घाटा, मुकदमा, कुछ भी कष्ट क्यों न हो, ओझाजी उसे भूत की करतूत ही बतावेंगे । उसे ठीक करने के लिए भूत को भगाना या मनाना पड़ेगा । इसका खर्चीला विधान ओझाजी ही बतावेंगे । जो झाड़-फूँक, पूजा-पत्री बताई जायगी वह ऐसी होगी, जिसमें बताने वाले या विधान कराने वाले का आर्थिक स्वार्थ किसी न किसी रूप में अवश्य सिद्ध होता है । अपने आपको भूतों का प्रतिनिधि या उन्हें बुलाने-भगाने की सामर्थ्य से सम्पन्न बताकर ओझाजी सामान्य लोगों पर अपना रौब-आतंक जमाये रहते हैं । उनकी सामर्थ्य से डरकर लोग उन्हें प्रसन्न रखने का प्रयत्न करते हैं इस संदर्भ से उनके कई प्रकार के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष-स्वार्थ सिद्ध होते रहते हैं ।

भूतों की करतूत की कितनी ही अनर्गल गाथाएँ ये ओझा लोग फैलाते रहते हैं । सर्वथा कपोल-कल्पित गाथाओं की अपनी बीती या अपनी देखी बताते रहते हैं । भोले लोग उस पर विश्वास कर लेते हैं, भूतों के अस्तित्व और आतंक की बात उनके अन्तर्मन में बैठ जाती है । शरीर में कोई कष्ट होने या किसी तरह की परोक्ष कठिनाई आने पर वे उसमें किसी भूत की करतूत खोजने लगते हैं । मन में एक अज्ञात भय समाया रहता है । डरा हुआ मन एक के बाद दूसरी कठिनाइयों और घटनाओं का तारतम्य भूत की करतूतों से बिठाता है और एक-एक करके वह घटनाक्रम को भूतों का एक क्रमबद्ध आक्रमण मान लेता है । अब उसे पक्का विश्वास जम जाता है कि वह भूतों के उत्पीड़न से आक्रान्त है । उसकी यह मान्यता एक प्रकार के भूतोन्माद का रूप धारण करके उस पर सवार हो जाती है । स्वयं मोहित भयाक्रान्त मन उससे तरह-तरह की ऐसी चेष्टाएँ कराता है, जैसे मानो भूत ही उनके शरीर में प्रवेश करके कुछ कह या कर रहा है । उस प्रकार अपने विश्वास के द्वारा विनिर्मित यह भूत कई बार इतना उग्र एवं प्रबल हो जाता है कि वह रोगी के प्राण लेकर ही हटता है । कितने ही बेचारे अन्ध-विश्वासी लोग इसी प्रकार अपनी जान गँवाते एवं चिरकाल तक दुसह कष्ट में देखे गये हैं ।

भूत-विश्वासी लोग ऐसे रोगी की मान्यता को और भी पुष्ट करते रहते हैं । सयाने-दिवाने, ओझा, तान्त्रिक आ-आकर रोगी की भ्रान्त मान्यताओं को और भी परिपुष्ट करते रहते हैं । इस प्रपंच का घर के छोटे-छोटे बालकों तथा पास-पड़ोस के कमजोर तबियत के दूसरे लोगों पर भी असर पड़ता है और वे भूतवाद की मान्यताओं के विश्वासी बन जाते हैं । उन्हें भी कोई भय या कष्ट होता है तो भूत की आशंका मान बैठते हैं, उसी तरह की झाड़-फूँक कराते हैं । इस तरह छूत की बीमारी की तरह यह अन्धविश्वास बढ़ता और फलता-फूलता रहता है । भारतवर्ष में अगणित व्यक्ति इस भूतवाद के मानसिक भय व भ्रम का त्रास पाते और अपनी मनोभूमि को दुर्बल बनाते चले जाते हैं ।

अनेक बार किसी प्रकार का भ्रम हो जाने पर भी 'भूत-लीला' आरम्भ हो जाती है । पुस्तकों और सामयिक पत्रों में ऐसी घटनाएँ प्राय: पढ़ने में आया करती हैं जिनसे विदित होता है कि अनेक मनुष्य किसी काल्पनिक भय से मरणासन्न हो जाते हैं और जब कोई चतुर व्यक्ति किसी युक्ति से उनके भ्रम को दूर कर देता है, तो उनके स्वस्थ होने में कुछ भी देर नहीं लगती ।

काठियावाड़ के एक जागीरदार को अपने ऊपर भूत का प्रभाव होने का सन्देह हो गया और इससे उसकी दशा उन्मत्तों जैसी हो गई । घर वालों ने इलाज के लिए अनेकों अच्छे स्थानों, झाड़-फूँक करने वालों को बुलाया पर कोई 'भूत' को दूर न कर सका । कुछ समय पश्चात् दूर का रहने वाला एक टोना-टोटका की विद्या में निपुण व्यक्ति वहाँ होकर निकला । जब उसने जागीरदार पर भूत होने की बात सुनी तो वह उसे दूर करने के लिए तैयार हो गया । उसने किसी युक्ति द्वारा एक नीबू के भीतर थोड़ा-सा पारा भर दिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उस जागीरदार के सामने रखकर मन्त्र पढ़ने तथा तरह-तरह की क्रियाएँ करने लगा । थोड़ी देर में धूप की गर्मी से नीबू के भीतर का पारा गर्म हो गया और नीबू उछलने लगा । टोटके वाले ने कहा लो, भूत जागीरदार के शरीर से निकल कर इस नीबू में आ गया । इस दृश्य का प्रभाव जागीरदार पर भी पड़ा और उसकी उन्मत्ता तुरन्त ही घटने लग गई । अब ओझा तरह-तरह के मन्त्र पढ़ते हुए उस नीबू को एक लकड़ी का सहारा देकर बाहर ले गया । धीरे-धीरे नीबू उछलता हुआ गाँव के बाहर पहुँच गया और ओझा ने उसे गहरा गड्ढा खोद कर गाड़ दिया । इससे उस जागीरदार का भ्रम दूर हो गया और कुछ ही दिन में वह वैसा ही स्वस्थ और समझदार हो गया जैसे कुछ पहले था ।

(२) इसी प्रकार इंग्लैण्ड के डॉक्टर डब्ल्यू हाल के पास इलाज के लिए एक स्त्री लाई गई, जिसे अपने ऊपर भूत का अधिकार होने का भ्रम हो गया था । अन्य लोगों ने भी उसे चंगा करने की बहुत चेष्टा की थी, पर वे सफल न हो सके । डॉ. हाल ने उस भ्रम को समझ कर उसे एक आदमकद दर्पण के सामने खड़ा कर दिया, जिसमें उसे अपनी पूरी आकृति दिखाई पड़ने लगी । तब डॉ. हाल ने उसके सिर के पीछे की तरफ से एक सेकिण्ड के लिए बिजली का प्रकाश करके उसे पुनः बन्द कर दिया । स्त्री को दर्पण के प्रतिबिम्ब में ऐसा जान पड़ा कि कोई अत्यन्त प्रकाशवान वस्तु उसके शरीर से निकल कर अदृश्य हो गई । बस, उसी क्षण उसका भूतावेश न मालूम कहाँ चला गया और वह बिल्कुल स्वस्थ जान पड़ने लगी ।

(३) डॉ. हाल के पास एक और मरीज आया जिसे बहम हो गया था कि उसकी नाक में एक शीशी घुस गई है । लोगों ने उसे समझाया, पर उसका भ्रम दूर न हो सका । वह कितने ही डाक्टरों के पास गया और व्यर्थ में कितना ही रुपया बर्बाद कर डाला । अन्त में जब वह डॉ. हाल के पास पहुँचा तो उन्होंने युक्ति द्वारा उसका भ्रम दूर करने की विधि सोची । उन्होंने उस मनुष्य से कहा कि 'आँखें बन्द कर लो' तब उन्होंने छींक लाने वाली दवा उसको सुँघाई और जैसे ही छींक जोर की आई वैसे ही हाथ में छुपाई हुई शीशी जमीन पर छोड़ दी उसने शीशी के फूटने का शब्द सुना और आँखें खोलने पर काँच के टुकड़े इधर-उधर बिखरे देखे तो उसे बड़ी प्रसन्नता हुई और उसका समस्त रोग रफू-चक्कर हो गया ।

(४) बिहार के मोतिहारी जिले में कुछ वर्ष पूर्व एक विकट भूत-लीला आरम्भ हुई थी, बीसियों लालटेनें तथा प्रकाशित वस्तुएँ निराधार चलती दिखाई देती थीं । वे प्रत्येक रात्रि के समय एक गाँव से दूसरे गाँव की ओर बढ़ती दिखाई पड़ती थीं और उनकी संख्या भी बढ़ती जाती थी । इस घटना से आस-पास के क्षेत्र में तो आतंक छा ही गया और बड़े से लेकर छोटे तक सैकड़ों समाचार-पत्रों में इसकी खबर तरह-तरह के रोचक समाचारों के रूप में प्रकाशित की गई । अन्त में मोतिहारी के सब डिवीजनल आफीसर ने कुछ चतुर मनुष्यों की सहायता से इस भौतिक काण्ड का भण्डाफोड़ किया और दो एक 'जीवित भूतों' को पकड़ भी लिया । वे लोग जनता को आतंकित करके अपना उल्लू सीधा करना चाहते थे, पर समय के पहले ही उनकी योजना पर पानी फेर दिया गया ।

यहाँ हम इस बात की बहस न ही उठाना चाहते थे कि मरने के बाद मृतात्मा की क्या गति होती है और शास्त्रों में वर्णित प्रेतात्माओं का अस्तित्व होता है या नहीं ? पर हम यह कह सकते हैं कि यदि प्रेतात्मा का सिद्धान्त सत्य भी हो तो भी हम अपने अड़ोस-पड़ोस में और वह भी विशेष रूप से स्त्रियों पर जो भूतावेश के दृश्य दिखलाई पड़ते हैं, उनमें जरा भी सार नहीं । इसी प्रकार नीचे स्तर की जातियों में प्रत्येक रोग को भूतों के कारण मान लिया जाता है, वह भी उन लोगों का अन्धविश्वास ही है । इससे हानि के वजाय कोई भलाई कभी नहीं हो सकती ।

भूतवाद अवास्तविक भ्रम—देखा गया है कि यह भ्रम पिछड़े हुए लोगों में ही अधिक पाया जाता है । पढ़े-लिखे, सुशिक्षित और समझदार लोगों में ऐसी अनर्गल उछल-कूद कहीं भी नहीं पाई जाती है । विचारने की बात है कि यदि भूतों का अस्तित्व होता और वे बात-बात में लोगों को डराते परेशान करते रहते तो क्या पढ़े, क्या बिना पढ़े, क्या देश में, क्या विदेश में, सर्वत्र ही उनका अस्तित्व दृष्टिगोचर होता । बुखार, खाँसी, दस्त, दर्द आदि बीमारियों का अपना अस्तित्व है । वे बिना किसी देश, धर्म, जाति, स्तर का ख्याल किए सभी लोगों को समय-समय पर कष्ट देती रहती हैं, पर भूतों के बारे में ऐसी बात नहीं है, वे केवल पिछड़े हुए कमजोर मानसिक स्तर के लोगों को ही अपना परिचय देते हैं । जो उन पर विश्वास नहीं करते, उनके पास भी नहीं फटकते । सच्चे अध्यात्मवादी को भूत नहीं सताता । जिन आदिवासियों और भील, कोलों को पग-पग पर भूत-प्रेतों की मनौती चढ़ानी पड़ती है, उसी क्षेत्र में ईसाई धर्म के प्रचारक पादरियों को भूत छूता भी नहीं । इसका क्या कारण है ? कारण स्पष्ट है, जिनके मन में भूतवाद की जितनी गहरी भ्रान्ति जमी होगी, वे उतने ही उस व्यथा से आक्रान्त हो रहे होंगे । जिन्होंने इसे प्रपंच-मात्र समझा होगा और इस व्यर्थ के बतंगड़ से सर्वथा अछूते रहे होंगे, उन्हें कोई भूत स्पर्श तक न कर रहा होगा ।

मानसिक दुर्बलता बढ़ाने वाला यह भूतवाद का भ्रम जंजाल हमारे देश में गरीब एवं पिछड़े लोगों के लिए एक घातक जंजाल बना हुआ है । कितने भोले लोगों के लिए भ्रान्ति एक भयानक बीमारी बनकर शोषण कर रही है । गरीबी, बीमारी, अशिक्षा के त्रिदोष से पीड़ित भारत की गरीब जनता के लिए भूतोन्माद की एक और बीमारी एक दुसह भार बनी हुई है । कितने ही संडे-मुसंडे लोग इसी बहाने से अपना उल्लू सीधा करते हैं और कितने ही वेकस एवं वेबस लोग अपना शारीरिक, मानसिक, आर्थिक शोषण करते हुए बर्बाद होते रहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

टोना-टोटका का भ्रमजाल

संसार के सभी देशों में जादू-मंतर और टोना-टोटका का विश्वास पाया जाता है । हमारे देश के अनगिनती अशिक्षित व्यक्तियों की बात तो जाने दीजिए, जिनके लिए दुनिया के सबसे बड़े चिकित्सक टोना-टोटका करने वाले ओझा और सयाने ही होते हैं, पर इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी आदि आधुनिक सभ्यता के ठेकेदार देशों में भी अभी तक टोना-टोटका का काफी प्रचार है । वहाँ भी भविष्य वक्ता, दिव्य-दर्शन की शक्ति रखने वाले, महात्माओं को बुलाकर प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने वाले हजारों की संख्या में पाये जाते हैं और उनका व्यवसाय भली प्रकार चलता रहता है । फिर कोई यह भी नहीं कह सकता कि यह सब ठग विद्या ही है जो आजकल कुछ स्वार्थियों ने उत्पन्न की है । भूत-प्रेतों का विश्वास अति प्राचीनकाल से बराबर चला आया है और हिन्दू-धर्म के प्रसिद्ध ग्रंथों में उसका उल्लेख पाया जाता है । इसलिए आवश्यकता है कि उसे 'कोरा ढोंग' कहकर न टाल दिया जाय वरन् उसकी भली प्रकार जाँच-पड़ताल करके उसके वास्तविक तथ्य का पता लगाया जाय ।

वर्तमान समय में आधुनिक शिक्षा प्राप्त लोगों में से अधिकांश की यह धारणा देखी जाती है कि टोना-टोटका में कुछ भी तत्व नहीं है और यह ओझाओं तथा स्थानों की ठग विद्या होती है । यह सत्य है कि वर्तमान समय में जो लोग इस धंधे को कर रहे हैं उनमें कोई आध्यात्मिक शक्ति नहीं दिखलाई पड़ती और न उनके आचार-विचार ऐसे होते हैं जिनके आधार पर उनको आत्म-शक्ति सम्पन्न व्यक्ति माना जाय । इसके विपरीत उनमें से बहुसंख्यक तो स्पष्टत: भ्रष्ट रहन-सहन वाले और नीच स्वभाव के होते हैं । फिर भी यह स्वीकार करना पड़ता है कि अनेक समय वे प्रभावशाली कार्य कर दिखाते हैं और अनेक रोगों को शीघ्र दूर कर देते हैं खासकर मानसिक बीमारियों में तो उनका कार्य अनेक बार चमत्कारी ही जान पड़ता है । उनमें से कितनी ही घटनाएँ ऐसी भी होती हैं कि जिनमें छल-कपट और ढोंग की ज्यादा गुंजायश नहीं होती । उदाहरण के लिये वे जिस प्रकार तरह-तरह के शारीरिक दर्दों को, बिच्छू, साँप आदि विषैले जीवों के काटने को मूर्छा, उत्साह आदि को शीघ्र ही ठीक कर देते हैं, उससे इन्कार नहीं किया जा सकता इसलिए यह स्वीकार करना पड़ता है कि ये ओझे और सयाने चाहे कैसे भी बातूनी, ढोंगी और चालबाज हों, पर उनकी क्रियाओं में थोड़ा बहुत सार अवश्य है ।

संयोगवश कुछ समय से योरोप और अमरीका में 'मेस्मरेजिम' 'हिप्नोटिज्म' 'ऑटो सजैशन' आदि अनेक क्रियाओं का आविष्कार किया गया है जिनके द्वारा केवल विचारों और संकल्प की शक्ति द्वारा बड़े-बड़े रोगों को दूर किया जाता है और किसी व्यक्ति पर प्रभाव डाल कर उससे इच्छानुसार कार्य कराया जा सकता है । इस प्रक्रिया के करने वालों के पास किसी प्रकार की सामग्री नहीं रहती । वे केवल अपने हाथों को फेर कर अथवा केवल आदेश देकर किसी व्यक्ति को संज्ञाशून्य बना देते हैं और फिर उससे इच्छानुसार कार्य करा सकते हैं । आरम्भ में तो लोगों ने इनको भी ढोंग और जाल-साज बतलाया, पर उन्होंने अपना काम इस प्रकार हजारों लोगों के सामने करके और तरह-तरह की जाँच और परीक्षाओं में उत्तीर्ण होकर दिखाया कि आक्षेपकर्त्ताओं को उनमें किसी प्रकार की नवीन शक्ति का होना स्वीकार करना ही पड़ा । इन लोगों का काम भी एक प्रकार से भारतवर्ष के ओझों और सयानों की तरह ही था और सच पूछा जाय तो उन्होंने यह विद्या इस देश के झाड़-फूँक करने वालों का उदाहरण देखकर ही निकाली थी । इसलिए जब मैस्मरेजिम और हिप्नोटिज्म का प्रचार पर्याप्त हो गया और लोगों ने उसकी सचाई को थोड़े या बहुत अंशों में स्वीकार कर लिया, तो फिर यहाँ के ओझों तथा सयानों के झाड़-फूँक को भी एक आधार मिल गया ।

इन नवीन खोजों में इन विद्याओं का सम्बन्ध मनोविज्ञान से है । योरोप के वैज्ञानिक पहले केवल 'मन' के सम्बन्ध में खोज करते रहते थे । फिर वे 'चेतना' के सम्बन्ध में विचार करने लगे । इसके बाद यह विचार किया गया कि मन और चेतना का मूल तो मानव-मस्तिष्क ही है । इससे वे मस्तिष्क की खोज करने लगे और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वह दो भागों में बँटा है । एक को 'वहिर्मन' कह सकते हैं और दूसरे को 'अन्तर्मन' । हमारी जाग्रत अवस्था में 'वहिर्मन' सब प्रकार के सांसारिक कार्यों को सम्पादन करता है, पर जब सो जाते हैं और सुषुप्ति अवस्था में होते हैं तो 'अन्तर्मन' कार्य करने लगता है । विद्वानों के मतानुसार मनुष्य का 'वहिर्मन' चंचल और तर्कशील होता है और सांसारिक व्यवहार में चढ़-ऊपरी तथा संघर्ष का कारण वही होता है । पर 'अन्तर्मन' ज्ञानग्राही होता है और उसे जिस प्रकार के आदेश दिये जाते हैं, उनका पालन करने को भी उद्यत रहता है । यदि किसी मनुष्य के 'वहिर्मन' को विशेष प्रभाव डालकर सुला दिया जाय और 'अन्तर्मन' को सम्बोधित करके आदेश दिए जायें तो वह आश्चर्यजनक रूप से उनका पालन करता है । यह कार्य किस प्रकार होता है इसका वर्णन करते हुए एक अनुभवी विद्वान ने लिखा है—

जिस समय सम्मोहित हो जाने पर कोई व्यक्ति सम्मोहनकारी के प्रति आत्मसमर्पण कर देता है, तो वह उसे जो-जो आज्ञा देता है उन्हें पालन करने के सिवाय और कुछ करने की उसमें शक्ति नहीं रहती । सम्मोहनकारी यदि मिसरी को नमक कहकर सम्मोहित व्यक्ति के मुँह में डाल देता है तो वह उसे खारी ही बतलाता है । इसी प्रकार वह कागज के टुकड़ों को चबाता हुआ पेड़ों का स्वाद अनुभव करता है, रोने की इच्छा रखते हुए भी हँसता है, दुर्गंध को भी सुगन्ध समझता है, सुई चुभो देने पर भी दर्द का अनुभव नहीं करता । वह थल को जल समझकर तैरने लगता है और आज्ञा देते ही कुर्सी में ऐसा चिपक जाता है कि उठने की भी शक्ति नहीं रहती । वह 'वक्ता' कह देने से व्याख्यान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देने लगता है और कुत्ता कह देने पर भूँकने लगता है । इस तरह मोहिनी विद्या (मैस्मरेजिम) के अद्भुत कौतुकों को देखकर विस्मय में डूब जाना पड़ता है ।

''यह विद्या भारतीयों के लिए कोई नया विषय नहीं है । बल्कि यह सगर्व कहा जा सकता है कि आधुनिक मैस्मरेजिम, हिप्नोटिज्म, टेलीपैथी, क्लेअर वायस आदि समस्त पश्चिमी आध्यात्मिक विद्याएँ मूल रूप से हमारी प्रचीन योग विद्या, तंत्र-जंत्र त्राटक आदि के ही नवीन वैज्ञानिक संस्करण हैं । भारत योगियों का देश है । हमारे पुण्यवान पूर्वजों ने अपने योगबल से पिण्ड और ब्रह्माण्ड के सारे रहस्यों को समझकर विश्व की समस्त शक्तियों पर विजय प्राप्त की थी । सम्मोहन और वशीकरण तो उनके लिए एक बिल्कुल छोटी बात थी । वे सिद्धियों के बल से आकाश में उड़ते, जल पर बिना भीगे चलते, पृथ्वी में समा जाते, पर्वतों को हल्का करके आकाश में उड़ाते और एक स्थान में बैठकर लोक-लोकान्तर के दृश्यों को देखते थे ।''

पर काल प्रभाव से देश के पतन के साथ हमारी योग विद्या का भी लोप हो गया । केवल उसके अवशेषों के रूप में टोना-टोटका और झाड़ने-फूँकने की प्रक्रियाएँ रह गईं जिन्हें कुछ लोगों ने अपने जीवन निर्वाह के साधन बना लिए । सच्चे योगी तो जो दस-बीस बचे पहाड़ों के अगम्य स्थानों में साधना करते रहे और ये खाने कमाने वाले 'गूढ़ विद्याओं' के जानकार के नाम से प्रसिद्ध हो गये । इससे विदित होता है कि आज-कल अशिक्षित समाज में फैली ये विद्याएँ वास्तव में मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों पर आधार रखती हैं और उनका सुधार मानसिक शक्ति ही है, पर आजकल के ओझा और सयाने उनका प्रयोग करते हुए भी उनके मूल तत्व को नहीं जानते और पूछने पर ऊटपटांग उत्तर देने के सिवाय कोई बुद्धि संगत कारण नहीं बतला सकते । यही कारण है कि पढ़े-लिखे व्यक्तियों का इन बातों से विश्वास हट गया है और इस प्रकार के कार्य करने वाले सभी लोगों को वे झूठा और ढोंगी समझने लगे हैं । यदि हम अब भी सच्चाई से काम लें और विधिवत् क्रियाओं का प्रयोग करें तो इस विद्या के द्वारा अनेक लोगों का कल्याण हो सकता है ।

अन्ध-विश्वास का फतवा देने में उतावली न की जाय

अन्ध-विश्वास को अब उपहासास्पद और अग्राह्य माना जाता है और उन लोगों को पिछड़ेपन का शिकार माना जाता है जो तथ्यों एवं प्रमाणों से सिद्ध न हो सकने वाली बातों पर विश्वास करते हैं ।

अन्ध-विश्वास की मोटी परिभाषा है— बिना प्रमाण युक्त कारणों को, किन्हीं मान्यताओं को स्वीकार कर लेना । इस संदर्भ में मनीषियों के अन्यान्य प्रतिपादन भी हैं । रायल इन्स्टीट्यूट ऑफ लंदन में विज्ञान और अंधविश्वास विषय पर अपना निबन्ध पढ़ते हुए रेवेन्डर चार्ल्स किंग्सले ने उसे 'अज्ञात का भय' सिद्ध किया । उनका मतलब शायद उन देवी-देवताओं या भूत-प्रेतों से था जो भेंट-पूजा ऐंठने के लिए डराने-धमकाने और आतंकित करने वाले माने जाते हैं, पर उनका यह प्रतिपादन भी एकाकी था । प्राचीन यूनान में प्रत्येक नदी, वृक्ष, पर्वत आदि में देवात्मा मानी जाती थी और उससे मात्र शुभकामना की आशा की जाती थी । यह आत्माएँ डराती नहीं, वरन् स्नेह, सहयोग प्रदान करती हैं । यूनानियों की देव-मान्यता अन्ध-विश्वास कही जा सकती है, पर उसका कारण 'अज्ञात का भय' नहीं माना जा सकता ।

नेशनल कॉलेज आयरलैण्ड के प्राध्यापक सर वैरेट ने कार्य और कारण की संगति बिठाये बिना किन्हीं मान्यताओं को अपना लेना अन्ध-विश्वास बताया है । इस परिधि में अनेकानेक धार्मिक प्रचलन और कथा-पुराणों में बताये हुए सन्दर्भ भी आ जाते हैं । शकुन एवं मुहूर्त भी इसी वर्ग के हैं । छींक हो जाने की, काम बिगड़ने की सूचना मानना यद्यपि बहुत प्रचलित मान्यता है, पर खोजने पर ऐसा कोई कारण समझ में नहीं आता जिसमें छींक आने और काम बिगड़ने की परस्पर संगति बिठाई जा सके ।

भूतकालीन मान्यताओं को यदि तथ्य पूर्ण नहीं सिद्ध किया जा सके तो उन्हें अग्राह्य ठहरा देना चाहिए, इस सिद्धान्त पर इन दिनों बुद्धिजीवी वर्ग का बहुत जोर है । इतने पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि जो तथ्य आज उपलब्ध हैं वे ही अन्तिम हैं । आगे ऐसे आधार प्रस्तुत नहीं होंगे जिनसे आज अन्ध-विश्वास समझी जाने वाली बातें कल तत्थपूर्ण सिद्ध हो सकें । तर्क, विवेक, कारण और प्रमाणों को उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए पर चिन्तन में यह गुंजायश भी छोड़ी जानी चाहिए कि शोध की प्रगति किन्हीं भूतकालीन मान्यताओं को सही भी सिद्ध कर सकती है । उचित यही है कि हम प्रमाणित सिद्धान्तों को स्वीकार करते हुए मस्तिष्क को इसके लिए खुला हुआ रखें कि अतीत की अध्यात्म सम्बन्धी मान्यताओं को भविष्य में सही सिद्ध हो सकने की सम्भावना है । सामाजिक कुरीतिओं के रूप में जो हानिकारक प्रचलन हैं उन्हें निस्संकोच हटाया जाय, पर अध्यात्म मान्यताओं के सम्बन्ध में उतावली न बरती जाय । तत्वदर्शी ऋषियों के अनुभव सहज ही उपहासास्पद नहीं ठहरा दिए जाने चाहिए और उन्हें तत्काल अन्ध-विश्वासों की श्रेणी में नहीं गिन लेना चाहिए ।

पिछले दिनों योग सम्बन्धी प्राचीन मान्यताओं को अप्रामाणिक ठहराने वालों को अपनी बात पर पुनर्विचार करना पड़ा है और अत्युत्साही खण्डन प्रवृत्ति से पीछे हटना पड़ा है ।

डॉ. मेस्मर की मेस्मरिज्म और जेम्स ब्रेयड की हिप्नोटिज्म जब प्रयोगशाला में सही सिद्ध होने लगी, तब उस आधार पर रोगियों को बेहोश करके ऑपरेशन किए जाने लगे और अचेतन मस्तिष्क का चमत्कारी उपयोग किया जाने लगा तो योग की इन शाखाओं को मान्यता मिली और समझा जाने लगा कि मानवीय विद्युत से सम्बन्धित अन्य प्रतिपादनों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में भी तथ्य हो सकता है और वे अगले दिनों प्रमाणित ठहराये जा सकते हैं ।

क्लीरिंगटन ने 'ईविल आई' सिद्धान्त के अनुसार यह सिद्ध किया है कि नेत्रों में वेधक दृष्टि होती है और उसे विशेष उपायों से समुन्नत करके दूसरों को अच्छे या बुरे प्रभाव के अन्तर्गत लाया जा सकता है । यह सिद्धान्त लगभग उसी स्तर का है जिसके अनुसार 'नजर लगने' की पुरानी मान्यता को अन्ध-विश्वास ठहरा दिया गया है ।

चार्ल्स वाइविन ने इच्छाशक्ति एवं एकाग्रता की शक्ति की जादुई चमत्कारों से लेकर शारीरिक, मानसिक रोगों की निवृत्ति तक के लिए प्रयुक्त करके दिखाया और बताया है कि यह शक्ति मानवीय क्षमताओं में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है । इसके प्रयोग से व्यक्तित्व को प्रतिभाशाली बनाने की दिशा में आशातीत सफलता पाई जा सकती है और अपने में ऐसी विशेषताएँ उत्पन्न कर सकते हैं, जिन्हें अद्‌भुत कहा जा सके । इस सन्दर्भ में उनके प्रयोगों ने दर्शकों को चकित कर दिया है । यह मन्त्र शक्ति के सम्बन्ध में कहे जाने वाले चमत्कारी वर्णनों की पुनरावृत्ति है ।

सोसाइटी फार साइकिक रिसर्च के अध्यक्ष जी. एन. टीरेल ने अपनी खोजों में ऐसे प्रमाणों के पहाड़ लगा दिये हैं जिनमें प्रेतात्माओं के अस्तित्व एवं क्रिया-कलाप के लगभग वैसे ही प्रमाण मिले हैं जैसे कि जीवित मनुष्यों के होते हैं । ठीक इसी प्रकार की शोधें स्प्रिचुआल सोसाइटी ऑफ ब्रिटेन की है, उसके संचालक भी अपनी संग्रहीत प्रमाण सामग्री में प्रेतात्माओं के अस्तित्व को इस प्रकार सिद्ध करते हैं जिससे अविश्वासियों को भी विश्वास करने के लिए बाध्य होना पड़े । यह प्रतिपादन प्रायः उन्हीं बातों को पुष्ट करता है जिन्हें बताने के कारण झाड़-फूँक करने वाले ओझा लोगों का अथवा भूत-प्रेत की बातें करने वालों को अन्धविश्वासी कहा जाता रहा है ।

स्वप्नों के मिथ्या होने की बात बुद्धिजीवी वर्ग में कही जाती है, पर अब कितने ही उदाहरण ऐसे मिलते हैं जिनमें स्वप्न में देखी गई बात यथार्थ निकली अथवा स्वप्न में मिली सूचना भविष्य कथन बनकर सामने आई, तब परामनोविज्ञान के विश्लेषणकर्त्ताओं को मनुष्य की अतीन्द्रिय शक्ति का स्वप्नों के साथ एक सीमा तक घुला रहने की बात स्वीकार करनी पड़ी । स्वप्न फल बताने वालों को अन्धविश्वासी ही कहा जाता रहे, आज के प्रस्तुत प्रमाणों को देखते हुए यह बात न्यायसंगत प्रतीत नहीं होती ।

मेन्टल टेलीपैथी—क्लेयर वायस आदि ऐसी अध्यात्म विद्या सामने आती जा रही है जो भूतकालीन चमत्कारवाद की सत्यता मानने कि लिए फिर वापस लौट चलने का निमन्त्रण देती है । मैटा फिजिक्स विज्ञान का जिस क्रम से विकास हो रहा है उसे देखते हुए लगता है वह दिन बहुत दूर नहीं रह गया, जब मस्तिष्क विद्या हमें प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि जैसे योगाभ्यासों को न केवल सही आधार पर विनिर्मित सिद्ध करेगी, वरन् यह भी बतायेगी कि उपासना, साधना की पद्धतियाँ जीवन के अन्तरंग और बहिरंग दोनों पक्षों के विकास में उपयोगी है और सहायक भी ।

ऐसी दशा में हमें अन्ध-विश्वासों की सीमा निर्धारित करते हुए प्राचीन आध्यात्मिक मान्यताओं के सम्बन्ध में थोड़ा उदार दृष्टिकोण ही रखना चाहिए और विज्ञान बुद्धि द्वारा यथार्थता तक पहुँचने के लिए जितनी प्रतीक्षा की आवश्यकता है उसे बिना उतावली के पूरी होने देना चाहिए ।

टोना-टोटका, जंतर-मंतर के रोमांचकारी दुष्परिणाम

संसार परिवर्तनशील है । इतिहास के चरण रुकना नहीं जानते । वे प्रतिदिन आगे ही बढ़ते हैं और प्रति डग के साथ, प्रति पग के साथ मानव को एक नई दृष्टि, नई चेतना और नई प्रेरणा प्रदान करते हैं । लक्ष्य के पथ पर प्रतिदिन एक नया आलोक बिखरता है, नई ज्ञानकिरण उतरती है ।

भारत सदैव से धर्म-प्रधान देश रहा है और स्वाभाविक ही है कि उसके साथ कुछ मान्यताएँ, कुछ धारणाएँ, कुछ भावनाएँ और कुछ कल्पनाएँ चलें । इनमें से कुछ स्वस्थ तथा जीवंत होती हैं, कुछ रूढ़िग्रस्त तथा घिसी-पिटी । विचारकों, कर्णधारों और समाजशास्त्रियों का यह पुनीत कर्त्तव्य है कि वे समय-समय पर उनका परीक्षण करते रहें और आत्मघाती प्रवृत्तियों का यथासमय उन्मूलन करें ।

दीर्घकालीन दासता ने जहाँ राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्र में अपना कुप्रभाव डाला वहीं देशवासियों का मनोबल क्षीण किया, उनके आत्म-विश्वास को नीचे गिराया । परिणाम यह हुआ कि सफलता की कामना करने वालों ने टोना-टोटका, मन्तर-जन्तर द्वारा मनोबल उठाने और आत्म-विश्वास बढ़ाने का निश्चय किया । एक बार यह स्थिति आई तो क्रमशः वह बिगड़ती ही गई और परोक्ष रूप में आत्म-विश्वास घटता ही गया ।

आशा यह की जाती थी कि स्वतंत्रता के आगमन के साथ नये जीवन-दर्शन का उदय होगा, नई स्वस्थ भावनाओं का संचार होगा, किन्तु अभी तक वैसा कुछ नहीं हो सका है । आज भी समाज के विभिन्न वर्गों में रूढ़िवादिता फैली हुई है और सर्वत्र टोना-टोटका का ताण्डव है, मन्तर-जन्तर का वीभत्स रूप । पढ़े-लिखे और अज्ञानी दोनों ही इनके फेर में हैं, चाहे दोनों के स्वरूप में भिन्नता हो और दोनों में अन्य प्रकार के भेद हों । सबसे दुःखद बात तो यह है कि एक बार मनुष्य उसके जाल में पड़ा तो जीवन भर बाहर नहीं निकल पाता और आशंकाओं एवं सम्भावनाओं के भँवर में डूबता-उतराता रहता है । एक और विचित्र बात यह होती है कि बिना आत्मघात या भयानक क्षय के टोना-टोटका या मन्तर-जन्तर के प्रति विश्वास नहीं डिगता—मनुष्य विवेक के सीधे-सच्चे रास्ते पर नहीं आता, जब आ जाता है तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मग्लानि उसे घेर लेती है और उसे लगता है कि उसने अब तक जीवन व्यर्थ गँवा दिया ।

इन पंक्तियों में इस बात का प्रयास किया गया है कि पाठकों के सम्मुख टोना-टोटका, मन्तर-जन्तर तथा उनसे सम्बन्धित अन्ध-विश्वासों के द्वारा होने वाली हानि की एक झलक प्रस्तुत की जाय । घटनाओं को ज्यों की त्यों इसलिए रख दिया गया है कि पाठक लेखक की अनुभूति के साझेदार बन सकें । इन घटनाओं में कहीं भी कुछ अतिरंजन नहीं, न उनमें हेर-फेर ही किया गया है । सम्भवत: ये घटनाएँ और उनके कुपरिणाम पाठकों के मस्तिष्क पर स्थायी प्रभाव डालकर उन्हें इस भयंकर जीवनघाती बीमारी से मुक्त कर सकें, टोना-टोटका, मन्तर-जन्तर के प्रति उनकी अन्धनिष्ठा दूर हो और वे सत्य और साधना के प्रकाश में जीवनयापन कर सकें ।

उस दिन चाची को गाँव पहुँचाने गया । गाँव के स्टेशन पर पहुँचते ही गाँव वालों ने चाची को बताया कि उनकी बकरी की बच्ची की घर के नौकर ने बलि दे दी है । चाची बड़ी धर्मपरायण हैं । सावन के पुरुषोत्तम मास में विशेष रूप से पूजा-पाठ करती हैं । इस समाचार पर उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ । उन्होंने सोचा कि गाँव के लोग विनोद के लिए ऐसा कह रहे हैं, क्योंकि बकरी की बच्ची से चाची को बड़ा मोह था और अपने साथ ही हर समय रखती थीं उसे । स्वयं चाहे एक बार दूध न पियें पर बच्ची को पेट भर दूध अवश्य पिलाती थीं । चाची के एकान्त जीवन की वह संगिनी और उनके वात्सल्य की अधिकारिणी थी ।

चाची को इस समाचार पर विश्वास होता भी क्यों ? परसों ही तो शहर जाते समय उन्होंने अपने नौकर बीरू को बुला कर कहा था कि वह दो दिन बकरी और बच्ची को अपने पास रखे । शहर से आने पर वह उन्हें वापस मँगा लेंगी । बीरू के कहने पर कि उसकी पत्नी बीमार है, उन्होंने उसे पाँच रुपये दिये थे और कहा था कि पास के गाँव से डॉक्टर को बुला कर पत्नी के इलाज की व्यवस्था करे । आने पर और रुपये देंगी । इलाज में किसी प्रकार की लापरवाही न करे वह । चाची उस दिन अकेले ही स्टेशन गई थीं, क्योंकि वह नहीं चाहती थीं कि बीरू को डॉक्टर को लेकर घर पहुँचने में किसी प्रकार देर हो ।

फिर भी आशंका तो हो ही गई चाची को । कुछ घबड़ाई-सी गाँव आईं । गाँव में घुसते ही जो मिलता यही समाचार देता । आखिर सब तो झूठ नहीं कह सकते । मन्दिर वाली चाची के रूप में गाँव में उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी । स्वभाव भी उदार और मिलनसार था । बीरू चाची का मुँह लगा नौकर था । उससे किसी ने कुछ कहा तो नहीं पर उसकी इस हरकत पर क्षोभ सब को ही हुआ । चाची व्यग्र थी । वह यह जानना चाहती थी आखिर बीरू ने ऐसा क्यों किया, उसकी ऐसी हिम्मत कैसे हुई ?

घर पहुँचने पर थोड़ी देर बाद बीरू की पेशी हुई । उसने सिर झुका कर अपना अपराध स्वीकार कर लिया । कारण पूछने पर उसने बताया कि जब डॉक्टर दवा देकर और यह बता कर चले गये कि रोगी की हालत अच्छी नहीं है और उसका बचना कठिन है तो उसने पास के गाँव वाले भगत को बुलवाया । भगत का दावा है कि जिन रोगियों को बड़े-बड़े डॉक्टर, वैद्य, हकीम असाध्य बता देते हैं, उन्हें वह सहज ही झाड़-फूँक और टोना टोटका से ठीक कर देता है । उसने दूसरों के ऊपर आये भूतों को झाड़ा और उतारा भी है । पिछले साल जब कल्लू काका की बहू पर उसकी सौत आयी थी तो उसी ने उतारा था उसे । चाची उसकी लम्बी व्याख्या से अधीर हो रही थीं । बोलीं—रहने दो भगत की गुणगाथा । खूब जानती हूँ उसे । तुम अपनी बात बताओ कि तुमने मेरी बच्ची को मारने की कैसे हिम्मत की ? बीरू बोला—सोई तो बता रहा हूँ चाची । आते ही उसने बताया कि तुम्हारी पत्नी पर ब्रह्मराक्षस आये हैं । अगर तुरन्त ही बकरी के बच्चे की बलि देकर उन्हें प्रसन्न नहीं किया गया तो वे रोगिनी की जान लेकर ही मानेंगे । मैं घर पर था नहीं । माँ डर गई । छोटा भाई घबरा गया । इतनी जल्दी बकरी का बच्चा आता कहाँ से ? इसलिए झटपट आपकी बकरी के मेमने की ही बलि दे दी । लौटकर आया तो सारी बात मालूम हुई, पर तब मैं कर ही क्या सकता ? मुझसे यह कह कर भगत चला गया कि कल बारह बजे तक तुम्हारी पत्नी भली-चंगी हो जायगी । सच कहता हूँ चाची कि मैंने अपनी माँ तथा भाभी को बहुत डाँटा-डपटा । चाहे मारा बच्ची को उन लोगों ने हो, पर जिम्मेदारी तो मेरी ही है । जो चाहे मुझे सजा दें । इतना कहकर बीरू हाथ जोड़ कर चाची के आगे खड़ा हो गया । चाची क्रोध में न जाने क्या-क्या कहती गईं । थोड़ी देर यह सब सुन कर मैंने चाची को समझाया—बच्ची तो अब तुम्हें मिल सकती नहीं और बीरू को तुम्हारे समझाने से समझ आ नहीं सकती । फिर नाहक ही अपनी तबियत बिगाड़ती हो । चाची कुछ मेरा लिहाज करके चुप हो गईं, शायद बकझक में थक भी गई थीं । मैंने बीरू से पूछा—अब तो तुम्हारी पत्नी पूर्ण स्वस्थ हो गई होगी । वह गिड़गिड़ाया—कहाँ साहब । भगत मन्त्र पढ़कर बकरी का माँस खिला गये थे उसे, तब से उसकी हालत बहुत खराब है । खून के दस्त हो रहे हैं और अब तो वह दो-चार घण्टे की मेहमान है । भगत फिर नहीं आये—मैंने छेड़ा । उसने कहा—उन्हें बुलाने गया था तो वे बिगड़ने लगे बोले—"चढ़ाया तो ढाई रुपया ही है । इतने में ही बीबी को अमर कर लोगे । मन्त्र की बदौलत अभी तक जिंदा है । नहीं तो कल ही चल बसती ।", क्या करता आखिर । खिसियाकर लौट आया । पाप भी माथे मढ़ा और पत्नी भी हाथ से गई । वह भय और दुश्चिंता से काँप रहा था । मैंने घटना की समाप्ति की, यह कह कर—अरे भाई बीरू, इतना भी नहीं समझते तुम कि किसी एक जीव की हत्या करके दूसरे को जीवन-दान नहीं दिया जा सकता । पाप का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिणाम कभी हितकर नहीं होता । भगत तो इसी ठगी की कमाई खाता है । तुम्हारे समान भोले-भाले लोगों को मूर्ख बनाकर दो-चार रुपये रोज ठग लेता है । यही उसका पेशा है । मेरी सलाह मानो बीरू । जो हुआ सो हुआ । चाची तुम्हें माफ कर देंगी । अब अगर अपनी पत्नी को बचाना चाहते हो तो मैं पास के गाँव के सरकारी डॉक्टर के नाम एक पत्र लिखे देता हूँ । उनका इलाज कराओ । मेरा विश्वास है कि यदि प्रभु की कृपा हुई तो तुम्हारी पत्नी बच अवश्य जायगी । बीरू मेरे पैरों पर गिर गया । मैंने डॉक्टर के नाम चिट्ठी लिख दी ।

उसी दिन शाम को मैं अपने नगर वापस आ गया । दस-पन्द्रह दिन बाद चाची की चिट्ठी आई कि बीरू की पत्नी बिल्कुल ठीक हो गई है । कुछ भ्रम फैला रहे थे कि भगत के चमत्कार से ही वह ठीक हुई है पर बीरू डंके की चोट पर कहता—भगत ढोंगी है । उसने तो मेरी पत्नी को काल के गाल में भेज ही दिया था, किसी तरह डॉक्टर ने बचा लिया ।

बीरू से सम्बन्धित सारी घटनाएँ अभी मेरे मस्तिष्क में ताजी ही थीं कि एक दिन मेरी सरहज आ धमकीं । कुछ बीमार, चिन्तित तथा परेशान-सी लगती थीं वे । हाल-चाल पूछने पर उन्होंने बताया कि उनके छोटे लड़के शिवदत्त को उनकी सौत सता रही है । लड़का पीला पड़ता जा रहा है मानो किसी ने उसका खून चूस लिया हो । एक दिन ओझा ने सौत बुलवाई भी । उसने लड़के पर आकर कबूल किया कि जब तक गंगा के किनारे मेरा एक चबूतरा नहीं बनता, तब तक मैं इसे नहीं छोड़ूँगी । चबूतरे पर इतवार, मंगल दिया जलाया जाना चाहिए और हर महीने पूर्णमासी को सवा सेर मिठाई चढ़ाई जानी चाहिए । मैंने सरहज की बात बड़े ध्यान से सुनी । उसमें न तो कोई बनावटीपन था न कृत्रिमता । लड़के को स्वस्थ देखना चाहती थीं वे और इलाज में उस समय तक काफी पैसा फूँक चुकी थीं ।

मैंने कहा—यह तो सब ठीक है । मेडीकल कॉलेज में भी एक बार लड़के को दिखा दूँ तो कोई हर्ज तो नहीं । वे अनमने मन से राजी हो गईं । कुछ परिचित डॉक्टर थे । उन्होंने बड़े परिश्रम के साथ बीमारी का निदान किया और बताया कि इसे जलवायु परिवर्तन की तत्काल आवश्यकता है । जिस गाँव में यह रहता है वहाँ की जलवायु इसके लिए घातक है । पन्द्रह-बीस दिन के इलाज में बच्चा स्वस्थ हो गया । भाभी बड़ी प्रसन्न थीं, पर अब भी उनके दिमाग में गंगा के किनारे का चबूतरा, सौत की बदले की भावना तथा टोने-टोटके की बात चक्कर लगा रही थी । मैंने उनसे कहा कि तुम्हारा मन:तोष इसमें ही हो तो ऐसा ही कर लो, पर फिलहाल लड़के को उस आबहवा से दूर ही रहने दो कुछ दिन ।

भाभी लौटने को हुईं तो मैंने अवसर पाकर उन्हें समझाया—तुम्हारी सौत को आखिर इस बच्चे को सताने से क्या मिलेगा ? ऐसा तो नहीं है कि तुम्हारा भ्रम मात्र हो और देखा न कि इसी चक्कर में पाला-पोसा ६ वर्ष का लड़का हाथ से जा रहा था । भाभी कुछ सोच-समझ कर बोलीं— कभी-कभी मैं भी सोचती हूँ कि यह सब मायाजाल ही तो नहीं । पर जब लड़के पर आकर सौत कबूलती है तो फिर सन्देह भी कैसे किया जाय ? भाभी काफी जिज्ञासु थीं । सही बात को ग्रहण करने में उन्हें कभी हिचक या उलझन नहीं होती थी । मैंने उन्हें समझाया कि बच्चों का सुकुमार व्यक्तित्व ट्रांसमीटर के समान होता है । बहुत जल्दी ही परोक्ष रूप से वह बाहर के प्रभाव को ग्रहण कर लेता है और एक बार ग्रहण करने के बाद उसे थोड़े-बहुत उसी रूप में फिर से प्रकट कर देता है । मुझे ऐसा लगता है कि तुम लोग बच्चे के आगे इस तरह की बातें करते रहते होगें । उसी को उसके कोमल मस्तिष्क के नाजुक ट्रांसमीटर ने ग्रहण किया और किसी शारीरिक और फलत: मानसिक दुर्बलता के क्षणों में उसने थोड़ा-बहुत हेर-फेर के साथ वही दुहराया जो उसने ग्रहण किया था । वाणी का प्रभाव मुख-मुद्रा पर पड़ता है । क्रोध, आवेश या क्षोभ के क्षणों में मुख-मुद्रा में अप्रयास ही एक विकृति आ जाती है । यही कारण है कि तुम्हारा लड़का जब सौत की बात कहता होगा तो उसके चेहरे पर प्रौढ़ता वाला आक्रोश, रूक्षता और मनोभाव दिखलाई देने लगता है । यह मनोवैज्ञानिक तथ्य तुम्हारे सारे भ्रम का अवतार है ।

भाभी को मेरी बात समझ में आ गई । उन्होंने चबूतरा, दीपक और मिठाई की बात मन से हटा दी । 'ओझे को घर के पास न फटकने देना' मैंने भाभी को नेक सलाह दी । मैं यह नहीं कह सकता कि भाभी के कुसंस्कार तथा अन्ध-विश्वास कहाँ तक कम हो गये, पर इसमें सन्देह नहीं कि बच्चे को लेकर फिर वे कभी फकीर और ओझा के पास नहीं गईं । बच्चा पूर्णत: स्वस्थ है और गंगा के किनारे चबूतरा बनाने का विचार अब भाभी के मन से मिट चुका है ।

रोज सुनता हूँ टोने-टोटके, मन्तर-जन्तर की बातें । सोचने लगता हूँ कि इस बीच संसार कहाँ से कहाँ पहुँच चुका है, पर ये बिचारे आज भी वहीं हैं, जहाँ वे सदियों पहले थे । जीवन की विविध समस्याओं के प्रति उनका दृष्टिकोण वही पुराना दकियानूसी है । ज्ञान-विज्ञान की झलक तक नहीं है उसमें । अभी उस दिन पढ़ी समाचार-पत्र में एक ऐसी घटना कि दिल काँप गया ।

भानुमती नाम की एक अधेड़ महिला ने अपनी पड़ोसिन रधिया के पाँच वर्ष के बच्चे को मार कर खेत में गाड़ दिया और उसके बालों को ताबीज में मढ़वा कर हाथ में बाँध लिया । पाप कहाँ तक छिपता । बहुत बचने की कोशिश की उसने पर वह पकड़ी गई । उससे जब पुलिस ने पूछ-ताछ की और हत्या का कारण पूछा तो उसने बताया कि यह लड़का उसे बड़ा प्रिय था और कामना करती थी कि ऐसा ही पुत्र उसे प्राप्त हो । उसकी एक सखी ने जो टोना-टोटका में पारंगत थी और बाँझों को पुत्रवती बनाने की कला में भी जो सिद्धहस्त थी, उसने बड़ा हिसाब-किताब लगा कर बताया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि यदि वह बच्चे को मार कर उसकी चोटी के बालों को ताबीज में मढ़वा कर पहने तो उसके गर्भ में बालक की आत्मा प्रवेश कर जायेगी और साल बीतते-बीतते उसे ठीक इस बालक-सा ही पुत्र प्राप्त होगा । भानुमती ने बताया पिछले दो महीने से उसके मन में एक अन्तर्द्वन्द्व चल रहा है विवेक और अन्धविश्वास के बीच । कई बार मारने का निश्चय करके न मार सकी, कई बार अवसर नहीं मिला और कई बार इस कुविचार के लिए उसने अपने आपको धिक्कारा । फिर एक दिन उसके स्वार्थ ने, उसकी माँ बनने की अभिलाषा ने उसे ऐसा अन्धा बना दिया कि उसे भला-बुरा कुछ न सूझा और उसने निर्दोष, निरीह, सुकुमार बालक की हत्या कर दी—माँ से उसका लाल छीन लिया, पिता से उसका जवानी का स्वप्न और बुढ़ापे का सहारा । रो-रो कर भानुमती ने अपना अपराध स्वीकार किया और चिल्ला-चिल्ला कर कहा कि मैं हत्यारिन हूँ, मुझे फाँसी दी जाय ।

कहते हैं माँगे से मौत भी नहीं मिलती । उदार न्यायाधीश ने उसे दस वर्ष की सजा दी । तीन-चार महीने बाद वह जेल में ही पागल हो गई । हर समय रोती और चिल्लाती रहती—मैंने बालक की हत्या की है, मुझे फाँसी दे दी जाय, पर मौत उसे नहीं मिली और मिला उसे पागलखाना । वहाँ वह अब भी बन्द होगी शायद ।

समझ में नहीं आती यह बात कि बाँझपन यदि हत्या और दानवी क्रीड़ाओं से दूर हो सके तो फिर बड़े-बड़े चिकित्सकों और महिला चिकित्सालयों का काम हल्का हो जाय, पर आज भी प्रायः सभी निपूती स्त्रियाँ इसी फेर में रहती हैं । उन्हें तो वास्तव में अपने वात्सल्य को उदारतापूर्वक बाँटना और बिखेरना चाहिए । अनेक बालक हैं समाज में दुःखी और संतप्त, जिन्हें मातृत्व की अपेक्षा है । वे करुणाभरी दृष्टि से सन्तानहीन देवियों की ओर निहारते हैं । उन्हें अपनाकर, उनकी सहायता करके, उनका जीवन सजा-सँवारकर उन्हें आत्मतोष तो मिलेगा ही साथ ही परमार्थ का पुण्य भी मिलेगा उन्हें ।

मेरे एक साथी थे शर्मा जी । कई वर्ष पहले अवकाश ग्रहण कर चुके थे । गत वर्ष उनका निधन भी हो गया । एक मास पूर्व शर्मा जी की वृद्धा पत्नी मेरे यहाँ पधारीं । काफी परेशान थीं । मेरे बार-बार पूछने पर उन्होंने बताया कि पिछले सात-आठ महीनों से उनका पड़ोसी मकान-सम्बन्धी किसी विवाद के कारण कुपित होकर उन्हें परेशान करने के लिए भाँति-भाँति के तन्त्र-मन्त्र तथा टोने-टोटकों का प्रयोग कर रहा है । कभी मेरे घर के द्वार पर नीबू काट कर रख देता है, कभी दीपक जला कर रख जाता है और कभी रोली-अक्षत आदि छिड़क जाता है । एक बार उसने द्वार के चौखटे में सहित के काँटे खोंस दिए । अपने घर पर न जाने कहाँ-कहाँ के ओझे, मारन-सम्मोहन के ज्ञाता और मूठ फेंकने वाले बुला रखे हैं और दिन-रात मेरे परिवार के लिए अहितकारक पूजा-पाठ चलता रहता है । फलतः मैं लगातार बीमार रहती हूँ । फिर आग्रह किया श्रीमती शर्मा ने कि मैं उनकी सहायता करूँ और उस टोने के प्रभाव से उन्हें बचाऊँ ।

जिस विश्वास के साथ श्रीमती शर्मा यह सब कुछ बता रही थीं उससे मुझे ऐसा लगा कि इस टोने-टोटके के भ्रमजाल ने बुरी तरह उन्हें प्रभावित कर लिया है और साधारण समझाने-बुझाने का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा । फलतः मैंने उनके कथन का समर्थन किया । संयोग से उसी समय मेरे एक गुरुदेव आ गये । उनसे भी श्रीमती शर्मा ने अपनी कथा दुहराई । उन्होंने उनसे घर के हर कोने पर एक मन्त्र-बल से अभिप्रेरित कील ठोकने के लिये कहा । श्रीमती शर्मा को गुरुदेव पर ऐसा विश्वास हो गया कि उन्होंने अपने घर जाकर कोनों में कीलों को ठोंका । फिर दस-बारह दिन बाद श्रीमती शर्मा मुझसे मिलीं तो वे चिन्तामुक्त हो चुकी थीं । अब पड़ोसी के टोने-टोटके उन पर नहीं चलते थे । गुरुजी मुझे पहले ही बता चुके थे कि यह सब श्रीमती शर्मा के मन का भ्रम है । मैं केवल उनका मनोवैज्ञानिक उपचार कर रहा हूँ ।

कैसी विचित्र माया है अन्ध-विश्वास की । शर्मा जी क्रान्तिकारी विचारों के आर्य समाजी थे । कभी अन्ध-विश्वासों को प्रश्रय नहीं दिया उन्होंने । वे जीवित होते तो शायद यह सब होता भी नहीं, पर श्रीमती शर्मा ठहरीं भीरु स्वभाव की, फिर दुःख की मारी । जिसने जो कह दिया वही उनकी समझ में आ गया और संसार में शायद कुछ लोगों का तो यह काम ही होता है कि लोगों को भ्रमित करें, बहकावे में डालें और अपना उल्लू सीधा करें, येनकेन प्रकारेण ।

दो दिन से महरी नहीं आ रही थी । वैसे तो मेहरियों की गैरहाजिरी कोई महत्त्व की बात नहीं, पर यह भगवती मेहरी जरा और तरह की है । न आना होगा तो बता जायगी और न बता पाई तो घर से किसी के द्वारा कहला देगी । सब लोग इसी चिन्ता में थे कि क्या मुसीबत आ गई उस पर कि चुपचाप बैठ गई । शाम को दफ्तर से घर आया तो भाभी ने कहा—जरा पता लगाओ क्या हो गया मेहरी को । पूछते-ताँछते उसके घर पहुँचा । पता लगा कि उसकी दो वर्ष की लड़की अकस्मात मर गई है । आश्चर्य में पड़ गया मैं । अच्छी-खासी गोल-मटोल लड़की थी, खूब हँसती-खेलती थी । जितनी देर मेहरी चौका-बरतन करती उतनी देर वह आँगन में खेलती-कूदती रहती । बिल्ली से लड़ती-झगड़ती और किलकारी मारती । मन में अफसोस भी हुआ कि ऐसी स्वस्थ लड़की कैसे मर गई । मेहरी ने बताया कि परसों नजर मार दी किसी ने, बस लड़की ऐंठ गई । आँखें उलट गई और मुँह खुला का खुला रह गई । दो-तीन घण्टे में चल बसी । इतनी देर में पास-पड़ोस से झाड़ने-फूँकने वाले बुलाये, टोना-टोटका किया, मानमनौती मानी, पर भगवान् ने एक न सुनी । भगवती बेहाल थी और बुरी तरह रो रही थी ।

कैसे समझाता उसे कि उसकी लड़की को न नजर लगी थी न भूत-वहार । उसे लू लग गई थी और यदि लू

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का इलाज ठीक समय पर नहीं किया जाता तो स्थिति भयावह हो जाती है और मरीज को प्राय: जिन्दगी से हाथ धोना पड़ता है । यदि वह झाड़-फूँक के चक्कर में न पड़ कर सीधे किसी अस्पताल में चली जाती तो उसे अपनी लड़की से हाथ न धोना पड़ता और आज उसे इस तरह रोना-पीटना न पड़ता ।

कुछ तो ऐसे रोग हैं जिन्हें प्राय: गलत समझ लिया जाता है । एक ऐसा ही रोग है हिस्टीरिया । यह रोग प्राय: स्त्रियों को होता है । रोग के विशेषज्ञों का अभिमत है कि यह रोग प्राय: ऐसी तरुणियों को होता है जिनकी कामोत्तेजना प्राय: अतृप्त अथवा अर्धतृप्त रह जाती है । कभी-कभी ऐसा भी होता है अन्य भौतिक इच्छाओं और कामनाओं में विफलता के कारण भी यह रोग हो जाता है ।

गाँव में प्राय: यह देखने में आता है कि जिस लड़की को भी हिस्टीरिया की शिकायत हुई उसे ही लोगों ने भूत, चुड़ैल, ब्रह्मराक्षस, प्रेत या पीपल पर वाले बाबा अथवा ऐसे ही किसी का शिकार समझ लिया जाता है । फिर तो गाँव में अच्छी-खासी रौनक आ जाती है । कोई कहता है मिर्च का धुआँ दो, तो कोई चप्पलों से पूजा करने का सुझाव देता है । हर आदमी तो भूत-प्रेत विशेषज्ञ होने का दावा करता है । कुछ देर में ही सुझावों की सूची इतनी बड़ी हो जाती है कि गृहपति के लिए निर्णय करना कठिन हो जाता है कि वह क्या करे । उसके इस विभ्रम का लाभ उठाकर कुछ साहसी बुजुर्गवार स्वयं ही कारगुजारी शुरू कर देते हैं और फिर वहाँ जो दृश्य उपस्थित होता है उसका भगवान् ही मालिक है । एक ऐसे दृश्य की झाँकी देखिये—

मेरे गाँव के ही पड़ोस के गाँव में थे एक लाला राधेलाल । उनकी तीन कन्याएँ थीं । दो का विवाह तो किसी प्रकार निपटा दिया था, किन्तु तीसरी के लिए जुगाड़ नहीं बैठ रहा था । जहाँ जाते वहीं दहेज का राक्षस मौजूद था । पुराने विचार के आदमी थे लाला और किसी जमाने में अच्छे-खासे जमींदार थे । विवाह करना चाहते थे उन्हीं के शब्दों में, जरा ठिकाने से । ठिकाने की तलाश में उनकी कन्या पच्चीस वर्ष की हो गई । लाला मन ही मन परेशान थे पर करते क्या ?

एक दिन अचानक लाला की कन्या कुसुम बेहोश हो गई । उसके हाथ-पैर ऐंठ गये और मुँह से फेन निकलने लगा । लाला ने मुँह पर पानी के छींटे दिए, हनुमान चालीसा का पाठ किया, दो-एक मन्त्र बुदबुदाये पर सब व्यर्थ और कोई बात होती तो पर्दा पसन्द लाला पास में भनक तक न पहुँचने देते, पर सन्तान के मोह ने उन्हें अपने साथी मन्ना पंडित का द्वार खटखटाने के लिए विवश कर दिया । चटपट आये पंडित जी—लाल अंगोछा पहने, पैरों में खड़ाऊँ, घुटे सिर पर पड़ी मोटी-सी चोटी, मोटा छह लड़ वाला जनेऊ जो मैल की रगड़ से रस्सी-सा बन गया था । आते ही उन्होंने कुसुम के मुँह के पास अपने कान लगाये और फिर बड़े उत्साह के साथ कहा पकड़ लिया चोर । मजरिया का जिन्द है । ठहरो मैं अभी कल्लू फकीर को बुलाता हूँ । मिनटों में वह जिंद को बन्द करता है अपनी बोतल में । इसके पहले कि लाला कुछ कहें मन्ना पंडित लपक कर घर के बाहर हो गये । पाँच मिनट में कल्लू फकीर अपने कील-काँटे सहित मौजूद थे और फिर न जाने कैसे यह खबर गाँव भर में फैल गई कि लाला की लड़की कुसुम पर मजरिया के जिन्द आये हैं, फिर क्या था ? लाला के लाख रोकने-टोकने पर, डाँटने-डपटने पर आँगन पुरुषों से भर गया, बराठे तथा बरामदा बच्चों से तथा छतें स्त्रियों से । कुछ अजब हुड़दंग-सा मच गया । लाला घबड़ाये, उनके घर की आबरू खतरे में थी, पर करते भी क्या ? ऐसे मौकों पर लाला क्या, पुलिस भी घबड़ा जाती है ।

उसके बाद कल्लू फकीर का सर्कस शुरू हुआ । ऐसा कि रुकने का नाम ही नहीं । कभी वह पैर के तलवों को थपथपाता, कभी घुटनों को । फिर गला दाबता और गाल पर चपत मारता । उसके बाद धीरे-धीरे बालों पर हाथ फेरता । कुसुम के मुँह से झाग तेजी से निकल रहा था । कल्लू फकीर कह रहा था—देखो न जिन्द भाग रहा है । मैंने कहा था न कि मिनटों में खदेड़ दूँगा उसे । इसी समय कुसुम बड़बड़ाई—हाय राम, हाय राम! छोड़ो-छोड़ो, मरी-मरी । बस, अब क्या था ? कल्लू बोला—"ऐसे थोड़े ही छोड़ दूँगा यार । वायदा करो कि अब लड़की पर कभी नहीं आऊँगा ।" लड़के बड़े कौतूहल से यह सब देख रहे थे । कुसुम के बड़बड़ाने पर वे सफलता सूचक ताली बजाने लगे । कल्लू की ललकार भी उन्हें बड़ी पसन्द आई । बस, यों समझिए, मदारी का तमाशा होने लगा, लाला के आँगन में जहाँ कभी बाहर की एक चिड़िया भी नहीं फटक सकती थी ।

कुसुम की साड़ी पसीने से गीली हो गई थी । उसका सारा बदन काँप रहा था, जीभ बेचैनी से इँठ रही थी और लगता था, अब जिन्द उसे लेकर ही जायेगा । कल्लू फकीर धीरे-धीरे कुछ मन्त्र-सा पढ़ रहा था । बीच-बीच में कहता जाता था—"हाँ, ठीक है । चबूतरा बन जायेगा तुम्हारा । हर इतवार, मंगल एक सेर मिठाई चढ़ जायेगी-हाँ-हाँ, पंचमेली सही । गन्ध-फूल का इन्तजाम हो जायगा । लड़की को तो छोड़ो और भी तो लड़कियाँ हैं । हाँ हाँ, चबूतरे पर पहुँच जायगी ।" पास में खड़े गाँव वाले कल्लू की कला पर मुग्ध थे । कैसी आसानी से सब कुछ कबूल करवा रहा था जिन्द से, जैसे सख्त दरोगा के आगे कच्चा चोर । बड़ी कोशिश की कल्लू ने, पर जिन्द न गया, कुसुम को होश नहीं आया, लाला की मुसीबत नहीं कटी ।

संयोग था और सुयोग । कुसुम की जिन्दगी थी अभी । उसी समय लाला के दामाद जो शहर में डॉक्टर थे, आ टपके । पास के गाँव में मरीज को देखने आये थे, सोचा-जरा ससुराल भी होते चलें, जरा साली से भी हँसी-मजाक कर लें । घर में घुसे तो वहाँ का रंग देखकर हैरत में पड़ गये । समझ में ही उन्हें नहीं आया कि माजरा क्या है ? लाला चुप, ललाइन गुम-सुम । डॉक्टर साहब ने सोचा—लगता है,

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चल बसी कुसुम । वे भीड़ को चीरते हुए कुसुम के पास पहुँचे । कल्लू ने उन्हें टोका, समझाया और फिर डरपाया कि जिन्द से छेड़-छाड़ ठीक नहीं है । जिन्द का नाम सुनते ही सारी बात समझ में आ गई डॉक्टर साहब के । उन्होंने एक ऐसा हाथ दिया कल्लू के कि वह दूर भीड़ पर जा गिरा । फिर उन्होंने दर्शकों को डाँटा—'जाइये आप लोग अपने-अपने घर । क्या आप लोग लड़की की जान लेकर ही तमाशा खत्म करेंगे ?' कल्लू बड़बड़ाता बाहर चला गया, उसके पीछे-पीछे बड़े असन्तुष्ट से उसके प्रशंसक और फिर तमाशबीन बच्चे । दो मिनट में आँगन खाली हो गया । छत पर खड़ी स्त्रियाँ मुँड़ेर के पीछे छिप गईं कि कहीं उन्हें भी न निकाल दिया जाय ।

भीड़-भाड़ हटने पर डॉक्टर साहब ने ललाइन को सम्बोधित करते हुए कहा क्यों लड़की को मार डालने का इरादा कर रही हो ? न आता तो ये चन्द मिनटों की मेहमान थी । पंखा झलिए यहाँ खड़ी होकर । फिर लाला से कहा—बाहर का दरवाजा बन्द कर दीजिए, बाबूजी । कोई अन्दर न आ पाये । उसके बाद डॉक्टर साहब ने कुसुम के मुँह में कई चम्मच पानी डाला । इंजेक्शन लगाया और फिर नाड़ी पकड़ कर पास की कुर्सी पर बैठ गये । पाँच-सात मिनट में कुसुम ने अँगड़ाई ली । डॉक्टर साहब ने अब एक दवा पिलाई तथा मुँह और हाथ-पाँव को गीली तौलिया से पौंछा । आध घण्टे बाद कुसुम पलंग पर उठकर बैठ गई । उसके चेहरे पर अब भी परेशानी, थकावट तथा घबड़ाहट के भाव स्पष्ट थे ।

लाला और ललाइन दामाद के स्वागत-सम्मान में लग गये । डॉक्टर साहब ने उन्हें समझाते हुए कहा यह कुछ न करिये । बस, एक कप चाय बना दीजिए । मुझे इसी गाड़ी से शहर लौट जाना है । वहाँ भी मरीज मेरा इन्तजार कर रहे होंगे । फिर एक भद्दी-सी गाली देते हुये कहा—''बुलाओ उस जिन्द के बच्चे को । आज मैं उसका जिन्द उतारता हूँ । ठग कहीं का ।'' लाला अपने अन्ध-विश्वास पर लज्जित थे । बड़े हिचकते हुए उन्होंने पूछा डॉक्टर साहब से आखिर क्या हो गया था कुसुम को । डॉक्टर साहब ने समझाया—''हिस्टीरिया का दौरा था । भीड़-भाड़ और गर्मी से वह और तेज हो गया था । नहीं तो पानी के छींटे और ठण्डी हवा से दस-पाँच मिनट में ठीक हो जाता । मैं एक दवाई भेज दूँगा इसके लिए, उसे पिलाइए । अब यह दौरा नहीं आयेगा इसे, और हाँ, अब इसके हाथ पीले करने का भी इन्तजाम कीजिये । आपकी नजर में कोई लड़का न हो तो मैं ही खोजूँ ।''

चाय पीकर डॉक्टर साहब चले गये—हिदायत दे गए कि इसे भीड़-भाड़ से बचाइये । जाते-जाते हँसकर कुसुम से कहा—''स्वयंवर रचाया था क्या ?'' कुसुम झेंप कर चुप हो गई ।

अब देखिए न यदि डॉक्टर साहब ऐन मौके पर न आ जाते तो कुसुम की क्या दशा होती ? यही न कि वह एक बूँद पानी के लिए तरस कर गर्मी के मारे मर जाती । कल्लू फकीर को तो हर तरह से मजा ही था । युवा लड़की के सारे शरीर पर हाथ फेरने को मिला उसे और सप्ताह में दो बार सेर-सेर भर मिठाई पाने की योजना पक्की ही थी उसकी । नित्य-प्रति हमारे गाँवों में न जाने कितनी कुसुम कल्लू फकीर की शिकार होती हैं । माँ-बाप पास-पड़ोसियों के सामने उनकी इज्जत लुटती है । अज्ञानी और अन्ध-विश्वासी माँ-बाप सब कुछ सहन करते हैं—कड़ुए घूँट की तरह ।

पति का प्यार मिलता है, अपने आचरण और सद्व्यवहार से, पर उसे भी स्त्रियाँ टोने-टोटके से खरीदना चाहती हैं । नतीजा उल्टा ही होता है । उनकी इन हरकतों का भंडाफोड़ होते ही पति भय और आशंका से उनसे और दूर हो जाता है । घटना हरदोई (उ. प्र.) की है । वहाँ एक वकील साहब के मुहर्रिर थे । अवस्था होगी ये ही लगभग पचास वर्ष की । शरीर पर ढलान के निशान तो थे, पर स्वास्थ्य अब भी बुरा नहीं था । आमदनी अच्छी थी, खाने-पीने पर भी काफी खर्च करते थे । उनकी पहली पत्नी का देहान्त चालीस वर्ष की अवस्था में हो गया था । दो-तीन वर्ष वैराग्य साधे रहे, बाबा-बैरागियों के फेर में रहे, फिर जब नाते-रिश्तेदारों ने समझाया-बुझाया, मित्रों ने अधेड़ों की रंगरेलियों की झाँकी अंकित कीं और इन सबके साथ आंतरिक वासना ने जोर मारा तो पैंतालीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने विवाह की स्वीकृति दे दी और छयालीस वर्ष आते-आते उनका विवाह पास के ही किसी गाँव की बीस वर्षीय स्वस्थ बाला से हो गया । विवाह के बाद दो-तीन महीने तो चैन से कटे, फिर उसके बाद चक-चक शुरू हो गई । गनीमत यह थी कि पहली पत्नी के कोई बच्चा नहीं था, इसलिये मतभेद और विवाद का विषय एक स्थान पर आकर सीमित हो गया था, कि पत्नी समझती थी कि उसके पति का ध्यान उसकी ओर नहीं है और शायद उसके भाव-लोक की स्वामिनी कोई और ही है । पतिदेव को विवाहोपरान्त की रंगरेलियों से विशेष रुचि नहीं थी । वह अधिक से अधिक ध्यान पैसा कमाने की ओर देते । शायद इसलिए कि यदि असमय में वे चल भी बसें तो उनकी युवा पत्नी को कोई आर्थिक कठिनाई न हो । पत्नी के प्रति उनकी कर्त्तव्य-भावना थी, आसक्ति नहीं, इसीलिए उसकी सारी सुविधाओं का ध्यान रखते हुए भी वे अपनी पत्नी की ज्यादा लल्लो-चप्पो नहीं कर पाते थे । समय भी नहीं था उनके पास, शायद शक्ति भी नहीं ।

परिणाम स्पष्ट था । ज्यों-ज्यों पत्नी के शिकवे बढ़ते गए, शिकायतें बढ़ीं, पंडितजी आनायास ही उससे दूर होते गये, इसलिए कि अकारण विवाद न बढ़े और नित्य महाभारत की स्थिति न आये । वे प्राय: घर पर मौन रहते और बिना टोके-टाके पत्नी की हर माँग को स्वीकार कर लेते । पत्नी इन सब बातों का अपने ढंग से अर्थ लगाती । सोचती कि या तो पंडित देवता उसकी सौत यानी दिवंगता पत्नी के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विषय में सोचा करते हैं या कहीं और इनका मन अटका है, तभी तो वे उसकी ओर से उदासीन होते जाते हैं ।

जिन दिनों ये खींचा-तानी चल रही थी, पास की सेठ की बगिया में एक बाबाजी ठहरे थे । देखते ही देखते चारों ओर यह ख्याति फैल गई कि ये सिद्धि-प्रदाता हैं । जो-जो कुछ माँगता है, वे दे देते हैं । पंडिताइन ने सुना तो अपनी एक विश्वस्त मंथरा टाइप सखी को लेकर बाबा के पास पहुँची । वहाँ अपार भीड़ में कौन किसको पूछता । दो तीन घण्टे भटकने के बाद बाबाजी के एक चेले से भेंट हो गई । उसने पंडिताइन की परेशानी समझी; उनके प्रति सहानुभूति बतलाई और फिर दूसरे दिन शाम के सात बजे का टाइम दिया । पंडिताइन कृत-कृत्य हो गईं । उन्होंने चेले के चरणों पर पत्र-पुष्प, मिठाई और दो रुपये चढ़ा दिए । उन्हें लगा कि अब सफलता की सीढ़ी मिल गई है उन्हें और अब वे शीघ्र पंडितजी से पानी भरवा कर मानेंगी ।

दूसरे दिन समय से कुछ पहले ही पंडिताइन पहुँच गईं बाबा के पास । दो कोठरियाँ थीं बाग में । एक में बाबा बैठते थे, दूसरे में दर्शक । बाबा के आस-पास भीड़ न हो, इसलिए चेले लोगों को अलग-अलग समय देते थे । पहुँचते ही चेले से भेंट हो गई । उसके चरण छुए पंडिताइन ने । दस मिनट बाद बाबा के कमरे में दर्शनार्थ घुसने का उसका नम्बर आया । उसको देखते ही बाबा चिल्लाये—मेरे पास क्यों आई है ? भाग जा । तेरा पति तो तेरी सौत की याद में घुल-घुल कर मरा जा रहा है और अपनी पहली पत्नी की बहिन पर जान देता है । जा-जा, मेरे पास इन सब वाहियात के झगड़ों को निपटाने का समय नहीं है । बूढ़े, दुजहे से विवाह करके तुझे क्या मिलेगा, आखिर ?

पंडिताइन बाबा के प्रति श्रद्धा से विभोर थीं । सोच रही थीं कि यह तो वास्तव में सिद्ध-पुरुष हैं । एक नजर में सारा रोग जान लिया । रोग की दवा मुझे तो यहीं मिलेगी, बस यहीं । इतना सोचते-सोचते वह वहीं कोठरी के एक कोने में बैठ गई । दर्शकों का ताँता आँधी-सा आता गया, तूफान-सा निकलता गया । अन्त में केवल पंडिताइन रह गई । एकांत पाकर उन्होंने बाबा के चरण पकड़ लिये । पत्र-पुष्प एवं मिठाई के अतिरिक्त एक पाँच रुपये का नोट भी रख दिया उन्होंने बाबा के चरणों पर । बाबा ने कुछ ध्यान नहीं दिया । केवल आँख बन्द करे ध्यान-मग्न बैठे रहे । काफी देर हो गई तो बाबा ने जरा आँख खोली । पंडिताइन के अंग-प्रत्यंग पर दृष्टि डाली और फिर कहा कल इसी समय आना ।

पंडिताइन को लगा उसने बाजी मार ली है । कोठरी के बाहर निकलीं तो चेलेराम मिले । बोले—पकड़े रहोगी तो काम सिद्ध हो जायगा । बाबा जो कुछ कहें, उससे हाँ-हाँ करती रहना, यही बाबा को मनाने का तरीका है । पंडिताइन ने स्वीकृति दी । थोड़ी दूर चेला पहुँचाने आया । फिर पंडिताइन के कान में कुछ धीरे से कहा और लौट गया । पंडिताइन भागती हुई घर आई । घड़ी पर नजर गई तो ग्यारह बज चुके थे । पंडित हुकुमचन्द पंडिताइन की प्रतीक्षा करके बिना खाये-पिये सो गये थे । नौकर ठल्लू दरवाजे पर बैठा ऊँघ रहा था । पंडिताइन समझ नहीं पा रही थीं कि पंडितजी को जगायें या स्वयं भी चुपचाप सो जायें । इसी उधेड़-बुन में थीं कि पंडितजी ने करवट बदली और बरामदे में रोशनी देखकर ललकारा, कौन है ? अब क्या करतीं पंडिताइन ! बोलीं, मैं हूँ । मन्दिर से आने में जरा देर हो गई । उठो, खाना खा-पी लो, तब सोओ । पंडितजी उठे, उन्होंने खाना खाया, जरा देर इधर-उधर टहले, फिर लेटते हुए बोले—बगिया के पास क्या कोई नया मन्दिर बना है ? फिर उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना लेट गये । बात यह थी कि जब पंडिताइन बाबा के दर्शनार्थ बगिया में जा रही थीं तभी पंडितजी वकील साहब के घर से लौट रहे थे और वे भली-भाँति जान गये थे कि पंडिताइन बाबाजी के फेर में पड़ गयी हैं ।

पंडिताइन जान गईं कि उनका भेद खुल चुका है । बस, अब बची-खुची हिचक भी दूर हो गई । नित्य बाबा के पास जातीं और कभी-कभी दिन में दो फेरे तक हो जाते थे उनके । कभी बाबा कोई टोना बताते तो कभी टोटका । आज गंडा दिया तो कल ताबीज और फिर एक पुड़िया दी, कहा पंडित के बिस्तर पर छिड़क देना । पंडिताइन ने बाबा की हर बात ज्यों की त्यों मानी, सोलह आने भर पूरी कीं । बिस्तर पर दवा छिड़की । रात भर तो पंडितजी व्यग्रतापूर्वक करवटें बदलते रहे, सुबह उठे तो उनके सारे शरीर पर सूजन थी । पंडिताइन कुछ घबड़ाईं तो सही पर कहती क्या ? सुबह पंडितजी डॉक्टर साहब के पास पहुँचे । उसने इंजेक्शन, दवा इत्यादि दी और कहा कि किसी जहर का प्रयोग किया गया है आप पर, जरा सावधानी से रहिए.....।

दिन बीतते गये । पंडिताइन बिल्कुल बाबा के वश में थीं । पंडित जी अपनी स्वाभाविक गति से जीवनयापन कर रहे थे । पंडिताइन का रुख देख कर वे उनके प्रति तो कम, जीवन के प्रति अधिक विरक्त हो गये थे । फिर भी उन्होंने अपनी वाणी या व्यवहार में कभी सन्देह व्यक्त नहीं किया, पंडिताइन की आजादी में कमी नहीं की और न उनकी सुख-सुविधा में कोई कमी की । पंडित जी हाय-हाय की जिन्दगी से शान्ति की मौत अधिक पसन्द करते थे । एक दिन रात में खा-पीकर सोये तो तबियत कुछ घबड़ाई । आधी रात के करीब एक खून की उल्टी हुई, मानो कलेजा कट गया हो और जब तक पंडिताइन पास-पड़ोस से किसी को बुलायें पंडित जी इस असार संसार से विदा हो गये । यही शायद बाबा की योजना भी थी । पंडित जी के मित्रों और साथियों ने इस पर सन्देह व्यक्त किया और पुलिस को सूचना दी । पंडिताइन ने रो-रोकर अपना अपराध स्वीकारा । बाबा भी फँसे और फिर आगे जो कुछ हुआ उसका अनुमान लगाना कठिन नहीं है ।

यह विनाशी ताण्डव देखा न आपने । बाबा ने जाल तो बड़ी चालाकी से बिछाया था कि पंडित जी की सारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्पत्ति तथा तरुण पत्नी दोनों मिल जायें और फिर प्रासंगिक मिलन चिर-मिलन में परिवर्तित हो जाय पर उन्हें तो अपनी करनी का दण्ड यहीं मिलना था । दोनों मिले तो पर अदालत में । हम-आप नित्य देखते हैं कि प्राय: नित्य ही कितनी महिलाएँ बाबाओं के फेर में पड़ कर अपना सर्वनाश करती हैं, अपने सोने के संसार में आग लगाती हैं । कोई कायदा-कानून इस स्थिति में परिवर्तन नहीं कर पा रहा है । परिवर्तन तो अपने में किया जाना है न, तब तो स्थिति बदलेगी ।

एक भोले-भाले ग्रामीण भाई अभी हाल में ही लम्बी सजा काट कर जेल से छूट कर आये थे । गये थे तब अच्छे-खासे युवक थे—कोई तीस का था तो कोई पैंतीस का । अब तो लगता है ये अच्छी तरह बुढ़ा गये हैं । बाल पक गये हैं, गाल पिचक गये हैं और दाँतों में अब आधे ही बाकी हैं । ये बिचारे खेल-खेल में अपनी जिन्दगी के साथ खेल गये । बात इस प्रकार थी । रामबली और बैजनाथ रिश्ते में भाई थे और जिगरी दोस्त भी । अपने व्यवहार तथा स्वभाव से ये दोनों भाई गाँव में बड़े लोकप्रिय थे । जहाँ किसी को जरूरत पड़ी ये मौजूद हैं । जहाँ एक ओर इनके कारण अधिकांश ग्रामीण भाइयों को सुविधा थी वहीं कुछ ऐसे भी थे जो मन ही मन इनसे जलते थे । उनके प्रभाव के कारण इन जलने वालों की हरकतें नहीं चल पाती थीं । इन विरोधियों ने मिल कर एक षड्यन्त्र किया । कहीं से एक ओझा बुलाया और गाँव के शिवालय के चबूतरे पर मारण-मन्त्र का पाठ बिठा दिया । बस क्या था चलने लगा पाठ.....। रामबली स्वाहा..... बैजनाथ स्वाहा.....। जो उधर से निकलता हैरत में पड़ जाता कि आखिर माजरा क्या है ? एक-दो दिन में दूर-दूर तक गाँवों में शोहरत फैल गई मारण-मंत्र के पाठ की । लोगों ने रामबली और बैजनाथ से कहा तो वे दोनों हँसकर रह गये । बोले—अरे ऐसे मन्त्रों से कोई मर जाय तो फिर यमराज का तख्ता उलट जाय । मौत किसी के बुलाने पर नहीं आती । वह तो जिस दिन आयेगी आ जायेगी । उससे डरना क्या, पर उनके शुभ-चिन्तकों को यह बरदाश्त नहीं हुआ । उन्होंने एक दिन पूजा-पाठ की सारी सामग्री एक ओर फेंक दी तथा मन्त्र पाठ करने वालों को मार भगाया । फिर क्या था । लड़ाई का बहाना मिल गया । उन लोगों ने मन्त्र-पाठ करने वालों की ओर से पुलिस में रिपोर्ट लिखवाई और फिर हथियार लेकर गाली-गलौज करते चौपाल में आ जमे । कुछ देर तो लोग चुप रहे । फिर इधर से भी लोग उतर पड़े मैदान में । इससे पहले कि रामबली तथा बैजनाथ बीच-बचाव के लिये आयें एक-एक आदमी दोनों ओर से मारा गया । मुकदमा चला और पाँच लोगों को लम्बी-लम्बी सजायें हुईं ।

अजीब तमाशा रहा यह भी । स्वाहा के पाठ ने कितने घर स्वाहा कर दिए । एक थे गोपीकृष्ण । उनका तो गौना भी नहीं आया था । उन्हें भी दस वर्ष की सजा हो गई । जिस शक्ति, क्षमता और संकल्प का उपयोग जन-कल्याण तथा सृजन कार्य में होना चाहिए था । उसका ह्रास जेल की कोठरियों में हुआ । वस्तुत: यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है और यदि इसका निराकरण नहीं किया जाता तो प्रतिवर्ष ऐसे ही अनेक गोपीकृष्ण अपना जीवन बर्बाद करते रहेंगे । यदि जरा विचारपूर्वक देखा जाय तो वैसे भी किसी सार्वजनिक स्थान में किसी भी हत्या या विनाश की घोषणा जघन्य अपराध है और समाज को चाहिए कि उसे कानून से ही नहीं, बहिष्कार से दंडित करे ।

टोना-टोटका, मंतर-जंतर की कहानी अनन्त है और जीवन के प्राय: सभी क्षेत्रों में इसका प्रसार है । किसी को नौकरी चाहिए तो उसकी मदद के लिए ओझा जी तैयार खड़े हैं । वे बीस आने में ऐसा ताबीज बना देंगे कि बाँधा नहीं कि नौकरी मिली । यानी उस बेकार बेरोजगार के बीस आने पैसे और मारे गये । कहीं-कहीं तो भाव तक बँधे रहते हैं । गंडे के दस आने, ताबीज के बीस आने और सिद्धिदायिनी अँगूठी के ढाई रुपये । गंडे से महीने भर में काम बनेगा तो ताबीज से पन्द्रह दिन में और अँगूठी तो अपना चमत्कार एक हफ्ते में ही दिखलायेगी । सोचने की बात है कि यदि परिश्रम का सुफल इतनी सरलता से ही खरीदा जा सकता तो वर्षों की कठिन साधना की क्या आवश्यकता थी और तपस्या का मूल्य ही क्या ? पर जिस प्रकार वर्ष भर न पढ़ने वाला विद्यार्थी नकल करके पास हो जाना चाहता है, उसी प्रकार अकर्मण्य और निकम्मे युवक प्राय: ऐसे मायाजाल में फँस जाते हैं । मेरे साथी पं. गौरीशंकर अपने सपूत ज्ञानशंकर की अज्ञानता के विषय में प्राय: बताते हैं । एक घटना इस प्रकार है—हाईस्कूल में तीन बार फेल होने के बाद पिता से पचास रुपये लेकर शहर में चाचा के पास नौकरी की तलाश में चले । खाना-पीना, घूमना-फिरना और फुटकर खर्च चाचा के माथे । सपूत पन्द्रह दिन रहे और फिर एक दिन चाचा से कहने लगे कि जरा दस-पाँच दिन के लिये गाँव हो आऊँ, फिर आ जाऊँगा । चलते समय चाचा से किराया भी माँग लिया । घर आये तो पिता से अपनी कारगुजारी बतायी—बस दस-पन्द्रह दिन में नौकरी मिल जायेगी ! पिता ने पूछा—आखिर कहाँ दरख्वास्त लगा आये हो ? इन्टरव्यू हो गया क्या ? कौन-सी पोस्ट है तथा क्या वेतन मिलेगा ? इस सबका उत्तर केवल एक था—बस सब ठीक हो जायगा । मैंने सब इन्तजाम कर दिया है । इसके बाद पाँच दिन बीते, दस दिन बीते, पन्द्रह दिन बीते और फिर पूरे तीस दिन बीत गये । कहीं से कोई अता-पता नहीं, नाम-निशान नहीं । तब ज्ञानशंकर को कुछ ज्ञान जागा । पिता के पास आकर रोने लगे—मुझे तो ज्योतिषी जी ने ठग लिया । चालीस-पैंतालीस रुपये वसूल कर लिए उन्होंने और मुझे नौकरी नहीं मिली । पिता ने अपने करम ठोके—हाय मूर्खराज ! तुम इतना भी नहीं जानते, नौकरी किसी का द्वार नहीं खटखटाती, सिद्धि किसी के द्वारे की चेरी नहीं जो यों ही मारी-मारी फिरे । इसके लिए प्रयास करना पड़ता है, तब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहीं नौकरी मिलती हैं, सिद्धि प्राप्त की जा सकती है । सपूत मुँह लटकाये खड़े थे ।

उसी वर्ष ज्ञानशंकर ने फिर फार्म भरा तथा हाईस्कूल पास हो गये, इन्टरमीडियेट भी प्राइवेट ही पास कर लिया । बी. ए. भी कर लिया नौकरी की तलाश भी न करनी पड़ी । नौकरी पीछे-पीछे डोलने लगी थी । पिता की एक झिड़की ने पुत्र को ज्ञान की नई किरण देकर उसका नाम सार्थक कर दिया ।

भोले-भाले लोग तरह-तरह से ठगे और मूर्ख बनाये जाते हैं । कहीं कोई पक्षी को बन्द किये हैं और भाग्य की पर्ची खिंचवाता है उससे, तो कहीं गाय सिर हिला कर भाग्य बतलाती है । चवन्नी में सारे जीवन का चिट्ठा जान लीजिए । मजे की बात तो यह है कि बाह्य रूप से टोना-टोटका, मंतर-जंतर का विरोध करने वाले अपने निजी जीवन में ऐहिक अभिलाषाओं की पूर्ति के लिये गंडा-ताबीज और मंतर-जंतर का मुक्त रूप से प्रयोग करते हैं । एक नेताजी को किसी ने बता दिया कि वे शरीर पर हर समय एक काला कपड़ा अवश्य पहने रहें । इससे उन पर कोई संकट न आयेगा । बिचारों ने अंडरवीयर और बनियान काले कपड़े की सिलवाली । सब लोग मजाक बनाते, हँसते पर ये तो बिचारे टोटके के फेर में थे । एक सज्जन इसी चक्कर में जीवन भर लाल कुर्ता पहनते रहे और वस्तुतः लाल कुर्ती वाले बन गये ।

टोना-टोटका के गोरख धन्धे—टोना-टोटका करने वाले लोग एक दूसरे को डराते, धमकाते और बेसिर-पैर की भ्रान्तियों के शिकार होते रहते हैं । अमुक स्त्री कल हमारे बच्चे को घूर-घूर कर देख रही थी, इसलिये उसकी नजर लग गई और हमारा बच्चा बीमार हो गया । ऐसी आशंका मन में कई व्यक्ति उपजाते हैं और अपनी उस कल्पना को सत्य मान बैठते हैं । कोई बेचारी स्त्री अपने सहज वात्सल्य से ही बच्चे को देख रही थी और चाहे बच्चे की बीमारी का कारण उसके रहन-सहन की कोई अव्यवस्था या शारीरिक स्थिति ही थी, पर उसका दोष उस गरीबिनी को लग गया । नजर लगा देने की दोषी वह ठहराई गई । उससे घृणा की गई, द्वेष उत्पन्न किया गया और अवसर मिला तो उसे उसी अपराध में किसी प्रकार दण्डित भी किया गया । सोचने की बात है कि नजर लगने की मान्यता के पीछे क्या कुछ सच्चाई भी है ? यदि ऐसा होता तो बाल विकास प्रदर्शनियों में पुरस्कार पाने वाले जिन्हें देखने और सराहने भारी भीड़ पहुँचती है, सभी उन्हें दुलराते हैं जिनके चित्र पत्रिकाओं में छपते हैं, वे अवश्य ही नजर लगने के शिकार हो गये होते । काले, कलूटे, भेंड़े, भोंडे, लकड़ी से पैर और लौकी सा पेट लिए, नाक टपकते और कपड़ों में रोज टट्टी करते हुए, लड़ैत लल्ला ही इस नजर-गुजर के शिकार होते हैं, जबकि अँग्रेजी और दूसरी समुन्नत जातियों के बच्चे गुलाब के फूल जैसे सुन्दर और गेंद की तरह उछलते फिरते हैं, उन्हें न तो नजर लगती है और न वहाँ कोई ऐसी बेहूदा बातों पर विश्वास ही करता है । कहीं किसी की नजर न लग जाय इसलिए माथे पर काजल का टीका कोई अपने बच्चों को नहीं लगाता और न उन्हें इसलिए राख चटाता है कि दूध पीकर घर से बाहर निकलने पर कोई भूत उन्हें न धर दबोचे । यह उपहासास्पद मूढ़-मान्यताएँ तो अभागे भारतीयों के पल्ले ही बँधी हुई हैं ।

रोमांचकारी दुष्परिणाम—टोना-टोटका के नाम पर आये दिन जघन्यकृत्य होते रहते हैं जिनकी चर्चा कभी-कभी अखबारों में छपने वाले समाचारों से विचारशील लोगों तक भी पहुँच जाती है, तो इन्हें इस पिछड़ेपन पर भारी वेदना होती है । तांत्रिक लोग अपने चंगुल में फँसे हुये चण्डूलों से घृणित कुकर्म कराते रहते हैं । प्रायः इस प्रकार के जो समाचार छपते रहते हैं उन्हें पढ़कर यही कहना पड़ता है, कि हे भगवान् ! तू हमें इस घोर अन्धतमिस्रा से न जाने कब तक उबारेगा । ऐसे नृशंस समाचारों की कुछ बानगी नीचे देखिये ।

(१) चाँदा जिले की पुलिस ने तीन गोंडों को नर-बलि के आरोप में गिरफ्तार किया । उन पर आरोप यह था कि उन्होंने अपने किसी प्रयोजन की सिद्धि के लिए देवी को प्रसन्न करने के निमित्त एक रास्ता चलते व्यक्ति को काट डाला और उसका खून खुद पिया ।

(२) अमृतसर में करतारचन्द नामक शरणार्थी युवक को पुलिस ने गला काट कर आत्महत्या करते हुए गिरफ्तार कर लिया । युवक देवी को प्रसन्न कर उससे अभीष्ट वरदान प्राप्त करने के लिए अपनी बलि देना चाहता था । इसके लिए उसने अपना गला काटा पर पूरी तरह कट न सका और घायल अवस्था में चिल्लाते हुए पुलिस द्वारा पकड़ा गया ।

(३) ग्राम डोरीवाला, थाना जेड़ीवाला, जिला अमृतसर के एक व्यक्ति को दस वर्ष की कैद का दण्ड दिया है । अपराधी ने एक साधु के कहने पर सन्तान प्राप्ति के उपाय रूप में पड़ोसी की एक तीन वर्षीय बच्ची की बलि दे दी थी ।

(४) बाराबंकी जिले के खेतासराय गाँव में एक धोबी अपने डेढ़ वर्षीय बालक को रात में अपनी सोती हुई पत्नी की बगल से उठाकर ले गया और चौराहे पर ले जाकर गोबर की मूर्ति के आगे सिर काटकर चढ़ा दिया । कहते हैं कि धोबी किसी देवता से कुछ वरदान पाना चाहता था, इसके लिये उसने ऐसा किया ।

(५) कानपुर के जुही मुहल्ले में एक २४ वर्षीय महिला तथा उसके पति को पुलिस ने इसलिए पकड़ा कि उन लोगों ने किसी तांत्रिक के बहकावे में आकर अपने पड़ोसी की आठ वर्षीय बालिका को छिपा लिया और उसकी निर्देशपूर्वक बलि चढ़ा दी ।

(६) इटावा जिले के औरैया नगर में एक रिक्शा चालक का दो वर्षीय बालक चुरा मँगाया और उसकी बलि चढ़ा दी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(७) गुड़गाँव क्षेत्र के पटौदी गाँव में एक महिला ने झोंपड़ियों में आग लगा दी । इस निस्सन्तान स्त्री से किसी तांत्रिक ने कह दिया था कि यदि वह नौ झोंपड़ियों में आग लगा दे तो उसे बच्चा हो जायगा ।

(८) इन्दौर के सेशन जज ने चिमाली गाँव की एक २३ वर्षीय विवाहित युवती को आजन्म कारावास की सजा दी है । उक्त महिला ने अपने एक वर्षीय बालक की शुभकामना के लिये, दूसरे के दस वर्षीय बालक की हत्या कर दी थी । उसे किसी ने बताया था कि तेरा बच्चा तभी जीवेगा जब तू किसी दूसरे के बच्चे की बलि दे देगी । उसने वैसा ही किया ।

(९) राबर्टस गंज (मिर्जापुर) की कंजड़ बस्ती में कंजड़ों की मुखिया ने किसी पुरुष के व्यभिचार दोष से सफाई की शर्त यह रखी कि यदि उसे गरम लोहे की सलाख से जलाया जाय और वह न जले तो ही उसे सच्चा माना जायगा और २०० रु. पुरस्कार भी दिया जायगा, पर यदि जल गया तो ३८१) रु. दण्ड भी देना पड़ेगा और नाक कान भी काट लिये जायेंगे । यह फैसला कार्यान्वित होने ही वाला था कि पुलिस आ धमकी और गरम लोहे की सलाख समेत कंजड़ों के मुखिया पकड़ लिए गए ।

(१०) लखीमपुर जिले की दरेरी गाँव के एक निवासी को यह बताया गया कि किसी तेली का सिर काटकर उसकी एक मास तक पूजा की जाय तो वह बोलने लगता है और भूत, भविष्य तथा वर्तमान की बात बताता है । उसने पड़ौस के गाँव के तेली का सिर काटकर उसकी पूजा आरम्भ कर दी । पूजा को बीस दिन ही हो पाये थे कि पुलिस को पता चल गया और कटे हुए सिर समेत चार व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया ।

(११) तुमसर (मध्य प्रदेश) के समीप मुर्दी गाँव के धन्नू नामक व्यक्ति को पुलिस ने सौतेली माँ की हत्या के अपराध में पकड़ा । कहते हैं अभियुक्त को यह विश्वास था कि सौतेली माँ उस पर जादू-टोना कराया करती थी ।

(१२) बस्तर में एक आदिवासी महिला को उस ग्राम के कई लोगों ने मिलकर इसलिए जला दिया कि उस पर जादू-टोना करने और भूत-प्रेतों की शक्ति से सम्पन्न होने का सन्देह था ।

इस प्रकार की अगणित घटनाएँ समाचार-पत्रों में आये दिन छपती रहती हैं । जो प्रकाश में नहीं आ पातीं, उनकी संख्या इन छपने वाली घटनाओं से सैकड़ों गुनी अधिक होती है । शिक्षा के प्रचार के साथ-साथ इन अन्य मान्यताओं में कमी जरूर हुई है पर अभी भी जितना अज्ञानान्धकार शेष है वह भी कुछ कम चिन्ता का विषय नहीं है ।

अनुपयुक्त भ्रान्तियाँ—चेचक की बीमारी स्पष्टत: एक रक्तदोष एवं छूत से उत्पन्न होने वाला रोग है । अन्य रोगों की तरह समझदार लोग उसकी भी चिकित्सा कराते हैं, पर अभी भी शिक्षित और अशिक्षित दोनों ही वर्गों में ऐसे लाखों-करोड़ों लोग मौजूद हैं जो उसे 'देवीजी का आगमन' कहते हैं । उनका विश्वास होता है कि इलाज कराने से देवी नाराज हो जायगी, इसलिए पूजा मनौती करना ही ठीक है । इस भ्रम में पड़े हुए परिवारों में कितने ही रोगी अपनी आँखें ही नहीं बहुमूल्य जिन्दगियाँ तक खो बैठते हैं, पर घर वाले खरवाहिनी शीतला देवी के मन्दिर में मनौती मनाने के अतिरिक्त और किसी उपचार का साहस नहीं कर पाते । देवी माता के रूठ जाने का भय उन्हें हर घड़ी सताता रहता है ।

वर्षा न होने पर स्त्रियों के नंगी होकर हल चलाने जैसे टोटके किए जाते हैं । पशुओं में बीमारी फैलने पर ओझा लोग एक बड़े से मिट्टी के पात्र में आग जलाते हुए एक जनसमूह के साथ उसे गाँव से घर-घर घुमाते हैं और गाँव की सीमा रेखा पर उस अग्नि-पात्र को गाढ़ देते हैं । उस सीमा से लगा हुआ जो गाँव होता है वे सावधान रहते हैं कि कहीं हमारी दिशा में वह टोटका न गाड़ा जाय नहीं तो हमारे गाँव में बीमारी फैल जायगी । इसी झंझट में कई बार तो गाँवों के लोगों में सामूहिक फौजदारी और कितने ही व्यक्तियों को घायल होते देखा गया है ।

इस प्रकार की अन्ध-मान्यताएँ क्या किसी देश-धर्म या समाज का गौरव बढ़ा सकती हैं ? नहीं, कदापि नहीं ! प्रत्यक्षत: तो समय और शक्ति की बर्बादी उनमें है ही । प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से होने वाली हानियाँ भी कम नहीं हैं । इन भ्रान्तियों के दुष्परिणाम तत्काल तो जो होते हैं सो होते ही, सब से बड़ी हानि यह है कि उस जंजाल में उलझे हुए मस्तिष्क एक प्रकार से प्रतिगामी और अवरुद्ध बन जाते हैं । सही तरह से सोच सकने की मौलिक प्रतिभा ही वे खो बैठते हैं । जो जिस तरह बहका देता है, उस तरह बहक जाते हैं और हवा में उड़ते हुए तिनकों की तरह अस्त-व्यस्त विचार तथा कार्य करते हुए अन्धकारपूर्ण भविष्य की ओर पैर बढ़ाते चलते हैं ।

यह स्मरण रखने की बात है कि इस दुनिया में जितना उपयुक्त है उससे कम अनपयुक्त नहीं है । अच्छी और सही मान्यताओं की अपेक्षा बुरी, भ्रान्त एवं हानिकारक विचारधारा, प्रथा, परम्परा का ही बाहुल्य है । इसलिए हमको सदा परख की कसौटी तैयार रखनी चाहिए । हर बात की वास्तविकता देखनी चाहिए । यदि कोई विचार, कोई विश्वास तथा कोई प्रचलन हमें अनुपयुक्त एवं अवास्तविक दिखाई पड़े तो साहसपूर्वक उसे स्वीकार करने से अपनाने से इन्कार कर देना चाहिए तभी हमारी मौलिकता एवं विवेकशीलता का विकास है । उज्ज्वल भविष्य की आकांक्षा करने वाले प्रत्येक प्रगतिशील व्यक्ति की मनोभूमि को विवेकशीलता की दिशा में अधिकाधिक तीव्रगति से विकसित होना ही चाहिए ।

जब तक शरीर में दुर्बलता रहेगी, तब तक कोई न कोई बीमारी आक्रमण करती ही रहेगी, जब तक मूर्खता रहेगी तब तक धूर्तता का बोलबाला भी बना रहेगा, जिनके पास विचारशक्ति का अभाव है, किसी के भी बहकावे में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आ जाते हैं । उन्हें ठगने के लिये भी कोई न कोई पैदा होता रहेगा । पिछले दिनों जनता की मानसिक दुर्बलता बढ़ी, अविद्या एवं अन्धश्रद्धा का अन्धकार छाया रहा, उसमें अनेक उल्लू, चमगादड़ों की घात लगती रही है । वह प्रक्रिया अब भी चल रही है । फलतः धर्म की आड़ में ठगी करने वालों की संख्या कम नहीं हो रही, वरन् बढ़ ही रही है । कितने ही व्यक्ति तो अपने आपको अवतार तक कहते फिरते हैं और भोले लोगों को उसी आधार पर उल्लू बनाते रहते हैं । अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना के लिए अवतार होते हैं और वे सज्जनता का त्राण और दुष्टता का विनाश करते हैं । इन आज के अवतारियों को इस कसौटी पर कसा जाय तो उनके कर्त्तव्य से रत्तीभर भी ऐसा आभास नहीं मिलता कि उन्होंने लोक-निर्माण के लिए कुछ भी ऐसा कार्य किया हो जिससे यह कहा जा सके कि अवतार का प्रयोजन पूरा होता है । फिर भी भोली जनता, विशेषतया भावुक स्त्रियाँ उनके पीछे लगती फिरती हैं और न जाने क्या-क्या आशा उनसे लगाये बैठी रहती हैं ।

लोगों की मान्यता है कि जो चमत्कार दिखा सके वह सिद्ध पुरुष या योगी होता है । पिछले दिनों हर महापुरुष के साथ चमत्कार दिखाने वाली बात जोड़ी जाती रही है । इस मान्यता के भ्रम में फँसे हुए लोगों को कितने ही धूर्त लोग बाजीगरी के खेल दिखाते हैं । कई व्यक्ति मिलजुल कर षड्यन्त्र बनाते हैं और भोले लोगों के सामने कोई चमत्कार रचकर खड़ा कर देते हैं । तर्क एवं परख की क्षमता न होने से भोले लोग उनसे प्रभावित हो जाते हैं, फलस्वरूप बुरी तरह ठगाये जाते रहते हैं । नोट दूना करने वाले, सोना दूना करने वाले, गढ़ा धन बताने वाले, देवता सिद्ध कराने वाले, ठग आरम्भ में कुछ ऐसे ही चमत्कार दिखा देते हैं । लोग भावावेश में उन ठगों पर विश्वास कर लेते हैं और बुरी तरह ठगे जाते हैं । ऐसी घटनाएँ आये दिन समाचार-पत्रों में छपती रहती हैं । सामान्यतः ८० लाख निकम्मे व्यक्ति कोई न कोई आडम्बर रचकर आसानी से अन्ध-श्रद्धालुओं को बहकाते और उनका शोषण करते हैं ।

श्रद्धा जितनी श्रेयस्कर है, उतनी ही अन्ध-श्रद्धा हानिकारक है । जो कुछ कहा जा रहा है, जो कुछ सुना जा रहा है, वह सभी सत्य नहीं हो सकता है । इस धूर्तता के युग में अगणित बेसिर-पैर की बातें प्रचलित हैं, अनेक मूर्खताएँ बुद्धिमानों द्वारा भी की जाती रहती हैं । हर शिक्षित व्यक्ति बुद्धिमान नहीं होता, हर व्यक्ति की बुद्धिमानी उसके निर्धारित कारोबार तक ही सीमित होती है, शेष बातों में यह अन्य साधारण लोगों की तरह मूर्ख भी हो सकता है, इसलिए कोई तथाकथित विद्वान धनी या सत्ताधारी जो कुछ मानते या कहते सुने जायें उन पर भरोसा कर लेना भी उचित नहीं । हमें हर बात को तर्क और परख की कड़ी कसौटी पर कसना चाहिए और किसी बात को तथ्यों एवं प्रमाणों के आधार पर ही स्वीकार करना चाहिए । हम वास्तविकता एवं उपयोगिता को ही महत्त्व देने लगें तो अन्ध-विश्वासों के जंजाल से निकलकर सच्चाई का प्रमाण प्राप्त कर सकते हैं और सीधी राह चलते-चलते सुख-शान्ति का लक्ष्य पा सकते हैं ।

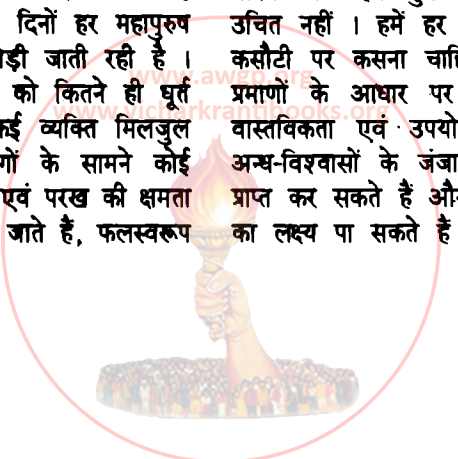

अन्ध-विश्वासों की भूल-भुलैया से निकलें

अन्ध-विश्वास भारतीय समाज का कलंक

पिछले दो हजार वर्षों के इतिहास को भारतीय समाज और संस्कृति का अन्धकार युग कहा जाना चाहिए, क्योंकि इस अवधि में अपने समाज की स्थिति निरन्तर पतनोन्मुख ही रही । पतनशील प्रवाह अब इस स्थिति में पहुँच गया है कि इस प्रवाह को न रोका गया तो हमें अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति और उत्कृष्ट दर्शन के अवशेषों से भी हाथ धो बैठना पड़ेगा । इस समय जो स्थिति है उसमें न तो भारतीय सभ्यता के उस गौरवशाली रूप का कहीं दर्शन होता है, जिसके कारण हमारा देश जगद्गुरु और चक्रवर्ती कहा जाता था और न ही वे विषेशताएँ कहीं दृष्टिगोचर होती हैं, जिनके कारण इस भूमि पर बसने वाले परिवारों में नररत्न उपजते थे ।

इन दिनों अपना समाज मूलतः दो भागों में विभक्त है । एक वह जो अशिक्षित और पिछड़ा कहा जा सकता है तथा दूसरा वर्ग वह है जो शिक्षित और विचारशील कहा जाता है । एक वर्ग में धार्मिक आस्थाएँ अभी भी विद्यमान हैं, पर वे इतने विकृत रूप में जीवित हैं कि उनकी सड़ाँध ऐसे सामाजिक रोग उत्पन्न किये दे रही है जो समाज को मरणोन्मुख ही कर रही है । दूसरी ओर प्रगतिशीलता का तमगा लटकाए विचारवान् कहा जाने वाला वह वर्ग है जो अपनी गौरव-गरिमामय संस्कृति की ओर से आँखें मूँदे हुए है तथा पश्चिमी सभ्यता के रंग में ही रंगा और उसी प्रवाह में बहा जा रहा है । पहला वर्ग विचारवान् नहीं है इसलिए उससे समाज सुधार के लिए आगे आने की उतनी अपेक्षा नहीं की जा सकती, जितनी शिक्षित वर्ग से, परन्तु शिक्षित वर्ग भी कहाँ स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाये हुए है? वह भी तो पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में बहता हुआ निराश होकर बैठा है, उस प्रभाव के परिणामस्वरूप वह धर्म को पिछड़ेपन का प्रतीक मानता है ।

इस तथाकथित प्रगतिशीलता की झोंक में आकर वह धार्मिक आस्थाओं से लगभग विमुख ही होता जा रहा है । धार्मिक आस्थाओं के प्रति अश्रद्धावान् होने का कारण यह भी है कि धर्म के नाम पर इन दिनों जो विश्वास और रूढ़ियाँ प्रचलित हैं उन्हें विचार और विवेक की दृष्टि से कदापि उचित नहीं कहा जा सकता । स्थिति इतनी बदतर है कि धर्म का मूल स्वरूप लुप्त ही हो गया है और उसके स्थान पर ऐसे-ऐसे अन्धविश्वास चल पड़े हैं, जिन्हें पहली दृष्टि में देखने पर प्रचलित धर्म के रूप से घृणा ही होती है । इस प्रथम दृष्टि के प्रभाव से लोग धर्म की आत्मा पर ही संदेह करने लगते हैं और उसकी गहराई में प्रवेश किये बिना उसे ढकोसला, पाखंड आदि कहने लगते हैं ।

अन्ध-विश्वास का यह कोढ़ किस तरह समाज को पतन की ओर धकेलता है, यह कुछ उदाहरणों से भली-भाँति समझा जा सकता है । उदाहरण के लिए, किसी शुभ कार्य को शुभ घड़ी में आरम्भ करने की परम्परा है । अब समझ में नहीं आता कि कौन-सी घड़ी शुभ है और कौन-सी अशुभ? समय तो सदा एक समान होता है फिर कोई क्षण विशेष किस आधार पर अच्छे हो जाते हैं तथा कोई क्षण किस कारण अशुभ बन जाते हैं यह समझ में नहीं आता । इसका कोई स्पष्ट मानदण्ड भी नहीं. है, न ही शुभ-अशुभ घड़ी को जानने-निकालने की सर्वमान्य कसौटी, फिर भी लोग हर छोटे-बड़े काम को शुरू करने में शुभ मुहूर्त तलाशने के लिए पंडितों के पास दौड़े चले जाते हैं । नई दुकान खोलने, नया मकान बनवाने, नये बने मकान में प्रवेश करने, यात्रा पर निकलने, बेटी को विदा करने जैसी छोटी-छोटी बातों के लिए शुभ मुहूर्त पर इतना जोर दिया जाता है कि उसकी प्रतीक्षा में न जाने कितनी हानि उठानी पड़ती है । अशुभ मुहूर्त में कोई काम न करने पर लोगों का ध्यान इतना अधिक केन्द्रित होता है और शुभ मुहूर्त पर इतना जोर दिया जाता है कि अनेक आवश्यक कार्यों में विलम्ब हो जाता है तथा कई बार भयंकर हानियाँ तक उठानी पड़ती हैं ।

देवी-देवताओं को लेकर ही कई तरह के अंध-विश्वास प्रचलित हैं । यद्यपि देव-शक्तियों का अपना एक स्वतंत्र इतिहास है और उनका बुद्धि सम्मत विवेचन भी है, पर यह स्वरूप तो न जाने कहाँ लुप्त हो गया । उसके स्थान पर गाँव-गाँव न जाने कितने देवी-देवता उपज पड़े । उनकी गणना की जाय तो सबकी संख्या लाखों तक पहुँचेगी और मजे की बात यह कि वे इतने दयालु हो गये हैं कि जब चाहें उन्हें किसी स्त्री, तांत्रिक, ओझा या पुजारी के शरीर में बुलाया जा सकता है तथा उनसे सन्तान होने, धन प्राप्त करने, मुकदमे जीतने और प्रतिपक्षी को पराजित करने जैसे काम कराये जा सकते हैं । इनका काम मात्र थोड़ा चढ़ावा और भेंट प्रसाद भर से बन जाता है । किसी का काम बनता है या नहीं, यह सोचने का ही विषय नहीं है । किन्तु इतना निश्चित है कि इस देवतागीरी के व्यवसाय में लगकर धूर्तों को मुफ्त का माल उड़ाने की बात बन जाती है ।

निम्न वर्ग के पिछड़े लोगों में इस देवतावाद के समान ही जादू-टोना, तन्त्र-मन्त्र, झाड़-फूँक और नजर-गुजर के दौर भी खूब चलते हैं । दुराचारी और अनीति की कमाई खाने वाले लोग इस प्रवृत्ति का लाभ भी खूब उठाते हैं । कहना नही होगा कि इन प्रवृत्तियों के कारण समाज में दुष्प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिलता है तथा व्यर्थ का भय एवं अन्ध-विश्वास भी । देवबाजी के चक्कर में आकर लोग कैसे-कैसे अनर्थ कर गुजरते हैं । इसके प्रमाण आये दिनों अखबारों में मिलते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रहते हैं । ऐसे समाचार बहुधा पढ़ने को मिलते रहते हैं कि अमुक व्यक्ति ने देवी पर अपनी जीभ काटकर चढ़ा दी, अमुक ने बच्चे की बलि दे दी । विशेष सिद्धि, लाभ, स्वप्न, शकुन या इसी तरह की भ्रामक धारणाओं के आधार पर लोग इस तरह के कुकृत्य करते रहते हैं । प्रयोजन विशेष की सिद्धि के लिए कामनाग्रस्त लोग कई बार अविवेकपूर्ण हरकतें करते रहते हैं तथा किसी देवी-देवता के स्थान पर, पीर बाबा की मजार चौबारे और बैठक पर बकरे, मुर्गे, सूअर तथा भैसों जैसे निरीह प्राणियों की बलि चढ़ाते रहते हैं । कई बार तो प्रयोजन सिद्धि के लिए किए जाने वाले इन उपक्रमों में मनुष्यों और छोटे-अबोध बच्चों की बलि तक चढ़ा दी जाती है ।

इस तरह के नृशंसतापूर्ण कृत्य देखकर विचारशील व्यक्तियों में देव-शक्तियों एवं पूजा-पद्धति के प्रति अनास्था उत्पन्न हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए । उनका दोष इतना ही होता है कि वे गहराई तक विचार करने का प्रयत्न नहीं करते और जैसा जो कुछ देखते हैं उसी को धर्म मान बैठते हैं, जबकि ऐसे कृत्यों का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है । धर्म तो जीवन जीने की कला का नाम है, अध्यात्म व्यक्ति की आस्थाओं और मान्यताओं को ऊँचा उठाने वाली विद्या है । अस्तु, अन्ध-विश्वासों को धर्म का अंग समझने की भूल किसी को भी नहीं करनी चाहिए । स्मरण रखा जाना चाहिए कि अन्ध-विश्वास व्यक्ति और समाज की दुर्बल मनोभूमि का परिचायक है तथा यह सिद्ध करता है कि उस व्यक्ति या समाज में सोचने-विचारने की, स्वतः किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की शक्ति नहीं रही—इस दुर्बलता के कारण ही इस प्रकार के प्रचलन चलने लगते हैं और लोग उन्हीं पर विश्वास करते, उन्हें ही क्रियान्वयन में लाते हैं ।

इस तथ्य को भली-भाँति ध्यान में रखा जाना चाहिए कि जब तक इस जड़ता, विचारहीनता और अविवेकता को हटाया-मिटाया नहीं जाता, तब तक समाज की प्रगति के लिए कितने ही प्रयास क्यों न किये जायें उससे कोई आशाजनक परिणाम नहीं निकल सकते । विचारशील व्यक्तियों का यह कर्तव्य है कि वे इस तरह के अन्ध-विश्वासों से सम्बन्ध को तोड़ें तथा जन-साधारण को बतायें कि उनका धर्म से अध्यात्म एवं देवसत्ता के वास्तविक स्वरूप के साथ दूर का भी सम्बन्ध नहीं है । हमारा विवेक, ज्ञान, चिन्तन व विचार स्वतन्त्र तथा प्रबुद्ध हो, इसके लिए विचारशील व्यक्तियों को आगे आना चाहिए तथा समाज का कलंक कहे जाने वाले अन्ध-विश्वास को हटाने-मिटाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए ।

अन्ध-विश्वासों की कालिमापूर्ण छाया

मनुष्य अपने विश्वासों की ही छाया है । जैसा मनुष्य का विश्वास होगा, वैसे ही उसके संस्कार बनते जायेंगे और उन्हीं के बल-बूते पर वह अन्धेरे रास्तों पर चलने तथा खाई खड्डे तक में गिरने को तैयार होता जायेगा । इसका वास्तविक कारण यह है कि जब मनुष्य एक ही दिशा में सोचता और विश्वास के अनुसार ही कार्य करता है, तो उसी के अनुरूप उसके संस्कार बनते जाते हैं और संस्कारों के विपरीत सोचने तथा उनके प्रतिकूल चलने में उसे पीड़ा, परेशानी तथा बेचैनी होने लगती है । आत्म-विश्वास, ईश्वर के प्रति विश्वास, आदर्शों के प्रति आस्था जहाँ अपनी सत्तामूलक शक्ति से लोगों को लाभान्वित करती है, वहीं यह विश्वास की शक्ति भी उसके मूल में रहती है,

विश्वास जहाँ एक शक्ति है, मनुष्य को ऊँचा उठाती है, वहीं अन्ध-विश्वास उस शक्ति का एक ऐसा विकृत रूप है जो उसे पतन के गर्त में गिराती है । हमारे समाज में इस शक्ति का विकृत रूप एक महामारी की तरह अपनी विनाशलीला मचाये हुए है । अन्य रोग तो केवल मनुष्य शरीर तक ही सीमित रहते हैं तथा सावधानीपूर्वक उपचार करने के बाद पीछा छोड़ देते हैं, किन्तु अन्ध-विश्वास की बीमारी एक ऐसा घृणित रोग है जो शरीर पर तो अपना प्रभाव डालती ही है मन, बुद्धि और आत्मा तक को अपना ग्रास बनाकर उसे जड़ बना देती है । यही कारण है कि लोग अन्ध-विश्वासों के कारण प्रत्यक्षतः हानि उठा कर भी दोषी अन्ध-विश्वासों को नहीं समझते, वरन् इसका कारण कोई भूल-चूक ही समझते हैं तथा अन्धविश्वास को फिर भी नहीं छोड़ते, उसे छोड़ने से इसलिए डरते हैं कि उन्हें किसी और नये तथा बड़े अनिष्ट की आशंका होने लगती है । यह भी मानने लगते हैं कि इन विधिनिषेधों का पालन करने पर तो यह हानि हुई, इनका पालन न किया जायेगा तो आगे और न जाने क्या हानि होगी ।

अन्ध-विश्वासों का शिकार केवल अशिक्षित जनता ही होती हो, ऐसा भी नहीं है । अशिक्षित और अनपढ़ लोगों के साथ-साथ कोई एक शिक्षित व सुसंस्कृत व्यक्ति भी अन्ध-विश्वासों की गिरफ्त में फँसे हुए दिखाई देते हैं । कई डॉक्टर और इंजीनियर शरीर के किसी अंग पर छिपकली गिर जाने से मृत्युभय की कल्पना करने लगते हैं तथा किसी भारी अनिष्ट की आशंका से काँपने लगते हैं ।

इतिहास भी इस बात का साक्षी है कि भारतीय समाज के अधःपतन का कारण न हमारी कमजोरी रही है और न कायरता । शक्ति, साहस और शौर्य के मामले में दुर्दान्त से दुर्दान्त आक्रमणकारी भी भारतीय वीरों के आगे नहीं टिक सके हैं, पर अन्ध-विश्वास के कारण भारतीय वीर उचित समय पर निर्णय लेने से कतरा गये और इसी के कारण शताब्दियों तक बाँधे रहने वाली दासता की बेड़ियाँ हमारे समाज के पैरों में पड़ीं ।

कई उदाहरण हैं जब हमने अन्ध-विश्वास या अति-विश्वास के कारण मुँह की खाई । इसका एक बड़ा प्रमाण इतिहास में सोमनाथ की हार के रूप में मिलता है । जब महमूद गजनवी ने गुजरात के इस मन्दिर पर आक्रमण किया था, उस समय सोमनाथ मन्दिर के प्रमुख प्रबन्धक और मुख्य पुजारी गंग सर्वज्ञ थे । गंग सर्वज्ञ एक ऐतिहासिक पात्र हैं और अपने समय के प्रकाण्ड विद्वान रहे हैं । सारे देश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की जनता ही नहीं देश भर के विद्वानों सहित सभी राज-गण भी उन्हें मानते थे । उनके व्यक्तित्व को महानतम समझा जाता था और जैसी कि उनके नाम के सामने उपाधि थी 'सर्वज्ञ' उसी रूप में उनकी बातों को देखकर समझ कर माना जाता था, किन्तु गंग सर्वज्ञ गजनवी के हमले से लेकर मन्दिर लुट जाने और सोमनाथ की मूर्ति के खण्ड-खण्ड हो जाने तक यही कहते रहे कि भगवान् अपनी रक्षा करने में स्वयं समर्थ हैं और मन्दिर की रक्षा के लिए वे अवश्य प्रकट होंगे तथा अपना तीसरा नेत्र खोल कर आक्रमणकारियों को भस्म कर देंगे ।

गंग के इस आश्वासन और लोगों के उनके प्रति अति-विश्वास के कारण प्रतिरोध का प्रयत्न शिथिल पड़ता गया तथा लोग उस चमत्कार की प्रतीक्षा करने लगे । गजनवी आया और मन्दिर लूटकर तथा मूर्ति तोड़कर चला गया । न भगवान् शंकर प्रकट हुए और न उन्होंने अपने तृतीय नेत्र से आक्रान्ताओं को भस्म किया । यह बात सही हो सकती है कि गंग का उद्देश्य देश को पथभ्रान्त करने का नहीं रहा हो, पर यह उनका अति-विश्वास ही था जो अन्ध-विश्वास बनकर इस रूप में बोला था, तथा लोगों ने उनके कथन पर आँखें मूँद कर विश्वास किया व चमत्कार देखने की प्रतीक्षा में अपने प्रयत्नों को शिथिल छोड़ कर जानते-बूझते अपने आपको लुटने दिया ।

पृथ्वीराज ने मोहम्मद गौरी को सत्रह बार हराया था । हर बार हार कर, अपनी क्षति-पूर्ति कर गौरी बार-बार चढ़ कर आता रहा तथा हार कर जाता और फिर आक्रमण करने आ जाता । अन्तिम बार उसे विजय मिली तो वह भी हमारी इसी कमजोरी के कारण कि हम उचित समय पर उचित निर्णय लेने में असमर्थ रहे । बताया जाता है कि गौरी ने जब आखिरी बार आक्रमण किया जिसमें कि उसे विजय मिली तो उसने अपनी सेनाओं के आगे गायों की एक कतार खड़ी की । वह जानता था कि भारतीय जनता गायों को माँ के समान मानती है और किन्हीं भी परिस्थितियों में वह उन्हें नहीं मारेगी । गायों की रक्षा एक आदर्श था, परन्तु इसे अन्ध-विश्वास ही कहा जाना जाहिए कि देश रक्षा के महान् आदर्श की तुलना में कम महत्त्व के इस आदर्श को हमने अधिक महत्त्व दिया । गायों की पंक्ति को सामने देख कर पृथ्वीराज किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया तथा उसने बिना लड़े ही हथियार डाल दिए । यह अन्ध-विश्वास भारत के भाग्य को अन्धकारपूर्ण बनाने का कारण बना ।

न जाने कितने अन्ध-विश्वास और न जाने कितने अपशकुन हैं जो इतिहास में पाये जाते हैं और सिद्ध करते हैं कि साहस, शौर्य, वीरता तथा साधनों का अभाव न होने पर भी लोग किस तरह हारे हैं । तलवार खुल जाना, कटार निकल पड़ना, जीन खिसक जाना, धनुष उतर जाना, पगड़ी बिगड़ जाना, मुकुट मुड़ जाना जैसी छोटी-छोटी बातों को पराजय की सूचक मानकर अन्ध-विश्वासी राजा और योद्धा अपनी मान्यताओं के कारण आधे तो उसी क्षण हार गये । उनके आत्म-विश्वास में दरारें पड़ गयीं और इस कारण इतिहास की धाराएँ ही बदल गयीं । लाट-ध्वज जाने, मीनार मुड़ जाने, कंगूरा उखड़ जाने और गुम्बद दरक जाने को बादशाहों ने हुकूमत उखड़ जाने का संकेत माना और वे पस्त हिम्मत हो कर बैठ गये, फलस्वरूप बड़ी-बड़ी राजनैतिक हानियाँ हुईं ।

यह तो हुई राजा-महाराजाओं के अतीतकालीन अन्ध-विश्वासों की कहानी । जन-साधारण उनसे भी आगे अपने चारों ओर असंख्यों, अन्ध-विश्वासों को बनाये रहा । आज भी अन्ध-विश्वासों की कमी नहीं है । सुबह बिस्तर पर से उठने से लेकर सोने तक का सारा क्रिया-कलाप अन्ध-विश्वासों एवं शुभा-शुभ मान्यताओं की शृंखला-सी बनी हुई है । कौन-सा पैर पहले जमीन पर रखे, जगते ही हथेली देखना, रेखाएँ चूमना और को देखने से पहले दर्पण देखना आदि सब किसी न किसी अन्ध-विश्वास पर ही आधारित हैं । घर, हाट-बाट, उठने-बैठने, चलने-फिरने और यात्रा करने में अन्ध-विश्वास पूर्ण विचार भरे पड़े हैं । आदमियों का मिलना, पशुओं का दिखाई देना, उनका खाँसना, छींकना और आवाज करना, सूँघना, मुँह उठाना, रास्ता काटना, दिशा बदलना, दाएँ-बाएँ अथवा आगे-पीछे चलना न जाने कितने प्रकार के अन्ध-विश्वासों के माता-पिता है । घरों में बहू-बेटियों की जिन्दगी कदम-कदम पर अन्ध-विश्वासों की वंदिनी है, कहाँ पर बैठें, किस ओर पैर करें तथा किस ओर पीठ करें, सिर किधर होना चाहिए, कौन-सी करवट से होना चाहिए । छोटी बातों का निश्चय और नियमन परम्परागत अन्ध-विश्वासों के आधार पर किया जाता है ।

इसी प्रकार व्यावसायिक जीवन में दुकानदार, दुकान खोलते समय कौन-सा खिवाड़ पहले खोले, कौन-सा पैर पहले रखे, किस ग्राहक को कौन-सी चीज बेचकर प्रथम बिक्री अर्थात् बौहनी करे, कितने पैसों की चीज बेचकर दुकानदारी की शुरूआत की जाय, कौन-सी तराजू के कौन-से पलड़े में क्या चीज तोल कर पहले पहले बेची जाय आदि बातों का निर्धारण किया जाता है । पलड़े का उलट जाना, जोत का चढ़ जाना, डोरी का टूट जाना, बाँट का गिर जाना, डण्डी का टूट जाना आदि बातों को अपशकुन अर्थात् अशुभ चिह्न समझा जाता है और कहना नहीं होगा कि इन मान्यताओं के पीछे कोई न कोई अन्ध-विश्वास अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है ।

इन अन्ध-विश्वासों का पहला दुष्परिणाम मानसिक स्थिति के कमजोर कर लेने, मनोबल गिरा लेने के रूप में होता है । छींक आ जाने पर यात्रा रोक देने, बिल्ली के रास्ता काट जाने, खाली घड़ा मिल जाने, काना व्यक्ति मिल जाने से लोग यात्रा पर निकलने अथवा किसी काम का आरम्भ करने से पूर्व ही अपनी असफलता का अनुमान कर लेते हैं । और मनोबल गिरा लेने के कारण असफलता की सम्भावना ५० प्रतिशत वैसे ही हो जाती है । फिर प्रयत्नों में आयी शिथिलता रही सही कमी और पूरी कर देती है । जैसे वैद्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

या डॉक्टरों को लेने जाते समय कोई अपशकुन हो गया तो बीमार के मर जाने की, न बचने की धारण निश्चय कर ली जाती है और उपचार के प्रयत्नों को भी शिथिल कर दिया जाता है । फलस्वरूप बीमारी के उपचार और फायदे की रही सही सम्भावनाएँ भी जाती रहेंगी ।

शुभ मुहूर्त और अच्छी घड़ी की तलाश में लोग अपना समय तो बर्बाद करते ही हैं । इस चक्कर में फँस कर अपनी भयंकर हानि भी कर लेते हैं । उदाहरण के लिए ब्याह-शादी, संस्कार तथा व्रत आदि शुभ घड़ी में करने का प्रचलन है । जब कभी इस प्रकार का विधान किया गया होगा तो उसका उद्देश्य यही रहा था कि सुविधाजनक समय, अनुकूल ऋतु के उपयुक्त कोई दिन इसके लिए चुना जाय, लेकिन अब प्रायः हर छोटे-बड़े कार्य के लिए पूछने को लोग पण्डितों के पास दौड़े चले जाते हैं । नई दुकान खोलनी हो या नया मकान बनवाना हो बेटी को विदा करना हो या नौकरी पर जाना हो तो शुभ मुहूर्त तलाशा जाता है । अशुभ मुहूर्त का भय लोगों के मन में इस कदर सवार है कि इसके कारण लोग को नितान्त आवश्यक कार्यों में भी शुभ मुहूर्त के लिए विलम्ब हो जाता है और कई बार भयंकर हानियाँ तक उठानी पड़ती है । कितने ही लोगों को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता है, तथा कितनों को ही अन्य दूसरे तरह की हानियाँ उठानी पड़ती हैं ।

यहाँ तक कि रोग बीमारी तथा स्वास्थ्य जैसी शारीरिक स्थितियों तक हम लोगों ने अन्ध-विश्वासों को विस्तृत कर लिया । मन्त्र-तन्त्र और झाड़-फूँक तथा नजर-गुजर के दौर अशिक्षित और पिछड़े लोगों तथा स्त्रियों में खूब जोर से चलते हैं । स्त्रियाँ 'शीतला माता' मोती झरा जैसे रोगों को भी देवी-देवता का प्रकोप समझती हैं और उनके लिए कोई उपचार कराने के स्थान पर कल्पित देवी-देवताओं के आलयों में धूप-दीप जलाकर अपने बच्चों की आरोग्य कामना करती हैं । उनके ममत्व और वात्सल्य पर अँगुली नहीं उठाई जा सकती, पर अपने अन्ध-विश्वासों के कारण, अज्ञान और लकीर की फकीरी के कारण उनका व्यवहार बच्चों के प्रति शत्रुतापूर्ण स्तर का ही हो जाता है । ममता और वात्सल्य की कमी नहीं है, पर अन्ध-विश्वास का जहर उसे भी विषैली बना देता है ।

जिन अन्ध-विश्वासों का पालन करते हुए हमने अब तक बड़ी हानियाँ उठाईं, जिनके कारण हम लगभग दो हजार वर्ष तक गुलाम रहे तथा जिन विश्वासों का पालन करते हुए हम आज भी अपने व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन में दुःख और क्लान्ति के बीज बो रहे हैं, उन्हें ढोते रहने से क्या फायदा ? पिछले अनुभवों से सीख कर हम अब भी इन अन्ध-विश्वासों से चिपटे रहे तो हम-सा मूर्ख और कौन होगा ?

अन्धविश्वास की अँधेरी गलियाँ

मानव-जीवन की सर्वांगीण उन्नति में अध्यात्म का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है । अध्यात्म का मूल आधार श्रद्धा और विश्वास है । इन्हीं गुणों के आधार पर आत्मा के उच्चस्तरीय गुणों का संरक्षण, पोषण एवं संवर्द्धन सम्भव होता है, पर यह श्रद्धा और विश्वास, तर्क-विवेक और वास्तविकता पर निर्धारित होना चाहिए । अज्ञान, भ्रम और मिथ्यात्व पर आधारित श्रद्धा-अन्ध-श्रद्धा या अन्ध-विश्वास कहलाती है ।

अन्ध-विश्वास पतन का मार्ग है । वह एक ऐसी तंग अँधेरी गली है, जिसमें प्रवेश करने वाला व्यक्ति दिशा भूल जाता है । भटकता, ठोकरें खाता हुआ, वह सिसकता-विलखता रहता है । अन्ध-विश्वासी के जीवन में अन्धकारमय निराशा और आत्म-विश्वास-हीन पतन ही दृष्टिगोचर होता है ।

अन्ध-विश्वास एक ऐसा कीड़ा है, जो हमारे जीवन के हर पहलू, हर अंग में खुल कर हमें खोखला करता रहता है ।

समाज रूपी शरीर के लिए अन्धविश्वास एक विषाक्त-फोड़ा सिद्ध हुआ है, जिसकी चिकित्सा विवेक एवं तर्क के शल्य-चिकित्सा-उपकरणों (औजारों) द्वारा ही सम्भव है ।

भारतीय जन-जीवन में अन्धविश्वास और मूढ़-मान्यताओं का साम्राज्य है । स्वार्थी, लोलुप, भ्रष्ट लोगों ने जनता की निरक्षरता व भोलेपन का लाभ उठाकर धर्म के नाम पर उनकी श्रद्धा का दोहन किया है और अनेक मूढ़-मान्यताओं तथा अन्ध-विश्वासों का कुचक्र फैलाया है । इन निराधार मान्यताओं ने जन-समुदाय को भ्रमित, अशान्त एवं विशृंखलित कर दिया है । इससे धन-जन की भारी क्षति होती है तथा अनेक हानियाँ भी उठानी पड़ती हैं ।

भूत-पलीत और देवी-देवताओं के नाम पर अनेक भीरु मान्यताएँ फैला दी गई हैं, जो अशिक्षित एवं अविकसित मानव-मस्तिष्क में बुरी तरह से हावी हो गई हैं । घर में कोई बीमार हुआ कि भूतों का कुचक्र मान लिया गया । ओझा-सयाने-दिखाने-की शरण में जाकर तन्त्र-मन्त्र के झाड़-फूँक से ही इलाज कराना सूझता है । ओझाओं को भी अपने स्वार्थ सिद्धि का अवसर मिल जाता है । वे अनेक तरह की किंवदन्तियाँ गढ़कर भोले लोगों के मन में अन्ध-विश्वास, भय और भ्रम ही उत्पन्न करते हैं, इससे लाखों व्यक्ति भ्रम-जंजाल में पड़कर वास्तविक चिकित्सा से वंचित रह जाते हैं । फलतः स्वास्थ्य, समय, श्रम एवं धन तथा यहाँ तक कि जीवन भी बर्बाद होता है ।

भूतों का जाल-जंजाल किसी महामारी से कम धन-जन की हानि नहीं करता, वरन् लोगों का सारा समय श्रम, साहस को भी चौपट कर देता है । उसे पूरी मनो-वैज्ञानिक विपत्ति ही माननी चाहिए । कमजोर मनोभूमि के लोगों को भूत की कल्पना देने से उनका मन उसी पर जम जाता है । भय के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मारे वे सोचते हैं कि भूत ने हम पर आधिपत्य कर लिया है । इससे वे वैसी ही चेष्टाएँ करने लगते हैं । मानसिक-रोग से ग्रसित प्राणी की बड़ी दुर्गति होती है । ''शंका डायन-मनसा ते''—आशंकाएँ ही डायन-चुड़ैल बनती हैं और मन के सन्देह-भय-भ्रम ही भूत बन जाते हैं ।

मानव ने विज्ञान के द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली है और निर्भय होकर प्रकृति में विचरण कर रहा है । इसी युग में हम और आप पीपल के वृक्ष तक में भूत-प्रेत का निवास मानकर रात्रि में उसके निकट जाने में भी भय खायें तो क्या यह हास्यास्पद बात नहीं होगी ? यदि हममें विवेक, स्वतन्त्र-चिन्तन एवं तथ्य खोजने की प्रवृत्ति जग पड़े तो हमारी भारतीय जनता की एक बड़ी भारी मानसिक विपत्ति का अन्त हो जाय और भूत-पलीतों की व्याधि में होने वाले धन, स्वास्थ्य, समय और शक्ति का अपव्यय सदा के लिए रुक जावे । अतएव जागरूक लोगों को इस दिशा में शीघ्र कदम बढ़ाना चाहिए, जिससे लोग विवेकशील, यथार्थवादी बनें ।

संसार की नियामक-शक्ति-ईश्वर एक है । उसका प्रतिद्वन्द्वी साझीदार और सहायक कोई नहीं है । उसकी विशेषताओं और शक्तियों को सरल ढंग से समझाने के लिए ही कई देवी-देवताओं की सचित्र कल्पना की गई थी, किन्तु आज देवी-देवताओं का स्वतन्त्र भिन्न अस्तित्व मानकर उनके पीछे कितना भ्रम-जंजाल खड़े कर दिये गये हैं । कुल-देवी, ग्राम-देवी आदि असंख्य देवताओं की कल्पना कर ली गई है । ये वर्षा-ऋतु में उग आने वाले पौधों की तरह उपजते गये । इन प्रचलित देवी-देवताओं में से अनेक का कोई पुराण ग्रन्थादि से भी सम्बन्ध नहीं । लोगों की मान्यता के अनुसार वे अपनी पूजा करने वाले का हित तो नहीं कर सकते केवल डराते और त्रास देते रहते हैं । उनके मन्दिर या मठिया पर बच्चे का मुण्डन न कराया तो वे नाराज, घर में कोई उत्सव के अवसर पर कथित देवों की पूजा में कुछ त्रुटि रह गई तो वे नाराज । कैसी मूढ़ मान्यता है ? देवता शब्द की कैसी दुर्गति है ? 'देवता' का अर्थ होता है देने वाला । जो व्यक्ति या शक्ति दूसरों को कुछ देने में समर्थ हो, पर यहाँ तो उसकी परिभाषा ही बदल गई है । जो देने में असमर्थ हो—मिठाई, प्रसाद, माँस-मदिरा आदि के लालची हैं और उनके न मिलने पर शत्रुता ठानकर आक्रमण करें क्या वे देवता कहला सकते हैं ?

देवी-देवता के नाम पर फैले अन्ध-विश्वास से प्रभावित लोग हृदय-विदारक जघन्य अपराध को करने में प्रवृत्त होते हैं, उसे जानकर किसी भी प्रबुद्ध एवं सहृदय मनुष्य का दिल दहल जाना स्वाभाविक है । देवताओं को प्रसन्न करने के लिए नर-बलि देने की हृदय विदारक घटनाएँ अक्सर होती रहती हैं, परन्तु देवता के समक्ष पशुओं की हत्या की तो कोई गणना ही नहीं है । बेरोकटोक और बिना परवाह किए मूक-निरीह पशुओं की निर्मम हत्या कर देना, इन अन्ध-विश्वासियों के लिए एक साधारण-सी बात बन गई है ।

शकुन-अपशकुन के नाम पर तर्कहीन, तथ्यहीन मूढ़ता जन्य अन्धविश्वास फैले हुए हैं । जिसके परिणामस्वरूप आत्म-घातक दुष्परिणाम सामने आते रहते हैं ।

यात्रा में शुभ-अशुभ, ग्रह-मुहूर्त आदि के नाम पर भी अनेक अन्ध-विश्वास फैले हुए हैं । यदि कोई व्यक्ति घर से बाहर जा रहा हो और बिल्ली रास्ता काट गई तो यात्रा रद्द कर देंगे । छींक आ गई तो वापस । खाली घड़ा दिखाई दे तो अशुभ की आशंका इत्यादि । इस प्रकार न जाने इन मान्यताओं के पीछे कितने व्यक्तियों का समय, श्रम व धन बर्बाद होता है ।

आज हमारी अधिकांश पिछड़ी जनता अन्ध-विश्वास के जहरीले धुएँ भरे वातावरण में घुट-घुटकर मरने के लिए बाध्य हो रही है । समय आ गया है कि तर्क विवेक व ज्ञान की प्राणप्रद हवा जलाकर विषाक्त वातावरण को शुद्ध करें । जन-जन के मन में से अज्ञानता, मूढ़ता भय भ्रम को निकाल फेंके । जनता में शिक्षा व ज्ञान-विज्ञान का प्रकाश फैलाएँ । यह प्रबुद्ध-वर्ग के लोगों का धर्म-कर्त्तव्य है । देश व समाज की आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, नैतिक, चारित्रिक-उन्नति के लिए अन्ध-विश्वास की अँधेरी गलियों में भटकते मानव-समुदाय को विवेक के आलोक से आलोकित करना आज की बहुत बड़ी आवश्यकता है ।

अध्यात्म पर लगा अन्ध-विश्वास का कलंक

अन्ध-विश्वास एक प्रकार का मानसिक उन्माद है, जो दूसरों के बहकावे पर तब चढ़ता है, जब अपनी विवेकशीलता अपंग जैसी स्थिति में हो जाती है ।

अपने देश में ग्रह-नक्षत्रों, भूत-पलीतों, जिन्न-बेतालों का एक नियोजित कुचक्र पीढ़ियों से चल रहा है । उसके जाल-जंजाल में फँसकर कितने ही लोग भारी घाटा उठा चुके तथा अनर्थ कर गुजरे हैं ।

जहाँ जितना अधिक पिछड़ापन है, वहाँ उतनी ही सरलतापूर्वक यह मूढ़ता अपनी जड़ जमा लेती है । इसमें शिक्षित-अशिक्षित के बीच कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता । पिछड़े लोग जिस प्रकार भूत-पलीत बुलाने-भगाने वाले ओझाओं के फेरे में पड़कर झाड़-झंखाड़ों में भटकते हैं, उसी प्रकार शिक्षितों को उलटी पट्टी पढ़ाने में पंडितों, साधुओं, तांत्रिकों द्वारा लच्छेदार बातों और गुह्य ज्ञान की दुहाई देकर उस कुचक्र में उलझा दिया जाता है ।

अविवेकी भय या लोभ की गोली फेंक कर फँसा लिए जाते हैं । उन्हें धर्म, न्याय, विवेक, औचित्य, तथ्य, तर्क से कुछ वास्ता नहीं रहता । वे इतना भर देखते हैं कि देवी-देवताओं को फुसलाकर कोई बड़ा लाभ उठाया जा सकता है क्या ? अथवा कोई बड़ी कामना थोड़े-से पूजा-पाठ के बदले पूरी हो सकती है क्या ? दूसरा दाँव है भयभीत करने का । बच्चा अशुभ घड़ियों में पैदा हुआ है । शनि,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

राहु की दशा आई है । किसी ने टोना-टोटका कर दिया है । तंत्र-मंत्र जला दिया है, इस कारण अनिष्ट होने की आशंका है । इस प्रकार के बहकावे जब कथित ज्ञानवानों से मिलते हैं, तो सामान्य बुद्धि के लोग उस बहकावे में सहज ही आ जाते हैं । डरे हुए व्यक्ति को अथवा चुटकी बजाते बड़े लाभ पाने के लालची को आसानी से ऐसा भरोसा दिलाया जा सकता है कि बतायी हुई सलाह मानने में ही भलाई है । उससे वह उपाय कराया जाता है, जिससे बताने वाले की जेब भरती है और फँसने वाले की गाँठ कटती है, पर आदान-प्रदान सीधे नहीं होता । इसके बीच किसी कर्मकाण्ड का ताना-बाना होता है । चिड़िया को दौड़कर नहीं पकड़ा जा सकता है । उसके लिए जाल बुनना पड़ता है । जाल जितना बढ़िया और आकर्षक होता है, चिड़ियाँ उतनी ही जल्दी और ज्यादा संख्या में फँसती हैं ।

धूर्तों और मूर्खों का जोड़ा है । धूर्त फँसाते हैं और मूर्ख फँसते हैं । यदि तर्क, तथ्य को बीच में डाला जाय, तो यह बालू की दीवार देखते-देखते ढह जाती है ।

किसने किस पर टोना-टोटका कर या करा दिया, इस प्रसंग को लेकर गहरी दुश्मनी बँध जाती है और बेसिर-पैर की मान्यता के कारण शत्रुता बँध जाती है । प्रतिशोध, प्रति प्रतिशोध का चक्र चल पड़ता है और भारी बर्बादियाँ होती हैं । किसी अर्धविक्षिप्त महिला को डाकिन घोषित कर दिया जाता है और लोग उसके कारनामे गढ़कर तब तक पीछे पड़े रहते हैं, जब तक उसकी जान नहीं ले लेते । यह अन्ध-विश्वास का वह पक्ष है, जो पिछड़े वर्ग के लोगों में अधिक पाया जाता है । इन पिछड़े हुए में शिक्षित भी हो सकते हैं ।

इसी महकमे में एक वर्ग ज्योतिषियों का है, जो ग्रह-नक्षत्रों को अनुकूल-प्रतिकूल बनाने की कला जानते हैं और इसी बहाने जिस-तिस को डराते, भाग्योदय का लालच देते और खर्चीले कर्मकाण्ड कराने के बहाने अपना उल्लू सीधा कर पंचांग की कुंडलियाँ मिलाकर अपने कथन को विश्वस्त ठहराते हैं और फिर किसी अनुष्ठान-कर्मकाण्ड के बहाने उलटे उस्तरे से सिर मूड़ते हैं । 'डराओ और कमाओ' की नीति पर यह व्यवसाय चलता और फलता-फूलता है । भूप-पलीत वालों की तुलना में यह वर्ग अधिक नफे में रहता है, क्योंकि यह पढ़े-लिखों की चतुराई है और वह अनपढ़ लोगों को बहकाने के लिए चित्र-विचित्र हथकंडे अपनाने की विधा ।

इसी संदर्भ में तथाकथित योग विद्या वालों की चर्चा की जा सकती है । वे अधिक चतुर और अधिक पढ़े-लिखे होते हैं । अपने को सिद्ध पुरुष घोषित करते हैं । दिव्य शक्तियों के साथ सम्बन्ध होने की, बड़ी साधनाएँ करने की बात कहते हैं । सिद्धियों के चमत्कार दिखाते और वरदान देते हैं । यह प्रपंच देश के शिक्षित वर्ग में तो चलता ही है, उन विदेशियों में भी कम सफल नहीं होता, उन्हें आमतौर से बुद्धिवादी, विज्ञानवादी समझा जाता है । भारत के प्रायः दो दर्जन योग प्रचारक ऐसे हैं जिन्होंने विदेशों में अपने अड्डे जमाये, शिष्य बनाये और सूटकेश भर-भर कर डालर कमाये हैं ।

इन लोगों को अपनी सिद्धाई की छाप बिठाने के लिए वे तमाशे दिखाने पड़ते हैं, जिन्हें साधारण बाजीगर कला, चतुराई या हाथ की सफाई कहकर अपनी वास्तविकता कह देते हैं । उनका यह कहना इसलिए भी ठीक है कि कोई दूसरा उन हथकंडों को जानता होगा तो पोल खुल जायेगी, किन्तु योगके घुसपैठियों को इस प्रकार का भय नहीं होता । वे अपने अहंकार में इतने डूबे रहते हैं कि साधारण लोगों को उनकी करामातों के सम्बन्ध में प्रश्नोत्तर करने का साहस ही नहीं होता और गाड़ी मजे में चलती रहती है । कुछ चमचे कमीशन पर रख लिये जाते हैं और वे घूम-घूम कर शिकार फँसाते और स्वामी जी का व्यवसाय चलाने के लिए सुपुर्द कर देते हैं । अन्य व्यवसायों का एजेण्ट होने की तुलना किसी सिद्ध पुरुष का चेला बनने में अधिक कमाई हो जाती है, साथ ही यह अवसर भी रहता है कि उन्हीं हथकंडों के सहारे अपना नया खेल खड़ा कर लें । देखा जाता है कि जो कभी शिष्य-एजेण्ट थे, वे ही आगे चलकर स्वयं अपनी दुकान चलाने लगते हैं और एजेण्ट ढूँढ़ लेते हैं । यह धंधा देश और विदेश में इन दिनों ऊँचे दर्जे पर चमक रहा है ।

ज्योतिषियों में एक वर्ग भृगुसंहिता वालों का है । इनके यहाँ शिष्यों का एक गिरोह रहता है । दुकान में औंधी-सीधी कुण्डलियों के बेतरतीब अम्बार लगे रहते हैं । उनमें से प्रश्नकर्त्ता की कुण्डली ढूँढ़ने के लिए चाण्डाल चौकड़ी लगी रहती है । इसी बीच उस नवागन्तुक के सारे भेद बातों ही बातों में पूछ लिये जाते हैं । उन्हीं सब बातों का उसी ढेर में एक पन्ना मिला दिया जाता है । प्रश्नकर्त्ता का सारा इतिहास उसमें लिखा होता है । उसे सुनकर वह विश्वासी बन बैठता है और अनिष्ट निवारण के अथवा मनोकामना पूर्ति के नाम पर बुरी तरह जेब कटाता है । यह बड़ी दुकान है, इसलिए उनकी फीस भी तगड़ी होती है, उन्हें वह विश्वासी खुशी दे देता है, भले ही उसका कुछ काम बने या न बने ।

योरोप के पोप कुछ समय पूर्व तक अपने को स्वर्ग-लोक का ठेकेदार घोषित करते थे । वहाँ जिसे जितनी सुविधा का जितने समय के लिए स्थान चाहिए, उतने ही दाम वसूल करके गारंटी टिकट बेचते थे । मरने के बाद फिर कोई लौटकर यह शिकायत करने आता नहीं था कि जैसा कि विश्वास दिया गया था, वैसा स्थान मिला या नहीं । भारत में मोक्ष और स्वर्ग की ऐसी ही ठेकेदारी अपने ढंग से चलती हैं । ऐसे व्यवसायी अपने अड्डे तीर्थों में जमाते हैं । 'काशी मोक्षदात्री' की उक्ति बहुत पुरानी है । लोग मरने से पूर्व अपनी सम्पदा समेट कर उन तीर्थों में जा बसते थे ।

अब यह हवा देश में पण्डावाद का विरोधी वातावरण बनने से हलकी पड़ गई है, पर विदेशों में चरम भौतिकवाद की तरह और अत्यन्त सस्ता विलास भरा योगाभ्यास पूरे जोश

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मस्ती पर है । वहाँ के नशेबाज इन्द्रिय लोलुप इस प्रपंच में आसानी से फँसते हैं ।

साधना और योगाभ्यास का वास्तविक उद्देश्य अपने कषाय-कल्मषों से पीछा छुड़ाना, व्यक्तित्व को पवित्रता तथा प्रखरता से भरना है । इसके लिए चिन्तन, चरित्र और व्यवहार में उत्कृष्ट आदर्शवादिता का समावेश करना पड़ता है । औसत नागरिक से घटिया स्तर का जीवनयापन करना पड़ता है । इतना ही नहीं, सामयिक कुत्साओं कुण्ठाओं के विरुद्ध सूक्ष्म महाभारत स्तर का कार्यक्रम निर्धारित करना पड़ता है । उसमें पुत्रेषणा, वित्तेषणा ही नहीं— लोकेषणा से भी कोसों दूर रहना पड़ता है, पर आज के तथाकथित योगी तो इन तीनों ही सम्पदाओं को टोकरे भर-भर कर बटोरते हैं ।

अनाचार निर्बाध रूप से लम्बे समय तक नहीं चल सकता । काठ की हाँडी बार-बार नहीं चढ़ती । प्रपंच का भंडाफोड़ होकर रहता है । विरोधी उत्पन्न होते हैं और उनके तूफानी प्रवाह इन बालू के टीलों को रेगिस्तान के एक कोने से उठाकर दूसरे कोने पर रख देते हैं ।

प्रोटेस्टेण्टों ने योरोप में और आर्य समाज ने भारत में यही परिशोधन का कार्य किया । जनता के मन में जो असंतोष चिरकाल से पनप रहा था उसे उभरने और व्यापक बनने में देर नहीं लगी । कम्युनिज्म, बुद्धिवाद, यथार्थवाद की विभिन्न धाराएँ इन पाखण्डों को चुनौतियाँ दे रही हैं ।

प्रसिद्ध शोधकर्त्ता डार्विन जब मरने लगे तो उन्होंने उपस्थित लोगों से कहा कि "परलोक के स्वर्ग-नरक में से मैं किसी में भी नहीं जाऊँगा, वरन् दोनों के फाटकों पर पहरेदारी करूँगा कि कोई धर्मध्वजी इनमें से किसी में भी प्रवेश न कर पाये और वहाँ भी पाखण्ड फैलाने में सफल न होने पाये ।"

अपने देश में योगी का प्रचलित अर्थ है—जादूगर स्तर के चमत्कार दिखाना । बालों में से रंगीन बालू निकालना, हवा में हाथ मार कर खाने-पीने की चीज ला देना । दक्षिण भारत के श्री कुलकर्णी जगह-जगह प्रदर्शन करके उन्हीं तमाशों को दिखाते हैं, जिन्हें तथाकथित योगीजन अक्सर दिखाते और भोले लोगों को अचम्भे में डालकर उन्हें गुमराह करते हैं । श्री कुलकर्णी ने इस सम्बन्ध में एक संगठन भी बनाया है, जिसका उद्देश्य है योग का स्वरूप तथा उद्देश्य समझाना और सिद्धि-चमत्कारों के नाम पर प्रदर्शन किये जाने वाले कौतूहलों का निराकरण करना ।

इससे पूर्व श्रीलंका के विद्वान श्री कैवूर इस निमित्त एक लाख रुपये की राशि बैंक में जमा कर चुके हैं कि कोई सचमुच अलौकिक चमत्कार दिखा सकता हो तो अपनी ईमानदारी का सबूत देते हुए वैसा कुछ कर दिखाये और उस राशि को अपनी सच्चाई के उपलक्ष्य में स्वीकार करे । उन्हें पैसे की आवश्यकता न हो तो किन्हीं अन्य जरूरतमंदों को देदे । इस परीक्षा में चमत्कारों की वास्तविकता तो प्रकट हो जायेगी और यदि सचमुच ही वे होते होंगे तो शंकाशीलों को अपना भ्रम निवारण कर सकने का अवसर मिल जायेगा, पर अब तक कहीं से भी किसी ने भी उस चुनौती को स्वीकार नहीं किया है । मुद्दतों से एक लाख की राशि बैंक में पड़ी सड़ रही है ।

अन्ध-विश्वासों ने असंख्य मनुष्यों को भटकाया है । अबोध बालकों को चुराकर उनकी नर-बलि देने जैसे जघन्य कृत्य किए हैं । समय आ गया कि अध्यात्म क्षेत्र पर लगे हुए इस अंध-विश्वासी कलंक को धोया और निरस्त किया जाय ।

भविष्य सम्बन्धी अज्ञान ही श्रेयस्कर

अँग्रेज कवि अलेक्जेण्डर पोप ने एक कविता 'बलिपशु' लिखी है । जिसका भावार्थ इस प्रकार है—"हे मनुष्य ! उस बलिपशु की ओर देख जिसे कल वेदी पर देवता के सामने कट जाना है । यदि कहीं उसे ऐसा ज्ञात होता तो क्या वह आज इस प्रकार उत्साह से उछलता-कूदता ? लेकिन न तो उसे कल का पता है कि कल क्या होने वाला है और न ही उसे कोई भय ही है । अंतिम क्षणों तक भी वह खूब मौज से खाता-पीता है और उसी हथियार को चाटने भी लगता है जिससे कि उसका वध किया जाना है । क्या ही अच्छा होता, आने वाले क्षण के प्रति यदि तू भी इतना निश्चित और निरपेक्ष हो सके ।"

सच यह है कि बलिपशु को यह ज्ञान हो जाये कि उसका कुछ समय बाद वध होने वाला है तो वह तत्काल ही मृत्यु के मुख में चला जायेगा । परमेश्वर का परम अनुग्रह है कि उसे आने वाले क्षणों का न बोध है और चिन्ता भी नहीं है । यह अनुग्रह मनुष्य को भी उसी रूप में मिला है, परन्तु फिर भी भविष्य के प्रति उत्सुकता, उसे जानने की आतुरता और कब क्या होने वाला है ? उसकी ललक उसे आकुल बनाये रहती है, इसे स्पष्ट ही नासमझी कहा जाना चाहिए ।

आबादी का निन्यानवे प्रतिशत भाग अपना भविष्य जानने के लिए उत्सुक रहता है । हजारों लाखों लोग ऐसे हैं जो भविष्यवक्ता ज्योतिषियों के हाथों ठगे जाते हैं । भविष्य के सम्बन्ध में निश्चित और अटल रूप से तो कोई घोषणा की ही नहीं जा सकती, इसलिए इस क्षेत्र में धूर्त और चालबाज, मक्कार लोगों की दाल भी अच्छी गलती है । किसी को शनि तो किसी को मंगल बताकर उसे भयभीत कर देना और उनके प्रकोप निवारण-शान्ति के लिए अच्छी दान-दक्षिणा ऐंठ लेना अच्छे लाभ का धन्धा हो जाता है और मजे की बात यह है कि बिना पढ़े-लिखे अशिक्षित या अल्पशिक्षित लोग ही नहीं पढ़े-लिखे, शिक्षित वर्ग के प्रबुद्ध व्यक्ति भी अच्छी तरह मूँढ़ने में आ जाते हैं ।

शिक्षित और प्रबुद्ध व्यक्तियों के ठगने में आने का कारण मस्तिष्क में भविष्य और आने वाले कल के सम्बन्ध में जानने की लार टपकाती लालसा ही है । इस लालसा को पूरी करने के लिए वे मुल्ला, फकीरों और साधु बाबाओं के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इर्द-गिर्द डोलते रहते हैं । अब उन्हें कौन समझाये कि भविष्य कोई पुस्तक के पृष्ठ नहीं हैं । जो जब चाहें तब समय से पूर्व ही उलट कर देख लिये जायें । वह तो समय और काल की ऐसी धारा है जो अपने उपयुक्त समय पर सामने आयेगी, परन्तु नहीं, समझदार और शिक्षित व्यक्ति भी उन स्थानों और उन व्यक्तियों के आस-पास चक्कर काटते दिखायी देंगे जिनके सम्बन्ध में थोड़ा भी यह जानने को मिला हो कि वहाँ भविष्य का पता चल जायेगा ।

फलित ज्योतिष और हस्तरेखा विद्या एक विज्ञान है और इस विज्ञान का सर्वमान्य सिद्धान्त है कि भविष्य के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है । जो भी कहा जाता है, वह अनुमान और तथ्यों पर आधारित कल्पना के अनुसार ही होता है । जिनका यथावत् घटना अनिश्चित है । जिन आधारों पर भविष्य की गवेषणा की जाती है, उनमें सामुद्रिक शास्त्र सर्वाधिक मान्य है । इस शताब्दी और पूर्व शताब्दी के अंतिम दशकों से पूर्व तो सामुद्रिक शास्त्र को कोई वैज्ञानिक आधार नहीं मिला था । इन्हीं दिनों कीरो, डब्ल्यू. जी बेनहम और कुछ अन्य मनोविज्ञानवेत्ताओं ने सामुद्रिक शास्त्र का वैज्ञानिक आधार खोज निकाला । जिसका सार निष्कर्ष यह है कि "हस्तरेखा विज्ञान मनोविज्ञान से संचालित और सम्बन्धित एक विषय है और इसके आधार पर भविष्य के सम्बन्ध में कोई निश्चित घोषणा नहीं की जा सकती ।"

यह इस आधार पर भी कहा जा सकता है कि जिन रेखाओं और चिह्नों को देखकर व्यक्ति का भाविष्य बताया जाता है वे रेखाएँ न तो स्थायी होती हैं और नहीं निश्चित । इस विषय में खोज द्वारा यह पता लगाया जा चुका है कि सात वर्षों में मनुष्य के हाथ की रेखाएँ बदल जाती हैं । इस सम्बन्ध में कोई भी व्यक्ति स्वयं ही अन्वेषण भी कर सकता है और मनोविज्ञानवेत्ताओं का कहना तो यहाँ तक भी है कि प्रबल इच्छा-शक्ति के आधार पर किसी भी रेखा का पथ अल्पअवधि में भी बदला जा सकता है । एक सामुद्रिक शास्त्री तो इस अवधि को सप्ताह और दिनों में भी मानते हैं । भविष्य का आधार ही जब इतना अस्थिर और अस्थायी है तो निश्चित रूप से क्या कहा जा सकता है कि कब क्या होने वाला है ? हाँ इतना अवश्य हो सकता है कि कोई सुखद भविष्यवाणी कष्ट और कठिनाइयों में जी रहे व्यक्ति की चेतना और अनुभूति को थोड़ी बहुत राहत भले ही पहुँचा दे, लेकिन यह कार्य अन्य मनोवैज्ञानिक उपायों द्वारा भी संभव है ।

भविष्य के सम्बन्ध में थोड़ी देर के लिए यह भी माना जाय कि वह कुछ होता है और किसी भाषा में मनुष्य शरीर के अंग विशेषों पर लिखा होता है तो उसे जान लेने से क्या लाभ ? माना कि होनहार नियति का लिखा है तो उसे जानकर भी क्या बदला जा सकता है और जब नहीं बदला जा सकता तो उससे परिचित होना आज की खुशियों को भी बर्बाद करने जैसा आत्मघाती कृत्य ही हो सकता है । करम गति टारे नहीं टरैं—यह सच है, तो जानकर आज की गति बिगाड़ने के अलावा और क्या कुछ किया जा सकता है ?

इन अर्थों में लाभ की अपेक्षा हानि की ही अधिक संभावना रहती है । यह मालूम हो जाय कि अगले महीने लॉटरी लग जाने वाली है और भविष्य की निश्चितता पर पूरा विश्वास है तो उस खुशी में आज की जमापूँजी भी बर्बाद ही हो सकती है । पता नहीं अगले दिनों लॉटरी लगे या न लगे, परन्तु इतना तो निश्चित है कि आज ही हम दिवालिया अवश्य हो सकते हैं और अगर यह ज्ञात हो जाय कि अगले हफ्ते हम मर जाने वाले हैं तो चिन्ता, भय, उद्वेग और क्लेष के कारण निश्चित रूप से यह स्थिति बन जायेगी कि अगले सप्ताह की अपेक्षा इसी सप्ताह और सम्भवतः आज के दिन ही हमारी मृत्यु हो जाय । यह तथ्य मृत्युदण्ड पाने वाले बन्दियों के संदर्भ में अच्छी तरह समझा जा सकता है । फाँसी की सजा कई दिनों पहले सुना दी जाती है, अब मृत्यु को लगभग निश्चित जानकर उसके भय से वे इस तरह त्रस्त हो जाते हैं कि बहुत से तो समय से पहले ही काल-कवलित हो जाते हैं और जो नहीं हो पाते उनके बीच के दिन बड़ी भयानक पीड़ा और उद्विग्न मनःस्थिति में गुजरे होते हैं । चिन्ता और शोक के कारण उनका शरीर आधा भी नहीं रह जाता ।

इसलिए बुद्धिमत्ता और विवेकशीलता का तकाजा है कि भविष्य के गर्भ में झाँकने की आत्मघाती कुचेष्टा नहीं की जाय । प्रकृति ने मनुष्य की सुख-सुविधाओं का इतना ध्यान रखा है कि आवश्यकता की सभी वस्तुएँ और परिस्थितियाँ प्रचुर मात्रा में उसने अपनी सन्तान के लिए उपलब्ध करा दी हैं । हवा—सर्वप्रथम आवश्यक है, तो इसका अक्षय भण्डार उपलब्ध है और चारों ओर उसका सागर बह रहा है । इसके बाद आता है जल का क्रम, तो पृथ्वी का दो तिहाई भाग अगाध जलराशि से परिपूर्ण है । अन्न और आहार भी इतना प्राप्त है कि चिरकाल तक वह तथा उसकी सन्तानें अपना पोषण करती रहें । धूप, मौसम, आतप, वर्षा आदि की सुविधाएँ प्रकृति ने अपने बेटों के लिए जुटायी हैं तो क्या इतना और नहीं हो सकता था कि भविष्य का ज्ञान भी उसे करा दिया होता । यदि यह मनुष्य के हित में रहा होता तो निश्चित ही यह सम्भव था कि प्रत्येक मनुष्य आने वाले कल के प्रति पूर्ण ज्ञात और आश्वस्त होता ।

किन्तु प्रकृति की व्यवस्था और चेतना में किसी भी प्रकार यह उचित और लाभदायक सिद्ध नहीं हुआ । कल जो आकस्मिक और सहसा होगा वह सुखद है तो ज्ञात की अपेक्षा सहसों गुना आनन्ददायी होगा और कष्टप्रद है तो उसकी चिन्ता में आज से ही घुलना जारी नहीं हो जायेगा । आज का दिन तो उल्लासपूर्वक बिताया ही जा सकता है अन्यथा अनिष्ट की चिन्ता पूर्ववर्ती दिनों का सुख-चैन भी छीन लेगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारतीय दर्शन के आधार पर सृष्टि की क्रियाशीलता भविष्य के प्रति निश्चिन्त रहने के लिए ही है । आगत भय के निराकरण के लिए ही है । ''कर्म करो किन्तु फल की इच्छा त्यागकर'' अर्थात् वर्तमान का उपयोग करो—भविष्य के प्रति निश्चिन्त रहकर । जो सुख सहज प्राप्त है उसे आगामी सुख-दुःख की चिन्ता में गँवा देना बुद्धिमानी नहीं है । आगत के अतल-तल में झाँकने पर शून्य के सिवाय कुछ नहीं दिखाई देगा ।

इसलिए इसे परमेश्वर का, प्रकृति का, उसकी सहृदय और वत्सल व्यवस्था का परम अनुग्रह कहा जा सकता है—यह कि भविष्य अज्ञात है । सर्वप्रथम तो उसे जाना नहीं जा सकता, उस विषय में निश्चित नहीं हुआ जा सकता और जानने का प्रयत्न भी किया जाय तो यह अनधिकार चेष्टा ही होगी जिसका दुष्परिणाम चिन्ता, शोक, क्लेश, भय और आशंका के रूप में मन-मस्तिष्क को निरन्तर जलाता रहेगा, वहाँ उगी हरियाली और उल्लास को भस्म करता रहेगा ।

अन्ध-विश्वास एक सामाजिक कोढ़

मानव-जीवन की उत्कृष्टता उसकी विचारणा शक्ति में है । यदि उसकी विवेकशीलता जाग्रत नहीं हुई तो उसका मानसिक स्तर पशुओं जैसा होगा । यदि हम किसी बात की अच्छाई-बुराई, उपयोगिता एवं अनुपयोगिता समझने में असमर्थ हैं तो निश्चय ही हमारा मन और मस्तिष्क दोनों विक्षिप्त हैं, ऐसा समझना पड़ेगा । ऐसी परिस्थिति में हमारा अन्ध-विश्वासों के चक्कर में पड़ जाना स्वाभाविक ही है । अविवेकशीलता के धरातल पर ही अन्धविश्वास का जन्म हुआ करता है । अन्धविश्वासी एवं रूढ़िपरायण बने रहने पर पग-पग पर खतरा उठाना पड़ता है ।

बौद्धिक हीनता से ही अन्धविश्वासों को बढ़ावा मिलता है । मानसिक स्तर विकृत हो जाने से बेसिर-पैर की बातों का निराकरण नहीं हो सकता है । ऐसे अवसर पर धूर्त और ठग नई-नई भ्रान्तियाँ या अफवाहें फैलाकर भोली भाली जनता को ठगते रहते हैं । भविष्यवाणियों से भी कोई लाभ होता नहीं हैं, परन्तु जैसा कि जन-साधारण की धारणा है कि अगर हमें अपने आगामी जीवन में होने वाले लाभ-हानि का पता चल जाये तो हम अपने जीवन को अधिक सुखी एवं सुव्यवस्थित बना सकते हैं, परन्तु यह तथ्य है कि भाग्य की लिपि ईश्वर के सिवाय और कोई दूसरा नहीं बाँच सकता है । यदि भविष्य-वाणियों में सत्यता का कोई आधार रहा होता तो ये सभी ज्योतिषाचार्य एवं भविष्य-वक्ता अपने बारे में सब कुछ अवश्य जान लेते और मुसीबतों से बचने या प्राप्त होने वाले सुखों के बारे में निश्चिन्तता प्राप्त कर लेते, परन्तु देखा गया है कि वे भी अपने बारे में उतने ही चिन्तित और अनिश्चित रहते हैं जितने कि दूसरे लोग ।

तेजी-मंदी तथा सट्टे के व्यापार का 'चाँस' बतलाने का धंधा कितने ही भविष्यवक्ता किया करते हैं । सट्टे के सही दाँव लगते रहने पर तो कुछ ही दिन में संसार का सबसे बड़ा धनी कुबेर बना जा सकता है । यदि 'चाँस' बतलाने वालों की विद्या सही उतरे तो फिर क्यों न वे इसका स्वयं लाभ उठाकर लखपति बन जावें ? इतनी अमूल्य विद्या क्यों दो-दो चार-चार रुपयों में सड़कों के चौराहों पर बिके ? अन्ध-विश्वास के कारण इस असम्भावित मृग-तृष्णा के पीछे असंख्य लोग अपना सर्वनाश करते देखे गये हैं ।

संयोगवश यदि कभी किसी जुआरी को लाभ हो जाये या किसी को 'सट्टे' में चांस मिल जाये तो इसका यह अर्थ तो नहीं होता है कि सदैव ऐसा होता ही रहेगा । इसकी कोई गारंटी नहीं दे सकता है । जुए और 'सट्टे' में प्राप्त की गई मुफ्त की कमाई, देखते-देखते फिजूलखर्ची में बरबाद हो जाती है । फिर कर्ज लेकर या और किसी तरीके से उस कमी को पूरा करना पड़ता है । फलस्वरूप जुआरी को कभी धनवान एवं सम्पन्न बनते देखा नहीं गया है ।

जिस प्रकार झाड़-फूँक करने वाले हर मरीज को कुछ धूल-भभूत देकर उसमें आत्म-विश्वास पैदा कर उसके रोग निवारण का जादू करते हैं और यदि उनमें दस-पाँच फीसदी को लाभ हो जाये तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं, इसी प्रकार यदि सौ विद्यार्थियों को पास फेल होने के सम्बन्ध में एक ही बात बतलाई जावे तो वह पचास प्रतिशत सच ही निकलेगी । लड़का या लड़की होने के सम्बन्ध में भी सौ गर्भवती स्त्रियों को बतलाई गई एक ही बात आधी तो सही ही निकल आवेगी इसमें आश्चर्य की क्या बात ? ऐसा तो कोई बिना ज्योतिष जाने भी बता सकता है और अन्ध-विश्वासी जनता को ठग सकता है । एक करामाती बाबा ने जो कि सट्टे के नम्बर बताने का धन्धा करते थे, एक श्रद्धालु भक्त को बार-बार गलत नम्बर बतलाकर उसकी सारी पूँजी चौपट करा दी । इस पर क्रुद्ध होकर भक्त ने एक रात को जब उसकी गर्दन दबायी तो उसने स्वीकार किया वह कुछ नहीं जानता है और अपने कमाये हुए छह सौ रुपये तो तत्काल भक्त को दे दिये तथा दो सौ बाद में देने का वचन देकर उससे अपने प्राण बचाये ।

आत्मिक उत्थान के लिए श्रद्धा और विश्वास की उपयोगिता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि सन्मार्ग पर चलते हुए कष्ट-सहन करने की क्षमता श्रद्धा और विश्वास से उत्पन्न होती है, परन्तु श्रद्धा के स्थान पर यदि अन्ध-श्रद्धा गले पड़ गई तो फिर कुशल नहीं । श्रद्धा एवं अन्ध-श्रद्धा ऊपर से देखने में तो एक सी लगती है, पर उनके आदर्श एवं आन्तरिक रूप में जमीन-आसमान का अन्तर दिखलाई पड़ता है । जहाँ श्रद्धा आध्यात्मिक उल्लास एवं लौकिक विकास का पथ प्रशस्त करती है वहाँ अन्ध-श्रद्धा अनाचार और भ्रष्टाचार उत्पन्न कर भोले-भाले व्यक्तियों के पतन का कारण बनती है । अतः अन्ध-श्रद्धालु बनकर हमें किसी बात को सत्य और असत्य की कसौटी पर कसे बिना नहीं स्वीकार करना चाहिए । हमारे देश में इसी अन्ध-श्रद्धा के आधार पर प्रचलित ठगी के धंधे का लेखा-जोखा तैयार करना सम्भव नहीं है । धर्म की आड़ में, देवी-देवताओं की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आड़ में, भूत-प्रेतों की आड़ में इसी ठगी का धंधा चलाने वाले न तो कभी पुलिस की पकड़ में आ सकते हैं और न इन पर किसी प्रकार का मुकदमा चलाया जा सकता है ।

श्रम-साध्य कठिन मार्ग अपनाने की अपेक्षा धन सम्पत्ति जोड़ने अथवा लौकिक यश प्राप्त करने के लिए लोग 'शार्टकट' (सुगम और शीघ्र मार्ग) अपनाने को बहुत लालायित देखे जाते हैं । चुटकी बजाते ही अपने कार्य को सिद्ध करने के लिए देवी-देवता या सिद्ध करामाती लोगों की सहायता लेने का आधार उनका अंध-विश्वासी होना ही है ।

सस्ते नुस्खे खोजने वालों की आत्मा कायर और दुर्बल होती है । 'श्री सूक्त' का पाठ कर अतुल सम्पदा के स्वामी बनने का स्वप्न देखने वाले, हनुमान चालीसा के पाठ से परीक्षा उत्तीर्ण करने वाले तथा हरिवंश पुराण की कथा सुनकर संतान चाहने वाले, और अमुक बाबा की भभूत से नौकरी में तरक्की की आशा करने वाले व्यक्तियों की संख्या आज इतनी अधिक है कि धार्मिकता और पूजा-पाठ के नाम पर किए गए कृत्य बालू के महल की तरह क्षण भर में धराशायी हो जाते हैं । धार्मिक व्यक्ति तो साहस, श्रम, पुरुषार्थ और धैर्य के आधार पर प्रगति की ओर बढ़ना चाहता है, वह फल के लिए लालायित नहीं रहता है । गीताकार ने भी **'मा फलेषु कदाचन्'** का उपदेश देकर निष्काम कर्म करने की ही शिक्षा दी है । अतः जिन्हें अपनी योग्यता, सामर्थ्य और श्रमशीलता पर विश्वास नहीं है, वे ही ऐसे सस्ते नुस्खे ढूँढ़ने के लिए अधीर एवं विक्षिप्त देखे जाते हैं । 'अंध-विश्वास' के दैत्य ने तो फल प्राप्ति के सस्ते नुस्खे के पीछे कर्म को बिल्कुल ही भुला दिया है । आजकल तो दो-चार पैसे के फल-फूल देवताओं पर चढ़ाकर किसी तीर्थ में स्नान कर, किसी तथाकथित सिद्ध महात्मा को माला मिठाई भेंट कर किसी मंत्र-तंत्र की दस या पाँच दिन उपासना कर हम विपुल सम्पदा के स्वामी बनना चाहते हैं ।

यहाँ पर ऐसे मूर्खों की भी कमी नहीं जो रामायण में महादेव जी पर रावण द्वारा अपने सिर चढ़ाकर सिद्धि प्राप्त करने की बात पढ़कर अपने सिर को भी काट डालना चाहते हैं । कानपुर के तपेश्वरी देवी के मन्दिर में 'वाणी' सिद्धि के लिए एक ने अपनी जीभ काटकर चढ़ा दी थी । सिद्धि मिलना तो दूर, उसका बोलना-चालना भी बंद हो गया और वह दो चार दिन बाद इस संसार से ही विदा हो गया ।

आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य में नीर-क्षीर विवेचना कर सकने की विवेकशीलता जाग्रत हो जिससे वह मुहूर्तवाद एवं भ्रामक रूढ़ियों तथा परम्परा के चक्कर में पड़ अपना जीवन विनष्ट होने से बचा सके । इस प्रकार के अंध-विश्वासों का प्रचलन जिस समाज में बना रहेगा वह देश कभी उन्नतिशील नहीं बन सकता है । किसी भी रीति-रिवाज या अफवाह को बिना सोचे-समझे मानने लगना हमारी पहले दर्जे की मूर्खता ही होगी ।

अन्ध-विश्वास के साये में पलता जीवन

आदिम युग में वर्षा, आँधी-तूफान, बिजलियाँ कड़कने और बादल गरजने जैसी प्राकृतिक घटनाओं के कारण मनुष्य भयभीत हुआ और उसने किसी अदृश्य शक्ति की कल्पना कर अपना भय दूर करने के लिए उसे प्रसन्न करना आवश्यक समझा । इसी के लिए उसने प्राकृतिक शक्तियों की पूजा-उपासना से लेकर उसे प्रसन्न करने के लिए तरह-तरह के उपचार प्रयास खोज निकाले । आधुनिक बुद्धिजीवी ईश्वर की कल्पना का प्रथम उदय यहीं से मानते हैं । कोई भी सच्चाई या कोई भी शोध अपने प्रारम्भिक रूप में भौंड़ी और बेहूदी रही है । धीरे-धीरे वह परमार्जित होती जाती है और प्रारम्भ में मनुष्य के लिए भले ही व्यर्थ और अनावश्यक रही हो आगे चल कर उपयोगी तथा जीवन का अनिवार्य अंग बन जाती है । आदि मानव ने अदृश्य शक्ति का कार्य-क्षेत्र भले ही इन प्राकृतिक घटनाओं तक माना हो, परन्तु जैसे-जैसे मनुष्य विकसित होता गया उसके मस्तिष्क ने ईश्वर की सर्वसमर्थ, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापी नियामक सत्ता को सृष्टि के कण-कण में समाया हुआ खोज लिया ।

आज भले ही लगे कि आदिम युग की वह कल्पना एकदम निराधार और बेतुकी थी, परन्तु मनुष्य ने उसी से प्रेरणा लेकर ईश्वर के वास्तविक स्वरूप का पता लगाया । आज हम आदिमानव की कल्पना पर हँस सकते हैं, परन्तु इस समय जिस व्यक्ति के दिमाग में यह कल्पना आयी होगी उसे लोगों ने अपने युग का मनीषी कहा होगा । पक्षियों को उड़ते देखकर स्वयं पंख लगाकर उड़ने की कल्पना जिस किसी ने भी की हो यह हास्यास्पद रहा होगा, परन्तु उसी कल्पना से प्रसूत शोध और आविष्कारों के कारण आज ध्वनि की गति से भी तेज चलने वाले विमान बनना सम्भव हो सका है ।

कोई कल्पना जिसका कोई आधार नहीं रहा हो अपने समय में भले ही अनूठी, अद्वितीय और जन-साधारण की दृष्टि में अभिवन्दनीय रही हो सदैव समीचीन और व्यावहारिक नहीं होती । अपने समय के साथ ही वह मर जाती है । फिर भी बाद के समय में यदि कोई उसे अपनाये रहने के लिए आग्रहशील रहे तो मुर्दे को छाती से चिपटाये रहने जैसी विक्षिप्त प्रवृत्ति ही कही जायेगी । चर्चा उन परम्पराओं और विश्वासों की की जा रही है जिनका अनुकरण किसी युग में प्रशंसनीय समझा जाता था, परन्तु आज वह सर्वथा अव्यावहारिक है, क्योंकि उनकी व्यर्थता सिद्ध हो चुकी है, वे मिथ्या साबित हो चुकी है ।

यद्यपि जिस युग में वे प्रचलित थीं उस समय भी मिथ्या ही थी, परन्तु मनुष्य का बौद्धिक विकास इतना नहीं हुआ था कि वस्तुस्थिति को देख सके इसलिए उस युग में उन प्रवृत्तियों को क्षम्य कहा जा सकता है । जैसे बिजली गिरते और ओलावृष्टि होते देख कर आदि मानव ने यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन प्रवृत्तियों को क्षम्य कहा जा सकता है । जैसे बिजली गिरते और ओलावृष्टि होते देख कर आदि मानव ने यह सोचा कि कोई अदृश्य शक्ति मनुष्य को अथवा उसके पाले जानवरों को खाना चाहती है, क्योंकि इन घटनाओं के कारण कई व्यक्ति और जानवर मर जाते थे । इसलिए उस समय किसी ने यह विकल्प दिया हो कि हम स्वयं ही अपनी ओर से नरबलि या पशुबलि दे दें तो शायद हमें देवी प्रकोप का शिकार न होना पड़े, परन्तु आज के समय में इस दृष्टि से सोचना न केवल अनुचित है वरन् अपराध भी है ।

यह ठीक है कि उसी पंक से आधुनिक धर्म और विज्ञान का परिष्कृत कमल निकला परन्तु इसका यह अर्थ तो नहीं है कि उस कीचड़ को अपने शरीर से लपेटा और मला जाय । अन्ध-विश्वासों से प्रेरित घटनाओं के विवरण जब समाचार-पत्रों में पढ़ने में आते हैं तो लगता है कि उस कीचड़ का मोह हमसे छूटा नहीं है और उस मोह से बँधे होने के कारण ही हम धर्म और विज्ञान के उस शिखर को छू नहीं पा रहे हैं जिसे छू कर अनेकों समाज धन्य हुए जा रहे हैं ।

उदाहरण के लिए श्रद्धा को ही लें । श्रद्धा का अर्थ है—ईश्वर के प्रति धन्यता के बोध से अन्तःकरण की भाव-संवेदना, जिसमें स्वयं को ईश्वर अथवा इष्ट की अनुकम्पा से लाभान्वित अनुभव किया जाता है और किसी न किसी रूप में कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए हृदय हुमक उठता है । दान पुण्य से लेकर दीप जलाने, मन्दिर बनाने और कोई भी ऐसा कृत्य करने में संतोष की अनुभूति होती है जिसका स्वयं को कोई प्रत्यक्ष लाभ नहीं मिलता, पर कभी-कभी यह कृतज्ञता ज्ञापन-श्रद्धाभिव्यक्ति इतनी भौण्डी और बेहूदी हो जाती है कि मनुष्य की बुद्धि पर तरस आने लगता है ।

पंजाब के समहर गाँव में घटी एक घटना जिसका समाचार अखबारों में 'चिड़े का अन्तिम संस्कार' शीर्षक से बॉक्स में प्रकाशित किया गया था दृष्टव्य है । समहर का एक व्यक्ति अपने पिता का श्राद्ध कराने के बाद पण्डितों को भोजन आदि करा के निवृत हुआ ही था कि अचानक एक चिड़ा बिजली के पंखे की लपेट में आकर मर गया । घर वाले जमा हो गये और इस घटना का यह अर्थ लगाया गया कि चिड़े के रूप में पिताजी ही आये थे और उन्होंने इस योनि में जन्म लिया था । चूँकि उनकी मृत्यु हो गयी है, इसलिए उनकी आत्मा को शान्ति पहुँचाने के लिए चिड़े का अंतिम संस्कार बड़ी शान और सम्मान के साथ किया गया ।

श्रद्धा व्यक्त करने की एक और घटना है जिसे न केवल अमानवीय वरन् आसुरी ही कहा जाना चाहिए । हरिद्वार में लगने वाले अर्द्ध कुम्भ के मेले पर जब हजारों लोग गंगा स्नान कर रहे थे तो एक नवजात शिशु को फूलों के दोने में गंगा की लहरों पर बहता पाया गया । हजारों दम्पत्ति पुण्य लाभ की दृष्टि से इस अवसर पर गंगा स्नान करने आते हैं और हर की पौड़ी पर एक साथ स्नान कर गंगा मैया को कुछ न कुछ भेंट चढ़ाते हैं । जो शिशु गंगा की लहरों में बहता पाया गया वह एक दम्पति द्वारा चढ़ाई गयी भेंट ही थी । दम्पत्ति अभी अपने शिशु को बहाकर निकल ही रहे थे कि स्नान कर रहे अन्य व्यक्तियों तथा वहाँ तैनात पुलिस के सिपाहियों की उस पर नजर पड़ गयी और बालक को बचा लिया गया ।

इन घटनाओं का क्या विवेचन किया जा सकता है । एक स्थान पर तो वस्तुस्थिति को समझने के प्रयास से शून्य स्थिति और दूसरे स्थान पर श्रद्धार्चन के लिए अपनी संतान को ही गंगा में बहा देने की मूर्खता । यह अंध-विश्वास नहीं तो क्या है ? अंध-विश्वास के कारण ही कई बार हत्या और नरबलियाँ तक कर दी जाती हैं ।

शाहजहाँपुर के पास एक बस्ती में रहने वाली एक बाँझ महिला द्वारा तीन वर्षीय बालक की बलि चढ़ाने की घटना जब प्रकाश में आयी तो उस क्षेत्र में सनसनी फैल गई । बलि देने के कथित समाचार में जो २३ अगस्त के नवभारत टाइम्स में छपा था । बताया गया है कि बाँझ महिला को संदेह था कि किसी प्रेतात्मा के कारण ही वह निःसन्तान है । इसी प्रेतात्मा को शांत करने के लिए उक्त महिला ने ऐसा किया । इसके लिए अभियुक्त स्त्री ने अपने पड़ोस के एक तीन वर्षीय लड़के को फुसलाया और फिर एक कमरे में ले जा कर उसकी हत्या कर दी, लेकिन उस महिला ने जब बालक के शव को इधर-उधर करने की कोशिश की तो भेद खुल गया और वह पकड़ी गयी ।

पिछड़े क्षेत्रों में तो इस तरह की परम्पराएँ सामाजिक जीवन में स्थान पाये हुए हैं । बस्तर जिले के आदिवासियों में फसल की बोआई के समय नरबलि या मनुष्य के किसी अंग विशेष की बलि देकर पूजा करने का प्रचलन है । उन लोगों का विश्वास है कि इस प्रकार की पूजा करने से फसल अच्छी होती है । बताया जाता है कि १० जून, १९६६ को तीन लड़के नारद, रामखिलावन और विषधर आम खाने के लिए जंगल गये थे । आम इकट्ठे कर जब वे एक स्थान पर आ कर बैठ गये तो आदिवासियों ने दो तरफ से घेर लिया । एक लड़के ने पूछा क्या वे आम खरीदेंगे ? इतने में ही एक आदिवासी ने नारद को धर दबोचा । शेष दो लड़के जब भागने लगे तो एक अन्य आदिवासी ने उन्हें डंडा फेंक कर मारा । एक आदिवासी ने नारद के हाथ पैर पकड़ लिये और दूसरे ने उसका पूरा बायाँ कान, आधा दाहिना कान और निचला होठ काट डाला । उसे इसी हालत में छोड़ कर भाग खड़े हुए । खबर पा कर कुछ लोग जंगल की ओर भागे तो उन्होंने घटनास्थल पर नारद को तड़पते हुए पाया ।

इतना ही नहीं किसी रोग, बीमारी या दुर्घटना का कारण तो निर्दोष व्यक्तियों के मत्थे मढ़ दिया जाता है तथा इस कारण उन्हें बुरी तरह यातनाएँ दी जाती हैं । पिछले दिनों मधुबनी बिहार में तो चार व्यक्तियों को केवल इसलिए छुरा मार दिया गया कि एक व्यक्ति को साँप ने डस लिया था और इस कारण उसकी मृत्यु हो गयी । साँप डसने से हुई मृत्यु में किसी का क्या दोष ? परन्तु जिन व्यक्तियों ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

छुरा मारा उनका कहना था कि सर्पदंश के कारण वह व्यक्ति नहीं मरा बल्कि साँप ने उस व्यक्ति को इसलिये काटा था कि एक डायन ने उस पर अभिचार प्रयोग किया था । घटना के बारे में बताया जाता है कि जिस व्यक्ति की साँप काटने से मृत्यु हुई थी वह डायन का अभिशाप था । इसके बाद ही मृतक के परिवार वालों ने उक्त डायन को तथा उस परिवार के तीन अन्य व्यक्तियों को छुरे से घायल कर दिया । घाव ज्यादा गहरे नहीं थे, परन्तु सम्बन्धित व्यक्तियों ने प्राणघातक हमला किया था जिनमें से बाद में दो व्यक्तियों को हिरासत में ले लिया गया ।

अंध-विश्वास के कारण पशुओं की हत्या कर देना तो जैसे आम बात है । मध्य प्रदेश के तो अधिकांश गाँवों में अभी भी कुछ लोग यह दावा करते हैं कि उन पर देवता आया करता है और इस तरह वे गाँव के लोगों को बुद्धू बनाकर अपना उल्लू सीधा करते हैं । एक पत्रिका में किसी पाठक का संस्मरण छपा था—"शनिवार का दिन था । मैं गाँव से बच्चों को पढ़ा कर आ रहा था । तभी मैंने रास्ते से थोड़ी ही दूर पर लोगों की भीड़ इकट्ठी देखी । उत्सुकतावश मैं भी वहाँ पर चला गया । वहाँ बड़ा अजीब माहौल बना हुआ था । चबूतरे पर सिन्दूर पुती मूर्तियाँ रखी हुई थीं । एक आदमी लाल कपड़े पहने घूम रहा था और गाँव के सभी लोग उसे हाथ जोड़कर प्रणाम कर रहे थे । एक बूढ़े आदमी ने उससे कहा—"अन्नदाता हमारे गाँव की मक्का की पूरी फसल में इल्ली लग गयी है । उन्हें खत्म करने का उपाय बताइये ।"

"एक बकरा यहाँ लाकर चढ़ा दो । सब इल्लियाँ मर जायेंगी"—उस व्यक्ति ने कहा जिसके सिर पर देवता आया था लोगों ने ऐसा ही किया, पर इल्लियाँ कहाँ मरनी थीं । वे बढ़ती ही गयीं और परिणाम यह हुआ कि गाँव में मक्का की पूरी फसल नष्ट हो गयी ।

उपर्युक्त घटना से सिद्ध होता है कि इन मान्यताओं को प्रश्रय देने, अन्ध-विश्वासी का पालन करने से लाभ नहीं हानि ही होती है । यह बात और है कि इस कारण कुछ लोगों का धंधा चलता रहता है । जो भी हो इन परम्पराओं और मान्यताओं का कोई औचित्य और कोई आधार नहीं दीखता । इस लेख के प्रारम्भ में पिछड़े युग के मनुष्यों द्वारा अपनी बुद्धि की पहुँच के अनुसार की गयी कल्पना की चर्चा की गयी है, उसी का यह निम्नतम स्वरूप है । उस युग के व्यक्तियों द्वारा की गयी कल्पना उचित थी या अनुचित इसकी गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं । अपनी समझ के अनुसार अपने आपको वे सही समझते होंगे । उसका लाभ मानव जाति की अनुभव सम्पदा को बढ़ाने के रूप में मिला भी, परन्तु यह कहाँ की बुद्धिमानी है कि एक बार आग से जल जाने के बाद जलने का अनुभव प्राप्त करने के लिए अपना हाथ बार-बार आग में झोंका जाय । पिछड़े असभ्य, और अशिक्षित व्यक्तियों के सुधार की आशा इतनी जल्दी नहीं की जानी चाहिए परन्तु उन विचारशील और बुद्धिजीवी व्यक्तियों से तो यह अपेक्षा की ही जा सकती है कि सभ्यता पर मण्डरा रहे इस काले साये को हटाने में रुचि लें तथा लोगों से कहें—"बहुत हो चुका इन मान्यताओं में कोई दम नहीं है । इनसे लाभ के स्थान पर हानि ही है और यह पुण्य नहीं पाप है ।" अन्ध-विश्वास के साये को जब तक भारतीय समाज के ऊपर से, सामने से हटाया नहीं जा सकता, तब तक प्रगति और उत्कर्ष के प्रकाश का दर्शन असम्भव ही रहेगा ।

कुप्रचलनों से पीछा छुड़ाना एक अनिवार्य काम

अन्ध-विश्वास एक प्रकार का मानसिक रोग है, जो तथ्यों को समझने और अपनाने पर रोक लगाता है, पूर्वाग्रहों की हठवादिता बौद्धिक क्षेत्र की ऐसी गुलामी है, जिससे छुटकारा पाना और दिलाना अत्यधिक कठिन होता है । जहाँ तर्क, तथ्य और विवेक को आश्रय मिलेगा, वहाँ हर नये प्रतिपादन और पूर्व प्रचलन पर ऐसी दृष्टि डालनी होगी, जिसके अनुसार वस्तुस्थिति को जाना जा सके और जो उचित है सही है उसी को अपनाया जा सके । इसके लिए जो अनुपयुक्त है, उसे छोड़ना पड़ता है, किन्तु अन्ध-विश्वासी को यह प्रयोग स्वीकार नहीं । वह प्रचलनों के आधार पर अपनाये गये आग्रहों को ही मत और धर्म मानकर बैठ जाता है । यह जड़ता इतनी सघन होती है कि कई बार तो उस पर किसी नये प्रतिपादन का असर ही नहीं पड़ता । इससे मूढ़मान्यता ग्रस्तों को दुहरी हानि उठानी पड़ती है । अन्ध-विश्वास उन्हें खाते रहते हैं और औचित्य को अपनाने से जो लाभ मिल सकते थे, उनसे इस प्रकार के लोग वंचित ही रह जाते हैं ।

जन-जातियों के पिछड़ेपन का अनुपात अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है । उनकी अवनति के अनेक कारणों में यह हठवादिता भी एक बड़ा कारण है । यह स्थिति जिस भी समुदाय में जिस भी अनुपात में होगी वहीं ऐसे संकट खड़े होंगे जैसे कि अन्ध-विश्वास से ग्रसित जन-जातियों को सहन करने पड़ रहे हैं ।

कुछ समय पूर्व तक नागाओं की तरह न्यारा समुदाय में भी नरबलि का प्रचलन था । इनके सामाजिक व धार्मिक संगठन में नरमुण्ड का शिकार महत्त्वपूर्ण था । इनके समुदाय में मारपीट, युद्ध, खून-खराबा तथा शत्रुओं के शिकार का अधिक प्रचलन था, किन्तु अँग्रेज सरकार की इस प्रथा पर रोक के कारण, अब वे अधिक शान्तिप्रिय हो गये हैं । नहीं तो यही लोग नरमुण्ड संग्रह के लिए सदैव तत्पर रहते थे । संग्रह के लिए ऐसा काम नहीं करते थे जिनमें उनकी हत्या की सम्भावना हो । ल्होता समुदाय के व्यक्ति नारी व बच्चों का सिर काटने में जरा भी डरते नहीं थे । बिना दाँत के बच्चों को मार तो डालते थे, किन्तु उसका सिर काटकर अपने पास नहीं लाते थे । औरत का सिर पाना विशेष महत्त्वपूर्ण मानते थे । जब ये दूसरे गाँव पर चढ़ाई करने जाते थे, तो

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस रात योद्धाओं को पत्नी के साथ सोना वर्जित था । प्रातःकाल वे सभी एकांगी गृह में जमा होकर, नरमुण्ड की पूजा करते तथा सारे गाँव में घूमकर युवागृह में पुनः लौट आते । वहाँ गाँव के वृद्ध व अनुभवी उन्हें खाना खिलाकर अपनी पुरानी कथा सुनाकर, खुशी-खुशी नर-शिकार के लिए विदा देते थे ।

सेमानागा में जिन्हें शेर मारता है उसे गेन्ना माना जाता है । उस व्यक्ति के सामान, उपकरण, औजार आदि गेन्ना बन जाते हैं । ये लोग इसके प्रभाव से मुक्त रहने हेतु शान्ति उपाय भी करते हैं । पुरुष थारू जो उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्रों में हैं इन्हें प्रधान स्वीकृतियाँ नहीं प्रदान हैं । वे कानूनी अवज्ञा से कदापि प्रभावित नहीं होते । समाज सदा इनसे आतंकित बना रहता है । नीलगिरि में रहने वाली टोड जाति अपनी महिलाओं को खटाल क्षेत्र में प्रवेश करने नहीं देते । दूध से सम्बन्धित कोई काम उन लोगों से नहीं कराया जाता । दूध को पवित्र वस्तु माना जाता है । मालेर के मकई और उनके धार्मिक अनुष्ठान इसी वस्तु की ओर संकेत करते हैं । केरलीय कदार, मालापदंरम, माला वेन्दा एवं यूराली लोगों का विश्वास है कि जंगल में घूमते समय शस्त्र द्वारा उनका प्रतिनिधित्व होता है अतएव उन्हें पवित्र रहना चाहिए । वर्जनाओं के रूप से भी धार्मिक विश्वासों का अस्तित्व है ।

मुण्डा जनजाति वाले पहाड़ की चोटी पर चढ़कर पत्थरों को नीचे फेंकते हैं जिससे बिजली की आवाज में पत्थरों की गड़गड़ाहट मिले और उन्हें विश्वास है कि ऐसा करने पर वर्षा होती है । कुछ लकड़ियों के गट्ठर को जलाते हैं जिससे उसका धुआँ गाँव के ऊपर छा जाय और ऐसा करने पर निश्चित ही वर्षा होगी । मनुष्य के बलिदान से वर्षा होती है ऐसा खोन्डों का विश्वास है । कष्ट पीड़ित आँख से आँसू व जख्म से खून गिरते हैं, उसी प्रकार वर्षा होगी, ऐसा भी वे मानते हैं ।

रोगी पुरुष को कोखा लोग लोहे की सींकड़ी से पीटते हैं और उसके स्वास्थ्य हेतु जलती हुई बत्ती उसके नाक में डालते हैं । उड़ीसा के कुट्टिया बच्चे के सर्वप्रथम बीमार होने के समय को बच्चे के नामकरण-अनुष्ठान का उत्तम अवसर मानते हैं । वैद्य बुलाने पर आकर चमत्कारिक कृत्य करके, अनुष्ठान में किस प्रकार के पशु की बलि देना है उसका निर्धारण करता है । बच्चे की नाभि काटने में प्रयुक्त हथियार को बलि दिये जाने वाले पशु के खून में डुबोकर, लथपथ हो जाने पर बच्चे की सुरक्षित सम्पत्ति के रूप में रखा जाता है ।

छिंदवाड़ा में रह रहे मुंजिया एवं कामर जाति की स्त्रियाँ सबसे पहले अपने प्रेमी के वस्त्र, केश या अन्य वस्तुओं को पाकर उस पर जादू द्वारा अधिकार पाती हैं । जन-जाति के लोग पूर्णरूपेण या आंशिक मात्रा में जादूगरों को प्रश्रय देते हैं । एक विशेष अवसर में गाँव का मुखिया ही जादूगर होता है । हिमालीय थारू महिलाएँ जन्तर देने एवं जादू के काम में निपुण होती हैं । कटनी के तुरन्त बाद फसल बढ़ने के समय, बुआई के पूर्व जौनसार बाबर के खासा नग्न नृत्य करते हैं । वर्षा के लिए वे वेदवार्त का प्रयोग करते हैं । इसमें वे आकाश की ऊँचाई वाली दो चोटियों से चिकनी रस्सी को बाँधकर तेजी के साथ फिसलते हैं । कभी-कभी यह प्राणघातक भी हो जाता है ।

ये सभी चित्र-विचित्र रीति-रिवाज खतरनाक होते हुए भी इन्हें कितने चाव से ये लोग अपनाते हैं, यह देखकर दुःख भी होता है और आश्चर्य भी । आदिम मानव कैसा होता होगा ? इसकी कल्पना इनके क्रिया-कलापों को देखकर की जा सकती है । ओझा, देवता आदि सम्बन्धी इनकी मान्यताएँ बड़ी विचित्र हैं ।

नागालैण्ड में एक जाति है जिसके देवता पथियन कहलाते हैं । उनकी मान्यता है कि उनके विपरीत होने पर ही जीव-जन्तुओं को कष्ट एवं बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं । पथियन से समता रखने वाले खुआरैंग दूसरे देवता हैं । इनका महत्त्व पथियन से कम है । हर गोत्र में एक अलग आराध्य देव होते हैं । इन्हें साखुआ कहते हैं । उनकी धारणा है कि मृत आत्माएँ उनके परिवार की देख-भाल करती रहती हैं । कूकी इनकी पूजा के साथ कम से कम में एक बार भोज करते हैं । उन्हें विश्वास है कि मृतात्मा खुद पर्व देखने को लालायित रहती हैं ।

इनके यहाँ धार्मिक उत्सव प्रेतात्माओं, देवताओं की पूजा के लिए मनाये जाते हैं । बाँझपन व बीमारी के निराकरण के लिए ये पूजा करते हैं । ऐसे समयों पर मन्त्र के उच्चारण के साथ मुर्गे और सुअर की बलि भी चढ़ाई जाती है । मन्त्रोच्चारण पुरोहित करता है । पुरोहित कोई भी मुखिया का परिजन ही बन सकता है ।

उस क्षेत्र में सर्वाधिक लोकप्रिय देवी घरघण्डी है । कीचड़ के टीले पर कई लकड़ी के क्रास के आकार के खम्बे यही उनका प्रतीक है । इस पर दाल, चावल खेतों के उत्पन्न अन्न इत्यादि चढ़ाते हैं । टीले को ऐसे स्थान पर बनाते हैं जहाँ से पशु आते-जाते हों । इनका विश्वास है कि उनके दर्शन मात्र से वंश में वृद्धि होती है ।

जन-जातियों की संख्या भी कम नहीं, अच्छी खासी है । इन्हें साक्षर बनाना तो बहुत दूर की बात है । इनके अन्दर जागृति उत्पन्न करना, समझदारी की दिशा में ले जाना अपने आप में एक पुरुषार्थ है । जहाँ मात्र विवेकहीन परम्पराएँ ही जीवन का आधार हों, वहाँ नागरिकता, कर्त्तव्यपरायणता, राष्ट्रीयता की अपेक्षा कैसे की जाय ? उनके इस मनोविज्ञान को पढ़ समझकर ही तो मिशनरियों ने अपना जाल फैलाया व धन के लालच में धर्म परिवर्तन हेतु उन्हें सहमत कर लिया । उचित हो कि इस दिशा में जन-स्तर पर आन्दोलन का कोई स्वरूप बने, जो इन सभी की मनःस्थिति बदले ।

विचारणीय है कि जिन क्षेत्रों में इस प्रकार की मान्यताएँ चलती हैं वे किस प्रकार भयाक्रान्त करने वाली भ्रान्तियों से अपने को उबार पा सकते होंगे और इसके अभाव में औचित्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं उपयुक्त को समझने-अपनाने की उनकी मनःस्थिति कैसे बन पाती होगी । पिछड़े क्षेत्रों के समुदायों के सुधार में एक अति महत्त्वपूर्ण उपाय यही है कि उनकी प्रचलित अन्ध-परम्पराओं, भ्रान्त-धारणाओं एवं कुरीतियों के निष्कासन का एक प्रभावी आन्दोलन चलाया जाय, शासन अपनी ओर से तो प्रयास करे ही ।

पिछड़ेपन का परिपोषक—अन्ध-विश्वास

मनःस्थिति ही परिस्थितियों की जन्मदात्री है । इस सिद्धान्त की परिपुष्टि में अनेकानेक प्रमाण और आये दिन घटित होने वाले घटनाक्रम प्रस्तुत किये जा सकते हैं । इन उदाहरणों में एक है—जन-जातियों का पिछड़ापन । अपने देश में वन्य क्षेत्रों का एक बहुत बड़ा भूखण्ड है । उसमें प्रायः जन-जातियाँ रहती हैं । मैदानी इलाकों की अपेक्षा वे अपने को प्रकृति के अधिक समीप रखने में प्रसन्नता अनुभव करते हैं ताकि कोई उनके काम में दखल न दे और उन्हें किन्हीं दूसरों के साथ न घुलना-मिलना पड़े ।

वन क्षेत्रों में निर्वाह के अनेकानेक साधन हैं । उनके उपयोग करने में उन्हें छूट भी है । ऐसी दशा में यदि वे अपने श्रम का योजनाबद्ध उपयोग कर सकें तो आर्थिक स्थिति सुधरने और समुचित सुविधा-साधन प्राप्त करने में कमी न रहे । प्रगतिशीलता का प्रथम चरण चिन्तन से आरम्भ होता है, यदि उसमें जड़ता छाई रहे, अन्ध-विश्वास और दुराग्रह भरे रहें तो अधिक अच्छी स्थिति प्राप्त करने के लिए न तो उत्साह उठता है और न प्रयत्नक्रम चलता है । मस्तिष्क जब भ्रम जंजालों में जकड़ा रहे और निरर्थक कृत्यों में समग्र-श्रम खपता रहे तो सोचने और करने के लिए वैसा कुछ बचता ही नहीं, जिसके सहारे उत्कर्ष की सम्भावनाएँ साकार हो सकें ।

जन-जातियों में भूत-प्रेत की, देवी-देवताओं की मान्यताएँ बुरी तरह घर किए हुए हैं और वे उनसे डरने, बचने, मनाने के झंझट में अपने चिन्तन तथा प्रयास का अधिकांश भाग गँवा देते हैं । उसी प्रकार जीवनयापन के साथ जुड़े रहने वाले क्रिया-कलापों में अन्ध-विश्वास और कुप्रचलनों की भरमार भी ऐसा ही गतिरोध उत्पन्न करती है, जिसके कारण वे पिछड़ेपन से उबरने की बात न तो सोच ही पाते हैं और न दूसरों द्वारा इस प्रकार के परामर्श मिलने पर उसका स्वागत करते हैं । यहाँ तक कि सरकारी सहायता से किये जाने वाले शिक्षा प्रसार एवं जन-कल्याण की दृष्टि से उनके निमित्त किए जाने वाले कार्यों में भी उनका समुचित उत्साह एवं सहयोग दृष्टिगोचर नहीं होता ।

अन्ध-विश्वासों में भूत-प्रेत और देवी-देवताओं की चुनौती-मनौती से निपटने में जन-जातियों की कितनी क्षमता नष्ट होती है, उसका कुछ परिचय उस समुदाय में पाये जाने वाले प्रचलनों को देखकर प्राप्त किया जा सकता है ।

जन-जाति में 'खासी' थारू समुदायों की संख्या प्रमुख है । उनमें प्रचलित अन्ध-विश्वासों पर थोड़ी भी दृष्टि डालने से उनसे मिलते-जुलते अन्य समुदायों की मान्यताओं के सम्बन्ध में अनुमान लगाया जा सकता है ।

खासी अनेक देवी-देवताओं की पूजा करते हैं । इन देवताओं के अतिरिक्त छोटे-छोटे देवताओं और अशुभ प्रेतों को भी मानते हैं । छोटे देवताओं के नाम बीमारियों के नाम पर हैं । जैसे हैजे का भूत डाबा, कारीह मलेरिया के भूत का नाम खलाम है । खासी धर्म मुख्यतया इन्हीं बीमारियों का निवारण करने के लिए देवता विशेष की पूजा एवं बलि के साथ आरम्भ हुआ है । पाश्चात्य विद्वान जार्डन ने भी इस मत का समर्थन किया है । जेन कींस ने लिखा है कि "वे लोग चेचक को देवता के रूप में देखते हैं और उसका स्वागत करते हैं ।"

खासी लोगों में युद्ध-देवता की भी आराधना की जाती है । इन्हीं देवता की प्रसन्नता से योद्धा सफल होकर शत्रुओं का सिर पाते हैं । इन्हीं देवताओं को मुर्गे की बलि चढ़ायी जाती है । योद्धा बलि देने के पूर्व वेदी के चारों तरफ, जिस पर तीर कमान, पान और फूल, मुर्गे के पंख रखे जाते हैं, नाचते हैं । बलि देने के बाद, तलवार की नोंक पर मुर्गे के सिर को रखकर तीन बार जोर-जोर से चिल्लाते हैं । नरबलि की प्रथा भी खासी लोगों में प्रचलित थी । उनका विश्वास था कि नरबलि से चूथेलम साँप शान्त रहता है, किन्तु अब नरबलि समाप्त सी हो गई है ।

भारत के पूर्व में हिमालय और बंगाल की खाड़ी से मिलने वाली पहाड़ियों के मध्य अनेक तिब्बती धर्मी भाषा-भाषी जन-जातियाँ रहती हैं । इनमें से कुकी नामक जनजाति लुशाई के पहाड़ों पर रहती है । कुकी के भूत-प्रेत के विश्वास के साथ पथियन नाम के प्रेत पर अटूट निष्ठा है । यही सबकी भलाई व जीव-जन्तुओं का स्रष्टा है । इसके अतिरिक्त अनेक हुआई या राक्षस जंगलों, पहाड़ों और नदियों में निवास करते हैं ।

ल्होटा समुदाय की आस्था पोटसो नामक देवी-देवता पर है । पोटसो आकाश में रहता है । पोटसो की दुनिया आकाश में अनेक हैं जो तह में एक पर एक सजी हैं । इनकी मान्यता है कि पोटसो पृथ्वी के अधिक निकट है और प्रभाव डालता है । पोटसो की आकृति मनुष्य की तरह होती है । इनके पास अनेक सेवक-सेविकाएँ रहती हैं । इनके अनुसार ल्होटा के पोटसो हैं उसी तरह सेमा और अओ के भी पोटसे हैं । समय-समय पर पोटसो पृथ्वी पर आकर गाँव के साधुओं से बात करते हैं । साधुओं को राटसेन कहते हैं । आने के पूर्व राटसेन के पास अपने सेवक भेजकर उन्हें स्वप्न में सूचना देते हैं । आने वाले दिन सभी गाँव वाले अपने दरवाजे बन्द करके सो जाते हैं । राटसेन भी परिवार से अलग एक कमरे में सोता है । पोटसो अपने सेवक के साथ आकर राटसेन के घर के बाहर निर्मित चिह्नों के बारे में बातें करता है । चिह्नों से भविष्य की सूचना प्राप्त की जा सकती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । प्रातः राटसेन ग्रामीणों के चिह्नों को दिखाकर उनका रहस्य बताता है ।

जंगली जानवरों का मालिक 'सिटीगों' माना जाता है । सिटीगों जंगलों में रहता है और इसे कभी-कभी जानवरों को बुलाते सुना भी जाता है । देखने में मनुष्य की तरह, किन्तु उसकी अँगुलियाँ लम्बी होती हैं तथा सारे शरीर पर धब्बे पाये जाते हैं । सिटीगों के ही समान जंगल का दूसरा प्रेत गांगों है । प्रत्येक गाँव का रांगसी नामक अलग देवता होता है । रांगसी की प्रसन्नता से गाँव में अच्छी पैदावार होती है । ल्होटा फसल और जानवरों के देवता के साथ नदी के देवता में भी आस्था रखते हैं । नदी का स्वामी 'कुफ्कू' नामक एक प्रेत होता है, जो बड़ी नदी की तह में रहकर नर मुण्डों का चूल्हा बनाता है । ल्होटा मानते हैं कि उनमें ओमोन और मोगयी नामक दो आत्माएँ रहती हैं । ओमोन मनुष्य के रूप में दिखती है । बदली या वर्षा के समय मनुष्य शरीर में विलुप्त हो जाती है । यह आत्मा पहले ही शरीर को भयंकर रोग के समय छोड़कर मृत्युलोक में चली जाती है । ऐसा विश्वास नागाओं में भी मान्य है । उनके विश्वास के अनुसार इस लोक के नीचे मृत्युलोक है । जिस प्रकार मनुष्य यहाँ रहता है, उसी प्रकार मृतात्माएँ वहाँ रहती हैं । अपने परिवार में स्वप्न में आती हैं और उनकी कुशलता हेतु सदैव तैयार रहती हैं ।

अगामी जन-जाति में भी प्रेत-पूजा के लिए असाधारण उत्साह पाया जाता है । ये अपने प्रेतों को टरटोमा कहते हैं । ये अच्छे भी और बुरे भी होते हैं । टरटोमा को पादरियों ने शैतान बताया तथा इन्हें हानिकारक भी कहा है । प्रेतों में प्रमुख केपेनापूफ हैं । केपेनापूफ को जन्मदाता और सृष्टिकर्त्ता के रूप में मानते हैं । सामान्यतया इसे स्त्री समझते हैं, कुछ आगामी इसे पुरुष भी मानते हैं । केपेनापूफ का निवास आकाश में मानते हैं । अगामी की विश्वसनीय धारणा है कि पवित्रतापूर्वक जीवन बिताने वाला आकाश में निवास करता है तथा उपयोगी प्रेत केपेनापूफ के साथ निवास करने लगता है । 'रटजेह' नामक हानिकारक प्रेत के कारण अकाल मृत्यु होती है । अकाल मृत्यु यदि खून गिरने के कारण हुई तो उसकी मृत्यु का दोष रटजेह को मानते हैं । अगामी के तीसरे प्रेत 'भवेनो' की प्रसन्नता से जानवर, धन में वृद्धि होती है । इसे उत्पादन सम्बन्धी प्रेत कहते हैं । 'टलेपूफ' को हानिकारक मानते हैं । यह पुरुष-औरत-बच्चों को लेकर भाग जाती है तथा उन्हें छिपाकर विवेकशून्य बना देती है । ऐसे लोगों के पता लगने पर उन्हें पुनः होश में लाया जा सकता है । 'टसूखो' तथा 'डजूराबाबी' पति-पत्नी प्रेत हैं । ये नाटे कद के होते हैं और जानवरों के स्वामी माने जाते हैं । इनसे मनुष्यों को डर नहीं रहता । इनकी कृपा से शिकार में जानवर प्राप्त होते हैं । स्वर्ग के रास्ते की रखवाली करने वाला 'मेटसीमा' होता है । शेरों का स्वामी 'केखुरो' है । 'श्रथेपी' एक दूसरी परी है । ये मनुष्यों के घर में रहकर उनकी सहायता करती है । पत्थरों में रहने वाला एक अन्य प्रेत केचीकेरो है । 'टरहोमा' नामक प्रेत के बारे में अगामी को ज्ञान नहीं है । सूर्य के बारे में वे शायद नहीं जानते हैं, किन्तु सम्भवतः वह टरहोमा हो । घर और हल को छूना खड़िया जनजाति की महिलाओं के लिए निषिद्ध है ।

थारू जाति के लोग अब अधिकांश गाँव बसाकर रहने लगे हैं । नये गाँव के बसाते समय नये स्थान पर क्रोस (×) के रूप का एक काठ का खम्भा गाड़ कर उसकी पूजा सब लोग करते हैं । पहले अन्य आदमियों की तरह थारू भी भूत-प्रेत-वृक्ष के उपासक थे, किन्तु अब धीरे-धीरे हिन्दू धर्म के प्रभाव में आने से काली और शिव की पूजा करने लगे हैं । आज भी बीमारी का कारण भूत-प्रेत ही मानते हैं । आज भी बीमार होने पर डॉक्टर को न बुलाकर ओझा को बुलाते हैं । उनका विश्वास है कि ओझा के आदेश से भूत-प्रेतों का दल बुरे प्रेतों को भगाकर बीमारी दूर करता है और यह भी मानते हैं कि ओझा व्यक्ति के शरीर में बुरे प्रेत भेजकर अनिष्ट भी करा सकते हैं । भूत-प्रेत पर इतने अधिक विश्वास के कारण इनकी भूमि को 'डायनों का देश' कहते हैं ।

काली शिव के अतिरिक्त इनके कई प्रमुख देवता हैं जो इनके पूज्य हैं । इनमें रिशेश्वर प्रमुख हैं । जो मानव पुत्र थे, मरकर देवता बन गये थे । इनके अनुसार इनके पिता राजा बेन ने एक दिन इन्हें देश से निकाल कर कहा कि अपने-अपने कुछ साथियों के साथ उत्तर की ओर पहाड़ व जंगल में रहें । उनको रास्ते में जितनी औरतें मिली सबको पत्नी बना लिया और उनसे उत्पन्न लोग थारू कहलाये । हिमालय के पास वे जहाँ रहे उसे थारू देश कहते हैं । उनकी आत्मा अब भी थारू देश के ऊपर मँडराती है और जब कोई थारू यात्रा पर जाता है तो उसकी रक्षा करते हैं । थारू यात्रा पर निकलने के पहले बेन के पुत्र को भेंट चढ़ाकर और लौटने पर माँस, मदिरा आदि देने का वचन देकर जाते हैं । रिशेश्वर बहरे हैं अतएव ये उनसे चिल्लाकर कहते हैं । उनकी मूर्ति नहीं है । मिट्टी के टीले पर मध्य भाग में एक पत्थर यही उनका प्रतीक है । इसी पर थारू प्रसन्न होकर भेंट चढ़ाते हैं । लोहे पर यदि वध किया हुआ मुर्गा इस जोर से पटका जाय कि उसका रक्त बाहर आ जाय तो कहते हैं रिशेश्वर को सर्वाधिक तुष्टि हुई । चढ़ाने वाले को उनका बहुत आशीर्वाद प्राप्त होगा ।

भूत-प्रेतों का एक समूचा संसार एवं समुदाय ही जन-जातियों की जीवनचर्या में अपना स्थान बनाकर बैठ गया है । वे उसके साथ अपने आदन-प्रदान में इतने व्यस्त रहते हैं कि और किसी के साथ तालमेल बिठाने तथा समीपवर्ती दुनिया के साथ व्यवहार साधने की इच्छा तक नहीं उठती । ऐसी दशा में चेष्टा तो फिर बन ही कैसे पड़े ?

जन-जातियों के अतिरिक्त सामान्य निर्वाह करने वाले ग्रामीण जीवन में भी इसी से मिलती-जुलती मान्यताएँ न्यूनाधिक मात्रा में पाई जाती और उन समुदायों को भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भ्रान्तियों में ग्रसित करके उसी प्रकार पिछड़ेपन से जकड़े रहती हैं जिस प्रकार कि जन-जातियों को ।

अवगति से प्रगति की ओर अग्रसर करने के लिए जो भी प्रयत्न किये जायें उनमें एक यह भी होना चाहिए कि जन-जातियों को प्रेत पूजा के भ्रम-जंजाल से मुक्त किया जाय और उनकी धर्मभीरुता को किसी उपयोगी केन्द पर मोड़ने के लिए शिव पूजा, गायत्री पूजा आदि का कोई ऐसा आधार दिया जाय जो श्रद्धा को तो जीवित रखें, पर अन्ध-श्रद्धा को उखाड़ कर फेंक दें ।

अन्ध-विश्वास समाज का घोर पतन कर रहा है

हमारे देश की एक बड़ी विचित्रता है कि एक ओर तो यहाँ ऊँचे से ऊँचे दार्शनिक और बौद्धिक सिद्धान्तों की चर्चा सुनने में आती है और दूसरी ओर मूढ़ से मूढ़ अन्ध-विश्वासों के दृश्य दिखाई पड़ते हैं । संसार के विद्वान् इस देश को ज्ञान की भूमि मानते हैं और उपनिषद् दर्शनों के सिद्धान्तों को पढ़कर मुग्ध होते हैं, पर यहाँ के बड़े-बड़े पण्डित एक छींक हो जाने या कुत्ता के कान फटफटा देने पर भी ठिठक जाते हैं और आवश्यक काम को भी स्थगित कर देते हैं । यहाँ के स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध सब श्रेणियों और वर्गों के लोग अन्ध-विश्वासों पर इतनी अधिक श्रद्धा रखते हैं कि देखकर आश्चर्य होता है । इस प्रकार का वातावरण यहाँ इतना व्यापक है कि आधुनिक शिक्षा प्राप्त और नये विचारों के कहे जाने वाले लोग भी उससे सर्वथा मुक्त नहीं रह सकते और घर के पुराने संस्कारों के वश या दूसरों की देखा-देखी अन्ध-विश्वासों को मान्यता देते ही हैं ।

उदाहरण के लिए आप मुहूर्त-सम्बन्धी विचारों को लीजिए । छोटा-बड़ा कोई कार्य करना हो, ऐसे लोग सबसे पहले उसके लिये 'शुभ मुहूर्त' पूछने को पण्डित जी के पास दौड़े जाते हैं । जन्म से मरण तक की जितनी सामाजिक क्रियाएँ और संस्कार हैं उनके लिए तो मुहूर्त देखा ही जाता है, पर किसी काम के लिए दस-बीस कोस की यात्रा करने, नई दुकान खोलने, नये मकान में रहने के लिए भी मुहूर्त देखा जाता है । यहाँ तक कि अनेक व्यक्ति नये कपड़े पहनने तथा स्त्रियाँ चूड़ी पहनने के लिए भी शुभ और अशुभ दिन का ख्याल रखते हैं । इसका परिणाम यह होता है कि अनेक आवश्यक कामों में विलम्ब होने से हानि हो जाती है और बहुत से कार्य सुविधाजनक समय को छोड़कर असुविधापूर्वक करने पड़ते हैं । आप अपने जन्मोत्सव संस्कार के लिए दस-बीस मित्रों को बुलाकर जलपान कराना चाहते हैं । गर्मी की ऋतु में सुबह दस बजे तक सबको सुविधा और आराम रहता है, पर यदि पण्डित जी ने शाम के तीन चार बजे का मुहूर्त बतला दिया तो कोई लू और गर्द-गुबार के समय आना या ज्यादा ठहरना पसन्द न करेगा और आपका उत्सव फीका हो जायेगा ।

शकुन के सम्बन्ध में भी ऐसी ही बात देखने में आती है । छींक आने, बिल्ली के रास्ता काट जाने, भरा या खाली पानी का घड़ा सामने से आते देखकर लोग कार्य की सफलता-असफलता की भावना पहले से ही कर लेते हैं और अकारण ही कार्य को स्थगित कर अपनी हानि करते हैं । ऐसे लोग तेली, चर्मकार, चाण्डाल आदि जातियों के व्यक्तियों का दर्शन भी अशुभ मानते हैं और किसी काम में लिये जाते समय सामने ही ये मिल जाएँ तो बुरा मानते हैं । अगर काना आदमी दिखलाई दे तो वह भी अपशकुन करने वाला बन जाता है ऐसे लोग यदि किसी बीमार के लिए वैद्य को बुलाने जाते हों और रास्ते में कोई अपशकुन हो जाय तो पहले से ही बीमार के मरने का निश्चय कर लेते हैं ।

छोटी श्रेणी के लोगों में और विशेषतः स्त्रियों में जादू-टोना, मन्त्र-तन्त्र, झाड़-फूँक, नजर-गुजर का बड़ा दौर-दौरा है और इनके बड़े-बड़े कुपरिणाम समय-समय पर देखने में आते हैं । यहाँ की स्त्रियाँ अपने छोटे बच्चों के बीमार हो जाने पर उनकी चिकित्सा कराने के बजाय नजर लग जाने का ही सन्देह करती हैं और वैद्य या डॉक्टर से दवा लाने के बजाय ओझा और स्यानों से झाड़-फूँक कराती हैं । वे लाल मिर्च की धूनी देकर भी नजर का पता लगाती हैं जिससे सब को खाँसी आने लगती है । इस प्रकार की मूढ़ता के कारण बहुत कम उम्र के कमजोर बच्चे तो मर भी जाते हैं । अनेक स्त्रियाँ एक दौने या मिट्टी के बर्तन में फूल, बताशा, सिंदूर आदि कई चीजें रखकर चौराहे पर रख आती हैं और समझती है कि ऐसा करने से बच्चे की बीमारी किसी और व्यक्ति के पास चली जायेगी । इस प्रकार की मूढ़ताओं का परिणाम यह होता है कि बीमारी बढ़ जाती है और फिर इलाज करने से भी कोई नतीजा नहीं निकलता ।

भूत, पलीत, जिन्द, प्रेत आदि के विषय में जितने किस्से यहाँ सुनने में आते हैं उतने संसार के किसी देश में नहीं सुने जाते । खेद है कि आज निराकार परमात्मा की उपासना करने वाली जाति भूतों (मुर्दों) की पूजा कर रही है और उनको अपने सुख-दुःख, सौभाग्य-दुर्भाग्य का निर्णायक मान बैठी है । भूतों का भय यहाँ के पचास प्रतिशत लोगों में समाया हुआ है । इस काल्पनिक भय से लोग बड़ी हानि उठाते रहते हैं । जब लोग यह समझ लेते हैं कि अमुक बीमारी भूत-प्रेत के कारण उत्पन्न हुई है तो वे लाख इलाज करने पर भी स्वस्थ नहीं होते, जब तक कि कोई स्याना-ओझा उनको भूत के हटा देने का विश्वास न करा दे । स्त्रियों के सिर पर भूत आने की जो घटनाएँ गाँवों में प्रायः होती रहती हैं उनसे उनके स्वास्थ्य, मन और चरित्र का बड़ा अधःपतन हो जाता है ।

यहाँ की जनता में इस प्रकार के अन्ध-विश्वासों ने इतना अधिक जोर पकड़ रखा है कि उसके कारण सदा तरह-तरह की भयंकर घटनाएँ घटित होती रहती हैं । कुछ समय पहले एक विद्यार्थी ने रावण के सिर काटने और पुनर्जीवित हो जाने की कथा पढ़कर महादेव जी के सामने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपना सिर चढ़ाने की चेष्टा की, पर गर्दन का कुछ भाग कटते ही वह यंत्रणा से बेहोश होकर गिर गया । बाद में चिकित्सा करके उसे बचाया गया । और भी कई लोग इसी प्रकार अपना बलिदान करते हुए देख गये हैं जो या तो अधिक घायल होकर मर गये या पुलिस द्वारा आत्महत्या के अपराध में गिरफ्तार होकर जेल की सजा पाते हैं । ऐसे लोग किसी से यह सुन चुके होते हैं कि पृथ्वीराज के कविचन्द ने देवी के आगे अपनी जिह्वा काटकर वरदान पाया था और 'पृथ्वीराज रासो' जैसा मशहूर ग्रन्थ लिखा था । गोस्वामी तुलसीदास जी के सम्बन्ध में यह किस्सा मशहूर है कि वे शौच से बचा हुआ जल एक बबूल के पेड़ पर डाल दिया करते थे । इससे उस पर रहने वाला एक प्रेत उन पर प्रसन्न हो गया और उसकी सहायता से उनको हनुमान जी के और फिर रामचन्द्रजी के दर्शन हो गये । इस पर विश्वास करके अनेक लोग शौच जाते समय अपनी पूरी सफाई न करके भी पेड़ों की जड़ों में पानी डालते देखे गये हैं । इस प्रकार की मूढ़ताओं का अन्त नहीं है और उनके कारण अनेक अनर्थों की सृष्टि होती रहती है ।

हिन्दू धर्म में ३३ करोड़ देवता माने गये हैं और सौ-पचास देवता तो मन्दिर बनाकर पूजे जाते हैं, पर इस अन्ध-विश्वास की बलिहारी है कि इतने से भी इनका पेट नहीं भरता, नये-नये देवताओं का आविष्कार करके उनकी पूजा भी आरम्भ की जाती है । कुएँ वाला, चौराहे का देवता, पेड़ों के देवता आदि की भी बड़े जोरों से पूजा की जाती है । इतना ही नहीं मुसलमानों के पीरमर्द, गाजिमियाँ, जखैया, सैयद आदि मुसलमानी देवताओं की पूजा भी लाखों हिन्दू स्त्री-पुरुष करते रहते हैं । हिन्दू संस्कृति की दृष्टि से यह पतन की पराकाष्ठा है । एक तरफ मुसलमान को गौभक्षक, यवन, म्लेच्छ कहना दूसरी तरफ उनके ऐसे देवताओं को पूजना जिनको असली मुसलमान भी स्वीकार नहीं करते । इसका कारण यह ही है कि हिन्दुओं में अन्ध-विश्वास की इतनी अधिक प्रबलता है कि धर्म के सम्बन्ध में उन्होंने बुद्धि को गिरवी रख दिया है और जो कोई जैसे बहका देता है, वैसे ही ईंट-पत्थरों के समाने नाक रगड़ने को तैयार हो जाते हैं । हमने सुना है कि एक देहाती मेले में एक भिखारी और कुछ साधन न पाकर एक मील के पत्थर पर सिंदूर लगा कर उसकी पूजा करने लगा । उसे देखकर बहुत से ग्रामीण उसी पर भेंट चढ़ाने लग गये और उसने दस-पाँच रुपये कमा ही लिए ।

स्त्रियों की ऐसी मूढ़ता का तो कहीं अन्त ही नहीं है । अभी हाल में मुंगेर में यह अफवाह फैलाई गई कि जो सन्तानवती महिला अपने पिता के पैसे से एक लड्डू खरीद कर चण्डी के मन्दिर में खायेगी उसी की सन्तान सुरक्षित रहेगी । इस किंवदन्ती ने ऐसा जोर पकड़ा कि मुंगेर जिले की ही नहीं दूर-दूर की स्त्रियाँ वहाँ आकर लड्डू खाने लगीं । मंगलवार इसके लिए विशेष शुभ दिन माना गया और उस दिन सभी रेलगाड़ियाँ और बसें भरी हुई आने लगीं । कुछ समय बाद इस अफवाह में यह संशोधन कर दिया गया कि वह लड्डू चण्डी स्थान के बाहर का नहीं होना चाहिए । इससे वहाँ के दुकानदारों की बिक्री खूब बढ़ गई है और यह अन्ध-विश्वास दूर-दूर तक फैलता जाता है । मुंगेर में जो लड्डू खाने का कार्यक्रम चला है उसमें जिले की क्यूल नदी के पास के ग्रामों में एक और अजीब रस्म की जाने लगी है । पुत्रवती महिला मंगल के दिन क्यूल नदी में स्नान करके अपने आँगन में लड्डू खाकर अपने पति को बाएँ पाँव से दो लात लगाती है । पुत्र के लोभ से पति इस अपमानजनक व्यवहार को सहन कर लेते हैं, पर इसे बाहर प्रकट नहीं होने देते । वैसे वे इस प्रथा की आलोचना करके एक दूसरे की हँसी उड़ाते रहते हैं पर स्त्रियों के अन्ध-विश्वास के सामने उनकी कुछ नहीं चलती ।

अभी बनारस के पास किसी गाँव में एक स्त्री घरों में आग लगाती पकड़ी गई थी । पुलिस के जाँच करने पर उसने स्वीकार किया कि उसके संतान नहीं होती । एक साधू ने उसे बतलाया कि सात घरों में आग लगाने पर उसके संतान हो जायेगी । इसी से वह ऐसा काम कर रही थी और इससे पहले कई घरों में आग लगा चुकी है । ऐसी ही घटनाएँ उत्तर प्रदेश तथा बिहार के और भी कई ग्रामों में घटित हो चुकी हैं जिनमें काफी सम्पत्ति भी नष्ट हो चुकी है । ये दस पाँच घटना तो ऐसी हैं जिनमें आग लगाने वाली स्त्रियाँ किसी प्रकार पकड़ली गईं और उनका भेद खुल गया । सम्भव है ऐसी अन्ध-विश्वासी स्त्रियों द्वारा और भी अग्नि-काण्ड होते हों और लोग किसी पर सन्देह न होने से उनका कारण कोई आकस्मिक घटना मान लेते हों ।

देवी-देवताओं के प्राकट्य की घटनाएँ भी प्रायः साल में दो-चार बार होती ही रहती हैं और उनके द्वारा धूर्त लोग अन्धी जनता से हजारों रुपये बटोर कर गुलछर्रे उड़ाते हैं । अब से कुछ वर्ष पूर्व इटावा के अहेरीपुर नामक गाँव में एक ठाकुर की लड़की के देवी बन जाने का समाचार छपा था । कहते थे कि उसके आशीर्वाद और प्रसाद से अनेक लोगों की मनोकामनाएँ सिद्ध हो गईं । इस पर उस छोटे से गाँव में हजारों आदमियों की भीड़ पहुँचने लगी और देवी की पूजा में सैकड़ों रुपया प्रतिदिन चढ़ावे में आने लगे । कुछ समय पश्चात देवी के लिए एक मन्दिर भी बना दिया गया और उसके परिवार की स्थिति भी सम्पन्न हो गई । इसके बाद एक वर्ष के भीतर ही उसी प्रदेश में कई लड़कियाँ इसी प्रकार देवी बना दी गईं जिनमें से एक कुम्हार की लड़की थी, पर इन सब देवियों को अहेरीपुर की देवी के समान सफलता नहीं मिली और तब यह देवियों का सिलसिला खत्म हो गया ।

इसके कुछ समय पश्चात् कटक (उड़ीसा) के एक गाँव में एक बालक द्वारा कोई सर्व रोग नाशक जड़ी-बूटी बाँटे जाने का समाचार फैला । कहा जाता है कि कोई साधू उस बालक को जंगल में ढोर चराते समय कोई ऐसी पेड़ की छाल बतला गया है जिससे बड़े-बड़े असाध्य रोग भी अच्छे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाते हैं । बस अन्ध-विश्वासियों की भीड़ दौड़ पड़ी उस गाँव को, जिससे जल्दी से जल्दी इस देवी चमत्कार से लाभ उठा लिया जाय । न मालूम इसकी जड़ में क्या बात थी कि दस-बीस दिन में ही यह चमत्कार देशव्यापी रूप में फैल गया और कानपुर, नागपुर जैसे दूरवर्ती स्थानों के रोगी भी वहाँ पहुँचने लगे । पर वह गाँव छोटा-सा ही था, वहाँ हजारों की भीड़ पहुँचने से उन सब को पानी मिल सकना भी कठिन हो गया । टट्टी-पेशाब की अधिकता हो जाने से गन्दगी बढ़ गई और शीघ्र ही उस भीड़ में हैजा फूट पड़ा । तब सरकार का ध्यान इस तरफ गया और उसने उस बालक तथा उस षड्यंत्र को रचने वाले कुछ अन्य लोगों को पकड़ कर इस मूढ़ता का अन्त किया, पर फिर भी सैकड़ों ऐसे व्यक्ति जो रोग-मुक्त होने आये थे उस गाँव में और निकटवर्ती स्टेशनों पर हैजा के शिकार हो गये और पचासों मनुष्य अकाल में ही पानी के लिए तड़प-तड़प कर उस कुदेश में अन्ध-विश्वास की वेदी पर अपने प्राण दे बैठे ।

अभी अमृतसर में एक व्यक्ति ने अपने दो वर्ष पूर्व मरे हुए गुरु को समाधि से निकलवा कर घोषणा कर दी कि वे तीन सप्ताह में पुनर्जीवित हो जायेंगे । अन्ध-विश्वासियों की भीड़ वहाँ दर्शनों को आने लगी और पाँच-सात दिन में ही दस हजार रुपया चढ़ावा आ गया, पर इस बीच में पुलिस ने इस मामले की जाँच की और सारी घटना को निराधार तथा ठग विद्या पाकर चेला लोगों को गिरफ्तार कर लिया । अनेक बार कुछ कुओं का पानी 'अमृत स्वरूप' बन जाने की अफवाह फैला दिये जाने से वहाँ भी बड़े-बड़े मेले लग चुके हैं और ठगने वाले हजारों रुपये की कमाई कर चुके हैं । ऐसी घटनाएँ इतनी अधिक हैं कि उनका पूरा वर्णन कर सकना असम्भव है ।

कुछ लोगों ने यहाँ ताँबा से सोना बना देने और नोटों को दुगना बना देने का धन्धा उठा रखा है । ये लोग गाँवों और शहरों में घूमते हुए अपनी करामात का जिक्र करते रहते हैं । जो अन्ध-विश्वासी उनके चँगुल में फँस जाते हैं, उनसे कहते हैं कि जिस प्रकार दूध का दही जमाने के लिए उसमें दही का जामन डाला जाता है उसी प्रकार ताँबे का सोना बनाने के लिए उसमें भी आधा या चौथाई सोना शामिल करना पड़ता है । मूढ़ लोग इन बातों पर विश्वास करके अपने घर का सोना निकाल कर उनको दे देते हैं और वे सब धातुओं को आग में रखने तथा दवायें मिलाने का ढोंग करते-करते सोने को गायब कर देते हैं और स्वयं भी नौ दो ग्यारह हो जाते हैं ।

इसी प्रकार नोटों को दूना करने वाले एक दो बार दस या सौ के नोट को दूना करके दिखा देते हैं और फिर उससे दो-चार हजार के इकट्ठे नोट लेकर किसी बहाने से चम्पत हो जाते हैं । ऐसी घटनाएँ प्रतिवर्ष हजारों की तादाद में समस्त देशभर में होती रहती हैं तो भी अन्ध-विश्वास की माया ऐसी प्रबल है कि आज तक लोगों की आँखें नहीं खुलतीं और अब भी ऐसे ठगों का रोजगार बखूबी चल रहा है ।

हिन्दू समाज में अन्ध-विश्वासों और मूढ़ताओं की कोई गिनती नहीं है जिनका फल अनेक बार महाभयंकर निकलता है । कुछ समय पहले औरैया (इटावा) में एक व्यक्ति ने घर में गढ़ा पुराना धन ढूँढ़ने के लिए किसी तांत्रिक के कहने से एक तीन वर्ष के बालक को काटकर अग्नि में हवन कर दिया । अभी गया के पास गुरारु नामक गाँव में लोगों ने डायन समझकर एक युवती की हत्या कर डाली और लाश को गाढ़ दिया । जब उसका पति परदेश से आया तो इस काण्ड की उसको खबर मिली और रिपोर्ट करने पर पुलिस ने शव को खोद कर निकाला । गिरनार के पास अम्बाजी के मन्दिर में एक भक्त नाचते-कूदते सचमुच आपे से बाहर हो गया और एक दो आदमियों को मारपीट कर नीचे घाटी में कूद कर अपनी जान दे दी । कानपुर में एक व्यक्ति तीन बालकों को बहकाकर एक सुनसान जगह में ले गया और उनके बाल काट लिए जिसका उद्देश्य कोई टोना-टोटका करना बतलाया जाता है ।

ये अन्ध-विश्वास व्यक्तिगत दृष्टि से ही हानिकारक नहीं होते, समस्त समाज का इससे पतन होता है और प्रगति के मार्ग में बाधा पड़ती है । जो लोग किसी के छींकने को बुरी बात समझ कर लड़ने-मरने को तैयार हो जाते हैं । वे मिल-जुलकर किस बड़े काम को सम्पन्न करने में कब समर्थ हो सकते हैं ? जो अपनी भलाई के लिए दूसरों के घरों में आग लगाने में संकोच नहीं करते, वे समाज के साथ शत्रुता का कार्य करने से कैसे रुक सकते हैं ? जो लोग बनावटी देवी-देवताओं पर हजारों रुपये भेंट चढ़ाकर आशीर्वाद और वरदान पाने के लालच में रहते हैं, वे परोपकार के कामों में कब आर्थिक सहायता करते हैं ? इस तरह के महास्वार्थी और मतिहीन लोगों से जो समाज भरा हुआ है, वह सर्वहितकारी किसी कार्यक्रम पर कब आगे कदम बढ़ा सकता है ? वास्तव में अन्ध-विश्वास व्यक्तिगत और सामुदायिक प्रगति में एक बड़ी बाधा के समान है । जब तक करोड़ों व्यक्तियों का धन, समय और परिश्रम इस प्रकार के उलटे, उन्नति विरोधी कामों में लगता रहेगा, तब तक हितकारी और कल्याणकारी कार्यों की पूर्ति की आशा नहीं की जा सकती । इस दृष्टि से देश भर की एक बहुत बड़ी जनसंख्या में फैले हुए ये तरह-तरह के अन्ध-विश्वास उपेक्षा के विषय नहीं है और इनको मिटाने के लिए हर प्रकार से प्रयत्न करते रहना सब समाज हितैषियों का कर्त्तव्य है ।

अन्ध-विश्वास समाज के लिए घातक है

प्रगति की होड़ में अन्य देशों की महिलाएँ पुरुष के समानान्तर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ रही हैं, वहीं भारतीय नारी अब भी अन्ध-विश्वास, कुरीतियों के जाल-जंजाल में भटक रही है, जिसके कारण आये दिन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिवार एवं समाज को संकटपूर्ण स्थिति का सामना करना पड़ता है ।

तंत्र-मंत्र, ओझा के नाम पर धार्मिक क्षेत्र में जो आडम्बर एवं शोषण चल रहा है, उसका शिकार अधिकांशतः नारी समाज ही होता है । नारियों में सहज रूप में पाये जाने वाली धर्मभीरुता एवं भावुकता का ये ठग शोषण करते हैं । जिसके परिणामस्वरूप उन्हें कभी-कभी जीवन तक से हाथ धोना पड़ता है ।

बिहार के चम्पारन जिले की घटना है—गाँव के एक परिवार में लड़के का जन्म हुआ । सूरज पूजा के दिन पारिवारिक परम्परा के रूप बच्चे को ठंडे पानी से स्नान कराया गया । जाड़े का मौसम, नवजात शिशु ठंडक के प्रभाव से बुखारग्रस्त हो गया । घर की बूढ़ी सास ने अन्य महिलाओं की सलाह से ओझा को बुलाने की योजना बनायी । ओझा ने प्रेत की छाया बताकर बच्चे के शरीर को गरम लोहे से दागने को निर्देशन दिया । बच्चे की माँ ने उसका विरोध किया परन्तु महिलाओं ने एक नहीं सुनी । उस सुकोमल शिशु के शरीर को नृशंशतापूर्वक गरम लोहे की तीली से स्पर्श कराया गया । बच्चे के रोने, चीत्कार करने का कोई प्रभाव इन विवेकहीनों पर नहीं पड़ा । शारीरिक क्षमता के अभाव में बच्चा दो-तीन दिन बाद मर गया ।

ओझाओं की झाड़-फूँक के नाम पर न जाने कितनी माताओं को अपने बच्चों से हाथ धोना पड़ता है ।

आज देवी-देवता के नाम पर समाज में अंध-विश्वास फैला है, उसके परिणामस्वरूप आये दिन जीवन संकट उत्पन्न हो जाता है । ऋषियों ने मानव में दैवीय वृत्तियों के अभिवर्द्धन एवं व्यक्तित्व के परिष्कार के लिए विभिन्न शक्तियों के प्रतीक देवी-देवताओं का निर्माण किया । कालान्तर में उस पवित्र क्षेत्र में भ्रान्तियों ने जन्म लिया । देवी-देवता के नाम पर तथाकथित धर्माचार्यों ने बलिदान जैसी अमानवीय प्रथा का प्रचलन किया ।

शास्त्रों में बलिदान का अभिप्राय पशु-प्रवृतियों की बलि से है, जबकि विवेकहीन व्यक्तियों ने, उसका अभिप्राय जीव हत्या से लगाया ।

पशु बलि प्रथा हमारी संस्कृति पर लगा हुआ कलंक है । यह कलंक आज भी धार्मिक कुप्रथा के रूप में विभिन्न स्थानों पर लोगों को अपनाते हुए देखा जा सकता है ।

कभी-कभी तो देवी-देवता को प्रसन्न करने और उनसे मनोकामनाएँ पूरी कराने के लिए मानव-बलि तक देने में नहीं हिचकते ।

बाँदला के निकट देवी चामुंडा के मंदिर में एक महिला बच्चे की बलि देती हुई पकड़ी गयी । उस अमानवीय कृत्य का कारण पूछे जाने पर उसने उत्तर दिया कि देवी ने उसको स्वप्न दिया है कि एक लड़के की बलि देने पर उसे पर्याप्त धन की प्राप्ति होगी ।

पुरुषार्थ के द्वारा धन कमाया जा सकता है, उसके लिए प्रयास भी किया जाना चाहिए । धन प्राप्ति के लिए इस प्रकार अविवेकपूर्ण रास्ता अपनाना सर्वथा अनुचित है । वह मानव की विचारशीलता पर लगा कलंक है । ये भ्रान्तियाँ न जाने कब तक हिन्दू समाज को खोखला बनाती रहेंगी तथा ऐसी ही हृदय विदारक घटनाएँ घटित होती रहेंगी ।

इन अन्ध मान्यताओं में नारी की अशिक्षा एवं विवेक का अभाव मुख्य कारण है । शिक्षा के अभाव में औचित्य एवं अनौचित्य को परखने की क्षमता इनमें नहीं होती है । अपनी सहज श्रद्धा को इन अन्ध-विश्वासों में बर्बाद करती रहती हैं जिससे एक से एक बढ़कर संकटों का सामना करना पड़ता है ।

कानपुर के एक परिवार में बहू की दस वर्ष से कोई सन्तान नहीं हो रही थी । इस पर बहू को सारे परिवार के ताने सुनने पड़ते थे । बेचारी दुःखी भी बहुत रहती थी । सास को किसी ने सलाह दी कि वधू को स्नान करके आने पर झाड़ू से तीन बार सिर पर मारने से सन्तान की उत्पत्ति होगी । उसने शास्त्र वचन मानकर बिना विवेक के प्रयोग किये । उस टोटके का प्रयोग करना उपयुक्त समझा । दूसरे दिन बहू के स्नान करके आते ही सास ने झाड़ू से सिर पर प्रहार किया । बहू इस आकस्मिक प्रहार से असन्तुलित हो उठी । उसने अपना सिर उठाकर इस अप्रत्याशित घटना का कारण जानना चाहा कि सास ने बिना रुके और भी जोर लगा कर झाड़ू का प्रहार किया । फलस्वरूप इस बार झाड़ू सिर पर न लगकर आँख में लगी । रक्त बहने लगा आँख फूटी और ज्योति सदा के लिए जाती रही ।

पिछले दिनों 'रायपुर' जिले में एक ग्राम की महिला ने देवी को प्रसन्न करके पुत्र पाने की लालसा से अपनी डेढ़ वर्ष की पुत्री की हत्या करके उसका सिर देवी को चढ़ा दिया । उसके धड़ को स्थानीय खेत में दबा दिया । पुलिस द्वारा पकड़े जाने पर उसने बयान दिया कि कुछ दिनों पहले किसी ओझा ने कहा था कि यदि अपनी पुत्री की बलि देवी के समक्ष दे तो उसे पुत्र की प्राप्ति होगी । उसने पुत्र प्राप्ति की कामना से प्रेरित होकर अपनी लड़की की बलि दे दी ।

माँ एक पुत्र की प्राप्ति के लिए अपनी दूसरी मासूम पुत्री की बलि दे सकती है, ऐसा सामान्यतः सोचा भी नहीं जा सकता है ।

देवी के नाम पर यह कैसी भ्रान्तियाँ फैल रही हैं ? जगत्-जननी माँ जो सबकी रक्षक है । उसके प्रति यह मान्यता कि यह बलि लेकर प्रसन्न होती है, अविवेकपूर्ण है । देवीय तत्व सबकी रक्षा एवं कल्याण ही करते हैं । इनके प्रति इन भ्रान्तिपूर्ण धारणाओं के पीछे न तो कोई औचित्य है न विवेकयुक्त कारण । इन अन्ध-विश्वासों का बहिष्कार होना ही चाहिए अन्यथा न जाने कितने मासूम इनके शिकार होते रहेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जोगीवाड़ा के एक सुरक्षित परिवार में नई वधू के घर में प्रवेश करते ही शीतला देवी की पूजा प्रसन्नता के रूप में सास द्वारा माँस-भात खिलाये जाने की परम्परा है । चाहे वह शाकाहारी ही क्यों न हो । लड़के की शादी के उपरान्त नववधू ने जैसे ही घर में प्रवेश किया सास ने इस परम्परा का पालन किया । बहू शाकाहारी थी । उसके विरोध का उस पर कोई प्रभाव न पड़ा तथा बहू को माँस-भात खाने के लिए बाध्य किया गया । इसके परिणामस्वरूप बहू को उल्टियाँ होने लगीं । घर वालों ने डॉक्टर को भी बुलाने से इन्कार कर दिया । इस भय से कि डॉक्टर के आने से शीतला देवी नाराज हो जायेंगी । उल्टियाँ रुकी नहीं और रक्त आना प्रारम्भ हो गया । एक दिन इसी व्यथा से पीड़ित रह कर वह सदा के लिए संसार से चल बसी ।

बनारस में सास अपनी बहू को साथ लिए किसी के यहाँ विवाह में जा रही थी । रास्ते में बहू का पल्ला एक मेहतरानी से छू गया । बहू गर्भवती थी । सास ने यह सोचकर कि पल्ला छूने से ही गर्भस्थ शिशु को कुछ न हो जाय ओझा को बुलाया । ओझा ने बहू को तीन बार ठंडे पानी से नहलाने की सलाह दी । साथ ही साथ बहू के पहने गये कपड़े को जलाकर उसकी राख को घोल बनाकर पीने को कहा । ओझा के वचनों को मानकर सास ने जबरन बहू को उस गंदे पानी को पिलाया तथा उस जाड़े की रात में ठंडे पानी से नहाने के लिए बाध्य किया । बहू को ठंडे पानी से नहाने के कारण बुखार हो गया ।

सुबह डॉक्टर द्वारा दिखाये जाने पर उसने बताया कि ठंड लगने से और पेट में विषाक्तता भर जाने के कारण पेट में बच्चा मर गया है । मरे हुए बच्चे को ऑपरेशन द्वारा बाहर निकाला गया, परन्तु उस मरे बच्चे का जहर माँ के शरीर में फैल चुका था । अतः चौबीस घंटे के उपरान्त स्त्री ने भी दम तोड़ दिया ।

समाज को ये कुरीतियाँ, अन्ध-विश्वास सदियों से कमजोर बनाती चली आ रही हैं । नारी वर्ग की अशिक्षा एवं विवेक के अभाव से इनको पोषण मिलता है । जन-मानस का कर्त्तव्य है कि इन कुरीतियों, अन्ध-विश्वासों के कीचड़ से समाज को विशेष तथा पिछड़े नारी वर्ग को बाहर निकाले ।

अन्ध-विश्वास के अन्धड़ से निकलें

वैज्ञानिक प्रगति पृथ्वी की सीमाओं को लाँघती हुई अंतरिक्ष में प्रवेश कर चुकी है । सतत् गहन शोध द्वारा वैज्ञानिक प्रकृति के रहस्यमय परतों को उधेड़ने में सचेष्ट हैं तथा एक से एक बढ़कर सफलताएँ अर्जित कर रहे हैं । एक ओर जहाँ मानवीय बुद्धि सदियों से चली आ रही विवेकहीन परम्पराओं, मान्यताओं को तोड़ने में लगी है वहीं दूसरी ओर भारतीय नारी अब भी अंध-विश्वासों कुरीतियों एवं अंध-मान्यताओं के जाल-जंजाल में भटक रही है जिससे आये दिन दुर्घटनाएँ हो रहीं हैं । नारी को स्वयं ही इन अन्ध-विश्वासों को तोड़ने के लिए आगे आना चाहिए अन्यथा इन मान्यताओं के कारण होने वाली दुर्घटनाओं का रोका जाना मुश्किल है ।

धर्म के नाम पर तात्कालिक फल देने वाले ठग आज धार्मिक जगत में चारों ओर दिखायी दे रहे हैं । इनके तंत्र-मंत्र की शिकार महिलाएँ ही अधिक होती हैं जो शारीरिक, मानसिक बीमारियों का इलाज डॉक्टरों से कराने की अपेक्षा तथाकथित तांत्रिक के चक्कर में पड़कर धन और स्वास्थ्य दोनों गँवा बैठती हैं ।

घटना बॉम्बे की एक अग्रवाल परिवार की है । उसकी पत्नी का तीन-चार बार गर्भपात हो गया । छुट-पुट इलाज से लाभ न होने पर उसके एक मित्र ने पत्नी को किसी तांत्रिक से दिखाने की सलाह दी । उसकी सलाह मानकर उस व्यक्ति ने पत्नी को तांत्रिक से दिखाया । तांत्रिक ने कहा " कि पत्नी पर किसी प्रेतात्मा की छाया है जो गर्भ में ही बच्चे को नष्ट कर देती है" तांत्रिक ने प्रेतात्मा से मुक्ति दिलाने के लिए पाँच सौ रुपये की माँग की तथा एक ताबीज दिया । ताबीज देने के साथ ही साथ उसने यह चेतावनी दी कि ताबीज पहनने के बाद किसी डॉक्टर या वैद्य का कोई इलाज न करें अन्यथा उसका प्रभाव नष्ट हो जायेगा । चार माह तक ताबीज बाँधने का निर्देशन देकर उसने औरत को वापस भेज दिया । तांत्रिक की बात पर विश्वास करके डॉक्टरी इलाज भी बन्द कर दिया । दो-तीन माह के उपरान्त उसकी गर्भवती पत्नी को रक्त स्राव शुरू हो गया और देखते ही देखते वह मरणासन्न स्थिति में पहुँच गई । ताबीज का प्रभाव नष्ट होने के डर से उसने किसी डॉक्टर को नहीं दिखाया । जब पत्नी के हाथ-पैर ठंडे होने लगे तो मित्रों के बहुत समझाने पर डाक्टर की शरण ली । बड़ी चेष्टा के उपरान्त उस महिला की जान बचायी जा सकी ।

धर्म और अध्यात्म का अपना विज्ञान है । इस राजमार्ग पर चलते हुए क्रमशः अपने व्यक्तित्व में परिष्कार किया जा सकता है—सिद्धि, चमत्कार इसी परिष्कृत व्यक्तित्व के परिणाम हैं, यह समय-साध्य और श्रम साध्य है । इसको न समझने से तात्कालिक लाभ के चक्कर में पड़कर व्यक्ति उन भौतिक उपचारों से भी वंचित रह जाता है जो उसे सहज ही उपलब्ध हैं जैसा कि उपर्युक्त घटना से स्पष्ट है ।

शहर की अपेक्षा गाँव की महिलाएँ इन अंध-विश्वासों की अधिक शिकार हैं । फैजाबाद जिले के एक गाँव की ऐसी ही घटना प्रकाशन में आयी है कि एक महिला ने अपनी दो वर्षीय कन्या को 'नजर' से बचाने के लिए उसके गले में मेढक का बच्चा कपड़े में सींकर बाँध दिया बच्ची डर गयी तथा पूरे दिन निरन्तर रोती रही, रात को तेज बुखार आ गया । शाम को डॉक्टर को दिखाने पर जब डॉक्टर ने गले में कपड़े से बँधे मेढक को निकलवाया, तब कहीं बच्ची स्वस्थ हुई और उसकी जान बची ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाज की जितनी क्षति आक्रमणकारियों, आतताइयों से हुई है, उससे कहीं अधिक इन अन्ध-विश्वासों, कुरीतियों एवं विवेकहीन मान्यताओं से उठानी पड़ी है । अब भी इन कुरीतियों के प्रति नारी समाज में कितनी श्रद्धा है, जिसके दुष्परिणाम स्वरूप जीवन से हाथ तक धोना पड़ता है ।

ऐसी ही एक घटना बिहार के भागलपुर जिले की है जहाँ ऐसी मान्यता है कि स्त्रियाँ यदि करवा चौथ का व्रत करें तो उससे पति की आयु बढ़ती है । एक किसान के परिवार की सास ने बहू को व्रत रखने को कहा । न चाहते हुए भी बेचारी बहू दबाव वश व्रत के लिए राजी हो गई । व्रत में तो अन्न-जल कुछ ग्रहण नहीं करना था । बेचारी स्त्री किसी तरह दोपहर तक भूख-प्यास सहती रही, परन्तु जब असह्य हो गया तो अपनी सास से बोली "माता जी अब तो भूख-प्यास से नहीं रहा जाता, अन्न न सही, परन्तु हमें थोड़ा-सा जल तो पिला दीजिए, मेरा कण्ठ सूखा जाता है, आँखों के आगे अँधेरा छा रहा है । सास ने जल पिलाने से यह कहकर इन्कार कर दिया कि जब तक रात में चन्द्रमा के दर्शन नहीं हो जाते अन्न, जल नहीं ग्रहण करना है अन्यथा मेरे बेटे की आयु घट जायेगी तथा विघ्न उत्पन्न होगा ।

बेचारी की भूख-प्यास बढ़ती गई तथा शाम को बेहोश होकर गिर पड़ी । लड़का अपने काम से वापस शाम को घर आया । स्त्री की गम्भीर स्थिति देखकर डॉक्टर को बुलाने दौड़ा, परन्तु डॉक्टर के आने तक स्त्री की मृत्यु हो चुकी थी ।

व्रत-उपवास का उद्देश्य शारीरिक एवं मानसिक शोधन है । व्यक्ति अपनी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता के अनुसार स्वेच्छापूर्वक अपनाता है । व्रत के नाम पर अविवेकपूर्वक अपनाया गया क्रम हानिकारक ही सिद्ध होता है । उपवास का अपना विज्ञान है जिसे धार्मिक कट्टरता से नहीं जोड़ा जाना चाहिए, उस स्थिति में तो जल अवश्य ही ग्रहण किया जाता है अन्यथा मलाशय का मल सूखने से गम्भीर हानि हो सकती है । इसी कारण भारतवर्ष में सैकड़ों स्त्रियाँ ऐसे रोगों से ग्रस्त होती हैं और आजीवन इससे पिंड नहीं छुड़ा पातीं ।

समाज में स्वस्थ परम्पराएँ विवेकपूर्ण रीति-रिवाज जहाँ सामाजिक विकास में योगदान देते हैं, वहीं कुरीतियाँ समाज की जड़ को खोदकर खोखला बनाती रहती हैं । विवेक की पुकार यह है कि इन रिवाजों, परम्पराओं को वर्तमान उपयोगिता के आधार पर स्वीकार किया जाय अन्यथा ऐसी ही दुर्घटना होती रहेंगी ।

ऐसा समझा जाता है कि अमुक कृत्य पूरा न करने से देवता कुपित होकर श्राप दे देंगे । देवताओं के प्रति हमें अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना होगा अन्यथा इनके नाम पर समाज में देवी तत्वों के प्रति श्रद्धा की वृद्धि के स्थान पर ऐसी निकृष्ट परम्पराओं को ही प्रोत्साहन मिलेगा जो व्यक्ति व समाज के सुख-शान्ति को ही नष्ट करती रहेगी ।

जो नारी भावना एवं श्रद्धा की साक्षात् प्रतिमूर्ति कही जाती है, विवेक के अभाव में आये दिन वही भ्रान्तियों की शिकार होते देखी जाती है ।

देवी के नाम पर विशेषतः देहातों में चेचक निकलने पर अब भी ऐसा विश्वास किया जाता है कि चेचक देवी का प्रकोप है तथा इलाज कराने से देवी नाराज हो जाती है, अतः इलाज नहीं कराना चाहिए । ऐसी ही मान्यता के कारण एक घटना घटित हुई जिसमें एक महिला को अपने बच्चे से हाथ धोना पड़ा ।

रायपुर का एक गाँव चेचक के प्रकोप से प्रभावित था, उस गाँव में एक वैक्सीनेटर चेचक का टीका लगाने गया, उसे देखकर गाँव की एक महिला ने अपने छह माह के बच्चे को रजाई, गद्दा इत्यादि से ढक दिया जिससे बच्चे को चेचक (देवी) का प्रकोप हुआ है, 'वैक्सीनेटर' कहीं टीका न लगा दे । वैक्सीनेटर के पूछने पर उक्त महिला ने यह कह कर टाल दिया कि उसका कोई बच्चा नहीं है ।

वैक्सीनेटर के चले जाने के उपरान्त महिला ने कपड़े से बाहर निकाला, यह देखकर कि साँस घुटने से बच्चे की मृत्यु हो गई है, महिला सर पीटकर रोने लगी ।

वर्तमान समय में जब कि विश्व की नारियाँ, पुरुषों के साथ कदम से कदम मिलाकर प्रत्येक क्षेत्र में सतत् आगे बढ़ती जा रही हैं, भारतीय नारी अन्ध-विश्वासों, कुरीतियों की बेड़ी में कब तक जकड़ी रहेगी ? उसे स्वयं ही अपने विवेक को जगाना होगा । इन कुरीतियों, अन्ध-विश्वासों, भ्रान्तियों के जाल-जंजाल को तोड़कर बाहर निकलना होगा, तभी नारी वर्ग का समग्र विकास सम्भव है तथा समाज को अपना योगदान देने में सक्षम हो सकती है ।

अन्ध-विश्वास हर दृष्टि से घातक

प्रत्येक मानव एवं समाज में प्रगतिशीलता की प्रबल आकांक्षाएँ हैं, किन्तु यह देखा जाता है कि कोई अपनी कुण्ठाओं से स्तम्भित है तो कोई विपरीत दिशा में चला जा रहा है तथा कोई अपनी मन्द गति में तीव्रता नहीं ला पा रहा है । इन सब में मूलतः विशेष कारण मस्तिष्क का स्पष्ट न होना ही है । गलत मान्यताएँ, स्थापनाएँ, अंधविश्वासों और रूढ़िवादिता से मस्तिष्क का जकड़ जाना होता है, जिसके कारण प्रकाश होते हुए भी सही वस्तु को प्राप्त नहीं कर पाता । इस वैज्ञानिक युग में ज्ञान का दीप तर्क एवं बुद्धि की तेल बत्ती से जल कर प्रकाशित है, किन्तु अंध-विश्वासी तो आगे बढ़ने की अपेक्षा खड्डे में ही गिर रहे हैं । मानव-जीवन की प्रगति की गाड़ी रुकी पड़ी है ।

परम्परागत शुभ-अशुभ सम्बन्धी अन्ध-विश्वासों के थोड़े से उदाहरण देकर उनकी मोटी बुद्धि से परखें तो उनका खोखलापन स्पष्ट हो जावेगा । सिर पर कौआ बैठना और यह मानना कि वह व्यक्ति शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होगा और उसके निवारण के लिए झूठा पत्र सम्बन्धियों के पास भेज देना । यह अन्ध-विश्वास समाज में घर किए हुए है । इसमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कोई बुद्धि-संगत बात दृष्टिगोचर नहीं होती है । उसी प्रकार जाते समय मार्ग में बिल्ली का निकल जाना या छींक का आना-उससे यह विश्वास कर लेना कि कार्य असफल होगा, कितना निरर्थक विश्वास है । असफलता तो उचित प्रयत्नों एवं श्रम करने से ही प्राप्त होती है न कि बिल्ली के मार्ग में निकलने से । महामारी, चेचक आदि रोगों के हो जाने पर यह विश्वास कर लेना कि देवी पर जल चढ़ाने से ही रोग दूर हो जायेंगे कितना गलत विश्वास है । जब तक परहेज न किया जावेगा, दवा न होगी तब तक उसका दूर होना असम्भव है । बच्चों को नजर लगने पर चूल्हे में मिर्चों को झोंकना और उससे उसका कष्ट दूर होना क्या तर्को-संगत है ? पड़वा के दिन यात्रा आरम्भ न होनी चाहिए, क्योंकि उससे कार्य सम्पन्न न होगा, यह कितना निर्बल विचार है । इसे अनुभव कर के सभी देख सकते हैं फिर भी मान्यता चली जा रही है । समाज में दिशाशूल के सम्बन्ध में मान्यता है कि जिस देश में दिशाशूल हो उस ओर प्रस्थान न करें दिनों के अनुसार दिशाशूल दिशाओं में बदलता रहता है ।

यदि इस प्रकार की मान्यता पर समाज दृढ़ रहे तो उस दिशा में आवागमन का साधन ही बन्द हो जाना चाहिए, क्यों किसी को हानि हो ? किसी दिन कलकत्ते जाने वाली ट्रेन बन्द रहे तो किसी दिन बम्बई जाने वाली ट्रेन को बन्द किया जाना चाहिए । इस व्यर्थ के विश्वासों से सुअवसरता, धन, श्रम आदि की ही हानि होती है ।

समाज में कुरीतियों एवं रूढ़ियाँ भी अन्ध-विश्वासों के कारण ही हैं । विवाह में आतिशबाजी में और दहेज में तथा सजावट आदि में और व्यर्थ के रस्म अदायगी में खर्च करना कुरीति ही है । मूलरूप में विवाह तो पाणिग्रहण संस्कार ही है जो शास्त्रोक्तरीति से किया जाता है । अन्य आडम्बरपूर्ण रस्म रिवाज व्यर्थ के हैं । इसी प्रकार मरणोत्तर समाज को भोजन कराने में खर्चा करने की प्रथा अनावश्यक है । शुद्धता की दृष्टि से जितना कार्य आवश्यक है वही सार्थक है ।

इन अन्ध-विश्वासों के कारण समाज लुट रहा है । समाज में मनुष्य गंडा-ताबीज में विश्वास कर स्वस्थ रहना चाहते हैं । मुकदमा जीतना चाहते हैं अपनी आय बढ़ाना चाहते हैं । इस विश्वास का क्या आधार है ? प्रयत्नशीलता, सचाई, उद्योग आदि के मूल्य क्या झूठे हैं जो सच्चाइयों से आँख बन्द कर ताबीज पर विश्वास करते हैं वह कितने अंधकार में है और ठगे जा रहे हैं ?

महिला वर्ग भी सन्तान प्राप्ति के उद्देश्यों से कितने साधुओं-बाबाओं के भ्रमात्मक चक्कर में पड़ कर तन, धन से लुट रहा है । उनके वरदानों से सन्तान प्राप्ति की आशा कितने अन्ध-विश्वास की गहराई में रखे हुए हैं । यदि वर-वधू को कोई शारिरिक या अन्य त्रुटियाँ हैं तो इस विषय में जानकार व्यक्तियों से मिल कर चिकित्सा करा कर उस के योग्य बना सकता है ।

यह बात मानना कि घर में बहू के पैर पड़ने से ही घर की अवनति या उन्नति हुई है और इस कारण से उस को बुरा-भला कहना उचित नहीं है । घर में उनके पैरों का प्रभाव नहीं है । घर के रहने वालों की श्रमशीलता, सुयोग्यता और सुसंस्कारों पर ही उन्नति निर्भर है । यदि इस ओर ध्यान न रहे इस कारण घर में अवनति की स्थिति आवे तो इसे दोषी बनाकर घर में गृह कलह उत्पन्न करते हैं तथा सहानुभूति का मार्ग छोड़ कर घर को कष्ट के गर्त में डाल देते हैं । ये सब अन्ध-विश्वास की मान्यता से ही कष्ट उठाना है । समाज के अनेक परिवारों में गृह-कलह छाया है ।

ज्योतिषियों के द्वारा भी समाज में काफी अन्धविश्वास फैला हुआ है । कभी ग्रह-नक्षत्र मानव की उन्नति में बाधक बताये जाते हैं, किसी को साढ़े सात वर्ष का शनिचर लगा है, इसलिये वह कष्ट में है । किसी पर बृहस्पति की कृपा है इसलिए सुखी है । कहाँ तक बात मानी जा सकती है । कर्म का अटल सिद्धान्त है अच्छे कर्मों का फल अच्छा और किये हुए बुरे कर्मों का फल बुरा ही प्राप्त होगा । बबूल के पेड़ में आम के फल नहीं लग सकते हैं । फिर झूठे विश्वास अन्धविश्वासों पर क्यों कर अपने पुरुषार्थ को कुंठित किया जाय ।

इन अन्ध-विश्वासों एवं रूढ़ियों में अशिक्षित व्यक्ति ही नहीं है, शिक्षित भी हैं । वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के भूतपूर्व महानिदेशक डा. एस. हुसैन जहीर के हैदराबाद की आयोजित संगोष्ठी में भारतीय वैज्ञानिकों पर यह आरोप लगाया था कि उन में से अधिकांश का रुख प्रयोगशाला में कुछ और होता है और प्रयोगशाला के बाहर कुछ और । इस प्रकार के विभिन्न अन्ध-विश्वास, मान्यताएँ केवल भारतवर्ष में ही नहीं विदेशों में भी प्रचलित है ।

मानव अनादि काल से ही प्रकृति के सम्पर्क में रहा है । उसमें अनिष्ट की भावना से भय और लाभ की भावना से लोभ की प्रकृति जाग्रत रही है । इस प्रकार से प्रकृति को नियंत्रित करने में दोहरे प्रकार के प्रयत्न किये । जहाँ तक उसमें समझ थी उस के द्वारा उस पर काबू पाता रहा । जब समझ के बाहर की स्थिति रही, तब वह अपनी भावनाओं से, मान्यताओं, अर्चनाओं के सहयोग से नियन्त्रित करने का प्रयत्न करता रहा है, जिससे वैज्ञानिक और श्रद्धा विश्वास के मार्ग निर्मित हुए । जो वैज्ञानिक मिश्रित विश्वास का मार्ग बना उसे धर्म के क्षेत्र में मान्यता मिली, किन्तु केवल बिना आधार की भावनाओं की अन्ध-विश्वास में ही गणना की गई । प्रत्येक व्यक्ति भय से सुरक्षा और लोभ की सन्तुष्टि से प्रेरित होता है । जिन व्यक्तियों का यह कथन है कि धार्मिक विश्वासों ने ही अन्धविश्वासों को जन्म दिया है । उनका कथन ही गलत है, क्योंकि धर्म तो सत्य पर आधारित कल्याणकारी भावना है ।

जिस प्रकार ज्ञान के प्रकाश में राजा राम मोहनराय ने सती-प्रथा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह, कन्या-वध आदि अन्ध-विश्वासों को नष्ट कर सुधार किया है, उसी प्रकार आज भी अन्य अन्ध-विश्वासों को नष्ट कर हमें सुधार करना है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ये घातक अन्ध-विश्वास और आधुनिकता का दावा

भारतीय समाज आज भयानक अन्तर्विरोधों से ग्रस्त है । एक ओर तो आधुनिक बनने की ऐसी होड़ मची है कि उचित-अनुचित विचार को ताक पर रख कर अंधानुकरण किया जाता है, दूसरी ओर अंधकार युग से पनपी विकृत रूढ़ियों और घातक अंध-विश्वासों ने अभी भी दिमाग पर कब्जा जमा रखा है तथा उन भ्रम-जंजालों में लोग अपनी मन-शक्ति, धन शक्ति और क्रिया-शक्ति का बड़ा हिस्सा लगाते रहते हैं । धन, समय, श्रम और व्यक्तित्व का इतना व्यर्थ नियोजन और किसी भी दिशा में नहीं होता, जितना इन मूर्खतापूर्ण अन्ध-विश्वासों में होता है ।

अज्ञान और अनाचार के संयोग से अंध-विश्वास पनपता फैलता है । शोषण के वर्तमान दुश्चक्र में जिनके निहित स्वार्थ हैं, वे इस भ्रम-जंजाल को मजबूत बनाए रखने की साजिशें रचते रहते हैं । इस हेतु झूठे किस्से गढ़े जाते हैं, अफवाहें फैलाई जाती हैं, भ्रान्त मान्यताएँ पनपाने के लिए जो पुस्तकें रची जाती हैं, प्रचार किया जाता है और ढोंग-फरेब करके प्रमाण प्रस्तुत का प्रदर्शन किया जाता है । विषमता, विकृति और विपन्नता के मूल कारणों को न जानने वाले आत्म-विश्वासविहीन लोग अपनी समस्याएँ पुरुषार्थ द्वारा हल होने का विश्वास नहीं कर पाते । इसीलिए वे देवी-देवताओं, फकीरों, ओझा, तांत्रिकों जादूगरों की शरण में मारे-मारे फिरते हैं और रही-सही शक्ति तथा सम्पदा भी नष्ट करते रहते हैं ।

इस दुश्चक्र के कारण समाज में कितने अनर्थ होते हैं, अनाचारी को छूट मिलती है, क्रूरताएँ पनपती हैं, यह आये दिन देखने-सुनने को मिलता रहता है । ऐसा ही एक समाचार है कि मेरठ के एक युवक ने अपनी नव-विवाहिता पत्नी को रात में सोते समय चारपाई पर बाँधा और मिट्टी का तेल डाल कर आग लगा दी, जिससे वह बेचारी जल कर मर गई । मरने से पूर्व उसने अपने पास देखने के लिए आने वाले लोगों को बतलाया कि उसके पति ने उसे जलाया है, लेकिन ऐसा क्यों किया यह नहीं बता सकती ।

बाद में पता चला कि वह युवक बहुत दिनों से बीमार रह रहा था । उसने अपनी इस बीमारी से परेशान होकर एक ज्योतिषी से उसका कारण पूछा—विवेक का तकाजा था कि वह बीमारी के विषय में किसी अच्छे डॉक्टर या वैद्य से बात करता । एक से फायदा न होता तो दूसरे से पूछता, अच्छे से अच्छा इलाज करता । अपने आहार-विहार का संयम करता । पथ्य पालन करता और आरोग्य सम्बन्धी दिनचर्या बनाता । चूँकि उसने ज्योतिषी की शरण ली । ज्योतिषी डॉक्टर तो होता नहीं जो युवक की नब्ज देखता उसके खान-पान, रहन-सहन की पूछ-ताछ करता, दवा देता और पथ्य बतलाता । निदान उसने पोथी उठाई, कुण्डली मिलाई और कह दिया कि उसकी पत्नी 'मंगली' है, इसी कारण वह हमेशा बीमार बना रहता । युवक अविवेकशील था, अन्ध-विश्वासी था, ऐसा न होता तो वह किसी अच्छे डॉक्टर के पास न जाकर ज्योतिषी के पास क्यों दौड़ता, जिसका कि रोग निदान अथवा उपचार से कोई सम्बन्ध नहीं होता, उसने ज्योतिषी की बात सोलह आना ठीक मान ली । पत्नी को अपने कष्ट का मूल कारण मान लिया और उससे छुटकारा पाने के लिए जलाकर मार डाला ।

अन्ध-विश्वास के कारण ऐसी न जाने कितनी दुःखद घटनाएँ समाज में होती रहती हैं । जो प्रकाश में आ जाती हैं, जो प्रकाश में नहीं आ पाती उन्हें भुक्तभोगी ही जान पाते हैं, किन्तु अप्रकाशित घटनाएँ प्रकाशित घटनाओं से कम नहीं, अधिक ही होती हैं ।

इस प्रकार 'मंगली' होने के अमांगलिक लांछन से न जाने कितनी निरपराध स्त्रियों की जानें ली जाती रही हैं । कितनी ही यदि जीवित भी रह जाती हैं तो मृत्यु से भी बुरा तिरस्कारपूर्ण जीवन बिताती हैं । घरों में उनसे कोई सीधे मुख बात नहीं करता । हर छोटी-मोटी अप्रिय घटना का कारण उसे ही माना जाता है । किसी बच्चे को जुकाम तक हो जाये तो उसका अशुभ कारण माना जाता है । घर में कोई बूढ़ा मर जाय तब तो उस बेचारी को ही डायन कहकर दोष दिया जाता है फिर चाहे वह मरने वाला सौ बरस की आयु पाकर ही अपनी मौत क्यों न मरा हो । वास्तव में कितनी दयनीय दशा होती है, एक उस अबला की जिसे ज्योतिष की गणना से किसी ऐसी घड़ी में जन्मा बताया जाता है, जो अशुभ होती है और उसे मंगली कहा जाता है ।

विवाहिताएँ तो इस फलित ज्योतिष के फैलाए अन्धविश्वास का कुपरिणाम भोगती ही हैं, कुँवारियों की दशा तो और भी खराब होती है । जिस लड़की को मंगली होने का दोष लग गया मानो वह कोई डायन या चुड़ैल हो गई । कोई भी उससे विवाह करने को तैयार नहीं होता । हर एक यही सोचता है कि यदि यह विवाह कर घर आ गई तो घर का अनिष्ट हो जायेगा । मंगली लड़की के अभिभावक जन-जन की खुशामद करते फिरते हैं, पर कोई बात नहीं करता । लड़की सयानी होती जाती है । माता-पिता की चिन्ता बढ़ती जाती है । तब या तो कोई मंगली वर मिल जाय तो बेड़ा पार होता है, सो भी एक-मात्र वर होने के कारण लड़की वाले को लड़के के पिता को मुँह माँगा देना होता है, सो भी सदैव हैसियत के बाहर, क्योंकि पूरी हैसियत की माँग तो सामान्य वर के अभिभावक किया करते हैं ।

वस्तुतः अंध-विश्वासों का दुश्चक्र ही ऐसा है कि इसमें सब पिसते हैं और दूसरों को भी पीसते हैं । इस क्रम में दुर्बलों को अधिक घाटा उठाना पड़ता है, लेकिन किसी एक दृष्टि से समर्थ व्यक्ति भी, अपनी दुर्बलता वाले बिन्दु पर दूसरों से ठगा जाता है और बहुत कुछ गँवाता है । धनोपार्जन में कुशल व्यापारी अपनी मानसिक दुर्बलता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के कारण ज्योतिषियों-बाबाओं के चक्कर में ठगे जाते हैं तो विशाल जन-समुदाय को अपने बुद्धि कौशल से इच्छित दिशा में चलाने वाला राजपुरुष भी अपनी भीतरी कमी के कारण उसी चक्कर में पड़ता है । गरीब, पिछड़े लोग ओझाओं के चक्कर में पड़ते और खून पसीने की कमाई गँवाते हैं । महिलाएँ सुहाग और सन्तान के सुख की चाह में इस फेर में पड़कर प्रायः इन दोनों सुखों से भी हाथ धो बैठती हैं और अपनी पीड़ा वेदना ही बढ़ाती हैं ।

इसी प्रकार पुरुषार्थविहीन पुरुष प्रायः सम्पत्तिशाली होने के चक्कर में बाबाजी की शरण जाते या फिर सट्टे जुए के जंजाल में फँसते हैं । अमुक पूजा विधान, अमुक वस्त्र या आभूषण धारण आदि से भाग्य जागने, सितारा बुलन्द होने की कहानियाँ भारतीय समाज में इतनी अधिक गढ़ी-फैलाई गई हैं कि अच्छे-खासे लोग भी उस पर विश्वास करते देखे जाते हैं । परिणाम प्रवंचना के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होता ।

नीचे ऐसे ही कुछ अप्रकाशित समाचार प्रस्तुत हैं—

बाबाजी का चमत्कार —आमखेड़ी (म०प्र०), कुछ दिन पूर्व की बात है कि गाँव में चमत्कारी महात्मा आये थे । जिनका विशेष चमत्कार यह था कि वे रुपये को दूना कर देते थे ।

गाँव में उन्होंने एक आध गाँजा भाँग के व्यसनी अपने शिष्य बनाये, जो उनके इस चमत्कार का प्रचार किया करते थे । फलस्वरूप इस गाँव की भोली जनता उनकी ओर आकर्षित होने लगी ।

उन्होंने एक आध व्यक्तियों को एक के दो और दो के चार रुपये बनाकर दिये । फिर कहना प्रारम्भ किया कि क्या दो-चार रुपयों के लिए तुम लोग सन्त को परेशान करते हो । अगर लाभ उठाना है तो कोई बड़ी रकम लाओ । लोगों का विश्वास तो बढ़ ही चुका था ।

निदान, एक पैसे के लोभी अपनी पत्नी का जेवर बेचकर तथा खेत गहने रखकर ५००) की रकम दूनी कराने ले गये । बाबाजी ने नोटों का बण्डल कुछ देर इधर से उधर और उधर से इधर किया और चट एक दूसरा बण्डल झोले में से निकाल कर भक्त को दिया और दूसरे दिन सबेरे खोलने को कहा ? दूसरे दिन पता चला कि वे नोट नकली थे और बाबाजी रात ही में गायब हो गये ।

भाग्य जगाने की चेष्टा में अँगूठियाँ खोयीं—दिल्ली, मनोहरलाल नामक व्यक्ति को अजमेरी दरवाजे के निकट साधु वेशधारी एक ठग ने ठग लिया ।

साधु ने मनोहरलाल को बताया कि तुम्हारा भाग्य जागने वाला है । तुम अपनी दो अँगूठियाँ तथा घड़ी उतार मेरे हाथ में दो और आँख बन्द करके अपनी मनोकामना पर विचार करो ।

मनोहरलाल बातों में आ गया और अँगूठियाँ तथा घड़ी ठग के हवाले करके आँख मूँदकर मनोकामना पर विचार करने लगा । इसी बीच ठग चम्पत हो चुका था ।

लोगों को सन्तान का आकर्षण सम्पत्ति से कम नहीं है । उसके लोभ से भी तरह-तरह के दुष्कर्म किये जाते हैं ।

पिछले दिनों, इन्दौर के जिला एवं सत्र न्यायाधीश श्री काले ने चिमाली गाँव की २२ वर्षीया विवाहिता युवती को बाल-हत्या के अपराध में आजन्म कारावास की सजा दी । कहते हैं उक्त महिला ने अपने एक वर्षीय बच्चे की शुभकामना के लिए दूसरे के दस वर्षीय बालक की हत्या कर दी थी । उसे किसी ने यह बताया था कि तेरा बच्चा तभी जीवित रहेगा, जब तू किसी बच्चे को मार कर उसके बालों की भस्म को पानी में डालकर पीयेगी । इससे पूर्व उसके दो बच्चों की मृत्यु हो गई थी ।

गाँठ का जेवर भी ले गये

कानपुर निवासी श्री भैरवप्रसाद और कल्याणचन्द दोनों भाइयों में जब न पटी तो घर की जायदाद, साबुन फैक्ट्री और जो कुछ भी नगद था आधा-आधा बँटवारा कर लिया । बँटवारा हो जाने से भीतरी वैमनस्य धुल गया । दोनों भाई अपने-अपने उद्योग से लग गये । हम जब भी कानपुर गये दोनों भाइयों का उद्योग चमकते ही पाया ।

आमदनी दोनों भाइयों की एक-सी थी, पर खर्चे का ढंग अपना-अपना अलग था । कल्याणचन्द का विवाह बँटवारे से कोई तीन-चार वर्ष पूर्व ही हुआ था । उनकी धर्मपत्नी के पास थोड़े से विवाह मंगल आभूषण थे भी, किन्तु उन्हें जेवरों से इतना अधिक प्रेम था कि आये दिन अच्छे-अच्छे आभूषणों की माँग करती रहती । कल्याणचन्द को उनकी इच्छा पूरी करने में प्रसन्नता होती थी, इसलिये जो भी आमदनी होती थी, उसका अधिकांश भाग जेवरों में जाता था । कभी-कभी कल्याणचन्द कहते भी—"भैया ने इतने रुपये बैंक में जमा कर लिये हैं, हमारे पास तो गाढ़े समय के लिए भी रुपये नहीं हैं, इसलिए अधिक जेवरों की माँग अच्छी नहीं ।"

उनकी धर्मपत्नी शीला का तर्क यह था कि जेवर घर में ही तो है, जब आवश्यकता हो उन्हें बेचा जा सकता है । टाँके, घिसावट और भाव की तेजी मन्दी से होने वाले अपव्यय की ओर उनका बिल्कुल भी ध्यान न था । कल्याणचन्द ने भी कोई मनाही नहीं की ।

भैरवप्रसाद आयु से भी बड़े हैं, बुद्धि और विचार से भी । उनके पास कमाई से चार पैसे बचते थे, उन्हें बैंक के स्थायी खाते में जमा करना शुरू कर दिया । उनकी धर्मपत्नी भी कभी किसी जेवर के लिए कहतीं—तो वे समझाते जेवरों में सिवाय नुकसान के लाभ कुछ नहीं, टूट-फूट में नुकसान होता है, स्वर्णकार मिलावट कर दे तो आधे का तिहाई होता है और सबसे बड़ी बात तो जोखिम की है । चोरी का डर हर घड़ी बना रहेगा । इससे अच्छा तो यह है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अच्छे-अच्छे साफ-सुथरे कपड़े पहना करो उससे भी मानसिक प्रसन्नता बढ़ती है । बैंक में पैसा भी सुरक्षित रहता है ।

वह समझदार थी, शीला की तरह जल्दबाज नहीं । कोई जिद नहीं की । ठीक ही तो है, चार पैसे रहेंगे तो हारी-बीमारी, बच्चों की पढ़ाई-लिखाई में काम आयेंगे, जेवरों में धन फँसाने से क्या लाभ ? यह सोच कर वे सन्तोष कर लेतीं ।

आखिर वह समय भी आ गया । कल्याणचन्द भानजे के विवाह के बाद वाराणसी से लौट रहे थे । शीला साथ थी, उनका बच्चा भी था । एक सीट पर बैठे । नीचे जेवरों से भरा बक्सा रखा था । रात्रि का समय था, घर अभी दूर था, विवाह की थकावट से दोनों को हलकी-हलकी नींद आ गई । मुसस्तीकलाँ तक पहुँचते-पहुँचते किसी चोर ने बक्सा गायब कर दिया । सारे जीवन भर की कमाई दो मिनट में इधर से उधर हो गई, पर वे अब भी बेसुध थे ।

कानपुर आ गया । बक्से के लिए हाथ सीट के नीचे डाला तो वह गायब था । पैरों के नीचे की धरती खिसक गई । १० हजार के जेवरों के साथ कुछ नकदी कपड़े और कई आवश्यक कागजात थे, सब गायब । दहाड़ मार कर रो उठी । तमाशा लग गया, पर अब रोने-धोने से होता क्या है ? माल दुबारा मिलने वाला तो था नहीं । जेवरों ने एक रात में धनी को निर्धन, सम्पन्न को असहाय बना दिया ।

भैरवप्रसाद ने अपनी धर्म पत्नी को यह सन्देश दिया तो उनकी धर्मपत्नी बोली—आप सच कहते थे — जेवरों में आर्थिक हानि तो होती ही है । जीवन का संकट भी रहता है । अच्छा हुआ जो इनसे बचे रहे ।''

ऐसी घटनाएँ इक्की-दुक्की घटें, तो यह मानकर चला जाय कि शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ इनकी समाप्ति हो जायेगी । नरबलि या आग लगाने जैसे दुस्साहस तो पिछड़े इलाके या वर्ग में ही देखे जाते हैं, लेकिन ज्योतिषी, बाबाजी आदि का चक्कर तो अच्छे-अच्छे पढ़े-लिखे लोगों में भी पाया जाता है । इससे यही स्पष्ट होता है कि प्रचलित शिक्षा दिमागी पिछड़ेपन को दूर नहीं कर पाती । क्योंकि वह आस्था क्षेत्र को स्पर्श तक नहीं करती । आधुनिकता और अंध-विश्वास की बेमेल जोड़ी अपने देश में हर गली-कूँचे में देखी जा सकती है सो भी बिना, किसी हिचक के ।

यह स्थिति बदलनी आवश्यक है । विचार क्रांति के द्वारा ही इस बेमेल जोड़ी का अन्तर्विरोध लोगों की समझ में आ सकता है । तब ही देश की क्षमता, बुद्धि, धन, समय और श्रम का इन घातक अंध-विश्वासों में होने वाला अपव्यय रुक सकता है तथा वह सारी शक्ति प्रगति एवं विकास के लिए नियोजित हो सकती है ।

शिक्षा, ज्ञान एवं अन्ध-विश्वास

अन्ध-विश्वास की जब भी चर्चा होती है या विचार चलता है तो समझा जाता है कि यह अज्ञान ग्रस्त, अशिक्षित और भावुक लोगों में ही पाये जाने वाली प्रवृत्ति है । परन्तु जब से शिक्षा और ज्ञान का प्रसार हुआ है, लोग शिक्षित हुए हैं और बुद्धिजीवियों की संख्या भी बढ़ी है तो होना यह चाहिए था कि इस प्रकार की घटनाओं में कमी आये । लेकिन प्रायः कई अवसरों पर देखा जाता है कि प्रबुद्ध और बुद्धिजीवी कहे जाने वाले, तर्क और विचारशीलता की दुनिया में जीने वाले व्यक्ति भी किसी के छींक देने या कुत्तों के कान फटफटा देने पर ठिठक जाते हैं और आवश्यक कार्य के लिए भी जाना रोक देते हैं ।

स्वाभाविक और प्राकृतिक घटनाओं के पीछे गम्भीर कारण खोजने और उनका सम्बन्ध अपने कार्यों की सफलता या असफलता से जोड़ने की प्रवृत्ति सामान्य श्रेणी के व्यक्तियों में पायी जाय तो अशिक्षा और अज्ञान इसका कारण कहा जा सकता है, परन्तु पढ़े-लिखे और शिक्षित व्यक्ति भी कौवे के सिर या कन्धे पर बैठने से अपनी मृत्यु का पूर्वाभास करने लगें तो उसे क्या कहा जाना चाहिए ?

फिर इस वृत्ति को क्या कहा जाय ? अन्ध-विश्वास की व्यापकता और इनके मानने वालों की संख्या और उनके बौद्धिक स्तर को देखा जाय तो यही कहा जा सकता है कि यह मानसिक पिछड़ेपन का नहीं कुछ मानसिक विकारों का परिणाम है जो शताब्दियों से हमारी मनोभूमि पर राज्य करती रही है और वे इतनी पैनी, तीक्ष्ण हैं कि उन्होंने हावी होते ही विचारों और भावों से भी गहरे तल पर संस्कार भूमि में अपनी जड़ें जमा ली हैं ।

इन संस्कारों को परिष्कृत और परिमार्जित किया जाय तो अन्ध-श्रद्धा, अन्ध-विश्वास के घातक पापों से बचा जा सकता है । अन्ध-विश्वास को आध्यात्मिक दासता के अर्थों में लिया जा सकता है । समग्र धर्म और अध्यात्म का ढाँचा इसीलिए खड़ा किया गया है कि व्यक्ति अपनी समग्र व सम्पूर्ण सत्ता का साक्षात् कर सके जो अपने आप में पूर्ण समर्थ है और उस मार्ग पर पथ-भ्रष्ट हुए लोग आध्यात्मिक दृष्टि से निर्बल आस्था के होते हैं, वे अपनी सफलता-असफलता के लिए बाहरी कारणों का आधार खोजते हैं, जबकि ऐसा सम्भव नहीं है ।

बाहरी कारणों का आधार खोजना—ईश्वर के प्रति निर्बल आस्था का परिणाम है, क्योंकि जो व्यक्ति सच्चे अर्थों में आर्थिक और ईश्वर विश्वासी होगा, वह निश्चित रूप से उसके नीति, नियमों और मर्यादाओं के प्रति भी श्रद्धावान् होगा । परिश्रमशीलता, लगन, निष्ठा व तन्मयता की सफल पद्धति से सफलता के लिए उद्योग करने वाले को निश्चित ही अपना प्राप्तव्य हस्तगत होगा और जो इन आदर्शों के प्रति अपनी मनोभूमि में थोड़ी भी कमजोर श्रद्धा रखेगा वह नास्तिक ही कहा जायेगा ।

अन्ध-विश्वास की अनर्थकारी प्रवृत्ति—मनोवृत्ति का उन्मूलन करने के लिए विचार और भाव भूमि से भी अधिक गहरे तलों तक—संस्कारों तक पहुँचना आवश्यक है और संस्कारों को प्रभावित करने के लिए ऐसे तीक्ष्ण संकल्प ही समर्थ हैं जो विचार और भावों को वेध सकें । अन्ध-विश्वास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को प्रच्छन्न नास्तिकता मानकर आस्तिकता और ईश्वर विश्वास का संकल्प उन अन्ध-विश्वासी संस्कारों को प्रभावित करने में सक्षम ही है । विवेकशीलता का तकाजा है कि अन्ध-विश्वास को जीवन और समाज के हर क्षेत्र से निरस्त कर स्वस्थ मान्यताओं, आदर्श परम्पराओं को प्रतिष्ठित किया जाय । इसके लिए जागरूक बुद्धिजीवियों को आगे आने की तत्परता दिखानी चाहिए ।

कहीं आप भी इस तरह ठगे न जाएँ

पैसा मनुष्य की शक्ति भी है और कमजोरी भी । शक्ति इसलिए कि यदि उसे श्रम और ईमानदारी के साथ कमाया जाय तो वह व्यक्ति को उसके परिश्रम और पुरुषार्थ के पुरस्कार के रूप में प्राप्त होता है और मान-प्रतिष्ठा भी मिलती है । कमजोरी इसलिए कि लोग उसे प्राप्त करने के लिए कितनी ही तरह की उधेड़बुन में लगे रहते हैं, ताने-बाने बुनते हैं और उचित-अनुचित सभी उपाय अपनाकर उसे प्राप्त करने के प्रयास किये जाते हैं । यदि इस तरह के उपार्जन का सम्बन्ध लाभदायक व्यवसाय करने तक ही सीमित रहता तो भी कोई बात नहीं थी । स्थिति वहाँ एक विकट प्रश्न चिह्न लगाती है, जब कि किसी धूर्त और चालाक व्यक्ति द्वारा किसी सीधे-सादे व्यक्ति को बेवकूफ बनाकर अपना उल्लू सीधा कर लेने की घटनाएँ सामने आती हैं ।

आये दिन इस तरह की घटनाएँ प्रकाश में आती रहती हैं, जिनसे पता चलता है कि सरलता और भोलेपन का किस प्रकार लाभ उठाया जाता है । दूसरों को झाँसा देने और उनकी जेब हलकी करने के कैसे उपाय अपनाये जाते हैं, यह जानकर तो आश्चर्य होता है । ऐसे मामले भी सामने आये हैं जिनमें आकर्षक विज्ञापनों द्वारा सर्वसाधारण लोगों को लुभाया जाता है और उन्हें पुरस्कारों के प्रलोभन में फँसाकर अपना मतलब हल किया जाता है ।

पिछले दिनों ऐसी कई जाली संस्थाओं के मामले प्रकाश में आये जिनमें बड़े-बड़े पुरस्कारों की घोषणा की जाती । आमतौर पर प्रथम पुरस्कार काफी महँगा रखा जाता और दूसरे तीसरे में आधे, पौने मूल्य पर रेडियो ट्रांजिस्टर अथवा सिलाई मशीनें जैसी कुछ चीजें । पुरस्कार की सूचना व्यक्तिगत रूप से डाक द्वारा भेजने का आश्वासन दिया जाता । चूँकि उनकी सार्वजनिक घोषणा तो नहीं की जाती अतः यह पता चल ही नहीं पाता कि प्रथम पुरस्कार दिया गया या नहीं ।

प्रतियोगिता में भाग लेने वालों को कुछ समय बाद डाक द्वारा यह सूचना पहुँच जाती हैं कि आपको द्वितीय या तृतीय पुरस्कार मिल गया है और आपको घोषित नियमों के अनुसार दूसरा पुरस्कार एक ट्रांजिस्टर आधे मूल्य पर दिया जायगा । ट्रांजिस्टर का मूल्य चार सौ रुपये बताया जाता है और प्रतियोगी से उसका आधा मूल्य भेजने के लिए कहा जाता है ।

प्रतियोगी यह सोचकर की कुछ तो फायदा हुआ दो सौ रुपये भेज भी देता है, क्योंकि उसे बताया जाता है कि यह ट्रांजिस्टर जर्मनी का बना हुआ है अथवा जापान से आयातित है, तो प्रतियोगी भेजी गयी वी.पी. को छुड़ा लेता है और उसमें पाता है ट्रांजिस्टर अथवा अन्य घोषित पुरस्कार । इस प्रकार की प्रतियोगिता में भाग लेने वाले कई प्रतियोगियों का कहना है कि वे ठगे गये । दो सौ रुपये में—आधे मूल्य पर उन्हें जो ट्रांजिस्टर मिला—बाजार में उसका रेट पूछा सौ-सवा सौ रुपये का ही निकला । इस प्रकार उन्हें ट्रान्जिस्टर या रेडियो का ड्यौढ़ा—दूना मूल्य चुकाना पड़ा । कुछ लोग होते भी ऐसे हैं जो इन आयोजक संस्थाओं से विवाद करने पर उतारू हो जाते हैं, परन्तु इस प्रकार चालाकी से नफा कमाने वाली संस्थाएँ उस समय तक कहीं से कहीं स्थानान्तरित हो जाती हैं ।

यहाँ सभी इनामी प्रतियोगिताओं के लिए नहीं कहा जा रहा है । कहने का आशय इतना भर है कि धनवान बनने या लाभदायक सौदा करने वाले लोगों को प्रायः इस प्रकार की धूर्तताओं के कई उदाहरण आये दिन देखने में आते रहते हैं और लोग उनके चक्कर में बड़ी आसानी से फँस जाते हैं । कम लागत में अधिक लाभ उठाने की धुन कितनी हानिकारक होती है—इसका सहज ही अनुमान नहीं लगाया जा सकता । ऊपर जिस तरह की इनामी प्रतियोगिताओं का उल्लेख किया गया है उनमें कुछ तो—आंशिक ही सही, मूल्य तो वसूल हो जाता है । यद्यपि ऐसी जाली संस्थाओं की भी कमी नहीं है जो पुरस्कृत प्रतियोगी से आधा मूल्य पहले ही वसूल कर लेती हैं और चलते बनती हैं । तब तो सारा पैसा यों ही चला जाता है और आँख से भी अन्धे हुए तथा गाँठ का भी जाता रहा वाली स्थिति बन जाती है ।

धोखादेही और जालसाजी के रूप में इसी उद्देश्य के लिए बनी व्यापारिक सावधि जमाराशियों की योजनाएँ भी चलती हैं । इन योजनाओं का प्रमुख आकर्षण दिया जाने वाला भारी भरकम ब्याज रहता है । यद्यपि व्यापारियों में सावधि जमाराशियाँ बहुत पहले से स्वीकार की जाती हैं और आज भी चलती हैं, परन्तु धूर्त, धोखेबाज और जालसाज लोग अपनी योजनाओं को इतना आकर्षक बनाकर प्रचारित करते हैं कि लोग उनके चक्कर में आसानी से आ जाते हैं ।

वृहत्तर मुम्बई के उप-पुलिस आयुक्त श्री रमाकांत एस. कुलकर्णी के अनुसार—"इन योजनाओं में छोटे-छोटे धन लगाने वालों, जैसे— विधवाओं, पेन्शनरों तथा कम आय वाले लोगों को मौका मिलता है जो अपनी बचत का विनियोजन कर के थोड़ा अधिक ब्याज कमाना चाहते हैं । सामान्य रूप से असली व्यापारी तो वायदे को पूरा करता है और जमाराशि पर अच्छा-खासा ब्याज देता है तथा उसकी माँग होने पर अथवा निश्चित अवधि समाप्त होने पर जमाराशि को लौटा भी देता है, लेकिन ऐसे उदाहरण भी देखने में आते हैं कि जहाँ धोखेबाज पार्टियाँ, जो धन लगाने वालों से उनकी जमा रकम लेकर किसी न किसी बहाने से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ समय बाद उन्हें कुछ भी देना बंद कर देती हैं । वे तिकड़मबाजी से घाटा दिखाकर दीवालिया हो जाते हैं और इस प्रकार धन लगाने वालों को उनकी बामुश्किल तमाम जोड़ी गयी बचत से वंचित कर देते हैं । यह तो हुई उस प्रकार की जालसाजी और ठगी की बातें जिनमें ऐसे व्यक्ति को शिकार बनाया जाता है जिसके पास औसत दर्जे की आमदनी होती है और निर्वाह के बाद थोड़ा-बहुत बचा भी लेता है । इस प्रकार की ठगी और जालसाजियों के विभिन्न रूप हैं । उनके सभी रूपों का पता लगा पाना असम्भव-सा कार्य है, परन्तु ऐसी प्रवृत्तियाँ—ठगी-जालसाजियाँ भी चलती हैं जो सामान्य आदमी की रोजमर्रा की आवश्यकताओं को सुविधापूर्वक पूरा करने के आश्वासन पर चलायी जाती हैं । उनमें से कुछेक निम्न प्रकार की हैं ।

महानगरों में आवास की समस्या सर्वाधिक है । लोगों को रहने के लिए छोटा-सा कमरा भी बड़ी मुश्किल से मिल पाता है और वह भी पगड़ी के रूप में एक मोटी रकम चुकाने के बाद । ऐसी स्थिति में कई परिवार इस तरह के भी होते हैं जिन्हें फुटपाथों पर जीवन गुजार देना पड़ता है । इस प्रकार के फुटपाथ पर रहने वाले अथवा असुविधापूर्ण घरों में निवास करने वाले लोगों को झाँसा देकर ऐंठने के लिए कुछ लोग हाउसिंग सोसायटियाँ बनाते हैं, जिनका उद्देश्य लोगों को ऐंठना ही होता है । वे भोले-भाले और सीधे-सादे लोगों को अपना निशाना बनाते हैं । अखबारों में विज्ञापन देने से लेकर शहर की दीवारों पर पोस्टर चिपकाने और पैम्फ्लेट बाँटने तक विभिन्न तरह से प्रचार करते हैं और सीधे-सादे लोगों को इन सोसायटियों का सदस्य बनाया जाता है । उनसे शुल्क भी लिया जाता है और निर्माण में होने वाले व्यय की आवश्यकता बताकर कुछ रकम एडवांस भी ले ली जाती है । इन सोसायटियों में कई सदस्य तो झूठ-मूठ के भी रख लिये जाते हैं ताकि सही सदस्यों का विश्वास बनाये रखा जा सके और उनसे तरह-तरह के बहानों द्वारा रकम ऐंठी जाती रहती है और जब काफी समय हो जाता है तो सही सदस्यों को धत्ता बता दिया जाता है ।

आवास ही नहीं शिक्षा के मामले में भी धोखाधड़ी और जालसाजी के विभिन्न मामले पिछले दिनों प्रकाश में आते रहे हैं । सन् १९७४ की ही बात है—मेरठ में देश के विभिन्न भागों से आये ५० छात्रों ने पच्चीस दिन तक हायर सेकेण्ड्री की परीक्षाएँ दीं उस वर्ष जब परीक्षाफल घोषित हुआ तो इस केन्द्र के सभी छात्रों के रोल नम्बर नहीं मिले । सब तो नहीं फेल हो सकते यह विचार कर कुछ छात्रों ने इस बात की जाँच-पड़ताल की तब जाकर कहीं राज खुला । बोर्ड ने कहा कि मेरठ में सूचित किया गया इस प्रकार का कोई परीक्षा केन्द्र नहीं था और परीक्षा में बैठने के लिए अदा किए गए शुल्क की जो रसीद प्रमाण स्वरूप दी गयी वे भी जाली हैं । जब इस घटना पर खूब हो- हल्ला मचा तो पुलिस ने भी हस्तक्षेप किया और दिल्ली के कुछ व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया । इन व्यक्तियों के पास दिल्ली बोर्ड के जाली परीक्षा फार्म तथा प्रवेश पत्र भी पाये गये जिसका अर्थ था कि इन व्यक्तियों की कारगुजारियाँ मेरठ या उत्तर प्रदेश तक ही सीमित नहीं थीं ।

शिक्षा के क्षेत्र में जालसाजी और भ्रष्टाचार का एक किस्सा तब और सामने आया, जब नौकरियों के लिए अथवा आगे की परीक्षा में बैठने के लिए कुछ छात्रों के पास मैट्रिक के जाली प्रमाण-पत्र मिले । इसमें छात्रों की गल्ती भी नहीं थी, क्योंकि ये प्रमाण-पत्र एक ऐसी संस्था द्वारा जारी किये गये थे जो सोसायटी रजिस्ट्रेशन कानून के अन्तर्गत पंजीकृत थी। संस्था को और इसकी परीक्षाओं को सरकारी मान्यता नहीं मिली फिर भी छात्र इसकी परीक्षाओं में बैठे और कतिपय छात्रों को यहीं से कुछ जालसाज व्यक्तियों ने मैट्रिक के जाली प्रमाण-पत्र दिये ।

जाली प्रमाण-पत्रों के व्यापार में सामान्यतः तो दोनों ही पक्षों का योगदान रहता है । परन्तु शिक्षा प्राप्ति के बाद अगले मोर्चे पर —नौकरी के लिए तो स्पष्ट रूप से ठगने का धन्धा लोग सफलतापूर्वक चला लेते हैं । इनकी ठग विद्या नौकरी दिलाने के विज्ञापन और आश्वासन से शुरू होती है तथा रिश्वत और जमानत के रूप में समाप्त हो जाती है । इस क्षेत्र में कलाबाजियाँ दिखाने वालों के गिरोह होते हैं और वे समाचार-पत्रों में आकर्षक नौकरियों का विज्ञापन निकालते हैं । नौकरियों के नियम तथा शर्तों को लेकर कुछ विवरणिकायें भी छाप ली जाती हैं और उनके अनुसार आवेदनकर्त्ताओं से जमानत के रूप में कुछ रकम भी जमा करा ली जाती है, लेकिन प्रार्थी को न तो कभी नौकरी मिलती है और न ही जमानत के रूप में जमा की गयी मोटी रकम ही वापस दी जाती है । थोड़े समय बाद ये एम्प्लॉयमेण्ट एजेन्सियाँ ही हवा में उड़ जाती हैं ।

हाल ही में कुछ दिनों से फिल्मी सितारों के रूप में चमकने का अलभ्य अवसर—आदि-आदि तरह के विज्ञापन भी दिखाई देने लगे हैं, जिनमें दो-तीन फिल्मों के नाम—जिन्हें तैयार किया जा चुका है और एकाध दो ऐसी फिल्मों के नाम जो निर्माणाधीन हैं तथा उनके लिए सितारों की आवश्यकता है—आदि विवरण रहता है । फिल्मों की चमक-दमक और उस क्षेत्र की रंगीनियों के प्रचार से प्रभावित महत्त्वाकांक्षी युवक-युवतियाँ इस प्रकार की विज्ञापनबाजी के चक्कर में फँस जाते हैं और सुनहरे सपने साकार करने की योजनाएँ बनाने लगते हैं । इस चक्कर में जो फँसता है और जालसाज लोगों का मतलब हल हो जाता है तो उन्हें पता चलता है कि वे अपना बहुत कुछ और सब कुछ भी लुटा चुके हैं ।

अच्छा तो यह है कि अपनी मेहनत की कमाई और ईमानदारी, सूझबूझ का आश्रय लेकर ही प्रगति और विकास की महत्त्वाकांक्षा को पूरा किया जाय क्योंकि स्थायी प्रगति और उन्नति के सुदृढ़ आधार भी यही हैं । बैठे-बिठाये भाग्य के भरोसे लाभ की बात सोचना और उसके सपने देखना आँखें मींचकर कुल्हाड़ी चलाने जैसा है जो अपने पैरों पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी पड़ सकती है । कदाचित किसी प्रकार ये योजनाएँ लाभ दे भी जाएँ तो उसमें जो कुछ मिलता है, वह बिना श्रम का है और बिना श्रम की कमाई विकासोन्मुख करने की अपेक्षा अधोगामी ही बनाती है ।

बेहतर है कि विकास और प्रगति के लिए अपने भुजदण्डों का सहारा लिया जाय, अपनी शक्ति और सामर्थ्य के आगे हाथ पसारे जायें, अपने आप से जो माँगना हो माँगें और अपने बल पर जो पाना हो पायें । अपना आश्रय, अपना विश्वास छोड़कर जो भाग्य और दैव तो क्या भगवान् की ओर भी देखता है उसे निराश ही होना पड़ता है ।

ज्योतिष पुरुषार्थ का प्रबल शत्रु

नैपोलियन बोनापार्ट की प्रेमिका जेसोफाइन ने एक बार उसे एक पत्र लिखा —"मैं देखती हूँ जो फ्रांस एक दिन पुरुषार्थ के ढाँचे में पूरी तरह ढल चुका था जिसे आपने पराक्रम का पाठ पढ़ाया था आज उसी फ्रांस की नसें आपके देववाद के आश्रय के कारण शिथिल पड़ती जा रही हैं । मनुष्य अपनी भुजाओं, अपने शस्त्र पर भरोसा न करे और यह सोचे कि घड़ी, शकुन देवता उसकी सहायता कर जायेंगे, मैं समझती हूँ इससे बढ़कर मानवीय शक्ति का और दूसरा अपमान नहीं हो सकता ।"

ऐसा पत्र लिखने का खास कारण था । एक समय था, जब नैपोलियन बोनापार्ट ज्योतिष पर बिल्कुल भी विश्वास नहीं करता था । उसके सेनापति चाहते थे कि नैपोलियन बोनापार्ट ज्योतिषियों से पूछकर कोई कदम उठाया करे, किन्तु नैपोलियन ने उन्हें डाँट कर कहा—"ईश्वर यदि सहायक हो सकता है तो वह पराक्रमी और पुरुषार्थियों के लिए है । भाग्यवाद का आश्रय लेने वालों को पिसने और असफलता का मुँह देखने के अतिरिक्त हाथ कुछ नहीं लगता ।"

जब तक नैपोलियन अपने सिद्धान्त पर दृढ़ रहा, तब तक वह अकेला ही दुश्मनों के छक्के छुड़ाता रहा, पर दुर्भाग्य, एक दिन वह स्वयं भी देववाद पर विश्वास करने लगा । यह पत्र उसी संदर्भ में लिखा गया था । नैपोलियन की यही ढील अन्ततः उसके पराजय का कारण बनी ।

भारतीय तत्वदर्शन की अनेक शाखाओं में ज्योतिष का भी विधान है, पर वह विशुद्ध गणित के रूप में है और उसका विकास होना चाहिए, किन्तु उसके फलितार्थ सामूहिक रूप से सारी पृथ्वी और मानव जाति के जीवन को प्रभावित करते हैं । व्यक्तिगत जीवन में स्थान-स्थान पर ज्योतिष और भाग्यवाद के पुछल्ले असफलता और पतन के ही कारण हो सकते हैं । नैपोलियन बोनापार्ट की तरह हमारे देश भारतवर्ष के साथ भी ऐसा ही हुआ । फलित के चक्कर में पड़कर सारे देश के पराक्रम की नसें ढीली पड़ गईं और हमें सर्वत्र पराजय का मुँह देखना पड़ा ।

सोमनाथ का मन्दिर लुटा तब ज्योतिषियों के अनुसार मुहूर्त नहीं था । यदि सैनिक उस पाखण्ड को न मानते तो भारतवर्ष की यह दुर्गति नहीं होती । आज भी ज्योतिष के चक्कर में पड़कर हमारी सफलता के सोमनाथ लुटते रहते हैं और हम अपनी उन्नति के लिए भाग्य का मुँह ताकते खड़े रहते हैं ।

आज हमारे देश को अब्राह्म लिंकन जैसे औंधे भाग्य को भी अपने पुरुषार्थ और पराक्रम से सीधा करने वाले होनहारों की आवश्यकता है । उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका में गृहयुद्ध हो गया । लगता था दोनों राज्य अलग होकर ही रहेंगे । तभी अब्राह्म लिंकन ने अपना ऐतिहासिक निर्णय दिया दोनों प्रदेशों की एकता सैनिक शक्ति के द्वारा अक्षुण्ण रखी जायेगी । उसने युद्ध की सारी तैयारी कर भी ली ।

उसी समय उनका एक मित्र आया । उसने कहा—महोदय ! अपने निर्णय पर अमल करने से पूर्व आप ज्योतिषियों से भी राय ले लें । मैं तीन ज्योतिषियों को लेकर आया हूँ, वे पास के कमरे में ही आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

लिंकन ने सोचा—ज्योतिषी कभी एक राय के नहीं होते इसी से सिद्ध है कि वे अंतिम सत्य नहीं । लिंकन ने अपने सैनिक बुलाये और कहा—इस बगल के कमरे में राष्ट्र के तीन शत्रु बैठे हैं । दरवाजा बन्द कर ताला लगा दो, जब तक हम विजयी होकर नहीं लौटते ताला न खोला जाय । ज्योतिषवाद के भ्रम में पड़कर लिंकन अपने पराक्रम और पुरुषार्थ के पथ से विचलित हो जाते तो अमेरिकन एकता के युद्ध का और ही दृश्य होता । हमारे जीवन में जो पग-पग पर असफलताएँ दिखाई दे रही हैं, वह हमारे भाग्यवाद के कारण ही हैं यदि इस हीन भाव को भगा दें तो जीवन संग्राम में हम भी लिंकन के समान ही सर्वत्र सफलता अर्जित कर सकते हैं ।

बड़ों के बड़े अन्ध-विश्वास

तुर्की में मुसलमान अमीरों के बड़े-बड़े हरम होते हैं । ये चाहते थे कि औरतें न केवल उनकी वासना पूर्ति किया करें, वरन् साथ-साथ प्रेमिका की भूमिका भी निभाया करें, पर ऐसा होता नहीं था । बाल-बच्चों की संख्या वृद्धि, उपेक्षा से स्वास्थ्य की गिरावट और पारस्परिक कलह और अविश्वास के वातावरण में प्रेम नाम की वस्तु दुर्लभ हो जाती थी, जबकि अमीर दुहरा फायदा उठाना चाहते थे ।

इस कमी की पूर्ति के लिए वे हकीमों और लाल बुझक्कड़ों से तरह-तरह की तरकीबें—जादू, मंत्र पूछा करते थे । इस फेर में राज-घरानों में भी अन्ध-विश्वासों का अम्बार लगा रहता था । इस मर्ज की दवा शहद में डुबा कर अंगूर खाने से लेकर गधी के दूध को पीना और उसमें नहाना भी एक नुस्खा था । और भी कई प्रकार की जड़ी-बूटियों की प्रशंसा होती थी, जिसमें हकीम-तबीबों की चाँदी रहती थी, पर फायदा किसी को कुछ न होता था । अन्ध-विश्वास पिछड़े लोगों में जितना था उसकी तुलना में अमीर घरों में कुछ अधिक ही था, कम नहीं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदमी बहुत समझदार माना जाता है । यहाँ तक कि समझदारों का एक विषय वर्ण भी होता है जो रहस्यमय बातों के कारण बताया करते हैं । साधारण आदमी उनके बताये पर विश्वास कर लेते हैं । विज्ञ होने का दावा करने वालों की बातों में जो दावा किया जाता है उसके बारे में सामान्यजनों की अनुकरण इच्छा होती हो तो इसमें अचम्भे की कोई बात नहीं ।

टमाटर योरोप में पैदा हुआ उसे जहरीला फल घोषित किया गया । इस भय से प्रायः सौ वर्ष तक उसकी खेती रुकी रही । आम आदमी उसकी खेती करने से डरते थे कि उसे खाकर हमारे घर के लोग बीमार पड़ने या मरने न लगें । कीमियागरों ने उसको शुद्ध करने की तरकीब निकाली । जैसे भिलावा, गंधक आदि को शुद्ध किया जाता है, उसी तरह टमाटर का भी शोधन किया गया और बताया गया कि शुद्ध टमाटर में रक्तमाँस के से गुण होते हैं, क्योंकि तोड़ने पर उसमें रक्तमाँस जैसा गूदा निकलता है ।

आलू जब नया उत्पन्न हुआ तो गुणी लोगों ने इसके बारे में घोषणा की कि यह ताकत का भण्डार है । ताकत की जरूरत योद्धाओं को होती है, इसलिए उसकी खेती सरकारी नियन्त्रण में होने लगी । और जो जितने महत्त्व का योद्धा था उसके लिए उसी अनुपात से आलू का कोटा मिलने लगा । उन दिनों एक सेर आलू का भाव सौ रुपया था । सौन्दर्यता बढ़ने और कामुकता भड़काने के लिए गधी का दूध बहुमूल्य माना गया । उन जमाने में गधे वजन ढोने के काम आते थे, पर गधियों का दूध निकाला जाता था और वह राजा-रईसों के राजमहलों में ही खपता था ।

आलू, टमाटर मामूली शाक तरकारी हैं । इनमें कोई विशेष गुण नहीं हैं, वह वहम प्रायः एक सौ वर्ष चलने के बाद समाप्त हुआ तब उसकी साधारण किसान खेती करने लगे और कौड़ी के मोल बिकने लगे । टमाटर के जहरीला होने का वहम भी इसी तरह समाप्त हुआ । कामवासना भड़काने और सौन्दर्य विकसित करने के लिए गधी के दूध में कोई विशेषता है । यह वहम भी जल्दी ही समाप्त हो गया । लाल बुझक्कड़ों के यह प्रतिपादन वैज्ञानिक खोजबीनों के सामने गलत सिद्ध हुए और एक बड़ा वहम झक मार कर हट गया ।

अशिक्षितों और देहातियों के अन्ध-विश्वास हँसी मजाक में उड़ा दिये जाते हैं और उन्हें तर्क से बाहर कह कर अमान्य ठहरा दिया जाता है पर राजा, रईस, अमीर, हकीम, तबीब जब मिथ्या कल्पनाएँ गढ़ते हैं और उन्हें सर्वसाधारण के गले उतारते हैं तो आश्चर्य होता है । आज कोई साधारण आदमी भी टमाटर, आलू के सम्बन्ध में वैसी मान्यताएँ नहीं रखता जैसी तुर्की में सैकड़ों वर्षों तक प्रचलित रहीं और किसानों को इन्हें उगाने से वंचित रहना पड़ा ।

इस बुद्धिवादी युग में भी अन्ध-विश्वास सफल कैसे?

जादू के हथकण्डों का रूप संसार में जो कुछ चल रहा है, उस पर समझदार लोगों को भी विश्वास करते हुए देखकर आश्चर्य होता है । अनपढ़, अनगढ़ और पिछड़े हुए लोगों के लिए भूत-प्रेत या देवी-देवता ही सब कुछ हैं । वे उनके निमित्त न जाने कितना-कितना समय, श्रम और धन बर्बाद करते हैं । यह हैरानी की बात है कि वे लोग शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, आजीविका आदि की परवाह न कर इस 'चमत्कारवाद' के नाम पर ऐसे फिदा होते हैं, मानो उनकी उन्नति के लिए उसका आश्रय लिए बिना कोई चारा नहीं । विपत्तियाँ, बीमारियाँ भी उन्हीं के कारण आती हैं ।

उस अन्धविश्वास का पूरा-पूरा लाभ ओझा लोग तथा उन देवी-देवताओं के एजेण्ट उन्हें प्रतिकूल से अनुकूल बनाने के नाम पर लेते व इस वर्ग को बुरी तरह ठगते हैं ।

देवी के आगे पशुबलि देने का अन्ध-विश्वास, इस बुद्धि प्रधान युग में भी उसी प्रकार चल रहा है, जैसे सैकड़ों वर्ष पहले चलता था । देवताओं का पवित्र मंदिर सदाचार सिखाने के लिए है, न कि निरीह पशु-पक्षियों का रक्त बहाने के लिए । फिर भी वह प्रचलन यथावत् चल रहा है, उसमें राई-रत्ती ही कमी हो पायी है । करौली, विन्ध्याचल, कलकत्ता आदि में इस प्रथा का अभी भी वीभत्स रूप देखा जा सकता है ।

अन्य प्रकार की जादू-विद्या दिखाकर अपने को सन्त सिद्ध करने वालों की कमी नहीं । श्रीलंका के डॉक्टर कोवर ने बैंक में एक लाख रुपया इसी निमित्त जमा किया हुआ है कि बालों में से बालू निकाल देने जैसे चमत्कारों को यदि कोई सच सिद्ध करके दिखाये, तो वह इस राशि को सहर्ष प्राप्त कर सकता है । अभी तक किसी की हिम्मत नहीं पड़ी, जो अजूबों को सत्य सिद्ध करके दिखाये ।

बिहार (मुंगेर) जिले का समाचार है कि वहाँ किसी भी स्त्री के डाकिन या चुड़ैल होने की अफवाह फैला दी जाती है और कहा जाता है कि हमारे यहाँ बच्चे मर जाने, बीमारी का कोप होने का कारण यह चुड़ैल ही है । अवसर पाकर ग्रामीण लोग उसे मार डालते हैं । ऐसी हत्याएँ गत वर्ष ५० के लगभग हुईं । देवता पर नरबलि चढ़ाकर उससे अपने मनोरथ सिद्ध करा लेने के प्रसंग स्थान-स्थान पर होते रहते हैं और बच्चों की खासतौर पर बलि चढ़ाई जाती रहती है ।

यह अन्ध-विश्वास अफ्रीका के पिछड़े हुए देशों में विशेष रूप से देखा जा सकता है । योरोप आदि सुशिक्षित समझे जाने वाले देशों में भी यह सब कम नहीं है, वहाँ 'योगा' के नाम पर न जाने कितने साधु बाबा लोगों की हजामत बनाते हैं । एक बार तो अल्जीरिया को स्वतंत्रता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त करने का अवसर एक सौ वर्ष पीछे के लिए धकेलना पड़ा ।

बात सन् १८५७ ई. की है, जब अल्जीरिया के नागरिकों ने अपनी गुलामी का लबादा उखाड़ फेंकने के दृढ़ संकल्प से विदेशी शासन—फ्रांस के विरुद्ध क्रान्ति कर दी थी । फ्रान्सीसियों के पैर उखड़ने ही वाले थे कि एकाएक फ्रांस के निराश सेनानायक का ध्यान अल्जीरिया की ओर गया । उसने अल्जीरिया के अन्ध-विश्वासों से लाभ उठाने के लिए फ्रांस के प्रसिद्ध जादूगर राबर्ट होडिन को बुला लिया । होडिन ने सम्पूर्ण अल्जीरिया में जगह-जगह घूमकर जादूगरी के ऐसे करिश्मे दिखाये कि अल्जीरियावासी उस जादूगर को दैवी शक्ति सम्पन्न समझने लगे ।

चमत्कारों का भारी प्रभाव पड़ता देख होडिन ने अल्जीरिया के समस्त ओझाओं, भूत-प्रेत विशेषज्ञों को एक छोटा-सा सन्दूक उठाने की चुनौती दी । आयोजन राजधानी में रखा गया, जिसमें प्रमुख क्रान्तिकारियों सहित सभी आमन्त्रित विशेषज्ञ उपस्थित थे । किसी भी ओझा से राबर्ट होडिन का संदूक न उठा, अन्त में होडिन को ही उस बक्से को उठाना पड़ा । उसने बक्सा बड़ी ही सरलता से उठाकर घुमा दिया । हुआ यह था कि लोह सन्दूक के नीचे होडिन ने बड़ी कुशलता से एक शक्तिशाली चुम्बक लगा दिया था जिससे सन्दूक चिपक गया था । उससे हटाने की कला जादूगर के अलावा अल्जीरिया वालों को ज्ञात नहीं थी और न ही उन्हें यह पता था कि बक्से के नीचे चुम्बक फिट है ।

इस चमत्कार का प्रभाव यह हुआ कि होडिन को अल्जीरियायी सबसे बड़ा ओझा और दैवी शक्ति सम्पन्न चमत्कारी सिद्ध पुरुष मान बैठे और सैकड़ों वर्ष तक पुनः फ्रांस की गुलामी में फँस गये ।

सभी अशासकीय स्वावलम्बी, समाजसेवी संस्थाओं को मिल-जुलकर यह प्रयास करना चाहिए कि अन्ध-विश्वास, मूढ़मान्यताओं के खिलाफ मोर्चा बनायें । इक्कीसवीं सदी की ओर बढ़ते भारत में हमें नर-बलि, जीभ काटने, बेवकूफीवश लुट जाने जैसे घटनाक्रम सुनने को न मिलें ।

अन्ध-विश्वास खून का प्यासा महादैत्य

अब पिछड़े लोगों की तरह प्राचीनकाल में भी लोगों का यह विश्वास रहा है कि मृत आत्माएँ जीवित स्थिति की तरह ही भूख-प्यास अनुभव करती हैं—इन्द्रिय सुख और विलास प्रमोद के साधन चाहती हैं । यह वस्तुएँ पाने के लिए वे अपने उत्तराधिकारियों से अपेक्षा रखती हैं । जुटा देने पर वे प्रसन्न, संतुष्ट होकर उपहार, वरदान देती हैं अन्यथा रुष्ट, कुपित होकर वे अपने कुटुम्बी, सम्बन्धियों को डराती, सताती हैं ।

अब भी लोग मृत शरीरों के साथ रुपया, पैसा, जेवर, वस्त्र, खाने-पीने की चीजें गाढ़ते, जलाते हैं ताकि वे वस्तुएँ उन मृतात्माओं के उपभोग में आ सकें । मरने के बाद पिण्डदान के कर्मकाण्ड तो किये ही जाते हैं । महा ब्राह्मणों को शय्या, अन्न, वस्त्र, अलंकार, बर्तन आदि भी इसी निमित्त दिये जाते हैं कि दी हुई वस्तु सीधी मृतात्मा तक पहुँच जायेगी और वे उनके उपयोग में उसी तरह आवेंगी जैसे कि जीवित अवस्था में उनके काम आती थीं ।

कहीं-कहीं के लोग पुराने समय में इस सम्बन्ध में और भी अधिक गहरे अन्ध-विश्वासों में डूबे हुए थे । वे सोचते थे जहाँ मृत शरीर गाड़ा गया है, वहीं प्रेतात्मा रहती है, इसलिए उपभोग की वस्तुएँ उसी जगह सुरक्षित रहनी चाहिए, यों लोग कब्रों और समाधियों का निर्माण अभी भी यही समझ कर करते हैं कि मृतात्मा को वही स्थान सर्वप्रिय होगा जहाँ उनका शरीर ठिकाने लगा है, अस्तु उनके निवास विश्राम के लिए वहीं कुछ छोटा बड़ा स्थान बनाया जाना चाहिए । पुराने लोगों का यह विश्वास और भी अधिक गहरा था । वे मृतात्माओं को प्रसन्न करने और उनके क्रोध से डरने में और भी अधिक आगे थे । अस्तु इस सम्बन्ध में अधिक मुस्तैदी से प्रयत्न करते थे कि मृतकों को अधिक सन्तुष्ट करने के लिए उनके लिए अधिक बहुमूल्य उपहार जुटाये जायें ।

यह अन्ध-विश्वास तब चरम सीमा तक जा पहुँचता था, जब मृत सम्पन्न लोगों के सत्ताधीशों के साथ उनके उपभोग के लिए ढेरों सुन्दर युवतियाँ और सैकड़ों नौजवान सेवक जीवित ही दफना दिये जाते थे । सोचा जाता था कि मृतात्मा इनका उसी तरह उपभोग करेंगी जैसा कि वह जीवित स्थिति में करती थी । यह अन्ध-विश्वास अपने देश में सती-प्रथा के रूप में था । पत्नी को दिवंगत पति की सेवा करने के लिए उसके मृत शरीर के साथ जलना पड़ता था, जो नहीं जलती थीं, उसकी निन्दा की जाती थी । मिस्र आदि देशों में यह उत्तराधिकरियों का कर्त्तव्य हो जाता था कि अपने मृत सम्बन्धियों के लिए न केवल उपयोग की वस्तुओं का वरन् पत्नियों और सेवकों का भी प्रबंध करें । जिस मृत के साथ जितने अधिक नर-नारी परलोक भेजे जा सकें वह उतना ही बड़ा सौभाग्यशाली माना जाता था और उसके परिजन उतने ही अपने पितरों के भक्त, पुण्यात्मा माने जाते थे । गरीब मृतकों को तो तब भी मिठाई, पकवान, छोटे-मोटे मुर्गी, बकरे, शराब पात्र, नये पुराने बर्तन, कपड़े साथ ले जाकर सन्तोष करना पड़ता था । मध्यवर्ती लोग अधिक बहुमूल्य वस्तुएँ और कुछेक नर-नारी दफनाते थे, पर राजा, बादशाहों के लिए तो यह प्रतिष्ठा का प्रश्न था । अन्यों की तुलना में वे पीछे नहीं रहना चाहते थे, कम से कम मृत शरीरों के साथ जीवंत बलियों के सम्बन्ध में तो उन्हें अधिकाधिक सौभाग्यशाली होना ही चाहिए ।

मिस्र के राजाओं की श्मशान भूमि सुविस्तृत क्षेत्र में फैली पड़ी है । ऊँची पहाड़ियाँ, भयंकर खड्ड, सूखा रेगिस्तान, इसी को बादशाहों की घाटी कहा जाता है । राजा लोग अपने लिए सुरक्षित स्थान देख थेवेस चले गये थे । काहिरा की अपेक्षा यहाँ उन्होंने अधिक सुविधा समझी और वहाँ रहना प्रारम्भ किया । इसी के समीप है वह घाटी जिसमें उनके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बहुमूल्य कब्रिस्तान बने हुए हैं । पिरामिडों के इस इलाके में तूतन खामन की वह कब्र थी जिसको सबसे अधिक मूल्यवान् समझा जाता था । उसकी तलाश में इंग्लैण्ड के एक साहसी युवक हार्वर्ड कार्टर ने अनवरत पश्रिम किया, इसके लिए उसे लार्ड कानरिवन का प्रोत्साहन एवं आर्थिक सहयोग भी मिला । अन्ततः उसने उस कब्र को ढूँढ़ ही निकाला ।

यह कब्र ईसा से कोई एक हजार वर्ष पूर्व बनी थी । पिरामिड जितना मूल्यवान था, उससे भी अधिक कीमती वह सम्पत्ति थी जो मृतक की सुरक्षित लाश के साथ गाड़ी गई थी । खुदाई में स्वर्ण निर्मित पलंग, आभूषण, बर्तन तथा दैनिक उपयोग की अन्य वस्तुएं ऐसी मिली हैं जिनका बाजारू मूल्य भी करोड़ों रुपया है । कला की दृष्टि से वे और भी अद्भुत हैं । मृत शरीरों को रासायनिक पदार्थों से भर कर एवं पोत कर किस प्रकार हजारों वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकता है इस कला से मिश्र के लोग अब से पाँच हजार वर्ष पूर्व ही परिचित हो गये थे । आरम्भ में यह प्रयोग राजाओं की लाशें सुरक्षित रखने के लिए किया गया था । पीछे जब बहुत प्रचलित हो गया तो उसे मध्य श्रेणी के लोगों के लिए भी प्रयुक्त किया जाने लगा, यहाँ तक कि बड़े आदमियों के पालतू पशु भी इस प्रकार सुरक्षित बनाकर दफनाये जाने लगे ।

कब्रों में मृत शरीरों के साथ बहुमूल्य पदार्थ भी रखे जाते थे । उनका लोभ लुटेरे सहन न कर सके और उन्होंने कब्रों को कुरेद कर सम्पत्ति निकालना आरम्भ कर दी । स्वाभाविक था कि इस उखाड़-पछाड़ में लाशें भी क्षत-विक्षत हो जायें । इस संकट से बचने के लिए कब्रों के ऊपर विशालकाय पिरामिड बनाने की आवश्यकता अनुभव की गई । तदनुसार वे बने और प्रतिस्पर्धा में एक के बाद एक अधिकाधिक विशालकाय और सुदृढ़ बनते चले गये । पिरामिडों के निर्माण का कार्य ईसा से दो हजार वर्ष पूर्व आरम्भ हो चुका था ।

२७ विशालकाय और सैकड़ों छोटे पिरामिडों में तूतन खामन की कब्र न केवल सम्पत्ति के हिसाब से, वरन् कला की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है । कब्र के भीतर का कमरा बहुत ही सुन्दर बना है, वह १७ फीट लम्बा ११ फीट चौड़ा और ९ फीट ऊँचा है । इससे लगे हुए अन्य कमरे भी मिले हैं जिनकी दीवारों पर अत्यन्त कौशल के साथ ऐसे टिकाऊ रंगों से चित्रकारी हुई है जो इतना समय बीत जाने पर भी थोड़े से ही हलके पड़े हैं । इन चित्रों से पता चलता है कि मृतक की शव यात्रा से लेकर उसे दफनाने तक की क्रिया किस प्रकार सम्पन्न होती थी । साथ ही यह भी विदित होता है कि उस समय मरणोत्तर जीवन के सम्बन्ध में किस प्रकार की मान्यताएँ थीं ।

मृत शरीर के भीतर से रक्त, माँस प्रायः सभी निकाल लिया जाता था । चमड़ी और अस्थियाँ ही शेष रहती थीं । उन पर रासायनिक पदार्थ पोते जाते थे और भीतर ठोस पदार्थ भरकर ऊपर से मोम की परत इस प्रकार चढ़ा दी जाती थी कि मृत शरीर जीवित स्थिति जैसा ही दृष्टिगोचर होता रहे । इस मृत शरीर को ममी कहा जाता था । इसे शरीर की आकृति के एक सन्दूक में बन्द करते थे । पीछे उसे बड़े सन्दूक में बन्द किया जाता था । तूतन खामन का संदूक तो पूरा ठोस सोने का बना पाया गया है । इनके शरीर के इर्द-गिर्द स्वर्णाभूषण, रत्न राशि तथा चाँदी, सोने के पात्र अस्त्र-शस्त्र, शृंगार, साधन आदि रखे जाते थे ताकि परलोक में किसी वस्तु की कमी न पड़े । दैनिक उपयोग की वस्तुएँ सोने, चाँदी की इसलिए बनाई जाती थीं कि परलोक में उनकी हेटी न होने पाये और वे चिरकाल तक अपनी शोभा के साथ सुरक्षित बनी रहें ।

उन दिनों मिस्रवासियों का विश्वास था कि मनुष्य के शरीर में दो आत्माएँ निवास करती हैं—एक 'बा' जो शरीर के मर जाने के बाद आकाश में भ्रमण करती है और फिर वापस मृत शरीर में लौट आती है । दूसरी 'का' जो है तो अमर पर मृत शरीर की देख-भाल करती रहती है ताकि उसे ओसिरिस देवता के स्वर्गलोक में उसी शरीर सहित निवास कर सकने का अवसर मिल सके । यदि मृत शरीर बचा कर रखा जा सकेगा तो वे दोनों आत्माएँ उसे पुनर्जीवित करके स्वर्गलोक का आनन्द प्रदान कर सकेंगी । यह मान्यता उन दिनों मिस्र निवासी राजा-प्रजा सबके मन में बहुत गहराई तक उतर गई थी । फलतः न केवल राजाओं के, वरन् मध्यवर्ती साधन सम्पन्न लोगों के शरीर भी किसी प्रकार चिरकाल तक सुरक्षित बनाये रखने का प्रयत्न होने लगा था । पिरामिडों का निर्माण इसी मान्यता के कारण हुआ था ।

इन पिरामिडों के निर्माण का बहुत रक्तरंजित इतिहास है । फराऊन राजा अपने मरने से पूर्व स्वयं ही अपने लिए पिरामिड तैयार कराते थे, ताकि उनके उत्तराधिकारी उपेक्षा करके उनकी लोकोत्तर सुख-सुविधा के साधन जुटाने में कुछ कोताही न करने पायें । प्रायः बीस-बीस साल में उनका निर्माण हुआ है । इतनी अवधि तक प्रजा को इस निर्माण के लिए अतिरिक्त कर देना पड़ा है । समीपवर्ती राज्यों पर आक्रमण इसलिए किया जाता था कि वहाँ के नौजवानों को युद्ध बन्दी बनाकर पिरामिडों में काम करने वाले श्रमिकों के रूप में प्रयुक्त किया जा सके । प्रायः एक समय में एक-एक लाख श्रमिक काम करते थे । वे पच्चीस-तीस साल के होते थे, किन्तु दस साल में ही उनकी दम निकल जाती थी, तब उन्हें मृतकों में गिन कर छोड़ दिया जाता था और उनके स्थान पर नये युद्ध बन्दी पकड़ लिये जाते थे । यह क्रम सदियों तक चला है । थके हुए श्रमिकों की कार्य शक्ति बढ़ाने के लिए एक बार उन्हें यह प्रलोभन दिया गया कि यदि वे अधिक उत्साह से काम करने का वचन दें तो उनकी औरतों को बुला दिया जाय । जिन्होंने वायदा किया उनकी औरतें भी पकड़ बुलाई गईं । अब इनके बच्चे होने लगे । इन बच्चों का क्या हो ? फैसला किया गया कि उन्हें नील नदी में डुबो दिया जाया करे । इस प्रकार इन गुलामों के लाखों बच्चे नील नदी में डुबो दिये गये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

६.३२ प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा

पिरामिडों में भारी चट्टानें लगी हैं और वे इतनी घिसी गई हैं कि एक के ऊपर दूसरी रखने पर सुई बराबर भी सँध न रहे । उनमें कहीं गारे का उपयोग नहीं हुआ है । मोकत्तम के पहाड़ों से टनों भारी चट्टानें काटकर उन्हें छाती से रस्सी बाँधकर घसीटते हुए पिरामिडों की दूरी तक ले पहुँचना और फिर चार-चार सौ फुट की ऊँचाई तक रेंगते हुए ले जाना कितना कठिन कार्य है इसकी आज के यंत्र युग में तो कल्पना भी नहीं की जा सकती, पर उस जमाने के गुलामों से विवशता यह सब कुछ करा लेती थी । न करते तो उन्हें हन्टरों की मार से पिटते हुए मर जाने के अतिरिक्त और कोई चारा भी तो न था ।

मिस्र के जलते रेगिस्तानों और सूखी आवहवा ने रासायनिक द्रव्यों से पुती हुई लाशों को देर तक सुरक्षित रखने में सहायता की है, पर दुर्दान्त दस्युओं से वह भी इन लाशों की रक्षा न कर सके । उनके साथ जो विपुल सम्पदा दफनाई जाती थी उसका प्रलोभन इतना बड़ा था कि डाकुओं के अन्तर्राष्ट्रीय गिरोह, साधन-उपकरणों के साथ इन पिरामिडों पर चढ़ाई करने लगे और करोड़ों की सम्पत्ति लूटने में सफल होते रहे । इस कार्य में अरब डाकुओं ने अच्छी ख्याति पाई और उन्होंने उसे एक पुस्तैनी धन्धा बनाया । यों लाशों के साथ दबी सम्पत्ति का व्यौरा गुप्त रखा जाता था, पर वे किसी प्रकार सुराग लगा ही लेते कि कहाँ कितने मूल्य की सम्पत्ति इन कब्रों में दबी हुई है ।

मिस्र में छोटे-बड़े पिरामिडों की संख्या बहुत बड़ी है । इनमें कितने नर-नारी मृतकों के साथ बलि रूप में गढ़े हैं, इसका ठीक से लेखा-जोखा कठिन है, पर अनुमान है कि उनकी संख्या सहस्रों को पार करके लाखों तक पहुँची होगी और जिन्होंने श्रमिकों के रूप में अपना रक्त, माँस गला दिया भूख, पिटाई और पिसाई में जिनके प्राण और भी अधिक कष्टकर स्थिति में तिल-तिल करके घुलते, जलते निकले उनकी संख्या तो निस्संदेह लाखों को भी पार करके करोड़ों तक पहुँची होगी । इन अभागे जीवित मृतकों के प्रियजनों पर आश्रितों पर क्या बीती होगी, इसकी कल्पना करने तक से किसी सहृदय व्यक्ति की छाती फटने लगती है ।

ईराक में दजला और फरात नदियों के मुहाने पर अब से कोई पाँच हजार वर्ष पहले 'ऊर' को राजधानी बनाकर उस क्षेत्र पर एक रानी राज्य करती थी । पुरातत्व वेत्ता डा. बूली ने उसकी कब्र को सन् १९२७ में खोदा तो उसके अस्थि-पंजर पर पहना हुआ रत्नजटित स्वर्ण मुकुट मिला । इसके अतिरिक्त और भी अनेकों बहुमूल्य स्वर्ण आभूषण उसके शरीर पर धारण किये हुए थे । शृंगार प्रसाधनों की कई पिटारियाँ थीं तथा दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुएँ कीमती वस्तुओं से बनाकर सजधज के साथ रखी हुई पाई गईं । समय बहुत बीत जाने पर भी वे बहुत अधिक नष्ट नहीं हुई थीं । पास ही दो पुरुष अस्थिपंजर पाये गये । सम्भवतः वे उसके प्रिय सेवक थे जो मरणोत्तर जीवन में उसकी सेवा करने के लिए बलि के रूप में साथ ही दफना दिये गये थे । इससे कुछ ही दूर दस और भी अस्थिपंजर पाये गये इनमें नौ स्त्रियाँ थीं और एक पुरुष । पुरुष कलावन्त था उसकी छाती से चिपका हुआ सितार पाया गया । स्त्रियाँ रानी की दासी थीं, जिन्हें परलोक में भी सेवा करनी थी, इन सभी के समीप जहर के प्याले उलटे पड़े थे । उन्हें यही पीकर मरना पड़ा होगा ।

डा. बूली को उसी क्षेत्र की खुदाई में एक राजा की दूसरी कब्र मिली, जिसके इर्द-गिर्द ७४ अस्थिपंजर और भी पाये गये । यह सभी व्यक्ति मृत राजा के साथ मरणोत्तर जीवन में विविध प्रकार की सेवा सहायता करने के लिए बलि किये गये थे और उसी के समीप उपयोगिता की दृष्टि से पंक्तिबद्ध करके गाढ़े गये थे ।

मिस्र में ही नहीं मृतकों के लिए बलि प्रदान करने की प्रथा पुराने समय में न्यूनाधिक मात्रा में सर्वत्र फैली हुई थी । अमेरिका में मय सभ्यता की खोज करते हुए ऐसे ही प्रमाण पुरातत्व-वेत्ताओं ने उस क्षेत्र में भी पाये हैं । पादरी दिएगो दे लान्दा की डायरी में ऐसा उल्लेख है कि अब से पौने दो हजार वर्ष पूर्व इस क्षेत्र के सुसम्पन्न राजाओं में से किसी की मृत्यु होती थी तो उसके साथ बहुमूल्य रत्न, आभूषणों के अतिरिक्त अनेकों सुन्दर युवतियाँ तथा युवा कर्मचारी एक मृत्यु-कूप में धकेल दिये जाते थे । इस प्रकार उस कूप में अतुलित स्वर्ण सम्पदा दबी पड़ी है । बड़े प्रयत्नों के बाद टामसन ने न केवल मयों की राजधानी को, वरन् उसने बलि कूप को भी खोज निकाला, वह ८० फुट गहरा था । एक साधन सम्पन्न खोजी दल ने उस कुएँ की सफाई आधुनिक यन्त्रों की सहायता से की तो विपुल मात्रा में सोने और चाँदी के पात्र, आभूषण, हथियार मिले और असंख्य अस्थि पंजर निकाले गये ।

उस क्षेत्र के मोस्तेजूमा दुर्ग में देव राजा के लिए दी गई बलियों का एक कूप स्मारक पाया गया है जिसमें बहुमूल्य स्वर्णालंकारों के अतिरिक्त १,३०,००० खोपड़ियाँ भी खोद निकाली गई हैं । यह उन अभागे लोगों की हैं जिन्हें मृत राजा की सेवा करने के लिए परलोक में जाने को बलात् बाध्य होना पड़ा ।

एक दुर्बोध मय पाण्डुलिपि के आधार पर इतिहासकार फिग्रेरोजा ने लिखा है 'चिचेन इत् जा' के लोग मृत राजा के लिए ६० दिन का एक श्रद्धा अनुष्ठान करते थे । हर घर से एक युवती पकड़ी जाती थी और उसे मृतात्मा की प्रसन्नता के लिए धूम-धाम के साथ बलि कूप में धकेल दिया जाता था । इनके अतिरिक्त युद्धों में पकड़े गये युद्ध बन्दी भी उसी समारोह के समय उस कुएँ में धकेल दिये जाते थे ।

अन्ध-विश्वास भोलेपन और पिछड़ेपन का चिह्न माना जाता है और सरल दयनीय-सा लगता है, पर वह कितना क्रूर, निर्मम और रोमांचकारी होता है इसे बहुत कम लोग जानते हैं । अन्धविश्वास ने भूतकाल में करोड़ों लोगों का

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रक्त पिया है और अब भी वह असंख्य लोगों का रक्त खूनी जोंक की तरह पी रहा है । भारत में विवाहोन्माद, मृतक-भोज, भूत-पलीत, पशुबलि, जाति-पाँति, छूत-छात, बाल-विवाह, नारी उत्पीड़न, पर्दा-प्रथा आदि के नाम पर करोड़ों लोगों ने मानवीय अधिकारों को अपने जूते की नोंक से रौंदना कहा है । धर्म की आड़ में छिपा बैठा अधर्म का महादैत्य अन्धविश्वास हमारी मान्यताओं का अंग बना बैठा है, इसलिए सह्य ही नहीं प्रिय भी लगता है, पर उसके दुष्परिणामों को देखा जाय तो भूतकाल के मृतकों के लिए की गई नृशंस नरबलियों से उसकी क्रूरता तनिक भी कम नहीं है ।

बुढ़िया पुराण से सावधान

पद्मपुराण, गरुड़पुराण, बिष्णुपुराण आदि अठारह पुराणों के नाम तो सबने सुने होंगे, परन्तु इस उन्नीसवें पुराण का कहीं लेखाजोखा नहीं है । जिस प्रकार वेदों के लेखबद्ध होने से पूर्व वेदों के मन्त्र पिता से पुत्र याद करते चले आते थे, इसी प्रकार आजकल भी बूढ़ी स्त्रियाँ इस पुराण का मनन-पाठन करती हैं और अठारह पुराण धरे के धरे रह जाते हैं परन्तु इस उन्नीसवें का निशाना अचूक है । किसी में इतनी शक्ति नहीं कि उसका विरोध कर सके ।

दिल्ली निवासी एक सज्जन लिखते हैं कि हमारी दादी इस पुराण की बड़ी निपुण पंडिता थीं । बात-बात में मीन-मेख निकालना अपनी बात को प्रधान बनाना उनका नित्य का कर्म था ।

हमारे पिता महोदय धनाढ्य पुरुषों में गिने जाते थे । संसार में उन्हें सब प्रकार का सुख प्राप्त था केवल दुःख था तो यही कि उनकी कोई सन्तान जीवित न रहती थी । बालक चार वर्ष तक का होकर किसी रोग से पीड़ित हो कर संसार त्याग देता था । दो चार बालक नष्ट हो जाने पर हमारे माता-पिता तथा दादी के दुःख का बार-पार न रहा । किसी ने कहा 'आसेव हैं ऊपरी पराई का खलल है' किसी ने कहा 'परियों की छाया है' मियां अमरोहे वाले का कोप है, गरज जितने मुँह उतनी बातें । हमारी दादी को भी सोलह आने जम गया कि हो न हो अवश्य ही कोई ऐसी ही बात है । फिर क्या था । सियाने दीवाने, मुल्लाने, पीर फकीर, जाहरपीर सब छान मारे । हमारी माताराम गन्डे-ताबीजों से गोदनी की तरह लाद दी गईं । गुड़गाँवे की जात, मीरा की कढ़ाई और दुर्गा की कुर्बानी बोली गयी । पीरबख्श स्याना इस असाध्य रोग का चिकित्सक नियुक्त हुआ । धरती में एक गड्ढा खोदा गया उसमें माता को खड़ा किया गया । ऊपर से जल गिरा दिया । सामने के कमरे में एक बकरे को कुर्बान करके माता के ऊपर से वार कर चौराहे पर रात के बारह बजे रखवा दिया । लौंग का जोड़ा, चावल, सैंदूर और रोली से उस ढौंग की हाट को सजाया गया, परन्तु बात रह गई । हमारा जन्म हुआ और हम जी गये । दादी ने कहा ''रामजी रखों बालक कितने-कितने जतन से जीया है । इसका नाम भी ऐसा ही रखूँगी'' दादी की व्यवस्था पर न ओमप्रकाश, न विद्याभूषण, हमारा नाम रखा गया 'कूढामल' । एक तो हमारी सूरत ही भौंड़ी सी थी जिस पर नाम तो सोने पर सुगन्ध का काम दिया । जिस दिन हमारा जन्म हुआ प्रसव-ग्रह में गन्धक की धूनी दी गई । उठावने के पाँच पैसे रखे गये । जब दादी अथवा और कोई बाहर से आता तो थोड़ी-सी गन्धक आग पर डाल दी जाती थी, उनके विचार में भूत-प्रेतों से बचने के लिए यह आवश्यक पदार्थ था । यदि कभी माता हमें अकेला-दुकेला छोड़ कर चली जाती थीं तो उनकी जान को आ जाती 'तुम्हें जरा खयाल नहीं । कन्हें को अकेला छोड़ कर चल दी यदि परछावां पड़ जाय तो पेट पकड़े-पकड़े फिरोगी ।' हमारे जन्म के कई दिन पीछे हीजड़े और भांडों को खूब बेलें मिलीं । वर्ष भर के अन्दर-अन्दर दादी ने सब देवी-देवताओं को मना लिया । नये वस्त्र पहनने हमारे लिए निषेध कर दिये गये, हाँ औरों के बनाये हुए पुराने वस्त्र हमें पहनाये जाते थे । जब हम वर्ष भर के हुए तो कमेटी का आदमी टीके लगाने आया, परन्तु हमारी दादी ने शीतला महारानी के कोप के भय से दो चार रुपये देकर उसे टाल दिया । उसका परिणाम यह हुआ कि ९ वर्ष की आयु में हमें चेचक ने आ घेरा और एक आँख उसी ढकोसले की भेंट करके आज काणे राजा के नाम से प्रसिद्ध हैं । शरीर देखो तो उसमें आध-आध इन्च के गड्ढे जैसे किसी ने सिल खोट दी हो । करेला कुछ कड़वा कुछ नीम चढ़ा । यदि दोपहर को हम कहीं जाते तो दादी प्यार से कहतीं 'बेटा दोपहर को बाहर न फिरा करो चुड़ैलों का वासा होता है ।' यदि मैं दूध पीकर कहीं बाहर जाता तो राख चटाकर जाने देती थी । आँखों में काजल डालतीं तो मस्तक पर काला टिमकना अवश्य लगा देती थीं । एक दिन मैंने कहीं जाने को सुन्दर वस्त्र पहने, माता कहने लगीं 'आज तो कूड़ा बड़ा सुन्दर लगे ?' दादी तुरन्त बोल उठी 'थूक-थूक कहीं नजर न लग जाय' वहाँ से लौट कर मेरा स्वास्थ्य कुछ ठीक न रहा तो दादी बोली 'मैंने पहले ही कहा था कि नन्हें को नजर लग जायगी अब नोन, मिरच, राई वार कर चूल्हे में डाल । देख धसक आती है या नहीं । अगर धसक न आई तो स्याने को बुलाना पड़ेगा । हमारे जनम पर पंडित विद्याधर ने जन्मपत्री बनाई और कहा बालक बड़ा भाग्यशाली है, परन्तु दसवें वर्ष में पिता को भारी है । इसका उपाय कराओ । राहू चौथे और केतु सातवें घर में है । शनि राहू का स्थान लेना चाहता है दोनों का युद्ध है । शनि महाराज को शान्त करने का उपाय करो अन्यथा बड़ा कष्ट होगा । दादी के आग्रह पर पन्द्रह दिन तक २) रुपये रोज पर पंडित जी से जप कराया । शनिवार को छाया दान हुआ तेल और ताँबे का दान हुआ, डाकौत ने पूजन कराया । इस प्रकार चालीस पचास रुपये शनि को शान्त करने में लग गये । एक दिन लछमनिया दासी धूप में पड़ी थी मैं उसे उलाँघ गया, दादी ने कहा 'बेटा किसी को उलाँघा नहीं करते इससे उसकी आयु कम हो जाती है ।' हब्बे के डर से हमें कायर वीर बना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दिया था । जब कभी रोते तो दादी कहती 'बहू दे क्यों नहीं देती अफीम कुछ देर चैन से तो सोये ।'

छः वर्ष के होकर हम पाठशाला में प्रविष्ट हुए । एक दिन जब पाठशाला जाने को तैयार थे कि भौंदू नौकर ने छींक दिया । दादी बोली 'ठैर जा बेटा अभी छींक हुई है ।' जब परीक्षा के दिन होते तो दही पेड़ा खिला कर भेजतीं । यदि मार्ग में ब्राह्मण मिल जाता तो और अनर्थ होने का डर होता था । यदि पानी वाला भरे हुए कलसे या मेहतर भरा हुआ टोकरा लिए सामने आ जाता तो बस परीक्षा में उत्तीर्ण होने में शंका न रहती थी । पिता जी मेरठ की नौचन्दी देखने जा रहे थे । हम पूछ बैठे "बाबूजी कहाँ जा रहे हो ।" दादी ने कहा 'मेरे मुन्ना, जाते हुए किसी को टोका नहीं करते ।'

दादी की बान कुछ बड़बड़ाने की थी । बात-बात में शगुन-अपशगुन का अनुमान कर लेती थीं । प्रातःकाल पूजा करके आई हैं कह रही हैं न जाने किस डायन का मुँह देखकर उठी हूँ । दाईं आँख फड़क रही है न जाने आज भोजन भी मिलेगा या नहीं । बालक खेल रहे हैं और वहाँ जा पहुँची देख कर कह रही हैं 'बालकों को तराजू का खेल हो गया है घड़ी-घड़ी कन्धे पर धरते हैं तभी तो अनाज को आग लग गयी ।' दादी के जलाने को यदि हमने कभी छलनी सिर पर रखली तो चिल्ला उठी 'अरे मूर्ख, रख दे बूढ़े बाबा नाराज हो जायेंगे, फोड़े फुन्सी करेगा क्या ?

दालान में आई हैं पान खाते-खाते कह रहीं हैं 'कल से गले में दर्द हो रहा है न जाने किसने पानदान ठुकरा दिया है' इतने में लछमनिया बीच में से आग लेकर निकली वहीं से बरस पड़ीं 'मैंने मूंडी काटी तो दसियों बेर समझाया है कि बीच में से आग लेकर न निकला कर । किसी से बैर करवायेगी ? यदि बीच में माता कुछ बोलीं तो उन्हीं पर उलट पड़ी 'बहू सबेरे से तीन बार मेरे मुँह आ चुकी हो कहीं खुरेड़े पलंग पर तो सोकर नहीं उठी हो । कुरती सीने बैठी है इतने में नायन आ जाती है । आप ही आप बड़बड़ा कर कहती हैं । ' न जाने किस निगौड़ी को पैरा है अभी कुरता लेकर बैठी थी, यह आ गई, आज तीन दिन हो गये यह कुरता ही खड़ा न कर सकी, जाने इसका महूरत कब आवेगा ।' आँधी वर्षा आ रही है माता समझा रही हैं नंगे सिर क्यों फिर रही है । इसी प्रकार प्रातःकाल से सायंकाल तक चिन्दी की बिन्दी निकालती रहती थीं । होली के दिन थे, लोग जादू-टौने की चिन्ता में लग रहे थे । तिराहे-चौराहों पर बहुत-सा सामान कुत्ते-बिल्ली खाते फिर रहे थे । दादी ने मने कर दिया वहाँ न जाना किसी की झपेट में आ जाओगे । होली का दिन आया उस दिन आटे का दीपक कुछ रोटियाँ चावल हमारे ऊपर से वार कर चौराहे पर रखवा दिये गये । चौराहे पर भिश्ती मशक लिए खड़ा था उसने पैसा लेकर पानी बहा दिया ।

बालकों के गले में मेवा के हार डाले गये । खूब होली मची । रंग, गुलाल, कीचड़, कालिख, सुनहरी रौगन, कौन-सी वस्तु थी जो इस सुअवसर पर काम में न लाई गई हो । हमारे चाचा साहिब ऐसी होली से कोसों दूर भागते थे । द्वार बन्द करके घर में बैठ जाते थे । इसी पर दादी बिगड़ बैठतीं 'आभागा है वर्ष भर का त्योहार है । नहूसत फैला रखी है । न किसी से बोलना न चालना।' होली के कुछ दिन पीछे बसौड़ा आता । इसमें घर भर बासी खाने में ही सौभाग्य समझता है । मिट्टी के सैनक (बर्तन), सराई कुल्हिय रोटी, चावल, मसूर की दाल, बिनौले, कच्चे चने, सूत का गोला, कढ़ी, कागम का ताब यही सब वस्तुएँ चौराहे की माताराती की भेंट चढ़ाई जाती थीं, जिन्हें मेहतर अपने टोकड़े में भरता जाता था । बची-खुची चीजें कुत्ता खाकर पेशाब कर जाता था । सब बालकों को कौड़ियों के हार पहनाये जाते । झंडू महतर एक मुर्गा लिए खड़ा रहता था और प्रत्येक बालक के सिर पर से फड़फड़ाता और दक्षिणा लेता था, यह सब काम दादी की आज्ञानुसार होता था । न जाने इतनी बातें दादी याद क्यों कर रखती थीं । लड़का बी.ए., एम.ए. की परीक्षा पास करते ही सब पढ़ा-लिखा भूल जाते हैं, परन्तु वह मरते दम तक कभी एक बात में भी फेल न हुईं । गली मुहल्ले, जाति बिरादरी में इसी से उनका मान था । प्रत्येक गूढ़ विषय में उन्हीं से व्यवस्था माँगी जाती थी । जब मुझे भली प्रकार ज्ञान हो गया तो मैंने एक दिन दादी से पूछा 'दादी ये सब बातें कौन से पुराण, वेद, शास्त्र, संस्कार विधि, शासन-पद्धति में लिखी हैं ? दादी मन ही मन बुड़बुड़ाने लगी 'न जाने यह मुये आरिया कहाँ से पैदा हो गये हैं । सारा धरम-करम भाग के भाड़ में चला गया । बेटा तुम इन बातों को क्या जानों । बड़ी गूढ़ हैं । बड़े-बूढ़ों की चलाई हुई है ।' मैंने कहा तो वह बुढ़िया पुराण की बातें हैं ।

धार्मिक क्षेत्र में धूर्तता और ठगी की करतूतें

धर्म की उपयोगिता मानी हुई है । लोक और परलोक हित उससे होता है । उसकी उपयोगिता सभी स्वीकार करते हैं । कोई उसके बल लौकिक स्वार्थ साधन करते हैं और कोई पारलौकिक कल्याण के लिए उसका अनुष्ठान करते हैं । कहा जाता है कि भारत धार्मिक देश है । 'कहा जाता है' इसका प्रयोग मैं इसलिए करता हूँ कि मेरा मन इस बात पर विश्वास नहीं करता, क्योंकि इस अध्याय में जिन बातों का मैं वर्णन करूँगा उनके अनुष्ठाता तो भारतवासी ही हैं, पर वैसे आचरण वालों को कोई धर्मात्मा नहीं कह सकता । कम से कम मेरा तो ऐसा ही विश्वास है । यद्यपि भारत धार्मिक देश है, यहाँ के निवासी धर्मात्मा हैं, धर्म के प्रेमी हैं । धर्म के लिए त्याग भी करते हैं । भारतीय धर्म-पुस्तकों का उपदेश है कि यदि तुम धर्म की रक्षा करोगे तो धर्म भी तुम्हारी रक्षा करेगा । अर्थात् धर्म पर चलने से तुम बलवान बनोगे और तुम्हारी रक्षा होगी । ऐसे विश्वास से लाभ भी हो सकता है और हानि भी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारतीयों के धार्मिक विश्वास से धूर्तों ने लाभ उठाया और धार्मिक संस्थाओं को जनता की आँखों से गिराया । भारतवासी धर्म से प्रेम करते हैं । जो धर्माचरण करता है उसकी इज्जत करते हैं, उसको दान देना, उसकी सेवा सुश्रूषा करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं । यह देखकर कई धूर्तों ने इन्हें खूब ठगा । कोई संन्यासी बना, कोई वैरागी, कोई शैव बना, कोई वैष्णव । किसी ने राख पोती, किसी ने चन्दन, कोई आग के बीच में बैठा, कोई जल में खड़ा हुआ । यह इसलिए किया गया कि हम उसे धर्मात्मा समझें, माहात्मा मानें । उन्हें अपने कल्याण की चिन्ता नहीं, धर्म या धार्मिक क्रियाओं पर उनका विश्वास नहीं उनका उद्देश्य होता है जनता में धर्मात्मा के नाम से प्रसिद्ध होना और उसके द्वारा अपना प्रभाव विस्तार करना । ऐसे धर्म के उपहास करने वाले को हम मतलबी और ठग कह सकते हैं ।

इन धूर्तों ने हमारे धार्मिक विश्वास से अनुचित लाभ उठाया । खुद डूबे और हमें भी डुबाया । देश और विदेश के धूर्त हमारी धार्मिकता सुनकर दौड़ पड़े, हमें धर्म सिखाने लगे । कोई अवतार लेकर आया और कोई महायोगी बनकर किसी ने आध्यात्मिक उन्नति का प्रलोभन ही दिखाया । किसी ने अपने को जीवन्मुक्त कहा । हमारी विश्वासी प्रकृति ने छानबीन नहीं की । हमने सभी चमकीली चीजों को सोना समझ लिया । इसका फल यह हुआ कि आज हम मूर्ख बन गये हैं । हमारा धर्म, हमारा वैज्ञानिक धर्म, हमारे लिए उपहास की सामग्री बन गया है । यह हमारी उन्नतियों का विरोधी हो गया है । हमारे धर्म से लाभ उठाते हैं, हमारी उन्नति के विरोधी ।

साधारण मनुष्य शानोशौकत ज्यादा पसन्द करते हैं । अच्छा भोजन, गाड़ी, घोड़ा, मोटर, बंगले आदि को ये स्वर्ग सुख समझते हैं । इस स्वर्ग-सुख को पाने के लिए उस प्रकृति के सज्जन उत्सुक रहते हैं । उनका प्रयत्न इसी के लिए होता है । इस उद्देश्य की हम निन्दा नहीं करते । ऐसा तो होना ही चाहिए । बहुत लोग ऐसा करते ही हैं और उनसे समाज को लाभ ही है । उनके कार्यों से समाज के सामने कोई आदर्श भी उत्पन्न नहीं होता । मेरा कहना केवल इतना ही है कि अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए ठगी नहीं करनी चाहिए, समाज को नष्ट करके ऐसा करना अपराध है ।

दुःख है कि हमारे समाज में ऐसे अपराधियों की संख्या बढ़ रही है । बिना रुपये, पैसे के धन पैदा करने का नुस्खा मिल गया है । लोग समझते हैं कि बिना पैसे के काम चल गया, कैसी बुद्धिमानी की हमने । उनकी दृष्टि में ईमान का कुछ मूल्य नहीं होता । यदि वह होता, तो वे इस महँगे सौदे के फेर में न पड़ते । कुछ रुपयों के लिए, साधारण सुख के लिए ईमान बेचा जाय, इसे तो साधारण समझ वाला महँगा ही समझेगा । धर्म, समाज और ईश्वर से डरने वाला ऐसे सौदे की बात ही नहीं करेगा, पर कुछ साहसी लोग ईमान बेच रहे हैं । पेट के लिए, पूरी मलाई के लिए, पलंग और गद्दी के लिए विश्वासी हृदयों के विश्वास के कोमल पौधे को जड़-मूल से उखाड़ फेंकते हैं । हाय दुर्भाग्य !

समाज तो रहेगा, उजड़ कर भी रहेगा और फिर इसके दिन भी पलटेंगे, आज नहीं, दस दिन के बाद । व्यक्ति बहुत दिनों तक भूल नहीं कर सकते । एक दिन परिस्थिति उनको मजबूर करेगी, अपनी दशा सुधारने के लिए । वह दिन आज भी हो सकता है और दस दिन के बाद भी आ सकता है । अतएव विचार यह है कि उनकी क्या दशा होगी, जो इतना महँगा सौदा खरीदते हैं । दुनिया की चीजों के लिए स्वर्ग का ईमान लुटाते हैं । धर्म के बदले में धन लेते हैं ।

आलसी, निकम्मे आदमियों की इन्द्रियाँ प्रबल होती हैं । उनकी लालसा इतनी बढ़ी होती है कि वे उसे रोक नहीं सकते । फिर वे करें तो क्या करें ? पैसे आयें कहाँ से ? नौकरी तो वैसे निकम्मों से होती नहीं और उन्हें नौकरी देता भी है कौन ? व्यापार के लिए पैसे चाहिए । ये चीजें कहाँ मिलें ? पैसे ही होते तो चिन्ता किस बात की थी ? यदि व्यापार के लिए कुछ पैसे जुटाये भी जाएँ तो उसमें लाभ ही होगा इसका निश्चय भी नहीं है । ऐसी दशा में वैसी प्रकृति वालों के लिए दो ही उपाय रह जाते हैं, एक तो यह कि वे अपनी आदतें सुधारें, मेहनत-मजदूरी करके रूखा-सूखा जो कुछ मिले, उसी पर सन्तोष करें या दूसरा उपाय यह हो सकता है पैसे का प्रबन्ध करें । जिस तरह से हो, पैसे पैदा करें । ऐसे लोग पहले घर की चीजें बेचते हैं, जमीन, जायदाद, घर आदि बेचकर अपनी इच्छाएँ पूर्ण करते हैं । फिर स्त्रियों के गहने बाजार में ले जाते हैं, अन्त में ईमान की बारी आती है ।

कुछ ऐसे भी इस दल में देखे गये हैं, जो ईमान ही से शुरू करते हैं । ये कुछ पढ़े-लिखे नहीं होते, धर्माधर्म का भी इन्हें ज्ञान बहुत ही थोड़ा, नाम मात्र ही का होता है । पर होते हैं साहसी, दिल के पक्के, अतएव ईमान बेचकर, धर्म की दलाली कर तथा लोगों के साथ विश्वासघात करके पेट पालते हैं और दुनिया में चैन की वंशी बजाते नजर आते हैं ।

सच्चे और दिखावटी धर्मात्मा

परमात्मा का सत्य ज्ञान प्राप्त करना अथवा ईश्वरानुभूति सृष्टि के विकास-क्रम की अन्तिम सीढ़ी है । इसके पश्चात् प्रथम तो आत्मा जन्म धारण करती ही नहीं और यदि करती भी है, तो वह अहंकारमूलक मन के रूप में नहीं, वरन् समष्टि मन (यूनीवर्सल माइण्ड) के रूप में अवतीर्ण होती है । अहंकार-मूलक मन जन्म कर्म-बन्धन के अधीन होता है, पर ईश्वरानुभूति वाले व्यक्ति अथवा ईश्वर-पुरुष का अवरोहण कर्म-बन्धन के अधीन नहीं होता । साधारण पुरुष अपनी अदम्य तृष्णा की प्रेरणा से बाध्य होकर जन्म लेता है, किन्तु ईश्वर-पुरुष भ्रम तथा बन्धन में फँसे हुए लोगों के प्रति असी तथा सहज करुणा के कारण संसार में अवतीर्ण होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

६.३६ प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा

जिन्हें ईश्वर की सच्ची अनुभूति प्राप्त नहीं हुई है द्वैत की सीमा के भीतर ही रहते हैं और विभिन्न क्षेत्रों में अनेक पारस्परिक लेन-देन के कार्यों के परिणामस्वरूप, वे अपने बन्धनों की सृष्टि करते हैं जिनसे छुटकारा पाने में वे असमर्थ हो जाते हैं । उनके पारस्परिक सम्बन्धों का यह फल होता है कि या तो वे किसी के ऋणी हो जाते हैं या कोई दूसरा उनका ऋणी हो जाता है । किन्तु ईश्वर-पुरुष अद्वैत या एकता में निवास करता है, इसलिए उसके कार्य बन्धनकारक किसी भी दशा में नहीं होते, वरन् उनके प्रभाव से कर्म-बन्धन में ग्रस्त लोगों को मुक्ति मिलती है । ऐसा एक भी प्राणी नहीं होता जो ईश्वर-पुरुष की सत्ता के अन्तर्गत न हो । वह सभी में अपने आपको देखता है और चूँकि उसके सभी कार्य अद्वैत-चेतना से स्फुरित होते हैं, अतः वह स्वतन्त्रतापूर्वक दे सकता है और स्वतन्त्रतापूर्वक ले सकता है । वह किसी को देकर अपना ऋणी नहीं बनाता और न किसी से लेकर वह उसका ऋणी बनता है । उसके कार्य, उसके लिए तथा अन्य मनुष्यों के लिए बन्धनकारक नहीं होते ।

ईश्वर-पुरुष सब पर समान रूप से अनुग्रह की वर्षा करता है । यदि कोई व्यक्ति निष्कपट भाव से उसका अनुग्रह स्वीकार करता है, तो वह ईश्वर-पुरुष से ऐसा सम्बन्ध स्थापित करता है जो उसकी ईश्वर प्राप्ति तक कायम रहता है और यदि कोई पुरुष अपना जीवन और सर्वस्व समर्पित करके ईश्वर-पुरुष की सेवा करता है तो उसे ईश्वर-पुरुष की सहायता प्राप्त होती है और उससे उसकी आध्यात्मिक उन्नति होती है । यदि कोई मनुष्य ईश्वर-पुरुष के कार्य का विरोध करता है, तो भी उसका ऐसा सम्बन्ध स्थापित होता है कि जो अप्रत्यक्ष रूप से उसे ईश्वर की ओर बढ़ाने में सहायक होता है । इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति, जो इच्छा से या अनिच्छा से उसके कार्य-क्षेत्र में प्रवेश करता है, किसी न किसी प्रकार से आध्यात्मिक उन्नति करता है ।

धार्मिक-कृत्य कराने वाले पंडित, पुजारियों और ईश्वरानुभूति वाले पुरुष की कार्यशैली मूल रूप से भिन्न होती है । परम्परागत रूढ़ियों के धर्म को मानने वाले अधिकांश पुरोहित, लोकाचार तथा विधि निषेधों को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देते हैं । वे स्वयं भी स्वार्थपरता, संकीर्णता तथा अज्ञान से मुक्त नहीं होते, इसलिए वे नरक तथा स्वर्ग की बातें करके दुर्बल चित्त के और विश्वासी लोगों का अनुचित शोषण करते हैं । इसके विपरीत ईश्वर-पुरुष प्रेम, पवित्रता, सार्वलौकिकता तथा ज्ञान के जीवन में सदा के लिए प्रविष्ट हो चुका रहता है, अतः वह केवल आध्यात्मिक महत्त्व की ही बातों से सम्बन्ध रखता है और अन्तर्भूत आत्मा को प्रकट करने के उद्देश्य से ही वह मनुष्यों की सहायता करता है । स्वयं अज्ञान में फँसे रहने वाले मनुष्य आत्म-भ्रांति या स्वार्थपरता के कारण भले ही ईश्वर-पुरुष की-सी भाषा बोलें, उसकी-सी वेश-भूषा बनालें, उसके समान बाह्य आचरण करें, पर वे ईश्वर-पुरुष के कार्यों की नकल कदापि नहीं कर सकते ।

धर्म का केवल बाह्य आचरण करने वाले लोगों में ईश्वर-पुरुषों के दिव्य गुणों का सदैव अभाव रहेगा, किन्तु यदि वे आत्म-भ्रान्ति या पाखण्ड के कारण नकली वेश बनाकर ईश्वर-पुरुष होने का ढोंग करें तो कभी न कभी उनका भंडाफोड़ अवश्य हो जायेगा । आत्म-भ्रान्ति के कारण यदि कोई मनुष्य किसी भिन्न प्रकार के जीवन क्रम का आचरण करता है, तो इसका अर्थ यह है कि यह अभागा अपने को वैसा समझता है जैसा वह यथार्थ में नहीं है । कुछ भी न जानने पर वह समझता है, कि वह सब कुछ जानता है । वह भ्रमपूर्ण कार्य करते हुए भी अपने मन में सचाई से वैसा करता है । ऐसा भ्रांत मनुष्य निर्दोष माना जाता है, यद्यपि वह कुछ हद तक दूसरों की हानि कर सकता है, पर जो लोग कपट वेश बनाकर, पाखण्ड करके लोगों को ठगने के उद्देश्य से ही ऐसा ढोंग रचते हैं, वह अपने लिए निस्सन्देह घातक कर्म बन्धन उत्पन्न करते हैं । यद्यपि यह दुर्बल तथा विश्वासी व्यक्तियों को काफी हानि पहुँचा सकता है, पर वह सदैव लोगों की आँखों में धूल झोंकने में सफल नहीं हो सकता । समय आने पर आप ही आप उसकी पोल खुल जाती है । ईश्वर-पुरुष होने के उसके दावे का भंडाफोड़ हो जाता है, क्योंकि वह उसे सिद्ध नहीं कर सकता ।

अपने सार्वलौकिक कार्य को सिद्ध करने के लिए ईश्वर-पुरुष में अनन्त क्षमता पाई जाती है । दूसरों की सहायता करने के लिए वह किसी एक प्रणाली पर आसक्त नहीं रहता, वह परम्परागत विधि-निषेधों का अन्धानुकरण नहीं करता । वह स्वयं ही सबसे बड़ा नियम होता है । वह उपस्थित अवसर के अनुसार आचरण कर सकता है तथा परिस्थिति की आवश्यकता के अनुसार अभिनय कर सकता है, परन्तु वह किसी परिस्थिति से बँधता नहीं है । एक बार एक भक्त ने अपने गुरु से उनके उपवास करने का कारण पूछा । गुरु ने उत्तर दिया कि " मैं पूर्णता की प्राप्ति के लिए उपवास नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि पूर्णता तो मुझे पहले ही प्राप्त हो चुकी है और साधक भी नहीं हूँ । मैं औरों के लिए उपवास करता हूँ ।" कोई आध्यात्मिक साधक सिद्ध पुरुष की तरह व्यवहार नहीं कर सकता, क्योंकि सिद्ध पुरुष की सिद्धावस्था का अनुकरण करना साधक के लिए असम्भव है, पर सिद्ध पुरुष लोक-कल्याण के लिए साधक के समान आचरण कर सकता है । विश्वविद्यालय की सर्वोच्च परीक्षा जिसने पास कर ली है, वह बच्चों के सिखाने के लिए वर्णमाला के अक्षरों को बिना किसी कठिनाई के लिख सकता है । इसी प्रकार ईश्वर-पुरुष दूसरे लोगों को मार्ग दिखलाने के लिए भक्त की भाँति आचरण कर सकता है, यद्यपि उसने ईश्वर के साथ पूर्ण एकता प्राप्त करली है । ईश्वरानुभूति के पश्चात् भी वह दूसरों को मार्ग दिखलाने के लिए एक भक्तवत् अभिनय करता है । वह किसी एक प्रकार के आचरण से बँधा नहीं रहता । अपनी शिक्षा-पद्धति को वह सहायता के इच्छुक व्यक्तियों की आवश्यकतानुसार बदल सकता है । उसे स्वयं अपने लिए कोई वस्तु प्राप्त करने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यकता नहीं रहती, अतः जो कुछ भी वह करता है, वह दूसरों की आध्यात्मिक भलाई के लिए ही करता है ।

सच्चे ईश्वरानुभूति वाले पुरुष और अपने स्वार्थ के लिए कार्य करने वाले पुरुषों में मुख्य अन्तर यही है कि ईश्वर-पुरुष बिना कुछ कहे दूसरों की सहायता करता रहता है और दिखावटी धर्मात्मा बनने वाले दूसरों के कल्याण और उपकार का ढोंग करते हैं, पर उनका उद्देश्य सदैव अपना ही स्वार्थसाधन रहता है । इसी कसौटी से इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों की परीक्षा सहज में की जा सकती है ।

धर्म के नाम पर ठगी का व्यवसाय बन्द किया जाय

जीवन-निर्वाह के लिए लोग तरह-तरह के धन्धे, रोजगार, व्यापार, नौकरी आदि किया करते हैं । किसी को अधिक परिश्रम करना पड़ता है और आमदनी कम होती है और कोई थोड़ी मेहनत में ही ज्यादा कमाई कर लेता है और व्यवसाय सहज, सफाई और सम्मानित समझा जाता है और किसी में मैला-कुचैला रह कर काम करना पड़ता है । कोई व्यक्ति अपने काम में सच्चाई, ईमानदारी का भी यथाशक्ति ध्यान रखते हैं और बहुत से तिकड़म, चालाकी, बेईमानी को ही नोट पैदा करने का असली मार्ग मानते हैं ।

इस तरह दुनिया में सैकड़ों तरह के पेशे और सैकड़ों मनोवृत्तियों के व्यक्ति पाए जाते हैं । किसी को अपने मनोनुकूल रोजगार मिल जाता है तो वह सन्तुष्ट जीवन बिताता है और दूसरे को अपनी रुचि के प्रतिकूल कार्य परिस्थितिवश करना पड़ता है, पर एक बात सब में अनिवार्य रूप से पाई जाती है कि प्रत्येक पेशे में कम या अधिक परिश्रम करना पड़ता है, अगर कोई व्यवसाय हुआ तो साथ में पूँजी भी लगानी पड़ती है और नफा के साथ नुकसान के लिए भी तैयार रहना पड़ता है । यह भी कहा जा सकता है कि जिस काम में जितने सहज में अधिक कमाई हो सकती है उसमें उतना अधिक खतरा भी उठाना पड़ता है ।

पर भारतवर्ष में आजकल धर्म-व्यवसाय ने ऐसा रूप धारण कर लिया है जिसके लिए 'हर्र लगै न फिटकरी और रंग चोखा आवे' वाली कहावत चरितार्थ होती है । एक समय था जब धर्म का प्रधान लक्षण त्याग और तपस्या माना जाता था और संसार के हित के लिए— समाज के कल्याणार्थ अपने सुख-सम्पत्ति को त्याग कर पर-सेवा और परोपकार के मार्ग को अपनाता था, उसी को धर्मात्मा माना जाता था । पर जब से प्राचीन अध्यात्म विद्या का लोप होकर सर्वसाधारण में अन्ध-श्रद्धा ने घर कर लिया है, तब से त्यागी और तपस्वियों के बजाय धर्म का आडम्बर करने वाले मन्दिर, मठ, तीर्थों के अध्यक्ष, धर्म के कर्त्ता-धर्त्ता बन बैठे । ये लोग सामान्य पूजा-पाठ के सिवाय धर्म की रक्षा और उसके प्रचार का कोई कार्य नहीं करते, पर तो भी अपने को सबसे बड़ा धार्मिक ही नहीं, वरन् धर्म का प्रधान ज्ञाता और निर्णायक मानते हैं । इन लोगों में से अनेक का चरित्र प्रत्यक्षतः दूषित होता है, उनका रहन-सहन अमीराना और विलासी रहता है, वे सिवाय चेलों को बहकाने और भेंट-पूजा लेकर उसे अपने शौक-मौज में खर्च करने के दूसरा कोई कहने लायक काम भी नहीं करते । फिर भी वे अपने को धर्मध्वजी प्रकट करते हैं और दूसरों से भी ऐसा ही कहलाना पसन्द करते हैं । अन्य प्रकार की ठगी, धूर्तता करके कमाई करने में सरकारी कानून का भी भय रहता है, कितने ही 'सोना बनाने वाले' और 'नोटों को दूना' करने वाले दण्ड भी पाते रहते हैं, पर इस 'गुरु' या 'भगवान' बनाने वाले व्यवसाय में ऐसा कोई खटका नहीं रहता और सहज में चेलों की भेंट-पूजा प्राप्त होकर सुख से समय व्यतीत होता रहता है ।

अब कुछ धर्म-व्यवसायी इससे भी आगे बढ़ रहे हैं । अब तक तो वे अपने को सन्त, महन्त, महात्मा, गद्दीधारी, धर्मधुरीण ही कहते थे, पर अब वे स्वयं ईश्वर होने का दावा करने लगे हैं । खासकर पिछले ५०-६० वर्षों से, जब से देश में एक नए युग के आगमन और अवतार के प्रकट होने की चर्चा छिड़ी है एक नहीं अनेक व्यक्ति इस सर्वोच्च पदवी के दावेदार बनकर सामने आने लगे हैं । पं. राजनारायण षटशास्त्री ने इधर-उधर की गप्पें इकट्ठी करके 'चेतावनी' नामक ट्रेक्ट छापकर जनता की अवतार सम्बन्धी अन्ध-श्रद्धा को भड़का दिया, जिससे वे शीघ्र ही कल्कि अवतार के प्रकट होने की राह देखने लगे । इस सुअवसर को देखकर अनेक चलते पुर्जे और महत्त्वाकांक्षी लोगों के हृदय में भगवान् बनने की इच्छा जाग्रत हो उठी और वे स्वयं अथवा अपने संगी-साथियों द्वारा अपने को 'अवतार' घोषित करने लगे ।

किसी समय इन अवतारों की संख्या कई सौ तक जा पहुँची थी । केवल प्रभावशाली और कुछ अध्यात्म सम्बन्धी ज्ञान रखने वाले व्यक्ति ही ईश्वरीय वाणी में नहीं बोल रहे थे, वरन् तेली, तमोली, पंसारी, ड्राइवर, मजदूर, क्लर्क, जैसे छोटे-मोटे काम करने वाले और प्रायः अशिक्षित व्यक्ति भी परोक्ष या अपरोक्ष रूप से अवतार की गद्दी की तरफ ललचाई आँखों से देख रहे थे । उनमें से कुछ तो उस 'बरसाती मौसम' के बीत जाने पर ठण्डे पड़ गये, पर फिर भी एक बहुत तादाद ऐसे लोगों की बच रही जिन्होंने सौ-पचास या हजार पाँच-सौ अनुयायी बना कर जीवन-निर्वाह का एक साधन बना लिया था । अभी हाल में पिलखुवा (मेरठ) निवासी प्रसिद्ध सनातन धर्मी कार्यकर्त्ता रामशरण दास जी ने समाचार-पत्रों में छपाया था कि "अब तक मैं ऐसे २०० अवतार नामधारियों से मिल चुका हूँ और किसी में कोई तत्व की बात देखने में नहीं आई । इनमें से कई तो कृष्णजी का नाम लेकर मुकुट बाँधते हैं, वंशी बजाते हैं और रास भी रचते है ।" पर कृष्णजी ने किस प्रकार धर्म की रक्षा और अधर्म का नाश किया था इससे उनको कोई मतलब नहीं । ये लोग केवल प्रदर्शन और जबानी जमा-खर्च के बल पर ही 'भगवान्' बन जाना चाहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'अवतारों' में सम्भवत: सबसे पुराने मेहर बाबा हैं जो लगभग चालीस वर्ष से भारतवर्ष में ही नहीं विदेशों में भी धूम मचाते रहे हैं और सब जगह अपने कितने ही शिष्य बना चुके हैं । वे जन्म से पारसी हैं और लगभग ५० वर्षों तक मौन रहे और लेखों और पर्चों द्वारा ही अपना प्रचार करते रहे । सन् १९५८ में उन्होंने एक पर्चे में लिखा था—

"मैं फिर दुहराता हूँ कि मुझे इस बार कोई कानून नहीं बनाने हैं । जब मैं सत्य की जीवन धारा बहाऊँगा, जिसको बहाने के लिए मैं आया हूँ, तब मनुष्य का दैनिक जीवन खुद ही उपदेश बन जायगा । मैं अपने आपको मनुष्यों से उनके खुद के अज्ञान के पर्दे में छिपाये रखता हूँ और कुछ थोड़े लोगों पर ही अपना जमाल प्रकाशित करता हूँ । मेरा अवतारी स्वरूप काल के इस दौर (युग) का अन्तिम अवतार है, इसलिए मेरा प्रकटीकरण अपूर्व होगा । जब मैं अपना मौन तोड़ूँगा तो मेरे प्रेम की तरंग ब्रह्माण्ड भर में व्याप्त होगी । मैं वह दैवी प्रियतम हूँ जो तुम्हें इतना अधिक प्यार करता है जितना तुम खुद भी अपने आप से नहीं कर सकते । मेरा मौन तोड़ना तुम्हारी ऐसी सहायता करेगा कि तुम खुद अपनी खुदी को जानने में अपनी मदद कर सकोगे ।"

ब्रह्म कुमारी समाज के संचालक दादा लेखराज भी बहुत पुराने हैं । सन् १९२१-२२ में उनके ऊपर कराची में 'ओमराधे' नाम की विवाहित महिला को बहकाकर अपनी चेली बना लेने का मुकदमा चला था । वह तो किसी तरह खत्म हुआ, पर दादाजी बराबर अपने को 'त्रिमूर्ति गऊपाल गुरु ब्रह्मा' के नाम से प्रसिद्ध करने और ब्रह्म-कुमारियों के नाम से अपनी चेलियों का दल बनाने में संलग्न रहे । लगातार प्रयत्न करते रहने से उनको कई सौ शिष्य मिल गये । जब पाकिस्तान बनने से कराची से हटना पड़ा तो उन्होंने अपना हैडक्वाटर आबू पहाड़ पर बनाया । आजकल देश के अनेक बड़े-बड़े नगरों में उनकी शाखाएँ स्थापित हैं जिनमें दो-चार ब्रह्मकुमारियाँ उनका प्रचार करती रहती हैं । इस संस्था की तरफ से प्रकाशित एक पुस्तिका में 'गुरु ब्रह्मा' का परिचय बड़े विस्तार और रहस्यमय ढंग से दिया गया था । उसमें उन्होंने एक जगह अपनी अटपटी भाषा में लिखा है—

"वास्तव में श्री श्री १०८ जगतगुरु की उपमा भी सिर्फ एक ही निराकार परमात्मा के साकार ज्ञानेश्वर त्रिमूर्ति गऊपाल गुरु ब्रह्मा और ज्ञानेश्वरी श्री सरस्वती (संस्था की अध्यक्षा) को ही दी जा सकती है और कोई भी वेद-शास्त्रवादी विद्वान्, आचार्य, पंडित, संन्यासी, उदासी वगैरह को यह उपमा देना मूर्खता है, क्योंकि निराकार और साकार परमात्मा के नाम, रूप, देश और व्यवसाय को वे नहीं जानते, बल्कि वे अपने को गुरु कहलाने के भी अधिकारी नहीं हैं, क्योंकि वे स्वयं न तो जीवन-मुक्त पद प्राप्त कर सकते हैं और न किसी को प्राप्त करा सकते हैं । वास्तव में 'श्रीकृष्ण वन्दे जगत गुरुम्' कहना यथार्थ नहीं है 'ब्रह्मा वन्दे जगत गुरुम्' कहना ही यथार्थ है । श्रीकृष्ण ने जगत गुरु बन किस को परमात्म-ज्ञान दे मनुष्य से देवता बनाया ? पिता श्री त्रिमूर्ति गुरु ब्रह्मा महा ज्ञानी हैं तो महादानी भी हैं, जो अपने वारिसों को परमात्मज्ञान पढ़ा कर महाज्ञानी और महाज्ञानी भी बनाते हैं ।"

लाहौर में एक अध्यात्मवादी सज्जन रहते थे । अनेक लोग उनके भक्त थे और उनको एक महापुरुष के तरीके से मानते थे । उनके पुत्र को उन भक्तों ने अवतार कहना आरम्भ किया और कुछ समय में उनको हजार-पाँच-सौ अनुयायी भी मिल गये जो उनको हार्दिक रूप से भगवान् का रूप ही समझते थे और अपनी भावना के अनुसार दर्शन भी पाते रहते थे । एक महिला भक्त ने उनका दर्शन करके लिखा था—

"महाप्रभु चैतन्य की तरह आपके शरीर में भी द्विविध भाव दृष्टिगोचर होते हैं । वैसे तो साधारण स्थिति में मनुष्यों के लिए प्रभु एक आदर्श महापुरुष अथवा साधक के भाव में रहते हैं, परन्तु कभी-कभी अपने प्रेमियों की मनोकामना पूर्ति के लिए आप अपने असली स्वरूप भगवत आवेश में हो जाते थे । उस समय आपकी सभी चेष्टाएँ तथा व्यवहार ऐश्वर्यमय हुआ करते हैं और भक्तों को अपनी-अपनी रुचि के अनुसार आपके श्रीविग्रह में अपने इष्टदेव के दर्शन होते हैं । जिन्होंने इस भाव को प्रत्यक्ष देखा है, अनुभव किया है, वे ही इसका मर्म समझते हैं, परन्तु दूसरे मनुष्य इस बात पर विश्वास नहीं कर सकते, क्योंकि वे इस अलौकिक दिव्य अनुभव से बहुत दूर हैं ।"

हिन्दुओं के इस अन्ध-विश्वास को देखकर अन्य लोगों का भी जी ललचाया कि इनकी मूर्खता का लाभ उठाया जाय । कादियाँ (पंजाब) के एक 'मिर्जा गुलाम अहमद' भी भगवान् कृष्ण के अवतार होने का दावा करने लगे । उनको मुसलमानों ने तो अधिक नहीं माना, पर गुजरात, अफ्रीका आदि में उनको भी कई हजार हिन्दू अनुयायी मिल गये । इनकी तरफ से कुम्भ के अवसर पर एक पर्चा बाँटा गया था जिसका शीर्षक था 'वही हमारा कृष्ण' और जिसमें हिन्दू-धर्म के अवतारवाद का प्रतिपादन करते हुए मूर्ति पूजा का खण्डन किया और बतलाया कि "आप जरा गौर से ध्यान तो दो कि एक ईश्वर के मुकाबले में आप में कितने देव और देवता निकल आये । अपनी पुस्तकों को जरा विचारपूर्वक देखो कि क्या श्री कृष्ण और रामचन्द्र ने भी किसी मूर्ति के आगे मस्तक झुकाया था ?... पर क्या ईश्वर श्रीकृष्ण और श्री रामचन्द्र की सन्तान और सेवकों को सदा के लिए छोड़ सकता है ? कदापि नहीं । यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो उसने हिन्दुओं की उन्नति तथा उद्धार के लिए निष्कलंक अवतार को भेज दिया है और वह उसी समय आये हैं, जिसके प्रति योगिराज श्री कृष्ण जी पहले ही बता गये हैं । अब प्रत्येक मनुष्य जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह इसी के द्वारा ईश्वर से मिल सकता है । इस अवतार का नाम श्री मिर्जा गुलाम अहमद है जो कादियाँ जिला गुरुदासपुर में प्रकट हुए हैं।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस तरह न मालूम कितने छोटे-बड़े व्यक्ति बिना किसी प्रमाण, आधार के धूल में लट्ठ मारने कि लिए अवतार बन बैठे । बहराइच के एक अनगढ़ व्यक्ति ने अपने घर में ही 'विश्व-शासन सभा' कायम कर दी और अपने कई सदस्यों को एशिया, योरोप, आस्ट्रेलिया आदि का भावी शासक घोषित कर दिया । हंसावतार के नाम से एक साधू तो दिल्ली में ही अपना व्यवसाय धड़ल्ले से चलाने लगे थे । उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर में एक देवीजी 'बुलंद महाराज' के नाम से अवतार होने का दावा करने लगीं । कोटपूतली (जयपुर) में एक पत्थर तोड़ने का काम करने वाले ने अपने चित्र में चार हाथ बनवाकर उसका फोटो छपा दिया और अपने को विष्णु का अवतार बतलाया । करीमुद्दीनपुर गाजीपुर के एक छोटे दुकानदार ने अपने को शिव का अवतार कहकर इस सम्बन्ध में एक पुस्तिका बँटवाई । बंगाल में दयानन्द, जगद्बन्धु आदि कीर्तन द्वारा भक्ति का प्रचार करने वाले कुछ वर्ष पहले हुए थे और वे मरने के बाद अब भी अवतार के रूप में पूजे जा रहे हैं । खानदेश (बम्बई) में एक भील 'रामदासजी महाराज' अपनी जाति द्वारा अवतार घोषित कर दिये गये । इनके अतिरिक्त सच्चा बाबा, बुद्धावतार आनन्दमार्गी आदि ब्रह्मा-विष्णु-महेश में से किसी न किसी के अवतार बन गये । इस तरह के सैकड़ों व्यक्ति पिछले वर्षों में जनता के सामने आकर अवतार होने का दावा कर चुके हैं और कुछ दिन उछल-कूद मचाने के पश्चात इस जगत के कोलाहल में लुप्त हो चुके हैं । समय-समय पर सामयिक पत्रों में उनकी चर्चा होकर साधारण पाठकों की उत्सुकता अथवा मनोरंजन का साधन-मात्र बन जाती है ।

हमारे कथन का आशय यह नहीं है कि संसार में कभी महान् आत्माओं का आविर्भाव नहीं होता अथवा वे कुपथ में जाते हुए जनसमूह का मार्गदर्शन नहीं करते । पिछले ऐतिहासिक काल में ही भगवान बुद्ध और महात्मा ईसा जैसी दैवी हस्तियाँ मानवता को एक नया मोड़ दे चुकी हैं । उनके पश्चात् भी भारतवर्ष में शंकराचार्य, चैतन्य, कबीर आदि और योरोप में लूथर, रूसो, कार्लमार्क्स आदि ने जो कार्य किये हैं उनसे उनको अतिमानव की कहना पड़ता है । अगर आप उतनी दूर भी जाना न चाहें तो हमारी आँखों के सामने महात्मा गाँधी, स्वामी दयानन्द और विवेकानन्द ने देश की जिस प्रकार काया पलट की है उसे दैवी-कार्य मानने से इन्कार नहीं किया जा सकता । इनमें से किसी ने कभी अवतार होने का दावा नहीं किया, अपने को संसार का सेवक ही कहते रहे, पर आजकल के ये सैकड़ों अवतार नामधारी अपनी प्रशंसा की पुस्तकें छपाकर विज्ञापन करने के सिवाय एक साधारण महत्त्व का कार्य भी नहीं कर सके, यह क्या एक आश्चर्य नहीं है ?

हम अवतार के सिद्धान्त का खण्डन नहीं करना चाहते । भगवान् राम, कृष्ण, परशुराम आदि की जो कथाएँ रामायण, महाभारत आदि में दी गई हैं उनके मूल स्वरूप पर विचार करने से हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मानव जाति चलते-चलते जब किसी बीहड़ और अनुलंघनीय बाधाओं के स्थान पर पहुँच जाती है और आगे बढ़ सकना उसकी सामर्थ्य से बाहर जान पड़ता है तो दैवी विधान के अनुसार कोई महापुरुष उसके मार्गदर्शन और उद्धार का संकल्प कर लेता है और अपूर्व तेजस्विता तथा आत्म-त्याग का उदाहरण उपस्थित करके विरोधी और प्रतिरोधी को पार करके प्रगति के रुद्धमार्ग को खोल देता है । यह कोई महत्त्व की बात नहीं कि वह कोई चमत्कारी काम करके दिखलाता है या नहीं, क्योंकि अच्छे योगी भी बहुत से काम ऐसे कर सकते हैं जो हमको निश्चित रूप से चमत्कार ही प्रतीत होते हैं । अवतार का कार्य सोती हुई और मार्गच्युत दुनिया को दोष और दुर्गुणों से छुड़ा कर सही रास्ते पर ला देना है । सांसारिक जीव जब असम्भव समझे जाने वाले कार्य की इस प्रकार पूर्ति होते देखते हैं तो उसे परमात्मा की लीला ही मानते हैं और इसमें सन्देह नहीं कि ऐसे महामानवों में उस अवसर पर किसी दैवी-सत्ता की झलक-सी दिखाई पड़ने लगती है ।

धन्य है वह भूमि जिसे कोई उच्च लोक की महान् आत्मा अपनी चरण रज द्वारा पवित्र करती है और सौभाग्य है उन व्यक्तियों का जो उसके दर्शन करते और उपदेशों को श्रवण करते हैं । ऐसी दिव्य आत्माओं का आविर्भाव भगवान् कृष्ण के कथानुसार तब होता है, जब संसार में अन्याय और अशुभ कार्यों की वृद्धि मानव को पतन के गहरे गड्ढे में गिराने लगती है । चाहे उस समय लोग उनकी महानता को न समझें, पर फिर उनके कार्य के फल को देखकर उनको अपना परित्राण कर्त्ता समझ कर पूजा करने लगते हैं, पर इस समय जो सज्जन अवतार बन रहे हैं वे तो एक अन्ध-विश्वास फैलाकर अपना पेट भरने का धन्धा करते ही दिखाई पड़ते हैं । कुछ लोगों ने तो कल्कि अवतार के प्रकट होने की घोषणा करते रहना ही अपना रोजगार बना लिया है । ऐसे लोगों से श्री रामशरण दास जी ने पत्र लिखकर प्रार्थना की है कि 'यदि वे सचमुच अवतार हैं तो इस संकटकाल में मुकुट और बाँसुरी छोड़कर सुदर्शन चक्र ग्रहण करें और देश पर आक्रमण करने वाले दुष्टों को विध्वंस करने में योग दें ।' हमारी भी उनसे यही विनय है कि "प्रभो! अपनी लीला का संवरण करो और इस देश की पहले से ही अन्ध-विश्वासों में ग्रस्त जनता को और भी गुमराह करने की कृपा मत करो !"

जादू-चमत्कारों के प्रदर्शन की आवश्यकता क्यों?

भगवान् एक है । उसकी प्रतिकृतियाँ भर अनेक प्रकार की अनेकानेक क्षेत्रों में गतिशील हो सकती हैं, पर ऐसा नहीं हो सकता कि एक ही भगवान् एक ही समय में विभिन्न व्यक्तियों के रूप में अवतार धारण करे । भगवान् सर्वव्यापक है । जो सर्वव्यापक होगा वह अवतार धारण नहीं कर सकता । करे तो सृष्टि में जो अन्य गतिविधियाँ चल रही हैं, उनका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूत्र-संचालन कौन करेगा ? इसलिए तत्वज्ञानियों ने भगवान् को निराकार ही माना है । साकार प्रतिमाएँ तो ध्यान-धारणा के लिए कल्पना के सहारे गढ़ी जाती हैं । यही कारण है कि अपने-अपने वर्गों और क्षेत्रों के अनुसार गढ़ी गईं भगवान् की अनेकानेक प्रतिमाएँ देखने को मिलती हैं । यह मात्र ध्यान धारणा के लिए है । ध्यान का उपक्रम ही ऐसा है कि उसे किसी रूप का आश्रय लेने की आवश्यकता पड़ती है । भले ही वह सूर्य प्रकाश के रूप में हो अथवा किसी देवी-देवता के रूप में । इनमें श्रद्धा का समावेश करके इस स्तर को शक्तिशाली बनाया जाता है कि जीवन्तों की तरह अपना प्रभाव प्रदर्शित कर सके ।

भगवान् निराकार होने से वे कार्य नहीं कर पाते जिसमें ज्ञानेन्द्रियों की आवश्यकता होती है । ऐसे कार्य वे अपने पार्षदों से कराते हैं । 'पार्षद' का अर्थ है निकटवर्ती । जो ईश्वर की दिव्य विभूतियों को जितनी अधिक मात्रा में अपने भीतर धारण कर पाते हैं, वे उसी मात्रा में भगवान् के निकटवर्ती या कृपा पात्र माने जाते हैं । उन्हें संसार का सन्तुलन सही बनाये रखने वाले कार्य करने का निर्देशन दिया जाता है और वे उसे पूरा कर भी दिखाते हैं । इस पराक्रम में दैवी शक्ति उनका साथ देती है । प्रतीत ऐसा होता है कि यह व्यक्ति विशेष की क्षमता का चमत्कार है । सांसारिक प्रयोजनों में तो व्यक्ति की प्रतिभा ही काम करती है, पर उत्कृष्टतावादी आदर्शवादी प्रयोजनों में सामान्य व्यक्ति अपनी लोलुपवृत्ति के कारण न तो रस ले पाते हैं और न उसमें मन ही लगता है । फिर जोखिम उठाने की बात बने ही कैसे ? जो असंख्यों के लिए अनुकरणीय, अभिनन्दनीय कार्य करते हैं, उन्हें उतना कुछ सांसारिक जीवन या परिकर नहीं करने देता, उसमें विघ्न ही उपस्थित करता है । ऋषिकल्प आत्मा ही महापुरुषों की भूमिका निभाती है और वे ही इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्णिम पद चिह्न छोड़ जाती हैं ।

किन्तु बहुधा ऐसा देखा गया है कि धूर्त स्तर के लोग अपने को भगवान् घोषित करके भावुक भक्तजनों को ठगते और उनकी हजामत उलटे उस्तरे से बनाते हैं । सामान्यों की तुलना में अपने को असामान्य बताने के लिए उन्हें सरल उपाय बाजीगरी का दृष्टिगोचर होता है । वे लोगों को कौतुक-कौतूहल दिखाते हैं ताकि अदूरदर्शी यह समझ सकें कि उनकी विक्रिता दिखाने की क्षमता ही कोई सिद्धि है और वह सिद्धि उन्हें भगवान् के रूप में मिली है । इसलिए वे भी भगवान् ही हैं ।

ऐसे वेशधारी भगवानों में से इसी शताब्दी में सैकड़ों की संख्या में प्रकट हुए और मर गये । जीवित वर्ग में भगवानों की कोई कमी नहीं है । भारत में ही करीब २०० व्यक्ति अपने को भगवान् कहते हैं या उनके अवतार बनते हैं । प्रमाण स्वरूप उनसे और तो कोई बड़ा काम नहीं बन पड़ता । जादूगरों के हथकण्डे वे अपनाते हैं । बालों में से बालू निकालते हैं । किसी को आकाश में हाथ मार कर लौंग, इलायची, मिठाई, मिश्री आदि खिलाते हैं । यदि देखा जाय तो कोई घटिया दर्जे का बाजीगर ही ऐसे हस्त कौशल दिखा सकता है । फिर भी इतनी ईमानदारी तो उसमें रहती है कि " मैं हाथ की सफाई दिखा करके आपका मनोरंजन कर रहा हूँ ।" किन्तु यह भगवान् बनने वाले अपने कौतूहलों की सिद्धि एवं भगवान् प्रतीति ही बताते जाते हैं । आश्चर्य यह है कि इस भरी दुनिया में ऐसे मूर्खों की भी कमी नहीं जो ऐसे नगण्य बहकावों में ही आ जाते हैं और अपना बहुत कुछ गँवा बैठते हैं ।

यदि कोई मनुष्य ईश्वर है तो उसे बाढ़, दुर्भिक्ष, भूकम्प जैसे प्रकृति प्रकोपों को रोकना चाहिए । देशों और वर्गों के मध्य जो भयंकर कलह चल रहे हैं, उनका निराकरण करना चाहिए । वातावरण का संशोधन सम्भव न हो तो इतना तो करना ही चाहिए कि देश में जो भयंकर अशान्ति मची हुई है, अपराधों की बाढ़ आई हुई है, व्यक्ति और समाज को अपराधों की भरमार से इतना त्रास सहना पड़ रहा है, उसे दूर करें । भगवान् का वचन है कि "मैं धर्म की स्थापना और अधर्म का विनाश करने के लिए अवतार धारणा करता हूँ ।" प्रस्तुतः २०० अवतारों को ऐसा कुछ करना चाहिए ताकि उनकी उद्देश्यपूर्ति मानी जा सके । यदि ऐसा नहीं है तो अबकी बार जो भी भगवान् हाथ पड़े, उसी से यह कहलवाना चाहिए कि "मैं जादू कौतुक-कौतूहल दिखा कर सिर-फिरे लोगों को बहकाने आया हूँ ।"

हिन्दुओं की देखा-देखी यह बीमारी भारत के ईसाइयों में भी फैली है । ईसाई बहुल क्षेत्रों में प्रायः १० व्यक्ति अपने आपको ईसा का अवतार बताते हैं और शेष ९ को झुठलाते हैं । इस प्रकार उनकी जूतम पैजार चलती रहती है, पर हिन्दू अवतार इस मामले में डरपोक हैं । वे अपनी चमड़ी भर बचाते हैं । दूसरों का विरोध करके अपनी खाल खिंचवाने के झंझट में नहीं पड़ते । जो मेढक जहाँ बैठा है, उसी के आसपास वाले मच्छरों को गटकता रहता है ।

अवतारों की पलटन

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, बौद्ध तथा अन्यान्य धर्म ग्रन्थों से विदित होता है कि सम्वत् २००० के लगभग कोई अवतार होने वाला है । इस अवसर से लाभ उठाने के लिए अनेकों व्यक्ति लालायित हो रहे हैं । ढोंग का दुनिया में बोलबाला है । बहुत से कलियुगी कृष्ण और मसीहा बरसाती मेढक की तरह उपज कर टरने लगे हैं । इन अवतार वेशधारियों में से हर एक अपने को बड़ा साबित करने की कोशिश कर रहा है ।

दर्जनों मुसलमान अब तक अपने को कृष्ण होने की घोषणा कर चुके हैं । हैदराबाद के मौलाना मोहम्मद सद्दीक दीनदार अपने को कल्कि अवतार बताते हैं । इस सम्बन्ध में उन्होंने एक पुस्तक 'सरबरे आलम' भी प्रकाशित की है । सर आगा खाँ को उनके अनुयायी हिन्दू मुसलमान कल्कि अवतार मानते हैं, इस सम्बन्ध में गुजराती में बहुत-सा साहित्य छपा है । पिछले कुम्भ के मेले पर लाहौर के एक खाँ साहब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने खूब पर्चेबाजी की थी और लाहौर का पता छपाते हुए बताया था कि यही मुसलमान सज्जन कल्कि अवतार हैं अब हिन्दुओं को इन्हीं का कहना मानना चाहिए । दिल्ली में एक मुसलमान शंकर अवतार होकर प्रकट हुआ था । उसने गौ-माँस खाना पुण्य घोषित किया था । जनता के विरोध करने पर इसे दिल्ली से हटाया गया था । मेहर बाबा के अवतार होने की बात प्रसिद्ध है, साँईखेड़ा के धूनी वाले दादा के सम्बन्ध में 'प्रमाण केशव' नामक पुस्तक छपी है, जिसमें उनको कल्कि बताया गया है । थियोसोफिकल सोसाइटी की ओर से प्रचार किया जाता रहा है कि महाशय कृष्ण मूर्ति में हजरत ईसा की आत्मा है । कलकत्ता के प्रसिद्ध गोविन्दभवन के महन्त श्री हीरालालजी गोयन्दका अपने को कृष्ण बता कर भक्तिनों के साथ खूब रास-रंग करते थे । पीछे कितनी ही स्त्रियों के सतीत्व भंग का भंडा-फोड़ हुआ । सिन्ध की ओममण्डली के कर्त्ता दादा लेखराज अवतार बन गये थे । उन्होंने अनेक स्त्रियों को पतियों से अलग करा के अपनी सेवा में रख छोड़ा था । इस प्रकार न जाने कितने सज्जन कल्कि अवतार बने फिर रहे हैं ।

इसके अलावा अवतार के चेला-पाटों की तो बारात ही घूम रही है । धौलपुर के एक बाबाजी को अवतार सभा का प्रेसीडेन्ट और देवर्षि नारद का अवतार कहा जाता रहा है । इटावा जिले के एक गाँव में रहने वाले कोई पारसनाथ नामी सज्जन अपने को अवतार का प्रधान मन्त्री लिखते रहे हैं और प्रहलाद का अवतार होने की घोषणा करते रहे हैं । इनके प्रतिद्वन्द्वी एक और प्रहलाद भी जन्मे थे । यह बाबा सुल्तान सिंह नामक पंजाबी साधु थे । अच्छा होता इन दोनों में से एक सज्जन किसी और का अवतार बन जाते जिससे आपस का झगड़ा आपस में ही निपट जाता ।

साढौर (अम्बाला) निवासी श्री. बधावाराम जी सैनी कहते हैं कि जब मैं रेल्वे में गार्ड था तो भगवान् ने एक दिन मेरा रूप बनाकर गाड़ी चलाई । ये कहते हैं कि अमुक दिन भगवान् जन्म लेंगे और मैं पुरुष से स्त्री शरीर बदल कर 'राधा' बन जाऊँगा । वह तिथि निकल चुकी है, पर यह सज्जन अभी जैसे के तैसे बैठे हैं । मुहल्ला खखरा पीलीभीत के श्रीयुत् भगवानदास जी कायस्थ दिव्य-वाणी नामक पर्चा बाँटते थे कि अवतार हो गया । फजलका (पंजाब) के पंडित राजनारायण शास्त्री ने छपाया था कि सम्भल में सम्वत् १९८१ में कल्कि भगवान् जन्म ले चुके हैं । परशुराम जी उन्हें शस्त्र विद्या सिखाने के लिए महेन्द्र पर्वत पर उठा ले गये हैं, अब वे सम्वत् १९९९ में ऋषियों सहित बंगाल में प्रकट होंगे । स्वामी प्रणवानन्द के सम्बन्ध में एक पुस्तक छपी थी कि 'भगवान् स्वयं श्री स्वामी प्रणवानन्द के शरीर में अवतीर्ण हुए हैं ।' श्री कमल मुनि कहते हैं कि मुझे कल्कि भगवान् ने दर्शन दिया है । श्रीमती गंगा बाई का कथन है कि मैं अवतार को देख चुकी हूँ । सन् १९४२ के आश्विन कृष्णा ३० को कुरुक्षेत्र सूर्य ग्रहण के मेले में अनेक सज्जन यह घोषणा करते पाये गये थे कि वे स्वयं अवतार हैं या अवतार से उनका कुछ सम्बन्ध है । इसी वर्ष प्रयाग के कुम्भ में कई अवतारधारियों के एजेन्टों के अड्डे पहुँचे थे ।

ऊपर कुछ थोड़े से उदाहरण हमने लिखे हैं । इसके अतिरिक्त हर जगह तलाश करने पर अवतार या उसका भाई, भतीजा मिल सकता है । पाठकों को बुद्धि पर जोर देकर सोचना चाहिए कि यह सब अवतार कैसे हो सकते हैं ? यदि कदाचित् अवतार हो भी गया हो तो इनमें से एक ही होगा यह सारी की सारी पलटन कैसे हो सकती है ? यदि एक सच भी बोलता हो तो बाकी सब झूठे ठहरते हैं । इस सम्बन्ध में कुछ निर्णय करने से पूर्व पाठकों को जरा बुद्धि पर भी जोर देना चाहिए ।

इन अवतारों से सावधान

आज कितने ही मनचले लोग अपने को कल्कि भगवान् बताकर असंख्य अज्ञानी जनता को अपने जाल में फाँस चुके हैं । पिछले दिनों पिलखुआ में एक बड़ी मजेदार बात हुई । एक पढ़े-लिखे मुसलमान सज्जन लम्बी दाड़ी बढ़ाये, तुर्की टोपी लगाये, एक व्यक्ति के यहाँ पहुँचे । दुआ सलाम के पश्चात् उन्होंने कहा— लालाजी, आपने एक नई बात सुनी है । उसने कहा—सुनाइये क्या नई बात हुई । उन्होंने कहा—"श्रीकृष्ण भगवान् कल्की अवतार बनकर आ गये हैं । उनका वर्तमान नाम गुलाम अहमद मुसलहमऊद है और लाहौर में विराजे हैं । लाखों हिन्दू और मुसलमान उनके भक्त हैं । बड़े-बड़े पंडित उनके शिष्य बन गये हैं, वे धर्म की रक्षा करेंगे और बड़े-बड़े काम करेंगे जो पहले अवतारों ने किये हैं । उन्हें हिन्दू और मुसलमान सब एक से हैं वह दो नहीं समझते ।"

वह व्यक्ति उन सज्जन का मतलब समझ गया कि वे उन कलियुगी कल्कि के प्रचारक थे और शायद मुझे अपने चंगुल में फँसाना चाहते थे । समदर्शीपन की परीक्षा लेने के लिए उसने कहा—खाँ साहब, यदि ऐसा है तब तो बड़ी खुशी की बात है । भगवान् एक है और वे ही नाना रूपों में अवतार लेते रहते हैं । इन लाहौर निवासी अवतार ने पहले मत्स्य, कच्छप, बाराह आदि में अवतार लिया होगा ? उन्होंने पूछा मत्स्य, कच्छप, बाराह का मतलब में नहीं समझा, हिन्दी में कहिए । तब उन्हें बताया गया कि मत्स्य, मछली को, कच्छप कछुआ को और बाराह सूअर को कहते हैं । हमारे भगवान् पहले इन शरीरों में भी अवतार ले चुके हैं ।

'सुअर' का नाम सुनते ही खाँ साहब बहुत बिगड़े । उसने कहा 'तोबा, तोबा' आपने किसका नाम ले दिया, हमारे यहाँ तो उसका नाम लेना भी गुनाह है । हजरत मऊद साहब ने हरगिज ऐसा नापाक अवतार न लिया होगा इस पर उसने कहा—तो फिर उन्होंने कृष्ण का भी अवतार न लिया होगा और न अब कल्कि ही हो सकते हैं । अपनी दाल गलती न देखकर खाँ साहब कुड़कुड़ाते हुए उठकर चले गये । आज सबसे बड़ी आवश्यकता इन अवतारियों से सावधान रहने की है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कल्कि भगवान को २ वर्ष की कैद

यह घटना सन् १९४१ के आस-पास की है । मध्य भारत के होल्कर राज्य में मानपुर नामक ग्राम में एक कुम्हार और कुम्हारिन रहते थे, वे लगभग दो वर्ष से भगवत्भक्ति किया करते थे । कुम्हार प्रति दिन एक मिट्टी की मूर्ति बनाता, दिनभर पूजन करने के पश्चात् प्रातःकाल जल में विसर्जित करके नवीन मूर्ति का निर्माण करता था । इस प्रकार दो वर्ष बीत गये । एक दिन वहाँ के लोगों से उसने कहा कि आज रात को स्वयं भगवान् कल्कि के मुझे दर्शन हुए हैं और मेरे आग्रह से उन्होंने इस मास की पूर्णिमा को सब लोगों को दर्शन देना निश्चित किया है । पहले तो इसकी बात किसी ने नहीं मानी, किन्तु जब उस कुम्हार ने प्रतिज्ञा की कि यदि पूर्णिमा के दिन भगवान् दर्शन नहीं देवेंगे, तो मैं जीते जी चिता में भस्म हो जाऊँगा । लोगों को विश्वास हो गया और थोड़े ही दिनों में यह बात सारे मध्य भारत में फैल गई । पूर्णिमा के २-३ दिन पहले से ही लोगों ने मानपुर में आना शुरू किया और पूर्णिमा के दिन तक तो लगभग ५००० आदमी इकट्ठे हो गये । कुओं का पानी घट गया, गाँव के हलवाइयों और सौदागरों ने लोगों से दुगुने-तिगुने पैसे वसूल किये ।

पूर्णिमा के दिन १२ बजे एक जटाजूटधारी पुरुष उस कुम्हार के घर में से निकला, उसके मस्तक पर त्रिपुण्ड, गले में रुद्राक्ष की मालाएँ, शरीर पर विभूति और कमर में बाघचर्म लपेटे हुए था । उसने आते ही घोषित किया कि मैं कल्कि हूँ और आप लोगों को दर्शन देने के लिए आया हूँ । जनता ने उस पुरुष को उठा कर गाँव भर में फिराया, ताकि लोग उसके दर्शन अच्छी तरह से कर सकें, किन्तु इसी बीच में किसी ने उसे पहचान लिया और वह चिल्ला उठा—"अरे यह तो भगवान् नहीं, काली-किराछ वाले बाबाजी हैं ।" सारी जनता को विश्वास हो गया और उसको पुलिस में दाखिल करा दिया ।

कोर्ट में मुकद्दमा दाखिल हुआ, जिसमें उस बाबाजी को दो वर्ष की सजा हुई और कुम्हार रिहा कर दिया गया । जनता का २ लाख के करीब रुपया खर्च हुआ और नतीजा कुछ भी नहीं निकला ।

अन्धविश्वास के पोषक इन बहुरूपियों से बचा जाये

श्री चन्द्र गोस्वामी नामक एक परिजन लिखते हैं कि डॉक्टर ने इलाज आरम्भ करने से पहले मेरे नौजवान मित्र के बारे में पूर्व तथ्यों को बताने का आग्रह किया । अतः मैंने उन्हें आवश्यक जानकारी इस प्रकार दी । उनकी आयु केवल तीस वर्ष की है । इनके दो बच्चे और पत्नी है, यहाँ सरकारी दफ्तर में एक होशियार लिपिक थे । इन्हें मजमेबाजों और मेस्मेरिजम करने वालों के मजमों में खड़े होने का बहुत शौक था और यह उनकी बातों में खूब विश्वास किया करते थे । यह अक्सर मजमेबाजों से अनेक दवाएँ खरीद कर लाते थे और अपना स्वास्थ्य सुधारने के लिए उनका सेवन किया करते थे । इन दवाओं से लाभ होना तो दूर रहा, कुछ समय तक इन्हें कोई हानि नहीं हुई, यही गनीमत हुई । हाँ, इनके वेतन का अधिकांश भाग इन मजमेबाजों से दवा-दारू खरीदने में अवश्य व्यय हो जाता था । इत्तिफाक से एक दफा यह किसी मजमे वाले से कोई-कोई सभी दवा खरीद लाये जो लोगों से केवल धन लूटने की गरज से बनाई थी । मेरे मित्र ने कोई चार-पाँच दिन उस दवा का सेवन किया होगा कि उन्हें हल्का-सा सिरदर्द महसूस हुआ । फिर भी उन्होंने उस दवा का सेवन जारी रखा और इनकी लापरवाही से दर्द और भी बढ़ गया । नतीजा यह हुआ कि उस ऊल-जलूल दवा से इनका दिमाग खराब हो गया और यह पागल हो गये, जिसका नतीजा यह स्वयं, इनकी पत्नी, माता-पिता और बच्चे पिछले पाँच वर्षों से भुगत रहे हैं । अब लाख कोशिश करने पर भी मर्ज का इलाज सम्भव नहीं हो रहा है । इनका इलाज जयपुर, आगरा, बम्बई और कई अन्य स्थानों के विशेषज्ञ चिकित्सकों से करवाया जा चुका है, किन्तु इन्हें अब तक कोई लाभ नहीं हुआ है । सारा हाल जानकर डॉक्टर ने मेरे मित्र को चिकित्सालय में भर्ती होकर एक बार फिर यथोचित चिकित्सा कराने की सलाह दी ।

मेरे उक्त मित्र ही क्या, हमारे समाज के लाखों अन्य नासमझ व्यक्ति इन मजमेबाजों और मेस्मेरिजम करने वालों द्वारा प्रतिदिन धोखाधड़ी में फँसाए जाकर लूटे जा रहे हैं । हमारे देश का कदाचित् ही ऐसा कोई बड़ा शहर होगा जहाँ इन मजमेबाजों का बोलबाला न हो । समस्त देश में इनका एक जाल-सा फैला हुआ है । ये मजमेवाले शुरू में भद्दी दिलचस्प कहानियाँ सुना कर सड़कों के किनारे भीड़ इकट्ठी कर लेते हैं । कहानी समाप्त करने से पहले ही वे अपनी दवाओं अथवा अन्य धोखे की वस्तुओं का वर्णन आरम्भ कर देते हैं । ये इन दवाओं को अनेक बीमारियों, जैसे इन्द्रिय दुर्बलता, पेट का दर्द, श्वास और आँखों के रोग, जिनसे लोग साधारणतया पीड़ित होते हैं, के लिए अकसीर बताते हैं, हालांकि इनका वास्तविक प्रभाव इसके प्रतिकूल ही होता देखा गया है । कुछ मजमेबाज जादुई अँगूठियाँ बेचा करते हैं जिनके प्रभाव से गढ़े हुए धन का प्राप्त होना, मृत लोगों से बातचीत, प्रेमास्पदों का मिलन, परीक्षा में उत्तीर्ण होना तथा ऐसे ही अन्य कार्यों का सिद्ध होना बताया जाता है । ये अँगूठियाँ साधारण पीतल अथवा ताँबे की बनी हुई होती हैं । इनसे किसी प्रकार ऐसे मनोरथ का पूर्ण होना असम्भव होता है । यह प्रपंच केवल भोले-भाले लोगों को भ्रम में डाल कर ठगने का साधन मात्र है ।

अन्य मजमेबाज अपने साथ सिखाए हुए रीछ, बैल आदि पशु रखते हैं । इन पशुओं द्वारा पहले तो भीड़ के बीच मनोरंजन उत्पन्न करने के लिए खेलकूद करवाये जाते हैं । तत्पश्चात पूर्वतः जाने-पहचाने आदमियों को रुपये अथवा अन्य कोई रूमाल, घड़ी इत्यादि चीजें देकर उन पशुओं से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूछा जाता है कि वे किस की हैं और किसके पास हैं ? पशुओं को पहले ही प्रशिक्षित किया हुआ होता है और वे लोग जो इस प्रकार की वस्तुएँ देते और छिपाते हैं, मजमेबाजों के ऐजेन्ट होते हैं । अतः इन्हें पहचानने में पशुओं को कोई दिक्कत नहीं होती । वे उन लोगों के विषय में शीघ्रतिशीघ्र जानकारी दे देते हैं ।

कई मजमेबाज अपने साथ लड़कों को रखते हैं जिन्हें सड़क की पटरियों पर सुलाकर काले कपड़े से ढक दिया जाता है और फिर उनसे अनेक प्रश्न पूछे जाते हैं । ये लड़के बड़े वाकपटु होते हैं और उन्हें इन प्रश्नों के उत्तर रटे होते हैं जिन्हें वे ग्रामोफोन के रिकार्ड की भाँति उच्चारित करते रहते हैं । उसके बाद उन लड़कों से भीड़ में खड़े हुए लोगों में से कुछेक के लिबास, रूप, रंग इत्यादि के विषय में प्रश्न पूछे जाते हैं जिनका वे सही-सही उत्तर देते रहते हैं, क्योंकि जो प्रश्न उनसे इस दौरान पूछे जाते हैं और जिनके बारे में पूछे जाते हैं उनका ज्ञान उन्हें पूर्वतः करवा दिया जाता है । इस प्रकार ये मजमेबाज मेस्मेरिजम का ढोंग रचाते हैं और लोगों को धोखे में फँसा कर अपनी जादुई अँगूठियाँ और हानिकर दवाएँ बेचते हैं । कुछ मजमेबाज चिड़ियों तथा अन्य पक्षियों को अपने साथ रखते हैं और उनसे लिफाफों में बन्द पत्र खिंचवाते हैं । इन पत्रों में झूठे फलादेश लिखे रहते हैं और यह मजमेबाज दर्शकों से पैसे लेकर इन पत्रों में कथित बातें सुनाते हैं और उन्हें गुमराह करते हैं ।

प्रत्येक बड़े शहर में मजमेबाज सड़कों के किनारे अथवा किन्हीं ऐसे स्थानों में जहाँ साधारणतया लोगों की आम दौड़-धूप रहती हो, अपने मजमे लगाते हैं । दिल्ली, कलकत्ता और बम्बई जैसे बड़े शहरों में तो इन मजमेबाजों के सक्रिय गिरोह बने हुए हैं जो योजनाबद्ध तरीके से जनता को ठगने में सक्रिय हैं । ये लोग दिन दहाड़े जनता को लूटते हैं फिर भी इनके विरुद्ध कोई कदम नहीं उठाया जा रहा । इन लोगों को दूसरे शब्दों में ठग कहा जा सकता है । ये दर्शकों को न केवल लूटते हैं, वरन् हानिकर दवाएँ बेच कर उनके स्वास्थ्य को भी नुकसान पहुँचाते हैं । साथ ही ये लोग झूठी बातों का प्रतिपादन कर समाज को अन्ध-विश्वासों के गर्त में धकेल रहे हैं । ये समाज के लिए अभिशाप हैं । यह एक विचार करने योग्य विषय है कि यदि इन मजमेबाजों को कोई सच्चा इल्म होता तो ये इस प्रकार मजमे लगाकर जनता को ठगते नहीं और घर बैठे ही धन प्राप्त कर अपना जीवन निर्वाह कर सकते थे, किन्तु वस्तुतः इन लोगों में कोई करामात नहीं होती और ये धोखेबाजी कर शरीफ लोगों को लूटते हैं ।

इनके द्वारा बेची जाने वाली अँगूठियाँ, छल्ले तथा इसी प्रकार की अन्य वस्तुएँ बिल्कुल झूठी होती हैं । इनसे किसी भी प्रकार के मनोरथ के सिद्ध होने की आशा रखना निरी मूर्खता है । इसके अतिरिक्त जो दवाएँ ये बेचते हैं वे अंट-शंट चीजों को कूट-पीस कर बनाई हुई होती हैं । ये लोग कोई डॉक्टर अथवा वैद्य नहीं होते और इन्हें किसी प्रकार की चिकित्सा का कोई ज्ञान नहीं होता । ये तो केवल लोगों को झूठी बातों के जाल में फँसा कर अपना उल्लू सीधा करते हैं । इनकी दवाओं के सेवन से लाभ के बजाय हानि ही होती है । इनका कदापि सेवन नहीं करना चाहिए । यदि किसी को किसी प्रकार की तकलीफ हो तो किसी अच्छे डॉक्टर अथवा वैद्य से मिल कर चिकित्सा करानी चाहिए । इन मजमेबाजों की धोखाधड़ी रोकने के लिए सरकार को समुचित कानून बनाना चाहिए तथा इन्हें उचित दण्ड दिया जाना चाहिए । जन-साधारण को इन पर बिल्कुल विश्वास नहीं करना चाहिए और न ही इनकी झूठमूठ की बातों में फँस कर अपना धन बर्बाद करना चाहिए ।

छद्म की दाल गलने न दें

सरल प्रकृति के लोगों का स्वभाव, चरित्र एवं उद्देश्य उनके साथ थोड़ी देर रहने पर ही विदित हो जाता है । वाणी के सहारे बहुत कुछ उगल दिया जाता है । भाव-भंगिमा के आधार पर यह पता चलता है कि बोलने वाले का स्तर क्या होना चाहिए ? उसकी पिछली गतिविधियाँ आदतों के रूप में अपनी पहचान छोड़ जाती हैं । इतने भर के आधार पर अनुमान लगाया जा सकता है कि यह किधर से आ रहा है और भविष्य में किस ओर जाने के लिए योजना बना रहा है । इस आधार पर व्यावहारिक जीवन में जिनके साथ सम्पर्क सधता है उनके बारे में बहुत कुछ अनुमान लगा लिया जाता है । इस जानकारी के आधार पर ही बुरों से बचना और भलों के साथ रिश्ता जोड़ना सम्भव होता है ।

किन्तु कितने ही प्रवंचना में प्रवीण ऐसे लोग भी होते हैं जो अपनी वास्तविकता छिपाये रहते हैं । भले अपना प्रकट रूप अनाचारियों जैसा बनायें, ऐसा तो नहीं होता, पर बुरे लोग कई बार सज्जनों का मुखौटा पहनकर अपने आप को विश्वसनीय सिद्ध करने में सामान्य बुद्धि वालों के सामने सफल हो जाते हैं । उन्हीं के द्वारा लोग ठगे जाते हैं । बहुत कुछ गँवा बैठने तक भेद नहीं खुल पाता, किन्तु घनिष्ठता बढ़ने के साथ यदि अंध-विश्वास में न रहा जाय तो तर्क, तथ्य और प्रमाण खोजने में आशंका की कसौटी काम दे जाती है । जिसमें मनुष्य के खरे-खोटे होने की सम्भावना का ज्ञान रहता है, वे समय से पहले सम्भल जाते हैं, किन्तु जो जाँच-पड़ताल के फेर में नहीं पड़ते उनके लिए यह कठिन पड़ता है कि सज्जन की सज्जनता और दुर्जन की दुर्जनता का आवरण भेदकर पता लगा सकें । छली प्रकृति के लोग आडम्बर बनाने, प्रपंच रचने और आवरण ओढ़ने की कला में अभ्यस्त हो जाते हैं । नाटक के नटों और विदूषक बहुरूपियों की तरह वे ऐसा आच्छादन लपेट लेते हैं कि सामान्य बुद्धि को उनकी वास्तविकता का पता नहीं चलता । ऐसे लोग मित्र हितैषी बनकर अपना रंग चढ़ाते रहते हैं और जब दाँव लगाने का उपयुक्त अवसर आता है, तभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा ६.४४

साँप की तरह डस लेते और बिच्छू की तरह डंक चुभो देते हैं । विश्वासी बेमौत मारा जाता है ।

जन सम्पर्क के बिना किसी का काम नहीं चलता । कोई सर्वथा एकाकी जीवन व्यतीत नहीं कर सकता । उसे परिकर-परिवार बनाकर रहना पड़ता है । कुटुम्बियों के साथ एक घर में रहना तो साधारणतया सभी का होता है । इस क्षेत्र में कई लोग रहते हैं । उनकी प्रकृति का, दैनिक गतिविधियों से सहज पता चलता रहता है । अपने व्यक्तित्व को छिपाये रखना उनको सम्भव नहीं होता जो आयु की, उम्र की दृष्टि से अपरिपक्व है, जिनकी गतिविधियाँ आँखों के आगे रहती हैं, उस समुदाय में जहाँ जो खोट पाया जाय उसे समय रहते टोका ही नहीं, रोका भी जाये । उसके लिए वयोवृद्ध होना जरूरी नहीं । कई बार व्यस्त होते-होते कुछ लोग इतने प्रवीण हो जाते हैं कि न केवल गृह व्यवस्था, व्यवसाय कारोबार सम्भालने लगे, वरन् यह भी जाँच सके कि कौन कितने पानी में है, किसका रुझान और प्रयास किस दिशा में चल रहा है ?

इस अनुभव के आधार पर यह सम्भव है कि बिगाड़ होते-होते उसे रोका जा सके और उलट कर रुझान को सुनिश्चित राह पर धकेला जा सके । परिवार का भरण-पोषण ही एक मात्र उद्देश्य नहीं है, वरन् यह भी दायित्व है कि सम्बन्धियों को सद्गुणी, सदाचारी, प्रामाणिक एवं सज्जन बनाया जाय । वस्तुतः यही वह सम्पदा है जिसके आधार पर कोई सुखी, सम्पन्न एवं सुव्यवस्थित रह सकता है । सहयोग, स्नेह अर्जित कर सकता है । अपनों के प्रति कितना गहरापन था, इसकी परीक्षा एक ही कसौटी पर हो सकती है कि सम्पर्क के कितने लोगों को किस प्रकार सुधारा और ऊँचा उठाया जाय । यह पारिवारिकता की परीक्षा है । जहाँ घनिष्ठता बन चुकी हो वहाँ सदा इसी प्रकार का प्रयत्न करते रहना चाहिए । कहने भर से जहाँ काम न चलता हो, वहाँ उसे साथ लेकर वस्तुस्थिति का अनुभव कर सकने का अवसर देना चाहिए । मनुष्य कच्ची मिट्टी का बना है । उसे चतुर कुम्हारों के हाथों द्वारा किसी भी रूप एवं आकृति में गढ़ा जा सकता है । गीली लकड़ी इच्छानुसार मोड़ी जा सकती है । यह कार्य तभी तक सम्भव है, जब तक उसकी अहंता प्रौढ़-परिपक्व नहीं हुई है । अहंकार जग पड़ने पर व्यक्ति किसी की सुनता नहीं, अपनी मर्जी चलाता है और परामर्श देने वालों को अपना विरोधी, निन्दक मानकर उससे बचने-कटने लगता है । ऐसी दशा में सुधार कार्य कठिन हो जाता है, तो भी प्रयत्न तो जारी रहने ही चाहिए ।

इससे आगे का सम्पर्क दायरा बहुत बिखरा हुआ होता है । उसके साथ सम्बन्ध रहते हुए भी व्यक्तित्व की वास्तविकता का पता नहीं चल पाता । लोग प्रदर्शन प्रिय होते हैं । घर में फटे-पुराने कपड़े पहने रहते हैं, ताकि देखने वाले उन्हें सुसम्पन्न समझें । गरीबी की वस्तुस्थिति का पता न लगा सकें । यही नीति, स्वभाव एवं चरित्र के सम्बन्ध में भी अपनाई जाती है । कलाकारिता यहाँ भी काम करती है । अभिनय करने वाले अपने परिधान, आचरण और स्वभाव के परिवर्तन में क्रिया-कुशल हो जाते हैं । यही रीति प्रपंचियों की भी होती है । वे सम्पर्क क्षेत्र में साधारणतया सज्जनोचित तौर-तरीके अपनाते हैं, जिससे उनका विश्वास बना रहे और सहयोग सद्भाव मिलता रहे । साथियों को सद्व्यवहार से प्रभावित करके विश्वासपात्र बना लेना कुछ बहुत कठिन नहीं है । इस कौशल में भले ही वास्तविक सज्जन पिछड़ जायें, पर दुरात्मा ऐसा जाल बिछाते हैं, जिसमें चिड़ियाँ, मछलियाँ आसानी से फँसती रहें और फँस जाने पर कोसती-कलपती रहें ।

इन दिनों लोकव्यवहार में कितनी अनीति एवं धोखेबाजी चलती है, इसे सभी जानते हैं । उचित मूल्य पर सही चीज खरीदना और बेचना कठिन पड़ता है । तब व्यक्ति की वास्तविक पहचान कर सकना तो और भी कठिन है । जिसके पिछले लम्बे जीवन और दैनिक क्रिया-कलाप का भली प्रकार परिचय नहीं, उसके सम्बन्ध में मात्र ऊपरी रंग-ढंग को देखकर किसी सही निर्णय पर पहुँचना कठिन है । यदि गलत व्यक्ति के चंगुल में फँसकर अपने को अनर्थ में उलझ जाना पड़ा तो वह बहुत महँगा सौदा सिद्ध होगा । ऐसा घटित होने के उपरान्त सज्जनों पर विश्वास करना भी कठिन हो जाता है और उनके द्वारा जो हित साधन हो सकता था, उसका अवसर चला जाता है । मूर्ख ठहराए जाने और उपहास सहने का भार लदता है, सो अलग ।

इन दिनों मित्र बनकर शत्रुता का व्यवहार करने की रीति-नीति बन गई है । हालांकि यह आक्रमण, अपहरण का सहज तरीका है । समझदारी इसमें है कि समय को समझा जाय, प्रचलन को समझा जाय और यदि किसी का भला न बन पड़े, तो कम-से-कम अपना तो भला कर ही लें । अपने को छल-पाखण्ड से बचा लेना और साथियों को सचेत कर देना यह भी एक उपकार है । छद्म को असफल कर देना भी उपकार से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है ।

अन्धविश्वासों की इस विडम्बना से मुक्त हों

भूत-प्रेत क्या है ? उनके अस्तित्व का प्रामाणिक आधार क्या है तथा उनकी वास्तविकता क्या है ? यह अलग विषय है, पर सर्वसामान्य में भूत-प्रेतों के किस्से इस तरह प्रचलित हैं कि लगता है वे चिड़िया से भी सस्ते और सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाने वाले हों जो हर किसी को हर कहीं चाहे जब मिल जाएँ । अन्धेरे स्थान गाँव का कोई पुराना पेड़, बरगद या पीपल की शाखाएँ अथवा उपेक्षित-सा कोई एकान्त में पड़ने वाला कुआँ प्रायः भूत-प्रेतों से सम्बद्ध हो जाता है । लोग उनके प्रति इस प्रकार विचित्र धारणाएँ बना लेते हैं कि उनके पास से निकलने में भी डर लगता है । इन बातों में तथ्य जरा भी नहीं होता, लेकिन आश्चर्य है कि भूत-प्रेतों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा ६.४५

के किस्से गली-गली और मुहल्ले-मुहल्ले सुनने को मिल जाते हैं ।

भूत-प्रेतों की ही भाँति देवरा बैठक के रूप में भी गाँव से लेकर शहरों कस्बों तक में अन्ध-विश्वासियों की भीड़ जुड़ती है । देवरा बैठक ऐसे स्थानों को कहा जाता है जहाँ पीपल वाली शीतला और भैरों पीर जैसी सत्ताओं की कल्पना कर लोग उनके पास अपनी समस्याओं का हल करने तथा कष्ट-कठिनाइयों को दूर करने, रोग-बीमारियों से मुक्ति पाने के लिए पहुँचते हैं । उस स्थान पर किसी मूर्ति की प्रतिष्ठा कर ली जाती है तथा फिर वहाँ का पण्डा या पुजारी नहा-धोकर पूजा की चौकी पर चुपचाप बैठ जाता है । सब लोग शान्तिपूर्वक देवता के आने की प्रतीक्षा करते हैं और जब पण्डा या पुजारी सिर हिलाकर उछल-कूद मचा कर झूमने लगता है तो समझा जाता है कि देवता का आगमन हो गया है और फिर क्रम से वहाँ आये लोग देवता के सामने अपनी समस्याएँ रखने लगते हैं । कहीं-कहीं तथाकथित देवता खुद फरियादी को पुकार कर पूछते हैं ।

ऐसे नाटकों में देवता बड़े अजीब-अजीब कारण और विचित्र समाधान सुझाते हैं । कोई कहता है अमुक दिन तेरे घर पर मैं फकीर के या साधु के वेश में आया था, तो तूने मेरा तिरस्कार कर दिया था । कोई कहता है हवा लग गयी है । इसी प्रकार इन कारणों से उत्पन्न हुई समस्याओं का समाधान एक पूजा करवाना या पाँच ब्राह्मणों को जिमाना अथवा सन्त बैठक में हाजिर होना सुझाया जाता है । विचारशील लोग इन सुझाये गये समाधानों के पीछे विद्यमान कारणों को आप ही समझ लेते हैं, जैसे पूजा का ही है तो पूजा करवाने के साथ-साथ भक्त भेंट चढ़ावा भी लाता है । और साधु पुरुष को भोजन कराने की बात है तो उसी देवता के पण्डे से अच्छा साधु और कहाँ मिलेगा । बैठक में हाजिरी देने के लिए भी प्रत्येक भक्त कुछ दान-दक्षिणा तो लेकर पहुँचते ही हैं ।

कई स्थान ऐसे हैं जहाँ बिना कोई खर्च सुझाये सहायता करने का आश्वासन दे दिया जाता है । सामान्य लोगों की इस प्रकार श्रद्धा बढ़ती है । पण्डे-पुजारियों की जीविका का कोई आधार कोई व्यवसाय धन्धा तो रहता नहीं । सो वे सुबह उठकर फेरी पर निकलते हैं तथा प्रायः उन्हीं घरों पर भिक्षा पाने के लिए पहुँचते हैं जहाँ कि भक्त रहते हैं स्वाभाविक है कि उन्हें फिर खाली हाथ नहीं लौटना पड़ता ।

देवी-देवता आने का ढोंग कर जन-सामान्य की धर्म श्रद्धा का शोषण करने वाले लोग बड़े होशियार होते हैं तथा भक्तों की नब्ज को पहचानते हैं । उसी के अनुसार भक्तों की सामर्थ्य देखकर वे समस्याओं का हल समझाते हैं और अन्ध-विश्वासियों की भी बड़ी विचित्र स्थिति रहती है । वे अपने देवी-देवों पर इतनी श्रद्धा रखते हैं कि साधारण-सा बुखार भी दो चार दिन के इलाज से दूर नहीं हो तो उसे अमुक देवता का प्रकोप समझकर उनके स्थानों पर ले जाते हैं । गाँवों में चेचक की देवी शीतला, मोतीझरा के देवता मोतीसर आदि कितने ही ऐसे चौधरी, देवी-देवता विराजमान होते हैं, जैसे वे अलग-अलग बीमारियों के डॉक्टर होते हैं । बीमारी तो जैसे तैसे दूर हो जाती है या नहीं भी होती है बहुत से यम देवता की शरण भी चले जाते हैं, पर अन्धविश्वासी लोग उन्हें दूर करने के लिए अपने देवों के पास ही जायेंगे और कोई डॉक्टरी उपचार नहीं लेंगे ।

ऐसे देवी-देवताओं को सप्ताह में एक बार या पखवाड़े की एक तिथि नियत होती है । जिस दिन उनकी सवारी आती है । कहीं-कहीं तो जब भेंट-पूजा का सामान जुटाकर जब उन्हें बुलाया जाता है, तभी वे आ जाते हैं । देवी-देवताओं के पण्डों की तरह जो किसी अदृश्य शक्ति का ढोंग तो नहीं करते, पर अपनी कलाबाजियाँ झाड़-फूँक कर सिद्ध करते ऐसे ओझे-सयाने भी गाँव में चार तो मिल ही जाते हैं । बात दोष के कारण होने वाली पेट की बीमारियों से लेकर पीलिया और मोतीझरा झाड़ने वालों तथा बिच्छू और साँप का जहर उतारने वाले जान-लेवाओं का अपना व्यवसाय भी गाँवों में बड़ी खूबी से चलता रहता है । जाहिर है कि रोग बीमारियों का कारण प्रकृति के अनुसार जीवन न जीने के कारण आये दोष होते हैं अथवा मौसम और मानवी प्रकृति की विषमता है, परन्तु आश्चर्य है कि तथाकथित जान ओझा उनकी जिम्मेदारी देव-शक्तियों पर ही डाल देते हैं और उन्हें समझा-बुझाकर मनाने की दलाली खाते हैं । समझ में नहीं आता कि संसार में देव-शक्तियों का अस्तित्व अगर है भी तो क्या इसलिए कि ये लोगों को बीमार करते रहें और अपने ऐजेण्टों की सिफारिश पर लोगों को उनसे मुक्त कर दें । यदि देव-शक्तियों का यही काम है तो उनमें और राक्षसों में क्या फर्क हुआ ?

ओझा, सयानों को चरित्र की दृष्टि से परखा जाय तो वे सामान्य लोगों की अपेक्षा हीन स्तर के ही होते हैं और उनके पास प्रायः गँवार-मूढ़ स्त्रियाँ तथा पुरुष ही जाया करते हैं जो उनके लिए बोतल, चिलम या हुक्के का प्रबन्ध कर अपना काम करवाते हैं । बहुत से ओझा सयाने 'उतार' का नाटक भी करते हैं जिसमें सात प्रकार की मिठाई, मुर्गे या बकरी का बच्चा, शराब की बोतल, तमाखू, और गाँजे की चिलम तथा पाँच या ग्यारह रुपये गाँव से बाहर रख जाते हैं । कहना नहीं होगा कि यह उतारा रखने के लिए ओझा सयाने या उसी के परिवार के लोग जाते हैं, क्योंकि अन्य कोई यदि इस काम के लिए जाता है तो भूत-प्रेत दीख जाने से डरने की सम्भावना बता दी जाती है । रात के अन्धेरे में यह सामान लेकर निकलते हैं और फिर वह कहाँ गया इसका कोई पता नहीं चलता । स्पष्ट है कि अमुक-तमुक देवता के पुजारी या ओझा के पेट में ही पहुँचता है । कई अवसरों पर तो ओझा, सयानों पर ज्यादा विश्वास करने से घाटा भी उठाना पड़ता है । आये दिन समाचार-पत्रों में ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

घटनाएँ प्रकाशित होती रहती हैं जिनसे व्यक्त होता है कि झाड़-फूँक करने वालों पर जरूरत से ज्यादा विश्वास करने वाला चरित्र और धन दोनों ही दृष्टि से ठगा जाता है । कई बार तो जान तक से हाथ धोना पड़ता है ।

विष उतारने वालों के सम्बन्ध में प्राण खोने का खतरा ज्यादा रहता है । वैज्ञानिक रूप से यह सिद्ध हो चुका है कि काटने वाले साँपों में ९७ प्रतिशत साँप विषहीन होते हैं उनका विष ही नहीं चढ़ता, केवल मनोवैज्ञानिक भय के कारण ही लोगों की मृत्यु होती है । झाड़-फूँक करने वाले ऐसे लोगों का मनोवैज्ञानिक विष जरूर ठीक कर देते हैं, पर जब कभी सच ही विषैले साँप ने काटा हो तो ओझा क्या देवता भी उसे बचाने में समर्थ नहीं होते और जीवन ज्योति बुझ जाने पर समय अधिक हो गया, अथवा नाग देवता बहुत ज्यादा कुपित हैं कहकर अपनी बात जाने से बचा लेते हैं । काश, ओझा, सयाने के चक्कर में न आ कर डॉक्टरी सहायता ली जाती ।

यहाँ तक तो कुछेक ही अन्ध-विश्वासों का जिक्र किया गया, पर उनकी संख्या इतनी अधिक है कि यदि सबका विवरण एकत्रित किया जाय तो एक बड़ी पुस्तक तैयार हो सकती है । फिर भी यह निश्चितता पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि उस पुस्तक में सभी विवरण आ सकेंगे—केवल भारत के ही । कहाँ तो हमारा देश किसी काल में जगद्गुरु रह चुका है और इस सत्य तक पहुँच चुका है कि रोग, शोक, विपत्तियाँ, कठिनाइयाँ अपनी ही गलतियों के कारण आती हैं । ईश्वर भी उनमें कोई मदद नहीं करता, वरन् सच्चे आस्तिकजन तो उनमें ही ईश्वर की कृपा मानते हैं कि इस प्रकार हमारे पाप हलके हो रहे हैं और कहाँ यह निकृष्टतम स्थिति के साधारण से बुखार को भी दैवी प्रकोप मानकर उससे छुटकारा पाने के लिए इतवस्तुतः दौड़ते फिरा जाय ।

यह तो स्पष्ट है कि इस विश्वास को व्यवसाय का रूप देने वाला वर्ग बड़ा होशियार और चालाक है तथा सामान्य बुद्धि के लोगों में अपनी बात किसी न किसी प्रकार सिद्ध कर ही देता है पर विचारशील व्यक्तियों का भी तो यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे फैलाये जाने वाले अन्धविश्वासों को निरस्त करें ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन अन्धविश्वासों को उखाड़ फेंकिये

अन्धविश्वास का अज्ञान

हमारा देश अन्धविश्वास के लिये बदनाम है । यों तो संसार में अभी तक सैकड़ों जंगली जातियाँ पायी जाती हैं, जो अन्धविश्वास के नाम पर देवता के आगे नर-बलि देती हैं, अपनी ही सन्तान का बलिदान कर देती हैं तथा अन्य भी अनेक प्रकार के रोमांचक कृत्य करती हैं । उनकी गिनती मनुष्यों में भी नहीं की जाती, उनको बर्बर या अर्द्ध-पशु की तरह माना जाता है । पर भारतवर्ष की बात निराली है । एक तरफ तो यह परमात्मा, ईश्वर और जीवात्मा के गूढ़ से गूढ़ रहस्यों को प्रकट करता है, आध्यात्मिकता के ऊँचे से ऊँचे सिद्धान्तों की विवेचना करता है, जिससे पश्चिमी देशों के महान विद्वान भी इसके सामने नतमस्तक हो जाते हैं और दूसरी तरफ यहाँ भूत, प्रेत, बैताल ब्रह्मराक्षस, जिन्द, दई-देवता, कुआँ वाला, जखैया आदि न जाने कितने ऐसे अन्धविश्वास फैले हुए हैं, जिनको जंगली लोगों के उपयुक्त ही कहा जा सकता है । इस अन्धविश्वास की इतिश्री इन प्रचलित काल्पनिक अदृश्य शक्तियों पर ही नहीं हो जाती, वरन् इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष चाहे जहाँ कोई देवी प्रकट हो जाती है, कहीं किसी कुएँ का जल सब रोगों की राम-बाण दवा बन जाता है, कहीं किसी सर्व रोग विनाशिनी जड़ी-बूटी के नाम पर हजारों लोग इकट्ठे हो जाते हैं, कहीं भगवान का साक्षात् अवतार ही उत्पन्न हो जाता है और लोग उसी की पूजा करने लग जाते हैं । ऐसी बातों में विश्वास रखने वाले और उनके पीछे दौड़ने वाले अशिक्षित, गँवार या जाहिल ही नहीं होते, अपने को शिक्षित, सभ्य, सुसंस्कृत समझने वाले भी इन कार्यों में भाग लेते हैं और उनके प्रसार में सहायक बनते हैं ।

यहाँ हम इस विवाद में नहीं पड़ना चाहते कि शास्त्रों में जिस भूत-योनि का जिक्र किया गया है उसकी वास्तविकता क्या है । अर्थात् वह कोई वायवीय अथवा सूक्ष्म देहधारिणी चैतन्य सत्ता है । अथवा 'भूत'(गुजरी हुई घटना) को ही लोगों ने एक काल्पनिक प्राणी का रूप दे दिया है । हमारे देश में अगर कोई चाहे तो घर-घर और गली-गली भूतों के किस्से सुन सकता है, जिनके प्रत्यक्ष और 'सर्वथा सत्य' होने का लोग दावा करते हैं । पर जब कोई विचारशील व्यक्ति उनकी जाँच करने लगता है तो परिणाम शून्य ही निकलता है । उन लोगों की तो बात ही मत पूछिये जिनको पिछड़े हुए या छोटी जाति वाला कहा जाता है । उनमें तो सब प्रकार की विपत्तियाँ, रोग, बीमारी, हानि, लाभ तक का कर्ता-धर्ता भूतों को माना जाता है । किसी स्त्री, पुरुष, बालक को किसी तरह की तकलीफ हो गयी और साधारण उपाय करने से दो-चार दिन में वह ठीक नहीं हो पायी तो फौरन उसका दोष भूत के सिर मढ़ दिया जाता है और स्याने, ओझा झाड़ने वाले के पास पहुँच कर निवारण का उपाय पूछा जाता है । लोगों का तो व्यवसाय ही भूतों को भगाना ठहरा, जिस प्रकार डॉक्टर कोई न कोई रोग बतला देता है उसी प्रकार ये ओझा, स्याने प्रत्येक आगन्तुक की विपत्ति का कारण भूतों से जोड़ देते हैं और उसके लिए भेंट-पूजा लेकर कोई न कोई उपाय भी बतला देते हैं । ऐसे लोग प्राय: देवता के आने का सप्ताह या महीने में कोई खास दिन नियत कर लेते हैं और उसी दिन तरह-तरह के रोगियों की भीड़ आटा, चावल, अनाज, घी, तेल, रुपया, पैसा लेकर उसके पास पहुँचती है । उस दिन, उसके सिर पर देवता आता है, जो खूब झूम-झूम कर और विचित्र प्रकार की आकृति बनाकर लोगों के रोगों तथा अन्य आपत्तियों का निदान करता है और भूत-प्रेतों तथा गृह-देवताओं की पूजा, दान या किसी को खिलाने-पिलाने के द्वारा सब रोगों का इलाज बतलाता चला जाता है । इस प्रकार भूत ने एक अच्छे रोजगार का रूप ग्रहण कर लिया है जिससे बहुसंख्यक लोग आराम के साथ जीवन-निर्वाह कर लेते हैं ।

इस प्रकार के ओझा, स्याने आदि चरित्र की दृष्टि से भी प्राय: हीन कोटि के होते हैं और उनके पास अधिकांश अशिक्षित मूढ़ स्त्रियाँ ही जाती हैं । इसलिए वे उनको सहज ही बहकाकर, भ्रम में डालकर पतन के रास्ते पर ले जाते हैं । इस तरह हमारा अन्धविश्वास धन, धर्म और इज्जत तीनों को नष्ट करने वाला सिद्ध हो रहा है । इस प्रकार की बहुसंख्यक घटनाएँ प्रकाश में आती रहती हैं और अनेक बार झगड़ा पैदा हो जाने से मुकदमे भी चल जाते हैं । वहाँ इस भूत-विद्या की कलई भली प्रकार खुल जाती है पर अन्धविश्वास की यही महिमा है कि फिर भी लोगों की आँखें नहीं खुलतीं और वे घूम फिर कर पुन: इन्हीं लोगों के पास जा पहुँचते हैं ।

किसी प्रकार की बीमारी के लिये भूत को दोष देना और उसके निवारण के लिये स्यानों की शरण लेना ऐसी मूर्खता की बात है कि इसके सम्बन्ध में अधिक प्रमाण देना या बहस करना असंगत जान पड़ता है । बीमारी तो प्राय: असंयम या किसी प्रकार की गलती, आकस्मिक घटनावश होती है । उसका निवारण उस गलती का सुधार करने से ही हो सकता है । इसीलिये अधिकांश समझदार लोग बीमारी होने पर असंयम का त्याग कर संयम पालन करते हैं और किसी अच्छे चिकित्सक की दवा का सेवन करते हैं । इसी से समयानुसार उनका रोग दूर हो जाता है । इसमें 'भूत' कहाँ से आ गया और उसकी क्या आवश्यकता है, यह हमारी समझ में नहीं आता । बहुत-सी बीमारियाँ कठिन और पेचीदा भी होती हैं और सहज ही वश में नहीं आतीं । ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हालत में दवा या उपाय को असर न करते देखकर यह ख्याल कर लेना कि इसका कारण कोई भूत-प्रेत होगा कहाँ की बुद्धिमत्ता है ? यूरोप, अमरीका के लोग इस प्रकार किसी रोग को भूत से उत्पन्न नहीं मानते और न किसी स्याने-दिवाने के पास जाते हैं, तो क्या उनके रोग अच्छे नहीं होते ? हम तो देखते हैं कि वे हमसे कहीं अधिक शीघ्र रोगमुक्त हो जाते हैं और उनका स्वास्थ्य भी फिर से जल्दी ही सुधर जाता है । पर भूत से बीमारी मानने वालों का रोग अनेक बार आजन्म वैसे ही बना रहता है ।

भूतों के सम्बन्ध में शंका पैदा होने का दूसरा कारण कभी-कभी किसी घर में गुप्त-रूप से उपद्रव होना होता है, जैसे ईंट पत्थर फेंके जाना, कपड़ों का जल जाना, भोजन में गन्दगी पैदा हो जाना आदि । यद्यपि प्रत्यक्ष प्रमाणों के अभाव में प्रत्येक घटना को तो झूठी नहीं कह सकते, पर इतना हम जानते हैं कि ऐसे सुने जाने वाले भौतिक-काण्डों में से अनेक काल्पनिक होते हैं, बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कहे जाते हैं और बहुतों की तह में किसी प्रकार का षड़यंत्र, दुरभिसन्धि होती है । पर चूँकि जिन लोगों के दिमाग में पहले से ही भूत की धारणा, उसका भय बद्धमूल रहता है, वे किसी प्रकार की जाँच-पड़ताल तो कर नहीं सकते बस तुरन्त भयाक्रान्त होकर किसी भूत विद्या विशारद की शरण लेते हैं । उनका काम तो इस तरह के दस किस्से और सुनाकर उनके विश्वास पर मुहर लगा देना होता ही है । बस इस प्रकार यह अन्धविश्वास अपने नये-नये शिकार ढूँढता रहता है और उसकी जड़ जमती जाती है ।

बहुत से लोग तो जान बूझकर ऐसे जाल और ढोंग रचते रहते हैं और सर्वसाधारण को उसमें फँसा लेते हैं । उदाहरणार्थ—अनेक व्यक्ति घोषणा कर देते हैं कि हमको अमुक देवता ने स्वप्न दिया है कि—"मैं फला स्थान पर गड़ा हूँ, तुम मुझे बाहर निकालकर मेरी पूजा करो । अगर इस कार्य की उपेक्षा की जायेगी तो बड़ी आपत्ति आयेगी, गाँव भर का नाश हो जायेगा ।" ऐसी बातें सुनकर लोग खोदते हैं तो वहाँ पहले से ही रखी हुई मूर्ति निकल आती है । यह देखकर लोगों की श्रद्धा-भक्ति उमड़ पड़ती है, खूब भेंट-पूजा आती है और देवता का मंदिर बन जाता है । बस, स्वप्न देखने वाले को एक रोजगार मिल जाता है, जिससे आजन्म भरण-पोषण हो सकता है ।

अनेक साधु-महात्मा और फकीर अपने कुछ एजेण्ट इधर-उधर के गाँवों में भेजकर प्रचार कराते हैं कि अमुक साधु बाबा बड़े पहुँचे हुए और सब प्रकार के रोगों को एक चुटकी भभूत या किसी जड़ी-बूटी से अच्छा कर देते हैं । ये एजेण्ट दूर-दूर के लोगों के अच्छे होने के किस्से भी गढ़ कर सुनाते रहते हैं । परिणाम यह होता है कि रोग दूर कराने वालों या पुत्र, धन आदि की अभिलाषा रखने वालों की भीड़ साधू बाबा के पास इकट्ठा होने लगती है और वे काफी धन इकट्ठा कर लेते हैं । यह सच है कि ऐसी जालसाजी ज्यादा दिन नहीं चलती । दो-चार महीने में उसका भण्डाफोड़ हो जाता है । पर तब तक वे दो-चार हजार रुपया इकट्ठा करके किसी दूरवर्ती स्थान में जा बैठते हैं और फिर कोई नया जाल फैलाने लग जाते हैं ।

इस तरह की बहम, मूर्खता, ठगी की बातों से धन तो लूटा ही जाता है, पर इससे भी एक बड़ी बुराई यह होती है कि इससे देश-समाज का नैतिक पतन भी होता है और विदेशों में हमारे देश की बदनामी होती है । जब बाहर के लोग यहाँ के बहुसंख्यक लोगों को ऐसी मूढ़ता की बातों में फँसे हुये और बिना जड़-मूल की बातों पर विश्वास करते हुये देखते हैं तो उनको यहाँ की संस्कृति के प्रति जो सम्मान और श्रद्धा होती है उसमें कमी आ जाती है । वे समझने लगते हैं कि इनकी आध्यात्मिक बातें कहने-सुनने तक की है, पर उन्होंने इनके भीतर प्रवेश नहीं किया है, वास्तव में ये अर्द्ध-सभ्य जातियों की तरह ही कुसंस्काराछन्न हैं ।

दूसरी बड़ी हानि यह भी है कि ऐसे ठगों के कारण सच्चे लोगों पर से भी विश्वास हट जाता है और उनकी उपेक्षा होने लगती है । इसमें सन्देह नहीं कि कुछ साधु सच्चे त्यागी, सदाशय भी होते हैं और परोपकार की इच्छा भी रखते हैं । पर ठगों की करतूतें और धूर्तता देख कर लोग उनको भी ठग और जालसाज समझकर पास से हटा देते हैं । इस प्रकार ढोंगी और ठग भिखारियों के कारण हम अनेक बार उन लोगों की सहायता से भी विमुख हो जाते हैं, जो वास्तव में संकट में पड़े होते हैं और जिनकी सहायता करना एक मनुष्य का कर्तव्य है । इस प्रकार अन्धविश्वास और ठगी की प्रवृत्ति समाज के लिये कई प्रकार से घातक सिद्ध होती है, जिसका निराकरण प्रत्येक समाज-हितैषी का कर्तव्य है ।

अन्धविश्वास का इन्द्रजाल

अन्धविश्वास और रूढ़िवादी परम्पराएँ आज भी हमारे समाज में जड़ जमाये बैठी हैं और जनजीवन को प्रभावित करती रहती हैं । अशिक्षित ग्रामीण जीवन में तो इनका पूरा-पूरा बोलवाला है किन्तु शिक्षित और सभ्य कहे जाने वाले घरानों में भी इनका कुछ कम प्रभाव नहीं है । ज्ञान-विज्ञान, प्रतिभा और तर्क ताक में धरे रह जाते हैं जब घर में तथाकथित 'बुढ़िया-पुराण' की चलती है । बात-बात में मीनमेख, शंका, भय, पश्चाताप हमारे दैनिक जीवन में बड़ा अवरोध बन जाते हैं । ये हमारे मनोबल को क्षीण करते हैं । कई असामाजिक, अनुत्तरदायी कृत्य हो जाते हैं, इन अन्धविश्वासों की प्रेरणाओं से ।

समाचार-पत्रों में प्राय: ऐसी खबरें निकला करती हैं कि 'अमुक व्यक्ति ने देवी पर अपनी जीभ काटकर चढ़ा दी', 'बच्चे की बलि दे दी ।' अक्सर लोग किसी विशेष सिद्धि या लाभ के लिए देवी-देवताओं की कृपा प्राप्त करने के लिए ऐसे जघन्य कृत्य करते हैं । देवी-देवताओं पर मुर्गे, सूअर, बकरे, भैंसे की बलि चढ़ाना इसी तरह की अन्ध प्रेरणाओं पर आधारित होता है । लेकिन इस तरह के अन्धविश्वास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की हद हो जाती है । जब मनुष्य नर-बलि देता है या अपना अंग काटकर चढ़ाता है । सिद्धि तो किसी को मिलती नहीं लेकिन जघन्य पाप का भागी बनना पड़ता है ।

कुछ समय पूर्व एक समाचार निकला था जिसके अनुसार मध्य-प्रदेश के एक तालाब में किसी विशेष पर्व पर नहाने और अपने जूते वहाँ छोड़ आने पर शनिदशा दूर हो जाने के अन्धविश्वास पर वहाँ छोड़े गए जूते हटवाने में राज्य सरकार का हजारों रुपया खर्च हुआ और तालाब दलदल बन गया । लेकिन कितनों की शनिदशा दूर हुई यह अज्ञात है ।

अक्सर कई बार कुछ स्वार्थी लोगों के द्वारा ऐसी खबरें उड़ाई जाती हैं कि 'अमुक तालाब में नहाने से असाध्य रोग दूर हो गया ।' तब हजारों लोग उसमें डुबकियाँ लगाते हैं । कीचड़ को भी शरीर में लपेटते हैं । लेकिन इस तरह ठीक हुआ एक भी व्यक्ति 'हमने अभी तक नहीं देखा ।'

हमारे जीवन में इस तरह के अन्धविश्वास कुछ कम नहीं हैं । यह तो एक सामान्य-सा उदाहरण है । छींकने, थूकने, किसी के मिल जाने तक पर हमारे कार्यक्रम रद्द हो जाते हैं । सफलता का विश्वास नष्ट हो जाता है । आत्मविश्वास और साहस तो कभी के गायब हो जाते हैं । भीरुता, कायरपन, आशंकाएँ हमारे स्वभाव का अंग बन जाती हैं ।

हम कहीं जाने को तैयार हों और कोई व्यक्ति अचानक छींक दे तो हमारा बढ़ा हुआ पाँव तत्क्षण रुक जाता है । बिल्ली रास्ता काट जाय तो आगे बढ़ने में जो कुछ भी बुरा हो जाय वह थोड़ा है । ऐसी मान्यताएँ बनी हुई हैं, हमारी ।

गोरखपुर की तरफ के एक सज्जन थे । जब वे कहीं जाते तो अपने सब मिलने वालों से एक दिन पहले कह देते—"भाई ! कल हम कहीं जायेंगे, हमें टोकना मत ।" भूलवश कोई उन्हें पूछ बैठता—"आज कहाँ जा रहे हैं" तो उनकी आँखें लाल हो जातीं और झगड़ा करने पर उतारू हो जाते । फिर कितना ही आवश्यक काम हो वे नहीं जाते । एक दिन पूछने पर उन्होंने बताया—"कहीं जाते समय ऐसा पूछने पर हमारी तरफ लाठियाँ चल जाती हैं ।" इतना ही नहीं रास्ते में कोई धोबी, तेली, डाकोत मिल जाय तो लोग अपनी खैर नहीं समझते । लोग पहले से ही अपनी हानि या असफलता की कल्पना कर लेते हैं । आश्चर्य तो यह देखकर होता है कि इन्हें मैले का टोकरा लादे हुए कोई मेहतर मिल जाय तो भारी खुशी होती है ।

धार्मिक पूजा-उपासना के लिए मंदिरों और मूर्तियों का होना अच्छा है किन्तु जगह-जगह पत्थर इकट्ठे कर उन्हें सिन्दूर से रंग कर असंख्य देवी-देवताओं पर सिर रगड़ने में हमारा कितना समय बर्बाद होता है ? घास बाबा, प्रेत बाबा, पीर, भैरव, भवानी, भूत-प्रेत के नाम पर न जाने कितने पत्थरों के सामने हम नाक रगड़ते फिरते हैं, उनसे दुआएँ माँगते हैं, पर पीठ फेरने पर चाहे उन पर कुत्ते ही पेशाब क्यों न करें । यह है हमारे अन्धविश्वास का नाटक । स्वामी विवेकानन्द ने एक बार हमें चेतावनी देते हुए कहा था—"जो समाज चौके, चूल्हे तथा बर्तनों को पूजता रहेगा, पत्थरा-पत्थर पर सिर रखता फिरेगा वह कभी ऊँचा नहीं उठ सकता ।" किसी के बताने पर कि अमुक स्थान पर अमुक देवता ने लीला की थी या कोई घटना हुई थी तो लोग वहाँ की मिट्टी लेते-लेते गड्ढा कर देते हैं ।

किसी भी तीर्थ या मंदिर में जाने पर हम अपना सौभाग्य समझते हैं और पुण्य कमाते हैं, एक बहुत बड़ा धर्म समझते हैं । किन्तु हमारा धर्म खोखला होता है । जब अपने आचरणों से इन पवित्र स्थानों को हम गन्दा बनाते हैं । मंदिर के पीछे ही टट्टी-पेशाब करने बैठ जाते हैं । किसी पवित्र सरोवर, नदी के वातावरण को दूषित बनाते हैं । हम दान-दक्षिणा के नाम पर करोड़ों रुपया खर्च कर देते हैं । किन्तु किसी जरूरतमंद, गरीब की सहायता करने की ओर हमारा ध्यान नहीं होता । तरह-तरह की लीलाएँ स्वाँग बनाने में धर्म के नाम पर पैसा पानी की तरह बहा दिया जाता है किन्तु जन-जीवन की सुविधा या कल्याण के लिये हम एक पैसा खर्च करना नहीं चाहते । धर्म के नाम पर पाखण्ड और प्रपंच रचने वाले सण्डे-मुस्टण्डों की भेंट-पूजा में हम दिल खोलकर खर्च करते हैं, किन्तु किसी सद्गुणी, सदाचारी का सम्मान करना हम नहीं जानते । जिनका पेट खूब भरा है उन्हें हम मिठाइयाँ और माल खिलाते हैं किन्तु जिन्हें प्रयत्न करने पर भी रोटी-कपड़ा नसीब नहीं होता उनकी ओर से हम आँख मींचे रहते हैं ।

इस तरह हमारे जीवन में अन्धविश्वास, रूढ़िवादी परम्पराएँ व्यापक रूप से घर करे बैठी हैं । हम इन्हीं में उलझ कर सत्य से दूर रह जाते हैं । इनका मायावी पर्दा हमें सत्य तक पहुँचने ही नहीं देता । आवश्यकता इस बात की है कि ज्ञान, विवेक और स्वतन्त्र चिन्तन के आधार पर इन्हें जाना जाय और अपने व्यवहार, कार्यप्रणाली से अन्धविश्वासों को दूर किया जाय ।

यह भ्रम जंजाल कब तक चलेगा ?

किसी समय में अन्धविश्वासों का प्रचलन उसकी बौद्धिक हीनता का परिचायक होता है । जिस समाज अथवा स्थान में जितने अधिक अन्धविश्वासी होंगे उसमें उतने ही ठग, मक्कार, जालिये, ओझा, सयाने भी अपना अड्डा जमा लेंगे और रोग के कीड़ों की तरह अपने जाल का विस्तार कर समाज को निर्बल बनाते रहेंगे, जिसका परिणाम दुःखदायी अधोगति उत्पन्न होने का हेतु बनेगा ।

अपना भारतीय समाज अन्धविश्वासों से बुरी तरह ग्रस्त बना हुआ है । लगभग सभी वर्गों में किसी न किसी तरह का अन्धविश्वास देखने को मिलता है । बहुत से वर्ग तो ऐसे हैं जिनमें रूढ़िवाद, अन्धविश्वास, टोने, टोटके जीवन का अभिन्न अंग बन गया है । यह बात सही है ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वीभत्सता पिछड़े वर्गों में ही पाई जाती है । पशुबलि तथा धार्मिक कृत्यों में रक्त माँस का भोग और शराब, चरसादि नशीली चीजों का चढ़ावा अधिक शिक्षित एवं सभ्य लोगों में अब प्रचलित नहीं है । तब यह किसी वर्ग में क्यों न हो, है तो अपने समाज में ही । बीमारी किसी कोने में क्यों न पनप रही हो अनिष्ट कर रही है वह किसी समय भी बढ़कर पूरे क्षेत्र को घेर सकती है । गन्दगी कहीं पर भी क्यों न हो अपनी दुर्गन्ध से सम्पूर्ण वातावरण को प्रभावित कर लेती है । शरीर के किसी अंग में पीड़ा क्यों न हो पूरा शरीर शिथिल रहता है । किन्हीं पिछड़े वर्गों में अन्धविश्वासों की विकृति रह गई है इससे सामाजिक स्वास्थ्य के प्रति आश्वस्त होकर निश्चित नहीं रहा जा सकता ।

फिर ऐसी बात पूरी तरह है भी नहीं । पढ़े-लिखे और अज्ञानी दोनों ही अन्धविश्वासों के फेर में पड़े देखे जाते हैं । उन दोनों के स्वरूपों में भिन्नता भले हो या प्रकार में भेद हो । जहाँ पिछड़ी जातियों में भूत-प्रेत, पशुबलि आदि की बहुतायत है वहाँ सभ्य कहे जाने वालों में मुहूर्तवाद और ग्रहवाद की कमी नहीं है । अन्धविश्वास ही है, उससे होने वाली मानसिक तथा बौद्धिक हानि में विशेष अन्तर नहीं होता उसके प्रकार भिन्नता से विकृति में तो अन्तर नहीं आता ।

अन्धविश्वासों, रूढ़ियों तथा भ्रान्तियों से होने वाली भौतिक हानियाँ तो प्रत्यक्ष ही हैं जिन्हें उस जाल में फँसे हुये लोग आये दिन उठाते रहते हैं । किन्तु इनसे होने वाली सबसे बड़ी हानि मानसिक है । अन्धविश्वासों का मानसिक स्तर गिर जाता है, उनकी स्वतन्त्र बुद्धि तथा आत्मविश्वासियों का मानसिक स्तर गिर जाता है, उनकी स्वतंत्र बुद्धि तथा आत्मविश्वास का ह्रास हो जाता है, विवेक कुण्ठित हो जाता है, जिससे मनुष्य अच्छे-बुरे, सत्य-असत्य का निर्णय नहीं कर पाता । चारों ओर घेरे रहने वाली बेसिर-पैर की शंकाओं, हानिकारक रूढ़ियों, कुप्रथाओं और जानी-बूझी भ्रान्त धारणाओं तथा मान्यताओं का निराकरण कर सकने की क्षमता नहीं रहती । उसे कदम-कदम पर धोखा होता रहता है । दुनिया के मक्कार लोग बात की बात से उसे ठग लेते हैं । किसी भी अनोखी अथवा अनहोनी बात पर जल्दी विश्वास कर लेने वाले किसी की विचित्र तथा लच्छेदार बातें सुनकर उसे विश्वस्त मान लेते हैं ।

परमात्मा ने हमें बुद्धि दी है कि हम उसका उपयोग किसी बात अथवा विश्वास की वास्तविकता जानने के लिए करें । उसे प्रकाश की तरह काम में लायें और देखें कि हमारे भीतर-बाहर कहाँ पर गन्दगी है, कहाँ पर सुधार की आवश्यकता है और यदि कोई भ्रान्त धारणाएँ, झूठी मान्यताएँ, हानिकारक रीति-रिवाज हमारे जीवन में अस्वास्थ्य की स्थिति उत्पन्न करते हैं तो उन्हें मकड़ी के जाले की तरह, घर के कूड़े-करकट की तरह झाड़-बुहारकर जीवन परिधि से बाहर फेंक दें एवं सुन्दर जिन्दगी का आनन्द लें । अन्धविश्वासों का भ्रम-जंजाल जीवन प्रगति में बहुत बड़ी बाधा है । उसका अभिशाप समर्थ व्यक्ति को भी असमर्थ बनाकर छोटी-छोटी आशंकाओं से पराजित करा देता है । यह मानवीय विवेक का बहुत बड़ा अपमान और स्वाभिमान के लिये बहुत बड़ी लज्जा की बात है । सच्चिदानन्द एवं सर्वसमर्थ परमात्मा का पवित्र अंश मनुष्य जब ऐसी निकृष्टताओं के प्रति झुकता है तब उदात्त आस्तिकता का सिर लज्जा से झुक जाता है और शिव शक्तियाँ अपनी अवहेलना पर कुपित हो उठती हैं । यही कारण है अन्धविश्वासी जीवन में भौतिक अथवा आध्यात्मिक उन्नति करते नहीं देखे जाते ।

भ्रान्तियाँ तथा अन्धविश्वास हमारी मानसिक शक्ति को बुरी तरह नष्ट कर देते हैं जिस विवेक बल से हम जीवन के हर क्षेत्र में उन्नति कर सकते हैं, आत्मा-परमात्मा का अन्वेषण कर सकते हैं वह मूढ़ताओं के हाथ बन्दी हो जाता है जिसका फल यह होता है कि हम मानसिक अन्धकार में भटक जाते और भय के कारण एक कायर की तरह सहमी-सहमी जिन्दगी बिताने के लिये विवश होते हैं । पवित्र कर्मयोग तथा पुरुषार्थ की गरिमा भूलकर जंतर-मंतर, टोने-टोटके से जीवन की सफलताओं के लिये निर्भर हो जाते हैं और उसी भ्रम जाल के कारण आर्थिक ही नहीं कभी-कभी स्वाभिमान एवं आत्मसम्मान की भी हानि उठाया करते हैं ।

भ्रान्तियाँ हमारी बहुत बड़ी शत्रु हैं, अन्धविश्वास हमारे भयानक दुश्मन हैं । अवास्तविक विचार हमें दिग्भ्रान्त बनाते और सच्चाई से दूर ले जाकर कँटीले झाड़-झंखाड़ों में डाल देते हैं । अस्तु, विवेकशीलता इसी में है कि हम सत्य-असत्य को पहचानें । अपने मानसिक क्षेत्र में जड़ जमाये पड़ी भ्रान्त मान्यताओं को उसी प्रकार मस्तिष्क से निकाल फेंके जिस प्रकार चतुर किसान खेत में से निरर्थक खर-पतवार उखाड़ फेंकता है और उसकी उर्वरता को सुरक्षित रखता है ।

भारत सदैव से धर्म प्रधान देश रहा है । इसमें अनेक धार्मिक सम्प्रदाय भी चलते रहे हैं । मध्य युग में तो इन सम्प्रदायों की संख्या बहुत बढ़ गई । उनमें से कुछ मतमतान्तर ऊँचे स्तर के थे और कुछ नीचे स्तर के जिन्हें ढोंगी धर्मध्वजियों तथा स्वार्थी लोगों ने चला लिया था और जिसके आधार पर वे धर्मभीरु तथा अशिक्षित जनता को प्रभावित करते और लाभ के लिये अन्धविश्वासों तथा भ्रान्त धारणाओं की ओर ले जाते रहे। बहुत समय तक चलते-चलते उन विकृतियों ने जन-जीवन में जड़ जमा ली जो धीरे-धीरे अपना प्रसार करती रहीं और आज भी समाज में बनी हुई हैं । दीर्घकालीन दासता ने इन्हें और भी खाद-पानी देने का काम किया जिससे इनका विस्तार पूरे समाज तक हो गया । इसका कुप्रभाव जहाँ राजनीति और आर्थिक क्षेत्र में पड़ा वहाँ देशवासियों का आत्मविश्वास तथा मनोबल क्षीण हो गया । फलतः सफलता की कामना करने वालों ने पुरुषार्थ एवं परिश्रम की महत्ता भूलकर टंटघंट द्वारा अपनी सिद्धि का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया ।

भ्रान्त धारणाएँ तथा अन्धमान्यताएँ सर्वथा असत्य एवं निराधार होती हैं । इनका कोई धार्मिक अथवा आध्यात्मिक आधार नहीं होता । समय-समय पर चल निकली वे विकृतियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही हैं जिन्हें अब धूर्त लोगों ने अपनी जीविका का आधार बना लिया है । यही बात भूतवाद और चमत्कारी किंवदन्तियों के विषय में हैं । वस्तुत: यह भूतवाद अलावा चमत्कारवाद की कपोल-कल्पित किंवदन्तियाँ बिल्कुल झूठी और निराधार होती हैं । इनके एक स्थान से उठकर दूर-दूर तक फैल जाने और समाज की विचारधारा को प्रभावित करने का एक मनोविज्ञान है । वह यह कि अचरज भरी होने के कारण यह एक दूसरे तक उत्सुकता के साथ नमक-मिर्च लगाकर कही-सुनी जाती हैं । क्रमबद्ध रूप से उन पर गहरे से गहरा रंग चढ़ता जाता है जिससे वे बड़ी मजेदार और चटपटी कहानियाँ बन जाती हैं जिन्हें सुनने में कौतूहल भी होता है और विश्वास भी । कुछ दिनों में किंवदन्तियों का लोकोपवाद तिल का ताड़ बन जाता है और एक बहुश्रुत, बहुचर्चित एवं बहुजन विश्वस्त मान्यता का रूप धारण कर लेता है और फिर वह परम्परा से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता चला जाता है, जिनके प्रति लोगों का आग्रह, पक्षपात तथा अन्धविश्वास बढ़ जाता है । वे स्वभाव तथा संस्कार का अंग बन जाते हैं और उनको छोड़ने में सुधार करने अथवा बदलने में न केवल मानसिक पीड़ा ही होती अपितु पाप जैसा भय भी लगता है ।

किन्तु अब वह समय आ गया है कि भ्रान्त-धारणाओं तथा मूढ़मान्यताओं को धारण किये रहने से काम न चलेगा । संसार परिवर्तनशील है । समय के चरण रुकना नहीं जानते, वे प्रतिदिन आगे ही बढ़ते और प्रति पग के साथ एक नयी दृष्टि, नयी चेतना और नयी प्रेरणा प्रदान करते हैं । प्रगति के पथ पर नित्य नया प्रकाश बिखरता और ज्ञान की नयी किरणें अवतीर्ण होती हैं । जो समाज, राष्ट्र और जाति उन नवागत तथ्यों तथा सत्यों के साथ सहमत नहीं होती वह पिछड़ जाती हैं, दब जाती और कुचल कर मर जाती है ।

अब हमारा समाज राजनीतिक तथा आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र हो गया है । किन्तु इसकी भव्यार्थ उन्नति तब तक सम्भव नहीं जब तक उसकी चेतना अन्धविश्वासों, भ्रान्त-धारणाओं तथा मूढ़मान्यताओं से पूरी तरह मुक्त नहीं हो जाती । मानसिक दासता राज-नीतिक दासता से भी भयानक होती है । विचारकों, कर्णधारों और समाज सुधारकों का ही नहीं अपितु जन-जन का कर्तव्य है कि वह अपने विश्वासों का निष्पक्ष तथा निराग्रह रूप से परीक्षण करें, अपनी प्रथाओं एवं मान्यताओं को विवेक की कसौटी पर कसें और जिन-जिन आत्मघाती प्रवृत्तियों को पायें उन्हें जड़मूल के साथ उखाड़ कर फेंक दें ।

यह बात अतर्क रूप से मान ही ली जानी चाहिये कि धर्म अथवा उपासना के आधार पर जो अन्धविश्वास चल रहे हैं अथवा जो संयोगवाद, भाग्यवाद और दैववाद चारों ओर फैला दिखाई देता है उसका सच्चे धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है । धर्म का मूलभूत तत्व ज्ञान इतना महान है कि उसके प्रत्येक सिद्धान्त, विधान तथा उपचार में आत्मा की, विश्व की और मानवता की मांगलिक सम्भावनाएँ सन्निहित हैं । देवताओं और ऋषियों ने धर्म का ढाँचा इतने उच्चकोटि के आदर्शों द्वारा विनिर्मित किया है कि उसके व्यवहार का परिणाम मनुष्य की उन्मुक्ति तथा उसके व्यक्तित्व के चरम विकास के सिवाय और कुछ हो नहीं सकता । किन्तु दु:ख की बात है कि पिछले अन्धकार युग में जहाँ अनेक नैतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक हानियाँ हुई हैं वहाँ इस धार्मिक विवेक का भी ह्रास हो गया और उसका स्थान अन्धविश्वासों तथा अपावन परम्पराओं ने ले लिया है । यथापि अभी बहुत कुछ नहीं बिगड़ा है, लोग मोह, निद्रा का त्याग करें, अपने विवेक को सँभालें, सत्य-असत्य का निर्णय करें, हानि-लाभ पहचानें, नित्यप्रति घटित होने वाली घटनाओं से शिक्षा लें और विद्वान, हितैषी तथा प्रबुद्ध व्यक्तियों के कथन पर विश्वास करें । अन्धविश्वासों तथा मूढ़ताओं को उखाड़ फेंकें, भारत में पुन: वह प्रकाश युग आ जायेगा जो सच्चे अर्थ में सच्चा धर्मयुग होगा ।

अन्धविश्वास जो भी अनर्थ कर गुजरे, कम है

आज परिवारों में कुछ ऐसी अन्ध-परम्परा-सी चल पड़ी है कि जब कोई अच्छा कार्य हो जाता है तो घर वाले तथा पड़ोसी पुरुष के भाग्य की सराहना करने लगते हैं और यदि कोई काम बिगड़ जाता है तो स्त्री के दुर्भाग्य को खूब कोसा जाता है । यदि किसी दम्पत्ति को सन्तान का मुँह देखने का अवसर न मिले तो सास तथा घर की अन्य वृद्ध महिलाएँ रात-दिन बहू को कोसती रहेंगी । "जब से बहू ने मेरे घर में पैर रखा है सब चौपट हो गया । देखो आज मेरे लड़के को शादी हुये दस वर्ष हो गये पर नाती का मुँह देखने का आज तक मौका न मिला । इससे तो अच्छा था कि मर जाती तो मैं अपने लड़के का दूसरा विवाह कर सकती, वंश तो चलता ।"

यदि घर में केवल लड़कियाँ ही लड़कियाँ जन्म लेती चली जायें तो भी घर बाहर के ताने बहू को सुनने ही पड़ते हैं । कभी-कभी तो पति स्वयं कटु शब्दों का प्रयोग करते हैं और लड़की के जन्म पर किसी प्रकार की प्रसन्नता प्रकट नहीं करते । इस प्रकार हर बुराई पत्नी के मत्थे मढ़कर उसे नारकीय जीवन में रहने के लिये विवश किया जाता है ।

रामपुर जिले की घमतरी तहसील के पास अचोटा गाँव के निवासियों को उसी गाँव की दो महिलाओं पर चुड़ैल होने का शक हुआ । बात यहीं तक सीमित रहती तब भी गनीमत थी, गाँव वाले जैसा कि प्राय: करते हैं किसी बीमारी में चिकित्सकों के पास न जाकर सयाने, ओझा तथा भगतों से झाड़-फूँक तथा गण्डा, ताबीज बनवाते रहते हैं और जब बीमारी बढ़ जाती है तथा इन भगतों की पकड़ में नहीं आती तो अपना उल्लू सीधा कर करारी रकम ऐंठकर अलग हो जाते हैं । फिर ऐसे रोगी को जब अस्पतालों में ले जाया जाता है तो उन्हें पूरा लाभ नहीं होता । वरन् धन भी बरबाद होता है और रोगी को अपने जीवन की भी आहुति देनी पड़ती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार अचोटा गाँव की दोनों महिलाओं को यदि चुड़ैल मान लिया था तो उनके घर वाले झाड़-फूँक करवा लेते तो भी बुरा नहीं था, चाहिए तो यह था कि वे इस सम्बन्ध में डॉक्टरों से परामर्श लेते और जिला चिकित्सालय ले जाते । पर उनके घर वालों ने भी विवेक से तनिक भी कार्य न लिया वरन् साक्षात चुड़ैल ही मान लिया । कुछ वर्ष पूर्व शादी करके लाये थे । घर में रखा था । सारी सुविधाएँ उपलब्ध की थीं । उनके हाथ का बना खाना खाया था और अब वही स्त्रियाँ चुड़ैल हो गईं । भगतों ने कह दिया यदि इन्हें घर में ही रहने दिया गया तो यह घर का सत्यनाश कर देंगी, साथ ही गाँव के लिये भी इनका जीवित रहना अशुभ है ।

जब यह बात घर से पूरे गाँव में फैली तो सर्व-साधारण के लिये चिन्ता की बात बन गई । गाँव से बाहर निकाल देने की बात ही सबकी समझ में आई । भगतों का यह सुझाव था कि यदि इन्हें जिन्दा ही जला दिया जाय तो सारी समस्या हल हो सकती है । भारतीय महापुरुष तथा शास्त्रकार जिस नारी की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते रहे हैं उसी दया, करुणा, सेवा और ममता की देवी को स्वार्थी, अन्धविश्वासी और हत्यारे लोगों ने जिन्दा जलाने की योजना बना ली ।

गाँव के कुछ समझदार व्यक्तियों ने इस जघन्य कृत्य का विरोध भी किया पर उनकी चल न सकी अत: उन्होंने यही उचित समझा कि तत्काल पुलिस स्टेशन जाकर सूचना दे दी जाय ताकि मरघट में पहुँचने तक पुलिस आकर इस कार्य में हस्तक्षेप करे और इन ज्ञान शून्य व्यक्तियों की योजना ही असफल हो जाये । पुलिस समय पर आ गई । जब गाँव के लोग दो महिलाओं को जिन्दा जलाने के लिये ले जा रहे थे तभी मार्ग में पुलिस ने हस्तक्षेप किया और उन दोनों महिलाओं को अपने अधिकार में कर मोटर में बिठाल लिया । पर कुछ लोगों ने मोटर को घेर लिया और उन महिलाओं को पुलिस से छीनकर अपने कब्जे में करने का प्रयास किया । आखिरकार व्यवस्था बनाने के लिये लाठी चार्ज करना पड़ा और अन्त में भीड़ से घिरी मोटर को निकालने के लिये गोली चलानी पड़ी जिससे एक ग्रामीण घायल हो गया ।

इस प्रकार की अगणित घटनाएँ आये दिन घटित होती रहती हैं । उनमें से कुछ इस प्रकार हैं जो पिछले दिनों ही घटित हो चुकी हैं ।

धोबी ने बालक की बलि दी

अभी-अभी कानपुर के मुण्डेरवा ग्राम में एक घटना ऐसी घटी है जिससे अन्धविश्वासों एवं मूढ़मान्यताओं के दुष्परिणामों का पता चलता है । वहाँ एक धोबी दम्पत्ति निवास करता था । पति का नाम निरहू और पत्नी का नाम रुलिया बताया जाता है । इन्हें अब तक कोई सन्तान न थी । पत्नी प्राय: सिर दर्द, पेट दर्द और अन्य अनेक प्रकार के रोगों की आये दिन शिकार बनी रहती । पिछड़े हुए देहातों में ओझा, मौलवी और पीर आदि के प्रति लोगों का जितना विश्वास बना रहता है उतना डॉक्टर, वैद्य और हकीम तथा उनकी दवाओं के प्रति नहीं । वे तो हर रोग को भूत-पलीत ही बताते हैं । उसी का उपचार भी करते हैं ।

निरहू भी इन्हीं बातों का शिकार बन बैठा । अनेक ओझाओं को अपने घर बुलाया । बहुत सारा पैसा खर्च कर डाला । फिर भी पत्नी की बीमारी दूर न हुई । एक दिन किसी सयाने ओझा ने बताया कि यदि किसी मनुष्य की बलि दी जाय तो रुलिया निरोग हो जावेगी और उसे सन्तान की प्राप्ति भी अवश्य होगी ।

निरहू के मन में बात बैठ गई । काम तो बहुत कठिन था पर पत्नी निरोग हो जाय और उसे सन्तान की प्राप्ति हो, इसके लिये वह कुछ भी करने को तैयार था । बड़े व्यक्ति की बलि तो सम्भव थी नहीं, इसलिये किसी अबोध बच्चे की तलाश में इधर-उधर फिरने लगा । अन्त में १० सितम्बर की शाम को गाँव के सीताराम लुहार के ९ वर्षीय बालक का अपहरण कर लिया । बच्चे को जब वह मिठाई खिला रहा था तो एक व्यक्ति ने देखा अवश्य था । रात्रि के लगभग १० बजे होंगे । निरहू ने अपने घर के अन्दर की देवस्थली को सजाया । वहाँ धूपबत्ती जलायी और फूल-पत्ती चढ़ायी । पत्नी को बगल में बिठा लिया । बच्चे की बलि दे दी और उसके रक्त से पत्नी को स्नान कराया ।

उधर सीताराम भी अपने बच्चे की तलाश में बेचैन थे । घर के सभी लोग इधर-उधर दौड़-दौड़कर पता लगा रहे थे पर कहीं भी पता न लगता । पूरे गाँव में बच्चे के खो जाने की बात फैल गई । अन्त में बात उस व्यक्ति तक पहुँची जिसने उसे मिठाई खिलाते देखा था । उसने शंका प्रकट की कि बच्चे को निरहू मिठाई खिला रहा था ।

सीताराम दौड़े-दौड़े वहाँ पहुँचे । निरहू से बच्चे के विषय में पूछने लगे । निरहू की जुबान लड़खड़ाने लगी । वह ठीक तरह से उत्तर भी न दे सका । लोगों को शक हो गया । घर के अन्दर जाकर देखा गया तो वहाँ लड़के का धड़ एक तरफ और सिर दूसरी तरफ । निरहू अभी उसे छिपा भी न पाया था । दृश्य देखते ही लोगों का हृदय फटने लगा । सभी लोग बच्चे के लिए रो पड़े । पुलिस को तुरन्त सूचना दी गई और पति-पत्नी दोनों गिरफ्तार कर लिये गये । दोनों आज जेल में हैं ।

अन्धविश्वास की वेदी पर आये दिन हमारे देश में न जाने कितने दुष्कर्म होते हैं और न जाने कितनों को उसके भयानक दुष्परिणाम भोगने पड़ते हैं । समाज के मूर्धन्य लोगों का कर्तव्य है कि इस प्रकार की प्रचलित मूढ़ताओं का उन्मूलन करने के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम बनायें, ताकि अपनी जाति के ऊपर लगा हुआ यह अन्धविश्वास का कलंक दूर हो सके ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधु बाबाओं के कुचक्र में पिसी अबोध महिला

जिला शहडोल के ग्राम रौनेरा की बात है । एक सज्जन ने अपने गाँव की एक बड़ी ही दर्दनाक घटना सुनायी जो इस प्रकार थी—

कुछ दिन हुए उनके गाँव में एक साधु मण्डली आई थी । पड़ाव पड़ा और नित्य ही भाँग, गाँजा, रबड़ी तथा खीर का क्रम चलने लगा । ग्रामीण जनता स्वाभाविक ही भोली-भाली तथा धर्म के नाम पर अन्ध-श्रद्धा रखने वाली होती है । बाबाजी की चढ़ोत्तरी दिन-दिन बढ़ती ही जा रही थी ।

वे कहते जा रहे थे कि—"हमारे घर के पास वहीं एक परिवार रहता है । बेचारे तीन ही प्राणी हैं । वृद्धा माँ, पुत्र किशनलाल तथा पुत्र वधू रुकमा । विवाह को पूरे १४ वर्ष हो चुके, अभी तक उन्होंने सन्तान का मुख न देखा था । उन्हें भी जैसे ही खबर लगी कि साधु बाबा के आशीर्वाद से पुत्र की प्राप्ति भी सम्भव है—वैसे ही वे उनके डेरे के चक्कर लगाने लगीं । बाबाजी रोज तरह-तरह के टोने-टोटके तथा जन्तर-मन्तर बताते । मेरी पत्नी ने उसे काफी समझाया-किन्तु वह न मानी । कुछ तो पुत्रेषणा जोर मार रही थी और कुछ दिन रात का सास का 'बाँझ' तथा 'निपूती' कहना भी सहन न होता था ।

जब बाबाजी ने देखा कि उस पर उनका पूरा जादू चल चुका है, तो अवसर पाकर उन्होंने उससे कहा कि वह रात को १२ बजे एक थाली में सिन्दूर-चावल, पुष्प और पता नहीं क्या-क्या सामान लेकर आये ।

पुत्र की लालसा ने उसे इतना विवेकहीन बना दिया था कि वह उनके कहे अनुसार नियत समय पर पहुँच गई, उसे बताया गया था कि प्रति मावस की रात बाबाजी के शरीर में साक्षात भगवान आते हैं ।

इधर—उसका पति जो पास के छोटे कारखाने में काम पर जाता था—उस दिन भी रात पाली पर काम करने गया हुआ था । किन्तु अचानक ही उसके पेट में-कभी-कभी हो उठने वाला वायु के गोले का दर्द उठ पड़ा और वह छुट्टी लेकर घर चला आया । घर पर पत्नी को न पाकर माँ से पूछा । मालूम पड़ा कि किसी विशेष पूजा के लिये बाबाजी के पास गई है ।

पति की स्वाभाविक शंका जागी और वह उनके डेरे की ओर चल दिया ।

साधु लोग रहते तो आखिर तम्बुओं में ही थे । पक्का मकान तो था नहीं जो पूरी-पूरी नजरबन्दी हो पाती । किशनलाल ने जो कुछ पर्दे की दरारों में से देखा—उससे उसका रक्त खौलने लगा ।

इधर जब वह भी देर तक न लौटा तो बेचारी वृद्धा हमारे घर आई । हम भी उस स्थिति में सिवाय उन्हें ढूँढने जाने के और क्या कर सकते थे ।

घर से निकले ही थे कि उधर से रुदन का स्वर आता हुआ सुनाई दिया । किशन लाल अपनी पत्नी को मारता हुआ ला रहा था । उसका गुस्सा उस समय इतना बढ़ा हुआ था कि अब इसे समाप्त करके ही दम लेगा । वहाँ भी उन बाबाओं को खूब मारकर आ रहा था ।

सारा मोहल्ला एकत्रित हो गया । सब समझा-समझा कर हार गये किन्तु वह अपनी पत्नी को फिर घर में रखने को राजी न हुआ तो नहीं हुआ ।

अब बेचारी घर-घर में मेहनत करके अपना गुजारा चलाती है । एक सज्जन ने अपनी एक कोठरी दे दी है उसे । दिन भर दूसरों का कूटना-पीसना करके, रात को रूखा-सूखा खाकर सो रहती है । यह है अब उसका जीवन, पुत्र की लालसा में पति को भी खो बैठी बेचारी ।

उसकी कथा सुनकर हम सबके ही नेत्र अश्रुपूरित हो गये । न जाने कितनी बेवस, अशिक्षित तथा विवेकहीन महिलाएँ ऐसी प्रवंचनाओं की शिकार होती रहती हैं । यह तो एक की ही गाथा है ।

ज्योतिष पर विश्वास ले डूबा

घटना मनोरंजक है पर वह हमें यह सोचने के लिये विवश करती है कि इस विज्ञानवादी युग में भी भारतीय कितनी मूढ़ताओं में ग्रस्त हैं । सैकड़ों बच्चे यहाँ प्रतिवर्ष केवल इसलिए मर जाते हैं कि उनकी बीमारी को भूत बाधा समझा जाता है और उसके इलाज की अपेक्षा झाड़-फूँक से अच्छा होने का विश्वास किया जाता है । धर्म के आधार पर कोई भी मूढ़-आयोजन हो तो सैकड़ों लोग उसमें शामिल हो जाते हैं । उसका परिणाम अच्छा होगा या बुरा, उचित होगा या अनुचित इस पर विचार करने की विवेक बुद्धि का लोगों में नितान्त अभाव है । ऐसी घटनाओं पर उपहास करने, खिन्न होने और आदर्श धर्म से भी मुँह छुपाने के अतिरिक्त किया भी क्या जा सकता है ।

ज्योतिष को ही लें, उस पर भारतीय जनता की कितनी अन्ध-श्रद्धा है यह बात क़िसी से छिपी नहीं है । हाथ की रेखाओं पर विश्वास करते हैं, परिश्रम की कमाई पर नहीं, गड़े धन के लिए अपना भी धन दाँव पर लगा देंगे पर पुस्तकालय या विद्यालय के लिये दान न देंगे । सट्टा और लाटरी पर पैसा खर्च करेंगे स्वास्थ्य पर नहीं । इन सब कार्यों में घाटा ही बैठता है तो भी लोगों का झूठी विद्या से विश्वास कम नहीं होता । कई बार दु:खद घटनाएँ हो जाती हैं, लोग ठगे जाते हैं, मृत्यु तक की नौबत आ जाती है । तब यह सोचकर बड़ा दु:ख होता है कि हम कितने कमजोर हैं जो मिथ्या धारणाओं का खण्डन भी नहीं कर पाते ।

नेवरा गाँव में अभी हाल ही में एक घटना घटी । तीन अज्ञात व्यक्ति ज्योतिषी के वेष में आये और श्री रामगोपाल जी व उनकी धर्मपत्नी को बताया कि उनके घर में लगभग ६० हजार रुपये के नगदी, सोने व चाँदी के आभूषण गड़े हैं यदि वे १ हजार रुपया का प्रबन्ध करें और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

किसी को खबर न होने दें तो पूजा के द्वारा उक्त गड़ा धन निकालने की व्यवस्था की जा सकती है ।

श्री रामगोपाल की बुद्धि को क्या कहें वे धन के लालच में इतना भी नहीं सोच सके कि यह ज्योतिषी ठग तो नहीं । आस-पास के लोगों को इकट्ठा कर लेते तो कम से कम पास की कमाई चली जाने की नौबत तो न आती । सचमुच ऐसे लोगों में इतनी समझ तो होती नहीं कि यह विद्या धन के लालचियों, ठगों, हरामखोरों को मिल जाती तो वे कहीं जंगल में ही गड़े धन को क्यों नहीं निकाल लेते ? यह जरूरी नहीं कि घरों में ही गड़ा धन मिले । पुरानी बस्ती, खण्डहरों और ध्वस्त स्थानों में भी धन मिल सकता है । उसके लिए अन्य लोगों को माध्यम बनाने की क्या आवश्यकता ? पर इतना सोचने की शक्ति भी तो हो । बेचारे रामगोपाल भी इस विभ्रम के शिकार हुए । उन्होंने ठग ज्योतिषियों की बात मान ली और जो कुछ घर में रुपये और जेवर थे सब लाकर उन्हें दे दिया । आप ६० हजार का मुँह देखने की आशा में डूब गये ।

कथित ज्योतिषियों ने पूजा आरम्भ की । दम्पत्ति को अच्छे वस्त्र पहनकर कुएँ से स्वच्छ जल मंगल-कलश के लिए लाने को कहा गया । लोभी दम्पत्ति को इस समय केवल गड़ा धन दिखाई दे रहा था । इसलिए वे कठपुतली की तरह इशारे पर काम कर रहे थे । इधर वे पवित्र जल लेने गये उधर ज्योतिषी सारा धन लेकर चम्पत हो गये । कुछ देर में बेचारे रामगोपाल लौटे तो वहाँ उन्हें कोई भी दिखायी न दिया । बड़ी हाय तोबा की, दौड़ लगाई पर ठगों का पता-निशान तक न मिला । ज्योतिष के चक्कर में जो कुछ था वह भी गँवा बैठे । इस तरह का अन्धविश्वास इस देश में न जाने कब तक चलेगा । इसका ठीक अनुमान करना भी कठिन है ।

धूर्त कापालिक पकड़ा गया

पारोला (राज.) के एक अन्तरंग गाँव में एक ऐसा औघड़ पकड़ा गया है, जो कि एक लम्बे समय से भोली-भाली जनता से एक मनुष्य के कपाल की पूजा करवाता आ रहा था ।

वह औघड़ गत कई वर्षों से उस गाँव में रह रहा था । लोग उसके भोजन का प्रबन्ध बारी-बारी से अपने घरों से किया करते थे । औघड़ में शराब और चरस पीने का भी व्यसन था । अनेक लोग जो स्वयं इन व्यसनों के आदी थे, उसके लिये शराब, गाँजे का प्रबन्ध किया करते थे । बाबा ने उनके किशोरों और नवयुवकों को भी शराब, गाँजे की लत लगा दी थी । जो जब तब अपने घरों से पैसे या अनाज चुरा लाते थे और उसको बेचकर मद्यपान करते और कराया करते थे ।

किसी भी व्यसन का यह दोष होता है कि जब यह किसी को पकड़ लेता है तो अपनी पूर्ति के लिये मनुष्य से अपराध भी करा लिया करता है । उसकी प्रेरणा से बुद्धि नष्ट और भ्रष्ट हो जाती है । लोग चोरी, मक्कारी करने लगते हैं और चोरी का माल आधे-पौने में नौ-दो-ग्यारह करते रहते हैं ।

बाबा तो एक अपराधी था । उसे समाज में फैलती इस विकृति की चिन्ता क्यों होती ? उसका क्रम चलता रहा । वह कपाल जिसकी वह पूजा कराया करता था, उस आदमी का था, जिसकी उसने हत्या की थी । भेद खुलने पर पता चला कि शिनाख्त न हो पाये, इसलिये उक्त हत्यारा मारे गये आदमी का सिर लेकर उड़ गया था । कुछ समय तो उसने वह सिर एक स्थान पर जमीन में गाढ़ दिया था । किन्तु जब उसके अपराध ने, जो कि अपराधी के सिर पर हर समय सवार रहता है और अनिष्ट का तर्क-वितर्क कराता रहता है, यह शंका करानी आरम्भ की कि इस जगह उसके पाप का साक्षी यह सिर पकड़ा जायेगा, तब उसने उसे खोदकर और कई जगह गाढ़ा, इस प्रकार बहुत दिन करते रहने से उस सिर के बाल, माँस, त्वचा आदि सब सड़-गलकर समाप्त हो गये और वह एक कपाल के रूप में रह गया । बाबा अब उसे पास रखने लगा ।

अशुद्ध सम्पर्क से अशुद्ध विचार ही आते हैं । अस्तु एक दिन उसके मन में आया कि क्यों न इस कपाल को एक अद्भुत कपाल प्रसिद्ध कर लोगों को ठगा जाये । इस धूर्तता की सिद्धि के लिये अपराधी औघड़ बाबा बन गया और कपाल लेकर अन्तरंग तथा अशिक्षित गाँवों में घूमने लगा । उसने कपाल को छेदकर अपने गले में पहन लिया । अपना प्रभाव जमाने और लोगों को भयभीत करने के लिए उसने कई बार कई गन्दी वस्तुएँ खा-पीकर दिखलायीं ।

बहुत से दुर्बल मनुष्य उसकी उन वीभत्स क्रियाओं से डरकर उसे सिद्ध समझने लगे । उसने लोगों में भ्रम उत्पन्न कर दिया कि उस नर-कपाल के प्रभाव से न तो उसे कोई पाप लगता है और न किसी शुद्ध, अशुद्ध वस्तु का ही उस पर प्रभाव पड़ता है । यह कपाल उसे एक मसान साधना में स्वयं भैरवी ने चिता से प्रकट होकर दिया है और कहा यह कपाल जिसके पास रहेगा, वह इसके प्रभाव से योगी बन जायेगा और जो इसकी श्रद्धापूर्वक पूजा करेगा, उसका भाग्य जाग जायेगा ।

अन्धविश्वासियों के लिये कुछ अनहोनी तो होती ही नहीं । उसकी अनर्गल बातों पर विश्वास कर लिया गया, जिसके फलस्वरूप कपाल और कापालिक औघड़ दोनों की पूजा होने लगी । किन्तु तीन वर्ष से उसकी खोज में गाँव-गाँव की धूल छानती हुई, पुलिस एक दिन आई और उसको पकड़कर ले गई । लोगों को जब उसके भयानक भेद का पता चला तो उन्हें अपने अन्धविश्वास पर बड़ा खेद हुआ । एक-दूसरे पर दोष लगाते हुए उन्हें अनेक-अनेक लोगों को भी पुलिस की दृष्टि में संदिग्ध बना दिया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्धविश्वास के कारण फाँसी की नौबत

बरदा ग्राम (मध्यप्रदेश) के निवासी अपने अन्ध-विश्वास के कारण संकट में पड़कर उसका कुफल भोग रहे हैं ।

इस ग्राम में एक गरीब स्त्री रहती थी । वह अकेली थी । उसका पुत्र जो उसके जीवन का एक-मात्र सहारा था, कमाई करने के लिये बाहर गया हुआ था । बहुत समय तक तो उसका समाचार मिलता रहा किन्तु इधर उसका समाचार आना बन्द हो गया । स्त्री को पता न रहा कि उसका पुत्र कहाँ है और उसका क्या हुआ ?

इसके पहले इसी भाँति उसका पति भी पर-शहर में जाकर फिर दोबारा घर वापस नहीं आया था । पति की याद कर उसे पुत्र के जीवित होने में सन्देह होने लगा था ।

बेचारी न तो कुछ पढ़ी-लिखी थी और न उसकी आर्थिक दशा ही ऐसी थी कि जिसके आधार पर या तो स्वयं उसका पता लगाने जाती या किसी को खर्च देकर भेजती । यदि वह स्त्री थोड़ी बहुत भी पढ़ी-लिखी होती तो बार-बार विदेश में पुत्र के ठिकाने पर पत्र डालती । उसके वहाँ के परिचितों से लिखकर पता लगाती । समाचार-पत्रों को पढ़कर मालूम करती कि कहीं उसका पुत्र किसी दुर्घटना का शिकार तो नहीं हो गया ।

इस प्रकार जब पता न चलता तो वह स्वयं उसके पते पर जाने का साहस करती । जाती तो उसे स्टेशनों, गाड़ियों तथा अन्य यात्रा सम्बन्धी विवरणों का पता लगा सकने में आसानी होती । जिससे बात करती शहूर और सभ्यता से बात करती । लोगों की कही और बतायी बातों को ठीक से समझ सकती । किन्तु अविद्या के कारण वह यह सब कर सकने में योग्य न थी ।

जब कभी कोई उससे कहता था कि क्यों नहीं खुद जाकर बेटे का पता लगाती, तो वह आँसू भरकर यही कहती कि मुझे तो कहीं रास्तों का कोई पता भी नहीं है । कैसे पहुँच सकूँगी ? कुछ पढ़ी-लिखी होती तो विलायत तक जाकर बेटे का पता लगा लाती । लेकिन क्या करें, न पिता ने पढ़ाया और न उन्होंने ही इस ओर ध्यान दिया । एक व्यक्ति भी पढ़ा-लिखा होता तो पढ़ने की परम्परा चल रही होती । मुझे भी इतना ज्ञान न था कि शिक्षा जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है ।

इस अधेड़ स्त्री के पास अब धीरज बाँधने के लिये भगवान के सहारे के सिवाय और रह ही क्या गया था । वह आत्मा की शान्ति के लिये नित्य नियम से सूर्योदय के पूर्व उठती, स्नान करती और शिव प्रतिमा के समीप बैठ ईश्वर का ध्यान करती । इस प्रकार करते-करते वह एक सन्यासिनी-सी बन गई । वह मौन भी रहने लगी ।

उसकी इस परिवर्तित दशा से गाँव के अन्धविश्वासियों को बड़ी विचित्रता तथा विलक्षणता मालूम होने लगी । निदान गाँव में घटने वाली किसी भी अप्रिय घटना का सम्बन्ध वे उस स्त्री तथा क्रियाओं से जोड़ने लगे । मूढ़ अन्धविश्वासियों का जिस व्यक्ति और जिस वस्तु पर जैसा भाव एक बार जम जाता है, तो उसमें उन्हें उसी का प्रतिबिम्ब दीखता रहता है । निदान वे उस दु:खी अबला में 'डायन की छाया' देखने लगे । अपनी भावना का प्रचार उन्होंने गाँव भर में कर दिया, जिसका फल यह हुआ कि अच्छी-खासी स्त्री गाँव वालों के लिये डायन बन गई । एक बार गाँव में कोई ऐसी बीमारी चल पड़ी कि अनेक लोगों के कई जानवर तड़ातड़ एक साथ मर गये । गाँव वालों ने उसका कारण उस दु:खिया को ही समझ लिया और कुपित होकर उस स्त्री की हत्या कर दी ।

कुछ दिन बाद उसका पुत्र संयोगवश घर वापस आया । माँ को न पाकर लोगों से पता लगाया । कुछ पता न चला । धीरे-धीरे सारे रहस्य का पता बच्चों से लग गया । पुलिस ने पूरी तत्परता से पता लगा कर स्त्री की अधसड़ी लाश तालाब के पास से खोद कर बरामद की । पुलिस हत्यारों को गिरफ्तार कर ले गयी । अपराधी धूर्तों को फाँसी की नौबत आ गयी ।

नर-बलि की यह घृणित घटनाएँ

राजस्थान में चौमुण्डी माता को खुश करके छिपे खजाने को प्राप्त करने के लिये एक व्यक्ति की बलि दे दी गई । तीन आदमी अपने ही गाँव के एक ५० वर्षीय बढ़ई को धोखा देकर जंगल में ले गये । वहाँ तलवार से उसका सिर अलग करके बोतल में उसका खून भर लाये और चौमुण्डी माता के मन्दिर पर जाकर यज्ञ कुण्ड पर उसे छिड़का । इस क्रिया से उन्हें विश्वास हो गया कि चौमुण्डी देवी हम सबसे प्रसन्न होकर छिपे खजाने को खोदने की आज्ञा दे देगी जिससे बिना परिश्रम के हम तीनों मालामाल हो जायेंगे ।

अपने परिवार का पालन-पोषण करने के लिये सभी को धन की आवश्यकता पड़ती है और अपनी सुविधाओं तथा परिस्थितियों के अनुकूल श्रम करके लोग धन कमाते भी हैं । परिश्रम से जी चुराकर किसी देवी-देवता की बगलें झाँकना सरासर अकर्मण्यता ही मानी जायेगी । ईमानदारी, परिश्रम और व्यावसायिक सूझबूझ जैसी अनेक विशेषताएँ हैं जिनके आधार पर लोगों ने सम्पन्नता प्राप्त की है । यह तीनों व्यक्ति भी ऐसा कर सकते थे । पर लालच के भूत ने उन पर सवार होकर ऐसा जघन्य कार्य करवा डाला जो अमानवीय कहा जा सकता है । यज्ञ करने के बाद जब वह खजाना खोदने गये तो वहाँ उन्हें कोई डरावनी चीज दिखाई दी जिससे वे भाग खड़े हुए । एक व्यक्ति की धन के लिये हत्या करके भला वह हत्यारे निर्भय रह भी कैसे सकते थे ।

इसी प्रकार एक घटना जम्मू में हुई है जहाँ की पुलिस बलि काण्ड की जाँच करने में जुटी है । वहाँ पहाड़ी के नीचे स्थित कटरा में वैष्णव देवी का एक मंदिर है । उस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मंदिर में दर्शन हेतु पटियाला से तीन व्यक्ति आये थे जिसमें से दो ने अपने ही एक बीस वर्षीय साथी को मंदिर में ले जाकर मार डाला और युवक की हत्या करके उन दोनों साथियों ने देवी को प्रसन्न करना चाहा । बाद में वे दोनों अपराधी पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये । उन हत्यारों के मस्तिष्क में यह छोटी-सी बात नहीं आ सकी कि देवी-देवता किसी का खून पीकर अथवा प्राण लेकर प्रसन्न नहीं होते । जो देवी खून से अपनी प्यास बुझा कर प्रसन्न होती हो उसे देवी या माता कैसे कहा जा सकता है । वह तो राक्षसिनी, हत्यारी और पापिनी ही होगी जो निरपराध व्यक्तियों की हत्या करवाकर वरदान देती हो ।

राजकोट से बीस मील दूर बरियान के शिव मान्दिर में बाईस वर्षीय रामू भाई ने भगवान शंकर का आशीर्वाद लेने की इच्छा से अपना सिर ही काटकर चढ़ा दिया । दुनिया के भक्त भगवान को फल-फूल, मेवा, अक्षत, जल और रोली आदि पूजा की वस्तुएँ अर्पित करते हैं और श्रद्धा के साथ निरीक्षण कर अपने अवगुणों को त्याग सद्गुणों को अपनाने का प्रयत्न करते हैं ।

पर उस भावुक युवक को पागलों ने जैसी सीख दे दी वैसा ही करने के लिये चल पड़ा । अन्धविश्वास इसी को तो कहते हैं जहाँ व्यक्ति अपने विवेक से कार्य न ले दूसरों की सलाह पर अथवा पुरानी घिसी-पिटी परम्पराओं पर चलने के लिये तैयार हो जाता है ।

किसी मनचले मार्ग-दर्शक के बताये अनुसार वह मन्दिर में गया और उसने कपाल पूजा प्रारम्भ की । थोड़ी देर बाद उसने अपनी अँगुली काटकर शिवजी पर चढ़ा दी और अँगुली का खून मूर्ति पर टपकाता रहा । थोड़ी देर बाद उसने तलवार से अपना सिर ही काट डाला । उसके इस कृत्य से शिवजी प्रसन्न तो न हुये वरन् उसे ही अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा । यदि उसकी समझ में इतना भी आ गया होता कि सिर कट जाने के बाद तो जीवन ही समाप्त हो जायेगा और यह एक प्रकार की आत्महत्या होगी, फिर शिवजी को प्रसन्नता और अप्रसन्नता से क्या बनने-बिगड़ने वाला है ।

वह युवक विवाहित था । अपनी मूर्खता के कारण पत्नी को समाज की दर-दर ठोकरें खाने के लिये असहाय अवस्था में छोड़ गया ।

देवी-देवताओं के आगे होने वाली पशुबलि जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन करती है उसी का विकसित रूप नर-बलि है । यदि हम इन बुद्धिमन्द नर-बलियों को रोकना चाहते हैं तो उसकी मूल प्रेरणा देने वाली पशुबलि को ही बन्द करना पड़ेगा ।

हम तो लुट गये लोभ में

उरई (जालौन) के पास एक गाँव के ग्रामीण को लोभ में फँसाकर ठग लेने की दिलचस्प घटना घटी । यह ग्रामीण सज्जन अपने जानवर बेचने गये थे । रास्ते में लोभ में पड़कर सारी सम्पत्ति बेच लुटा बैठे ।

धन की तृष्णा जब मनुष्य पर हावी होती है तो वह इसी तरह ठगा परेशान किया जाता है और नहीं तो उसकी आत्मशक्तियाँ ही लोभ के वश में पड़कर कुण्ठित होने लगती हैं और वह चोर, उठाईगीर, धोखेबाज, डकैत, गिरहकट होकर अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा खो बैठता है । शान, सम्मान और स्वाभिमानपूर्वक जीवन जीने का एकमात्र रास्ता परिश्रम और ईमानदारी का है । अपने पुरुषार्थ और पराक्रम से पैदा की गयी सम्पत्ति का उपभोग करने वाले लोग वीर और सच्चे होते हैं उन्हें ही सामाजिक प्रतिष्ठा मिलती है । आत्मसुख और सन्तोष भी उन्हीं को मिलता है जिन्हें अपने बाजुओं का भरोसा होता है जो हराम की छदाम को भी हाथ लगाना पाप मानते हैं ।

लोभ तो मनुष्य को हर घृणित कार्य करने को उकसाता है उससे उसकी अपनी ही बुद्धि काम नहीं देती और अपने जाल में वह आप फँस बैठता है । बताया जाता है कि उक्त महाशय उरई के मवेशी बाजार से घर लौट रहे थे । कुछ बदमाशों ने ताड़ लिया उनके पास रुपये हैं उन्होंने रुपये ठगने की योजना बनाई । रास्ते में एक लाल कपड़े में कोई वस्तु बाँधकर डाल दी आप वहीं आसपास लग गये । जैसे ही वह सज्जन वहाँ से निकले, उस पड़ी चीज को उठा लिया । इसी बीच वह दो व्यक्ति भी निकल आये और उस वस्तु में साझीदार होने का दावा किया । लोभी में दम कितनी जो उनका प्रतिकार करता, खोलकर देखा तो उसमें काफी वजन के दो सोने के चूड़े थे । उन्हें देखकर ग्रामीण के मुँह में पानी भर आया । फिर उसकी बुद्धि ने इतना भी विचार नहीं किया कि यों सड़क पर कोई अपने आभूषण क्यों गिरायेगा । ऐसी वस्तुएँ तो लोग सुरक्षित रखते हैं । यदि कदाचित् किसी से गिर ही जाये तो प्रयत्न यह करना चाहिए कि उसकी वस्तु उस तक पहुँचा दी जाये । पर लोभी को तो हर माल अपना लगता है । बस उसी धोखे-बाजी में वह भी फँस गये ।

बदमाशों ने उन्हें तौलाया और कहा कि इनको कहीं जाकर बेचने में तो सही कीमत भी नहीं मिलेगी इसलिये हममें से जिसके पास रुपये हों वह इन्हें अपने पास रख ले शेष को उनके हिस्से के रुपये दे दे । वह ग्रामीण रुपये तो लिये था ही उन चूड़ों के लिए मचल उठा । वजन के अनुसार थोड़ी छूट देकर हिसाब लगाया गया तो उसके सारे रुपये बदमाशों के हिस्से में आ गये । वे लोग रुपया लेकर चम्पत हो गये और ग्रामीण खुशी से फूला हुआ घर पहुँचा ।

जब स्त्री ने रुपया माँगा तो उसने झट से सोने के चूड़े निकालकर रख दिये और सारा किस्सा सुनाया । स्त्री समझदार थी उसने कहा आपने इनकी परख भी की या यों ही लोभ में ठगे गये । जो बात लोभ के रहते नहीं सूझ पड़ी थी वह विवेक अब जागा । सुनार के पास गये तो उसने परखा और बताया कि वह चूड़े तो पीतल के हैं उन

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर केवल सोने का पानी चढ़ा हुआ है । यह सुनते ही ग्रामीण के होश गुम हो गये । जानवर गये, उनकी बेच गयी और चूड़े भी पीतल के निकले । उसे अपने किये पर भारी पश्चाताप हुआ पर अब हो भी क्या सकता था ? बेचारा हाथ मलता रह गया ।

जो लोग अपने परिश्रम की कमाई की नीति पर विश्वास नहीं करते और लोभ-लालच में पड़े कहीं से धन पाने की लिप्सा में पड़े रहते हैं, उनकी ऐसी ही दुर्दशा होती है । समझदार आदमी इसीलिये अपनी कमाई का भरोसा करते हैं, जितना ईमानदारी और नीतिपूर्वक मिलता है उतने पर ही सन्तोष करते हैं ।

सन्तान के लालची ठगों के शिकार

घटना बम्बई की है । सेठ लखमी चन्द्र जी वास्तव में लखपति थे । दुर्भाग्य से सन्तान न थी जैसा कि अधिकतर धनपतियों के साथ होता है ।

तथाकथित 'साधु बाबा' ऐसे ही यजमानों की तलाश में फिरते रहते हैं । इसी फिरके के एक साधु बाबा, जो अपना नाम श्री 'बल्लभानन्द महाराज' बताते थे वहाँ आये । पहले दिन ही भिक्षा माँगते समय सेठानी जी के आभूषणों तथा मूल्यवान परिधानों से उन्होंने यह अनुमान लगा लिया कि मुर्गी मोटी है और फँस भी जायगी ।

दूसरे दिन ही उन्होंने अपने चेलों के द्वारा उनके व्यक्तिगत जीवन के विषय में खोज-बीन प्रारम्भ कर दी । मुहल्ले वालों से मोटी-मोटी बातों का सहज ही पता लग जाता है ।

अब एक दिन वे अवसर पाकर उनके घर पहुँचे । हाथ देखा दोनों का । बोले "आपको समस्त सुख दिये हैं ईश्वर ने । पर सन्तान का योग बड़ी मुश्किल के बाद है ।"

सेठ जी बोले "आप ठीक कहते हैं महाराज ! अभी तक हम सन्तान सुख से वंचित हैं । पर वे कौन-सी मुश्किलें हैं—जिनके पश्चात ही उसका योग बनता है ।"

स्वामी जी बड़े ही ध्यान में मग्न रहते होते हुए बोले—"चारों धामों की पैदल यात्रा करके आवें तब आपको यह सुयोग प्राप्त हो सकता है । अनिष्टों का तथा बाधाओं का हम निवारण कर देंगे । बस पूजा में जो सामग्री लगेगी उसका व्यय मात्र आप दे देना । हम पारिश्रमिक या दक्षिणा कुछ न लेंगे ।"

स्वामी जी ने इस प्रकार अपनी निःस्वार्थता की छाप लगा दी दोनों के मन पर, किन्तु सेठ जी ने बताया कि चारों धाम की पदयात्रा में काफी समय लगेगा । अभी उन्होंने अपना व्यवसाय छोड़कर स्टील के बर्तनों का नया व्यवसाय प्रारम्भ किया था । अतः इतने समय के लिये अभी वे बाहर नहीं जा सकते थे । इस पर स्वामी जी अपनी उदारता को और भी विस्तार देते हुए बोले, "आपको कठिनाई है तो वह भी आपके बदले हम कर लेंगे । मार्ग-व्यय आप दे देना ।"

सेठ जी अत्यधिक प्रसन्न हुए । अब पूजा की बात ही शेष रह गई । कई दिन लगातार सम्पर्क से स्वामी के प्रति सहज विश्वास जम गया था दोनों के मन में । कुछ पुत्रेषणा जोर मार रही थी । सब ने मिलकर उनके विवेक को—जो कुछ थोड़ा बहुत था उसे—बिल्कुल ही लुप्त कर दिया और वे उनकी बातों में पूरी तरह आ गये ।

स्वामी जी ने कहा कि "अपने वे सभी वस्त्राभूषण—जो आपने अपने विवाह के समय धारण किये हों ला दीजिये । रात के बारह बजे उन्हें मन्त्रों द्वारा शुद्ध करूँगा फिर आप उन्हें धारण करें । उसके पश्चात दसवें माह ही आपको सन्तान की प्राप्ति होगी ।" सन्तान पाने की लालसा में उन्होंने लगभग दो सौ रुपये पूजा की सामग्री के तथा पाँच हजार चारों धाम की यात्रा के व्यय के दे दिये । पूजा के लिये अपने समस्त आभूषण तथा वे वस्त्र जो विवाह के समय धारण किये थे दे दिये । आभूषण लगभग पच्चीस हजार के थे । वस्त्रों की लागत भी एक हजार से कम न थी ।

स्वामी जी ने रात को अपना क्रियाकाण्ड प्रारम्भ किया । कुछ उलटे-सीधे मन्त्र पढ़कर तथा अग्नि प्रज्वलित करके उन दोनों को भ्रम में डाल दिया । फिर कहा कि "अब आप दोनों अपने घर के देवस्थान पर जाकर हरि स्मरण करें तब तक हम शेष कार्य पूर्ण करेंगे ।" दोनों चले गये । इधर उन्होंने सारा सामान बाँधा और चम्पत हो गये । प्रातः हो गया तब कहीं सेठ जी को होश आया और पुत्रेषणा का नशा उतरा तब, जब उन्होंने आकर देखा कि न वहाँ स्वामी जी हैं और न कुछ सामान ही ।

अन्धविश्वास शत्रुता का कारण बना

जयगढ़ के एक गाँव में ऐसे दो परिवारों के बीच गहरी मारधाड़ हो जाने का समाचार आया । जिनमें दाँत-काटी रोटी की घनिष्टता थी । अन्धविश्वास के कारण अब उन दोनों परिवारों में दुश्मनी हो गई है जिससे विरोधियों को हानि पहुँचाने का अवसर मिल गया है ।

बाबूलाल से रामधन की काफी घनिष्टता थी । दोनों के परिवार आपस में एक सम्मिलित परिवार की तरह व्यवहार करते थे । दोनों हारी-बीमारी और हार खेत में अपना काम छोड़कर सहायता करने को तैयार रहते थे । उनकी इस पारस्परिकता का फल यह था कि दोनों की खेती का काम गाँव में सबसे अच्छा था । वे दोनों एक-दूसरे की सहायता से मिल कर पैसे का भी काम निकाल लिया करते थे । एक दूसरे के सहयोग के कारण कोई विशेष कठिनाई नहीं होती थी । संगठन के कारण गाँव में प्रभाव था । बड़े आनन्द से जीवन चलता जा रहा था । तभी एक ऐसी घटना हुई कि ये दूध पानी की तरह मिले हुये दोनों परिवार फट कर अलग हो गये । यह खेद की बात तो है ही, पर यह उससे भी ज्यादा दुःख की बात है कि इस शत्रुता का कारण एक अन्धविश्वास है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रामधन की दो सन्तानें जाती रही थीं, किन्तु जब तीसरा बच्चा बीमार पड़ा तो उसकी अन्धविश्वासिनी पत्नी को भ्रम हो गया कि अवश्य ही कोई अशुभ चिन्तक हमारे बच्चों पर कुछ करा देता है । यह भ्रम होते ही उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई । उसने बच्चे की दवा-दारू की ओर से ध्यान कम कर ओझा, सयानों आदि टोटका तथा टंट-घंट करने वालों की ओर लगा दिया वह बच्चे की समाधियों, कब्रों, मसानों और वृक्षों के पास ले जाकर उनकी प्रदाक्षिणा और पूजा कराने लगी ।

बहुत बार तो लोगों ने उसे आधी-रात के समय गाँव के बाहर चौराहों तक जाते देखा । बहुत बार देखा कि वह रात को तालाब के पानी में खड़ी न जाने पागलों जैसी क्या क्रिया कर रही है । रामधन की स्त्री को उसके अन्धविश्वास और अनबूझ क्रियाओं ने गाँव में एक तमाशा बना दिया । अब तो कौतुकवश ही उसे तरह-तरह की क्रियाएँ बतला देते और उन्हें वह करने भी लगती ।

ओझा लोग तो ऐसे वक्त और ऐसे व्यक्तियों की तलाश में ही रहते हैं । यही तो वह अवसर होता है कि जब उनकी पूजा होती है और पैसा मिलता है । निदान आ, आकर लोगों ने पूजा पगार के नाम पर रामधन की स्त्री को ठगना शुरू कर दिया ।

रामधन के एक विरोधी ने उसकी इस मूर्खता से लाभ उठाने के लिये, एक ओझा को अपनी ओर मिला कर कुछ लालच दिया और कहा कि वह रामधन की स्त्री को कोई ऐसी क्रिया बतला दे, जिसके करने से उसके पति तथा बाबूलाल में ठन जाये ।

ओझा, सयाने तो हराम की कमाई के अभ्यस्त ही होते हैं । थोड़े से पैसों के लिये वे अपने विश्वासी से बड़े-बड़े अपराध भी करा देने में नहीं चूकते । उसने रचना रच दी । रामधन की स्त्री से कहा कल जोगिनी ने रात में मुझे दर्शन दिये और कहाकि यदि रामधन की स्त्री किसी दूसरे बच्चे की चोटी काट कर अपने बच्चे को ताबीज में पहना दे तो उसके बच्चे का रोग उस दूसरे बच्चे पर पहुँच जायेगा, उसका बच्चा अच्छा हो जायेगा ।

अन्धविश्वासिनी के मन में बात बैठ गई, उसने बच्चा भी तक लिया । उसके पति के मित्र बाबूलाल का बच्चा तो उसके यहाँ आता-जाता भी रहता था और किसी बच्चे को कहाँ खोजती । फिर उसकी चोटी काट लेने का शक भी उस पर नहीं जायेगा । बच्चा आया और उस दुर्बुद्धि स्त्री ने उसे एक काम में बहलाकर उसकी चोटी जड़ से काट ली । पता तो चलना ही था, चल गया । यह निश्चय ही बुरी बात ही नहीं अपराध भी था । शीघ्र ही बात शत्रुता तक पहुँच गयी । तब भी रामधन का बच्चा अच्छा न हुआ और बाबूलाल का बच्चा वैसा ही तन्दुरुस्त बना खेलता-कूदता रहा ।

जन्तर-मन्तर के चक्कर में बालक की हत्या की गई

प्रसंग चन्दौसी का है । उस समय नगर भर में सनसनी फैल गई—जब एक स्त्री के पास से उसकी अटैची में एक बालक का शव बरामद किया गया ।

स्त्री कैथल दरवाजे के पास रहती थी । बालक आँखें खोलने के पश्चात् केवल आठ वर्ष ही देख पाया था—इस शस्य-श्यामला भूमि को ! बालक का प्रत्येक अंग अलग-अलग काट दिया गया था ।

और यह सब किया किसलिए गया ? यह जानकर आपको और भी आश्चर्य होगा ! उस स्त्री के कोई सन्तान न थी । चाहिए यह था कि इसके लिए वह किसी अच्छे डॉक्टर या अस्पताल की शरण लेती, किन्तु क्या कहें अपने देश में फैले इस अन्धविश्वास को, जो अशिक्षित लोगों की मनोभूमि में गहरायी तक जड़ जमाये बैठा है । टोन-टोटका तथा जन्तर-मन्तर के चक्कर में लोग आए दिन उलटे-सीधे काम करते और दुष्परिणाम भुगतते देखे जाते हैं ।

यह स्त्री भी किसी ओझा के पास गई । ओझा ने बताया कि वह किसी के बालक का वध करे तो उसे सन्तान प्राप्त हो सकती है । कितनी अविवेकपूर्ण बात है । जबकि सभी ईश्वर के इस मोटे से नियम को जानते तथा मानते हैं कि बुरे काम का बुरा परिणाम होता है और अच्छे काम का अच्छा । फिर भला यह कैसे सम्भव है कि किसी का बच्चा मारकर सन्तान की प्राप्ति हो सके ?

कुछ पुत्रेषणा तथा कुछ अन्धविश्वास । दोनों ने मिलकर उसे वह जघन्य कार्य करने को प्रेरित किया जो एक नारी के लिये महान कलंक ही साबित हुआ ।

अखबार में छपी घटना के अनुसार—जब वह अटैची लेकर रिक्शे में बैठकर स्टेशन जाने लगी तो कुछ लड़कों ने उसे टोक दिया । चोर का दिल ही कितना ? बदशकुनी समझ कर वह लौट पड़ी और घर में आकर किवाड़ बन्द कर लिए । यह सब मुहल्ले वालों को कुछ अजीब-सा लगा और उन्होंने छत से झाँक कर देखा कि वह क्या कर रही है । उस समय वह खून से रँगी हुई धोती धो रही थी ।

तत्काल ही पुलिस को खबर दी गई और घटना का रहस्योद्घाटन हुआ ।

तलाशी लेने पर अटैची में से वह विकृत शव निकला । बालक को निर्ममतापूर्वक काटा गया था । बालक उसकी जिठानी का था जो पिछले तीन दिनों से गायब था ।

देखने वालों ने देखा और रोमांच हो आया । महसूस करने वालों ने महसूस किया और आँखों में आँसू भर आये । कुछ ने उसे धिक्कारा—कुछ ने बुरा-भला कहा । कानून ने अपना काम किया और उसे बन्दी बना लिया गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु इस सबके पश्चात भी एक प्रश्न रह जाता है कि आखिर ऐसा क्यों हुआ ? ममता, करुणा, दया, क्षमा, स्नेह की मूर्ति नारी इतनी कठोर कैसे हो गई ?

यह परिणाम है हिन्दू जाति के कुछ अविवेकी लोगों में व्याप्त पशुबलि की प्रथा का । उससे यह भावना परिपुष्ट होती है कि किसी की जान लेकर भी देवी-देवता प्रसन्न होते हैं तथा मनवांछित फल देते हैं । पशुओं का खून देखते-देखते, मानव, मानव का खून देखने तक का अभ्यस्त हो गया और इस प्रकार की घटनाओं का क्रम चल पड़ा । निज का स्वार्थ इन कुकर्मों के प्रति और भी आसक्ति उत्पन्न कर देता है । आवश्यकता है कि इस प्रकार की अन्धमान्यताओं, गलत परम्पराओं तथा मूढ़ताओं को शीघ्र से शीघ्र हटाया तथा मिटाया जाय ।

मुर्दा जीवित न हुआ, पैसा भी गया

ज्योताबाद—यहाँ से २७ मील पश्चिम में मड़ाहर कस्बे से किसी तांत्रिक द्वारा एक कायस्थ परिवार को ठगे जाने का दु:खद समाचार मिला है । तांत्रिक ने मृत व्यक्ति को जीवित करने का दावा कर, शोक-संतप्त परिवार का विश्वास अर्जित कर लिया और एक निश्चित धनराशि पा जाने के बाद वहाँ से चम्पत हुआ । इस क्षेत्र में पहले भी अनेक घटनाएँ घटित हो चुकी हैं । इनका कारण यहाँ के लोगों में तन्त्र-मन्त्र, स्याने-दीवानों में अत्यधिक विश्वास होना बताया जाता है । चिन्ताजनक बात तो यह है कि अनेक बार भण्डाफोड़ होने के बावजूद भी लोगों का विश्वास उनमें कम नहीं होता । अपनी बुद्धि और विवेक पर थोड़ा जोर देकर सत्यासत्य का पूर्ण निर्णय करने की क्षमता न होने के कारण लोग आये दिन इसी तरह से ठगे जाते हैं, जिस तरह अपने पति की मृत्यु पर बेचारी मड़ाहर की महिला ठगी गयी ।

अन्धविश्वास अन्य देशों में भी है, पर धर्म के नाम पर यह बुराई जितनी हमारे देश में फैली हुई है उतनी अन्यत्र नहीं । यहाँ के लोग हैं भी काफी अशिक्षित, इसलिए बुरे लोगों की दाल आसानी से गल जाती है । क्षोभ की बात तो यह है कि पढ़े-लिखे लोग भी इनके चंगुल में फँस जाया करते हैं । जब इस तरह की घटनाएँ प्रकाश में आती हैं तब स्थिति अधिक गम्भीर दिखायी देने लगती है । यह केवल अविवेक का प्रतिफल है । हम सरल, विश्वासी हो गये, इसीलिए धोखा खाते हैं । थोड़ा भी विचार से काम लें तो धूर्तों की काली करतूतों का पहले ही अनुमान किया जा सकता है और उनके द्वारा फैलाए गये ठगी के जाल से आसानी से बचा जा सकता है ।

मड़ाहर में कुछ दिन पूर्व स्थानीय शकूरगंज निवासी एक सम्भ्रान्त कायस्थ परिवार के ५० वर्षीय वृद्ध की प्रात: १० बजे बीमारी से स्वाभाविक मृत्यु हो गयी । एक कथित तांत्रिक ने लाश को टटोलकर मृतक के स्त्री-बच्चों को बताया कि उनके मालिक की अभी वास्तविक मृत्यु नहीं हुई और यह आश्वासन भी दिया है कि वह अपने तांत्रिक अनुष्ठान के बल पर शाम के ६ बजे तक उसे जीवित कर सकता है । इसके लिए उसने ५००/- रुपये माँगे, लगभग १००/- रुपये की पूजासामग्री बतायी । बीमारी की अवस्था में सैकड़ों रुपये पहले भी खर्च हो गए थे, फिर भी इन लोगों ने उस पर विश्वास कर लिया और ५००/- रुपये दे दिए ।

तांत्रिक ने रुपये अण्टी में किए । झोला और कुरता उतारकर एक तरफ रख दिया । इसके बाद पूजन आरम्भ किया । एक घण्टा बाद नाश्ता किया, शायद तब भीड़ भी अधिक रही हो और वे निकल न पाये हों । तीन बजे तक पूजन कराने के बाद तांत्रिक लघुशंका करने बाहर गया और सुनसान पाकर भाग खड़ा हुआ । देर तक न लौटने पर खोजबीन की, पर पता न चला । उसके कपड़ों में भी रुपये न थे । मृतक के परिवारीजन हाथ मलते रह गये ।

प्राय: इतना तो सभी जानते हैं कि मृत्यु के बाद किसी के शरीर में चेतना नहीं लौटी । कहीं ऐसी कोई घटनामात्र हुई हो कि घण्टा भर में भी मृतक साँस ले ले तो उसे अपवाद ही मानना चाहिए । पर देश में फैला अन्धविश्वास लोगों को भ्रमित करता है । सम्भव-असम्भव को जानने का विवेक तो होना ही चाहिए अन्यथा बौद्धिक-प्राणी होने का क्या उपभोग रहा ?

सम्भवत: पूजा के फलस्वरूप मृतक के प्राण लौटें, इसी आशा में सारा परिवार ६ बजे तक बैठा रहा । पर ऐसा कभी हुआ भी है । प्राण लौटना सम्भव रहा होता तो बड़े-बड़े महाराजाओं की कभी मृत्यु न हुई होती । खूब धन खर्च करके अनुष्ठान के बल पर मृतकों को जीवित कर लिया करते । इस चक्कर में उस दिन मृतक का दाह-संस्कार भी न हो पाया । सब तरफ से निराश होकर दूसरे दिन अन्त्येष्टि की गई । लोगों को इनसे सहानुभूति तो रही, पर बहुत-से लोग इनके अन्धविश्वास और मूढ़ता पर मुस्कराते भी रहे ।

सन्तान के लिए बारह बार ग्राम-दाह

पुलिस ने तहसील किरावली (आगरा) के निनवाँ ग्राम की एक ऐसी नि:सन्तान स्त्री को गिरफ्तार किया है जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने सन्तान की प्राप्ति के लिये बारह बार पड़ोसी घरों को आग लगायी और हजारों रुपयों की सम्पत्ति स्वाहा कर दी ।

खबर है कि इस स्त्री की कोई सन्तान न होने से वह बहुत दु:खी थी । यह विज्ञान का युग है, औषधि शास्त्र का भी व्यापक विस्तार हो चुका है । वह स्त्री और घर वाले उसकी चिकित्सा कराते तो सम्भव था सन्तान का अभाव दूर हो लेता । सन्तान न भी थी तो उससे पागल बनने की क्या बात । विश्व की जनसंख्या वैसे ही नियन्त्रण में नहीं है सन्तान का मोह ऐसी स्थिति में निरी बेवकूफी ही तो हुई ।

स्त्री एक ओझा के पास गयी । ओझा ने कह दिया यदि पड़ोसी घर को आग लगा दो तो उन्हें सन्तान हो सकती है । पड़ोसी से रंजिश रही होगी तो उसने अपना बदला

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निकालने की गरज से ऐसा करा होगा । उसका दोष तो था ही पर भूल और दण्ड का असली अधिकारी तो अन्धविश्वास है जिसके चंगुल में पड़कर सोचने-समझने की सारी शक्ति खो जाती है । अविद्या और अज्ञान के कारण अभी हमारे भारतीय समाज की मनोभूमि उस स्तर की बनी हुई है जिस पर बेचारे भोले लोगों को धूर्तों द्वारा बहकाया जाना पूरी तरह सम्भव हो जाता है । इसी फेर में कितने ही व्यक्ति ठगे जाते हैं । कई ऐसी भूलें कर बैठते हैं जिससे पश्चाताप करना पड़ता है, अपयश हाथ लगता है और सम्बन्धित एवं समीपवर्ती लोगों को भी भारी हानि उठानी पड़ती है । उक्त घटना उसका सजीव प्रमाण है ।

स्त्री के मन में पुत्र की कामना छायी थी । आग लगाने से भी कहीं बच्चा होता है ? उसकी समझ में इतना भी नहीं आया । अवसर पाकर एक दिन पड़ोसी घर को आग लगा दी । आर्थिक अपव्यय हुआ सो तो हुआ ही कई व्यक्ति झुलस गये, मरते-मरते बचे । तब भी सन्तान सुख न मिला, तो उन देवीजी ने दूसरे घर को आग लगा दी । इस तरह तीन-चार घर फुँक गये तब भी ग्रामीण भाइयों को—किसी तरह की आशंका न हुई । भला अन्धविश्वास में वे किसी से पीछे क्यों रहते । गाँव में यह अफवाह फैल गयी कि यह कोई प्रेत-लीला है । फलस्वरूप लोग और भी भयभीत हो गये । छोटे बच्चों पर यह संस्कार ऐसे ही तो जमाये और पकाये जाते हैं । पहले से ही खोज और खण्डन का प्रयत्न किया जाये तो अधिकांश कारण साफ समझ में आ जायें और अनेक हानियाँ बच जायें ।

शाम होते ही लोग घरों में दुबक जाते । उधर उस स्त्री को जब सन्तान होने के कोई लक्षण न दिखायी देते तो वह तीसरे घर में लगा देती । तात्पर्य यह कि बारह बार गाँव में लंका-दहन हुआ तब भेद खुला और पुलिस को रिपोर्ट की गई । पुलिस ने जब गम्भीरता से छान-बीन की तो सारा मामला पकड़ में आया । घर फूँककर भी बेचारी स्त्री बंध्या की बंध्या ही रही, जेल का मुँह देखना पड़ा सो अलग, सैकड़ों की सम्पत्ति नष्ट हुई उससे कुछ मतलब नहीं ।

क्या आशा रखी जाये कि लोग ऐसे अन्धविश्वासों से बचेंगे ? उन लोगों से जो शिक्षित और विचारवान हैं क्या उनसे कुछ आशा की जाये कि वे अशिक्षित समाज की ऐसे अन्धविश्वास से रक्षा के लिये कुछ प्रयत्न करेंगे ? यह प्रश्न हमारे सामने गम्भीरता से विचार करने के लिये है ।

काली माँ के दर्शन कराने वाले जेल में

मुरादाबाद के अतिरिक्त सेशन न्यायाधीश ने एक ही परिवार के पाँच सदस्यों को दूसरों को ठगने के अपराध में कड़ी सजायें सुना दीं । पिता लाखन, उसके तीसरे पुत्र शान्ति तथा पोते को चार-चार वर्ष की कड़ी कैद एवं अन्य दो पुत्र दुलारे तथा फूला को सात-सात वर्ष की कड़ी कैद की सजा दी गयी । इसके विरुद्ध इन अपराधियों ने जब इलाहाबाद हाईकोर्ट को अपनी अपीलें प्रस्तुत कीं तो वहाँ भी उन्हें अस्वीकृत कर उसी सजा की पुष्टि की गई ।

पूरे के पूरे परिवार ने ठगी की एक योजना बनाकर एक सीधी-सादी महिला को पूरी तरह से बरबाद कर दिया था । वह महिला एक जमींदार की विधवा पत्नी थी जिसके केवल एक ही पुत्र था और वह भी बीमार रहता था । माँ अपने पुत्र के गिरते स्वास्थ्य को देखकर बड़ी चिन्तित थी । बार-बार वह यही सोचती थी कि यदि इसकी जीवन लीला भी समाप्त हो गई तो वह कहीं की भी न रहेगी । उसका सहारा टूट जायेगा ।

एक व्यक्ति रात्रि को उसके घर आया, उसने कहा—माताजी ! यदि आप काली देवी को खुश करलें तो आपके सारे दुःख दूर हो सकते हैं । भोली-भाली माता उसकी बात को सच मान गई । दूसरे दिन यही व्यक्ति साधु वेश में आया और माँ-बेटे को अपने साथ गंगाजी के किनारे ले गया । वहाँ उसने एक देवी के दर्शन कराये जो स्त्रियों के कपड़े पहने थी और लाल-लाल लम्बी जीभ लटक रही थी ।

इस देवी ने पैसा, सोना और शराब की माँग की, साथ ही यह भी कहा कि यदि माँ-बेटे दोनों में से किसी ने इस घटना का रहस्य खोला तो उन्हें शेर खा जायेगा । इतनी बात सुनकर भी वह दोनों असली और नकली देवी को न पहचान सके । उनकी समझ में नहीं आया कि देवी-देवता तो भक्ति भावना से प्रसन्न होते हैं या रुपया पैसा लेकर शराब पीने से । फिर उन्हें आर्थिक दृष्टि से तो कोई तंगी थी नहीं । जमींदारी के समय का काफी रुपया तथा सोना-चाँदी था । केवल लड़का बीमार था तो अच्छे से अच्छे चिकित्सकों से परामर्श लेकर उसके स्वास्थ्य सुधार के लिये प्रयत्न किया जा सकता था ।

इस देवी को २० हजार रुपये नकद, ९१ तोला सोना और एक बैल की कीमत के बराबर ५ सौ रुपये भेंट चढ़ाये गये । तो इस देवी ने माँ-बेटे दोनों को ही यह निर्देश दिया कि वह हरिद्वार जाकर अमुक ब्रह्मचारी को ५-५ तोले सोने की देवी की दो मूर्तियाँ भेंट करें । माँ-बेटे ने यह दोनों मूर्तियाँ भी हरिद्वार जाकर भेंट कर दीं और बाद में उन्हें काली माँ तथा शंकर जी के दर्शन हो गये ।

परन्तु देवी-देवताओं के दर्शन करने के बाद वह दोनों घर लौटे तब उन्होंने ऐसा अनुभव किया कि उनके साथ धोखा किया है । काश यह अनुभव वह पहले ही कर लेते तो पचास हजार की मोटी रकम से तो हाथ न धोना पड़ता । अब तो वह पुलिस स्टेशन पहुँचे और सारी घटना की रिपोर्ट लिखा दी । प्रक्रिया चली वस्तुस्थिति खुली और अदालत से धूर्तता का उपर्युक्त दण्ड मिला ।

ऐसे धूर्त व्यक्ति आये दिन भोले भाले व्यक्तियों को मूर्ख बना कर लम्बी चौड़ी रकम ऐंठते रहते हैं । और अनेक व्यक्ति अपनी कमाई धूर्तों को सौंपकर अन्त में पछताते हैं । थोड़ी-सी भी शंका होने पर अपने आस-पास के रहने वाले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तियों से सलाह ले ली जाय तथा अपनी विवेकशीलता से कार्य लिया जाय तो इन धूर्तों और ठगों से अपने को बचाया जा सकता है और इन्हें दण्ड दिलवाने में पुलिस की सहायता ली जा सकती है ।

गन्दा गड्ढा देवी का कुण्ड बन गया

रुनखेड़ा क्षेत्र के एक गाँव में साधु-वेशधारी धूर्तों द्वारा कतिपय लोगों को ठगे जाने का एक विचित्र समाचार मिला है । समाचार का विवरण इस प्रकार सुनने में आया है—

कुछ समय से एक धूर्त-मण्डली गाँव के बाहर एक छोटे से जंगल में साधु बनकर रह रही थी । वे दण्ड-कमण्डल लेकर जिधर को भी निकले जाते—पेट का प्रबन्ध कर लाते थे । कुछ समय तक तो यह क्रम सरलतापूर्वक चलता रहा । किन्तु बाद में कठिनाई होने लगी ।

उनके माँगने का क्षेत्र सीमित ही तो था । वे केवल उतनी परिधि में माँगने, खाने का क्रम चलाते थे, जिसमें घूमने के बाद वे समय से शाम को अपने स्थान पर वापस आ जाते थे । धीरे-धीरे लोगों से उनका परिचय तो हो गया और मान्यता भी बढ़ने लगी । किन्तु महँगाई और अभाव के कारण रोटी-रोजी में घाटा आने लगा ।

कठिनाई के कारण उस धूर्त-मण्डली में चिन्ता रहने लगी माँगने-खाने का चस्का लग जाने से सम्मानपूर्ण परिश्रम करने की उनकी प्रवृत्ति बिल्कुल मर चुकी थी । कुधान्य से संस्कार दूषित हो चुके थे । निदान वे कोई ऐसी तरकीब सोचने में लग गये, जिससे रोटी का कोई स्थायी प्रबन्ध हो सके ।

अब वह धूर्त-मण्डली चमत्कार के विषय में विचार करने लगी । उनमें स्वयं न तो इतनी विद्या थी और न वे तथाकथित चमत्कार की कला में कुशल थे । निदान उन्होंने किसी आकस्मिक घटना के विषय में सोचा और उपाय खोज ही निकाला ।

उन्हें उस वन में घूम-फिरने से एक ऐसा त्रिकोणाकार गड्ढा मिल गया, जिसका लोगों को वर्षों से पता न था और जहाँ पर इधर-उधर कुछ जंगली घास-फूँस तथा फल-फूल आदि उगे थे । धूर्तों ने उस गड्ढे के ऊपर छाई घास-फूँस को थोड़ा-सा हटाकर उसमें पानी भर दिया और उसके आस-पास सिंदूर, राख तथा अन्य सामग्री बिखेरना आरम्भ कर दिया ।

गड्ढे की खोज के बाद उन्होंने क्षेत्र में कहना आरम्भ कर दिया कि अब उन पर भगवती देवी की कृपा हो गई है । उन्होंने सपने में एक ऐसे कुण्ड का पता बतला दिया है, जिसकी पूजा करने और पानी पीने से रोग तो दूर हो ही जाते हैं, साथ ही भूख भी नहीं सताती । उसके नीचे पाताल में देवी स्वयं विराजमान हैं ।

अन्धविश्वासियों में अनहोनियों के प्रति जिज्ञासा की कमी तो होती ही नहीं है । उनकी मूढ़ता ने जोर मारा और वे देवी-कुण्ड के दर्शन के लिये लालायित हो उठे । इस पर उन धूर्तों ने बड़े नाज-नखरे दिखलाये । इससे अन्धविश्वासियों की लालसा और भी बढ़ गई और वें उसके दर्शन करा देने के लिये धूर्तों की पहले से ज्यादा खातिर और खुशामद करने लगे ।

किन्तु उतावले अन्धविश्वासियों की लालसा को अब ज्यादा दिन नहीं रोका जा सकता था । निदान धूर्तों ने एक दिन कुछ आदमियों को उस देवी कुण्ड के दर्शन कराने का वचन दिया । उस निश्चित दिन के पहले उन धूर्तों ने उस गड्ढे के चारों तरफ जरा सजावट करके आकर्षण पैदा कर दिया । लोग बाबाओं के साथ आये और उस गंदे गड्ढे की पूजा करके और उसके पानी का देव्यामृत लेकर कृतार्थ हो गये । इस प्रकार कुछ ही दिनों में लोगों ने उस नये तीर्थ पर जाना और पूजा-पगार चढ़ाना शुरू कर दिया । धूर्त बाबाओं के पौ-बारह हो गये ।

अचानक एक दिन, पुलिस ने छापा मारा और सारे बाबा पकड़ लिये गये, पता चला वे सारे बाबा भागे हुए अपराधी थे । पुलिस जिन्हें वर्षों से खोज रही थी ।

देवी कुण्ड की सारी सम्पत्ति जब्त कर ली गई । पुलिस तथा अन्य पूछताछ करने वालों को उन्होंने अपने सारे कृत्य का विवरण सुनाया । इससे और कुछ न सही पर इतना लाभ तो अवश्य हुआ कि अन्धविश्वासियों को एक प्रकाश की किरण मिल गई, जिसके आलोक में बहुतों की मूढ़ता का अन्धकार दूर हो जायेगा ।

झाड़-फूँक में लड़की गायब

एक फकीर के अन्धविश्वास में पड़कर कानपुर का एक वैश्य परिवार अपनी ११ वर्षीय कन्या से हाथ धो बैठा ।

घटनाक्रम के अनुसार धनकुट्टी मोहल्ले की एक वैश्य महिला को दौरे पड़ते हैं । सारी दुनिया के लोग बीमारी की स्थिति में चिकित्सकों के पास जाते हैं, उन्हें दिखाकर औषधि पूछते हैं । चिकित्सक रोग की स्थिति का पता लगा कर औषधि देता है, रोगी उसी से ठीक हो सकता है, होता है । झाड़-फूँक से यदि लोग अच्छे होते तो दुनिया में न कोई एक डॉक्टर होता न वैद्य । पर उन मूर्खों को क्या समझाया जाये जो इस २० वीं शताब्दी में भी अफ्रीकन आदिवासियों के समान कई तरह के अन्धविश्वासों से बुरी तरह जकड़े पड़े हैं । उसके कारण अवांछनीय तत्व किस प्रकार गुलछर्रे उड़ाते और अपना उल्लू सीधा करते हैं उसकी एक निशानी यह घटना भी है ।

महिला ने किसी वैद्य को तो दिखाया नहीं झाड़-फूँक के चक्कर में पड़ी रही । कुछ पैसा खर्च न हो इसका लोभ, कुछ रूढ़िवादी संगत, वह ऐसे मूर्खों की ही खोज-खबर में पड़ी रही । किसी प्रकार उसकी भेंट एक मुसलमान फकीर से हुई । वह तीन दिन तक झाड़ता रहा पर रोग अच्छा न हुआ । इस बीच वह कुछ पैसे भी झटकता रहा । एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पड़ोसी नवयुवक ने उस फकीर को भी डाँटा और स्त्री को भी समझाया बहिन जी झाड़-फूँक से रोग अच्छे नहीं होते पर उसकी समझ में बात नहीं आई ।

फकीर मौके की ताक में था । तीसरे दिन उसने जब आस-पास सूनापन देखा तब झाड़-फूँक के बाद उसने स्त्री को सुझाव दिया यदि परिवार की कोई अविवाहित कन्या पीर साहब के मजार पर जाकर फूल चढ़ाये तो दौरे तुरन्त बन्द हो जायेंगे ।

स्त्री की समझ में अब भी नहीं आया कि राम को औषधि खिलाकर कहीं श्याम का रोग अच्छा किया जा सकता है । सच बात तो यह है कि अन्धविश्वास से ग्रसित हित-अहित की बात सोच सकने में ही समर्थ नहीं होते । इसलिये ऐसे लोग जहाँ भी हों, जो भी अन्ध-विश्वास को पोषण दे रहे हों उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाय । किसी भी मामले में उसे आगे न रखा जाये, चाहे पारिवारिक व्यवस्था का ही प्रश्न क्यों न हो ।

नासमझ स्त्री ने अपने देवर की ११ वर्षीय कन्या को इसके लिये राजी कर लिया । वह उसे लेकर बकरमण्डी गयी । वहाँ एक और बाबा बैठा था उसने भी फूँक मारी, समझदार होता तो अनुमान करता, जब एक बूढ़ा तीन दिन तक हवा मार-मारकर थक गया और रोग दूर न हुआ तो इस मजार वाले बाबा में ही कौन-सा चमत्कार होगा जो रोग अच्छा हो जायेगा । पर अन्धविश्वास तो आखिर अन्धविश्वास ही है । उसे तो ठगाने से मतलब । चाहे हनुमानजी के नाम पर कोई ठग ले—चाहे पीर मजार के नाम पर, बात एक ही है । वह स्त्री यहाँ तक आकर भी सावधान न हुई ।

बस अब नाटक का अन्तिम दृश्य भर रह गया था सो भी पूरा हो गया । फकीर का एक चेला आया । उसने लड़की के हाथ में फूल रखे और मजार पर रखवाने के बहाने लिवा ले गया । फूहड़ स्त्री को एक नाबालिग लड़की यों असुरक्षित छोड़ते हुये भी लाज नहीं आयी । काफी देर तक प्रतीक्षा करने के बाद भी जब लड़की लौटकर न आयी तब उसने इधर-उधर देखा न वहाँ कोई फकीर था न फकीर का चेला । लड़की का भी कुछ पता न चला, बदमाश उसे कहाँ उड़ाकर ले गया । जिस अन्धविश्वास को लेकर स्त्री वहाँ गई थी उसे ही छाती से चिपकाये घर लौट आई । लड़की का फिर कुछ पता न चल सका ।

हम भारतीय अपने घरों में यह नाटक न चलने दें तो बेचारी अनजान सन्तानें क्यों ऐसे संकट में पड़ें ।

सिद्धि की इस मूढ़ता से कोरे भले

फीरोजपुर की खबर है । एक ६० वर्षीय वृद्ध ने अपने ही डेढ़ वर्षीय पोते की नृशंस हत्या कर दी । पुलिस ने बुड्ढे को बड़ा उत्पात करते हुये गिरफ्तार किया ।

हत्या का कारण कोई लोभ या लालच नहीं । कोई द्वेष रंजिश सो भी नहीं, बच्चा कुल डेढ़ ही वर्ष का तो था । अपने ही बेटे का बेटा, उससे क्या द्वेष दुश्मनी होती ? कोई ऐसा भी कारण नहीं था जिससे यह जान पड़ता कि बुड्ढे को क्रोध आ गया होगा और आवेश में हत्या कर दी गयी ।

कारण गम्भीर है । उससे आज के विज्ञान और विचारशील युग में लोगों का क्षोभ और ऐसी धर्मनिष्ठा से उद्विग्न होना स्वाभाविक ही है । उसे मूढ़ता और अन्धविश्वास की पराकाष्ठा ही कहेंगे जिसके कारण एक भोले-भाले बच्चे की हत्या कर दी गई ।

बुड्ढा प्रारम्भ से ही मन्त्र-जन्त्र पर विश्वास करता था । उसके मन में बहुत पहले से ऐसी महत्वाकांक्षा थी कि कोई चमत्कारिक सिद्धि प्राप्त कर ले जिससे खूब धन और सम्मान का सुख प्राप्त कर सके । इस विचार से वह एक बार गाँव के एक पढ़े-लिखे व्यक्ति से मिला । उन सज्जन की धर्म में अटूट आस्था थी वे नियमित रूप से भगवान का भजन भी करते थे ।

वृद्ध की इच्छा पर वे एक बार हँसे । फिर उसे समझाया—बाबा ! ईश्वर का सम्बन्ध अन्तःकरण की पवित्रता, सच्चाई और ईमानदारी से है । हम भगवान का ध्यान इसलिये करते हैं कि मन पाप से, लौकिक बुराइयों से बचा रहे । न करेंगे पाप, न होगी किसी से आसक्ति तो फिर जीवन में सुख-शान्ति भी रहेगी और व्यवस्था भी । मुझे इस तरह की ही ईश्वर उपासना का लाभ मिला है । चमत्कार की बात भूलकर तुम भी इसी रूप में भगवान का भजन किया करो, क्या इतना बड़ा संसार उसका चमत्कार नहीं ?

अन्धविश्वास मन में जमा होता है तो सीधी-सच्ची बात भी समझ में नहीं आती । बुड्ढे को बात जँची नहीं वह और-और लोगों के पास जाता रहा । कई गण्डे-ताबीज के प्रयोग भी कुछ तांत्रिक गुरुओं ने बताये । वह निष्फल रहे तब भी उसकी समझ में यह नहीं आया कि इस ढोंग से बचकर जीवन के अन्तिम दिन आत्म-कल्याण में बिताये । व्यर्थ की महत्वाकांक्षा का विचार त्यागकर अपने अगले जीवन की चारित्रिक और आध्यात्मिक तैयारी करे ।

सो तो हुआ नहीं, सिद्धि का भूत और प्रचण्ड रूप धारण कर गया । माना सिद्धि जैसी कोई वस्तु होती होगी तो उसके महत्व और मूल्य के हिसाब से साधन कठिनाई और कुछ समय भी लगता होगा पर यहाँ तो उतावली थी, मूढ़ता थी, कोई विचार तो था नहीं । बाबा के मन में तुरन्त सिद्ध बनने की हड़बड़ थी । उसी के लिये पागल बने इधर-उधर भागते फिरे ।

किसी ने उन्हें कह दिया कि यदि आप अपने बच्चे का खून पीकर अमुक साधन करें तो आपको तुरंत सिद्धि मिल सकती है । बुड्ढे की समझ में तब भी सन्देह न हुआ । आये दिन हत्याएँ होती हैं । हत्यारे जेल में ठूँस दिये जाते हैं, कुछ को पाप का सन्ताप ही खा जाता है और

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ पागल और विक्षिप्त हो जाते हैं । भला कोई हत्यारा सिद्ध हुआ है ? बुड्ढे के मन इतना भी न समाया ।

घर जाकर हँसिये से पोते का गला काटकर एक गिलास में रक्त भरा और उसे पी गया । तब भी उसे देवता की प्रसन्नता के लक्षण न दिखायी दिये तो वह घबड़ाया और उसी हँसिये से अपनी जीभ काट डाली । बाद में गरदन काटने का प्रयत्न करते हुए उसे गिरफ्तार कर लिया गया । न जाने ऐसा अन्धविश्वास, ऐसी मूढ़-मान्यताएँ इस देश से कब मिटेंगी और कब अध्यात्म को स्वच्छ, सरल और रचनात्मक रूप में विकसित होने देंगी ।

अन्धविश्वास ने अनेकों लोगों की जान ली

कुछ दिन पूर्व शमशाबाद परगना (जिला गुना, मध्य प्रदेश) के रूगरू नामक ग्राम में ढोर चराने वाले एक ग्रामीण ने अपने में देवता आने की किंवदन्ती फैलायी । उसने भभूत देकर सारे रोग, पाप-ताप दूर करने और मनोवांछित फल प्राप्त करने का विश्वास दिलाया । लाखों मनुष्य गाँव पहुँचे । भला तो शायद ही किसी का हुआ हो पर भीड़ बढ़ जाने से वहाँ हैजा अवश्य फैल गया । फलस्वरूप सैकड़ों दर्शनार्थियों और कामना पीड़ितों की जानें चली गयीं ।

रोग-शोक हो अथवा इच्छाएँ, उनके समाधान का एक निश्चित तरीका है, बीमारी हो तो उसके लिये इलाज कराना उचित है दवाओं से एक अंश तक आराम मिलता है । या फिर अपने स्वभाव की कृत्रिमताओं को बदल कर प्राकृतिक जीवन पर उतरना पड़ता है उससे रोगवर्द्धक तत्व घट जाते हैं और शरीर को आराम मिलता है । यह एक वैज्ञानिक तरीका है और सही भी ।

इच्छाएँ भी उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य की होती हैं पर उनकी भी पूर्ति का एक वैज्ञानिक रास्ता है जैसे एक किसान ने कहा कि इस वर्ष १०० मन अनाज मिलता तो सारे कष्ट दूर हो जाते । अब इस इच्छा में इतनी सामर्थ्य नहीं है कि अपने आप सौ मन अनाज पैदा कर दे, वह हिम्मत किसी देवी या देवता में क्या धरती माता में नहीं, जहाँ अन्न पैदा होता है । उसका एक तरीका है—किसान ने खेत जोता, पानी लगाया, बीज बोया, सिंचाई की, गुड़ाई की—जब दूसरे लोग आराम की साँस ले रहे थे वह तब भी खेतों से सिर धुन रहा था । भारी परिश्रम किया । समय पर सारी आवश्यक तैयारियाँ सम्पन्न कीं । तब कहीं एक वर्ष में जाकर १०० मन गल्ला प्राप्त कर सका । तात्पर्य यह है कि पुरुषार्थ और परिश्रम के अभाव में किसी भी इच्छा की पूर्ति सम्भव नहीं । यदि कोई वैसा करने का दावा करता है तो वह ढोंगी के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता । भगवान भी नियम-व्यवस्था से बँधे हुए हैं । सूर्य, वरुण, चन्द्र, बृहस्पति आदि देवता भी चलने तक में नियमों से एक इंच नहीं हट सकते तो फिर यह गाँवों के देवता कहाँ से कुछ दे सकते हैं । यह थोड़ा सोचने और समझने की बात है ।

पर मूढ़ अन्धविश्वासी जनता को क्या कहा जाय ? श्रम और संयम की सीमा से बचने वाले आधे पागलों की भी कोई कमी नहीं, जो लोभ और लालच में फँसकर उसी प्रकार मूड़े जाते हैं जिस प्रकार काँटे लगे आटे के लालच में मछली प्राण गँवा देती है । उस गाँव वाले के साथ कुछ धूर्त और स्वार्थी लोग भी मिल गये जिन्होंने हाँ में हाँ मिलाई कि उन्हें सचमुच उसकी भभूत से लाभ हुआ है । फिर क्या था चमत्कार की हवा सारे जिले में दूर-दूर तक फैल गयी और मूर्ख जनता अपनी-अपनी कामनाएँ लेकर पहुँचने लगी । कई लोग बीमारियाँ ठीक कराने के लिये अस्पताल छोड़कर भागे । हजारों आदमी वहाँ टूट पड़े ।

उतने आदमियों के लिये न तो खाने और पीने के पानी का कोई प्रबन्ध और न उनकी टट्टी-पेशाब की सफाई का जिसे जहाँ स्थान मिला उसने वहीं टट्टी कर दी । बासी, सूखा, डालडा-आलडा जो कुछ मिला, चबाया-खाया । अच्चा-कच्चा जो भी मिला उदरस्थ कर लिया और गन्दा पानी पिया तो फिर हैजा होना ही था । अशोक नगर में वहाँ से ३९ व्यक्ति ७ दिन के अन्दर (१० नवम्बर से १६ नवम्बर तक) हैजे से प्रभावित होकर आये और अस्पताल में भर्ती हुए जिनमें से ५ की मृत्यु हो गई ।

इसी प्रकार आस-पास के अस्पतालों में भी हैजे से प्रभावित लोग भर्ती हुए वहाँ भी काफी लोगों की मृत्यु हुई । विदिशा की रिपोर्ट है कि यहाँ ३०-३५ व्यक्ति हैजे से पीड़ित आये उनमें से ७ की मृत्यु हो चुकी है । बरखेड़ा ग्राम का एक आदमी वहाँ एक थाल भभूत भर कर ले आया और अपने यहाँ भभूत दान आरम्भ कर दिया । इन अन्धविश्वास फैलाने वालों को फूल-मालायें, नारियल और चढ़ाये के रूप में काफी धन हाथ अवश्य लगा ।

रुगरू ग्राम के इस महात्मा का नाम रामजीलाल है और उसकी आयु बीस-बाईस वर्ष की है । इस आयु में तो प्रारम्भिक साधनाएँ ही नहीं पक पातीं, सिद्धि की बात और वह भी इस युग में सोचना तो बिल्कुल ही गलत है । फिर वह युवक तो अनपढ़ और साधनाओं का क-ख भी नहीं जानता । वह ग्वाले का काम करता था और गाय-भैंस चराता था । गाँव में एक महात्मा आये थे । उसे इसने दो-तीन दिन खाना-खिलाया । कुछ लोगों ने प्रचार कर दिया कि उन्हीं बाबा के प्रभाव से यह सिद्ध हो गया है । आजकल तो वह विदिशा में गिरफ्तार है । पर वहाँ पहुँचे लोगों का अनुमान है कि इस पाखण्ड के द्वारा उसने लगभग एक लाख रुपया कमाया । उसके साथ कुछ और भी लोग हैं ।

मध्य प्रदेश प्रशासन ने विदिशा जिला के लोगों को इस भ्रामक प्रचार के लिये सावधान किया है कि रूगरू ग्राम के लालजीराम नामक ब्राह्मण को कोई दैवी शक्ति प्राप्त है । सूचना एवं प्रकाशन विभाग द्वारा प्रसारित एक विज्ञप्ति में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बताया गया है कि—"उक्त के बारे में सरकारी और गैर सरकारी दोनों स्तरों से जाँच करायी गयी तथा यह पाया गया है कि इसके पास कोई दैवी शक्ति नहीं है और न ही कोई रोगी उसकी दवा अथवा मन्त्रों से स्वस्थ हुआ है ।"

फिर भी हजारों लोगों का वहाँ पहुँचना इस देश के लिये कलंक की ही बात है । लोगों को ऐसे अन्धविश्वास में पड़कर अपना समय, धन और जीवन नष्ट नहीं करना चाहिए ।

गढ़े खजाने का लोभ ले डूबा

नरसिंहपुर जिले के कासीखैरी गाँव में नरवर सिंह नामक एक किसान बेचारा गढ़े हुए खजाने के लोभ में अपने जीवन भर की कमाई और कुछ उधार लेकर भी खो बैठा ।

पहले तो उस तृष्णा को क्या कहा जाय ? जो मनुष्य को अपनी कमाई पर सन्तोष नहीं होने देती और यह लालसा बनी रहती है कहीं से बिना-श्रम अपरिमित धन मिल जाय । इस तृष्णा ने सचमुच मनुष्य जाति का बड़ा अपकार किया है । उसकी क्रियाशक्ति का एक बड़ा भाग नष्ट कर डाला है, सैकड़ों लोग परिश्रम से मुँह चुराये घूमते हैं और यह आशा करते हैं कि कहीं से बहुत-सा धन बिना कमाये मिल जाय । चोरों, उचक्कों, जुआरियों, अन्ध-विश्वासियों, फरेबियों, जालसाजों और तरह-तरह के मिलावटखोरों की अम्मा और कोई नहीं—हराम की कमाई पाने की तृष्णा ही है ।

नरवर सिंह भी उसी का शिकार हुआ । तृष्णा सिर पर सवार थी तो उसे असलियत कैसे सोचने देती ? वह जंगल गया था । उसकी भेंट तीन ऐसे युवकों से हुई जिनमें से एक अपने को ज्योतिषी, दूसरा तांत्रिक और तीसरा सामुद्रिक ज्ञाता बताता था । उन्होंने दावा किया कि उनके पास अलौकिक शक्ति है, ऐसी बातें बता सकते हैं जो संसार में और कोई दूसरा न जानता हो । उन्होंने यह भी बताया कि उसके घर में ७० हजार रुपये का खजाना गढ़ा हुआ है यदि १० हजार रुपया पेशगी दे सको तो घर चलकर सारा खजाना निकाल कर तुम्हें दे सकते हैं ?

कोई परिश्रम की कमाई पर विश्वास करने वाला होता तो कहता भाई—"ऐसे खजाने तो बहुत से स्थानों में गढ़े मिलेंगे जाओ वहीं खोद लो । हमारा खजाना तो इस खेत में ही है सो उपयुक्त समय पर अपने आप मिल जायेगा, आपकी सहायता की जरूरत नहीं ।"

पर हाय रे लोभ! नरवर सिंह की आँखों के आगे सत्तर हजार का ढेर आ गिरा । जरा-सी देर में कल्पना ने हवाई किले बाँधे-अरे किसान ७० हजार रुपये से कायापलट हो जायेगी, बैठे मजा करेगा, शाहंशाहियत की जिन्दगी बीतेगी । अपने पास नहीं तो औरों से इकट्ठा कर सत्तर हजार के लिये १० हजार की रकम भी कोई रकम है ।

खयाली पुलावों का लालच ही तो बहका ले जाता है । 'लोभ से बुद्धि का नाश' वाली कहावत ठीक ही है । नरवर सिंह इतना भी न सोच सका कि इनके पास कोई विद्या होती तो यहाँ काहे को आते, किसी महल में पड़े आराम कर रहे होते । पर वह तो लालच भरे सपने देख रहा था । उसे भला वस्तुस्थिति सोचने का अवसर कहाँ मिलता ?

तीनों बदमाश चौथे दिन नरवर सिंह के घर पहुँचे । पहले तो खूब आदर-सत्कार किया । फिर सारे गाँव की दौड़ लगाई । अपना बच्चा होता और कपड़ों या किताबों के लिये १० रुपये माँगता तो दुनिया भर की बुद्धि आ जाती—"अरे अभी दो महीने भी तो नहीं हुये कपड़े सिलवाये, किताब कैसे फट गई ?" दुनिया भर के हाय तोबा करता पैसे न निकालता पर इनके लिये झट रुपये इकट्ठे कर दिये ।

तीनों बदमाश तीन दिन तक पास रहे और तरह-तरह की पूजा-ढोंग करते रहे तो भी उसे विश्वास न हुआ । तीसरे दिन एक ने उससे कहा, भाई आज खजाना निकलेगा । हमारे दो साथियों के साथ अपनी धर्मपत्नी सहित जाओ और नर्मदा का पवित्र जल भर लाओ ।

दोनों सहर्ष चल दिये—साथ में दोनों बदमाश भी थे पर थोड़ी ही दूर जाकर वे दोनों झाँसा देकर निकल भागे । किसान डरा-डरा घर आया तो नम्बर तीन का बदमाश भी गायब था । बताते हैं कि चिंहाड़ मारकर रोया, पुलिस में रिपोर्ट लिखाई पर उन बदमाशों का पता न चला और सारे जीवन भर की कमाई चली गई ।

लोग अन्धविश्वास के कुचक्र में न फँसे तो क्यों ऐसे ठगे जायें ? अपनी कमाई पर सन्तोष करें तो क्यों ऐसी दुर्घटनाएँ हों ?

साधु बाबा के वेष में ठग

बलिया शहर की घटना है । उस दिन सुबह ही सुबह श्री जगन्नाथप्रसाद जी के घर बड़ी उदासी छाई हुई थी । वे एक कुर्सी पर निढाल बैठे हुये थे । पत्नी कमरे में शायद रो रही थी । बारह बजे तक यही स्थिति रही । आखिर सबकी सलाह मानकर पुलिस में रिपोर्ट लिखाने का विचार किया ।

उनके पड़ौसी श्री विद्याधर जी कह रहे थे—आपके साथ वास्तव में ही बड़ा धोखा हुआ है । लेकिन कोई अनपढ़ होता तो उसे इस प्रकार की अन्धमान्यता में फँसते देखकर कुछ आश्चर्य नहीं होता । पर आप तो पढ़े-लिखे हैं—समझदार व्यक्ति हैं । आप कैसे आ गये उन ठगों के चक्कर में ?

"अब जगन्नाथप्रसाद जी कहने लगे क्या बतायें, कुछ समझ में नहीं आता सब भाग्य का ही खेल समझो । अब तो लुट ही गये ।"

"विद्याधर जी बोले—पर यहाँ भाग्य की बात कहाँ से आ गई यह तो अपनी ही अदूरदर्शिता का परिणाम है । आपको सोचना चाहिये था कि कहीं ऐसा भी सम्भव है ?"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जगन्नाथप्रसाद जी ने एक ठण्डी साँस ली और बोले—"ठीक कहते हो भाई । उस समय तो हमारी अक्ल पर पर्दा ही पड़ गया था, अब ठोकर लगी तो आँखें खुली हैं ।"

तब तक उनकी पत्नी भी वहाँ आ गयी थीं । वे कहने लगीं "भईया ! हमारी जगह तुम होते तो तुम्हें भी विश्वास हो जाता । आठ दिन पहले दो साधु बाबा आये थे, उन्होंने बताया कि वे बड़े जन्तर-मन्तर जानते हैं । एकदम तो हमें भी विश्वास न हुआ । लेकिन उन्होंने कई बातें हमारे बारे में बतायीं जो बिल्कुल ठीक थीं । फिर बोले कि—हम रुपया दुगना करना भी जानते हैं । और परीक्षा के तौर पर हमने दस रुपये का नोट दिया, उसके उन्होंने मन्त्र पढ़-पढ़कर बीस रुपये कर दिये । वे रुपये अभी तक हमारे पास जैसे के तैसे रखे हैं । दो दिन बाद फिर आये और सौ के नोट भी दो गुने कर दिये । असली नोट हैं बिल्कुल । अब बताओ कैसे विश्वास नहीं होता हमें ?"

इस पर विद्याधर जी ने कहा—"यह सब उनकी चाल थी भाभी, कुछ रुपया अपना आपको देकर उन्होंने आपका विश्वास जीत लिया, उन्हें तो आगे आपसे लम्बी रकम ऐंठनी थी और आप लोग सचमुच ही धोखे में आ गये ?"

अब वे रोने लगीं थी और बताती भी जा रही थीं "अब कुछ भी कहो भईया ! बड़ा धोखा खाया हमने । सचमुच ही लालच इन्सान को हमेशा गड्ढे में ही गिराता है ।" कल वे फिर आये और कहने लगे कि " कल हम लोग दूसरे शहर में जायेंगे । सो जितना रुपया दुगना करवाना हो आज करवा लो ।" हमने बैंक से सारा रुपया निकाल लिया और पूरा पाँच हजार रुपया उन्हें दे दिया । कुछ जड़ी-बूटी खरीदने के बहाने एक गया, फिर बड़ी देर तक वह न आया तो दूसरा उसे बुलाने गया । और अभी तक किसी का भी पता नहीं है । अब विद्याधर जी उन्हें सान्त्वना देते हुए कहने लगे—"अब तो जो हुआ सो हुआ । अपना जी दुःखी न करें आप लोग ।" पर इन ठगों की किसी भी बात पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए । भोले-भाले लोगों के मन में अपने प्रति आस्था उत्पन्न करके ये हमेशा अपना स्वार्थ साधते रहते हैं ।

पुत्र पाने के चक्कर में जान चली गयी

सूरत के ग्रामीण क्षेत्र के एक दम्पत्ति की हाल ही में तीन माह की बीमारी के बाद मृत्यु हो गयी । उन दोनों को एक साथ एक जैसी फेफड़ों की बीमारी हो गयी थी ।

यों तो आहार-विहार और रहन-सहन अथवा दुर्व्यसनों के कारण बहुतों को फेफड़ों की बीमारी होती है । बहुतों का सुधार भी हो जाता है और बहुत से असावधानी तथा असंयम के कारण मर भी जाते हैं ।

इन दम्पत्ति की आयु चालीस-पैंतीस के लगभग थी । विवाह हुये पन्द्रह-सोलह वर्ष हो गये थे लेकिन कोई सन्तान न थी । अच्छी-खासी खेती और जमीन-जायदाद थी, कई भाई थे । लेकिन पिता मरने से पूर्व सबको हिस्सा देकर अलग-अलग कारोबार से लगा गया था । और सब भाइयों की स्थिति तो वैसी बनी रही जैसी बाप छोड़ गया था । किन्तु इस बड़े भाई ने कारोबार बढ़ा कर काफी सम्पत्ति पैदा कर ली थी । बड़ा अच्छा जीवन चल रहा था । दुःख था तो केवल यह कि कोई सन्तान नहीं थी ।

छोटे भाइयों को भले ही बड़े भाई की उन्नति से ईर्ष्या न हो और उसकी उन्नति को अपनी और पूरे कुल की उन्नति मानते हों, किन्तु बड़े भाई को उनकी सन्तानों से अवश्य जलन थी । जब तब बातचीत के दौरान उसका यह वाक्य कि—"पराये पूत कहीं अपने होते हैं" उसका मनोभाव प्रकट कर देता था ।

दोनों पति-पत्नी जब तब कुढ़ते और खेद किया करते थे । अपनी तुलना भाइयों से करते हुये कहा करते थे कि देखो भगवान का अन्याय ! जिनके पास खाने को नहीं है उनके चार-चार लड़के-लड़की हैं और अपने पास जब किसी बात की कमी नहीं है तो उसे खाने खर्च करने वाला कोई नहीं है । समझदार लोग उन्हें समझाते थे कि इसमें दुःखी होने की क्या बात है, आपके न सही, भाइयों के तो बच्चे हैं । उनकी पढ़ायी-लिखायी और पालन-पोषण करो । उन्हें अपना समझो और बहुत करो किसी भाई के बच्चे को गोद ले लो ।

लोगों की यह विवेकपूर्ण बात सुनकर तो संकीर्ण हृदय उस दम्पत्ति को और भी कुढ़न हो जाती थी और सोचने लगते थे कि जो जायदाद हमने इतनी मेहनत से कमाई है, उसे क्या दूसरों के बच्चे भोगेंगे ? यह तो भगवान की बहुत क्रूरता है । बहुत से अन्धविश्वासियों ने टंट-घंट की राय दी और वे दोनों उसमें फँस गये ।

इसी सिलसिले में उन्हें एक धूर्त परदेशी ने राय दी कि अगर वे पैदल चलकर हरिद्वार से जल भरें और पैदल ही जाकर रामेश्वर को चढ़ायें और इस बीच सिर्फ एक समय फलाहार करें तो इस तपस्या से उनको पुत्र मिल सकता है । वे दोनों एक अच्छा दिन शोध कर घर में ताला लगा कर पैदल हरिद्वार चल दिये ।

कई महीने की यात्रा में हरिद्वार पहुँचे और जल भर कर जैसे-तैसे अधमरी दशा में रामेश्वरम की ओर चल दिये । इस यात्रा में भी बहुत समय लगा । रास्ते में कई बार ठगे गये, बीमार हुये, मरने तक की नौबत आ गई लेकिन उनके सिर पर सवार अन्धविश्वास ने उन्हें सावधान नहीं होने दिया । व्रत, उपवास, फलाहार के आधार पर जीवन की गाड़ी खींचते हुये और आखिर आधा चौथिया ही चल कर इतने बीमार हो गये कि रामेश्वरम गाड़ी से ही जाना पड़ा । शरीर टूट गया और अन्धविश्वासी व्रत भी भंग हो गया । रामेश्वरम में जल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चढ़ा कर जब वे लौटे तो पास में धेला तक न था । पुजारियों, पण्डों तथा ठगों द्वारा पूरी तरह ठगे जा चुके थे । दूसरों से पैसा माँग कर घर तक आये । किन्तु तब तक स्वास्थ्य शत-प्रतिशत नष्ट हो चुका था । घर आकर कुछ दिनों बाद पति-पत्नी परलोक चले गये ।

स्वाभाविक था—जमीन-जायदाद भाइयों के पास चली गयी । समझदार लोगों ने कहा कि यदि पहले ही इस सम्भावना को स्वीकार कर भावना द्वारा भक्ति की जाती तो शायद इस मौत से बच जाते ।

अन्धविश्वासिनी ने बालिका को मार डाला

विराज नगर (असम) की एक तीस वर्षीया स्त्री एक बच्चे की हत्या में गिरफ्तार की गई है ।

कहा जाता है कि उक्त स्त्री अपनी बहुत-सी साथिनों के संग एक बार एक मेले में गयी । देहाती मेलों में बहुत से दुकानदार तरह-तरह की सड़ी-गली और रद्दी पुरानी चीजें भोली-भाली ग्राम्य स्त्रियों को भिड़ा कर पैसे खड़े कर लेते हैं । बहुत से नीम-हकीम खरिया, मिट्टी और राख को रंगीन पुड़ियों में बाँध कर मंजन और मिस्सी आदि के नाम से बेचते हैं । अंजन और सुरमे के नाम पर हानिकर चीजें बेचते हैं । नाखूनी और लिपिस्टिक के नाम पर तो विशुद्ध रंग बिकता ही है और भोली-भाली स्त्रियाँ अपने पतियों की गाढ़ी कमाई इन व्यर्थ और हानिकर चीजों में गँवा कर प्रसन्न होती हैं ।

इसके साथ बहुत से धूर्त और मक्कार लोग रमल, योग और ज्योतिष की भी बिक्री करते हैं । वे धूर्त होने वाली सन्तानों, गड़े धन, पति-पुत्र की आयु और सुहाग की अवधि बतलाते हैं । शत्रु के नाश, खेती की उपज, पति के प्रेम और रोगों के निवारण का उपाय बतलाते और गारन्टी देते हैं । कोष्ठों पर अँगुली रखा कर भाग्य का भविष्य बतला देना तो उनके बायें हाथ की बात होती है ।

ऐसे मक्कारों के पास मेले में सबसे ज्यादा भीड़ होती है । स्त्रियाँ अलग-अलग पैसे दे-दे कर अलग-अलग बहुत-सी बातें पूछतीं और गाँठ बाँधती जाती हैं । इसी प्रकार के एक मेले में उक्त स्त्री गयी और एक दुष्ट देवता के चक्कर में फँस गई । वह यदि अकेली या एक आध के साथ मेले गयी होती तो शायद न फँसती, वह बहुत-सी स्त्रियों के साथ गयी थी । उनमें से अनेक सब कौतुकों के प्रति बड़ी अन्धविश्वासिनी थीं । वे स्वयं तो उस मूर्खता में भाग लेने गयी ही थीं साथ ही उसको भी हठात् घसीट ले गयी और हाथ दिखलाने को कहा ।

ज्योतिषी ने हाथ पकड़ा, टेढ़ा-मेढ़ा और उलटा सीधा किया । रेखाएँ देखीं, मोड़ी, फैलाई और गिनी । एक बार फिर देखीं और यह सब ढोंग करने के बाद हाथ छोड़ कर मुँह बना दिया । नारी बुरी तरह चिन्तित हो गई । उसकी साथिनियों ने कहा—महाराज ! बताइये तो—आप तो चुप होकर बैठ रहे ।

दैवज्ञ ने बड़ी चिन्ता से कहा—क्या बतलाऊँ बात बतलाने वाली नहीं—सब ठीक है । भगवान की इच्छा ! बेचारी स्त्री और भी चिन्तित हो गयी । उसकी साथ वालियों ने फिर बतलाने का अनुरोध किया । ज्योतिषी फिर बोला—झूठ मुझसे कहा नहीं जायेगा और सच कहने से इनको दुःख होगा । फिर स्त्रियाँ नहीं मानीं और ज्योतिषी महाराज ने कुछ मकर, मेख बुदबुदा कर बताया कि एक वर्ष के भीतर इनका पति मर जायेगा ।

स्त्री सुनते ही लड़खड़ा गयी और उसके आँसू बहने लगे । सारी साथिनें उसे चुप करती हुई बोलीं—रोती क्यों है भलीमानस । पंडित महाराज ! उपाय भी बतलायेंगे । सब ठीक हो जायेगा । ज्योतिषी ने बतलाया कि यदि वह अमावस्या को किसी क्वारी कन्या का बूँद भर खून अपनी माँग में भर लिया करे तो उसका पति बच जायेगा।

स्त्री घर आयी और चिन्तित रहने लगी । मेला के दिन पूनो थी । अमावस्या को एक पखवारा था । स्त्री उपाय सोचती रही अमावस्या आयी और उसने क्वारी खिलाने के बहाने दो कन्याओं को अपने घर बुलाया । खिलाने के बाद उसने एक कन्या को बड़े प्यार से गोद में बिठाया और कहा लाओ, तुम्हारे हाथ में गोदना गोद दें। भोली बालिका ने हाथ फैला दिया । मूर्ख अन्धविश्वासिनी ने एक सुई उसकी बाँह में कई बार चुभोई । कन्या रोती रही पर उसने छोड़ा नहीं और कई जगह छेद कर उसका खून निकाल कर माँग में चढ़ा लिया ।

लड़की जब तक घर पहुँची उसे बुरी तरह बुखार आ गया, टिटिनस हो गयी । तब तक उसका कुछ प्रबन्ध किया जाय उसकी जुबान बन्द हो गई और वह मर गई । साथ की दूसरी बालिका से सब बात मालूम हो गई । जो सुई इसकी बाँह में चुभोई गई थी, जहरीली थी । निदान पुलिस ने लड़की को जहर देकर मार डालने के आरोप में उक्त स्त्री को गिरफ्तार कर लिया ।

सिर पर देवता आने का ढोंग

करबिगवाँ (कानपुर) में सिर पर देवता आने का ढोंग बनाकर एक बालक की निर्मम हत्या का समाचार मिलता है । इस समाचार को बढ़कर लोग अनुभव करेंगे कि भूत-प्रेत या सिर पर देवता आने का विश्वास कितना बड़ा ढोंग है ।

इस सम्बन्ध में कृष्णकली नामक एक औरत को गिरफ्तार किया गया है । अभियुक्ता ने पुलिस को बयान देते हुए बताया कि सिर पर देवता आने का ढोंग मैंने अपनी जेठानी के भाई के चचेरे भाई परमू, मल्लू और कलई सिंह के इशारे पर किया । यह मृत बालक महादेव की हत्या के लिये कराया गया । उसने बताया की सारा काण्ड पूर्व नियोजित था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभियुक्त ने बदमाशों के सिखाने पर झूठ-मूठ देवता ऊपर आने का बहाना किया और महादेव पर सवाग्यारह रुपये चोरी का आरोप लगाया ।

जहाँ कुछ दुष्ट लोग इस तरह का भ्रम फैलाते हैं वहाँ भोले-भाले अशिक्षित ग्रामीण बेचारे वस्तुस्थिति समझ नहीं पाते, न ही शिक्षित लोग उन्हें समझाने और सही रास्ता दिखाने का प्रयास करते हैं । यही कारण है बीसवीं शताब्दी के इस वैज्ञानिक युग में भी हमारा देश, हमारा समाज धर्माडम्बर, भूत-प्रेतवाद और अन्धविश्वास से पीड़ित है । लोगों के मन में भूत और देवता का कल्पित भय समा गया है इसीलिये दुष्ट लोग अपने हथकण्डों में कामयाव होते रहते हैं अन्यथा न कहीं भूत है और न किसी को कोई देवता आता है ।

परम्परागत भय ही था कि बेचारे लड़के को चोरी के बदले ५०) देने पड़े । ढोंगी देवता का सामना बेचारा बालक ही कैसे करता जब सैकड़ों जवान और बूढ़ों से यह करते न बना कि वे उस चुड़ैल की कोई ऐसी कड़ी परीक्षा लेते जिससे कलई अपने आप खुल जाती । सब खड़े देखते रहे, एक-दूसरे का मुँह ताकते रहे । किसी को बच्चे के लिये दर्द और सहानुभूति न उमड़ी । ऐसे दलित भारतीय समाज की जितनी निन्दा की जाय कम है।

लड़के को परिश्रम की कमाई व्यर्थ जाने का दुःख हुआ । उसने पुलिस को शिकायत कर दी । थोड़ी छानबीन हुई तो तथाकथित देवता का प्रकोप और भी उग्र हो उठा । सिर पर देवता चढ़ा और लड़के से इस अपमान के बदले ३००) रुपये देने की धमकी दी और चेतावनी दी कि यदि वह रुपये नहीं देगा तो उसका सर्वनाश हो जायेगा ।

यह सारा काण्ड कई दिन तक चलता रहा पर किसी से इतना भी न सोचा गया कि कठिन तपस्याओं से मिलने वाले देवता भी कहीं इतने सरल होते हैं कि जब चाहें तभी दौड़ पड़ें फिर उन्हें रुपयों से क्या प्रयोजन ? किसी की चोरी से क्या मतलब ? इतना ही दर्द उस देवता को था तो सारे देश में भ्रष्टाचार फैल रहा है । किसी मन्त्री के सिर आया होता तो सारे देश का भला होता ?

आवश्यकता यह थी कि समाज को गुमराह करने के लिये उस स्त्री को ताड़ना दी जाती । ग्राम पंचायत स्वयं मामले की छानबीन करती और षड्यन्त्रकारियों के खिलाफ आवाज उठाती, पर हमारे समाज की दशा अन्त में फिर वही ढाक के तीन पात रह जाती है ।

प्रतिरोध न होने का ही असर था कि एक दिन पूर्व भविष्यवाणी सिद्ध करने के लिये अवसर पाकर तीनों बदमाशों ने महादेव नामक उस बालक की गला घोंट कर हत्या कर दी और उसकी लाश ले जाकर बाहर फेंक आये ।

अन्ध-विश्वास के कारण ऐसी अनेक दुर्घटनाएँ हुआ करती हैं, शिक्षित व्यक्तियों को अब उनका निराकरण भी खोजना चाहिए । भारतीय समाज को इस कुण्ठा से अब भी नहीं बचाया गया तो फिर कब बचाया जायेगा ?

अन्धविश्वास से हानि ही हानि

समाज में फैली हुई कुरीतियों और कुपरम्पराओं को देखने पर ज्ञात होता है कि लोग एक-दूसरे को देखकर बिना कुछ सोचे-विचारे अन्धानुकरण करने का प्रयास करते रहते हैं । जबकि उससे लाभ किसी प्रकार का नहीं होता, केवल हानि ही हमारे हाथ लगती है । कभी-कभी तो हानि का पता लग जाने पर भी अभ्यास अथवा स्पर्द्धा के कारण उसे छोड़ना नहीं चाहते । अन्धविश्वास भी एक ऐसी ही कुरीति है ।

अन्धविश्वास निराधार होते हैं, पर भोले-भाले लोग उसमें फँसते चले जाते हैं । यह स्थिति समाज में तभी उत्पन्न होती है जब व्यक्ति अपने विवेक का सहारा नहीं लेना चाहता । अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये दूसरों के द्वारा बताया गया ऊल-जलूल कार्य करने में भी संकोच नहीं होता । चतुर-चालाक लोग भ्रमजाल फैलाकर मूढ़ व्यक्तियों को फँसाने का प्रयास करते हैं । लीजिए—कुछ सच्चे उदाहरण आपके समाने हैं जिनके आधार पर अन्धविश्वासों की वास्तविकता और अवास्तविकता का सही-सही पता लगाने में आपको सुविधा होगी ।

(१) भटिण्डा जिले के बेहलुआना ग्राम में आप चले जाइये तो आपको सारे घर गारे (सादा मिट्टी) के बने हुए मिलेंगे । जब ईंट, सीमेंट और लोहे जैसी वस्तुएँ भवन निर्माण के लिए सुलभ और सस्ती कीमत पर प्राप्त की जा सकती हों तब पक्की या कच्ची ईंट का प्रयोग न करके केवल गारे के मकान बनाना कहाँ की बुद्धिमत्ता है । फिर गारे के मकान बनाने में समय भी अधिक लगता है और प्रत्येक वर्ष बरसात से पूर्व मरम्मत करवानी भी आवश्यक है । बात बड़ी साधारण-सी है । आज से दो सौ वर्ष पूर्ण बेहलुआना गाँव की नींव डालने वाले 'बाबू वेहलु' ने मकान बनवाने के लिए जब पक्की ईंटें मँगवाई तो असावधानी से एक ईंट से ठोकर खाकर गिर पड़े, जिससे पैर में काफी चोट आई और कई दिन तकलीफ रही । उसी दिन उन्होंने संकल्प किया कि अब वे ईंटों के मकान नहीं बनवायेंगे ।

उस ग्राम के निवासी आज भी दो सौ वर्ष के एक व्यक्ति द्वारा अपने लिये किये संकल्प का अनुकरण कर रहे हैं । बूढ़े वेहलू के संकल्प का पीढ़ी दर पीढ़ी अक्षरशः पालन किया गया है । गाँव में कितने ही ऐसे अमीर व्यक्ति है जो आलीशान इमारत बनवाकर रह सकते हैं पर पुरखों के वचन को तोड़ने का कोई साहस नहीं करता ।

यदि उस गाँव वालों ने सोचा होता कि दो सौ वर्ष पूर्व एक व्यक्ति को ईंट से ठोकर लग गयी तो कौन बड़ी बात हुई, इसमें ईंट का क्या दोष ? असावधानी से चलने पर वेहलू हों अथवा आज का कोई व्यक्ति, चोट तो लगेगी ही । बड़े-बड़े भवनों के निर्माण के समय हमने देखा है कि दीवारें और छतें गिर जाती हैं, कभी-कभी तो अनेक मजदूर या अन्य व्यक्ति दब जाते हैं, फिर भी उस निर्माण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्य को बन्द तो कोई नहीं कर देता । रेल, मोटर, वायुयान आदि की दुर्घटनाओं से भयभीत होकर क्या यात्रियों की संख्या घट गयी ? कारखानों में मशीनों से आये दिन दुर्घटनाएँ होती रहती हैं, फिर भी उस कारखाने में नई-नई मशीनें लगती रहती हैं तथा नये-नये कारखाने खुलते रहते हैं ।

ईंट पर गुस्सा दिखाने का परिणाम आज पूरा गाँव भुगत रहा है । सड़कें, नालियाँ, पाखाने, पेशाबघर, खरंजे और पंचायत-घर आदि सभी का तो अभाव है । बरसात के दिनों में सिवाय कीचड़ के और भी कुछ मिल सकता है ? गन्दे पानी को निकालने के लिए नालियाँ नहीं होगीं तो घर के आस-पास गन्दा पानी बहता रहेगा और मच्छर मक्खियाँ भिन-भिनाती रहेंगी । सिंचाई के साधनों के बिना खेती में उपज भी थोड़ी ही होगी । यदि वहाँ के निवासियों ने थोड़ी-सी विवेकशीलता का सहारा लिया होता तो उस गाँव की स्थिति भी अन्य गाँवों की तरह बदल गयी होती और एक आदर्श ग्राम के रूप में उसे जाना जाता । अब कुछ लोगों की समझ में आया तो उन्होंने उस लीक को तोड़ कर बाहर से आने वाले व्यक्तियों के ठहरने हेतु एक धर्मशाला बनवा दी ।

(२) बिलासपुर से ५० मील की दूरी पर स्थित जाँजगीर तहसील के अन्तर्गत बलौदा ग्राम के देवांगन मुहल्ले की एक पुत्रविहीन नारी ने पुत्र प्राप्ति के लिए अपनी जिह्वा काटकर शिव प्रतिमा को समर्पित कर दी । जीभ के बिना उसे अपार कष्ट सहना पड़ा पर पुत्र की भी प्राप्ति नहीं हुई । देश में जनसंख्या की बढ़ती हुई स्थिति को देखकर तो अब कुछ सीखना ही चाहिए । जनसंख्या तेजी से बढ़ती जा रही है । उसके पालन-पोषण के लिए हम साधन भी नहीं जुटा पाते । समाज में ऐसे भी लोग हैं जो सन्तान हीन दम्पत्ति को बुरी दृष्टि से देखते हैं यहाँ तक कि महिलाओं का तो मुँह देखना तक पाप समझते हैं ।

ऐसे दम्पत्तियों को तो सौभाग्यशाली समझना चाहिए क्योंकि उनके पास अब थोड़े ही उत्तरदायित्व हैं । वे बचे हुए समय में समाज सेवा का कार्य कर सकते हैं । यदि हम अपना दृष्टिकोण बदल दें तो क्या अपने भाई-भतीजों के प्रति सन्तान की तरह स्नेह करके आगे बढ़ाने में मदद नहीं कर सकते हैं ।

(३) गाँव गंगाजल खेड़ी (इन्दौर) के एक बलाई ने अपनी लड़की की सास को डाकिनि समझकर उसकी हत्या कर दी और लाश की गठरी बाँधकर एक कुएँ में डाल दी । इस दुर्घटना का पता लगते ही पुलिस ने आकर हत्यारे और उसके साथियों को गिरफ्तार कर लिया । सास के क्रूर स्वभाव से तंग आकर बहू ने अपने घर वालों के खूब कान भर रखे थे । सास और ससुर को अपनी माता तथा पिता के समान स्नेह देने वाली बहुएँ उनसे सब कुछ प्राप्त कर लेती हैं । सेवा-सहानुभूति, आज्ञापालन और दूसरे की बुराई न करने की विशेषताएँ यदि किसी में आ जाएँ तो वह अपने शत्रु तक को मित्र बना सकता है । सास-बहू का झगड़ा यहाँ तक बढ़ गया कि सास ने तंग आकर बहू को एक दिन जलते अंगारे चबाने के लिए विवश कर दिया । आग का गुण जलाना है, वह कैसे बदला जा सकता है, बेचारी बहू का मुँह झुलस गया । उसने अपने घर आकर सारी स्थिति बता दी । फिर क्या था ? अब तो पिता को उसके डाकिनी होने का पूरी तरह विश्वास हो गया, उसकी जाति के लोगों ने दो-चार झूठे-सच्चे किस्से सुनाकर उसे और विश्वास करवा दिया । यदि उस बलाई के मिलने-जुलने वाले चाहते तो दोनों पक्षों को एकत्रित कर मामले को शांति से सुलझा सकते थे । बहू को साथ ले जाकर सास से सारी बातों का पता लगाया जा सकता था और इस बात का प्रयत्न किया जा सकता था कि दोनों सुखी और आनन्द से रहें । पर मूढ़ सलाहकार भी उलटी सीख देकर गाँव में फैले अन्धविश्वासों को रोकने के स्थान पर बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं ।

(४) गोलकुण्डा (हैदराबाद) के निकट शेखपेठ गाँव में एक अधेड़ गर्भवती महिला को तीन आदमियों ने मिलकर इतना पीटा कि वह मर गई । पीटने वालों को यह सन्देह था कि वह जादूगरनी है । कुछ मास पूर्व उस गाँव में हुई एक वृद्धा की मृत्यु का कारण उसका जादू-टोना बताया जा रहा था ।

यदि उन हत्यारों ने सोचा होता कि वृद्ध महिला की मृत्यु तो बीमारी के कारण हुई । उसका कृश शरीर आखिर कब तक चलता, तो उस महिला की हत्या करने के अपराध से बच सकते थे । मौलिक बुद्धि से काम न लेने के कारण तीनों व्यक्तियों का जीवन खराब हुआ और उनके आश्रित बच्चों तथा महिलाओं को कितनी परेशानियों के साथ अपने दिन काटने पड़े ।

(५) अन्धविश्वास की घटनाएँ केवल ग्रामीण क्षेत्र तक सीमित हों, ऐसा नहीं है । शहरों में भी भोले-भाले व्यक्तियों को नित्य ही किसी न किसी माध्यम से ठगा जाता है । जबलपुर में सड़क छाप ज्योतिषियों के चक्कर में पड़कर रमेशचन्द्र जैन नामक युवक को अपने सारे सामान से हाथ धोना पड़ा । रमेशचन्द्र हनुमान ताल क्षेत्र से कुछ अनमने से सोचते हुए गुजर रहे थे । तभी उनकी मुलाकात सामने आते हुए दो व्यक्तियों से हुई जिन्होंने अपने को ज्योतिषी बताया ।

बिना कुछ पूछे हुए ज्योतिषियों ने कहा—आप इस समय बड़ी परेशानी से गुजर रहे हैं । इस प्रकार उस युवक का विश्वास अर्जित करने में दोनों व्यक्ति सफल हो गये । उस युवक की मानसिक चिन्ताओं से मुक्ति दिलाने की युक्ति सुझाते हुए उन दोनों अजनबियों ने उससे कहा कि वह अपने पास का रुपया पैसा और सामान उनको सौंप दे और एक फर्लांग बिना पीछे मुड़कर देखे वह पैदल लौटे । आज देश में मनोवैज्ञानिक चिकित्सकों और ज्योतिषियों की इतनी सेवाएँ उपलब्ध नहीं है कि राह चलते लोगों को परेशानियों से बचाने के लिए प्रयत्न करें । फिर मानसिक चिन्ताओं से मुक्त होने के लिए एक फर्लांग तक बिना पीछे मुड़े जाने और पैदल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही लौटने, इस उपाय पर जरा भी ध्यान दिया होता तो वह ठगों के चक्कर में क्यों पड़ता ? उसने उन ज्योतिषियों की बात को सही मानकर अपने हाथ की घड़ी, फाउण्टेन पेन और मनीबैग उनको सौंप दिया । जब वह पैदल लौटकर उसी स्थान पर आया तो उसे उन दोनों व्यक्तियों के दर्शन न हुए और न उसका सामान ही वहाँ था । इस प्रकार लगभग दो सौ रुपये गँवा कर अपनी मानसिक परेशानियों को घटाया नहीं वरन् बढ़ा लिया ।

अन्धविश्वास की नित्य होने वाली घटनाओं से कितने ही मूढ़ व्यक्तियों को हानि उठानी पड़ती है, फिर भी लोग देखकर या सुनकर उनसे बचने का प्रयास नहीं करते ।

अन्धविश्वास से बचने में ही भलाई

मंगलवार का दिन है छिपकली शरीर पर गिर गई—कोई आफत आयेगी । यात्रा के लिये निकले थे कुत्ते ने कान फडफड़ा दिया—न जाने क्या हो जायेगा ? जीवित लौटेंगे नहीं ऐसा लगता है । छींक हो गई, बिल्ली ने रास्ता काट दिया । तेली अथवा काना ब्राह्मण मिल गया, बस शकुन अशकुन हो गया—इन मूढ़-मान्यताओं का नाम अन्धविश्वास है । भारतीय समाज की इस दकियानूसी विचारधारा को पागलपन ही कहना ठीक होगा ।

"सोम और शनिवार को पूर्व की ओर न चलें । मंगलवार, बुधवार उत्तर के लिये अनिष्टकारक हैं । वृहस्पतिवार को दक्षिण दिशा न जायें, रविवार व शुक्रवार को जो पश्चिम की दिशा जाते हैं, हानि होती और वे दुःख पाते हैं ।" हमारे यहाँ की इस अन्धमान्यता ने लोगों का बड़ा अहित किया है । सैकड़ों घटनाएँ ऐसी घटती रहती हैं, जब इन अन्धविश्वासों के कारण लोगों को भारी हानि उठानी पड़ती है, अनेक अच्छे संयोगों से वंचित रह जाना पड़ता है ।

दिन-रात, गिरना, उठना, चलना, कान फड़फड़ाना यह सब प्रकृति एवं जीवों की स्वाभाविक क्रियाएँ हैं, इन्हें शकुन या अपशकुन का माध्यम बनाया जाये तो फिर पेड़ गिरना, हवा चलना, भूख लगना, कपड़ा पहनना इन सब क्रियाओं में भी शकुन-अपशकुन का विचार चाहिए । दरअसल यह मनगढ़न्त बातें बिल्कुल निराधार और मनोबल गिराने वाली हैं । लगता है कि किसी ने अपने विरोधी विद्वेषी को इस तरह मनोवैज्ञानिक ढंग से हतोत्साहित किया होगा और पीछे लोगों ने उसका अन्धानुकरण कर लिया होगा ।

बुद्धि और विवेक से सोचें तो इन बातों में न सत्य जान पड़ेगा, न कोई तथ्य दिखाई देगा । यदि कुछ सच होता तो यह बात सृष्टि के प्रत्येक प्राणी और जीवों पर समान रूप से लागू होती । पर देखा यह गया है कि जिन्हें हम अशुभ मानते हैं, इंग्लैण्ड और यूरोपवासी शुभ मानते हैं । हमारे यहाँ शुक्रवार अच्छा नहीं माना जाता पर वहाँ इस दिन को सर्वमंगल कारक मानते हैं । यहाँ १३ की संख्या अशुभ मानी जाती है, कुछ देशों में इसे शुभ संख्या मानते हैं । न उससे यहाँ कुछ बनता है, न वहाँ बिगड़ता है । यह सब मन की कल्पनाएँ एवं थोथी मान्यताएँ हैं, न इनका कोई बौद्धिक आधार है न वैज्ञानिक । जीवन-प्रवाह में इनके कारण बाधाएँ एवं असफलताएँ ही आती हैं ।

कुछ धूर्तों ने देखा कि भारतीय इतने भोले-भाले हैं कि वे इन छोटी-छोटी बातों पर भी तर्क नहीं करते तो उन्होंने लोगों को ठगना और उनकी अन्ध-श्रद्धा का लाभ उठाना आरम्भ किया ।

एक सन्तोषी माता के पुजारी ने देखा मुझे कोई नहीं पूछता । उनके पास प्रजा को मार्ग-दर्शन के लिये न तो बुद्धि ही थी न चरित्र । इसलिये सच्चाई से उनकी प्रतिष्ठा कौन करता ? दूसरे दिन कई लोगों के नाम पोस्टकार्ड लिख कर भेजे और सौ मन्त्र सन्तोषी माता के लिख कर दूसरों को भेजने को कहा । मन्त्र भी लिख दिया और फलित भी । कि जो कोई इस मन्त्र के दस कार्ड लिखकर न भेजेगा, उसका अनिष्ट हो जायेगा । हमने स्वयं ५-१० पोस्टकार्ड फाड़ कर चूल्हे में झोंक दिये तब भी सब अच्छे हैं कोई दुर्घटना तक नहीं हुई पर मूर्खों को क्या कहें ? आज सर्वत्र सन्तोषी माता का खूब प्रचार है, उसके पुजारियों के खूब गुलछर्रे उड़ रहे हैं ।

इस तरह सैकड़ों धूर्त सिद्ध बने, सैकड़ों ओझा, पीरऔलिया । किसी ने किसी तरह, तात्पर्य यह कि यह सब अफवाहें निराधार होती हैं, तो भी हम हर किसी की बात सच मानने लगते हैं । इस अन्धविश्वास के कारण प्रतिदिन सैकड़ों घर जलते, हत्याएँ होतीं, अंग-भंग होते और पाप एवं दुष्कर्म फलते-फूलते हैं । हम हैं जो समझदार होते हुए भी न उनसे बचते ही हैं, न प्रतिवाद करने को ही तैयार होते हैं ।

सजीव गुड़िया का विवाह

घटना बुलन्दशहर की है । वहाँ के श्री चन्दूमल सेठ काफी पैसे वाले हैं । उनकी लड़की ने गुड्डे-गुड़िया का ब्याह रचाया । उसकी गुड़िया थी और सेठ जी के एक मित्र की बच्ची का गुड्डा । पैसा पास में हो पर उसका सही और सार्थक उपयोग करने की सद्बुद्धि न हो तो उसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए । काम तो बच्चों का था किन्तु वह बड़ों का भी मनोरंजन का साधन बन गया ।

बाकायदे टीका चढ़ा । तिथि निश्चित की गई । तेल, हल्दी, मेंहदी, महावर सब हुआ । इधर भी और उधर भी सारे पड़ौसी तथा मिलने वाले आमन्त्रित किये गये । बारात चढ़ी और बढ़िया दावत दी गई । केवल जेवर लिली ज्वेलरी के चढ़ाये गये । इधर से भी दहेज में सब सामान छोटा-छोटा ही दिया गया । फिर भी कुल मिलाकर (दोनों ओर का) लगभग दो हजार रुपया व्यय हुआ ।

चन्दूलाल जी की कोठी के एक हिस्से में श्री ज्ञानचन्द सिन्हा रहते थे । वे हिन्दी के प्रोफेसर थे तथा बड़े ही विचारशील व्यक्ति थे, पर दुर्भाग्य से उनके कोई सन्तान नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थी । उनकी पत्नी बड़ी भावुक थीं । इस प्रकार का आयोजन देखा तो उनके मन में भी कुछ सोया हुआ जाग पड़ा । पतिदेव से बोलीं—अपने कोई बाल-बच्चा तो नहीं । क्यों न हम भी गुड्डे-गुड़िया का ब्याह करके ही माता-पिता बनकर कुछ करने का अरमान पूरा करें ?

तब श्री ज्ञानचन्द जी ने उन्हें समझाया कि "ये तो सरासर पैसे की बरबादी है । धन का उपयोग सदा सार्थक कामों में ही करना चाहिए । तुम्हारे यदि सन्तान नहीं है तो ऐसी सन्तानों की भी कमी नहीं जिनके ऊपर माता-पिता का साया नहीं है । निर्जीव गुड्डों के ब्याह में पैसा खर्च करने से तो अच्छा है कि हम ऐसे ही किसी अनाथ बच्चे का ब्याह कर दें । जहाँ दो हजार वहाँ चार हजार । काम तो विवेकपूर्ण होगा ।"

पत्नी को बात जँच गयी । अब वे सदा इसी दिशा में सोचने लगीं । कुछ दिन बाद उनके घर एक लड़की आयी । मुहल्ले में ही सोमनाथ जी रहते थे । जिनका देहान्त इसी वर्ष एक बस दुर्घटना में हो गया था । परिवार में पत्नी थीं पाँच बच्चे थे जो सभी अभी शिक्षा प्राप्त कर रहे थे । सबसे बड़ी ये कन्या थी—शोभा ! अब जीविका की समस्या सामने थी, इसीलिये वह आयी थी कि कहीं नौकरी लगवा दें ज्ञानचन्द्रजी, वह १७ वर्षीया युवती बी. ए. प्रीवियस की छात्रा थी । ज्ञानचन्द्र जी की पत्नी को उसके प्रति बड़ी सहानुभूति उमड़ी वे शोभा की माँ से भी मिलीं तब मालूम पड़ा कि शोभा का विवाह भी तय हो गया है पर अब उसके पिताजी की मृत्यु हो जाने से अच्छी खातिर और शोभा न हो सकने की आशंका से लड़के वाले सम्बन्ध करने में आना-कानी कर रहे हैं ।

घर आकर उन्होंने ज्ञानचन्द्र जी से सारी बात बतायी । दोनों के मन में एक ही बात एक साथ उठी । पर फूटी ज्ञान के मुँह से पहले 'लो भगवान ने तुम्हारी इच्छा पूरी कर दी ।'

और शीला उस रात भर न जाने कौन-कौन से मधुर स्वप्नों में खोयी रही । दूसरे दिन वह शोभा के घर गयी । आत्मभाव नित्य प्रति बढ़ता ही गया । तब एक दिन शीला ने शोभा की माँ से अपना मन्तव्य प्रगट कर दिया । बहिन शोभा के ब्याह की चिन्ता मत करना अब आप । वह आज से हमारी बेटी है । लड़के वालों को आप कहला दें कि वे ब्याह करें यहीं । जो कुछ कहा गया था सब कुछ दिया जायेगा ।

शोभा की माँ अश्रुपूरित नेत्रों से और सभी परिचित लोग विस्मय विस्फारित दृष्टि से देखते रहे और विवाह का सारा व्यय श्री ज्ञानचन्द्र जी ने उठाया । विदा के समय शीला को लगा जैसे वह अपनी बेटी को ही विदा कर रही हो । घर आने पर ज्ञानचन्द्र ने चुटकी काटी 'यह सजीव गुड़िया का ब्याह ही अच्छा रहा न ?' शीला अपने पूर्व के अज्ञान पर शरमा गयी ।

यह बुद्धि रचनात्मक कार्यों में लगती तो···

रीवा म. प्र. का समाचार है एक गाँव में एक बैल के निधन पर उसके किसान ने उसका विधिवत दाह-संस्कार किया और उसमें कई सौ रुपये व्यय किये । बैल को गुलाल लगाया गया, आरती उतारी गयी और फिर शवयात्रा निकली, जिसमें ग्रामवासियों ने भाग लिया । शवयात्रा के जुलूस ने 'जय बैल', 'जय बैल' के नारे भी लगाये ।

जहाँ तक पशु-पक्षियों के प्रति दया का प्रश्न है, उन्हें सुरक्षा की सभी सुविधाएँ दी ही जानी चाहिये । उनके लिये अच्छे चारे का प्रबन्ध, नियत समय से अधिक काम न लेना, बीमार जानवरों को विश्राम और चिकित्सा की व्यवस्था करना इनका औचित्य समझ में आता है किन्तु जिस समाज पर दहेज, मृतकभोज, देवी-देवताओं की ढकोसले की पूजा का अर्थ भार पहले ही लदा हो, इस प्रकार के निरर्थक गल-सपाड़ों में समय, शक्ति और धन बरबाद करने का विचार करने का क्या औचित्य हो सकता है । बुद्धू किसान ने जितने रुपये इस बेकार के काम में व्यय किये, उसमें एक अच्छा बछड़ा खरीदा जा सकता था, एक गाय खरीद कर उसकी अच्छी सेवा की जा सकती थी और प्राणधारी के प्रति प्रेम का आदर्श उपस्थित किया जा सकता था । कोरी सनक में अर्थ अपव्यय को भला कौन बुद्धिमानी कहेगा ।

और सुनिये भरवा थाने के अन्तर्गत ग्राम—बीजापुर के निवासी पदुमनारायण ने एक तोते और तोती का विवाह शानदार ढंग से सम्पन्न किया । बाजे-गाजे के साथ भाँवरें डाली गयीं, एक व्यक्ति ने तोती को पकड़ा और दूसरे ने तोते को पकड़ कर भाँवरें फिराईं । ५० बैलगाड़ियों की बारात निकाली गयी । लगभग २५० व्यक्तियों ने भोजन किया और आतिशबाजी छुटायी गयी । विवाहोत्सव में लगभग डेढ़ हजार रुपये व्यय हुआ ।

इतना धन केवल हँसी-हँसी, स्वाँग-स्वाँग में ही व्यय होकर बह गया । डेढ़ हजार रुपयों से गाँव में एक सुन्दर पुस्तकालय खोल दिया जाता तो उससे भावी पीढ़ी का नैतिक, बौद्धिक और चारित्रिक मार्ग-दर्शन होता । बुरे कामों में समय गँवाने की अपेक्षा लोग विचारों की साधना स्वाध्याय में समय लगाते तो उनकी व्यक्तिगत उन्नति भी होती, निरर्थक बैठने से जो सामाजिक वातावरण दूषित होता है, उससे बचाव होता पर इन भले-मानसों ने तो और भी वातावरण को खराब किया । गलत परम्पराएँ, गलत मार्गदर्शन करती हैं, उससे लोगों की मनोवृत्ति ऐसे ही अनुपयोगी कामों की ओर जाती है ।

प्रसन्नता के अवसर आते हैं तो उस समय अपनी उदारता का द्वार खुल जाता है । उदार होना बुरी बात नहीं वह तो मनुष्य का धर्म है पर उदारता का भी स्वाँग होने लगे तो क्या उसका कुछ महत्त्व रह जायेगा । उदारता का अर्थ जरूरतमंदों की सेवा करना, सहयोग देना, सहानुभूति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्त करना है पर जब इनमें से कुछ भी न हो केवल शेखीखोरी व्यक्त की गई हो तो मनुष्य की बुद्धि पर गुस्सा आता है, क्यों इन्हें इतनी उपयोगी वस्तु प्रदान की गई ।

अधनताल के सेठ रामेश्वरदयाल का पालतू लंगूर कहीं भाग गया । लंगूर की वापसी के लिये सेठ जी ने बीसियों आदमी चारों दिशाओं में भेजे । दरवाजे पर भागवत सप्ताह और दुर्गा-सप्तशती का पाठ बैठा दिया । इन कामों में ही उनके तीन-चार सौ रुपये व्यय हो गये ।

सौभाग्य कहिये या कुछ और बन्दर मिल गया, इस प्रसन्नता में सेठ जी ने सारे गाँव को भोज दिया और रास कराया । अनुमान है सब मिलाकर ४-५ हजार रुपये एक बन्दर के पीछे व्यय हो गये, जबकि सारा बिहार, उत्तरप्रदेश और मध्य प्रदेश के कई जिले भूख से मर रहे हैं । सेठ जी ने बढ़ी हुई कमाई से गल्ला खरीदकर सूखा-पीड़ितों को भेज दिया होता तो उससे कितनों का भला होता और उनकी उदारता भी सार्थक होती ।

जो लोग ऐसे ऊल-जलूल के कामों में पैसा, समय और शक्ति व्यय करते हैं, उनसे तो पशु-पक्षी अच्छे जो बेचारे अव्यवस्था तो नहीं फैलाते ।

चोर—'जिन्न' बन बैठा

घटना छत्तीसगढ़ की है । सन् १९६५ के जुलाई का महीना था । धमधा के निकट ननकुट्टी ग्राम में कुछ लोगों द्वारा यह अफवाह फैलायी गयी कि यहाँ एक जिन्न ने दो स्त्रियों को बेहोश करके उनके साथ बलात्कार किया है । फिर क्या था ? अफवाह बिजली के समान फैलना आरम्भ हुआ और फैलते-फैलते दुर्ग के गंजपारा स्थान में आकर उसने अपना विस्तृत रूप धारण किया ।

अफवाह के लगभग १० दिन बाद गंजपारा की कुछ महिलाएँ रात में शौच हेतु बाहर गयीं । उन्हें एक पीपल के वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति बैठा दिखायी दिया जो वहीं का नामी चोर था और जो पुलिस के डर से छिप-छिपकर अपना जीवन-यापन कर रहा था । 'ननकुट्टी वाला जिन्न' यहाँ भी आ गया—यह समझकर औरतों ने जोर का चिल्लाना आरम्भ किया और अपने प्राण रक्षा की दुहाई दी । शोर सुनते ही लोग वहाँ आ पहुँचे पर अब तो जिन्न वहाँ से गायब था । गंजपारा में जिन्न देखे जाने की अफवाह धीरे-धीरे पूरे शहर में फैल गई । पूरे शहर का वातावरण एक दो दिन के अन्दर ही पूरा जिन्नमय बन गया ।

एक पान की दुकान से लेकर सरकारी कार्यालयों तक और सब्जी मण्डी से लेकर विद्यालयों तक बस केवल जिन्न की ही चर्चा । हर गली, हर चौराहे और हर सड़क पर जहाँ देखिये दो चार आदमी एकत्र होकर उसी जिन्न की चर्चा में लगे हुए हैं । बच्चे और स्त्रियों की बात तो छोड़िये पढ़े-लिखे और समझदार कहलाने वाले व्यक्तियों में भी हर समय वही बात चलने लगी । लोग इस तरह से बात करने लगे मानो उन्होंने सब कुछ घटना स्वयं अपनी आँखों देखी हो । कुछ लोगों ने तो बात को यहाँ तक बढ़ा दिया कि अनेक ऐसी औरतें जिन्हें जिन्न ने परेशान किया, अस्पताल में बेहोश पड़ी हुई हैं । अस्पताल और पुलिस स्टेशन के फोन की घण्टी लगातार बजने लगी है और हर बार फोन पर यही जानकारी माँगी जाने लगी कि बेहोश पड़ी हुई स्त्रियों की क्या स्थिति है ? थाने और अस्पताल के कर्मचारियों ने लोगों को समझाने का बहुत कुछ प्रयास किया कि सारे समाचार मिथ्या हैं । कोई भी इस तरह की स्त्री पुलिस या अस्पताल में नहीं आयी है । फिर भी चर्चा और अफवाह घटने के बजाय बढ़ती ही रहीं ।

लोगों ने तीन-तीन रात जगकर अपने घर की औरतों की रखवाली की । इस भयावह वातावरण से वे इतने भयभीत हो उठे कि कहीं जिन्न उन लोगों की औरतों को ही न उड़ा ले जाय । इस अन्धविश्वास भरी घटना का लाभ फकीरों, सन्त-साधुओं और बाजीगरों ने खूब उठाया । उन्होंने अपने जन्तर-मन्तर सँभाले और महिलाओं की रक्षा हेतु उन्हें झाड़ना, फूँकना, ताबीज बनाना और भभूत आदि देना प्रारम्भ कर दिया । उनका कहना था कि इससे जिन्न का आक्रमण नहीं हो सकता । लोगों ने अपनी रक्षा हेतु आँखें मूँद-मूँद कर धन बहाया और कमाया उन्होंने जिनके पास फितरत भरी बुद्धि थी । अवसर का लाभ उठाकर एक दूकानदार ने भी खूब कमाया । उसने अपनी एक बोरा हल्दी ही पुड़िया बना-बनाकर महँगे दर पर लोगों को बेच डाली । उसने कहा—'इसमें एक बाबा ने मन्त्र फूँक दिया है और इसे जो पास में रखेगा जिन्न उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकता ।'

जिन्न की गर्म अफवाह ने एक पुलिस सिपाही को भी लपेट में लेकर उसकी नौकरी ही ले ली । वह कलेक्टर के बँगले पर ड्यूटी कर रहा था । उसने अफवाह उड़ाई कि किसी भूत ने पटक-पटककर खूब उसे पीटा है । सच्चाई का पता लगाया गया तो असलियत साफ हुई । अफवाह फैलाने और ड्यूटी के समय सोये रहने के अपराध में उक्त सिपाही को एस. पी. श्री धारकर ने नौकरी से बरखास्त कर दिया ।

बड़े प्रयत्न के बाद पुलिस ने उस नामी चोर को पकड़ लिया जो उस रात पीपल के पेड़ के नीचे खड़ा था और जिसे देखकर जिन्न की अफवाह फैली थी । पूछने पर चोर ने इस बात को स्वीकार भी किया । पुलिस ने यह ऐलान किया कि उक्त जिन्न पकड़ लिया गया है और अब किसी को तनिक भी डरने की आवश्यकता नहीं है । हजारों की भीड़ जिन्न को देखने के लिए पुलिस स्टेशन और उसके आस-पास एकत्र हो गई । पुलिस अधिकारियों ने लोगों को यह बार-बार समझाया कि वह जिन्न नहीं वरन् चलता-फिरता आदमी है । परन्तु लोग भला इतनी जल्दी विश्वास कैसे कर लेते ? भीड़ जिन्न देखने के लिए उमड़ती ही जा रही थी । अन्त में पुलिस अधिकारियों ने जनता का भ्रम दूर करने के लिए चोर को पुलिस की एक ऊँची गाड़ी पर लाकर खड़ा किया और सबको दिखलाया भी । फिर भी बहुतों का भ्रम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूर न हुआ और घर वापस लौटते समय लोग आपस में काना-फूँसी करते ही रहे कि असली जिन्न को कहीं और छिपा दिया गया है और यह तो कोई दूसरा नकली दिखलाया गया है ।

भूत-पलीत को ही यदि सही मान लिया जाय तो वह कोई ऐसी शक्तिशाली सत्ता नहीं जो मनुष्य का प्राण ले लेवे । परन्तु हाँ ! भय का भूत अवश्य ऐसा है जिसमें समझदारी और विवकेशीलता से यदि काम न किया गया तो ऐसे ही नुकसान सहने पड़ते हैं और न जाने क्या से क्या भोगना पड़ता है ।

असंख्यों अन्धविश्वासी और अविवेकी लोग इसी प्रकार भ्रमग्रस्त होकर आये दिन ऐसी ही विडम्बनाओं के शिकार होते रहते हैं । भगवान न जाने उन्हें कब सुबुद्धि देगा ।

इन मूढ़ताओं का अन्त होना ही चाहिए

यों मूर्खता प्रत्येक क्षेत्र में बुरी है पर धार्मिक क्षेत्र में फैली हुई भ्रष्टता को तो सबसे बुरे किस्म की माना जाना चाहिए । धर्म का उद्देश्य मनुष्य को अधिक पवित्र एवं सुसंस्कृत बनाना है । इसी प्रयोजन के लिए उसका इतना विशालकाय ढाँचा खड़ा किया गया था । पर जब उसी क्षेत्र में ऐसी मूढ़ताएँ पनपें जिससे मनुष्य अवनति के गर्त में गिरने लगे और कुकर्म करने लगे तो यह निस्सन्देह बड़ी चिन्ता की बात है ।

सिद्धि और चमत्कारों के नाम पर जो आलौकिकता का कौतूहल खड़ा किया जाता है उसके पीछे सत्य का रंच मात्र में स्थान नहीं होता वरन् सारा का सारा प्रपंच ही भरा रहता है । इस तथ्य को जब तक भारतीय जनता हृदयंगम न करेगी तब तक इस मूढ़ता का दुष्परिणाम भी उसे ही भुगतना पड़ेगा । इस सन्दर्भ में कुछ खेदजनक समाचार नीचे पढ़िए ।

करामाती बालक गिरफ्तार

मकराना (राजस्थान) । कुछ मक्कार व्यक्तियों ने यहाँ कुछ मील दूर तक सात वर्ष के बालक को रँगकर और तरह-तरह से प्रचार करके सिद्ध योगी प्रसिद्ध कर दिया । भभूत देकर अन्धों को आँखें देना, बड़े-बड़े रोग दूर कर देना, भाग्य बता देना आदि ऐसी विलक्षणता पूर्ण विशेषताओं के मनगढ़न्त किस्से गढ़कर आस-पास के लोगों को सुनाने शुरू कर दिये । लोगों में यह विश्वास पैदा कर दिया कि उस बालक सिद्ध के जो दर्शन कर लेगा अथवा उसकी दी भभूत को प्राप्त कर लेगा उसके सारे दुःख दूर हो जायेंगे ।

फिर क्या था अन्धविश्वासी ग्रामीण जनता चारों ओर से उमड़ने लगी और 'सिद्ध बालक' के स्थान पर इतनी भीड़ होने लगी कि पुलिस को हस्तक्षेप करना पड़ा और उस 'चमत्कारी बालक' को हिरासत में लेना पड़ा ।

सभी जानते हैं कि इसी प्रकार की एक घटना पिछले वर्षों उड़ीसा प्रान्त के अंगुलिग्राम में भी हुई थी, जहाँ अन्धविश्वासी भीड़ इतनी बढ़ी थी कि मलमूत्र की सफाई न हो सकने पर भयानक हैजा फैला था और हजारों आदमी बेमौत मर गये थे ।

मनुष्यों को चमत्कारी या करामाती सिद्ध करने का धन्धा कुछ धूर्त लोग करते हैं और वे मनचाहे व्यक्ति को सिद्ध पुरुष घोषित करके उसकी आड़ में अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं । जनता को ऐसे लोगों से सावधान रहने की आवश्यकता है ।

भैंसों का बलिदान—'यह भी एक पुन्य'

पौड़ी (गढ़वाल) । देवी-देवताओं की पूजा की निर्मम प्रथा के अनुसार हर साल सैकड़ों वागियों (भैंसों) का बलिदान होता है । इस वर्ष भी लगभग १०० वागियों को भेंट चढ़ा दिया गया ।

वैसे तो यह अन्धविश्वासपूर्ण प्रथा ही अपने में बुरी है, फिर उससे बुरी वह रीति है जिसके अनुसार इनकी बलि दी जाती है ।

अन्धविश्वासी गढ़वाली भैंसों को खेतों में इकट्ठा करके उन्हें शराब पिलाते हैं और फिर डण्डे और खुखरी (तलवार) आदि हथियारों से उन्हें मार-मार कर भगाते हैं । यह मारना और भगाना तब तक जारी रहता है जब तक वे अबोध-अभागे पशु गिर कर मर नहीं जाते इसी निर्मम पशु-हत्या को वे देवताओं की बलि कहते हैं ।

अकेला गढ़वाल ही नहीं कुमाऊँ आदि अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में भी यह प्रथा प्रचलित है ।

देवता ने बकरा नहीं खाया

खोकरा कलाँ (मुगेली) । देवता पर बकरा चढ़ाने के अवसर पर इस बार पण्डाजी ने बताया कि देवता बलि नहीं चाहते । जो करेगा उसी का देवता अनिष्ट करेंगे । पूजा करने वालों ने पण्डाजी के कथनानुसार बकरा लौटा दिया और नारियल आदि से पूजा की । पण्डाजी की इस सूझ-बूझ की सभी धर्मप्रेमियों ने सराहना की है और अन्यत्र के पण्डा लोगों से भी ऐसी ही धर्मबुद्धि का परिचय देने की प्रार्थना की है ।

ये बाबा लोग और उनके भक्तगण

कानपुर, भोगनीपुर थाने के अन्तर्गत नीगोही ग्राम में ग्रामीणों के दो दलों में भयानक संघर्ष हो गया । जिसके परिणामस्वरूप बहुत से लोग घायल हुए ।

घटना इस प्रकार बतायी जाती है कि उक्त ग्राम में एक मंदिर है, जिसमें एक में बाबाजी अपना अधिकार जमाये बैठे थे । कुछ समय बाद हत्या के एक अभियोग में बाबाजी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को कैद हो गई । अनुपस्थिति में एक अन्य बाबाजी ने उस मंदिर पर अपना अधिकार जमाया ।

किन्तु जब अभी हाल में पुराने बाबाजी जेल से छूट कर आये तो उन्होंने पुन: नये बाबाजी से मंदिर का कब्जा माँगा । कब्जा देने से इन्कार करने पर नये और पुराने बाबा में विवाद हो गया । वह विवाद यहाँ तक बढ़ गया कि गाँव में नये व पुराने बाबा के अलग-अलग दो दल बन गये जिन्होंने लाठियों के भयानक संघर्ष से अपनी 'गुरुभक्ति' का परिचय दिया ।

बताया जाता है कि क्षेत्रीय पुलिस के हस्तक्षेप करने पर भक्त लोग उनसे भी भिड़ गये, जिसके फलस्वरूप आत्मरक्षा के लिये पुलिस को हवाई फायर तक करने पड़े हैं ।

बालक की देवी को भेंट दी गयी

रायबरेली, लालगंज थाने के ग्राम शाहपुर में एक अबोध बालक अन्धविश्वास की भेंट चढ़ा दिया गया ।

समाचार मिला है कि उक्त गाँव के एक परिवार के दो व्यक्ति कहीं बन्दी हैं । उनकी कुशल और छुटकारे के लिये उक्त अन्धविश्वासी परिवार ने गाँव के निवासी हनुमान यादव के पाँच वर्षीय बालक को चुराकर मनौती के रूप में देवी को बलि दे दिया ।

ग्रामवासियों का कहना है कि इसी प्रकार यह परिवार पहले भी दो हरिजन बच्चों को भेंट चढ़ाने की असफल कुचेष्टा कर चुका है ।

धन्य है अन्धविश्वास

बिसाई (म. प्र.), यहाँ अन्धविश्वास की एक घटना देखकर ऐसा मालूम होता है कि जैसे अन्धविश्वासों की पूजा करने के लिये हिन्दुस्तान की जनता उधार खाये फिरती है ।

घटना का विवरण इस प्रकार है कि रामसहाय नामक एक स्थानीय किसान नवयुवक ने एक दिन स्वयं को साधु घोषित करके कहा कि उसे भर्तृहरि के दर्शन हो गये हैं । जो उसे एक ऐसा वरदान दे गये हैं जिससे वह अन्धों को आँखें, बाझों को बच्चे और सूखे कुओं को पानी दे सकता है ।

बस फिर क्या था लोगों ने उसकी पूजा और प्रचार करना शुरू कर दिया जिसके फलस्वरूप उसके पास सैकड़ों आदमियों की भीड़ हर समय लगी रहने लगी, लोग इक्कों, ताँगों और बसों पर आने लगे । फल-फूल और सैकड़ों रुपयों का चढ़ावा प्रतिदिन चढ़ने लगा । किन्तु किसी ने यह पता लगाना आवश्यक न समझा कि वह ऐसा कर भी सकता है या नहीं ? कुछ समझदार समाज-सुधारक वहाँ गये और उन्होंने वास्तविकता का पता लगाकर जनता को उस ढोंग का भण्डाफोड़ किया । फलस्वरूप उस पाखण्ड का अन्त हो गया ।

अन्धविश्वास के प्रेरित मूर्खतापूर्ण कृत्य

अन्धविश्वास किसी समाज की मानसिक एवं नैतिक दुर्बलता का चिह्न है । बिना विचारे, बिना सोचे लोग किसी के भी बहकावे में आ जावें, किसी भी प्रथा का अनुसरण करने लगें तो यह समझना चाहिए कि बुद्धि और कर्तृत्व पर अपना अधिकार न रहने देकर मनुष्य ने उसे उन लोगों के हाथों बेच दिया, जो उससे भी गये-बीते हैं । हमारे अगणित देशवासी अशिक्षा के कारण कहिए अथवा बौद्धिक पराधीनता के कारण समझिए, इसी दयनीय स्थिति में पड़े हुए हैं । आवश्यकता इस बात की है कि यदि अशिक्षा हटने में देर लगे तो भी इस बौद्धिक गुलामी को हटाने के लिए और जो उचित है उसी को ग्रहण करने की विचारशीलता का जनमानस में प्रसार किया जाय ।

गंगा को प्रसन्न करने को पुत्री की बलि

महाल गाँव । (भण्डारा) अपनी लाड़ली बेटी की बलि देकर समूचे गाँव को बाढ़ के विनाश से बचा लेने की यहाँ के एक दम्पत्ति की तत्परता ने समूचे क्षेत्र में सनसनी फैला दी है ।

इस गाँव की, जिसके लिए हर साल बाढ़ के कारण विनाश का खतरा पैदा हो जाता है, एक स्त्री को बताया जाता है कि 'गंगा' मैया ने स्वप्न में दर्शन देकर कहा कि यदि गाँव को बाढ़ के विनाश से बचाना है तो वह अपनी तीन वर्षीया पुत्री उस (गंगा नदी) को सौंप दे ।

स्त्री ने यह सपना अपने पति को बताया और उसने समूचे गाँव को बताया । कहीं 'गंगा मैया' का सपना सच न हो जाये इस डर से गाँव के लोगों ने दम्पत्ति को राजी किया कि वह रक्षाबन्धन के दिन अपनी पुत्री को बलि के रूप में नदी में प्रवाहित कर दें । इसकी खबर आस-पास के गाँवों में फैल गयी और हजारों आदमी उस दिन नदी तट पर जमा हो गये ।

खबर मिलते ही पुलिस भी पहुँच गयी और उसने अपनी होशियारी से बालिका की बलि रोक दी । पुलिस ने दम्पत्ति और गाँव वालों को समझाया कि बालिका के बदले ११ बकरों की बलि देकर भी 'गंगा मैया' को प्रसन्न किया जा सकता है । सबकी समझ में यह बात आ गई और गाँव के लोग आपस में चन्दा कर ११ बकरे लाये और उन्हें 'गंगा' में बहा दिया गया । मगर वे बकरे तैरकर सकुशल किनारे पहुँच गये । पर बलि देने का सन्तोष लोगों को हो गया ।

गणेश जी का अवतार

जबलपुर, सिहोरा तहसील के एक गाँव बुड़हरा में एक महिला ने हाथी के सिर वाले बच्चे को जन्म दिया और ग्रामीणों को इस 'अवतार' की खबर मिली तो वे बिहारी लाल पटेल नामक उस व्यक्ति के घर पहुँचे और आधुनिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गणेश की पूजा में रुपये, नारियल, फूल और मिठाइयाँ चढ़ाने लगे ।

बलिदान से बचकर कानून के फन्दे में

दिल्ली, मंडकाफ रोड स्थित एक मन्दिर में जब कृष्ण-जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में भजन-कीर्तन चल रहा था, तब अचानक रक्त से लथपथ एक व्यक्ति ने मंदिर में प्रवेश किया, आते ही देवता के चरणों पर गिर पड़ा ।

भजन और घण्टियों के बीच वह पड़ा-पड़ा दोहराता रहा—'हाँ, मैंने ही यह सब किया था ।' बाद में उसे उठा कर अस्पताल में ले जाया गया ।

पुलिस के अनुसार मंदिर के बाहर चबूतरे पर एक रक्तरंजित चाकू भी मिला है । घायल व्यक्ति की जेब में एक पत्र भी मिला बताते हैं जिसमें उसने स्वीकार किया है कि मैं अपनी बलि देना चाहता हूँ ।

व्यक्ति को अभी तक पहचाना नहीं जा सका, पर उसके विरुद्ध आत्महत्या की चेष्टा का अभियोग दर्ज कर लिया गया है ।

सुसराल के तानों से बचने के लिए

अलीगढ़, सासनी पुलिस ने रघुनियाँ गाँव की एक शकुन्तला नामक महिला को दूसरे का नवजात शिशु चुराने के अपराध में गिरफ्तार किया है ।

बताते हैं कि विवाह होने के बाद कई वर्ष तक उपर्युक्त महिला के सन्तान न हुई तो उसकी ससुराल वाले उसे दिन-रात कोसने लगे और कटु शब्द कहने लगे । तरह-तरह से तिरस्कृत होने पर वह अपने मैके चली आई थी ।

मैके में उसने अवसर पाकर एक ब्राह्मण का नवजात शिशु चुरा लिया और घोषित कर दिया उसने अस्पताल में बच्चा जना है । भेद खुल जाने पर वह पकड़ी गई । सन्तान न होने पर नारी का तिरस्कार करने वाले समाज में नासमझ स्त्रियाँ ऐसे ही निन्द्य कर्म करने लगें, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

घूँघट का अभिशाप

कानपुर, घूँघट वाली एक महिला को स्टेशन से गायब कर दिये जाने के एक समाचार ने पर्दाप्रथा के भयंकर दुष्परिणामों को सामने ला दिया है ।

घटनाक्रम के अनुसार अनवरगंज स्टेशन पर आगरे से आने वाला एक व्यक्ति अपनी नव-विवाहिता पत्नी के साथ उतरा । वह सामान उतार रहा था कि उसी डिब्बे से उतरे एक दूसरे 'सज्जन' ने कहा 'चलो' और वधू उसके पीछे चल दी तथा वह स्टेशन से बाहर आकर पत्नी को लेकर गायब हो गया ।

सामान उतारने के बाद महाशयजी ने अपनी देवीजी को गायब पाया तो वे बहुत परेशान हुए । अन्ततः पुलिस में रिपोर्ट लिखाई । किन्तु दोनों का कोई पता नहीं चल सका ।

शीतला माता

बाँदा जिले का छोटा-सा कस्बा बाँदा इस समय शीतला माता की आराधना में लगा हुआ है । स्त्रियाँ, पुरुष बच्चों को गोद में लिए चेचक से मुक्ति देने की प्रार्थना कर रहे हैं । वे मंदिर में शीतला देवी को खुश करने के लिए बकरे व अन्य वस्तुएँ भेंट कर रहे हैं ।

हनुमानजी का जन्म

चण्डीगढ़, लुधियाना से प्राप्त एक सूचना के अनुसार वहाँ पुराने बाजार में तारघर के एक कर्मचारी की धर्मपत्नी ने एक अद्‌भुत बालक को जन्म दिया है । बच्चे के शरीर पर लम्बे-लम्बे बाल और पीठ की ओर पूँछ जैसा माँस का लोथड़ा लटक रहा है । उसके माथे पर दो बड़ी-बड़ी आँखें और आँखों के ऊपर दो अजीब किस्म के गड्ढे हैं ।

बालक के जन्म की सूचना मिलते ही कर्मचारी के मकान पर लोगों को भीड़ लग गयी । लोग 'बजरंग बली की जय' के नारे लगाने लगे और कुछ महिलाओं ने 'हनुमान चालीसा' का पाठ शुरू कर दिया ।

ज्योतिषी के कथन पर विश्वास करके कन्या बहा दी

बनारस, सब्जी मण्डी निवासी एक १६ वर्षीय महिला ने अपनी १ साल की लड़की को सर सैय्या घाट पर गंगा के गहरे जल में फेंक दिया । किन्तु मल्लाहों ने तैर कर उसे बचा लिया । उक्त महिला ने बताया कि उसे ज्योतिषियों ने कहा है कि वह अशुभ घड़ी में पैदा हुई है, इससे उसके जन्मने के कुछ दिन बाद ही उसके पिता की मृत्यु हो गयी । यदि वह अभी और जीयेगी तो घर के अन्य व्यक्तियों के लिए भी अशुभ होगी, इस बात पर विश्वास करके महिला ने अपनी अबोध बच्ची को इस प्रकार निर्दयतापूर्वक जल में प्रवाहित कर दिया ।

अस्पताल में उपचार के बाद बच्ची को उसकी माँ के साथ जेल भेज दिया गया । जिस ज्योतिषी ने ग्रह-नक्षत्र के नाम पर बेचारी भोली स्त्री को बहका कर यह क्रूर कृत्य करने की अप्रत्यक्ष प्रेरणा दी उसे पकड़ने के लिए पुलिस की दौड़-धूप चल रही है ।

अन्धविश्वासिनी ने बच्चे के बाल जला दिए

तुमसर (महाराष्ट्र), किसी धूर्त ओझा ने राम जानकी नामक एक महिला को बहका दिया कि यदि वह किसी दूसरे बच्चे के सिर के बाल जलाकर उनकी राख अपने बच्चे के सिर पर मले तो उसका गंजापन अच्छा हो जायगा ।

वह मूर्ख महिला अपने पड़ौस के एक बच्चे को पुचकार कर मिठाई का लालच देकर अपने घर ले आई । घर आकर के उसने थोड़ी-सी मिठाई उसके सामने रख दी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और जब वह अबोध बालक बैठकर मिठाई खाने लगा तो उसने इसके बालों में दियासलाई लगा दी । बाल एकदम जल उठने से वह रोता हुआ अपने घर भागा । उस मूर्ख औरत ने उसे चुप करने के लिए पीटा भी वह बुरी तरह क्रन्दन करता हुआ अपने घर भाग ही गया ।

बच्चे के घर वालों ने उसकी दुर्दशा देखकर सारा मामला पूछ लिया जिसके फलस्वरूप दोनों घर के पुरुषों में झगड़ा हो गया और दोनों ही गिरफ्तार कर लिये गये ।

बाल जलाने वाली महिला भी हिरासत में ली गई है और परामर्श देने वाले ओझा की तलाशी भी की जा रही है ।

महिलाओं ने नंगी होकर हल चलाये

जबलपुर (निस), दमोह जिलान्तर्गत हटाके रोनसरा गाँव में वहाँ की महिलाओं ने सर्वथा नग्न होकर खेतों में हल चलाया, ताकि उनकी आदिकालीन मान्यताओं के अनुसार वरुण देवता प्रसन्न हो कर वर्षा करें और इस प्रकार सम्पूर्ण गाँव को अकाल से बचायें । इसी प्रकार दूसरे निकटवर्ती गाँव की चौपाल में भी कुँवारी कन्याएँ एकत्रित हुईं और उन्होंने इन्द्र देवता से प्रार्थना की कि वे वारिश के इस मौसम में 'पिघलें' और अतृप्त तथा प्यास से लोगों को राहत प्रदान करें ।

तमाम महाकौशल-क्षेत्र समय बीत जाने के बाद भी अवर्षण का शिकार रहा और पानी न गिरने से यहाँ त्राहि-त्राहि मची रही ।

वैज्ञानिक युग में भी अन्धविश्वास

अकोला, यहाँ रेलवे-पुल के पास देश मुख-फैल में एक हनुमान जी का मन्दिर है । वहाँ किसी ने एक बन्दर मारकर डाल दिया । इस पर लोगों की भीड़ एकत्र हो गयी और शहर में तेजी से बात फैल गई कि हनुमान जी के आँसू बह रहे हैं और पसीना निकल रहा है । अति उत्साही लोगों ने बन्दर का बाजे-गाजे से जुलूस निकाला और उसकी दाह-क्रिया की ।

नाम बदलने से भूत भागता है

नई दिल्ली "नाम बदल लेने और चोटी काट देने से भूत भाग जाता है ।" यह है वह हथकण्डा जिससे ईसाई मिशनरी आदिवासियों का धर्म परिवर्तन करते हैं ।

स्वामी ब्रह्मानन्द ने आज एक भेंट में कहा कि चूँकि आदिवासी भूत-प्रेत में विश्वास करते हैं इसलिए उनके बीमार पड़ने पर ईसाई मिशनरी यह कहकर कि उनके भूत घुस गया है उसे सिर के रास्ते निकालने के लिए परामर्श देते हैं तथा उनका हिन्दू नाम बदल कर ईसाई नाम रख देते हैं जबकि वह दवाइयों से ही अच्छा हो जाता है ।

ईसाई मिशनरी गहने के नाम पर आदिवासियों को जंजीरों में लगाकर चमकीले क्रास बाँटते हैं जिन पर ईसा की तस्वीर होती है ।

चुनाव जीतने के लिए टोटका

पटियाला, जादू-टोने का नया इस्तेमाल चुनाव जीतने के लिए राज्य की पंचायत समितियों के पिछले महीने जो चुनाव हुए उनमें किया गया ।

एक चुनाव-अधिकारी मतदान पेटी में एक-एक रुपये के आठ करेंसी नोट देख कर चक्कर में पड़ गया था, लेकिन उसकी यह समस्या शीघ्र ही दूर हो गयी । कारण उसे यह सूचित किया गया कि उम्मीदवारों ने गण्डे-ताबीज देने वालों से इन नोटों पर जादू करवा कर उनके ही कहने से वे नोट उस मतदान पेटी में रखाये थे ।

उम्मीदवारों को यह भरोसा दिलाया गया था कि इन नोटों में ऐसा जादू भर दिया गया है, जो उन्हें हारने से बचायेगा । लेकिन उम्मीदवारों को यह नहीं बताया गया कि अगर प्रतिस्पर्धी उम्मीदवारों में से दोनों ने ही इस तरह के नोट मतदान पेटी में डाले होंगे तो उसका क्या बनेगा ?

नंगी औरतों ने हल जोता

मसूरी, समस्त जिले में गत एक मास से पानी नहीं बरसा । जो खरीफ की फसल बोयी गयी थी वह सूख गयी । धान तो कहीं-कहीं ही बोये जा सके थे । किसान अब इतने व्याकुल हो गये हैं कि 'बरसहिं जलद भूमि नियराये' के सम्पुट से रामचरितमानस का अखण्ड पाठ स्थान-स्थान पर कर रहे हैं । यहाँ तक कि पिछले सोमवार की रात्रि को असोहा विकास खण्ड के अन्तर्गत गोमापुर ग्राम में स्त्रियों ने रात्रि में निवस्त्र होकर हल जोता ।

जादूगरनी की हत्या

न्यूयार्क, यहाँ पर २६ वर्षीया क्लांड मांरीसट को ५५ वर्षीया श्रीमती डचैलियर की घातक हत्या करने के आरोप में बन्दी बनाया गया है । उसे न्यूयार्क के एक अस्पताल में दाखिल कराया गया है जहाँ उसके मस्तिष्क की जाँच की जावेगी ।

पुलिस के अनुसार मांरीसट का कहना है कि उसे एक जादूगरनी ने बताया कि श्रीमती डचैलियर ने उसके ऊपर अपना जादू चलाया है, जिससे वह मर जाएगा ।

मांरीसट इस पर श्रीमती डचैलियर के घर गया और उससे कहा कि वह अपना जादू उस पर से हटा ले । उसने बताया कि वह हँसने लगी और इस बात से इंकार किया कि उसने उसके ऊपर कोई जादू किया है । इस पर उसके पेट में एक ८ इंच लम्बा रसोईघर का चाकू भोंक दिया ।

उसके बाद उसे शीघ्र ही एक पुलिस वाले द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया जो उसे चिल्लाती हुई भीड़ से भागता हुआ देख रहा था ।

सन्तान की बलि

रंगून, एक धर्मांध मुसलमान महिला ने अपनी एक लड़की की बर्मा की एक मस्जिद में बलि चढ़ा दी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शाम की नमाज के समय उक्त ३९ वर्षीया महिला आशा बी. अपनी डेढ़ वर्षीया लड़की के साथ मस्जिद में गयी । उसने एक चाकू निकाल कर अपनी लड़की का गला काट दिया । उस लड़की का चीत्कार नमाज के शोर-शराबे में दब गया । उस पर किसी का ध्यान ही नहीं गया ।

उक्त महिला की बहन मरालन बी. ने उस मस्जिद में आकर सबको सचेष्ट किया । मरालन बी. को आशा बी. के अपनी लड़की के साथ मस्जिद जाने पर शंका हुई थी । अत: वह आशा बी. का पीछा करती हुई देर बाद मस्जिद पहुँची ।

उक्त महिला को कत्ल करने के अपराध में गिरफ्तार कर लिया गया है ।

बन्दर का जनाजा

मुरादाबाद, स्थानीय मौ. नवाबपुरा में एक बन्दर के शव को बड़ी धूमधाम के साथ अर्थी सजाकर निकाला गया, जिससे लगभग २०० व्यक्ति कीर्तन करते हुए जा रहे थे ।

ज्योतिष के नाम पर ठगबाजी और षड्यंत्र

भीलवाड़ा, बरल्यास गाँव के हीरा गूजर नाम के व्यक्ति को एक ज्योतिषी ने विचित्र ढंग से ठग लिया ।

बताया जाता है कि लालू का २० वर्षीय हट्टा-कट्टा बेटा हीरा गूजर जोगन्या माता के दर्शन कर बरल्यास से लौट रहा था । रास्ते में एक साफाधारी ज्योतिषी ठग मिला । उसने हीरा का हाथ देखकर उसके माँ-बाप, भाई, बन्धुओं, रिश्तेदारों के नाम बताकर हीरा का विश्वास प्राप्त किया। बाद में उसे चेतावनी दी कि उसका काल आ गया है। बस आठ रोज में मर जावेगा । ज्योतिषी ने इस अकाल मृत्यु से बचाने के लिये एक हजार रुपया अपने घर के कोठे में रखकर उसे धर्मादि में खर्च करने की सलाह दी । हीरा ने कहा कि वह पाँच सौ रुपये का प्रबन्ध कर सकता है। ठग और हीरा दोनों हीरा के घर आये, उसकी माँ से कह सुनकर एक स्थानीय व्यक्ति से ४०० रुपये उधार लेकर ठग को दिये गये । ठग ने रुपयों की एक पुड़िया बनायी और कोठे में रखकर उनकी विधिवत पूजा आदि की परन्तु चालाकी से रुपयों की पुड़िया के स्थान पर वैसी ही दूसरी पुड़िया रख दी । पूजा के बाद कोठे को ताला लगाकर चाभी उसे हीरा की माँ को सौंपते हुए कहा कि वह और हीरा चित्तौड़ जाकर कालिका जी की मनौती मानकर दूसरे दिन वापस आयेंगे । ठग ने चित्तौड़ में मोटर स्टैण्ड पर हीरा से कड़े, हँसुली, मुरकी आदि वस्तुएँ ठगने की भी कोशिश की परन्तु हीरा बच गया । ठग ने फिर भी हीरा को बेहोशी की दवा पिलाने का प्रयास किया । उसे उसने पीने से इन्कार कर दिया तथा मौका पाकर ठग के चंगुल से किसी तरह छुटकारा पाकर अपने ग्राम बरल्यास आया और सारा हाल बताया । कोठा खोलकर रुपये की दो पुड़िया सम्भाली गयी तो नोटों के बजाय कागज मिले ।

दिल्ली में ठगों का सफाया

दिल्ली पुलिस का दावा है कि उसने राजधानी में पिछले कुछ वर्षों से ठगी करने वाले 'साधुओं के गिरोहों' का सफाया कर दिया है ।

ये गिरोह अपढ़ लोगों और कभी-कभी पढ़े हुए लोगों की भी धार्मिक भावनाओं को उभार कर उनसे हजारों रुपये के सोना नकदी, घड़ियाँ, अँगूठियाँ, पैन और अन्य कीमती सामान ले चुके हैं ।

नगर में इस तरह के पाँच गिरोह काम कर रहे थे । इनमें से पहला बम्बई से आया था । इस साल पुलिस ने इन पाँचों गिरोहों का पता लगा लिया और ३० 'साधु' और उनके साथी गिरफ्तार किये । वे दिल्ली, बम्बई, कानपुर, शाहजहाँपुर, बदायूँ आदि नगरों के हैं ।

हर गिरोह में चार-पाँच लोग थे उनके नेता एक 'साधू महाराज' थे । नेता गेरुए कपड़े पहनते थे और उनके सभी साथी बढ़िया कपड़े पहने रहते थे ।

इन ठगों का तरीका आसान था । साधु महाराज किसी टैक्सी स्टैण्ड के निकट चौराहे के पास विराजते थे और वहीं से अपने शिकार पर नजर रखते थे । वे किसी सीधे-सादे ग्रामीण को, जो शहर देखने या सामान खरीदने आया हुआ होता था, पास बुलाकर पूछते थे—'क्या तुम्हारे पास माचिस है' अथवा 'हनुमान जी का मंदिर कहाँ है' ?

गाँव वाला जब 'साधु' से अलग होता था, तो उसी समय बढ़िया कपड़े पहने दूसरा ठग उसके पास आता था और कहता था कि 'साधुजी महाराज' ने तुमसे बातकर तुम पर बड़ा भारी अहसान किया। उसी समय तीसरा ठग पहुँचकर गाँव वाले को सुनाकर 'साधु' की तारीफ करने लगता था और उनके करतबों के पुल बाँधने लगता था । चौथा ठग भी उनसे आ मिलता था और अपने को अजनबी दिखाता हुआ 'साधु' से अपनी कोई मुसीबत दूर करने की प्रार्थना करने लगता था ।

साधु उनसे कहता था कि तुम्हारे पास रुपया-पैसा घड़ी आदि जो भी कीमती सामान हो एक रूमाल या कपड़े के टुकड़े में बाँधकर दे दो और चले जाओ, अगर पीछे देखोगे तो तुम पर भारी मुसीबत आएगी । साथी ठग खुशी-खुशी वैसा ही करता था ।

यह सब देखकर गाँव वाले धोखे में आ जाते थे और अपने लाभ के लिए साधु को सब कुछ देकर चले जाते थे । जब वे बिना पीछे देखे आगे जाते थे, उसी समय साधु और ठग टैक्सी में सवार हो नौ-दो-ग्यारह हो जाते थे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधुओं के ये गिरोह इसी तरह की तरकीबों से ठगा करते थे । पिछले तीन वर्षों में सैकड़ों ग्रामीण ठगे जा चुके थे ।

मूर्खतापूर्ण आवेश का फल

हिंगनघाट (महाराष्ट्र), एक २२ वर्षीय छात्र ने आवेश में आकर अपनी अँगुली तोड़ डाली ।

२२ वर्षीय छात्र उदयपाल पडारकर को एक ज्योतिषी ने एक तांत्रिक अँगूठी देकर २१ रुपये ठग लिये । अँगूठी में यह सिफत बतायी गयी थी कि जब वह इसे पहनकर अपने परीक्षा पत्रों का उत्तर लिखने बैठेगा तो उसका हाथ बिना रुके अपने आप लिखता चला जायगा और उसे प्रश्नों के ठीक-ठीक उत्तर आते चले जायेंगे ।

छात्र ने मूर्खतावश अँगूठी की चमत्कारी शक्ति में विश्वास करके अध्ययन करना छोड़ दिया । किन्तु जब वह बिना तैयारी किये एम.ए. की परीक्षा देने गया तो कोरमकोर होने से कोई प्रश्न हल न कर सका । उसने अँगूठी को बहुत कुछ घुमाया-फिराया और चूमा-चाटा किन्तु वह उसकी कोई सहायता न कर सकी ।

परीक्षा का पूरा समय अँगूठी की सहायता की प्रतीक्षा में खराब करके जब वह निराशाजन्य आक्रोश लिए बाहर निकला तब उसकी आँखें डबडबाई हुई थीं । बाहर आकर पडारकर ने अपनी मूर्खता का बदला अँगूठी से लेने के लिए जल्दी-जल्दी निकालनी चाही किन्तु जब वह हड़बड़ी में नहीं निकली तो आवेश के वशीभूत होकर उस पर एक पत्थर दे मारा, जिससे उसकी अँगुली बुरी तरह घायल हो गयी ।

बीमार महिला को ठग लिया

हरिद्वार, ज्वालापुर के एक ज्योतिषी ने सब्जी-मण्डी हरिद्वार की एक रुग्ण महिला को बड़े ही विचित्र ढंग से ठगा ।

कहा जाता है कि ज्वालापुर के एक चालाक ज्योतिषी ने सब्जी-मण्डी हरिद्वार की एक रुग्ण महिला को अपने एक सम्बन्धी के सहयोग से उस पर किसी भूत-प्रेत का प्रकोप बतलाकर फाँस लिया और उससे लगभग पाँच तोले सोने के जेवर यह कहकर कि तेरा भूत उतार दिया जायगा, ठग लिए । परन्तु रुग्ण महिला को आराम न हुआ । इस पर मामले की सूचना पुलिस को दे दी गई । पुलिस ने ठगी के सम्बन्ध में भाग-दौड़ के साथ दोनों को गिरफ्तार किया और उनके पास से जेवर बरामद किए ।

विद्या-बूटी के नाम पर धतूरा पीस कर पिला दिया

चान्दूर (महाराष्ट्र), यहाँ एक युवक को साधु ने धतूरा पिलाकर पागल कर दिया । साधु को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया है ।

जानकार सूत्रों के अनुसार यह युवक इण्टर में गतवर्ष फेल हो गया था और इस वर्ष भी परीक्षा दे रहा था । मेहनत न कर पाने के कारण फेल होने से वह शंकित था । वह योग द्वारा उत्तीर्ण होना चाहता था ।

एक दिन उसे उक्त साधु मिल गया, युवक ने उससे उत्तीर्ण होने के लिए कोई बूटी माँगी । साधु ने ५०० रुपए लेकर उसे विद्याबूटी देने का वायदा किया और विश्वास दिलाया कि वह उसे ऐसी बूटी पिलायेगा जिसके चमत्कार से उसे अनायास ही विद्या प्राप्त हो जायेगी ।

युवक ने घर से लगभग दो-सौ रुपये नगद और तीन सौ रुपये के जेवर चुराकर साधु को दे दिये । साधू ने उस युवक को बूटी के नाम पर धतूरा घोंटकर पिलाया और उसे पागल कर दिया जिससे वह युवक उस धन का भेद किसी भी मनुष्य को न बतला सके । लेकिन इस बात का पुलिस को किसी न किसी तरह पता लग गया और पुलिस ने उस साधू को गिरफ्तार कर लिया । युवक को अस्पताल भेज दिया गया ।

रूढ़ियाँ हैं—लक्ष्मण रेखा नहीं

खेतिया (म. प्र.) की एक दर्द भरी घटना दो-ढाई वर्ष का बालक खेलते-खेलते रसोईघर में घुस गया । फर्श पर पानी पड़ा था, इस कारण बच्चे का पैर फिसल पड़ा और वह बटलोई जिस पर दाल पक रही थी गिर पड़ा । उबलती हुई दाल बच्चे के ऊपर भभक पड़ी । असह्य पीड़ा के कारण बालक बुरी तरह चिल्लाया—माँ दौड़ी तो पर रसोई के दरवाजे पहुँचने तक न जाने किस लक्ष्मण रेखा ने रोक दिया कि उसके पाँव वहीं ठिठक गये वह बुरी तरह रोती-चिल्लाती बच्चे को बाहर तो बुला रही थी पर यह नहीं बन पा रहा था कि रसोई के अन्दर चली जाती ।

माँ-बेटे की चीत्कार सुनकर पड़ोसी दौड़े-दौड़े आये—कुछ लोग यह देखकर हैरान थे कि बच्चा कराह रहा है और माँ उसे उठाने तक में हिचकिचा रही है इस बीच दूसरी महिलाओं ने भीतर घुसकर बच्चे को निकाला और अस्पताल भेजा । जब कुछ पड़ोस की शिक्षित महिलाओं ने उसे फटकारा तब वह अपने धैर्य का बाँध तोड़कर स्त्री ने बताया कि वह "मासिक धर्म की स्थिति में है और इस अपवित्र स्थिति में चौके में न जाने की उसकी सास की कठोर आज्ञा है । जिसका उल्लंघन शामत ही ला सकता है ।"

अभी वह स्त्री अपनी इस असहाय स्थिति का स्पष्टीकरण दे ही रही थी कि पड़ोस में गयी उसकी सास भी वापस आ गई । दूसरी औरतों से उसे नाती के जल जाने की सूचना मिल गयी थी । उसने आते ही पहला प्रश्न बहू से किया—क्यों री तू अन्दर तो नहीं गयी ? उसके न जाने से कौन-जाने चौके की पवित्रता रही या नहीं, पर तीसरे दिन बच्चे ने इस परिवार से आँखें फेर लीं । सम्भवत: उसने ऐसे रूढ़िग्रस्त परिवार में जहाँ विवेक के लिए कोई स्थान न हो, रहना पसन्द न किया हो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस तरह की जीर्ण-शीर्ण परम्पराओं, रूढ़ियों और अन्धविश्वासों के कारण भारतीय परिवारों में कैसी-कैसी भयंकर घटनाएँ घटती रहती हैं, यह उसका एक छोटा-सा उदाहरण है । इस जड़ता के कारण अनेक लोमहर्षक घटनाएँ आये दिन घटती रहती हैं और इन बेड़ियों को तोड़ने के लिए उकसाती रहती हैं । किन्तु तो भी अन्ध-श्रद्धा, अन्धविश्वास के कारण लोग इन्हें तोड़ने और सामाजिक जीवन से उखाड़ फेंकने का साहस नहीं कर पाते । इससे विकृतियाँ और भी बढ़ती, समस्याएँ और भी उलझती चली जाती हैं । साधन-सुविधाओं के होते हुए भी, परिश्रमी और उद्यमी होते हुये भी देश आर्थिक प्रगति की ओर गतिशील नहीं हो पा रहा, उसका कारण यही प्रेत-पिशाच हैं जो रास्ते की बाधा बनकर खड़े हैं । धन, समय और शक्ति टूटते रहते हैं और अपना बौना समाज इतनी भी हिम्मत नहीं कर पाता कि इन लुटेरों से लड़ पड़े और उन्हें मार भगाये ।

मनौती को ही लिया जाये—बच्चे के पास होने के लिए मनौती अर्थात्—पढ़ाई पर परिश्रम से इस कारण इन्कार कि कोई देवी-देवता आकर उत्तीर्ण कर जायेंगे । ब्याह-शादी की मनौती, अच्छे होने की मनौती जहाँ इस तरह की मनौतियों का बाजार गर्म हो वहाँ के लोगों को लुटना ही लुटना है । ऐसे समाज कर्म पर, परिश्रम पर विश्वास की भावना छोड़ देते हैं । देवता कहीं हो—वह सचमुच लोगों की कुछ सहायता कर सकता हो तो भी मनौतियों की इस भीषण फौज से छुटकारा पाने के लिए उसे भागना ही पड़े । उनके कारण कितने लोग उन्नति से वंचित रह जाते हैं, कितने असाध्य बीमारियों के चंगुल में पड़ते और कई मासूमों को अपनी जान से ही हाथ धोना पड़ जाता है ।

बरेली की एक महरिन को विवाह के ६-७ वर्ष बाद भी बच्चा नहीं हुआ तो उसे बाँझ होने का भय सताने लगा । यह कैसा उलटा चिन्तन है कि जिस देश में जन्म दर इतनी अधिक हो कि बच्चों का पोषण अपने आप एक समस्या बन रहा हो—वहाँ नि:संतान होने को दुर्भाग्य मानना और भी भयंकर दुर्भाग्य ही कहा जायेगा, पर रूढ़ियों को मिटाया न जाये । बुद्धिमान और विवकेशील व्यक्ति लोगों में रचनात्मक चेतना न पैदा करें तो फिर आये दिन होने वाली घटनाओं को और सामाजिक पतन को कौन रोक पायेगा ?

इस स्त्री ने मनौती मानी "गंगा मैया यदि मुझे बालक होगा तो तुम्हारी भेंट चढ़ाऊँगी ।" कई बार प्रकृति संयोग मिला देती है, लगता है कि उसी कारण अनपढ़ों में अन्ध-श्रद्धा बढ़ती है । कुछ दिन पीछे उस स्त्री को बच्चा हुआ । मनौती के अनुसार बच्चे को एक नाव लेकर मँझधार में छोड़ना था वहाँ दूसरी नाव से मल्लाह आकर बच्चे को उठाता फिर वह स्त्री कुछ नियत धनराशि देकर बच्चे को वापस ले लेती इस तरह मनौती पूरी हो जाती । जहाँ विवेक न हो वहाँ विपदायें आयें तो इसमें आश्चर्य क्या ? गंगाएँ के जल की वैज्ञानिक महत्ता हो सकती है; पर यदि उनमें कुछ देने की सामर्थ्य होती तो यह देश दुनिया का सबसे निर्धन देश नहीं होता । यहाँ भी उन्होंने दिया या नहीं यह तो सन्देहजनक रहा; पर उन्होंने उस नवजात शिशु को उदरस्थ अवश्य कर लिया जिसमें किसी को कतई सन्देह नहीं ।

हुआ यह कि जब एक नाव से नियत स्थान पर बच्चे को पानी में छोड़ा गया तो दूसरी नाव के यहाँ पहुँचने में ४-५ मिनट का अन्तर पड़ गया और बालक गंगा की गोद में ही समा गया ।

मिष्ठान्न बहुत प्रिय वस्तु है; पर यदि वह बहुत समय यों ही रखी रहे तो सड़ जाती है तब भी वह रहती मिठाई ही है; पर उसे खाकर सिवाय संकटग्रस्त होने के और कुछ हाथ नहीं लगता । यही बात अपनी परम्पराओं और रीति-रिवाजों की है । पवित्रता की रक्षा, देवत्व की प्रतिष्ठा, भावनाओं की निष्ठा यह अच्छी बातें हैं, पर यदि उन्हें विवेक की परिधि से परे और पूर्वाग्रह की स्थिति में पहुँच जाने दिया जाये तो उनसे ऐसी ही विकृतियाँ सामने आती है । कुछ बातें सम्भव हैं किसी समय में उपयुक्त रहीं हों; पर आज न वह समय है, न परिस्थितियाँ फिर उनके पीछे क्यों पड़ा जाये ?

यह प्रगति का, वैज्ञानिक मान्यताओं का युग है जहाँ हर वस्तु, हर तथ्य की पहले अन्त:परीक्षा ली जाती है और उसके केवल प्रकाशवान तथा उपयोगी पहलू को ही लिया जाता है । उसी में बुद्धिमता भी है उन्नति भी, किन्तु अपने समाज में शिक्षितों तक से यह बीमारी नहीं निकल पा रही । आवश्यक तो यह है कि पढ़ी-लिखी महिलाएँ आये दिन अखबारों में छपती रहने वाली उपरोक्त प्रकार की घटनाओं के माध्यम से स्त्रियों (रूढ़िवादिता की अधिकांश शिकार महिलाएँ ही हैं यह उन्हीं के प्रसंग में है भी) को सावधान किया करें और क्या उचित है, क्या अनुचित उसका घटनाजन्य विश्लेषण किया करें, पर जब शिक्षिताएँ भी इस कुण्ठा से ग्रस्त हों तो प्रयत्नों के इतर स्वरूपों की भी खोज करनी पड़ेगी तब व्यापक सृजनात्मक साहित्य निर्माण, महिला जागरण अभियान का कार्य विचारशील स्त्री-पुरुष दोनों को ही करना पड़ेगा तभी समस्या सुलझेगी ।

अन्यथा शिक्षिताओं के भ्रमित होने से परिस्थितियाँ बदतर हो जायेंगी । दिल्ली की एक ३० वर्षीय डॉक्ट्रेट उपाधि विभूषित लड़की के सम्बन्ध की बात एक लड़के से चलायी गयी । लड़के ने इस लड़की को नापसन्द कर दिया और दूसरी लड़की से शादी भी कर ली उसके दो बच्चे भी हो गये, पर उक्त युवती ने यह कहकर विवाह करने से इन्कार कर दिया कि वह सीता के देश में जन्मी है अतएव जिसने पहले देखा उसे ही वह पति मान सकती है और को नहीं ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह संकल्प किसी अन्य समाज सेवा जैसे पवित्र उद्देश्य से किया जाता तब तो कोई बात थी पर इस तरह की मूढ़मान्यता के कारण भारतीय समाज को चिरकाल तक वैसे ही पछताना पड़ेगा जैसे यह लड़की अब पछता रही है । उधर आयु अधिक हो जाने से कोई विवाह ही नहीं करता । न जाने कब हम अपने इन पश्चातापों से मुक्त होंगे ?

अन्धविश्वासों के साये में पलता जीवन

वैचारिक दृष्टि से जो जितना पिछड़ा होगा, उतना ही अन्धविश्वासी भी होगा । समाज एवं व्यक्ति दोनों ही के सन्दर्भ में यह बात लागू होती है । शिक्षित होना एक बात है, विचारशील होना सर्वथा एक भिन्न बात है । आवश्यक नहीं कि जो शिक्षित है, वह विचारशील भी हो । अशिक्षित मूर्ख हों यह भी जरूरी नहीं । शिक्षित मूर्ख और अशिक्षित विचारशील भी मिलते हैं । विचार-शीलता से रहित शिक्षितों और अशिक्षितों में अन्ध-विश्वासों को पलते, प्रश्रय पाते अधिक देखा जा सकता है । जिस समाज में ऐसे व्यक्तियों का बाहुल्य होगा, वह उतना ही पिछड़ता जायेगा ।

अन्धविश्वासों से व्यक्ति एवं समाज दोनों ही को कितनी ही प्रकार की हानि उठानी पड़ती है । कितनी ही बार तो अन्धविश्वासी व्यक्ति ऐसे कृत्य कर गुजरता है जिसे घोर नृशंसता की संज्ञा दी जा सकती है । यों तो जनजीवन में अगणित प्रकार के अन्धविश्वास फैले हुए हैं पर उनमें से प्रमुख है धार्मिक अन्धविश्वास, विशेषकर यह कि बलि देने से देवी-देवता प्रसन्न होते तथा मनोकामनाएँ पूरी करते हैं । देवशक्तियाँ वस्तुतः दैवीय वृत्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं । ऐसे दुष्कृत्यों से वे प्रसन्न होकर लोगों की मनोकामनाएँ पूर्ण करने लगें तो उन्हें अनैतिक ही कहा जायेगा । जो देवी-देवता के सन्दर्भ में ऐसी मान्यता बनाये हुए हैं, निस्संदेह उन्हें अविवेकी ही कहा जायेगा ।

मूर्खता की आड़ में धूर्तता को पलने का अवसर मिलता है । बलि से देवी, देवता को प्रसन्न करके मनचाही मुराद पूरा करने का आश्वासन वस्तुतः निहित स्वार्थी, धूर्तों के द्वारा दिया जाता है । अन्ध-श्रद्धा जहाँ भी दिखायी पड़ती है ऐसे धूर्तों की दाल गलती है । उनकी प्रेरणा से वे मनसा पूर्ति के लिए मानव बलि देने जैसे जघन्य अपराध करने से भी नहीं चूकते ।

नवभारत टाइम्स दैनिक पत्र के समाचार के अनुसार १७ जुलाई, १९८३ को फतेहपुर थाना के गुटसैल गाँव में कुछ व्यक्तियों ने जबरन देवी को प्रसन्न करने के लिए राम नामक युवक की बलि चढ़ा दी । जिस समय पुलिस पहुँची उस व्यक्ति का कटा सिर मूर्ति के पास रखा था । वहीं एक प्लेट में फल, अगरबत्ती तथा पूजन की अन्य सामग्री रखी थी ।

हैदराबाद थानान्तर्गत गाँव नयपुर में एक पाँचवर्षीय बालिका की नाक, कान एवं जीभ कटी हुई लाश बरामद की गयी । देवी के मंदिर में शरीर के वे अंग चढ़ाये हुए पाये गये । पुलिस इन दोनों ही घटनाओं में अपराधियों को पकड़ने में अक्षम रही ।

रायबरेली ५ मई, १९८३ सलोन पुलिस ने एक आठ वर्षीय एक अबोध बालक की बलि चढ़ाने के आरोप में दो व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया । जिसमें एक तान्त्रिक भी है । बताया जाता है कि उक्त तान्त्रिक ने एक ३० वर्षीय युवक नरेश को आश्वासन दिया था कि अगर वह किसी तेली लड़के की बलि दे दे तो उसे संक्रामक रोग से मुक्ति मिल जायेगी । रोग मुक्ति की तीव्र इच्छा से प्रेरित होकर उसने अपने पड़ोसी के आठ वर्षीय पुत्र बजलाल का अपहरण कर लिया तथा उसकी बलि चढ़ा दी । दोनों की खोजबीन करके पुलिस ने हवालात भेज दिया जिन पर हत्या का अभियोग चल रहा है ।

देवधर १४ जून, १९८३ । यहाँ से चालीस किलोमीटर दूर जमुआ गाँव में सिंचाई विभाग के एक इन्जीनियर ने अपने एक १२ वर्षीय घरेलू नौकर की बलि दे दी । विश्वस्त सूत्रों से पता चला कि वह इन्जीनियर किसी तन्त्र साधना में लगा था तथा कई वर्ष से नरबलि देता चला आ रहा है । पुलिस को सुराग मिलते ही इन्जीनियर तो रफ्फूचक्कर हो गया पर उसका एक अन्य सहयोगी पकड़ा गया ।

घटना यह बताती है कि शिक्षा का अन्धविश्वास से कोई सम्बन्ध नहीं । रहा होता तो इस तरह की नृशंस घटनाएँ न घटित होतीं वस्तुतः विचारशीलता के अभाव में ही इनकी प्रेरणा मिलती है ।

मेरठ, १४ अप्रैल को स्थानीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने ग्राम पाल, थाना सरधना के हुकम सिंह तथा राजवीर नामक दो व्यक्तियों को अबोध बालक की हत्या के आरोप में आजीवन कारावास की सजा प्रदान की । बताया जाता है कि मुलजिम हुकम सिंह सन्तानहीन था । तान्त्रिक के सुझाव पर अपने साले राजवीर की मदद से उसने अपने ही गाँव के एक छह वर्षीय बालक का अपहरण किया तथा बलि चढ़ा दी । बालक के रक्त से उसने अपनी पत्नी को स्नान कराया । तान्त्रिक से उसे ऐसा ही परामर्श सन्तान प्राप्ति के लिए मिला था ।

अन्धविश्वासी कितना हृदयविहीन हो सकता है, इसका प्रमाण विगत दिनों मिला । ८ मई, १९८३ नासिक से १० किलोमीटर दूर वंवटेला पिम्पला के मंदिर में एक व्यक्ति ने अपने ही छह वर्षीय बच्चे की बलि चढ़ा दी । त्रिशूल से लड़के की हत्या करने के अभियोग में उसे पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया । प्राप्त समाचार के अनुसार उसने यह कुकृत्य मुफ्त के धन की प्राप्ति के लिए किया था ।

इटुकी १ जुलाई, १९८३ छिपे खजाने की प्राप्ति के लोभ में एक पिता ने अपने ही बच्चे की बलि दे दी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं पार्वती नामक दो महिलाओं को हत्या के अभियोग में गिरफ्तार कर जेल भेज दिया ।

अन्धविश्वासों से प्रेरित ऐसी बर्बर थोड़ी-सी घटनाएँ ही प्रकाशन में आ पाती हैं, अधिकांश का तो अता-पता भी नहीं चलता । न जाने कितने मासूमों को प्रतिवर्ष ऐसे अन्धविश्वासों की आहुति चढ़ानी पड़ती है । तान्त्रिकों, ओझाओं, टोना-टोटका करने वालों के चक्कर में आकर भोले-भाले भी ऐसे कुकृत्य करते देखे जाते हैं । अनुमान है कि देश की आधी से भी अधिक जनता किसी न किसी प्रकार के अन्धविश्वास से ग्रस्त है ।

इस विशाल समुदाय के अतिरिक्त एक वर्ग ऐसा है जिसे प्रबुद्ध कहा जा सकता है । धर्म के स्वरूप से वह भी प्राय: अपरिचित है । अन्धविश्वास से प्रेरित इन घटनाओं को देखकर उन्हें ही वह धर्म मान बैठता तथा नाक-भौं सिकोड़ता रहता है । अन्धविश्वासों के विकृत स्वरूप को धर्म मान बैठना एक बड़ी भूल है जिसे दूर किया जाना आवश्यक है । होना यह चाहिए कि जो प्रबुद्ध हैं वे धर्म तत्व की गहराई में उतरें, उसके स्वरूप एवं महान लक्ष्य को समझें । दूर से ही व्यंग्य करते रहने की अपेक्षा उन्हें सत्य की खोज करने के लिए गम्भीरता से पर्यवेक्षण करने का साहस जुटाना चाहिए ।

जनजीवन में संव्याप्त विश्वासों को दूर करने के लिए भी यह आवश्यक है कि विचारशीलता के विकास के लिए हर सम्भव प्रयास किया जाय । अन्ध-कूपमण्डूक में पड़े व्यक्तियों के सोचने का दायरा अत्यन्त संकुचित रहता है । जिन्हें प्रगतिशील विचारों का पोषण न मिला हो वे पिछड़ेपन से ग्रस्त रहने तथा उसी स्थिति में बने रहने में जीवन की सार्थकता समझते हैं । उससे वे बाहर नहीं निकल पाते ।

श्रद्धा मानवी विकास की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माध्यम है, पर अन्ध-श्रद्धा में परिणत हो जाने पर व्यक्ति एवं समाज दोनों ही के लिए हानिकारक ही सिद्ध होती है । श्रद्धालु, अन्धविश्वासी भी होता है । उसकी श्रद्धा पर विवेक का अंकुश नहीं रहता । उच्चस्तरीय सिद्धान्तों एवं आदर्शों से अभिप्रेरित उसकी श्रद्धा नहीं होती । वस्तुनिष्ठ तथा मनोकामना अभिप्रेरित होती है । उसकी स्थिति उस लोभी की तरह होती है जो रकम को मुफ्त में दूनी कराने के फेर में अपना मूल धन भी धूर्त को दे बैठता है ।

ऐसे व्यक्तियों को वस्तुस्थिति का भान कराया जाना चाहिए । विचारशीलता का अभाव व्यापक क्षेत्र में है । उसे दूर करने के लिए उसी स्तर का प्रयास करना होगा, इससे कम में बात बनती दिखायी नहीं पड़ती । कहना न होगा युगान्तर चेतना द्वारा चलाये जा रहे विचार क्रान्ति अभियान की अन्धविश्वासों के उन्मूलन तथा सत्प्रवृत्तियों के सम्वर्द्धन में एक महती भूमिका है । जिसमें हर विचारशील की भागीदारी आवश्यक है ।

यह अन्धविश्वास भारत को कब तक कलंकित करेंगे

यह बात सर्वविदित है कि हमारे देश में फैले अन्धविश्वासों से व्यक्ति की ही नहीं वरन् सम्पूर्ण समाज की आर्थिक तथा नैतिक दृष्टि से बड़ी हानि हो रही है । इन मूढ़ताओं में ग्रस्त लोगों को मूर्ख बनना पड़ता है और बाद में जब पश्चाताप करते हैं तब भी सिवाय पछताने के और कुछ हाथ नहीं लगता । अनेक मूर्खतापूर्ण बातें भारतीय संस्कृति को भी कलंकित करती हैं । अत: विचारशील लोगों को इसे मिटाने के लिए कुछ प्रयत्न तो करना ही चाहिए ।

विवाह में सट्टू की प्रथा

गुजरात के मेहसाणा जिले में ताबड़िया गाँव के पाटीदारों के सम्मुख विवाह सदैव एक समस्या बनकर आता है । वहाँ के किसानों में ५२.७४ प्रतिशत पुरुष अविवाहित रह जाते हैं । वहाँ विवाह करने के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति को एक वधू तथा कुछ धनराशि कन्या पक्ष वाले के लिए भेंट स्वरूप देनी होती है । इस प्रथा को सट्टू कहते हैं । इस गाँव में कन्या पक्ष वाला दहेज नहीं देता वरन् वर पक्ष को देना होता है । कितनी ही बार यह देखने में आया है कि जो परिवार इन शर्तों को पूरा नहीं कर पाते उनके मर्द अविवाहित ही रह जाते हैं ।

भूत ने एक के प्राण लिये और ६ को जेल भेजा

वर्धा में एक महिला का भूत भगाने को एक साधु ने पाँच व्यक्तियों से पकड़वाकर उसकी इतनी पिटाई कराई और ऐसी घोर यातना उसे दी कि उसके प्राणपखेरू उड़ गये । पुलिस ने सूचना पाकर उस महात्मा सहित उन सबको गिरफ्तार कर लिया और उस महिला की हत्या के अभियोग में उन्हें जेल भेज दिया गया ।

अन्धविश्वास की बलि वेदी पर

बच्चे का बलिदान कर दिया

"इलाहाबाद हाईकोर्ट ने एक २५ वर्षीया महिला नन्दी बहिन का आजीवन कारावास की सजा के विरुद्ध की गयी अपील को खारिज कर दिया । इस महिला को यह अन्धविश्वास था कि यदि मैं एक चार वर्ष के बालक का बलिदान काली देवी के सम्मुख कर दूँ तो मुझे एक सुन्दर पुत्र प्राप्त हो जायेगा । इस जघन्य मनोवृत्ति से प्रेरित होकर उसने पड़ोसी के चार वर्ष के बच्चे को उड़ा लिया और उसकी हत्या कर डाली ।"

अंधविश्वास की शक्ति कितनी भीषण और घातक है इसकी यह घटना एक बड़ा स्पष्ट उदाहरण है । अनेक लोग देवी-देवताओं सम्बन्धी अन्धविश्वास का विरोध करने पर या देवी के आगे पशुबलि जैसी क्रूरतापूर्ण प्रथा को हटाने का प्रयत्न करते हैं तो बहुत से लोगों को बुरा लगता है । वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देवी-देवताओं सम्बन्धी अन्धविश्वास का विरोध करने पर या देवी के आगे पशुबलि जैसी क्रूरतापूर्ण प्रथा को हटाने का प्रयत्न करते हैं तो बहुत से लोगों को बुरा लगता है । वे कहते हैं कि इन व्यक्तिगत बातों में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है । पर इस प्रकार के मूढ़ विश्वास समय-समय पर कहाँ तक बढ़ सकते हैं और समाज के लिये अनिष्टकारी बन सकते हैं, इसका विचार वे नहीं करते । देश के अशिक्षित वर्ग विशेषकर महिलाओं में इस इस प्रकार की हानिकारक भावनाओं को दूर करना परम कर्तव्य है ।

अग्नि परीक्षा या खिलवाड़

"रतलाम की बदनावर तहसील के एक स्कूल में चन्दे के रुपये में से तीन-चार रुपया किसी ने चुरा लिये । इस पर अध्यापक ने कुछ पत्थर आग में गरम करवाये और विद्यार्थियों से उन्हें उठाने को कहा । उसका कहना था कि जो विद्यार्थी चोर होगा उसके हाथ जल जायेंगे और शेष पर कुछ असर न पड़ेगा । पर चोरी का पता लगना तो दर-किनार इस तरह छह-सात लड़कों के हाथ बुरी तरह जल गये ।"

सम्भवत: अध्यापकजी ने सीताजी की अग्निपरीक्षा की बात सुनकर उसका प्रयोग करना चाहा होगा । पर इस प्रकार की प्राचीन कथाओं की बातों को अक्षरश: ज्यों का त्यों मानकर उन पर अमल करना बड़ा खतरनाक है हम नहीं जानते कि उक्त घटनाएँ वास्तव में किस रूप में और किस परिस्थिति में हुई थीं । उस समय का देश, काल भी आज से बहुत भिन्न था । ऐसी दशा में उन बातों का साधारण मामलों में अनुकरण करना बुद्धिहीनता का ही लक्षण है ।

दादी की हत्या कर डाली

देहरादून के एक गाँव के रहने वाले इतवारू नामक एक व्यक्ति ने अपनी चचेरी दादी की हत्या इसलिये कर डाली क्योंकि उसे सन्देह था कि दादी में भूत-प्रेतों का निवास है और उनके द्वारा एक वर्ष के भीतर ही उसके कई रिश्तेदारों की मौत हो गयी और उसका बैल और भैंस भी मर गयी । इस विपत्ति से छुटकारा पाने के लिये वह अपनी दादी को एकान्त में ले गया और मार डाला । हाईकोर्ट से अभियुक्त को आजीवन कारावास का दण्ड दिया गया ।

इस प्रकार की अन्धविश्वास से प्रेरित अकारण हत्याएँ इस देश में प्राय: होती रहती हैं । कुछ समय पूर्व हमने काशी का ऐसा ही समाचार पढ़ा था, जिसमें एक व्यक्ति ने अपने बाप को इसीलिये मार डाला कि उसका बेटा बहुत बीमार रहता था और उसे शक हुआ कि यह कार्यवाही उसके बाप की ही है । समाज सुधारकों का कर्तव्य है कि वे केवल विवाह-शादी, छुआछूत में ही न लगे रहकर जनता में फैले अज्ञान-अन्धकार को भी दूर करने का प्रयत्न करते रहें । इस प्रकार की घटनाएँ हिन्दू धर्म जैसे वेद और शास्त्रों के अनुयायी मत के लिए लज्जाजनक हैं ।

नर-राक्षस की करतूत—"जोधपुर के बाड़मेर नामक स्थान में श्री हेमराज खत्री के गुरु चिमा ने उससे कहा कि तुम अपने पुत्र का कलेजा पका कर मुझे खिलाओ, तो मैं तुम्हारे यहाँ भोजन कर सकता हैं । हेमराज अन्धभक्तिवश इसके लिये तैयार हो गया और कलेजा निकालने के लिये बालक को काटने के लिए छुरी ले आया । यह देखकर उसकी स्त्री जोर-जोर से रोने लगी जिससे मुहल्ले वालों की भीड़ इकट्ठी हो गई । उन लोगों ने उस राक्षस गुरु की अच्छी तरह से पिटाई करके उसे वहाँ से भगा दिया ।"

हमारे देश के सभ्य-समाज में अब भी ऐसे नरराक्षस मौजूद हैं यह वास्तव में आश्चर्य का विषय है । उन मूर्खों से तो क्या कहें जो आँखों पर पट्टी बाँधकर इन ढोंगी गुरुओं के चक्कर में फँस जाते है, पर जो व्यक्ति साधु का नाम धारण करके ऐसे पाशविक कृत्य करते हैं, वे वास्तव में नर-पशु ही हैं और जहाँ-कहीं व्यक्ति ऐसे पाये जाएँ, उनके साथ वैसा ही व्यवहार करना उचित है जैसा बाड़मेर की जनता ने किया ।

छूत का भूत ले डूबा

हाल ही में एक काँवर वाला मथुरा में जमुना जी के पुल पर होकर जा रहा था । इन लोगों का नियम होता है कि जब तक काँवर लिये रहें तब तक किसी को न छुएँ । पुल के ऊपर बचने की कोशिश करने पर भी वह एक व्यक्ति से छू गया । इससे उसने अपने को अपवित्र मान लिया । फलस्वरूप पहले तो उसने काँवर को जमुना जी में फेंक दिया और फिर स्वयं भी पुल से कूद पड़ा और मर गया ।

इस समाचार को पढ़कर मुख से यही निकलता है कि 'अन्धविश्वास की बलिहारी ।' आजकल सभी प्रकार के तीर्थयात्रियों और अन्य धर्म कार्यों में संलग्न व्यक्तियों को रेल या मोटर लारी आदि के द्वारा ही एक स्थान से अन्य स्थान को जाना पड़ता है । इसलिये किसी व्यक्ति के स्पर्श से सर्वथा बच सकना असम्भव-सा है । फिर शास्त्रों में बड़ी-बड़ी भूलों और पातकों के प्रायश्चित मिलते हैं, तब मार्ग में विवशतापूर्वक किसी को छू जाने का इतना बड़ा पाप मान लेना कि प्राण दे दिया जाय किसी दृष्टि से धर्मसम्मत नहीं माना जा सकता । यह एक प्रकार की सनक ही समझी जायगी, जिसका समर्थन कोई नहीं करेगा ।

अज्ञान और अन्धविश्वास

अविद्या और अज्ञान के कारण अभी हमारी मनोभूमि उस स्तर की बनी हुई है जिस पर बेचारे भोले-भाले लोगों को धूर्तों द्वारा बहकाया जाना सम्भव हो जाता है । इसी फेर में कितने ही व्यक्ति ठगे जाते हैं और कई ऐसी भूल कर बैठते हैं जिनके लिए उन्हें पश्चात्ताप और अपयश ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हाथ लगता है । ऐसी ही घटनाओं का कुछ विवरण नीचे देखिए –

अन्धश्रद्धा

गाजियाबाद । डासना गेट के निकट जमीन से निकल रहे पानी के लिए कल यहाँ सैकड़ों अन्ध-श्रद्धालुओं की भीड़ लग गयी ।

कुछ लोगों का कहना था कि यह पानी गंगा का है और उन्होंने उसे बर्तनों में भर लिया । कुछ ने पानी में अपने पाप धोये ।

किन्तु शाम को यह मालूम पड़ने पर कि इस पानी का उद्गम स्रोत कोई गन्दा गड्ढा है, भीड़ एकदम कम हो गयी ।

प्रेतात्मा गिरफ्तार

चण्डीगढ़, मानसा में एक 'रहस्यमय प्रेतात्मा' की गिरफ्तारी की गयी बताते हैं ।

वहाँ एक मुहल्ले में मकानों पर दिन में और रात में ईंटों की वर्षा हुआ करती थी । भरसक प्रयत्नों के बावजूद पता नहीं चल रहा था कि ईंट कहाँ से आती हैं, लोग समझने लगे कि यह किसी भूत का काम है ।

विगत रविवार को लोगों ने रात में एक मकान को जिस पर ईंटों की वर्षा हो रही थी, चारों ओर से घेर लिया और पाया कि एक ट्रक-कण्डक्टर पत्थर फेंक रहा है । उसे पुलिस के हवाले कर दिया गया ।

ज्योतिषी जी की पिटायी

खुरजा, विदित हुआ है कि खुरजा में एक ज्योतिषी जी को काफी पिटाई के पश्चात् नगर छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा ।

बताया जाता है कि उक्त ज्योतिषी ने हाईस्कूल की परीक्षा देने वाले दो विद्यार्थियों की हस्तरेखाएँ देखकर भविष्यवाणी की कि दोनों परीक्षा में फेल हो जायेंगे, किन्तु यदि ज्योतिषी जी को सत्तर रुपए दे दें तो वह अपने ज्योतिष बल से उन दोनों को हाईस्कूल परीक्षा में पास तो करा ही देंगे, साथ ही अपने मिलने वाले सरकारी उच्चाधिकारियों से सिफारिश कर नौकरी भी दिलवा देंगे । लालच में आकर दोनों परीक्षार्थियों ने माँगी गयी रकम ज्योतिषी जी को अर्पण कर दी । बाद में परीक्षाफल आने पर दोनों विद्यार्थियों को अनुत्तीर्ण होने का जब समाचार मिला तो वे तुरन्त खोजते हुए ज्योतिषी जी के पास पहुँचे और परीक्षा में असफल हो जाने के कारण अपने रुपए वापस माँगे । लेकिन ज्योतिषी जी के रुपए देने में आनाकानी करने पर उन्हें पीटा गया । इस पर ज्योतिषी जी ने उन्हें शाम को धन चुका देने का वायदा किया और जैसे ही उन्हें छुटकारा मिला ज्योतिषी जी हमेशा के लिए शहर छोड़कर भाग खड़े हुए ।

देवी पर जीभ चढ़ाई

जबलपुर, स्थानीय बघैयापारा मुहल्ले के दमड़ीलाल नामक एक युवक ने शारदा देवी की प्रतिमा के सम्मुख अपनी जीभ काटकर चढ़ा दी । उसे रक्तरंजित दशा में अस्पताल में भर्ती किया गया ।

चेचक का इलाज

जैसलमेर, नगर में चेचक के बढ़ते हुए प्रकोप को रोकने के लिए आकुल माताओं ने यहाँ श्मशान देवी की आराधना करना प्रारम्भ कर दिया । उनका विश्वास है कि श्मशान देवी की अर्चना करने से वह प्रसन्न होगी और प्रकुपित देवता को शान्त होने का आदेश देगी । यहाँ प्रतिदिन अर्द्धरात्रि में कुछ प्रौढ़ माताएँ एक जुलूस के रूप में तीन चार मील चलकर श्मशान भूमि पहुँचती । सारे रास्ते वे "हाथ में मूसल क्षेम कुशल" कहती हुई जातीं । वे श्मशान में नाचती थीं तथा गाती थीं और नैवेद्य चढ़ाती थीं । इस समय कोई पुरुष उनके पास नहीं रहता क्योंकि एक माता नग्न रहती है ।

समाधि वाला बाबा गिरफ्तार

कानुपर, एक सप्ताह की 'समाधि' लेने का प्रदर्शन करने वाले एक बाबा सच्चिदानन्द और उसके गुरु रामदेव को स्थानीय बाराहदेवी मन्दिर के निकट रात को गश्त लगाने वाली पुलिस ने अत्यन्त नाटकीय परिस्थिति में गिरफ्तार किया है ।

बताया जाता है कि विगत वर्ष बाबा रामदेव ने उक्त स्थान पर तीन दिन की 'समाधि' ली थी और तब से अनेक लोग उनकी पूजा करने लगे । इस वर्ष विगत सप्ताह उसके चेले सच्चिदानन्द ने भी उसी स्थान पर १ सप्ताह की समाधि लेने की घोषणा की और उस दिन हजारों श्रद्धालु जनता के देखते-देखते वह 'समाधि' के गड्ढे में पैठ गए ।

बताया जाता है कि उसी दिन रात्रि में बाबा सच्चिदानन्द अपने गुरु की सहायता से चुपचाप बाहर निकल आए और गड्ढे के द्वार को पूर्ववत बन्द कर वह दूर नगर में सरसैय्या घाट के किनारे निकल गए वहाँ वे सप्ताह भर रहे ।

सप्ताह के अन्त में प्रात: ८ बजे बाबा के 'समाधि' से बाहर निकलने की पूर्व घोषणा की गयी थी और इसीलिए पिछली रात से ही ग्रामीण क्षेत्रों से अनेक व्यक्ति समाधि-स्थल पर पहुँचने लगे थे । जहानाबाद ग्राम से ही आयी एक स्त्री, चन्दोबाई रात्रि में समाधि स्थल के बिल्कुल निकट ही सोई और हटाने से भी न हटी । रात्रि में अवसर पाकर ज्यों ही उक्त बाबा समाधि-द्वार की ईंट हटाकर गड्ढे में घुसने लगे तभी चन्दोबाई की आँख खुल गई और उसने शोर मचा दिया । दैवयोग से निकट ही रात्रि की गश्ती पुलिस जा रही थी । उसने घटनास्थल पर दौड़ कर समाधि के गड्ढे में घुसते हुए बाबा को पकड़ लिया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दोनों बाबाओं की गिरफ्तारी का समाचार सुनकर वहाँ प्रातः एकत्रित होने वाली हजारों व्यक्तियों की भीड़ को निराश लौटना पड़ा ।

दुनिया रंगबिरंगी बाबा

शाहजहाँपुर, तहसील पुवायां के ग्राम मुण्डाखेड़ा से प्राप्त होने वाले एक समाचार में बताया गया है कि श्री लाला-राम नामक एक नलकूप विभाग के आपरेटर ने अपनी कुतिया द्वारा बच्चे दिये जाने पर ही ३०० रुपए खर्च कर दिये । उसने एक पिल्ले को जन्म दिया है । उस कुत्ते का दस्ठौन करने के लिए भी एक पण्डित को बुलाया गया ।

इस अवसर पर नृत्य और संगीत के अतिरिक्त ग्राम के सभी ४०० निवासियों को दावत दी गई । बताया जाता है कि श्री लालाराम भण्डारा भी कराने वाले हैं ।

माँ कहने पर दावत का दण्ड

मुरादाबाद से समाचार मिला कि एक ग्रामवासी नाई ने क्रोध में अपनी पत्नी से 'माँ' कह दिया । इस पर बिरादरी वालों ने उसे पत्नी से दुबारा विवाह करने को बाध्य किया और बिरादरी को दावत देने व इस विवाह में उसे ५०० रु. खर्च करने पड़े ।

मुण्डमाल धारण करने वाला साधु

पटियाला, यहाँ सेन्ट्रल जेल के पीछे एक कुटिया में रह रहे एक साधु के जीवन के बारे में स्थानीय पुलिस छानबीन कर रही है । इसका नाम विशनपुरी है । यह अपने आपको १०७ वर्ष का होने का दावा करता है ।

इस साधु को ख्याति सम्भवतः इसलिए मिली है, क्योंकि वह अपने गले में मनुष्यों की खोपड़ियों की एक माला धारण किए रहता है ।

साधु ने बताया कि मुझमें अपने द्वारा नियन्त्रित की गयी रूहों की सहायता से बहुत से रोगों को ठीक करने की ताकत है ।

गधे की हत्या का दण्ड

जावरा, यहाँ मदनलाल रावलिया को गधा मारने के आरोप में २ हजार व्यक्तियों को भोज देने का दण्ड दिया गया ।

बताया जाता है कि मदनलाल रावलिया ने गधे को खेत से निकालने के अभिप्राय से एक लाठी मारी जिससे वह बूढ़ा गधा चक्कर खाकर गिर पड़ा और मर गया ।

इस पर ग्रामीणों की पंचायत ने निर्णय किया कि मदनलाल गोलमेश्वर नामक तीर्थ में जाकर मुण्डन कराए और उसके पश्चात २ हजार व्यक्तियों को भोज दे ।

ढोंगियों का बढ़ता हुआ मायाजाल

विज्ञापन द्वारा ठगी का व्यवसाय

दिल्ली, यहाँ के एक व्यवसायी ने विदेशी पत्रों में 'जादू की अँगूठी' का विज्ञापन छपाया और यह दावा किया कि इसके द्वारा तुम्हारी मनोकामना सिद्ध हो जायेगी । इसको पढ़कर कितने ही लोगों ने बड़ी रकम देकर अँगूठी खरीदीं । पर जब इसका कोई फल देखने में न आया तो उन्होंने अपने देश में स्थित भारतीय राजदूतों की मारफत भारत सरकार से शिकायत की । सरकार ने ऐसी कार्यवाही को देश की बदनामी का कारण समझ मुस्तैदी के साथ इसकी जाँच की । आज्ञा दी तो पुलिस ने जाँच करके ऐसी अँगूठियाँ बेचने वाले एक व्यापारिक फर्म का पता लगाया है और उसके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की व्यवस्था की जा रही है । अब उसने कुछ शिकायत करने वाले ग्राहकों का रुपया भी वापस कर दिया है ।

बालक के अंगों की आहुति

इटावा, औरैया से तीन वर्ष के एक बालक की हत्या करके उसके अंगों से हवन करने का ऐसा रोमांचकारी समाचार मिला है जिससे धार्मिक अन्धविश्वासों तथा धर्म का ढोंग करने वालों पर अत्यन्त घृणा उत्पन्न होती है । बताया जाता है कि एक ढोंगी भगत ने किसी व्यक्ति से कहा कि उसके मकान में बहुत-सा धन गढ़ा है । अगर वह सात बालकों का बलिदान दे तो वह धन उसे प्राप्त हो सकता है । इस लालच में पड़कर उस व्यक्ति ने तीन वर्ष के एक बालक को गला घोंटकर मार डाला और भगत ने उसके कान, नाक तथा जीभ काट कर हवन में आहुति दी । इसके पश्चात् बालक की छाती का रक्त निकाल कर उसकी भी आहुति दी गयी । बाकी बची लाश को एक तालाब में फेंक दिया गया । जाँच करने पर बालक के खून लगे कपड़े और कटी हुई लाश मिल गई । भगत ने पहले इस प्रकार कई बालकों की हत्या करना स्वीकार किया है ।

रुपया दुगुना करने वाला साधु

जबलपुर, आदे गाँव (नरसिंहपुर) के एक ग्रामीण से १२०० रु. ठग लेने के अभियोग में एक साधु को गिरफ्तार किया गया है । यह भोले लोगों को यह कहकर बहकावा करता था कि वह अपने देवता की उपासना की शक्ति से रुपयों को दूना कर सकता है । जो लालची और भोले लोग उसके चंगुल में फँस जाते थे उनको तरह-तरह से पूजा-पाठ का तमाशा दिखा कर भुलावे में डाल देता था और अन्त में किसी चालाकी से रकम को लेकर गायब हो जाता था । जाँच करने पर पता लगा कि उसने लखनादौन और नरसिंहपुर में भी इसी तरह की धूर्तता से कितने ही लोगों को ठगा था । पुलिस को ग्रामीण का सब रुपया उसके पास से मिल गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तीन हजार लेकर चंपत

बारामऊ (सहरसा), यहाँ एक अजनबी जटाजूटधारी साधु बाबा कुछ दिन पूर्व आकर ठहरे थे । आरम्भ में उन्होंने बहुत भजन, कीर्तन, व्रत, उपवास का रंग जमाया जिससे लोग खूब प्रभावित हुए । पीछे एक शंकर का मन्दिर बनाने तथा रुद्र यज्ञ करने की योजना बनायी । इसके लिए यहाँ से तथा आस-पास गाँवों से करीब तीन हजार रुपया इकट्ठा कर लिया । एक रात उन रुपयों समेत चुपके से कहीं खिसक गये । तब से अब तक उनका कोई पता नहीं चला है ।

इस घटना ने उन भोले लोगों की आँखें खोल दी हैं जो रँगे कपड़े या जटाजूट देखकर किसी भी भले-बुरे को महात्मा मान लेते थे और उसकी माँगें पूरी करने में सौभाग्य मानते थे ।

यह अन्धविश्वास न जाने कब तक जीएगा ?

पिछले अन्धकार युग में हमारे देश में अनेक बुराइयाँ पनपी हैं । अज्ञान और अनाचार का सम्मिश्रित रूप अन्धविश्वास जैसा बन जाता है । धूर्त लोग अज्ञानियों को बहकाते और उनसे अनर्थ कराते रहते हैं । कुछ कथा-कहानी भी ऐसी मिलती है जिनमें यह कहा गया होता है कि देवी-देवता, मनुष्य या पशुओं की बलि लेकर प्रसन्न होते हैं । पुरुषार्थ से अपनी समस्याओं को हल करने या अभीष्ट उद्देश्यों को पूरा करने के लिये जो प्रयास किया जाना चाहिये उसे न करके लोग देवताओं या जादू-टोने का सहारा लेते हैं और बहुत जल्दी काम बन जाने के लिये हत्या या आत्महत्या जैसे जघन्य कृत्य करने को उद्धृत हो जाते हैं ।

इस बुद्धि-युग में ऐसी अबुद्धिमत्तापूर्ण बातें बन्द होनी चाहिए थीं पर खेद है कि अभी भी वे आदिम युग की मूर्खताएँ हमारे बीच विद्यमान हैं । नीचे कुछ ऐसे ही समाचार पढ़िये और विचार कीजिये कि यह भ्रम-जंजाल कितना अनर्थकारी सिद्ध हो सकता है—

दर्शन की लालसा

खुर्जा से लगभग आठ मील दूर जिहादपुर नामक गाँव के एक व्यक्ति ने पिछले दिनों लगातार नौ दिन तक नवरात्रि पर्व पर व्रत रखा और भवानी का जाप किया । उसे आशा थी कि भवानी उसे प्रत्यक्ष दर्शन देंगी, किन्तु भवानी के दर्शन न होने पर उसने अपनी गरदन में छुरा भौंक लिया और मर गया । उसे यह भी विश्वास था कि दुर्गा भवानी ऐसे मौके पर दर्शन देकर हत्या करने से रोक देगी ।

भगवान को देखने के लिए

आगरा में एक बाईस वर्षीय व्यक्ति श्रीनिवास ने रेणुका गाँव के पास परशुराम मंदिर में मूर्ति के आगे अपनी गर्दन काटकर चढ़ा दी । श्रीनिवास की तुरन्त मृत्यु हो गई । एक प्रत्यक्षदर्शी के अनुसार उक्त युवक ने पहले छाती तथा सिर में से खून निकाल कर मूर्ति पर छींटे दिये थे । यह व्यक्ति भगवान के दर्शन करना चाहता था ।

अनोखी अग्नि-समाधि

एक ६० वर्षीय साधु ने पिपरिया के निकट एक गाँव में 'अग्नि समाधि' लेकर प्राण त्याग कर दिये । कहते हैं पचमढ़ी सड़क पर एक निर्जन स्थान पर रहने वाले उक्त साधु ने दो दिन पूर्व अपने हाथों से चिता स्वयं अपनी झोंपड़ी के सामने तैयार की और विभिन्न प्रकार की धार्मिक क्रियाएँ करने एवं भजन-पूजन के पश्चात् उसने चिता में आग लगा दी । जब चिता धू-धू करके तेजी से जलने लगी तब वह लपलपाती लपटों में कूद पड़ा । थोड़ी देर में ही उसका शरीर राख हो गया ।

मौन स्थायी रखने के लिए

वाराणसी के मुहल्ला कबीर चौरा के एक मन्दिर में रह रहे साधु ने अपनी जीभ काट कर मन्दिर की देवी पर चढ़ा दी । बताया जाता है कि वह साधु बहुत दिनों से मौन था । उससे बोलने के लिये बहुत आग्रह किया गया । इससे परेशान होकर उसने अपनी जिह्वा ही काट ली जिससे फिर कभी बोलने के लिये उससे कोई आग्रह ही न करे ।

टोने के लिए बालक की भेंट

समाचार है कि बाराबंकी के थाना मलार क्षेत्र के ग्राम खेतासराय में एक धोबी अपने डेढ़ वर्षीय बालक को जान से मारकर उसे अपने टोने के काम में लाया । जब उसका बालक अपनी माँ के पास सो रहा था तो उसे उठाकर उत्तर चौराहे में उसका बलिदान कर दिया । माता को पता चला और रात्रि को ही खोज होनी शुरू हो गयी । दूसरे दिन चौराहे पर उस बालक का कटा हुआ सिर, गोबर की एक मूर्ति और कुछ फूल पड़े पाये गये ।

देवी-देवता और जादू-टोने के नाम पर फैले हुये अन्धविश्वास के फन्दे में कितने भोले लोगों को अपने धन, धर्म, प्राण, शरीर से हाथ धोना पड़ता है, इसका कुछ परिचय ऊपर के समाचारों में पाया जा सकता है । इस फेर में पड़े हुए लोगों को दण्ड और पश्चाताप के अतिरिक्त और मिल भी क्या सकता है ? आवश्यकता इस बात की है कि यह भ्रम-जंजाल मिटे, जिससे प्रेरित होकर इस प्रकार के अनर्थ कर बैठते हैं ।

दो वर्ष बाद शव निकाला गया

अमृतसर, पुलिस ने लोहगढ़ दरवाजा के निकट अन्ध-विद्यालय के सामने बाबा भूरी वाले के डेरे से एक सन्त का शव उठाकर सुलताना पिण्ड के बाहर एक समाधि में दफना दिया ।

बताया गया है कि चीलमण्डी के पाल नामक एक व्यक्ति ने बाबा भूरी वाला से कहा कि उसका गुरु बाबा गंगाप्रसाद जिसका दो वर्ष पूर्व देहान्त हो गया था, उसे स्वप्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में मिला है और उसने कहा है कि यदि बाबा भूरी वाले उसे समाधि से निकालें तो वह कुछ दिनों के बाद पुन: जीवित हो जायेंगे । अत: बाबा गंगा प्रसाद के शव को समाधि से निकाला गया । अन्धविश्वासी लोगों ने इस शव पर चढ़ावे-चढ़ाने शुरू कर दिये । हजारों लोग वहाँ आने लगे और १० हजार रुपये चढ़ावा चढ़ गया । पुलिस ने सूचना मिलने पर उक्त शव को पुन: समाधि में पहुँचा दिया ।

बाबा भूरी वाले ने पूछने पर बताया कि उसे भ्रमित किया गया अन्यथा इसमें वास्तविकता कुछ भी न थी ।

अविवेक का दुष्परिणाम

लौकही (दरभंगा) में जब एक बकरी बीमार पड़ी तब एक नीम-हकीम महाशय ने इलाज का यह नुस्खा बतलाया कि बकरी के सींगों में कपड़ा बाँधकर उसमें आग लगा दी जाये । आव देखा न ताव और बकरी का मालिक उसी वक्त हकीम साहब का हुक्म बजा लाया । बेचारी बकरी इधर-उधर भागने लगी और जगह-जगह अपने सींग रगड़ने लगी । परिणाम-स्वरूप तीन घरों में आग लग गयी ।

भूत-प्रेत वाले मकानों से कमाई

डेवाल (इंग्लैण्ड) भोले लोगों को बहकाकर उनके समाचार है अन्धविश्वास का लाभ उठाने और अपना उल्लू सीधा करने में यहाँ की एक फर्म ने खूब नाम कमाया है ।

यह फर्म भूत-प्रेत रहने की किंवदन्ती फैला कर उन मकानों में बसने वाले किरायेदारों को डरा कर सस्ते मूल्य में मकान खरीद लेती है और फिर ग्राहकों को उसी में वरदान देने वाला देवता रहने की बात बताकर मुँहमाँगे दामों पर उसे बेच देती है । इस प्रकार सिर्फ बातूनी जमा खर्च और कुछ ओझा तन्त-मन्त्र वेत्ताओं को साँठ-गाँठ करके उसने थोड़े ही दिनों में प्रचुर सम्पत्ति कमा ली है ।

भूत-प्रेत या शरारत

नई दिल्ली, लोदी रोड की एक दुकान १५ दिन में पाँच बार आग लग जाने से दुकान मालिक दीवानसिंह की परेशानी बहुत बढ़ गयी । बार-बार आग लगने के रहस्य का पता न लगने पर उसने पुलिस को सूचना दी साथ ही दकियानूसियों के कहने पर ओझा, मुल्ला-मौलिवियों का भी सहारा लिया ।

दुकान के निकट मिट्टी के तेल का भीगा कपड़ा व जली हुई दियासलाइयाँ पाकर पुलिस का विश्वास है कि यह किसी की शरारत है । अन्धविश्वास से लाभ उठाने वाले इन शरारतियों को पकड़ने की पुलिस चेष्टा कर रही है ।

तेली की खोपड़ी काटकर पूजा

लखीमपुर, निघासन थानान्तर्गत दरेरी ग्राम से प्राप्त एक समाचार के अनुसार उक्त गाँव के निवासी गोसाई नाउती को कहीं यह मालूम हुआ कि यदि किसी तेली का सिर लेकर उसकी एक मास पूजा की जाये तो वह बोलने लगता है और भूत, वर्तमान, भविष्य सभी बता देता है । कहा जाता है कि उसने एक तेली का सिर काट कर उसकी पूजा आरम्भ कर दी । पुलिस ने इसकी सूचना पाते ही छापा मारा और सिर बरामद कर चार व्यक्तियों को भी गिरफ्तार कर लिया है सिर की ३० दिन तक पूजा हो चुकी थी ।

जादू-टोने के सन्देह में हत्या

तुमसर (म.प्र.), पुलिस ने क्षेत्र के मुर्री नामक गाँव से धन्नू नामक एक धीवर युवक को अपनी सौतेली माँ की हत्या करने के सन्देह में भारतीय दण्ड संहिता की धारा ३०२ के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया है ।

विदित हुआ है कि कथित अपराधी को अपनी विमाता पर सन्देह था कि वह जादू-टोना किया करती है । अस्तु उसने अंवसर पाकर अपने दो अन्य साथियों की सहायता से सब्बल द्वारा उसकी हत्या करके शव निकट ही एक खाद के गड्ढे में दफना दिया ।

बदबू फैलने से शव का पता चला और पुलिस ने उक्त अपराधी की गिरफ्तारी की ।

विमाता की आयु ३५ वर्ष और नाम गौराबाई बतलाया जाता है ।

गुरु चेला चोर-उचक्के

खोरवरा (म. प्र.), यहाँ एक करामाती बाबा अपने चेले समेत पुलिस को तलाशी लेने आते देख भाग खड़ा हुआ और रातों-रात गायब हो गया तो लोगों को बड़ी हैरत का सामना करना पड़ा ।

बाबा अपने एक चेले के साथ कुछ दिन से यहाँ रहने लगा था । उसका चेला अपने उस्ताद की प्रशंसा और सिद्धियों की लम्बी चौड़ी डींगें हाँककर बेचारे भोले लोगों को बहकाया करता था ।

पुलिस उसकी तलाश करते हुए पकड़ने आयी तो पता चला कि बाबा कितनी ही चोरियों में सजा काट चुका था और चेला की गिरहकटी में तलाश थी ।

छम-छम—झम-झम

गया (बिहार), कर्षी थाना के अन्तर्गत माली नामक गाँव में एक किसान की छत पर रात के समय छम-छम, झम-झम की पायल बजने जैसी और किसी के नाचने जैसी आवाज आती थी ।

बेचारा किसान कई दिन तक ओझाओं के पास घूमता रहा । ओझा कहते थे कि चुड़ैलों का अखाड़ा जम गया है, यह तुम सबको मारकर ही हटेंगी । डरे हुए किसान से उन्होंने बहुत पैसा इस प्रकार ऐंठ भी लिया ।

एक दिन गाँव के समझदार लोगों ने पता लगाने के उद्देश्य से छिपकर रात को पहरा लगाया तो प्रतीत हुआ कि दो गुण्डे रात को इस प्रकार का ऊधम मचाकर बेचारे किसान को डरा रहे हैं । पकड़ने का प्रयत्न किये जाने पर गुण्डे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाग खड़े हुए और उस दिन से छम-छम, झम-झम की आवाज भी बन्द हो गई । कहा जाता है कि यह ठगने वाले ओझा का षड्यन्त्र था ।

अन्धविश्वास—भारत की एक भयानक बीमारी

काले कौओं का त्यौहार

नैनीताल, पर्वतीय क्षेत्र के बच्चों द्वारा 'काले कौओं' का त्यौहार मनाया गया ।

भारी महँगाई तथा आटा, घी, डालडा, गुड़ इत्यादि के अभाव से इस अवसर पर बनाये जाने वाले पकवान माता-पिता अपने बच्चों की इच्छानुसार न बना सके ।

बच्चों ने कौओं को आमंत्रित करते हुए केवल अपनी खुशहाली के लिये वरदान माँगे वरन् उन्होंने कौओं से यह भी प्रार्थना की कि वे देश में व्याप्त अभाव व महँगाई को दूर करने में सहायक हों ताकि वह फिर उत्साहपूर्वक अपने परम्परागत त्योहारों को मना सकें ।

काले कौओं का त्योहार पर्वतीय क्षेत्रों में बच्चों द्वारा मकर संक्रांति से अगले दिन प्रातः मनाया जाता है । कई क्षेत्रों में संक्रांति को यह त्योहार मना लिया जाता है ।

पाप निवारण का प्रमाणपत्र

मन्दसौर, अन्यत्र कहीं हो न हो किन्तु चित्तौड़गढ़ जिले के गौतमेश्वर नामक तीर्थ में ऐसी व्यवस्था है जहाँ से मनुष्य के पापों के निवारण का सर्टिफिकेट वहाँ के अमीन, महन्त और पुजारी के संयुक्त हस्ताक्षरों से दक्षिणा जमा करके दे दिया जाता है, जिसमें छपा रहता है कि अमुक व्यक्ति ने अमुक राशि जमा कर गौतमेश्वर मन्दाकिनी गंगा में स्नान किया । प्रायश्चित निवारण हुआ । यह फार्म इन्हें दिया जाता है । इनके सिर पर कोई दोष नहीं रहा है सो इन्हें जाति में लेने से इन्कार नहीं करना ।

पागल या भक्त

जूनागढ़, गिरनार पहाड़ पर गत रविवार को अम्बाजी मन्दिर में एक भक्त पागल हो गया ।

२४ वर्षीय छगन भाई देवी के दर्शन करने के लिए आनन्द से आया था । मन्दिर में जाने के बाद उसने उन्मत्त अवस्था में नाचना और गाना शुरू कर दिया । थोड़ी देर बाद उसने त्रिशूल उठा लिया और मन्दिर के पुजारी धनी गिरजी पर हमला किया । इतना भी शायद काफी नहीं था और उसने अपने साथ के तीर्थयात्रियों को काटना शुरू कर दिया । एक की नाक तो उसने लगभग कतर ही डाली ।

इसके बाद नाचता-गाता उछलता वह मन्दिर से बाहर घाटी में कूद गया जहाँ से पुलिस ने उसका शव बरामद किया ।

थोड़ी देर बाद उसने त्रिशूल उठा लिया और मन्दिर के पुजारी धनी गिरजी पर हमला किया ।

साधू का शव

अमृतसर, बाबा भौरी वाला नाम के एक साधु को सपना हुआ और दूसरे दिन उसने चैतिबन्द गाँव में जाकर एक मरे हुए साधु की समाधि खोद कर शव निकाल लिया तथा बाद में इस शव को लाकर उसने मन्दिर में रख दिया । आस-पास की जनता इस शव को जो ठठरी मात्र है बड़ी श्रद्धा से पूज रही है और चढ़ावा चढ़ा रही है । लेकिन कुछ अन्य साधुओं तथा सम्भ्रान्त व्यक्तियों ने समाधि खोद कर शव निकाले जाने और उसे मन्दिर में रहने पर आपत्ति की है । आशंका प्रकट की जा रही है कि इस बात पर दोनों पक्षों में कोई झगड़ा न हो जाये ।

स्वप्न में आदेश मिला था

हजारीबाग, पिछले दिन इस जिले के अन्तर्गत गोला ग्राम पंचायत के सभी लोग आश्चर्यचकित रह गये जब वहाँ से सौ मील पश्चिम बंगाल में स्थित आद्रा नगर के एक व्यक्ति ने आकर गोला के मुखिया श्री किशोरी प्रसाद से अपना चरणजल देने का आग्रह किया ।

पूछे जाने पर उक्त व्यक्ति ने बताया कि वह बहुत दिनों से पेट की बीमारी से पीड़ित है, जिसके लिए 'बाबा वैद्यनाथ' का आशीर्वाद प्राप्त करने को वह वैद्यनाथ धाम गया था । वहाँ सात दिनों तक रहने के पश्चात् बाबा ने उसे स्वप्न में आदेश दिया कि गोला के मुखिया किशोरी प्रसाद के चरण-जल का पान करो तो कष्ट का निवारण होगा ।

आदेशानुसार उक्त व्यक्ति वैद्यनाथ धाम से अपने घर आद्रा पैदल गया और आद्रा से एक सौ मील की दूरी तय करके पैदल ही गोला पहुँचा और अपना वांछित कार्य करके पैदल ही आद्रा लौटा ।

बालकों के बाल काट लिए

कानपुर, ज्ञात हुआ है कि शास्त्री नगर के तीन बालकों को कोई व्यक्ति अमरूद खिलाने के बहाने बहकाकर एलेन फारेस्ट ले गया और वहाँ उनके सिर से बाल काट कर छोड़ दिया । तीनों बालक कई घण्टे पश्चात् भटकते हुए अपने घर वापस आये ।

बताया जाता है कि उषा व विजय कुमार दो दस वर्षीय बालक और एक आठ वर्षीय बालिका प्रातः काल श्रम हितकारी केन्द्र, शास्त्रीनगर में खेल रहे थे । थोड़ी देर बाद एक व्यक्ति आया और उनको अमरूद देने का लालच दे अपने साथ एलेन फारेस्ट ले गया और आगे के बाल तथा चोटी काटकर छोड़ दिया ।

ज्ञातव्य है कि शास्त्रीनगर में ही कुछ मास पूर्व ऐसी एक घटना और भी घटित हुई थी जिसमें एक बालक के बाल काटकर उसे छोड़ दिया गया था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संदेह है कि यह कार्य अन्धविश्वासी लोगों का है जो टोना-टोटके के लिए बालकों के बाल काट लेते हैं । पुलिस मामले की जाँच कर रही है ।

पुत्र के अपशकुन का प्रायश्चित

उरई, पता चला है कि ग्राम मुहम्मदाबाद में एक लड़के के अपशकुन का प्रायश्चित उसके पिता नत्थू को करना पड़ा ।

कहते हैं कि दयाराम उरई बाजार जा रहा था । एक लड़की ने छींक मारदी जिसका उलहना लड़की को दिया और इसी बीच लड़की का संरक्षक ७-८ लोगों को लेकर आया और दयाराम के न होने पर उसने उसके पिता को पीट दिया ।

मन्दिर में मूर्ति के समक्ष आत्महत्या

ग्वालियर, पूरन नामक एक व्यक्ति ने स्थानीय फालके बाजार में स्थित एक मन्दिर में ईश्वर की प्रतिमाओं के समक्ष अपने गले पर तेज धार वाला चाकू चलाकर आत्महत्या करली । मृत व्यक्ति स्थानीय माधवगंज बस्ती का निवासी बताया गया है । मृतक को किसी ने यह विश्वास दिलाया था कि गला काटते समय भगवान प्रकट होकर वरदान माँगने को कहेंगे । पर वरदान तो नहीं मिला जान अवश्य चली गई ।

माँ ने बच्चे का कान काट डाला

निर्मली, (बिहार), मुखिया नामक एक मूर्ख महिला ने अन्धविश्वास के वशीभूत होकर अपने तीन वर्षीय पुत्र का बायाँ कान काट कर काली को चढ़ा दिया ।

उस स्त्री को तीस वर्ष की आयु में यह पहला ही पुत्र हुआ था, किन्तु जन्म के कुछ दिन बाद से ही वह रोगी रहने लगा और तीन साल का होते-होते बहुत ही अस्वस्थ हो गया और उसके बचने की कोई आशा न रही ।

मूर्ख स्त्री ने टोना-टोटकों और ओझाओं का सहारा लेना शुरू किया । एक ओझा ने उसे परामर्श दिया कि वह अपने पुत्र का कान देवी को अर्पण कर दे तो वह देवी की कृपा से अच्छा हो जायेगा । समर्पण संस्कार स्वयं ओझा ने कराने का निश्चय किया ।

ओझा ने पूजा के बहाने उस महिला ने बहुत-सा धन और सामान ऐंठा और बच्चे की समर्पण क्रिया के लिए बच्चे का बायाँ कान काट कर देवी को भेंट कर देने को प्रेरित किया । अन्धविश्वासिनी ने माँ की ममता पर पैर रख कर एक तेज छुरे से बच्चे का कान काट देवी को भेंट कर दिया ।

संतान के लिए पड़ोसी का मकान जला दिया

कुनाली (बिहार), विलासो नाम की एक स्त्री को अभी हाल ही में पुलिस ने पड़ोसी के घर में आग लगाने के अभियोग में गिरफ्तार कर लिया है ।

विलासो ने अपने बयान में बतलाया है कि उसने यह सब सन्तान प्राप्ति के लिए किया है । विवाह के दस साल बीत जाने पर भी उसको कोई सन्तान नहीं हुई । उसने इसका उपाय एक ओझा से पूछा । ओझा ने उसे पड़ोसी के घर में आग लगा कर उसकी लपटों में जौ की आहुति देने को कहा ।

ओझा को भी गिरफ्तार किये जाने पर एक और रहस्य का पता चला है । बताया जाता है कि विलासो की सन्तान प्राप्ति की इच्छा पूरी करने का उपाय बताने वाले ओझा से एक अन्य ग्रामीण, जिसका कि नाम रामधन बताया जाता है, ने यह कहा कि सन्तान प्राप्ति के उपाय रूप में वह उक्त पड़ोसी के मकान में आग लगवा दे । उस पड़ोसी से रामधन की दुश्मनी चली आती थी । रामधन ने ओझा को इस काम के लिए पचास रुपये भी दिये बताया जाता है ।

रामधन भागा हुआ है और पुलिस उसे गिरफ्तार करने की कोशिश में है ।

ग्रह दशा उतारने को कन्या की हत्या

लखनऊ, बुरी ग्रह-दशा उतारने के लिए एक साधु जी महाराज के कहने पर रावतपुर में कहा जाता है कि चैतू नामक व्यक्ति ने एक ८ वर्षीय कन्या का गला घोटकर हत्या कर दी और उसके सिर के बाल काट कर हनुमान जी पर चढ़ा दिये ।

कहते हैं कि चैतू ने कन्या की हत्या करके उसकी लाश को एक तालाब में फेंक दिया था जिसे पुलिस ने बरामद करके पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया है ।

कन्या के सिर के बाल कटे पाये गये हैं और उसके शरीर से एक हसली व उसके पैर के लच्छे भी नदारद हैं । चैतू को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया है ।

छह माह के बालक की बलि

आगरा, छः मास के बालक को पुत्र प्राप्ति के हेतु कुँए में भेंट चढ़ाने के सन्देह में फतेहपुर सीकरी के जाजऊ गाँव की १८ वर्षीय युवती जलदेवी और उसके भाई श्याम को सेशन जज की अदालत से सबूत के अभाव में रिहा कर दिया गया ।

इस्तगासे के अनुसार दोनों भाई-बहिन साथ ही साथ रह रहे थे कि उनके घर शान्ति नामक एक पड़ौसिन अपने छह महीने के नाती को लेकर आयी । थोड़ी देर बाद बैजू नामक एक लड़की ने शान्ति को बतलाया कि एक औरत दरवाजे पर खड़ी बालक को मँगा रही है, उसे घर पर दूध पिलाने के लिए बुलाया गया है । इस पर शान्ति ने बालक को देने से मना कर दिया तो जलदेवी ने शान्ति से लेकर बालक द्वार पर खड़ी उस औरत को दे दिया । इसके बाद बालक लापता हो गया और दूसरे दिन उसका शव कुएँ में पड़ा पाया गया । वह बालक जलदेवी के रिश्ते का ही था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुत्र प्राप्ति के लिए बालिका की बलि

कानपुर, स्थानीय जूही लेबर कालौनी निवासी जकीरून्निसा नामक २५ वर्षीय युवती द्वारा पुत्र प्राप्ति हेतु अपने पड़ोसी श्री रंगनरायन मालवीय की ८ वर्षीया पुत्री कुमारी मीरा की बलि देने हेतु गत १८ नवम्बर को सायंकाल चाकू से उसकी निर्दयतापूर्वक हत्या किये जाने के रोमांचकारी काण्ड के सम्बन्ध में उसके पति मोहम्मद शरीफ, उसकी बहिन वकीलनुन्निसा व बहिनोई महबूबअली (रिक्शा चालक) के अतिरिक्त उसके चाचा हामिद अली (रोडवेज बस ड्राइवर) को भी बालिका की लाश छिपाने के षड्यन्त्र में गिरफ्तार कर लिया गया है ।

हत्याकाण्ड के प्रथम चिह्नस्वरूप खेत में बालिका की लाश मिलने के उपरान्त पास ही खेत में टूटे हुए एक घड़े के खप्पर में लाल रक्त से लथपथ कपड़े के टुकड़े पाए गये । तदुपरान्त पुलिस द्वारा कुमारी मीरा (मृतक) के पड़ौस में रहने वाली सहेली कुमारी वसीमुन (७ वर्षीया) जो कि अभियुक्ता जकीरुन्निसा की बहिन श्रीमती वकीलनुन्निसा की पुत्री है—द्वारा पूछ-ताछ के दौरान पुलिस के सामने हत्या-काण्ड का आँखों देखा हाल वर्णन किया गया ।

तदुपरान्त अभियुक्ता जकीरुन्निसा ने भी पुलिस के समक्ष अपना अपराध स्वीकार करते हुए यह भी बताया कि इसके पूर्व दो अन्य बालिकाओं को विभिन्न दिनों में उसने रोका था किन्तु लड़कियों की दुँढ़ाई होने के कारण उसे मौका न मिल सका कि उन्हें बलि चढ़ा सके और अन्ततः उसे बालिकाओं को छोड़ देना पड़ा था ।

उल्लेखनीय है कि जकीरुन्निसा को किसी मौलवी ने बताया था कि यदि वह किसी बालिका की बलि चढ़ा देगी तो उसको निश्चय ही पुत्र की प्राप्ति होगी । किन्तु लड़कियों की दुँढ़ाई होने के कारण उसे मौका न मिल सका

साहस द्वारा अन्धविश्वास का भण्डाफोड़

मीरपुर रेलवे स्टेशन से जाम्बई तक सड़क जाती है, स्टेशन से पाँच मील दूर सड़क के किनारे एक कुआँ और एक पीपल का पेड़ है, आस-पास कोई बस्ती नहीं है । इस पीपल के बारे में बहुत दिनों से किंवदन्ती प्रचलित थी कि उसमें कोई भयानक भूत रहता है और अक्सर राहगीरों को डराया करता है । कइयों की तो बाद में मृत्यु तक हो गई थी । इससे जिन लोगों को मालूम था वे रात में आठ बजे के बाद वहाँ से भूलकर भी न निकलते थे ।

सच बात यह थी कि उस पीपल में भूटिया नामक इस क्षेत्र का एक कंजड़ विचित्र वेश-भूषा बना करके बैठा करता था । रात में कोई अकेला या दो राहगीर गुजरते तो वह उन्हें डरा देता जिससे लोग भय से अपना सामान छोड़कर भाग जाते । भूटिया वह सामान उठाकर अपने घर ले जाता । यह धन्धा लगभग पाँच वर्ष से इसी तरह चल रहा था ।

एक दिन एक अहीर इसी तरह डरकर अपना झोला छोड़ गया । गाँव समीप ही था । घर पहुँचा तो उसे मालूम पड़ा कि झोले में कोई कीमती सामान भी पड़ा था । वह उन्हीं पैरों लालटेन और दो साथी लेकर वहाँ आया पर न तो वहाँ कोई भूत दिखायी दिया, न झोला । इससे उसे निश्चय हो गया कि वहाँ कोई भूत नहीं, बदमाश आता है ।

दूसरे दिन अहीर फिर उसी समय एक मजबूत लाठी लेकर उस स्थान पर पहुँचा । कंजड़ ने कोई नया राहगीर समझा और भयानक आवाज करता हुआ उसकी ओर लपका । अहीर ने आदमी की आवाज पहचान ली तो उसकी हिम्मत और भी बढ़ गयी । बढ़कर जोर की लाठी कंजड़ की खोपड़ी में दे मारी । कहा ले आज "भूत का भूत आ गया ।" कंजड़ ने पहले तो भागना चाहा पर उसने दौड़कर उसे पकड़ लिया और पास के गाँव ले गया जहाँ उसकी और अच्छी पिटाई की गयी । उसने कबूल किया कि वही लोगों को डराया करता था । अहीर का झोला भी उसने दे दिया । बाद में उसे पुलिस के हवाले कर दिया गया ।

आप ऐसे अन्धविश्वासों से बचकर रहें

(१) पेटलवाद (गुज) की निवासिनी एक निःसन्तान स्त्री को खेड़ा के एक ज्योतिषी ने बताया कि यदि वह किसी एक व्यक्ति को मारकर अम्बाजी की मूर्ति पर चढ़ा दे तो वह सन्तानवती हो सकती है । स्त्री किसी बड़े आदमी को तो नहीं ला सकी किसी गरीब का बच्चा मिल गया । उसे ही पकड़ लायी और काटकर अम्बाजी पर चढ़ा दिया । पुलिस ने उस ज्योतिषी और स्त्री दोनों को पकड़ कर जेल भेज दिया । बाद में उन्हें आजीवन कैद की सजा दी गयी ।

(२) जबलपुर के कठवा ग्राम के ललुवा नामक काछी ने देवी को प्रसन्न करके मनचाहा वरदान पाने के लिये अपनी जीभ काट कर चढ़ा दी, न कहीं देवी प्रकट हुई और न कोई वरदान ही मिला । देवी जी भक्त की कटी हुई जीभ भी न जोड़ सकीं । इसी समय एक मंत्री जी गाँव के दौरे पर आये थे । बाद में उन्होंने उक्त काछी के इलाज की व्यवस्था करायी ।

(३) रोमन बादशाह विटैलियस जिसके बारे में कहा जाता है कि उसकी एक बार की खुराक में ३ लाख ७५ हजार डालर का खर्च बैठता था, ने एक ज्योतिषी से दीर्घ जीवन का उपाय पूछा । ज्योतिषी ने उसे बताया कि यदि वह अपनी माता को मार डाले तो उनकी शेष आयु भी उसे मिल सकती है । विटैलियस ने ऐसा ही किया । अपने माता-पिता की हत्या कर दी, बाद में इसी सोच में स्वयं भी मर गया ।

(४) इटली के भविष्यवेत्ता डॉ. एलिपो ने कहा, "१४ जुलाई, १९६२ को विश्व प्रलय हो जायगी । उसमें अंधाधुन्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्वनाश होगा'' इस भविष्यवाणी को लेकर पूर्व और पश्चिम सभी देशों में गम्भीर प्रतिक्रिया हुई । रोम में कई युवकों ने केवल इसलिए आत्महत्या कर डाली कि वे इस विनाश-लीला का दारुण दृश्य बर्दाश्त न कर सकेंगे । ऐसी ही सैकड़ों घटनाएँ दूसरे देशों में भी हुईं । उस दिन प्रलय-वलय तो कुछ नहीं हुई, हाँ उस भविष्यवाणी ने कितनी ही स्त्रियों और बच्चों को विधवा तथा अनाथ कर दिया ।

(५) अफ्रीका के यूगाण्डा राज्य के शासक मतेसा की माता नमेसोल को एक बार दाँतों का जोरदार दर्द पड़ा । राजा का दवा की अपेक्षा ओझाओं पर अधिक विश्वास था । उधर ओझाओं की वूमा नगर के निवासियों से कुछ खटपट थी । दाँत का दर्द दूर करने के लिये ओझाओं को बुलाया गया । उन्होंने कहा यदि वूमा के सारे निवासियों को मार डाला जाय तो दर्द ठीक हो सकता है । सनकी राजा ने २५ हजार स्त्री पुरुषों को पकड़वाकर विक्टोरिया झील में डुबवा दिया, फिर भी बुढ़िया का दाँत का दर्द अच्छा न हुआ ।

(६) मध्यप्रदेश के एक गाँव खड़ोहरा में एक किसान परिवार में एक बाल-विधवा भी पल रही थी । विधवा के भाई की, जो घर का मालिक था, कोई सन्तान जीवित न रहती थी । गाँव के पण्डितों से उसने कई तरह के अनुष्ठान कराये फिर भी कोई लाभ न हुआ । किसान ने इस पर पंडितों को बहुत कोसा । दुष्ट पण्डितों को बचाव के लिए कुछ न मिला तो कह दिया तेरे घर में चुड़ैल रहती है इसी के कारण सन्तान जीवित नहीं रहती जब तक तेरी विधवा बहिन घर में रहेगी तब तक अनुष्ठान भी सफल न होंगे ।

बताते हैं उस असहाय नारी को दरवाजे के एक पेड़ के साथ बाँध कर बुरी तरह पीटा गया । गाँव के समझदार लोग जब तक थाने पहुँचे तब तक उसे जान से ही मार दिया गया । बाद में उस किसान सहित ५ पण्डितों का भी चालान किया गया और उन्हें २०-२० वर्ष की सजा दी गई ।

इन अन्धविश्वासों का अन्त किया जाय

जो समाज अन्धविश्वासों से जितना अधिक मुक्त होता है वह उतना ही शक्तिशाली और प्रगतिशील होता है । इसका कारण यह होता है कि उसका मन-मस्तिष्क किन्हीं अनहोनी बातों का गुलाम नहीं रहता । वह अधिक से अधिक यथार्थ में रह रहा है, यथार्थ के ही प्रकाश में सोचता, देखता और काम करता है । वह उपस्थित सत्य को छोड़कर किसी काल्पनिक आशा में, अन्धकार में नहीं भटकता । इस प्रकार यथार्थ बर्ताव करने से उसके फल का भागी बनता है ।

अनहोनी बातों में विश्वास करने वाला यथार्थ से विमुख होकर भ्रम में भटकता रहता है जिससे उद्देश्य के अनुरूप प्रयत्न न होने से शत-प्रतिशत असफलता ही हाथ आती है । मानिये जैसे घर में कोई बच्चा बीमार है तो यह निश्चित है कि उसकी बीमारी का कोई आधार है और आधार उसके शरीर में ही है । इसके लिए सीधा-सा उपाय यह है कि बच्चे को किसी अच्छे चिकित्सक को दिखाया जाय, ठीक प्रकार से उसका उपचार कराया जाय । किन्तु एक अन्धविश्वासी करता यह है कि उसे किसी ओझा अथवा झाड़-फूँक करने वाले को दिखलायेगा और उसके निर्देशानुसार टोटका-टोना करेगा । किसी प्रकार की कोई औषधि नहीं देगा जो बच्चे के शरीर में जाकर रोग के कीटाणुओं को मारे और शरीर की जीवनीशक्ति को सहायता पहुँचाये । इस प्रतिकूल प्रयत्न का फल यह होता है कि बच्चे की बीमारी बढ़ जाती है और कभी-कभी वह मर भी जाता है ।

ऐसा होने पर भी अन्धविश्वासी की आँख नहीं खुलती । वह बच्चे के मरने का दोष अपनी मूढ़ता को न देकर यह सोच लेता है कि अवश्य ही क्रियाकाण्ड करने में उसने कहीं भूल की है जिससे रुष्ट होकर अधिष्ठिता देवता ने उसके बच्चे को हर लिया है ।

असम्भाव्य का दास होने से अन्धविश्वासी का ध्यान किसी बात की यथार्थता पर जाता ही नहीं वह हर बात का हेतु किसी न किसी देवी-देवता अथवा भूत-प्रेत की कृपा-अकृपा ही मानता है । इसीलिये आवश्यक प्रयत्न करने के बजाय अमुक देवी-देवता अथवा भूत-प्रेत को प्रसन्न करने का प्रयत्न करने लगता है । साथ ही वह यह भी विश्वास रखता है कि यदि उसने उक्त देवी-देवता अथवा भूत-प्रेत की प्रसन्नता को छोड़कर कोई अन्य प्रयत्न किया तो वह और भी अप्रसन्न हो जायेगा, तब न जाने क्या से क्या करदे । जिससे कभी-कभी इच्छा न होने पर भी यथार्थ उपाय नहीं कर पाता ।

कभी-कभी कोई आडम्बर और उपचार दोनों करने का साहस भी करता है । तब यदि कोई अनुकूल फल निकला है तो भी वह इसका श्रेय आडम्बर को ही देता है यथार्थ उपचार को नहीं । और यदि किसी कारण से प्रतिकूल सामने आता है तो भी वह उसका दोष किसी आडम्बर को न देकर अपने को अथवा वास्तविक उपचार को देगा । इस प्रकार उसकी मानसिक गुलामी उसे यथार्थ के प्रकाश में सोचने ही नहीं देती ।

टोटकों के सम्बन्ध में अन्धविश्वास उसे जीवन की मोटी से मोटी बातों पर भी विचार कर सकने की बुद्धि से वंचित कर देता है । जैसे मानिए किसी अन्धविश्वासी के बच्चे को सर्दी लग गयी है और बुखार आ गया है तो पहले वह उस पर मिर्च-भूसी आदि का उतारा-चढ़ावा करेगा और जब उसका कोई फल नहीं होगा तो किसी वैद्य-हकीम के पास जाने के बजाय किसी ढोंगी-स्याने के पास दौड़ेगा और उसका बताया हुआ मूढ़तापूर्ण उपाय काम में लायेगा । मानिये उस स्याने ने उससे यह कह दिया कि घटिया घाट के कपाली बाबा ने इसे दबोच रखा है इसीलिए वह आधी रात को उस घाट पर बच्चे को स्नान कराये । इस पर अन्धविश्वासी यह न सोचेगा कि इस बुखार की हालत में यदि रात को ठण्डे पानी में स्नान करायेगा तो बच्चे का क्या हाल होगा ? वह उसे ले जाएगा और अपने मूर्ख गुरु के निर्देशानुसार आधी रात को बच्चे को नदी में गोते लगवा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देगा और उधर से डबलनिमोनिया या सन्निपात कराकर घर ले आयेगा । बच्चे के मर जाने पर अब्बल तो उस स्याने अथवा ओझे से कोई शिकायत नहीं करेगा, यदि डरते-डरते शिकायत करेगा भी तो चालाक ओझा उसे आँख दिखाता हुआ यह कहकर और भी भयभीत कर देगा कि यदि वह इस प्रकार अविश्वासपूर्ण बातें करेगा तो कपाली बाबा उसके दूसरे लड़के को भी पकड़ लेगा । बेचारा अन्धविश्वासी सहम जायेगा और अपने टूटते हुए विश्वास को फिर जमा लेगा ।

इस प्रकार नित्यप्रति अन्धविश्वासों के कारण न जाने कितने बच्चे और स्त्री-पुरुष कालकवलित होते रहते हैं । किन्तु फिर भी यह सब देखते-सुनते भी अन्धविश्वासी अपनी आँख नहीं खोलते । कुछ तो वे स्वयं ही अपने बौद्धिक गुलामी से मजबूर होते हैं दूसरे पेशावर ओझे-स्याने, पण्डित, पीर और मुल्ला उन्हें चेतने नहीं देते । चूँकि अधिकतर इन्हीं लोगों की पहुँच जनसाधारण तक होती है, वे उनमें पूरी तरह से घुले-मिले रहते हैं और उनकी मानसिक दुर्बलता को खूब अच्छी तरह से जानते हैं । इसलिए उनकी अविद्या और मूर्खता का लाभ उठाकर अच्छी तरह अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं ।

अन्धविश्वासों में छिपे खजानों को पाने का लोभ बड़ा भयंकर है । लोग उसके लिए जघन्य पाप करने में नहीं हिचकते और बाद में भेद खुलने पर बड़ी-बड़ी सजाएँ भोगते हैं । स्वप्न में यह देख लेने पर कि यदि वह कोई उपाय करे तो उन्हें धरती के नीचे छिपा उन्हीं के घर में बहुत-सा धन मिल जायेगा वे किसी उपायगीर के पास जायेंगे और कर्मकाण्ड पूछेंगे । इस प्रयत्न में हजारों घटनाएँ इस प्रकार की सुनने में आती ही रहती हैं कि छिपा धन पाने के लिए अमुक आदमी का बच्चा मारकर अमुक देवी-देवता या जिन्द-प्रेत को दे दिया है ।

धनलोलुप अन्धविश्वासी यह नहीं सोचता कि यदि स्वप्न की देखी-सुनी बात सच हो जाती तो अनेक बार उसने अपने सम्बन्धियों की मृत्यु के सपने देखे हैं, सन्तान होने और विवाह-शादियों के स्वप्न देखे हैं, किन्तु उनमें से कोई बात सत्य नहीं हुई है तब यह धन पाने वाली बात ही किस प्रकार सत्य हो सकती है ? एषणाओं के प्रति मनुष्य का अन्धविश्वास इतना सघन होता है कि वह उस पर विचार कर ही नहीं सकता, रचनात्मक ढंग से सोच ही नहीं सकता । धन के लिये उसकी अति कामना उसे आधा पागल बना देती है ।

हिन्दू-समाज में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अन्धविश्वास अधिक पाया जाता है । उसका कारण है कि एक तो वे निरक्षर होती हैं, दूसरे घर में घिरी रहने के कारण उन्हें सांसारिक ज्ञान भी कम होता है, तीसरे निर्बल प्रकृति और भीरु स्वभाव होने से वे किसी बात पर विश्वास भी जल्दी कर लेती हैं और डर भी शीघ्र जाती हैं ।

स्त्रियों में सबसे अधिक विश्वास पुत्रेषणा के सम्बन्ध में होता है । संयोगवश किसी स्त्री के सन्तान न होने से उसकी मूढ़ता पराकाष्ठा पर पहुँचती है और वह अन्धविश्वासों का भण्डार बन जाती है । पुत्र पाने के लिए वह उचित-अनुचित सभी प्रकार के उपाय करने को तैयार रहती है । उसकी इस ऐषणा से समाज के धूर्त, ठग, लम्पट और ओझे आदि संदिग्ध व्यक्ति खूब लाभ उठाते रहते हैं ।

अपनी अन्धविश्वासी प्रवृत्ति के कारण आज का मूढ़ हिन्दू-समाज यह नहीं सोच पाता कि घर में तेतीस कोटि देवता होने पर भी उसे विधर्मियों के पीर-पैगम्बरों को पूजने और उनको सिन्नी, चादर और निमाज चढ़ाने की क्या आवश्यकता है ? अब तो विजातीय सत्ता और आतंक भी समाप्त हो गया है । कोई ऐसी मजबूरी भी नहीं कि यह पीर-पैगम्बरों की पूजा-अर्चना करते ही जान बचे । किन्तु समाज में एक बार एक प्रथा बन जाने से वह बड़ी जल्दी एक गहरी जड़ पकड़ लेती है । फिर उदारता और सर्वसम्मान का सिद्धान्त होने से कोई धार्मिक शासन तो है नहीं । पूर्ण स्वतन्त्रता होने पर कोई भी किसी प्रकार के मूर्खतापूर्ण काम करने और उनका प्रचार करने को सर्वथा स्वतन्त्र है ।

समाज में जब तक कोई एक धर्म या अनुशासन नहीं होगा पूरे समाज की विचारधाराओं में एकरूपता नहीं आवेगी और धर्म के नाम पर कुरीतियों एवं विकृतियों के लिए कठोर नियम नहीं बनेंगे तब तक हिन्दू समाज से यह धार्मिक मूढ़ताएँ और अन्धविश्वास दूर नहीं होंगे । किन्तु धार्मिक उदारता और 'हजार मार्ग एक लक्ष्य' के सिद्धान्त वाले हिन्दू-समाज में धार्मिक अनुशासन किसी प्रकार लाया जाये ? यह एक विचारणीय प्रश्न है ।

अब जब तक इस प्रश्न का कोई समुचित उत्तर प्राप्त नहीं होता, हिन्दुओं को अपने व्यक्तिगत जीवन से इन थोथे अन्धविश्वासों को निकालते हुए सामाजिक एवं सामूहिक रूप से इसे दूर करने का प्रयत्न तो प्रारम्भ कर ही देना चाहिए । शीघ्र ही यदि यह अन्धविश्वासों का रोग समाज से दूर न हुआ तो समाज की उन्नति तो दूर अधःपतन की पुनरावृत्ति ही सम्भव दीखती है ।

मिथ्या मान्यताओं, भ्रान्त धारणाओं से क्या लाभ ?

आत्मा के स्वरूप और स्वभाव की दृष्टि से संसार के सभी लोग एक जैसे हैं । जीवन व्यवस्था, रहन-सहन, लोक-व्यवहार, धारणाएँ और मान्यताएँ बाह्य कलेवर हैं । इनका सदुपयोग और सार्थकता के मूल्यांकन का केवल एक ही आधार हो सकता है कि वे आत्म-लक्ष्य और व्यवस्थित जीवन प्राप्ति में कहाँ तक सहायक हैं । इसी का नाम विवेक है । जो आत्मा के लक्ष्य, सामाजिक या व्यक्तिगत व्यवस्था की दृष्टि से उपयुक्त और विवेकसंगत न हों ऐसी भ्रान्त धारणाओं और मिथ्या मान्यताओं से कोई लाभ नहीं होता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचार की दृष्टि से यदि कोई मान्यता सत्य है तो उसका स्वरूप सार्वभौमिक होना चाहिए और तथ्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए किन्तु हम देखते हैं कि अनेक ऐसे प्रचलन जो भारतवर्ष में हैं विदेशों में नहीं हैं । कितनी ही भ्रान्त धारणाएँ संसार के अन्य देशों और जातियों में हैं पर भारतवर्ष में नहीं । इनका तुलनात्मक अध्ययन करते समय उन्हीं को ग्रहणीय मानना चाहिए जो आत्मोत्थान में यथार्थतः सहायक हों और बुद्धिसंगत भी हों ।

उदाहरणार्थ, कोई कार्य या यात्रा प्रारम्भ करते समय छींक आ जाना भारतवर्ष में बहुत बुरा माना जाता है । छींक आना कोई असाधारण घटना नहीं है तो भी लोग उससे शुभाशुभ की कल्पना करते हैं । तत्वावेत्ताओं के मतानुसार छींक उदानस्थ प्राणों की स्वाभाविक क्रिया है । प्राण अपना कार्य समय-असमय के विचार की दृष्टि से नहीं वरन् स्वाभाविक प्रक्रिया जैसे करते हैं । इसलिए स्वाभाविक कार्य को यदि शुभ-अशुभ माना जाता है तो सूर्य, चन्द्रमा, तारे आदि के निकलने, उदय-अस्त को भी शुभ-अशुभ का कारण मानना चाहिए । छींक सर्दी-जुकाम या शरीर के स्वाभाविक धर्मानुसार आ जाती है, उससे अच्छे शकुन या बुरे शकुन का विचार करना कोई बुद्धिसंगत बात नहीं है । हमारी जानकारी में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब केवल छींक को अशुभ मानकर कोई यात्रा न करने से लोगों को बड़ी हानियाँ हुईं ।

कानपुर के श्री संतोषकुमार जी को मुकदमे की तारीख पर जाना था । नियत समय पर चलने लगे तो किसी लड़की ने छींक कर दी, पंडित जी छींक को बड़ा बुरा मानते थे । वे उस दिन कचहरी ही न गये जिससे उनका मुकदमा बर्खास्त कर दिया गया । दुबारा दायर करने में लगभग १००० हजार रुपये का खर्च पड़ा । तात्पर्य यह है कि एक छींक को अशुभ मानने की कीमत १००० रुपये चुकानी पड़ी । राजापुर के उमाशंकर चौबे छींक के कारण अस्पताल अपने मरीज का खाना ही न ले गये । उस दिन कोई देखरेख न कर सका, मरीज ने चुपचाप बाजार का खाना खा लिया जिससे एकाएक हालत बिगड़ गयी और उसकी मृत्यु हो गई । कलकत्ते के कृष्णचन्द्रदत्त नायडू की इसी कारण नौकरी चली गई । वहीं के प्रसिद्ध गल्ला व्यापारी हरिदास चेतनभाई को छींक के कारण केवल आधा घण्टा रुक जाने के कारण लाख का घाटा हुआ और वे बाजार में दिवालिया घोषित कर दिये गये ।

शरीर के स्वाभाविक धर्म को शुभाशुभ का लक्षण मानने की इस गलत परम्परा का समर्थन विदेशों में कहीं नहीं है । भारत में ही है, जहाँ वे इसके दुष्परिणाम भुगतते हैं । इसी प्रकार हमारे यहाँ बुधवार का दिन बुरा समझा जाता है । यदि सचमुच ही बुधवार का दिन बुरा है तो उसका अशुभ फल विदेशों में भी माना जाना चाहिए पर ऐसा नहीं होता । इसका यह मतलब नहीं कि और देशों में ऐसी भ्रान्त धारणाएँ हैं ही नहीं । अँग्रेज लोग शुक्रवार को अशुभ मानते हैं जबकि मुसलमानों के लिए शुक्रवार अति पवित्र होता है । 'साकलवा' जाति में मंगलवार का दिन इतना अशुभ माना जाता है कि उस दिन जन्म लेने वाले सभी शिशुओं की हत्या कर दी जाती है । अफ्रीका की 'त्शी' जाति के प्रत्येक सदस्य का अपना शुभ-अशुभ दिन होता है । जर्मनी में यह माना जाता है कि रविवार के दिन जन्मा शिशु मृतात्माओं का साक्षात्कार कर सकता है और अँधेरे में सब कुछ देख सकता है ।

'मंचोगा' जाति तेरह की संख्या बहुत शुभ मानती है । त्रयोदशी के दिन बड़े उत्सव मनाये जाते हैं । भारतवर्ष में १३वें दिन मृतक संस्कार किया जाता है और उससे मृतक की सद्गति की कामना की जाती है । पर अमरीका, इंग्लैण्ड तथा यूरोपियन देशों में तेरह संख्या बड़ी अनिष्टकारी मानी जाती है । ईसामसीह का अन्तिम भोज (लास्ट सपर) बारह शिष्यों के साथ हुआ और फिर उन्हें शूली पर लटका दिया गया । तब से वहाँ १३ की संख्या बड़ी अशुभ मानी जाती है । १३ व्यक्तियों को एक साथ भोजन पर कभी नहीं बैठाया जाता । फ्रांस में तो तेरह नम्बर का मकान ही नहीं मिलता । मकानों पर ११ के बाद १२ ए और १२ बी लिखकर १४ नम्बर डाल दिया जाता है । पी. एण्ड ओ. कम्पनी के सवारी जहाजों में भी इसी तरह १३ नम्बर का केबिन नहीं होता ।

तेरह की संख्या के इस अन्धविश्वास को एक अँग्रेज सेनापति जनरल राबर्टस ने अफगान युद्ध में जाने से पूर्व, तोड़कर असाधारण साहस का परिचय दिया । उसने बारह साथियों के साथ भोजन किया फिर भी युद्ध में बिना जखमी हुए विजय पायी । कोई भी इस तरह का स्वतन्त्र विचारक ऐसी मान्यताओं को गलत और भ्रमपूर्ण ही मानेगा । वैसे भी इनमें कोई सत्यता नहीं है ।

दाहिनी और बायीं आँख या भुजा फड़कने पर शुभा-शुभ की मान्यता भी असत्य और दकियानूसी है । यह मान्यता भी ऐसी ही है जैसी अँग्रेज दियासलाई की एक सलाई से तीन सिगरेटें जलाना दुर्भाग्यसूचक मानते हैं । बोयर युद्ध में एक बार किसी सैनिक ने एक सलाई जलाकर अपनी सिगरेट जलाई, दुश्मन ने देख लिया, दूसरी जलाते समय उसने निशाना साधा और तीसरी जलाते ही गोली मार दी । यह एक आकस्मिक घटना थी हमेशा तो ऐसा नहीं होता । पर आखिर लोगों के अविवेक को क्या कहा जाय ? आज भी अँग्रेज एक सलाई से तीन सिगरेटें नहीं जलाते ।

बिल्ली रास्ता काट जाय तो भारतीयों की आफत आ जाती है । लोग यात्राएँ स्थगित कर देते हैं । पर यार्कशायर के स्कारबरो प्रान्त के निवासियों का विश्वास है कि उनकी जीवनरक्षक काली बिल्लियाँ होती हैं । इनकी स्त्रियाँ बिल्लियों को इसलिये पालती हैं कि उससे उनका सुहाग खण्डित नहीं होता । हिन्दुस्तान में कहीं-कहीं विवाहों के अवसरों पर बिल्ली को बन्द रखने की प्रथा है इसी से मिलती-जुलती प्रथा अँग्रेजों में विवाह के बाद विदाई के अवसर पर वर-वधू पर पुराना जूता फेंकने की है । वी. हार्पर नामक एक अँग्रेज समाजशास्त्री ने लिखा है—"विदा के समय माता-पिता को अपनी बेटी पर जूता फेंकना चाहिए इसलिए कि उन्होंने उसके ऊपर अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अधिकारों को त्याग दिया है ।'' जो बात हृदय से न मानी जा सकती हो वह ऐसी भौंडी कल्पनाओं से सिद्ध हो जायगी इसे भला कोई बुद्धिमान व्यक्ति मानेगा ? यदि ऐसे नहीं माना जा सकता तो बिल्ली के रास्ता काट जाने में अशुभ या अनिष्ट की बात ही कैसे स्वीकार की जा सकती है ?

सम्भव है इन मान्यताओं का प्रचलन किन्हीं घटनाओं को रूपक मानकर किया गया हो और पीछे लोगों की वैसी धारणाएँ ही बन गयी हों । पर यदि लोग पूर्वजों के आदर्शों पर ही नहीं चल सके तो इस अन्धानुकरण से क्या लाभ हो जायगा ? यह मनुष्य की बौद्धिक संकीर्णता परावलम्बिता का ही लक्षण है । इनसे लाभ कुछ नहीं हानि अपार है । किसी भी धारणा या मान्यता को केवल तभी सत्य समझा जा सकता है यदि वह सचमुच सार्वभौमिक आत्मा के विकास में सहायक हो । केवल मान्यताएँ सच नहीं हो सकतीं उनका एक सर्वसम्मत विज्ञान भी होना चाहिए । यदि कोई ठोस आधार न हो तो ऐसी मान्यताओं को जो हमारे आत्म-विकार में बाधक हों, हमें संकीर्ण मनोवृत्ति का बनाती हों, परित्याग ही कर देना चाहिये ।

इन भ्रम-जंजालों से निकलें

अवांछनीयता के आगे सिर न झुकाएँ

महत्त्व निर्माण का ही है । उपलब्धियाँ उसी पर निर्भर हैं । इतना होते हुये भी पहले से ही जड़ जमाकर बैठीं हुई अवांछनीयता निरस्त करने पर सृजनात्मक कदम उठाने की सम्भावना बनती है । खेत में कंकड़-पत्थर, झाड़-झंखाड़ जड़ जमाये बैठे हों तो उपयुक्त बीज बोने पर भी फसल न उगेगी । इस प्रसंग में सर्वप्रथम जोतने, उखाड़ने, बीनने और साफ करने का काम हाथ में लेना होगा । पहलवान बनने से पूर्व बीमारियों से छुटकारा पाना आवश्यक है । बर्तन में पानी भरने का प्रयत्न करने से पूर्व उसके छेद बन्द करने चाहिए । उद्यान लगाने वालों को पौधे चर जाने वाले पशुओं और फल कुतरने वाले पक्षियों से रखवाली का प्रबन्ध भी करना होता है ।

अवतारों को पहले दुष्ट दमन करना पड़ा है तभी धर्म स्थापना का उपक्रम बना है । लंका विजय, महाभारत ही नहीं, व्यक्ति विशेष को भी इसी मार्ग पर चलना होता है । दुष्प्रवृत्तियाँ जड़ जमाये बैठी रहें तो सदाशयता को पनपने का अवसर ही न मिलेगा ।

जीवन-साधना में सर्वप्रथम यह देखना होता है कि चिन्तन और व्यवहार में अवांछनीयताओं ने कहाँ-कहाँ अपने घोंसले बना रखे हैं । इन मक्कड़ जंजालों को सफा करना ही चाहिए । भोजन बनाने से पूर्व रसोईघर की—पात्र-उपकरणों की सफाई आवश्यक होती है अन्यथा गन्दगी घुस पड़ने से खाद्य-सामग्री विषैली हो जायेगी और पोषण के स्थान पर स्वास्थ्य संकट उत्पन्न करेगी ।

मलीनता साफ करने के उपरान्त ही बात बनती है । प्रातः उठते ही शौच, स्नान, मंजन, कंघी, साबुन, बुहारी का काम निपटाना पड़ता है तब अगली गतिविधियाँ अपनाने का कदम उठता है । जन्मते ही बालक गन्दगी में लिपटा आता है, सर्वप्रथम उस जंजाल से मुक्त कराने की व्यवस्था बनानी पड़ती है, सुन्दर कपड़े पहनाना उसके बाद होता है । त्योहार मनाने का पहला काम है—साफ-सफाई । पूजा-उपचार का भी प्रथम चरण यही है । प्रगतिशील स्थापनाओं का एक पक्ष दुष्ट दुरभिसंधियों से निपटना भी है अन्यथा 'अन्धी पीसे कुत्ता खाय' वाली उक्ति चरितार्थ होती रहेगी । पानी खींचने से पहले कुआँ खोदना पड़ता है । नींव खोदना पहला और दीवार चुनना दूसरा काम है । अनुपयुक्त से न निपटा जाय तो उपयुक्त प्राण प्रतिभा हो नहीं सकेगी । बौद्धों की एकांगी अहिंसा को मध्य एशिया के मुट्ठी भर आक्रमणकारी किस प्रकार देखते-देखते चट कर गये इसका स्मरण इतिहास के हर विद्यार्थी को होगा ।

मक्खी, मच्छर, खटमल, पिस्सू, जुएँ, घुन, मकड़े, चूहे आदि कृमि-कीटकों से न निपटा जाय—घरों में रहने वाले कनखजूरे, साँप, बिच्छू आदि से आत्मरक्षा के उपाय न बरते जायें तो अच्छे-खासे घर में भी जाना कठिन हो जायेगा । पूजा कक्ष में अगरबत्ती जलाना अच्छी बात है पर नाली में फिनायल छिड़कने की भी तो उपेक्षा नहीं होनी चाहिए ।

दुर्व्यसनों, दुर्गुणों, उच्छृंखलताओं एवं बुरी आदतों से उत्पन्न होने वाली हानियाँ इतनी अधिक हैं कि उनकी आग में उपार्जन, स्वास्थ्य, सम्मान, सन्तुलन, भविष्य, परिवार सभी कुछ ईंधन की तरह जलते और समाप्त होते देखा जा सकता है । इसलिये प्रगति की योजनाएँ बनाते समय यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि दुष्प्रवृत्तियों ने कहाँ-कहाँ डेरे-तम्बू गाढ़ रखे हैं । अनुपयुक्त आदतों की विष बेलें कितनी गहराई तक अपनी जड़ें जमाती जा रही हैं । इस उखाड़-पछाड़ के बिना सुखद सम्भावनाओं का बीजारोपण हो नहीं सकेगा ।

प्रत्यक्ष शत्रुओं से निपटना आसान है । चोर-उचक्कों की सुरक्षा चौकीदारी से हो सकती है किन्तु उन दुष्प्रवृत्तियों से निपटना तो दूर उनको ढूँढ़ निकालना और होने वाली हानियों का अनुमान लगाना तक कठिन पड़ता है । अदृश्य को कैसे देखा जाय ? अप्रत्यक्ष को कैसे पकड़ा जाय ? सूक्ष्मदर्शी विवेक का माइक्रोप ही इन विषाणुओं का अता-पता बता सकता है जो दुर्गुणों के रूप में विषाणुओं की भूमिका निभाते और सर्वनाश का ताना-बाना बुनते रहते हैं ।

अपने गुण, कर्म, स्वभाव में किस हेय स्तर की दुष्प्रवृत्तियाँ अधिकार जमाती हैं, इसका तीखा-निष्पक्ष पर्यवेक्षण करना चाहिए । शरीर क्षेत्र का शत्रु नम्बर एक आलस्य है और मनःक्षेत्र का—प्रमाद । आलसी और प्रमादी प्रकारान्तर से आत्म-हत्यारे हैं, वे अपने इन बहुमूल्य यन्त्रों को जंग लगाकर मोथरे, अनुपयोगी एवं अपंग बना देते हैं । पक्षाघात पीड़ित जीते तो हैं किन्तु अशक्त, असमर्थ, अर्द्धमृतक की तरह रहकर । जिनके शरीर पर आलस्य का शनिश्चर छाया है वे काम से जी चुराते और परिश्रम में बेइज्जती अनुभव करते देखे जाते हैं । प्रमादी मस्तिष्क पर जोर नहीं डालते । उचित-अनुचित के पक्ष-विपक्ष पर माथा-पच्ची नहीं करते जो चल रहा है उसी ढर्रे पर बैपैंदी के लोटे की तरह लुढ़कते रहते हैं । न समय की परवाह होती है, न हानि-लाभ की । किसी तरह दिन काटते चलना ही अभीष्ट होता है । सुख-सुविधाओं की कल्पना भर करते हैं, उन्हें प्राप्त करने के लिये किस प्रकार योजनाबद्ध कदम उठाना और साहस जुटाना आवश्यक है, इसके लिये दिमाग पर जोर नहीं डालते । वस्तुस्थिति समझने और तदनुरूप सोचने की सूझ-बूझ न रहने से ऐसे ही शेख-चिल्ली की सनक सनकते रहते हैं । श्रम-बिन्दुओं में लक्ष्मी रहती है और सुव्यवस्थित संकल्पों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रगति । आलसी और प्रमादी इन दोनों से वंचित रहते हैं । पराक्रम रहित शरीर अपंग है और उत्साहरहित मस्तिष्क मूढ़-मति । ऐसी दीन दयनीय स्थिति मनुष्य की अपनी बनाई होती है । यदि दिनचर्या बनाकर समय के एक-एक क्षेत्र का उपयोग करने के लिये दिन भर के, भविष्य के कार्य निर्धारित कर लिये जायें और उन्हें प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर श्रमशील तत्परता और रुचि रस से भरीपूरी तन्मयता का संयुक्त नियोजन किया जा सके तो सफलता चरण चूमेगी और प्रगति पथ पर सरपट दौड़ने वाली चाल चौगुनी-सौगुनी बढ़ती दीखेगी ।

न शरीर पर आलस्य का शनिश्चर चढ़ा रहने देना चाहिए और न मस्तिष्क पर प्रमाद का राहु-केतु । समय, श्रम और मनोयोग का ऐसा समन्वय किया जाय कि प्रगतिशील, सफल सौभाग्यवानों की राह अपनाने का श्रेय, गौरव उपलब्ध हो सके ।

स्वभाव में कटुता, कर्कशता, उतावली, अधीरता, उत्तेजना की उद्दण्डता भी उतनी ही घातक है जितनी कि दीनता, भीरुता, निराशा, कायरता । यह दोनों ही असन्तुलन भिन्न प्रकार के होते हुए भी हाई ब्लड प्रेसर, लो ब्लड प्रेशर की तरह अपने-अपने ढंग से हानि पहुँचाते हैं । स्वभाव को सहिष्णु, धैर्यवान, गम्भीर, दूरदर्शी, सहनशील बनाने का प्रयत्न यदि निरन्तर जारी रखा जाये तो शिष्टता, सज्जनता के ढाँचे में प्रकृति ढलती जायेगी और हर किसी की दृष्टि में अपना मूल्य बढ़ेगा ।

ईमानदारी, सच्चाई, सहकारिता, उदारता, मिल-जुलकर रहना, मिल-बाँटकर खाना, हँसने-हँसाने की हलकी-फुलकी जिन्दगी जीना जैसी आदतें यदि अपने चरित्र का अंग बन सकें तो इनमें घाटा कुछ भी नहीं लाभ ही लाभ है । बेईमान, झूठे, ईर्षालु, स्वार्थी, विद्वेषी, मनहूस प्रकृति के लोग अपनी चतुरता और अहम्मता का ढिंढोरा भर पीटते हैं । वस्तुतः वे कुछेक चापलूसों और अनाड़ियों को छोड़कर हर समझदार की दृष्टि से ओछे, बचकाने और घिनौने प्रतीत होते हैं । ऐसों से न किसी को सहानुभूति होती है और न आड़े वक्त में कोई साथ देता है । वह बात उन ढोंगियों के सम्बन्ध में है जो वस्त्र, आभूषण, शृंगार, ठाठ-बाट की फिजूलखर्ची पर पैसा उड़ाते, कार्टून बनते, इधर-उधर मटकते फिरते हैं । सज-धज में समय और पैसा गँवाना न अमीरी है न सभ्यता । बड़प्पन दिखाने के लिये रचा गया यह ढकोसला कितनों की आँखों में धूल झोंकने, चकाचौंध उत्पन्न करने में सफल हुआ यह कहना कठिन है । वस्तुतः ऐसे लोग जोकर भर समझे और अप्रामाणिक ठहराये जाते हैं । आमतौर से ऐसे लोग अविश्वस्त और चरित्रहीन समझे जाते हैं । फिजूलखर्ची, बड़प्पन, बेईमानी गरीबी के गर्त में गिरने की पूर्व सूचना है । ऐसी आदतें अपने में थोड़ी मात्रा में भी पनपी हों तो उन्हें छोटी दीखने वाली उस चिनगारी को लात से मसलकर बुझा ही देना चाहिए ।

ऐसे-ऐसे और भी अनेक दोष-दुर्गुण हैं जो विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न प्रकार की अनुपयुक्त आदतों के रूप में प्रकट होते हैं । एक सभ्य, सुसंस्कारी मनुष्य की प्रतीक प्रतिमा मन में बसानी चाहिए और उसकी तुलना में अपनी जो भी कमियाँ दीखती हों उन्हें संकल्प और साहस के सहारे उलटने का प्रयत्न करना चाहिए । उलटने का तरीका एक ही है कि अनौचित्य के स्थान पर उसका प्रतिपक्षी औचित्य अपनाया जाय । उसे अपने दैनिक जीवनक्रम में सम्मिलित रखते हुये धीरे-धीरे स्वभाव को ही उस ढाँचे में ढाल लिया जाय । बुराई कोसते रहने से नहीं मिट जाती, उसकी प्रतिपक्षी भलाई को प्रयोग में लाने की नियमित कार्यपद्धति अपनानी होती है । काँटे को काँटे से निकालते हैं और दुष्प्रवृत्तियों को हटाने के लिये सत्प्रवृत्तियों को उनसे जूझने के लिए मोर्चे पर खड़ा करते हैं ।

जीभ का चटोरपन अनावश्यक मात्रा में अभक्ष्य पेट पर लादता है और क्रमशः अपच, रक्त दूषण बढ़ाते-बढ़ाते समूची स्वास्थ्य सम्पदा को ही बर्बाद करके रख देता है । इसी प्रकार कामुक चिन्तन में निरत रहने वाले पाते तो कुछ नहीं अपनी एकाग्रता और चिन्तन की शालीनता गिराते-गिराते, घटाते-घटाते खोखला बनाने वाली दुश्चरित्र के मानसिक मरीज बन जाते हैं । ऐसे लोग बौद्धिक दृष्टि से तो दुर्बल होते ही जाते हैं । शरीरबल, मनोबल और चरित्रबल की दृष्टि से भी गई-गुजरी स्थिति में जा पहुँचते हैं । इन्द्रिय संयम, समय संयम, धन संयम, विचार संयम के महत्त्व को न समझने वाले, महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों की बर्बादी अपने पैरों कुचल मारने की तरह करते हैं । आरम्भ की उच्छृंखलता कुछ ही दिनों में पहले सिरे की मूर्खता सिद्ध होने लगती है ।

व्यक्तित्व को खोखला करने वाली दुष्प्रवृत्तियों को अपने चिन्तन, स्वभाव और व्यवहार में ढूँढ़ते रहा जाय साथ ही उन्हें संक्रामक बीमारी मानकर समय रहते उन्मूलन का उपाय-उपचार किया जाता रहे तो यह अपने आपे से स्वयं लड़ते रहने की शूरता, किसी सफल सेनापति को विजयश्री मिलने जैसी मानी जायगी । "जो अपने को जीतता है वह विश्व-विजयी बनता है ।" इस उक्ति को सर्वथा सारगर्भित समझा जाना चाहिए । गीता में ऐसे ही धर्मक्षेत्र, कर्मक्षेत्र में अर्जुन को लड़ने का उपदेश भगवान ने दिया था । वह हर विचारशील के लिए सदा सर्वदा अनुकरणीय है ।

यह व्यक्तिगत सुधार परिधि की—गुण, कर्म, स्वभाव क्षेत्र की चर्चा हुई । अब एक कदम और आगे बढ़ना चाहिए । परिवार एवं समाज के प्रयुक्त होने वाले प्रचलनों को भी इसी दृष्टि से देखना चाहिए और खोजना चाहिये कि सर्वत्र न सही अपने निज के व्यवहार तथा सम्बद्ध परिवार में ऐसी क्या अवांछनीयताएँ हैं जो व्यक्तिगत क्षेत्र में पनपने पर भी समूचे समाज के लिए घातक सिद्ध होती हैं । टिड्डी दल किसी कन्दरा में जन्मता है, पर जब उड़ने लगता है तो दूर-दूर तक के खेत-खलिहानों को उजाड़ता चला जाता है । हैजा, प्लेग के विषाणु आरम्भ में किसी छोटे क्षेत्र में होते हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर छूत की बीमारी बनकर दूर-दूर तक फैलते और असंख्य का प्राणहरण करते चले जाते हैं । मूढ़मान्यताएँ, कुरीतियाँ और अनैतिकताएँ एक प्रकार से चरित्र एवं समाज क्षेत्र की बीमारियाँ हैं । यह जहाँ पनपती हैं उतने ही क्षेत्र में तबाही नहीं करती, वरन् अपनी चपेट में सुविस्तृत क्षेत्र को जकड़ती और पतन-पराभव का वातावरण बनाती चली जाती हैं । तालाब में एक जगह डेला फेंकने पर उससे उत्पन्न होने वाली लहरें समूचे सतह को हिलाने, उछालने लगती हैं ।

मूढ़मान्यताओं के क्षेत्र में ऐसी अनेक बातों का समावेश है जो अभ्यास में आ जाने से निर्दोष भी लगती हैं और रुचिकर भी । पर उनमें आदि से अन्त तक अवास्तविकता ही भरी रहती है । जादू-टोना, भूत-पलीत, देवी-देवता, भविष्य कथन, भाग्यवाद, फलित ज्योतिष के कुचक्र में कितने ही अपनी शान्ति गँवाते, भ्रम-जंजालों में उलझते, विग्रह मोल लेते, जिस-तिस पर लांछन लगाते और भूल सुधारने के स्थान पर भाग्य को कोसते देखे जाते हैं । यदि इन भ्रम-जंजालों से निकला जा सके तो भ्रान्तियों से उत्पन्न होने वाली विकृतियों एवं क्षतियों से बड़ी मात्रा में बचा जा सकता है ।

आहार-विहार सम्बन्धी कितनी ही मूढ़मान्यताएँ इस विज्ञान के युग में भी बुद्धिमानों की मूर्खता बनकर रह रही हैं । आहार को स्वाभाविक रूप में लेने की अपेक्षा लोग उसे भूनते, तलते, मसालों, जायकों से विकृत करते हैं । फलतः खाद्य अखाद्य बन जाता है और खाद्य का कोयला खाकर किसी प्रकार जीवित रहना पड़ता है । कामुकता में इन्द्रिय उत्तेजना कम और दिमागी खुराफात के रूप में विकसित हुई—काल्पनिक शृंगारिता मुख्य है । इसे कला का व्यभिचार कह सकते हैं अन्यथा नर-नारी के बीच साधन-सहयोग तो समझ में आता है, पर उस कामुकता के घटाटोप में कोई सार नहीं दीखता, जो इन दिनों हर आदमी को भूत-पिशाच की तरह जकड़े हुए है । नशेबाजी, माँसाहार को अपनाने वाले तथ्यों के समर्थक नहीं, वरन् प्रचलन के साथ जुड़े हुए तथाकथित सभ्यता के अभिशाप ही समझे जा सकते हैं । इन मान्यताओं का यदि नये सिरे से परीक्षण, पर्यवेक्षण किया जा सके तो प्रतीत होगा कि आदिमकाल के अन्धविश्वासी मनुष्य में, आज के सभ्याभिमानियों की विचारशीलता में कोई विशेष अन्तर नहीं आया है । कम से कम प्रचलनों और मान्यताओं के क्षेत्र में तो अभी भी अन्धविश्वासों का बोलवाला है । चिकित्सा क्षेत्र में तो अभी भी टोना-टोटका की तरह ही अभी भी अन्धेरे में पत्थर फेंक जाती है । इसमें तथाकथित मूर्धन्य चिकित्सा-शास्त्री भी सम्मिलित हैं ।

कुरीतियों की दृष्टि से यों आत्मसमाज भी अछूते नहीं हैं, पर अपना देश तो इसके लिये संसार भर में बदनाम है । विवाह योग्य लड़के-लड़कियों के उपयुक्त जोड़ों का विवाह कर दिया जाय और सार्वजनिक घोषणा के रूप में उनका पंजीकरण करा देने या घरेलू त्योहार जैसा कोई हलका-सा हर्षोत्सव कर देना यही औचित्य की मर्यादा है । पर अपने यहाँ उसे युद्ध जीतने या पहाड़ उठाने जैसा बना लिया गया है । उस घमात में पैसे की, समय की जितनी बर्बादी होती है उसका हिसाब लगाने पर प्रतीत होता है कि आजीविका का एक तिहाई अंश इसी कुप्रचलन में होली की तरह जल जाता है । खर्चीली शादियाँ हमें किस तरह दरिद्र और बेईमान बनाती हैं । कितने ही परिवारों की सुख-शान्ति और प्रगति किस प्रकार इस नरभक्षी पिशाचिनी की बलिवेदी पर नष्ट होती है इसे अधिकांश लोग समझते भी हैं और कोसते भी । फिर भी आश्चर्य यह है कि छोड़ते किसी से नहीं बनता, इसे कुरीतियों का मायाजाल ही कहना चाहिए जो तोड़ने का दमखम करने वालों को भी अपने शिकंजे से छूटने नहीं देता ।

जाति-पाँति के नाम पर प्रचलित ऊँच-नीच की मान्यता के पीछे न कोई तर्क है, न तथ्य, न प्रमाण, न कारण । फिर भी अपने समाज में ब्राह्मण-ब्राह्मण के, ठाकुर-ठाकुर के, अछूत-अछूत के बीच जो ऊँच-नीच का भेदभाव चलता है उसे देखते हुए लगता है कि यह सवर्ण-असवर्ण के मध्य चलने वाला विग्रह नहीं है, वरन् हर बिरादरी वाले अपनी ही उपजातियों में ऊँच-नीच का भेद बरतते-बरतते इस प्रकार बँट गये हैं मानो उनका कोई एक देश, धर्म, समाज या संस्कृति रह ही नहीं गई हो । हर जाति, उपजाति ने अपने छोटे गड्ढे-घरौंदे बना लिये हैं और उतने से दायरे में कूप-मंडूकों की तरह अपने को सीमाबद्ध किये बैठे हैं । इसी विलगाव का कारण है कि अपना कोई धर्म समाज बन ही नहीं पाता । इस दुर्विपाक से सभी परिचित हैं, सभी दुःखी हैं, सभी विरुद्ध हैं । फिर भी कुरीतियों का कुचक्र तो देखिये कि बरताव में सुधारक भी पिछड़े लोगों की तरह ही आचरण करते हैं ।

नर-नारी के बीच बरता जाने वाला भेदभाव कुरीतियों की दृष्टि से और भी घिनौना है । इसने पर्दे के प्रतिबन्ध में आये जनसमुदाय को दूसरे दर्जे के नागरिक की, नजरबन्द कैदी की स्थिति में ले जाकर पटक दिया है । नारी आज की स्थिति में देश की अर्थ-व्यवस्था में, सामाजिक प्रगति में कुछ योगदान दे सकने की स्थिति में रही ही नहीं । अशिक्षा, उपेक्षा, अयोग्यता, पराधीनता, अस्वस्थता के बन्धनों में जकड़ी हुई, अन्धाधुन्ध प्रजनन के प्राण-घातक भार अत्याचार से लदी हुई नारी अपने आपके लिए, नर समुदाय के लिये, समूचे समाज के लिये भारभूत बनकर रह रही है । कन्या और पुत्र के बीच बरता जाने वाला भेदभाव कितना कष्टकर है । उसके रहते सन्तान और अभिभावक के बीच बरते जाने वाली सद्भावना का एक प्रकार से समापन ही हो जाता है ।

भिक्षा-व्यवसाय, मृतक-भोज, बाल-विवाह, कन्या-विक्रय, वर-विक्रय, पत्नी-त्याग आदि अनेकानेक प्रचलन ऐसे हैं जो औचित्य की कसौटी पर किसी भी प्रकार खरे सिद्ध नहीं होते फिर भी हमारे गले में फाँसी के फंदे की तरह कसे हुए हैं । इन कुरीतियों को इसी प्रकार सहते रहा गया, उनका मोह न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छोड़ा गया तो समझना चाहिए कि हम दिन-दिन गलते, फिसलते, पिछड़ते और घटते गिरते ही चले जायेंगे ।

अनैतिकताओं का तो कहना ही क्या ? समय का पालन, वचन का पालन, विश्वास का पालन घटता जा रहा है । व्यवसाय, आचरण, कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व के क्षेत्रों में तनिक-तनिक-सी बात पर मनुष्य ऐसी कलामुण्डी खाता है मानो नीति-मर्यादा पालन की नहीं, कहने-सुनने भर की बात रह गई है । कामचोरी, हरामखोरी, करचोरी, रिश्वत, धोखाधड़ी, छल, स्वार्थान्धता, नागरिक कर्त्तव्यों की अवहेलना आदि की अवांछनीयताएँ अब सामान्य व्यवहार का—चातुर्य कौशल का अंग बनती जा रही हैं । लगता है मनुष्य अपनी गरिमा का परित्याग कर प्रेत-पिशाच जैसी अपनाई जाने वाली दुष्टता, भ्रष्टता अपनाने के लिये तेजी से अग्रसर हो रहा है ।

ऊपर की पंक्तियों में कुछ ऐसी अवांछनीयताओं की चर्चा है जो प्रचलन का अंग बनती जा रही हैं । अपना परिवार परिकर भी इन सर्वव्यापी छूत से बचा हुआ नहीं है । नौकरी के लिये पढ़ाई की अब कोई उपयोगिता रह नहीं गई है फिर भी लोग घर फूँककर तमाशा देखते और बालकों को उच्च शिक्षा के नाम पर ऐसी स्थिति में पटक देते हैं जिनमें से नौकरी न मिलने पर किसी काम के नहीं रहते । सन्तानोत्पादन का अब कोई तुक नहीं रहा । परिवार के लोगों को स्वावलम्बी, सुसंस्कारी भर बनाने की बात किसी की समझ में नहीं आती । उत्तराधिकारियों को मुफ्त में खाने के लिये कुबेर जितनी सम्पदा छोड़ मरने की हर किसी योग्य-अयोग्य के सिर पर सनक सवार है ।

यह कथापुराण की चर्चा नहीं है । हम सबके व्यवहार में आये दिन प्रयुक्त होने वाली अनुपयुक्ताएँ हैं जिन्हें एक दिन के लिये भी सहन नहीं किया जाना चाहिए । कूड़े-करकट की तरह बुहार कर सड़ने को किसी गड्ढे में दबा दिया जाना चाहिए । किन्तु हम हैं जो मरे बच्चे को छाती से चिपकाये फिरने वाली बन्दरिया की तरह उन्हें आत्मसात किये बैठे हैं । उन्हें छोड़ने का नाम नहीं लेते ।

प्रज्ञा परिजनों की व्यस्तता को देखते हुये उनसे यह आशा तो नहीं की जा सकती कि चक्रव्यूह तोड़ने वाले अभिमन्यु की भूमिका निभायें । पर इतनी आशा तो की ही जा सकती है कि वे अपने निजी जीवन में, परिवार के क्षेत्र में जो मूढ़मान्यताएँ, कुरीतियाँ, अवांछनीयताएँ पनपती देखें उन्हें समय रहते उखाड़ने का प्रयत्न करें । कम से कम इतना तो हो ही सकता है कि उनका समर्थन न करें, उनकी प्रशंसा भी न करें । विरोध बन पड़े तो करें पर यदि वैसा साहस न हो तो कम से कम असहमति और असहयोग की स्थिति तो बनाये ही रहें । यह भी गाँधीजी का बताया हुआ व्यक्तिगत सत्याग्रह का एक छोटा रूप है, उसे तो अपनाया ही जा सकता है ।

निजी जीवनक्रम और परिवार क्षेत्र हर व्यक्ति का अपना है । उस पर प्रभाव का रहना भी असंदिग्ध है । एक क्षेत्र में दुष्प्रवृत्तियों को पनपने से रोका जा सकता है और उन्हें उखाड़ने में सफल भी रहा जा सकता है । यदि सत्यनिष्ठा उमँगे, औचित्य के प्रति श्रद्धा जगे तो उसे साहस भरे संघर्ष के रूप में परिणति करना चाहिए और जितना सम्भव हो उतना विरोध अथवा असहयोग जारी रखना ही चाहिए । इतनी प्रखरता यदि जीवन्त रखी जा सकती तो उतने से भी अनौचित्य के असुर का मनोबल टूटेगा और देवत्व पनपेगा ।

परम्परावादी नहीं, विवेक के अनुयायी बनें

मान्यताओं एवं विश्वासों की विरासत मनुष्य को प्रायः उस समाज से मिलती है, जिसमें वह जन्म लेता, पलता और बढ़ता है । पीढ़ी दर पीढ़ी यह अमानत हस्तान्तरित होती रहती है । थोड़े से व्यक्ति ऐसे होते हैं जो उन्हें औचित्य की कसौटी पर कसते तथा यह निरीक्षण करते हैं कि वर्तमान में उनकी उपयोगिता, आवश्यकता कहाँ तक है, अन्यथा अधिकांश तो अन्धानुकरण करते हैं । विवेक की कसौटी पर कसने का वे साहस कभी नहीं जुटा पाते । फलतः उनकी पकड़ एवं जकड़ से निकलते नहीं बनता और अगणित तरह से हानि उठानी पड़ती है ।

श्रेष्ठ आदर्शों एवं सिद्धान्तों की थोड़ी-सी मान्यताएँ शाश्वत होतीं तथा हर काल के लिये उपयोगी बन जाती हैं । रीति-रिवाजों, प्रचलनों में भी थोड़े से ऐसे होते हैं जो कालान्तर बाद भी अपनी उपयोगिता काम-चलाऊ स्तर की बनाये रहते हैं अन्यथा उनमें से अधिकांश को सुधारना, बदलना पड़ता है । ऐसा न होने पर प्रगति का मार्ग अवरुद्ध होता और उन उपलब्धियों से वंचित रहना पड़ता, जो युगानुरूप, विवेकपूर्ण उपयोगी नई मान्यताओं की प्रतिष्ठापना से सम्भव हो सकता था ।

विवेक का अभाव ही रूढ़ियों, अन्धविश्वासों को जन्म देता तथा अपने पाश में समाज को जकड़ लेता है । इनकी जड़ें इतनी गहरी होती हैं कि आसानी से उखाड़े नहीं उखड़तीं तथा लम्बे समय तक अपनी पकड़ मजबूत बनाये रहती हैं । प्रगतिशील एवं पिछड़े दोनों की ही तरह के समाजों में विभिन्न प्रकार की भ्रान्त मान्यताओं, अन्धविश्वासों को काम करते देखा जा सकता है । विज्ञान के इस युग में भी वे अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं यह देखकर भारी अचरज होता है तथा इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि भौतिक प्रगति का अन्धविश्वासों के उन्मूलन से सम्बन्ध नहीं है । दूरदर्शिता के अवलम्बन से ही उनके जाल-जंजाल से निकल सकना सम्भव है । देश-विदेश के विभिन्न समाजों के विश्वास एवं मान्यताएँ कौतूहलवर्द्धक हैं और अनोखी भी ।

स्काटलैण्ड में तीन हंसों को एक साथ उड़ते देखना राष्ट्र की बर्बादी का चिह्न समझा जाता है । लाल और हरे रंग की पोशाक पहनना अशुभ समझा जाता है । बड़े दिन के अवसर पर प्रेम-पत्र डाक द्वारा नहीं भेजा जाता । उस देश के लोगों का विश्वास है कि डाक द्वारा बड़े दिन पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रेम-पत्र भेजने से प्रेम सम्बन्ध असफल हो जाता है । नये घर में प्रवेश लेते समय हर व्यक्ति को खुदाई करने वाले यंत्रों को साथ लेकर घुसने की मनाही रहती है । यदि कोई फावड़ा लेकर नये घर में प्रविष्ट हो तो यह समझा जाता है कि शीघ्र ही एक कब्र किसी सदस्य की खोदी जायेगी ।

आयरलैण्ड के कुछ समाजों में यह विश्वास गहरी जड़ें जमाये हुए है कि यदि गर्भिणी महिला किसी टूटे प्याले से पेय पदार्थ ग्रहण कर ले तो उसके होने वाले बच्चे का होठ कटा होगा । दम्पत्ति इस आशंका के कारण पूरी सतर्कता बरतते हैं कि गर्भिणी के निकट कोई टूटा प्याला न आने पाये ।

माल्टे के गिरजाघरों में दो चेहरों वाली दीवार घड़ी टाँगने की प्रथा है । उसमें दो डायल होते हैं । एक सही समय बताता है—दूसरा गलत । माल्टेवासियों का विश्वास है डायल में गलत समय देखकर दुष्टात्माएँ समय पर अपने दुष्ट इरादे नहीं पूरे कर सकेंगी । जबकि दूसरे डायल से जनसामान्य को सही समय का ज्ञान होता रहता है ।

चीनवासियों का विश्वास है कि दुर्घटना में यदि किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाय तो सातवीं रात्रि को उसकी आत्मा घटनास्थल पर बदला लेने की भावना से घूमती रहती है तथा उस स्थान पर जो भी मिल जाय उसे परेशान करती है ।

नाइजीरिया में रात्रि को झाड़ू लगाना बुरे भाग्य को निमंत्रित करना समझा जाता है, प्रातःकाल झाड़ू लगाने को दुष्टात्माओं से छुटकारा पाना समझा जाता है । झाड़ू से जुड़ी उनकी अन्य मान्यताएँ और भी हास्यास्पद हैं । उनका विश्वास है कि झाड़ू को ठोकर मारने से नपुंसकता आती है । यदि सात बार पश्चाताप किया जाय तो उस आपत्ति से छुटकारा मिल जाता है । घर में नवागन्तुक के जाने के बाद झाड़ू लगाने की परम्परा है ताकि बुरी आत्माएँ उसके साथ ही चली जायें ।

जापान में दाँतों से कंघा पकड़कर किसी के सामने खड़ा होना दुर्भाग्य-सूचक समझा जाता है । जापानी प्रातःकाल मकड़ी को मारना एक व्यक्ति की आत्मा को नष्ट करना समझते हैं । बिल्लियाँ दुर्भाग्य लाती हैं, ऐसा अधिकांश जापानियों का विश्वास है । जापानी इसी कारण बिल्ली पालने में अधिक रुचि नहीं रखते ।

भारत की तरह ब्रिटेन में भी चित्र-विचित्र रीति-रिवाजों, प्रचलनों का बाहुल्य है । भ्रान्त मान्यताओं की भी कमी नहीं है । वहाँ फ्रायडे शुक्रवार को अशुभ दिन माना जाता है । किंवदन्ती है कि ब्रिटेन के एक जलपोत की नींव फ्रायडे को रखी गई । जलपोत तथा उसके निर्माता कम्पनी का नाम भी फ्रायडे ही था । जलपोत ने ब्रिटिश अधिकारियों सहित अपनी पहली यात्रा आरम्भ की । पर उस पोत का उस दिन के बाद कुछ भी पता न चला । तब से शुक्रवार को न केवल यात्रा करना वरन् अन्य नये कार्यों के शुभारम्भ के लिये भी अशुभ माना जाता है ।

ब्रिटेन के कितने ही पिछड़े इलाकों में रोटी का आग पर न फूलना किसी दुरात्मा का प्रकोप माना जाता है । उस रोटी को काटकर फेंक दिया जाता है । ऐसा विश्वास है कि जो कोई भी उस रोटी को खायेगा, रोटी में घुसा शैतान उसके भीतर प्रवेश कर जायेगा ।

विदेश ही नहीं अपने देश एवं समाज में ऐसी अगणित भ्रान्त मान्यताएँ जनमानस के मन-मस्तिष्क में जड़ जमाये हुए हैं । टोना-टोटका, भूत-प्रेत के भ्रम के कारण अनेक प्रकार की हानियाँ आये दिन उठानी पड़ती हैं । मान्यताओं एवं विश्वासों में भी अन्धश्रद्धा का बाहुल्य देखा जा सकता है । रीति-रिवाजों एवं प्रचलनों के नाम पर कितने ही कृत्य ऐसे हैं, जिन्हें विवेक की कसौटी पर कसने से अनुपयोगी एवं हानिकर ही जान पड़ते हैं पर पुरातन के कारण उन्हें तोड़ने का साहस नहीं जुट पाता ।

एक बार एक विवाह के समय जब वहाँ बहुत मिष्ठान-पकवान बन रहे थे, तब घर की पालतू बिल्ली ने बहुत ऊधम मचाया । बिल्ली विवाह के लिए बनी हर चीज में मुँह डाल देती और झूठा कर देती । घर की मालकिन ने उसे पकड़कर नाँद के नीचे बन्द कर दिया । फिर वह काम में लग गई । कई रोज काम में व्यस्त रहने के कारण उसे बिल्ली को निकालने की बात याद न रही और वह उसी में दबकर मर गई ।

बारात जब लौट कर आई और बहू ने घर में प्रवेश किया उस समय घर मालकिन को बिल्ली की याद आई । उसे निकाला गया तो मरी मिली । उसे फिंकवाया गया । नई बहू यह सब देख रही थी । उसने समझ लिया कि इस घर की यही परम्परा है । बाद में जब उसके बच्चा हुआ और उसके बड़े होने पर जब बारात गई और नई बहू आई तो उसने भी एक बिल्ली पकड़कर नाँद के नीचे बन्द की और जब वह मर गई तो ठीक उसी समय जब नई वधू ने घर में प्रवेश किया—उस बिल्ली को बाहर फिंकवाया । जो उसने देखा था उसे कुल परम्परा समझा और उसी का पालन करने में अपना धर्म या कल्याण समझा ।

आजकल ऐसी ही अनेक भ्रान्त मान्यताएँ, अन्ध परम्पराएँ चल रही हैं । लोग इन्हें ही 'सनातन धर्म' मानने लगे हैं । प्रगतिशील का तकाजा है कि पुरातन के नाम पर किसी भी प्रचलन का अनुकरण न किया जाय । मान्यताओं एवं विश्वासों को भी विवेक की कसौटी पर कसा जाय तथा उनमें से जो औचित्यपूर्ण और वर्तमान परिस्थितियों में उपयोगी जान पड़ें उन्हें ही अपनाया जाय ।

इन भ्रम-जंजालों से निकलें

तत्वदर्शन मनुष्य को पशु श्रेणी से निकालकर मनुष्य वर्ग में सम्मिलित करता है । शरीर संरचना के हिसाब से मनुष्य वनमानुष वर्ग में आता है— बन्दर की बिरादरी का । विकासवादी मनुष्य को बन्दर की औलाद बताते हैं और आधुनिक शरीरशास्त्री अंग-अवयवों में मनुष्य का सादृश्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखते हैं । उसका स्वभाव भी लगभग एक जैसा ही है । पेड़ों पर चढ़ने की आदत भले ही कम पड़ गई हो या पूँछ लुप्त हो जाने जैसा परिवर्तन रहन-सहन की भिन्नता के कारण उत्पन्न हो गया हो ।

पशुओं की मूल प्रवृत्ति में पेट, प्रजनन और आत्म-रक्षा की तीन प्रवृत्तियों का ही बाहुल्य है । इसी सीमा में वे सोचते हैं और जो कुछ करते हैं वह इन्हीं की पूर्ति के लिये चलता रहता है । नर पशु स्तर के लोगों की सोचने और करने की प्रवृत्ति इसी सीमा के इर्द-गिर्द काम करती है । स्वार्थ साधन ही उसका प्रमुख लक्ष्य होता है ।

इस जन्मजात प्रवृत्ति को उच्चस्तरीय बनाने में तत्वदर्शन की ही भूमिका प्रधान रही है । जिनका उससे वास्ता नहीं पड़ा है वे अभी भी अफ्रीका, ध्रुव प्रदेश, न्यूगिनी, निकोबार जैसे देशों में अपनी आदिम स्थिति बनाये हुए ऐसे ही कहीं लुकते-छिपते दिन गुजारते रहते हैं । इस समुदाय में भी प्रकृति के विभिन्न व्यतिरेकों को देखते हुये—बिजली, वर्षा, सूर्य, चन्द्र, तारे, तूफान, दुर्भिक्ष, भूकम्प आदि की घटनाओं को देखते हुये इन्हें किसी देवता का चमत्कार या आक्रोश मानते हैं और उन्हें प्रसन्न करने के लिये अपनी प्रमुख सम्पदा पशु-पक्षियों की बलि देकर प्रतिकूलता में बदलने का मनोरथ पूरा कराने का ताना-बाना बुनते रहते हैं । आदिम सभ्यता जहाँ कहीं है वहाँ यही सब होता रहता है ।

विकसित सभ्यता का दर्शन स्नेह, सद्भाव, सहानुभूति, सहकार, पुण्य-परमार्थ आदि को आधार मानकर अग्रगामी होता है । इसमें मानवी गरिमा की श्रेष्ठता का भान है । अन्य प्राणी जहाँ स्वार्थ के अतिरिक्त और कुछ नहीं सोचते वहाँ मानवी गरिमा अपनी श्रेष्ठता का परिचय दूसरों के प्रति अपनी उदारता प्रदर्शित करने में देती है । अपने आहार-व्यवहार में स्वच्छता एवं शिष्टता का समावेश करती है । जबकि दूसरे प्राणियों का पारस्परिक व्यवहार, शिष्टता और निजी रहन-सहन में स्वच्छता का समावेश भी नहीं होता । कर्त्तव्य और अधिकार की बात ही मनुष्य को ही सूझती है । दूसरे प्राणी जहाँ से भी स्वार्थ सधता है साध लेते हैं और बदले में कर्त्तव्यपालन की कोई आवश्यकता नहीं समझते ।

निजी सम्पर्क से समुदाय बनाने और एक-दूसरे का साथ देने की प्रवृत्ति भी थोड़े से ही जीव-जन्तुओं में होती है । हाथी, बन्दर प्रायः समूह का अनुशासन मानते हैं और एक-दूसरे की विपत्ति के अवसर पर सहायता भी करते हैं । चींटी, दीमक और मधुमक्खियों में समूहगत निवास करते हुये ऐसी आदतें विकसित हो गई हैं जिससे वे समूह का महत्त्व और सहकारिता का अनुशासन पालने लगी हैं और भी कुछ जीव-जन्तु ऐसे हो सकते हैं जो एक सीमा तक सहयोग करते हैं । पर जब जोखिम का अवसर आता है तो अपनी रक्षा को ही प्राथमिकता देते हैं ।

किन्तु मनुष्य ने इस दिशा में काफी प्रगति की है वह बच्चों के सम्बन्ध में संवेदनशील होता है, विशेषतया उनकी माताएँ । परिवार बनाकर रहने में उसी को अधिक सुविधा प्रतीत हुई और पहल की । दूसरे प्राणियों में यह भाव नहीं के बराबर है । बच्चे समर्थ हो जाने पर पशु-पक्षी भी उनसे अपनी ममता समेट लेते हैं और बच्चे भी बड़े होने पर अभिभावकों की सहायता आवश्यक नहीं समझते । वयस्क होते ही वे अपना जोड़ा बनाने लगते हैं । प्रजनन और शिशु-पालन का भार माता के ही जिम्मे पड़ता है, पिता यत्किंचित ही सहायता करता है । विशेषतया जब तक बच्चे स्वावलम्बी नहीं हो जाते । सदा साथ देने की प्रवृत्ति सारस जैसे थोड़े ही प्राणियों में होती है । बच्चों को पालने की आवश्यकता को देखते हुये यह प्रकृति ने प्रायः माताओं को ही प्रदान की है ।

मनुष्य और पशु का अन्तर यहीं से आरम्भ होता है । मनुष्य कर्त्तव्य और अधिकार का निर्वाह समझता है । स्वच्छता के सम्बन्ध में अधिक संवेदनशील है । दूसरों के साथ शिष्टता का ही नहीं उदारता का भी व्यवहार करता है । यौनाचार की गोपनीयता और मर्यादा का भी उसी को ध्यान रहता है । ऐसी-ऐसी अनेक सुविधा, शालीनता की बातों को ध्यान में रखते हुये अनुशासन, मान्यताओं और परम्पराओं को तत्वदर्शन का रूप दिया गया है । उन्हीं को कार्यान्वित कैसे किया जाय इस विधि-विधान को धर्म का नाम दिया गया है ।

धर्म और दर्शन का आरम्भ में मूल विषय निजी जीवन में सदाचार और सामूहिक जीवन में उदार सहकार था । पर आगे चलकर लोग इन मर्यादाओं में व्यतिरेक उत्पन्न करने लगे । वर्जनाओं का उल्लंघन करने लगे तो अनाचारियों को काबू में रखने तथा प्रताड़ना देने के लिये शासनतंत्र की आवश्यकता अनुभव हुई । इस हेतु राजतंत्र या प्रजातंत्र का विधि-विधान चल पड़ा । उनके लिए कानून, शासन एवं पुलिस-फौज का शस्त्र-सज्जित प्रावधान खड़ा करना पड़ा । नियम बने कि किस मर्यादा-उल्लंघन का क्या दण्ड मिलना चाहिए । इससे पूर्व जब स्वेच्छा-सदाचार की मान्यता थी तब सूझने पर, सुझाये जाने पर लोग स्वेच्छापूर्वक पाप का प्रायश्चित कर लिया करते थे और समाज को जो क्षति पहुँचाई थी उसकी श्रम या धन से पूर्ति करते थे । जो इसमें आना-कानी करते थे उन्हें समाज बहिष्कार एवं राज्यदण्ड की यंत्रणाएँ भुगतनी पड़ती थीं । इन अवलम्बनों को अपनाने से मनुष्य की मौलिक सूझ-बूझ और उपलब्धियों का लाभ एक दूसरे को मिलने लगा । वंशज, शिष्य या दूसरे लोग किसी वरिष्ठ के अनुभवों को, खोजों को सीखकर अपना तथा दूसरों का काम चलाने लगे । विज्ञान यहीं से आरम्भ होता है । सबसे प्रथम पत्थर, लोहे या सूखे काष्ठों को टकराकर अग्नि उत्पन्न करने की विधि मनुष्य के हाथ लगी । इसके बाद धातुओं का उपयोग, कृषि, पशुपालन, औजार, उपकरण की शृंखला चल पड़ी और पहनने के लिये वस्त्र एवं रहने के लिये आच्छादन बनने लगे ।

सामाजिक प्रगति के उपरान्त मनुष्य को वैज्ञानिक उत्पादनों का लाभ मिला । आदान-प्रदान के आधार पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यवसाय चलने लगा । श्रम का भी क्रय-विक्रय होने लगा । मनुष्य अन्य प्राणियों की तुलना में कहीं अधिक साधन-सम्पन्न हो गया । सम्पदा और सुरक्षा की दृष्टि से उसकी स्थिति अन्य प्राणियों की तुलना में कहीं अच्छी बन गई । सुविधा संवर्द्धन के निमित्त एक के बाद दूसरे अध्याय जुड़ते गये और प्रगति कहीं आगे चलती गई । तत्वदर्शन के प्रतिपादन और धर्मधारणा के प्रचलन ने इस प्रयोजन में बहुत सहायता की । परस्पर छीना-झपटी की अपेक्षा मिल-जुलकर रहने की विधा को अनुभवों ने बहुत प्रोत्साहन दिया ।

मानवी गरिमा, सहकारी समाज, सुविधा संवर्द्धन, धर्म-धारणा एवं शासन व्यवस्था के मूलभूत सिद्धान्तों का एकत्रीकरण करके मानवी तत्वदर्शन ने एक बड़ी छलाँग लगाई और उसे आस्तिकवाद का नाम दिया गया । सृष्टि का नियामक कोई विचारशील सृजेता है । वह हर व्यक्ति के गुप्त प्रकट कामों को जानता है और जीवनकाल में तथा मरणोपरान्त भले-बुरे कर्मों का प्रतिफल सांसारिक आधि-व्याधियों के रूप में तथा मरणोपरान्त स्वर्ग-नरक के रूप में दण्ड-पुरस्कार की व्यवस्था करता है । यह अदृश्य मान्यता जनसाधारण के मनों में गहराई तक प्रभावित करने के लिये धर्मशास्त्रों की संरचना हुई एवं आप्त पुरुषों के कथन की साक्षी रूप में प्रस्तुत किया गया । मनुष्य के श्रद्धालु, धर्म भीरु स्वभाव ने उन प्रतिपादनों को सरलतापूर्वक स्वीकार भी कर लिया है । यही परम्परा तत्वदर्शन के रूप में न्यूनाधिक हेर-फेर के साथ अभी भी प्रचलित है । हेर-फेर इसलिये रहे कि पूर्वकाल में यातायात के बौद्धिक आदान-प्रदान के उतने साधन नहीं थे । इसलिये इनके मध्य बौद्धिक काट-छाँट का क्रम न चल सके । सभी धर्म एक केन्द्र पर न पहुँच सके । जो दर्शन जिस क्षेत्र में उगा वह उसी परिधि में प्रचलित होकर रह गया । समीपवर्ती लोगों ने एक-दूसरे का अनुकरण करते हुये उन प्रतिपादनों को अपना लिया । तर्क और तथ्यों की कसौटी तब तक तत्वदर्शन के क्षेत्र में प्रवेश नहीं कर सकती थी । शंका करने या समाधान चाहने वालों को नास्तिक कहकर अपमानित किया जाने लगा । इसलिये धर्म क्षेत्र में जिज्ञासा का उपयोग प्रतिबाधित हो जाने के कारण 'बाबा वाक्यं प्रमाणम्' की रीति-नीति चल पड़ी । जिस क्षेत्र में जो मान्यता पनपी वह वहीं प्रचलित होकर रह गई ।

परोक्षवादी आध्यात्मिकवाद का सबसे बड़ा लाभ एक हुआ कि जो लोग कर्म के प्रत्यक्ष परिणामों के न मिलने पर व्यग्र हो उठते थे उन्हें सान्त्वना मिली । बहुत बार ऐसा भी होता है कि दुष्कर्म करने पर भी तत्काल उसका दण्ड नहीं मिल पाता, शासन और समाज को चकमा देने के कारण लोग कुकर्म करते हुये भी दण्ड से बच जाते हैं ।

इसी प्रकार यह भी बहुत बार होता है कि सत्कर्म करने पर भी तत्काल उसके सत्परिणाम नहीं मिल पाते । ऐसी दशा में ईश्वर के अस्तित्व अथवा उसकी न्याय व्यवस्था पर संदेह होने लगता है और दुष्ट-दुरात्माओं को उच्छृंखलता बरतने का साहस बढ़ने लगता है । इस आशंका को निरस्त करने के लिये स्वर्ग-नरक का पुनर्जन्म में समुचित कर्मफल मिलने की बात कही गई । चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते हुये अनेकानेक कष्ट सहने, पड़ने की बात कहकर उच्छृंखलता पर रोकथाम की गई ।

इतने पर भी विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित मान्यताओं में अन्तर बना ही रहा । यथा आदिमकाल की वह मान्यता कि सृष्टि के संचालक देवता पशुबलि प्राप्त करने से प्रसन्न और न करने से अप्रसन्न होते हैं । यह मान्यता अनेक सम्प्रदायों और कबीलों में अभी भी आदिमकाल की तरह प्रचलित है । यों ईश्वर को सबका पिता और दयालु होने के साथ इस प्रकार की कोई संगति नहीं खाती । इसी प्रकार 'माँसाहार उचित है या अनुचित' इस विषय पर भी अनेक धर्मों में आपसी मतभेद है । स्त्रियों और पिछड़े अन्य वर्गों के साथ मानापमान बरतने के प्रचलन हिन्दू समाज जैसे बुद्धिवाद में अग्रणी कहलाने वाले वर्गों में भी प्रचलित हैं । ईश्वर की अनेक आकृतियाँ-प्रकृतियाँ, परलोक की व्यवस्था में अनेक प्रकार के मतभेद, मृत्यु के उपरान्त जीव को किस परिपाटी के अन्तर्गत व्यवहार सहना पड़ता है आदि प्रसंगों में इतने अधिक मतभेद है कि उनमें से एक को सच मान लेने पर दूसरे सभी झूठे ठहरते हैं । फिर जिसे सच माना गया है, वही सही होगा, इसका क्या ठिकाना ? ऐसी दशा में तत्वदर्शन को, धर्मधारणा को, जहाँ समूची मनुष्य जाति के लिये एक केन्द्र पर पहुँचने वाली व्यवस्था को अपनाना चाहिए था वहाँ वह उस प्रयोजन में सफल सिद्ध नहीं हुई । धर्मक्षेत्र में यहाँ तक कहा गया कि अपनी बात बलात् मनवाने के लिये दूसरी मान्यता वालों को त्रास देने में भी हर्ज नहीं । देवताओं की, देवियों की संख्या इतनी अधिक बढ़ी कि यह समझना कठिन हो गया कि इतनी संख्या में इतनी आकृतियों-प्रकृतियों की देवी होती भी हैं या नहीं । यदि होते हैं तो अपने भक्त का पक्षपात और दूसरे को मानने वालों के साथ उपेक्षा का व्यवहार क्यों करते हैं । तन्त्र मान्यता में तो अपने प्रिय देवता को तनिक-सा प्रलोभन देकर दूसरे प्रतिपक्षी का अनिष्ट तक करा लेने की मान्यता है । इसके लिये मनुष्यों की तरह उनमें रिश्वत के प्रलोभन चलते हैं और उपेक्षा-अवज्ञा करने पर अनिष्ट करने तक पर उतारू होते हैं ।

ऐसी-ऐसी मान्यताओं का तुलनात्मक अध्ययन करने से लगता है कि अध्यात्म प्रतिपादनों में कोई सार्वभौम तालमेल न होने से उन प्रतिपादनों की मान्यता पर सन्देह उत्पन्न होता है और वह आशंका न केवल प्रतिपक्षी पर प्रहार करती है वरन् अपने वर्ग की मान्यताओं पर भी यह सन्देह उत्पन्न करती है कि वे भी सही हैं या नहीं ।

इन दिनों यही स्थिति है । धार्मिक मान्यताओं के प्रति लोगों का विश्वास डगमगाने लगा है क्योंकि वे सार्वभौम समाधान नहीं करते । किसी वर्ग विशेष का अपनी मान्यता को सत्य मान बैठने पर दुराग्रह का आक्षेप लगता है । यह कैसे सही हो सकता है कि संसार की अगणित मान्यताओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में से सभी गलत हों और एक दुराग्रही की बात ही सच निकले । कोई वर्ग अपनी बात पर अड़ा रहे इससे उस मान्यता को सही माने जाने का कोई सर्वमान्य हल तो नहीं निकलता है । विज्ञान के सभी प्रतिपादन सर्वत्र सर्वमान्य हैं । सत्य का यही लक्षण होना चाहिए कि उसकी बात सभी के गले उतरे और हर कसौटी से कसे जाने पर सत्य और औचित्य से भरी-पूरी प्रतीत हो । ऐसा न बन पड़ने पर अनीश्वरवादियों के उस कथन की ओर मन लुढ़कता है जिसमें कहा गया है कि "प्रकृति व्यवस्था ही काम करती है, ईश्वर नाम की कोई चीज नहीं है । मनुष्य एक चलता-फिरता पौधा है । मृत्यु के बाद उसकी सत्ता समाप्त हो जाती है ।" कर्म-फल नाम की कोई वस्तु है तो उसे समाज या शासन द्वारा यहीं मिलनी चाहिए । परलोक की बात का कोई भरोसा नहीं ।

इस नास्तिकवाद मान्यता के और भी भयंकर परिणाम हैं । आस्थाओं के सहारे मनुष्य आदर्शों को अपनाता है । त्याग, बलिदान के लिये तैयार होता है । संयम पालता है । उदारता बरतता है । यदि ईश्वर, आत्मा और कर्मफल की मान्यताओं को झुठला दिया जाय तो आज का उद्धत मनुष्य कल पूर्णतया अराजकतावादी-अनास्थावान हो जायेगा और समाज तथा शासन की आँखों में धूल झोंकने की अनेक धूर्तापूर्ण तरीके निकालकर मनमर्जी बरतने लगेगा, तब जिसकी लाठी उसकी भैंस वाला जंगल का कानून चलेगा । बड़ी मछली छोटी मछली को निगलेगी । दैवी व्यवस्था को अमान्य ठहरा देने पर निर्बलों का शोषण और समर्थों का अत्याचार बुद्धिसंगत ठहराया जायेगा और डाकुओं, तस्करों, गिरोहों तथा तानाशाही की सर्वत्र तूती बोलेगी । कहीं न्याय नाम की कोई वस्तु कहने-सुनने को भी न मिलेगी ।

प्रथा-परम्पराओं का तो इतना बड़ा जाल-जंजाल है कि एक ही गाँव में बसने वाली जातियों की अलग-अलग प्रथा-परम्पराएँ हैं । एक क्षेत्र का या एक देश का कहना ही क्या ? उनकी पृथकताओं को देखते हुये तो ऐसा प्रतीत होता है कि इनके बीच कोई तारतम्य नहीं है और मनुष्य समुदाय के एकता वाले तथ्यों को ढूँढ निकालना कठिन है ।

इस जंजाल में निहित स्वार्थों का एक समुदाय अलग से ही अपनी घात लगाकर घुस पड़ा है । मुहूर्तवाद, भाग्यवाद, ग्रह दशा पृथक-पृथक प्रयोजनों में पृथक-पृथक कर्मकाण्ड आदि पर दृष्टि फैलाने से तो ऐसा प्रतीत होता है कि अन्धविश्वासी लोगों की भावनाओं को भड़काकर उनके दोहन का ऐसा सुगठित चक्र चला है जिससे भ्रम जंजाल में भटककर अपनी शान्ति गँवाने, निश्चयों को डगमगाने तथा पैसा ठगने के अतिरिक्त और कहीं कुछ तथ्य नहीं है । बौद्धिक दुर्बलता की स्थिति देखते हुये अनेक सम्प्रदायों, मत-मतान्तरों और भ्रम-जंजालों का विस्तार हुआ है इसे स्थिति की परिणति के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है ।

मूढ़ता, अज्ञानता, प्रचलन आदि के सहारे मूर्खताएँ अपने आप पनपती रहती हैं । विज्ञजनों का यह काम नहीं है कि उस भोलेपन का अनुचित लाभ उठायें । उन्हें ऐसे भ्रमजंजालों में फँसायें जिनसे उनका हित होना तो दूर मात्र मूढ़मान्यताओं, अवांछनीयताओं में डूबने का ही अवसर मिलता है । जिनका काम डूबतों को उबारना है वे अपने स्वार्थ के लिये उलटे डुबाने का कार्य करने लगें तो इसे चिन्ता का विषय ही कहा जायगा ।

तत्वदर्शन के इतिहास और उसके आधुनिक स्वरूप पर अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक विचार करते हुए संसार के मूर्धन्य दार्शनिकों ने कुछ निष्कर्ष निकाले हैं और इनके पक्ष में अनेक तर्क, प्रमाण, उदाहरण प्रस्तुत करते हुये ऐसे तथ्य प्रस्तुत किये हैं जिन्हें सहज ही नकारा नहीं जा सकता । उनका कथन है कि—(१) ईश्वर एक सर्वव्यापी, सचेतन व्यवस्था शक्ति है । उसका वैभव-विस्तार इतना प्रखर है कि परमाणु से लेकर ब्रह्माण्ड तक को एक ऐसी व्यवस्था के अन्तर्गत बँधे हुए है कि उसमें व्यतिरेक की कहीं कोई गुंजायश नहीं है । 'इकालोजी' सिद्धान्त के अनुरूप सभी एक-दूसरे के साथ बँधे हुये हैं । नियमों के परिपालन और सुनियोजित अनुशासन से सभी बँधे हुये हैं, पर साथ ही यह भी निश्चित है कि उसे किसी की न तो मनुहार चाहिए और न उपहार । वह कर्मों की तराजू पर हर किसी को तौलता और आदर्श तथा पराक्रम के आधार पर सभी को कर्मफल देने वाली स्वसंचालित व्यवस्था का निर्धारण करता है । हमारे मनःक्षेत्र की संरचना ही ऐसी है जो निकृष्टता अपनाने वाले को आधि-व्याधियों में फँसाती और पतन के गहरे गर्त में धकेल देती है । उसे परब्रह्म कहते हैं । परब्रह्म के आदर्शवादी, पुरुषार्थवादी नियमों का सतर्कतापूर्वक पालन करना ही उसकी सच्ची पूजा है और इसके फलस्वरूप अनायास ही उत्कर्ष के अवसर मिलते चलते हैं ।

(२) उपासना अपनी निज की आत्मा को परिष्कृत करने के लिये की जाती है । जिसका तात्पर्य है अपने व्यक्तित्व को ईश्वर के समतुल्य महान और न्यायनिष्ठ बनाना । यह सदा स्मरण रखना कि हम परब्रह्म की न्याय व्यवस्था से बच नहीं सकते । उसके साथ अपने आपको आग ईंधन की तरह जोड़ लेने पर महामानव, ऋषि, देवात्मा, अवतार बन सकते हैं ।

उपासना के साथ ही साधना और आराधना के दो पक्ष भी अविछिन्न रूप से जुड़े हुए हैं । साधना का तात्पर्य है चिन्तन और चरित्र को उत्कृष्ट उच्चस्तरीय बनाना । सच्चे अर्थों में सज्जन, शालीन और सुसंस्कृत बनाना ।

आराधना का तात्पर्य है इस संसार को विराट ब्रह्म मानकर विश्व उद्यान को अधिक सुन्दर, समुन्नत एवं सुसंस्कृत बनाना । सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन एवं दुष्प्रवृत्ति उन्मूलन में प्राणपण से लगे रहना । औसत भारतीय स्तर का जीवन जीना । भौतिक कामनाओं के सम्बन्ध में संयम बरतना ताकि शक्तियों को दुरुपयोग से बचाकर उसे पुण्य-परमार्थ हेतु लगाया जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सके । आराधना में निजी लिप्सा पर अवरोध करते हुये बचे समय साधनों को लोकमंगल के लिये नियोजित किये रहना ।

(३) पूजा-अर्चना का उद्देश्य है इन उपचारों के सहारे अपनी सत्प्रवृत्तियों को उभारना । दुष्प्रवृत्तियों को दबाना । पूजा आत्मदेव की ही की जाती है और उसी को विकसित करते हुये अतीन्द्रिय क्षमताओं का धनी बना जाता है । पूजा-उपकरणों से शिक्षा ग्रहण करते हुये पुष्प जैसा कोमल, दीपक जैसा प्रकाशवान, चन्दन जैसा सुगंधित, जल जैसा शीतल बनना और अक्षत चढ़ाने के रूप में अपनी कमाई का एक अंश नियमित रूप से परमार्थ प्रयोजनों के लिये लगाना । इष्ट देव को सदुद्देश्यों की प्रतिमा मानना और उसके प्रति अविच्छिन्न श्रद्धा रखना ।

(४) पुण्य-परमार्थों में लोकमानस के परिष्कार को सर्वोपरि मानना क्योंकि समस्त समस्याओं, कठिनाइयों और विपत्तियों का एक ही कारण है—आस्था-संकट । चिन्तन और चरित्र में भ्रान्तियों और भ्रष्टताओं का समावेश । यदि उस लदे हुए भार से छुटकारा पाया जा सके तो कोई भी व्यक्ति, किसी भी परिस्थिति में हँसती-हँसाती विकसित होती और अन्यों को ऊँचा उठाती, आगे बढ़ाती जिन्दगी जी सकता है । इसलिये संसार के समस्त पुण्य-परमार्थों में जनमानस के परिष्कार को सर्वोपरि माना गया है ।

अन्य दानों का प्रतिफल तो दूसरी योनियों में भी मिल सकता है किन्तु 'ज्ञानदान' का फल मनुष्य जन्म में ही मिलता है । इस दान से अगले जन्म में मनुष्य योनि मिलना निश्चित रहता है ।

(५) स्वाध्याय, सत्संग, कथा-कीर्तन, जनजागरण, तीर्थ यात्रा, हवन आदि कर्मकाण्डों का उद्देश्य अन्तःकरणों में सद्ज्ञान भरना है । उन स्थानों में इस स्तर के प्रशिक्षण का समावेश रहे तो ही उनकी सार्थकता माननी चाहिये । मात्र श्रवण, कथन या छुटपुट कर्मकाण्डों से ही वह लाभ नहीं मिलता जिसे पुण्य कहा गया है ।

(६) ईश्वर दर्शन, दरिद्र नारायण की सेवा या सत्प्रयोजनों की संलग्नता में आत्म-सन्तोष के रूप में होता है । आत्मा में वह दिव्य प्रकाश के रूप में झलकता है । मनुष्यों के रूप में उन्हें ऋषिकल्प शरीरों में देखा जा सकता है । ज्ञान चक्षुओं से वह विराट ब्रह्म के रूप में दिखाई देता है । निराकार को प्रत्यक्ष साकार रूप में नहीं देखा जा सकता । प्रतिमाएँ तो उसकी विशेषताओं की झाँकी कराती हैं । समुद्र से उठने वाली लहरों की तरह ईश्वर की महानता ही देवी-देवताओं के रूप में परिलक्षित होता है । उनका पृथक अस्तित्व नहीं है ।

(७) साम्प्रदायिक रीति-रिवाज सामयिक परिस्थितियों के कारण निर्धारित होते रहे हैं । वे समयानुसार बदले जाते रहे हैं और भविष्य में बदले जाते रहेंगे । किसी भी प्रचलन का अकारण, अपरिवर्तनशील मानने का आग्रह नहीं करना चाहिए । यदि वे अनावश्यक, असीमित हो चुके हों तो उन्हें बदल देना चाहिए । प्रथाएँ वही स्वीकारी जानी चाहिये जो सामयिक एवं विवेकसंगत हों ।

(८) सभी धर्मों का आदर करना चाहिए । उन सभी ने अपने-अपने क्षेत्रों में अपने-अपने समय पर महत्त्वपूर्ण सेवाएँ की हैं । किसी धर्म की कमियाँ निकालने के विवाद में नहीं फँसना चाहिए । इससे अकारण विग्रह और कलह होता है । जो बातें जिस धर्म में हृदयग्राही प्रतीत हों उन्हें अपना लेना चाहिए और जिन पर मतभेद हो उन्हें संसार के मूर्धन्य लोगों द्वारा विचार करने के लिए छोड़ देना चाहिए ।

(९) विश्व अब वाहनों और संचार साधनों तथा संख्या वृद्धि के कारण बहुत छोटा हो गया है । एक गाँव घर की तरह । इसलिये अब अगले दिनों (१) एक राष्ट्र (२) एक भाषा (३) एक संस्कृति (४) एक व्यवस्था बनने जा रही है । पृथकताएँ अपने आप समाप्त होंगी । एकता और समता के सिद्धान्त ही मान्यता प्राप्त करेंगे ।

पुरानी इमारतें टूटती-फूटती रहती हैं उनकी मरम्मत कराने से काम चल जाय तो ठीक; अन्यथा गिराकर नये सिरे से—नये नक्शे के अनुरूप बनाना पड़ता है । कपड़े पुराने होने पर जीर्ण-शीर्ण हो जाते हैं । मरम्मत करने से काम नहीं चलता तो नये बनवाने पड़ते हैं । बच्चों के कपड़े तो उनके बड़े हो जाने पर ऐसे ही छोटे पड़ जाते हैं, तब उन्हें बदलने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं रह जाता । घी, दूध, रोटी, शाक आदि समय बीत जाने पर बासी हो जाते हैं । सड़ने लगते हैं । लाभ के स्थान पर हानि पहुँचाने लगते हैं । ऐसी दशा में उनका परित्याग करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रह जाता । समय के अनुरूप परिस्थितियाँ भी बदलती रहती हैं । तदनुसार उनमें परिवर्तन भी आवश्यक हो जाता है ।

कोई समय था जब तीरकमान ही सबसे श्रेष्ठ हथियार माने जाते थे और उस कला में प्रवीणता प्राप्त करने वाले विजयश्री का वरण करते थे । पर अब स्टेनगनों, मशीनगनों की तुलना में उनकी कोई उपयोगिता नहीं रह गई । कभी रथ ही सर्वोत्तम वाहन थे पर अब टैंकों के आगे उनका क्या मुकाबला ?

समय को देखते हुये हमें प्रत्येक स्थिति में परिवर्तन करना पड़ता है । यदि ऐसा दुराग्रह किया जाय कि जो पुराना वही श्रेष्ठ । तो हमें आदिमकाल की ओर लौटना और गुफाओं में रहना पड़ेगा । समय की माँग और आवश्यकता को देखते हुये विज्ञजनों को उनमें परिवर्तन करने के लिये तत्पर रहना चाहिए ।

(१०) हर वर्ग में अपने-अपने ढंग की कुरीतियों का विस्तार है जैसे हिन्दू सम्प्रदाय में जात-पाँति के नाम पर ऊँच-नीच का प्रचलन, विवाह-शादियों की धूमधाम और दहेज का लेन-देन । पतिव्रत धर्म और पत्नीव्रत धर्म में असमानता, अभक्ष्य भक्षण, भिक्षा व्यवसाय, नशेबाजी, मृतक-भोज, बलात् वैधव्य, बाल-विवाह, लड़की-लड़कों के बीच असमानता का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बर्ताव । ऐसे कुप्रचलनों को धर्म परम्परा मानकर उनके लिये आग्रह न करना चाहिए । ऐसी ही कुप्रथाएँ अन्य धर्मों में भी हो सकती हैं ।

(११) हँसते-हँसाते जीना, मिल-बाँटकर खाना और प्रेम प्यार से रहना, जैसा स्वभाव हर किसी को बनाना चाहिए । जिनमें यह गुण न हों, उन्हें इसका अभ्यास करना चाहिए ।

उपर्युक्त नियमों की शाखा-प्रशाखाएँ अनेक हो सकती हैं । पर विज्ञजनों द्वारा युग-धर्म के सभी लक्षण इन नियमों के अन्तर्गत समेट लिये गये हैं । विश्व धर्म का सार्वभौम मानव धर्म का स्वरूप होगा । इसकी पृष्ठभूमि बनाने में जिससे जितना बन पड़े उसे उतना प्रयास करना चाहिए । अपनी शक्ति रचनात्मक कामों में खर्च करनी चाहिए । प्रकाश (दीपक) जलता है तो अन्धकार अपने आप दूर हो जाता है । पुरातन धर्म प्रतिपादनों के विवादास्पद प्रसंगों में न पड़कर केवल उन्हीं तथ्यों को ढूँढ़ना चाहिए जो स्नेह-सौजन्य एवं एकता-समता बढ़ाते हों । अपनी मान्यता रखने का किसी को भी अधिकार है किन्तु नैतिक नियमों के अतिरिक्त अपने प्रचलनों को दूसरों पर थोपने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए । नीति-नियमों और मानवी गरिमा को बढ़ाने वाले सद्गुणों का प्रचार-प्रसार ही पर्याप्त माना जाना चाहिए ।

इस तथ्य को भी ध्यान में रखें

एक तथ्य हर किसी को ध्यान में रखना चाहिए कि धरती पर जनसंख्या आवश्यकता से अधिक बढ़ गई है । उसे और बढ़ाना समाज के प्रति द्रोह करने के समान है । बच्चों की आवश्यकता हो तो अनाथ, पिछड़े, रोगी स्तर के अनेक बालक ऐसे भी मिल सकते हैं जिनकी सेवा-सहायता भरण-पोषण आदि नहीं हो पाती उन्हीं को अपना बच्चा मानकर जितना अधिक भार अपने कंधे पर उठाया जा सके उठाना चाहिए । इस प्रकार शिशुपालन का, वात्सल्य और पिछड़ों की सहायता करने का परमार्थ एक साथ सधता है ।

अनेक स्त्रियाँ ऐसी हैं जो विधवाएँ, परित्यक्ताएँ बनकर रह रही हैं, योग्यता न होने से समुचित उपार्जन भी नहीं कर सकतीं । उन्हें श्रम देकर कुछ काम भी कराया जाय और उनके बच्चों की समुचित शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध किया जाय । बम्बई में एक संस्था 'बाप का घर' नाम से बनी भी है । ऐसी संस्थाएँ जगह-जगह बनें तो उनसे सच्चे अर्थों में असहायों की सेवा होती है ।

भिक्षुओं के लिये भी ऐसा ही प्रबन्ध किया जाय कि उनकी सामर्थ्य के अनुसार कुछ प्रशिक्षण भी दिया जाय और जो नितान्त असमर्थ हो चुके हैं उन्हें झाड़ू बुहारने, बर्तन मलने जैसा हल्का काम देकर स्वावलम्बन का पाठ पढ़ाते हुये दानी जनों से एक संगठित प्रबन्ध के अन्तर्गत उनके निवास-निर्वाह की उचित व्यवस्था की जाय । निठल्ले लोगों को जिस-तिस बहाने जहाँ-तहाँ भिक्षा माँगना और अपने रोग तथा दुर्व्यसन दूसरों को लगाना, अपराध घोषित कराया जाय । अपने देश में अन्धाधुन्ध बहानेबाज भिक्षुकों की संख्या बढ़ना एक प्रकार का कलंक है ।

धर्म प्रयोजनों के लिये उसमें प्रवेश करने देने के लिये व्यक्तियों को उनके चरित्र और ज्ञान को खरा सिद्ध किया जाय । उनको प्रशिक्षित करने तथा निर्वाह की व्यवस्था करने का दायित्व किसी प्रामाणिक संस्था के कंधे पर रहे । धर्म क्षेत्र में अवांछनीय व्यक्तियों की भरमार हो जाने से उसका स्वरूप ही विकृत हो गया है । आये दिन बदनामी की बातें सुनने को मिलती हैं । इन्हें छुट्टल न छोड़ा जाय । इस दिशा में भी जनता परिपूर्ण सतर्कता से काम ले और अप्रामाणिक लोगों को प्रवेश न होने देकर प्रामाणिक लोगों को भी अप्रामाणिकों की श्रेणी में खड़ा कर देने की गलती न करें । वंश और वेष मात्र से किसी को भी धर्मधारणा का अनुचित लाभ उठाने का अवसर न मिले ।

ऐसे ही कितने ही सुधार कार्य सोचे जा सकते हैं जिन्हें दीन-दुःखियों की सहायता करने के नाम पर सोचा और अपनाया जा सकता है । इस प्रकार भिक्षा क्षेत्र में जो उपयुक्त होंगे उन्हें ही लाभ मिलेगा । अप्रामाणिक लोग ठगी और भ्रम न फैलाने पायेंगे ।

मन्दिरों को धर्मधारणा का केन्द्र बनाया जाय जैसे कि पहले थे । उनकी आमदनी किसी व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति न बने वरन् उनका बजट बनाकर इस प्रकार खर्च किया जाय कि धर्म के निमित्त या भगवान के चरणों पर चढ़ाई प्रत्येक पाई का ऐसा श्रेष्ठतम सदुपयोग हो जिससे सत्प्रवृत्तियों के संवर्द्धन में सहायता मिले और पिछड़े लोगों को ऊँचा उठाने, आगे बढ़ाने एवं स्वावलम्बी बनने का अवसर मिले ।

मनुष्य जीवन अनेक गुत्थियों के साथ उलझा हुआ है । उसमें जितनी विशेषताएँ भरी पड़ी हैं उतनी कठिनाइयाँ भी हैं । इसकी साज-सँभाल एक ओर से नहीं अनेक दिशाओं में बरतनी पड़ती है । जिस ओर भी उपेक्षा बरती जाय, उधर ही छेद हो जाते हैं और कष्टसाध्य उपार्जन को बहाकर समाप्त कर देते हैं ।

स्वस्थ रहना सरल है पर उपेक्षा और उच्छृंखलता बरतने पर वह भी साथ छोड़ देता है । स्वच्छता न बरतने पर बाहर की मलीनताएँ चढ़ दौड़ती हैं । आलस्य, प्रमाद की आदत डाल लेने पर अच्छा-खासा शरीर निकम्मा, निठल्ला बन जाता है । मन को दुर्बुद्धिग्रस्त या कुविचारों से घिरा रखने पर मानसिक दुर्बलता व व्यग्रता आ घेरती है । अपव्यय की आदत पड़ने पर तंगी उठानी और ऋणी रहना पड़ता है । आवेग, उद्वेग, तनाव बनाये रहते हैं— झगड़े-झंझट कराते रहते हैं । तुनकमिजाज एक प्रकार के बालक ही होते हैं जो अपने आपको सँभाल नहीं पाते, बस दूसरों को उन्हें बच्चों की तरह सँभालना पड़ता है । यह दोष-दुर्गुण जिन्हें प्रत्यक्ष पाप भी कहा जा सकता है—अपने प्रति किये जाते हैं और स्वसंचालित सृष्टि व्यवस्था के अनुसार स्वयं को ही इनका दुष्परिणाम भुगतना पड़ता है । पीड़ा और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पतन मनुष्य के इन्हीं दूषित दुर्गुणों के प्रतिफल हैं । पिछड़ापन और प्रगतिशीलता अपनी ही दिशाधारा सीधी रखने या उलट लेने का हाथों हाथ मिलने वाला प्रतिफल है । अधिकांश लोग अपने गुण, कर्म, स्वभाव के कारण ही उठते और गिरते रहते हैं । इसी को शास्त्रकारों ने कहा है कि—**"धर्म एव हतो हन्ति; धर्मो रक्षति रक्षितः"** अर्थात् जो धर्म की रक्षा करता है उसकी धर्म द्वारा रक्षा होती है और जो उसे मारता है, उलटकर वही उसको मार डालता है । इस कथन का सारांश इतना ही है कि गरिमायुक्त मानव शरीर प्राप्त करने के उपरान्त उसका रख-रखाव करने में असावधानी नहीं बरतनी चाहिये । अपने हर काम को तत्परता और तन्मयता के साथ इस प्रकार प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर सम्पन्न करना चाहिये जिस पर अँगुली उठने की गुंजाइश न रहे ।

अप्रत्यक्ष धर्म-दर्शन की आधारशिला में भी उसी उद्देश्य को ध्यान में रखा गया है कि मनुष्य के परोक्ष जीवन में भी अपवाद काम नहीं करते—इन्हीं सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर धर्म-दर्शन आदि की संरचना की गई है । उसमें कर्मफल ही प्रमुख है । इसे अज्ञान ही कहना चाहिये कि सीधे सिद्धान्तों को उलट लिया है और उनमें वे दोष भर दिये हैं जो मनुष्यों में आमतौर से पाये जाते हैं ।

मनुष्य खुशामद से प्रसन्न होते हैं और उपहार पाने पर अपना सम्मान समझते हैं और बदले में बिना न्याय अन्याय का विचार किये अपने तथाकथित प्रियपात्रों की मनमर्जी के अनुसार काम करने को तैयार हो जाते हैं । इसी भ्रान्ति के आधार पर लोग देवी-देवताओं को पूजते हैं और काम नहीं बनता तो एक को छोड़कर दूसरे का पल्ला पकड़ते और इसी प्रकार जहाँ-तहाँ भटकते हुये झक मारते हैं । वास्तविकता यह थी कि महिलाएँ देवियों के ढाँचे में ढलें और पुरुष अपना स्तर देवताओं जैसा बनायें । इस माध्यम से कर्मबोध होना चाहिये था; पर लोग करने ठीक उल्टा लगे । अपना जैसा उन्हें भी चापलूस, खुशामदखोर, रिश्वती, लालची, पक्षपाती बनाने का प्रयत्न करने लगे । जो असम्भव था उसे संभव बनाने के लिये हाथ-पैर पीटने लगे । देवशक्तियाँ अपने स्तर की गरिमा को गिराने के लिये क्षुद्र व्यक्तियों के कहने भर से उतारू हो जायें यह अनहोनी बात किस प्रकार चरितार्थ हो सकती है ।

इसी प्रकार आस्तिकता के आधार पर यह मान्यता अपनाई जानी चाहिए कि ईश्वर सर्वव्यापी और न्यायकारी है । उससे हमारी नीयत और दुरभिसंधियाँ छिपाने पर भी नहीं छिप सकतीं । न्यायकारी होने से, उसके न्याय विधान से बचाव नहीं हो सकता । भले ही समाज या शासन को अन्धेरे में रखने, फुसलाने में सफलता मिल जाय । न्यायकारी होने से वह मनुष्यों से केवल सद्भाव रखने और सत्कर्म करने की अपेक्षा करता है ।

इस तथ्य को भी लोगों ने अपनी मर्जी के मुताबिक उलट डाला और पूजापत्री की टण्ट-घण्ट करके यह आशा करने लगे कि वह निर्धारित विधिव्यवस्था को उलट कर नाम जपने वालों की मनोकामना पूर्ण करने पर उतारू हो जायगा । भले ही उन्हें पाने के लिये उपयुक्त पात्रता अर्जित की हो या नहीं । समुचित पुरुषार्थ करने में भले ही उपेक्षा की जाती रही । इस प्रकार तथ्य को समझते हुए अपना परिष्कार करने की अपेक्षा ईश्वर को भ्रष्टाचारी बनाने की मान्यता मन में जमा ली गयी ।

पापों के कठोर दण्ड को हल्का करने और अपनी भूल स्वीकार करने के लिये यह आवश्यक था कि जो कुकर्म किये जा चुके हैं उन्हें पूरी तरह बन्द कर दिया जाय और समाज को जितनी क्षति पहुँचाई गयी है उतनी ही क्षतिपूर्ति करने के लिये अतिरिक्त रूप से परमार्थ कृत्यों के लिए अपना समय और साधन लगाये जायें । लेकिन इस क्षेत्र में भी लोगों ने अपनी बदनीयत को ठूँस देने में कसर नहीं रखी । पंचामृत पी लेने, गंगा नहा लेने, एक आध दिन का औंधा-सीधा उपवास कर लेने, कोई कथा-वार्ता सुन लेने जैसे बाल-विनोदों को अपनाने मात्र से यह मान लिया गया कि पाप धुल गये और कुकर्मों के फल भुगतने से छुटकारा मिल गया । इस औंधी बुद्धि का परिणाम यह हुआ कि लोग भगवान को ही उल्लू बनाने लगे । बच्चों की तरह छुटपुट खेल-खिलवाड़ का प्रदर्शन करके पापों को क्षमा करा लेने के हौसले बढ़ने लगे । इतना ही नहीं एक कदम और आगे बढ़कर दूने उत्साह से पाप कर्म करने लगे । जब इतने सस्ते में ही कर्मफल के दण्डों से बचा जा सकता है तो दुहरा लाभ क्यों न उठाया जाय ? कुकर्मों से संसारिक लाभ भी उठाये जाते रहें और कुछ प्रपंच रचकर उनके दण्ड से क्यों न बचते रहा जाय ?

लोकसेवा जैसे परमार्थ कार्यों को पुण्य माना गया है । आत्मशोधन और लोकमंगल में संलग्न रहने से सद्गति मिलने, स्वर्ग मुक्ति तक पहुँचने की सनातन मान्यता थी । यही कारण था कि उन दिनों लोग साधु-ब्राह्मण की परिपाटी अपनाते थे और स्वयं अधिकाधिक संयम बरतते हुए बनी हुई सारी क्षमता को सत्प्रवृत्ति सम्वर्द्धन में लगाते थे पर वह क्षेत्र भी पूरी तरह उलट दिया गया । न तपस्वी स्तर के आत्म-शोधन की आवश्यकता समझी गई और न परमार्थ प्रयोजनों में त्याग करने का, कष्ट सहने का कोई लाभ समझा गया । जब यह कार्य नाम जप, तिलक छाप, कण्ठी धारण आदि से ही पूरे हो सकते हैं । सत्यनारायण कथा सुनने मात्र के दो चार रुपये खर्च करने से स्वर्ग की सीट रिजर्व हो सकती है तो काम छोड़ने, लाभ में कमी करने और पुण्य प्रयोजनों में समय साधन लगाने का झंझट कौन उठाये ? सस्तेपन की होड़ में बात यहाँ तक बिगड़ी कि लोग जीवन-शोधन की आवश्यकता को तो भूल गये और सस्ते कर्मकाण्डों के सहारे स्वर्ग, मुक्ति, सिद्धि, ईश्वर दर्शन आदि के दिवा-स्वप्न देखने लगे । ऐसा हो तो कैसे सकता था, मात्र भटकाव ही हाथ लगा और निहित स्वार्थों के शिकार बनकर अपने लिये भटकते रहने भर का कार्य हाथ रह गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा ८.१२

तीर्थयात्रा को धर्मप्रचार की पदयात्रा माना जाता था । रास्ते में मिलते हुये लोगों तथा रात विरमने के स्थानों पर सत्संग की प्रेरणाप्रद शिक्षाओं का क्रिया-कलाप चलता था । लोग एक मार्ग से जाते और दूसरे मार्ग से लौटते हुये उसी धर्म-प्रचार कार्य को आदि से अन्त तक करते थे । इसके अतिरिक्त तीर्थ स्थानों में अधिक दिन निवास करते हुए उच्च-स्तरीय आश्रमों में निवास करने की प्रथा भी थी । ताकि उस आधार पर आत्म-शोधन, भावी जीवन का निर्माण, परामर्श उपयुक्त वातावरण में होता रहे । वानप्रस्थी लोग अपनी सेवा-साधना के लिये उपयुक्त शिक्षा प्राप्त करते थे । जीवनचर्या को कष्ट, सहिष्णुता एवं मितव्ययता के साँचे में ढालते थे और एक निर्धारित योजना के अनुसार आवश्यक क्षेत्रों में डेरा डाल कर रचनात्मक काम करने लग जाते थे । तीर्थ बच्चों के लिये, गुरुकुल गृहस्थों के लिये अपनी गतिविधियों में उत्कृष्टता का समावेश और वानप्रस्थ उन आरण्यकों में लोक शिक्षा प्राप्त करते थे; पर अब तो तीर्थयात्रा के साथ पुरातन कोई भी चिह्न शेष नहीं रहा । बसों, रेलों में फरटि के साथ जाते हैं और प्रतिमा दर्शन, जलाशय स्नान करके दूसरे ही दिन लौट पड़ते हैं । धक्के खाने और पैसा खर्चने के अतिरिक्त 'पिकनिक' जैसा लाभ भी तो नहीं मिलता । उसके लिये तो प्रकृति के सान्निध्य में कुछ समय रहने और हँसने-हँसाने की जरूरत पड़ती है, पर वहाँ तो उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में जैसी भगदड़ मचती है वैसी ही मनाते हुये लोग जेब कटाकर जिस-तिस पर दोषारोपण करते हुये वापस लौट आते हैं ।

ब्रह्मकर्मी—शिक्षा संवर्द्धक, लोकसेवी ब्राह्मणों को सत्कारपूर्वक एकत्रित करके, उनकी निजी तथा सार्वजनिक कार्यक्रमों की आवश्यकताओं को समझते हुये उसकी व्यवस्था बनाने का भी प्रचलन था । उसी को ब्रह्मभोज कहते हैं । पूर्वजों की कमाई को कमाऊ लड़के हाथ नहीं लगाते थे । उसे स्वर्गीय आत्मा की सद्गति के लिये पुण्य प्रयोजनों में लगा देते थे । इस कार्य को साधु-ब्राह्मण स्तर के व्यक्ति पूरी ईमानदारी और दूरदर्शिता के साथ सम्पन्न करते थे । इसलिये जनसाधारण को यही उपयुक्त प्रतीत होता था कि जो राशि परमार्थ कार्यों के लिये जमा हुई है उसे उस भूदेव समुदाय के हाथों सौंपकर उपयुक्त खर्च की जिम्मेदारी उन्हीं के सुपुर्द कर दी जाय । पर आज तो वह व्यवस्था भी उलट गयी । मात्र वंश और वेष के आधार पर ही साधु-ब्राह्मण की परख होने लगी और बढ़िया दावत के अतिरिक्त जेब खर्च की तरह दान-दक्षिणा की राशि भी मनचाहा निजी खर्च करने के लिये सोची जाने लगी ।

गुरु शिष्य परम्परा में जीवन, विद्या के रहस्यों को समझाने का क्रम लम्बे समय तक चलता था । बताना ही पर्याप्त नहीं होता था, निकटस्थ रहकर उनका अभ्यास भी किया जाता था । गुरु अपने विषय में प्रवीण-पारंगत होते थे और शिष्य श्रद्धावान प्रामाणिक । दोनों के सुयोग से जो सत्परिणाम निकलते थे वे दोनों को धन्य बना देते थे । पर अब तो वह परम्परा चिह्न पूजा, लकीर पीटने की तरह रह गई । दोनों एक-दूसरे की सम्पदा पर घात लगाते हैं । गुरु शिष्यों की जेब काटते हैं और शिष्य गुरु से सस्ते मोल में कीमती वरदान-आशीर्वाद चाहते हैं । शतरंज के खेल की तरह एक दूसरे को मात देने की चाल चलते रहते हैं । सोचने की बात है कि आधार रहित ऐसे गुरु शिष्य किसका क्या भला कर सकते हैं ? जिसके पास ज्ञान और तप की पूरी पूँजी नहीं उसका आशीर्वाद कैसे फलित हो सकता है ? इस क्षेत्र में पूरी विडम्बना छायी हुई है । गाँव गुरु, तीर्थ गुरु, दीक्षा गुरु आदि अनेक बहुरुपिये जहाँ-तहाँ भटकते और पैसा बटोरते देखे जाते हैं । विचारणीय है कि इस विडम्बना से किसका क्या लाभ हो सकता है ।

प्राचीनकाल में सभी ऋषि-मुनि विशेष पर्वों पर नियत तिथि पर एकत्रित होते थे और परस्पर विचार-विनिमय करके सामयिक समस्याओं के हल सोचते थे और मिल-जुलकर उनके निराकरण का उपाय अपनाने में जुट पड़ते थे । धर्म-प्रेमी जनसमुदाय भी उनके निर्णयों से अवगत होकर अपने क्षेत्र में सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन के दायित्व उठाते थे । विभिन्न क्षेत्रों में काम करने वाले लोग ऐसे अवसरों पर परस्पर मिल-जुल भी लेते थे पर अब तो कुम्भ जैसे बड़े मेले भी व्यावसायिक और प्रचारात्मक बन गये हैं । आने वाली भीड़ अपने कौतूहल की तृप्ति कर लेती है और अड्डे जमाने वाले लोग उनसे आर्थिक लाभ उठा लेते हैं । ऐसे धार्मिक मेले समय-समय पर जगह-जगह होते रहते हैं । भीड़ भी यातायात सुविधा के कारण पहले की अपेक्षा कहीं अधिक होती है पर उनसे पुरातन उद्देश्यों की पूर्ति होती हो ऐसा कहीं प्रतीत नहीं होता ।

मन्दिर और आश्रम बनाने, बनवाने की प्रतिस्पर्द्धा लगी हुई है । जो जितना प्रतिभावान है वह उतने अधिक लोगों को विशेषतया सम्पन्नों को अपने प्रभाव में समेट लेता है और बात की बात में भव्य इमारतें बनकर तैयार हो जाती हैं । आश्रम और मन्दिर आये दिन बनते जाते हैं पर उन्हें उघाड़ कर देखा जाय कि इनके द्वारा धर्म धारणा को व्यापक बनाने के लिये क्या गतिविधियाँ चल रहीं हैं तो यत्किंचित पूजा-पाठ के अतिरिक्त और कोई ऐसा कार्य नहीं दीखता जिससे देश, धर्म, समाज, संस्कृति के उत्कर्ष में किसी प्रकार की सहायता मिलती हो । बनाने वालों के मर जाने के बाद वे सूनसान खण्डहरों में बदलते जाते हैं या किन्हीं चतुरों की व्यक्तिगत सम्पत्ति बनकर रह जाते हैं ।

शेर की खाल ओढ़कर गधे द्वारा जंगल का राजा बनने की कहानी कितनों ने ही सुनी है । नील की नाँद में डूबकर रँगा सियार जिस प्रकार अपने समुदाय का नेता बन बैठा था उसी प्रकार धर्म का कलेवर तो सड़ी लाश की तरह फूलता जाता है पर उसमें प्राणवान होने जैसे कोई लक्षण उत्पन्न नहीं हो रहे हैं । यह बहुत बड़ी चिन्ता का विषय है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विवेक का अनुसरण करें

मनुष्य के सामने कई बार ऐसे अवसर आते हैं कि परस्पर विरोधी विचारधाराओं के सामने आ जाने पर बुद्धि भ्रमित हो जाती है और यह निर्णय नहीं हो पाता है कि इनमें से किसे स्वीकार तथा किसे अस्वीकार करें ।

वेदशास्त्रों में अनेक ऐसे स्थल हैं जिनमें आपसी मतभेद बहुत भारी है । एक ग्रन्थ में एक बात का समर्थन किया गया है तो दूसरे में उसका विरोध है । इसी प्रकार ऋषियों, सन्तों, महापुरुषों, नेताओं के विचारों और आदर्शों में कभी-कभी असाधारण विरोध होता है । इन उलझनों में साधारण व्यक्ति का मस्तिष्क भ्रमित हो जाता है । किस शास्त्र को, ऋषि को, महापुरुष को, नेता को वह गलत ठहरावे किसे सही ठहरावे । सभी का अनुकरण हो नहीं सकता, क्योंकि विरोधी मतों का एक साथ मानना और उनका अनुसरण करना असम्भव है ।

वेदशास्त्रों का मंथन ऐसे अवसरों पर विवेक की कसौटी हमारे हाथ में देता है और आदेश करता है कि किसी भी पुस्तक या व्यक्ति की अपेक्षा विवेक का महत्त्व अधिक है । इसलिये जो बात बुद्धिसंगत हो, विवेकसम्मत हो, व्यवहार में आने योग्य हो, उचित हो केवल उसी को ग्रहण करना चाहिये ।

देश, काल और परिस्थिति का ध्यान रखकर समय-समय पर आचार्यों ने उपदेश किए हैं । इसलिए जो बात एक समय के लिये बहुत ही उचित एवं आवश्यक थी वह दूसरे समय में अनुचित और अनावश्यक हो गयी । जाड़े के दिनों में पहने जाने वाले गरम ऊनी कपड़े गर्मी में हानिकारक हैं, इसी प्रकार गर्मी की हल्की पोशाक को ही जाड़े के दिनों में पहने रहना निमोनिया को निमंत्रण देना है । अपने समय में जो पोशाक आवश्यक होती है वही काल और परिस्थिति बदल जाने पर त्याज्य हो जाती है ।

अग्नि का आविष्कार होने पर आदिम काल में मनुष्य इस दैवीतत्व को पाकर बड़ा प्रसन्न हुआ उसने अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिये अग्नि को घृत, मेवा, मिष्ठान, पकवान, सुगंधित वनस्पतियों का भोजन कराने का विधान यज्ञ आरम्भ किया । समय के साथ उस पवित्र यज्ञ व्यवस्था में विकार आया और गौ, अश्व, नर आदि का वध करके हवन किया जाने लगा । इस विकृति को रोकने के लिये गौतमबुद्ध ने यज्ञों का खण्डन किया । कालान्तर में बौद्ध-धर्म में भी विकार आये और उनका शंकराचार्य को खण्डन करना पड़ा । शंकर मतानुयायी भी धीरे-धीरे शुष्क वेदान्ती मात्र रह गये तब प्रेम और भावना को जाग्रत करने के लिये भक्तिमार्गी संतों ने वेदान्त का विरोध करके भक्ति की ध्वजा फहरायी । भक्ति में अन्ध-विश्वास आ गया तो स्वामी दयानन्द ने उसका खण्डन किया । इस प्रकार हम देखते हैं कि एक आचार्य दूसरे का खण्डन करता चला आया है । जैसे एक समय का स्वादिष्ट भोजन कालान्तर में विष्ठा बन जाता है वैसे ही एक समय की व्यवस्था कालान्तर में जीर्ण-शीर्ण हो जाती है और उसका पुनरुद्धार करना पड़ता है । अपने-अपने समय का प्रत्येक शास्त्रकार सच्चा है, पर कालान्तर में उसमें सुधार होना अवश्यम्भावी है । देश, काल का ध्यान न रखते हुये जब हम सब शास्त्रों को सम-कालीन मान कर चलते हैं तब उनमें विरोध दिखायी पड़ता है । किन्तु काल भेद और परिस्थिति भेद को ध्यान में रखते हैं तो सभी व्यवस्थाएँ सही मालूम पड़ती है ।

केवल विवेक ही हमें यह बता सकता है कि आज की स्थिति में क्या ग्राह्य है क्या अग्राह्य ? यह हो सकता है कि अपरिष्कृत विवेक कुछ भूल कर जाय और उसका निर्णय पूर्णतया निर्दोष न हो फिर भी यदि निष्पक्ष विवेक को जाग्रत रखा जायगा तो बहुत शीघ्र ही वह भूल प्रतीत हो जायगी और सच्चा मार्ग मिल जायगा । यह डर, कि हमारा विवेक गलत होगा तो गलत निर्णय पर पहुँच जायेंगे, उचित नहीं । क्योंकि विवेक के अतिरिक्त और कोई मार्ग सत्यासत्य के निर्णय का है ही नहीं । यदि किसी शास्त्र, सम्प्रदाय, महापुरुष के मत का अनुकरण किया जाय तो भी अनेक शास्त्रों, सम्प्रदायों, महापुरुषों में से एक को अपना पथ-प्रदर्शक चुनने का काम विवेक पर ही आ पड़ेगा । विवेक का अनुगमन कभी भी हानिकारक नहीं होता क्योंकि बुद्धि का पवित्र, निःस्वार्थ, सात्विक भाग होने के कारण विवेक द्वारा वही निर्णय किया जाता रहेगा जो आज की हमारी मनोभूमि की अपेक्षा श्रेष्ठ हो । उसका अनुगमन करने से मनोभूमि दिन-दिन अधिक पवित्र एवं विकसित होती जायगी तदनुसार हमारा विवेक भी अधिक सूक्ष्म होता जायगा । यह उभयपक्षीय उन्नति धीरे-धीरे आत्मबल को बढ़ाती चलेगी और क्रमशः हम सत्य के अधिक निकट पहुँचते जायेंगे । इसी मार्ग पर चलते-चलते एक दिन पूर्ण सत्य की प्राप्ति हो जायगी ।

अनेक परम्पराएँ, प्रथाएँ, रीति-रिवाज ऐसी प्रचलित हैं जो किसी समय भले ही उपयुक्त रही हों पर आज तो वे सर्वथा अनुपयोगी एवं हानिकारक ही हैं । ऐसी प्रथाओं एवं मान्यताओं के बारे में ऐसा न सोचना चाहिये कि "हमारे पूर्वज इन्हें अपनाते रहे हैं तो अवश्य इनका भी कोई महत्त्व होगा इसलिये हम भी इन्हें अपनाये रहें ।" हमें हर बात को वर्तमान काल की आवश्यकताओं और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ही कोई निर्णय करना चाहिये ।

भारतीय दर्शनशास्त्र का सदा से यह आदेश रहा है कि—व्यक्तियों और विचारों को आपस में सम्बद्ध मत करो । सम्भव है कि कोई उत्तम चरित्र का व्यक्ति भ्रान्त हो और उसके विचार अनुपयुक्त हों, इसी प्रकार यह भी सम्भव है कि कोई हीन चरित्र का व्यक्ति सारगर्भित बात कहता हो । उत्तम चरित्र के मनुष्य का व्यक्तिगत सम्मान करने में कभी संकोच न करना चाहिये किन्तु उस सम्मान का अर्थ यह नहीं है कि उसके विचारों को स्वीकार करने के लिये हम बाध्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हों । यहाँ विवेक ही प्रधान है । भगवान बुद्ध के उत्तम चरित्र और महान तपश्चर्या से श्रद्धान्वित होकर हिन्दू जाति ने उन्हें सर्वोपरि सम्मान की 'अवतार' उपाधि से विभूषित किया है । इससे बड़ा सम्मान और कृतज्ञता-यापन हिन्दू जाति के पास और कोई है ही नहीं । इतना होते हुये भी बौद्ध सिद्धान्तों को स्वीकार नहीं किया गया । ईश्वर पर अनास्था, शून्यवाद, गृह-त्याग में मोक्ष, यज्ञ निषेध आदि बुद्ध की शिक्षाओं को हिन्दू जाति अस्वीकार ही नहीं करती वरन् उनका कटु विरोध भी करती है । चार्वाक ऋषि हुये हैं । उनका नास्तिक दर्शन भी अन्य शास्त्रों की तरह ही आदरणीय है परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उनके प्रति आदर बुद्धि रखने वालों को वे विचार भी स्वीकार हों । गाँधी और सुभाष दोनों के प्रति आन्तरिक आदर रखते हुये भी यह हमारे विवेक के ऊपर निर्भर रहेगा कि हिंसा का सिद्धान्त माना जाय या अहिंसा का ।

संसार में अनेक धर्म, सम्प्रदाय, मत, मजहब, सिद्धान्त शास्त्र, संत, महापुरुष, नेता और विचारक हैं । उनकी अपने-अपने ढंग की अनेक मान्यताएँ हैं । इनमें से अपने लिये आज किसका, किस अंश में, किस प्रकार, अनुसरण करना चाहिये यह निर्णय करना हमारे विवेक के ऊपर है । हमारा निर्णय जिसके पक्ष में हो उसके अतिरिक्त भी अन्य धर्मों या महापुरुषों के लिये घृणा या द्वेष करने की आवश्यकता नहीं है । उनका उपदेश आज भले ही हमारे लिये अनुकूल न हो पर अपनी समझ से अपनी परिस्थितियों में उन्होंने भी शुभ उद्देश्य से ही अपना मत निर्धारित किया था । उनका उद्देश्य पवित्र था इसलिये वे स्वभावतः हमारे आदर के अधिकारी हो जाते हैं । विवेक की कसौटी पर कसकर हम बुराई-भलाई की हर जगह परख कर सकते हैं । किसी देश, जाति या मनुष्य के कुछ बुरे काम देख कर उसे पूर्णतया बुरा मान लेना ठीक नहीं । जिस समुदाय में कुछ लोग दुष्ट या प्रतिपक्षी हैं उसके सभी लोगों को वैसा मान लेना ठीक नहीं । अमुक जाति बहुत बुरी है ऐसी मान्यता अनुचित है । क्योंकि न्यूनाधिक मात्रा में सभी समुदायों में अच्छे और बुरे होते हैं । विवेक ही हमें यह बता सकता है कि शत्रुओं के बीच भी मित्र हो सकते हैं और मित्रों में भी आस्तीन के साँप होना सम्भव है ।

भले और बुरे की, हानि और लाभ की, मित्र और शत्रु की, सच्चे और झूठे की पहचान केवल विवेक ही करा सकता है । आकर्षणों, प्रलोभनों, तृष्णाओं, विकारों, भ्रान्तियों, खतरों से सावधान करके हमें पतन के गहरे गड्ढे में गिरने से बचाने की शक्ति केवल विवेक में ही है । विवेक हमारा सच्चा मित्र है । वह भूलें सुधारता है, मार्ग दिखाता है, उलझनें सुलझाता है, खतरों से बचाता है और सफलता की ओर अग्रसर करता है । ऐसे मित्र की आवश्यकता समझना उससे प्रेम करना और उसे अधिक से अधिक आदर के साथ समीप रखना यह हमारे लिए सब प्रकार से कल्याणकारक हो सकता है ।

शास्त्रों का आदेश है कि हम विवेकवान बनें । विवेक को अपनावें, विवेक की कसौटी पर कसकर अपने विचार और कर्मों का निर्धारण करें । इस शिक्षा को स्वीकार करना मानो अपनी जीवन-दिशाओं को शीतल, शान्तिदायक मलय मारुत के लिए उन्मुक्त कर देना है ।

अपनी बुद्धि का सदुपयोग करें

हर आदमी विद्याबुद्धि की शक्ति से सम्पन्न नहीं होता । किन्हीं विरलों को ही यह ज्ञान सम्पदा मिलती है । सृष्टि में चौरासी लाख प्रकार के जीव-जन्तु, कीट-पतंग, पशु-पक्षी बताये जाते हैं, इनमें नाममात्र की बुद्धि होती है । उसके सहारे वे बेचारे मुश्किल से अपनी जीवन-यात्रा पूरी कर पाते हैं । उनका बुद्धिबल इतना कम होता है कि कई बार तो उन बेचारों को छोटी-छोटी अड़चनों के कारण अपने प्राण तक गँवाने पड़ते हैं और आये दिन तरह-तरह के दुःख भोगने पड़ते हैं, यदि उनकी बुद्धि थोड़ी अधिक विकसित रही होती तो वे भी मनुष्य की भाँति सुखी और समृद्ध रहे होते । परन्तु कर्म की गहन गति के कारण उन्हें वह साधन प्राप्त नहीं है, फलस्वरूप मनुष्य की अपेक्षा कई दृष्टियों से अधिक सक्षम होते हुये भी जैसे-तैसे जीवन का भार ढो रहे हैं ।

मनुष्य अनेक अन्य जीव-जन्तुओं की तुलना में बहुत पिछड़ा हुआ है । पक्षियों की तरह वह आकाश में नहीं उड़ सकता, कच्छ-मच्छ की तरह जल में किलोल नहीं कर सकता, हिरन और घोड़े की बराबर दौड़ नहीं सकता, हाथी के बराबर बोझ नहीं ले जा सकता, सिंह-व्याघ्र जैसा बलवान नहीं, भेड़ बकरी की तरह घास-पात खाकर गुजारा नहीं कर सकता, उल्लू और चमगादड़ की तरह रात्रि में भली प्रकार देख नहीं सकता, ऊँट की तरह कई दिन बिना खाये-पिये नहीं गुजार सकता, सर्प की तरह सैकड़ों वर्ष नहीं जी सकता, मोर-सा सुन्दर नहीं, जुगनू की तरह चमक नहीं सकता, सर्दी-गर्मी को बर्दाश्त नहीं कर सकता, इतना निर्बल पिछड़ा हुआ होते हुए भी अन्य समस्त जीव-जन्तुओं से वह आगे बढ़ा हुआ है, सृष्टि का मुकटमणि है, सबका नेता तथा साथी है, इसका कारण है, उसका बुद्धि बल । इस बुद्धि बल ने ही उसे एक साधारण प्राणी से महान मानव बना दिया है ।

नीति का वचन है कि **''बुद्धिर्यस्य बलं तस्य निर्बुद्धिस्य कुतोबलम्''** जिसमें बुद्धि है उसमें बल है, निर्बुद्धि में बल कहाँ से आया ? जो जितना ही बुद्धिमान है वह उतना ही बलवान है । बुद्धिहीन का सारा बल निष्फल हो जाता है । मनुष्य ने इस बुद्धिबल के द्वारा ही इतना प्रभुत्व प्राप्त किया है । इसी की न्यूनाधिकता के कारण मनुष्य-मनुष्य के बीच में अन्तर दिखायी देता है । साधारणतः मानव प्राणियों के शरीर और आकृति में कोई भारी अन्तर नहीं होता, फिर भी राजा-रंक, धनी-दरिद्र, विद्वान-मूर्ख,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सत्तारूढ़-पराश्रित, शोषक-शोषित, पुण्यात्मा-पापी, महापुरुष-दीनहीन, चतुर-भोंदू के बीच जमीन-आसमान का अन्तर पाया जाता है । एक पालकी में बैठकर चलता है एक पालकी को उठाता है । एक की अँगुलियों के इशारे पर लाखों-करोड़ों प्राणियों की गतिविधि होती है, एक दूसरों द्वारा कठपुतली की तरह नचाया जाता है । एक का सर्वत्र जयघोष होता है और उसके चरणों पर सर्वस्व अर्पित किया जाता है, दूसरी ओर एक ऐसा व्यक्ति है जिसे कोई आँख उठाकर भी नहीं देखता । इतना भारी अन्तर शरीरों के कारण नहीं, बुद्धि बल के कारण है । जिसमें जितना बुद्धितत्व अधिक है वह उतना ही बड़ा आदमी बन जाता है ।

बुद्धि की महत्ता सर्वोपरि है । यह मनुष्य के लिये एक ईश्वरीय वरदान है । सृष्टि के सब जीवों को यह बुद्धिबल प्राप्त नहीं है, यहाँ तक कि सब मनुष्यों को भी वह पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं है, असंख्य मनुष्य ऐसे हैं जिनके पास नाममात्र का बुद्धितत्व है उसकी मात्रा इतनी न्यून है कि जीवन-यापन का कार्य चलाने के अतिरिक्त उसके द्वारा और कोई बड़ा काम नहीं कर सकते, उस थोड़ी-सी बुद्धि से जब वे अपना उदरपोषण ही मुश्किल से कर पाते हैं तो उसके द्वारा कोई महान कार्य करना, यश प्राप्त करना या दूसरों का उपकार करना किस प्रकार सम्भव है ? बहुत थोड़े मनुष्य इस संसार में ऐसे हैं जिनको विशिष्ठ बुद्धिबल प्राप्त है, जो दूर की सोच सकते हैं, जिनवो बारीक बातें सोचने की क्षमता है, जिनका विवेक परिमार्जित है जो बहुश्रुत हैं, जिन्होंने विशाल अध्ययन किया है एवं जो अपने बुद्धिबल से असाधारण कार्य करने की क्षमता रखते हैं ।

यह बुद्धिबल परमात्मा ने जिन विशिष्ट व्यक्तियों को दिया है वह एक विशेष उद्देश्य से दिया है । ज्ञान परमात्मा की अमानत है, धरोहर है, वह इसलिये दी गई है कि इस अमानत को वह परमात्मा की इच्छानुसार उसके बताये हुए प्रयोजनों के लिये खर्च करे । जिस किसी को भी परमात्मा असाधारण विशेषताएँ देता है इसी उद्देश्य से देता है कि वह उनके द्वारा सृष्टि के अन्य प्राणियों को लाभ पहुँचाये । जिन मनुष्यों को असाधारण बुद्धिबल दिया गया है उनके लिये परमात्मा ने यह कर्तव्य नियत कर दिया है कि वे उस शक्ति को अपने कमजोरों के लिये, कम बुद्धि वालों के लिये निरन्तर वितरण करते रहें ।

बुद्धिमानों का परम पवित्र उत्तरदायित्व यह है कि वे अपने बुद्धिबल को जनकल्याण के लिये लगावें । उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए कि हमने परिश्रमपूर्वक इतनी विद्या प्राप्त की है तो इससे हम भोग-ऐश्वर्य उठाकर ऐश-आराम क्यों न करें ? मजे-मौज क्यों न उड़ायें ? ठाट-बाट जमाने और गुलछर्रे उड़ाने में इसका उपयोग क्यों न करें ? ऐसा सोचना उचित नहीं । एक राजा अपने नौकरों को नियत मात्रा में वेतन देता है, जिससे वे अपना गुजारा कर सकें परन्तु किसी विशेष कर्मचारी को वह विश्वासपात्र समझकर उसे खजानची नियुक्त करता है और उसके पास बड़ी-बड़ी रकमें जमा करता है । यह रकम इसलिये खजानची को दी जाती है कि वह उन्हें सुरक्षित रखे और सिर्फ उन कामों में खर्च करे जिनके लिये राजा आज्ञा दे, राज्य का हित हो । यदि वह खजानची इस प्रकार सोचने लगे कि राजा मुझ पर प्रसन्न है, उसमें मेरी योग्यता के अनुसार मेरे पास इतना धन रख दिया है तो मुझे यह अधिकार है कि मैं इसका मनमाना उपयोग क्यों न करूँ ? अपने मौज-मजे के लिये यह धन क्यों न खर्च करूँ ? तो ऐसा सोचना उस खजानची के लिये अनुचित होगा । यदि खजानची को मौज-मजा करने के लिये इतना धन राजा ने दिया है तो अन्य कर्मचारी जो उसी प्रकार दिन भर परिश्रम करते हैं उन्हें भी उतना-उतना ही धन उसी प्रकार खर्च करने के लिये क्यों नहीं दिया ? यदि नहीं दिया तो राजा को पक्षपाती ठहराया जायगा । यही बात परमात्मा के बारे में कही जा सकती है । उसके सभी पुत्र समान हैं, वह समदर्शी है, निष्पक्ष है, फिर वह इस प्रकार पक्षपात क्यों करेगा ?

हमें यह बात भली प्रकार समझनी चाहिए कि साधारण प्राणियों की अपेक्षा जो भी वस्तु हमें विशेष रूप से मिली हुई है वह केवल इसलिये मिली हुई है कि उसके द्वारा हम अपने से कमजोरों की सहायता करें । बन्दूक हर किसी को नहीं दी जाती, उसे रखने का लाइसेन्स हर किसी को प्राप्त नहीं होता परन्तु राजा अपने पहरेदारों को, सैनिकों को बढ़िया-बढ़िया बन्दूक, तलवारें स्वेच्छापूर्वक दे देता है । उन्हें यह हथियार राज्य की रक्षा के लिये अमानत की तरह दिये जाते हैं । यदि वे पहरेदार या सिपाही उन हथियारों के प्रयोजन को भूलकर अपने निजी लाभ के लिये उनका उपयोग करें, डकैती डालने के काम में लावें, उनसे डरा-धमका कर लोगों को लूटें, अपने व्यक्तिगत कारणों के लिये किसी पर हमला करें या उन हथियारों को किराये पर उठावें या बेचें तो उनके यह कार्य सर्वथा अनुचित, अन्याय युक्त, कानून विरुद्ध ठहराये जायेंगे और जब राजा को यह पता लगेगा कि इन कर्मचारियों ने मेरी विशेष अमानत को अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति मान लिया और उसका मनमाना उपयोग किया तो वह बहुत क्रुद्ध होगा । उन कर्मचारियों को दण्ड देगा और अपने दिये हुये हथियार वापस छीन लेगा । बुद्धिबल या अन्य बलों के बारे में भी यही बात है । वह एक प्रकार के हथियार हैं, जिनका उपयोग केवल मात्र ईश्वरीय प्रयोजन के लिए, संसार में धर्म वृद्धि के लिये, लोकहित के लिये, जन-कल्याण के लिये, परमार्थ के लिये ही किया जाना चाहिए ।

सूर्य को प्रकाश और गर्मी का केन्द्र बताया गया है । क्या वह उस प्रकाश और गर्मी का उपयोग अपने मौज-मजे के लिये करता है ? नहीं, वह उस प्रकाश और गर्मी की निरन्तर अन्यों के लिये वितरित करता रहता है । असंख्यों प्राणी उसकी शक्ति से जीवन धारण करते हैं । चन्द्रमा की शीतल चाँदनी क्या उसके निज के उपयोग में आती है ? नहीं, वह बेचारा अपनी उस अमृतमयी चन्द्रिका का संतृप्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोगों को शान्त करने के लिये वितरित करता फिरता है । वायु दिन रात क्यों चलती है ? दिन-रात बिना विश्राम किये घर पर जाकर दूसरों पर पंखा क्यों झलती रहती है ? क्या इसके बदले में कोई ऐश-आराम उसे मिलता है ? नहीं, कुछ भी नहीं । वायु जानती है कि मुझे जो प्रचण्ड शक्ति प्राप्त है वह परमात्मा की अमानत है उसका व्यय मुझे उसके परमप्रिय पुत्रों के लिये, प्राणियों के लिये ही करना है ।

नदियों को देखिये, जल का भार लिये सदैव दौड़ती रहती हैं, प्राणियों की तृषा शान्त करना और प्यासी भूमि को तृप्त करना ही एक-मात्र उनका कार्य है, सरोवरों को देखिये, वे दूसरों के लिये जीवित हैं, अपना उनका क्या स्वार्थ है ? समुद्र अपना जल मेघमालाओं को निरन्तर देता रहता है ताकि वे भूमण्डल पर वर्षा करके उसे हरी-भरी बनायें । क्या समुद्र ने कभी ऐसा कहा है कि जल मेरे लिये मिला है, उसका उपयोग किसी को न करने दूँगा । अगर समुद्र की मनोवृत्ति हमारी जैसी होती तो वह कहता—"मैंने जल कमाया है, मैंने अपनी चतुराई से संचय किया है, मुझे इसका लाभ उठाने का पूरा अधिकार है । जिसे पानी लेना हो मुझसे मोल ले जाय, मेरे यहाँ कोई खैरात थोड़े ही बाँटती है ।" परन्तु नहीं, समुद्र हमारी तरह ओछा, स्वार्थी, संकीर्ण, अनुदार और मूर्ख नहीं है जो पराई अमानत पर अपना अधिकार जमावे और उसको अपने तुच्छ स्वार्थ के लिये ही उपयोग करने का दुस्साहसपूर्ण दुराग्रह करे ।

वृक्षों को देखिये वे अपने सुमधुर फल, शीतल छाया, लकड़ी, फूल, गोंद आदि हमें देते हैं, अपने पुराने पत्तों से हमारे लिये भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाते हैं, क्या इसके बदले में उन्हें कुछ मुआवजा दिया जाता है । अगर हमारी तरह कुछ वृक्ष भी तराजू ले बैठते कि बिना कीमत दिये नहीं मिलेगा । पुष्प तो बुरा होता हमारा चित्त प्रसन्न करते हैं, औषधियाँ हमें भयंकर बीमारियों से उवारती हैं, वनस्पति और अन्न हमारे लिये शाक-भाजी और भोजन की व्यवस्था करते हैं । गाय, बैल, भैंस, बकरी, घोड़े, ऊँट, हाथी, गधे, कुत्ते, तितली, मधुमक्खी आदि अपने-अपने ढंग से हमारी सेवा-सहायता किया करते हैं, उनके उपकारों के बदले में मनुष्य भला कितना प्रत्युपकार चुका पाता है । जब इतने अल्प शक्तिसम्पन्न प्राणी अपने जीवन का महत्त्वपूर्ण भाग बदले की इच्छा और आशा किये बिना परमार्थ के लिये समर्पित कर देते हैं तो मनुष्य के लिये यह शोभा नहीं देता कि वह अपनी सामर्थ्यों को परमार्थ में लगाते हुये झिझके और यह सोचे कि मैं अपनी कमाई से खुद ही मौज-मजा क्यों न करूँ ? किसी को मुफ्त में अपनी सेवाएँ क्यों दूँ ? इस प्रकार की क्षुद्रता मानव प्राणी के महान गौरव को गिराने वाली है । जब मधुमक्खी जैसे सृष्टि के साधारण जीव इतनी तुच्छता, अनुदारता, संकीर्णता के क्षेत्र में नहीं सोचते तो क्या मनुष्य को ही इतना टुच्चा बनना चाहिये कि खुदगर्जी के अतिरिक्त और कोई बात उसे आवश्यक प्रतीत न हो ।

जिन्हें सामर्थ्य प्राप्त है, जिनके शक्ति है वे परमात्मा के कोषाध्यक्ष हैं । उनका काम है कि अपने पास जमा हुई सम्पत्ति को राज्य व्यवस्था कायम रखने वाले कामों में खर्च करते रहें । यदि खजानची राज के खजाने की चाबी अपने कब्जे में करके दूसरों को अँगूठा दिखा दे कि यह सब तो मेरा है, मैं ही इसका मालिक हूँ, इस सम्पत्ति का उपभोग तो मुझ अकेले को ही करना है तो इससे राज्य शासन में भारी अव्यवस्था उत्पन्न हो जायगी । ऐसी बगावत करने वाले कोषाध्यक्ष को राजा का क्रोधभाजन बनना पड़ेगा । वह राज्य के शत्रुओं में गिना जायगा । जरा कल्पना तो कीजिए कि यदि बादल अपना पानी पृथ्वी पर न बरसावे, सूर्य अपनी धूप को अपने अन्दर ही समेट कर रखे और पृथ्वी परिक्रमा करना छोड़ दे, हवा परोपकार की बेवकूफी छोड़कर अपने ऊपर हमारा बोझ लादने से इन्कार कर दे तो फिर संसार का काम किस प्रकार चलेगा ? जिस अनुदारता को हम अपनाते हैं उसे यदि हमारी माता ने अपनाया होता तो जैसे छँछूदर के कच्चे बच्चों को घर में से बुहार कर घूरे पर फेंक दिया जाता है वैसे ही हमें भी किसी कूड़े के ढेर में फेंक दिया गया होता और जन्म के कुछ ही समय पर कीड़े-मकोड़ों की तरह बिलबिला कर हम मर गये होते । हमारी स्नेहमयी माता जिसने पालपोस कर हमें इतना बड़ा किया है, उसकी सेवाओं की कीमत हममें से कौन चुका देता है ? कितने आश्चर्य की बात है कि हम चारों ओर से दूसरों के कर्जों से लदे हुये होने पर भी ऐसा सोचते हैं कि हम किसी को अपनी चीज क्यों दें ? 'लेने में चतुर देने में मकर' की नीति को ईमानदारी की नीति किस प्रकार कहा जा सकेगा ?

बड़ा उत्तरदायित्व मिलना किसी की योग्यता और श्रेष्ठता का सर्वोपरि प्रमाण है । जिम्मेदारी हर किसी के ऊपर नहीं डाली जाती, जो उसके अधिकारी हैं उन्हें ही वह गौरव दिया जाता है । यह गौरव इतना बड़ा आनन्द है कि उसकी तुलना इन्द्रियों की क्षणिक खुजली मिटाने के, भोग भोगने के सुख से किसी भी प्रकार नहीं की जा सकती । बड़े आदमी रायबहादुर, खानबहादुर, सर, आनरेरी मजिस्ट्रेट आदि बनने में अपना गौरव अनुभव करते हैं, विश्वविद्यालय जिसे 'डॉक्टर' की उपाधि से सम्मानित करते हैं वह अपने को धन्य समझता है, विक्टोरिया क्रास पाने के लिये फौजी जवान बड़ी से बड़ी जोखिम उठाकर अपनी बहादुरी का परिचय देते हैं, शहीद कहलाने का सम्मान प्राप्त करने के लिए अनेक वीर अपने प्राणों की बाजी लगा देते हैं, संस्थाओं के पदाधिकारी बनने के लिये अक्सर इतनी कसमकस देखी जाती है कि लोग आपस में भिड़ तक जाते हैं । इन सब बातों पर थोड़ी गम्भीरता से विचार किया जाय तो यह प्रकट हो जाता है कि महानता का गौरव प्राप्त करना भी एक आनन्द है और वह इतना उत्तम, इतना उच्चकोटि का आनन्द है कि उसके लिये इन्द्रियों के भोग और लोभ की तृष्णा को तिलांजलि दी जा सकती है । बड़प्पन एक श्रेष्ठ आनन्द है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर वह आनन्द यों ही नहीं मिलता, उसको प्राप्त करने वालों को त्याग करना पड़ता है, तप करना पड़ता है और तुच्छता से ऊपर उठना पड़ता है ।

पण्डित नेहरू तब भारत के प्रधानमन्त्री थे । इस पद का गौरव और उत्तरदायित्व इतना भारी है कि प्रतिदिन भारी श्रम उन्हें करना पड़ता था और व्यक्तिगत शौक-मौज की, लोभ संचय की सारी तृष्णाओं को तिलांजलि देनी पड़ती थी । महात्मा गाँधी को वृद्धावस्था में भी चैन कहाँ था ? उनके परिश्रम के बदले में उन्हें क्या ऐश-आराम मिलता था ? संसार के सभी महापुरुष तभी महापुरुष बने हैं जब उन्होंने व्यक्तिगत स्वार्थ या भोग-संचय की तुच्छता से अपने को ऊपर उठाया है । अगर वे हमारी तरह संकुचित दृष्टि से सोचते और तुच्छ लोभ एवं नीच वासनाओं में उलझे रहते तो उन्हें गौरव प्राप्त नहीं हो सकता था । गाँधी जी जितने पढ़े हुये हजारों वकील कचहरियों की धूल फाँकते और पेट भरते रहते हैं, जवाहर लाल जैसे अमीरजादे दुनिया में लाखों पड़े हैं कोई पूछता तक नहीं, जमनालाल बजाज जैसों की सम्पत्ति को घण्टे में खरीद बेच-देने वाले सेठ हजारों हैं पर उनका महत्त्व कितने कौड़ी का है ? राजा, नवाब, पंडित, विद्वान, गुणी, धनी, बलवान एक से एक बड़े पड़े हैं उनकी क्या गिनती है । इन साधन सम्पन्न व्यक्तियों को किसी हद तक सुखी कहा जा सकता है परन्तु उन्हें वह सुख कदापि उपलब्ध नहीं हो सकता जो भारी उत्तरदायित्व कंधे पर लेकर उसे ईमानदारी से पूरा करने वाले को प्राप्त होता है ।

शेष जी के सिर पर पृथ्वी रखी हुई है, बेचारे को हर घड़ी उसी बोझ को लादने से फुरसत नहीं, सूर्य तेजी के साथ अहिर्निश दौड़ता रहता है, ऐश आराम के लिये पलभर का मौका नहीं । शेष जी और सूर्य की कार्य-प्रणाली को देखकर कोई व्यक्ति ऐसा कह सकता है—"यह बड़े बेवकूफ हैं, इतनी मेहनत बेकार करते हैं, इसके बदले में तनख्वाह तक नहीं लेते, इतनी योग्यता और शक्ति रहते हुये भी ऐश-आराम के कोई साधन नहीं जुटाते ।" ऐसा सोचने वाले की छोटी दृष्टि में सूर्य और शेष बेवकूफ है, गाँधी, ईसा, बुद्ध, सुकरात मूर्ख हैं और वह शूअर बुद्धिमान है जो भरपेट आराम से अपनी रुचि का भोजन करता है, दिन भर माँद में पड़ा सोता है, शूअरिया के साथ निर्द्वन्द्व विहार करता है और छः महीने पूरे नहीं हो पाते कि पौन दर्जन बच्चे पैदा कर देता है । जिनके सोचने का दृष्टिकोण इतना ओछा है उनकी महिमा किन शब्दों में कही जाय कुछ समझ में नहीं आता । मनुष्य की निज की आवश्यकताएँ इतनी नहीं हैं जिसके लिए उसे बुद्धि की अमूल्य धरोहर का सारा व्यय अपने लिये करना पड़े । वृक्षों को अपने निर्वाह के लिये जिन पदार्थों की आवश्यकता है वह भूमि में उन्हें आसानी से मिल जाते हैं, अपने फलों को बेच कर गुजारा करने की उन्हें आवश्यकता नहीं होती । गाय को अपने गुजारे के लिये घास-पात आसानी से मिल जाती है उसे अपना दूध पीने की जरूरत नहीं । मधुमक्खी शहद दूसरों के लिये जमा करती है और अपना-पेट फालतू समय में भर लेती है । मनुष्य की वास्तविक आवश्यकताएँ इतनी कम हैं कि उन्हें पूरा करने के लिये उसका दो चार घंटे का परिश्रम काफी है । पेट भरने के लिये अन्न, तन ढकने के लिये कपड़ा कमा लेने में बहुत भारी माथापच्ची करने की आवश्यकता नहीं है । बेकार की जरूरतें बढ़ाते चलना और उन्हें पूरा करने के लिये सारी शक्ति खर्च कर देना कोई बुद्धिमानी नहीं है ।

जिसके पास बुद्धि है उसे स्वभावतः बुद्धिमान होना चाहिये । बुद्धिमान खजानची वह है जो अपनी ईमानदारी और योग्यता का प्रमाण देकर दिन-दिन अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त करता है, राजा का कृपाभाजन बनता है और वेतन वृद्धि का लाभ पाता है । जो खजानची, राज्य कोष में से धन लेकर अपने लिये खर्च करने लगे उसे कौन बुद्धिमान कहेगा । जिन लोगों को परमात्मा ने बुद्धि रूपी सम्पत्ति प्रदान की है उनका कर्त्तव्य है कि अपनी बुद्धिमत्ता को, चतुरता को, विद्या को उन लोगों के लिये खर्च करता है जो अपेक्षाकृत कम बुद्धिमान हैं, जिनको बौद्धिक सहायता की आवश्यकता है । संसार में असंख्य प्राणी ज्ञान के अभाव में कितना कष्ट पा रहे हैं । उन्हें साधन प्राप्त हैं पर सद्बुद्धि की कमी के कारण नाना प्रकार की व्यथा, बाधाएँ घेरे हुये हैं । यदि उन्हें विवेक सद्ज्ञान, सही दृष्टिकोण, सुबुद्धि, सत्यपथ प्राप्त हो जाय तो कोई कारण नहीं कि वे दुःख-दारिद्र की वेदना से पीड़ित रहने के बजाय निरन्तर सुख शान्ति का अनुभव न करें ।.

माता-पिता के ऊपर छोटे बालकों के पालन-पोषण का उत्तरदायित्व होता है । राजा इस बात का उत्तरदायी है कि उसकी प्रजा का जान-माल सुरक्षित रहे । धनी और व्यापारी इस बात के लिये जिम्मेदार हैं कि वे अकाल, आपत्ति, बेकारी, दरिद्रता आदि से जनता को बचाने के लिये अपने धन का उपयोग करें । जिनके पास बन्दूक का लाइसेन्स है वे इस बात के जिम्मेदार हैं कि पड़ोस में डाका पड़ रहा हो तो अपनी बन्दूक से डाकुओं का मुकाबला करें । यदि, माता-पिता बालकों के प्रति, राजा प्रजा के प्रति, धनी जनता के प्रति, बन्दूकवाला पड़ोसी के प्रति अपने उत्तरदायित्व का पालन नहीं करता तो ईश्वर के दरबार में वह अपराधी ठहराया जायगा और उसको इस गैरजिम्मेदारी का परिणाम भोगना पड़ेगा । एक छोटा बालक भूख से तड़प-तड़प कर प्राण त्याग रहा हो दूसरी ओर एक आदमी मिठाइयाँ उड़ा रहा हो तो वह मिठाई खाना धिक्कार के योग्य है । इसी प्रकार जब कि सद्बुद्धि के अभाव में जनता दुःख शोक, चिन्ता, क्लेश, कलह, पाप, ताप, आदि से बेचैन है तब उन लोगों को जो विद्वान हैं, बुद्धिमान हैं, यह शोभा नहीं देता कि उस ईश्वर प्रदत्त ज्ञान सम्पत्ति से अपना वैभव बढ़ाने में, खुद ही ऐश-आराम उठाने में व्यस्त रहें । यदि वे इतना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकुचित दृष्टिकोण धारण करते हैं तो उनकी विद्या का क्या महत्त्व है ? क्या गौरव है ?

बुद्धिमत्ता और सम्पन्नता का सदुपयोग

आज की सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या यह है कि हम समयानुरूप कैसी जीवन पद्धति अपनायें, जिसके सहारे न केवल आज का वरन् कल का समय भी चैन के साथ कट सके ।

लोग सम्पन्न बनने के लिये आतुर दिखाई पड़ते हैं और चाहते हैं कि उस उपार्जन के सहारे अधिकाधिक विलास और उपभोग की सामग्री जुटायें । अधिकाधिक खर्च करें और समीपवर्तियों को यह दिखायें कि हम आप लोगों की तुलना में कितने चतुर और भाग्यवान हैं । इस लालसा की पूर्ति के लिये वे तरीके अपनाने पड़ते हैं जो मानवी गरिमा के उपयुक्त नहीं हैं । सामान्य रीति-नीति अपनाने और उसमें नैतिकता का समावेश रखने से औसत देशवासियों जितना ही कमाया जा सकता है । यदि अधिक कमा भी लिया जाये तो सामाजिकता, उदारता और जिम्मेदारी की भावना इस बात के लिये विवश करती है कि जो अधिक है उसे विलास में न उड़ाकर पिछड़े हुओं को ऊँचा उठाने में लगाया जाये । यदि अपनी बुद्धिमत्ता और कुशलता अधिक है तो उसका उपयोग मात्र धन उपार्जन के लिये ही न करके ऐसे कार्यों में नियोजित किया जाये जिससे अव्यवस्था और अवांछनीयता के निराकरण में सहायता मिले । जीवन के इस मूलभूत सिद्धान्तों को भूलकर चाहे जैसे कमाने और चाहे जिस प्रकार खर्च करने की निरंकुश प्रक्रिया के फलस्वरूप समाज में ईर्ष्या और विद्रोह के भाव पनपते हैं । जो उस अपव्ययी पद्धति का अनुकरण करते हैं, वे प्रचलन को दूषित बनाते हैं । अनुचित परम्पराएँ न केवल अपनाने वालों को वरन् प्रभावित लोगों में से प्रत्येक को ऐसे कुमार्ग पर चलने की प्रेरणा देती हैं जिससे असन्तोष एवं उद्वेग उभरे । मुट्ठी भर आदमियों का अधिक कमाऊ और अधिक उड़ाऊ होना, हर दृष्टि से हर किसी के लिये अहितकर है । यहाँ तक कि जो इस नीति को अपनाकर सम्पन्नता के लिये अपने को भाग्यवान बताते और सराहते हैं उनके लिए भी ।

अपव्यय भी घातक है । भले ही वह अपनी बुद्धिमत्ता या कुशलता द्वारा ही क्यों न कमाया गया हो । जिस समाज में हम रहते हैं उसके पिछड़ेपन पर ध्यान न देकर जरूरतमंदों की सहायता से मुँह मोड़कर यदि विलासी अपव्यय किया जाता है तो वह अनेक कुटेवें उत्पन्न करता है साथ ही पातक से लादता है जिससे किसी भी भावनाशील को नहीं लदना चाहिए ।

जीवन का सारा भाग कमाने-उड़ाने में ही लगता रहे तो यह बुरी बात है । अपना स्वार्थ ही यदि सब कुछ प्रतीत होता है—अपनी खुशी के अतिरिक्त और कुछ न सूझता हो तो भी यह उचित है कि अपनी विशेषताओं एवं विभूतियों को अपना ज्ञान बढ़ाने में, परिवार को सुसंस्कारी बनाने में एवं अधिक सुयोग्य सद्गुणी बनाने में उस बचत को लगाया जाये, जो सर्वसाधारण की तुलना में अधिक मात्रा में संचित की गयी है । मात्र विलासिता एवं अहंकार की पूर्ति में अपने साधनों को लगाकर जितनी प्रसन्नता अर्जित की जाती है उसकी तुलना में आत्म-प्रताड़ना अधिक सहनी पड़ती है ।

कोई समय था जब अधिक वैभवसम्पन्नों और अधिक उपभोग करने वालों को भाग्यवान कहकर सराहा जाता था । अब वह समय चला गया । उसकी जो छाया बची है वह भी तेजी से अस्त-व्यस्त होने जा रही है । इसलिये लोगों पर अपनी छाप या धाक छोड़ने की बात उन सभी को मन से हटा देनी चाहिये जो दौलत के प्रदर्शन या अपव्यय का साज सँजोते रहते हैं ।

व्यक्तिगत समस्याओं तक में उलझे रहने की अपेक्षा समझदारी इसमें है कि जिस समाज में रहते हैं, जिस समय में निर्वाह करते हैं, उसकी समस्याओं पर भी गौर करें और उनके समाधान में जितना भाग ले सकते हों, लें । सुख और वैभव मिल-जुलकर खाने की चीज हैं । सब की प्रसन्नता के साथ अपनी प्रसन्नता जुड़ी हुई है । इसका ध्यान रखें । सब ओर से मुँह मोड़कर स्वकेन्द्रित होने वाले व्यक्ति भर्त्सना के भाजन बनते हैं भले ही वे योगीवैरागी ही क्यों न हों ।

आज की महती समस्याओं में अशिक्षा, गरीबी और अदूरदर्शिता सबसे अधिक कष्टकारक है । इनके कारण व्यक्ति दुर्गुणी बनता है और अपराधी दुष्प्रवृत्ति में फँसता है । इन कठिनाइयों से घिरा हुआ व्यक्ति स्वास्थ्य और सन्तुलन गँवा बैठता है । इतना ही नहीं, अपने पिछड़ेपन की छूत से उन सब को भी पतनोन्मुख बनाता है जिनके बीच उसे रहना पड़ता है । अनपढ़ लोगों के बीच रहते हुए कोई शिक्षित और संस्कारवान व्यक्ति भी अपनी विशेषताओं को सुरक्षित नहीं रख सकता । साथियों का आक्रमण प्रत्यक्ष हो या परोक्ष उनके द्वारा उत्पन्न होने वाला अनुपयुक्त वातावरण प्रभावित किये बिना नहीं रहता । इसलिये आत्मरक्षा की दृष्टि से भी हमें समीपवर्ती वातावरण को उपयुक्त बनाने के लिये अपनी विशेषताओं का उपयोग करना चाहिए । यह तभी सम्भव है जब हम अपने धन, समय, श्रम और चिन्तन को उद्धत उपभोग में से बचा सकें । मितव्ययता की शिक्षा अपने आचरण द्वारा ही दूसरों को दी जा सकती है । इसलिए हमें कृपण न होते हुये भी मितव्ययी तो होना ही चाहिए । बचत को श्रेष्ठतम कामों में लगाने की बात भी उतनी ही गम्भीरतापूर्वक सोचनी चाहिए जितनी गहराई एवं दिलचस्पी से कमाने और उड़ाने की बात सोचते हैं । अपव्यय अनाचार का ही दूसरा नाम है । वह जहाँ भी रहेगा वहाँ दुष्प्रवृत्तियाँ उत्पन्न किये बिना न रहेगा । उन प्रयोजनों में खर्च हुआ समय और धन उन्हें उन सब आवश्यकताओं से वंचित रखता है जो परिस्थितियोंवश पिछड़ गये हैं और उन समर्थों से उठाने में सहायता की अपेक्षा करते हैं, जिन्हें भगवान ने इस योग्य बनाया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने देश के अधिकांश लोगों को ऐसी परिस्थितियों में रहना पड़ रहा है जिसमें वे अपने कर्तव्य एवं उत्तरदायित्वों का अनुभव तक नहीं कर पाते । उनके पास उठने के साधन तो दूर, विचारों तक का अभाव है । इस अभाव की पूर्ति में यदि सामर्थ्यवान भी भागीदार न बनें तो समझना चाहिए कि मानव समाज के सदस्य होने की जिम्मेदारी उन्होंने भुला दी । इस कीमत पर यदि कोई विलासी जीवन जीता है और धन एवं समय को अनुपयुक्त रीति से गँवाता है तो उस सम्पन्नता की भर्त्सना ही की जायेगी ।

समाज हर प्रतिभावान से आशा करता है कि वह पिछड़े हुओं को सहारा देकर अपने समतुल्य बनाने का प्रयास करे । समय हर प्राणवान से आशा करता है कि उलझी हुई परिस्थिति को सुलझाने में योगदान करे । इन जिम्मेदारियों की उपेक्षा करके जो निजी स्वार्थपरता में ही संलग्न रहता है समझना चाहिए कि उसने ईश्वर द्वारा प्रदान की हुई महत्ता को व्यर्थ गँवा दिया और विभूतिमत्ता को लजाया । हर व्यक्ति समाज का ऋणी है । व्यक्ति को सुखी और समुन्नत बनाने वाली वस्तुएँ तथा परिस्थितियाँ असंख्यों के सहयोग से मिली हैं । उस ऋण से उऋण होने का एक ही उपाय है कि अपने साधनों को, समीपवर्ती वातावरण को समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने में लगाया जाय । यह तभी सम्भव है जब मनुष्य अपनी स्वार्थपरता में कटौती करे और उस बचत को उसी प्रकार सम्पर्क क्षेत्र में नियोजित करे जैसे कि अपने निजी परिवार या सम्बन्धियों के लिये सोचा और किया जाता है । बुद्धिमत्ता और सम्पन्नता की सार्थकता इसी में है कि उससे लोकमंगल का भी कुछ कहने लायक प्रयोजन सधे ।

विवेक ही हमारा मार्ग-दर्शक हो

यह संसार जड़ और चेतन के सत् और असत् के सम्मिश्रण से बना है । देव और दानव दोनों रहते हैं । देवत्व और असुरता के बीच सदा सत्ता संघर्ष चलता रहता है । भगवान का प्रतिद्वन्द्वी शैतान भी अनादि काल से अपना अस्तित्व बनाये हुये है । परस्पर विरोधी रात और दिन का अन्धकार और प्रकाश का जोड़ा न जाने कब से जुड़ा चला आ रहा है । कपड़ा ताने और बाने से मिलकर बना है, यद्यपि दोनों की दिशा परस्पर विरोधी है । यहाँ जलाने वाली गर्मी भी बहुत है । शीतलता देने वाली बर्फ से भी पूरे ध्रुवप्रदेश और पर्वत शिखर लदे पड़े हैं । यहाँ न सन्त-सज्जनों की कमी है और न दुष्ट-दुर्जनों की । पतन के गर्त में गिराने वाले तत्व अपनी पूरी साज-सज्जा बनाये बैठे और अपने आकर्षण जाल में सारे संसार को जकड़ने के प्रयास में संलग्न हैं । दूसरी ओर उत्थान की प्रेरणा देने वाली उत्कृष्टता भी मर नहीं गई है । उसकी प्रकाश किरणों का आलोक भी सदा ही दीप्तिमान रहता है और असंख्यों को श्रेष्ठता की दिशा में चलने के लिये बलिष्ठ सहयोग प्रदान करता है । परस्पर विरोधी सत्-असत् तत्वों का सम्मिश्रण ही यह संसार है । भाप में जल की शीतलता और अग्नि की ऊष्मा का विचित्र संयोग हुआ है यह संसार भाप से बने बादलों की तरह अपनी सत्ता बनाये बैठा है ।

इस हाट में से क्या खरीदा जाय क्या नहीं, यह निर्णय करना हर मनुष्य का अपना काम है । पतन या उत्थान में से किस मार्ग पर चलना है और फैसला करना पूरी तरह अपनी इच्छा एवं रुचि पर निर्भर है । ईश्वर ने मनुष्य पर विश्वास किया है और उन्हें इतनी स्वतन्त्रता दी है कि वह अपनी इच्छा-शक्ति, ज्ञान-शक्ति एवं क्रिया-शक्ति किसी भी दिशा में, किसी भी प्रयोजन के लिये उपयोग करें । इसमें किसी दूसरे का यहाँ तक कि परमेश्वर तक का कोई हस्तक्षेप नहीं है ।

कर्म करने में मनुष्य पूर्ण स्वतन्त्र है पर परिणाम भुगतने के लिये वह नियोजक सत्ता के पराधीन है । हम विष पीने में पूर्ण स्वतन्त्र हैं पर मृत्यु का परिणाम भुगतने से बच जाना अपने हाथ में नहीं है । पढ़ना न पढ़ना विद्यार्थी के अपने हाथ में है पर उत्तीर्ण होने न होने में उसे परीक्षकों के निर्णय पर आश्रित रहना पड़ता है । कर्मफल की पराधीनता न रही होती तो फिर कोई सत्कर्म करने के झंझट में पड़ना स्वीकार ही न करता । दुष्कर्मों के दण्ड से बचना भी अपने हाथ में होता तो फिर कुकर्मों में निरत रहकर अधिकाधिक लाभ लूटने से कोई अपना हाथ न रोकता ।

अदूरदर्शी इसी भूल-भुलैया में भटकते देखे जाते हैं । वे तत्काल का लाभ देखते हैं और दूरगामी परिणाम की ओर से आँखें बन्द किये रहते हैं । आटे के लोभ में गला फँसाने वाली मछली और दाने के लालच में जाल पर टूट पड़ने वाले पंक्षी अपनी आरम्भिक जल्दबाजी पर प्राण गँवाते समय तक पश्चाताप करते हैं । आलसी किसान और आवारा विद्यार्थी आरम्भ में मौज करते हैं पर जब असफलताजन्य कष्ट भुगतना पड़ता है तो पता चलता है कि वह अदूरदर्शिता कितनी महँगी पड़ेगी । व्यसन व्यभिचार में ग्रस्त मनुष्य भविष्य के दुष्परिणाम को नहीं देखते । अपव्यय आरम्भ में सुखद और अन्त में कष्टप्रद होता है, यह समझ यदि समय रहते उपज पड़े तो फिर अपने समय धन आदि को बर्बाद करने में किसी को उत्साह न हो । दुष्कर्म करने वाले अनाचारी लोग भविष्य में सामने आने वाले दुष्परिणामों की कल्पना ठीक तरह नहीं कर पाते और कुमार्ग पर चलते रहते हैं । सिर धुन कर तब पछताना पड़ता है जब दण्ड व्यवस्था सिर पर बेहिसाब बरसती और नस-नस को तोड़कर रखती है ।

वस्तुस्थिति का सही मूल्यांकन कर सकना— कर्म के प्रतिफल का गम्भीरतापूर्वक निष्कर्ष निकालना उचित-अनुचित के सम्मिश्रण में से जो श्रेयस्कर है उसी को अपनाना, यह विवेक बुद्धि का काम है । मोटी अक्ल इन प्रसंगों में बेतरह असफल होती है । अवांछनीयता में रहने वाला आकर्षण सामान्य चिन्तन को ऐसे व्यामोह में डाल देता है कि उसे तत्कालिक लाभ को छोड़ने का साहस ही नहीं होता भले ही पीछे उसका प्रतिफल कुछ भी क्यों न भुगतना पड़े । इसी व्यामोह में ग्रस्त होकर अधिकतर लोग आलस्य-प्रमाद से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लेकर व्यसन-व्यभिचार तक और क्रूर कुकर्मों की परिधि तक बढ़ते चले जाते हैं । इन्द्रिय लिप्सा में ग्रस्त होकर लोग अपना स्वास्थ्य चौपट करते हैं । वासना-तृष्णा के गुलाम किस प्रकार बहुमूल्य जीवन की निरर्थक गतिविधियों में जीवन सम्पदा गँवाते हैं, यह प्रत्यक्ष है । आन्तरिक दोष-दुर्गुणों, षट्रिपुओं को अपनाये रहकर व्यक्ति किस प्रकार खोखला होता चला जाता है इसका प्रमाण आत्म-समीक्षा करके हम स्वयं ही पा सकते हैं ।

अनर्थ मूलक भ्रमजंजाल से निकाल कर श्रेयस्कर दिशा देने की क्षमता केवल विवेक में ही होती है । वह जिसके पास मौजूद है समझना चाहिये कि उसी के लिये औचित्य अपनाना सम्भव होगा और वही कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकने में समर्थ होगा । विवेकशीलता की कमी अन्य किसी गुण से पूरी नहीं हो सकती । अन्य गुण कितनी ही बड़ी मात्रा में क्यों न हों पर यदि विवेक का अभाव है तो सही दिशा का चुनाव न कर सकेगा । दिग्भ्रान्त मनुष्य कितना ही श्रम क्यों न करे अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँच सकना उसके लिए सम्भव ही न होगा ।

विवेकशीलता को ही सत्य की प्राप्ति का एकमात्र साधन कहा जा सकता है । सत्य को नारायण कहा गया है । भगवान का सर्वाधिक सारगर्भित नाम सत्यनारायण है । यथार्थता के हम जितने अधिक निकट पहुँचते हैं । भगवान के सान्निध्य का, उनके दर्शन का उतना ही लाभ लेते हैं । हीरा पेड़ों पर फूल की तरह लटका नहीं मिलता वह कोयले की गहरी खदानें खोदकर निकालना पड़ता है । सत्य किसी को अनायास ही नहीं मिल जाता उसे विवेक की कुदाली से खोदकर निकालना पड़ता है । दूध और पानी के अलग कर देने की आदत हंस में बतायी जाती है । इस कथन में तो अलंकार मात्र है पर यह सत्य है कि विवेक रूपी हंस वृत्ति उचित और अनुचित के चालू सम्मिश्रण में से यथार्थता को ढूँढ़ निकालती है और उस पर चढ़े हुये कलेवर को उतार फेंकती है ।

शरीर की आन्तरिक स्थिति का सामान्यत: कुछ भी पता नहीं चलता, पर 'एक्सरे' मलमूत्र आदि के परीक्षण से उसे जाना जाता है । सत्य और असत्य का विश्लेषण करने के लिये विवेक ही एकमात्र परीक्षा आधार है । मात्र मान्यताओं, परम्पराओं, शास्त्रीय आप्तवचनों से वस्तुस्थिति का जान सकना अशक्य है । धर्म क्षेत्र का पर्यवेक्षण किया जाय तो पता चलता है कि संसार में हजारों धर्म-सम्प्रदाय, मत-मतान्तर प्रचलित हैं । उनकी मान्यताएँ एवं परम्पराएँ एक-दूसरे के सर्वथा विपरीत हैं । नैतिकता के थोड़े से सिद्धान्तों पर आंशिक रूप से वे जरूर सहमत होते हैं बाकी सृष्टि के इतिहास से लेकर ईश्वर की आकृति-प्रकृति, अन्त:उपासना तक के सभी प्रतिपादनों में घोर मतभेद हैं । प्रथा-परम्पराओं के सम्बन्ध में कोई तालमेल नहीं । ऐसी दशा से किस शास्त्र को, किस अवतार को सही माना जाय यह निर्णय नहीं हो सकता ।

प्रत्येक सम्प्रदाय के अनुयायी अपने मार्ग-दर्शकों के प्रतिपादनों पर इतना कट्टर विश्वास करते हैं कि उनमें से किसी को झुठलाना उनके अनुयायियों को मर्मान्तक पीड़ा पहुँचाने के बराबर है । सभी मतवादी अपनी मान्यताओं का अपने-अपने ढंग से ऐसा प्रतिपादन करते हैं कि मानो उनका विश्वास ही एकमात्र सत्य है । इसका अर्थ हुआ कि अन्य मतावलम्बी झूठे हैं । जिस एक को सत्य माना जाय वह भी अन्यों की दृष्टि में झूठा है । फिर परस्पर घोर विपरीत लिये हुए प्रतिपादनों में से किसी को भी सत्य ठहराते नहीं बनता, यदि यह कहा जाय कि यह सभी सत्य है तो फिर यह और भी बड़ी आत्म-प्रवंचना होगी । वह कहानी उपहासास्पद है जिसमें अन्धों द्वारा हाथी के कई अंगों को पकड़ कर उसका वर्णन अपने अनुभवों के आधार पर किया था । इस कहानी में यह बात नहीं है कि एक ही कान को पकड़कर हर अन्धे ने उसे अलग-अलग प्रकार का बताया था । यहाँ तो यही हो सकता है । पशुबलि को ही लें, एक सम्प्रदाय का तो उसके बिना धर्म-कर्म ही सम्पन्न नहीं होता दूसरा जीव हिंसा को धर्म के घोर विपरीत मानता है । दोनों ही अपनी-अपनी मान्यताओं पर कट्टर हैं । एक वर्ग ईश्वर को साकार बताता है दूसरा निराकार । अपने-अपने पक्ष की कट्टरता के कारण अब तक असंख्यों बार रक्त की नदियाँ बहती रही हैं और विपक्षी को धर्मद्रोही बताकर सिर काटने में ईश्वर की प्रसन्नता मानी जाती रही है । अभी भी यही स्थिति है । समन्वय या सहिष्णुता की बात कहकर इस विद्वेष को सह्य बनाने का भी बुद्धिमानों ने प्रयत्न किया है पर उससे भी कुछ बात नहीं । ऐसे सारे प्रयत्न एक प्रकार से निष्फल ही सिद्ध होते रहे हैं ।

समाधान जब कभी निकलेगा तब विवेक की कसौटी का सहारा लेने पर ही निकलेगा । अन्य सभी क्षेत्रों की तरह धर्मक्षेत्र में भी असली-नकली का समन्वय बेतरह भरा है । किस धर्म की मान्यताओं में कितना अंश बुद्धि-संगत है यह देखते हुये यदि खिले हुये फूल चुन लिये जायें तो एक सुन्दर गुलदस्ता बन सकता है । बिना दुराग्रह के यदि सार-संग्रह की दृष्टि लेकर चला जाय और प्राचीन नवीन का भेद न किया जाय तो आज स्थिति में जो उपयुक्त है उसे सर्वसाधारण के लिये प्रस्तुत किया जा सकेगा, वह सामयिक एवं सर्वोपयोगी धर्म हो सकेगा ऐसे सार-संग्रह में विवेक की, तर्क एवं तथ्य को ही प्रामाणिक मानकर चलना पड़ेगा ।

देश-काल पात्र के अनुसार विधानों में परिवर्तन होता रहता है । भारत जैसे अन्य बहुत से देशों में शाकाहार ही मान्य है पर उत्तरी ध्रुव के निवासी एक्सीमो अन्न कहाँ पायें उन्हें तो माँसाहार पर ही जीवित रहना है । सर्दी और गर्मी में एक जैसे वस्त्र नहीं पहने जा सकते । पहलवान और मरीज की खुराक एक जैसी नहीं हो सकती देश-काल, पात्र की भिन्नता से बदलती हुई परिस्थितियाँ विधि-व्यवस्था बदलती रहती हैं । स्मृतियाँ इसी कारण समय-समय पर नये ऋषियों

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

द्वारा बदलती रही हैं । इनमें परस्पर भारी मतभेद है । यह मतभेद सत्य की दिशा में बढ़ते हुए कदमों ने उत्पन्न किये हैं । आज जो सत्य समझा जाता है वही भविष्य में भी समझा जायेगा । ऐसा मानकर नहीं चलना चाहिए क्रमिक विकास की दिशा में बढ़ते हुये हमारे कदम अनेक प्राचीन मान्यताओं को झुठला चुके हैं । इसमें मूढ़ता ने ही विरोध किया है । सत्यान्वेषी दृष्टि बिना किसी संकोच और दुराग्रह के स्वीकार करने के लिये तैयार रही है । यदि ऐसा न होता तो विज्ञान के क्षेत्र में प्रचलित मान्यताओं को समर्थन न मिला होता । प्राचीनकाल के वैज्ञानिकों की मान्यताओं और आज की मान्यताओं में जमीन-आसमान जितना अन्तर है । फिर भी भूतकाल के मनीषियों की कोई अवज्ञा नहीं करता । हर कोई जानता है कि उस समय के साधनों में उतना सोच सकना भी कुछ कम प्रगतिशीलता नहीं थी । उन्होंने भी अपने से पिछलों को झुठलाया था और यदि उनसे आगे की बात सोची जा सकी तो उससे वर्तमान की प्रशंसा तो है पर भूत की अवज्ञा का तनिक भी कारण नहीं है ।

मान्यताओं, प्रथाओं का प्रचलन समय के अनुरूप निर्धारित किया और बदला जाता रहा है । जब कृषि योग्य भूमि बहुत और जनसंख्या कम थी, हिंसक पशुओं और जन्तुओं का जोर था तब अधिक उत्पादन और अधिक सुरक्षा की दृष्टि से बहुपत्नी प्रथा प्रचलित हुई थी और बहुत बच्चे उत्पन्न होना सौभाग्य का चिह्न था । आज उत्पादन की कमी जनसंख्या की वृद्धि को देखते हुये सन्तानोत्पादन को समाज द्रोह जैसा अपराध गिना जाता है तो ठीक ही है । प्राचीनकाल की मान्यताओं की इस समय दुहाई देना प्रतिगामी नीति अपनाने की तरह है । कभी धनुष-वाण ही सबसे बड़ा अस्त्र था । मशीनगन, विषैली गैस और भयानक बमों की तुलना में धनुष-वाण सँभालने से क्या बनेगा ? सुन्दर स्त्रियों का अपहरण करने के लिये लालायित फिरने वाले यवन शासकों ने लड़कियों में शील रक्षा के लिये पर्दा प्रथा और बाल विवाह का प्रचलन किया था, आज वैसी कठिनाई नहीं रही तो उन प्रथाओं की लकीर पीटने में धर्म का डंका क्यों बजाया जाय । जो अपरिवर्तनशील शाश्वत सनातन एवं सुस्थिर है वह इस संसार में एक ही है विवेक । विवेक के आधार पर और सब कुछ तो बदला जा सकता है पर वह स्वयं सदा-सर्वदा एक-रस यथा-स्थान बना रहता है । इसीलिये उसे सत्य का प्राण एवं भगवान का प्रतीक प्रतिनिधि कहा गया है ।

सच्ची लोकप्रियता इस तरह मिलती है

लोकप्रियता जीवन की सफलता का एक प्रामाणिक मानदण्ड है । अनेक लोग धन-दौलत, परिवार-प्रतिष्ठा आदि अनेक अन्य बातों को जीवन की सफलता का चिह्न मानते हैं । किन्तु यह सब बातें प्रभाव एवं अपने में एक सामान्य सन्तोष पैदा करने वाली तो हो सकती हैं किन्तु इन्हें जीवन की सफलता का प्रामाणिक लक्षण नहीं कहा जा सकता ।

धनवान लोग समाज में अपनी पूछ तथा प्रभाव देख कर लोकप्रियता के भ्रम में पड़ जाते हैं । यह बात सही है कि लोग उन्हें देखते ही नमस्कार करते, गोष्ठियों अथवा आयोजनों में विशेष स्थान देते हैं । अनेक दानों-अनुदानों के लिये उनकी दहलीज पर सिर झुकाते और कोशिश करते हैं कि उनको प्रसन्न किया जाये । किन्तु इस धेराधारी को लोकप्रियता समझना भारी भूल होगी । लोगों द्वारा दी जाने वाली यह सारी विशेषता वास्तव में उस व्यक्ति के लिये नहीं बल्कि उसके उस धन के लिये होती है जिसे लोग प्राप्त करना चाहते हैं । कल को यदि ऐसे आदमियों के पास से धन अथवा अधिकार चला जाये तो कोई उसका समाचार तक पूछने न जायेगा । जब तक उनके पास धन अथवा अन्य प्रकार के साधन, जिनसे किसी का स्वार्थ सिद्ध हो सकता है, बने रहते हैं लोग उसे हाथों-हाथ लेने और चाटुकारी करने का प्रयत्न किया करते हैं । स्वार्थ निकल जाने अथवा निराश हो जाने या उक्त व्यक्ति का वैभव नष्ट हो जाने पर लोग उसे ऐसे भूल जाते हैं मानो वह इस धरती पर है ही नहीं और यह उपेक्षा यहाँ तक बढ़ जाती है कि लोग उसे पहचान कर भी अनजान जैसा भाव व्यक्त करते हैं । किसी आधार पर निर्भर प्रभाव लोकप्रियता नहीं कहा जा सकता । इस प्रकार के साधनावलम्बी व्यक्ति कभी-कभी अविकल-वैभव रहने पर भी लोगों द्वारा उपेक्षित कर दिये जाते हैं । उनकी अपेक्षा अधिक दाता, अधिकारी अथवा वैभववान व्यक्ति मिल जाने पर उसे छोड़कर लोग उस आधिक्य वाले व्यक्ति की ओर उन्मुख हो जाते हैं । सवा सौ देने वाले के मुकाबले में लोग सौ देने वाले को बात की बात में भुला देते हैं । पहले वाले की ओर से अपनी सारी प्रियता पसन्दगी तथा चाटुकारी हटाकर दूसरों की ओर बढ़ा देते हैं । कभी-कभी तो प्रियता क्या परिचय तक छीनकर नये उपयोगी व्यक्ति को दे दिया जाता है । कम दे सकने वाला पूर्व परिचित अपरिचित तथा अधिक देने वाला नवागन्तुक अधिक परिचित हो जाता है । इस प्रकार अपने साधनों, धन तथा अधिकारों के बल पर पाये बहु परिचय को लोकप्रियता समझने की भूल करने वाले एक दिन भ्रम दूर हो जाने पर मानसिक कष्ट पाया करते हैं ।

अनेक लोग लोकप्रियता पाने के लिये दान-दक्षिणा का कार्यक्रम चलाया करते हैं । वे लोगों की श्रद्धाभक्ति अथवा आकर्षण पाने के लिये गरीबों को भोजन कराते हैं । अवसर उपस्थित कर ब्राह्मणों अथवा साधु-सन्तों को दान दक्षिणा दिया करते हैं, तीर्थों पर सदाव्रत लगाया करते हैं । संस्थाओं की सहायता करके अपना नाम खुदवाया करते हैं । कोई लोग निस्पृहता का आडम्बर करने के लिये गुप्तदान देकर अन्य लोगों से जिक्र किया करते हैं । इससे वे कुछ न कुछ सामयिक प्रशंसा अथवा प्रतिष्ठा तो अवश्य पा लेते हैं किन्तु इसे यदि वे लोकप्रियता समझते हैं तो भूल ही करते हैं ।

दान-दक्षिणा देना अथवा अन्य प्रकार के उदारता के काम करना निःसन्देह अच्छी बात है । किन्तु यही परमार्थ अथवा परोपकार तब एक व्यापार बन जाता है जब लोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोकप्रियता के रूप में इसका लाभ उठाना चाहते हैं । इस प्रकार की मन्तव्यपूर्ण उदारता लोकप्रियता का कारण तो नहीं ही बनती है, परमार्थ एवं परोपकार के पुण्य से भी वंचित रह जाती है । दान दिया जाये, सदाव्रत लगाया जाये, भूखे-नंगों को अन्न-वस्त्र दिया जाये, लेकिन केवल उनकी आत्मा अथवा उनकी आत्मा के व्याज से परमात्मा को प्रसन्न करने के लिये । इस प्रकार का निस्पृह परोपकार तथा परमार्थ ही सार्थक हो सकता है । व्यावसायिक उदारता के कृत्य निष्फल ही चले जाते हैं ।

बहुधा लोग धन-दौलत तथा परिवार अधिकार की उपलब्धि ही जीवन की सफलता समझ लेते हैं । उनका जीवन उनके अपने सन्तोष के लिए तो सफल हो सकता है । किन्तु समाज अथवा संसार की दृष्टि से वह सफल नहीं माना जा सकता । किसी का जीवन ठीक रूप में तभी सफल माना जा सकता है जब उसका जीवन औरों के लिये भी उसी प्रकार सहानुभूति एवं संवेदना का विषय हो, जिस प्रकार स्वयं उनके लिए । जीवन की यह सफलता लोकप्रियता के अतिरिक्त किसी प्रकार नहीं मिल सकती ।

लोग समझते हैं कि उनके पास एक बड़ा परिवार है, धन-दौलत तथा अन्य अनेक प्रकार के अधिकार एवं साधन सुविधाएँ हैं । वे मनमाने आराम से अपना जीवन-यापन कर रहे हैं इसलिए उनका जीवन सफल है । यह विचार भ्रामक है । केवल वैभव, विभूति पा लेने और सुख-सुविधापूर्वक जीवन बिताने की परिस्थिति मिल जाने से ही किसी का जीवन सफल नहीं कहा जा सकता ।

धनवान, शक्तिवान एवं जनवान हो जाने से, जिसे लोग जीवन की सफलता समझते हैं, प्राय: लोगों में घमण्ड, दम्भ, प्रदर्शन, क्रोध, रोष, स्पर्द्धा एवं ईर्ष्या की बुराई आ जाती है । धन, जन अथवा बल के मद में चूर होकर लोग दूसरों को सताने, दबाने तथा नीचा दिखाने में ही अपनी विशेषता समझने लगते हैं । साधन सम्पन्न व्यक्ति यही चाहता रहता है कि उसके सिवाय संसार में न तो कोई उन्नति कर पाये और न आगे बढ़ पाये । संसार का हर व्यक्ति उससे नीचे तथा आतंक में रहे । इसीलिए यदि उनकी दृष्टि किसी उठते हुये आदमी पर पड़ती है तो वे उससे ईर्ष्या करने और द्वेष मानने लगते हैं । इस बात की कोशिश करते हैं कि किसी प्रकार यह उठने न पाये । वे उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न करते, रोड़े अटकाते और काँटे बिछाते हैं । दूसरे को नीचे गिराने में अपनी शक्ति एवं साधन का दुरुपयोग करते हैं । जिस धन-दौलत तथा अधिकार शक्ति से इस प्रकार दोष उत्पन्न हो सकते हैं उसे जीवन की सफलता का लक्षण मानना भूल नहीं तो क्या कहा जा सकता है ?

जीवन की वास्तविक सफलता लोकप्रियता पाने के लिये धन-दौलत अथवा शक्ति-सम्बल की आवश्यकता नहीं, उसके लिये आवश्यकता है गुण, कर्म स्वभाव की, श्रेष्ठता की । जब तक गुण, कर्म, स्वभाव में श्रेष्ठता का समावेश नहीं होगा, बहुत कुछ धन-दौलत एवं शक्ति सम्पन्नता होने पर भी मनुष्य वास्तविक लोकप्रियता नहीं पा सकता ।

जो गुणी है उसका आदर क्या धनवान और क्या निर्धन दोनों ही करते हैं । उसकी पूजा-प्रतिष्ठा किसी बाह्य आधार पर नहीं होती, आन्तरिक गुणों के कारण ही होती है । सहानुभूति, संवेदना, सहयोग, सेवा के गुण मनुष्य को सहज ही लोकप्रिय बना देते हैं । गुणी मनुष्य की एक सद्भावना ही उसे इतनी लोकप्रियता प्राप्त करा सकती है जो एक धनवान लाखों हजारों खर्च करके भी नहीं पा सकता । सहानुभूति का एक शब्द, सम्वेदना का एक आँसू और सेवा का एक कार्य सौ भार स्वर्ण से भी अधिक मूल्यवान है । शोक के समय किसी को दिया हुआ सान्त्वना का एक शब्द, दीन-दु:खी अथवा आपत्ति पीड़ित व्यक्ति की सेवा आर्थिक सहायता से कहीं अधिक सन्तोषदायक होती है । एक निर्धन, एक धनाढ्य की अपेक्षा कहीं अधिक लोकप्रियता पा सकता है यदि वह अपने में वास्तविक गुणों का विकास कर लेता है । धनवान का धन समाज में लोकप्रियता का सम्पादन नहीं कर सकता, जब तक कि उस सहायता के पीछे सच्ची सहानुभूति अथवा सम्वेदना का गुण न होगा । लोकप्रियता यथार्थ में धन के दान से नहीं मिलती बल्कि वह मिलती है उस सद्भावना के गुण के कारण जो उस दान के पीछे दमकती रहती है । बिना सद्भावना का दान एक दम्भ होता है जो लोकप्रियता लाने के स्थान पर अधिकतर लोकापवाद ही लाया करता है ।

जो सदाचारी है, सुकर्मवान है, उसका आचरण ही उसको लोकप्रिय बना देगा । लोग उस पर विश्वास करेंगे, उसे आदर की दृष्टि से देखेंगे और उसकी चर्चा करेंगे । कर्मों की श्रेष्ठता एवं निष्कलंकता में आस्था रखने वाला मनुष्य बड़े से बड़ा कष्ट उठाकर किसी को धोखा नहीं देगा, मिथ्याचरण अथवा आडम्बर का अवलम्बन न लेगा । कोई भी ऐसा काम न करेगा जिससे वह, उसका परिवार, समाज, राष्ट्र अथवा मानवता लांछित होती हो । सुकृती के हृदय में छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष, काम-क्रोध आदि विकारों का वेग नहीं रहता । ऐसे चारुचरित लोग अपने कर्तव्यों, अधिकारों अथवा शक्तियों का प्रयोग ऐसी दिशा में नहीं करते जिससे उनकी नागरिकता एवं नैतिकता पर आँच आये । ऐसे श्रेष्ठ लोगों की तरफ लोकचित्त आकर्षित होने लगता है ।

जिसका स्वभाव मधुर है, जो क्रोध के कारण पर भी शान्त एवं सन्तुलित रहता है, छोटे-बड़े सभी व्यक्तियों से समान प्रसन्नता से मिलता और बात करता है, किसी की निन्दा अथवा छिद्रान्वेषण करना जिसके स्वभाव का अंग नहीं होता, जो परदोषदर्शी न होकर परगुण गायक होता है, वह व्यक्ति सहज ही अपने श्रेष्ठ स्वभाव के कारण लोकप्रियता पा लेता है । पावन स्वभाव के लोग निश्चय ही परमार्थ कर्मों में विश्वास रखते हैं । परमार्थ अथवा परोपकार का छोटा-सा भी अवसर आने पर सुकृत स्वभाव का व्यक्ति बिना किसी प्रोत्साहन के स्वत: उसमें लग जाता है । किसी का दु:ख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देख आँसू भर लाना और हर्ष देखकर पुलकित हो उठना श्रेष्ठ स्वभाव व्यक्तियों की एक प्राकृतिक विशेषता होती है । ऐसे पुनीत पुरुषों को भला कौन न जानेगा और कौन न याद करेगा । धन-वैभव एवं सुविधा साधनों से रहित होने पर भी गुण, कर्म, स्वभाव से श्रेष्ठ व्यक्तियों को लोग सभा, समाजों में प्रमुख स्थान ही देते हैं ।

गुण, कर्म, स्वभाव तीनों की श्रेष्ठता से ही वास्तविक लोकप्रियता मिलती है । कोई यदि बहुत कुछ गुणी है, बड़ा दयालु तथा दर्दीला है, उसकी सहानुभूति एवं संवेदना जाग्रत होने में देर नहीं लगती, किन्तु उसके कर्म गुणों के अनुरूप नहीं हैं तो उसके गुण मिथ्यात्व के दोष के भागी होंगे । किसी के आँसू देखकर आँसू तो भर लिये किन्तु उन्हें दूर करने, पोंछने अथवा बन्द करने के योग्य कोई छोटा-सा भी करणीय कार्य नहीं किया तो वह सहानुभूति उसकी अपनी मानसिक दुर्बलताजन्य भावुकता ही मानी जायेगी । ऐसी निष्क्रिय भावुकता सच्ची लोकप्रियता प्राप्त नहीं कर सकती । जो गुणी भी है जिसके कर्म भी उज्ज्वल हैं किन्तु स्वभाव कष्टकारक है तो लोग उसे भी पसन्द न करना चाहेंगे । किसी से सहानुभूति रखकर उसकी सक्रिय सहायता करने वाला यदि भावावेश में उससे कोई कठोर बात या व्यवहार कर बैठेगा तो उसके सारे किये कराये पर पानी फिर जायेगा । पुरुष, कठोर, कर्कश अथवा निराश एवं निरुत्साही व्यक्ति से कोई किसी प्रकार का सम्पर्क रखना पसन्द नहीं करेगा । अस्तु वास्तविक लोकप्रियता प्राप्त करने के लिये गुण, कर्म, स्वभाव तीनों का श्रेष्ठ होना आवश्यक है ।

जीवन की सफलता यह नहीं है कि किसी ने कितना धन, कितना वैभव, कितनी शक्ति तथा कितना अधिकार प्राप्त कर लिया, बल्कि जीवन की सफलता यह है कि उसने कितने लोगों का हृदय जीत लिया है, कितनों के हृदय पर मनुष्यत्व की अमिट छाप छोड़ी है, कितने लोगों का विश्वास किस सीमा तक जीता है ? उसने अपने आचरण से कितने लोगों को याद करने के लिये विवश कर लिया है आदि अहैतुक लोकप्रियता ही जीवन की वास्तविक सफलता है और यह लोकप्रियता गुण, कर्म, स्वभाव तीनों की श्रेष्ठता से ही प्राप्त हो सकती है ।

मानवी सभ्यता की ओर चलें

सभ्यता जन्मजात नहीं है । वह सामाजिक अनुदान है । शालीनता, शिष्टता, मर्यादा जैसे मानवीय उच्चगुण हम क्रमशः पूर्वजों से सीखते और बढ़ाते आये हैं । विश्वास स्वभाव के अंग बने हैं और उन्हीं ने समयानुसार परम्पराओं का रूप धारण किया है, यही है मानवीय उत्कृष्टता । यदि सीखने-सिखाने का अवसर न मिला होता तो हम आज भी आदिमकाल की तरह रह रहे होते । जहाँ परिस्थितियाँ पूर्व काल जैसी हैं, वहाँ मनुष्य अभी भी अनगढ़ स्थिति में रह रहे हैं और जब तक शिक्षणात्मक परिवर्तन न होगा तब तक उन्हें उसी स्थिति में रहने के लिये विवश भी होना पड़ेगा ।

केरल के त्रावणकोर जिले की परयाल झील विख्यात है । झील के चारों तरफ घनघोर जंगल हैं । इस वन की सबसे बड़ी विशेषता है— यहाँ बसने वाला यूराली कबीला आज के युग में भी इन्हें आधुनिकता की हवा से तनिक भी छुआ तक नहीं है । ये लोग जमीन से ४०-५० फीट की ऊँचाई पर पेड़ों पर घोंसला बनाकर रहते हैं । चार-पाँच कमरों का यह घोंसला बनावट की दृष्टि से काफी खूबसूरत होता है । इसमें भीतर पहुँचने और बाहर आने के लिये मजबूत बाँस की सीढ़ी लगी होती है । यह निवास-गृह खजूर के पत्तों और बाँस की खपच्चियों से बना होता है । खतरों का सामना करने या किसी मुसीबत की सूचना सारी बस्ती को देने के लिये इन्होंने बड़ा अनूठा तरीका अपनाया हुआ है । सारे घोंसले रस्सियों द्वारा एक-दूसरे से मिले हैं और उसमें हर घर में घण्टी लगी हुई होती है । चार बार घण्टी बजाने का अर्थ है खूँखार शेर आबादी में आ पहुँचे हैं । हाथियों का झुण्ड आबादी में घुस आने पर छह बार घण्टी बजायी जाती है । इस प्रकार अलग-अलग बातों के लिये अलग-अलग संकेत निश्चित हैं ।

यूराली कबीले के लोग धरती को बहुत ही गन्दा समझते हैं । इनमें से किसी ने आज तक धरती पर मकान बनाने की कल्पना तक नहीं की । बात यह है कि जमीन को गन्दा मानने के बावजूद लगभग सभी यूराली परिवार अपना भोजन उसी पेड़ के नीचे जमीन पर बनाते हैं, जिस पर उनका घोंसला होता है । माचिस के प्रयोग से यूराली लोग आज भी परिचित नहीं हैं । आग पैदा करने के लिये ये बाँस से बाँस रगड़ते हैं ।

हजामत बनाने के लिये उस्तरे या ब्लेड के स्थान पर शीशे के टुकड़ों को घिसघिस कर इतना धारदार बना लेते हैं कि वह आसानी से दाड़ी बनाने का काम दे जाता है ।

इनमें विवाह की रस्म भी अपने ही ढंग की है । इस समुदाय में ऐसे किसी भी व्यक्ति का विवाह नहीं हो सकता जिसका अपना अलग घोंसला न हो । अतः विवाह करने से पूर्व दूल्हे को अपना घोंसला स्वयं बनाना पड़ता है । वैसे तो अधिकतर यूराली दूल्हे अपना घोंसला खुद बनाते हैं लेकिन कभी-कभी दूल्हे के भाई-बहिन माता-पिता या रिश्तेदार भी उसकी मदद कर देते हैं । किसी सौभाग्यशाली दूल्हे को लड़की वाले भी बना बनाया घोंसला दहेज में दे देते हैं ।

प्रकृति की गोद में व्यतीत करते हुये ये लोग उसकी भाषा को भी बहुत कुछ समझने लगे हैं । उदाहरण के लिये बारिश होने से पहले ही यह पता चल जाता है कि बरसात कितनी देर बाद होगी तथा मूसलाधार होगी या केवल मामूली छींटे पड़ेंगे । इसी प्रकार मीलों दूर से आने वाले हाथियों के झुण्ड की इन्हें जानकारी पहले से ही हो जाती है, जिससे यह लोग अपनी सुरक्षा का पूरा बन्दोबस्त पहले ही कर लेते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार के विभिन्न देशों में यत्रतत्र आदिवासी अभी भी पाये जाते हैं । अफ्रीकी महाद्वीप तो उन्हीं से भरा हुआ है । उनके खान-पान, रहन-सहन, आच्छादन, प्रचलन ऐसे हैं जिनकी उपयोगिता के सम्बन्ध में कोई तर्क प्रस्तुत नहीं किये जा सकते, फिर भी वे उन्हें कट्टरता के साथ अपनाये हुये हैं । छोड़ने या बदलने के लिये अनुरोध करने वालों को वे न केवल सिरफिरा वरन् अपना व्यक्तिगत शत्रु भी मानते हैं ।

इसके विपरीत जहाँ वे सभ्य समाज में घुल-मिल गये हैं वहाँ उनकी मान्यताओं और आदतों में जमीन-आसमान जैसा अन्तर पचास-सौ वर्षों के भीतर ही आ गया है । उदाहरण के लिये, उत्तरी ध्रुव निवासी एस्किमो लिये जा सकते हैं । उनका रहन-सहन वन मनुष्यों जैसा था पर उनमें जो कनाडा पहुँच गये हैं उन्होंने सभ्य समाज के रीति-रिवाजों को बहुत हद तक अपना लिया है और आशा की जाती है कि वे अगले पचास वर्षों में साधारण कनाडा निवासियों की तरह आदतें अपना लेंगे । इसके विपरीत ऐसा भी है कि न्यूगिनी निकोबार जैसे क्षेत्रों के आदिवासी किसी भी कीमत पर सामान्य मनुष्यों के साथ तालमेल बिठाने के लिये सहमत न हुये । बहुत प्रयत्न करने पर उन्होंने अपनी जान तक गँवा दी पर सम्पर्क साधने के लिये सहमति प्रकट नहीं की । जिस प्रकार चिंपाजी, गोरिल्ला, वनमानुष आदि मनुष्य की शारीरिक संरचना से अति निकटवर्ती होते हुये भी कुत्ते-बिल्ली की तरह बहुत प्रयत्न करने पर अब तक सहमत न हुये । प्राणिशास्त्रियों का कहना है जो पशु पालतू तथा आज्ञानुवर्ती बन गये हैं उन्हें भी अपनी आदिम स्थिति में मनुष्य के साथ घुलने-मिलने में हजारों वर्ष लगे हैं ।

विशिष्ट शिक्षण के बिना वन्य जीवन बिताने वालों को मनुष्य जैसी स्थिति में ला सकना अति कठिन है । इसलिये कहा जाता है कि संस्कृति मनुष्य की मौलिक विशेषता नहीं है । वह समुदाय द्वारा प्रयत्न-पूर्वक अर्जित की गई है ।

सभ्यता के कितने ही उल्टे-पुल्टे रूप प्रवाह प्रचलन के आधार पर बनते-बिगड़ते रहे हैं । उनके पीछे कोई तर्क या कारण काम नहीं करता रहा है । लोग बहुमत के साथ या पीछे चलने में सरलता एवं प्रसन्नता अनुभव करते रहे हैं ।

विकसित और समृद्ध माना जाने वाला राष्ट्र जापान मध्ययुग में नर-बलि के लिये विख्यात था । यहाँ पर देवी-देवताओं की प्रसन्न करने के लिये तथा अपनी मनोकामनापूर्ति हेतु बच्चों तथा पुरुषों की बलि दी जाती थी । इसी प्रकार चीन में राजा के मरने पर उसके सम्बन्धियों को भी उसी की कब्र के पास जीवित दफना दिया जाता था । उनकी मान्यता थी कि स्वर्ग में राजा अपने सम्बन्धियों के बीच आनन्दपूर्वक रह सकेगा । यह प्रथा सत्रहवीं सदी के अन्त तक चलती रही ।

उत्तरी अफ्रीका के प्रमुख नगर कार्थेज के देवता को बालबलि दी जाती थी । यहाँ प्रतिवर्ष हजारों बच्चों की बलि दी जाती थी । सीरिया निवासी भी देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिये अपने बच्चों की बलि दिया करते थे । इनकी मान्यता थी कि इससे देवता उनकी मनोकामनापूर्ण करेंगे । मैक्सिको की नहुआ एवं एजेट जाति के लोग सूर्य देव को प्रसन्न करने के लिये प्रतिवर्ष मकई पर्व मनाते थे, जिसमें दो हजार चुने हुये लोगों की बलि दी जाती थी ।

कुछ समय पूर्व तक यौन सदाचार का बहुत महत्त्व था । नारी का शील भंग करने वाले व्यक्ति को मृत्यु दण्ड तक दिया जाता था । पर अब पश्चिम के देशों में सभ्यता ने नया मोड़ लिया है और इस प्रसंग को एक शारीरिक विनोद मात्र माना जाने लगा है । स्कूली बच्चे जैसे ही इस सम्बन्ध में कुछ समझने करने योग्य होते हैं वैसे ही इस कौतूहल में रस लेने लगते हैं । कुछ समय पूर्व इस प्रसंग में डाँट-डपट भी होती थी पर अब उसे स्वाभाविक विनोद मानकर कोई कुछ कहता-सुनता भी नहीं ।

इंग्लैण्ड, अमेरिका जैसे सभ्य देशों में उद्दण्ड लड़के सरेआम लड़कियों को बलात्कार के लिये उठा ले जाते हैं और दर्शक उनकी रोकथाम करने जैसा कुछ नहीं करते वरन् कनखियाँ देकर मौन समर्थन करते हैं ।

संस्कृति की श्रेष्ठ परम्पराओं को अक्षुण्ण रखें, उसमें उत्कृष्टता का अंश बढ़ाते रहें, यह मनीषियों का उत्तर-दायित्व है । इस सन्दर्भ में वे उपेक्षा रखने लगे तो मनुष्य का व्यवहार आदिम काल जैसा होने लगेगा, इसमें रंच मात्र भी सन्देह नहीं ।

यह आवश्यक है—उपेक्षणीय नहीं

युग निर्माण के लिये आवश्यक प्रयत्न करना इसलिए उचित है कि जिस दुनिया में हम रहते हैं । यदि वह गन्दी और दूषित रही तो अपने लिये सदा संकट और चिन्ता की ही स्थिति बनी रहेगी । यदि चारों ओर दुष्टतापूर्ण वातावरण बसा हुआ हो तो अपने सत्प्रयत्न भी निरर्थक चले जाते हैं ।

चोर, डाकू, दुष्ट, दुराचारी, व्यभिचारी, बेईमान, गुण्डे और शरारती लोगों के बीच रहकर कोई भी व्यक्ति अपनी सज्जनता की रक्षा नहीं कर सकता । उसके मार्ग में इतनी अड़चन उत्पन्न की जाती हैं कि उन्हें सुलझाने और सँभालने में ही अधिकांश शक्ति खर्च होती है । प्रगति और आत्मकल्याण की बात सोचने और वैसी व्यवस्था बनाने के लिये मनोबल ही शेष नहीं रह जाता । क्षोभ और सन्ताप से ग्रस्त व्यक्ति प्रतिरोध और प्रत्याक्रमण की बात ही सोच सकता है । उसका मन अशुभ भावनाओं में ही डूबा रहेगा और विवश होकर वह गतिविधि अपनानी पड़ेगी जो उसे कभी भी प्रिय नहीं थी ।

आत्मिक प्रगति के लिये उपयुक्त वातावरण बना रहे इसके लिये यह आवश्यक है कि दुष्टता की प्रवृत्तियों का तो विपत्ति और बढ़ेगी । अनीति पर यदि अंकुश न रहे, दुष्टता पर यदि नियन्त्रण न रहे तो वह दिन-दूनी रात-चौगुनी गति से अपना विस्तार करेगी । इसलिये मानव समाज में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बढ़ती जाने वाली दुष्प्रवृत्तियों की ओर से आँखें मूँदकर नहीं बैठा रहना चाहिये, अन्यथा संसार में जो पाप-ताप की ज्वालाएँ बढ़ेंगी उनकी चपेट में अपना छप्पर भी आये बिना न रहेगा । दूषित वातावरण में अच्छे व्यक्ति की भी शान्ति सुरक्षित नहीं रहती ।

अपनी व्यक्तिगत सुख-शान्ति एवं सुरक्षा की दृष्टि से भी विचार करें तो आवश्यक प्रतीत होगा कि व्यापक क्षेत्र में फैली हुई बुराइयों के प्रतिरोध के लिये समुचित ध्यान रखा जाय और कुछ काम किया जाय । युग निर्माण की बात केवल पुण्य-परमार्थ की दृष्टि से नहीं, स्वार्थ की, सुरक्षा की बात ध्यान रखकर भी सोचना चाहिये । मुहल्ले में व्यापक व्यभिचार फैला हो तो उसकी चर्चा और प्रेरणा से अपने घर की लड़कियों और लड़कों पर भी बुरा प्रभाव पड़े बिना न रहेगा । स्कूल में बच्चे गन्दी गाली दें तथा दूसरी बुरी आदतों में लिप्त हों तो अपना बच्चा भी वहाँ से उन बुराइयों को सीखकर आवेगा । चोर-उठाईगीरों की संख्या अपने क्षेत्र में बढ़ेगी तो किसी दिन अपने कपड़े, बर्तनों के उठ जाने का भी अवसर आ ही सकता है ।

गाँव में पार्टीबन्दी, मुकदमेबाजी का जोर चल रहा हो तो उस खींचातानी में अपने को भी किसी पक्ष की बुराई ओढ़नी पड़ेगी । जिसकी हाँ में हाँ न मिलाई जायगी वही बुरा मानेगा । आस-पास बीमारी फैले तो घर की सफाई आदि का प्रयत्न करते-करते भी उसका प्रकोप अपने यहाँ भी प्रवेश कर सकता है और दूसरों की गन्दगी से उत्पन्न हुई बीमारी की हानि अपने को भी सहनी पड़ सकती है ।

समाज में कुरीतियाँ फैली हों और हम उन्हें अविवेक-पूर्ण समझकर न मानें तो बहुमत विरोध सहना पड़ेगा । अपनी कन्या विवाह योग्य हो जाय और समाज में दहेज की दुष्प्रवृत्ति जड़ जमाये रहे तो विवश होकर हमें भी दहेज देने के लिये कष्ट सहकर प्रबन्ध करना होगा । बेईमान दुकानदारों के बीच रहते हुये हमें बिना मिलावट की, शुद्ध खाद्य सामग्री कहाँ उपलब्ध होगी ? कहीं हृदयहीन चिकित्सकों का लक्ष्य यदि लूट-खसोट ही हो तो वहाँ गरीब आदमी की जीवन रक्षा कैसे सम्भव होगी ? कचहरी और पुलिस में यदि रिश्वतखोरी का बाहुल्य हो जाय तो न्याय की रक्षा और अपराधों की रोक कहाँ से हो सकेगी ? नशेबाजी का प्रचलन बढ़ जाय तो अपने स्वजन-सम्बन्धी भी कहीं न कहीं से उस लत को सीख आवेंगे और इसका प्रभाव अपने घर पर भी पड़ेगा । सिनेमा के गन्दे फिल्मों की गन्दी हवा चुपके-चुपके हर घर में प्रवेश करती चली जा रही है । जिस फैशन का प्रचलन बाजार में सब ओर दीखता है उसके लिये अपने स्वजन-सम्बन्धी ललचाने लगते हैं और अनुपयुक्त समझने पर हम उसे रोक नहीं पाते ।

वातावरण में फैली हुई विचारधाराओं और बुराइयाँ हवा और सर्दी-गर्मी की तरह अपने ऊपर भी आक्रमण करती हैं । इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि बुराइयों से अपने बचाव का मोर्चा छोटा न रखा जाय । घर में ही सब कुछ बचाव नहीं हो सकता । बाहरी परिस्थितियों को बिगड़ने देने के लिये भी प्रयत्न करना आवश्यक है । युग निर्माण योजना के अन्तर्गत समाज सुधार पर जो अधिक जोर दिया जाता है इसका कारण परमार्थ तो है ही, विश्वशान्ति-जनकल्याण और सामूहिक प्रगति का लक्ष्य तो है ही, पर साथ ही यह तथ्य भी सन्निहित है कि हमारे व्यक्तिगत स्वार्थ भी तभी सुरक्षित रह सकेंगे जब समाज का वातावरण उत्कृष्ट विचारधाराओं से प्रभावित हो ।

यदि निष्ठुरता की ही प्रधानता फैली रहे तो हमारी बीमारी मुसीबत में कल कौन मदद देने आयेगा ? जिस व्यक्ति को मुसीबत के वक्त उधार दिया है यदि वह बेईमान होगा तो अपना उधार कब लौटेगा ? डाकुओं और लुटेरों के क्षेत्र में रास्ता चलना भी कठिन हो जाता है मेले में अपना बच्चा खो जाय और उस भीड़ में सहृदय लोग न हों तो वह बालक कहीं भटक-भटक कर ही मर सकता है । होटल वाले और हलवाई यदि खराब चीजें ही बनाते हैं तो आवश्यकता पड़ने पर जब भी वहाँ से कुछ खरीदना पड़ेगा तभी स्वास्थ्य के लिए संकट उत्पन्न होगा । कुमार्ग पर चलने वाले लोगों का प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव अपने परिवार पर भी पड़ता है और बचाव का ध्यान रखते हुये भी अनिष्ट की सम्भावना रहती है ।

आत्म-कल्याण के लिये साधन, वैराग्य और त्याग का मार्ग अपनाने की आकांक्षा बलवती होती है तो मार्ग-दर्शन के लिये किन्हीं सन्त-धर्मात्मा समझे जाने वालों के पास पहुँचते हैं । पर यदि वे सच्चे नहीं हैं और अपना सम्प्रदाय बढ़ाने, चेले मूँड़ने, प्रतिष्ठा बढ़ाने और धन एकत्रित करने में लगे हैं, तो ऐसी दशा में वे जो कुछ सिखावेंगे, बतावेंगे वह उसी दृष्टि से होगा, जिससे उनके स्वार्थों की पूर्ति होती हो । ऐसी दशा में यह बहुत ही कठिन है कि बेचारे सत्यान्वेषी मुमुक्ष को कोई सही मार्ग मिले । अपनी कन्या को हम पाल-पोसकर बड़ा करते हैं, पढ़ाते-लिखाते हैं, अच्छा घर-वर ढूँढ़ने के लिये जी-जान एक करते हैं और पेट पर पट्टी बाँधकर विवाह का भारी खर्च भी जुटाते हैं । पर जब कन्या ससुराल जाती है और वहाँ वर से लेकर सास-ननद तक सबको अहंकारी, निष्ठुर, स्वार्थी, हृदयहीन अनुभव करती है तो उसे वहाँ जेल या नरक जैसा अनुभव होता है । लौटकर पिता के घर आती है तो आठ-आठ आँसू उसकी आँखों से बरसते हैं । माता-पिता का हृदय टूक-टूक होने लगता है । जिस बच्ची के सुख सपनों के लिये इतने कष्ट सहे उसे इतनी व्यथा सहनी पड़ रही है यह देखकर उनकी छाती फटने लगती है, काश किसी निर्धन मजदूर या अशिक्षित ऐसे परिवार में कन्या जा पहुँचती है जहाँ स्नेह सौजन्य की उदारता, आत्मीयता की गंगा बहती तो हमारी बच्ची उस अभावग्रस्त स्थिति में कितनी सुखी रह सकती है ।

अपना लड़का बड़ा हो जाता है— विवाह करते हैं । बहू सुन्दर सुशिक्षित ढूँढ़ते हैं । बड़ी आशा और उत्साह से जेवर कपड़ा बनवाते हैं, धूमधाम से विवाह करते हैं । सोचते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं बहूरानी गृहलक्ष्मी की तरह आवेगी और अव्यवस्थित घर में अपने सद्गुणों से आशा और उत्साह का वातावरण उत्पन्न करेगी । पर विवाह होकर जब बहू घर आती है तो उसका स्वभाव दूसरे ही ढाँचे में ढला मिलता है—कर्कश, आलसी, अशिष्ट, स्वार्थी, छिद्रान्वेषी स्वभाव के कारण वह सब की शिकायत करती है, सबसे लड़ती है और अन्त में अपने पति को लेकर कुटुम्ब से अलग रहने लगती है । परिवार की आशाओं पर पानी फिर जाता है । लड़का बड़ा होकर पिता के उत्तरदायित्वों में हाथ बँटायेगा, बहू अपनी सास का भार हल्का करेगी, यह सोचा गया था ! पर निकला उल्टा । लड़के से कुछ आशाएँ थीं वह भी हाथ से चला गया । विवाह बहुत महँगा पड़ा ।

दुःख इस बात का है कि इस संसार की, इस मानव जीवन की सबसे प्रमुख, सबसे महत्त्वपूर्ण, सबसे आवश्यक, सबसे उपयोगी समस्या—सद्भावनाओं की अभिवृद्धि के लिये हम कोई ठोस आधार क्यों नहीं ढूँढ़ते ? उसके लिये ठोस प्रयत्न क्यों नहीं करते ?

पंचायतें कुरीतियों और अनीतियों से जूझें

प्राचीन-काल में ग्राम्य जीवन की सुव्यवस्था पंचायतों पर निर्भर थी । उन दिनों राज्य शासन सुरक्षापरक कामों में लगे रहते थे । सामन्तकाल में राजाओं की गुटबाजी एक दूसरे पर आक्रमण करती रहती थी । कोई बड़ी दुर्घटना अन्यायपरक होती थी तो ही शिकायत राजदरबार तक पहुँचती थी ।

प्रजा से उत्पादन का छठा अंश कर के रूप में वसूल कर लेना उनकी आजीविका का प्रमुख स्रोत था । आक्रमण में जो लूट का धन, पशु तथा युवक-युवतियाँ दास-दासियों के रूप में हाथ लगते थे । वह उनकी विशेष आमदनी थी । ऐसे अवसरों की स्मृतियाँ मन्दिर, तालाब, बावड़ी आदि ऐसे कामों में भी लग जाती थी जिन्हें पुण्य-परमार्थ कहा जाता था । प्रजाहित के कार्यों में न उनकी रुचि रहती थी, न जिम्मेदारी । यह कार्य उन दिनों स्थानीय पंचायतें करती थीं । उद्दण्डता बरतने वालों को जाति बहिष्कार जैसे दण्ड दिये जाते थे और जिसे क्षति पहुँचायी गयी है उसकी पूर्ति कराई जाती थी । ग्रामीण पाठशाला, चिकित्सालय आदि के प्रबन्ध भी पंचायतें ही करती थीं । उन दिनों धर्मतन्त्र और राजतन्त्र का परस्पर समन्वय का कार्य पंचायतों के जिम्मे था । असल में उन्हीं के बहुमुखी प्रयत्नों से स्थानीय जनता सुरक्षित, संगठित एवं सुखी-समृद्ध रहती थी । उन्हीं के प्रयत्नों से न्याय-नीति का परिपालन भी सुचारु रूप से चलता था ।

यह लगभग सामन्त-काल के मध्य युग की व्यवस्था है । उस व्यवस्था के गड़बड़ा जाने पर जाति-बिरादरियों की अलग-अलग पंचायतें बनने लगीं । वे छोटी बिरादरियों में अभी भी प्रचलित हैं । जाति-पाँति सम्बन्धी प्रचलनों में कोई व्यवस्था उल्लंघन होता था तो यह पंचायतें ही उसका निपटारा करती थीं । वह क्रम किसी रूप में अभी भी चल रहा है ।

इन अशासकीय पंचायतों का मतदान के हिसाब से चुनाव नहीं होता । गाँव-मुहल्लों के बड़े-बूढ़े और प्रतिनिधि उसके सदस्य होते और स्थान खाली होने पर नये बनते रहते हैं । इसकी कार्यविधि अपनी-अपनी बिरादरी तक सीमित रहती है ।

नये किस्म की पंचायतें सरकारी मान्यता प्राप्त हैं । उनका प्रजातन्त्री ढंग से चुनाव होता है । ग्राम व्यवस्था सम्बन्धी उनके कुछ सीमित अधिकार हैं । जो झंझट उनकी सीमा के अन्तर्गत आते हैं उन्हें वे निपटाती रहती हैं । उनके किये गये फैसले सरकारी अदालतों जैसे होते हैं । आमतौर से वे आर्थिक मामलों को ही निपटाती हैं । लड़ाई-झगड़े या चोरी, उठाईगीरी के तो बहुत हल्के दर्जे के झगड़े ही उनके सामने आते हैं । चूँकि पंच लोग चुने तो वोट से जाते हैं, पर उन्हें कानूनी ज्ञान और पंचायत का व्यवस्था-क्रम नहीं आता या कम आता है । इस कमी को पूरा करने के लिये सरकार की ओर से एक जानकारी सेक्रेटरी नियुक्त रहता है जो पंच लोगों के सामने आये झंझटों के सम्बन्ध में कानूनी स्थिति समझाता रहता है । जहाँ सरकारी इजाजत मिल जाती है वहाँ यह पंचायत ही म्युनिसपल कार्यक्रमों को भी एक सीमा तक अपने हाथ में ले लेती है । सफाई, रोशनी जैसे कार्यक्रम चलाने और उसके लिये निर्धारित क्रम के अनुसार टैक्स वसूल करने का अधिकार भी होता है । छोटी पंचायतों के चुनाव से एक बड़ी न्याय पंचायत बनती है । न्याय पंचायतों के प्रतिनिधि जिला परिषद बनाते हैं और क्रमशः प्रजा के हित में जो शासन-व्यवस्था छोटे रूप में उन्हें सौंपी गई है, उसे चलाते हैं ।

इन दिनों यह दो पंचायत तन्त्र ही काम करते दीखते हैं । एक छोटी बिरादरियों की प्रथा-प्रचलनों को जारी रखने के लिये दबाव देने वाली, दूसरी सरकारी व्यवस्था के अन्तर्गत चुनाव पद्धति से चलने वाली पंचायतें ।

एक तीसरे प्रकार की पंचायतों की और जरूरत है । वह है, सामाजिक एवं पारिवारिक विग्रहों का समाधान करने वाली । अपने समाज में ढेरों अनुचित कुप्रथाएँ प्रचलित हैं । उनका पालन लोगों को इसलिये करना पड़ता है कि उल्लंघन करने से बिरादरी में बदनामी भी होगी और पूरा-अधूरा जाति बहिष्कार भी चल पड़ेगा । विवाह शादियाँ अपनी ही बिरादरी में होने का अभी भी प्रचलन है । ऐसी दशा में प्रचलनों का उल्लंघन करके कोई बिरादरी में बदनामी कराना और विवाह-शादी में उस कारण अड़ंगा उत्पन्न नहीं करना चाहता चाहे वह कितना ही प्रगतिशील क्यों न हो ।

मृतक भोज न करके अपनी उपजाति छोड़कर दूसरी उपजाति में शादी कर लेने, जिनमें पुनर्विवाह प्रचलित नहीं है उसमें उस प्रथा को अपना लेने जैसे कारणों से बड़ी बिरादरी वाले अपनी मर्यादा भंग हुई मानते हैं और उनके द्वारा बुलाये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गये भोज में सम्मिलित होने से इन्कार कर देते हैं । हिन्दू समाज में बच्चे का जन्म, मृतक भोज, श्राद्ध, विवाह आदि पर बिरादरी भोज अभी भी छोटे-बड़े रूप में होते हैं । उनमें यदि अन्य लोग सम्मिलित न हों तो उसे जाति-बहिष्कार माना जाता है और जिस पर यह दबाव पड़ा है, वह हैरान होता है ।

चूँकि हर बिरादरी के अपने-अपने रीति-रिवाज अलग अलग हैं, इसलिये समाज सुधार के लिये बनायी गयी पंचायतों को जाति सभा नाम दिया जा सकता है । अभी भी नये उत्साह ने बड़ी बिरादिरयों को जातीय सम्मेलन बुलाने, संगठन करने का प्रयास किया है, यह प्रचलन उस स्थिति में बुरे हैं, जब बिरादरी बाद में कट्टरता उत्पन्न करें, अपने समुदाय को अन्यों से ऊँचा होने को ढिंढोरा पीटें और जो कुरीतियाँ प्रचलित हैं उनका समर्थन करें । यह जातीय सभाएँ अच्छी भी हैं, यदि कुरीतियों के विरोध में प्रस्ताव पास करके निरस्त करने का वातावरण बनायें ।

विवाह शादियों में दान-दहेज ठहराना और उसका प्रदर्शन करना, बारात में अनावश्यक भीड़ ले जाना, आतिशबाजी आदि में अनावश्यक अपव्यय करना जैसी अनेक बुराइयाँ हैं जो तत्काल बन्द होनी चाहिये । बाल विवाह रुकने चाहिये । उपजातियों का बन्धन तोड़कर समूची बड़ी बिरादरी में अन्तर्जातीय विवाहों के द्वार खोलना चाहिये । जिस प्रकार पुरुषों के पुनर्विवाह पर रोक नहीं है उसी प्रकार स्त्रियों के लिये भी प्रतिबन्ध हटाना चाहिये । मृत्यु-भोज में होने वाली दावतें रुकनी चाहिए ।

यह कुछ सुधारात्मक संकेत हैं । इनके अतिरिक्त और भी जो कुरीतियाँ त्यागने योग्य हैं उन्हें जातीय सभा-सम्मेलनों में प्रस्ताव पास करके समाप्त करना चाहिये । इससे सुधारात्मक कदम बढ़ाने वालों को जो अभी डर लगता है वह समाप्त हो जायगा और वे अनुभव करेंगे कि निर्णय समूची बिरादरी का है इसलिये ऐसे कदम उठाने में, डरने जैसी कोई बात नहीं है ।

कुरीतियों का परित्याग कराने के अतिरिक्त इन जातीय सभाओं का एक और काम होना चाहिये, घर-परिवार में पुरुषों द्वारा स्त्रियों के प्रति जो अन्याय-अत्याचार होते रहते हैं उन्हें पंच लोग अपने व्यक्तिगत प्रभाव एवं चरित्र के दबाव का उपयोग करके ठीक करायें । इसी प्रकार कमजोर भाई का जोरदार भाई ने हक जमा लिया है तो उसको वास्तविकता समझते हुये ठीक करायें । बड़ों और माता-पिता के भरण-पोषण में जो उपेक्षा होती है उसे बन्द कर बच्चे को कर्तव्य बोध करायें ।

अमेरिका में ऐसी पारिवारिक पंचायतें हैं जो घर-गृहस्थी के झगड़ों को अदालत-कचहरी में जाने की अपेक्षा सज्जनता की नीति-मर्यादा के अन्तर्गत हल करा देती हैं । अपने देश में नर और नारी के बीच आये दिन ऐसे प्रसंग देखने को आते हैं, जिनमें स्पष्ट अनीति बरती गई होती है । कमजोर पक्ष अदालतों तक जा नहीं सकता और गवाह भी जुटा नहीं सकता । इसलिये वस्तुस्थिति के अनुरूप कमजोर पक्ष को न्याय मिल सके यह उत्तरदायित्व भी इन जातीय सभाओं को अपने कंधों पर लेना चाहिये ।

जातीय पंचायतों का सभाओं का गठन होना कोई बुरी बात नहीं । यदि वे अपने परिकर में कुरीतियों का और छोटों के साथ बरती जाने वाली अनीतियों का उन्मूलन कर सकें तो उनका गठन भी श्रेयस्कर ही होगा ।

परम्पराओं को विवेक की कसौटी पर कसा जाय

प्रथा-परम्पराओं का प्रचलन समय की आवश्यकता और परिस्थितियों की प्रासंगिकता देखकर किया जाता है ताकि बदलते सन्दर्भों में समाज का प्रगतिक्रम अवरुद्ध न हो और समाज अपनी गति से आगे बढ़ता रहे । समय बदल जाता है, परिस्थितियाँ वैसी नहीं रहतीं जिनमें इन परम्पराओं की उपयोगिता थी तो वे प्रथाएँ अप्रासंगिक हो जाती हैं और अपनी महत्ता खो देती हैं । इसलिये समय और संदर्भ बदलने के साथ-साथ मनीषियों ने रीति-रिवाजों तथा प्रथा-परम्पराओं में भी आवश्यक हेर-फेर करने की बात कही है । यदि परिवर्तन और सुधार का यह क्रम अवरुद्ध हो जाये तो कई कठिनाइयाँ उठ खड़ी होती हैं और वे ही परम्पराएँ जो कभी बहुत उपयोगी तथा लाभप्रद होती थीं, गले की फाँसी बन जाती हैं ।

सर्दियों की ऋतु में गरम कपड़े पहनना आवश्यक होता है पर गर्मियाँ आते ही ऊनी कपड़े पहनना छोड़ कर हल्के सूती वस्त्र पहने जाने लगते हैं । वर्षा ऋतु में छाता लेकर चलना आवश्यक हो जाता है परन्तु शीत ऋतु में इसकी कोई उपयोगिता नहीं रह जाती । स्वस्थ व्यक्ति को जो आहार दिया जाता है, वही आहार बीमार और रुग्ण व्यक्ति को दिया जाने लगे तो इससे उसका स्वास्थ्य लड़खड़ाने लगता है । खुशहाली के दिनों में पैसा खर्च अनुपयुक्त नहीं होता वैसा खर्च अकाल पड़ने या दुर्दिन आने पर अनुचित सिद्ध होता है । समय के अनुसार रीति-नीति में, प्रचलन-रिवाजों में, प्रथा परम्पराओं में परिवर्तन आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है ।

इन दिनों अपने समाज में कई परम्पराएँ ऐसी हैं जिनका प्रचलन किसी देश-काल की स्थिति विशेष को दृष्टिगत रखते हुये किया गया था । इस समय उनकी उपयोगिता भी थी, परन्तु आज वैसी स्थिति नहीं है इसलिये वे परम्पराएँ न केवल अपनी उपयोगिता खो चुकी हैं वरन् कुरीतियों के रूप में व्यक्ति तथा समाज की हानि भी कर रही हैं । आवश्यकता इस बात की है कि उनमें समयानुसार परिवर्तन किया जाय, कुछ में संशोधन किया जाये तथा कुछ का पूरी तरह बहिष्कार कर दिया जाये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परम्पराओं के प्रचलन की प्रासंगिकता और समय परिस्थिति विशेष की आवश्यकता को दृष्टिगत रखतें हुये बाल-विवाह को ही लिया जाये तो प्रतीत होगा कि यह परम्परा उस समय उपयोगी रही होगी जब शासक वर्ग नागरिकों की कुँवारी कन्याओं का अपहरण कर उन्हें अपने हरम में डाल लेते थे । अपहरण कुँवारी कन्याओं का किया जाता था इसलिये उचित समझा गया कि उनका विवाह छोटी आयु में ही कर दिया जाये । उस समय यह परम्परा समीचीन थी परन्तु आज न तो वैसी स्थिति है और न ही कोई किसी की जवान लड़की को अपहरण करता है । कहीं कुछ ऐसा होता भी है तो उसे दण्डनीय अपराध समझा जाता है और अपराधी को दण्ड दिया जाता है । अस्तु, अब बाल-विवाह का कोई औचित्य नहीं है ।

मृत्युभोज की बड़ी-बड़ी दावतें देने का प्रचलन उस समय आरम्भ हुआ होगा जब बार-बार अकाल पड़ते थे और अधिकांश लोगों को भूखे-प्यासे रहना पड़ता था । तब मृतात्मा की शक्ति के लिये भूखे-प्यासों को भोजन कराकर पुण्य प्राप्त होने की बात सोची गई । किन्तु आज यह परम्परा केवल नाते-रिश्तेदारों, पड़ोसियों, परिचितों और मित्रों को दावत खिला देने तक ही सीमित रह गई है । स्पष्ट है कि इस परम्परा का निर्वाह अब न तो खाने वाले के लिये उचित कहा जा सकता है और नहीं खिलाने वाले के लिये कोई गौरव की बात । जिस घर में सदस्य को मरे हुये अभी पन्द्रह दिन भी नहीं हुए हैं वहाँ शोक-सम्वेदना व्यक्त करने, दिवंगत व्यक्ति के स्वजनों को सान्त्वना देने के स्थान पर दावतें उड़ाने का क्या औचित्य हो सकता है ?

दान एक धार्मिक पुण्य का कृत्य है । सभी धर्मग्रन्थों और मनीषियों ने इसकी मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है । दूसरों की उन्नति के लिये, औरों के कष्ट निवारण के लिये कुछ त्याग किया जाना उदारता है और इस तरह की उदारता सराहनीय तथा वन्दनीय कही जानी चाहिये । समाज में सभी तरह के लोग रहते हैं । अच्छी स्थिति वाले भी और गिरी हुई स्थिति वाले भी । अच्छी स्थिति वाले अपने से निम्न स्थिति के लोगों को ऊँचा उठाने के लिये दान के रूप में सहयोग प्रस्तुत करें, इस उदार सामाजिकता को प्रोत्साहन देने के लिये ही दान को धर्म के दस लक्षणों में गिना गया है । स्पष्ट रूप से गिरे हुओं को ऊपर उठाने के लिये उनकी किसी प्रकार भी सहायता करना दान का उद्देश्य है पर जब इस उद्देश्य के विपरीत अमुक वंश या अमुक वेष के लोगों को उनकी पात्रता तथा चरित्र का ध्यान रखे बिना स्वर्ग प्राप्ति, पुण्य फल मिलने की आकांक्षा के आधार पर ही दान दिया जाने लगे तो उससे किसी श्रेष्ठ उद्देश्य की पूर्ति होने के स्थान पर अनर्थ और हानि ही होती है । कारण कि वंश या वेष को दान दिये जाने से सम्बन्धित लोगों में, दान लेने वालों में निकम्मापन, निठल्लापन, आलस्य, अकर्मण्यता और दुर्गुण दुर्व्यसन ही बनते हैं । जब बिना श्रम किये मुफ्त की कमाई हाथ लगती है तो उसका सदुपयोग करने की आवश्यकता कहाँ से अनुभव होगी ?

ब्याह-शादियों के अवसर पर अपव्यय की जो कुरीति चल पड़ी है उसका तो कोई औचित्य ही समझ में नहीं आता । दान-दहेज से लेकर नेग-जोग और धूम-धड़ाके से भेंट-दावतों तक न जाने किन-किन मदों में विवाह के अवसर पर खर्च किया जाता है । न केवल विवाह के समय बल्कि विवाह के बाद भी त्योहारों तथा विशेष अवसरों पर कन्या वालों को वरपक्ष के यहाँ अनेक उपहार भेजना पड़ते हैं । लड़की के बच्चा होने पर, उसके यहाँ कोई मांगलिक कृत्य होने से लेकर परिवार में शोक होने तक न जाने कितनी बार भेंट-पूजा चढ़ानी पड़ती है और वह खर्च विवाह के खर्च से भी अधिक पड़ जाता है । जो चीजें उपहार स्वरूप दी जाती हैं उनकी कोई विशेष उपयोगिता भी नहीं होती, इसलिये इस धन को एक प्रकार से व्यर्थ गया ही समझना चाहिये । जिनकी आर्थिक स्थिति इस योग्य नहीं होती उनके लिये तो ये रीति-रिवाज भारी पड़ते ही हैं, जिनकी आर्थिक स्थिति इन्हें निभाने योग्य होती है, वे भी निभाकर कोई विशेष प्रसन्न नहीं होते । सामाजिक प्रचलन होने के कारण लोग इन परम्पराओं का पालन तो करते हैं पर उन्हें इससे कोई प्रसन्नता नहीं होती ।

हमारा समाज जितना प्राचीन है, उतनी ही कुरीतियाँ और प्रथाएँ समाज में घर कर गई हैं, यह कहा जाय तो कोई अत्युक्तिपूर्ण नहीं होगा । आवश्यकता इस बात की है कि समाज में प्रचलित सभी परम्पराओं को उपयोगिता और अनुपयोगिता की कसौटी पर कसा जाये तथा जो अनुपयुक्त दिखाई पड़े उन्हें बेझिझक फेंक दिया जाये निश्चित ही इसके लिए बड़े प्रयत्न करने पड़ेंगे । इसके लिये व्यापक प्रचार से लेकर सघन जनसम्पर्क तथा असहयोग और विरोध जैसे उपाय अपनाने पड़ेंगे । इन कुरीतियों का उन्मूलन इसलिये भी आवश्यक है कि हमारी अधिकांश शक्ति इन्हीं के पालन में नष्ट हो जाती है, उस शक्ति को बचाकर यदि रचनात्मक कामों में लगाया जा सका होता तो सामाजिक प्रगति का पथ प्रशस्त हो सकता था अब भी हो सकता है । अन्ध-परम्पराएँ और कुछ नहीं मानसिक भ्रांतियाँ हैं । जब तक विवेक दृष्टि से इनका पुनर्मूल्यांकन न हो, इनको आँख मूँदकर चलाते रहना मूढ़ता का चिह्न है । प्रगतिशीलता का तकाजा है कि अब जनचेतन जाग्रत हो एवं इन अवांछनीयताओं का सामूहिक विरोध करें ।

परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँच स्थापनाएँ

युगदृष्टा के स्तर की अवतारी सत्ता के रूप में परमपूज्य गुरुदेव ने अपने अस्सी वर्ष के जीवनकाल में जितना भी कुछ किया, उसकी मिसाल कहीं देखने को नहीं मिलती। करोड़ों व्यक्तियों के मनों का निर्माण, उनके सोचने के तरीके में बदलाव एवं युग निर्माण की पृष्ठभूमि बनाकर रख देने का कार्य इन्हीं के स्तर की सत्ता कर सकती थी, जो लाखों वर्षों में कभी-कभी धरती पर आती है। उनके द्वारा की गयी स्थापनाओं का जब प्रसंग आता है तब ईंट-गारे-चूने-सीमेंट से बने भवनों से पहले उनकी स्नेह-संवेदना से सिक्त हुए, ममत्व में स्नानकर उनके अपने हो गये लाखों व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं, जिनने उनके एक इशारे पर अपना सब कुछ उनको अर्पित कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कभी ऐसा ही वातावरण भारत के कोने-कोने में दिखाई देता था, जब हर घर से सत्याग्रही निकलकर आ रहे थे। भावनाओं का आवेग चिरस्थायी नहीं रहता। वे ही लोग जो कभी राष्ट्र निर्माण के लिए अपना सब कुछ छोड़, पढ़ना-लिखना छोड़ देश को आजाद बनाने के लिए कूद पड़े थे, कभी गड़बड़ाने न पाएँ, उसी के लिए बापू ने आजादी के बाद काँग्रेस भंग कर देने व सभी को एक आदर्श स्वयं-सेवक की तरह दरिद्र नारायण का उत्थान कर राष्ट्र निर्माण में लग जाने की सलाह दी थी।

सभी इस तथ्य को जानते हैं कि ऐसा नहीं हुआ, राष्ट्र का कीर्ति-स्तम्भ रूपी वह महापुरुष भी एक वर्ष के अंदर ही शहादत को प्राप्त हो चला गया। गिने-चुने उनके आदर्शों पर चलने वाले रह गये, अवसरवादियों को राजनेतृत्व भाने लगा एवं राष्ट्र आजाद होकर भी उनके हाथ में आ गया जो ब्रिटिश तो नहीं थे किन्तु, उसी रंग में रँगे सत्ता के उन्माद में काम करने वाले शासक थे- सृजेता नहीं। जिंदा रहा तो मात्र बापू का दर्शन बुनियादी आधार पर टिका- मानव को बनाने का तंत्र-आश्रम तंत्र जो सेवाग्राम-साबरमती आश्रम के रूप में कार्य करता रहा और वह भी शीर्ष-पुरुष के न रहने, बिनोवाजी के चले जाने के बाद अस्तित्व व महत्व की दृष्टि से गौण हो गया। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी दिव्य-दृष्टि से यह सब पूर्व में ही देख लिया था कि कोई भी भव्य निर्माण, आश्रम या तंत्र बनाने से पूर्व राष्ट्र को सांस्कृतिक, भौतिक, आध्यात्मिक आजादी दिलाने वाले अगणित व्यक्ति तैयार करने पड़ेंगे। १९११ में आज से ८४ वर्ष पूर्व वि.संवत् २०८६ में जन्मे, राष्ट्र की आजादी में उन्मत्त बने श्रीराममत्त कहलाने वाले, आचार्यश्री ने पहले स्वयं को तपाया, वैचारिक क्रान्ति के निर्माण का आधारभूत तंत्र स्वयं व परमवंदनीया माताजी के रूप में खड़ा किया, 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका अपनी लेखनी से लिखी, ममत्व भरी चिट्ठियों व छोटी-छोटी एक आने की किताबों से जन-जन के मन को छुआ, तब जाकर अपने एक लक्ष के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर उन्होंने गायत्री तपोभूमि, मथुरा की स्थापना की बात १९५२-५३ में सोची। सबसे पहली मंत्र दीक्षा वहीं पर १९५३ में दी व यह मानते हुए कि बिना आध्यात्मिक आधार बनाये, मनोभूमि में, भावनाओं के स्तर पर बदलाव लाये कोई क्रान्ति सफल नहीं हो सकती, धीमी खुराक देते हुए हर व्यक्ति को गायत्री व यज्ञ के तत्त्वदर्शन से जोड़ते हुए चले गये। गायत्री परिवार रूपी विराट वृक्ष का मूल आधार वह स्थापना है जो जन-जन के मनों में पहले हुई- उनकी भाव संवेदनाओं के उदात्तीकरण के रूप में सम्पन्न हुई व उनके अंदर अपनी गुरुसत्ता को त्याग करने की, यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रेरणा बलवती होने लगी। उन्होंने सर्वमेध के रूप में अपना सर्वस्व बलिदान एवं नरमेध के रूप में अपने आप को समाज के हित न्यौछावर करने की भावना से दो यज्ञ किये। अपनी जमींदारी के बाण्ड बेचकर एवं परमवंदनीया माताजी के कीमती सोने के जेवर (ढाई सौ तोले) बेचकर जो स्वेच्छा से सम्पन्न हुआ, एक स्थापना भवन के रूप में जो हुई- वह थी **गायत्री तपोभूमि, मथुरा** जो वृन्दावन रोड पर ऋषि दुर्वासा की जन्मस्थली पर बनी आज से ४२ वर्ष पूर्व १९५३ में। प्रारंभिक स्थापना यों अखण्ड ज्योति संस्थान को माना जा सकता है जहाँ अखण्ड दीपक अपनी जन्मभूमि आँवलखेड़ा से जो वहाँ से मात्र ४० मील दूर थी, स्थापित किया गया था एवं प्रारंभिक तप-तितिक्षा वहीं पर १९४१ से, तपोभूमि की स्थापना से भी १२ वर्ष पूर्व आरम्भ हो गयी थी। इस प्रकार जन-जन के मनों का निर्माण उनके अंत:स्थल में प्रवेश कर उनके अंदर देवत्व के जागरण की ललक पैदा करने वाली पृष्ठभूमि पर स्थापनाओं का क्रम बना। किराये की ऐसी हवेली जिसे भुतहा हवेली कहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जाता था, में अखण्ड दीपक की स्थापना, उसके समक्ष तप, **अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा** के रूप में विकसित हुआ एवं एक और दूसरा निर्माण मथुरा में ही गायत्री तपोभूमि के रूप में हुआ जो कि ३ मील दूर वृन्दावन रोड पर १९५३ में बनाई गई। १९५३ में क्रमशः सुसंगठित गायत्री परिवार के बनने की प्रक्रिया चल पड़ी।

इस प्रारंभिक भूमिका को समझने के बाद ही परमपूज्य गुरुदेव की पाँच मूल स्थापनाओं एवं बाद में देश के कोने-कोने में बनी भव्य इमारतों के रूप में शक्तिपीठों, प्रज्ञा संस्थानों, भारत व विश्वभर में घर-घर में स्थापित स्वाध्याय मण्डलों व गायत्री परिवार की शाखाओं, प्रज्ञापीठों, चरणपीठों का महत्त्व समझा जा सकता है। नहीं तो जैसे अन्यान्य आश्रम-संस्थान बनते हैं, ऐसे इनका भी वर्णन किया जा सकता था व यह कहा जा सकता था कि यह वैभवपूर्ण स्थापनाएँ पूज्यवर ने कीं। उनमें यदि प्राण फूँके गये हों, प्राणवान व्यक्ति वहाँ रहते हों व उस शक्ति के महा-अवसान के बाद भी वे सतत् उसी दिशा में चल रहे हों तो माना जाना चाहिए कि प्रारंभिक पुरुषार्थ जो किया गया, वह औचित्यपूर्ण था।

परमपूज्य गुरुदेव की महत्त्वपूर्ण पाँच स्थापनाएँ इस प्रकार हैं–

(१) युगतीर्थ आँवलखेड़ा (२) अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (३) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (४) शान्तिकुंज, गायत्री तीर्थ, सप्तसरोवर, हरिद्वार तथा (५) ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, सप्तसरोवर, हरिद्वार ।

युगतीर्थ आँवलखेड़ा का नाम सबसे पहले इसलिए लिखा कि यहीं पर वह युगपुरुष संवत् १९६८ की आश्विन कृष्ण त्रयोदशी तिथि के दिन, ब्राह्ममुहूर्त में, जो अँग्रेजी तारीख से २० सितम्बर, १९११ के दिन आती थी, में जन्मा। एक श्रीमंत ब्राह्मण परिवार में, जहाँ धन की कोई कमी नहीं थी, पूरा परिवार संस्कारों से अनुप्राणित, पिता भागवत के प्रकाण्ड पंडित, बहुत बड़ी जागीर के मालिक। आज जहाँ पूज्यवर की स्मृति में एक विराट स्तंभ की, एक चबूतरे की तथा उनके कर्तृत्व रूपी शिलालेखों की स्थापना हुई है- वहीं पूज्यवर ने शरीर से जन्म लिया था। समीप बनी दो कोठरियाँ जो काल प्रवाह के क्रम में गिर सी गयी थीं, जीर्णोद्धार कर वैसी ही निर्मित कर दी गयी हैं- जैसी उनके समय में थीं। जन्मभूमि का कण-कण उस दैवीसत्ता की चेतना से अनुप्राणित है। उनके हाथ से खोदा कुँआ जिसे पूरे गाँव का एकमात्र मीठे जल वाला कुँआ माना गया- वह अभी भी है, उनके हाथ से रोपा नीम का पेड़ एवं वह बैठक जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में सब बैठकर चर्चा करते थे, आज भी उन दिनों की याद दिलाते हैं। पास में ही दो कोठरियाँ हैं जिनमें से एक कक्ष में वह स्थान है जहाँ दीपक के प्रकाश में से सूक्ष्म शरीरधारी गुरुसत्ता प्रकट हुई थी तथा जिसने उनके जीवन की दिशाधारा का १९२६ के बाद के क्रम का निर्धारण कर दिया था। यह सब देखकर मस्तिष्क-पटल पर वह दृश्य उभर आता था, जिसे गुरुसत्ता ने कभी देखा था व जो गायत्री परिवार की स्थापना का मूल आधार बना। आँवलखेड़ा में ही उनकी माताजी की स्मृति में स्थापित माता दानकुँवरि इण्टर कालेज है जो उनके द्वारा दान दी गयी जमीन में प्रदत्त धनराशि द्वारा विनिर्मित है। १९६३ से चल रहे इस इंटर कालेज से कई मेधावी छात्र निकल कर आत्म-निर्भर बने हैं व उच्च पदों पर पहुँचे हैं।

१९७९-८० में गायत्री शक्तिपीठ एवं कन्या इंटर कॉलेज की स्थापना का ताना-बाना बुना जाने लगा जो एक विशाल शक्तिपीठ तथा आसपास के दो सौ ग्रामों की बालिकाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था करने वाले, उन्हें सुशिक्षित, संस्कारवान, आत्मावलम्बी बनाने वाले कन्या महाविद्यालय का अब रूप ले चुका है। प्रथम पूर्णाहुति हेतु इसी भूमि को जो शक्तिपीठ-जन्मभूमि-ग्रामीण क्षेत्र के चारों ओर है, इसीलिए चुना गया कि यहाँ से उद्भूत प्राण ऊर्जा से यहाँ आने वाला हर संकल्पित साधक अनुप्राणित होकर जाए व राष्ट्र के नव-निर्माण की सांस्कृतिक व भावनात्मक क्रान्ति की पृष्ठभूमि रख सके। यहाँ पूज्यवर १९३६-३७ तक ही रहे, कुछ दिन आगरा रहकर १९४०-४१ में मथुरा चले गये, जहाँ दो-तीन मकान बदलने के बाद वर्तमान मकान किराये पर लिया जिसे आज अखण्ड-ज्योति संस्थान कहते हैं।

अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा में स्थित है। परमपूज्य गुरुदेव सीमित साधनों में अपने अखण्ड दीपक के साथ यहीं रहने लगे एवं यहीं से क्रमशः आत्मीयता विस्तार की जन-जन तक अपने क्रान्तिकारी चिंतन के विस्तार की प्रक्रिया 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका, जो आगरा से ही आरम्भ कर दी गयी थी, की 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ व अन्यान्य लेखों की पंक्तियों के माध्यम से सम्पन्न होने लगी। व्यक्तिगत पत्रों द्वारा उनके अंतःस्थल को स्पर्श कर एक महान स्थापना का बीजारोपण होने लगा। यहीं पर अगणित दुःखी, तनावग्रसित

व्यक्तियों ने आकर उनके स्पर्श से नये प्राण पाये तथा उनके व परमवंदनीया माताजी के हाथों से भोजन-प्रसाद पाकर उनके अपने होते चले गये। हाथ से बने कागज पर छोटी ट्रेडिल मशीनों द्वारा यहीं पर अखण्ड ज्योति पत्रिका छापी जाती थी व छोटी-छोटी किताबों द्वारा लागत मूल्य पर उसे निकालने योग्य खर्च निकलता था। बगल की एक छोटी-सी कोठरी में जहाँ अखण्ड दीपक जलता था, आज पूजाघर विनिर्मित है। पूरी बिल्डिंग को खरीद कर उनके सुपुत्र ने एक नया आकार व मजबूत आधार दे दिया है किन्तु यह कोठरी अंदर से वैसी ही रखी गयी है जैसी पूज्यवर के समय में १९४२-४३ में रही होगी। तब से लेकर आगामी ३० वर्ष का साधनाकाल-लेखनकाल पूज्यवर का इसी घीयामण्डी के भवन में छोटी-छोटी दो कोठरियों में गहन तपश्चर्या के साथ बीता। तपोभूमि निर्माण की पृष्ठभूमि यहीं बनी, १९५८ में सहस्र कुण्डी यज्ञ की आधारशिला यहीं रखी गयी, यहीं सारी योजना बनी एवं विधिवत-गायत्री परिवार बनता चला गया। रोज आने वाले पत्रों को स्वयं परमवंदनीया माताजी पढ़ती जातीं एवं पूज्यवर इतनी ही देर में जवाब लिखते जाते, यही सूत्र संबंधों के सुदृढ़ बनने का आधार बना। हर परिजन को तीन दिन में जवाब मिल जाता, शंका-समाधान होता चला जाता एवं देखते-देखते एक विराट गायत्री परिवार बनता चला गया। गायत्री महाविज्ञान के तीनों खण्ड, युग निर्माण परक साहित्य, आर्ष-ग्रन्थों के भाष्य को अंतिम आकार देने का कार्य यहीं सम्पन्न हुआ। जनसम्मेलनों, छोटे-बड़े यज्ञों एवं १००८ कुण्डी पाँच विराट् यज्ञों में पूज्यवर यहीं से गये एवं विदाई सम्मेलन की रूपरेखा बनाकर स्थायी रूप से इस घर से १९७१ की २० जून को विदा लेकर चले गये। इस संस्थान के कण-कण में जहाँ आज १० लाख से अधिक संख्या में हिन्दी सहित सभी भाषाओं में अखण्ड ज्योति पत्रिका के प्रकाशन, विस्तार, डिस्पैच आदि का एक विराट तंत्र स्थापित है, परमपूज्य गुरुदेव की चेतना संव्याप्त अनुभव की जा सकती है। भले ही बहिरंग का कलेवर बदल गया हो, अंदर प्रवेश करते ही परमपूज्य गुरुदेव व परमवंदनीया माताजी की सतत विद्यमान प्राणचेतना के स्पन्दन वहाँ विद्यमान हैं, यह प्रत्यक्षतः देखा जा सकता है।

गायत्री तपोभूमि, मथुरा को परमपूज्य गुरुदेव की चौबीस महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर की गयी स्थापना माना जा सकता है, जिसे विनिर्मित ही गायत्री परिवार रूपी संगठन के विस्तार के लिए किया गया था। इसकी स्थापना से पूर्व चौबीस सौ तीर्थों के जल व रज को संग्रहीत करके यहाँ उनका पूजन किया गया, एक छोटी किन्तु भव्य यज्ञशाला में अखण्ड अग्नि स्थापित की गयी तथा एक गायत्री महाशक्ति का मन्दिर विनिर्मित किया गया। चौबीस सौ करोड़ गायत्री मंत्रों का लेखन जो श्रद्धापूर्वक नैष्ठिक साधकों द्वारा किया गया था, यहाँ पर संरक्षित कर रखा गया है। पू. गुरुदेव की साधनास्थली व प्रातःकाल की लेखनी की साधना की कोठरी यदि अखण्ड ज्योति संस्थान में थी तो उनकी जन-जन से मिलने, साधनाओं द्वारा मार्गदर्शन देने की कर्म-भूमि गायत्री तपोभूमि थी। यहीं पर १०८ कुण्डी गायत्री महायज्ञ में १९५३ में पहली बार पूज्यवर ने साधकों को मंत्र दीक्षा दी। यहीं पर १९५६ में नरमेध यज्ञ तथा १९५८ में विराट सहस्रकुण्डी यज्ञायोजन सम्पन्न हुए। श्रेष्ठ नररत्नों का चयन कर गायत्री परिवार को विनिर्मित करने का कार्य यहीं व्यक्तिगत मार्गदर्शन द्वारा सम्पन्न हुआ। हिमालय प्रवास से लौटकर पूज्य आचार्यश्री ने युग निर्माण योजना के शत-सूत्री कार्यक्रम एवं सत्संकल्प की तथा युग निर्माण विद्यालय के एक स्वावलम्बन प्रधान शिक्षा देने वाले तंत्र के आरम्भ होने की घोषणा की। यह विधिवत् १९६४ से आरम्भ किया गया एवं अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है। जिस कक्ष में परमपूज्य गुरुदेव सभी से मिला करते थे, अभी भी यहाँ देखा जा सकता है। भव्य निर्माण परमपूज्य गुरुदेव की १९७१ की विदाई के बाद यहाँ हो गया है किन्तु, कण-कण में उनकी प्राणचेतना का दर्शन किया जा सकता है। विराट प्रज्ञानगर, युग निर्माण विद्यालय, साहित्य की छपाई हेतु बड़ी-बड़ी ऑफसेट मशीनें तथा युग निर्माण साहित्य जो पूज्यवर ने जीवन भर लिखा, उसका वितरण-विस्तार तंत्र यहाँ पर देखा जा सकता है।

शान्तिकुंज, हरिद्वार ऋषि परम्परा के बीजारोपण केन्द्र के रूप में १९७१ में स्थापित किया गया था, जब परमपूज्य गुरुदेव मथुरा स्थायी रूप से छोड़कर परमवंदनीया माताजी को अखण्ड ज्योति दीपक की रखवाली हेतु यहाँ छोड़कर हिमालय में चले गये। गुरुसत्ता के निर्देश पर वे पुनः एक वर्ष बाद लौटे व तब शांतिकुंज को उनने एक बड़ा विराट रूप देनें, सभी ऋषिगणों की मूलभूत स्थापनाओं को यहाँ साकार बनाने का निश्चय किया। इससे पूर्व परमवंदनीया माताजी ने २४ कुमारी कन्याओं के साथ अखण्ड दीपक के समक्ष २४० करोड़

गायत्री मंत्र का अखण्ड अनुष्ठान आरंभ कर दिया था। पूज्यवर ने प्राण प्रत्यावर्तन सत्र, जीवन साधना सत्र, वानप्रस्थ सत्र आदि के माध्यम से विभिन्न क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता यहीं गढ़े। यह सत्र शृंखला कल्प साधना, संजीवनी साधना सत्रों के रूप में तब से ही ९ दिवसीय सत्रों व एक माह के युग शिल्पी प्रशिक्षण सत्रों के रूप में चल रही है, अभी भी अनवरत उसमें आने वालों का ताँता लगा रहता है। पहले से ही सब अपनी बुकिंग इसमें करा लेते हैं।

शांतिकुंज को गायत्री तीर्थ का रूप देकर सप्तऋषियों की मूर्तियों की स्थापना १९७८-७९ में की गयी, एक देवात्मा हिमालय विनिर्मित किया गया एवं यहाँ सभी संस्कारों को सम्पन्न करते रहने का क्रम बन गया जो सतत् चल रहा है। नित्य यहाँ दीक्षा, पुंसवन, नामकरण, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, विवाह, श्राद्ध-तर्पण आदि संस्कार सम्पन्न होते हैं। इस बीच परमवंदनीया माताजी ने जागरण सत्र शृंखलाएँ सम्पन्न करना आरम्भ रखा। देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे भारत में जीप टोलियों में भेजा गया। इनके माध्यम से तीन वर्ष तक भारत के कोने-कोने में तुमुलनाद होता रहा।

शांतिकुंज का गायत्री नगर जो आज एक विराट स्थापना के रूप में, एक एकेडमी के रूप में नजर आता है व जिसमें एक बार में एक साथ दस हजार व्यक्ति एक साथ ठहर सकते हैं, १९८१-८२ में बनना आरम्भ हुआ । विलक्षण, दुर्लभ जड़ी-बूटियों के पौधे यहाँ लगाये गये तथा प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा रूपी तीर्थस्थली का पूज्यवर ने अपने सामने निर्माण कराया। यहीं उनके निर्देशानुसार उनके शरीर छोड़ने पर दोनों सत्ताओं को अग्नि समर्पित की जानी थी। स्वावलम्बन विद्यालय से लेकर एक विशाल चौके का निर्माण एवं गायत्री विद्यापीठ से लेकर भारत के सभी सरकारी विभागों के प्रशिक्षण के तंत्र की स्थापना यहाँ पर की गयी है एवं यह एक जीता-जागता तीर्थ अब बन गया है, जहाँ पर उज्ज्वल भविष्य की पूर्व झलक देखी जा सकती है। कम्प्यूटरों से सज्जित विशाल कार्यालय से लेकर पत्राचार विद्यालय जहाँ नित्य हजारों पत्रों के द्वारा पूरे तंत्र का मार्गदर्शन किया जाता है, यहाँ की विशेषता है।

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँचवीं स्थापना है, जहाँ पर विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अभिनव शोध कार्य चल रहा है। इसे १९७१ की गायत्री जयंती पर आरम्भ किया गया था। वर्तमान शांतिकुंज- गायत्री तीर्थ से आधा किलोमीटर दूरी पर गंगातट पर स्थित यह संस्थान अपनी आकर्षक बनावट के कारण सहज ही सबके मनों को मोहकर आमंत्रित करता रहता है। इसमें तीन मंजिलों में प्रथम तल पर एक विज्ञान के उपकरणों से सुसज्जित यज्ञशाला विनिर्मित है तथा चौबीस कक्षों में गायत्री महाशक्ति की चौबीस मूर्तियाँ बीजमंत्रों व उनकी फलश्रुतियों सहित स्थापित हैं। द्वितीय तल पर एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है, जहाँ ऐसे उपकरण स्थापित हैं जो यह जाँच-पड़ताल करते हैं कि साधना से पूर्व व पश्चात्, यज्ञादि मंत्रोच्चारण के पूर्व व पश्चात् क्या-क्या परिवर्तन शरीर-मन की गतिविधियों व रक्त आदि संघटकों में देखने में आये। इनके आधार पर साधकों को साधना संबंधी परामर्श दिया जाता है। यहाँ पर वनौषधियों का विश्लेषण भी किया जाता है तथा यज्ञ ऊर्जा-मंत्र शक्ति का क्या प्रभाव साधक की मस्तिष्कीय तरंगों, जैव विद्युत आदि पर पड़ा, यह देखा जाता है। विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी यहाँ किये जाते हैं। तृतीय तल पर एक विशाल ग्रंथागार स्थापित है, जहाँ विश्वभर के शोध प्रबंध वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर एकत्रित किये गये हैं। यहाँ प्रायः ४५००० से अधिक ग्रंथ हैं, जिनमें कई पुरातन पाण्डुलिपियाँ हैं। यह अपने आप में एक अनूठा संकलन है जो और कहीं एक साथ देखने में नहीं मिलता।

परमपूज्य गुरुदेव की उपरोक्त पाँच स्थापनाएँ किसी को भी यह परिचय दे सकती हैं कि किस विलक्षण दृष्टास्तर की वह महासत्ता थी जो हम सबके बीच अपना लीली संदोह रचकर चली गयी। प्रत्यक्ष तो यह केन्द्रीय पाँच स्थापनाएँ नजर आती हैं किन्तु ४८०० से अधिक अपने भवनों वाले प्रज्ञा संस्थान ४०००० से अधिक प्रज्ञामण्डल व स्वाध्याय मण्डल तथा अगणित गायत्री परिवार की शाखाएँ यदि इनमें मिलाई जाएँ तो इनका मूल्य राशि में आँका नहीं जा सकता। यही वह सब है जो उस महापुरुष को एक अवतारी स्तर की सत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित करता है व जिसके कर्तृत्व पर श्रद्धावनत होने का मन करता है। ❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२
(सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्त्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६.ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे—

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवनः एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org